...प्रभु सेवा लै प्र
लीनी दृढ़ भाव नेम रूप के तिसाये हैं ॥५००॥
शौच जल शेष पाइ भूतहू विशेष कोऊ
बोल्यो सुख मानि हनुमान जू बताए हैं।
रामायन कथा सो रसायन है कानन को
आवत प्रथम पाछे जात घृणा छाए हैं ॥
जाइ पहिचान संग चले उर आनि आए
वन मध्य जानि धाइ पाइ लपटाए हैं।
करैं सीतकार कहीं सकोगे न टारि मैं तो
जाने रस सार रूप धर्यो जैसे गाए हैं ॥५०१॥
मांगि लीजै वर कही दीजै राम भूप रूप
अति ही अनूप नित नैन अभिलाखिए।
कियो लै सँकेत वाही दिन ही सों लाग्यो हेत
आई सोई समै चेत कवि छवि चाखिए ॥
आये रघुनाथ साथ लछमन चढ़े घोड़े
पट रंग बोरे हरे कैसे मन राखिए।
पाछे हनुमान आए बोले देखे प्रान प्यारे
नेकु न निहारे मैं तो भले फेरि भाखिए ॥५०२॥
हत्या करि विप्र एक तीरथ करत आयो
कहे मुख राम हत्या डारिये हत्यारे को।
सुनि अभिराम नाम धाम मैं बुलाइ लियो
दियो लै प्रसाद कियो सुद्ध गायो प्यारे को ॥
भई द्विजसभा कोहि बोलि कै पठायो आप
कैसे गयो पाप संग लै कै जैये न्यारे को।
पोथी तुम बांचो हिये भाव नहिं सांचो अजू
तातें मति कांचो दूरि करै न अँधयारे को ॥५०३॥
देखी पोथी बांचो नाम महिमा हू कही सांच
ए पै हत्या करै कैसे तरै कहि दीजिए।

आवै जो प्रतीति कही या के हाथ जेवैं जब
शिव जू के बैल तब पंगति मैं लीजिए ॥
थार मैं प्रसाद दियो चले जहां पान कियो
बोले आप नाम के प्रताप मति भीजिए ।
जैसी तुम जानो तैसी कैसे कै बखानो अहो
सुनि कै प्रसन्न पायो जै जै धुनि रीझिए ॥५०४॥
आए निसि चोर चोरी करन हरन धन
देखे श्यामघन हाथ चाप सर लिए हैं।
जब जब आवै बान साध डरपावै ए तो
अति मडरावै ए पै बली दूरि किए हैं ॥
भोर आये पूछे अजू साँवरो किसोर कौन
सुनि करि मौन रहे आंसु डार दिये हैं ।
दई है लुटाइ जानि चौकी रामराइ दई
लई उन्ह दिच्छा शिच्छा सुद्ध भए हिए हैं ॥५०५॥
कियो तनु विप्र त्याग लागी चली संग तिया
दूर ही तें देखि कियो चरन प्रनाम है ।
बोले यों सुहागवती मर्‍यो पति होहुँ सती
अबतो निकसि गई जाहु सेवो राम है ॥
बोलि कै कुटुम्ब कही जो पै भक्ति करो सही
गही तब बात जीव दियो अभिराम है ।
भए सब साध व्याधि मेटी लै विमुखताकी
जाकी बास रहै तान सूझै श्यामधाम है ॥५०६॥
दिल्लीपति बादशाह अहिदी पठाए लेन
ताका सो सुनायो सूबै विप्र ज्यायो जानिए ।
देखिबो को चाहैं नीके सुख सो निबाहै आइ
कही बहु विनय गही चले मन आनिए ॥
पहुँचे नृपति पास आदर प्रकास कियो
दियो उच्च आसन लै बोल्यो मृदु बानिए ।
दीजै करामाति जग ख्यात सब मात किए
कही झूठी बात एक राम पहिचानिए ॥५०७॥
देखौं राम कैसे कहि कैद किए किए हिए
हूजिये कृपाल हनुमान जू दयाल हो ।
ताही समै फैल गए कोटि कोटि कपि नए
नोचे तन खैंचे चीर भयो यों बिहाल हो ॥

फोरैं कोट मारैं चोट किये डारैं लोट पोट
लीजै कौन ओट जाइ मानो प्रलै काल हो।
भई तब आंखैं दुखसागर को चाखैं अब
वेई हमैं राखैं भाखैं वारौं धन माल हो ॥५०८॥
आइ पाइ लिए तुम दिए हम प्रान पावैं
आप समभावैं करामाति नेक लीजिए।
लाज दवि गयो नृप तब राखि लियो कह्यो
भयो घर राम जू को वेगि छोड़ि दीजिये ॥
सुनि तजि दियो और कह्यो लै कै कोट नयो
अबहुँ न रहै कोउ वामैं तन छीजिए।
कासी जाइ वृन्दावन आइ मिले नाभाजू सों
सुन्यो हो कवित्त निज रीभ मति भीजिए ॥५०९॥
मदनगोपाल जू को दरसन करि कही सही
राम इष्ट मेरे दृग भाव पागी है।
वैसोई सरूप कियो दियो लै दिखाइ रूप
मन अनुरूप छवि देखि नीकी लागी है ॥
काहू कह्यो कृष्ण अवतारी जू प्रशंस महा
राम अंस सुनि बोले मति अनुरागी है।
दसरथसुत जानों सुन्दर अनूप मानी
ईसता बताई रति कोटि गुनी जागी है ॥५१०॥

* * * *

नाभा जू को अभिलाष पूरन लै कियो मैं तौ
ताकी साखी प्रथम सुनाई नीके गाइ कै।
भक्ति विसवास जाके ताही को प्रकास कीजे
भीज रह्यो हियो लीजै तन ही लड़ाइ कै ॥
संवत प्रसिद्ध दस सात सतउन्हत्तर,
फालगुन मास वदी सप्तमी विताइ कै।
नारायनदास सुखरास भक्तमाल लै के,
प्रियदास दास उर वसौ रहौ छाइ कै ॥६२३॥

रामहिं केवल प्रेम पियारा
जानि लेहु जो जाननिहारा

राज-गद्दी ।　　　　রাজ-গদ্দী ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीजानकीवल्लभो विजयते ॥

श्रीरामचरितमानस

(सरल टीका)

प्रथम सोपान

बालकाण्ड

॥ श्लोकाः ॥

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ॥१॥

अक्षरों, अर्थसमूहों, रसों, छन्दों और मंगलोंके करनेवाले सरस्वती और गणेश दोनोंकी मैं वन्दना करता हूं।

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ॥२॥

श्रद्धा और विश्वासरूपी भवानी और शंकरकी मैं वन्दना करता हूं, जिनके बिना अपने हृदयस्थित ईश्वरको सिद्धजन नहीं देख सकते।

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कररूपिणम् ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥३॥

शंकररूपी ज्ञानमय गुरुकी मैं नित्य वन्दना करता हूं, जिनका आश्रित होकर कुटिल चन्द्रमा भी सर्वत्र वंदित है

सीतारामगुणग्राम पुण्यारण्यविहारिणौ ।
वन्दे विशुद्धविज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥४॥

सीता और रामके गुणोंके पवित्र वनमें विहार करनेवाले विशुद्ध विज्ञान-सम्पन्न वाल्मीकि और हनुमानकी मैं वन्दना करता हूं।

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥५॥

उत्पत्ति, स्थिति और नाश करनेवाली, और क्लेशोंको हरनेवाली तथा सम्पूर्ण कल्याणकारिणी रामप्रिया सीताको मैं नमस्कार करता हूं।

यन्मायावशवर्त्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुराः
यत्सत्त्वादमृषेव भाति सकलं रज्जौ यथाऽहेर्भ्रमः ।
यत्पादप्लव एक एव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम् ॥६॥

जिसकी मायाके वशमें समस्त संसार, ब्रह्मादि देवता और राक्षस हैं, जिसकी सत्तासे रस्सीमें सांपके भ्रमकी भांति सारा संसार सत्यसा ही प्रतीत होता है और भवसागरसे तरनेके इच्छुकोंके लिये जिसके चरणही एकमात्र नौका हैं उस समस्त कारणोंसे परे रामसंज्ञक ईश्वर और विष्णुकी मैं वन्दना करता हूं।

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्-
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा-
भाषानिबन्धमतिमञ्जुलमातनोति ॥ ७ ॥

अनेक पुराण, वेद और शास्त्र आदिसे सम्मत, रामायणमें वर्णित और अन्य ग्रन्थोंसे संग्रहीत श्रीरघुनाथ-कथाको तुलसीदास अपने अन्तःकरणके सुखके लिये अत्यन्त सुन्दर भाषारचनामें विस्तृत करते हैं।

सो०—जेहि सुमिरत सिधि होइ ❀ गननायक करि - बर - बदन ।
करउ अनुग्रह सोइ ❀ बुद्धिरासि सुभ - गुन - सदन ॥१॥

जिनका स्मरण करनेसे ही सिद्धि हो जाती है, जिनका सुन्दर मुख हाथीके मुख जैसा है और जो महाबुद्धिमान तथा सद्गुणधाम हैं वे गणेशजी कृपा करें।

मूक होइ बाचाल ❀ पंगु चढइ गिरिबर गहन ।
जासु कृपा सो दयाल ❀ द्रवउ सकल-कलि-मल-दहन ॥२॥

जिनकी दयासे गूंगा अच्छी तरह बोलने लगता है और लंगड़ा दुर्गम पहाड़ोंपर चढ़ जाता है, वे कलियुगके पापोंको भस्म कर देनेवाले दयालु (भगवान्) दया करें।

नील - सरोरुह - स्याम ❀ तरुन - अरुन - बारिज - नयन।
करउ सो मम उर धाम ❀ सदा छीर - सागर - सयन ॥३॥

जिनका शरीर नीलकमलके समान श्याम है, जिनके नेत्र खिले हुए लाल कमलके समान हैं, जो सदा क्षीर-सागरमें शयन करते हैं, वे (भगवान्) मेरे मन-मन्दिरमें निवास करें।

कुंद - इंदु - सम देह ❀ उमारमन करुनाअयन।
जाहि दीन पर नेह ❀ करउ कृपा मर्दन मयन ॥४॥

कुन्दके फूल और शरच्चन्द्रके समान जिनका शरीर है, जो पार्वतीके साथ विहार करते हैं, जो दयाधाम हैं, जिन्हें दीनोंपर प्रेम है और जिन्होंने कामदेवको भस्म किया है वे (शिव) कृपा करें।

बंदउँ गुरु - पद - कंज ❀ कृपासिन्धु नररूप हरि।
महा - मोह - तम - पुंज ❀ जासु बचन रवि-कर-निकर ॥५॥

महा अज्ञानरूपी अन्धकारके समूहके लिये जिनके वचन सूर्य-किरण-समूहके समान हैं, जो दयाके समुद्र और मनुष्यरूपमें विष्णु हैं * उन गुरुके चरणकमलोंकी मैं वन्दना करता हूं।

बंदउँ गुरु - पद - पदुम - परागा ❀ सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ॥
अमिअ - मूरि - मय चूरन चारू ❀ समन सकल - भव-रुज-परिवारू ॥

मैं गुरुके चरणकमलोंकी सुन्दर, सुगन्धित, रसमय और भक्तिजनक रजको प्रणाम करता हूं। वह रज अमृत-मूलमय सुन्दर चूर्ण है जिससे संसारभरके समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

सुकृत सम्भुतन बिमलबिभूती ❀ मंजुल मंगल - मोद - प्रसूती ॥
जन - मन - मंजु - मुकुर - मल - हरनी ❀ किये तिलकु गुन-गन-बस-करनी ॥

वह रज शिवजीके शरीरकी उज्ज्वल विभूतिके समान पवित्र है और सुन्दर कल्याण तथा आनन्दको देनेवाली है। वह भक्तोंके चित्तरूपी सुन्दर दर्पणका मल दूर करनेवाली है और उसका तिलक लगानेसे समस्त गुण वशीभूत हो जाते हैं।

श्रीगुरु - पद - नख - मनि-गन-जोती ❀ सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती ॥
दलन मोहतम सो सुप्रकासू ❀ बड़े भाग उर आवइ जासू ॥

श्री गुरुके चरणोंके नखरूपी मणियोंकी ज्योतिका स्मरण करते ही हृदयमें दिव्य दृष्टि हो जाती है। उसके बड़े भाग्य हैं जिसके हृदयमें यह अज्ञानान्धकारको नष्ट कर देनेवाला सुन्दर प्रकाश आवे।

* तुलसीदासजीके गुरुका नाम भी "नरहरि" था।

उघरहिं बिमल बिलोचन ही के ❀ मिटहिं दोष दुख भवरजनी के ॥
सूझहिं रामचरित मनिमानिक ❀ गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक ॥

उस प्रकाशसे हृदयके निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसाररूपिणी रात्रिके सब दोष और दुःख मिट जाते हैं। फिर उसको रामचरितरूपी सब रत्न दिखाई देने लगते हैं, चाहे वे गुप्त हों या प्रकट और चाहे किसी खानमें कहीं भी क्यों न हों।

दो०—जथा सुअंजन अंजि दृग ❀ साधक सिद्ध सुजान।
कौतुक देखहिं सैल बन ❀ भूतल भूरि निधान ॥१॥

जिस प्रकार चतुर साधक सिद्धताका उत्तम अंजन नेत्रोंमें लगानेसे सिद्ध होकर पृथ्वीतलपर पर्वत, वन आदि अनेक स्थानोंमें कौतुक देखते हैं।

गुरु-पद-रज-मृदु-मंजुल-अंजन ❀ नयन अमिअ दृग-दोष-बिभंजन ॥
तेहि करि बिमल बिबेक-बिलोचन ❀ बरनउँ रामचरित भवमोचन ॥

उसी प्रकार गुरु-चरण-रज भी आंखके दोषोंको दूर करनेवाला, सुन्दर शीतल नयनामृत अंजन है। उससे विवेक नेत्रको निर्मल बनाकर मैं संसारसे मुक्त कर देनेवाले रामचरितका वर्णन करता हूं।

बंदउँ प्रथम मही-सुर-चरना ❀ मोह-जनित-संसय सब हरना ॥
सुजनसमाज सकल-गुन-खानी ❀ करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी ॥

मैं पहले अज्ञानसे उत्पन्न समस्त सन्देहको दूर करनेवाले ब्राह्मणोंके चरणोंकी वन्दना करता हूं। सज्जनोंका समाज समस्त गुणोंकी खान है, उसे मैं मीठी वाणीसे प्रेमसहित प्रणाम करता हूं।

साधुचरित सुभ सरिस कपासू ❀ निरस बिसद गुनमय फल जासू ॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा ❀ बंदनीय जेहि जग जसु पावा ॥

साधुओंका चरित्र कपासके समान कल्याणकर है जिसका फल नीरस होनेपर भी उज्ज्वल गुण (सूत) मय है, जो स्वयं दुःख सहकर दूसरोंकी बुराइयोंको ढकता है और जिसने संसारमें वन्दनीय यश पाया है।

मुद-मंगल-मय संत-समाजू ❀ जो जग जंगम तीरथराजू ॥
रामभगति जहँ सुरसरि-धारा ❀ सरसइ ब्रह्मबिचार प्रचारा ॥

संतोंका समाज आनन्दमंगलप्रद और संसारमें चलता फिरता तीर्थराज—प्रयाग है। रामभक्ति जहां गंगाजीकी धारा है और ब्रह्म-विचारका प्रचार सरस्वतीजी हैं।

बिधि-निषेध-मय-कलिमल-हरनी ❀ करमकथा रबिनन्दिनि बरनी ॥
हरि-हर-कथा बिराजति बेनी ❀ सुनत सकल-मुद-मंगल-देनी ॥

कलियुगके पापोंको दूर कर देनेवाली कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य कर्मोंकी कथा यमुनाजी हैं। त्रिवेणीका संगम शिव और विष्णुकी कथा है जो सुनते ही समस्त आनन्दमंगल देनेवाली है।

बट बिस्वासु अचल निज धर्मा ❀ तीरथराज समाज सुकर्मा ॥
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा ❀ सेवत सादर समन कलेसा ॥
अकथ अलौकिक तीरथराऊ ❀ देइ सद्य फल प्रगट प्रभाऊ ॥

अपने धर्ममें अटल विश्वास ही अक्षयवट है, सुकर्मोंका समूह ही तीर्थराजका मेला है। यह (संत-समाज) सर्वत्र किसी समय भी सबको सुलभ है और इसको सादर सेवन करनेसे क्लेश दूर हो जाते हैं। यह तीर्थराज अलौकिक, अकथनीय है और शीघ्र फलदाता है। इसका प्रभाव प्रकट है।

दो०—सुनि समुझहिं जन मुदितमन ❀ मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु ❀ साधुसमाजु प्रयाग ॥७॥

इस साधु-समाजरूपी तीर्थराजके उपदेशोंको जो मनुष्य प्रसन्न चित्तसे सुनकर समझते हैं और अत्यन्त प्रेमसे गोते लगाते हैं वे इसी शरीरसे चारों फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) पा लेते हैं।

मज्जनफल देखिअ ततकाला ❀ काक होहिं पिक बकउ मराला ॥
सुनि आचरज करइ जनि कोई ❀ सत-संगति-महिमा नहिं गोई ॥

स्नान करनेका फल तुरन्त दिखलायी पड़ता है। कौए, कोयल; और बगले, हंस हो जाते हैं। यह सुनकर कोई आश्चर्य न करे। सत्संगकी महिमा छिपी हुई नहीं है।

बालमीकि नारद घटजोनी ❀ निज निज मुखनि कही निजहोनी ॥
जलचर थलचर नभचर नाना ❀ जे जड़ चेतन जीव जहाना ॥

वाल्मीकि, नारद और अगस्त्यमुनिने अपने-अपने मुखसे स्वयं अपनी-अपनी उत्पत्तिका वर्णन किया है। जलचर, थलचर और नभचर, अनेक प्रकारके जितने जड़ और चेतन जीव इस संसारमें हैं।

मति कीरति गति भूति भलाई ❀ जब जेहि जतन जहां जेहि पाई ॥
सो जानब सत-संग-प्रभाऊ ❀ लोकहु बेद न आन उपाऊ ॥

उन्होंने जब किसी उपायसे कहीं बुद्धि, कीर्ति, गति, ऐश्वर्य और भलाईको पाया है, वह सब सत्संगका ही प्रभाव जानो। लोक और वेदमें दूसरा उपाय नहीं है।

बिनु सतसंग बिबेक न होई ❀ रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ॥
सतसंगति मुद-मंगल-मूला ❀ सोइ फल सिधि सब साधन फूला ॥

सत्संगके विना ज्ञान नहीं होता और वह (सत्संग) रामचन्द्रजीकी कृपा हुए विना सहज नहीं मिलता। आनन्द और मङ्गल (वृक्ष) का मूल सत्संग ही है, उसके फूल साधन हैं और फल सिद्धि है।

सठ सुधरहिं सतसंगति पाई ❀ पारस परसि कुधातु सोहाई॥
बिधिबस सुजन कुसंगति परहीं ❀ मनि-फनि-सम निजगुन अनुसरहीं॥

सत्संगको पाकर दुष्ट सुधर जाते हैं जैसे पारसको छूकर लोहा सोना हो जाता है। दैवयोगसे सज्जन यदि कुसङ्गमें पड़ जाते हैं तोभी सर्पमणिके समान अपने गुणोंको नहीं छोड़ते।

बिधि-हरि-हर-कवि-कोविद-बानी ❀ कहत साधुमहिमा सकुचानी॥
सो मो सन कहि जात न कैसे ❀ साकबनिक मनि-गन-गुन जैसे॥

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कवि, पंडित और सरस्वती—सब साधुकी महिमा कहते सङ्कोच करते हैं। वह महिमा मुझसे उसी प्रकार नहीं कही जा सकती जिस प्रकार कोई शाक बेचनेवाला मणियोंके गुणोंको नहीं कह सकता।

दो०—बंदउँ संत समानचित ❀ हित अनहित नहिं कोउ।
अंजलिगत सुभसुमन जिमि ❀ सम सुगंध कर दोउ॥८॥

मैं समदर्शी संतोंकी वन्दना करता हूं जिनका न कोई मित्र है और न शत्रु, जैसे अंजुलिमें रखे हुए सुन्दर फूल दोनों ही हाथोंको बराबर सुगन्धित करते हैं।

संत सरलचित जगत हित ❀ जानि सुभाउ सनेहु।
बालबिनय सुनि करि कृपा ❀ राम-चरन-रति देहु॥९॥

जगतके हितकारी सरलचित्त सज्जन अपना स्वभाव और मेरा स्नेह जानकर, मुझ बालककी विनतीको सुनकर कृपा करके श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति दें।

बहुरि बंदि खलगन सतिभाये ❀ जे बिनु काज दाहिनेहु बाँये॥
पर-हित-हानि-लाभ जिन्ह केरे ❀ उजरे हरष बिषाद बसेरे॥

अब मैं सत्य भावसे दुष्टोंकी वन्दना करता हूं, जो अकारण ही अनुकूल और प्रतिकूल हो जाते हैं। दूसरोंके हितकी हानि जिनका लाभ है। उजड़नेपर जिन्हें हर्ष और बसनेपर शोक होता है।

हरि-हर-जस राकेस राहु से ❀ पर अकाज भट सहसबाहु से॥
जे परदोष लखहिं सहसाखी ❀ परहित-घृत जिनके मन माखी॥

भगवान् विष्णु और शिवकी यशकथा रूपी चन्द्रके लिये जो राहुके समान हैं। दूसरोंका काम बिगाड़नेमें जो सहस्रबाहुके समान योद्धा हैं। जो दूसरोंके दोष सहस्र नेत्रोंसे देखते हैं और दूसरोंके हितरूपी घीके लिये जिनका मन मक्खीके समान है।

तेज कृसानु रोष महिषेसा ❀ अघ-अवगुन-धन-धनी धनेसा ॥
उदय केतुसम हित सबही के ❀ कुंभकरन सम सोवत नीके ॥

जिनका तेज अग्निके समान और क्रोध महिषासुरके समान है। जो पापों और दुर्गुणोंके धनसे कुबेरके समान धनी हैं। केतुके उदयके समान जो सबके लिये (दुःखदायी) हैं और कुम्भकर्णकी भांति जिनका सोते रहना ही अच्छा है।

परअकाजु लगि तनु परिहरहीं ❀ जिमि हिम-उपल कृषी दलि गरहीं ॥
बंदउँ खल जस सेष सरोषा ❀ सहस बदन बरनइ परदोषा ॥

जिस प्रकार ओले खेतीको नष्ट कर स्वयं भी गल जाते हैं उसी प्रकार दूसरोंके अपकारके लिये (दुष्ट) अपना शरीरतक नष्ट कर डालते हैं। मैं दुष्टोंकी वन्दना करता हूं जो क्रोधित शेषनागके समान सहस्र मुखोंसे दूसरोंके दोषोंका वर्णन करते हैं।

पुनि प्रनवउँ पृथुराज समाना ❀ परअघ सुनइ सहसदस काना ॥
बहुरि सक्र सम बिनवउँ तेही ❀ संतत सुरानीक हित जेही ॥
बचन बज्र जेहि सदा पियारा ❀ सहसनयन परदोष निहारा ॥

मैं फिर उनकी वन्दना करता हूं, जो पृथुराजके समान सहस्र कानोंसे दूसरोंके पापोंको सुनते हैं। इन्द्रके समान मानकर मैं फिर उनकी विनती करता हूं जिन्हें सदा (इन्द्रके देवसैन्यकी भांति) सुरा अच्छी लगती है, जिन्हें सदा वज्र जैसा (कठोर) वचन प्यारा लगता है और जो हजार नेत्रोंसे दूसरोंके दोष देखते हैं।

दो०—उदासीन-अरि-मीत-हित ❀ सुनत जरहिं खलरीति।
जानि पानिजुग जोरि जनु ❀ बिनती करउँ सप्रीति ॥१०॥

दुष्टोंकी यह रीति है कि वे शत्रु, मित्र और उदासीन सबका हित सुनते ही जल जाते हैं। यह जानकर मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रीतिपूर्वक विनती करता हूं।

मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा ❀ तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा ॥
बायस पालिय अति अनुरागा ❀ होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा ॥

मैंने अपनी ओरसे विनती की है, परन्तु वे अपनी ओरसे दुष्टता करनेसे न चूकेंगे। कौएको बड़े प्रेमसे पाला जाय, परन्तु कौआ क्या कभी मांस खानेसे चूक सकता है?

बंदउँ संत असज्जन चरना ❀ दुखप्रद उभय बीच कछु बरना ॥
बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं ❀ मिलत एक दारुन दुख देहीं ॥

सज्जनों और दुष्टोंके चरणोंकी मैं वन्दना करता हूं। दोनों ही दुःखप्रद हैं। परन्तु दोनोंमें कुछ अन्तर बतलाया गया है। एक (सज्जन) वियोग होते ही प्राण ले लेते हैं और एक (दुष्ट) मिलते ही कठिन दुःख देते हैं।

उपजहिं एक संग जग माहीं ❀ जलज जोक जिमि गुन बिलगाहीं ॥
सुधा सुरा सम साधु असाधू ❀ जनक एक जग जलधि अगाधू ॥

संसारमें एक ही साथ उत्पन्न होते हैं, परन्तु कमल और जोंकके समान दोनोंके गुण अलग-अलग होते हैं। सज्जन और दुष्ट अमृत और विषके समान हैं जिनका पिता एकही अगाध संसारसमुद्र है।

भल अनभल निज निज करतूती ❀ लहत सुजस अपलोक बिभूती ॥
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू ❀ गरल अनल कलि-मल-सरि ब्याधू ॥
गुन अवगुन जानत सब कोई ❀ जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ॥

अच्छे और बुरे मनुष्य अपने-अपने कार्योंसे भलाई और बुराईकी सम्पत्ति पाते हैं। साधु मनुष्य अमृत, चन्द्रमा और गंगाजीके समान तथा असाधु मनुष्य विष, अग्नि और कर्मनाशा नदीके समान हैं। गुण और अव-गुणको सब कोई जानता है। जो जिसको भाता है वही उसके लिये अच्छा है।

दो०—भलो भलाइहि पै लहइ ❀ लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिय अमरता ❀ गरल सराहिय मीचु ॥११॥

भले आदमी भलाईसे और नीच नीचतासे बड़ाई पाते हैं। अमर करनेसे अमृतकी और मारनेसे विषकी प्रशंसा होती है।

खल-अघ-अगुन-साधु - गुन-गाहा ❀ उभय अपार उदधि अवगाहा ॥
तेहि तें कछु गुन दोष बखाने ❀ संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने ॥

दुष्ट पापों और दुर्गुणोंको तथा सज्जन गुणोंको ग्रहण करते हैं। दोनों ही समुद्रकी भांति अपार और अगाध हैं। इसी कारण कुछ गुण और दोषोंका वर्णन किया है, क्योंकि पहिचाने बिना ग्रहण करना या त्याग देना नहीं हो सकता।

भलेउ पोच सब बिधि उपजाए ❀ गनि गुन दोष बेद बिलगाए।
कहहिं बेद इतिहास पुराना ❀ बिधि प्रपंच गुन-अवगुन-साना ॥

अच्छे और बुरे, सब ब्रह्माने उत्पन्न किये हैं। परन्तु वेदोंने गुण और दोषोंकी गिनती कर अलग अलग कर दिये हैं। वेद, इतिहास और पुराण कहते हैं कि ब्रह्माका प्रपंच यह संसार गुण और अवगुण दोनोंसे ही व्याप्त है।

दुख सुख पाप पुण्य दिन राती ❀ साधु असाधु सुजाति कुजाती ॥
दानव देव ऊँच अरु नीचू ❀ अमिय सजीवन माहुर मीचू ॥

दुःख सुख, पाप पुण्य, दिन रात, साधु असाधु, सुजाति कुजाति, राक्षस देवता, ऊंचा नीचा, अमृत विष, संजीवनी और मृत्यु।

माया ब्रह्म जीव जगदीसा ❀ लच्छि अलच्छि रंक अवनीसा ॥
काशी मग सुरसरि कविनासा ❀ मरु मालव महिदेव गवासा ॥
सरग नरक अनुराग बिरागा ❀ निगम अगम गुन-दोष-बिभागा ॥

माया ब्रह्म, जीव जगदीश्वर, लक्ष्मी दारिद्र्य, रंक राव, काशी मगध, गंगा कर्मनाशा, मरुदेश मालवा, ब्राह्मण गो-भक्षक, स्वर्ग नरक, अनुराग विराग—सभी संसारमें हैं। वेदशास्त्रने इनके गुणदोषोंका विभाग किया है।

दो०—जड़ चेतन गुन-दोष-मय ❀ बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय ❀ परिहरि बारिबिकार ॥१२॥

ब्रह्माने संसारको जड़, चेतन और गुण-दोषमय बनाया है। हंसरूपी सज्जन पानीरूपी दुर्गुणोंको छोड़कर दूधरूपी गुणोंको ग्रहण करते हैं।

अस बिबेक जब देइ बिधाता ❀ तब तजि दोष गुनहि मनु राता ॥
कालसुभाउ करम बरिआईं ❀ भलेउ प्रकृतिबस चुकइ भलाईं ॥

ब्रह्मा जब ऐसा ज्ञान देता है तब मन दोषोंको छोड़कर गुणोंमें लगता है। समय, स्वभाव और कर्मोंकी प्रबलतासे सज्जन भी मायाके वश होकर भलाईको भूल जाते हैं।

सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं ❀ दलि दुख दोष बिमल जसु देहीं ॥
खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू ❀ मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू ॥

उस भूलको जैसे हरिभक्त सुधार लेते हैं और दुःख दोषोंको मिटाकर निर्मल यश देते हैं वैसे ही दुष्ट भी सुसंग पाकर भलाई करने लगते हैं, परन्तु उनका मलिन स्वभाव पूरी तरह नहीं दूर होता।

लखि सुबेषु जग-बंचक जेऊ ❀ बेषप्रताप पूजिअहिं तेऊ ॥
उघरहिं अंत न होइ निबाहू ❀ कालनेमि जिमि रावन राहू ॥

सज्जनोंका भेष बनाकर जो संसारको ठगते हैं वे भी भेषके प्रभावसे पूजे जाते हैं। अन्तमें सब बात खुल जाती है, सदा निर्वाह नहीं होता, जैसे कालनेमि, रावण और राहुका हुआ।

किएहु कुबेषु साधु सनमानू ❀ जिमि जग जामवंत हनुमानू ॥
हानि कुसंग सुसंगति लाहू ❀ लोकहु बेद बिदित सब काहू ॥

बुरा भेष रखनेपर भी सज्जनोंका संसारमें जामवन्त और हनुमानकी भांति सम्मान होता है। कुसंगसे हानि और सुसंगसे लाभ होता है, यह संसारमें और वेदमें प्रकट है और सब जानते हैं।

गगन चढ़इ रज पवनप्रसंगा ❀ कीचहिं मिलइ नीच-जल-संगा ॥
साधु-असाधु-सदन सुक सारी ❀ सुमिरहिं रामु देहिं गनि गारी ॥

धूल वायुके संगसे आकाशमें चढ़ जाती है और नीच जलके संगसे कीचड़में मिल जाती है। तोता और मैना साधुओंके घरमें रामका स्मरण करते हैं और असाधुजनोंके घरमें गिन गिनकर गालियां देते हैं।

धूम कुसंगति कारिख होई ❀ लिखिय पुरान मंजु मसि सोई ॥
सोइ जल अनल अनिल संघाता ❀ होइ जलद जग-जीवन-दाता ॥

धुआं कुसंगमें 'कालिख' हो जाता है! (सुसंगमें) वही सुन्दर स्याहीके रूपमें पुराण लिखनेके काममें आता है। जल वही है, परन्तु अग्नि और वायुके संगसे संसारको जीवन (जल) देनेवाला बादल बन जाता है।

दो०—ग्रह भेषज जल पवन पट ❀ पाइ कुयोग सुजोग ॥
होहिं कुवस्तु सुवस्तु जग ❀ लखहिं सुलच्छन लोग ॥१३॥

ग्रह, ओषधि, जल, वायु और वस्त्र, ये सब कुसंग और सुसंग पाकर संसारमें बुरे और भले बनते हैं। इसको चतुर मनुष्य देख लेते हैं।

सम प्रकास तम पाख दुहुँ ❀ नाम-भेद बिधि कीन्ह ॥
ससि पोषक सोषक समुझि ❀ जग जस अपजस दीन्ह ॥१४॥

महीनेके दोनों पक्षोंमें प्रकाश और अन्धकार समान ही होता है, फिर भी विधाताने नाममें भेद किया है। एक पक्षको चन्द्रमाका बढ़ानेवाला और दूसरेको घटानेवाला समझकर संसारने भलाई और बुराई दी है।

जड़ चेतन जग जीव जत ❀ सकल राममय जानि ॥
बंदेउँ सबके पद कमल ❀ सदा जोरि जुगपानि ॥१५॥

संसारमें जितने जड़ और चेतन जीव हैं उन सबको राममय जानकर मैं सर्वदा दोनों हाथ जोड़कर सबके चरणकमलोंकी वन्दना करता हूं।

देव दनुज नर नाग खग ❀ प्रेत पितर गंधर्ब ॥
बंदउँ किन्नर रजनिचर ❀ कृपा करहु अब सर्ब ॥१६॥

देवता, दैत्य, मनुष्य, सर्प, पक्षी, प्रेत, पितर, गन्धर्व, किन्नर और निशाचर—सबको मैं प्रणाम करता हूं। अब सब मुझपर कृपा करो।

आकर चारि लाख चौरासी ❀ जाति जीव नभ-जल-थल-बासी॥
सीय राम-मय सब जग जानी ❀ करउँ प्रनाम जोरि जुगपानी॥

चौरासी लाख योनियोंमें चार प्रकारके जितने जीव आकाश और पृथ्वीपर बसते हैं, उनको—समस्त जगत-को सीताराममय जानकर, मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूं।

जानि कृपा कर किंकर मोहू ❀ सब मिलि करहु छाड़ि छल छोहू॥
निज-बुधि-बल-भरोस मोहि नाहीं ❀ तातें बिनय करउँ सब पाहीं॥

कृपा कर अपना सेवक समझ सब मिलकर कपट छोड़कर मुझपर दया करो। मुझे अपने बुद्धि-बलका भरोसा नहीं है, इसीलिये सबसे विनती कर रहा हूं।

करन चहउँ रघुपति-गुन-गाहा ❀ लघु मति मोरि चरित अवगाहा॥
सूझ न एकउ अँग उपाऊ ❀ मम मति रंक मनोरथ राऊ॥

रामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहना चाहता हूं। मेरी बुद्धि छोटी है और रामचरित अथाह है। मुझे एक भी अङ्ग (कविताका) और उपाय नहीं सूझ पड़ता। मेरी बुद्धि तो रंक (कंगाल) है, परन्तु इच्छा राजा-जैसी है।

मति अति नीच ऊँच रुचि आछी ❀ चहिअ अमिअ जग जुरइ न छाछी॥
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई ❀ सुनिहहिं बालबचन मन लाई॥

बुद्धि अत्यन्त नीच है और इच्छा बहुत ऊंची है। संसारमें छाछ नहीं मिलती, पर इच्छा अमृतकी है। सज्जन मेरी धृष्टता क्षमा करेंगे और मुझ बालकके वचन मन लगाकर सुनेंगे।

जौं बालक कह तोतरि बाता ❀ सुनहिं मुदित-मन पितु अरु माता॥
हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी ❀ जे पर-दूषन-भूषन-धारी॥

जिस प्रकार बालक तोतली बातें कहता है और माता-पिता प्रसन्नमन होकर सुनते हैं। जो लोग क्रूर, कुटिल और बुरे विचारवाले हैं तथा जो दूसरोंकी बुराइयोंको अपने भूषण रूपमें धारण करते हैं वे मुझपर हंसेंगे।

निज कबित्त केहि लाग न नीका ❀ सरस होउ अथवा अति फीका॥
जे पर-भनिति सुनत हरषाहीं ❀ ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं॥

अपनी कविता चाहे रसीली हो या अत्यन्त फीकी, किसे नहीं अच्छी लगती? जो दूसरोंकी रचना सुनकर प्रसन्न होते हैं, ऐसे श्रेष्ठ पुरुष संसारमें बहुत नहीं हैं।

जग बहु नर सरि - सर - सम भाई ❀ जे निज बाढ़ि बढ़हिं जल पाई ॥
सज्जन सुकृत - सिंधु - सम कोई ❀ देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई ॥

हे बन्धु ! संसारमें नदी और सरोवरके समान बहुत मनुष्य हैं जो पानी पाकर अपनी बाढ़से बढ़ जाते हैं। परन्तु पुण्यके समुद्रके समान सज्जन विरले होते हैं जो पूर्ण चन्द्रके समान दूसरोंकी बढ़ती देखकर बढ़ते हों।

दो०—भाग छोट अभिलाषु बड़ ❀ करउँ एक बिस्वास ॥
पैहहिं सुख सुनि सुजन सब ❀ खल करिहहिं उपहास ॥१७॥

भाग्य छोटा, अभिलाषा बड़ी है, परन्तु एक ही भरोसा है—सब सज्जन सुनकर सुख पावेंगे और दुष्ट हँसी करेंगे।

खलपरिहास होइ हित मोरा ❀ काक कहहिं कलकंठ कठोरा ॥
हंसहि बक दादुर चातकही ❀ हँसहि मलिन खल बिमल बतकही ॥

दुष्टोंकी हंसीसे मेरा लाभ ही होगा। कौए सुरीले कण्ठको भी कर्कश कहते ही हैं, बगले हंसोंको, मेढ़क पपीहोंको हंसते हैं; उसी भांति मलिन दुष्ट निर्मल बातोंको हंसा करते हैं।

कबित - रसिक न राम - पद - नेहू ❀ तिन कहँ सुखद हास रस एहू ॥
भाषाभनिति भोरि मति मोरी ❀ हँसिबे जोग हँसे नहिं खोरी ॥

जो लोग न कविता-प्रेमी हैं और न जिनको श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें भक्ति है उनके लिये यह सुखदायी हास्यरस है। एक तो यह भाषाकी रचना है, दूसरे मेरी बुद्धि भोली है, इसलिये हंसने योग्य ही है और हंसनेमें दोष भी नहीं है।

प्रभु - पद - प्रीति न सामुझि नीकी ❀ तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी ॥
हरि-हर-पद रति मति न कुतरकी ❀ तिन कहँ मधुर कथा रघुबरकी ॥

जिन लोगोंकी न तो श्रीरामचरणोंमें प्रीति है और न जिनकी समझ ही अच्छी है उन्हें सुननेपर यह कथा फीकी लगेगी। जिनकी विष्णु और शिवके चरणोंमें भक्ति है और जिनकी बुद्धि कुतर्क करनेवाली नहीं है उनके लिये श्रीरामकथा मीठी है।

राम - भगति - भूषित जिय जानी ❀ सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी ॥
कबि न होउँ नहिं बचनप्रबीनू ❀ सकल कला सब बिद्याहीनू ॥

हृदयमें इसे रामभक्तिपूर्ण समझकर सज्जन सुनेंगे और सुन्दर वाणीसे इसकी प्रशंसा करेंगे। न तो मैं कवि हूं और न बोलनेमें चतुर। मैं सब कलाओं और सब विद्याओंसे हीन हूं।

आखर अरथ अलंकृति नाना ❀ छंद प्रबन्ध अनेक बिधाना ॥
भावभेद रसभेद अपारा ❀ कबित - दोष - गुन बिबिध प्रकारा ॥
कबित बिबेक एक नहिं मोरे ❀ सत्य कहउँ लिखि कागद कोरे ॥

अक्षर, उनके अर्थ, विविध अलंकार, छन्द और उनकी रचना अनेक प्रकारकी होती है। भावों और रसोंके भेदोंका पार नहीं है और कविताके गुण और दोषोंके भी अनेक प्रकार हैं। कविताका ज्ञान मुझे कुछ भी नहीं है, यह मैं कोरे कागजपर लिखकर सत्य ही कह रहा हूं।

दो०—भनिति मोरि सब गुन-रहित ❀ बिस्वबिदित गुन एक ।
सो बिचारि सुनिहहिं सुमति ❀ जिन्हके बिमल बिबेक ॥१८॥

मेरी रचना समस्त गुणोंसे रहित है, परन्तु उसका एक गुण संसारमें प्रकट है। उसीको विचार कर वे मनुष्य सुनेंगे जिनकी बुद्धि अच्छी है और जिनका ज्ञान निर्मल है।

एहि महँ रघुपति नाम उदारा ❀ अति पावन पुरान स्रुति - सारा ॥
मंगल - भवन अमंगल - हारी ❀ उमासहित जेहि जपत पुरारी ॥

इसमें श्रीरामचन्द्रजीका उदार नाम है जो वेदों और पुराणोंका अत्यन्त पवित्र सार, कल्याणोंका घर और अनिष्टोंको दूर करनेवाला है, जिसे पार्वती सहित शंकर जपते हैं।

भनिति बिचित्र सु-कबि-कृत जोऊ ❀ रामनाम बिनु सोह न सोऊ ॥
बिधुबदनी सब भांति सवांरी ❀ सोह न बसन बिना बर नारी ॥

सुकविकी अनोखी रचना होनेपर भी रामनामके बिना शोभा नहीं पाती। चन्द्रमाके समान सुन्दर मुख-वाली श्रेष्ठ स्त्रीका श्रृंगार सब प्रकार किया जाय, परन्तु वह वस्त्रोंके बिना अच्छी नहीं लगती।

सब गुन रहित कु-कबि-कृत बानी ❀ राम - नाम - जस - अंकित जानी ॥
सादर कहहिं सुनहिं बुध ताही ❀ मधुकर सरिस संत गुनग्राही ॥

बुरे कविकी सब गुणोंसे रहित रचनाको भी रामनामकी कीर्तिसे अंकित जानकर पण्डितजन आदर-पूर्वक कहते और सुनते हैं। सज्जन भौंरेके समान गुणग्राही होते हैं।

जदपि कबित रस एकउ नाहीं ❀ रामप्रताप प्रगट एहि माहीं ॥
सोइ भरोस मोरे मन आवा ❀ केहि न सुसंग बड़प्पन पावा ॥

यद्यपि कविताका रस एक भी नहीं है तथापि रामचन्द्रजीका प्रताप इसमें प्रकट है। उसीका भरोसा मुझे अपने मनमें है। सत्संगसे किसने बड़प्पन नहीं पाया है।

धूमउ तजइ सहज करुआई ❀ अगरुप्रसंग सुगंध बसाई ॥
भनिति भदेश बस्तु भलि बरनी ❀ रामकथा जग मंगलकरनी ॥

अगरकी संगतिसे सुगन्धित होकर धुंआं भी अपना स्वाभाविक कड़ुवापन छोड़ देता है। मेरी रचना भद्दी है, परन्तु इसमें संसारका मंगल करनेवाली रामकथारूपी भली वस्तुका वर्णन किया गया है।

छंद—मंगलकरनि कलिमलहरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कविता सरित की ज्यौं सरित पावन पाथ की॥
प्रभु सुजन-संगति भनिति भलि होइहि सुजन-मन-भावनी।
भवअंग भूति मसान की सुमिरत सोहावनि पावनी॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीकी कथा कल्याण करनेवाली और कलियुगके दोषोंको दूर करनेवाली है। कवितारूपी नदीकी गति पवित्र जलवाली गंगा नदीके समान टेढ़ी है। श्रीरामचन्द्रजीकी कीर्तिके सुसंगसे मेरी रचना भली होकर सज्जनोंके मनको अच्छी लगने लगेगी, जैसे श्मशानकी भस्म शिवजीके शरीरमें अच्छी लगती और स्मरण करते ही पवित्र कर देती है।

दो०—प्रिय लागिहि अति सबहि मम ❀ भनिति राम-जस-संग।
दारु बिचारु कि करइ कोउ ❀ बंदिय मलय प्रसंग ॥१९॥

श्रीरामचन्द्रजीके यशके साथ होनेसे मेरी रचना सभीको अत्यन्त प्यारी लगेगी। चन्दनके लिये क्या कोई लकड़ीका विचार करता है! मलयागिरिके संग होनेसे उसका आदर किया जाता है।

स्याम सुरभि पय बिसद अति ❀ गुनद करहिं सब पान।
गिराग्राम सिय-राम-जस ❀ गावहिं सुनहिं सुजान ॥२०॥

काली गायके अत्यन्त गुणकारी उत्तम दूधको सब पीते हैं। (उसी प्रकार मेरी) गंवारू रचनामें श्रीराम और सीताका यश होनेके कारण चतुर मनुष्य उसे गावेंगे और सुनेंगे।

मनि-मानिक-मुकुता-छबि जैसी ❀ अहि-गिरि-गज-सिर सोह न तैसी॥
नृपकिरीट तरुनीतनु पाई ❀ लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥

मणि, माणिक और मोतीकी जैसी छवि है वैसी सर्प, पर्वत और हाथीके मस्तकपर शोभा नहीं पाती। राजाके मुकुट और युवतीके शरीरको पाकर इन सबकी शोभा अधिक हो जाती है।

तैसेहि सु-कबि-कबित बुध कहहीं ❀ उपजहिं अनत अनत छबि लहहीं॥
भगति हेतु बिधिभवन बिहाई ❀ सुमिरत सारद आवति धाई॥

उसी प्रकार पंडितजन कहते हैं कि सुकविकी कविता कहीं उत्पन्न होती है और कहीं शोभा पाती है। कविकी भक्तिके कारण सरस्वती स्मरण करते ही, ब्रह्मलोक छोड़कर दौड़ी चली आती हैं।

राम - चरित - सर बिनु अन्हवाये ❀ सो स्रम जाइ न कोटि उपाये ॥
कबि कोबिद अस हृदय बिचारी ❀ गावहिं हरिजस कलि-मल-हारी ॥

करोड़ों उपाय करनेपर भी रामचरितके सरोवरमें स्नान कराये बिना वह थकावट दूर नहीं होती। अपने हृदयमें ऐसा विचार करके ही कवि और पंडित कलियुगके दोषोंको दूर कर देनेवाले भगवानके यशको गाते हैं।

कीन्हें प्राकृत - जन - गुन - गाना ❀ सिर धुनि गिरा लागि पछिताना ॥
हृदय सिंधु मति सीपि समाना ❀ स्वाती सारद कहहिं सुजाना ॥
जौं बरखइ बर बारि बिचारू ❀ होहिं कबित मुकुता मनि चारू ॥

साधारण मनुष्योंका गुणगान करनेसे सरस्वती शिर धुनकर पछताने लगती हैं। चतुर मनुष्य कविके हृदयको समुद्र, बुद्धिको सीपी और शारदाको स्वाति नक्षत्रके समान कहते हैं। यदि यह उत्तम विचाररूपी जलकी वृष्टि करे तो उससे कवितारूपी सुन्दर मोती उत्पन्न होते हैं।

दो०—जुगुति बेधि पुनि पोहिअहि ❀ रामचरित बर ताग।
पहिरहिं सज्जन बिमल उर ❀ सोभा अति अनुराग ॥२१॥

युक्तिसे वेधकर और फिर रामचरितके श्रेष्ठ धागेमें पिरोकर सज्जन उसे अपने विशुद्ध हृदयमें प्रेमसे धारण करते हैं, जिसकी अत्यन्त शोभा होती है।

जे जनमे कलिकाल कराला ❀ करतब बायस बेष मराला ॥
चलत कुपंथ बेदमग छाँड़े ❀ कपट कलेवर कलिमल भाँड़े ॥

घोर कलियुगमें जिन्होंने जन्म लिया है, जिनका कर्म कौएके समान और भेष हंसके समान है, जो वेद-मार्ग छोड़कर कुमार्गपर चलते हैं, जिनका कपटमय शरीर कलियुगके दोषोंका भांडार है।

बंचक भगत कहाइ राम के ❀ किंकर कंचन कोह काम के ॥
तिन महँ प्रथम रेख जग मोरी ❀ धिग धरमध्वज धंधकधोरी ॥

जो महा छली हैं और रामके भक्त कहलाकर भी सुवर्ण, क्रोध और कामदेवके सेवक बने हुए हैं, उनमें मेरी गिनती संसारमें पहिले है। धर्मध्वज बनकर पाखण्डके धंधेका बोझ उठानेवालोंको धिक्कार है!

जौं अपने अवगुन सब कहऊँ ❀ बाढइ कथा पार नहिं लहऊँ ॥
तातें मैं अति अलप बखाने ❀ थोरे महँ जानिहहिं सयाने ॥

यदि मैं अपने सब अवगुणोंको कहूं तो कथा बहुत बढ़ जायगी और पार न पाऊंगा। इसीलिये मैंने बहुत कम दुर्गुणोंको कहा है। चतुर मनुष्य थोड़ेसे ही जान लेंगे।

समुझि बिबिध बिधि बिनती मोरी ❀ कोउ न कथा सुनि देइहि खोरी ॥
एतेहु पर करिहहिं जे संका ❀ मोहि तें अधिक ते जड़ मति रंका ॥

मेरी अनेक प्रकारकी विनतीको समझ कोई कथा सुनकर मुझे दोष न देगा। इतनेपर भी जो मनुष्य शङ्का करेंगे वे मुझसे भी अधिक मूर्ख और बुद्धिहीन हैं।

कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ ❀ मति अनुरूप रामगुन गावउँ ॥
कहँ रघुपतिके चरित अपारा ❀ कहँ मति मोरि निरत संसारा ॥

कवि नहीं हूं और न चतुर ही कहलाता हूं। अपनी बुद्धिके अनुसार श्रीरामचन्द्रजीका गुण गाता हूं। कहां रामचन्द्रजीका अपार चरित्र और कहां संसारमें फंसी हुई मेरी बुद्धि!

जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं ❀ कहहु तूल केहि लेखे माहीं ॥
समुझत अमित रामप्रभुताई ❀ करत कथा मन अति कदराई ॥

जिस वायुसे मेरु पर्व्वत उड़ जाता है, कहो, उसके सामने रूईकी क्या गिनती है? श्रीरामचन्द्रजीकी असीम प्रभुताको समझते ही मेरा मन कथा लिखते समय अत्यन्त संकोच करने लगता है!

दो०—सारद सेष महेस बिधि ❀ आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन ❀ करहिं निरंतर गान ॥२२॥

सरस्वती, शेषनाग, शिव, ब्रह्मा, शास्त्र, वेद और पुराण 'नेति नेति' कहकर जिसके गुणोंको सदैव गाया करते हैं।

सब जानत प्रभुप्रभुता सोई ❀ तदपि कहे बिनु रहा न कोई ॥
तहाँ बेद अस कारन राखा ❀ भजनप्रभाउ भाँति बहु भाखा ॥

प्रभुकी प्रभुता वैसी है, यह सब जानते हैं; परन्तु कहनेसे कोई नहीं चूका। उस विषयमें वेदने यह मत स्थिर किया है और कहा है कि भजनका प्रभाव अनेक प्रकारका होता है।

एक अनीह अरूप अनामा ❀ अज सच्चिदानंद परधामा ॥
व्यापक बिस्वरूप भगवाना ❀ तेइ धरि देह चरित कृत नाना ॥

ईश्वर एक है, वह कामनारहित है, उसका कोई रूप और नाम नहीं, वह अजन्मा, सच्चिदानन्द और परमधाम है सर्वत्र व्यापक और विश्वरूप है, उसने शरीर धारण कर अनेक प्रकारको लीलाएं की हैं।

सो केवल भगतन्ह हित लागी ❀ परमकृपाल प्रनत-अनुरागी ॥
जेहि जन पर ममता अति छोहू ❀ जेहि करुना करि कीन्ह न कोहू ॥

वह केवल भक्तोंके ही लिये शरीर धारण करता है। वह बड़ा दयालु और सेवकोंपर स्नेह करनेवाला है। भक्तोंपर उसकी ममता और अत्यन्त कृपा रहती है। उसने दयाकर कभी क्रोध नहीं किया।

गई बहोर गरीब नेवाजू ❀ सरल सबल साहिब रघुराजू ॥
बुध बरनहिं हरिजस अस जानी ❀ करहिं पुनीत सुफल निज बानी ॥

श्रीरामचन्द्रजी बिगड़ीको बनानेवाले, गरीबनिवाज, सरल, सबल और सबके स्वामी हैं। यही जानकर पंडितजन भगवानका यश वर्णन करते और अपनी वाणीको सफल एवं पवित्र करते हैं।

तेहि बल मैं रघुपति-गुन-गाथा ❀ कहिहउँ नाइ रामपद माथा ॥
मुनिन्ह प्रथम हरिकीरति गाई ❀ तेहि मग चलत सुगम मोहिं भाई ॥

उसीके बलसे मैं श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर उनके गुणोंकी कथा कहूंगा। मुनियोंने पहिले ही भगवानकी कीर्तिको गाया है, उसी मार्गपर चलना मुझे सुगम है।

दो०—अति अपार जे सरित बर ❀ जौं नृप सेतु कराहिं।
चढ़ि पिपीलिकउ परम लघु ❀ बिनु स्रम पारहि जाहिं ॥२३॥

जिस प्रकार राजा लोग बहुत अधिक चौड़ी सुन्दर नदियोंका पुल बंधवा देते हैं और श्रम उठाये बिना ही उससे होकर अत्यन्त छोटी चींटियां भी पार चली जाती हैं।

एहि प्रकार बल मनहिं देखाई ❀ करिहउँ रघुपतिकथा सोहाई ॥
ब्यास आदि कबिपुंगव नाना ❀ जिन्ह सादर हरिसुजस बखाना ॥

इसी प्रकार मनमें बल धारणकर मैं भी श्रीरामचन्द्रजीकी सुन्दर कथा लिखूंगा। व्यास आदि जिन अनेक श्रेष्ठ कवियोंने आदरपूर्वक भगवानका यश वर्णन किया है—

चरन कमल बंदउँ तिन्ह केरे ❀ पुरवहु सकल मनोरथ मेरे ॥
कलिके कबिन्ह करउँ परनामा ❀ जिन्ह बरने रघुपति-गुन-ग्रामा ॥

उनके चरणकमलोंकी बन्दना करता हूं। वे मेरे सब मनोरथ पूरे करें। कलियुगके जिन कवियोंने श्रीरामके गुणोंका वर्णन किया है, उन्हें मैं प्रणाम करता हूं।

जे प्राकृत कबि परम सयाने ❀ भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने ॥
भये जे अहहिं जे होइहहिं आगे ❀ प्रनवउ सबहिं कपट सब त्यागे ॥

प्राकृत भाषाके जो बड़े चतुर कवि हैं और जिन्होंने भाषामें भगवानका चरित्र वर्णन किया है, ऐसे कवि जो हो चुके हैं, विद्यमान हैं और भविष्यत्‌में होंगे उन सबको छल-कपट छोड़कर मैं प्रणाम करता हूं।

होहु प्रसन्न देहु बरदानू ❀ साधुसमाज भनिति सनमानू ॥
जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं ❀ सो स्रम बादि बालकबि करहीं ॥

प्रसन्न होकर मुझे वरदान दो कि मेरी यह रचना सज्जनोंमें सम्मान पावे। जिस ग्रन्थका आदर पंडित नहीं करते उसका व्यर्थ श्रम बालक कवि ही उठाते हैं।

कीरति भनिति भूति भलि सोई ❀ सुर-सरि-सम सब कहँ हित होई ॥
राम-सु-कीरति भनिति भदेसा ❀ असमंजस अस मोहिं अँदेसा ॥
तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मोरे ❀ सिअनि सोहावनि टाट पटोरे ॥

कीर्ति, कविता और सम्पत्ति वही अच्छी होती है जिससे गंगाजीके समान सबका हित होता है। मुझे चिन्ता और असमञ्जस यही है कि श्रीरामचन्द्रजीकी कीर्ति सुन्दर है और मेरी कविता भद्दी है। यह भी मुझे तुम्हारी कृपासे ही सुलभ है। मेरी कवितामें रामकथा, टाटमें सुन्दर सिलाईकी तरह प्रतीत होगी।

दो०—सरल कबित कीरति बिमल ❀ सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बैर बिसराइ रिपु ❀ जो सुनि करहिं बखान ॥२४॥

विद्वान मनुष्य उसी सरल कविता और निर्मल कीर्तिका आदर करते हैं जिसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक वैरको भुलाकर प्रशंसा करने लगते हैं।

सो न होइ बिनु बिमल मति ❀ मोहिं मतिबल अतिथोरि ॥
करहु कृपा हरिजस कहउँ ❀ पुनि पुनि करउँ निहोरि ॥२५॥

निर्मल बुद्धि हुए बिना वैसी कविता नहीं होती और मुझे बुद्धिका बल बहुत कम है। मैं श्रीरामचन्द्रजीका यश वर्णन कर रहा हूं। मुझपर कृपा करो। बार बार विनती करता हूं।

कबिकोबिद रघुबरचरित ❀ मानस - मंजु - मराल।
बालबिनय सुनि सुरुचि लखि ❀ मोपर होहु कृपाल ॥२६॥

श्रीरामचरितरूपी मानसरोवरके सुन्दर हंसरूपी कवि और पंडितजन बालकके समान मेरी विनती सुनकर और सुन्दर रुचि देखकर मुझपर दया करें।

सो०—बंदउँ मुनि - पद - कंजु ❀ रामायन जेहिं निरमयेउ।
सखर सुकोमल मंजु ❀ दोषरहित दूषन-सहित ॥२७॥

मैं वाल्मीकि मुनिके चरणकमलोंकी वन्दना करता हूं, जिन्होंने रामायणको बनाया, जो खर और दूषण (राक्षस) सहित होनेपर भी अत्यन्त कोमल, सुन्दर और दोषहीन है।

वंदउँ चारिउ वेद ⊛ भव - वारिधि - बोहित सरिस।
जिन्हहिं न सपनेहु खेद ⊛ बरनत रघुबर बिसद जस ॥२८॥

संसार-समुद्रके लिये नौकाके समान चारों वेदोंकी मैं वन्दना करता हूं, जिन्हें श्रीरामचन्द्रजीका निर्मल यश वर्णन करते हुए कभी स्वप्नमें भी खेद (थकान) नहीं होता।

वंदउँ विधि - पद - रेनु ⊛ भवसागर जेहि कीन्ह जहँ।
संत सुधा ससि धेनु ⊛ प्रगटे खल बिष बारुनी ॥२९॥

मैं उन ब्रह्माके चरणोंकी रजकी वन्दना करता हूं, जिन्होंने संसाररूपी समुद्रकी सृष्टि की है, जिसमें अमृत, चन्द्रमा और कामधेनुके समान सज्जन और विष एवं मदिराके समान दुष्ट उत्पन्न हुए हैं।

दो०—बिबुध-बिप्र- बुध-ग्रह-चरन ⊛ बंदि कहउँ करजोरि।
होइ प्रसन्न पुरवहु सकल ⊛ मंजु मनोरथ मोरि ॥३०॥

देवता, ब्राह्मण, पंडित और ग्रह—सबके चरणोंकी वन्दना कर मैं हाथ जोड़कर कहता हूं कि मुझपर प्रसन्न होकर मेरे मनकी सब शुभ अभिलाषाएं पूरी करो।

पुनि वंदउँ सारद सुरसरिता ⊛ जुगल पुनीत मनोहरचरिता ॥
मज्जन पान पाप हर एका ⊛ कहत सुनत एक हर अबिबेका ॥

फिर मैं सरस्वती और गंगाजीकी वन्दना करता हूं। दोनोंहीके मनोहर चरित पवित्र हैं। एक स्वयं कहने और सुननेसे अज्ञान दूर कर देती है और दूसरी स्नान करने एवं जल पीनेसे पापोंको हरण कर लेती है।

गुरु पितु मातु महेस भवानी ⊛ प्रनवउँ दीनबंधु दिनदानी ॥
सेवक स्वामि सखा सियपी के ⊛ हित निरुपधि सब बिधि तुलसी के ॥

मैं महादेव और पार्वतीकी वन्दना करता हूं; जो गुरु, माता, पिता, दीनदयाल और सुदिन दिखानेवाले हैं। सीतापति श्रीरामचन्द्रजीके वे सेवक, स्वामी और मित्र हैं और तुलसीदासके लिये सब प्रकार हितकारी हैं।

कलि बिलोकि जग हित हर गिरिजा ⊛ साबर-मंत्र-जाल जिन्ह सिरिजा ॥
अनमिल आखर अरथ न जापू ⊛ प्रगट प्रभाउ महेसप्रतापू ॥

जिन शिवपार्वतीने कलियुगको देखकर संसारके हितके लिये, साबरमंत्र-समूहको बनाया है। उन मंत्रोंके अक्षर बेमेल है, उनका न कुछ अर्थ है और न जप, परन्तु शंकरके प्रतापसे उनका प्रभाव सबपर प्रकट है।

होउ महेस मोहिं पर अनुकूला ❁ करहु कथा मुद-मंगल-मूला ॥
सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ ❁ बरनउँ रामचरित चितचाऊ ॥

वही महादेव मुझपर प्रसन्न हों और इस कथाको आनन्ददायक और मंगलकारक बनावें। शिव और पार्वती दोनोंका स्मरण कर और प्रसाद पाकर मैं उत्साहपूर्ण चित्तसे राम-चरित वर्णन करता हूं।

भनिति मोरि सिवकृपा बिभाती ❁ ससिसमाज मिलि मनहुं सुराती ॥
जे एहि कथहिं सनेह समेता ❁ कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता ॥
होइहहिं राम-चरन-अनुरागी ❁ कलि-मल-रहित सु-मंगल भागी ॥

चन्द्रमा और ताराओंसे मिलकर काली रातकी जैसी शोभा होती है वैसी ही शिवजीकी कृपासे मेरी रचना शोभा पावेगी। जो इस कथाको प्रेमपूर्वक कहेंगे, सुनेंगे और मन लगाकर समझेंगे, वे कलियुगके दोषोंसे रहित होकर श्रीरामचरणोंके भक्त हो जायंगे और कल्याणके भागी होंगे।

दो०—सपनेहुँ साचहुँ मोहिपर ❁ जौं हरगौरि पसाउ ॥
तौ फुर होउ जो कहउँ सब ❁ भाषा भनिति प्रभाउ ॥३१॥

जो सपनेमें भी सचमुच ही मुझपर शिव और पार्वतीकी कृपा हो तो अपनी भाषाकी कविताका जो प्रभाव बतलाया है वह सब सत्य होवे।

बंदउँ अवधपुरी अति पावनि ❁ सरजूसरि कलि-कलुष-नसावनि ॥
प्रनवउँ पुर-नर-नारि बहोरी ❁ ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी ॥

अत्यन्त पवित्र अयोध्यापुरी और कलियुगके पापोंको नष्ट कर देनेवाली सरजू नदीकी मैं वन्दना करता हूं। फिर मैं अयोध्याके नर-नारियोंको प्रणाम करता हूं, जिनपर श्रीरामचन्द्रजीकी कम ममता नहीं है।

सियनिंदक अघओघ नसाये ❁ लोक-बिसोक बनाइ बसाये ॥
बंदउँ कौसल्या दिसि प्राची ❁ कीरति जासु सकल जग मांची ॥

उन्होंने सीताजीकी निन्दा करनेवाले (रजक) को, पापसमूह नष्ट कर, शोकरहित करके वैकुण्ठलोकमें भलीभांति बसाया। पूर्व दिशाके समान कौशल्याकी मैं वन्दना करता हूं,—जिसका यश समस्त संसारमें फैला हुआ है।

प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू ❁ बिस्वसुखद खल-कमल-तुसारू ॥
दसरथराउ सहित सब रानी ❁ सुकृत-सुमंगल-मूरति मानी ॥

जिसमें सुन्दर चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी प्रकट हुए, जो समस्त संसारको सुख देनेवाले और

दुष्टरूपी कमलोंके लिये पालेके समान हैं। राजा दशरथसहित सब रानियोंको पुण्य और कल्याणकी मूर्ति मानकर—

करउँ प्रनाम करम मन बानी ❀ करहु कृपा सुतसेवक जानी ॥
जिन्हहिं बिरचि बड भयउ बिधाता ❀ महिमा-अवधि राम-पितु-माता ॥

मैं मन, वाणी और कर्मसे प्रणाम करता हूं। अपने पुत्रका सेवक जानकर मुझपर कृपा करो। जिनको रचकर ब्रह्माने बड़प्पन पाया और श्रीरामचन्द्रजीके माता-पिता होनेके कारण जो गौरवकी सीमा हो गये।

सो०—बंदउँ अवधभुआल ❀ सत्य प्रेम जेहि रामपद ॥
बिछुरत दीनदयाल ❀ प्रिय तनु तृन इव परिहरेउ ॥३२॥

मैं अयोध्याके राजा दशरथकी वन्दना करता हूं; जिन्हें श्रीरामके चरणोंमें सच्चा प्रेम है और जिन्होंने दीनोंपर दया करनेवाले श्रीरामका वियोग होते ही प्यारा शरीर तिनकेकी भांति छोड़ दिया।

प्रनवउँ परिजनसहित बिदेहू ❀ जाहि रामपद गूढ़ सनेहू ॥
जोग भोग महँ राखेउ गोई ❀ राम बिलोकत प्रगटेउ सोई ॥

सकुटुम्ब राजा जनकको प्रणाम करता हूं, जिन्हें श्रीरामके चरणोंमें प्रगाढ़ प्रेम है, जिसे उन्होंने योग और भोगमें छिपाकर रखा था, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीको देखते ही वह प्रकट हो गया।

प्रनवउँ प्रथम भरत के चरना ❀ जासु नेम ब्रत जाइ न बरना ॥
राम-चरन-पंकज मन जासू ❀ लुबुध मधुप इव तजइ न पासू ॥

पहिले भरतके चरणोंको प्रणाम करता हूं, जिनका व्रत और नियम वर्णन नहीं किया जा सकता। जिनका मन लुभाये हुए भौंरेके समान श्रीरामके चरणरूपी कमलके पाससे दूर नहीं जाता।

बंदउँ लछिमन-पद-जल-जाता ❀ सीतल-सुभग-भगत-सुख-दाता ॥
रघुपतिकीरति बिमल पताका ❀ दंड समान भएउ जस जाका ॥

शीतल, सुन्दर और भक्तोंको सुख देनेवाले लक्ष्मणजीके चरणकमलोंकी मैं वन्दना करता हूं, जिनका यश श्रीरामजीकी कीर्तिकी उज्ज्वल पताकामें लगनेवाली लकड़ीके समान हुआ है।

सेष सहस्रसीस जगकारन ❀ जो अवतरेउ भूमि-भय-टारन ॥
सदा सो सानुकूल रह मोपर ❀ कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर ॥

जो संसारके कारण और हजार शिर रखनेवाले शेषनाग हैं, और जिन्होंने पृथ्वीका भय दूर करनेके लिये अवतार लिया है, वे कृपासागर और गुणनिधान लक्ष्मणजी मुझपर सदैव प्रसन्न रहें।

रिपु-सूदन-पद-कमल नमामी ❀ सूर सुसील भरतअनुगामी ॥
महाबीर बिनवउँ हनुमाना ❀ राम जासु जस आपु बखाना ॥

वीर, शीलवान और भरतके अनुयायी शत्रुघ्नके चरणकमलोंको मैं नमस्कार करता हूं। महावीर हनुमानकी मैं विनती करता हूं जिनके यशको श्रीरामचन्द्रजीने स्वयं वर्णन किया है।

सो०—प्रनवउँ पवनकुमार ❀ खल - बन - पावक ज्ञानघन।
जासु हृदयआगार ❀ बसहिं राम सर-चाप-धर ॥ ३३ ॥

मैं परम ज्ञानी पवनपुत्र हनुमानको प्रणाम करता हूं, जो दुष्टोंके वनको भस्म करनेके लिये अग्निके समान हैं और जिनके हृदयरूपी घरमें श्रीरामचन्द्रजी धनुषबाण लेकर बसते हैं।

कपिपति रीछ - निसाचर - राजा ❀ अंगदादि जे कीससमाजा ॥
बंदउँ सब के चरन सोहाए ❀ अधमसरीर राम जिन्ह पाए ॥

कपिराज सुग्रीव, ऋच्छराज, जामवन्त, राक्षसराज विभीषण, अंगद आदि वानर-समूह—सबके सुन्दर चरणोंकी मैं वन्दना करता हूं, जिन्होंने अधम शरीर रहते हुए भी श्रीरामको पा लिया।

रघुपति - चरन - उपासक जेते ❀ खग मृग सुर नर असुर समेते ॥
बंदउ पदसरोज सब केरे ❀ जे बिनु काम राम के चेरे ॥

पक्षियों, पशुओं, देवताओं, मनुष्यों और राक्षसोंसहित जितने श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके उपासक हैं, निष्काम भावसे सेवक हैं, उन सबके चरणकमलोंकी मैं वन्दना करता हूं।

सुकसनकादि भगत मुनि नारद ❀ जे मुनिवर बिग्यानबिसारद ॥
प्रनवउँ सबहिं धरनि धरि सीसा ❀ करहु कृपा जन जानि मुनीसा ॥

शुक-सनकादि भक्त और नारदादि मुनि तथा अन्य परम ज्ञानी मुनिश्रेष्ठ, उन सबको मैं पृथ्वीपर माथा टेककर प्रणाम करता हूं। हे मुनीश्वरगण, अपना भक्त जानकर कृपा करो।

जनकसुता जगजननि जानकी ❀ अतिसय प्रिय करुनानिधान की ॥
ताके जुग - पद - कमल मनावउँ ❀ जासु कृपा निरमल मति पावउँ ॥

राजा जनककी पुत्री श्रीजानकीजी संसारकी माता हैं और दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीको अत्यंत प्रिय हैं। उनके दोनों चरणकमलोंको मैं मनाता (प्रणाम करता) हूं। उनकी कृपासे मैं निर्मल बुद्धि पाऊंगा।

पुनि मन बचन करम रघुनायक ❀ चरन कमल बंदउँ सब लायक ॥
राजिवनयन धरे धनुसायक ❀ भगत-बिपति-भंजन सुखदायक ॥

फिर मैं सब प्रकार समर्थ, कमलनेत्र, धनुषबाणधारी, सुखदाता और भक्तोंकी विपत्ति दूर करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी मन, वाणी और कर्मसे वन्दना करता हूं।

दो०—गिरा अरथ जल बीचि सम ❀ कहियत भिन्न न भिन्न।
बंदउँ सीतारामपद ❀ जिन्हहिं परम प्रिय खिन्न ॥३४॥

मैं श्रीराम और सीताके चरणोंकी वन्दना करता हूं, जिन्हें दुःखी जन अत्यंत प्रिय हैं और जो शब्द और उसके अर्थ तथा जल और उसकी तरंगके समान यद्यपि अलग अलग कहे जाते हैं तथापि अलग नहीं हैं, एक ही हैं।

बंदउँ रामनाम रघुबर को ❀ हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥
बिधि-हरि-हर-मय बेदप्रान सो ❀ अगुन अनूपम गुननिधान सो ॥

मैं श्रीरामचंद्रजीके 'राम' नामकी वन्दना करता हूं; जो अग्नि, सूर्य और चंद्रमाका बीज है; जो ब्रह्मा, विष्णु और शिवमय है; वेदोंका प्राण है; और जो निर्गुण, उपमारहित और गुणनिधान है।

महामंत्र जोइ जपत महेसू ❀ कासी मुकुति हेतु उपदेसू ॥
महिमा जासु जान गनराऊ ❀ प्रथम पूजियत नामप्रभाऊ ॥

यह एक महामंत्र है जिसका जप शिवजी किया करते हैं, जिसका उपदेश ही काशीमें मुक्ति होनेका कारण है, जिसकी महिमा गणेशजी जानते हैं, जो राम नामके प्रभावके फलस्वरूप ही पहिले पूजे जाते हैं।

जान आदिकबि नामप्रतापू ❀ भएउ सुद्ध करि उलटा जापू ॥
सहस-नाम-सम सुनि सिवबानी ❀ जपि जेईं पिय संग भवानी ॥

आदि कवि वाल्मीकिजी नामके प्रतापको जानते हैं जो इसे उलटा 'मरा' जपकर ही पवित्र हो गये। शिवजीके मुखसे विष्णुसहस्रनामके समान सुनकर पार्वतीजीने इसे हीं जपकर पतिके साथ भोजन कर लिया।

हरषे हेतु हेरि हर ही को ❀ किय भूषन तियभूषन ती को ॥
नामप्रभाउ जान सिव नीको ❀ कालकूट फल दीन्ह अमी को ॥

शिवजी हृदयका यह भाव देखकर प्रसन्न हुए और पार्वतीजीको श्रेष्ठ स्त्रियोंका भूषण बनाया। नामके प्रभावको शिवजी अच्छी तरह जानते हैं, जिन्हें विषने अमृत जैसा फल दिया।

दो०—बरषा रितु रघुपतिभगति ❀ तुलसी सालि सुदास ॥
रामनाम बर बरनजुग ❀ सावन भादव मास ॥३५॥

श्रीरामभक्ति वर्षाऋतु है, तुलसीदास धान हैं और 'राम' नामके दोनों श्रेष्ठ अक्षर सावन और भादोंके महीने हैं।

आखर मधुर मनोहर दोऊ ❀ बरन बिलोचन जन जिय जोऊ ॥
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू ❀ लोक-लाहु पर-लोक-निबाहू ॥

दोनों अक्षर 'रा' और 'म' मधुर एवं मनोहर हैं। ये सब अक्षरों तथा मनुष्य-हृदयके नेत्र हैं। स्मरण करनेमें सबको सुलभ और सुखदायी हैं। इनसे इस लोकमें लाभ और परलोकमें निबाह होता है।

कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके ❀ राम लखन सम प्रिय तुलसी के ॥
बरनत बरन प्रीति बिलगाती ❀ ब्रह्म जीव सम सहज सँघाती ॥

रामनामके ये दोनों अक्षर कहने-सुनने और स्मरण करनेमें बहुत ही अच्छे हैं और तुलसीदासको राम और लक्ष्मणके ही समान प्यारे हैं। अलग अलग वर्णन करनेमें इन अक्षरोंकी प्रीति बिलगाती है, परन्तु ब्रह्म और जीवके समान ये स्वभावसे ही साथ रहते हैं।

नर नारायन सरिस सुभ्राता ❀ जगपालक बिसेषि जनत्राता ॥
भगति-सुतिय कल करन बिभूषन ❀ जग-हित-हेतु बिमल बिधु पूषन ॥

ये दोनों अक्षर संसारको पालनेवाले और विशेषकर भक्तोंकी रक्षा करनेवाले नर और नारायणके समान सुन्दर भाई हैं। ये भक्तिरूपी सुन्दर स्त्रीके दोनों कानोंके सुन्दर भूषण और संसारके कल्याणके लिये निर्मल चन्द्रमा और सूर्य हैं।

स्वादु तोष सम सुगति सुधाके ❀ कमठ सेष सम धर बसुधा के ॥
जन - मन - कंज - मंजु - मधुकर से ❀ जीह जसोमति हरि हलधर से ॥

ये मुक्तिरूपी अमृतके स्वाद और संतोषके समान, पृथ्वीको धारण करनेके लिये कच्छप और शेषनागके समान, भक्तोंके मनरूपी सुन्दर कमलके लिये भौंरेके समान और जीभरूपी यशोदाके लिये श्रीकृष्ण और बलरामके समान हैं।

दो०—एक छत्र एक मुकुटमनि ❀ सब बरननि पर जोउ ॥
तुलसी रघुबरनाम के ❀ बरन बिराजत दोउ ॥२०॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि सब अक्षरोंके ऊपर श्रीरामनामके दोनों अक्षरोंमेंसे एक छत्र (˚) और दूसरा मुकुटमणि (˙) बनकर रहता दिखलायी पड़ता है।

समुझत सरिस नाम अरु नामी ❀ प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी ॥
नाम रूप दुइ ईसउपाधी ❀ अकथ अनादि सुसामुझि साधी ॥

नाम और नामवाला, दोनों समझनेमें समान हैं। दोनोंमें परस्पर स्वामी और सेवकके समान प्रीति है। नाम और रूप, ये दोनों ईश्वरकी माया क्रमशः अकथनीय और अनादि हैं, जिन्हें ज्ञानी ही समझते हैं।

को बड़ छोट कहत अपराधू ❀ सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू ॥
देखिअहिं रूप नामआधीना ❀ रूपग्यान नहिं नामबिहीना ॥

यह कहनेमें बड़ा दोष है कि नाम और रूपमें कौन बड़ा है और कौन छोटा। साधु लोग इनके गुणोंके भेदोंको सुनकर समझ लेंगे। वे देखेंगे कि रूप नामके अधीन है और नामके बिना रूपका ज्ञान नहीं होता।

रूप बिसेष नाम बिनु जाने ❀ करतलगत न परहिं पहिचाने ॥
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे ❀ आवत हृदय सनेह बिसेखे ॥

हथेलीपर रखा हुआ रूप (पदार्थ) विशेष नाम जाने बिना पहिचाना नहीं जा सकता। रूप बिना देखे हुए भी नामके स्मरण करनेसे हृदयमें अधिक स्नेह उत्पन्न होता है।

नाम-रूप-गति अकथ कहानी ❀ समुझत सुखद न परति बखानी ॥
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी ❀ उभयप्रबोधक चतुर दुभाखी ॥

नाम और रूपकी गतिकी अकथनीय कथा समझनेमें सुखदायी है, पर कही नहीं जा सकती। निर्गुण और सगुणके बीच बढ़िया साक्षी और दोनोंकी बातोंको समझानेवाला चतुर दुभाषिया नाम ही है।

दो०—राम-नाम-मनि-दीप धरु ❀ जीह देहरीद्वार।
तुलसी भीतर बाहरउ ❀ जो चाहसि उँजिआर ॥३७॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि यदि भीतर और बाहर दोनों ही स्थानोंमें उजेला चाहते हो तो द्वाररूप मुखकी देहरीरूपी जिह्वापर रामनामरूपी मणिका (कभी न बुझनेवाला) दीपक रखो।

नाम जीह जपि जागहिं जोगी ❀ बिरति बिरंचिप्रपंच बियोगी ॥
ब्रह्मसुखहिं अनुभवहिं अनूपा ❀ अकथ अनामय नाम न रूपा ॥

जिह्वासे नामको जपकर ही योगीजन जग जाते हैं और उन्हें ब्रह्माके प्रपंच अर्थात् संसारसे उदासीनता और वैराग्य हो जाता है। वे उस ब्रह्मके अनुपम सुखको अनुभव करने लगते हैं जो अकथनीय और मायारहित है तथा जिसका न तो नाम है और न रूप ही।

जाना चहहिं गूढ़गति जेऊ ❀ नाम जीह जपि जानहिं तेऊ ॥
साधक नाम जपहिं लउ लाए ❀ होहिं सिद्ध अनिमादिक पाए ॥

ईश्वरके गूढ़ तत्वको जो जानना चाहते हैं वे भी जिह्वासे नामको जपकर ही जानते हैं। लौ लगाकर नाम जपनेसे साधकजन अणिमादि सिद्धियां पाकर सिद्ध हो जाते हैं।

जपहिं नाम जन आरत भारी ❀ मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी ॥
रामभगत जग चारि प्रकारा ❀ सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥

अत्यंत दुःखी मनुष्य नामको जपते हैं, जिससे उनके कठिन कष्ट मिट जाते हैं और वे सुखी हो जाते हैं। संसारमें श्रीरामचंद्रजीके भक्त चार प्रकारके होते हैं। चारों ही पुण्यात्मा, पापहीन और उदार हैं।

चहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा ❁ ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पियारा ॥
चहुँ जुग चहुँ स्रुति नामप्रभाऊ ❁ कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ ॥

इन चारों तरहके चतुर भक्तोंके लिये श्रीरामका नाम आधार है, परन्तु उनमें ज्ञानी भक्त ही प्रभुको अधिक प्यारा होता है। चारों युगों और चारों वेदोंमें नामकी महिमा गायी गयी है, विशेषकर कलियुगमें तो दूसरा उपाय ही नहीं है।

दो०—सकल - कामना - हीन जे ❁ राम - भगति - रस - लीन ॥
नाम सुप्रेम - पियूष - ह्रद ❁ तिनहुँ किए मन मीन ॥ २८ ॥

समस्त इच्छाओंसे रहित होकर जो राम-भक्तिके रसमें मग्न हैं उन्होंने भी श्रीरामनामके सुन्दर प्रेमरूपी अमृतके सरोवरमें अपने मनको मछली बनाया है।

अगुन सगुन दुइ ब्रह्मसरूपा ❁ अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥
मोरे मत बड़ नाम दुहू ते ❁ किय जेहि जुग निजबस निजबूते ॥

निर्गुण और सगुण, ये ब्रह्मके दो स्वरूप हैं। ये दोनों अकथनीय, अथाह, अनादि और अनुपम हैं। मेरे मतसे दोनोंसे ही नाम बड़ा है, जिसने उन दोनोंको अपने बलसे वशीभूत कर रखा है।

प्रौढ़ सुजन जनि जानहिं जन की ❁ कहउँ प्रतीति प्रीति रुचि मन की ॥
एक दारुगत देखिय एकू ❁ पावक सम जुग ब्रह्मबिबेकू ॥

वृद्ध और चतुर मनुष्य लोगोंके मनकी बात जानते हैं। मैं अपने मनका विश्वास, प्रीति और रुचि बतलाता हूं। निर्गुण और सगुण ब्रह्मका विचार अग्निके समान है। एक अग्नि तो लकड़ीके अन्दर ही व्याप्त रहती है और दूसरी बाहर दिखलायी पड़ती है।

उभय अगम जुग सुगम नाम तें ❁ कहउँ नाम बड़ ब्रह्म राम तें ॥
ब्यापक एक ब्रह्म अबिनासी ❁ सत चेतन घन आनँदरासी ॥

दोनों ही यद्यपि अगम हैं तथापि नामसे सुगम हो जाते हैं। इसीलिये मैंने ब्रह्म और रामसे भी बड़ा उनके नामको बतलाया है। ब्रह्म एक है, वह व्यापक, अविनाशी और सच्चिदानंद है।

अस प्रभु हृदय अछत अबिकारी ❁ सकल जीव जग दीन दुखारी ॥
नामनिरूपन नामजतन तें ❁ सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें ॥

ऐसे निर्विकार प्रभुके हृदयमें रहते हुए भी संसारके समस्त प्राणी दीन और दुःखी हैं। रत्नसे जिसे उसका मूल्य मालूम हो जाता है उसी प्रकार नामको जपनेसे रूप भी प्रकट हो जाता है।

दो०—निरगुन तें एहि भांति बड़ ❀ नामप्रभाउ अपार ॥
कहउँ नाम बड़ राम तें ❀ निज-बिचार-अनुसार ॥ ३६ ॥

इस प्रकार निर्गुणकी अपेक्षा नामका प्रभाव बड़ा और अपार है, इसीलिये मैं अपने विचारके अनुसार कहता हूं कि रामसे भी बड़ा उनका नाम है।

राम भगत-हित नरतनु धारी ❀ सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा ❀ भगत होहिं-मुद-मंगल-बासा ॥

श्रीरामचंद्रजीने भक्तोंके कल्याणके लिये मनुष्यका शरीर धारण किया और संकट सहकर साधुओंको सुखी बनाया। (किन्तु) प्रेमसहित नामको जपनेसे भक्तजन अनायास ही आनन्द और मंगलके घर हो जाते हैं।

राम एक तापसतिय तारी ❀ नाम कोटि खल-कुमति सुधारी ॥
रिषि-हित राम सुकेतुसुता को ❀ सहित सेन-सुत कीन्ह बिबाकी ॥

श्रीरामने ऋषिकी स्त्री एक अहिल्याको तारा, परन्तु उनके नामने करोड़ों दुष्टोंकी दुर्बुद्धिको सुधार दिया। विश्वामित्र ऋषिके लिये श्रीरामने सेना और पुत्रों सहित सुकेतुकी कन्या ताड़काको मार डाला। परन्तु—

सहित दोष-दुख दास-दुरासा ❀ दलइ नाम जिमि रबि निसि नासा ॥
भंजेउ राम आपु भवचापू ❀ भव-भय-भंजन नामप्रतापू ॥

जिस प्रकार सूर्य रात्रिको नष्ट कर डालता है उसी प्रकार श्रीरामका नाम दोषों और दुःखोंसहित भक्तोंकी दुराशाको नष्ट कर डालता है। श्रीरामचंद्रजीने स्वयं शंकरजी (भव) का धनुष तोड़ा, परन्तु उनके नामका प्रताप संसार (भव) के भयको नष्ट कर देनेवाला है।

दंडकबन प्रभु कीन्ह सोहावन ❀ जनमन अमित नाम किय पावन ॥
निसि-चर-निकर दले रघुनंदन ❀ नाम सकल कलि-कलुष-निकंदन ॥

प्रभु श्रीरामचंद्रजीने दण्डक वनको सुहावना बनाया, परन्तु उनके नामने असंख्य भक्तोंके मनको पवित्र कर दिया। श्रीरामने राक्षसोंके समूहोंको नष्ट किया और उनका नाम कलियुगके समस्त पापोंको नष्ट कर देनेवाला है।

दो०—सबरी गीध सुसेवकनि ❀ सुगति दीन्हि रघुनाथ ॥
नाम उधारे अमित खल ❀ बेदबिदित गुनगाथ ॥ ४० ॥

श्रीरामने शबरी, गीध जटायु (आदि) भक्तोंको मुक्ति दी, परन्तु उनके नामने असंख्य दुष्टोंका उद्धार कर दिया। नामके गुणकी यह कथा वेदमें लिखी हुई है।

राम सुकंठ बिभीषन दोऊ ❁ राखे सरन जान सब कोऊ ॥
नाम गरीब अनेक नेवाजे ❁ लोक बेद बर बिरद बिराजे ॥

यह सब कोई जानते हैं कि श्रीरामने सुग्रीव और विभीषण, दोनोंको अपनी शरणमें रखा, परन्तु श्रीरामके नामने अनेक गरीबोंको तार दिया, इसका श्रेष्ठ यश संसारमें और वेदोंमें विद्यमान है।

राम भालु-कपि-कटक बटोरा ❁ सेतुहेतु स्रम कीन्ह न थोरा ॥
नाम लेत भवसिंधु सुखाहीं ❁ करहु बिचार सुजन मन माहीं ॥

श्रीरामने रीछ और बंदरोंकी सेना इकट्ठी की और पुलके लिये भी कम परिश्रम नहीं उठाया। परन्तु हे सज्जनो! मनमें विचार करो कि उनका नाम लेते ही संसाररूपी समुद्र सूख जाता है।

राम सकुल रन रावनु मारा ❁ सीय सहित निजपुर पगु धारा ॥
राजा राम अवध रजधानी ❁ गावत गुन सुर मुनि बरबानी ।

श्रीरामने संग्राममें परिवारसहित रावणको मारा और वे सीतासहित अपनी नगरीमें पधारे। श्रीरामचंद्रजी राजा हैं और उनकी राजधानी अयोध्या है, जिसके गुणोंको देवता और ऋषि श्रेष्ठ वाणीसे गाया करते हैं।

सेवक सुमिरत नाम सप्रीती ❁ बिनु श्रम प्रबल मोहदल जीती ॥
फिरत सनेहमगन सुख अपने ❁ नामप्रसाद सोच नहिं सपने ॥

भक्तजन प्रेमसहित नामको स्मरण करते हैं और मोहकी प्रबल सेनाको विना परिश्रम ही जीत लेते हैं। वे अपने प्रेमके सुखमें मग्न हो डोला करते हैं और नामकी महिमाके कारण उन्हें स्वप्नमें भी चिन्ता नहीं होती।

दो०—ब्रह्म राम तें नाम बड़ ❁ बर-दायक-बर-दानि ॥
रामचरित सतकोटि महँ ❁ लिय महेस जिय जानि ॥ ४१ ॥

ब्रह्मरूप रामसे भी उनका नाम बड़ा और वरदाता-देवताओंको भी वर देनेवाला है। महादेवने इसे हृदयमें ऐसा ही जानकर श्रीरामके सौ करोड़ चरित्रोंमेंसे ग्रहण कर लिया है।

नाम-प्रसाद संभु अबिनासी ❁ साज अमंगल मंगलरासी ॥
सुकसनकादि सिद्ध मुनि जोगी ❁ नामप्रसाद ब्रह्म-सुख-भोगी ॥

नामके प्रसादसे ही शिवजी अविनाशी हैं और अमंगल भेष होनेपर भी मंगलमय हैं। शुक सनकादि सिद्ध, मुनि और योगी नामके ही प्रसादसे ब्रह्मानंद भोगते हैं।

नारद जानेउ नामप्रतापू ❁ जगप्रिय हरि हरि-हर-प्रिय आपू ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू ❁ भगतसिरोमनि भे प्रहलादू ॥

नारदजीने नामकी महिमाको जान लिया है और जो विष्णु भगवान संसारके प्यारे हैं उन्हें तथा शिवजीको भी वे प्रिय हैं। नामको जपते ही प्रभु प्रसन्न हुए, जिससे प्रहलाद भक्त-शिरोमणि हो गये।

ध्रुव सगलानि जपेउ हरिनाऊँ ❀ पाएउ अचल अनूपम ठाऊँ ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू ❀ अपने बस करि राखे रामू ॥

ग्लानि होनेपर ध्रुवने भगवान विष्णुके नामको जपा और उपमारहित अचल स्थान पाया। पवित्र नामका ही स्मरण कर पवन-पुत्र हनुमानने श्रीरामको अपने वशमें कर रखा है।

अपत अजामिल गज गनिकाऊ ❀ भये मुकुत हरि-नाम-प्रभाऊ ॥
कहउ कहां लगि नामबड़ाई ❀ राम न सकहिं नामगुन गाई ॥

अजामिल, गजेन्द्र और गणिका भी भगवानके नामको जपते ही उसके प्रभावसे मुक्ति पा गये। नामकी बड़ाई कहांतक कहूं। स्वयं राम भी अपने नामके गुणोंको गा नहीं सकते।

दो०—नाम रामको कलपतरु ❀ कलि कल्याननिवास ॥
जो सुमिरत भयो भांग ते ❀ तुलसी तुलसीदास ॥ ४२ ॥

कलियुगमें कल्याणका घररूपी कल्पवृक्ष श्रीरामका नाम ही है, जिसे स्मरण कर तुलसीदासरूपी भांगका वृक्ष तुलसीका वृक्ष हो गया।

चहुँ जुग तीनि काल तिहुँ लोका ❀ भये नाम जपि जीव बिसोका ॥
बेद पुरान संत-मत एहू ❀ सकल - सुकृत - फल रामसनेहू ॥

चारों युग, तीनों काल और तीनों लोकोंमें रामका स्मरण कर प्राणियोंका शोक दूर हो गया है। वेद, पुराण और साधु—सबका यह मत है कि समस्त पुण्योंका फल श्रीरामभक्ति है।

ध्यानु प्रथम जुग मखबिधि दूजे ❀ द्वापर परितोषन प्रभु पूजे ॥
कलि केवल मल-मूल मलीना ❀ पापपयोनिधि जनमन मीना ॥
नाम कामतरु काल कराला ❀ सुमिरत समन सकल जगजाला ॥

सतयुगमें ध्यानसे, त्रेतामें यज्ञादिसे और द्वापरमें पूजा करनेसे प्रभु प्रसन्न होते हैं, परन्तु कलियुग तो केवल मलका मूल और मलिन है तथा लोगोंके मन पापरूपी समुद्रकी मछली बने हुए हैं। इस कराल कालमें श्रीरामका नाम ही कल्पवृक्ष है, जिसका स्मरण करते ही संसारके समस्त दुःख नष्ट हो जाते हैं।

रामनाम कलि अभिमतदाता ❀ हित परलोक लोक पितुमाता ॥
नहिं कलि करम न भगति बिबेकू ❀ राम-नाम अवलंबन एकू ॥
कालनेमि कलि कपटनिधानू ❀ नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥

कलियुगमें श्रीरामका नाम सभी मनोकामनाओंको पूरा करनेवाला है। वह इस लोकमें मातापिताके समान और परलोकमें भी हितकारी है। कलियुगमें न तो कर्म है और न भक्ति-ज्ञान, श्रीरामके नामका ही एक सहारा है। कलियुगरूपी कपटकी खान कालनेमिके लिये श्रीरामका नाम श्रेष्ठ बुद्धिवाले सामर्थ्यवान हनुमानके समान है।

दो०—राम नाम नर केसरी ❁ कनककसिपु कलिकालु ॥
जापक जन प्रह्लाद जिमि ❁ पालिहि दलि सुरसालु ॥ ४२ ॥

हिरण्यकश्यपरूपी कलियुगके लिये श्रीरामका नाम नृसिंहके समान है। उसे जपनेवाले भक्त प्रह्लादके समान हैं, जिनकी रक्षा वह देवताओंको दुःख देनेवाले (हिरण्यकश्यप) को मारकर किया करता है।

भाय कुभाय अनख आलसहूँ ❁ नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ ॥
सुमिरि सो नाम राम-गुन-गाथा ❁ करउँ नाइ रघुनाथहि माथा ॥

प्रीति, वैर, झुंझलाहट और आलस्य – किसी प्रकारसे भी नाम जपनेसे दशों दिशाओंमें कल्याण होता है। उसी नामका स्मरण कर और श्रीरामचन्द्रजीको मस्तक नवाकर श्रीरामके गुणोंकी कथा लिखता हूं।

मोरि सुधारिहि सो सब भांती ❁ जासु कृपा नहिं कृपा अघाती ॥
राम सुस्वामि कुसेवक मो सो ❁ निज दिसि देखि दयानिधि पोसो ॥

मेरी इस कथाको सब प्रकार वही सुधार देंगे जिनकी कृपा, कृपा करनेमें कभी नहीं अघाती। राम जैसा सुन्दर स्वामी और मुझसा बुरा सेवक! परन्तु दयानिधि, अपनी ओर देखकर मेरा पालन करो।

लोकहुँ बेद सुसाहिबरीती ❁ बिनय सुनत पहिचानत प्रीती ॥
गनी गरीब ग्राम नर नागर ❁ पंडित मूढ़ मलीन उजागर ॥

लोक और वेदमें अच्छे स्वामीकी यह रीति प्रसिद्ध है कि विनती सुनते ही प्रीतिको पहचान लेते हैं। धनी, निर्धन, गंवार, चतुर, पण्डित, मूर्ख, मलिन, उज्ज्वल,

सुकबि कुकबि निज-मति-अनुहारी ❁ नृपहि सराहत सब नर नारी ॥
साधु सुजान सुसील नृपाला ❁ ईस अंस - भव परमकृपाला ॥

सुकवि और कुकवि—सब स्त्री-पुरुष अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार राजाकी प्रशंसा किया करते हैं। राजा साधु, चतुर और सुशील, ईश्वरका अंश और अत्यन्त दयावान होता है।

सुनि सनमानहिं सबहिं सुबानी ❁ भनिति भगति नति गति पहिचानी ॥
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ ❁ जानि सिरोमनि कोसलराऊ ॥
रीझत राम सनेह निसोतें ❁ को जग मंद मलिनमति मो तें ॥

सुनकर सबके कथन; शक्ति, नम्रता और गतिको पहचानकर वह मीठी वा भीम रोग के ॥
है। साधारण राजाओंका यह स्वभाव है, जिसे सब राजाओंके शिरोमणि नृत - धरम - नेम के ॥
श्रीरामचंद्रजी विशुद्ध प्रेमसे प्रसन्न होते हैं। संसारमें मुझसे भविष्यत् ओ देवताओंके वै ...नीकुमार,
दो०—सठ सेवककी प्रीति रुचि ❀ रामचरितको अनेक प्र... कहते, सु

उपल किये जलजान जेहि
जिन्होंने पत्थरोंको पानीपर तिरा दिया ❀ कथा सो सूकरखेत ॥
श्रीरामचन्द्रजी मुझ दुष्ट सेवककी प्रीति और मन ❀ तब अति रहेउँ अचेत ॥४९॥

होहु कहावत सब)में अपने गुरुसे सुना, परन्तु बालपनके कारण उसे समझा नहीं,

साहिब सी
मैं भी कहता हूं, सब कहते ग्याननिधि ❀ कथा राम कै गूढ़ ॥
का तुलसीदास जैसा सेवक है। मैं जीव जड़ ❀ कलि-मल-ग्रसित विमूढ़ ॥५०॥

अति बड़ि मोरि है, उसके लिये वक्ता और श्रोता, दोनों ही अत्यन्त ज्ञानी होने चाहिये।
समुझि सहम मोहि महा मूर्ख जीव मैं उसे कैसे समझ सकता हूं!
मेरी ढिठाई गुरु बारहिं बारा ❀ समुझि परी कछु मति अनुसारा ॥
अपने दोषको स करबि मैं सोई ❀ मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥
नहीं किया है। जीने उसे बार बार कहा और जैसी समझ थी उसके अनुसार वह कुछ समझमें भी आयी।
सुनि अ...ूंगा, जिससे मेरे मनमें ज्ञान हो।
कहत नसा...-बिबेक-बल मेरे ❀ तस कहिहउँ हिय हरि के प्रेरे ॥
सुनकर जब मोह भ्रम—हरनी ❀ करउँ कथा भव-सरिता - तरनी ॥
बुद्धिकी प्रशंसा की
प्रसन्न होते हैं। ...मुझमें बुद्धि और ज्ञानका बल है वैसा मैं हृदयमें ईश्वरकी प्रेरणासे कहूंगा। मैं अपने
रहति न ...भ्रम दूर कर देनेवाली कथा कहता हूं, जो संसाररूपी नदीके लिये नौकाके समान है।
जेहि सकल - जन - रंजनि ❀ रामकथा कलि-कलुष-बिभंजनि ॥
रामकथा कलि - पन्नग - भरनी ❀ पुनि बिबेकपावक कहँ अरनी ॥

श्रीरामचंद्रजीकी कथा पण्डितोंको विश्राम देनेवाली, समस्त मनुष्योंको प्रसन्न करनेवाली और कलियुगके पापोंको नष्ट कर देनेवाली है। यह राम-कथा कलियुगरूपी सर्पके लिये वर्षाका भरणी नक्षत्र है, फिर यह ज्ञान रूपी अग्निके लिये लकड़ीके समान है।

गाई ॐ सुजन - सजीवनि - मूरि सोहाई ॥

कलियुगमें श्रीरामका नाम सभी, वही थी,

वातरंगिनि ॐ भयभंजनि भ्रम-भेक-भुअंगिनि ॥

समान और परलोकमें भी हितकारी है। कलि-मु

सहारा है। कलि कलि कपटकी खान कामधेनु है, सज्जनोंकी यह सुन्दर संजीवनी मूरि है। पृथिवी-तलपर यही अमृत समान है। ।, भय नष्ट वाली और भ्रमरूपी मेढ़कके लिये नागिन जैसी है।

दो० असुर सेन - सम नरकनिकंदिनि ॐ साधु-बिबुध-कुल-हित-गिरि-नंदिनि ॥
संत-समाज-पयोधि-रमा सी ॐ बिस्व-भार-भर अचल छमा सी ॥

दैत्योंकी सेनाके समान नरकका नाश कर देनेवाली है, साधु और पण्डितजनोंके कल्याणके लि समा पार्वतीके समान है, सज्जनोंके समुदायरूपी समुद्रकी यह लक्ष्मी है और संसारके भारको धारण करनेवाल पृथिवीके समान यह अचल है।

जम-गन-मुह-मसि जग जमुना सी ॐ जीवन-मुकुति हेतु जनु कासी ॥
रामहिं प्रिय पावनि तुलसी सी ॐ तुलसि-दास-हित हिय हुलसी सी ॥

यमदूतोंके मुंहपर स्याही लगानेके लिये यह संसारमें यमुनाके समान है, जीवनमुक्तिके लिये मानों यह काशी है। यह पवित्र कथा श्रीरामचंद्रजीको तुलसीके समान प्यारी है और तुलसीदासके लिये इसका हृदय माता हुलसीके समान है।

सिवप्रिय मेकल सैल-सुता सी ॐ सकल-सिद्धि-सुख-संपति - रासी ॥
सद-गुन-सुर-गन अंब अदितिसी ॐ रघुबर-भगति-प्रेम - परमिति सी ॥

समस्त सिद्धि, सुख और सम्पत्तिकी खान यह रामकथा शिवजीको मेकल पर्वतकी कन्या नर्मदा नदीके समान प्यारी है। सुन्दर गुणवाले देवताओंके लिये यह उनकी माता अदितिके समान है और श्रीरामचन्द्रजी की भक्ति और प्रेमकी सीमा जैसी है।

दो०—रामकथा मंदाकिनी ॐ चित्रकूट चित चारु ॥
तुलसी सुभगसनेह बन ॐ सिय - रघुबीर - बिहारु ॥ ५१ ॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि राम-कथा मंदाकिनी, निर्मल चित्त चित्रकूट पर्वत और सुन्दर स्नेह वन है, जिसमें सीता-सहित श्रीरामचन्द्रजी विहार करते हैं।

राम-चरित-चिंतामनि चारू ॐ संत-सुमति-तिय सुभग सिंगारू ॥
जगमंगल गुनग्राम राम के ॐ दानि मुकुति धन धरम धाम के ॥

श्रीरामका चरित्र सुन्दर चिन्तामणि है, सज्जनोंकी सुबुद्धिरूपी सुन्दर स्त्रीका यह शृंगार है। श्रीरामके गुणोंके समूह संसारका मंगल करनेवाले और मोक्ष, धन, धर्म और परमधामको देनेवाले हैं।

सदगुरु ग्यान बिराग जोग के ❀ बिबुधबैद भव भीम रोग के ॥
जननिजनक सिय-राम-प्रेम के ❀ बीज सकल ब्रत-धरम-नेम के ॥

ज्ञान-वैराग्य और योगके लिये सद्गुरु, संसाररूपी भयंकर रोगके लिये देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमार, सीतारामके प्रेमको उत्पन्न करनेवाले माता-पिता और समस्त व्रत, धर्म और नियमके बीज हैं।

समन पाप-संताप-सोक के ❀ प्रिय पालक पर-लोक-लोक के ॥
सचिव सुभट भूपतिबिचार के ❀ कुंभज-लोभ-उदधिअपार के ॥

पाप, संताप और शोकको नष्ट कर देनेवाले और इहलोक और परलोक, दोनोंका प्यारसे पालन करनेवाले हैं। विचाररूपी वीर राजाके मंत्री, लोभरूपी अपार समुद्रके लिये कुम्भज ऋषि हैं।

काम-कोह-कलि-मल-करि-गन के ❀ केहरि सावक जन-मन-बन के ॥
अतिथिपूज्य प्रियतम पुरारि के ❀ कामद घन दारिद दवारि के ॥

भक्तोंके मनरूपी वनके काम क्रोध आदि कलियुगके दोषरूपी हाथियोंके समूहके लिये सिंहके बच्चेके समान, शिवजीके अत्यन्त प्यारे पूजनीय अतिथिके समान और दरिद्रतारूपी दावानलके लिये कामनापूर्ण करनेवाले मेघके समान हैं।

मंत्र-महा-मनि बिषयब्याल के ❀ मेटत कठिन कुअंक भाल के ॥
हरन मोहतम दिनकरकर से ❀ सेवक-सालि-पाल जलधर से ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुण विषयरूपी सर्पके लिये मंत्र और महामणिके समान हैं और वे ललाटके बुरे कर्मोंके कठोर फलको मेट देते हैं। मोहरूपी अन्धकारको दूर करनेके लिये सूर्यकी किरणोंके समान और अपने सेवकोंके समूहरूपी धानको पालनेके लिये मेघके समान हैं।

अभिमतदानि देव-तरु-बर से ❀ सेवत सुलभ सुखद हरिहर से ॥
सुकबि-सरद-नभ मन उडुगन से ❀ राम-भगत-जन जीवनधन से ॥

सब इच्छाओंको पूरा करनेके लिये श्रेष्ठ कल्पवृक्षके समान हैं और सेवा करते ही भगवान विष्णु और शिवकी भांति सुलभ और सुखदायी हैं। श्रीरामचन्द्रजीके ये गुण सुकविरूपी शरद ऋतुके मनरूपी आकाशके तारागणोंके समान हैं और श्रीरामके भक्तजनोंके जीवनके धन हैं।

सकल सुकृतफल भूरि भोग से ❀ जगहित निरुपधि साधुलोग से ॥
सेवक-मन-मानस-मराल से ❀ पावन गंग-तरंग-माल से ॥

वे समस्त पुण्योंके फलरूपी अनेक प्रकारके भोगों तथा संसारके कल्याणके लिये उपाधिरहित साधु-

जनोंके समान हैं। सेवकोंके मनरूपी मानसरोवरके लिये हंस और पवित्र गंगाकी तरंगोंकी मालाओंके समान हैं।

दो०—कुपथ कुतरक कुचालि कलि ❀ कपट दंभ पाखंड।
दहन राम-गुन-ग्राम जिमि ❀ ईंधन अनल प्रचंड॥ ५२॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूह कुपथ, कुतर्क, कुचाल, कलि, कपट, दम्भ और पाखण्ड—सबको भस्म करनेके लिये वैसे ही हैं जैसे प्रचण्ड अग्नि ईंधनके लिये।

रामचरित राकेस-कर ❀ सरिस सुखद सब काहु॥
सज्जन-कुमुद-चकोर-चित ❀ हित बिसेषि बड़ लाहु॥५३॥

श्रीरामका चरित चंद्रमाकी किरणोंके समान सब किसीको सुख देनेवाला है, परन्तु कुमुद और चकोररूपी सज्जनोंके चित्तके लिये वह विशेष सुखदायी और अधिक लाभकारी है।

कीन्हि प्रस्न जेहि भांति भवानी ❀ जेहि बिधि संकर कहा बखानी॥
सो सब हेतु कहब मैं गाई ❀ कथा-प्रबन्ध बिचित्र बनाई॥

जिस प्रकार पार्वतीने प्रश्न किया और जिस प्रकार शिवजीने उसे विस्तारपूर्वक कहा—वह सब कारण मैं विचित्र रीतिसे कथाको प्रबंध रूपमें बनाकर गाकर कहूंगा।

जेहि यह कथा सुनी नहिं होई ❀ जनि आचरज करइ सुनि सोई॥
कथा अलौकिक सुनहिं जे ग्यानी ❀ नहिं आचरज करहिं अस जानी॥

जिसने यह कथा न सुनी हो वह इसे सुनकर आश्चर्य न करे। जो ज्ञानी पुरुष इसे सुनेंगे, वे यह जानकर कि कथा अलौकिक है, आश्चर्य नहीं करेंगे।

रामकथा कै मिति जग नाहीं ❀ असि प्रतीति तिन्ह के मन माहीं॥
नाना भांति रामअवतारा ❀ रामायन सतकोटि अपारा॥

उनके मनमें ऐसा विश्वास है कि संसारमें श्रीरामकथाकी सीमा नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीके अवतार अनेक प्रकारके हुए हैं और उनका चरित सौ करोड़—अपार है।

कलपभेद हरिचरित सोहाए ❀ भाँति अनेक मुनीसन्ह गाए॥
करिय न संसय अस उर आनी ❀ सुनिय कथा सादर रति मानी॥

मुनीश्वरोंने श्रीरामचन्द्रके सुन्दर चरित कल्पभेदके अनुसार अनेक प्रकारसे गाये हैं। यही हृदयमें विचारकर सन्देह नहीं करना चाहिये और प्रेमसे आदरपूर्वक कथा सुननी चाहिये।

दो०—राम अनंत अनंत गुन ❀ अमित कथा बिस्तार।
सुनि आचरजु न मानिहहिं ❀ जिनके बिमल बिचार ॥५४॥

श्रीरामजी अनन्त हैं, उनके गुण अनन्त हैं और उनकी कथाके विस्तारकी सीमा नहीं है। जिनके विचार निर्मल हैं वे सुनकर आश्चर्य न करेंगे।

एहि बिधि सब संसय करि दूरी ❀ सिर धरि गुरु-पद-पंकज-धूरी ॥
पुनि सबही बिनवउँ कर जोरी ❀ करत कथा जेहि लाग न खोरी ॥

इस प्रकार सब सन्देह दूर कर और गुरुके चरणकमलोंकी रजको शिरपर रखकर फिर सभीकी विनती हाथ जोड़कर करता हूं, जिससे कथा लिखनेमें कोई दोष न लगे।

सादर सिवहि नाइ अब माथा ❀ बरनउँ बिसद राम-गुन-गाथा ॥
संबत सोरह सै इकतीसा ❀ करउँ कथा हरिपद धरि सीसा ॥

आदरपूर्वक शिवजीको मस्तक नवाकर अब श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी उज्ज्वल कथाका मैं वर्णन करता हूं। भगवानके चरणोंपर शिर रखकर मैं यह कथा सम्वत् १६३१ में लिखता हूं।

नौमी भौमबार मधुमासा ❀ अवधपुरी यह चरित प्रकासा ॥
जेहि दिन रामजनम स्रुति गावहिं ❀ तीरथ सकल तहां चलि आवहिं ॥

चैत्र मासकी नवमी तिथि मङ्गलवारको यह चरित अयोध्यामें प्रकाशित हुआ—लिखना आरम्भ किया। वेद कहते हैं कि जिस दिन रामजन्म होता है, उस दिन वहां सारे तीर्थ चलकर आते हैं।

असुर नाग खग नर मुनि देवा ❀ आइ करहिं रघुनायक सेवा ॥
जनम-महोत्सव रचहिं सुजाना ❀ करहिं राम कल कीरति गाना ॥

राक्षस, नाग, पक्षी, मनुष्य, मुनि और देवता—सब आकर श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करते हैं। चतुर लोग जन्मोत्सव करते हैं और श्रीरामचन्द्रजीकी सुन्दर कीर्तिको गाते हैं।

दो०—मज्जहिं सज्जन बृंद बहु ❀ पावन सरजू नीर।
जपहिं राम धरि ध्यान उर ❀ सुंदर स्याम सरीर ॥५५॥

बहुतसे सज्जनवृन्द पवित्र सरयूके जलमें स्नान करते हैं और हृदयमें सुन्दर श्याम शरीर रामका ध्यान करके जप करते हैं।

दरस परस मज्जन अरु पाना ❀ हरइ पाप कह बेद पुराना ॥
नदी पुनीत अमित महिमा अति ❀ कहि न सकइ सारदा बिमलमति ॥

वेद और पुराण कहते हैं कि दर्शन, स्पर्श और स्नान करना तथा जल पीना पाप दूर कर देता है। यह नदी अत्यन्त पवित्र है और इसकी सीमा-रहित महिमाको शारदाकी निर्मल बुद्धि भी नहीं कह सकती।

राम - धाम - दा पुरी सुहावनि ❀ लोक समस्त बिदित जगपावनि ॥
चारि खानि जग जीव अपारा ❀ अवध तजे तन नहिं संसारा ॥

श्रीरामचन्द्रजीके धाम वैकुण्ठको देनेवाली सुन्दर अयोध्यापुरी, समस्त लोकमें प्रसिद्ध है कि संसारको पवित्र कर देनेवाली है। संसारमें चार प्रकारके अनन्त जीव हैं, इनमेंसे जो अयोध्यामें शरीर छोड़ते हैं वे इस संसारमें फिर जन्म नहीं लेते।

सब बिधि पुरी मनोहर जानी ❀ सकल सिद्धिप्रद मंगलखानी ॥
बिमल कथा कर कीन्ह अरंभा ❀ सुनत नसाहिं काम मद दंभा ॥

अयोध्यापुरीको सब प्रकारसे मनोहर, समस्त सिद्धियोंको देनेवाली और मङ्गलकी खान जानकर वहां इस उज्ज्वल कथाको आरम्भ किया, जिसे सुनते ही काम, मद और दंभ सब नष्ट हो जाते हैं।

राम - चरित - मानस एहि नामा ❀ सुनत स्रवन पाइय बिस्रामा ॥
मन-करि विषय-अनल - बन जरई ❀ होइ सुखी जौं एहि सर परई ॥

इसका नाम रामचरितमानस है। इसे सुनते ही कानोंको विश्राम मिलता है। मनरूपी हाथी विषयरूपी अग्निके वनमें जलता है, वह यदि इस सरोवरमें आ पड़े तो सुखी हो जाता है।

राम - चरित - मानस मुनिभावन ❀ बिरचेउ संभु सुहावन पावन ॥
त्रिविध दोष दुखदारिद दावन ❀ कलिकुचालि कुलि-कलुष-नसावन ॥

मुनियोंके प्यारे, पवित्र और सुन्दर इस रामचरितमानसको शिवजीने बनाया है। यह तीनों प्रकारके पापों, दुःखों और दरिद्रताको नष्ट कर देनेवाला और कलियुगकी बुराइयों और समस्त पापोंको दूर कर देनेवाला है।

रचि महेस निज मानस राखा ❀ पाइ सुसमउ सिवा सन भाखा ॥
तातें राम-चरित - मानस बर ❀ धरेउ नाम हियहेरि हरषि हर ॥
कहउँ कथा सोइ सुखद सुहाई ❀ सादर सुनहु सुजन मन लाई ॥

शिवजीने बनाकर इसे अपने हृदयमें रखा था, उत्तम समय पाकर उन्होंने उसे पार्वतीको सुनाया। इसीलिये हृदयमें विचारकर और प्रसन्न होकर शिवजीने उसका श्रेष्ठ नाम रामचरितमानस रखा। वही सुन्दर सुख देनेवाली कथा कहता हूं। हे सज्जनजन! आदरपूर्वक मन लगाकर उसे सुनो।

(सर-सरि-रूपक)

दो०—जस मानस जेहि बिधि भयउ ❀ जग प्रचार जेहि हेतु ।
अब सोइ कहउँ प्रसंग सब ❀ सुमिरि उमाबृषकेतु ॥ ५६ ॥

जिस प्रकार रामचरितमानसका यश हुआ और जिस कारण संसारमें इसका प्रचार हुआ—वह सब कथा अब मैं शिव और पार्वतीका स्मरण कर कहता हूं ।

संभुप्रसाद सुमति हिय हुलसी ❀ राम-चरित-मानस कबि तुलसी ॥
करइ मनोहर मति अनुहारी ❀ सुजन सुचित सुनि लेहु सुधारी ॥

शिवजीकी कृपासे हृदयमें सुन्दर बुद्धिका प्रकाश हुआ, जिससे इस रामचरितमानसका कवि (मैं) तुलसीदास अपनी मतिके अनुसार उसे मनोहर बनाता है । सज्जनजन उसे जीसे सुनकर सुधार लें ।

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू ❀ बेद पुरान उदधि घन साधू ॥
बरषहिं राम सुजस बर बारी ❀ मधुर मनोहर मंगलकारी ॥

सुन्दर बुद्धि पृथिवीतल है, हृदय गहराई है, वेद और पुराण समुद्र हैं, साधु बादल हैं जो मीठा, कल्याणकारी और सुन्दर रामयशका उत्तम पानी बरसाते हैं ।

लीला सगुन जो कहहिं बखानी ❀ सोइ स्वच्छता करइ मल हानी ॥
प्रेम भगति जो बरनि न जाई ❀ सोइ मधुरता सुसीतलताई ॥

सगुण लीलाका जो वर्णन किया जाता है वही मलको नष्ट कर देनेवाली जलकी स्वच्छता है । प्रेम और भक्ति ही, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता, मधुरता और सुन्दर शीतलता है ।

सो जल सुकृत सालि हित होई ❀ रामभगत जन जीवन सोई ॥
मेधा महिगत सो जल पावन ❀ सकिलि स्रवनमग चलेउ सुहावन ॥
भरेउ सुमानस सुथल थिराना ❀ सुखद सीत रुचि चारु चिराना ॥

यही जल पुण्यरूपी धानके लिये हितकर होता है और यही रामभक्त जनोंका जीवन है । यह पवित्र जल बुद्धिरूपी पृथ्वीपर इकट्ठा होकर सुन्दर कानोंके मार्गसे भीतर चला जाता है । यह जल सुन्दर मनरूपी सरोवरमें भरकर स्वच्छ और पुरानी होकर सुन्दर रुचिरूपी शरदकालमें सुखदायक हो गया ।

दो०—सुठि सुंदर संबाद बर ❀ बिरचे बुद्धि बिचारि ।
तेइ एहि पावन सुभग सर ❀ घाट मनोहर चारि ॥ ५७ ॥

बुद्धिसे विचारकर, याज्ञवल्क्य और भरद्वाज तथा शिव और पार्वतीके जिन अत्यन्त सुन्दर सम्वादोंकी श्रेष्ठ रचना की गयी है वहीं इस पवित्र सुन्दर सरोवरके चार मनोहर घाट हैं ।

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना ❀ ग्याननयन निरखत मन माना ॥
रघुपतिमहिमा अगुन अबाधा ❀ बरनब सोइ बर बारि अगाधा ॥

रचनाके सात काण्ड ही सुन्दर सात सीढ़ियां हैं जिन्हें ज्ञान-नेत्रोंसे देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता है। श्रीरामचन्द्रजीके गुण और बाधारहित महिमाको ही इस सरोवरके श्रेष्ठ जलकी गहराई कहूंगा।

रामसीय जस सलिल सुधासम ❀ उपमा बीचि बिलास मनोरम ॥
पुरइनि सघन चारु चौपाई ❀ जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई ॥

श्रीराम और सीताका यश ही अमृत जैसा जल है, जिसमें उपमाएँ मनको लुभानेवाली तरङ्गोंका विलास हैं। सुन्दर चौपाइयां सघन कमल-बेलि हैं और सुन्दर युक्तियां उज्ज्वल मोतियोंकी सीपी हैं।

छंद सोरठा सुन्दर दोहा ❀ सोइ बहुरंग कमलकुल सोहा ॥
अरथ अनूप सुभाव सुभासा ❀ सोइ पराग मकरंद सुबासा ॥

छंद, सोरठा और दोहा ही अनेक रङ्गके कमल—समूह शोभित हैं। अनुपम अर्थ, उत्तम भाव और सुन्दर भाषा ही इस कमल-समूहका पराग, मकरन्द और सुगंध है।

सुकृत-पुंज मंजुल अलिमाला ❀ ग्यान बिराग बिचार मराला ॥
धुनि अवरेब कवित गुन जाती ❀ मीन मनोहर ते बहु भाँती ॥

पुण्य-समूह सुन्दर भौंरोंके झुण्ड हैं; ज्ञान, वैराग्य और विचार हंस हैं। इसमें ध्वनि, वक्रोक्ति आदि जो कविताके गुण और भेद हैं वही अनेक प्रकारकी सुन्दर मछलियां हैं।

अरथ धरम कामादिक चारी ❀ कहब ग्यान बिग्यान बिचारी ॥
नव रस जप तप जोग बिरागा ❀ ते सब जलचर चारु तड़ागा ॥

अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष—ये चारों और ज्ञान, विज्ञान, विचार, नवरस, जप, तप, योग और वैराग्य—इन सबको इस सुन्दर सरोवरके जलचर जीव कहूंगा।

सुकृती साधु नाम गुन गाना ❀ ते बिचित्र जल-बिहग समाना ॥
संत सभा चहुँ दिसि अँवराई ❀ स्रद्धा रितु बसंत सम गाई ॥

पुण्यात्मा और साधुजनोंके नामों और गुणोंका जो गान है वही विचित्र जलपक्षियोंके समान है। सज्जनोंकी सभा चारों दिशाओंमें लगे हुए आमोंकी पङ्क्ति है। श्रद्धाको वसन्त ऋतुके समान बतलाया गया है।

भगति निरूपन बिबिध बिधाना ❀ छमा दया द्रुम लता बिताना ॥
सम जम नियम फूल फल ज्ञाना ❀ हरिपद रस बर बेद बखाना ॥
अउरउ कथा अनेक प्रसंगा ❀ तेइ सुक पिक बहु बरन बिहंगा ॥

अनेक प्रकारसे भक्तिका निरूपण, क्षमा और दया—ये वृक्ष और लतावितान हैं। शम, यम और नियम उनके फूल तथा ज्ञान फल हैं, भगवानके चरणोंका प्रेम ही उत्तम रस है—यही वेदमें भी कहा गया है। जो अन्यान्य कथाएं और अनेक प्रसङ्ग हैं वही तोता और कोयल आदि अनेक रङ्गके पक्षी हैं।

दो०—पुलक बाटिका बाग बन ❀ सुख सुबिहंग बिहारु।
माली सुमन सनेह जल ❀ सींचत लोचन चारु ॥ ५८ ॥

कथासे जो रोमांच होता है वह वाटिका, बाग और वन हैं, सुख सुन्दर पक्षियोंका विहार है, सुन्दर मन माली है जो सुन्दर नेत्रोंसे, प्रेमजलसे, सींचता है।

जे गावहिं यह चरित सँभारे ❀ तेइ एहि ताल चतुर रखवारे ॥
सदा सुनहिं सादर नर नारी ❀ तेइ सुर बर मानस अधिकारी ॥

जो इस चरितको संभालकर गाते हैं वही इस सरोवरके चतुर रक्षक हैं। जो स्त्री पुरुष इसे आदरपूर्वक सदा सुनते हैं वही इस मानसरोवरके पात्र उत्तम देवता हैं।

अति खल जे बिषई बक कागा ❀ एहि सर निकट न जाहिं अभागा ॥
संबुक भेक सिवार समाना ❀ इहां न बिषय कथा रस नाना ॥

जो अत्यंत विषयी और दुष्ट हैं वे बगले और कौए हैं। ये अभागे इस सरोवरके पास नहीं जाते। घोंघों, मेढकों और सिवारके समान इसमें अनेक रसोंकी विषय-कथा नहीं है।

तेहि कारन आवत हिय हारे ❀ कामी काक बलाक बिचारे ॥
आवत एहि सर अति कठिनाई ❀ रामकृपा बिनु आइ न जाई ॥

इसी कारण कामी लोगोंके समान बेचारे कौओं और बगलोंका हृदय यहां आते डरता है। इस सरोवरपर आनेमें बड़ी कठिनता भी है। श्रीरामकी कृपाके विना आया नहीं जाता।

कठिन कुसंग कुपंथ कराला ❀ तिन्ह के बचन बाघ हरि ब्याला ॥
गृहकारज नाना जंजाला ❀ तेइ अति दुगम सैल बिसाला ॥
बन बहु बिषम मोह मद माना ❀ नदी कुतर्क भयंकर नाना ॥

घोर कुसङ्ग ही कठोर कुमार्ग है। उनके वचन ही बाघ, सिंह और सर्प हैं। गृहके कार्य और अनेक जंजाल

ही अत्यंत दुर्गम विशाल पर्वत हैं। मोह, मद और अभिमान ही अत्यन्त गहन वन हैं। कुतर्क ही अनेक प्रकार-की भयङ्कर नदियां हैं।

दो०—जे स्रद्धा संबल रहित ❀ नहिं संतन्ह कर साथ।
तिन कहँ मानस अगम अति ❀ जिन्हहिं न प्रिय रघुनाथ ॥५६॥

जिनके पास श्रद्धाका संबल (मार्गके लिये भोजन) नहीं है, जो संतजनोंके साथमें नहीं हैं और जिन्हें श्रीरामचंद्रजी प्यारे नहीं हैं, उनके लिये यह रामचरितमानस सरोवर अत्यन्त अगम्य है।

जो करि कष्ट जाइ पुनि कोई ❀ जातहि नींद जुड़ाई होई ॥
जड़ता जाड़ बिषम उर लागा ❀ गयेहु न मज्जन पाव अभागा ॥

फिर यदि कष्ट उठाकर कोई चला भी जाय तो जाते ही नींदरूपी जूड़ी आ जाती है। मूर्खताका जाड़ा हृदयमें ऐसा कठोर लगता है कि अभागा वहां जानेपर भी स्नान नहीं कर पाता।

करि न जाइ सर मज्जन पाना ❀ फिरि आवइ समेत अभिमाना ॥
जौं बहोरि कोउ पूछन आवा ❀ सरनिंदा करि ताहि बुझावा ॥

सरोवरमें न वह स्नान करता है और न उसका जल पीता है, अभिमान सहित लौट आता है। यदि उससे कोई फिर पूछने आता है तो सरोवरकी निन्दा करके उसे समझाता है।

सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही ❀ राम सुकृपा बिलोकहिं जेही ॥
सोइ सादर सर मज्जन करई ❀ महाघोर त्रयताप न जरई ॥

जिसको श्रीरामजी अपनी सुन्दर कृपासे देखते हैं उसे कोई भी विघ्न-बाधा नहीं पहुंचाता। वही इस सरोवरमें आदरपूर्वक स्नान करता है और अत्यन्त कठोर तीनों तापोंसे नहीं जलता।

ते नर यह सर तजहिं न काऊ ❀ जिन्ह के रामचरन भल भाऊ ॥
जो नहाइ चह एहि सर भाई ❀ सो सतसंग करउ मन लाई ॥

जिन मनुष्योंका श्रीरामके चरणोंमें उत्तम प्रेम है वे इस सरोवरको कभी नहीं छोड़ते। हे भाई, इस सरोवरमें जो स्नान करना चाहे वह मन लगाकर साधु जनोंका सङ्ग करे।

अस मानस मानस चष चाही ❀ भइ कबि बुद्धि बिमल अवगाही ॥
भयउ हृदय आनंद उछाहू ❀ उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रबाहू ॥

ऐसे मानसरोवरके लिये हृदयमें नेत्र होने चाहिये जिसमें स्नान कर कविकी बुद्धि निर्मल हो गयी, हृदयमें आनन्द और उत्साह होगया और प्रेम एवं आनन्दका प्रवाह उमड़ उठा।

चली सुभग कबिता सरिता सी ❁ राम बिमल जस जलभरिता सी ॥
सरजू नाम सुमंगलमूला ❁ लोक-बेद-मत मंजुल कूला ॥
नदी पुनीत सुमानस नंदिनि ❁ कलि-मल-तिन-तरु-मूल-निकंदिनि ॥

श्रीरामचंद्रजीके उज्ज्वल यशके जलसे परिपूर्ण सुन्दर नदीके समान कविताकी धारा बह निकली। उसका नाम सुन्दर मङ्गलोंकी खान सरयू है। लोक और वेदका मत ही उसके सुन्दर किनारे हैं। सुन्दर रामचरित-मानसरूपी यह नदी पवित्र और आनन्द देनेवाली तथा कलियुगके पापरूपी वृक्षोंको जड़से नष्ट कर देनेवाली है।

दो०—स्रोता त्रिबिध समाज पुर ❁ ग्राम नगर दुहुँ कूल।
संतसभा अनुपम अवध ❁ सकल सुमंगलमूल ॥ ६० ॥

तीनों प्रकारके श्रोताओंका समूह दोनों किनारोंके पुर, नगर और गांव हैं। साधुजनोंकी उपमारहित सभा ही समस्त सुन्दर मङ्गलोंकी खान अयोध्या है।

रामभगति सुरसरितहि जाई ❁ मिली सुकीरति सरजु सुहाई ॥
सानुज राम-समर-जस पावन ❁ मिलेउ महानद सोन सुहावन ॥

रामभक्तिरूपी गंगामें जाकर सुयशरूपी सुन्दर सरयू नदी मिल गयी है। भाईसहित श्रीरामचंद्रजीका पवित्र युद्धयश ही इसमें सुन्दर महानद सोन आकर मिला है।

जुग बिच भगति देव-धुनि धारा ❁ सोहति सहित सुबिरति बिचारा ॥
त्रिबिध ताप-त्रासक तिमुहानी ❁ रामसरूप सिंधु समुहानी ॥

दोनोंके बीचमें भक्तिरूपी गंगाकी धारा है जो सुन्दर विचार और वैराग्यसहित शोभा पाती है। तीनों नदियोंसे तीन मुखवाली होकर तीनों तापोंको भयभीत करनेवाली यह नदी श्रीरामचंद्रजीके स्वरूपके समुद्रके सामने मिलने जा रही है।

मानस मूल मिली सुरसरिही ❁ सुनत सुजन-मन पावन करिही ॥
बिच बिच कथा बिचित्र बिभागा ❁ जनु सरितीर तीर बन बागा ॥

इस सरयू नदीकी मूल रामचरितमानस है और यह गंगाजीमें जाकर मिल गयी है। यह कथा सुनते ही सज्जनोंका मन पवित्र कर देती है। कथाके बीच बीच अनेक प्रकारके विचित्र विभाग हैं वही मानों नदीके किनारे किनारे वन और बाग हैं।

उमा - महेस - बिबाह - बराती ❁ ते जलचर अगनित बहु भाँती ॥
रघुबर - जनम - अनंद - बधाई ❁ भवँर तरंग मनोहरताई ॥

शिव और पार्वतीके विवाहके जितने बराती हैं वे सब अनेक प्रकारके असंख्य जलचर जीव हैं। श्रीराम-जन्मकी आनंद-बधाई मनोहर भँवर और तरंग हैं।

दो०—बालचरित चहुँ बंधु के ❀ बनज बिपुल बहुरंग।
नृप रानी परिजन सुकृत ❀ मधुकर बारिबिहंग ॥ ६१ ॥

चारों भाइयोंके बालचरित अनेक रंगके बहुतसे कमल हैं, पुण्यात्मा राजा दशरथ, रानियां और कुटुम्बी लोग भौंरे और जलपक्षी हैं।

सीय - स्वयंबर - कथा सुहाई ❀ सरित सुहावनि सो छबि छाई ॥
नदी नाव पटु प्रस्न अनेका ❀ केवट कुसल उतर सबिबेका ॥

सीताजीके स्वयंवरकी जो मनोहर कथा है वही इस नदीकी सुन्दर शोभा है। इस नदीमें चतुरतापूर्ण अनेक प्रश्न ही नौकाएँ हैं, जिनका विवेकपूर्ण उत्तर ही कुशल केवट हैं।

सुनि अनुकथन परस्पर होई ❀ पथिकसमाज सोह सरि सोई ॥
घोर धार भृगुनाथ रिसानी ❀ घाट सुबद्ध राम बर बानी ॥

इसे सुनकर परस्पर जो वार्तालाप होता है वही इस नदीके किनारे यात्रियोंका समूह शोभित है। परशुरामका क्रोध ही इसकी भयंकर धारा है जिसके लिये श्रीरामचंद्रजीके श्रेष्ठ वचन ही दृढ़ घाट हैं।

सानुज राम-बिबाह उछाहू ❀ सो सुभ उमग सुखद सब काहू ॥
कहत सुनत हरषहिं पुलकाहीं ❀ ते सुकृती मन मुदित नहाहीं ॥

भाइयोंसहित श्रीरामचंद्रजीके विवाहका जो उत्साह है वही सबको सुख देनेवाली सुन्दर तरंगें हैं। इसे कहते और सुनते जो प्रसन्न और पुलकायमान होते हैं वे ही उस नदीमें स्नान करनेवाले पुण्यात्मा हैं।

रामतिलक हित मंगल साजा ❀ परब जोग जनु जुरेउ समाजा ॥
काई कुमति केकई केरी ❀ परी जासु फल बिपति घनेरी ॥

श्रीरामचंद्रजीको राज्यतिलक देनेके लिये जो मंगल-साज हुआ है वही मानों पर्वके अवसरपर लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हुई है। केकईकी दुर्बुद्धि ही काई है जिसके फलसे घोर विपत्ति पड़ी।

दो०—समन अमित उतपात सब ❀ भरतचरित जपजाग।
कलिअघ खलअवगुन कथन ❀ ते जलमल बक काग ॥ ६२ ॥

समस्त असंख्य उत्पातोंको नष्ट कर देनेवाला भरतका चरित्र ही जप और यज्ञ है। कलियुगके पापों और दुष्टोंके दुर्गुणोंका जो वर्णन है वही इसके जलका मैल, बगुले और कौए हैं।

कीरति सरित छहूँ रितु रूरी ❀ समय सुहावनि पावनि भूरी ॥
हिम-हिमसैल-सुता - सिव - ब्याहू ❀ सिसिर सुखद प्रभु-जनम-उछाहू ॥

सुयशकी यह नदी छहों ऋतुओंमें सुन्दर रहती है और समय समयपर अत्यन्त सुहावनी और पवित्र हो जाती है। हिमालय पर्वतकी कन्या पार्वती और शिवका विवाह हेमन्त ऋतु और श्रीरामके जन्मका उत्साह सुख देनेवाली शिशिर ऋतु है।

बरनब राम - बिबाह - समाजू ❀ सो मुदमंगलमय रितुराजू ॥
दुसह राम - बन - गवनू ❀ पंथ कथा खर आतप पवनू ॥

विवाहकी कथाका जो वर्णन है, वह आनन्द मंगलमय ऋतुराज वसन्त है। श्रीरामका दुःसह ऋतु है जिसमें मार्गकी कथा कड़ी धूप और लू है।

घोर निसाचररारी ❀ सुरकुल सालि सुमंगलकारी ॥
राम - राज - सुख बिनय बड़ाई ❀ बिसद सुखद सोइ सरद सुहाई ॥

देवताओंके समूहरूपी धानोंका सुन्दर कल्याण करनेवाली घोर राक्षसोंके साथ लड़ाई ही वर्षा ऋतु है। श्रीरामके राज्यका जो सुख, सुनीति और प्रशंसा है वही सुन्दर सुख देनेवाली उज्जल शरद् ऋतु है।

सतीसिरोमनि सिय - गुन - गाथा ❀ सोइ गुन अमल अनूपम पाथा ॥
भरतसुभाउ सुसीतलताई ❀ सदा एकरस बरनि न जाई ॥

सती स्त्रियोंमें सर्वश्रेष्ठ सीताजीके गुणोंकी जो कथा है वही इसके अनुपम जलमें निर्मल गुण हैं। भरतका स्वभाव ही इसमें सदैव एक समान रहनेवाली सुन्दर शीतलता है। इसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

दो०—अवलोकनि बोलनि मिलनि ❀ प्रीति परसपर हास।
भायप भलि चहु बंधु की ❀ जल माधुरी सुबास ॥४३॥

चारों भाइयोंका परस्पर देखना, बोलना, मिलना प्रेम करना, हंसना और सुन्दर भाईपन—यही इसके जलकी मिठास और सुगन्ध है।

आरति बिनय दीनता मोरी ❀ लघुता ललित सुबारि न खोरी ॥
अदभुत सलिल सुनत सुखकारी ❀ आस पिआस मनोमलहारी ॥

मेरी नम्र विनती और दीनता इस उत्तम जलका सुन्दर हलकापन है, कोई दोष नहीं। यह अद्भुत जल सुननेमें सुख देनेवाला और आशारूपी प्यास और मनके मलको दूर करनेवाला है।

राम सुपेमहि पोषत पानी ❀ हरत सकल कलि कलुष गलानी ॥
भव - स्रम - सोषक - तोषक तोषा ❀ समन दुरित दुख दारिद दोषा ॥

यह जल सुन्दर रामभक्तिको बढ़ाता और कलियुगके समस्त पापोंकी ग्लानिको दूर कर देता है। यह संसारके कष्टोंको दूर करता, सन्तोषको बढ़ाता तथा पाप, दुःख और दरिद्रतारूपी रोगोंको नष्ट कर देता है।

काम कोह मद मोह नसावन ❀ बिमल बिबेक बिराग बढ़ावन॥
सादर मज्जन पान किये तें ❀ मिटहिं पाप परिताप हिये तें॥

यह काम, क्रोध, मद और मोहको नष्ट करनेवाला तथा निर्मल विवेक और वैराग्य बढ़ानेवाला है। आदरपूर्वक इसमें स्नान करने और इसे पीनेसे हृदयके पाप और दुःख मिट जाते हैं।

जिन्ह एहिं बारि न मानस धोए ❀ ते कायर कलिकाल बिगोए॥
तृषित निरखि रबिकरभवबारी ❀ फिरिहहिं मृग जिमि जीव दुखारी॥

जिन्होंने इस जलसे अपना मन नहीं धोया उन कायरोंको कलियुगने बिगाड़ दिया। ऐसे मनुष्य प्यासे हिरनकी भांति सूर्यकी किरणोंसे उत्पन्न जलके भ्रममें दुखी होते फिरते हैं।

दो०—मति अनुहारि सुबारि गुन ❀ गन गनि मन अन्हवाइ।
सुमिरि भवानी संकरहि ❀ कह कबि कथा सुहाइ॥६४॥

अपनी बुद्धिके अनुसार इस सुन्दर जलके गुणोंको समझ कर उसमें मनको स्नान कराके और पार्वती शिवका स्मरण करके मैं कवि तुलसीदास कथाको कहता हूं।

अब रघुपति पद पँकरुह ❀ हिय धरि पाइ प्रसाद॥
कहउँ जुगल मुनिबर्ज कर ❀ मिलन सुभग संबाद॥

अब श्रीरामचंद्रजीके चरणकमलोंको हृदयमें रख कर और उसका प्रसाद पाकर दोनों मुनिवरोंके मिलनेका सुन्दर संवाद वर्णन करता हूं।

भरद्वाज जागबालक संवाद

भरद्वाज मुनि बसहिं प्रयागा ❀ तिन्हहिं रामपद अति अनुरागा॥
तापस-सम-दम-दया निधाना ❀ परमारथ पद परम सुजाना॥

प्रयागमें भरद्वाज मुनि बसते थे। उनका श्रीरामके चरणोंमें अत्यंत प्रेम था। वे बड़े तपस्वी, शम, दम और दयाके भाण्डार तथा परमार्थ-मार्गमें अत्यंत चतुर थे।

माघ मकरगत रबि जब होई ❀ तीरथपतिहिं आव सब कोई॥
देव दनुज किन्नर नरस्रेनी ❀ सादर मज्जहिं सकल त्रिबेनी॥

माघमें जब सूर्य मकर राशिमें जाता है तब सब कोई तीर्थराज प्रयागमें आते हैं। देवता, दैत्य, किन्नर और मनुष्योंके समूह—सब आदरपूर्वक त्रिवेणीमें स्नान करते हैं।

पूजहिं माधव - पद - जलजाता ❀ परसि अखय बटु हरषहिं गाता ॥
भरद्वाजआस्रम अतिपावन ❀ परम रम्य मुनिवर मन भावन ॥

माधवके चरणकमलोंकी पूजा करते हैं और अक्षयवटको छूकर शरीर प्रसन्न हो जाता है। भरद्वाज मुनिका अत्यंत पवित्र आश्रम बहुत ही सुन्दर और मुनिवरोंके मनको भी रुचनेवाला है।

तहां होइ मुनि - रिषय - समाजा ❀ जाहिं जे मज्जन तीरथराजा ॥
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा ❀ कहहिं परसपर हरि - गुन गाहा ॥

तीर्थराजमें जो ऋषि मुनि स्नान करनेके लिये जाते थे उन सबकी वहां सभा होती थी। प्रातःकालमें वे उत्साहसहित स्नान किया करते और परस्पर भगवान्के गुणोंकी कथा कहा करते थे।

दो०—ब्रह्मनिरूपन धर्म बिधि ❀ बरनहिं तत्व बिभाग।
कहहिं भगति भगवंत कै ❀ संजुत ग्यान - बिराग ॥ ६६ ॥

वे सब ब्रह्मका निरूपण, धर्मकी विधि और तत्वकी बातें वर्णन करते और ज्ञान-वैराग्यसहित भगवान्की भक्तिकी कथा कहा करते थे।

एहि प्रकार भरि माघ नहाहीं ❀ पुनि सब निज निज आस्रम जाहीं ॥
प्रति संबत अस होइ अनंदा ❀ मकर मज्जि गवनहिं मुनिबृन्दा ॥

इस प्रकार सब माघभर नहाकर फिर अपने अपने आश्रमोंको चले जाते थे। प्रति वर्ष बड़ा आनन्द होता था। मकर-स्नान करनेके बाद मुनियोंके समूह चले जाते थे।

एक बार भरि मकर नहाए ❀ सब मुनीस आस्रमन्ह सिधाए ॥
जागबलिक मुनि परम बिबेकी ❀ भरद्वाज राखे पद टेकी ॥

एक बार मकर-स्नान पूरा कर सभी मुनीश्वरगण अपने अपने आश्रमोंको चले गये परन्तु भरद्वाज मुनिने पैर पकड़कर अत्यंत ज्ञानी याज्ञवल्क्य मुनिको रोक रखा।

सादर चरनसरोज पखारे ❀ अतिपुनीत आसन बैठारे ॥
करि पूजा मुनि सुजस बखानी ❀ बोले अतिपुनीत मृदु - बानी ॥

आदरपूर्वक उनके चरणकमलोंको धोया और अत्यंत पवित्र आसनपर बैठाकर पूजा की, फिर मुनिका सुयश बखान कर अत्यन्त पवित्र मीठी वाणीसे बोले।

नाथ एक संसउ बड़ मोरे ❀ करगत बेदतत्व सब तोरे ॥
कहत सो मोहि लागत भय लाजा ❀ जौं न कहउं बड़ होइ अकाजा ॥

हे नाथ, मुझे एक बड़ा सन्देह है और वेदोंका सम्पूर्ण तत्व आपकी मुट्ठीमें है। उस संदेहको कहते हुए मुझे भय और लज्जा लगती है परंतु यदि उसे न कहूं तो बड़ा अकाज होगा।

दो०—संत कहहिं असि नीति प्रभु ❁ स्रुति पुरान मुनि गाव।
होइ न बिमल बिबेक उर ❁ गुरु सन किये दुराव ॥६७॥

हे प्रभो, साधुजन ऐसी नीति कहते हैं और वेद, पुराण तथा मुनि भी यही बतलाते हैं कि गुरुसे छिपाव करनेपर हृदयमें निर्मल ज्ञान नहीं होता।

अस बिचारि प्रगटउँ निज मोहू ❁ हरहु नाथ करि जन पर छोहू ॥
रामनाम कर अमित प्रभावा ❁ सन्त-पुरान-उपनिषद गावा ॥

यही विचारकर अपना मोह प्रकट करता हूं। हे नाथ, भक्तपर कृपा करके उसे दूर करो, साधुजन, पुराण और उपनिषद् कहते हैं कि श्रीरामके नामकी सीमा नहीं है।

संतत जपत संभु अबिनासी ❁ सिव भगवान ग्यान-गुन-रासी ॥
आकर चारि जीव जग अहहीं ❁ कासी मरत परम पद लहहीं ॥

ज्ञान और गुणोंकी खान, कल्याणरूप, अविनाशी भगवान् शिव उसे सदैव जपा करते हैं। संसारमें चार जातिके जीव हैं, काशीमें मरकर वे सब परमपद पा जाते हैं।

सोपि राममहिमा मुनिराया ❁ सिव उपदेस करत करि दाया ॥
रामु कवन प्रभु पूछउँ तोहीं ❁ कहिय बुझाइ कृपानिधि मोहीं ॥

दया करके शिवजी जो उपदेश देते हैं, हे मुनिराज, वह भी श्रीरामकी महिमा ही है। हे प्रभो, आपको पूछता हूं कि वे राम कौन हैं? हे कृपासागर मुझे समझाकर कहिये।

एक राम अवधेसकुमारा ❁ तिन्ह कर चरित बिदित संसारा ॥
नारिबिरह दुख लहेउ अपारा ❁ भयउ रोष रन रावन मारा ॥

एक राम तो अयोध्याके राजाके पुत्र हैं जिनका चरित संसारमें प्रसिद्ध है, जिन्होंने स्त्रीके वियोगमें अपार कष्ट पाया और क्रोधित होकर लड़ाईमें रावणको मार डाला।

दो०—प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ ❁ जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्यधाम सरबग्य तुम्ह ❁ कहहु बिबेक बिचारि ॥६८॥

हे प्रभो, आप सत्यके धाम और सर्वज्ञ हैं। आप ज्ञानसे विचारकर कहिये कि जिनको शिवजी जपते हैं वे यही राम हैं या कोई और?

जैसे मिटइ मोर भ्रम भारी ❀ कहहु सो कथा नाथ बिस्तारी ॥
जागबलिक बोले मुसुकाई ❀ तुम्हहिं बिदित रघुपति प्रभुताई ॥

जिस प्रकार मेरा भारी भ्रम मिट जावे, हे नाथ, आप वही कथा विस्तारपूर्वक कहिये। याज्ञवल्क्य मुनि मुस्कुराकर बोले कि तुम्हें श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताका ज्ञान है।

रामभगत तुम्ह मन क्रम बानी ❀ चतुराई तुम्हारि मैं जानी ॥
चाहहु सुनइ रामगुन गूढ़ा ❀ कीन्हेहु प्रस्न मनहुँ अतिमूढ़ा ॥

तुम मन, वाणी और कर्मसे श्रीरामके भक्त हो। मैंने तुम्हारी चतुराई जान ली। तुम श्रीरामचन्द्रजीके गूढ़ गुणोंको सुनना चाहते हो, इसीलिये यह प्रश्न किया है, मानों अत्यन्त मूर्ख हो।

तात सुनहु सादर मन लाई ❀ कहउँ राम कै कथा सुहाई ॥
महा मोह महिषेस बिसाला ❀ रामकथा कालिका कराला ॥

हे तात, आदरपूर्वक मन लगाकर सुनो, श्रीरामकी सुन्दर कथा कहता हूं। विशाल महिषासुररूपी महान मोहके लिये श्रीराम-कथा भयंकर कालिकाके समान है।

रामकथा ससिकिरन समाना ❀ संत चकोर करहिं जेहि पाना ॥
ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी ❀ महादेव तब कहा बखानी ॥

श्रीरामकी कथा चंद्रमाकी किरणोंके समान है, जिन्हें साधुजनरूपी चकोर पान किया करते हैं। ऐसा ही संदेह पार्वतीने भी किया था तब महादेवजीने उसे विस्तारपूर्वक वर्णन किया था।

दो०—कहउँ सो मति अनुहारि अब ❀ उमा - संभु - संबाद।
भयउ समय जेहि हेतु जेहि ❀ सुनि मुनि मिटिहि बिषाद ॥६६॥

अब वही पार्वती और शिवका संवाद अपनी बुद्धिके अनुसार कहता हूं कि वह किस समय और किस कारण हुआ। हे ऋषि, सुनो। उससे दुःख दूर हो जाते हैं।

(सती-चरित्र)

एक बार त्रेता युग माहीं ❀ सम्भु गये कुम्भज रिषि पाहीं ॥
संग सती जगजननि भवानी ❀ पूजे रिषि अखिलेस्वर जानी ॥

त्रेतायुगमें एक बार शिवजी कुम्भजऋषिके पास गये। उनके साथ जगत्‌की माता सती भवानीजी भी थीं। ऋषिने उन्हें सारे जगत्‌का ईश्वर जानकर पूजा।

रामकथा मुनिबर्ज बखानी ❀ सुनी महेस परम सुख मानी ॥
रिषि पूछी हरिभगति सुहाई ❀ कही संभु अधिकारी पाई ॥

मुनिवर कुम्भजने श्रीरामकी कथाको विस्तारपूर्वक कहा और शिवजीने अत्यन्त सुख मानकर उसे सुना। ऋषिने शिवजीसे भगवान्‌की सुन्दर भक्तिकी बात पूछी और शिवजीने पात्र पाकर उसे ऋषिसे कहा।

कहत सुनत रघुपति-गुन-गाथा ❀ कछु दिन तहाँ रहे गिरिनाथा ॥
मुनि सन बिदा मागि त्रिपुरारी ❀ चले भवन सँग दच्छकुमारी ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथाको कहते और सुनते हुए कुछ दिनों वहां शिवजी रहे; अनन्तर मुनिसे विदा मांगकर वे दक्षकी कन्या सतीको साथ लेकर अपने घरको चले।

तेहि अवसर भंजन महिभारा ❀ हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा ॥
पिता बचन तजि राज उदासी ❀ दंडकबन बिचरत अविनासी ॥

उन्हीं दिनों पृथ्वीका भार उतारनेके लिये रघुकुलमें भगवान् विष्णुने अवतार लिया था। पिताके वचनोंसे राज्य छोड़ उदासी होकर अविनाशी श्रीरामचंद्रजी दण्डक वनमें विचरण करते थे।

दो०—हृदय बिचारत जात हर ❀ केहि बिधि दरसनु होइ।
गुपुतरूप अवतरेउ प्रभु ❀ गये जान सब कोइ ॥७०॥

शिवजी घर जाते हुए अपने हृदयमें यह विचारते जाते थे कि श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन किस प्रकार हो। प्रभुने गुप्त रूपसे अवतार धारण किया है और सब किसीने उन्हें जान लिया है।

सो०—संकर उर अति छोभु ❀ सती न जानइ मरमु सोइ।
तुलसी दरसन लोभु ❀ मन डरु लोचन लालची ॥७१॥

शिवजीके हृदयमें इस बातसे बड़ी घबराहट थी, परन्तु सती इस मर्मको नहीं जानती थीं। तुलसीदासजी कहते हैं कि उनके लालची नेत्रोंको दर्शनोंका लोभ था, पर (कोई भेद न जान ले, इसलिये) मनमें डर भी था।

रावन मरन मनुज-कर जाँचा ❀ प्रभु बिधिबचन कीन्ह चह साँचा ॥
जौं नहिं जाउँ रहइ पछतावा ❀ करत बिचारु न बनत बनावा ॥

रावणने मनुष्यके हाथसे अपना मरना मांगा था। ब्रह्माके उस वचनको भगवान् सत्य करना चाहते हैं। यदि न जाऊँ तो जीमें पछतावा रहेगा। वे विचार करने लगे कि अब कुछ बनाए नहीं बनती।

एहि बिधि भये सोचबस ईसा ❀ तेही समय जाइ दससीसा ॥
लीन्ह नीच मारीचहि संगा ❀ भयउ तुरत सोइ कपट कुरंगा ॥

इस प्रकार ईश्वर शिव जब चिन्तामें पड़े हुए थे, उसी समय रावणने जाकर नीच मारीचको संग लिया, जो तुरन्त ही कपटका हिरन हो गया।

करि छल मूढ़ हरी बैदेही ❀ प्रभुप्रभाउ तस बिदित न तेही ॥
मृग बधि बंधु सहित प्रभु आये ❀ आस्रमु देखि नयन जल छाये ॥

मूर्ख रावणने छल करके सीताजीका हरण किया, उसे श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव भलीभांति मालूम नहीं था। हिरनको मारकर भाईके सहित जब श्रीरामचन्द्रजी लौटे तब आश्रमको देखकर उनकी आंखोंमें आंसू आ गये।

बिरह बिकल नर इव रघुराई ❀ खोजत बिपिन फिरत दोउ भाई ॥
कबहूं जोग बियोग न जाके ❀ देखा प्रगट बिरहदुख ताके ॥

श्रीरामचन्द्रजी वियोगसे मनुष्योंकी भांति व्याकुल हो गये और दोनों भाई वनमें सीताजीको खोजते हुए फिरने लगे। जिसे न कभी संयोग है और न वियोग, उसे वियोगका दुःख प्रकट देखनेमें आया।

दो०—अति बिचित्र रघुपतिचरित ❀ जानहिं परम सुजान।
जे मतिमंद बिमोहबस ❀ हृदय धरहिं कछु आन ॥७२॥

श्रीरामचन्द्रजीका चरित अत्यन्त विचित्र है, उसे परम चतुर मनुष्य ही जानते हैं। जो हीनबुद्धि और मोहके वशीभूत हैं वे हृदयमें इसे कुछ और ही समझते हैं।

संभु समय तेहि रामहिं देखा ❀ उपजा हिय अतिहरषु बिसेखा ॥
भरि लोचन छबिसिन्धु निहारी ❀ कुसमउ जानि न कीन्ह चिन्हारी ॥

शिवजीने उसी समय श्रीरामचन्द्रजीको देखा और उनके मनमें बड़ा ही आनन्द उत्पन्न हुआ। उन्होंने नेत्र भरकर सुन्दरताके समुद्र श्रीरामचन्द्रजीको देखा, पर कुसमय समझकर भेंट नहीं की।

जय सच्चिदानन्द जगपावन ❀ अस कहि चलेउ मनोजनसावन ॥
चले जात सिव सतीसमेता ❀ पुनि पुनि पुलकत कृपानिकेता ॥

संसारको पवित्र करनेवाले सच्चिदानंदकी जय हो—ऐसा कहकर कामदेवको नष्ट करनेवाले शिवजी चल दिये। सतीसहित कृपानिधान शिवजी बारम्बार पुलकायमान होते हुए चले जा रहे थे।

सती सो दसा सम्भु कै देखी ❀ उर उपजा संदेहु बिसेखी ॥
संकर जगतबन्द्य जगदीसा ❀ सुर नर मुनि सब नावत सीसा ॥

सतीने शिवजीकी उस अवस्थाको देखा, जिससे उनके हृदयमें विशेष सन्देह उत्पन्न हुआ। शिवजी जगत्के स्वामी हैं, संसार उनकी वन्दना करता है और देवता, मनुष्य और मुनि—सब उनको मस्तक नवाते हैं।

तिन्ह नृपसुतहिं कीन्ह परनामा ❀ कहि सच्चिदानंद परधामा ॥
भये मगन छबि तासु बिलोकी ❀ अजहुं प्रीति उर रहति न रोकी ॥

उन्होंने सच्चिदानंद और मोक्षधाम कहकर राजपुत्रको प्रणाम किया। उसकी सुन्दरता देखकर ऐसे प्रसन्न हुए कि अबतक हृदयमें प्रेम रोकनेपर भी नहीं रहता।

दो०—ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज ❀ अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होइ नर ❀ जाहि न जानत बेद ॥७३॥

जो ब्रह्म व्यापक, अजन्मा, मायाहीन, कलारहित, इच्छाशून्य और भेदरहित है और जिसे वेद भी नहीं जानते वह देह धारण कर क्या मनुष्य हो सकता है?

बिस्नु जो सुर हित नरतनु धारी ❀ सोउ सरबग्य जथा त्रिपुरारी ॥
खोजइ सो कि अग्य इव नारी ❀ ग्यानधाम श्रीपति असुरारी ॥

जिन विष्णुभगवान्‌ने देवताओंके कल्याणके लिये मनुष्यका शरीर धारण किया है वे शिवजीके समान ही सर्वज्ञ हैं। महा ज्ञानी, लक्ष्मीपति और दैत्योंके शत्रु वे क्या अज्ञानियोंकी भांति स्त्रीको खोजेंगे?

संभु गिरा पुनि मृषा न होई ❀ सिव सरबग्य जानु सब कोई ॥
अस संसय मन भयउ अपारा ❀ होइ न हृदय प्रबोधप्रचारा ॥

फिर शिवजीका कथन भी मिथ्या नहीं हो सकता। सब जानते हैं कि शिवजी सर्वज्ञ हैं। ऐसी असंख्य शंकाएं मनमें उत्पन्न हो गयीं और हृदयमें ज्ञानका विकास नहीं हुआ।

जद्यपि प्रकट न कहेउ भवानी ❀ हर अन्तरजामी सब जानी ॥
सुनहु सती तव नारि सुभाऊ ❀ संसय अस न धरिय उर काऊ ॥

यद्यपि भवानीने प्रकट कुछ नहीं कहा, तथापि अन्तर्यामी शिवने सब कुछ जान लिया। हे सती! सुनो, तुम्हारा स्त्री-स्वभाव है। हृदयमें ऐसी शंका कभी नहीं करनी चाहिये।

जासु कथा कुंभज रिषि गाई ❀ भगति जासु मैं मुनिहिं सुनाई ॥
सोइ मम इष्ट-देव रघुबीरा ❀ सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥

जिसकी कथाको कुम्भजऋषिने गाया है और जिसकी भक्ति मैंने मुनिको सुनायी है वही श्रीरामचन्द्रजी मेरे इष्टदेव हैं, जिनकी सेवा धीर मुनि सदैव किया करते हैं।

छंद—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहीं।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं ॥
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति मायाधनी।
अवतरेउ अपने भगत हित निजतन्त्र नित रघु-कुल-मनी ॥

धीर मुनि, योगी और सिद्ध सदैव निर्मल मनसे जिसका ध्यान करते हैं और वेद, पुराण और शास्त्र 'नेति' कहकर जिसकी कीर्ति गाते हैं उसी व्यापक, ब्रह्म, सकल भुवनपति और मायाके स्वामी रामने अपने भक्तोंके कल्याणके लिये स्वयमेव रघुकुलमें मणिस्वरूप अवतार लिया है।

सो०—लाग न उर उपदेसु ❁ जदपि कहेउ सिव बार बहु।
बोले बिहँसि महेसु ❁ हरि-माया-बलु जानि जिय ॥७४॥

यद्यपि शिवजीने बहुत बार कहा तथापि हृदयमें ज्ञान नहीं हुआ। तब, शिवजी हृदयमें भगवानकी मायाको बलवान समझ हँसकर बोले।

जौ तुम्हरे मन अति संदेहू ❁ तौ किन जाइ परिच्छा लेहू॥
तब लगि बैठि अहउँ बट छाहीं ❁ जब लगि तुम ऐहहु मोहि पाहीं॥

यदि तुम्हारे मनमें अत्यंत संदेह है तो जाकर परीक्षा क्यों नहीं लो? जबतक तुम मेरे पास लौटकर आओगी तबतक मैं वृक्षकी छायामें बैठा हुआ हूं।

जैसे जाइ मोह भ्रम भारी ❁ करेहु सो जतन बिबेक बिचारी॥
चली सती सिव आयसु पाई ❁ करइ बिचारु करउँ का भाई॥

जिससे भारी मोह और भ्रम दूर हो जावे वही उपाय ज्ञानसे विचारकर करना। शिवजीकी आज्ञा पाकर सती चल दीं। वे विचार करती थीं कि क्या करूं।

इहाँ संभु अस मन अनुमाना ❁ दच्छसुता कहँ नहिं कल्याना॥
मोरेहु कहे न संसय जाहीं ❁ बिधि बिपरीत भलाई नाहीं॥

इधर शिवजीने मनमें यह अनुमान किया कि दक्षकी पुत्री सतीका कल्याण नहीं। मेरे कहनेपर भी संदेह नहीं दूर होते! दैव ही प्रतिकूल है और भलाई नहीं।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा ❁ को करि तरक बढ़ावइ साखा॥
अस कहि लगे जपन हरिनामा ❁ गई सती जहँ प्रभु सुखधामा॥

जो कुछ रामने रच रखा है वही होगा। तर्क करके बात कौन बढ़ावे। ऐसा कहकर शिवजी भगवानके नामको जपने लगे और सती वहां गयीं जहां सुखके घर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी थे।

दो०—पुनिपुनि हृदय बिचार करि ❁ धरि सीता कर रूप।
आगे होइ चलि पंथ तेहि ❁ जेहि आवत सुरभूप॥

बारंबार हृदयमें विचार, सीताका रूप रखकर और आगे जाकर सती उसी मार्गपर चलने लगीं, जिससे मनुष्योंके राजा श्रीरामचन्द्रजी आ रहे थे।

लछिमन दीख उमाकृत बेषा ❁ चकित भये भ्रम हृदय बिसेषा ॥
कहि न सकत कछु अतिगंभीरा ❁ प्रभु प्रभाउ जानत मतिधीरा ॥

लक्ष्मणजीने सतीका वह बनावटी भेष देखा जिससे उनके मनमें बड़ा भ्रम हुआ और वे चकित हो गये। वे अत्यन्त गम्भीर और बुद्धिमान थे इसलिये कुछ कह नहीं सकते थे। वे श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावको जानते थे।

सती कपटु जानेउ सुर स्वामी ❁ सबदरसी सब अन्तरजामी ॥
सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना ❁ सोइ सरबग्य राम भगवाना ॥

देवताओंके स्वामी, सर्वदर्शी, सर्वान्तर्यामी श्रीरामचंद्रजीने सतीका कपट जान लिया। जिसे स्मरण करनेसे अज्ञान मिट जाता है वही सर्वज्ञ भगवान् श्रीरामचंद्रजी हैं।

सती कीन्ह चह तहहुं दुराऊ ❁ देखहु नारि-सुभाउ-प्रभाऊ ॥
निज मायाबल हृदय बखानी ❁ बोले बिहँसि राम मृदुबानी ॥

फिर भी सतीने उनसे छिपाव करना चाहा—यह स्त्रीके स्वभावका प्रभाव देखो ? अपनी मायाकी शक्तिको हृदयमें विचारकर श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराकर मीठी वाणीसे बोले।

जोरि पानि प्रभु कीन्ह प्रनामू ❁ पितासमेत लीन्ह निज नामू ॥
कहेउ बहोरि कहां बृषकेतू ❁ बिपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और पितासहित अपना नाम लिया। फिर यह कहा कि महादेवजी कहां हैं और वनमें अकेली क्यों फिर रही हो ?

दो०—रामबचन मृदु गूढ़ सुनि ❁ उपजा अति संकोचु।
सती सभीत महेस पहिं ❁ चलीं हृदय बड़ सोचु ॥७६॥

श्रीरामचन्द्रजीके मीठे गूढ़ वचन सुनकर सतीको बड़ा संकोच हुआ। डरकर वे शंकरजीके पास लौटीं। उनके हृदयमें बड़ी चिन्ता थी।

मैं संकर कर कहा न माना ❁ निज अग्यान राम पर आना ॥
जाइ उतरु अब देइहउँ काहा ❁ उर उपजा अतिदारुन दाहा ॥

मैंने शंकरजीका कहना नहीं माना और श्रीरामचन्द्रजीको अपनी अज्ञानता दिखलायी। अब मैं जाकर क्या उत्तर दूंगी ? सतीके हृदयमें अत्यन्त कठोर दाह उत्पन्न हुई।

जाना राम सती दुख पावा ❁ निज प्रभाउ कछु प्रगटि जनावा ॥
सती दीख कौतुक मग जाता ❁ आगे राम सहित श्रीभाता ॥

श्रीरामचन्द्रजीने यह जान लिया कि सती दुःखित हुई हैं। तब उन्होंने अपना कुछ प्रभाव प्रकट करके दिखलाया। सतीने मार्गसे लौटते हुए यह कौतुक देखा कि लक्ष्मण और सीतासहित श्रीरामचन्द्रजी आगे जा रहे हैं।

फिर चितवा पाछे प्रभु देखा ❁ सहित बंधु सिय सुन्दर बेखा ॥
जहँ चितवहि तहँ प्रभु आसीना ❁ सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रबीना ॥

फिर देखनेपर सुन्दर वेशमें भाई और सीतासहित श्रीरामचन्द्रजीको पीछे देखा। जहां वे देखती थीं वहीं दिखलायी पड़ता था कि श्रीरामचन्द्रजी बैठे हुए हैं और चतुर सिद्ध और मुनीश्वर जन सेवा कर रहे हैं।

देखे सिव बिधि बिस्नु अनेका ❁ अमितप्रभाउ एक तें एका ॥
बन्दत चरन करत प्रभु सेवा ❁ बिबिध बेष देखे सब देवा ॥

सतीने अनेक शिव, ब्रह्मा और विष्णु देखे जिनका प्रभाव एक दूसरेसे बढ़कर असीम था। उन्होंने समस्त देवताओंको अनेक प्रकारके भेषमें श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी वंदना और सेवा करते हुए देखा।

दो०—सती बिधात्री इंदिरा ❁ देखी अमित अनूप।
जेहि जेहि बेष अजादि सुर ❁ तेहि तेहि तन अनुरूप ॥७७॥

जिस जिस भेषमें ब्रह्मादि देवता थे उन्हींके शरीरके समान ही सतीने असीम सती, लक्ष्मी और सरस्वती देखीं। ये सब अनुपम थीं।

देखे जहँ तहँ रघुपति जेते ❁ सक्तिन्हसहित सकल सुर तेते ॥
जीव चराचर जे संसारा ❁ देखे सकल अनेक प्रकारा ॥

जगह जगहपर सतीने जितने श्रीरामचन्द्र देखे उतने ही समस्त देवताओंको अपनी अपनी शक्तियों सहित देखा। संसारमें अनेक प्रकारके चर और अचर जितने जीव हैं उन सबको देखा।

पूजहिं प्रभुहिं देव बहु बेखा ❁ रामरूप दूसर नहिं देखा ॥
अवलोके रघुपति बहुतेरे ❁ सीतासहित न बेख घनेरे ॥

देवता अनेक भेषोंमें श्रीरामचन्द्रजीकी पूजा करते थे, परन्तु (एकसे भिन्न) श्रीरामचन्द्रजीका कोई दूसरा रूप नहीं दिखलायी दिया। सीतासहित श्रीरामचन्द्रजी तो अनेक दिखलायी दिये, परन्तु उनके भेष अनेक न थे।

सोइ रघुबर सोइ लछिमन सीता ❁ देखि सती अति भई सभीता ॥
हृदय कंप तन सुधि कछु नाहीं ❁ नयन मूँदि बैठी मग माहीं ॥

श्रीरामचंद्रजी वही थे और वही सीता एवं लक्ष्मण थे। यह देखकर सती अत्यन्त डर गयीं। उनका हृदय कँप गया, उन्हें शरीरकी कुछ भी याद नहीं रही और वे नेत्र बंदकर मार्गमें बैठ गयीं।

बहुरि बिलोकेउ नयन उघारी ❀ कछु न दीख तहँ दच्छकुमारी ॥
पुनि पुनि नाइ रामपद सीसा ❀ चली तहां जहँ रहे गिरीसा ॥

दक्षकी पुत्री सतीने जब फिर नेत्र खोलकर देखा तब वहां कुछ न पाया। वे बारंबार श्रीरामके चरणोंमें शिर नवाकर वहांके लिये चल दीं जहां शिवजी थे।

दो०—गईं समीप महेस तब ❀ हँसि पूछी कुसलात ॥
लीन्हि परिच्छा कवन बिधि ❀ कहहु सत्य सब बात ॥७८॥

जब सती पास पहुंचीं तब हँसकर शिवजीने कुशलता पूछी और कहा कि परीक्षा किस प्रकार ली, सब बात सत्य कहो।

सती समुझि रघुबीरप्रभाऊ ❀ भयबस सिव सन कीन्ह दुराऊ ॥
कछु न परिच्छा लीन्हि गुसाईं ❀ कीन्ह प्रनाम तुम्हारिहि नाईं ॥

श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव समझकर डरसे सतीने शिवजीसे छिपाव किया और कहा कि हे स्वामी, मैं कुछ भी परीक्षा नहीं ली। तुम्हारी ही भांति प्रणाम किया।

जो तुम्ह कहा सो मृषा न होई ❀ मोरे मन प्रतीति अति सोई ॥
तब संकर देखेउ धरि ध्याना ❀ सती जो कीन्ह चरित सब जाना ॥

तुमने जो कुछ कहा वह असत्य नहीं हो सकता, मेरे मनमें यही दृढ़ विश्वास है। तब शङ्करजीने ध्यान रखकर देखा और सतीने जो कुछ किया था वह सब चरित जान लिया।

बहुरि राममायहि सिरु नावा ❀ प्रेरि सतिहि जेहि झूठ कहावा ॥
हरिइच्छा भावी बलवाना ❀ हृदय बिचारत संभु सुजाना ॥

फिर उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीकी मायाको शिर नवाया, जिसने सतीको प्रेरणा कर झूठ कहलवाया। सुजान शिवजी हृदयमें विचारते थे कि भगवानकी इच्छा और होनेहार बलवान हैं।

सती कीन्ह सीता कर बेषा ❀ सिव उर भयउ बिषाद बिसेषा ॥
जौं अब करउँ सती सन प्रीती ❀ मिटइ भगति पथ होइ अनीती ॥

सतीने सीताजीका भेष किया—इससे शिवजीके हृदयमें बड़ा दुःख हुआ। यदि अब मैं सतीसे प्रेम करूँ तो भक्तिमार्ग मिट जायगा और अनर्थ होगा।

दो०—परम पेम तजि जाइ नहिं ❀ किये पेम बड़ पाप।
प्रगटि न कहत महेसु कछु ❀ हृदय अधिक संताप ॥७६॥

अत्यन्त प्रेमके कारण छोड़ा नहीं जाता और प्रेम करनेमें बड़ा पाप है। प्रकट रूपसे महादेवजी कुछ न कहते थे, परन्तु उनके हृदयमें बहुत दुःख था।

तब संकर प्रभुपद सिरु नावा ❀ सुमिरत राम हृदय अस आवा॥
एहि तन सतिहि भेट मोहिं नाहीं ❀ सिव संकल्प कीन्ह मन माहीं॥

तब शिवजीने प्रभु श्रीरामचंद्रजीके चरणोंको शिर नवाया और स्मरण करते ही हृदयमें यह आया—"इस शरीरसे सतीके साथ मेरी भेंट न होगी।" यह निश्चय शिवजीने मनमें किया।

अस बिचारि संकर मतिधीरा ❀ चले भवन सुमिरत रघुबीरा॥
चलत गगन भइ गिरा सुहाई ❀ जय महेस भलि भगति दृढ़ाई॥

ऐसा विचारकर बुद्धिमान् शिवजी श्रीरामका स्मरण करते हुए अपने घरको चले। उनके चलते ही सुन्दर आकाशवाणी हुई—"हे महेश! आपकी जय हो! आपकी उत्तम भक्ति दृढ़ है।"

अस पन तुम्ह बिनु करइ को आना ❀ रामभगत समरथ भगवाना॥
सुनि नभगिरा सती उर सोचा ❀ पूछा सिवहिं समेत सकोचा॥

"आपके विना दूसरा कौन ऐसा प्रण कर सकता है? हे भगवन्, आप सामर्थ्यवान और रामभक्त हैं।" आकाशवाणी सुनकर सतीके हृदयमें सोच हुआ और उन्होंने संकोचपूर्वक शिवजीसे पूछाः—

कीन्ह कवन पन कहहु कृपाला ❀ सत्यधाम प्रभु दीनदयाला॥
जदपि सती पूछा बहु भाँती ❀ तदपि न कहेउ त्रिपुरआराती॥

हे कृपालु, हे प्रभो, आप दीनदयालु और सत्यके घर हैं। कहिये, आपने कौनसा प्रण किया है। यद्यपि सतीने अनेक प्रकारसे पूछा तथापि शिवजीने नहीं बतलाया।

दो०—सती हृदय अनुमान किय ❀ सब जानेउ सरबग्य।
कीन्ह कपट मैं संभु सन ❀ नारि सहज जड़ अग्य ॥८०॥

सतीने हृदयमें अनुमान किया कि सर्वज्ञ शिवने सब जान लिया। मैंने शिवजीसे कपट किया। स्त्रियां स्वभावसे ही मूर्ख और अज्ञान होती हैं।

सो०—जल पय सरिस बिकाइ ❀ देखहु प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रसु जाइ ❀ कपट खटाई परत पुनि ॥८१॥

प्रीतिकी भली रीति तो देखो कि पानी भी दूधके ही भाव बिकता है, परन्तु फिर कपटरूपी खटाई पड़ते ही वह अलग हो जाता है और रस जाता रहता है।

हृदय सोच समुझत निज करनी ❀ चिन्ता अमित जाइ नहिं बरनी॥
कृपासिंधु सिव परम अगाधा ❀ प्रगट न कहेउ मोर अपराधा॥

अपनी ही करतूत समझकर सतीके हृदयमें सोच हुआ और असीम चिन्ता हुई जो वर्णन नहीं की जा सकती। कृपासागर शिव अनन्त गंभीर हैं। उन्होंने मेरा अपराध प्रकट रूपमें नहीं कहा।

संकररुख अवलोकि भवानी ❀ प्रभु मोहि तजेउ हृदय अकुलानी॥
निज अघ समुझि न कछु कहि जाई ❀ तपइ अवाँ इव उर अधिकाई॥

शिवजीके रुखसे यह देखकर कि स्वामीने मुझे त्याग दिया, सतीके हृदयमें व्याकुलता हुई। अपना ही पाप समझकर कुछ कहा नहीं जाता। हृदय अवाँकी भांति अधिकाधिक तपने लगा।

सतिहि ससोच जानि बृषकेतू ❀ कही कथा सुंदर सुखहेतू॥
बरनत पंथ बिबिध इतिहासा ❀ बिस्वनाथ पहुंचे कैलासा॥

सतीको सोचमें जानकर महादेवजीने सुखदायक सुन्दर कथा कही। अनेक इतिहासोंका मार्गमें वर्णन करते हुए संसारके स्वामी शिव कैलाश पर्वतपर पहुंच गये।

तहँ पुनि संभु समुझि पन आपन ❀ बैठे बट तर करि कमलासन॥
संकर सहज सरूप सँभारा ❀ लागि समाधि अखंड अपारा॥

फिर वहां अपने प्रणको समझकर शिवजी कमलासन लगाकर वटवृक्षके नीचे बैठ गये। शिवजीने अपना स्वाभाविक स्वरूप संभाला और अखण्ड तथा अपार समाधि लगायी।

दो०—सती बसहिं कैलास तब ❀ अधिक सोच मन माहिं।
मरमु न कोऊ जान कछु ❀ जुग सम दिवस सिराहिं॥८२॥

उस समय सती कैलाशमें बसती थीं। उनके मनमें बड़ा सोच था। कोई कुछ भेद न जानता था और दिन युगके समान बीतते थे।

नित नव सोच सती उर भारा ❀ कब जइहउँ दुख-सागर-पारा॥
मैं जो कीन्ह रघुपति अपमाना ❀ पुनि पतिबचन मृषा करि जाना॥

सतीके हृदयमें नित्य नया और भारी सोच हो रहा था। वे सोचती थीं कि मैं दुःखके समुद्रसे कब पार हो जाऊंगी। मैंने जो श्रीरामचन्द्रजीका अपमान किया और फिर पतिकी बातोंको मिथ्या माना—

सो फल मोहिं बिधाता दीन्हा ❀ जो कछु उचित रहा सोइ कीन्हा ॥
अब बिधि अस बूझिय नहिं तोही ❀ संकरबिमुख जिआवसि मोही ॥

उसका फल मुझे ब्रह्माने दिया। जो कुछ उचित था, उसने वही किया। हे ब्रह्मा! अब तुझे यह नहीं चाहिये कि शङ्करसे विमुख मुझे जीवित रखता है।

कहि न जाइ कछु हृदय गलानी ❀ मन महँ रामहिं सुमिरि सयानी ॥
जौं प्रभु दीनदयालु कहावा ❀ आरतिहरन बेद जस गावा ॥

उनके हृदयकी ग्लानि कुछ कही नहीं जा सकती। चतुर सतीने मनमें श्रीरामचंद्रजीका स्मरणकर कहा कि यदि प्रभु दीनदयालु कहलाते हैं और यदि दुःखनाशक कहकर वेद यश गाते हैं—

तौ मैं बिनय करउँ कर जोरी ❀ छूटउ बेगि देह यह मोरी ॥
जौं मोरे सिवचरन सनेहू ❀ मन क्रम बचन सत्य ब्रत एहू ॥

तो मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूं कि मेरी यह देह शीघ्रही छूट जावे। यदि मेरे शिवजीके चरणोंका स्नेह हो और मन, वाणी और कर्मसे यही व्रत सच्चा हो—

दो०—तौ सबदरसी सुनिय प्रभु ❀ करउ सो बेगि उपाइ।
होइ मरन जेहिं बिनहि स्रम ❀ दुसह बिपत्ति बिहाइ ॥ ८३ ॥

तो हे सर्वदर्शी प्रभो, सुनिये, शीघ्र वही उपाय कीजिये जिससे सहज ही मेरा मरण हो जाय और यह दुस्सह विपत्ति दूर हो जावे।

एहि बिधि दुखित प्रजेसकुमारी ❀ अकथनीय दारुन दुख भारी ॥
बीते संबत सहस सतासी ❀ तजी समाधि संभु अबिनासी ॥

दक्षकी पुत्री सती इस प्रकार दुःखित थीं। उन्हें अत्यन्त कठिन अकथनीय दुःख था। अविनाशी शिवने ८७००० वर्ष बीतनेपर समाधि छोड़ी।

रामनाम सिव सुमिरन लागे ❀ जानेउ सती जगतपति जागे ॥
जाइ संभुपद बंदन कीन्हा ❀ सनमुख संकर आसन दीन्हा ॥

शिवजी श्रीरामका नाम स्मरण करने लगे। इससे सतीने जाना कि संसारके स्वामी जग गये। सतीने आकर शिवजीके चरणोंकी वन्दना की। उन्होंने सतीको बैठनेके लिए अपने सामने आसन दिया।

लगे कहन हरिकथा रसाला ❀ दच्छ प्रजेस भये तेहि काला ॥
देखा बिधि बिचारि सब लायक ❀ दच्छहि कीन्ह प्रजापतिनायक ॥

वे भगवान्‌की रसीली कथाएं कहने लगे, उसी समय दक्ष प्रजापति हुए। ब्रह्माने विचारकर जब सब प्रकार योग्य देखा तब दक्षको प्रजापतियोंका नायक बनाया।

बड़ अधिकार दच्छ जब पावा ❀ अति अभिमान हृदय तब आवा ॥
नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं ❀ प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ॥

दक्षने जब यह बड़ा अधिकार पाया, तब हृदयमें बड़ा अभिमान उत्पन्न हुआ। प्रभुता पाकर जिसे घमण्ड न हो, ऐसे किसी मनुष्यने संसारमें जन्म नहीं लिया।

दो०—दच्छ लिये मुनि बोलि सब ❀ करन लगे बड़ जाग।
नेवते सादर सकल सुर ❀ जे पावत मख भाग ॥८४॥

दक्षने सब मुनियोंको बुला लिया और बड़ा यज्ञ करने लगे। जो देवता यज्ञमें भाग पाते हैं, उन सबको उन्होंने आदरपूर्वक आमन्त्रित किया।

किन्नर नाग सिद्ध गंधर्वा ❀ बधुन्ह समेत चले सुर सर्वा ॥
बिष्णु बिरंचि महेस बिहाई ❀ चले सकल सुर जान बनाई ॥

किन्नर, नाग, सिद्ध, गंधर्व—सब देवता अपनी अपनी स्त्रियों समेत चल दिये। विष्णु, ब्रह्मा और शिवको छोड़कर सब देवता अपने अपने विमान सजाकर चले।

सती बिलोके ब्योम बिमाना ❀ जात चले सुंदर बिधि नाना ॥
सुरसुंदरी करहिं कल गाना ❀ सुनत स्त्रवन छूटहिं मुनिध्याना ॥

सतीने अनेक प्रकारके सुन्दर विमानोंको आकाशमें जाते हुए देखा। देवताओंकी स्त्रियां सुन्दर गान करती थीं, जिसे कानोंसे सुनते ही मुनियोंके ध्यान छूट जाते थे।

पूछेउ तब सिव कहेउ बखानी ❀ पिताजग्य सुनि कछु हरषानी ॥
जौं महेस मोहि आयसु देहीं ❀ कछु दिन जाइ रहउँ मिस एहीं ॥

जब सतीने पूछा तब शिवजीने सब बात विस्तारपूर्वक बतलायी। पिताके यज्ञकी बात सुनकर सतीको कुछ प्रसन्नता हुई। उन्होंने सोचा कि यदि महादेवजी मुझे आज्ञा दें तो कुछ दिनतक इसी बहाने जाकर रहूं।

पतिपरित्याग हृदय दुखु भारी ❀ कहइ न निज अपराध बिचारी ॥
बोली सती मनोहर बानी ❀ भय संकोच प्रेम रस सानी ॥

पतिद्वारा छोड़ दिये जानेका हृदयमें भारी दुःख था, परन्तु अपना ही अपराध सोचकर उसे न कहती थीं। अन्ततः सतीने भय, संकोच और प्रेमरससे भरी हुई मनोहर वाणीसे कहा—

दो०—पिताभवन उत्सव परम ❀ जौं प्रभु आयसु होइ।
तौ मैं जाउँ कृपायतन ❀ सादर देखन सोइ॥ ८५॥

पिताके घरमें भारी उत्सव है। हे प्रभो, हे कृपानिधान, यदि आज्ञा हो तो मैं आदरपूर्वक उसे देखनेके लिए जाऊँ?

कहेहु नीक मोरेहु मन भावा ❀ यह अनुचित नहिं नेवत पठावा॥
दच्छ सकल निज सुता बोलाई ❀ हमरे बयर तुम्हउ बिसराई॥

शिवजीने कहा कि ठीक कहा और वह मेरे भी मनको पसंद आया। परन्तु निमंत्रण नहीं भेजा है, यह अनुचित है। दक्षने अपनी समस्त पुत्रियोंको बुलाया है, परन्तु मुझसे वैर होनेके कारण तुम्हें भी भुला दिया।

ब्रह्मसभा हम सन दुखु माना ❀ तेहि ते अजहुँ करहिं अपमाना॥
जौं बिनु बोले जाहु भवानी ❀ रहइ न सीलु सनेहु न कानी॥

एक बार ब्रह्माकी सभामें मुझसे बुरा मान गये थे, उसी कारण अब भी अपमान करते हैं। हे भवानी, यदि बिना बुलाये हुए जाओगी तो शील, स्नेह और लज्जाकी रक्षा नहीं होगी।

जदपि मित्र-प्रभु-पितु-गुर गेहा ❀ जाइय बिनु बोलेहु न सँदेहा॥
तदपि बिरोध मान जहँ कोई ❀ तहां गये कल्यान न होई॥

यद्यपि मित्र, स्वामी, पिता और गुरुके घर, इसमें सन्देह नहीं है, बिना बुलाये हुए भी जाना चाहिये, तथापि जहां कोई विरोध मानता हो वहां जानेपर कल्याण नहीं होता।

भांति अनेक संभु समुझावा ❀ भावीबस न ग्यान उर आवा॥
कह प्रभु जाहु जो बिनहिं बोलाये ❀ नहिं भलि बात हमारेहि भाये॥

शिवजीने अनेक प्रकारसे समझाया, परन्तु होनहारके कारण हृदयमें ज्ञान नहीं हुआ। प्रभु शिवजीने कहा कि यदि बिना बुलाये हुए ही जाओगी तो मेरी समझमें भली बात नहीं होगी।

दो०—कहि देखा हर जतन बहु ❀ रहइ न दच्छकुमारि।
दिये मुख्य गन संग तब ❀ बिदा कीन्हि त्रिपुरारि॥ ८६॥

शिवजीने बहुतेरे उपाय कर देखा कि दक्षकी पुत्री सती नहीं रहतीं तब उन्होंने मुख्य मुख्य गणोंको संग देकर बिदा किया।

पिताभवन जब गई भवानी ❀ दच्छत्रास काहु न सनमानी॥
सादर भलेहि मिली एक माता ❀ भगिनी मिलीं बहुत मुसुकाता॥

भवानी जब पिताके घर गयीं, तब दक्षके डरसे उनका किसीने आदर नहीं किया। भले ही एक माता ही आदरपूर्वक मिली, परन्तु बहिनें बहुत मुस्कुराती हुई मिलीं।

दच्छ न कछु पूछी कुसलाता ❀ सतिहि बिलोकि जरे सब गाता ॥
सती जाइ देखेउ तब जागा ❀ कतहुँ न दीख संभुकर भागा ॥

दक्षने कुछ कुशल-क्षेम नहीं पूछा। उनका समस्त शरीर सतीको देखकर जल गया। सतीने तब जाकर यज्ञ देखा, परन्तु वहां कहीं भी शिवका भाग नहीं देखा।

तब चित चढ़ेउ जो संकर कहेऊ ❀ प्रभु अपमान समुझि उर दहेऊ ॥
पाछिल दुख अस हृदय न ब्यापा ❀ जस यह भयउ महापरितापा ॥

तब शिवजीने जो कुछ कहा था वह ध्यानमें आया और स्वामीका अपमान समझकर हृदयमें बड़ी पीड़ा हुई। हृदयमें यह दुःख जैसा भारी हुआ वैसा पिछला दुःख भी नहीं हुआ था।

जद्यपि जग दारुन दुख नाना ❀ सब तें कठिन जातिअपमाना ॥
समुझि सो सतिहि भयउ अतिक्रोधा ❀ बहु बिधि जननी कीन्ह प्रबोधा ॥

यद्यपि संसारमें कठिन दुःख अनेक हैं तथापि जातिका अपमान सबसे कठिन है। माताने बहुत प्रकारसे समझाया, परन्तु वही जातिका अपमान समझकर सतीको अत्यन्त क्रोध हुआ।

दो०—सिव अपमान न जाइ सहि ❀ हृदय न होइ प्रबोध।
सकल सभहिं हठि हटकि तब ❀ बोली बचन सक्रोध ॥८७॥

शिवजीका अपमान नहीं सहा जाता और हृदयको सन्तोष नहीं होता। तब सतीने समस्त सभाको झिड़ककर क्रोधसहित यह कहा—

सुनहु सभासद सकल मुनिंदा ❀ कही सुनी जिन्ह संकरनिंदा ॥
सो फलु तुरत लहब सब काहू ❀ भली भांति पछिताब पिताहू ॥

हे सभासदो और समस्त मुनिवरो, सुनो! जिन्होंने शिवजीकी निन्दा स्वयं की है अथवा सुनी है; उन सबको उसका फल तुरन्त मिलेगा और पिता भी भलीभांति पछतायेंगे।

संत-संभु-श्रीपति अपबादा ❀ सुनिय जहां तहँ असि मरजादा ॥
काटिय तासु जीभ जो बसाई ❀ स्रवन मूँदि न त चलिय पराई ॥

संत, शिव और विष्णुकी निन्दा जहां सुननेमें आवे वहां यही मर्यादा है कि यदि वश चले तो उसकी जीभ काट ले नहीं तो कान बन्दकर वहांसे चला जावे।

जगदातमा महेस पुरारी ❀ जगतजनक सब के हितकारी ॥
पिता मन्दमति निंदत तेही ❀ दच्छ-सुक्र-संभव यह देही ॥

त्रिपुरके शत्रु महादेव संसारकी आत्मा, जगत्के पिता और सबका हित करनेवाले हैं। बुद्धिहीन पिता उन्हींकी निन्दा करते हैं। मेरी यह देह दक्षके वीर्यसे उत्पन्न हुई है।

तजिहउ तुरत देह तेहि हेतू ❀ उर धरि चंद्रमौलि वृषकेतू ॥
अस कहि जोग अगिनि तनु जारा ❀ भयउ सकल मख हाहाकारा ॥

इसी कारण चन्द्रमौलि और वृषकेतु शिवको हृदयमें धारण कर इस देहको तुरन्त ... सदा ... कहकर योगकी अग्निसे सतीने अपना शरीर जला डाला। इससे समस्त यज्ञमें ...

दो०—सतीमरन सुनि संभुगन ❀ लगे करन ... कछु दुर्लभ नाहीं ॥
जग्यबिधंस बिलोकि भृगु ❀ रच्छा ढ़हहिं पतिब्रत असिधारा ॥

यह...का मरना सुनकर शिवजीके गण यज्ञको बरबाद करने... दुर्लभ न होगा। इसका नाम स्मरण कर भृगुने...में स्त्रियाँ।

सैल ... ... सुता तुम्हारी ... सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी ॥
अगुन ... अमान मातुपितुहीना ❀ उदासीन सब संसयछीना ॥

... भगवान् ... तय, तुम्हारी पुत्रीके लक्षण अच्छे हैं। जो दो चार अवगुण हैं अब उन्हें सुनो। गुणहीन ... बड़ी कठिन है। ...पिताहीन, उदासीन, सब संदेहरहित,

... ०—जोगी जटिल अकाम मन ❀ नगन अमंगलबेख।
अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि ❀ परी हस्त असि रेख ॥ ६१ ॥

योगी, जटाधारी, कामरहित, नङ्गा और बुरे भेषवाला—ऐसा स्वामी इसे मिलेगा। हाथमें ऐसी ही रेखा पड़ी है।

सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी ❀ दुख दंपतिहिं उमा हरषानी ॥
नारदहू यह भेदु न जाना ❀ दसा एक समुझब बिलगाना ॥

मुनिकी वाणीको सुनकर और उसे हृदयमें सत्य जानकर पतिपत्नीको दुःख हुआ परन्तु उमा प्रसन्न हुईं। नारदने भी यह भेद नहीं जाना। दशा एक ही थी परन्तु समझनेमें अलग अलग हो गयी।

सकल सखी गिरिजा गिरि मैना ❀ पुलक सरीर भरे जल नैना ॥
होइ न मृषा देवरिषि भाखा ❀ उमा सो बचन हृदय धरि राखा ॥

जिस समयसे उमाने हिमालयके घरमें जन्म लिया, वहां समस्त सम्पत्ति और सिद्धि छा गयी। जहां तहं मुनियोंने सुन्दर आश्रम बनाये और हिमालयने उन्हें उचित स्थान दिये।

दो०—सदा सुमन फल सहित सब ❀ द्रुम नव नाना जाति।
प्रगटीं सुंदर सैल पर ❀ मनिआकर बहु भांति॥ ८६॥

पर्वतपर अनेक जातियोंके और नवीन, सब वृक्ष सदा फूल और फल सहित हुए तथा अनेक जाव प्रकार मणियोंकी सुन्दर खानें प्रकट हुईं।

(काम-दहन)

तब चित चढ़उ [illegible] ऊ॥
[illegible] नीत जल बहहीं ❀ खग मृग मधुर सुखी सब रापा॥
पाछिल दुख अस हृद [illegible] न त्यागा ❀ गिरि पर सकल करहिं अनु [illegible]

तब शिवजीने जो कुछ कहा था व [illegible] बड़ी पीड़ा हुई। हृदयमें वह दुःख जैसा भारी हुआ व [illegible] बहने लगीं; पक्षी, पशु और भौंरे, सब सुखी रहने लगे [illegible] य पर्वतसे प्रेम करने लगे।

जद्यपि जग दारुन दुख [illegible] ाना॥
समुझि सो सतिहि भयउ अतिक्रो [illegible] ये ❀ जिमि जन रामभगति के बोधा॥

यद्यपि संसारमें कठिन दुःख अनेक हैं तथापि जातिका अपमान सबसे कठिन है। जस [illegible] बहुत प्रकारसे समझाया, परन्तु वही जातिका अपमान समझकर सतीको अत्यन्त क्रोध हुआ।

दो०—सिव अपमान न जाइ सहि ❀ हृदय न होइ प्रबोध।
सकल सभहिं हठि हटकि तब ❀ बोली बचन सक्रोध॥ ८७॥

शिवजीका अपमान नहीं सहा जाता और हृदयको सन्तोष नहीं होता। तब सतीने समस्त सभाको झिड़ककर क्रोधसहित यह कहा—

सुनहु सभासद सकल मुनिंदा ❀ कही सुनी जिन्ह संकरनिंदा॥
सो फलु तुरत लहब सब काहू ❀ भली भांति पछिताब पिताहू॥

हे सभासदो और समस्त मुनिवरो, सुनो! जिन्होंने शिवजीकी निन्दा स्वयं की है अथवा सुनी है; उन सबको उसका फल तुरन्त मिलेगा और पिता भी भलीभांति पछतायेंगे।

संत-संभु-श्रीपति अपबादा ❀ सुनिय जहां तहँ असि मरजादा॥
काटिय तासु जीभ जो बसाई ❀ स्रवन मूँदि न त चलिय पराई॥

संत, शिव और विष्णुकी निन्दा जहां सुननेमें आवे वहां यही मर्यादा है कि यदि वश चले तो उसकी जीभ काट ले नहीं तो कान बन्दकर वहांसे चला जावे।

कह मुनि बिहँसि गूढ़ मृदु बानी ❀ सुता तुम्हारि सकल गुनखानी ॥
सुंदर सहज सुसील सयानी ❀ नाम उमा अंबिका भवानी ॥

मुनिने मुस्कुराकर गूढ़ मीठी वाणीसे कहा कि तुम्हारी पुत्री समस्त गुणोंकी खान है। यह सुन्दर और स्वभावसे ही सुशीला एवं चतुर है। इसका नाम उमा, अम्बिका और भवानी है।

सब लच्छनसंपन्न कुमारी ❀ होइहि संतत पियहि पियारी ॥
सदा अचल यहि कर अहिवाता ❀ एहि तें जसु पइहहिं पितु माता ॥

कन्या सब लक्षणोंसे युक्त है और अपने स्वामीकी यह सदैव प्यारी होगी। इसका सुहाग सदा अचल रहेगा और इससे मातापिताको यश मिलेगा।

होइहि पूज्य सकल जग माहीं ❀ एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं ॥
एहि कर नाम सुमिरि संसारा ❀ तिय चढ़िहहिं पतिब्रत असिधारा ॥

यह सारे संसारमें पूज्य होगी और इसकी सेवासे कुछ भी दुर्लभ न होगा। इसका नाम स्मरण कर संसारमें स्त्रियां पातिव्रत धर्मरूपी तलवारकी धारपर चढ़ेंगी।

सैल सुलच्छनि सुता तुम्हारी ❀ सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी ॥
अगुन अमान मातुपितुहीना ❀ उदासीन सब संसयछीना ॥

भगवान् जय, तुम्हारी पुत्रीके लक्षण अच्छे हैं। जो दो चार अवगुण हैं अब उन्हें सुनो। गुणहीन ड़ी कठिन है, मातापिताहीन, उदासीन, सब संदेहरहित,

दो०—जोगी जटिल अकाम मन ❀ नगन अमंगलबेख।
अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि ❀ परी हस्त असि रेख ॥ ६९ ॥

योगी, जटाधारी, कामरहित, नङ्गा और बुरे भेषवाला—ऐसा स्वामी इसे मिलेगा। हाथमें ऐसी ही रेखा पड़ी है।

सुनि मुनिगिरा सत्य जिय जानी ❀ दुख दंपतिहिं उमा हरषानी ॥
नारदहू यह भेदु न जाना ❀ दसा एक समुझब बिलगाना ॥

मुनिकी वाणीको सुनकर और उसे हृदयमें सत्य जानकर पतिपत्नीको दुःख हुआ परन्तु उमा प्रसन्न हुईं। नारदने भी यह भेद नहीं जाना। दशा एक ही थी परन्तु समझनेमें अलग अलग हो गयी।

सकल सखी गिरिजा गिरि मैना ❀ पुलक सरीर भरे जल नैना ॥
होइ न मृषा देवरिषि भाखा ❀ उमा सो बचन हृदय धरि राखा ॥

समस्त सखियां, पार्वती, हिमालय पर्वत और उनकी पत्नी मैना—सबका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल भर गया। देवर्षि नारदने जो कुछ कहा, वह असत्य नहीं हो सकता। उमाने नारदजीका वह वचन हृदयमें रख लिया।

उपजेउ सिवपदकमल सनेहू ❀ मिलन कठिन मन भा संदेहू ॥
जानि कुअवसरु प्रीति दुराई ❀ सखीउछंग बैठि पुनि जाई ॥

उनका शिवजीके चरणकमलोंमें स्नेह उत्पन्न हुआ किन्तु मिलना कठिन समझकर मनमें संदेह हुआ। कुसमय जानकर उन्होंने प्रेमको छिपा लिया और वे फिर जाकर सखीकी गोदमें बैठ गयीं।

झूठ न होइ देवरिषिबानी ❀ सोचहिं दंपति सखी सयानी ॥
उर धरि धीर कहइ गिरिराऊ ❀ कहहु नाथ का करिय उपाऊ ॥

देवर्षिका कथन झूठ नहीं हो सकता, इस बातको पतिपत्नी और चतुर सखियां सोचती थीं। हृदयमें धीरज रखकर पर्वतोंके राजा हिमालयने कहा—हे नाथ! कहिये, क्या उपाय किया जाय?

दो०—कह मुनीस हिमवंत सुनु ❀ जो विधि लिखा लिलार।
देव दनुज नर नाग मुनि ❀ कोउ न मेटनहार ॥ ६२ ॥

मुनीश्वरने कहा कि हे हिमवान्! सुनो, ब्रह्माने ललाटमें जो कुछ लिखा है उसे देवता, दैत्य, मनुष्य, नाग और मुनि—कोई मिटानेवाला नहीं है।

तदपि एक मैं कहउ उपाई ❀ होइ करइ जौं दैव सहाई ॥
जस बर मैं बरनेउँ तुम्ह पाहीं ❀ मिलिहि उमहिं तस संसय नाहीं ॥

तो भी मैं एक उपाय बतलाता हूं। यदि दैव सहायता करे तो वह हो सकता है। तुमसे मैंने जैसे वरका वर्णन किया है, वैसा ही उमाको मिलेगा, इसमें संदेह नहीं है।

जे जे बर के दोष बखाने ❀ ते सब सिव पहिं मैं अनुमाने ॥
जौं बिबाहु संकर सन होई ❀ दोषउ गुन सम कह सबु कोई ॥

वरके जिन जिन दोषोंको बतलाया है, मेरे अनुमानसे वे सब शिवमें हैं। यदि विवाह शिवजीके साथ हो तो सब लोग उन दोषोंको भी गुणोंके समान कहेंगे।

जौं अहिसेज सयन हरि करहीं ❀ बुध कछु तिन्हकर दोषु न धरहीं ॥
भानु कृसानु सर्ब रस खाहीं ❀ तिन्ह कहँ मंद कहत कोउ नाहीं ॥

भगवान् विष्णु यदि सर्प-शय्यापर सोते हैं तो पण्डितजन उनका कुछ दोष नहीं गिनते। सूर्य और अग्नि सभी रसोंको खाते हैं परन्तु उन्हें कोई बुरा नहीं कहता।

सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई ❀ सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ॥
समरथ कहुँ नहिं दोष गोसाईं ❀ रबि पावक सुरसरि की नाईं ॥

अच्छा और बुरा, सभी तरहका पानी बहता है परन्तु गङ्गाजीको कोई अपवित्र नहीं कहता। हे हिमवान्! सूर्य, अग्नि और गङ्गाजीकी भांति सामर्थ्यवान्को कुछ दोष नहीं होता।

दो०—जौं अस हिसिषा करहिं नर ❀ जड़ बिबेक अभिमान।
परहिं कलप भरि नरक महुँ ❀ जीव कि ईस समान ॥ ६३ ॥

ऐसा ही यदि बराबरी करनेके लिये अज्ञानी और अभिमानी मनुष्य करते हैं तो कल्पभर नरकमें पड़ते हैं। जीव क्या ईश्वरके समान हो सकता है ?

सुरसरिजलकृत बारुनि जाना ❀ कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना ॥
सुरसरि मिले सो पावन जैसे ❀ ईस अनीसहि अंतर तैसे ॥

मदिराको गङ्गाजलसे बना हुआ जानते हों फिर भी संतजन उसे कभी नहीं पीते। परन्तु गङ्गाजीमें मिल जानेपर वह जैसे पवित्र हो जाती है वैसा ही अन्तर ईश्वर और जीवमें है।

संभु सहज समरथ भगवाना ❀ एहि बिबाह सब बिधि कल्याना ॥
दुराराध्य पै अहहिं महेसू ❀ आसुतोष पुनि किये कलेसू ॥

भगवान् शिव स्वभावसे ही समर्थ हैं। इस विवाहमें सभी प्रकार कल्याण है। महादेवजीकी आराधना बड़ी कठिन है परन्तु तपसे वे जल्दी ही प्रसन्न भी हो जाते हैं।

जौं तपु करइ कुमारि तुम्हारी ❀ भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी ॥
जद्यपि बर अनेक जग माहीं ❀ एहि कहँ सिव तजि दूसर नाहीं ॥

यदि तुम्हारी कन्या तप करे तो महादेवजी होनहारको भी मिटा सकते हैं। यद्यपि संसारमें वर बहुत हैं तथापि इसके लिये शिवजीको छोड़कर दूसरा नहीं है।

बरदायक प्रनतारति भंजन ❀ कृपासिंधु सेवक - मन - रंजन ॥
इच्छित फल बिनु सिव अवराधे ❀ लहिय न कोटि जोग जप साधे ॥

वे वर देनेवाले, भक्तोंका दुःख दूर करनेवाले, कृपासागर और सेवकोंके मनको आनन्द देनेवाले हैं। शिवजीकी आराधना विना किये करोड़ योग, जप करनेपर भी इच्छित फल नहीं मिलता।

दो०—अस कहि नारद सुमिरि हरि ❀ गिरिजहि दीन्हि असीस।
होइहि यह कल्यान अब ❀ संसय तजहु गिरीस ॥ ६४ ॥

ऐसा कह भगवान्‌को स्मरण कर नारदने उमाको आशीर्वाद दिया कि इसका अब कल्याण होगा। हे गिरिराज, संदेह छोड़ दो।

कहि अस ब्रह्मभवन मुनि गयऊ ❀ आगिल चरित सुनहु जस भयऊ ॥
पतिहि एकांत पाइ कह मैना ❀ नाथ न मैं समुझे मुनिबैना ॥

ऐसा कहकर मुनि ब्रह्मलोकको चले गये। आगे जैसा हुआ, वह चरित सुनो। पतिको एकान्तमें पाकर मैनाने कहा कि हे नाथ मैंने मुनिका कहना नहीं समझा।

जौं घरु बर कुल होइ अनूपा ❀ करिय बिबाह सुता अनुरूपा ॥
नत कन्या बरु रहउ कुआंरी ❀ कंत उमा मम प्रानपियारी ॥

यदि घर, वर और कुल श्रेष्ठ हो तो पुत्रीके जैसा ही विवाह कर दीजिये, नहीं तो कन्या भले ही कुमारी बनी रहे। हे स्वामी, उमा मुझे प्राणोंसे भी प्यारी है।

जौं न मिलिहि बरु गिरिजहि जोगू ❀ गिरिजड़ सहज कहिहि सब लोगू ॥
सोइ बिचारि पति करेहु बिबाहू ❀ जेहिं न बहोरि होइ उर दाहू ॥

यदि गिरिजाको योग्य वर न मिलेगा तो सब लोग कहेंगे कि पर्वत स्वभावसे ही मूर्ख है। यही विचारकर हे स्वामी, विवाह करना जिससे पीछे हृदयमें पीड़ा न हो।

अस कहि परी चरन धरि सीसा ❀ बोले सहित सनेह गिरीसा ॥
बरु पावक प्रगटइ ससि माहीं ❀ नारदबचन अन्यथा नाहीं ॥

ऐसा कहकर उमाकी माता शिर रखकर चरणोंमें पड़ गयीं। फिर पर्वतोंके स्वामी हिमवान् प्रेमसे कहने लगे—चाहे चन्द्रमामें अग्नि प्रकट हो जाय परन्तु नारदका कथन मिथ्या नहीं हो सकता।

दो०—प्रिया सोचु परिहरहु सब ❀ सुमिरहु श्रीभगवान।
पारबतिहि निरमयउ जेहिं ❀ सोइ करिहि कल्यान ॥६५॥

हे प्रिये, सब सोच छोड़ दो और श्रीभगवान्‌का स्मरण करो। जिसने पार्वतीको रचा है वही कल्याण करेगा।

अब जौ तुम्हहि सुता पर नेहू ❀ तौ अस जाइ सिखावन देहू ॥
करइ सो तपु जेहिं मिलहिं महेसू ❀ आन उपाय न मिटिहि कलेसू ॥

अब यदि तुम्हें पुत्रीसे प्रेम हो तो जाकर यह सीख दो कि वह तप करे जिससे महादेवजी मिलें। अन्य उपायोंसे क्लेश नहीं मिटेगा।

नारदबचन सगर्भ सहेतू ❀ सुन्दर सब गुन - निधि बृषकेतू ॥
अस बिचारि तुम्ह तजहु असंका ❀ सबहि भांति संकर अकलंका ॥

नारदजीके वचन साररयुक्त और कारणसहित हैं। शिवजी समस्त गुणोंकी खान और सुन्दर हैं। यह विचारकर तुम आशंका छोड़ दो। शिवजी सब प्रकार निष्कलङ्क हैं।

सुनि पतिबचन हरषि मन माहीं ❀ गई तुरत उठि गिरिजा पाहीं ॥
उमहिं बिलोकि नयन भरि बारी ❀ सहित सनेह गोद बैठारी ॥

पतिका वचन सुनकर और मनमें प्रसन्न होकर मैना तुरन्त ही उठकर गिरिजाके पास गयीं। उन्होंने देखकर और नेत्रोंमें जल भरकर उमाको प्रेमपूर्वक गोदीमें बिठलाया।

बारहिं बार लेति उर लाई ❀ गदगद कंठ न कछु कहि जाई ॥
जगतमातु सरबग्य भवानी ❀ मातुसुखद बोलीं मृदुबानी ॥

वे उमाको बारंबार छातीसे लगाती थीं और गद्गद कण्ठसे कुछ कहा नहीं जाता था। सब जानने-वाली, जगतकी माता भवानी माताको सुख देनेके लिये कोमल वाणीसे बोलीं।

दो०—सुनहि मातु मैं दीख अस ❀ सपन सुनावउँ तोहिं।
सुंदर गौर सुबिप्रबर ❀ अस उपदेसेउ मोहिं ॥६६॥

हे मां, सुनो। मैं तुम्हें सुनाती हूं। मैंने ऐसा स्वप्न देखा है कि एक सुन्दर गौरवर्ण श्रेष्ठ ब्राह्मणने मुझे यह उपदेश दिया—

करहि जाइ तपु सैलकुमारी ❀ नारद कहा सो सत्य बिचारी ॥
मातुपितहि पुनि यह मत भावा ❀ तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा ॥

हे पार्वती, नारदने जो कुछ कहा है, उसे सत्य विचारकर जाकर तप करो। फिर यह मत तुम्हारे मातापिताको भी अच्छा लगा है। तप सुख देनेवाला है और दुःख एवं दोषोंको नष्ट कर देता है।

तपबल रचइ प्रपंच बिधाता ❀ तपबल बिष्णु सकल- जग - त्राता ॥
तपबल संभु करहिं संहारा ❀ तपबल सेष धरइ महिभारा ॥

तपके बलसे ब्रह्मा संसारको रचते हैं, तपके बलसे विष्णु समस्त संसारको पालते हैं, तपके बलसे शिव संहार करते हैं, तपके बलसे शेष पृथिवीका भार धारण करते हैं।

तपअधार सब सृष्टि भवानी ❀ करहि जाइ तपु अस जिय जानी ॥
सुनत बचन बिसमित महतारी ❀ सपन सुनायउ गिरिहि हँकारी ॥

हे भवानी, सारी सृष्टिका आधार तप ही है। ऐसा हृदयमें जानकर जाकर तप करो। उमाका यह कथन सुनकर माताको बड़ा आश्चर्य्य हुआ और उन्होंने हिमवानको बुलवाकर स्वप्न सुनाया।

मातुपितहि बहु बिधि समुझाई ❀ चली उमा तप हित हरषाई ॥
प्रिय परिवार पिता अरु माता ❀ भये बिकल मुख आव न बाता ॥

मातापिताको अनेक प्रकारसे समझाकर उमा प्रसन्न होकर तप करनेके लिये चलीं। प्यारा परिवार, पिता और माता, सब व्याकुल हो गये। उनके मुँहसे बात न निकली।

दो०—बेदसिरा मुनि आइ तब ❀ सबहिं कहा समुझाइ।
पारबतीमहिमा सुनत ❀ रहे प्रबोधहि पाइ ॥६७॥

तब वेदशिरा मुनिने आकर सबको समझाया। पार्वतीकी महिमा सुनकर सबको धैर्य हुआ।

उर धरि उमा प्रान-पति-चरना ❀ जाइ बिपिन लागी तप करना ॥
अतिसुकुमार न तनु तपजोगू ❀ पतिपद सुमिरि तजेउ सब भोगू ॥

उमा अपने प्राणनाथके चरणोंको हृदयमें रखकर वनमें जाकर तप करने लगीं। उनका अत्यंत सुकुमार शरीर तप करनेयोग्य न था। उन्होंने अपने पतिके चरणोंको स्मरण कर सब प्रकारके भोग छोड़ दिये।

नित नव चरन उपज अनुरागा ❀ बिसरी देह तपहि मन लागा ॥
संबत सहस मूल फल खाये ❀ सागु खाइ सत बरष गँवाये ॥

चरणोंमें नित्य नया प्रेम उत्पन्न होने लगा और तपमें ऐसा मन लगा कि देहकी सुध भूल गयी। उन्होंने एक हजार वर्ष फल-मूल खाकर और सौ वर्ष साग खाकर बिता दिये।

कछु दिन भोजन बारि बतासा ❀ किये कठिन कछु दिन उपबासा ॥
बेलपाति महि परइ सुखाई ❀ तीनि सहस संबत सोइ खाई ॥

कुछ दिन जल और वायु भोजन रहा और कुछ दिनोंतक कठिन उपवास किया। जो बेलपत्री सूखकर पृथ्वीपर गिर पड़ती थी उसे उमाने तीन हजार वर्षतक खाया।

पुनि परिहरे सुखानेउ परना ❀ उमहि नाम तब भयउ अपरना ॥
देखि उमहिं तप खीनसरीरा ❀ ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥

फिर सूखे पत्ते भी छोड़ दिये, तब उमाका नाम 'अपर्णा' हुआ। तपस्यासे उमाका शरीर क्षीण देखकर आकाशमें गम्भीर ब्रह्मवाणी हुई।

दो०—भयउ मनोरथ सुफल तव ⊛ सुनु गिरिजाकुमारि।
परिहरु दुसह कलेस सब ⊛ अब मिलिहहिं त्रिपुरारि ॥६८॥

हे पार्वती, सुनो। तुम्हारा मनोरथ सफल हुआ। तुम सब कठोर क्लेशोंको छोड़ दो। अब तुम्हें शिव मिलेंगे।

अस तपु काहु न कीन्ह भवानी ⊛ भये अनेक धीर मुनि ग्यानी ॥
अब उर धरहु ब्रह्म बर बानी ⊛ सत्य सदा संतत सुचि जानी ॥

हे भवानी, अनेक धीर मुनि और ज्ञानी हुए हैं परन्तु ऐसी तपस्या किसीने भी नहीं की। श्रेष्ठ ब्रह्मवाणीको सदा सत्य और निरन्तर पवित्र जानकर अब अपने हृदयमें धारण करो।

आवहिं पिता बुलावन जबही ⊛ हठ परिहरि घर जायहु तबही ॥
मिलहिं तुम्हहिं जब सप्तरिषीसा ⊛ जानेहु तब प्रमान बागीसा ॥

जब पिता बुलाने आवें तब हठ छोड़कर घर चली जाना। जब तुम्हें सप्तर्षि मिलें, तब आकाशवाणीका प्रमाण जान लेना।

सुनत गिरा विधि गगन बखानी ⊛ पुलकगात गिरिजा हरषानी ॥
उमाचरित सुंदर मैं गावा ⊛ सुनहु संभु कर चरित सुहावा ॥

आकाशसे ब्रह्माकी वाणी होते सुनकर उमाका शरीर पुलकायमान हो गया और उन्हें प्रसन्नता हुई। मैंने उमाका सुंदर चरित गा सुनाया। शिवजीका सुंदर चरित सुनो।

जब तें सती जाइ तनु त्यागा ⊛ तब तें सिवमन भयउ बिरागा ॥
जपहिं सदा रघुनायकनामा ⊛ जहँ तहँ सुनहिं राम-गुन-ग्रामा ॥

जाकर सतीने जिस समयसे शरीर छोड़ दिया, उस समयसे शिवजीके मनमें वैराग्य हो गया। वे सदैव श्रीरामचन्द्रजीका नाम जपते और जहां तहां श्रीरामके गुणोंका वर्णन सुना करते थे।

दो०—चिदानंद सुखधाम सिव ⊛ बिगत-मोह-मद-काम।
बिचरहिं महि धरि हृदय हरि ⊛ सकल-लोक-अभिराम ॥६९॥

चिदानन्द, सुखके धाम, मोह मद और कामदेवरहित, सब संसारको आनन्द देनेवाले शिव हृदयमें भगवान्‌को धारण कर पृथिवीपर विचरण करने लगे।

कतहुँ मुनिन्ह उपदेसहिं ग्याना ⊛ कतहुँ रामगुन करहिं बखाना ॥
जदपि अकाम तदपि भगवाना ⊛ भगत बिरह दुख दुखित सुजाना ॥

कहीं मुनियोंको ज्ञानका उपदेश करते थे और कहीं श्रीरामके गुणोंका वर्णन; यद्यपि सुजान शिव कामना रहित हैं तथापि वे भक्तके वियोगके दुःखसे दुःखी हुए।

एहि बिधि गयउ काल बहु बीती ❁ नित नइ होइ रामपद प्रीती ॥
नेमु पेमु संकर कर देखा ❁ अबिचल हृदय भगति कै रेखा ॥
प्रगटे राम कृतग्य कृपाला ❁ रूप-सील-निधि तेज बिसाला ॥

इस प्रकार बहुतसा समय बीत गया और श्रीरामके चरणोंमें नित्य नया प्रेम होने लगा। शिवजीका नेम, प्रेम और हृदयमें भक्तिकी अटल रेखा देखकर और कृतज्ञ होकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी प्रकट हुए जो रूप और शीलका भण्डार और महा तेजस्वी हैं।

बहु प्रकार संकरहिं सराहा ❁ तुम्ह बिनु अस ब्रतु को निरबाहा ॥
बहु बिधि राम सिवहिं समुझावा ❁ पारबती कर जनम सुनावा ॥
अतिपुनीत गिरिजा कै करनी ❁ बिस्तर सहित कृपानिधि बरनी ॥

उन्होंने अनेक प्रकारसे शंकरजीकी प्रशंसा की और कहा कि तुम्हारे बिना ऐसे व्रतका निर्वाह कौन कर सकता है? श्रीरामने शिवको बहुत प्रकारसे समझाया और पार्वतीके जन्मकी बात सुनायी। कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने उमाकी अत्यन्त पवित्र करनीको विस्तारपूर्वक वर्णन किया।

दो०—अब बिनती मम सुनहु सिव ❁ जौ मो पर निज नेहु।
जाइ बिबाहहु सैलजहि ❁ यह मोहि मांगे देहु ॥१००॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे शिव, यदि मुझपर तुम्हें प्रेम है तो अब मेरी विनती सुनो। जाकर गिरिजासे विवाह करो—यह मुझे माँगे दो।

कह सिव जदपि उचित अस नाहीं ❁ नाथबचन पुनि मेटि न जाहीं ॥
सिर धरि आयसु करिय तुम्हारा ❁ परम धरम यह नाथ हमारा ॥

शिवजीने कहा कि यद्यपि ऐसा उचित नहीं है तथापि हे स्वामी, आपकी बात टाली नहीं जा सकती। आपकी आज्ञा शिरपर रखकर करूंगा। हे स्वामी, यह मेरा परमधर्म है।

मातु पिता गुरु प्रभु कै बानी ❁ बिनहिं बिचार करिय सुभ जानी ॥
तुम्ह सब भाँति परम-हित-कारी ❁ अग्या सिर पर नाथ तुम्हारी ॥

माता, पिता, गुरु और स्वामीके वचनोंको कल्याण करनेवाला जानकर विचार किये बिना ही करना चाहिये। आप सब प्रकार अत्यन्त हितकारी हैं। हे नाथ, आपकी आज्ञा शिरपर है

प्रभु तोषेउ सुनि संकरबचना ❀ भगति बिबेक धरमजुत रचना ॥
कह प्रभु हर तुम्हार पन रहेऊ ❀ अब उर राखेहु जो हम कहेऊ ॥

शिवजीके भक्ति, ज्ञान और धर्मयुक्त वचन सुनकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी संतुष्ट हो गये। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे शिव, तुम्हारा प्रण पूरा हो गया। अब जो कुछ मैंने कहा है, उसे ध्यानमें रखो।

अंतरधान भये अस भाखी ❀ संकर सोइ मूरति उर राखी ॥
तबहिं सप्तरिषि सिव पहिं आये ❀ बोले प्रभु अति बचन सुहाये ॥

ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजी अन्तर्द्धान हो गये और शिवजीने उनकी उसी मूर्त्तिको हृदयमें रख लिया। उसी समय सप्तर्षि शिवके पास आये और प्रभु शिव उनसे अत्यन्त सुन्दर वचन बोले।

दो०—पारबती पहिं जाइ तुम्ह ❀ प्रेम परिच्छा लेहु।
गिरिहि प्रेरि पठयेहु भवन ❀ दूरि करेहु संदेहु ॥१०१॥

पार्वतीके पास जाकर तुम प्रेमकी परीक्षा लो और हिमालय पर्वतके पास जाकर उमाको घर पठवाओ और संदेह दूर करो।

तब रिषि तुरत गौरि पहँ गयऊ ❀ देखि दसा मुनि बिसमय भयऊ ॥
रिषिन गौरि देखी तहँ कैसी ❀ मूरतिवंत तपस्या जैसी ॥

तब ऋषि तुरन्त उमाके पास गये। उमाकी दशा देखकर मुनियोंको अत्यंत विस्मय हुआ। ऋषियोंने वहां उमाको वैसा ही देखा जैसी मूर्तिमान तपस्या हो।

बोले मुनि सुनु सैलकुमारी ❀ करहु कवन कारन तप भारी ॥
केहि अवराधहु का तुम्ह चहहू ❀ हम सन सत्य मरमु किन कहहू ॥

मुनि बोले, हे पार्वती, सुनो। यह भारी तपस्या किस कारण कर रही हो? तुम किसकी आराधना करती हो और क्या चाहती हो? हमसे सच्चा मर्म क्यों नहीं कहती?

सुनत रिखिन्हके बचन भवानी ❀ बोली गूढ़ मनोहर बानी ॥
कहत परमु मनु अति सकुचाई ❀ हँसिहहु सुनि हमारि जड़ताई ॥

ऋषियोंके वचन सुनकर भवानीने मनोहर गूढ़ वाणीसे कहा—मर्म कहते मनमें अत्यंत संकोच होता है। आप मेरी मूर्खता सुनकर हँसेंगे।

मनु हठ परा न सुनइ सिखावा ❀ चहत बारि पर भीति उठावा ॥
नारद कहा सत्य सोइ जाना ❀ बिनु पंखन हम चहहिं उड़ाना ॥
देखहु मुनि अबिबेक हमारा ❀ चाहिअ सदा सिवहि भरतारा ॥

मनको हठ हो गया है, वह सीख नहीं सुनता और जलपर दीवार उठाना चाहता है। नारदने जो कुछ कहा, उसीको सत्य जान लिया है और मैं पंखोंके बिना उड़ना चाहती हूं। हे मुनि, मेरा अज्ञान तो देखो कि सदैव शिवको पतिरूपमें चाहती हूं।

दो०—सुनत बचन बिहँसे रिषय ❀ गिरिसंभव तव देह।
नारद कर उपदेस सुनि ❀ कहहु बसेउ को गेह॥ १०२॥

उमाके वचन सुनकर ऋषि लोग मुस्कुराये और कहा कि तुम हिमाचलकी पुत्री हो। नारदका उपदेश सुनकर यह कहो, कौनसा घर बसा है?

दच्छसुतन्ह उपदेसिन्हि जाई ❀ तिन फिरि भवन न देखा आई॥
चित्रकेतु कर घर उन घाला ❀ कनककसिपु कर पुनि अस हाला॥

नारदने दक्षके पुत्रोंको जाकर उपदेश दिया। उन्होंने फिर लौटकर घर नहीं देखा। चित्रकेतुके घरको उन्होंने बिगाड़ा। फिर हिरण्यकश्यपका ऐसा हाल किया।

नारदसिष जे सुनहिं नर नारी ❀ अवसि होहिं तजि भवन भिखारी॥
मन कपटी तन सज्जन चीन्हा ❀ आपु सरिस सबही चह कीन्हा॥

नारदजीकी सीखको जो स्त्री और पुरुष सुनते हैं वे घर छोड़कर अवश्य ही भिखारी हो जाते हैं। उनका मन कपटी है, परन्तु शरीर सज्जन जैसा दीख पड़ता है और वे अपने ही जैसा सबको करना चाहते हैं।

तेहिके बचन मानि बिस्वासा ❀ तुम्ह चाहहु पति सहज उदासा॥
निर्गुन निलज कुबेष कपाली ❀ अकुल अगेह दिगंबर ब्याली॥

उनके वचनोंपर विश्वास कर तुम स्वभावसे ही उदास, गुणरहित, निर्लज्ज, बुरे भेषवाले, कपाली, कुलहीन, गृहशून्य, नंगे और सर्प धारण करनेवाले पतिको चाहती हो।

कहहु कवन सुख अस बर पाये ❀ भल भूलिहु ठगके बौराये॥
पंच कहे सिव सती बिबाही ❀ पुनि अवडेरि मरायेन्हि ताही॥

यह कहो कि ऐसा वर पानेसे क्या सुख होगा? ठगके बहकानेसे खूब भूल रही हो। पंचोंके कहनेसे शिवने सतीसे विवाह किया था फिर त्यागकर उन्हें मरवा डाला।

दो०—अब सुख सोवत सोचु नहिँ ❀ भीख मांगि भव खाहिं।
सहज एकाकिन्ह के भवन ❀ कबहुँ कि नारि खटाहिं॥१०३॥

शिवजी अब सुखसे सोते हैं और भीख मांगकर खाते हैं। उन्हें कुछ भी सोच नहीं है। सदासे ही अकेलेके घरमें क्या कभी स्त्रियां बस सकती हैं?

अजहूँ मानहु कहा हमारा ⊛ हम तुम्ह कहँ बर नीक बिचारा॥
अति सुंदर सुचि सुखद सुसीला ⊛ गावहिं बेद जासु जसलीला॥

अब भी हमारा कहना मानो। हमने तुम्हारे लिये एक अच्छे वरका विचार किया है। वह अत्यंत सुन्दर, पवित्र, सुख देनेवाला और सुशील है, और उसके यशकी लीलाको वेद गाते हैं।

दूषनरहित सकल-गुन-रासी ⊛ श्रीपति पुर बैकुंठ-निवासी॥
अस बर तुम्हहि मिलाउब आनी ⊛ सुनत बचन कह बिहँसि भवानी॥

वह दोषोंसे रहित, सब गुणोंकी खान, लक्ष्मीका पति और वैकुण्ठपुरीका निवासी है। ऐसे वरको लाकर तुमसे मिला दूंगा। यह वचन सुन हँसकर भवानीने कहा—

सत्य कहेहु गिरिभव तनु एहा ⊛ हठ न छूट छूटइ बरु देहा॥
कनकउ पुनि पषान तें होई ⊛ जारेहु सहजु न परिहर सोई॥

आपने यह सत्य कहा कि यह शरीर हिमाचलसे उत्पन्न हुआ है। हठ नहीं छूटेगा चाहे देह छूट जाय। फिर पत्थरसे सोना भी तो होता है, पर वह जलानेपर भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ता।

नारदबचन न मैं परिहरऊँ ⊛ बसउ भवन उजरउ नहिं डरऊँ॥
गुरु के बचन प्रतीति न जेही ⊛ सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही॥

मैं नारदजीके वचन नहीं छोड़ूंगी। घर बसे या उजड़े, मैं नहीं डरती हूं। जिसे गुरुके वचनोंमें विश्वास नहीं, उसे स्वप्नमें भी सुख और सिद्धि नहीं मिलती।

दो०—महादेव अवगुन भवन ⊛ बिस्नु सकलगुनधाम।
जेहि कर मनु रम जाहि सन ⊛ तेहि तेही सन काम॥ १०४॥

महादेवजीमें सब अवगुण और विष्णुमें सब गुण हैं। पर, जिससे जिसका मन मिलता है उसे उसीसे काम है।

जौं तुम्ह मिलतेहु प्रथम मुनीसा ⊛ सुनतिउँ सिख तुम्हारि धरि सीसा॥
अब मैं जनम संभु हित हारा ⊛ को गुन दूषन करइ बिचारा॥

हे मुनीश्वर, यदि आप पहिले मिलते तो आपकी सीख शिरोधार्य कर सुनती। अब मैंने अपना जीवन शिवजीके लिये हार दिया है। गुण और दोषोंका विचार कौन करे?

जौ तुम्हरे हठ हृदय बिसेषी ❀ रहि न जाइ बिनु किए बरेषी ॥
तौ कौतुकिअन्ह आलस नाहीं ❀ बर कन्या अनेक जग माहीं ॥

यदि आपके हृदयमें विशेष हठ हो और वरकी बातचीत किये विना नहीं रहा जाता तो ऐसे तमाशा देखनेवालोंके लिये आलस्यका काम नहीं। संसारमें अनेक वर और कन्याएँ हैं।

जनम कोटि लगि रगरि हमारी ❀ बरउँ संभु नतु रहउँ कुआँरी ॥
तजउँ न नारद कर उपदेसू ❀ आपु कहहिं सतबार महेसू ॥

करोड़ जन्मोंतक मेरा हठ है कि शिवजीसे विवाह करूंगी, नहीं तो कुमारी रहूंगी। महादेवजी स्वयं सौ वार कहें तोभी मैं नारदजीकी सीख न छोड़ूंगी।

मैं पा परउँ कहइ जगदंबा ❀ तुम्ह गृह गवनहु भयउ बिलंबा ॥
देखि प्रेम बोले मुनि ग्यानी ❀ जय जय जगदम्बिके भवानी ॥

संसारकी माता पार्वतीने कहा कि मैं पैरों पड़ती हूं। देर हुई। आप घर जाइये। प्रेम देखकर ज्ञानी मुनियोंने कहा कि हे संसारकी माता भवानी, तुम्हारी जय हो, तुम्हारी जय हो!

दो०—तुम्ह माया भगवान सिव ❀ सकल जगतपितु मातु ।
नाइ चरन सिर मुनि चले ❀ पुनि पुनि हरषत गातु ॥ १०५ ॥

भगवान् शिव और उनकी माया तुम सारे संसारके पिता और माता हो। चरणोंमें शिर नवाकर मुनि चल दिये। शरीर बारंबार प्रसन्न होता जाता था।

जाइ मुनिन्ह हिमवंत पठाये ❀ करि बिनती गिरिजहिं गृह लाये ॥
बहुरि सप्तरिषि सिव पहिं जाई ❀ कथा उमा कै सकल सुनाई ॥

मुनियोंने जाकर हिमाचलको भेजा जो विनती करके गिरिजाको घरमें ले आये। फिर सप्तर्षियोंने शिवजीके पास जाकर उमाकी समस्त कथा कह सुनायी।

भये मगन सिव सुनत सनेहा ❀ हरषि सप्तरिषि गवने गेहा ॥
मनु करि थिरु तब संभु सुजाना ❀ लगे करन रघुनायकध्याना ॥

पार्वतीके प्रेमकी कथा सुनकर शिवजी मग्न हो गये और प्रसन्न होकर सप्तर्षि अपने घर गये। तब मन स्थिर कर सुजान शिव श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान करने लगे।

तारकु असुर भयउ तेहि काला ❀ भुजप्रताप बल तेज बिसाला ॥
तेइ सब लोक लोकपति जीते ❀ भये देव सुख संपति रीते ॥

उसी समय तारक नामक दैत्य हुआ, जिसकी भुजाओंका प्रताप, बल और तेज—सब बहुत अधिक था। उसने सब लोकों और उनके स्वामियोंको जीत लिया जिससे सब देवता सुख—सम्पत्तिशून्य हो गये।

अजर अमर सो जीति न जाई ❀ हारे सुर करि बिबिध लराई ॥
तब बिरंचि सन जाइ पुकारे ❀ देखे बिधि सब देव दुखारे ॥

वह अजर और अमर था और जीता न जाता था। अनेक प्रकारकी लड़ाइयां लड़कर जब देवता हार गये तब जाकर ब्रह्मासे पुकार की। ब्रह्माने सब देवताओंको दुःखी देखा।

दो०—सब सन कहा बुझाइ बिधि ❀ दनुजनिधन तब होइ।
संभु - सुक्र - संभूत सुत ❀ एहि जीतइ रन सोइ ॥१०६॥

ब्रह्माने सबको समझाकर कहा कि शिवजीके वीर्यसे उत्पन्न जो पुत्र हो वही इससे लड़ाईमें जीतेगा और तब दैत्यकी मृत्यु होगी।

मोर कहा सुनि करहु उपाई ❀ होइहि ईस्वर करिहि सहाई ॥
सती जो तजी दच्छमख देहा ❀ जनमी जाइ हिमाचलगेहा ॥

मेरा कहना सुनकर उपाय करो। ईश्वर सहायता करेगा तो वह सफल होगा। सतीने दक्षके यज्ञमें जो देह छोड़ दी थी उसने हिमाचलके घरमें जाकर जन्म लिया है।

तेइ तपु कीन्ह संभु पति लागी ❀ सिव समाधि बैठे सब त्यागी ॥
जदपि अहइ असमंजस भारी ❀ तदपि बात एक सुनहु हमारी ॥

उसने शिवजीके पति होनेके लिये तप किया है और शिवजी सब छोड़कर समाधि लगा बैठे हैं। यद्यपि भारी दुविधा है तथापि हमारी एक बात सुनो।

पठवहु काम जाइ सिव पाहीं ❀ करइ छोभ संकर मन माहीं ॥
तब हम जाइ सिवहि सिर नाई ❀ करवाउब बिबाहु बरिआई ॥

कामदेवको शिवके पास भेजो जो जाकर शिवजीके मनमें क्षोभ उत्पन्न करे। तब हम जाकर शिवजीको मस्तक नवायेंगे और जबर्दस्ती विवाह करा देंगे।

एहि बिधि भलेहि देवहित होई ❀ मत अतिनीक कहइ सब कोई ॥
अस्तुति सुरन कीन्हि अतिहेतू ❀ प्रगटेउ बिषमबान झखकेतू ॥

इस प्रकारसे भले ही देवताओंका कल्याण हो जाय। यह मत अत्यंत अच्छा है, ऐसा सब कोई कहने लगे। इसी महाकारणके लिये देवताओंने स्तुति की और पांच बाण धारण करनेवाला मीनकेतु कामदेव उत्पन्न हुआ।

दो०—सुरन्ह कही निज बिपति सब ❁ सुनि मन कीन्ह बिचार।
संभु बिरोध न कुसल मोहिं ❁ बिहँसि कहेउ अस मार ॥१०७॥

देवताओंने अपना सब सङ्कट कह सुनाया। उसे सुनकर कामदेवने मनमें विचार किया और हँसकर यह कहा—शिवजीका विरोध करनेमें यद्यपि मेरा कुशल नहीं है—

तदपि करब मैं काजु तुम्हारा ❁ स्रुति कह परम धरम उपकारा॥
परहित लागि तजइ जो देही ❁ संतत संत प्रसंसहिं तेही॥

तथापि मैं तुम्हारा काम करूँगा। वेद कहते हैं कि उपकार परमधर्म है। दूसरेके हितके लिये यदि कोई शरीरत्याग करे तो संतजन सदैव उसकी प्रशंसा करते हैं।

अस कहि चलेउ सबहि सिर नाई ❁ सुमनधनुष कर सहित सहाई॥
चलत मार अस हृदय बिचारा ❁ सिवबिरोध ध्रुव मरन हमारा॥

ऐसा कह सबको सिर नवाकर और पुष्पोंका धनुष हाथमें लेकर साथियोंसहित कामदेव चला। चलते हुए कामदेवने हृदयमें ऐसा विचार किया कि शिवके विरोधसे मेरा मरना निश्चित है।

तब आपन प्रभाउ बिस्तारा ❁ निजबस कीन्ह सकल संसारा॥
कोपेउ जबहिं बारि-चर-केतू ❁ छन महुँ मिटे सकल स्रुतिसेतू॥

तब कामदेवने अपना प्रभाव फैलाया और सारे संसारको अपने वशमें कर लिया। जब कामदेवने कोप किया तब क्षणभरमें वेदकी सारी मर्यादा मिट गयी।

ब्रह्मचर्ज ब्रत संजम नाना ❁ धीरज धरम ग्यान बिग्याना॥
सदाचार जप जोग बिरागा ❁ सभय बिबेक कटकु सब भागा॥

ब्रह्मचर्य, व्रत, अनेक प्रकारके संयम, धीरज, धर्म, ज्ञान, विज्ञान, सदाचार, जप, योग और वैराग्य—ज्ञानकी सारी सेना डरकर भाग गयी।

छंद—भागेउ बिबेक सहाइ सहित सो सुभट संजुग महि मुरे।
सदग्रंथ पर्बत कंदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे॥
होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा।
दुइ माथ केहि रतिनाथ जेहि कहुँ कोपि कर धनु सरु धरा॥

कामदेवकी सेनाके उत्तम योद्धा जब संग्राम-भूमिकी ओर मुड़े तब अपने सहायकोंसहित ज्ञान भाग गया। उस समय उत्तमोत्तम ग्रंथ पर्वतोंकी गुफाओंमें जाकर छिप गये। सारे संसारमें खलबली मच गयी और सब

कहने लगे कि हे भगवन्, क्या होनेवाला है? हमारी रक्षा कौन करेगा? किसके दो शिर हैं जिसके लिये क्रोधित होकर कामदेवने हाथमें धनुषबाण लिया है।

दो०—जे सजीव जग अचर चर ❀ नारि पुरुष अस नाम।
ते निज निज मरजाद तजि ❀ भये सकल बस काम ॥१०८॥

संसारमें चर और अचर जितने प्राणी थे और जिनकी 'स्त्री और पुरुष' ऐसी संज्ञा थी, वे सब अपनी अपनी मर्यादा छोड़कर कामदेवके वशमें हो गये।

सबके हृदय मदन अभिलाखा ❀ लता निहारि नवहिं तरुसाखा ॥
नदी उमगि अंबुधि कहुँ धाई ❀ संगम करहिं तलाव तलाई ॥

सबके हृदयमें कामकी इच्छा हुई। लताओंको देखकर वृक्ष अपनी शाखाओंको झुकाने लगे। नदियां उमँगकर समुद्रकी ओर दौड़ीं और ताल-तलैयां भी परस्पर संगम करने लगे।

जहँ असि दसा जड़न की बरनी ❀ को कहि सकइ सचेतन्ह करनी ॥
पसु पच्छी नभजलथलचारी ❀ भये कामबस समय बिसारी ॥

जड़ पदार्थोंकी दशाका जब यह वर्णन किया गया है तब चेतन प्राणियोंकी करतूत कौन कह सकता है? आकाश, जल और पृथ्वी, प्रत्येक जगहमें रहनेवाले पशु और पक्षी ऋतुको भुलाकर कामके वशमें हो गये।

मदनअंध ब्याकुल सब लोका ❀ निसिदिन नहिं अवलोकहिं कोका ॥
देव दनुज नर किन्नर ब्याला ❀ प्रेत पिसाच भूत बेताला ॥
इन्हकी दसा न कहेउँ बखानी ❀ सदा काम के चेरे जानी ॥
सिद्ध बिरक्त महा मुनि जोगी ❀ तेपि कामबस भये बियोगी ॥

समस्त लोक कामसे अंधे होकर व्याकुल हो गये। चकवा और चकई रात और दिनका विचार न करते थे। देवता, दैत्य, मनुष्य, किन्नर, सर्प, प्रेत, पिशाच, भूत और वैताल—इन सबको कामका सदैव सेवक जानकर मैं इनकी दशाका वखान कर नहीं सकता। सिद्ध, विरक्त, महामुनि और योगी—ये सब भी कामके वशमें हो गये और योग टूट गया।

छंद—भये कामबस जोगीस तापस पावँरन्हकी को कहै।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे ॥
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जग पुरुष सब अबलामयम्।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृत कौतुक अयम् ॥

योगीश्वर और तपस्वी भी कामके वशमें हो गये तब नीच मनुष्योंकी बात कौन कहे ? जो चर और अचर—सबको ब्रह्ममय देखा करते थे वे स्त्रीमय देखने लगे। समस्त जगतको स्त्रियाँ पुरुषमय और पुरुष स्त्रीमय देखते थे। समस्त ब्रह्माण्डमें दो घड़ीके लिये कामदेवने यह कौतुक किया।

सो०—धरा न काहू धीर ❀ सब के मन मनसिज हरे।
जे राखे रघुबीर ❀ ते उबरे तेहि काल महँ ॥१०६॥

कामदेवने सबके मन हरण कर लिये और किसीने भी धैर्य नहीं रखा। उस समय वही बच सके जिन्हें श्रीरामचंद्रजीने रखा।

उभय घरी अस कौतुक भयऊ ❀ जब लगि काम संभु पहँ गयऊ ॥
सिवहिं बिलोकि ससंकेउ मारू ❀ भयउ जथाथिति सब संसारू ॥

जबतक कामदेव शिवजीके पास गया तबतक दो घड़ी यही कौतुक हुआ। शिवजीको देखकर कामदेव भयभीत हो गया इससे समस्त संसार फिर जैसेका तैसा हो गया।

भये तुरत जग जीव सुखारे ❀ जिमि मद उतरि गए मतवारे ॥
रुद्रहिं देखि मदन भय माना ❀ दुराधर्ष दुर्गम भगवाना ॥

संसारके प्राणी उसी भांति तुरंत सुखी हो गये जैसे मद उतर जानेपर मतवाले हो जाते हैं। शिवजीको देखकर कामदेव डर गया; क्योंकि भगवान् शिव अत्यन्त निडर और दुर्गम हैं।

फिरत लाज कछु कहि नहिं जाई ❀ मरन ठानि मन रचेसि उपाई ॥
प्रगटेसि तुरत रुचिर रितुराजा ❀ कुसुमित नव तरु राज बिराजा ॥

लौटनेमें ऐसी लज्जा लगती थी कि कुछ कहा नहीं जाता। अन्ततः मनमें मरनेका निश्चय कर उपाय सोचा। उसने तुरंत सुंदर वसंत ऋतुको प्रकट किया, जिससे नये वृक्षोंकी पंक्तियां फूलोंसे शोभायमान हो गयीं।

बन उपबन बापिका तडागा ❀ परम सुभग सब दिसाबिभागा ॥
जहँ तहँ जनु उमगत अनुरागा ❀ देखि मुएहु मन मनसिज जागा ॥

वन, उपवन, बावड़ी, तालाब और दिशाएं, सब अत्यंत सुंदर हो गये। जहां तहां मानों प्रेम उमंगने लगा, जिसे देखकर मरे हुए प्राणियोंके मनमें भी कामदेव जगने लगा।

छंद—जागइ मनोभव मुएहु मन बन सुभगता न परइ कही।
सीतल सुगंध सुमंद मारुत मदन अनल सखा सही ॥

बिकसे सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा।
कलहंस पिक सुक सरस रव करि गान नाचहिं अपछरा॥

मरे हुए प्राणियोंके मनमें भी कामदेव जगने लगा। वनकी सुंदरता कहनेमें नहीं आती। कामाग्निका मित्ररूपी शीतल, सुगंधित और मंद वायु चलने लगा। तालाबोंमें बहुतसे कमल खिल गये, जिनपर सुंदर भौरोंके समूह गूंजने लगे। सुंदर हंस, कोयल और तोता, सब रसीली बोली बोलने लगे और अप्सराएं गानपूर्वक नाचने लगीं।

दो०—सकल कला करि कोटि बिधि हारेउ सेन समेत।
चली न अचल समाधि सिव कोपेउ हृदय निकेत॥११०॥

समस्त विद्याओंसे करोड़ उपाय करके कामदेव अपनी सेनासहित हार गया, परंतु जब शिवजीकी अचल समाधि नहीं डिगी, तब उसने क्रोध किया।

देखि रसाल बिटपबरसाखा। तेहि पर चढेउ मदन मन माखा॥
सुमनचाप निज सर संधाने। अतिरिसि ताकि स्रवन लगि ताने॥

आमके पेड़की एक सुंदर शाखाको देखकर कामदेव मनमें खिसियाकर उसपर जा चढ़ा। फूलोंके धनुषपर अपने बाण लगाये और अत्यंत क्रोधसे लक्ष्य देखकर उन्हें कानोंतक ताना।

छांड़ेउ बिषम बान उर लागे। छूटि समाधि संभु तब जागे॥
भयउ ईस मन छोभ बिसेखी। नयन उघारि सकल दिसि देखी॥

पांच बाणोंको छोड़ा जो जाकर हृदयमें लग गये। तब समाधि टूट गयी और शिवजी जाग गये। ईश्वर महादेवके मनमें बड़ा क्षोभ हुआ और उन्होंने नेत्र खोलकर सब दिशाओंमें देखा।

सौरभपल्लव मदन बिलोका। भयउ कोप कंपेउ त्रयलोका॥
तब सिव तीसर नयन उघारा। चितवत काम भयउ जरि छारा॥

महादेवजीने कामदेवको आमके पत्तोंमें देखा, जिससे उन्हें क्रोध हो आया और तीनों लोक कांप गये। तब शिवजीने अपना तीसरा नेत्र खोला, जिससे देखते ही कामदेव जलकर भस्म हो गया।

हाहाकार भयउ जग भारी। डरपे सुर भये असुर सुखारी॥
समुझि कामसुख सोचहिं भोगी। भये अकंटक साधक जोगी॥

संसारमें भारी हाहाकार हो गया। देवता डर गये और दैत्य सुखी हुए। कामदेवके सुखका स्मरण कर विलासी मनुष्य सोच करने लगे और साधना करनेवाले योगीजन बाधारहित हो गये।

छंद—जोगी अकंटक भये पतिगति सुनति रति मुरछित भई।
रोदति बदति बहु भांति करुना करति संकर पहिं गई॥
अतिप्रेम करि बिनती बिबिध बिधि जोरि कर सनमुख रही।
प्रभु आसुतोष कृपाल सिव अबला निरखि बोले सही॥

योगीजन बाधारहित हो गये, परंतु अपने पति कामदेवकी दशा सुनते ही रति मूर्च्छित हो गयी और अनेक प्रकारसे रोती, चिल्लाती और विलाप करती हुई वह शिवजीके पास पहुंची और अत्यंत प्रेमसे अनेक प्रकारसे विनती कर हाथ जोड़कर सामने खड़ी हो गयी, तब शीघ्र ही प्रसन्न हो जानेवाले कृपालु प्रभु शिव उसे अबला देखकर यह सत्य वचन बोले—

दो०—अब तें रति तव नाथ कर ❀ होइहि नाम अनंग।
बिनु बपु ब्यापिहि सबहि पुनि ❀ सुनु निज मिलन प्रसंग॥११९॥

हे रति, इस समयके बादसे तेरे स्वामीका नाम 'अनङ्ग' शरीररहित होगा और वह शरीर न होनेपर भी सबमें व्याप्त रहेगा। अब उससे अपने मिलनेका प्रसंग सुनो।

जब जदुबंस कृस्नअवतारा ❀ होइहि हरन महा महिभारा॥
कृस्नतनय होइहि पति तोरा ❀ बचन अन्यथा होइ न मोरा॥

पृथ्वीका कठोर भार दूर करनेके लिये जब यदुवंशमें कृष्णावतार होगा तब तेरा पति कृष्णका पुत्र होकर जन्म लेगा। मेरा यह कथन मिथ्या न होगा।

रति गवनी सुनि संकर बानी ❀ कथा अपर अब कहउँ बखानी॥
देवन समाचार सब पाये ❀ ब्रह्मादिक बैकुंठ सिधाये॥

शिवजीका कथन सुनकर रति चली गयी। अब आगेकी कथाको विस्तारपूर्वक कहता हूं। देवताओंने सब समाचार पाये और ब्रह्मा आदि वैकुण्ठको पधारे।

सब सुर बिस्नु बिरंचि समेता ❀ गये जहां सिव कृपानिकेता॥
पृथक पृथक तिन्ह कीन्हि प्रसंसा ❀ भये प्रसन्न चंद्रअवतंसा॥

विष्णु और ब्रह्मासहित सब देवता वहां गये जहां कृपानिधान शिव थे। उन सबने अलग अलग शिवजीकी प्रशंसा की, इससे चंद्रशेखर शिव प्रसन्न हो गये।

बोले कृपासिंधु बृषकेतू ❀ कहहु अमर आये केहि हेतू॥
कह बिधि तुम्ह प्रभु अंतरजामी ❀ तदपि भगति बस बिनवउँ स्वामी॥

कृपासागर शिवने कहा, हे देवताओ, कहो, किस कारण आना हुआ ? ब्रह्माने कहा कि हे प्रभो, यद्यपि आप अन्तर्यामी हैं तथापि हे स्वामी, भक्तिके वश होकर विनती करता हूं।

दो०—सकल सुरन्हके हृदय अस ❀ संकर परम उछाहु।
निज नयनन्हि देखा चहहिं ❀ नाथ तुम्हार बिबाहु ॥११२॥

हे शंकर, समस्त देवताओंके हृदयमें ऐसा अत्यन्त अधिक उत्साह है कि हे नाथ, वे आपका विवाह अपनी आखों देखना चाहते हैं।

यह उत्सव देखिय भरि लोचन ❀ सोइ कछु करहु मदन-मद-मोचन ॥
काम जारि रति कहँ बर दीन्हा ❀ कृपासिन्धु यह अति भल कीन्हा ॥

हे कामदेवके मदको भंग कर देनेवाले शिव, ऐसा ही कुछ कीजिये जिसमें यह उत्सव नेत्र भरकर देखनेको मिले। कामदेवको जलाकर रतिको वर दिया। हे कृपासागर, आपने यह बहुत ही अच्छा किया।

सासति करि पुनि करहिं पसाऊ ❀ नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ॥
पारबती तप कीन्ह अपारा ❀ करहु तासु अब अंगीकारा ॥

हे नाथ, स्वामियोंका यह साधारण स्वभाव होता है कि वे शास्ति करनेके बाद फिर प्रसन्नता भी दिखलाते हैं। पार्वतीने अपार तप किया है उसे अब अङ्गीकार करो।

सुनि बिधि बिनय समुझि प्रभुबानी ❀ ऐसइ होउ कह सुख मानी ॥
तब देवन दुंदुभी बजाईं ❀ बरषि सुमन जय जय सुरसाईं ॥

ब्रह्माकी विनती सुनकर और ईश्वरकी वाणी स्मरण कर शिवजीने सुखसे कहा कि ऐसा ही होगा। तब देवताओंने नगारे बजाये और फूल बरसाकर कहा कि हे देवताओंके स्वामी, आपकी जय हो।

अवसर जानि सप्तरिषि आये ❀ तुरतहि बिधि गिरिभवन पठाये ॥
प्रथम गये जहं रही भवानी ❀ बोले मधुर बचन छलसानी ॥

अवसर जानकर उसी समय सप्तर्षि आये, जिन्हें तुरंत ही ब्रह्माने हिमाचलके घर भेज दिया। पहिले वे वहां गये जहां भवानी थीं और छलसे-भरे हुए मीठे वचन बोले।

दो०—कहा हमार न सुनेहु तब ❀ नारदके उपदेस।
अब भा झूठ तुम्हार पन ❀ जारेउ काम महेस ॥११३॥

नारदकी सीखके कारण उस समय हमारा कहना नहीं सुना, अब तुम्हारा प्रण झूठा हो गया। महादेवने कामदेवको भस्म कर डाला है।

सुनि बोली मुसुकाइ भवानी ❀ उचित कहेहु मुनिबर बिग्यानी ॥
तुम्हरे जान काम अब जारा ❀ अब लगि संभु रहे सविकारा ॥

यह सुनकर भवानी मुस्कुराकर बोलीं—हे ज्ञानी मुनिवरो, आपने उचित कहा। आपकी समझसे शिवजीने कामदेवको अब भस्म किया है और अबतक वे सविकार भोगी थे।

हमरे जान सदा सिव जोगी ❀ अज अनवद्य अकाम अभोगी ॥
जौं मैं सिव सेयेउ अस जानी ❀ प्रीति समेत करम मन बानी ॥

परन्तु मेरी समझसे शिवजी सदासे योगी, अजन्मा, निन्दारहित, कामहीन और भोगशून्य हैं। यदि मैंने ऐसा ही जानकर प्रेमपूर्वक मन, वाणी और कर्मसे शिवजीकी सेवा की हो।

तौ हमार पन सुनहु मुनीसा ❀ करिहहिं सत्य कृपानिधि ईसा ॥
तुम्ह जो कहेहु हर जारेउ मारा ❀ सो अति बड़ अबिबेक तुम्हारा ॥

तो हे मुनीश्वर, मेरी प्रतिज्ञा सुनिये। इसे कृपानिधान ईश्वर सत्य करेंगे। आपने जो यह कहा है कि शिवने कामदेवको भस्म कर दिया, सो यह आपकी बड़ी अज्ञानता है।

तात अनल कर सहज सुभाऊ ❀ हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ ॥
गये समीप सो अवसि नसाई ❀ असि मनमथ महेस कै नाई ॥

हे तात, अग्निका यह स्वाभाविक धर्म है कि उसके समीप जाड़ा कभी नहीं जाता। समीप जानेसे वह उसी भांति अवश्य नष्ट हो जाता है जैसे महादेवके पास कामदेव हुआ।

दो०—हिय हरषे मुनि बचन सुनि ❀ देखि प्रीति बिस्वास।
चले भवानिहि नाइ सिर ❀ गये हिमाचल पास ॥११४॥

उमाके वचन सुनकर और प्रेम और विश्वास देखकर मुनि हृदयमें प्रसन्न हो गये और उन्हें मस्तक नवाकर हिमाचलके पास गये।

सब प्रसंग गिरिपतिहिं सुनावा ❀ मदन दहन सुनि अति दुख पावा ॥
बहुरि कहेउ रति कर बरदाना ❀ सुनि हिमवंत बहुत सुख माना ॥

मुनियोंने पर्वतोंके स्वामी हिमाचलको सब बातें सुनायीं। हिमाचल कामदेवका भस्म होना सुनकर अत्यन्त दुःखी हुए। फिर मुनियोंने रतिको वरदान मिलनेकी बात कही जिसे सुनकर हिमवान्‌ने बहुत सुख माना।

हृदय बिचारि संभु प्रभुताई ❀ सादर मुनिवर लिये बोलाई ॥
सुदिन सुनखत सुघरी सोचाई ❀ बेगि बेदबिधि लगन धराई ॥

हिमाचलने हृदयमें शिवकी प्रभुताको विचारकर मुनिवरोंको आदरपूर्वक बुला लिया और शुभदिन, शुभ नक्षत्र और शुभघड़ी दिखलाकर शीघ्र ही वेदकी रीतिसे लग्न निश्चित करा ली।

पत्री सप्तरिषिन्ह सोइ दीन्ही ❀ गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही ॥
जाइ बिधिहि तिन्ह दीन्हि सो पाती ❀ बाँचत प्रीति न हृदय समाती ॥

वही लग्नपत्रिका हिमाचलने सप्तर्षियोंको दी और चरण पकड़कर विनती की। उन्होंने जाकर वह पत्रिका ब्रह्माको दी। उसे पढ़ते हुए उनका प्रेम हृदयमें न समाता था।

लगन बाँचि अज सबहि सुनाई ❀ हरषे सुनि सब सुरसमुदाई ॥
सुमनवृष्टि नभ बाजन बाजे ❀ मंगल कलस दसहुँ दिसि साजे ॥

ब्रह्माने लग्न पढ़कर सबको सुना दी, जिसे सुनकर समस्त देवताओंका समूह प्रसन्न हुआ। आकाशसे फूलोंकी वर्षा हुई, बाजे बजने और मंगल कलश सजने लगे।

(पार्वती-मंगल)

दो०—लगे सवाँरन सकल सुर ❀ बाहन बिबिध बिमान।
होहिं सगुन मंगल सुखद ❀ करहिं अपछरा गान ॥११५॥

सब देवता अपने अनेक प्रकारके वाहन और विमान सँवारने लगे। शुभ और सुख देनेवाले शकुन होने लगे और अप्सराएं गाने लगीं।

सिवहिं संभुगन करहिं सिंगारा ❀ जटामुकुट अहिमौर सँवारा ॥
कुंडल कंकन पहिरे ब्याला ❀ तन बिभूति पट केहरिछाला ॥

शिवजीके गण शिवजीका शृङ्गार करने लगे। उन्होंने जटाओंका मुकुट और साँपोंका मौर बाँधा। कुण्डलों और कंकणोंके स्थानपर साँपोंको पहनाया। शरीरमें विभूति लगायी और बाघंबरका कपड़ा दिया।

ससि ललाट सुन्दर सिर गंगा ❀ नयन तीनि उपवीत भुजंगा ॥
गरल कंठ उर नर-सिर-माला ❀ असिव बेष सिवधाम कृपाला ॥

मस्तकपर चंद्रमा, सुंदर शिरपर गङ्गाजी और तीन नेत्र थे। सर्पोंका यज्ञोपवीत था। कंठमें विष और हृदयमें नरमुंडोंकी माला थी। यद्यपि कृपालु शिव मङ्गलोंके घर हैं तथापि उनका भेष अमङ्गल था।

कर त्रिसूल अरु डमरु बिराजा ❀ चले बसह चढ़ि बाजहिं बाजा ॥
देखि सिवहिं सुरतिय मुसुकाहीं ❀ बरलायक दुलहिनि जग नाहीं ॥

हाथमें त्रिशूल और डमरू विराजमान था। वे बैलपर चढ़कर चले और बाजे बजने लगे। शिवजीको देखकर देवताओंकी स्त्रियां मुस्कुराती थीं और कहती थीं कि संसारमें इस वरके योग्य दुलहिन नहीं है।

बिस्नु बिरंचि आदि सुरब्राता ❀ चढ़ि चढ़ि बाहन चले बराता ॥
सुरसमाज सब भाँति अनूपा ❀ नहिं बरात दूलहअनुरूपा ॥

विष्णु, ब्रह्मा आदि देवतागण अपने अपने वाहनोंपर चढ़कर बारातको चले। देवताओंका समूह सब प्रकारका अनुपम था, परन्तु बारात दूल्हाके अनुरूप न थी।

दो०—बिस्नु कहा अस बिहँसि तब ❀ बोलि सकल दिसिराज।
बिलग बिलग होइ चलहु सब ❀ निज निज सहित समाज ॥११६॥

तब मुस्कुराकर विष्णुने समस्त दिशाओंके स्वामियोंको बुलाकर यह कहा कि सब अपने अपने समाजके साथ अलग अलग होकर चलो।

बर अनुहारि बरात न भाई ❀ हँसी करइहउ परपुर जाई ॥
बिस्नु बचन सुनि सुर मुसुकाने ❀ निज निज सेन सहित बिलगाने ॥

हे भाई, जैसा वर है वैसी बारात नहीं है। दूसरेके नगरमें जाकर क्या हँसी कराओगे? विष्णुकी बात सुनकर देवता मुस्कुराये और अपनी अपनी सेनाओंसहित अलग अलग हो गये।

मनहीं मन महेस मुसुकाहीं ❀ हरिके व्यंग बचन नहिं जाहीं ॥
अतिप्रिय बचन सुनत प्रिय केरे ❀ भृंगिहि प्रेरि सकल गन टेरे ॥

महादेवजी मन-ही-मन मुस्कुराते और कहते थे कि विष्णुका व्यंग वचन कहना नहीं जाता। अपने प्यारेके अत्यन्त प्यारे वचन सुनकर शिवजीने भृङ्गीको भेजकर सब गणोंको बुलवा लिया।

सिव अनुसासन सुनि सब आये ❀ प्रभु पदजलज सीस तिन्ह नाये ॥
नाना बाहन नाना बेखा ❀ बिहँसे सिव समाज निज देखा ॥

शिवजीकी आज्ञा सुनकर सब आये। उन सब गणोंने अपने स्वामी शिवके चरणकमलोंमें शिर नवाया। अनेक प्रकारके उनके वाहन और भेष थे। अपना समाज देखकर शिवजी मुस्कुराये।

कोउ मुखहीन बिपुलमुख काहू ❀ बिनु पद-कर कोउ बहु-पद बाहू ॥
बिपुलनयन कोउ नयनबिहीना ❀ रिष्ट पुष्ट कोउ अति तनखीना ॥

कोई मुखहीन था और किसीके बहुतसे मुख थे। किसीके हाथ पैर ही न थे और किसीके बहुतसे हाथ पैर थे। किसीके बहुतसी आँखें थीं और किसीके आंखें ही न थीं। कोई अत्यन्त हृष्टपुष्ट था और कोई अत्यन्त क्षीण।

छंद—तनखीन कोउ अतिपीन पावन कोउ अपावन गति धरे।
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरे ॥

खर-स्वान-सुअर-सृगाल-मुख गन बेष अगनित को गनै॥
बहु जिनिसप्रेत पिसाच जोगि जमात बरनत नहिं बनै॥

किसीका शरीर क्षीण था और कोई अत्यन्त मोटा था। कोई पवित्र था और कोई अपवित्र भेष बनाये हुए था। उनके भूषण भयानक थे। सबके हाथमें कपाल था और सबका शरीर ताजे खूनसे सना हुआ था। गधों, कुत्तों, शूकरों और सियारों जैसे मुखवाले गणोंके असंख्य भेषोंको कौन गिने? अनेक प्रकारके प्रेतों, पिशाचों और योगियोंका समूह वर्णन करनेमें नहीं आता।

सो०—नाचहिं गावहिं गीत ❀ परम तरङ्गी भूत सब।
देखत अति बिपरीत ❀ बोलहिं बचन बिचित्र बिधि॥११७॥

सब भूत बड़े मौजी थे। वे नाचते और गीत गाते थे। उनका देखना बिल्कुल उलटा था और वे विचित्र ढंगसे वचन बोलते थे।

जस दूलह तसि बनी बराना ❀ कौतुक बिबिध होहिं मग जाता॥
इहां हिमाचल रचेउ बिताना ❀ अति बिचित्र नहिं जाइ बखाना॥

जैसा दूल्हा था वैसी ही बारात बनी थी। जाते हुए मार्गमें अनेक प्रकारके तमाशे होते जाते थे। इधर हिमाचलने अत्यन्त विचित्र मण्डप बनाया, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

सैल सकल जहँ लगि जग माहीं ❀ लघु बिसाल नहिं बरनि सिराहीं॥
बन सागर सब नदी तलावा ❀ हिमगिरि सब कहुँ नेवति पठावा॥

संसारमें छोटे और बड़े सब जितने पर्वत हैं जिनका वर्णन नहीं हो सकता, समस्त वन, समुद्र, नदी और तालाव—हिमाचलने सबको निमंत्रण देकर बुला भेजा।

काम रूप सुन्दर तनु-धारी ❀ सहित समाज सोह बर नारी॥
आए सकल हिमाचल गेहा ❀ गावहिं मंगल सहित सनेहा॥

कामदेव जैसा सुन्दर शरीर धारण कर वे सब अपने परिवार और सुन्दर स्त्रियोंसहित शोभित हो रहे थे। ये सब हिमाचलके घर आये। सब प्रेमपूर्वक मङ्गलगान करते थे।

प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँवराये ❀ जथा जोग जहँ तहँ सब छाये॥
पुर सोभा अवलोकि सुहाई ❀ लागइ लघु बिरंचिनिपुनाई॥

हिमाचलने पहिलेसे ही बहुतसे घरोंको सजाकर रखा था, सबको यथायोग्य विभिन्न स्थानोंमें ठहरा दिया नगरकी सुन्दर शोभाको देखकर ब्रह्माकी चतुरता भी तुच्छ प्रतीत होती थी।

छंद—लघु लागि बिधि की निपुनता अवलोकि पुरसोभा सही।
बन बाग कूप तड़ाग सरिता सुभग सब सक को कही॥
मंगल बिपुल तोरन पताका केतु गृह गृह सोहहीं।
बनिता पुरुष सुंदर चतुर छबि देखि मुनि मन मोहहीं॥

नगरकी सुन्दर शोभाको देखकर ब्रह्माकी चतुरता भी तुच्छ प्रतीत होती थी। वन, बाग, कुआँ, तालाब, नदी—सब अत्यन्त सुन्दर थे। इनका वर्णन कौन कर सकता है? बहुतसे मंगलचिह्न तोरण, पताका और ध्वजाएं सब प्रत्येक घरपर शोभा पा रहे थे। सब स्त्री और पुरुष सुन्दर और चतुर थे। उनकी शोभा देखकर मुनियों-के मन भी मोहित हो जाते थे।

दो०—जगदंबा जहँ अवतरी ❀ सो पुर बरनि कि जाइ।
रिधि सिधि संपति सकल सुख ❀ नित नूतन अधिकाइ॥११८॥

संसारकी माताने जहां अवतार लिया हो, उस नगरका वर्णन क्या किया जा सकता है? वहां नित्य नयी ऋद्धि, सिद्धि, सम्पत्ति और समस्त सुख बढ़ते जाते थे।

नगर निकट बरात सुनि आई ❀ पुर खरभर सोभा अधिकाई॥
करि बनाव सब बाहन नाना ❀ चले लेन सादर अगवाना॥

नगरके समीप बरातका आना सुनकर नगरमें खलबली मच गयी और शोभा अधिक हो गयी। सब लोग अनेक प्रकारके समस्त वाहनोंको सजाकर आदरपूर्वक आगवानी लेनेके लिये चले।

हिय हरषे सुरसेन निहारी ❀ हरिहि देखि अति भये सुखारी॥
सिवसमाज जब देखन लागे ❀ बिडरि चले बाहन सब भागे॥

देवताओंकी सेना देखकर हृदय प्रसन्न हो गये और विष्णुको देखकर सब अत्यन्त सुखी हुए। परन्तु जब शिवजीका दल देखने लगे तब डरकर सब वाहन भाग चले।

धरि धीरज तहँ रहे सयाने ❀ बालक सब लइ जीव पराने॥
गये भवन पूछहिं पितु माता ❀ कहहिं बचन भयकंपित गाता॥

वहां चतुर मनुष्य ही धीरज रखकर खड़े रहे और सब बालक प्राण लेकर भाग गये। घर जानेपर माता-पिताने जब पूछा तब उन्होंने डरसे कांपते हुए कहा।

कहिय कहा कहि जाइ न बाता ❀ जम कर धारि किधौं बरिआता॥
बर बौराह बरद असवारा ❀ ब्याल कपाल बिभूषन छारा॥

क्या कहें ? कुछ बात नहीं कही जाती। यह बारात है या यमराजकी सेना ! वर पगला है और बैलपर सवार है। सर्प, कपाल और भस्म उसके गहने हैं।

छंद—तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा।
सँग भूत प्रेत पिसाच जोगिन बिकटमुख रजनीचरा॥
जो जियत रहिहि बरात देखत पुन्य बड़ तेहि कर सही।
देखहि सो उमाबिबाह घर घर बात असि लरिकन्ह कही॥

शरीरमें भस्म, सर्प और कपालके गहने हैं। वह नंगा और भयङ्कर जटाधारी है। संगमें भूत, प्रेत, पैशाच, योगिनी और भयङ्कर मुखवाले राक्षस हैं। इस बारातको देखकर जो जीता रहे, निश्चय ही उसका बड़ा पुण्य है और वही उमाके विवाहको देखेगा। लड़कोंने घर घर यह बात जा कही।

दो०—समुझि महेस समाज सब ❀ जननि जनक मुसुकाहिं।
बाल बुझाये बिबिध बिधि ❀ निडर होहु डर नाहिं॥ ११६॥

महादेवजीके दलको समझकर सभी माता और पिता मुस्कुराते थे। उन्होंने बालकोंको अनेक प्रकारसे समझाया कि डरो मत। डरकी कोई बात नहीं है।

लइ अगवान बरातहि आये ❀ दिये सबहिं जनवास सुहाये॥
मैना सुभ आरती सँवारी ❀ संग सुमंगल गावहिं नारी॥

अगवानी लेकर बारातको ले आये और सबको सुन्दर जनवासा दिया। मैनाने मंगल-आरती सजा दी, साथमें स्त्रियां सुन्दर मंगल-गीत गाती थीं।

कंचनथार सोह बरपानी ❀ परिछन चली हरहिं हरषानी॥
बिकटवेष रुद्रहिं जब देखा ❀ अबलन्ह उर भय भयउ बिसेखा॥

सुन्दर हाथमें सोनेका थाल शोभित था। वे सब प्रसन्न होती हुई महादेवजीको परछन करनेके लिये चलीं। उन स्त्रियोंने जब भयंकर भेषमें महादेवको देखा तब उनके हृदयमें बड़ा भय उत्पन्न हुआ।

भागि भवन पैठीं अति त्रासा ❀ गये महेस जहां जनवासा॥
मैना हृदय भयउ दुख भारी ❀ लीन्ही बोलि गिरीसकुमारी॥

उन्हें अत्यन्त डर लगा और वे भागकर घरमें जा बैठीं। शिवजी वहां गये जहां जनवासा था। मैनाके हृदयमें बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने पार्वतीको बुला लिया।

अधिक सनेह गोद बैठारी ❀ स्यामसरोज नयन भरि बारी॥
जेहि बिधि तुम्हहिं रूप अस दीन्हा ❀ तेहि जड़ बर बाउर कस कीन्हा॥

नील कमलके समान नेत्रोंमें जल भर उन्हें बड़े प्रेमसे गोदमें बैठाया और कहा कि जिस ब्रह्माने तुम्हें ऐसा रूप दिया है उसने ऐसा मूर्ख और पगला वर कैसे बनाया ?

छंद—कस कीन्ह बर बौराह बिधि जेहि तुम्हहि सुंदरता दई ।
जो फलु चहिय सुरतरुहिं सो बरबस बबूरहिं लागई ॥
तुम्ह सहित गिरि तें गिरउँ पावक जरउँ जलनिधि महँ परउँ ।
घर जाउ अपजस होउ जग जीवत बिबाहु न हौं करउँ ॥

जिस ब्रह्माने तुमको सुन्दरता दी, उसने वरको पगला कैसे बनाया ? जो फल कल्पवृक्षमें लगना चाहिये था वह जबर्दस्तीसे बबूलमें लगाया जा रहा है। तुम्हें लेकर मैं पहाड़से गिर पड़ूंगी, अग्निमें जल मरूंगी और समुद्रमें जा गिरूंगी। घर बिगड़ जाय और चाहे अपयश हो, संसारमें प्राण रहते मैं तुम्हारा विवाह न करूंगी।

दो०—भईं बिकल अबला सकल ❀ दुखित देखि गिरिनारि ।
करि बिलाप रोदति बदति ❀ सुतासनेहु सँभारि ॥ १२० ॥

पुत्रीके स्नेहका स्मरण कर हिमाचलकी स्त्री मैना विलाप करके रोती और चिल्लाती थीं, उन्हें दुःखित देखकर सभी स्त्रियां व्याकुल हो गयीं।

नारद कर मैं काह बिगारा ❀ भवन मोर जिन्ह बसत उजारा ॥
अस उपदेस उमहिं जिन्ह दीन्हा ❀ बौरे बरहिं लागि तप कीन्हा ॥

मैंने नारदका क्या बिगाड़ा था जिन्होंने बसता हुआ घर उजाड़ दिया; जिन्होंने उमाको ऐसा उपदेश दिया कि उसने पगले वरके लिये तप किया।

सांचेहु उनके मोह न माया ❀ उदासीन धन धाम न जाया ॥
पर-घर-घालक लाज न भीरा ❀ बांझ कि जान प्रसव की पीरा ॥

सचमुच ही उनके न तो मोह है और न माया है। वे उदासीन हैं। न उनके धन और घर है और न स्त्री। वे दूसरोंका घर उजाड़नेवाले हैं। उन्हें न लज्जा है और न डर। बांझ स्त्री क्या प्रसवकी पीड़ा जान सकती है ?

जननिहिं बिकल बिलोकि भवानी ❀ बोली जुत बिबेक मृदुबानी ॥
अस बिचारि सोचहि मति माता ❀ सो न टरइ जो रचइ बिधाता ॥

माताको व्याकुल देखकर ज्ञानसे भरी हुई मीठी वाणीसे भवानीने कहा कि हे माता, यह विचार सोच मत करो कि ब्रह्मा जो कुछ रचता है वह नहीं टलता।

करम लिखा जौ बाउर नाहू ❀ तौ कत दोष लगाइय काहू ॥
तुम्ह सन मिटहिं कि बिधिके अंका ❀ मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥

कर्ममें यदि पगला पति ही लिखा है तो किसीको दोष क्यों दिया जाय? ब्रह्माका लेख क्या तुम्हारे मेटनेसे मिट सकता है? हे माता, व्यर्थ ही कलंक मत लो।

छंद—जनि लेहु मातु कलंक करुना परिहरहु अवसर नहीं।
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाब जहँ पाउब तहीं ॥
सुनि उमाबचन बिनीत कोमल सकल अबला सोचहीं।
बहु भांति बिधिहि लगाइ दूषन नयन बारि बिमोचहीं ॥

हे माता, कलङ्क मत लो। विलाप छोड़ो। इसका समय नहीं है। मेरे ललाट दुःखमें और सुख जो कुछ लिखा है वह जहां जाऊँगी वहीं मिलेगा। उमाके कोमल और नम्र वचन सुनकर सभी स्त्रियां सोचने और अनेक प्रकारसे ब्रह्माको दोष लगाकर नेत्रोंसे जल गिराने लगीं।

दो०—तेहि अवसर नारद सहित ❀ अरु रिषिसप्त समेत।
समाचार सुनि तुहिनगिरि ❀ गवने तुरत निकेत ॥१२१॥

उसी समय सब समाचार सुनकर नारदमुनिसहित सप्तर्षियोंको लेकर हिमाचल तुरन्त अपने घर गये।

तब नारद सबही समुझावा ❀ पूरब-कथा-प्रसंग सुनावा ॥
मैना सत्य सुनहु मम बानी ❀ जगदंबा तव सुता भवानी ॥

तब नारदने सबको समझाया और पहिलेकी कथाका प्रसङ्ग सुनाया। हे मैना, मेरी यह सत्य वाणी सुनो। तुम्हारी पुत्री भवानी संसारकी माता है।

अजा अनादि सक्ति अबिनासिनि ❀ सदा संभु अरधंग निवासिनि ॥
जग-संभव-पालन-लय-कारिनि ❀ निज इच्छा लीला-बपु-धारिनि ॥

जिस शक्तिका कभी जन्म, आरम्भ और नाश नहीं होता, जो सदा शिवजीके अर्द्धाङ्गमें वास करती है, जो संसारकी उत्पत्ति, रक्षा और प्रलयका कारण है और जो अपनी ही इच्छासे लीलाके लिये शरीर धारण करती है।

जनमी प्रथम दच्छगृह जाई ❀ नाम सती सुन्दर तनु पाई ॥
तहँउ सती संकरहि बिबाहीं ❀ कथा प्रसिद्ध सकल जग माहीं ॥

उसीने पहिले दक्षके घरमें जाकर जन्म लिया था। उसका वहां सती नाम था और उसने बड़ा सुन्दर शरीर पाया था। वहां भी सतीका विवाह शंकरजीके साथ ही हुआ था। इसकी कथा सारे संसारमें प्रसिद्ध है।

एक बार आवत सिव संगा ❀ देखेउ रघुकुल-कमल-पतंगा ॥
भयउ मोह सिव कहा न कीन्हा ❀ भ्रमबस बेष सीय कर लीन्हा ॥

एक बार शिवजीके साथ आते हुए सतीने रघुवंशरूपी कमलके सूर्य श्रीरामचन्द्रजीको देखा। उन्हें मोह हुआ और उन्होंने शिवजीका कहना नहीं माना, और भ्रमके वशमें होकर सीताजीका भेष कर लिया।

छंद—सियबेष सती जो कीन्ह तेहि अपराध संकर परिहरी।
हरबिरह जाइ बहोरि पितुके जग्य जोगानल जरी ॥
अब जनमि तुम्हरे भवन निजपति लागि दारुन तपु किया।
अस जानि संसय तजहु गिरिजा सर्बदा संकरप्रिया ॥

सतीने सीताजीका जो भेष बनाया था, उस अपराधसे शिवजीने उन्हें छोड़ दिया। फिर वे शिवजीके वियोगसे पिताके यज्ञमें जाकर योगाग्निमें जल गयीं। अब तुम्हारे घरमें जन्म लेकर अपने पतिको पानेके लिये उन्होंने तप किया है, ऐसा जानकर संदेह छोड़ दो। पार्वती सदासे ही शंकरकी पत्नी हैं।

दो०—सुनि नारदके बचन तब ❀ सब कर मिटा बिषाद।
छन महँ ब्यापेउ सकल पुर ❀ घर घर यह संबाद ॥ १२२ ॥

तब नारदके वचन सुनकर सबका शोक दूर हो गया और एक क्षणमें ही समस्त नगरके घर घरमें यह वृत्तान्त फैल गया।

तब मैना हिमवंत अनंदे ❀ पुनि पुनि पारबतीपद बंदे ॥
नारि पुरुष सिसु जुवा सयाने ❀ नगर लोग सब अति हरषाने ॥

तब मैना और हिमाचल प्रसन्न हुए और बारंबार पार्वतीके चरणोंकी वंदना की। स्त्री-पुरुष, बालक-युवा और वृद्ध, सब नगरनिवासी अत्यन्त प्रसन्न हुए।

लगे होन पुर मंगल गाना ❀ सजे सबहि हाटकघट नाना ॥
भांति अनेक भई जेवनारा ❀ सूपसास्त्र जस कछु ब्यवहारा ॥

नगरमें मंगल गीत गाये जाने लगे और सबने अनेक सोनेके घड़ोंको सजाया। पाकशास्त्रका जैसा कुछ नियम है उसके अनुसार अनेक प्रकारकी जेवनार हुई।

सो जेवनार कि जाइ बखानी ❀ बसहिं भवन जहिं मातु भवानी ॥
सादर बोले सकल बराती ❀ बिस्नु बिरंचि देव सब जाती ॥

जिस घरमें माता भवानी बसती हों, उस जेवनारका क्या वर्णन किया जा सकता है ? विष्णु, ब्रह्मा और समस्त जातियोंके देवताओं—सभी बारातियोंको आदरपूर्वक बुलाया ।

बिबिध पांति बैठी जेवनारा ❀ लागे परुसन निपुन सुआरा ॥
नारिबृंद सुर जेवँत जानी ❀ लगीं देन गारी मृदुबानी ॥

अनेक पंक्तियोंमें जेवनार बैठी और चतुर रसोइये परोसने लगे । देवताओंको जीमता हुआ जानकर स्त्रियां मीठी वाणीसे गालियां देने लगीं ।

छंद—गारी मधुर सुर देहिं सुंदरि ब्यंग बचन सुनावहीं ।
भोजन करहिं सुर अति बिलंब बिनोद सुनि सचुपावहीं ॥
जेंवत जो बढ़्‌उ अनंद सो मुख कोटिहू न परइ कह्यौ ।
अँचवाइ दीन्हे पान गवने बास जहँ जाको रह्यौ ॥

सुन्दरियां मीठे स्वरसे गालियां देती और व्यंग वचन सुनाती थीं । देवतागण बहुत धीरे-धीरे भोजन करते और हँसी सुनकर चुप रह जाते थे । जेवनारके समय जो आनन्द बढ़ा था वह करोड़ मुखोंसे भी कहा नहीं जा सकता । भोजनके बाद हाथ मुंह धुलाकर पान दिये और जिसका जहां निवास था वह वहां गया ।

दो०—बहुरि मुनिन्ह हिमवंत कहँ ❀ लगन सुनाई आइ ।
समय बिलोकि बिबाह कर ❀ पठये देव बोलाइ ॥ १२३ ॥

फिर हिमाचलको मुनियोंने आकर लग्न सुनायी और विवाहका समय देखकर देवताओंको बुला भेजा ।

बोलि सकल सुर सादर लीन्हे ❀ सबहि जथोचित आसन दीन्हे ॥
बेदी बेदबिधान सँवारी ❀ सुभग सुमंगल गावहिं नारी ॥

आदरपूर्वक सब देवताओंको बुला लिया और सबको योग्य आसनपर बैठाया । वेदके विधानके अनुसार वेदी सजाई गयी । सौभाग्यवती स्त्रियां सुन्दर मंगल गीत गाती थीं ।

सिंहासन अतिदिब्य सुहावा ❀ जाइ न बरनि बिचित्र बनावा ॥
बैठे सिव बिप्रन्ह सिर नाई ❀ हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई ॥

अत्यन्त दिव्य सिंहासन शोभित हो रहा था । वह ऐसा विचित्र बनाया गया था कि उसका वर्णन नहीं हो सकता । ब्राह्मणोंको शिर नवाकर और हृदयमें अपने स्वामी श्रीरामचंद्रजीका स्मरण कर शिवजी उसपर बैठे ।

बहुरि मुनीसन्ह उमा बोलाई ❀ करि सिंगार सखी लेइ आई ॥
देखत रूप सकल सुर मोहे ❀ बरनइ छबि अस जग कबि को है ॥

फिर मुनीश्वरोंने उमाको बुलवाया। शृङ्गार करके उन्हें सखी लेकर आयी। रूप देखते ही सब देवता मोहित हो गये। संसारमें ऐसा कवि कौन है जो उनकी सुन्दरताका वर्णन करे ?

जगदंबिका जानि भवबामा ❀ सुरन्ह मनहिं मन कीन्ह प्रनामा ॥
सुंदरतामरजाद भवानी ❀ जाइ न कोटिन्ह बदन बखानी ॥

उमाको शंकरजीकी पत्नी और संसारकी माता जानकर देवताओंने मन ही मन प्रणाम किया। भवानी सुन्दरताकी सीमा हैं। उनका वर्णन करोड़ों मुखोंसे भी नहीं हो सकता।

छंद—कोटिहु बदन नहिं बनइ बरनत जग-जननि-सोभा महा।
सकुचहिं कहत स्रुति सेष सारद मंदमति तुलसी कहा ॥
छबिखानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप सिव जहां।
अवलोकि सकइ न सकुचि पति-पद कमल मनमधुकर तहां ॥

संसारकी माताकी महान् सुन्दरता करोड़ मुखोंसे भी वर्णन करते नहीं बन पड़ती। वेद, शेषनाग और शारदा, सब उसे कहनेमें संकोच करते हैं; फिर मन्दबुद्धि तुलसीकी बात ही क्या है ? सुन्दरताकी खान माता भवानी मंडपके बीचमें, जहां शिवजी थे, गयीं। वे सङ्कोचसे पतिके चरणकमलोंको देख न सकती थीं, परन्तु उनका मनरूपी भौंरा वहीं था।

दो०—मुनि अनुसासन गनपतिहि ❀ पूजेउ संभु भवानि।
कोउ सुनि संसय करइ जनि ❀ सुर अनादि जिय जानि ॥ १२४ ॥

मुनिके आदेशके अनुसार शिव और गिरिजाने गणेशजीकी पूजा की। यह सुनकर देवताओंको हृदयमें अनादि जानकर किसीको शंका नहीं करना चाहिये।

जसि बिबाह कै बिधि स्रुति गाई ❀ महामुनिन्ह सो सब करवाई ॥
गहि गिरीस कुस कन्या पानी ❀ भवहि समरपी जानि भवानी ॥

वेदने विवाहकी जो विधि बतलायी है, वह सब महामुनियोंने करवा दी। हाथमें कुश और कन्याका हाथ लेकर हिमाचलने शिवकी ही पत्नी समझकर उमाको शिवको समर्पण कर दिया।

पानिग्रहन जब कीन्ह महेसा ❀ हिय हरषे तब सकल सुरेसा ॥
बेदमंत्र मुनिबर उच्चरहीं ❀ जय जय जय संकर सुर करहीं ॥

शिवजीने जब पाणिग्रहण किया तब सब देवता हृदयमें प्रसन्न हुए। मुनिवर वेदमंत्रोंका उच्चारण करने लगे और देवता कहने लगे कि हे शङ्कर, तुम्हारी जय हो, जय हो, जय हो!

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना ❀ सुमनबृष्टि नभ भइ बिधि नाना ॥
हर गिरिजा कर भयउ बिबाहू ❀ सकल भुवन भरि रहा उछाहू ॥

अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे। आकाशसे अनेक प्रकारके फूलोंकी वर्षा हुई। शिव और उमाका विवाह हो गया, जिससे समस्त भुवनोंमें आनन्द भर गया।

दासी दास तुरग रथ नागा ❀ धेनु बसन मनि बस्तु बिभागा ॥
अन्न कनक भाजन भरि जाना ❀ दाइज दीन्ह न जाइ बखाना ॥

दासियां, दास, घोड़े, रथ, हाथी, गायें, कपड़े, मणियां, अनेक प्रकारकी वस्तुएँ, सोनेके वर्तन और अन्न—सबसे गाड़ियां भरकर दहेज दिया, जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

छंद—दाइज दियो बहुभांति पुनि कर जोरि हिमभूधर कह्यौ।
का देउँ पूरनकाम संकर चरनपंकज गहि रह्यौ ॥
सिव कृपासागर ससुर कर संतोष सब भांतिहि कियो।
पुनि गहे पदपाथोज मैना प्रेमपरिपूरन हियो ॥

हिमाचलने अनेक प्रकारका दहेज दिया और फिर हाथ जोड़कर कहा कि हे पूर्णकाम शिव, मैं आपको क्या दूं। उन्होंने शिवजीके चरणकमल पकड़ लिये। कृपासागर शिवने अपने ससुरको अनेक प्रकारसे संतोष दिलाया। फिर मैनाने प्रेमपूर्ण हृदयसे शिवजीके चरणकमलोंको आ पकड़ा।

दो०—नाथ उमा मम प्रान सम ❀ गृहकिंकरी करेहु।
छमेहु सकल अपराध अब ❀ होइ प्रसन्न बर देहु ॥ १२५ ॥

हे नाथ, उमा मुझे प्राणोंके समान है। इसे अपने घरकी दासी बनाना। सब अपराधोंको अब क्षमा कीजिये और प्रसन्न होकर वर दीजिये।

बहु बिधि संभु सासु समुझाई ❀ गवनी भवन चरन सिर नाई ॥
जननी उमा बोलि तब लीन्ही ❀ लेइ उछंग सुन्दर सिख दीन्ही ॥

शिवजीने सासुको अनेक प्रकारसे समझाया। वे चरणोंमें शिर नवाकर घरमें गयीं। तब माताने उमाको बुला लिया और गोदमें लेकर सुन्दर सीख दी।

करेहु सदा संकर-पद पूजा ❀ नारिधरम पति देव न दूजा ॥
बचन कहत भरि लोचन बारी ❀ बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी ॥

सदैव शिवजीके चरणोंकी पूजा करना। स्त्रियोंका धर्म पति ही है। उनके लिये दूसरा कोई देवता नहीं। यह बात कहते कहते नेत्रोंमें जल भरकर उमाको फिर हृदयसे लगा लिया।

कत बिधि सृजी नारि जग माहीं ❀ पराधीन सपनेहु सुख नाहीं॥
भइ अति प्रेम बिकल महतारी ❀ धीरज कीन्ह कुसमय बिचारी॥

ब्रह्माने संसारमें स्त्रियोंको क्यों बनाया? पराधीन होनेमें स्वप्नमें भी सुख नहीं। अत्यन्त प्रेमसे माता व्याकुल हो गयीं परन्तु उन्होंने कुसमयका विचार कर धीरज रखा।

पुनि पुनि मिलति परति गहि चरना ❀ परम प्रेम कछु जाइ न बरना॥
सब नारिन्ह मिलि भेटि भवानी ❀ जाइ जननिउर पुनि लपटानी॥

वे बारंबार मिलने और चरणोंमें पड़ने लगीं। उनका अत्यन्त प्रेम कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। सब स्त्रियोंसे मिल और भेंटकर भवानी फिर जाकर माताके हृदयसे लिपट गयीं।

छंद—जननिहि बहुरि मिलि चली उचित असीस सब काहू दई।
फिरि फिरि बिलोकति मातु तन तब सखी लेइ सिव पहँ गई॥
जाचक सकल संतोषि संकर उमा सहित भवन चले।
सब अमर हरषे सुमन बरषि निसान नभ बाजे भले॥

मातासे फिर मिलकर उमा चलीं। उन्हें सब किसीने उचित आशीष दी। जब उन्हें लेकर सखी शिवके पास गयी तब वे लौटकर माताकी ओर देखती जाती थीं। समस्त मंगतोंको संतुष्ट कर उमासहित शिवजी अपने घरको चले। उस समय सब देवता प्रसन्न हुए। फूलोंकी वर्षा हुई और आकाशमें सुन्दर बाजे बजने लगे।

दो०—चले संग हिमवंत तब ❀ पहुँचावन अति हेतु।
बिबिध भाँति परितोष करि ❀ बिदा कीन्ह बृषकेतु॥ १२६॥

तब अत्यन्त प्रेमसे पहुंचानेके लिये हिमाचल साथमें चले। उन्हें अनेक प्रकारसे धैर्य्य दिलाकर महादेवजीने विदा किया।

तुरत भवन आये गिरिराई ❀ सकल सैल सर लिये बुलाई॥
आदर दान बिनय बहु माना ❀ सब कर बिदा कीन्ह हिमवाना॥

हिमाचल तुरन्त ही घरमें आये और सब पर्वतों और सरोवरोंको बुला लिया। आदर, भेंट और विनतीसे बहुत सम्मानपूर्वक हिमाचलने विदा किया।

जबहिं संभु कैलासहि आये ❀ सुर सब निज निज लोक सिधाये ॥
जगतमातुपितु संभु भवानी ❀ तेहि सिंगारु न कहउँ बखानी ॥

जब शिवजी कैलाशपर आ गये तब सब देवता अपने अपने लोकको चले गये। भवानी और शिव संसारके माता और पिता हैं। इसलिये उनके शृंगारका मैं वर्णन नहीं करता।

करहिं बिबिधबिधि भोग बिलासा ❀ गनन्ह समेत बसहिं कैलासा ॥
हर-गिरिजा-बिहार नित नयउ ❀ एहि बिधि बिपुल काल चलि गयऊ ॥

वे अनेक प्रकारसे भोग-विलास करते और अपने गणोंसमेत कैलाशपर बसते थे। शिव और गिरिजा नित्य नये विहार करते थे। इस प्रकार बहुत सा समय बीत गया।

तब जनमेउ षट - बदन - कुमारा ❀ तारकु असुरु समर जेहिं मारा ॥
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ षनमुखजनम सकल जग जाना ॥

तब छः मुँहवाले पुत्र स्वामिकार्तिकका जन्म हुआ, जिन्होंने संग्राममें तारकासुरको मारा। स्वामिकार्तिकके जन्मका वृत्तान्त सारा संसार जानता है और यह वेद, शास्त्र और पुराण—सबमें प्रसिद्ध है।

छंद—जगु जान षनमुखजनमु करम प्रताप पुरुषारथ महा।
तेहि हेतु मैं बृष-केतु-सुत कर चरित संछेपहि कहा ॥
यह उमा - संभु - बिबाहु जे नर नारि कहहिं जे गावहीं।
कल्यान काज बिबाह मंगल सर्बदा सुख पावहीं ॥

स्वामिकार्तिकके जन्म, कर्म, प्रताप और महान् पुरुषार्थको संसार जानता है, इसीलिये मैंने शिवजीके इस पुत्रका चरित संक्षेपमें ही कहा है। शिव और पार्वतीके इस विवाहको जो स्त्री-पुरुष कहेंगे और गायेंगे वे कल्याण-के कार्यों, विवाहों और उत्सवोंमें सदैव सुख पायेंगे।

दो०—चरितसिंधु गिरिजारमन ❀ बेद न पावहिं पारु।
बरनइ तुलसीदास किमि ❀ अति-मति-मंद गँवारु ॥१२७॥

गिरिजाके साथ रमण करनेवाले शिवके चरितके समुद्रका पार वेद नहीं पाते, फिर उसे अत्यन्त मंदबुद्धि गवार तुलसीदास कैसे वर्णन करे ?

(इति उमा-संभु-बिबाह)

संभुचरित सुनि सरस सुहावा ❀ भरद्वाजमुनि अतिसुख पावा ॥
बहुलालसा कथा पर बाढ़ी ❀ नयनन्हि नीरु रोमावलि ठाढ़ी ॥

शिवजीका सुन्दर रसीला चरित सुनकर भरद्वाज मुनिने अत्यन्त सुख पाया। कथा सुननेके लिये उनकी लालसा बहुत प्रबल हुई। उनकी आंखोंमें जल भर आया और शरीर रोमांचित हो गया।

प्रेमबिबस मुख आव न बानी ❀ दसा देखि हरषे मुनि ग्यानी ॥
अहो धन्य तव जनम मुनीसा ❀ तुम्हहि प्रान सम प्रिय गौरीसा ॥

प्रेमके वेगसे उनके मुखसे शब्द न निकलता था। उनकी दशा देखकर ज्ञानी मुनि प्रसन्न हो गये। उन्होंने कहा कि हे मुनीश्वर, तुम्हारा जन्म धन्य है। तुम्हें गौरीपति शिव प्राणोंके समान प्यारे हैं।

सिव-पद-कमल जिन्हहि रति नाहीं ❀ रामहि ते सपनेहु न सुहाहीं ॥
बिनु छल बिस्व-नाथ-पद-नेहू ❀ रामभगत कर लच्छन एहू ॥

जिन्हें शिवजीके चरणकमलोंमें प्रेम नहीं है वे रामको कभी स्वप्नमें भी नहीं अच्छे लगते। रामभक्तका लक्षण यही है कि उसे संसारके स्वामी शिवके चरणमें छलरहित प्रेम हो।

सिव सम को रघु-पति-ब्रत-धारी ❀ बिनु अघ तजी सती असि नारी ॥
पन करि रघुपतिभगति दृढ़ाई ❀ को सिव सम रामहिं प्रिय भाई ॥

श्री रामचन्द्रजीकी भक्ति करनेवाला शिवके समान और कौन है, जिन्होंने कोई पाप न करनेपर भी सती जैसी स्त्रीको त्याग दिया और प्रतिज्ञा करके श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिको दृढ़ किया। हे भाई, शिवजीके समान रामको कौन प्यारा है?

दो०—प्रथमहिं मैं कहि सिवचरित ❀ बूझा मरमु तुम्हार।
सुचि सेवक तुम्ह राम के ❀ रहित समस्त बिकार ॥ १२८ ॥

पहिले ही मैंने शिवका चरित कहकर तुम्हारा मर्म जान लिया। तुम समस्त दोषोंसे रहित श्रीरामचंद्रजीके पवित्र सेवक हो।

(उमा-संभु-संवाद)

मैं जाना तुम्हार गुन सीला ❀ कहउँ सुनहु अब रघु-पति-लीला ॥
सुनु मुनि आजु समागम तोरे ❀ कहि न जाइ जस सुख मन मोरे ॥

मैंने तुम्हारा गुण और शील जान लिया, अब श्रीरामचंद्रजीकी लीला कहता हूं, सुनो। हे मुनि, सुनो, आज तुम्हारे मिलनेसे मेरे मनमें जैसा सुख हुआ है वह कहा नहीं जाता।

रामचरित अति अमित मुनीसा ❀ कहि न सकहिं सतकोटि अहीसा ॥
तदपि जथाश्रुत कहउँ बखानी ❀ सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी ॥

हे मुनीश्वर, श्रीरामचंद्रजीका चरित अत्यन्त अपार है। सौ करोड़ शेषनाग भी उसे नहीं कह सकते। तोभी सरस्वतीके स्वामी और हाथमें धनुष धारण करनेवाले प्रभु श्रीरामचंद्रजीका स्मरणकर उसे जैसा सुना है, वर्णन कर कहता हूं।

सारद दारुनारि सम स्वामी ❀ राम सूत्रधर अंतरजामी ॥
जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी ❀ कबि-उर-अजिर नचावहिं बानी ॥

हे मुनि, सरस्वती कठपुतलीके समान और अन्तर्यामी राम उसे नचानेवाले सूत्रधार हैं। अपना भक्त जानकर जिसपर कृपा करते हैं उस कविके हृदयरूपी आंगनमें सरस्वतीको नचाया करते हैं।

प्रनवउं सोइ कृपाल रघुनाथा ❀ बरनउं बिसद तासु गुनगाथा ॥
परमरम्य गिरिबर कैलासू ❀ सदा जहां सिव-उमा-निवासू ॥

उन्हीं कृपालु श्रीरामचंद्रजीको प्रणाम करता हूं और उनके गुणोंकी पवित्र कथा वर्णन करता हूं। पर्वतोंमें श्रेष्ठ कैलाश बड़ा ही रमणीक है जहां शिव और पार्वती सदैव रहते हैं।

दो०—सिद्ध तपोधन जोगिजन ❀ सुर किन्नर मुनिबृंद।
बसहिं तहाँ सुकृती सकल ❀ सेवहिं सिव सुखकंद ॥ १२६ ॥

सिद्ध, तपस्वी, योगिजन, देव, किन्नर, मुनिजन और समस्त पुण्यात्मा वहाँ बसते और सुखकी खान शिवजीकी सेवा किया करते हैं।

हरि-हर-बिमुख धरमरति नाहीं ❀ ते नर तँह सपनेहुँ नहिं जाहीं ॥
तेहि गिरि पर बट बिटप बिसाला ❀ नित नूतन सुन्दर सब काला ॥

जो लोग विष्णु और शिवके विमुख हैं और जिन्हें धर्ममें प्रेम नहीं है वे वहां स्वप्नमें भी नहीं जाते उस पर्वतपर बड़का बड़ा भारी वृक्ष है जो सब ऋतुओंमें सुन्दर और नित्य नया रहता है।

त्रिबिध समीर सुसीतल छाया ❀ सिव-बिस्राम-बिटप स्त्रुति गाया ॥
एक बार तेहि तर प्रभु गयऊ ❀ तरु बिलोकि उर अति सुख भयऊ ॥

वहां शीतल, मंद और सुगन्धित वायु चलती है और उसकी छाया बड़ी ही शीतल है। वेदोंने उसे शिवके विश्राम करनेका वृक्ष बतलाया है। एक बार उसके नीचे शिवजी गये। वृक्षको देखकर उनके हृदयमें अत्यन्त सुख हुआ।

निज कर डासि नाग-रिपु-छाला ❀ बैठे सहजहिं संभु कृपाला ॥
कुंद-इंदु-दर-गौर-सरीरा ❀ भुज प्रलंब परिधन मुनिचीरा ॥

अपने हाथोंसे बाघम्बर बिछाकर कृपालु शिव स्वाभाविक रीतिसे बैठ गये। उनका शरीर कुन्दके फूल चन्द्रमा और शंखके समान गौर वर्ण था, भुजाएं लम्बी थीं और वे मुनियों जैसी कौपीन पहने हुए थे।

तरुन-अरुन-अंबुज-सम चरना ❀ नखदुति भगत-हृदय-तम-हरना ॥
भुजग-भूति-भूषण त्रिपुरारी ❀ आनन सरद-चंद-छबि-हारी ॥

नये लाल कमलके समान उनके चरण थे। उनके नखोंकी ज्योति भक्तोंके हृदयका अन्धकार दूर कर देनेवाली है। वे त्रिपुरासुरके शत्रु थे, उनके भूषण भस्म और सर्प थे और उनका मुख शरदऋतुके चन्द्रमाकी शोभाको भी हरण करनेवाला था।

दो०—जटामुकुट सुरसरित सिर ❀ लोचननलिन बिसाल।
नीलकंठ लावन्यनिधि ❀ सोह बालबिधु भाल ॥ १३० ॥

शिरपर जटाओंका मुकुट और गङ्गाजी थीं, उनके बड़े-बड़े नेत्र कमल जैसे थे, उनका कंठ नीला था, मस्तकपर बालचंद्र शोभित था, और वे सुन्दरताके समुद्र थे।

बैठे सोह कामरिपु कैसे ❀ धरे सरीर सांतरस जैसे ॥
पार्वती भल अवसर जानी ❀ गईं संभु पहँ मातु भवानी ॥

कामदेवके शत्रु शिव बैठे हुए कैसी शोभा पाते थे जैसे शांतरस शरीर रखे हुए बैठा हो। अच्छा अवसर जानकर पार्वती, माता भवानी शिवजीके पास गयीं।

जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा ❀ बामभाग आसन हर दीन्हा ॥
बैठीं सिव समीप हरषाई ❀ पूरब-जनम-कथा चित आई ॥

अर्द्धाङ्गिनी जानकर शिवजीने उनका बहुत आदर किया और अपनी बायीं ओर आसन दिया। पार्वतीजी प्रसन्न होकर बैठ गयीं, उस समय उनके चित्तमें पूर्वजन्मकी कथा आयी।

पति हिय-हेतु अधिक अनुमानी ❀ बिहसि उमा बोलीं प्रियबानी ॥
कथा जो सकल-लोक-हितकारी ❀ सोइ पूछन चह सैलकुमारी ॥

पतिके हृदयका कारण भलीभांति समझकर उमा-हँसकर प्यारा वचन बोलीं। जो कथा सब लोकोंका भला करनेवाली है उसे ही पार्वती पूछना चाहती हैं।

बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी ❀ त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी ॥
चर अरु अचर नाग नर देवा ❀ सकल करहिं पद-पंकज-सेवा ॥

हे मेरे स्वामी, हे संसारके स्वामी और हे त्रिपुरके शत्रु, आपकी महिमा तीनों भुवनोंमें विदित है। चर अचर, नाग, मनुष्य और देवता, सब आपके चरणकमलोंकी सेवा करते हैं।

दो०—प्रभु समरथ सरबग्य सिव * सकल - कला - गुन - धाम।
जोग-ग्यान-बैराग्य - निधि * प्रनतकलपतरु नाम ॥ १३१ ॥

हे प्रभो, आप सामर्थ्यवान, सर्वज्ञ, कल्याणकारी, समस्त विद्याओं और गुणोंके घर तथा योग, ज्ञान और वैराग्यके भाण्डार हो। आपका नाम भक्तोंके लिये कल्पतरु है।

जौं मोपर प्रसन्न सुखरासी * जानिय सत्य मोहि निज दासी ॥
तौ प्रभु हरहु मोर अग्याना * कहि रघुनाथकथा बिधि नाना ॥

हे सुखराशि शिव, यदि मुझपर प्रसन्न हो और मुझे सत्य ही अपनी दासी जानते हो तो हे प्रभो, श्रीरामचन्द्रजीकी अनेक प्रकारकी कथा कहकर मेरा अज्ञान दूर करो।

जासु भवन सुरतरु तर होई * सह कि दरिद्रजनित दुख सोई ॥
ससिभूषन अस हृदय बिचारी * हरहु नाथ मम मतिभ्रम भारी ॥

जिसका घर कल्पवृक्षके नीचे हो, वह क्या दरिद्रताका दुःख सहेगा ? हे चंद्रमाका भूषण धारण करनेवाले स्वामी, ऐसा हृदयमें विचारकर मेरी बुद्धिका भारी भ्रम दूर करो।

प्रभु जे मुनि परमारथबादी * कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी ॥
सेष सारदा बेद पुराना * सकल करहिं रघुपति-गुन-गाना ॥

हे प्रभो, परमार्थतत्वको जाननेवाले जो मुनि हैं वे रामको अनादि ब्रह्म कहते हैं। शेष, शारदा, वेद और पुराण, सब श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते हैं।

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती * सादर जपहु अनंगआराती ॥
राम सो अवध-नृपति-सुत सोई * की अज अगुन अलखगति कोई ॥

फिर हे कामदेवके शत्रु, आप दिनरात आदरपूर्वक राम राम जपते हो। ये राम क्या वही हैं जो अयोध्याके राजाके पुत्र हैं या कोई और जो जन्मरहित और निर्गुण हैं और जिनकी गति नहीं दिखायी देती।

दो०—जौं नृपतनय तो ब्रह्म किमि * नारिबिरह मतिभोरि।
देखि चरित महिमा सुनत * भ्रमति बुद्धि अति मोरि ॥१३२॥

यदि राजाके पुत्र हैं तो ब्रह्म कैसे हैं ? क्योंकि स्त्रीके वियोगमें उनकी बुद्धि बावली हो गयी थी। उनका चरित देखकर और महिमा सुनकर मेरी बुद्धिको अत्यन्त भ्रम होता है।

जौं अनीह ब्यापक बिभु कोऊ * कहहु बुझाइ नाथ मोहि सोऊ ॥
अग्य जानि रिस उर जनि धरहू * जेहि बिधि मोह मिटइ सोइ करहू ॥

यदि वे कोई इच्छारहित व्यापक ब्रह्म हैं तो हे नाथ, मुझे यह भी समझाकर कहो। अज्ञानी जानकर हृदयमें क्रोध न कीजिये, जिस प्रकार मेरा मोह दूर हो, वही कीजिये।

मैं बन दीखि रामप्रभुताई ❀ अति-भय-बिकल न तुम्हहिं सुनाई॥
तदपि मलिनमन बोध न आवा ❀ सो फलु भली भांति हम पावा॥

मैंने वनमें श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुता देखी थी, परन्तु भयसे अत्यन्त व्याकुल होनेके कारण उसे आपको नहीं सुनाया था। तो भी मलिन मनमें ज्ञान न हुआ, उसका फल मैंने भलीभांति पा लिया।

अजहूं कछु संसय मन मोरे ❀ करहु कृपा बिनवउँ करजोरे॥
प्रभु तब मोहि बहुभांति प्रबोधा ❀ नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा॥

अब भी मेरे मनमें कुछ संशय है। हाथ जोड़कर विनती करती हूं, कृपा कीजिये। हे प्रभो, आपने मुझे उस समय अनेक प्रकारसे समझाया था, हे नाथ, वही सोचकर क्रोध मत कीजिये।

तब कर अस बिमोह अब नाहीं ❀ रामकथा पर रुचि मन माहीं॥
कहहु पुनीत राम-गुन-गाथा ❀ भुजंग-राज-भूषन सुरनाथा॥

उस समय जैसा अज्ञान अब नहीं है और मनमें श्रीरामकथा सुननेकी रुचि है। हे सर्पराजभूषण, देवनाथ, आप श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र गुणोंकी कथा कहो।

दो०—बंदउँ पद धरि धरनि सिरु ❀ बिनय करउँ करजोरि।
बरनहु रघुबर-बिसद-जस ❀ स्रुतिसिद्धान्त निचोरि॥१२२

पृथ्वीपर शिर रखकर मैं आपके चरणोंकी वन्दना करती हूं और हाथ जोड़कर विनती करती हूं कि श्रीरामचन्द्रजीका उज्ज्वल यश वेदके सिद्धान्तको निचोड़कर वर्णन कीजिये।

जदपि जोषिता अन अधिकारी ❀ दासी मन क्रम बचन तुम्हारी॥
गूढ़उ तत्त्व न साधु दुरावहिं ❀ आरत अधिकारी जहँ पावहिं॥

यद्यपि स्त्रीको सुननेका अधिकार नहीं है तथापि मैं मन, वचन और कर्मसे आपकी दासी हूं। अत्यन्त आतुर अधिकारीको जहां पाते हैं वहां साधुजन गूढ़ तत्त्वको भी नहीं छिपाते।

अतिआरति पूछउँ सुरराया ❀ रघुपतिकथा कहहु करि दाया॥
प्रथम सो कारण कहहु बिचारी ❀ निर्गुन ब्रह्म सगुन बपु धारी॥

हे देवताओंके राजा, अत्यन्त प्रेमसे मैं पूछती हूं। आप दया करके श्रीरामचन्द्रजीकी कथा कहिये। पहिले विचारकर वह कारण बतलाइये, जिससे निर्गुण ब्रह्म सगुण शरीर धारण किया करता है।

पुनि प्रभु कहहु रामअवतारा ❀ बालचरित पुनि कहहु उदारा ॥
कहहु जथा जानकी बिबाही ❀ राज तजा सो दूषन काही ।

फिर हे प्रभो, श्रीरामके अवतारकी कथा कहिये और फिर उदार बालचरितकी । जानकीके साथ जैसे विवाह किया, वह कहिये और यह भी कहिये कि उन्होंने जो राज्य छोड़ा वह किस दोषसे ?

बन बसि कीन्हे चरित अपारा ❀ कहहु नाथ जिमि रावन मारा ॥
राज बैठि कीन्ही बहु लीला ❀ सकल कहहु संकर सुखसीला ॥

वनमें वसकर उन्होंने जो अपार चरित किये और जिस प्रकार रावणको मारा, हे नाथ, उसे कहिये । राजगद्दीपर बैठकर उन्होंने बहुतसी लीलाएं की थीं । हे सुखशील शंकरजी, सब कहिये ।

दो०—बहुरि कहहु करुनायतन ❀ कीन्ह जो अचरज राम ।
प्रजा सहित रघु-बंस-मनि ❀ किमि गवने निजधाम ॥ १३४ ॥

फिर हे कृपानिधान, श्रीरामचन्द्रजीने जो आश्चर्य किया उसे कहिये कि किस प्रकार अपनी प्रजासहित रघुवंशमें मणिस्वरूप श्रीरामचन्द्रजी वैकुण्ठको गये ।

पुनि प्रभु कहहु सो तत्त्व बखानी ❀ जेहि बिग्यान मगन मुनि ग्यानी ॥
भगति ग्यान बिग्यान बिरागा ❀ पुनि सब बरनहु सहित बिभागा ॥

हे प्रभो, फिर आप उस तत्त्वको वर्णन कर कहिये जिसके ज्ञानमें ज्ञानी मुनिजन मग्न रहते हैं । फिर विभागोंसहित भक्ति, ज्ञान, विज्ञान और वैराग्य, सबका वर्णन कीजिये ।

अउरउ रामरहस्य अनेका ❀ कहहु नाथ अतिबिमल बिबेका ॥
जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई ❀ सोउ दयाल राखहु जनि गोई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके और भी अनेक चरित हैं, उनको और अत्यन्त निर्मल ज्ञानकी बातोंको हे नाथ कहिये । हे प्रभो, जिस बातको मैंने पूछा नहीं है उसे भी हे दयालु, छिपा न रखिये ।

तुम्ह त्रिभुवनगुरु बेद बखाना ❀ आन जीव पावँर का जाना ॥
प्रस्न उमा कर सहज सुहाई ❀ छलबिहीन सुनि सिवमन भाई ॥

वेदोंने कहा है कि आप तीनों भुवनोंके गुरु हैं । दूसरे नीच जीव क्या जानें ? उमाका स्वभावतः सुन्दर और छलरहित प्रश्न सुनकर शिवजीके मनको वे बहुत अच्छी लगीं ।

हरहिय रामचरित सब आये ❀ प्रेम पुलक लोचन जल छाये ॥
श्री - रघुनाथ - रूप उर आवा ❀ परमानन्द अमित सुख पावा ॥

शिवजीके हृदयमें श्रीरामके समस्त चरितोंका स्मरण हो आया। प्रेमसे वे पुलकायमान हो गये और नेत्रोंमें जल छा गया। उनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीका स्वरूप आ गया और उन्हें अत्यन्त आनन्द और असीम सुख हुआ।

दो०—मगन ध्यानरस दंड जुग ❀ पुनि मन बाहेर कीन्ह।
रघुपतिचरित महेस तब ❀ हरषित बरनइ लीन्ह॥ १२५॥

ध्यानके आनंदमें दो घड़ीतक मग्न रहकर फिर उससे अपना मन अलग किया और तब प्रसन्न होकर महादेवजी श्रीरामचरित वर्णन करने लगे।

(शिवजीकी भूमिका)

झूठउ सत्य जाहि बिनु जाने ❀ जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने॥
जेहि जाने जग जाइ हेराई ❀ जागे जथा सपनभ्रम जाई॥

जिसको जाने बिना झूठ भी सत्य प्रतीत होने लगता है जैसे रस्सीको पहिचाने बिना सांप। जिसके जाननेसे संसार छूट जाता है जैसे जागनेपर स्वप्नका भ्रम चला जाता है।

बंदउँ बालरूप सोइ रामू ❀ सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू॥
मंगलभवन अमंगलहारी ❀ द्रवउ सो दसरथ-अजिर-बिहारी॥

रामके बालस्वरूपकी वंदना करता हूं जिनका नाम जपनेसे सभी सिद्धियां सुलभ हो जाती हैं। जो कल्याणके घर हैं और जो अनिष्टोंको हरण कर लेनेवाले हैं वे राजा दशरथके आंगनमें विहार करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी दया करें।

करि प्रनाम रामहिं त्रिपुरारी ❀ हरषि सुधासम गिरा उचारी॥
धन्य धन्य गिरि-राज-कुमारी ❀ तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी॥

श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम कर और प्रसन्न होकर शिवजीने अमृतके समान वाणीसे कहा कि हे पार्वती, तुम धन्य हो, धन्य हो। तुम्हारे समान उपकारी कोई नहीं है।

पूछेहु रघुपति-कथा-प्रसंगा ❀ सकल लोक जग पावनि गंगा॥
तुम्ह रघुबीर - चरन - अनुरागी ❀ कीन्हिहु प्रस्न जगतहित लागी॥

तुमने श्रीरामचन्द्रजीकी कथाका प्रसंग पूछा है, जो समस्त लोकों और संसारको पवित्र करनेके लिये गंगाके समान है। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें तुम्हारा प्रेम है और संसारके कल्याणके लिये तुमने यह प्रश्न किया है।

दो०—रामकृपा तें पारबति ❀ सपनेहु तव मन माहिं।
सोक-मोह-संदेह भ्रम ❀ मम बिचार कछु नाहिं ॥१३६॥

हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मेरे विचारसे तुम्हारे मनमें स्वप्नमें भी शोक, मोह, संदेह और भ्रम कुछ भी नहीं है।

तदपि असंका कीन्हिहु सोई ❀ कहत सुनत सब कर हित होई ॥
जिन्ह हरिकथा सुनी नहिं काना ❀ स्रवनरंध्र अहिभवन समाना ॥

तोभी तुमने वही शंका की है जिसके कहनेसे और सुननेसे सबका कल्याण हो। जिन्होंने अपने अपने कानोंसे भगवानकी कथा नहीं सुनी उनके कानोंके छिद्र सर्पके बिलके समान हैं।

नयनन्हि संतदरस नहिं देखा ❀ लोचन मोरपंख कर लेखा ॥
ते सिर कटु तुंबरि सम तूला ❀ जे न नमत हरि-गुरु-पद-मूला ॥

जिन्होंने नेत्रोंसे साधुओंके दर्शन नहीं किये उनके नेत्र मोरके पंखोंपर लिखे हुए नेत्रोंके समान हैं। जो हरि और गुरुके चरणोंमें नहीं झुक जाते वे शिर कड़वी तुम्बीके समान व्यर्थ हैं।

जिन्ह हरिभगति हृदय नहिं आनी ❀ जीवत सब समान तेइ प्रानी ॥
जो नहिं करइ राम-गुन-गाना ❀ जीह सो दादुरजीह समाना ॥

जिन्होंने हृदयमें भगवानकी भक्तिको धारण नहीं किया वे प्राणी जीते हुए भी मुर्देके समान हैं। जो श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान नहीं करती वह जीभ मेढककी जीभके समान है।

कुलिसकठोर निठुर सोइ छाती ❀ सुनि हरिचरित न जो हरषाती ॥
गिरिजा सुनहु राम कै लीला ❀ सुरहित दनुज-बिमोहन-सीला ॥

वह छाती वज्रके समान कठोर और निष्ठुर है जो भगवान्का चरित सुनकर प्रसन्न नहीं होती। हे पार्वती, देवताओंका कल्याण करने और राक्षसोंको मोहित करनेवाली श्रीरामचन्द्रजीकी लीला सुनो।

दो०—रामकथा सुरधेनु सम ❀ सेवत सब-सुख-दानि।
सतसमाज सुरलोक सब ❀ को न सुनइ अस जानि ॥१३७॥

श्रीरामकथा सेवा करते ही सब सुखोंको देनेवाली कामधेनुके समान है जिसका ...लोक सब संतोंका समाज है। यही जानकर उसे कौन नहीं सुनेगा?

रामकथा सुन्दर करतारी ❀ संसयबिहग उड़ावनहारी ॥
रामकथा कलि-बिटप-कुठारी ❀ सादर सुनु गिरिराजकुमारी ॥

श्रीरामकथा हाथकी सुन्दर तालीके समान है, जो संदेहरूपी पक्षियोंको उड़ानेवाली है। श्रीरामकथा कलियुगरूपी वृक्षके लिये कुठार है। हे पार्वती, उसे आदरपूर्वक सुनो।

राम - नाम - गुन - चरित सुहाये ❀ जनम करम अगनित श्रुति गाये॥
जथा अनंत राम भगवाना ❀ तथा कथा कीरति गुन नाना॥

श्रीरामचन्द्रजीके नाम, गुण, सुन्दर चरित, जन्म और कर्म, सबको वेदोंने असंख्य बतलाया है। जिस प्रकारसे भगवान् राम अनन्त हैं वैसे ही उनकी कथा, कीर्ति और गुण, सब अनेक हैं।

तदपि जथाश्रुत जसि मति मोरी ❀ कहिहउँ देखि प्रीति अति तोरी॥
उमा प्रस्न तव सहज सुहाई ❀ सुखद संतसंमत मोहि भाई॥

तोभी जैसा सुना है और जैसी मेरी बुद्धि है, उसके अनुसार तुम्हारा अत्यन्त प्रेम देखकर कहूंगा हे उमा, तुम्हारा प्रश्न स्वभावतः सुन्दर, सुखदायक तथा संतजनोंके मतानुकूल है और मुझे अच्छा लगा है।

एक बात नहिं मोहि सुहानी ❀ जदपि मोहबस कहेहु भवानी॥
तुम्ह जो कहा राम कोउ आना ❀ जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना॥

यद्यपि, हे भवानी, तुमने उसे अज्ञानसे कहा है तथापि एक बात मुझे अच्छी नहीं लगी। तुमने जो यह कहा कि वे राम कोई दूसरे हैं जिन्हें वेद गाते हैं और जिनका मुनिजन ध्यान करते हैं।

दो०—कहहिं सुनहिं अस अधम नर ❀ ग्रसे जे मोहपिसाच।
पाखंडी हरि-पद-बिमुख ❀ जानहिं झूठ न साच॥ १३८॥

जिन्हें मोहरूपी पिशाचने घेर लिया है, जो पाखण्डी और भगवान्के चरणोंसे विमुख हैं, और जो झूठ और सत्य नहीं जानते ऐसे ही नीच मनुष्य वैसा कहते और सुनते हैं।

अग्य अकोबिद अंध अभागी ❀ काई बिषय मुकुर मन लागी॥
लंपट कपटी कुटिल बिसेखी ❀ सपनेहु संतसभा नहिं देखी॥

जो अज्ञानी, मूर्ख, अंधे और अभागे हैं, जिनके मनरूपी दर्पणपर विषयरूपी मैल लग रहा है, जो लंपट, कपटी और बड़े दुष्ट हैं, जिन्होंने स्वप्नमें भी संतजनोंकी सभाको नहीं देखा है।

कहहिं ते बेद असंमत बानी ❀ जिन्हहिं न सूझ लाभ नहिं हानी॥
मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना ❀ रामरूप देखहिं किमि दीना॥

और जिन्हें न लाभ दिखलायी पड़ता है और न हानि, वे ही ऐसी वेदविरुद्ध बात कहते हैं। जिनका मनरूपी दर्पण मैला हो और जो आंखोंसे हीन हों, उन बेचारोंको श्रीरामचन्द्रजीका स्वरूप कैसे दिखलायी पड़ सकता है?

जिन्ह के अगुन न सगुन बिबेका ❀ जलपहिं कलपित बचन अनेका ॥
हरि-माया-बस-जगत भ्रमाहीं ❀ तिन्हहिं कहत कछु अघटित नाहीं॥

जिनको निर्गुण और सगुणका ज्ञान नहीं है, जो अनेक मिथ्या बातें बकते हैं और जो भगवान्‌की मायाके वश होकर संसारमें भ्रमते फिरते हैं उनके लिये कुछ भी कहना असम्भव नहीं है।

बातुल भूत बिबस मतवारे ❀ ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे ॥
जिन्ह कृत महा-मोह-मद-पाना ❀ तिन्ह कर कहा करिय नहिं काना ॥

जिन्हें वायु (सन्निपात) हो गया हो, जिन्हें भूत लगा हो, जो परवश हो गये हों और जिन्होंने महा-अज्ञानरूपी मंदिराको पिया हो वे विचारकर वचन नहीं बोलते। उनके कहनेपर कान नहीं देना चाहिये।

सो०—अस निज हृदय बिचारि ❀ तजु संसय भजु रामपद ॥
सुनु गिरि-राज-कुमारि ❀ भ्रम-तम-रबि-कर बचन मम॥१३६॥

ऐसा अपने हृदयमें विचारकर संशय छोड़ो और श्रीरामके चरणोंको भजो। हे पार्वती, भ्रमके अन्धकार के लिये सूर्यकी किरणोंके समान मेरे वचनोंको सुनो।

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा ❀ गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा ॥
अगुन अरूप अलख अज जोई ❀ भगत-प्रेम-बस सगुन सो होई ॥

वेद, पुराण, मुनि और पण्डित गाते हैं कि सगुण और निर्गुणमें कुछ भेद नहीं है। जो अदृश्य, अजन्मा और रूपहीन है वही निर्गुण है, भक्तोंके प्रेमके वश होकर वही सगुण हो जाता है।

जो गुन रहित सगुन सोइ कैसे ❀ जलु हिम उपल बिलग नहिं जैसे ॥
जासु नाम भ्रम - तिमिर - पतंगा ❀ तेहि किमि कहिय बिमोह प्रसंगा ॥

जो निर्गुण है, सगुण भी वही उसी प्रकार है जिस प्रकार जल, हिम और ओले भिन्न नहीं। जिसका नाम भ्रमरूपी अन्धकारके लिये सूर्यके समान है उसे मोहसे सम्पर्क हो, यह कैसे कहा जा सकता है।

राम सच्चिदानंद दिनेसा ❀ नहिं तहँ मोह-निसा लव-लेसा ॥
सहज प्रकासरूप भगवाना ❀ नहिं तहँ पुनि बिज्ञान बिहाना ॥

सच्चिदानंद राम सूर्यके समान हैं, वहां मोहरूपी रात्रिका लेशमात्र भी नहीं है। भगवान् स्वभावसे ही प्रकाशरूप हैं, फिर वहां ज्ञानरूप प्रातःकाल नहीं होता।

हरष बिषाद ग्यान अग्याना ❀ जीव धरम अहमिति अभिमाना ॥
राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना ❀ परमानंद परेस पुराना ॥

हर्ष, विषाद, ज्ञान, अज्ञान, अहंकार और अभिमान,—ये सब बातें जीवका धर्म है। संसार जानता है कि श्रीरामचन्द्रजी परमानन्द, ब्रह्मा आदिके स्वामी, पुराण पुरुष और व्यापक ब्रह्म हैं।

दो०—पुरुष प्रसिद्ध प्रकासनिधि ❁ प्रगट परावरनाथ।
रघु-कुल-मनि मम स्वामि सोइ ❁ कहि सिव नायउ माथ॥ १४०॥

जो पुरुष नामसे प्रसिद्ध हैं, जो प्रकाशका प्रकट भाण्डार हैं और जो इस सृष्टि और परलोकके भी स्वामी हैं वही रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं। यह कहकर शिवजीने मस्तक नवाया।

निज भ्रम नहिं समुझहिं अग्यानी ❁ प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी॥
जथा गगन घनपटल निहारी ❁ झँपेउ भानु कहहिं कुबिचारी॥

अज्ञानी अपने भ्रमके कारण नहीं समझते और वे मूर्ख प्राणी प्रभुपर मोह धरते हैं; जैसे आकाशमें बादलोंको देखकर बुरे विचारवाले लोग कहते हैं कि सूर्य छिप गया।

चितव जो लोचन अंगुलि लाये ❁ प्रगट जुगल ससि तेहि के भाये॥
उमा रामबिषयक अस मोहा ❁ नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा॥

आंखमें उंगली लगाकर जो देखता है उसके हिसाबसे तो दो चंद्रमा दिखलायी ही देते हैं।—हे उमा, श्रीरामचन्द्रजीके मोहकी बात ऐसी ही है जैसे आकाशमें धूल और धुएंका अन्धकार होता है।

बिषय करन सुर जीव समेता ❁ सकल एक तें एक सचेता॥
सब कर परम प्रकासक जोई ❁ राम अनादि अवधपति सोई॥

विषय, इन्द्रियां, देवता और जीव—ये सब एकसे एक चेतन होते हैं। इन सबका परम प्रकाशक, सबमें चेतनता लानेवाला जो है वही अयोध्याके राजा अनादि पुरुष श्रीरामचन्द्रजी हैं।

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू ❁ मायाधीस ग्यान-गुन-धामू॥
जासु सत्यता तें जड़ माया ❁ भास सत्य इव मोहसहाया॥

श्रीरामचन्द्रजी प्रकाशक हैं और संसार प्रकाश्य है। वे मायाके स्वामी और ज्ञान एवं गुणोंके घर हैं, जिसकी सचाईसे जड़ माया मोहकी सहायता पाकर सत्य जैसी प्रतीत होती है।

दो०—रजत सीप महुँ भास जिमि ❁ जथा भानु कर बारि।
जदपि मृषा तिहुँ काल सोइ ❁ भ्रम न सकइ कोउ टारि॥ १४१॥

जैसे चांदी सीपमें तथा पानी सूर्यकी किरणोंमें प्रतीत होता है, यद्यपि तीनों कालमें ये सब मिथ्या होते हैं तथापि भ्रमको कोई दूर नहीं कर सकता।

एहि बिधि जग हरिआस्रित रहई ❀ जदपि असत्य देत दुख अहई ॥
जौं सपने सिर काटइ कोई ❀ बिनु जागे न दूरि दुख होई ॥

इस प्रकार संसार भगवान्के अधीन रहता है। यद्यपि यह असत्य है तथापि दुःख देता रहता है। जैसे यदि कोई स्वप्नमें सिर काट ले तो जागे बिना उसका दुःख दूर नहीं होता।

जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई ❀ गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई ॥
आदि अंत कोउ जासु न पावा ❀ मति अनुमान निगम अस गावा ॥

हे उमा, जिसकी कृपासे ऐसा भ्रम दूर हो जाता है वही कृपालु श्रीरामचन्द्रजी हैं। जिसका किसीने आदि और अन्त नहीं पाया और वेदोंने अपनी बुद्धिके अनुसार ऐसा कहा है कि—

बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना ❀ कर बिनु करम करइ बिधि नाना ॥
आननरहित सकल-रस-भोगी ❀ बिनु बानी बकता बड़ जोगी ॥

वह विना पैरोंके चलता है, विना कानोंके सुनता है, हाथों बिना अनेक प्रकारके कर्म करता है। मुख विना सब रसोंका भोग करता है, वाणी विना ही बड़ा वक्ता और योगी है।

तन बिनु परस नयन बिनु देखा ❀ ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेखा ॥
असि सब भाँति अलौकिक करनी ❀ महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥

शरीर विना स्पर्श करता है, नेत्र विना देखता है और नाक बिना समस्त प्रकारकी गंध सूंघ लेता है। उसकी ऐसी करनी सब प्रकारसे अलौकिक है और उसकी महिमा नहीं वर्णन की जा सकती।

दो०—जेहि इमि गावहिं बेद बुध ❀ जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथसुत भगत हित ❀ कोसलपति भगवान ॥ १४२ ॥

वेद और पण्डित जिसे इस प्रकार गाते हैं और मुनिजन जिनका ध्यान करते हैं वही भक्तके हितकारी कोशलपति दशरथके पुत्र भगवान् श्रीरामचंद्रजी हैं।

कासी मरत जंतु अवलोकी ❀ जासु नामबल करउँ बिसोकी ॥
सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी ❀ रघुबर सब उर अंतरजामी ॥

काशीमें प्राणियोंको मरता हुआ देखकर जिसके नामके वलसे मैं उन्हें शोकरहित कर देता हूं—वही प्रभु, सबके हृदयोंमें व्यापक, श्रीरामचंद्रजी मेरे और चराचरके स्वामी हैं।

बिबसहु जासु नाम नर कहहीं ❀ जनम अनेक सँचित अघ दहहीं ॥
सादर सुमिरन जे नर करहीं ❀ भवबारिधि गोपद इव तरहीं ॥

जिनका नाम बेबस होकर भी यदि मनुष्य कहते हैं तो अनेक जन्मोंके पाप भस्म हो जाते हैं। जो मनुष्य आदरपूर्वक स्मरण करते हैं वे संसाररूपी समुद्रको गायके खुरके गढ़ेके समान पार कर जाते हैं।

राम सो परमातमा भवानी ❀ तहँ भ्रम अति अबिहित तव बानी ॥
अस संसय आनत उर माहीं ❀ ग्यान बिराग सकल गुन जाहीं ॥

हे स्वामी, श्रीरामचन्द्रजी वही परमात्मा हैं। उनके विषयमें भ्रम करना और तुम्हारा वह कहना अत्यन्त अयोग्य है। हृदयमें ऐसा संदेह लाते ही ज्ञान, वैराग्य और सब गुण चले जाते हैं।

सुनि सिवके भ्रमभंजन बचना ❀ मिटि गइ सब कुतरक कै रचना ॥
भइ रघुपति-पदप्रीति प्रतीती ❀ दारुन असंभावना बीती ॥

भ्रमको नष्ट कर देनेवाले शिवजीके वचन सुनकर कुतर्ककी सारी रचना दूर हो गयी। श्रीरामचंद्रजी-के चरणोंमें प्रीति और विश्वास उत्पन्न हुआ और कठोर संशय मिट गया।

दो० पुनि पुनि प्रभु-पद-कमल गहि ❀ जोरि पंकरुहपानि।
बोलीं गिरिजा बचन बर ❀ मनहुँ प्रेमरस सानि ॥ १४३ ॥

बारम्बार शिवजीके चरणकमलोंको पकड़कर और अपने करकमलोंको जोड़कर पार्वतीजी मानों प्रेमरस-में सानकर ये सुन्दर वचन बोलीं।

ससि कर सम सुनि गिरा तुम्हारी ❀ मिटा मोह सरदातप भारी ॥
तुम्ह कृपाल सबु संसय हरेऊ ❀ रामसरूप जानि मोहि परेऊ ॥

चंद्रमाकी किरणोंके समान आपकी वाणी सुनकर शरद ऋतुकी धूपके समान मेरा भारी मोह दूर हो गया। हे कृपालु, आपने सब संशय दूर कर दिया और मुझे श्रीरामका स्वरूप जान पड़ा।

नाथ कृपा अब गयउ बिषादा ❀ सुखी भयउँ प्रभु-चरन-प्रसादा ॥
अब मोहि आपनि किंकरि जानी ❀ जदपि सहज जड़ नारि अयानी ॥

हे स्वामी, आपकी कृपासे अब दुःख दूर हुआ और प्रभुके चरणोंके प्रसादसे मैं सुखी हुई। यद्यपि स्वभावसे ही मूर्ख और अज्ञान स्त्री हूँ तथापि अब मुझे अपनी दासी जानकर—

प्रथम जो मैं पूछा सोइ कहहू ❀ जौं मो पर प्रसन्न प्रभु अहहू ॥
राम ब्रह्म चिन्मय अबिनासी ❀ सर्ब रहित सब-उर-पुर-बासी ॥

जो मैंने पहिले पूछा था उसे कहिये, यदि आप हे प्रभो, मुझपर प्रसन्न हों। श्रीरामचंद्रजी ब्रह्म हैं, चैतन्यरूप हैं, अविनाशी हैं, सबसे अलग हैं, और सबके हृदयरूपी नगरमें बसते हैं।

नाथ धरेउ नरतनु केहि हेतू ❁ मोहि समुझाइ कहहु बृषकेतू ॥
उमाबचन सुनि परम बिनीता ❁ राम कथा पर प्रीति पुनीता ॥

हे नाथ, उन्होंने मनुष्यका शरीर किस कारण रखा ? हे महादेव, मुझे समझाकर कहो। उमाके अत्यन्त नम्र वचन सुनकर और श्रीरामकथापर पवित्र प्रीति देखकर—

दो०—हिय हरषे कामारि तब ❁ संकर सहज सुजान।
बहु बिधि उमहि प्रसंसि पुनि ❁ बोले कृपानिधान ॥ १४४ ॥

तब कामदेवके शत्रु, सहजसुजान, कृपानिधान शिव हृदयमें प्रसन्न हुए और फिर अनेक प्रकारसे उमाकी प्रशंसा कर बोले।

(रामावतारके कारण)

सो०—सुनु सुभ कथा भवानि ❁ राम - चरित - मानस बिमल ॥
कहा भुसुंडि बखानि ❁ सुना बिहगनायक गरुड़ ॥ १४५ ॥

हे भवानी, निर्मल रामचरितमानसकी शुभकथा सुनो। उसे कागभुशुण्डीने वर्णन कर कहा और पक्षियोंके राजा गरुड़ने सुना था।

सो संबाद उदार ❁ जेहि बिधि भा आगे कहब।
सुनहु रामअवतार ❁ चरित परम सुन्दर अनघ ॥ १४६ ॥

यह उदार संवाद जिस प्रकार हुआ, वह आगे कहूंगा। श्रीरामचन्द्रजीके अवतारका अत्यन्त सुन्दर और निष्पाप चरित सुनो।

हरिगुन नाम अपार ❁ कथारूप अगनित अमित।
मैं निज - मति - अनुसार ❁ कहउं उमा सादर सुनहु ॥ १४७ ॥

भगवान्के नाम और गुण अपार हैं, उनकी कथा और रूप असंख्य और असीम हैं। मैं अपनी मतिके अनुसार कहता हूं। हे उमा, आदरपूर्वक सुनो।

सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाये ❁ बिपुल बिसद निगमागम गाये ॥
हरि अवतार हेतु जेहि होई ❁ इदमित्थं कहि जाइ न सोई ॥

हे गिरिजा, भगवान्के सुन्दर चरित सुनो, जो विस्तृत और निर्मल है और जिन्हें वेदों और शास्त्रोंने गाया है। जिस कारण भगवान्का अवतार होता है उसे यह नहीं कहा जा सकता कि वह ऐसा ही है।

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी ❁ मत हमार अस सुनहि सयानी ॥
तदपि संत मुनि बेद पुराना ❁ जस कछु कहहिं स्व-मति-अनुमाना ॥

हे सयानी, सुनो, ऐसा मेरा मत है कि यद्यपि बुद्धि, मन और वचनसे श्रीरामचंद्रजी तर्कसे परे हैं तथापि संतजन, मुनि, वेद-पुराण अपनी अपनी मतिके अनुसार जैसा कुछ कहते हैं।

तस मैं सुमुखि सुनावउँ तोही ❀ समुझि परइ जस कारन मोही ॥
जब जब होइ धरम कै हानी ❀ बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥

और जैसा कारण मुझे समझ पड़ता है, हे सुमुखि, वैसा मैं तुम्हें सुनाता हूं। जब-जब धर्मकी हानि होती है और नीच अभिमानी असुर बढ़ते हैं।

करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ❀ सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा ❀ हरहिं कृपानिधि सज्जनपीरा ॥

वे ऐसे अन्याय करते हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता, और ब्राह्मण, गाय, देवता और पृथ्वी, सब दुःख पाते हैं; तब-तब कृपानिधान प्रभु अनेक प्रकारका शरीर धारणकर सज्जनोंकी पीड़ा हरण किया करते हैं।

दो०—असुर मारि थापहिं सुरन्ह ❀ राखहिं निज - स्रुति-सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जस ❀ रामजनम कर हेतु ॥१४८॥

राक्षसोंको मारकर देवताओंको स्थापित करते हैं, अपने वेदोंकी मर्यादाकी रक्षा करते हैं, संसारमें अपना उज्ज्वल यश फैलाते हैं, श्रीरामचन्द्रजीके जन्मका कारण यही है।

सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं ❀ कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं ॥
रामजनम कै हेतु अनेका ❀ परम बिचित्र एक तें एका ॥

वही यश गाकर भक्तजन संसारसे तर जाते हैं। कृपासागर भगवान् भक्तोंके हितके लिये शरीर धारण करते हैं। श्रीरामके जन्मके अनेक कारण हैं और वे सब एकसे एक बढ़कर अत्यन्त विचित्र हैं।

जनम एक दुइ कहउँ बखानी ❀ सावधान सुनु सुमति भवानी ॥
द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ ❀ जय अरु बिजय जान सब कोऊ ॥

एक दो जन्मोंकी कथा वर्णन कर कहता हूं। हे सुन्दर बुद्धिवाली भवानी, सावधान होकर सुनो। भगवान् विष्णुके प्यारे दो द्वारपाल जय और विजय हैं। उन्हें सब कोई जानता है।

बिप्रसाप तें दूनउ भाई ❀ तामस असुर देह तिन्ह पाई ॥
कनककसिपु अरु हाटकलोचन ❀ जगत बिदित सुर-पति-मद मोचन ॥

उन दोनों भाइयोंने ब्राह्मणके शापसे तामस दैत्य शरीर पाया। एकका नाम हिरण्यकश्यप और दूसरेका हिरण्याक्ष। ये इन्द्रके गर्वको दूर करनेवाले सारे संसारमें प्रसिद्ध हुए।

बिजई समर बीर बिख्याता ❀ धरि बराह बपु एक निपाता ॥
होइ नरहरि दूसर पुनि मारा ❀ जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा ॥

ये युद्धमें विजय पानेवाले और प्रसिद्ध वीर थे। इनमेंसे एक हिरण्याक्षको भगवान्‌ने वाराहका शरीर धारण कर मार डाला। फिर दूसरेको नरसिंहरूप धारण कर मारा और भक्त प्रह्लादके सुयशको फैलाया।

दो०—भये निसाचर जाइ तेइ ❀ महाबीर बलवान।
कुंभकरन रावन सुभट ❀ सुरबिजई जग जान ॥१४९॥

यही दोनों जाकर महावीर, बलवान, योद्धा और देवताओंको विजय करनेवाले राक्षस रावण और कुम्भकरण हुए, जिन्हें संसार जानता है।

मुकुत न भये हते भगवाना ❀ तीनि जनम द्विजबचन प्रमाना ॥
एक बार तिन्हके हित लागी ❀ धरेउ सरीर भगत अनुरागी ॥

भगवान्‌द्वारा मारे जानेपर भी उनकी मुक्ति नहीं हुई; क्योंकि ब्राह्मणोंका शाप तीन जन्मतकके लिये था। एक बार उनके हितके लिये भक्तोंसे प्रेम करनेवाले भगवान्‌ने शरीर धारण किया।

कस्यप अदिति तहां पितु माता ❀ दसरथ कौसल्या बिख्याता ॥
एक कलप एहि बिधि अवतारा ❀ चरित पवित्र किए संसारा ॥

वहां उनके मातापिता कश्यप और अदिति थे, जो दशरथ और कौशल्याके नामसे प्रसिद्ध हुए। एक कल्पमें इस प्रकार भगवान्‌ने अवतार लिया और अपने चरितसे संसारको पवित्र किया।

एक कलप सुर देखि दुखारे ❀ समर जलंधर सन सब हारे ॥
संभु कीन्ह संग्राम अपारा ❀ दनुज महाबल मरइ न मारा ॥
परम सती असुराधिपनारी ❀ तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी ॥

एक कल्पमें सब देवताओंको—जो युद्धमें जलंधर नामके दैत्यसे हार गये थे—दुःखी देखकर, शिवजीने उसके साथ अपार संग्राम किया, परन्तु वह महाबलवान राक्षस मारे न मरता था। उस राक्षसराजकी पत्नी अत्यन्त सती थी, जिसके बलके कारण शिवजी उसे जीत न सकते थे।

दो०—छल करि टारेउ तासु ब्रत ❀ प्रभु सुरकारज कीन्ह।
जब तेहि जानेउ मरमु तब ❀ साप कोप करि दीन्ह ॥१५०॥

भगवान्‌ने छल करके उसका व्रत-भङ्ग किया और देवताओंका कार्य पूरा किया। जब उसने यह मर्म जाना तब क्रोधित होकर शाप दिया।

तासु साप हरि कीन्ह प्रवाना ❀ कौतुकनिधि कृपालु भगवाना ॥
तहाँ जलंधर रावन भयऊ ❀ रन हति राम परम पद दयऊ ॥

भगवान्‌ने उसके शापको अङ्गीकार किया। भगवान् बड़े ही कौतुकी और कृपालु हैं। वहां जलन्धर दैत्य रावण हुआ जिसे संग्राममें मारकर श्रीरामचन्द्रजीने परमपद दिया।

एक जनम कर कारन एहा ❀ जेहि लगि राम धरी नर देहा ॥
प्रति अवतार कथा प्रभु केरी ❀ सुनु मुनि बरनी कबिन्ह घनेरी ॥

एक जन्मका यही कारण है; जिसके लिये श्रीरामचन्द्रजीने मनुष्यका शरीर धारण किया। प्रभुके प्रत्येक अवतारकी कथा मुनियोंसे सुनकर बहुतसे कवियोंने वर्णन की है।

नारद साप दीन्ह एक बारा ❀ कलप एक तेहि लगि अवतारा ॥
गिरिजा चकित भई सुनि बानी ❀ नारद बिस्नुभगत मुनि ग्यानी ॥

नारदजीने एक बार शाप दिया था। एक कल्पमें उसके कारण भी अवतार हुआ। शिवजीका यह कथन सुनकर पार्वतीको अत्यन्त आश्चर्य हुआ; क्योंकि नारदजी ज्ञानी मुनि और विष्णुके भक्त हैं।

कारन कवन साप मुनि दीन्हा ❀ का अपराध रमापति कीन्हा ॥
यह प्रसंग मोहिं कहहु पुरारी ❀ मुनिमन मोह आचरज भारी ॥

हे त्रिपुरके शत्रु शिव, मुझसे यह वृत्तान्त कहिये कि किस कारण मुनिने शाप दिया, भगवान् लक्ष्मीपतिने क्या अपराध किया था ? मुनिके मनको मोह होना भारी आश्चर्य है।

दो०—बोले बिहँसि महेस तब ❀ ग्यानी मूढ़ न कोइ।
जेहि जस रघुपति करहिं जब ❀ सो तस तेहि छन होइ ॥१५१॥

तब हंसकर महादेवजी बोले कि न कोई ज्ञानी है और न मूर्ख। श्रीरामचन्द्रजी जब जिसको जैसा करते हैं उस समय वह वैसा ही हो जाता है।

सो०—कहउँ राम-गुन-गाथ ❀ भरद्वाज सादर सुनहु।
भवभंजन रघुनाथ ❀ भजु तुलसी तजि मान मद ॥१५२॥

श्रीरामचन्द्रके गुणोंकी कथा कहता हूं। हे भरद्वाज, उसे आदरपूर्वक सुनो। श्रीरामचन्द्रजी संसारकी व्यथाको दूर कर देनेवाले हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि उन्हें मान और मदको छोड़कर भजो।

(नारद-मोह)

हिम-गिरि-गुहा एक अतिपावनि ❀ बह समीप सुरसरी सुहावनि ॥
आस्रम परम पुनीत सुहावा ❀ देखि देवरिषि मन अति भावा ॥

हिमालय पर्वतमें एक अत्यन्त पवित्र गुफा थी। उसके समीप ही सुन्दर गंगाजी बहती थीं। वहां एक अत्यन्त पवित्र आश्रम शोभित हो रहा था, जिसे देखनेपर वह देवर्षि नारदके मनको अत्यन्त अच्छा लगा।

निरखि सैल सरि बिपिनबिभागा ❀ भयउ रमा-पति-पद अनुरागा ॥
सुमिरत हरिहि सापगति बाधी ❀ सहज बिमल मन लागि समाधी ॥

पर्वत, नदियां और अनेक प्रकारके वन देखकर लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुके चरणोंमें नारदजीका प्रेम हुआ। भगवान्का स्मरण करते ही दक्षका शाप मिट गया और स्वभावसे ही निर्मल मन समाधिमें लग गया।

मुनिगति देखि सुरेस डेराना ❀ कामहिं बोलि कीन्ह सनमाना ॥
सहित सहाय जाहु मम हेतू ❀ चले हरषि हिय जल-चर-केतू ॥

मुनिकी समाधि देखकर इन्द्रको भय हुआ और कामदेवको बुलाकर उसका आदर किया और कहा कि सहायकों सहित मेरे लिये जाओ। तब कामदेव मनमें प्रसन्न होकर चला।

सुनासीर मन महँ असि त्रासा ❀ चहत देवरिषि मम पुर बासा ॥
जे कामी लोलुप जग माहीं ❀ कुटिल काक इव सबहि डेराहीं ॥

इन्द्रके मनमें यह भय था कि देवर्षि नारद मेरे लोकका राज्य चाहते हैं। संसारमें जो लोग कामी और लोभी होते हैं वे कुटिल कौएकी भांति सबको डरते हैं।

दो०—सूख हाड़ लेइ भाग सठ ❀ स्वान निरखि मृगराज।
छीनि लेइ जनि जानि जड़ ❀ तिमि सुरपतिहि न लाज ॥१५३॥

जैसे दुष्ट कुत्ता सिंहको देखकर सूखा हाड़ लेकर भाग जाये और वह मूर्ख यह समझे कि सिंह उसे छीन न ले, वैसे ही इन्द्रको वैसा सोचते लज्जा न हुई।

तेहि आस्रमहि मदन जब गयऊ ❀ निज माया बसन्त निरमयऊ ॥
कुसुमित बिबिध बिटप बहुरंगा ❀ कूजहिं कोकिल गुंजहिं भृंगा ॥

उस आश्रममें जब कामदेव गया तब उसने अपनी मायासे वसंत ऋतु उत्पन्न की। अनेक प्रकारके वृक्षोंपर बहुत रङ्गोंके फूल खिल गये। कोयलें कूकने लगीं और भौंरे गुंजारने लगे।

चली सुहावनि त्रिबिध बयारी ❀ काम कृसानु बढ़ावनिहारी ॥
रंभादिक सुरनारि नबीना ❀ सकल असम सर-कला-प्रबीना ॥

कामाग्निको बढ़ानेवाला सुन्दर, शीतल, मन्द, सुगन्धित पवन चलने लगा। कामदेवकी समस्त विषमवाण-कलाओंमें चतुर रंभा आदि देवताओंकी नवीन स्त्रियां—

करहिं गान बहु तान तरंगा ❀ बहु बिध क्रीड़हिं पानि पतंगा ॥
देखि सहाय मदन हरषाना ❀ कीन्हेसि पुनि प्रपंचबिधि नाना ॥

तरह तरहकी तानोंकी मौजमें भरकर गान करने और अपने गुलेंची हाथोंसे बहुत तरहकी क्रीड़ाएँ करने लगीं। यह सहायता देखकर कामदेव प्रसन्न हुआ और फिर उसने अनेक प्रकारके प्रपंच किये।

कामकला कछु मुनिहि न ब्यापी ❀ निज भय डरेउ मनोभव पापी ॥
सीम कि चाँपि सकइ कोउ तासू ❀ बड़ रखवार रमापति जासू ॥

कामदेवकी मायाका मुनिपर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा। तब पापी कामदेव अपने डरसे डरने लगा। भगवान् लक्ष्मीपति जिसके बड़े रक्षक हैं उसकी मर्यादाको क्या कोई दबा सकता है।

दो०—सहित सहाय सभीत अति ❀ मानि हारि मन मैन।
गहेसि जाइ मुनिचरन कहि ❀ सुठि आरत मृदु बैन ॥१५४॥

सहायकों सहित अत्यंत डरकर और मनमें हार मानकर कामदेवने दीनतासे भरे हुए सुन्दर मीठे वचन कहकर मुनिके चरणोंको जा पकड़ा।

भयउ न नारद मन कछु रोषा ❀ कहि प्रिय बचन काम परितोषा ॥
नाइ चरन सिरु आयसु पाई ❀ गयउ मदन तब सहित सहाई ॥

नारदजीके मनमें कुछ भी रोष नहीं हुआ और उन्होंने प्रिय वचन कहकर कामदेवको संतोष दिलाया। तब अपने सहायकों सहित चरणोंमें शिर नवाकर और आज्ञा पाकर कामदेव गया।

मुनि सुसीलता आपनि करनी ❀ सुर-पति-सभा जाइ सब बरनी ॥
सुनि सबके मन अचरज आवा ❀ मुनिहि प्रसंसि हरिहि सिरु नावा ॥

कामदेवने मुनिकी सुशीलता और अपनी करतूत, सब देवताओंके स्वामी इन्द्रकी सभामें जाकर वर्णन की, जिसे सुनकर सबके मनमें आश्चर्य हुआ और सबने मुनिकी प्रशंसा कर भगवान्‌को शिर नवाया।

तब नारद गवने सिव पाहीं ❀ जिता काम अहमिति मन माहीं ॥
मारचरित संकरहि सुनाये ❀ अतिप्रिय जानि महेस सिखाये ॥

तब नारदजी शिवजीके पास गये। उनके मनमें ऐसा अभिमान था कि मैंने कामको जीत लिया। उन्होंने शिवजीको कामदेवकी लीलाएँ सुनायीं। तब अत्यन्त प्यारा समझकर शिवजीने उन्हें यह सिखलाया।

बार बार बिनवउँ मुनि तोही ❀ जिमि यह कथा सुनायहु मोही ॥
तिमि जनि हरिहि सुनायेहु कबहूँ ❀ चलेहु प्रसंग दुरायेहु तबहूँ ॥

हे मुनि, मैं तुम्हारी बार बार विनती करता हूं। जिस प्रकार तुमने यह कथा मुझे सुनायी है उसी प्रकार कभी भगवान् विष्णुको मत सुनाना, चर्चा चले तोभी इसे छिपाना।

दो०—संभु दीन्ह उपदेस हित ❀ नहिं नारदहि सुहान।
भरद्वाज कौतुक सुनहु ❀ हरिइच्छा बलवान ॥ १५५ ॥

शिवजीने कल्याणके लिये यह उपदेश दिया था, परन्तु नारदजीको वह नहीं अच्छा लगा। हे भरद्वाज, अब कौतुक सुनो। भगवान्‌की इच्छा बड़ी बलवान् है।

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई ❀ करइ अन्यथा अस नहिं कोई ॥
संभुबचन मुनि मन नहिं भाये ❀ तब बिरंचि के लोक सिधाये ॥

श्रीरामचन्द्रजी जो कुछ करना चाहते हैं वही होता है। ऐसा कोई नहीं है जो उसे अन्यथा करे। जब शिवजीका कथन मुनिके मनको अच्छा नहीं लगा तब वे ब्रह्माके लोकको पधारे।

एक बार करतल बर बीना ❀ गावत हरिगुन गानप्रबीना ॥
छीरसिंधु गवने मुनिनाथा ❀ जहँ बस श्रीनिवास स्रुतिमाथा ॥

गानविद्यामें चतुर मुनियोंके स्वामी नारदजी एक बार हाथमें सुन्दर वीणा लिये भगवान्‌के गुणोंको गाते हुए क्षीरसमुद्र गये, जहां श्रीनिवास भगवान् विष्णु बसते थे।

हरषि मिलेउ उठि रमानिकेता ❀ बैठे आसन रिषिहि समेता ॥
बोले बिहँसि चराचरराया ❀ बहुते दिनन्ह कीन्हि मुनि दाया ॥

रमानिवास भगवान् प्रसन्नतापूर्वक उठकर मिले और ऋृषिसमेत आसनपर बैठे। चराचरके स्वामी भगवान् विष्णुने हँसकर कहा कि हे मुनि, बहुत दिनोंपर दया की है।

कामचरित नारद सब भाखे ❀ जद्यपि प्रथम बरजि सिवराखे ॥
अतिप्रचंड रघुपति कै माया ❀ जेहि न मोह अस को जग जाया ॥

यद्यपि शिवजीने उन्हें पहिले ही रोक दिया था तथापि नारदजीने कामदेवकी सब लीलाएँ कह सुनायीं। श्रीरामचंद्रजीकी माया अत्यंत बलवान है। संसारमें ऐसा कौन उत्पन्न हुआ है, जिसे मोह न हो।

दो०—रूख बदन करि बचन मृदु ❀ बोले श्रीभगवान।
तुम्हरे सुमिरन तें मिटहिं ❀ मोह मार मद मान ॥ १५६ ॥

मुँह रूखा कर श्रीभगवान् मीठे वचन बोले कि हे मुनि, तुम्हें स्मरण करनेसे मोह, काम, मद और अभिमान दूर हो जाते हैं।

सुनु मुनि मोह होइ मन ताके ❀ ग्यान बिराग हृदय नहिं जाके ॥
ब्रह्मचरज-ब्रत-रत मतिधीरा ❀ तुम्हहि कि करइ मनोभव पीरा ॥

हे मुनि, सुनो। मोह उसके मनमें होता है, जिसके हृदयमें ज्ञान और वैराग्य नहीं होता। तुम धीर बुद्धिवाले और ब्रह्मचर्य व्रतको पालन करनेवाले हो। तुम्हें भला कामदेव सता सकता है!

नारद कहेउ सहित अभिमाना ❀ कृपा तुम्हारि सकल भगवाना ॥
करुनानिधि मन दीख बिचारी ❀ उर अंकुरेउ गरबतरु भारी ॥

नारदने अभिमानपूर्वक कहा कि हे भगवन्, सब आपकी कृपा है। करुणानिधि भगवान्ने मनमें विचार कर देखा कि नारदजीके हृदयमें अभिमानके भारी वृक्षका अंकुर उत्पन्न हुआ है।

बेगि सो मैं डारिहउँ उखारी ❀ पन हमार सेवकहितकारी ॥
मुनि कर हित मम कौतुक होई ❀ अवसि उपाय करबि मैं सोई ॥

उसे मैं जल्दी ही उखाड़ डालूंगा; क्योंकि भक्तोंका हित करना, यह मेरी प्रतिज्ञा है। अवश्य ही मैं वही उपाय करूंगा; जिससे मेरा कौतुक और मुनिका कल्याण हो।

तब नारद हरिपद सिरु नाई ❀ चले हृदय अहमिति अधिकाई ॥
श्रीपति निज माया तब प्रेरी ❀ सुनहु कठिन करनी तेहि केरी ॥

तब हृदयमें अभिमान बढ़ाकर नारदजी भगवान्के चरणोंको शिर नवाकर चले। तब लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुने अपनी मायाको प्रेरित किया। उसने जो कठिन काम किया उसे सुनो।

दो०—बिरचेउ मग महुँ नगर तेहि ❀ सतजोजन बिस्तार।
श्री-निवास-पुरतें अधिक ❀ रचना बिबिध प्रकार ॥ १५७ ॥

उस मायाने मार्गमें एक नगर बनाया, जिसका विस्तार सौ योजन था और जिसकी अनेक प्रकारकी रचना लक्ष्मीनिवास भगवान्के वैकुण्ठसे भी अधिक थी।

बसहिं नगर सुंदर नर नारी ❀ जनु बहु मनसिज रति तनुधारी ॥
तेहि पुर बसइ सीलनिधि राजा ❀ अगनित हय गय सेन समाजा ॥

नगरमें सुन्दर स्त्रीपुरुष बसते थे, मानों अनेक रति और कामदेव शरीर धारण किये हुए हों। उस नगरमें शीलनिधि नामका राजा बसता था, जिसके अगणित हाथी, घोड़े और सेनाके समूह थे।

सत सुरेस सम बिभव बिलासा ❀ रूप तेज बल नीति निवासा ॥
बिस्वमोहिनी तासु कुमारी ❀ श्री बिमोह जिसु रूप निहारी ॥

सौ इन्द्रोंके समान उसका सारा वैभव था और वह रूप, तेज, बल और नीतिका घर था। उसकी कन्याका नाम विश्वमोहिनी था, जिसके रूपको देखकर लक्ष्मी भी मोहित हो जाती थीं।

सोइ हरि माया सब-गुन-खानी ❀ सोभा तासु कि जाइ बखानी ॥
करइ स्वयंबर सो नृपबाला ❀ आये तहँ अगनित महिपाला ॥

यही सब गुणोंकी खान भगवान्‌की माया थी। उसकी शोभा क्या वर्णन की जा सकती है? वह राजकी कन्या अपना स्वयंवर कर रही थी, जिसमें असंख्य राजा आये हुए थे।

मुनि कौतुकी नगर तेहि गयऊ ❀ पुरबासिन्ह सब पूछत भयऊ ॥
सुनि सब चरित भूपगृह आये ❀ करि पूजा नृप मुनि बैठाये ॥

मुनि उस कौतुक-नगरमें गये और नगरनिवासियोंसे सब हाल पूछा। सब वृत्तान्त सुनकर वे राजाके घरपर गये और राजाने उन्हें पूजा करके बिठलाया।

दो०—आनि देखाई नारदहि ❀ भूपति राजकुमारि।
कहहु नाथ गुन दोष सब ❀ एहि के हृदय बिचारि ॥१५८॥

राजाने राजकुमारीको लाकर नारदजीको दिखलाया और कहा कि हे नाथ, इसके गुण-दोष, सब हृदयमें विचारकर बतलाइये।

देखि रूप मुनि बिरति बिसारी ❀ बड़ी बार लगि रहे निहारी ॥
लच्छन तासु बिलोकि भुलाने ❀ हृदय हरष नहिं प्रगट बखाने ॥

रूप देखकर मुनिने वैराग्य भुला दिया और बड़ी देरतक देखते रहे। उसके लक्षण देखकर मुनि अपने आपको भूल गये। उनके हृदयमें आनन्द हुआ, पर उन्होंने लक्षणोंको प्रकट नहीं कहा।

जो एहि बरइ अमर सोइ होई ❀ समरभूमि तेहि जीत न कोई ॥
सेवहिं सकल चराचर ताही ❀ बरइ सीलनिधि कन्या जाही ॥

जो इसे वरण करेगा वह अमर होगा, संग्राममें उसे कोई जीत न सकेगा। राजा शीलनिधिकी यह कन्या जिसे वरण करेगी, चर और अचर—सब उसकी सेवा करेंगे।

लच्छन सब बिचारि उर राखे ❀ कछुक बनाइ भूप सन भाखे ॥
सुता सुलच्छन कहि नृप पाहीं ❀ नारद चले सोच मन माहीं ॥

सब लक्षणोंको विचारकर हृदयमें रख लिया और बनाकर कुछ लक्षण राजासे कह दिये। राजासे यह कहकर कि कन्या सुलक्षणा है, नारदजी चल दिये। उनके मनमें बड़ा सोच था।

करउँ जाइ सोइ जतन बिचारी ❀ जेहि प्रकार मोहि बरइ कुमारी ॥
जप तप कछु न होइ एहि काला ❀ हे बिधि मिलइ कवन बिधि बाला ॥

जाकर विचारपूर्वक वही यत्न करूं जिसमें यह कुमारी मुझे ही वरण करे। इस समय जप और तप कुछ नहीं हो सकता। हे ब्रह्मन्, यह कन्या किस प्रकार मिले ?

दो०—एहि अवसर चाहिय परम ❀ सोभा रूप बिसाल।
जो बिलोकि रीझइ कुँअरि ❀ तब मेलइ जयमाल ॥ १५९ ॥

इस अवसरपर अत्यंत शोभा और बड़ा ही रूप चाहिये, जिसे देखकर राजकुमारी रीझ जावे और तब जयमाल पहना दे।

हरि सन मांगउँ सुन्दरताई ❀ होइहि जात गहरु अति भाई ॥
मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ ❀ एहि अवसर सहाय सोइ होऊ ॥

भगवान् विष्णुसे सुन्दरता मांगूं। परन्तु भाई, उनके पास जानेसे बहुत विलंब होगा। (लेकिन), मेरा हितकारी भगवान्‌के समान दूसरा कोई नहीं है। इस अवसरपर वही सहायता करें।

बहुबिधि बिनय कीन्हि तेहि काला ❀ प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला ॥
प्रभु बिलोकि मुनिनयन जुड़ाने ❀ होइहि काजु हिये हरषाने ॥

नारदजीने उस समय अनेक प्रकारसे विनती की और कौतुकी कृपालु प्रभु प्रकट हुए, जिन्हें देखकर मुनिके नेत्र शीतल हो गये और वे मनमें बड़े ही प्रसन्न हुए कि कार्य हो जायगा।

अति आरति कहि कथा सुनाई ❀ करहु कृपा करि होहु सहाई ॥
आपन रूप देहु प्रभु मोही ❀ आन भांति नहिं पावउँ ओही ॥

मुनिने बड़ी दीनतासे कथा कह सुनायी और कहा कि कृपा करके मेरी सहायता कीजिये। हे प्रभो आप मुझे अपना रूप दीजिये। अन्य किसी प्रकारसे उसे नहीं पाऊंगा।

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा ❀ करहु सो बेगि दास मैं तोरा ॥
निज मायाबल देखि बिसाला ❀ हिय हँसि बोले दीनदयाला ॥

हे नाथ, जिस प्रकार मेरा कल्याण हो वही जल्दी कीजिये। मैं आपका दास हूं। अपनी मायाका विशाल बल देखकर दीनदयालु भगवान् अपने हृदयमें हँसकर बोले।

दो०—जेहि बिधि होइहि परमहित ❀ नारद सुनहु तुम्हार।
सोइ हम करब न आन कछु ❀ बचन न मृषा हमार ॥ १६० ॥

हे नारद, सुनो, जिस प्रकार तुम्हारा परमहित होगा, मैं वही करूंगा, अन्य कुछ नहीं। मेरा यह वचन मिथ्या नहीं है।

कुपथ मांगु रुजव्याकुल रोगी ❁ बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी ॥
एहि बिधि हित तुम्हार मैं ठयऊ ❁ कहि अस अंतरहित प्रभु भयऊ ॥

हे योगी मुनि, सुनो, रोगसे व्याकुल रोगी कुपथ्य मांगता है, परन्तु वैद्य उसे नहीं देता। इसी प्रकार मैंने भी तुम्हारे हितका निश्चय किया है। ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्द्धान हो गये।

मायाबिवस भये मुनि मूढ़ा ❁ समुझी नहिं हरिगिरा निगूढ़ा ॥
गवने तुरत तहां रिषिराई ❁ जहां स्वयंबरभूमि बनाई ॥

मायाके वशमें होकर मुनि मोहित हो गये और उन्होंने भगवानकी गूढ़ वाणी नहीं समझी। जहां स्वयंवर-भूमि रची गयी थी वहां ऋषिराज नारद तुरन्त चले गये।

निज निज आसन बैठे राजा ❁ बहु बनाव करि सहित समाजा ॥
मुनिमन हरष रूप अति मोरे ❁ मोहि तजि आनहि बरिहि न भोरें ॥

अपने समाजसहित अनेक प्रकारसे सजकर राजा लोग अपने अपने आसनोंपर बैठे हुए थे। मुनिके मनको बड़ी प्रसन्नता थी। वे सोचते थे कि मैं बड़ा रूपवान हूं। कन्या भूलकर भी मुझे छोड़ दूसरेको नहीं वरण करेगी।

मुनिहित कारन कृपानिधाना ❁ दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना ॥
सो चरित्र लखि काहु न पावा ❁ नारद जानि सबहि सिर नावा ॥

मुनिका कल्याण करनेके निमित्त कृपानिधान भगवान्ने ऐसा कुरूप दिया कि वर्णन नहीं किया जा सकता, परन्तु यह सब चरित्र और किसीने भी देख नहीं पाया और सबने नारद जानकर शिर नवाया।

दो०—रहे तहां दुइ रुद्रगन ❁ ते जानहिं सब भेउ।
बिप्रबेष देखत फिरहिं ❁ परम कौतुकी तेउ ॥ १६१ ॥

वहांपर शिवजीके दो गण भी थे, जो सब भेद जानते थे। वे ब्राह्मणका भेष रखकर देखते फिरते थे, क्योंकि वे भी बड़े कौतुकी थे।

जेहि समाज बैठे मुनि जाई ❁ हृदय रूपअहमिति अधिकाई ॥
तहँ बैठे महेसगन दोऊ ❁ बिप्रबेष गति लखइ न कोऊ ॥

अपने हृदयमें रूपका अभिमान बढ़ाकर मुनि जिन लोगोंमें जाकर बैठे वहां शिवजीके दोनों गण भी ब्राह्मण-भेषमें बैठे हुए थे, इससे उन्हें कोई न पहचानता था।

करहिं कूट नारदहि सुनाई ❀ नीकि दीन्हि हरि सुन्दरताई ॥
रीझिहि राजकुअँरि छवि देखी ❀ इनहिं बरिहि हरि जानि बिसेखी ॥

वे नारदजीको सुनकर व्यंग वचन कहते थे कि भगवान्‌ने अच्छी सुन्दरता दी है। राजकुमारी छवि देखकर रीझ जायगी और विशेषकर इन्हींको हरि जानकर वरण कर लेगी।

मुनिहि मोह मन हाथ पराये ❀ हँसहिं संभुगन अति सचुपाये ॥
जदपि सुनहिं मुनि अटपटि बानी ❀ समुझि न परइ बुद्धि भ्रम-सानी ॥

मुनिको मोह था और उनका मन दूसरेके हाथमें था। शिवजीके गण चुपचाप खूब हँसते थे। यद्यपि मुनि यह सब अटपटी बात सुनते थे तथापि बुद्धिको भ्रम हो जानेके कारण उन्हें यह समझ न पड़ती थी।

काहु न लखा सो चरित बिसेखा ❀ सो सरूप नृप कन्या देखा ॥
मरकटबदन भयंकर देही ❀ देखत हृदय क्रोध भा तेही ॥

यह विशेष चरित्र किसीने देखा नहीं। नारद मुनिका वह स्वरूप केवल राजकन्याको ही दिखलाई दिया। बन्दर जैसा मुख और भयङ्कर देह देखते ही उसके हृदयमें क्रोध हुआ।

दो०—सखी संग लेइ कुँअरि तब ❀ चलि जनु राजमराल।
देखत फिरइ महीप सब ❀ करसरोज जयमाल ॥ १६२ ॥

तब सखियोंको सङ्ग लेकर राजकुमारी चली, मानों राजहंसिनी हो। उसके करकमलोंमें जयमाल थी और वह सब राजाओंको देखती फिरती थी।

जेहि दिसि बैठे नारद फूली ❀ सो दिसि तेहि न बिलोकी भूली ॥
पुनि पुनि मुनि उकसहिं अकुलाहीं ❀ देखि दसा हरगन मुसुकाहीं ॥

प्रसन्न होकर नारदजी जिधर बैठे हुए थे उधर उसने भूलकर भी न देखा। मुनि बार बार उचकते और व्याकुल होते थे और उनकी यह दशा देखकर शिवजीके गण मुस्कुराते थे।

धरि नृपतनु तहँ गयउ कृपाला ❀ कुँअरि हरषि मेलेउ जयमाला ॥
दुलहिन लेइ गे लच्छिनिवासा ❀ नृपसमाज सब भयउ निरासा ॥

कृपालु विष्णु भगवान् वहाँ राजाका शरीर रखकर गये और राजकुमारीने प्रसन्न होकर जयमाल पहना दी। लक्ष्मीनिवास भगवान् विष्णु दुलहिनको लेकर चले गये और समस्त राजाओंका समूह निराश हो गया।

मुनि अति बिकल मोहमति नाँठी ❀ मनि गिरि गई छूटि जनु गाँठी ॥
तब हरगन बोले मुसुकाई ❀ निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई ॥

मोहसे बुद्धि नष्ट हो गयी थी, अतएव मुनि अत्यन्त व्याकुल थे, मानों गांठ छूट जानेसे मणि गिर गयी हो। तब मुस्कुराकर शिवजीके गणोंने उनसे कहा कि जाकर दर्पणमें अपना मुंह देखो।

अस कहि दोउ भागे भय भारी ❀ बदन देखि मुनि बारि निहारी ॥
बेष बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा ❀ तिन्हहि सराप दीन्ह अति गाढ़ा ॥

ऐसा कहकर दोनों अत्यन्त भयभीत हो भाग गये और पानी देखते ही जब उसमें मुनिने अपना मुख देखा तब अपना भेष देखकर उन्हें बहुत क्रोध बढ़ा और उन्होंने उन गणोंको अत्यंत कठोर शाप दिया।

दो०—होहु निसाचर जाइ तुम्ह ❀ कपटी पापी दोउ ॥
हँसेहु हमहिं सो लेहु फल ❀ बहुरि हँसेहु मुनि कोउ ॥१६३॥

तुम दोनों कपटी और पापी हो; जाकर राक्षस होओ। हमें हँसा, उसका फल लो। फिर किसी मुनिकी हँसी करना!

पुनि जल दीख रूप निज पावा ❀ तदपि हृदय संतोष न आवा ॥
फरकत अधर कोप मन माहीं ❀ सपदि चले कमलापति पाहीं ॥

उन्होंने जब फिर जलमें देखा तब यद्यपि वही अपना रूप पा लिया तथापि उनके हृदयको संतोष नहीं हुआ। उनके ओंठ फड़कते थे और उनमें क्रोध था। वे शीघ्रतासे लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुके पास चल दिये।

देइहउँ साप कि मरिहउँ जाई ❀ जगत मोरि उपहास कराई ॥
बीचहि पंथ मिले दनुजारी ❀ संग रमा सोइ राजकुमारी ॥

मुनिने सोचा कि मैं जाकर उन्हें शाप दूंगा या मर जाऊंगा। उन्होंने संसारमें मेरी हँसी करायी है। बीचमें ही मार्गमें भगवान् मिल गये। उनके साथमें लक्ष्मीजी और वही राजकुमार थीं।

बोले मधुर बचन सुरसाईं ❀ मुनि कहँ चले बिकल की नाईं ॥
सुनत बचन उपजा अति क्रोधा ❀ मायाबस न रहा मन बोधा ॥

देवताओंके स्वामी मीठी वाणीसे बोले कि हे मुनि, व्याकुलकी भांति कहां चल दिये? वचन सुनते ही मुनिको अत्यंत क्रोध उत्पन्न हुआ और मायावश उनके मनको ज्ञान नहीं रहा। उन्होंने कहा—

परसंपदा सकहु नहिं देखी ❀ तुम्हरे इरिषा कपट बिसेखी ॥
मथत सिंधु रुद्रहि बौरायेहु ❀ सुरन्ह प्रेरि बिषपान करायेहु ॥

तुम दूसरेकी संपत्ति नहीं देख सकते। तुम्हारे बड़ी ईर्ष्या और कपट है। जब समुद्र मथा गया था तब शिवजीको पागल बनाया और देवताओंको भेजकर विषपान कराया।

दो०—असुर सुरा विष संकरहि ❀ आपु रमा मनि चारु।
स्वारथसाधक कुटिल तुम्ह ❀ सदा कपटव्यवहारु ॥१६४॥

राक्षसोंको मदिरा और शिवजीको विष दिया; परन्तु स्वयं लक्ष्मी और सुंदर मणि ली। तुम स्वार्थ-साधन करनेवाले दुष्ट हो और सदैव कपट-व्यवहार करते हो।

परमस्वतन्त्र न सिर पर कोई ❀ भावइ मनहिं करहु तुम्ह सोई ॥
भलेहि मंद मंदहि भल करहू ❀ बिसमय हरष न हिय कछु धरहू ॥

तुम परम स्वतंत्र हो और तुम्हारे सिरपर कोई नहीं है। जो जी चाहता है तुम वही करते हो। तुम अच्छेको बुरा और बुरेको अच्छा करते हो और वैसा करते हुए मनमें कुछ भी हर्ष अथवा शोक नहीं लाते।

डहकि डहकि परिचेहु सब काहू ❀ अतिअसंक मन सदा उछाहू ॥
करम सुभासुभ तुम्हहिं न बाधा ❀ अब लगि तुम्हहिं न काहू साधा ॥

ठग-ठगकर तुमने सबका भेद लिया। तुम्हारा मन अत्यंत निडर है और उसमें सदा उत्साह रहता है। तुम्हें शुभ और अशुभ कर्मकी बाधा नहीं होती और अबतक तुम्हें किसीने सीधा भी नहीं किया है।

भले भवन अब बायन दीन्हा ❀ पावहुगे फल आपन कीन्हा ॥
बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा ❀ सोइ तनु धरहु साप मम एहा ॥

अब बायन अच्छे घर दिया है। अपने कियेका फल पाओगे। जिस शरीरको रखकर तुमने मुझे ठगा है तुम वही शरीर धारण करो, यही मेरा शाप है।

कपिआकृति तुम्ह कीन्हि हमारी ❀ करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी ॥
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी ❀ नारि बिरह तुम्ह होब दुखारी ॥

तुमने मेरा बंदर जैसा स्वरूप कर दिया था; यही बंदर तुम्हारी सहायता करेंगे। तुमने मेरा बड़ा अपकार किया है, इससे स्त्रीके वियोगमें तुम दुःखी होगे।

दो०—साप सीस धरि हरषि हिय ❀ प्रभु बहु बिनती कीन्ह।
निज माया कै प्रबलता ❀ करषि कृपानिधि लीन्हि ॥१६५॥

मुनिके शापको शिरपर रखकर और हृदयमें प्रसन्न होकर प्रभु भगवान् विष्णुने बहुत विनती की और कृपानिधानने अपनी मायाके प्रभावको खींच लिया।

जब हरिमाया दूर निवारी ❀ नहिं तहँ रमा न राजकुमारी ॥
तब मुनि अतिसभीत हरिचरना ❀ गहे पाहि प्रनतारतिहरना ॥

जब भगवान्ने अपनी मायाको दूर कर दिया तब वहां न लक्ष्मी रहीं और न वह राजकुमारी, तब मुनिने अत्यन्त भयभीत होकर भगवान्के चरणोंको पकड़ा और कहा कि हे दीनोंके दुःख दूर करनेवाले, मेरी रक्षा करो।

मृषा होउ मम साप कृपाला ❀ मम इच्छा कह दीनदयाला ॥
मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे ❀ कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे ॥

हे कृपालु, मेरा शाप असत्य हो। हे दीनदयालु, मेरी यही इच्छा है। मुनिने कहा कि मैंने बहुत दुर्वचन कहे हैं, ये मेरे पाप कैसे दूर होंगे ?

जपहु जाइ संकर-सत-नामा ❀ होइहि हृदय तुरत बिस्रामा ॥
कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरे ❀ असि परतीति तजहु जनि भोरे ॥

विष्णुने कहा कि जाकर शिवजीका सत्य नाम जपो, इससे तुरन्त ही हृदयको शांति होगी। मुझे शिवजीके समान कोई प्यारा नहीं है, ऐसा विश्वास भूलकर भी मत छोड़ो।

जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी ❀ सो न पाव मुनि भगति हमारी ॥
अस उर धरि महि बिचरहु जाई ❀ अब न तुम्हहिं माया निअराई ॥

जिसपर शिवजी कृपा नहीं करते, हे मुनि, वह मेरी भक्ति नहीं पाता। ऐसा हृदयमें धारण कर पृथ्वीपर जाकर विचरण करो। अब माया तुम्हारे पास न आयेगी।

दो०—बहु बिधि मुनिहि प्रबोधि ❀ प्रभु तब भये अंतरधान।
सत्यलोक नारद चले ❀ करत राम-गुन-गान ॥१३८॥

तब मुनिको अनेक प्रकारसे समझाकर प्रभु अन्तर्द्धान हो गये और नारदजी श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको गाते हुए सत्यलोकको चल दिये।

हरगन मुनिहि जात पथ देखी ❀ बिगत मोह मन हरष बिसेखी ॥
अतिसभीत नारद पहिं आये ❀ गहि पद आरत बचन सुनाये ॥

शिवजीके गणोंने जाते हुए मार्गमें मुनिको देखा। उनका मोह दूर हो गया था और उनके मनमें बड़ी प्रसन्नता थी। अत्यन्त भयभीत होकर वे नारदजीके पास आये और चरण पकड़कर दीन वचन कहने लगे।

हरगन हम न बिप्र मुनिराया ❀ बड़ अपराध कीन्ह फलु पाया ॥
साप अनुग्रह करहु कृपाला ❀ बोले नारद दीनदयाला ॥

हे मुनिराज, हम ब्राह्मण नहीं, महादेवजीके गण हैं। हमने बड़ा अपराध किया, जिसका फल पाया। हे कृपालु, आप अपने शापके लिये कृपा कीजिये। दीनदयालु नारदजी बोले।

निसिचर जाइ होहु तुम्ह दोऊ ❀ बैभव बिपुल तेज बल होऊ॥
भुजबल बिस्व जितब तुम्ह जहिआ ❀ धरिहहिं बिस्नु मनुजतनु तहिआ॥

तुम दोनों जाकर राक्षसका जन्म लो; जहां तुम्हारा बल, वैभव और तेज बहुत अधिक होगा। जब तुम अपनी भुजाओंके बलसे संसारको जीतोगे तब भगवान् विष्णु मनुष्यका शरीर धारण करेंगे।

समर मरन हरिहाथ तुम्हारा ❀ होइहहु मुकुत न पुनि संसारा॥
चले जुगल मुनिपद सिरु नाई ❀ भये निसाचर कालहि पाई॥

भगवान्के हाथों संग्राममें तुम्हारी मृत्यु होगी और मुक्ति हो जायगी। फिर संसारमें जन्म न लेना पड़ेगा। तब वे दोनों मुनिके चरणोंको सिर नवाकर चल दिये और समय पाकर राक्षस हुए।

दो०—एक कलप एहि हेतु प्रभु ❀ लीन्ह मनुज अवतार।
सुररंजन सज्जनसुखद ❀ हरि भंजन-भुबि-भार॥१६७॥

एक कल्पमें भगवान्ने इसी कारण मनुष्यका अवतार लिया। भगवान विष्णु देवताओंको प्रसन्न करनेवाले, सज्जनोंको सुख देनेवाले और पृथ्वीका भार दूर करनेवाले हैं।

एहि बिधि जनम करम हरि केरे ❀ सुन्दर सुखद बिचित्र घनेरे॥
कलप कलप प्रति प्रभु अवतरहीं ❀ चारु चरित नाना बिधि करहीं॥

इस प्रकार भगवान् विष्णुके सुन्दर, सुख देनेवाले और विचित्र जन्म एवं कर्म बहुत हैं। भगवान् प्रत्येक कल्पमें अवतार लेते हैं और अनेक प्रकारके सुन्दर चरित किया करते हैं।

तब तब कथा मुनीसन्ह गाई ❀ परम पुनीत प्रबंध बनाई॥
बिबिध प्रसंग अनूप बखाने ❀ करहिं न सुनि आचरजु सयाने॥

जब-जब ऐसे चरित हुए हैं तब-तब उनकी कथाको मुनियोंने अत्यंत पवित्र रचना करके गाया है। उन्होंने अनेक अनुपम विषयोंका वर्णन किया है, जिन्हें सुनकर चतुर मनुष्य आश्चर्य्य नहीं करते।

हरि अनंत हरिकथा अनंता ❀ कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता॥
रामचंद्रके चरित सुहाये ❀ कलप कोटि लगि जाहिं न गाये॥

भगवान् अनंत हैं और उनकी कथा भी अनंत है। उसे सब सन्तजन बहुत प्रकारसे कहते और सुनते हैं। श्रीरामचंद्रजीके सुन्दर चरित करोड़ कल्पतक भी गाये नहीं जा सकते।

यह प्रसंग मैं कहा भवानी ॥ हरिमाया मोहहिं मुनि ग्यानी ॥
प्रभु कौतुकी प्रनत-हितकारी ॥ सेवत सुलभ सकल दुखहारी ॥

हे पार्वती, मैंने यह कथा कह सुनायी कि भगवान्की मायासे ज्ञानी मुनि भी मोहित हो जाते हैं। प्रभु श्रीरामचंद्रजी बड़ा कौतुक करनेवाले और दीनोंके हितकारी हैं। वे सब दुःख दूर कर देनेवाले और सेवा करनेसे सहजही प्राप्त हो जानेवाले हैं।

सो०—सुर नर मुनि कोउ नाहिं ॥ जेहि न मोह माया प्रबल।
असि बिचारि मन माहिं ॥ भजिय महा-माया-पतिहि ॥१६८॥

सुर, नर और मुनि, कोई नहीं हैं जिसे प्रबल माया न मोह लेती हो, ऐसा मनमें विचारकर महामायाके पतिका भजन करना चाहिये।

अपर हेतु सुनु सैलकुमारी ॥ कहउँ बिचित्र कथा बिस्तारी ॥
जेहि कारन अज अगुन अरूपा ॥ ब्रह्म भयउ कोसल-पुर-भूपा ॥

हे पार्वती, दूसरा कारण सुनो, एक विचित्र कथा विस्तारपूर्वक कहता हूं, जिससे अजन्मा, निर्गुण और रूपरहित ब्रह्म अयोध्याके राजा श्रीरामचंद्रजी हुए।

जो प्रभु बिपिन फिरत तुम्ह देखा ॥ बंधु समेत धरे मुनिबेखा ॥
जासु चरित अवलोकि भवानी ॥ सतीसरीर रहिहु बौरानी ॥

भाई सहित मुनिभेष धारण किये हुए जिस प्रभुको तुमने वनमें फिरते देखा था और हे भवानी, सतीके शरीरसे जिसका चरित देखकर तुम बावली हो गयी थी (यहांतक कि)

अजहुँ न छाया मिटति तुम्हारी ॥ तासु चरित सुनु भ्रम-रुज-हारी ॥
लीला कीन्हि जो तेहि अवतारा ॥ सो सब कहिहउँ मति अनुसारा ॥

अब भी तुम्हारा भ्रम नहीं मिटता, उसीका, भ्रमरूपी रोगको दूर कर देनेवाला, चरित सुनो। उस अवतारमें श्रीरामचन्द्रजीने जो लीला की वह सब अपनी बुद्धिके अनुसार कहूंगा।

भरद्वाज सुनि संकरबानी ॥ सकुचि सप्रेम उमा मुसुकानी ॥
लगे बहुरि बरनइ बृषकेतू ॥ सो अवतार भयउ जेहि हेतू ॥

हे भरद्वाज, शंकरजीका कथन सुनकर उमाको संकोच हुआ और वे प्रेमसे मुस्कुरायीं। फिर वह अवतार जिस कारण हुआ उसका वर्णन महादेवजी करने लगे।

दो०—सो मैं तुम्ह सन कहउँ सब ॥ सुनु मुनीस मन लाइ।
रामकथा कलि-मल-हरनि ॥ मंगल करनि सुहाइ ॥१६९॥

हे मुनीश्वर, मन लगाकर सुनो, वह सब मैं तुमसे कहता हूं। श्रीरामकथा कलियुगके दोषोंको दूर-कर देनेवाली, मंगलकारिणी और सुन्दर है।

(मनु-उपाख्यान)

स्वायंभू मनु अरु सतरूपा ❀ जिन्ह तें भइ नरसृष्टि अनूपा ॥
दंपति धरम आचरन नीका ❀ अजहुँ गाव स्त्रुति जिन्हकै लीका ॥

स्वायम्भुव मनु और शतरूपा, जिनसे यह अनुपम नरसृष्टि हुई, ये दोनों पतिपत्नी, बड़े ही उत्तम धर्माचरणशील थे, जिनकी मर्यादाको वेद अब भी गाते हैं।

नृप उत्तानपाद सुत तासू ❀ ध्रुव हरिभगत भयउ सुत जासू ॥
लघुसुत नाम प्रियब्रत ताही ❀ बेद पुरान प्रसंसहिं जाही ॥

उनके पुत्र राजा उत्तानपाद हुए, जिनके पुत्र भगवान्के भक्त ध्रुव हुए। उनके छोटे पुत्रका नाम प्रियव्रत था, जिसकी प्रशंसा वेद और पुराण करते हैं।

देवहुता पुनि तासु कुमारी ❀ जो मुनि कदम कै प्रिय नारी ॥
आदि देव प्रभु दीनदयाला ❀ जठर धरेउ जेहिं कपिल कृपाला ॥

फिर उसकी एक कन्याका नाम देवहूति था जो कर्दम मुनिकी प्यारी पत्नी हुई, जिसने आदिदेव, दीन दयालु-कृपालु प्रभु कपिलको अपने गर्भमें धारण किया।

सांख्यसास्त्र जिन्ह प्रगट बखाना ❀ तत्वबिचार निपुन भगवाना ॥
तेहिं मनु राज कीन्ह बहु काला ❀ प्रभुआयसु बहु बिधि प्रतिपाला ॥

जिन्होंने प्रसिद्ध सांख्यशास्त्रका वर्णन किया जो भगवान्के तत्वविचारमें बहुत ही निपुण थे। उन स्वायम्भुव मनु महाराजने बहुत समयतक राज्य किया और बहुत प्रकारसे ईश्वरकी आज्ञाओंका पालन किया।

सो०—होइ न बिषय बिराग ❀ भवन बसत भा चौथपनु।
हृदय बहुत दुख लाग ❀ जनम गयउ हरिभगति बिनु ॥१७०॥

उनके हृदयको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने सोचा कि घरमें बसते हुए चौथापन हो गया, परन्तु विषयोंसे वैराग्य नहीं होता, सारा जन्म भगवान्की भक्ति बिना बीत गया।

बरबस राज सुतहि तब दीन्हा ❀ नारि समेत गवन बन कीन्हा ॥
तीरथ बर नैमिष बिख्याता ❀ अतिपुनीत साधक-सिधि-दाता ॥

तब उन्होंने अपने पुत्रको जबर्दस्ती राज्य दिया और पत्नीसहित वन चले गये। तीर्थश्रेष्ठ नैमिषारण्य अत्यन्त पवित्र और साधकोंको सिद्धि देनेवाला प्रसिद्ध है।

बसहिं तहाँ मुनि-सिद्ध-समाजा ❀ तहँ हिय हरषि चलेउ मनु राजा ॥
पंथ जात सोहहिं मतिधीरा ❀ ग्यान भगति जनु धरे सरीरा ॥

वहां मुनि और सिद्धजनोंके समूह वसते थे। हृदयमें प्रसन्न होकर वहींके लिये स्वायम्भुव मनु महाराज चले। वे दोनों धीर बुद्धिवाले पति और पत्नी मार्गमें जाते हुए ऐसे शोभा देते थे, मानों ज्ञान और भक्ति शरीर धारण किये हुए हों।

पहुँचे जाइ धेनु-मति-तीरा ❀ हरषि नहाने निरमल नीरा ॥
आये मिलन सिद्ध मुनि ग्यानी ❀ धरमधुरंधर नृपरिषि जानी ॥

वे धेनुमती नदीके किनारे जा पहुंचे और उसके निर्मल जलमें प्रसन्न होकर नहाया। उन्हें धर्मधुरंधर राजर्षि जानकर ज्ञानी सिद्ध और मुनि उनसे मिलने आये।

जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाये ❀ मुनिन्ह सकल सादर करवाये ॥
कृससरीर मुनिपट परिधाना ❀ सतसमाज निज सुनहिं पुराना ॥

जहां जहां सुन्दर तीर्थ थे, वहां-वहां मुनियोंने वे सब आदरपूर्वक करवा दिये। उनका शरीर दुबला था और वे मुनियों जैसे वस्त्र पहनते और संतोंकी सभामें नित्य पुराण सुनते थे।

दो०—द्वादस अच्छर मंत्र पुनि ❀ जपहिं सहित अनुराग ।
बासुदेव - पद - पंकरुह ❀ दंपतिमन अति लाग ॥१७१॥

फिर वे बड़े प्रेमसे १२ अक्षरोंवाला मंत्र 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' जपते थे। पति और पत्नी, दोनोंका मन भगवान वासुदेवके चरणकमलोंमें अच्छी तरह लग गया।

करहिं अहार साक फल कंदा ❀ सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ॥
पुनि हरि हेतु करन तप लागे ❀ बारिअधार मूल फल त्यागे ॥

वे शाक, फल और कंदका भोजन और सच्चिदानंद ब्रह्मका स्मरण करते थे। फिर वे भगवान् विष्णुके लिये तप करने लगे और फलमूल छोड़कर जलके ही आधारपर रहने लगे।

उर अभिलाष निरंतर होई ❀ देखिये नयन परम प्रभु सोई ॥
अगुन अखंड अनंत अनादी ❀ जेहि चिन्तहिं परमारथवादी ॥

हृदयमें सदैव यह इच्छा होने लगी कि उसी परम प्रभुको आंखों देखें, जो निर्गुण, अखण्ड, अनंत और अनादि है और जिसका चिंतवन परमार्थवादी किया करते हैं।

नेति नेति जेहि बेद निरूपा ❀ चिदानंद निरुपाधि अनूपा ॥
संभु बिरंचि बिस्नु भगवाना ❀ उपजहिं जासु अंस तें नाना ॥

जिसका निरूपण वेद 'नेति-नेति' कहकर करते हैं, जो सदैव आनंदस्वरूप, उपाधिरहित और अनुपम है और जिसके अंशसे अनेक शिव, ब्रह्मा और भगवान् विष्णु उत्पन्न होते हैं।

ऐसेउ प्रभु सेवकबस अहई ❀ भगत हेतु लीला तनु गहई ॥
जौं यह बचन सत्य श्रुति भाषा ❀ तौ हमार पूजिहि अभिलाषा ॥

ऐसे प्रभु भी सेवकके वशमें हैं और भक्तोंके लिये लीलासे शरीर धारण करते हैं। यदि वेदोंने यह वचन सत्य ही कहा है तो हमारी अभिलाषा पूरी होगी।

दो०—एहि बिधि बीते बरस षट ❀ सहस बारि आहार।
संबत सप्त सहस्र पुनि ❀ रहे समीर अधार॥१७२॥

इस प्रकार जलका आहार करते उन्हें छः हजार वर्ष बीत गये। फिर वे वायुके आधारपर सात हज़ार वर्ष पर्यन्त रहे।

बरस सहस दस त्यागेउ सोऊ ❀ ठाढ़े रहे एकपग दोऊ ॥
बिधि-हरि-हर तप देखि अपारा ❀ मनु समीप आये बहु बारा ॥

दस हज़ार वर्षतक यह भी छोड़ दिया और दोनों एक पैरपर खड़े रहे। अपार तप देखकर स्वायम्भुव मनुके पास ब्रह्मा, विष्णु और शिव बहुत बार आये।

मांगहु बर बहु भाँति लोभाये ❀ परम धीर नहिं चलहिं चलाये ॥
अस्थिमात्र होइ रहे सरीरा ❀ तदपि मनाग मनहिं नहिं पीरा ॥

उन्हें अनेक प्रकारका लालच दिया कि तुम वर मांगो, परन्तु वे बड़े धीर थे और चलाये नहीं चले। यद्यपि उनका शरीर हाड़ोंका पंजर ही रह गया था, तथापि उनके मनमें कुछ भी पीड़ा नहीं हुई।

प्रभु सरबग्य दास निज जानी ❀ गति अनन्य तापस नृप रानी ॥
माँगु माँगु बर भइ नभबानी ❀ परम गँभीर कृपामृत सानी ॥

सर्वज्ञ प्रभुने राजा और रानीको अनन्यगति अपने दास और तपस्वी जानकर कृपारूपी अमृतसे सानकर अत्यंत गंभीर आकाशवाणी की कि वर मांगो, वर मांगो।

मृतक जिआवनि गिरा सुहाई ❀ स्रवनरंध्र होइ उर जब आई ॥
हृष्ट पुष्ट तन भये सुहाये ❀ मानहु अबहिं भवन तें आये ॥

मरे हुओंको जिला देनेवाली सुन्दर वाणी जब कानोंके छेदोंसे होकर हृदयमें आयी तब उनका शरीर और हृष्टपुष्ट हो गया, मानों वे अभी घरसे आये हों।

दो०—स्रवन-सुधा-सम बचन सुनि ❀ पुलक प्रफुल्लित गात।
बोले मनु करि दंडवत ❀ प्रेम न हृदय समात ॥१७३॥

कानोंसे अमृतके समान वचन सुनकर स्वायम्भुव मनुका शरीर पुलकायमान और प्रसन्न हो गया और वे दण्डवत कर बोले। उनके हृदयमें प्रेम नहीं समाता था।

सुनु सेवक-सुर-तरु सुरधेनू ❀ बिधि-हरि-हर-बंदित पद-रेनू ॥
सेवत सुलभ सकल-सुख-दायक ❀ प्रनतपाल सचराचर नायक ॥

हे भक्तजनोंके कल्पवृक्ष और कामधेनु, ब्रह्मा, विष्णु और शिव आपके चरणोंकी रजकी वन्दना करते हैं। आप सेवा करनेसे सहज ही मिल जानेवाले, सब सुखोंको देनेवाले, भक्तोंको पालनेवाले और चर-अचर, सबके स्वामी हो।

जौं अनाथहित हम पर नेहू ❀ तौ प्रसन्न होइ यह बर देहू ॥
जो सरूप बस सिव मन माहीं ❀ जेहि कारन मुनि जतन कराहीं ॥

हे अनाथोंके हितकारी, यदि हमपर प्रेम है तो प्रसन्न होकर यह वर दीजिये कि जो स्वरूप शिवजीके मनमें बसता है और जिसके लिये मुनिजन साधना करते हैं,

जो भुसुण्डि-मन-मानस-हंसा ❀ सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा ॥
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन ❀ कृपा करहु प्रनतारतिमोचन ॥

जो काकभुशुण्डिजीके मनरूपी मानसरोवरके हंस हैं और सगुण-निर्गुण कहकर वेद जिसकी बड़ाई करते हैं, वही रूप हम देखें। हे दीनोंके दुःख दूर करनेवाले! कृपा कीजिये।

दंपति बचन परम प्रिय लागे ❀ मृदुल बिनीत प्रेम-रस पागे ॥
भगतबछल प्रभु कृपानिधाना ❀ बिस्वबास प्रगटे भगवाना ॥

राजा और रानीके मीठे, नम्र और प्रेमके रससे सने हुए वचन अत्यन्त प्यारे लगे और भक्तवत्सल, कृपानिधान, विश्वव्यापी, प्रभु भगवान् प्रकट हुए।

दो०—नीलसरोरुह नीलमनि ❀ नील-नीर-धर-स्याम।
लाजहिं तनु सोभा निरखि ❀ कोटि कोटि सतकाम ॥१७४॥

उनके शरीरकी शोभाको देखकर नीलकमल, नीलमणी, नीले-श्याम मेघ और सौ करोड़ कामदेव भी लज्जित होते थे।

सरद-मयंक-बदन छबिसींवा ❀ चारु कपोल चिबुक दर ग्रीवा ॥
अधर अरुन रद सुन्दर नासा ❀ बिधु-कर-निकर-बिनिंदक हासा ॥

उनका मुख शरदपूर्णिमाके चन्द्रमाके समान छविकी सीमा था। गाल और ठुड्डी सुन्दर, और गर्दन शंखके समान थी। उनके ओंठ लाल और दांत एवं नाक सुन्दर थी और उनका हँसना चन्द्रमाकी किरणोंके समूहको भी नीचा दिखानेवाला था।

नव - अंबुज अम्बक - छबि नीकी ❀ चितवनि ललित भावती जी की ॥
भृकुटि मनोज - चाप छबि - हारी ❀ तिलक ललाटपटल दुतिकारी ॥

नये कमल जैसे नेत्रोंकी शोभा अत्यन्त सुन्दर थी और उनकी सुन्दर चितवन जीको सुहानेवाली थी, भौंहें कामदेवके धनुषकी शोभाको भी हरनेवाली थीं और मस्तकपर तिलक प्रकाश कर रहा था।

कुण्डल मकर मुकुट सिर भ्राजा ❀ कुटिल केस जनु मधुपसमाजा ॥
उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला ❀ पदिक हार भूषनमनिजाला ॥

मकराकृति कुण्डल कानोंमें और मुकुट शिरपर विराज रहा था और घूंघरवाले बाल मानों भौंरोंका समूह हो। हृदयमें सुन्दर वनमाला और श्रीवत्स चिन्ह था और वे जड़ाऊ हार एवं मणियोंके आभूषण पहने हुए थे।

केहरिकंधर चारु जनेऊ ❀ बाहुबिभूषन सुंदर तेऊ ॥
करि-कर-सरिस सुभग भुजदंडा ❀ कटि निषंग कर सर कोदंडा ॥

सिंह जैसे कंधोंपर सुन्दर यज्ञोपवीत और भुजाओंपर सुन्दर आभूषण थे। हाथीकी सूंड़के समान सुन्दर भुजाएँ थीं और और वे कमरमें तरकस और हाथमें धनुषवाण लिये हुए थे।

दो०—तड़ित बिनिंदक पीतपट ❀ उदर रेख बर तीनि।
नाभि मनोहर लेति जनु ❀ जमुन-भँवर-छबि छीनि ॥१७५॥

उनका पीतांवर विजलीको भी लजानेवाला था, पेटमें तीन सुन्दर रेखाएँ पड़ी हुई थीं और उनकी मनोहर नाभि मानों यमुनाजीके भँवरकी शोभाको छीन रही थी।

पदराजीव बरनि नहिं जाहीं ❀ मुनिमनमधुप बसहिं जिन्ह माहीं ॥
बामभाग सोभति अनुकूला ❀ आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला ॥

चरणकमलोंका वर्णन नहीं किया जा सकता, जिनमें मुनियोंके मनरूपी भौंरे बसते हैं। उनकी बाईं ओर शोभाकी राशि संसारका मूलकारण आदिशक्ति प्रसन्न मनसे शोभायमान थी।

जासु अंस उपजहिं गुनखानी ❀ अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी ॥
भृकुटिबिलास जासु जग होई ❀ राम-बामदिसि सीता सोई ॥

जिसके अंशसे गुणोंकी खान अगणित लक्ष्मी, पार्वती और सरस्वती उत्पन्न होती हैं और जिसके भौंहके विलाससे यह संसार उत्पन्न हो जाता है वही सीता श्रीरामचन्द्रजीकी बाईं ओर थीं।

छबिसमुद्र हरिरूप बिलोकी ❁ एकटक रहे नयनपट रोकी॥
चितवहिं सादर रूप अनूपा ❁ तृप्ति न मानहिं मनुसतरूपा॥

शोभासागर भगवान् विष्णुका स्वरूप देखकर राजा और रानी आँखोंके पलकोंको रोककर एकटक रह गये। महाराज मनु और उनकी रानी शतरूपा—दोनों उस अनुपम रूपको आदरपूर्वक देखने लगे। वे संतुष्ट न होते थे।

हरषबिवस तनुदसा भुलानी ❁ परे दंड इव गहि पद पानी॥
सिर परसे प्रभु निज-कर-कंजा ❁ तुरत उठाये करुनापुंजा॥

आनन्दसे विवश होकर उन्हें अपने शरीरकी दशा भूल गयी और वे हाथसे पांव पकड़कर दण्डायमान हो गये। करुणानिधान प्रभुने अपने करकमलोंसे उनका शिर छुआ और उन्हें तुरन्त उठा लिया।

दो०—बोले कृपानिधान पुनि ❁ अति प्रसन्न मोहि जानि।
मागहु बर जोइ भाव मन ❁ महादानि अनुमानि ॥१७६॥

फिर कृपानिधान भगवान्ने कहा कि मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानकर और महादानी समझकर जो जी चाहे, मांगो।

सुनि प्रभुबचन जोरि जुग पानी ❁ धरि धीरज बोले मृदु बानी॥
नाथ देखि पदकमल तुम्हारे ❁ अब पूरे सब काम हमारे॥

प्रभुके वचन सुनकर और दोनों हाथ जोड़कर वे धीरज रखकर मीठी वाणीसे बोले, हे नाथ, आपके चरणकमलोंको देखकर अब मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो गयीं।

एक लालसा बड़ि उर माहीं ❁ सुगम अगम कहि जाति सो नाहीं॥
तुम्हहिं देत अति सुगम गोसाईं ❁ अगम लाग मोहिं निज कृपनाई॥

हृदयमें एक बड़ी अभिलाषा है। वह सुगम और अगम, दोनों ही है और कही नहीं जाती। हे स्वामी उसका देना आपको अत्यंत सुगम है, परन्तु अपनी दीनतासे वह मुझे बहुत कठिन प्रतीत होता है।

जथा दरिद्र बिबुधतरु पाई ❁ बहु संपति माँगत सकुचाई॥
तासु प्रभाउ जान नहिं सोई ❁ तथा हृदय मम संसय होई॥

जैसे दरिद्र कल्पवृक्षको पाकर संकोचपूर्वक बहुतसी सम्पत्ति माँगता है; क्योंकि वह उसका प्रभाव नहीं जानता, उसी प्रकार मेरे हृदयमें भी संदेह होता है।

सो तुम्ह जानहु अंतरजामी ❀ पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥
सकुच बिहाइ मागु नृप मोही ❀ मोरें नहिं अदेय कछु तोही ॥

हे अन्तर्यामी, उसे आप जानते हैं। हे स्वामी, मेरा मनोरथ पूरा कीजिये। भगवान्‌ने कहा कि हे राजा, संकोच छोड़कर मुझसे मांगो। तुम्हें न देनेयोग्य मेरे लिये कुछ भी नहीं है।

दो०—दानिसिरोमनि कृपानिधि ❀ नाथ कहउँ सतभाउ।
चाहउँ तुम्हहि समान सुत ❀ प्रभु सन कवन दुराउ ॥१७७॥

राजाने कहा कि हे दानियोंके शिरोमणि, कृपानिधान स्वामी, आपसे सत्य-सत्य कहता हूं, मैं आप ही जैसा पुत्र चाहता हूं। प्रभुसे छिपाव क्या है?

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले ❀ एवमस्तु करुनानिधि बोले ॥
आपु सरिस खोजउँ कहँ जाई ❀ तव नृप तनय होब मैं आई ॥

प्रीति देखकर और अमूल्य वचन सुनकर करुणानिधिने कहा कि ऐसा ही होगा। हे राजा, मैं अपना जैसा कहां जाकर खोजूं? मैं ही आकर तुम्हारा पुत्र होऊंगा।

सतरूपहि बिलोकि करजोरें ❀ देबि मागु बरु जो रुचि तोरे ॥
जो बरु नाथ चतुर नृप मागा ❀ सोइ कृपाल मोहि अतिप्रिय लागा ॥

शतरूपाको हाथ जोड़े हुए देखकर भगवान्‌ने कहा कि हे देवि, तुम्हें जो रुचि हो वह वर मांगो। शतरूपाने कहा कि हे नाथ, चतुर राजाने जो वर मांगा है, हे कृपालु, वही मुझे अत्यंत प्यारा लगा है।

प्रभु परन्तु सुठि होति ढिठाई ❀ जदपि भगतहित तुम्हहि सुहाई ॥
तुम्ह ब्रह्मादि जनक जगस्वामी ❀ ब्रह्म सकल-उर-अंतरजामी ॥

हे प्रभो, यह बड़ी ढिठाई होती है, यद्यपि भक्तके हितके कारण वह आपको अच्छी लगती है। आप ब्रह्मादि देवताओंके पिता, संसारके स्वामी और सबके हृदयमें अंतर्यामी ब्रह्म हैं।

अस समुझत मन संसय होई ❀ कहा जो प्रभु प्रवान पुनि सोई ॥
जे निज भगत नाथ तव अहहीं ❀ जो सुख पावहिं जो गति लहहीं ॥

ऐसा समझकर मनमें संदेह होता है, परन्तु हे प्रभो, आपने जो कहा वह प्रमाण है। हे नाथ, आपके अपने भक्त हैं वे जो सुख पाते हैं और उन्हें जो गति मिलती है,

दो०—सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति ❀ सोइ निज चरन सनेहु।
सोइ बिबेक सोइ रहनि प्रभु ❀ हमहि कृपा करि देहु ॥१७८॥

वही सुख, वही गति, वही भक्ति, अपने चरणोंमें वही प्रेम, वही विवेक और वही स्थिति हे प्रभो, कृपा करके हमें दीजिये।

सुनि मृदु गूढ़ रुचिर बचरचना ❀ कृपासिंधु बोले मृदुबचना ॥
जो कछु रुचि तुम्हरे मन माहीं ❀ मैं सो दीन्ह सब संसय नाहीं ॥

ऐसी कोमल, गूढ़ और सुंदर वाक्यरचना सुनकर कृपासागर भगवान् मीठे वचनोंसे बोले कि तुम्हारे मनमें जो कुछ रुचि है वह सब मैंने दिया, इसमें संदेह नहीं है।

मातु बिबेक अलौकिक तोरे ❀ कबहुँ न मिटिहि अनुग्रह मोरे ॥
बंदि चरन मनु कहेउ बहोरी ❀ अउर एक बिनती प्रभु मोरी ॥

हे माता! तुम्हें अलौकिक ज्ञान है, जो मेरे अनुग्रहसे कभी न मिटेगा। मनु महाराजने चरणोंकी वन्दना कर फिर कहा कि हे प्रभो, मेरी एक विनती और है।

सुत बिषयिक तव पद रति होऊ ❀ मोहि बड़ मूढ़ कहइ किन कोऊ ॥
मनिबिनुफनि जिमि जलबिनुमीना ❀ ममजीवन तिमि तुम्हहिं अधीना ॥

मुझे कोई बड़ा मूर्ख ही क्यों न कहे, परन्तु आपके चरणोंमें मेरा प्रेम, पुत्रप्रेम हो। जिस प्रकार मणि बिना सर्प और जल बिना मछली मर जाती है उसी भांति मेरा जीवन भी तुम्हारे ही अधीन हो।

अस बर मांगि चरन गहि रहेऊ ❀ एवमस्तु करुनानिधि कहेऊ ॥
अब तुम्ह मम अनुसासन मानी ❀ बसहु जाइ सुर-पति-रजधानी ॥

ऐसा वर मांगकर राजा चरण पकड़कर रह गये, तब करुणानिधि भगवान्‌ने कहा कि ऐसा ही होगा। अब तुम मेरा आदेश मानकर देवताओंके स्वामी इन्द्रकी राजधानीमें जाकर वास करो।

सो०—तहँ करि भोग बिसाल ❀ तात गये कछु काल पुनि।
होइहहु अवधभुआल ❀ तब मैं होब तुम्हार सुत ॥ १७९ ॥

हे तात, फिर वहां बड़े-बड़े भोगोंको भोगकर कुछ काल बीतनेपर तुम अयोध्याके राजा होगे और तब मैं तुम्हारा पुत्र होऊँगा।

इच्छामय नरबेष सवाँरे ❀ होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारे ॥
अंसन्ह सहित देह धरि ताता ❀ करिहउँ चरित-भगत-सुख-दाता ॥

अपनी इच्छासे मनुष्यशरीर धारणकर मैं तुम्हारे घरमें प्रकट होऊंगा। हे तात, अपने अंशोंसहित देह धारणकर मैं भक्तोंको सुख देनेवाला चरित करूंगा।

जेहि सुनि सादर नर बड़भागी ❀ भव तरिहहिं ममता मद त्यागी ॥
आदिसक्ति जेहि जग उपजाया ❀ सोउ अवतरिहि मोरि यह माया ॥

जिसे आदरपूर्वक सुनकर बड़भागी मनुष्य ममता और मद छोड़कर संसारसे तर जायँगे। मेरी यह माया, आदिशक्ति भी, जिसने यह संसार उत्पन्न किया है, अवतार धारण करेगी।

पुरउब मैं अभिलाष तुम्हारा ❀ सत्य सत्य पन सत्य हमारा ॥
पुनि पुनि अस कहि कृपानिधाना ❀ अंतरधान भये भगवाना ॥

मैं तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण करूंगा। मेरा यह प्रण सत्य है, सत्य है और सत्य है। बार बार ऐसा कहकर कृपानिधान भगवान् अन्तर्द्धान हो गये।

दंपति उर धरि भगति कृपाला ❀ तेहि आस्रम निबसे कछु काला ॥
समय पाइ तनु तजि अनयासा ❀ जाइ कीन्ह अमरावतिबासा ॥

पति और पत्नी, दोनोंने कृपालु भगवान्‌की भक्ति हृदयमें धारणकर कुछ समयतक उसी आश्रममें निवास किया और फिर समय पाकर अनायास ही शरीर छोड़कर वे अमरावतीमें जाकर बस गये।

दो०—यह इतिहास पुनीत अति ❀ उमहि कहा बृषकेतु ।
भरद्वाज सुनु अपर पुनि ❀ रामजनम कर हेतु ॥ १८० ॥

यह अत्यन्त पवित्र इतिहास महादेवजीने पार्वतीसे कहा। फिर हे भरद्वाज, श्रीरामचन्द्रजीके जन्मका अन्य कारण सुनो।

(रावण आदिका जन्म)

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी ❀ जो गिरिजा प्रति संभु बखानी ॥
बिस्वबिदित एक कैकेय देसू ❀ सत्यकेतु तहँ बसइ नरेसू ॥

जिस पवित्र पुरानी कथाको शिवजीने पार्वतीसे कहा, उसे हे मुनि, सुनो। कैकय नामक एक देश संसारमें प्रसिद्ध है। वहां सत्यकेतु नामके राजा बसते थे।

धरमधुरंधर नीतिनिधाना ❀ तेज प्रताप सील बलवाना ॥
तेहि के भये जुगल सुत बीरा ❀ सब-गुन-धाम महारन-धीरा ॥

वे धर्मधुरंधर, नीतिका भाण्डार, तेजस्वी, प्रतापी, शीलवान् और बली थे। उनके दो वीर पुत्र हुए, जो सब गुणोंके घर और महारणधीर थे।

राजधनी जो जेठ सुत आही ❀ नाम प्रतापभानु अस ताही ॥
अपर सुतहि अरिमर्दन नामा ❀ भुजबल अतुल अचल संग्रामा ॥

जो जेठा पुत्र राजका मालिक था, उसका नाम 'प्रतापभानु' था। दूसरे पुत्रका नाम अरिमर्दन था, जिसकी भुजाओंका बल अतुल था और जो संग्राममें अटल था।

भाइहि भाइहि परम समीती ❀ सकल दोष छल बरजित प्रीती ॥
जेठे सुतहि राज नृप दीन्हा ❀ हरि हित आपु गवन बन कीन्हा ॥

भाइयों-भाइयोंमें बहुत ही स्नेह, और छल एवं सब दोषोंसे रहित प्रेम था। राजाने बड़े पुत्रको राज्य दिया और भगवान्‌का भजन करनेके लिये स्वयं वनको चले गये।

दो०—जब प्रतापरबि भयउ नृप ❀ फिरी दोहाई देस।
प्रजापाल अति बेद बिधि ❀ कतहुँ नहीं अघलेस ॥१८१॥

जब प्रतापभानु राजा हुए, तब देशमें दुहाई फिर गयी। वे पूर्ण वेदरीतिसे प्रजाका पालन करते थे और पापका कहीं लेश भी नहीं था।

नृप-हित-कारक सचिवसयाना ❀ नाम धरमरुचि सुक्र समाना ॥
सचिव सयान बंधु बलबीरा ❀ आपु प्रतापपुंज रनधीरा ॥

चतुर मंत्रीका नाम धर्मरुचि था, जो राजाका हितकारी और शुक्रके समान था। मंत्री चतुर और भाई वीर एवं बलवान था; और प्रतापभानु स्वयं प्रतापी और रणवीर थे।

सेन संग चतुरंग अपारा ❀ अमित सुभट सब समर जुझारा ॥
सेन बिलोकि राउ हरषाना ❀ अरु बाजे गहगहे निसाना ॥

साथमें अपार चतुरंगिणी सेना थी, अगणित योद्धा थे, जो सब युद्धमें शूरवीर थे। सेनाको देखकर राजा प्रसन्न हुए और खूब जोरसे बाजे बजने लगे।

बिजय हेतु कटकई बनाई ❀ सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई ॥
जहँ तहँ परीं अनेक लराईं ❀ जीते सकल भूप बरिआईं ॥

राजाने विजय प्राप्त करनेके लिये सेनाको सजाया और शुभदिन देखकर वे डंका बजाकर चले। जहाँ तहाँ अनेक लड़ाइयां हुईं और जबर्दस्ती सब राजाओंको जीता।

सप्त दीप भुजबल बस कीन्हे ❀ लेइ लेइ दंड छाँड़ि नृप दीन्हे ॥
सकल-अवनि-मंडल तेहि काला ❀ एक प्रतापभानु महिपाला ॥

सातों द्वीपोंको अपनी भुजाओंके बलसे अधीन किया और दण्ड ले-लेकर राजाओंको छोड़ दिया। पृथ्वी-भरमें उस समय एक प्रतापभानु ही राजा थे।

दो०—स्ववस बिस्व करि बाहुबल ❀ निज पुर कीन्ह प्रबेसु ।
अरथ-धरम-कामादि सुख ❀ सेवइ समय नरेसु ॥१८२॥

अपनी भुजाओंके बलसे संसारको अपने अधीन कर अपने नगरमें राजाने प्रवेश किया। राजा समय-समयपर धर्म, अर्थ, काम आदि सुखोंका सेवन करने लगे।

भूप प्रतापभानु-बल पाई ❀ कामधेनु भइ भूमि सुहाई ॥
सब-दुख-बरजित प्रजा सुखारी ❀ धरमसील सुंदर नर नारी ॥

राजा प्रतापभानुका बल पाकर सुन्दर भूमि कामधेनु जैसी हो गयी। प्रजा सब दुःखोंसे रहित और सुखी थी। पुरुष और स्त्री, सब सुन्दर धर्मात्मा थे।

सचिव धरमरुचि हरि-पद-प्रीती ❀ नृप-हित-हेतु सिखव नित नीती ॥
गुरु सुर संत पितर महिदेवा ❀ करइ सदा नृप सब कै सेवा ॥

मंत्रीकी धर्ममें रुचि और भगवान्‌के चरणोंमें प्रीति थी और वह राजाको कल्याणके लिये नित्य नीति सिखलाया करता था। गुरु, देवता, संत, पितृ और ब्राह्मण—सबकी सेवा राजा सदा ही किया करते थे।

भूप धरम जे बेद बखाने ❀ सकल करइ सादर सुख माने ॥
दिन प्रति देइ बिबिध बिधि दाना ❀ सुनइ सास्त्रबर बेद पुराना ॥

वेदोंने राजाके जो धर्म बतलाये हैं, उन सबको वे सुख मानकर सदैव आदरपूर्वक किया करते थे। वे प्रतिदिन अनेक प्रकारके दान देते और उत्तम शास्त्र, वेद और पुराण सुना करते थे।

नाना बापीं कूप तड़ागा ❀ सुमनबाटिका सुंदर बागा ॥
बिप्रभवन सुरभवन सुहाये ❀ सब तीरथन्ह बिचित्र बनाये ॥

सब तीर्थोंमें अनेक बावड़ियाँ, कुएँ, तालाब, फुलवाड़ियाँ, सुन्दर बाग, ब्राह्मणोंके रहनेके लिये घर और सुन्दर देवमन्दिर—सब अच्छे अच्छे बनवा दिये।

दो०—जहँ लगि कहे पुरान श्रुति ❀ एक एक सब जाग ।
बार सहस्र सहस्र नृप ❀ किये सहित अनुराग ॥१८३॥

वेदों और पुराणोंने जहाँतक कहा है वहाँतक एक एक कर सब यज्ञोंको हजार-हजार बार राजाने प्रेमपूर्वक किया।

हृदय न कछु फल अनुसंधाना ❀ भूप बिबेकी परमसुजाना ॥
करइ जे धरम करम मन बानी ❀ बासुदेव अरपित नृप ग्यानी ॥

राजा ज्ञानी और अत्यन्त चतुर थे। उन्होंने हृदयमें फलकी कुछ चाह नहीं की। ज्ञानी राजा मन, वाणी और कर्मसे जो धर्मकार्य करते थे, वे सब वासुदेव भगवान्‌के अर्पण होते थे।

चढ़ि बरबाजि बार एक राजा ❀ मृगया कर सब साजि समाजा ॥
बिंध्याचल गँभीर बन गयऊ ❀ मृग पुनीत बहु मारत भयऊ ॥

एक उत्तम घोड़ेपर चढ़कर एक बार राजा आखेटका सब सामान सजाकर विन्ध्याचलके घने वनमें गये और बहुतसे पवित्र हिरनोंको मारा।

फिरत बिपिन नृप दीख बराहू ❀ जनु बन दुरेउ ससिहि ग्रसि राहू ॥
बड़ बिधु नहिं समात मुख माहीं ❀ मनहु क्रोधबस उगलत नाहीं ॥

वनमें फिरते हुए राजाने एक शूकर देखा मानों चन्द्रमाको ग्रास बनाकर राहु वनमें आ छिपा हो और चन्द्रमा इतना बड़ा हो कि मुखमें न समाता हो। फिर भी मानों वह क्रोधके वश होनेके कारण उसे उगलता न हो।

कोल-कराल-दसन-छबि गाई ❀ तनु बिसाल पीवर अधिकाई ॥
घुरघुरात हय आरव पाये ❀ चकित बिलोकत कान उठाये ॥

भयंकर शूकरके दांतोंकी शोभाका यह वर्णन हुआ। उसका विशाल शरीर बहुत मोटा था। घोड़ेकी आहट पाकर शूकर घुरघुराता और कान उठाकर चकराकर देखता था।

दो०—नील महीधर सिखर सम ❀ देखि बिसाल बराहु।
चपरि चलेउ हय सुटुकि नृप ❀ हांकि न होइ निबाहु ॥१८४॥

नील पर्वतकी चोटीके समान विशाल शूकर देखकर राजाने घोड़ेको चाबुक मारकर जल्दी चलाया क्योंकि हांके बिना काम न बनता था।

आवत देखि अधिक रव बाजी ❀ चलेउ बराह मरुतगति भाजी ॥
तुरत कीन्ह नृप सरसंधाना ❀ महि मिलि गयउ बिलोकत बाना ॥

अधिक आहट होनेसे घोड़ेको आता देखकर शूकर वायुकी गतिसे भाग चला। राजाने तुरन्त ही बाण चढ़ाया, परन्तु बाण देखते ही वह शूकर धरतीसे मिल गया।

तकि तकि तीर महीस चलावा ❀ करि छल सुअर सरीर बचावा ॥
प्रगटत दुरत जाइ मृग भागा ❀ रिसबस भूप चलेउ सँग लागा ॥

राजाने तक तककर बाण छोड़े, पर शूकरने छलसे अपना शरीर बचा लिया। प्रकट होते और छिपते हुए वह शूकर भागा चला गया और राजा क्रोधके वशमें होनेके कारण उसके संग लगे चले गये।

गयउ दूरि घन गहन बराहू ❀ जहँ नाहिं न गज-बाजि-निबाहू ॥
अति अकेल बन बिपुल कलेसू ❀ तदपि न मृगमग तजइ नरेसू ॥

अत्यन्त घने वनमें शूकर दूरतक चला गया जहां हाथी और घोड़ेका काम नहीं था। राजा यद्यपि बिलकुल अकेले थे और वनमें उन्हें बहुत दुःख थे तथापि उस शूकरका मार्ग न छोड़ते थे।

कोल बिलोकि भूप बड़ धीरा ❀ भागि पैठ गिरिगुहा गँभीरा ॥
अगम देखि नृप अति पछिताई ❀ फिरेउ महाबन परेउ भुलाई ॥

राजाको बड़ा धीर देखकर शूकर भागकर पर्वतकी एक गहरी गुफामें घुस गया। उसे अगम्य देखकर राजा बहुत पछताये और लौट पड़े परन्तु उस विशाल वनमें वे भूल गये।

दो०—खेद खिन्न छुद्धित तृषित ❀ राजा बाजिसमेत।
खोजत ब्याकुल सरित सर ❀ जल बिनु भयउ अचेत ॥१८५॥

थकावटसे दुःखी, भूखे और प्यासे राजा घोड़ा समेत व्याकुल होकर नदी और तालाबको खोजने लगे और जलके बिना अचेत हो गये।

फिरत बिपिन आस्रम एक देखा ❀ तहँ बस नृपति कपट-मुनि बेखा ॥
जासु देस नृप लीन्ह छुड़ाई ❀ समर सेन तजि गयउ पराई ॥

वनमें फिरते हुए राजाने एक आश्रम देखा। वहां कपटसे मुनिके भेषमें एक दूसरा राजा रहता था जिसका देश राजा प्रतापभानुने छीन लिया था और जो युद्धमें सेना छोड़कर भाग गया था।

समय प्रतापभानु कर जानी ❀ आपन अति असमय अनुमानी ॥
गयउ न गृह मन बहुत गलानी ❀ मिला न राजहि नृप अभिमानी ॥

राजा प्रतापभानुका समय जानकर उसने अपने अत्यन्त असमयका अनुमान किया। वह अभिमानी राजा मनमें अत्यन्त ग्लानि होनेसे घर नहीं लौटा और न राजा प्रतापभानुसे ही जाकर मिला।

रिस उर मारि रंक जिमि राजा ❀ बिपिन बसइ तापसके साजा ॥
तासु समीप गवन नृप कीन्हा ❀ यह प्रतापरबि तेहि तब चीन्हा ॥

वह राजा अपने हृदयके क्रोधको दबाकर गरीबकी भांति तपस्वीके भेषमें वनमें बसता था। जब राजा उसके पास गये तब उसने पहचान लिया कि ये राजा प्रतापभानु हैं।

राउ तृषित नहिं सो पहिचाना ❀ देखि सुबेष महामुनि जाना ॥
उतरि तुरग तें कीन्ह प्रनामा ❀ परम चतुर न कहेउ निजनामा ॥

राजा प्यासे थे, अतएव उसे नहीं पहचाना और सुन्दर भेष देखकर उन्होंने उसे महामुनि समझा। घोड़े से उतरकर राजानें उसे प्रणाम किया, परन्तु वह अत्यन्त चतुर था। उसने अपना नाम नहीं बतलाया।

दो०—भूपति तृषित बिलोकि तेहि ❀ सरबर दीन्ह देखाइ।
मज्जन पान समेत हय ❀ कीन्ह नृपति हरषाइ ॥ १८६ ॥

उसने राजाको प्यासा देखकर उत्तम सरोवर दिखला दिया और राजाने प्रसन्न होकर घोड़ासमेत स्नान किया और पानी पिया।

गै स्रम सकल सुखी नृप भयऊ ❀ निजआस्रम तापस लेइ गयऊ ॥
आसन दीन्ह अस्तरबि जानी ❀ पुनि तापस बोलेउ मृदुबानी ॥

राजाकी सब थकावट दूर हुई और वे प्रसन्न हुए। कपटी तपस्वी उन्हें अपने आश्रममें ले गया। सूर्यको अस्त हुआ जानकर उसने राजाको आसन दिया और फिर मीठी वाणीसे बोला।

को तुम्ह कस बन फिरहु अकेले ❀ सुंदर जुवा जीव परहेले ॥
चक्रवर्त्ति के लच्छन तोरे ❀ देखत दया लागि अति मोरे ॥

तुम कौन हो और सुन्दर युवा होकर जीवकी परवा न करते हुए वनमें अकेले कैसे फिरते हो? तुम्हारे लक्षण चक्रवर्ती जैसे हैं। देखते ही मुझे अत्यन्त दया लगती है।

नाम प्रतापभानु अवनीसा ❀ तासु सचिव मैं सुनहु मुनीसा ॥
फिरत अहेरे परेउ भुलाई ❀ बड़े भाग देखेउँ पद आई ॥

हे मुनीश्वर, सुनिये, प्रतापभानु नामक राजा हैं, उनका मैं मंत्री हूं। आखेटके लिये फिरते हुए मैं भूल गया। बड़े भाग्य थे जो आपके चरणोंके दर्शन किये।

हम कहँ दुरलभ दरस तुम्हारा ❀ जानत हौं कछु भल होनिहारा ॥
कह मुनि तात भयउ अँधियारा ❀ जोजन सत्तरि नगर तुम्हारा ॥

हमें आपके दर्शन दुर्लभ हैं। मैं जानता हूं कि कुछ भली होनहार है। मुनिने कहा कि हे तात, अब अन्धेरा हो गया और यहांसे तुम्हारा नगर ७० योजन है।

दो०—निसा घोर गंभीर बन ❀ पंथ न सुनहु सुजान।
बसहु आजु अस जानि तुम्ह ❀ जायहु होत बिहान ॥ १८७ ॥

हे सुजान, सुनो, भयंकर रात्रि है, घना वन है और मार्ग भी नहीं है। ऐसा जानकर तुम आज यहीं रहो। सवेरा होते ही चले जाना।

तुलसी जसि भवितव्यता ❀ तैसइ मिलइ सहाइ।
आपु न आवइ ताहि पहिं ❀ ताहि तहां लेइ जाइ॥ १८८॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि जैसी होनहार होती है वैसी ही सहायता भी मिलती है। होनहार उसके पास नहीं आती, परन्तु उसको वहां ले जाती है।

भलेहि नाथ आयसु धरि सीसा ❀ बांधि तुरग तरु वैठ महीसा॥
नृप वहु भांति प्रसंसेउ ताही ❀ चरन वंदि निज भाग्य सराही॥

"हे नाथ, वहुत अच्छा" कहा और आज्ञाको शिरपर रखकर और वृक्षसे घोड़ेको बांधकर राजा वैठ गये। राजाने अनेक प्रकारसे उसकी प्रशंसा की और उसके चरणोंकी वन्दना कर अपने भाग्यको सराहा।

पुनि वोलेउ मृदुगिरा सुहाई ❀ जानि पिता प्रभु करउँ ढिठाई॥
मोहि मुनीस सुत सेवक जानी ❀ नाथ नाम निज कहहु वखानी॥

फिर सुन्दर मीठी वाणीसे राजाने कहा—हे प्रभो, पिता जानकर ढिठाई करता हूं। हे मुनीश्वर, हे नाथ, मुझे अपना पुत्र और सेवक जानकर अपना नाम वखानकर कहिये।

तेहि न जान नृप नृपहि सो जाना ❀ भूप सुहृद सो कपटसयाना॥
वैरी पुनि छत्री पुनि राजा ❀ छल वल कीन्ह चहइ निज काजा॥

राजा उसे न जानते थे, पर वह राजाको जानता था। राजाका हृदय निर्मल था और वह था कपटी और चतुर। एक तो वह शत्रु, फिर क्षत्रिय, और फिर राजा—छल-वल करके वह अपना काम करना चाहता है।

समुझि राजसुख दुखित अराती ❀ अवां अनल इव सुलगइ छाती॥
सरलवचन नृप के सुनि काना ❀ वयर सँभारि हृदय हरषाना॥

वह अपने राज्य सुखकी यादकर वड़ा ही दुःखी रहता था। और उसका हृदय अवांकी अग्निकी भांति सुलगता था। कानोंसे राजाके भोलेभाले वचन सुनकर और अपने वैरका स्मरण कर वह हृदयमें प्रसन्न हुआ।

दो०—कपट वोरि वानी मृदुल ❀ वोलेउ जुगुतिसमेत।
नाम हमार भिखारि अव ❀ निर्धन रहित निकेत॥ १८९॥

युक्तिके साथ कपटसे मिली हुई मीठी वाणीसे वह वोला कि मेरा नाम अव भिखारी है और मेरे पास न धन है और न घर।

कह नृप जे विग्याननिधाना ❀ तुम्ह सारिखे गलितअभिमाना॥
रहहिं अपनपौ सदा दुराये ❀ सव विधि कुसल कुवेष वनाये॥

राजाने कहा कि जो महाज्ञानी और आप जैसे अभिमानशून्य होते हैं, वे सदा अपनापन छिपाये और सब प्रकार चतुर होनेपर भी बुरा भेष बनाये हुए रहते हैं।

तेहि तें कहहिं संत स्रुति टेरे ❀ परम अकिंचन प्रिय हरि केरे ॥
तुम्ह सम अधन भिखारि अगेहा ❀ होत बिरंचि सिवहि संदेहा ॥

इसीसे संतजन और वेद पुकारकर कहते हैं कि अत्यंत दीन मनुष्य भगवानके प्यारे होते हैं। आपके समान निर्धन, भिखारी और गृहहीनको देखकर ब्रह्मा और शिवजीको भी संदेह हो जाता है।

जोसि सोसि तव चरन नमामी ❀ मो पर कृपा करिय अब स्वामी ॥
सहज प्रीति भूपति कै देखी ❀ आपु बिषय बिस्वास बिसेखी ॥

जो हो वही सही, आपके चरणोंको नमस्कार है। हे स्वामी, अब मुझपर कृपा कीजिये। अपनेमें राजाकी स्वाभाविक प्रीति देखकर और विशेष विश्वास पाकर,

सब प्रकार राजहि अपनाई ❀ बोलेउ अधिक सनेह जनाई ॥
सुनु सतिभाउ कहउ महिपाला ❀ इहां बसत बीते बहु काला ॥

और सब प्रकार राजाको अपनाकर वह अत्यन्त प्रेम दिखलाकर बोला कि हे राजा, सुनो। सत्य-सत्य कहता हूं। यहां बसते हुए बहुत समय बीत गया है।

दो०—अबलगि मोहिं न मिलेउ कोउ ❀ मैं न जनावउँ काहु।
लोकमान्यता अनलसम ❀ कर तपकानन दाहु ॥ १६० ॥

अबतक मुझे कोई नहीं मिला और न मैंने किसीको अपना भेद बतलाया, क्योंकि संसारकी प्रतिष्ठा अग्निके समान तपरूपी वनको भस्म कर डालती है।

सो०—तुलसी देखि सुबेखु ❀ भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुंदर केकिहि पेखु ❀ बचन सुधासम असन अहि ॥१६१॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि सुन्दर भेष देखकर मूर्ख मनुष्य ही भूल जाते हैं, चतुर नहीं। सुन्दर मोरको देखो। उसकी बोली अमृतके समान होती है, पर भोजन होता है सांप!

तातें गुपुत रहउँ जग माहीं ❀ हरि तजि किमपि प्रयोजन नाहीं ॥
प्रभु जानत सब बिनहि जनाये ❀ कहहु कवन सिधि लोक रिझाये ॥

इसीसे संसारमें गुप्त रहता हूं। भगवान्‌को छोड़कर और कोई भी प्रयोजन नहीं है। न बतलानेपर भी प्रभु सब जानते हैं। भला कहो, संसारको रिझानेसे कौनसी सिद्धि मिलती है?

तुम्ह सुचि सुमति परम प्रिय मोरे ❀ प्रीति प्रतीति मोहि पर तोरे ॥
अब जौं तात दुरावउँ तोही ❀ दारुन दोष घटइ अति मोही ॥

तुम पवित्र, श्रेष्ठ बुद्धिवाले और मेरे अत्यन्त प्रिय हो। मुझपर तुम्हारी प्रीति और विश्वास भी है। अब हे तात, यदि तुमसे छिपाव करूं तो मुझे बड़ा भारी दोष लगेगा।

जिमि जिमि तापस कथइ उदासा ❀ तिमि तिमि नृपहि उपज बिस्वासा ॥
देखा स्वबस करम-मन-बानी ❀ तब बोला तापस बगध्यानी ॥

वह तपस्वी ज्यों-ज्यों वैराग्यकी बातें कहता जाता था त्यों-त्यों राजाको विश्वास उत्पन्न होता जाता था। जब राजाको मन, वाणी और कर्मसे अपने अधीन देखा तब वह बगुला भक्त तपस्वी बोला:—

नाम हमार एकतनु भाई ❀ सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई ॥
कहहु नाम कर अरथ बखानी ❀ मोहि सेवक अति आपन जानी ॥

हे भाई, मेरा नाम 'एकतनु' है। यह सुन शिर नवाकर राजाने फिर कहा कि मुझे अपना अनन्य सेवक जानकर इस नामका अर्थ समझाकर कहिये।

दो०—आदि सृष्टि उपजी जबहि ❀ तब उतपति भइ मोरि।
नाम एकतनु हेतु तेहि ❀ देह न धरी बहोरि ॥ १६२ ॥

तपस्वीने कहा कि जब आदि सृष्टि उत्पन्न हुई थी तभी मेरी उत्पत्ति हुई थी। उसी कारण मेरा नाम 'एकतनु' है; क्योंकि मैंने फिर शरीर धारण नहीं किया।

जनि आचरजु करहु मन माहीं ❀ सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं ॥
तपबल तें जग सृजइ बिधाता ❀ तपबल बिष्नु भये परित्राता ॥

हे पुत्र, मनमें आश्चर्य मत करो। तपसे कुछ भी दुर्लभ नहीं है। तपके बलसे ब्रह्मा संसारको रचते हैं के बलसे ही विष्णु उसके रक्षक हुए हैं।

तपबल संभु करहिं संहारा ❀ तप तें अगम न कछु संसारा ॥
भयउ नृपहि सुनि अति अनुरागा ❀ कथा पुरातन कहइ सो लागा ॥

तपके बलसे शिवजी संहार करते हैं। संसारमें तपसे कुछ भी अलभ्य नहीं है। यह सुनकर राजाको अत्यंत प्रेम हुआ। तब वह पुरानी कथा कहने लगा।

करम धरम इतिहास अनेका ❀ करइ निरूपन बिरति बिबेका ॥
उद्भव - पालन - प्रलय - कहानी ❀ कहेसि अमित आचरज बखानी ॥

वह कर्म, धर्म, अनेक इतिहास, ज्ञान और वैराग्यका वर्णन करने लगा। उसने उत्पत्ति, स्थिति और प्रलयकी कथा कही और बहुतसे आश्चर्योंका वर्णन किया।

सुनि महीप तापसबस भयऊ ❀ आपन नाम कहन तब लयऊ ॥
कह तापस नृप जानउँ तोही ❀ कीन्हेहु कपट लाग भल मोही ॥

सुनकर राजा तपस्वीके वशमें हो गये और तब अपना नाम कहने लगे। तपस्वीने कहा कि हे राजा, मैं तुम्हें जानता हूं। तुमने कपट किया था। यह मुझे अच्छा लगा।

सो०—सुनु महीस असि नीति ❀ जहँ तहँ नाम न कहहिं नृप।
मोहि तोहिपर अति प्रीति ❀ सोइ चतुरता बिचारि तव ॥१६३॥

हे राजा, सुनो। यह नीति है कि राजा लोग जहां-तहां अपना नाम नहीं बतलाते। तुम्हारी इसी चतुरताको विचारकर मुझे तुमपर अत्यन्त प्रेम है।

नाम तुम्हार प्रतापदिनेसा ❀ सत्यकेतु तव पिता नरेसा ॥
गुरुप्रसाद सब जानिय राजा ❀ कहिय न आपन जानि अकाजा ॥

तुम्हारा नाम प्रतापभानु है। तुम्हारे पिता राजा सत्यकेतु थे। हे राजा, गुरुके प्रसादसे सब जानता हूं, परन्तु अपनी हानि जानकर नहीं कहता।

देखि तात तव सहज सुधाई ❀ प्रीतिप्रतीति नीति निपुनाई ॥
उपजि परी ममता मन मोरे ❀ कहउँ कथा निज पूछे तोरे ॥

हे तात, तुम्हारा स्वाभाविक सीधापन, प्रेम, विश्वास और नीतिनिपुणता देखकर मेरे मनमें ममता उत्पन्न हो उठी है और तुम्हारे पूछनेपर अपना वृत्तान्त कहता हूं।

अब प्रसन्न मैं संसय नाहीं ❀ मांगु जो भूप भाव मन माहीं ॥
सुनि सुबचन भूपति हरषाना ❀ गहि पद बिनय कीन्हि बिधि नाना ॥

अब मैं प्रसन्न हूं, इसमें सन्देह नहीं। हे राजा, मनमें जो चाहता हो वह मांगो। सुन्दर वचन सुनकर राजा प्रसन्न हुए और चरण पकड़कर अनेक प्रकारसे विनती की।

कृपासिंधु मुनि दरसन तोरे ❀ चारि पदारथ करतल मोरे ॥
प्रभुहि तथापि प्रसन्न बिलोकी ❀ मांगि अगम बरु होउँ असोकी ॥

हे कृपासागर मुनि, आपके दर्शनोंसे चारों पदार्थ मेरी मुट्ठीमें हैं। तोभी प्रभुको प्रसन्न देखकर एक कठिन वर मांगकर शोकरहित हो जाता हूं।

दो०—जरा मरन दुख रहित तनु ❁ समर जितइ जनि कोउ।
एकछत्र रिपुहीन महि ❁ राज कलप सत होउ ॥१६४॥

मेरे इस शरीरको बुढ़ापे और मृत्युका दुःख न हो, मुझसे संग्राममें कोई न जीत सके और पृथ्वीपर सौ कल्पतक मेरा शत्रुहीन राज्य एकछत्र होवे।

कह तापस नृप ऐसेइ होऊ ❁ कारन एक कठिन सुनु सोऊ॥
कालउ तव पद नाइहि सीसा ❁ एक बिप्रकुल छाड़ि महीसा॥

तपस्वीने कहा कि हे राजा, ऐसा ही हो। परन्तु इसमें एक बात कठिन है, उसे भी सुन लो। हे राजा, एक ब्राह्मणकुलको छोड़कर काल भी तुम्हारे चरणोंमें शिर झुकायेगा।

तप बल बिप्र सदा बरिआरा ❁ तिन्हके कोप न कोउ रखवारा॥
जौं बिप्रन्ह बस करहु नरेसा ❁ तौ तव बस बिधि बिस्नु महेसा॥

तपके बलसे ब्राह्मण सदा ही बलवान् हैं। उनके क्रोधसे रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। हे राजा, यदि ब्राह्मणोंको अपने वशमें कर लो तो ब्रह्मा, विष्णु और शिव—सब तुम्हारे वशमें हो जावें।

बल न ब्रह्मकुल सन बरिआई ❁ सत्य कहउँ दोउ भुजा उठाई॥
बिप्रसाप बिनु सुनु महिपाला ❁ तोर नास नहिं कवनेहुँ काला॥

मैं दोनों बाहु उठाकर सत्य कहता हूं कि ब्राह्मणोंसे जबर्दस्ती नहीं चलती। हे राजा, सुनो। ब्राह्मणोंके शापके बिना तुम्हारा नाश किसी कालमें भी न होगा।

हरषेउ राउ बचन सुनि तासू ❁ नाथ न होइ मोर अब नासू॥
तव प्रसाद प्रभु कृपानिधाना ❁ मो कहँ सर्बकाल कल्याना॥

उसके वचन सुनकर राजा प्रसन्न हुए और कहा कि हे नाथ, अब मेरा नाश न होगा। हे कृपानिधान प्रभु, आपकी कृपासे सदैव मेरा कल्याण होगा।

दो०—एवमस्तु कहि कपटमुनि ❁ बोला कुटिल बहोरि।
मिलब हमार भुलाब निज ❁ कहहु त हमहिं न खोरि॥१६५॥

ऐसा ही हो—कहकर वह दुष्ट कपटी तपस्वी फिर बोला कि अपना वनमें भूलना और मेरा मिलना किसीसे कह देनेसे फिर मेरा दोष न होगा।

तातें मैं तोहि बरजउँ राजा ❁ कहे कथा तव परम अकाजा॥
छठे स्रवन यह परत कहानी ❁ नास तुम्हार सत्य मम बानी॥

इसीसे हे राजा, मैं तुम्हें रोकता हूं। यह सब कथा कह देनेसे तुम्हारी भारी हानि होगी। यह कहानी छठे कानमें पड़नेसे तुम्हारा नाश हो जायगा, मेरी यह बात सत्य है।

यह प्रगटे अथवा द्विजसापा ❀ नास तोर सुनु भानुप्रतापा ॥
आन उपाय निधन तव नहीं ❀ जौं हरि हर कोपहिं मन माहीं ॥

हे प्रतापभानु, सुनो। इसके प्रकट होने या ब्राह्मणका शाप लगनेसे तुम्हारा नाश होगा। और किसी उपायसे तुम्हारा नाश न होगा, चाहे शिव और विष्णु भी मनमें क्रोधित हों।

सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा ❀ द्विज-गुरु-कोप कहहु को राखा ॥
राखइ गुरु जौं कोप बिधाता ❀ गुरुबिरोध नहिं कोउ जगत्राता ॥

राजाने चरण पकड़कर कहा कि हे नाथ, सत्य है। ब्राह्मण और गुरुके क्रोधसे, भला कहो, कौन बचा सकता है? यदि ब्रह्मा क्रोध करें तो गुरु बचा सकते हैं, परन्तु गुरुके विरोधसे बचानेवाला संसारमें कोई नहीं है।

जौं न चलब हम कहे तुम्हारे ❀ होउ नास नहिं सोच हमारे ॥
एकहि डर डरपत मन मोरा ❀ प्रभु महि-देव-साप अतिघोरा ॥

यदि मैं आपके कहनेपर न चलूंगा तो भले ही नाश हो जाय, मुझे उसका सोच नहीं है, परन्तु मेरा मन एकही डरसे डरता है। हे प्रभो, ब्राह्मणोंका शाप अत्यन्त कठोर होता है।

दो०—होहिं बिप्र बस कवन बिधि ❀ कहहु कृपा करि सोउ।
तुम्ह तजि दीनदयाल निज ❀ हितू न देखउं कोउ ॥१६६॥

कृपाकर यह भी कहिये कि किस प्रकार ब्राह्मण वशमें हों। हे दीनदयालु, आपको छोड़कर अपना हितकारी और किसीको नहीं देखता।

सुनु नृप बिबिध जतन जग माहीं ❀ कष्टसाध्य पुनि होहिं कि नाहीं ॥
अहइ एक अति सुगम उपाई ❀ तहां परंतु एक कठिनाई ॥

हे राजा, सुनो। संसारमें अनेक उपाय हैं, पर वे कष्टसाध्य हैं और फिर यह नहीं कहा जा सकता कि वे हों या न हों। एक उपाय अत्यन्त सहज है, परन्तु उसमें एक कठिनाई है।

मम आधीन जुगुति नृप सोई ❀ मोर जाब तव नगर न होई ॥
आजु लगे अरु जब तें भयऊँ ❀ काहू के गृह ग्राम न गयऊँ ॥

हे राजा, वह युक्ति मेरे अधीन है, परन्तु तुम्हारे नगरमें मेरा जाना नहीं हो सकता। जबसे उत्पन्न हुआ हूं तबसे आजतक किसीके घर और गांवमें मैं नहीं गया।

जौं न जाउं तव होइ अकाजू ❀ बना आइ असमंजस आजू ॥
सुनि महीस बोलेउ मृदु बानी ❀ नाथ निगम असि नीति बखानी ॥

यदि अब न जाऊं तो तुम्हारी हानि होगी, आज ऐसी दुविधा आ पड़ी है। यह सुनकर राजा मीठ वाणीसे बोले, कि हे नाथ, वेदमें ऐसी नीति कही गयी है—

बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं ❀ गिरि निज सिरन्हि सदा तृन धरहीं ॥
जलधि अगाध मौलि वह फेनू ❀ संतत धरनि धरत सिर रेनू ॥

बड़े छोटोंपर प्रेम करते हैं। पर्वत अपने शिरोंपर सदैव तिनके रखते हैं। समुद्र अथाह है, परन्तु वह अपने शिरपर फेन धारण करता है और पृथ्वी अपने शिरपर सदैव धूल रखती है।

दो०—अस कहि गहे नरेस पद ❀ स्वामी होहु कृपाल।
मोहि लागि दुख सहिय प्रभु ❀ सज्जन दीनदयाल ॥१६७॥

ऐसा कहकर राजाने चरण पकड़ लिया और कहा कि हे स्वामी, कृपालु हूजिये। हे प्रभो, आप सज्जन और दीनोंपर दया करनेवाले हैं। आप मेरे लिये दुःख सहिये।

जानि नृपहि आपन आधीना ❀ बोला तापस कपटप्रवीना ॥
सत्य कहउँ भूपति सुनु तोही ❀ जग नाहिंन दुर्लभ कछु मोही ॥

राजाको अपने अधीन जानकर वह चतुर कपटी तपस्वी बोला। हे राजा, सुनो। तुमसे सत्य कहता हूँ, संसारमें मेरे लिये कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

अवसि काज मैं करिहउँ तोरा ❀ मन तन बचन भगत तैं मोरा ॥
जोग जुगुति तप मंत्रप्रभाऊ ❀ फलइ तबहिं जब करिय दुराऊ ॥

मैं अवश्य ही तुम्हारा काम करूंगा। तुम तन, मन, और वचनसे मेरे भक्त हो। योग, युक्ति, तप और मंत्रका प्रभाव तभी फल देता है जब उसका छिपाव किया जाय।

जौं नरेस मैं करउ रसोई ❀ तुम्ह परसहु मोहि जान न कोई ॥
अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई ❀ सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई ॥

हे राजा, यदि मैं रसोई करूं, तुम उसे परोसो और मुझे कोई न जान पावे तो उस अन्नको जो-जो भोजन करे वही-वही तुम्हारी आज्ञाके अनुसार चले।

पुनि तिन्ह के गृह जेंवइ जोऊ ❀ तव बस होइ भूप सुनु सोऊ ॥
जाइ उपाइ रचहु नृप एहू ❀ संबत भरि संकलप करेहू ॥

फिर उनके घरोंमें जो कोई भोजन करे वह भी, हे राजा, सुनो, तुम्हारे वशमें हो जावे। हे राजा, तुम जाकर यह उपाय करो और एक वर्षतक इसका संकल्प रखो।

दो०—नित नूतन द्विज सहस सत ❀ बरेहु सहित परिवार।
मैं तुम्हरे संकलप लगि ❀ दिनहिं करब जेवनार ॥१६८॥

नित्य नये सौ हजार ब्राह्मणोंको परिवार सहित न्यौतकर जिमाया करो। मैं तुम्हारे संकल्पके लिये प्रतिदिन भोजन बनाया करूंगा।

एहि बिधि भूप कष्ट अति थोरे ❀ होइहहि सकल बिप्र बस तोरे॥
करिहहिं बिप्र होम मख सेवा ❀ तेहि प्रसंग सहजहिं बस देवा॥

इस प्रकार, हे राजा, अत्यन्त थोड़े कष्टसे सब ब्राह्मण तुम्हारे वशमें हो जायँगे। ब्राह्मण होम, यज्ञ और सेवा करेंगे और उसीके प्रभावसे देवता भी सहज ही वशमें हो जायंगे।

अउर एक तोहि कहउँ लखाऊ ❀ मैं एहि बेष न आउब काऊ॥
तुम्हरे उपरोहित कहुँ राया ❀ हरि आनब मैं करि निज माया॥

और भी एक बात मैं तुमसे कहता हूं उसे समझ लो। इस भेषमें मैं कभी न आऊंगा। हे राजा, मैं तुम्हारे पुरोहितको अपनी मायासे हर लाऊंगा!

तपबल तेहि करि आपु समाना ❀ रखिहउँ इहां बरष परवाना॥
मैं धरि तासु बेष सुनु राजा ❀ सब बिधि तोर सवांरब काजा॥

तपके बलसे उसे अपने ही समान बनाकर यहां एक वर्षतक रखूंगा। हे राजा, सुनो, मैं उसका भेष रखकर सब प्रकार तुम्हारा काम सम्हालूंगा।

गइ निसि बहुत सयन अब कीजे ❀ मोहि तोहि भूप भेंट दिन तीजे॥
मैं तपबल तोहि तुरग समेता ❀ पहुँचइहउँ सोवतहिं निकेता॥

रात बहुत बीत गयी, अब शयन करो। हे राजा, तीसरे दिन तुमसे मेरी भेंट होगी। तपके बलसे मैं तुम्हें घोड़ा समेत सोते हुए ही घर पहुंचा दूंगा।

दो०—मैं आउब सोइ बेष धरि ❀ पहिचानेउ तब मोहि।
जब एकांत बुलाइ सब ❀ कथा सुनावउँ तोहि ॥१६९॥

मैं वही भेष रखकर आऊंगा। जब मैं एकान्तमें बुलाकर तुम्हें सब कथा सुनाऊं तब मुझे पहचान लेना।

सयन कीन्ह नृप आयसु मानी ❀ आसन जाइ बैठ छल ग्यानी ॥
स्रमित भूप निद्रा अति आई ❀ सो किमि सोव सोच अधिकाई ॥

आज्ञा पाकर राजाने शयन किया और वह छली ज्ञानी आसनपर जाकर बैठ गया। राजा थके हुए थे, उन्हें खूब नींद आयी, परन्तु वह तपस्वी कैसे सोता, उसे बड़ा सोच था।

कालकेतु निसिचर तहँ आवा ❀ जेहि सूकर होइ नृपहि भुलावा ॥
परम मित्र तापसनृप केरा ❀ जानइ सो अति कपट घनेरा ॥

वहाँ कालकेतु नामक राक्षस आया, जिसने शूकर होकर राजाको भुलावा दिया था। यह तपस्वी राजाका परम मित्र था और वह बहुतसे भारी कपट जानता था।

तेहि के सत सुत अरु दस भाई ❀ खल अति अजय देव-दुख-दाई ॥
प्रथमहिं भूप समर सब मारे ❀ बिप्र संत सुर देखि दुखारे ॥

उसके सौ पुत्र और दस भाई थे; वे सब बड़े दुष्ट, अजित और देवताओंको दुःख देनेवाले थे। राजाने ब्राह्मण, संत और देवताओंको दुःखी देखकर उन सबको पहिले ही संग्राममें मार डाला था।

तेहि खल पाछिल बयरु सँभारा ❀ तापस नृप मिलि मंत्र बिचारा ॥
जेहि रिपुछय सोइ रचेन्हि उपाऊ ❀ भावी बस न जान कछु राऊ ॥

उस दुष्टने अपना पिछला वैर याद किया और तपस्वी राजाके साथ मिलकर सलाह की कि वही उपाय करो जिससे शत्रुका नाश हो। होनहारके वशमें होनेसे राजा कुछ भी नहीं जानते थे।

दो०—रिपु तेजसी अकेल अपि ❀ लघु करि गनिय न ताहु।
अजहु देत दुख रबिससिहि ❀ सिर अवसेषित राहु ॥२००॥

तेजस्वी शत्रु अकेला भी हो, परन्तु उसे छोटा नहीं गिनना चाहिये। केवल शिर ही शेष रह जानेपर भी राहु सूर्य और चन्द्रमाको आज भी दुःख देता है।

तापस नृप निज सखहि निहारी ❀ हरषि मिलेउ उठि भयउ सुखारी ॥
मित्रहि कहि सब कथा सुनाई ❀ जातुधान बोला सुख पाई ॥

अपने मित्रको देखकर तपस्वी राजा प्रसन्न हो उठकर मिला और सुखी हुआ। सब कथा उसने अपने मित्रको कह सुनायी और वह राक्षस सुख पाकर बोला।

अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेसा ❀ जौं तुम्ह कीन्ह मोर उपदेसा ॥
परिहरि सोच रहहु तुम्ह सोई ❀ बिनु औषध बिआधि बिधि खोई ॥

हे राजा, सुनो। यदि तुमने मेरा उपदेश माना तो अब शत्रु वशमें कर लिया। चिन्ता छोड़कर तुम सो रहो, दैवने ओषधिके बिना ही रोगको खो दिया।

कुलसमेत रिपुमूल बहाई ❁ चौथे दिवस मिलब मैं आई ॥
तापसनृपहि बहुत परितोषी ❁ चला महाकपटी अतिरोषी ॥

परिवारसमेत शत्रुकी जड़को नष्ट कर मैं चौथे दिन आ मिलूंगा। तपस्वी राजाको बहुत समझा-बुझाकर वह महाकपटी और अत्यन्त क्रोधी राक्षस चल दिया।

भानुप्रतापहि बाजि समेता ❁ पहुँचायेसि छन मांझ निकेता ॥
नृपहि नारि पहिं सयन कराई ❁ हयगृह बांधेसि बाजि बनाई ॥

उसने घोड़ासमेत राजा प्रतापभानुको एक क्षणमें घर पहुँचा दिया। राजाको रानीके पास सुला दिया और घोड़ेको संभालकर घुड़सालमें बांध दिया।

दो०—राजा के उपरोहितहि ❁ हरि लेइ गयउ बहोरि।
लेइ राखेसि गिरिखोह महँ ❁ माया करि मति भोरि ॥२०१॥

फिर राजाके पुरोहितको हरण कर ले गया और मायासे बुद्धिको भ्रममें डाल उसे ले जाकर पर्वतकी गुफामें रखा।

आपु बिरचि उपरोहितरूपा ❁ परेउ जाइ तेहि सेज अनूपा ॥
जागेउ नृप अनभये बिहाना ❁ देखि भवन अति अचरजु माना ॥

स्वयं पुरोहितका रूप रखकर उसकी अनुपम शय्यापर जा सोया। प्रातःकाल होनेसे पहिले ही राजा जगे और अपना घर देखकर उन्हें अत्यन्त अचंभा हुआ।

मुनिमहिमा मनमहुँ अनुमानी ❁ उठेउ गवहिं जेहि जान न रानी ॥
कानन गयउ बाजि चढ़ि तेही ❁ पुर नरनारि न जानेउ केही ॥

मनमें तपस्वीकी महिमा समझकर राजा चुपचाप उठ गये, जिससे रानी न जान पावे। राजा उसी घोड़ेपर चढ़कर वनमें चले गये और नगरके नरनारी—किसीने नहीं जाना।

गये जामजुग भूपति आवा ❁ घर घर उत्सव बाज बधावा ॥
उपरोहितहि देख जब राजा ❁ चकित बिलोक सुमिरि सोइ काजा ॥

दोपहर बीतनेपर राजा आये और घर-घर उत्सव होने लगे और बधाई बजने लगी। राजाने जब पुरोहितको देखा तब उन्हें बड़ा अचंभा हुआ और देखते ही उस कार्यका स्मरण हो आया।

जुगसम नृपहि गये दिन तीनी ❁ कपटी मुनिपद रहि मति लीनी ॥
समय जानि उपरोहित आवा ❁ नृपहि मते सब कहि समुझावा ॥

राजाको तीन दिन युगके समान बीते और कपटी तपस्वीके चरणोंमें ही बुद्धि लगी रही। समय जानकर पुरोहित आया और राजाको सब बातें कह समझायीं।

दो०—नृप हरषेउ पहिचानि गुरु ❁ भ्रमबस रहा न चेत।
बरे तुरत सतसहस बर ❁ बिप्र कुटुंब समेत ॥२०२॥

गुरुको पहचानकर राजा प्रसन्न हुए और भ्रमके वशमें होनेसे उन्हें चेतना नहीं रही। तुरन्त ही उन्होंने परिवारसहित सौ हजार श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको न्यौता दे दिया।

उपरोहित जेवनार बनाई ❁ छरस चारि बिधि जसि स्रुति गाई ॥
मायामय तेहि कीन्ह रसोई ❁ बिंजन बहु गनि सकइ न कोई ॥

जैसा शास्त्रमें कहा गया है उसके अनुसार पुरोहितने छहों रसों और चारों तरहके भोजन बनाये। उसने अपनी मायासे रसोई की, जिसमें बहुतसे व्यंजन थे, जिन्हें कोई गिन नहीं सकता था।

बिबिध मृगन्ह कर आमिष रांधा ❁ तेहि महँ बिप्रमासु खल सांधा ॥
भोजन कहँ सब बिप्र बोलाये ❁ पग पषारि सादर बैठाये ॥

उसने अनेक प्रकारके पशुओंका मांस पकाया और दुष्टने उसमें ब्राह्मणका मांस मिला दिया। भोजन करनेके लिये सब ब्राह्मणोंको बुलाया और पैर धोकर आदरपूर्वक बिठलाया।

परुसन जबहिं लाग महिपाला ❁ भइ अकासबानी तेहि काला ॥
बिप्रबृन्द उठि उठि गृह जाहू ❁ है बड़ि हानि अन्न जनि खाहू ॥

जिस समय राजा परोसने लगे उसी समय आकाशवाणी हुई कि हे ब्राह्मणो, उठ-उठकर घर जाओ। अन्न मत खाओ। इसमें बड़ी हानि है।

भयउ रसोईं भू-सुर-मासू ❁ सब द्विज उठे मानि बिस्वासू ॥
भूप बिकल मति मोह भुलानी ❁ भावी बस न आव मुख बानी ॥

रसोईमें ब्राह्मणका मांस पका है। इस आकाशवाणीपर विश्वास कर सब ब्राह्मण उठ बैठे। राजा व्याकुल हो उठे, उनकी बुद्धि मोहमें भूल गयी और होनहारके कारण उनके मुखसे बात न निकली।

दो०—बोले बिप्र सकोप तब ❁ नहिं कछु कीन्ह बिचार।
जाइ निसाचर होहु नृप ❁ मूढ़ सहित परिवार ॥२०३॥

तब ब्राह्मणोंने कुछ विचार नहीं किया और वे क्रोधित होकर बोले कि हे मूर्ख राजा, तू अपने परिवारसहित जाकर राक्षस हो।

छत्रबंध तैं बिप्र बोलाई ❀ घालै लिये सहित समुदाई ॥
ईस्वर राखा धरम हमारा ❀ जइहसि तैं समेत परिवारा ॥

हे राजा, सब ब्राह्मणोंको बुलाकर तूने उन्हें कुलसहित भ्रष्ट करना चाहा। ईश्वरने हमारे धर्मकी रक्षा की, परन्तु तू परिवारसमेत नष्ट होगा।

संबत मध्य नास तव होऊ ❀ जलदाता न रहिहि कुल कोऊ ॥
नृप सुनि साप बिकल अति त्रासा ❀ भइ बहोरि बरगिरा अकासा ॥

एक वर्षके बीचमें तेरा नाश हो जायगा और तेरे कुलमें कोई पानी देनेवाला न रहेगा। शाप सुनकर भयसे राजा अत्यन्त व्याकुल हुए, तब फिर सुन्दर आकाशवाणी हुई।

बिप्रहु साप बिचारि न दीन्हा ❀ नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा ॥
चकित बिप्र सब सुनि नभबानी ❀ भूप गयउ जहं भोजनखानी ॥

हे ब्राह्मणो, तुमने विचारकर शाप नहीं दिया। राजाने कुछ भी अपराध नहीं किया है। आकाशवाणी सुनकर सब ब्राह्मण चकित हो गये और राजा वहां गये जहां रसोईघर था।

तहँ न असन नहिं बिप्र सुआरा ❀ फिरउ राउ मन सोच अपारा ॥
सब प्रसंग महिसुरन्ह सुनाई ❀ त्रसित परेउ अवनी अकुलाई ॥

वहां न भोजन-सामग्री थी और न ब्राह्मण रसोइया। राजा लौट आये। उनके मनमें बड़ा दुःख था। ब्राह्मणोंको सब वृत्तान्त सुनाकर भयभीत राजा व्याकुल होकर पृथिवीपर गिर पड़े।

दो०—भूपति भावी मिटइ नहिं ❀ जदपि न दूषन तोर।
किये अन्यथा होइ नहिं ❀ बिप्रसाप अतिघोर ॥२०४॥

ब्राह्मणोंने कहा कि हे राजा, यद्यपि तुम्हारा दोष नहीं है तथापि होनहार नहीं मिटती। ब्राह्मणोंका शाप अत्यन्त भयङ्कर होता है। वह किसी तरह मिथ्या नहीं हो सकता।

अस कहि सब महिदेव सिधाये ❀ समाचार पुरलोगन्ह पाये ॥
सोचहिं दूषन दैवहि देहीं ❀ बिचरत हंस काग किय जेहीं ॥

ऐसा कहकर सब ब्राह्मण चले गये और सब नगरवासियोंने समाचार पाये। वे बहुत सोच करते और दैवको दोष देते थे, जिसने हंस बनाते हुए कौआ बना दिया।

उपरोहितहि भवन पहुँचाई ❀ असुर तापसहि खबरि जनाई ॥
तेहि खल जहँ तहँ पत्र पठाये ❀ सजि सजि सेन भूप सब धाये ॥

पुरोहितको घर पहुँचकर राक्षसने तपस्वीको समाचार बतलाया। उस दुष्टने जहां-तहां चिट्ठियां भेजीं और सब राजा सेना सजा-सजाकर चढ़ दौड़े।

घेरेन्हि नगर निसान बजाई ❀ बिबिधभांति नित होइ लराई ॥
जूझे सकल सुभट करि करनी ❀ बंधुसमेत परेउ नृप धरनी ॥

धौंसा बजाकर उन्होंने नगर घेर लिया और नित्य अनेक प्रकारकी लड़ाई होने लगी। सब योद्धा पराक्रम दिखलाकर जूझ गये और राजा भी भाईसहित धरतीपर गिर पड़े।

सत्य-केतु-कुल कोउ नहिं बांचा ❀ बिप्रसाप किमि होइ असांचा ॥
रिपु जिति सब नृप नगर बसाई ❀ निज पुर गवने जय जस पाई ॥

सत्यकेतुके कुलमें कोई नहीं बचा। ब्राह्मणका शाप असत्य कैसे हो सकता है? सब राजाओंने शत्रुको जीतकर नगरको बसाया और जय एवं यश पाकर वे सब अपने-अपने नगरको गये।

दो०—भरद्वाज सुनु जाहि जब ❀ होहि बिधाता बाम ।
धूरि मेरुसम जनक जम ❀ ताहि ब्यालसम दाम ॥२०५॥

हे भरद्वाज, सुनो! जिस समय दैव जिसके प्रतिकूल होता है उस समय उसको धूलि मेरु पर्वत, पिता यमदूत और रस्सी सांपके समान हो जाती है।

काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा ❀ भयउ निसाचर सहित समाजा ॥
दस सिर ताहि बीस भुजदंडा ❀ रावन नाम बीर बरिबंडा ॥

हे मुनि, सुनो। समय पाकर वही राजा अपने कुटुम्बसहित राक्षस हुए। उनके दश शिर और बीस भुजाएं थीं। उनका नाम रावण था और वह बहुत वीर और बलवान थे।

भूपअनुज अरि - मर्दन-नामा ❀ भयउ सो कुंभकरन बलधामा ॥
सचिव जो रहा धरमरुचि जासू ❀ भयउ बिमात्र बंधु लघु तासू ॥

राजाके छोटे भाईका नाम अरिमर्दन था। यह महाबली कुम्भकर्ण हुआ। जो मंत्री था और जिसकी धर्ममें रुचि थी वह दूसरी मातासे उसका छोटा भाई हुआ।

नाम बिभीषन जेहि जगु जाना ❀ बिस्नुभगत बिग्यान निधाना ॥
रहे जे सुत सेवक नृप केरे ❀ भये निसाचर घोर घनेरे ॥

इसका नाम विभीषण हुआ जिसे संसार जानता है कि वह महाज्ञानी और विष्णुभक्त था। राजाके जो पुत्र और सेवक थे वे बहुतसे भयंकर राक्षस हुए।

कामरूप खल जिनिस अनेका ⊛ कुटिल भयंकर बिगतबिबेका ॥
कृपारहित हिंसक सब पापी ⊛ बरनि न जाइ बिस्वपरितापी ॥

अनेक जातिके ये दुष्ट इच्छानुसार रूप रखनेवाले,खोटे,भयङ्कर और ज्ञानरहित थे। ये सब हिंसा करनेवाले पापी, दयाशून्य और संसारको दुःखदायी थे। उनका वर्णन नहीं हो सकता।

दो०—उपजे जदपि पुलस्त्यकुल ⊛ पावन अमल अनूप।
तदपि मही-सुर-साप-बस ⊛ भये सकल अघरूप ॥२०६॥

यद्यपि पवित्र, निर्मल और अनुपम पुलस्त्यकुलमें उनका जन्म हुआ तथापि ब्राह्मणोंके शापके कारण वे सब पापके रूप ही हुए।

कीन्ह बिबिध तप तीनिउँ भाई ⊛ परम उग्र नहिं बरनि सो जाई ॥
गयउ निकट तप देखि बिधाता ⊛ माँगहु बर प्रसन्न मैं ताता ॥

तीनों भाइयोंने अनेक प्रकारका अत्यन्त कठोर तप किया, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। तप देखकर ब्रह्मा पास गये और कहा कि हे तात, मैं प्रसन्न हूं। वर मांगो।

करि बिनती पद गहि दससीसा ⊛ बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा ॥
हम काहू के मरहिं न मारे ⊛ बानर मनुज जाति दुइ बारे ॥

विनती करके और पैर पकड़कर रावणने कहा कि हे जगदीश्वर, मेरी बात सुनो। बन्दर और मनुष्य दो जातिके प्राणियोंको छोड़कर मैं किसीके मारे न मरूं।

एवमस्तु तुम्ह बड़ तप कीन्हा ⊛ मैं ब्रह्मा मिलि तेहि बर दीन्हा ॥
पुनि प्रभु कुंभकरन पहिँ गयऊ ⊛ तेहि बिलोकि मन बिसमय भयऊ ॥

ब्रह्माने कहा कि ऐसा ही हो। तुमने बड़ा तप किया है। महादेवजी कहते हैं कि ब्रह्मासे मिलकर मैंने उसे वर दिया। फिर प्रभु कुम्भकर्णके पास गये। उसे देख उनके मनको बड़ा विस्मय हुआ।

जौं एहि खल नित करब अहारू ⊛ होइहि सब उजारि संसारू ॥
सारद प्रेरि तासु मति फेरी ⊛ माँगेसि नींद मास षट केरी ॥

यदि यह दुष्ट नित्य भोजन करेगा तो सब संसार उजड़ जायगा। अतएव सरस्वतीको प्रेरितकर उसकी बुद्धि पलट दी और उसने छः महीनेकी नींदको मांगा।

दो०—गए बिभीषन पास पुनि * कहेउ पुत्र बर मागु ।
तेहि माँगेउ भगवंत-पद * कमल अमल अनुरागु ॥२०७॥

फिर वे विभीषणके पास गये और कहा कि हे पुत्र! वर माँगो। विभीषणने भगवान्‌के चरणकमलोंमें निर्मल प्रेम माँगा।

तिन्हहिं देइ बर ब्रह्म सिधाये * हरषित ते अपने गृह आये ॥
मयतनुजा मंदोदरिनामा * परमसुंदरी नारिललामा ॥

उन्हें वर देकर ब्रह्मा चले गये और वे प्रसन्न होकर अपने घर आये। मय नामक दैत्यकी पुत्रीका नाम मंदोदरी था, जो अत्यन्त सुन्दरी और रूपवती स्त्री थी।

सोइ मय दीन्हि रावनहि आनी * होइहि जातुधानपति जानी ॥
हरषित भयउ नारि भलि पाई * पुनि दोउ बंधु बिआहेसि जाई ॥

यह जानकर कि यह राक्षसोंका स्वामी होगा, मयने उसे लाकर रावणको दिया। अच्छी स्त्री पाकर रावण प्रसन्न हुआ और फिर जाकर उसने दोनों भाइयोंका भी विवाह कर दिया।

गिरि त्रिकूट एक सिंधु मझारी * बिधिनिर्मित दुर्गम अति भारी ॥
सोइ मयदानव बहुरि सँवारा * कनकरचित मनिभवन अपारा ॥

समुद्रके बीचमें एक त्रिकूटगिरि पर्वत था, जिसे ब्रह्माने बहुत ही दुर्गम बनाया था। उसीको मयदानवने फिर सँभाला और वहाँ सोनेकी मणियोंसे जड़े हुए बहुतसे घर बनाये।

भोगावति जस अहि-कुल-बासा * अमरावति जसि सक्रनिवासा ॥
तिन्हतें अधिक रम्य अति बंका * जगबिख्यात नाम तेहि लंका ॥

साँपोंके रहनेकी जैसी भोगावती और इन्द्रके रहनेकी जैसी अमरावती है, इनसे भी अधिक रमणीक और अत्यन्त बाँकी वह पुरी हुई और उसका नाम संसार-प्रसिद्ध लङ्का हुआ।

दो०—खाईं सिंधु गंभीर अति * चारिहु दिसि फिरि आव ।
कनककोट मनिखचित दृढ़ * बरनि न जाइ बनाव ॥२०८॥

उसकी चारों दिशाओंमें समुद्रकी खाई अत्यन्त गहरी थी और मणियोंसे जड़ा हुआ सोनेका मजबूत कोट था। इसकी बनावटका वर्णन नहीं किया जा सकता।

हरिप्रेरित जेहि कलप जोइ * जातुधानपति होइ ।
सूर प्रतापी अतुलबल * दलसमेत बस सोइ ॥२०९॥

भगवान्‌की इच्छासे जिस कल्पमें जो कोई राक्षसोंका स्वामी होता है वही शूर-वीर, प्रतापी और महाबली अपनी सेनासहित वहां बसता है।

रहे तहां निसिचर भट भारे ❀ ते सब सुरन्ह समर संहारे ॥
अब तह रहहि सक्र के प्रेरे ❀ रच्छक कोटि जच्छपति केरे ॥

वहां जो बड़े योद्धा राक्षस रहते थे, उन सबको देवताओंने संग्राममें मार डाला। अब वहां इन्द्रके भेजे हुए यक्षपतिके एक करोड़ रक्षक रहते हैं।

दसमुख कतहुँ खबरि असि पाई ❀ सेन साजि गढ़ घेरेसि जाई ॥
देखि बिकट भट बड़ि कटकाई ❀ जच्छ जीव लेइ गयउ पराई ॥

रावणने कहीं यह समाचार पा लिया और सेना सजाकर गढ़ जा घेरा। विकट योद्धाओं और बड़ी सेनाको देखकर सब यक्ष प्राण लेकर भाग गये।

फिरि सब नगर दसानन देखा ❀ गयउ सोच सुख भयउ बिसेखा ॥
सुंदर सहज अगम अनुमानी ❀ कीन्हि तहाँ रावन रजधानी ॥

रावणने फिर सारा नगर देखा। उसका सोच जाता रहा और उसे बहुत सुख हुआ। उसे सुन्दर और प्रकृत अजेय समझकर वहां रावणने अपनी राजधानी बनायी।

जेहि जस जोग बांटि गृह दीन्हे ❀ सुखी सकल रजनीचर कीन्हे ॥
एक बार कुबेर पर धावा ❀ पुष्पकजान जीति लेइ आवा ॥

रावणने घरोंको बांट दिया और जो जिस योग्य था उसे वैसा देकर सब राक्षसोंको सुखी किया। एक बार कुवेरपर चढ़ाई कर वह पुष्पक विमान जीत ले आया।

दो०—कौतुकही कैलास पुनि ❀ लीन्हेसि जाइ उठाइ।
मनहुँ तौलि निज बाहुबल ❀ चला बहुत सुख पाइ ॥२१०॥

फिर जाकर क्रीड़ामें ही कैलाश पर्वतको उठा लिया; मानों अपनी भुजाओंके बलको तोलकर वह बहुत सुख पाकर वहांसे चला आया।

सुख संपति सुत सेन सहाई ❀ जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई ॥
नित नूतन सब बाढ़त जाई ❀ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई ॥

सुख, संपत्ति, पुत्र, सेना, सहायक, जय, प्रताप, बल, बुद्धि और यश सब नित्य नया बढ़ता जाता था; जैसे लाभ अधिक होनेसे लोभ बढ़ता जाता है।

अतिबल कुंभकरन अस भ्राता ❀ जेहि कहुँ नहिं प्रतिभट जगजाता ॥
करइ पान सोवइ षटमासा ❀ जागत होइ तिहूं पुर त्रासा ॥

अत्यन्त बली कुम्भकर्ण जैसा उसका भाई था; जिसकी बराबरीका योद्धा संसारमें उत्पन्न नहीं हुआ था। वह मदिरापान करता और छः महीने सोता था और उसके जागते ही तीनों लोकोंमें डर फैल जाता था।

जौं दिन प्रति अहार कर सोई ❀ बिस्व बेगि सब चौपट होई ॥
समरधीर नहिं जाइ बखाना ❀ तेहि सम अमित बीर बलवाना ॥

यदि वह प्रतिदिन भोजन करता तो जल्दी ही सब संसार चौपट हो जाता। वह संग्राममें बड़ा धीर था, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उसीके समान वीर और बलवान वहां असंख्य थे।

बारिदनाद जेठ सुत तासू ❀ भट महं प्रथम लीक जग जासू ॥
जेहि न होइ रन सनमुख कोई ❀ सुरपुर नितहिं परावन होई ॥

उसका बड़ा पुत्र मेघनाद था, जिसकी गणना योद्धाओंमें संसारमें प्रथम थी। संग्राममें उसके सामने कोई न होता था और देवलोकमें नित्य ही भगदड़ पड़ती थी।

दो०—कुमुख अकंपन कुलिसरद ❀ धूमकेतु अतिकाय।
एक एक जग जीति सक ❀ ऐसे सु - भट - निकाय ॥२११॥

कुमुख, अकंपन, वज्रदन्त, धूमकेतु, और अतिकाय इनमेंसे एक-एक संसारको जीत सकता था और वहां ऐसे वीर योद्धा असंख्य थे।

कामरूप जानहिं सब माया ❀ सपनेहुं जिन्ह के धरम न दाया ॥
दसमुख बैठ सभा एक बारा ❀ देखि अमित आपन परिवारा ॥

सब राक्षस इच्छानुसार रूप रख लेनेवाले थे और सारी मायाओंको जानते थे। उनके स्वप्नमें भी धर्म और दया न थी। एक बार रावण सभामें बैठा और अपने असीम परिवारको देखा।

सुतसमूह जन परिजन नाती ❀ गनइ को पार निसाचरजाती ॥
सेन बिलोकि सहज अभिमानी ❀ बोला बचन क्रोध-मद-सानी ॥

बहुतसे बेटे, पोते, कुटुम्बी और सम्बन्धी अनेक जातिके राक्षसोंको कौन गिन सकता है? स्वभावसे ही अभिमानी रावण सेनाको देखकर क्रोध और मदसे भरे हुए ये वचन बोला।

सुनहु सकल रजनी-चर-जूथा ❀ हमरे बैरी बिबुधबरूथा ॥
ते सनमुख नहिं करहिं लराई ❀ देखि सबल रिपु जाहिं पराई ॥

हे राक्षसो, सुनो। देवताओंके समूह हमारे वैरी हैं। वे सामने लड़ाई नहीं करते और बली शत्रु देखकर भाग जाते हैं।

तिन्हकर मरन एक बिधि होई ❀ कहउ बुझाइ सुनहु अब सोई॥
द्विजभोजन मख होम सराधा ❀ सब कै जाइ करहु तुम बाधा॥

उनका मरना एक उपायसे हो सकता है। समझाकर कहता हूं, अब वही सुनो। ब्राह्मण-भोजन, यज्ञ, होम और श्राद्ध—सबमें जाकर तुम बाधा डालो।

दो०—छुधाछीन बलहीन सुर ❀ सहजहिं मिलिहहिं आइ।
तब मारिहउँ कि छाड़िहउँ ❀ भली भांति अपनाइ॥२१२॥

भूखसे क्षीण और बलहीन होकर देवता सहज ही आकर मिलेंगे। तब उन्हें या तो मारूंगा या भली-भांति अपनाकर छोड़ दूंगा।

मेघनाद कहँ पुनि हँकरावा ❀ दीन्ही सिख बल बयरु बढ़ावा॥
जे सुर समरधीर बलवाना ❀ जिन के लरिबे कर अभिमाना॥

फिर मेघनादको बुलवाया और उसे सीख देकर उसका उत्साह और देवताओंके प्रति वैरभाव बढ़ाया। रावणने कहा कि जो देवता बलवान और युद्धमें धीर हैं और जिन्हें लड़नेका अभिमान है,

तिन्हहिं जीति रन आनेसु बांधी ❀ उठि सुत पितु अनुसासन कांधी॥
एहि बिधि सबहीं आग्या दीन्ही ❀ आपुन चलेउ गदा कर लीन्ही॥

उन्हें युद्धमें जीतकर बांध लाओ। पुत्र मेघनादने उठकर पिताकी आज्ञाको स्वीकार करके कन्धेपर रखा। रावणने इस प्रकार सभीको आज्ञा दी और स्वयं भी गदा हाथमें लेकर चला।

चलत दसानन डोलति अवनी ❀ गर्जत गर्भ स्रवहिं सुररवनी॥
रावन आवत सुनेउ सकोहा ❀ देवन्ह तके मेरु-गिरि-खोहा॥

रावणके चलनेसे पृथिवी हिलती थी और गरजनेसे देवताओंकी स्त्रियोंके गर्भ गिर जाते थे। क्रोधित रावणको जब आते हुए सुना तब देवताओंने मेरु पर्वतकी गुफाओंकी शरण ली।

दिगपालन्ह के लोक सिधाए ❀ सूने सकल दसानन पाये॥
पुनि पुनि सिंहनाद करि भारी ❀ देइ देवतन्ह गारि प्रचारी॥

दिक्पालोंके लोकोंमें आनेपर रावणने उन सबको सूना पाया। बार बार सिंहकी भांति भयंकर गर्जना करके वह ललकारकर देवताओंको गालियां देने लगा।

रन-मद-मत्त फिरइ जग धावा ❀ प्रतिभट खोजत कतहुँ न पावा ॥
रबि ससि पवन बरुन धनधारी ❀ अगिनि काल जम सब अधिकारी ॥

युद्धके मदसे उन्मत्त होकर वह अपनी बराबरीके योद्धाको खोजता हुआ संसारमें दौड़ता फिरता था, परन्तु उसने कहीं पाया नहीं। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, जल, कुबेर, अग्नि, काल, यम, सब अधिकारी—

किन्नर सिद्ध मनुज सुर नागा ❀ हठि सबही के पंथहि लागा ॥
ब्रह्मसृष्टि जहँ लगि तनुधारी ❀ दस-मुख-बस-बर्ती नरनारी ॥
आयसु करहिं सकल भयभीता ❀ नवहिं आइ नित चरन बिनीता ॥

किन्नर, सिद्ध, मनुष्य, देवता और नाग, सबके पीछे रावण बरजोरी लग गया। ब्रह्माकी सृष्टिमें जहांतक शरीरधारी थे वहांतक सब स्त्री पुरुष रावणके अधीन थे। सब भयभीत होकर आज्ञाका पालन करते और नम्र भावसे नित्य आकर चरणोंमें झुकते थे।

दो०—भुजबल बिस्व बस्य करि ❀ राखेसि कोउ न स्वतंत्र।
मंडलीकमनि रावन ❀ राज करइ निजमंत्र ॥२१३॥

अपनी भुजाओंके बलसे संसारको अपने वशमें कर लिया और किसीको भी स्वतंत्र नहीं रखा। चक्रवर्ती रावण अपनी सलाहसे राज्य करने लगा।

देव - जच्छ - गंधर्ब - नर ❀ किन्नर - नाग - कुमारि।
जीति बरीं निज-बाहु-बल ❀ बहु - सुन्दर - बर-नारि ॥२१४॥

देव, यक्ष, गन्धर्व, नर, किन्नर और नाग, इन सबकी कन्याओं और बहुतसी अत्यन्त सुन्दर स्त्रियोंको अपनी भुजाओंके बलसे जीतकर रावणने उनसे विवाह किया।

इन्द्रजीत सन जो कछु कहेऊ ❀ सो सब जनु पहिलेहि करि रहेऊ ॥
प्रथमहिं जिन कहँ आयसु दीन्हा ❀ तिन्हकर चरित सुनहु जो कीन्हा ॥

इन्द्रजीतसे रावणने जो कुछ कहा वह सब उसने मानों पहिलेसे ही कर रखा था। पहिले ही जिनको आज्ञा दी थी, उन्होंने जो किया उसका वृत्तान्त सुनो।

देखत भीमरूप सब पापी ❀ निसि-चर-निकर देवपरितापी ॥
करहिं उपद्रव असुरनिकाया ❀ नानारूप धरहिं करि माया ॥

राक्षसोंका वह झुण्ड देवताओंको दुःख देनेवाला था। वह सब पापी और देखनेमें डरावने थे। ये सब दैत्य उपद्रव करते और मायासे अनेक प्रकारका रूप रखते थे।

जेहि बिधि होइ धरम निर्मूला ❀ सो सब करहिं बेदप्रतिकूला ॥
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं ❀ नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं ॥

जिस प्रकार धर्म निर्मूल हो वही वेदविरुद्ध सब काम वे करते थे। जिस-जिस स्थानमें गो-ब्राह्मणको पाते थे उसी नगर, गांव और पुरमें वे आग लगा देते थे।

सुभ आचरन कतहुँ नहिँ होई ❀ देव बिप्र गुरु मान न कोई ॥
नहिं हरिभगति जग्य जप दाना ❀ सपनेहुँ सुनिय न बेद पुराना ॥

कहीं भी शुभ आचरण नहीं होते थे और देवता, ब्राह्मण और गुरुको कोई न मानता था। भगवान्‌की भक्ति, यज्ञ, जप और दान न होते थे और स्वप्नमें भी वेद एवं पुराण न सुन पड़ते थे।

छं०—जप जोग बिरागा तप मखभागा स्रवन सुनइ दससीसा।
आपुन उठि धावइ रहइ न पावइ धरि सब घालइ खीसा ॥
अस भ्रष्ट अचारा भा संसारा धरम सुनिय नहिं काना।
तेहि बहु बिधि त्रासइ देस निकासइ जो कह बेद पुराना ॥

जप, योग, वैराग्य, तप और यज्ञका भाग—सबको रावण जहां कानोंसे सुनता वहां स्वयं ही उठकर जा पहुंचता था। ये सब बचने न पाते थे। वह क्रोधमें भरकर सबको तितर-बितर कर डालता था। संसार ऐसा आचारभ्रष्ट हो गया कि धर्मका नाम कहीं कानोंसे भी न सुन पड़ता था। जो वेद और पुराण कहता था, उसे रावण अनेक प्रकारसे डर दिखलाता और देशसे निकाल देता था।

सो०—बरनि न जाइ अनीति ❀ घोर निसाचर जो करहिं।
हिंसा पर अति प्रीति ❀ तिन्हके पापहिं कवनि मिति ॥२१५॥

भयंकर राक्षस जो अनीति करते थे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिन्हें हिंसासे अत्यन्त प्रेम हो उनके पापोंकी सीमा क्या है।

बाढ़े खल बहु चोर जुआरा ❀ जे लंपट पर-धन पर-दारा ॥
मानहिं मातु पिता नहिं देवा ❀ साधुन्ह सन करवावहिं सेवा ॥

बहुतसे दुष्ट, चोर और जुआरी बढ़ गये, जो पराये धन और परायी स्त्रीको चाहनेवाले धूर्त थे। वे माता-पिता और देवताओंको नहीं मानते थे और साधुओंसे सेवा करवाते थे।

जिन्ह के यह आचरन भवानी ❀ ते जानहु निसिचर सम प्रानी ॥
अतिसय देखि धरम कै हानी ❀ परम सभीत धरा अकुलानी ॥

हे भवानी, जिनका आचरण ऐसा हो उन प्राणियोंको राक्षसके समान ही जानो। धर्मकी अत्यन्त हानि देखकर पृथ्वी अत्यन्त भयभीत होकर व्याकुल हो उठी।

गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही ❀ जस मोहि गरुअ एक परद्रोही॥
सकल धरम देखइ बिपरीता ❀ कहि न सकइ रावन भयभीता॥

(कहने लगी) मुझे पर्वत, नदी और समुद्रका बोझ उतना नहीं लगता जितना एक-दूसरोंसे द्रोह करनेवालेका लगता है। सब धर्मोंको प्रतिकूल देखती थी, परन्तु रावणके डरसे कह नहीं सकती थी।

धेनुरूप धरि हृदय बिचारी ❀ गई तहाँ जहँ सुर-मुनि-झारी॥
निजसंताप सुनायेसि रोई ❀ काहू तें कछु काज न होई॥

हृदयमें विचारकर पृथिवी गायका रूप रखकर वहां गयी जहां देवता और मुनियोंका समूह था। उसने रोकर अपना दुःख सुनाया, परन्तु किसीसे कुछ काम न हो सका।

छं०—सुर मुनि गंधर्बा मिलि करि सर्बा गे बिरंचि के लोका।
सँग गो-तनु-धारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका॥
ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछू न बसाई।
जा करि तैं दासी सो अबिनासी हमरउ तोर सहाई॥

देवता, मुनि और गंधर्व—सब मिलकर ब्रह्माके लोकमें गये। संगमें गोका शरीर धारण किये हुए बेचारी पृथिवी भी भय और शोकसे अत्यन्त व्याकुल थी। ब्रह्माने सब बात जान ली और मनमें विचार किया कि मेरा कुछ भी वश न चल सकेगा। उन्होंने कहा कि जिसकी तुम दासी हो उसका कभी नाश नहीं होता। वही तुम्हारा और हमारा भी सहायक है।

सो०—धरनि धरहि मन धीर ❀ कह बिरंचि हरिपद सुमिरु।
जानत जन की पीर ❀ प्रभु भंजहि दारुनबिपति॥२१६॥

ब्रह्माने कहा कि हे पृथिवी मनमें धीरज रखो और भगवान्के चरणोंका स्मरण करो। भगवान् अपने भक्तकी पीड़ाको जानते हैं, वे भारी विपत्तिको दूर करेंगे।

बैठे सुर सब करहिं बिचारा ❀ कहँ पाइय प्रभु करिय पुकारा॥
पुर बैकुंठ जान कह कोई ❀ कोउ कह पयनिधि महँ बस सोई॥

सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि प्रभुको कहां पावें जो पुकार करें। कोई बैकुण्ठपुरीमें जानेके लिये कहने लगा और कोई कहने लगा कि वे क्षीर समुद्रमें बसते हैं।

जा के हृदय भगति जस प्रीती ❀ प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहि रीती ॥
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ ❀ अवसर पाइ बचन एक कहेऊँ ॥

जिसके हृदयमें जैसी भक्ति और प्रीति होती है प्रभु वहां सदैव उसी रीतिसे प्रकट होते हैं। हे गिरिजा, उस समाजमें मैं भी था। अवसर पाकर मैंने एक बात कही।

हरि व्यापक सरबत्र समाना ❀ प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना ॥
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं ❀ कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥

भगवान् सर्वत्र समान रूपसे व्यापक हैं और मैं जानता हूं कि वे प्रेमसे प्रकट होते हैं। भला, कहो, वह कौन देश, काल, दिशा और विदिशा है जहां प्रभु नहीं हैं।

अग-जग-मय सब रहित बिरागी ❀ प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी ॥
मोर बचन सब के मन माना ❀ साधु साधु करि ब्रह्म बखाना ॥

परमात्मा चर और अचर सबमें व्यापक, सबसे न्यारा और वैरागी हैं। प्रभु प्रेमसे प्रकट होते हैं, जैसे आग। मेरी बात सबके मनको जंच गयी और ब्रह्माने 'साधु-साधु' कहकर उसकी बड़ाई की।

दो०—सुनि बिरंचि मन हरष तन ❀ पुलकि नयन बह नीर।
अस्तुति करत जोरि कर ❀ सावधान मतिधीर ॥२१७॥

सुनकर ब्रह्माका मन प्रसन्न हुआ। उनका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंसे आंसू बहने लगे। फिर वे मतिधीर सावधान होकर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे।

छं०—जय जय सुरनायक जन - सुख - दायक प्रनतपाल भगवंता।
गो-द्विज-हित-कारी जय असुरारी सिंधु-सुता-प्रिय-कंता ॥
पालन सुर धरनी अद्भुतकरनी मरम न जानइ कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करहु अनुग्रह सोई ॥

हे देवताओंके स्वामी, हे भक्तोंको सुख देनेवाले, प्रणतपाल भगवान्, तुम्हारी जय हो, जय हो, गो और ब्राह्मणोंके हितकारी, राक्षसोंके शत्रु और समुद्रकी पुत्री लक्ष्मीके प्यारे स्वामी, तुम्हारी जय हो। हे देवताओं और पृथिवीका पालन करनेवाले, तुम्हारे कार्य अद्भुत हैं, उनका कोई मर्म नहीं जानता। जो स्वभावतः कृपालु और दीनदयालु हैं, वही भगवान् कृपा करें।

जय जय अबिनासी सब - घट - बासी व्यापक परमानंदा।
अबिगत गोतीतं चरितपुनीतं मायारहित मुकुंदा ॥

जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगतमोह मुनिबृंदा।
निसिबासर ध्यावहिं गुनगन गावहिं जयति सच्चिदानंदा॥

हे अविनाशी, हे अन्तर्यामी, हे सर्वव्यापक, हे परमानन्दस्वरूप, तुम्हारी जय हो, जय हो। तुम्हारे पवित्र चरित मायासे रहित और मोक्षको देनेवाले हैं, वे सर्वत्र हैं, परन्तु इन्द्रियोंसे नहीं जाने जाते। जिनके लिये मोह दूर कर मुनियोंके समूह वैरागी होते, अत्यन्त प्रेम करते, रात-दिन ध्यान करते और गुणगण गाते हैं उन्हीं सच्चिदानन्द भगवान्की जय हो।

जेहि सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करउ अघारी चिंत हमारी जानिय भगति न पूजा॥
जो भव-भय-भंजन मुनि-मन-रंजन गंजन बिपतिबरूथा।
मन बच क्रम बानी छाड़ि सयानी सरन सकल-सुर-यूथा॥

जिन्होंने साथमें किसी दूसरे सहायकके विना ही यह तीन तरहकी सृष्टि उत्पन्न की, वही पापनाशक भगवान् हमारी चिन्ता करें। हम भक्ति और पूजा—कुछ नहीं जानते। जो भगवान संसारके भयको दूर कर देनेवाले मुनियोंके मनको प्रसन्न करनेवाले और विपत्तियोंके समूहको नष्ट कर देनेवाले हैं, सब देवताओंका समूह शब्दचातुर्य छोड़कर मन, वाणी और कार्यसे जिनकी शरणमें है।

सारद श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहुँ कोउ नहिं जाना॥
जेहि दीन पियारे बेद पुकारे द्रवउ सो श्रीभगवाना॥
भव-बारिधि-मंदर सब बिधि सुन्दर गुनमंदिर सुखपुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पदकंजा॥

जिन्हें शारदा, वेद, शेषनाग और समस्त ऋषि—कोई नहीं जानता, वेदोंने जिनके लिये कहा है कि उन्हें दीन जन प्यारे हैं, वही भगवान् कृपा करें। आप सब प्रकार सुन्दर, सुखमय, गुणनिधान और संसाररूपी समुद्रके लिये मन्दराचल पर्वतके समान हैं। हे नाथ, मुनि, सिद्धजन और सब देवता, भयसे अत्यन्त व्याकुल होकर आपके चरणकमलोंको नमस्कार करते हैं।

दो०—जानि सभय सुर भूमि ❀ बचन समेत सनेह।
गगनगिरा गंभीर भइ ❀ हरनि सोकसंदेह॥१२८॥

देवताओं और पृथिवीको डरा हुआ जानकर और उनकी प्रेमभरी विनती सुनकर सन्देह और शोकको दूर कर देनेवाली गंभीर आकाशवाणी हुई।

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा ❁ तुम्हहि लागि धरिहउँ नरबेसा ॥
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा ❁ लेइहउँ दिन-कर-बंस-उदारा ॥

हे मुनि और सिद्धजन, हे देवताओंके स्वामी, मत डरो। तुम्हारे लिये मैं मनुष्य-शरीर धारण करूंगा। उदार सूर्यवंशमें अपने अंशोंसहित मैं मनुष्यका अवतार लूंगा।

कस्यप अदिति महातप कीन्हा ❁ तिन्ह कहँ मैं पूरब बर दीन्हा ॥
ते दसरथ कौसल्या रूपा ❁ कोसलपुरी प्रगट नरभूपा ॥

कश्यप और अदितिने महान् तप किया था। उनको मैंने पूर्वकालमें वरदान दिया था। वे दोनों दशरथ और कौशल्याके रूपमें अयोध्यामें राजा-रानी हुए हैं।

तिन्ह के गृह अवतरिहउँ जाई ❁ रघु-कुल-तिलक सो चारिउ भाई ॥
नारद बचन सत्य सब करिहउँ ❁ परम भक्ति समेत अवतरिहउँ ॥

वे रघुकुलमें श्रेष्ठ हैं। हम चारों भाई उनके घर जाकर अवतार लेंगे। नारदजीके समस्त वचनोंको सत्य करूंगा और अपनी परम शक्तिसमेत अवतार लूंगा।

हरिहउँ सकल भूमि गरुआई ❁ निर्भय होहु देव समुदाई ॥
गगन ब्रह्म बानी सुनि काना ❁ तुरत फिरे सुर हृदय जुड़ाना ॥
तब ब्रह्मा धरनिहि समुझावा ❁ अभय भई भरोस जिय आवा ॥

हे देवताओ, मैं पृथिवीका सब भार हरण करूंगा। तुम निर्भय हो जाओ। आकाशसे ब्रह्मवाणीको कानों सुनकर देवताओंका हृदय शीतल हुआ और वे तुरन्त लौट गये। तब ब्रह्माने पृथिवीको समझाया, जिससे वह निर्भय हो गयी और उसके हृदयमें भरोसा आ गया।

दो०—निज लोकहि बिरंचि गे ❁ देवन्ह इहइ सिखाइ।
बानरतनु धरि धरनि महँ ❁ हरिपद सेवहु जाइ ॥२१६॥

देवताओंको यह सिखलाकर ब्रह्मा अपने लोकको गये कि बन्दरका शरीर रखकर पृथिवीपर जाकर भगवान्के चरणोंकी सेवा करो।

गये देव सब निज निज धामा ❁ भूमिसहित मन कहँ बिस्रामा ॥
जो कछु आयसु ब्रह्मा दीन्हा ❁ हरषे देव बिलंब न कीन्हा ॥

सब देवता अपने-अपने घर गये। पृथिवीसहित सबके मनको धीरज हो गया। ब्रह्माने जो कुछ आज्ञा दी, उससे देवता प्रसन्न हुए और उन्होंने देर नहीं की।

बन-चर-देह धरी छिति माहीं ❀ अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं ॥
गिरि-तरु-नख-आयुध सब बीरा ❀ हरिमारग चितवहिं मतिधीरा ॥

उन्होंने पृथिवीपर वानरका शरीर धारण किया। उनका बल और प्रताप अपार था। वे सब वीर थे। पर्वत, वृक्ष और नख ही उनके शस्त्र थे। धीर बुद्धिवाले वे सब भगवान्‌की बाट जोहते थे।

गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी ❀ रहे निजनिज अनीक रचिरूरी ॥
यह सब रुचिर चरित मैं भाषा ❀ अब सो सुनहु जो बीचहिं राषा ॥

पर्वतों और वनोंमें अपनी अपनी सुन्दर टोलियां बनाकर वे जहां-तहां भलीभांति रहने लगे। यह सब सुन्दर चरित मैंने कहा। अब उसे सुनो जो बीचमें ही रख लिया है।

(रामावतार-वर्णन)

अवधपुरी रघु - कुल - मनि - राऊ ❀ बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊ ॥
धरम-धुरंधर गुननिधि ग्यानी ❀ हृदय भगति मति सारँगपानी ॥

अयोध्यामें रघुकुल-शिरोमणि राजा थे। उनका वेदविदित नाम दशरथ था। वे दृढ़ धर्मात्मा, गुणोंकी खान और ज्ञानी थे। हाथमें शार्ङ्गधनुष धारण करनेवाले भगवान् विष्णुमें उनके हृदयकी भक्ति और बुद्धि थी।

दो०—कौसल्यादि नारि सब ❀ प्रिय आचरन पुनीत ।
पतिअनुकूल प्रेम दृढ़ ❀ हरि - पद-कमल बिनीत ॥२२०॥

उनके कौशल्या आदि प्यारी रानियां थीं। इन सबका आचरण बहुत पवित्र था। वे सब पतिव्रता, नम्र और भगवान्‌के चरणकमलोंमें दृढ़ प्रेम रखनेवाली थीं।

एक बार भूपति मन माहीं ❀ भइ गलानि मोरे सुत नाहीं ॥
गुरुगृह गयेउ तुरत महिपाला ❀ चरन लागि करि बिनयबिसाला ॥

एक बार राजाके मनमें ग्लानि हुई कि मेरे पुत्र नहीं है। राजा तुरन्त ही गुरुके घर गये और चरणोंमें गिरकर विनती की।

निज दुख सुख सब गुरुहि सुनायउ ❀ कहिबसिष्ठ बहु बिधि समुझायउ ॥
धरहु धीर होइहहिं सुत चारी ❀ त्रि-भुवन-बिदित भगत-भय-हारी ॥

राजाने गुरुको अपना सब दुःख-सुख सुनाया। तब गुरु वशिष्ठने यह कहकर राजाको अनेक प्रकारसे समझाया कि धीरज रखो। तीनों भुवनोंमें विख्यात और भक्तोंके भयको दूर करनेवाले चार पुत्र होंगे।

सृंगीरिषिहिं बसिष्ठ बुलावा ❀ पुत्रकाम सुभ जग्य करावा ॥
भगतिसहित मुनि आहुति दीन्हे ❀ प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे ॥

वशिष्ठने शृंगीऋषिको बुलाया और शुभ पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया। मुनिने अत्यन्त भक्तिसे आहुतियां दीं, जिससे अग्निदेव हाथमें चरु लेकर प्रकट हुए।

जो बसिष्ठ कछु हृदय बिचारा ❀ सकलकाज भा सिद्ध तुम्हारा॥
यह हबि बाँटि देहु नृप जाई ❀ जथाजोग जेहि भाग बनाई॥

(उन्होंने कहा) वशिष्ठजीने हृदयमें जो कुछ विचार किया है वह तुम्हारा सब कार्य सिद्ध हो गया। हे राजा, तुम जाकर यह हवि यथायोग्य भाग बनाकर बांट दो।

दो०—तब अदृश्य भये पावक ❀ सकल सभहि समुझाइ।
परमानंदमगन नृप ❀ हरष न हृदय समाइ॥२२१॥

तब अग्निदेव समस्त उपस्थित जनोंको समझाकर अन्तर्द्धान हो गये। राजा दशरथ अत्यन्त आनन्दमें मग्न हो गये। उनके हृदयमें आनन्द न समाता था।

तबहि राय प्रिय नारि बोलाई ❀ कौसल्यादि तहां चलि आई॥
अरधभाग कौसल्यहि दीन्हा ❀ उभय भाग आधे कर कीन्हा॥

राजाने तब कौशल्या आदि प्यारी रानियोंको बुलाया और वे सब वहां चली आयीं। राजाने आधा भाग कौशल्याको दिया और शेष आधेके दो भाग किये।

कैकेई कहँ नृप सो दयऊ ❀ रहेउ सो उभय भाग पुनि भयऊ॥
कौसल्या कैकेई हाथ धरि ❀ दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि॥

राजाने उनमेंसे एक भाग कैकेयीको दिया। जो एक भाग बचा उसके भी फिर दो भाग हुए, जिन्हें कौशल्या और कैकेयीके हाथपर रखकर प्रसन्न मनसे सुमित्राको दे दिया।

एहि बिधि गर्भ सहित सब नारी ❀ भईं हृदय हरषित सुख भारी॥
जा दिन तें हरि गर्भहि आये ❀ सकललोक सुख संपति छाये॥

इस प्रकार सब रानियां गर्भवती हुईं। वे मनमें प्रसन्न हो गयीं और उन्हें बड़ा सुख हुआ। जिस दिनसे भगवान गर्भमें आये उसी दिनसे सब लोकोंमें सुख और संपत्ति छा गयी।

मंदिर महँ सब राजहिं रानी ❀ सोभा सील तेज की खानी॥
सुखजुत कछुक काल चलि गयऊ ❀ जेहि प्रभु प्रगट सो अवसर भयऊ॥

शोभा, शील और तेजकी खानि वे सब रानियां राजभवनमें विराजती थीं। इस प्रकार सुखपूर्वक कुछ समय व्यतीत हुआ और वह अवसर आया, जब भगवान् प्रकट हुए।

दो०—जोग लगन ग्रह बार तिथि ❀ सकल भये अनुकूल।
चर अरु अचर हरषजुत ❀ रामजनम सुखमूल ॥ २२२ ॥

योग, लग्न, ग्रह, वार और तिथि, सब अनुकूल हो गये। चर और अचर—सभी प्रसन्न हुए। श्रीरामचन्द्रजीका जन्म सुखका मूल-हेतु है।

नवमी तिथि मधुमास पुनीता ❀ सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता॥
मध्य दिवस अति सीत न घामा ❀ पावन काल लोक बिस्रामा॥

नवमीतिथि, पवित्र चैत्र मास, शुक्लपक्ष, भगवान्‌का प्यारा अभिजित नक्षत्र और मध्याह्नकाल था। न अत्यंत शीत था, न कठोर घाम। वह पवित्र समय सारे लोकोंको शान्ति देनेवाला था।

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ ❀ हरषित सुर संतन्ह मन चाउ॥
बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा ❀ स्रवहिं सकल सरितामृतधारा॥

शीतल, मन्द और सुगंधित पवन बहने लगा, देवता प्रसन्न हुए और संतजनोंके मनमें उल्लास होने लगा। वन फूलने लगे, पर्वतोंमें मणियां प्रकट होने लगीं और सब नदियां अमृतकी धारा बहाने लगीं।

सो अवसर बिरंचि जब जाना ❀ चले सकल सुर साजि बिमाना॥
गगन बिमल संकुल सुरजूथा ❀ गावहिं गुन गंधर्बबरूथा॥

जब ब्रह्माने इस अवसरको जाना तब सब देवता विमान सजाकर चले। निर्मल आकाशमें देवताओंके समूह इकट्ठे हो गये, गंधर्वोंके समूह गुणोंको गाते थे।

बरषहिं सुमन सुअंजलि साजी ❀ गहगहि गगन दुन्दुभी बाजी॥
अस्तुत करहिं नाग मुनि देवा ❀ बहु बिधि लावहिं निज-निज-सेवा॥

वे सब सुन्दर अंजलि सजाकर फूल बरसाने लगे और आकाशमें खूब नगारे बजने लगे। नाग, मुनि, और देवता स्तुति करने और अनेक प्रकारसे अपनी-अपनी सेवाओंको प्रस्तुत करने लगे।

दो०—सुर समूह बिनती करि ❀ पहुँचे निज - निज - धाम।
जगनिवास प्रभु प्रगटे ❀ अखिल - लोक - बिस्राम ॥२२३॥

विनती करनेके अनन्तर देवताओंके समूह अपने-अपने घर जा पहुँचे और समस्त लोकोंको विश्राम देनेवाले, संसारके निवास-स्थान भगवान् प्रकट हुए।

छं०—भये प्रगट कृपाला परमदयाला - कौसल्या - हित - कारी।
हरषित महतारी मुनि-मन-हारी अदभुतरूप बिचारी॥

শ্রীরাম-জন্ম । শ্রীরাম-জন্ম ।

लोचनअभिरामं तनुघनस्यामं निजआयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥

कौशल्याके हितकारी, अत्यन्त दयालु कृपालु भगवान् प्रकट हुए। मुनियोंके मनको हरण करनेवाला अद्भुत रूप देखकर माता बहुत प्रसन्न हुईं। उनके सुन्दर नेत्र थे, मेघ जैसा श्याम शरीर था, चार भुजाओंमें अपने-अपने शस्त्रास्त्र थे। वे आभूषण और वनमाला धारण किये हुए थे, उनके नेत्र विशाल थे और खरदैत्यके शत्रु वे शोभाके समुद्र थे।

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करउँ अनंता।
माया-गुन-ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥
करुना-सुख-सागर सब-गुन-आगर जेहि गावहिं स्रुति संता।
सो मम हित लागी जनअनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥

दोनों हाथ जोड़कर माताने कहा कि हे अनंत, तुम्हारी स्तुति किस प्रकार करूं। तुम माया, गुण, ज्ञान और परिमाणकी सीमासे बाहर हो, ऐसा वेदों और पुराणोंने कहा है। तुम करुणा और सुखके सागर और सब गुणोंके भाण्डार हो, जिसे वेद और संतजन गाते हैं। तुम वही भक्तजनोंको प्यार करनेवाले लक्ष्मीपति भगवान् मेरे कल्याणके लिये प्रकट हुए हो।

ब्रह्मांडनिकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीरमति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥

वेद कहते हैं कि तुम्हारी मायासे रचे हुए समस्त ब्रह्माण्ड तुम्हारे प्रत्येक रोममें वसते हैं। वही तुम मेरे पेटमें रहे, यह हंसीकी बात सुनकर धीर जनोंकी बुद्धि भी स्थिर नहीं रहती। माताको जब यह ज्ञान हुआ तब प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराये; क्योंकि वे अनेक प्रकारके चरित करना चाहते हैं। प्रभुने सुन्दर कथा कहकर माताको समझाया, जिससे मातामें पुत्रका प्रेम होवे।

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजिय सिसुलीला अति-प्रिय-सीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

माताकी वह बुद्धि जाती रही और वे फिर बोलीं कि हे तात, यह रूप छोड़ो और अत्यंत प्यार बढ़ानेवाली बाल-लीला करो। यह सुख अत्यंत अनुपम है। यह वचन सुनकर देवताओंके राजा सुजान भगवान्‌ने बालक होकर रोना आरंभ किया। इस चरित्रको जो गायेंगे वे परमपद पायेंगे और संसाररूपी कुएँ में नहीं पड़ेंगे।

दो०—विप्र-धेनु-सुर-संत हित ❀ लीन्ह मनुजअवतार।
निज-इच्छा- निर्मित - तनु ❀ माया - गुन - गो- पार ॥ २२४ ॥

माया, गुण और इन्द्रियोंसे परे भगवानने अपनी इच्छासे शरीर धारण कर ब्राह्मण, गाय, देवता और सन्तजनोंके लिये मनुष्यका अवतार लिया।

सुनि सिसुरुदन परम प्रिय बानी ❀ संभ्रम चलि आईं सब रानी॥
हरषित जहँ तहँ धाईं दासी ❀ आनदमगन सकल पुरबासी॥

बालकके रोनेकी अत्यंत प्यारी वाणी सुनकर सब रानियां चकित होकर वहां चली आयीं। प्रसन्न होकर दासियां जहां-तहां दौड़ गयीं और सब नगरनिवासी आनंदमग्न हो गये।

दसरथ पुत्रजनम सुनि काना ❀ मानहु ब्रह्मानंदसमाना॥
परमप्रेम मन पुलक सरीरा ❀ चाहत उठन करत मति धीरा॥

पुत्रजन्मको कानों सुनकर राजा दशरथको तो ब्रह्मानंदके समान ही आनंद हुआ। मनमें अत्यंत प्रेमसे उनका शरीर पुलकायमान हो गया। वे बुद्धिको स्थिर रखकर उठना चाहते थे।

जा कर नाम सुनत सुभ होई ❀ मोरे गृह आवा प्रभु सोई॥
परमानंद पूरि मन राजा ❀ कहा बुलाइ बजावहु बाजा॥

मनमें सोचा जिनका नाम सुनते ही कल्याण होता है, वही प्रभु मेरे घर आये हैं। राजाका मन परमानंदसे भर गया और उन्होंने बुलाकर कहा कि बाजे बजाओ।

गुरु बसिष्ठ कह गयउ हँकारा ❀ आये द्विजन्ह सहित नृपद्वारा॥
अनुपम बालक देखिन्हि जाई ❀ रूपरासि गुन कहि न सिराई॥

गुरु वशिष्ठके लिये बुलावा गया और वे ब्राह्मणोंसहित राजद्वारमें आये। उन्होंने जाकर उस अनुपम बालकको देखा जिसके रूपकी राशि और गुणोंको कहनेसे उनकी समाप्ति नहीं होती।

दो०—तब नंदी मुख स्राध करि ❀ जात करम सब कीन्ह।
हाटक धेनु बसन मनि ❀ नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह॥२२५॥

नान्दीमुख श्राद्ध करके राजाने सब जात-कर्म-संस्कार किये और ब्राह्मणोंको सोना, गाय, वस्त्र और मणि, सब दिये।

ध्वज पताक तोरन पुर छावा। कहि न जाइ जेहि भांति बनावा॥
सुमन बृष्टि अकास तें होई। ब्रह्मानंदमगन सब लोई॥

नगर ध्वजा-पताकाओं और तोरणोंसे छा गया। जिस प्रकार वह सजाया गया, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। आकाशसे पुष्पवृष्टि होती थी और सब लोग ब्रह्मानंदमें मग्न थे।

बृंद बृंद मिलि चलीं लोगाईं। सहज सिंगार किये उठि धाईं॥
कनक कलस मंगल भरि थारा। गावत पैठहिं भूप दुआरा॥

एक साथ मिलकर स्त्रियोंकी टोलियांकी टोलियां स्वाभाविक शृङ्गार किये हुए ही उठकर दौड़ चलीं। सोनेके कलशसहित थालमें मंगल वस्तुएँ भरकर उन्होंने गाते हुए राजद्वारमें प्रवेश किया।

करि आरती निछावरि करहीं। बार बार सिसुचरनन्हि परहीं॥
मागध सूत बंदिगन गायक। पावन गुन गावहिं रघुनायक॥

आरती करके वे न्योछावर करतीं और बारंबार बालकके चरणोंमें गिरती थीं। मागध, सूत, बंदीजन और गायक, सब श्रीरामचंद्रजीके पवित्र गुणोंको गाते थे।

सरबस दान दीन्ह सब काहू। जेहि पावा राखा नहिं ताहू॥
मृगमद चंदन कुंकुम कीचा। मची सकल बीथिन्ह बिच बीचा॥

राजाने सब किसीको सर्वस्व दान दिया और जिसको पाया उसे नहीं छोड़ा। सभी गलियोंके बीचमें कस्तूरी, चंदन और कुंकुमकी कीच मच गयी।

दो०—गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुखमाकंद।
हरषवंत सब जहँ तहँ नगर नारि-नर-बृंद॥२२६॥

सुन्दरताके धाम भगवान् श्रीरामचंद्रजी प्रकट हुए, इससे घर-घर शुभ बधाई बजने लगी और जहां-तहां नगरके सब नरनारियोंके समूह आनंदित हो गये।

कैकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुंदर सुत जनमत भइं ओऊ॥
वोह सुख संपति समय समाजा। कहि न सकइ सारद अहिराजा॥

कैकेयी और सुमित्रा—इन दोनोंने भी सुन्दर पुत्रोंको जन्म दिया। उस समयके समाजके सुख और सम्पत्तिको सरस्वती और शेषनाग भी नहीं कह सकते।

अवध पुरी सोहइ एहि भांती। प्रभुहि मिलन आई जनु राती॥
देखि भानु जनु मन सकुचानी। तदपि बनी संध्या अनुमानी॥

अयोध्यापुरी इस प्रकार शोभा देती थी, मानों प्रभुसे मिलनेके लिये रात आयी हो। और मानों सूर्यको देखकर उसने यद्यपि मनमें संकोच किया हो तथापि संध्या जैसी हो गयी हो।

अगरधूप बहु जनु अँधियारी ❁ उड़इ अबीर मनहुं अरुनारी॥
मंदिर-मनि समूह जनु तारा ❁ नृप-गृह-कलस सो इन्दु उदारा॥

अगरकी बहुतसी धूप मानों अन्धकार है, जो अबीर उड़ता था वही मानों लालिमा है। भवनोंमें मणियोंका समूह तारागण हैं, राजमंदिरका कलश ही पूर्ण चंद्रमा है।

भवन-बेद-धुनि अति मृदु बानी ❁ जनु खग-मुखर-समय जनु सानी॥
कौतुक देखि पतंग भुलाना ❁ एक मास तेइ जात न जाना॥

भवनोंमें अत्यन्त मीठी वाणीसे जो वेदध्वनि हो रही है वही मानों समयानुकूल पक्षियोंका चहचहाना है। यह कौतुक देखकर सूर्य भूल गये और उन्हें एक मास व्यतीत होते नहीं मालूम हुआ।

दो०—मासदिवस कर दिवस भा ❁ मरम न जानइ कोइ॥
रथसमेत रवि थाकेउ ❁ निसा कवन बिधि होइ॥२२७॥

वह एक दिन एक महीने जितने दिनोंका हुआ। इस भेदको कोई नहीं जानता था। सूर्य अपने रथसहित ठहरे हुए थे, रात्रि किस प्रकार होती!

यह रहस्य काहू नहिं जाना ❁ दिनमनि चले करत गुनगाना॥
देखि महोत्सव सुर मुनि नागा ❁ चले भवन बरनत निज भागा॥

यह भेद किसीने भी नहीं जाना और सूर्यदेव गुण गाते हुए चले। श्रीरामजन्मोत्सव देखकर देवता, मुनि और नाग, सब अपने-अपने भाग्यको सराहते हुए अपने-अपने घरको चल दिये।

अउरउ एक कहउँ निज चोरी ❁ सुनु गिरिजा अतिदृढ़ मति तोरी॥
काकभुसुंडि संग हम दोऊ ❁ मनुजरूप जानइ नहिं कोऊ॥

हे पार्वती, सुनो। तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त दृढ़ है। मैं एक बात और भी अपनी चोरीकी कहता हूँ। काकभुशुण्डि और मैं, दोनों मनुष्यरूप रखकर संग थे। इस बातको कोई नहीं जानता था।

परमानंद प्रेम-सुख फूले ❁ बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले॥
यह सुभ चरित जान पै सोई ❁ कृपा राम कै जापर होई॥

परमानंद और प्रेम-सुखमें मग्न हम दोनों प्रसन्न मनसे गलियोंमें भूले हुए फिर रहे थे। परन्तु इस शुभ चरितको वही जान सकता है, जिसपर श्रीरामचंद्रजीकी कृपा होती है।

तेहि अवसर जो जेहि बिधि आवा ❀ दीन्ह भूप जो जेहि मन भावा ॥
गज रथ तुरग हेम गो हीरा ❀ दीन्हे नृप नाना बिधि चीरा ॥

उस अवसरपर जो जिस भांति आया उसे राजाने वही दिया जो उसके मनको अच्छा लगा। राजाने हाथी, घोड़े, गायें, रथ, सोना, हीरे और अनेक प्रकारके वस्त्र दिये।

दो०—मन संतोष सबन्हि के ❀ जहँ तहँ देहिं असीस।
सकल तनय चिर जीवहु ❀ तुलसिदास के ईस ॥२२८॥

सबके मन संतुष्ट हो गये। वे सब जहां-तहां आशीर्वाद देते थे। हे तुलसीदासके ईश्वर, सब पुत्र चिरंजीव हों।

(बाल-चरित)

कछुक दिवस बीते एहि भांती ❀ जात न जानिअ दिन अरु राती ॥
नामकरन कर अवसर जानी ❀ भूप बोलि पठये मुनि ग्यानी ॥

इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हुए। रात और दिन जाते हुए नहीं मालूम हुए। नामकरण-संस्कारका अवसर जानकर राजाने ज्ञानी मुनिको बुला भेजा।

करि पूजा भूपति अस भाखा ❀ धरिअ नाम जो मुनि गुनि राखा ॥
इन्ह के नाम अनेक अनूपा ❀ मैं नृप कहब स्वमति अनुरूपा ॥

पूजा करके राजाने यह कहा कि मुनि, जो नाम सोच रखा हो, उसे रखिये। मुनिने कहा कि हे राजा, इनके उपमारहित नाम अनेक हैं। मैं अपनी मतिके अनुसार कहूंगा।

जो आनंदसिंधु सुखरासी ❀ सीकर तें त्रैलोक सुपासी ॥
सो सुखधाम राम अस नामा ❀ अखिललोक दायक बिस्रामा ॥

जो आनन्दके सागर और सुखकी राशि हैं और जिनकी दयाके कणसे तीनों लोक सुखी होते हैं उनका यह नाम है—राम। वे सुखके भाण्डार हैं और समस्त लोकोंको विश्राम देनेवाले हैं।

बिस्वभरन पोषन कर जोई ❀ ताकर नाम भरत अस होई ॥
जाके सुमिरन तें रिपुनासा ❀ नाम सत्रुहन बेद प्रकासा ॥

जो संसारका भरण और पोषण करता है उसका नाम यह होगा—भरत। जिसको स्मरण करनेसे शत्रुका नाश हो जाता है उसका नाम वेदोंमें प्रकाशित शत्रुघ्न है।

दो०—लच्छन धाम रामप्रिय ❀ सकल जगत आधार।
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा ❀ लछिमन नाम उदार ॥२२९॥

जो सुलक्षणोंके धाम, श्रीरामचंद्रजीके प्यारे और जगतके आधार हैं उनका उदार नाम गुरु वशिष्ठने लक्ष्मण रखा।

धरे नाम गुरु हृदय बिचारी ❀ बेदतत्त्व नृप तव सुत चारी ॥
मुनिधन जनसरबस सिवप्राना ❀ बाल-केलि-रस तेहि सुख माना ॥

गुरुने हृदयमें विचारकर नाम रखे और कहा कि हे राजन्, तुम्हारे चारों पुत्र वेदके तत्त्व, मुनियोंके धन, भक्तोंके सर्वस्व और शिवके प्राण हैं, जिन्होंने बाललीलाके आनंद-रसको ही सुख माना है।

बारेहि तें निज हित पति जानी ❀ लछिमन राम-चरन-रति-मानी ॥
भरत सत्रुहन दूनउ भाई ❀ प्रभुसेवक जसि प्रीति बड़ाई ॥

लक्ष्मणजीने बालपनसे ही अपना हितकारी और स्वामी जानकर श्रीरामचंद्रजीके चरणोंमें प्रीति रखी। भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयोंने स्वामी और सेवक जैसी प्रीति बढ़ायी।

स्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी ❀ निरखहिं छबि जननी तृन तोरी ॥
चारिउ सील-रूप-गुन-धामा ❀ तदपि अधिक सुखसागर रामा ॥

श्याम और गौर वर्णकी सुन्दर दो जोड़ियां थीं, जिनकी छविको माताएँ देखती और तिनका तोड़ती थीं। यद्यपि चारों शील, रूप और गुणोंके घर थे, तथापि श्रीरामचन्द्रजी अधिक सुखसागर थे।

हृदय अनुग्रह इंदु प्रकासा ❀ सूचत किरन मनोहर हासा ॥
कबहुँ उछंग कबहुँ बरपलना ❀ मातु दुलारहिं कहि प्रिय ललना ॥

उनके हृदयमें कृपारूपी चन्द्रमाका प्रकाश था, जो मनोहर हँसीरूपी किरणोंसे प्रकट होता था। माताएँ कभी गोदमें और कभी सुन्दर पालनेमें झुलातीं और 'प्यारे'-'लाल' कहकर दुलार करती थीं।

दो०—ब्यापक ब्रह्म निरंजन ❀ निर्गुन बिगत बिनोद।
सो अज प्रेम-भगति-बस ❀ कौसल्या के गोद ॥२३०॥

जो व्यापक, ब्रह्म, निरंजन, निर्गुण और हर्ष शोकरहित हैं वही अजन्मा ईश्वर प्रेम और भक्तिके वश कौशल्याकी गोदमें हैं।

काम-कोटि-छबि स्याम सरीरा ❀ नील कंज बारिद गंभीरा ॥
अरुन-चरन-पंकज-नखजोती ❀ कमलदलन्हि बैठे जनु मोती ॥

श्रीरामचन्द्रजीका शरीर नीलकमल और गंभीर मेघके समान श्याम था। उनकी छवि करोड़ कामदेवके समान थी। लालकमलके समान चरणोंके नखोंकी ज्योति ऐसी थी, मानों कमलकी पंखड़ियोंपर मोती बैठे हों।

रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोहइ ❀ नूपुर धुनि सुनि मुनिमन मोहइ ॥
कटि किंकिनी उदर त्रय रेखा ❀ नाभि गँभीर जान जिन्ह देखा ॥

वज्र, ध्वजा और अङ्कुशकी रेखाएं शोभा देती थीं और घुंघरूकी ध्वनि सुनकर मुनियोंका मनभी मोहित होता था। कमरमें करधनी और पेटमें तीन रेखाएं थीं। उनकी नाभिकी गंभीरताको वही जान सकते हैं, जिन्होंने उसे देखा है।

भुज बिसाल भूषन जुत भूरी ❀ हिय हरिनख सोभा अति रूरी ॥
उर मनिहार पदिक की सोभा ❀ बिप्रचरन देखत मन लोभा ॥

अनेक भूषणोंसहित उनकी विशाल भुजाएं थीं। हृदयपर सिंहके नखकी शोभा अत्यन्त सुन्दर थी। हृदयपर मणियोंका हार, हीरोंकी छवि और ब्राह्मणके चरणका चिह्न देखते ही मन लोभायमान हो जाता था।

कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई ❀ आनन अमित-मदन-छबि छाई ॥
दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे ❀ नासा तिलक को बरनइ पारे ॥

उनका शंख जैसा कण्ठ था और ढोढ़ी बहुत ही सुन्दर थी। उनके मुखपर असंख्य कामदेवोंकी शोभा छायी हुई थी। दो-दो दांत, गुलाबी होंठ, नाक और तिलक—सबका वर्णन कर कौन पार पा सकता है?

सुंदर स्रवन सुचारु कपोला ❀ अति प्रिय मधुर तोतरे बोला ॥
चिक्कन कच कुंचित गभुआरे ❀ बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥

उनके सुन्दर कान और अत्यन्त सुन्दर गाल थे। मीठे तोतले शब्द अत्यन्त प्यारे लगते थे। माताने उनके चिकने, घूंघरवाले और झण्डूले केशोंको अनेक प्रकारसे बनाकर सम्भाला था।

पीत झगुलिया तनु पहिराई ❀ जानु-पानि- बिचरनि मोहि भाई ॥
रूप सकहिं नहिं कहि स्रुति सेखा ❀ सो जानहिं सपनेहु जिन्ह देखा ॥

शरीरमें पीला कुरता पहिनाया हुआ था। (इस रूपमें) घुटनों और हाथोंके बल उनका चलना मुझे (तुलसीदासको) अच्छा लगता है। वेद और शेषनाग भी रूप नहीं कह सकते। वही जानते हैं जिन्होंने स्वप्नमें भी उसे देखा है।

दो०—सुखसंदोह मोहपर ❀ ग्यान - गिरा - गोतीत।
दंपति परम प्रेमबस ❀ कर सिसुचरित पुनीत ॥ २३१ ॥

सुखके धाम; मोहरहित; ज्ञान, वाणी और इन्द्रियोंसे परे भगवान् राजा दशरथ और रानी कौशल्याके अत्यन्त प्रमके वश होकर पवित्र बाललीला करने लगे।

एहि विधि रामजगत-पितु-माता ❀ कोसल - पुर - बासिन्ह सुखदाता ॥
जिन्ह रघुनाथचरन रति मानी ❀ तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी ॥

संसारके मातापिता श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार अयोध्यापुरीके वासियोंको सुख देने लगे। हे पार्वती, जिन्होंने श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम किया उनकी यह गति प्रकट है।

रघुपति विमुख जतन कर कोरी ❀ कवन सकइ भवबंधन छोरी ॥
जीव चराचर बस कै राखे ❀ सो माया प्रभु सों भय भाखे ॥

श्रीरामचन्द्रजीसे विमुख होकर कोरे उपाय करके संसारके बंधनोंको कौन छुड़ा सकता है? जिसने चर और अचर, सब जीवोंको वशमें कर रखा है वह माया प्रभुसे भय मानती है।

भृकुटिविलास नचावइ ताही ❀ अस प्रभु छाड़ि भजिय कहु काही ॥
मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई ❀ भजत कृपा करिहहिँ रघुराई ॥

और प्रभु उसे भृकुटिके विलास (भौंहके इशारे) से नचाते हैं। ऐसे प्रभुको छोड़कर भला कहो, किसका भजन किया जाय? मन, वाणी और कर्मसे चतुरता छोड़कर भजन करते ही श्रीरामचन्द्रजी कृपा करेंगे।

एहि विधि सिसु विनोद प्रभु कीन्हा ❀ सकल-नगर-बासिन्ह सुख दीन्हा ॥
लेइ उछंग कबहुँक हलरावइ ❀ कबहुं पालने घालि झुलावइ ॥

प्रभुने इस प्रकार बाललीला की और सब नगरवासियोंको सुख दिया। उनकी माता कभी तो उन्हें गोदमें लेकर हिलाती थीं और कभी पालनेमें पौढ़ाकर झुलाती थीं।

दो०—प्रेममगन कौसल्या ❀ निसि दिन जात न जान ॥
सुत-सनेह-बस माता ❀ बालचरित कर गान ॥ २३२ ॥

कौशल्या प्रेममें मग्न थीं, इससे उन्हें रात-दिन बीतते न मालूम होते थे। पुत्रके स्नेहके वश होकर माता कौशल्या श्रीरामचन्द्रजीके बालचरितको ही गाती थीं।

एक बार जननी अन्हवाये ❀ करि सिंगार पलना पौढ़ाये ॥
निज - कुल - इष्ट - देव भगवाना ❀ पूजा हेतु कीन्ह असनाना ॥

एक बार माताने स्नान कराया और शृंगार करके पालनेमें पौढ़ाया। माता कौशल्याने अपने कुलके इष्टदेव भगवान्‌की पूजाके लिये स्नान किया।

करि पूजा नैवेद्य चढ़ावा ❀ आपु गई जहं पाक बनावा ॥
बहुरि मातु तहवां चलि आई ❀ भोजन करत देख सुत जाई ॥

पूजा करके नैवेद्य चढ़ाया और फिर वे वहां गयीं जहां पकवान् बनाये थे। फिर माताजी वहांसे चली आयीं और आकर पुत्रको भोजन करते हुए देखा।

गइ जननी सिसु पहिं भयभीता ❀ देखा बाल तहां पुनि सूता ॥
बहुरि आइ देखा सुत सोई ❀ हृदय कंप मन धीर न होई ॥

यह देख माता भयभीत होकर बच्चेके पास गयीं और वहां बालकको फिर सोता हुआ देखा। फिर आकर उसी बालकको (भोजन करते) देखा। इससे उनका हृदय कांपने लगा। उनके मनको धैर्य न होता था।

इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा ❀ मति भ्रम मोर कि आन बिसेखा ॥
देखि राम जननी अकुलानी ❀ प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसुकानी ॥

उन्होंने सोचा कि मैंने यहां और वहां दो बालक देखे हैं, यह मेरी बुद्धिका भ्रम है कि और कोई विशेष बात है। माताको व्याकुल देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने मीठी मुस्कुराहटसे हंस दिया।

दो०—देखरावा मातहि निज ❀ अद्भुत रूप अखंड।
रोम रोम प्रति लागे ❀ कोटि कोटि ब्रह्मंड ॥ २३३ ॥

उन्होंने अपनी माताको अपना अद्भुत अखण्ड स्वरूप दिखलाया, जिसके प्रत्येक रोममें करोड़-करोड़ ब्रह्माण्ड लगे हुए थे।

अगनित रबिससि सिवचतुरानन ❀ बहु गिरिसरित सिंधुमहिकानन ॥
काल करम गुन ग्यान सुभाऊ ❀ सोउ देखा जो सुना न काऊ ॥

असंख्य सूर्य, चन्द्रमा, शिव, ब्रह्मा, अनेक पर्वत, नदियां, समुद्र, पृथिवी और वन तथा काल, कर्म, गुण, ज्ञान और स्वभाव आदि सहित वह सब देखा, जो किसीने सुना भी नहीं था।

देखी माया सब बिधि गाढ़ी ❀ अतिसभीत जोरे कर ठाढ़ी ॥
देखा जीव नचावइ जाही ❀ देखी भगति जो छोरइ ताही ॥

सब प्रकार प्रबल मायाको देखा, जो अत्यन्त भयभीत थी और हाथ जोड़े खड़ी हुई थी। जीवको देखा, जिसे वह नचाती है और भक्तिको देखा जो उसे छुड़ा देती है।

तन पुलकित मुख बचन न आवा ❀ नयन मूँदि चरनन्हि सिरु नावा ॥
बिसमयवंति देखि महतारी ❀ भये बहुरि सिसुरूप खरारी ॥

माता कौशल्याका शरीर पुलकायमान हो गया और मुखसे बात न निकली। उन्होंने आंखें बन्दकर चरणोंमें शिर नवाया। माताको विस्मयान्वित देखकर खरदैत्यके शत्रु भगवान फिर बालरूपमें हो गये।

अस्तुति करि न जाइ भय माना। ❀ जगतपिता मैं सुत करि जाना ॥
हरि जननी बहुबिधि समुझाई ❀ यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई ॥

मातासे स्तुति नहीं की जाती थी। उन्हें भय लगा कि संसारके पिताको मैंने पुत्र समझ रखा है। भगवानने माताको अनेक प्रकारसे समझाया और कहा कि हे माता, सुनो, यह बात किसीसे भी मत कहना।

दो०—बार बार कौसल्या ❀ बिनय करइ कर जोरि।
अब जनि कबहूँ ब्यापई ❀ प्रभु मोहि माया तोरि ॥ २३४ ॥

माता कौशल्या हाथ जोड़कर बार-बार बिनती करती थीं कि हे प्रभु, तुम्हारी माया मुझे अब कभी न व्यापे।

बालचरित हरि बहुबिधि कीन्हा ❀ अति अनंद दासन्ह कहँ दीन्हा ॥
कछुक काल बीते सब भाई ❀ बड़े भये परिजन-सुख-दाई ॥

भगवान्ने अनेक प्रकारकी बाललीलाएं कीं और भक्तोंको अत्यन्त आनन्द दिया। कुछ समय बीतनेपर कुटुम्बको सुख देनेवाले सब भाई बड़े हुए।

चूड़ाकरन कीन्ह गुरु जाई ❀ बिप्रन्ह पुनि दछिना बहु पाई ॥
परम मनोहर चरित अपारा ❀ करत फिरत चारिउ सुकुमारा ॥

गुरुने जाकर चूड़ाकरण-संस्कार किया और ब्राह्मणोंने फिर बहुतसी दक्षिणा पायी। चारों सुन्दर कुमार अत्यन्त मनोहर अपार लीलाएं करते फिरते थे।

मन-क्रम - बचन - अगोचर जोई ❀ दसरथअजिर बिचर प्रभु सोई ॥
भोजन करत बोल जब राजा ❀ नहिं आवत तजि बालसमाजा ॥

जो मन, वाणी और कर्मसे इन्द्रियोंकी सीमासे बाहर हैं वही प्रभु राजा दशरथके आंगनमें विचरण करते हैं। भोजन करते समय राजा जब बुलाते थे तब बालकोंका समाज छोड़कर वे नहीं आते थे।

कौसल्या जब बोलन जाई ❀ ठुमुकि ठुमुकि प्रभु चलहिं पराई ॥
निगम नेति सिव अंत न पावा ❀ ताहि धरइ जननी हठि धावा ॥
धूसर धूरि भरे तनु आये ❀ भूपति बिहँसि गोद बैठाये ॥

कौशल्याजी जब बुलाने जाती थीं तब भगवान् ठुमक-ठुमककर भाग जाते थे। वेद जिन्हें 'नेति' कहते हैं और शिवजीने जिनका अन्त नहीं पाया है उन्हें माता दौड़कर हठसे पकड़ लेती थीं। भगवान् शरीरमें धूल भरे हुए आये और राजाने हंसकर उन्हें गोदमें बैठा लिया।

दो०—भोजन करत चपल चित ❀ इत उत अवसरु पाइ।
भाजि चले किलकत मुख ❀ दधि ओदन लपटाइ ॥२३५॥

वे चञ्चल चित्तसे भोजन करते थे और अवसर पाकर किलकारी देते हुए मुखमें दही और भात लगाये हुए भाग जाते थे।

बालचरित अतिसरल सुहाये ❀ सारद सेष संभु स्रुति गाये ॥
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता ❀ ते जन बंचित किये बिधाता ॥

अत्यन्त सरल और सुन्दर बाललीलाओंको सरस्वती, शेषनाग, शिव और वेद सबने गाया है। जिन मनुष्योंका मन इनमें नहीं लगता, उन्हें ब्रह्माने ठग लिया।

भये कुमार जबहिं सब भ्राता ❀ दीन्ह जनेऊ गुरु-पितु-माता ॥
गुरुगृह गये पढ़न रघुराई ❀ अलप काल बिद्या सब पाई ॥

जब सब भाई किशोर हुए तब गुरु, पिता और माताने उन्हें यज्ञोपवीत दिया। श्रीरामचन्द्रजी गुरुके घर पढ़नेके लिए गये। वहां उन्होंने बहुत ही थोड़े समयमें सब विद्याओंको सीख लिया।

जाकी सहज स्वास स्रुति चारी ❀ सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥
बिद्या - बिनय - निपुन गुनसीला ❀ खेलहिं खेल सकल नृपलीला ॥

जिनके साधारण श्वास ही चारों वेद हैं वे भगवान् पढ़ें, यह बड़ा आश्चर्य है। सब राजकुमार विद्या, विनय और नीतिमें निपुण तथा गुणी हुए। वे सब राजाके कार्योंके खेल खेलते थे।

करतल बान धनुष अति सोहा ❀ देखत रूप चराचर मोहा ॥
जिन्ह बीथिन्ह बिहरहिं सब भाई ❀ थकित होहिं सब लोग लुगाई ॥

उनके हाथमें धनुषवाण अत्यन्त शोभा देता था और रूप देखते ही चराचर मोहित होते थे। जिन गलियोंमें सब भाई विहार करते थे उनमें सब स्त्री-पुरुष उन्हें देख-देखकर थक जाते थे।

दो०—कोसल - पुर - बासी नर ❀ नारि बृद्ध अरु बाल।
प्रानहु तें प्रिय लागत ❀ सब कहं राम कृपाल ॥ २३६ ॥

पुरुष-स्त्री और बालक-वृद्ध; सभी अयोध्यावासियोंको कृपालु रामचन्द्रजी प्राणोंसे भी अधिक प्यारे लगते थे।

बंधु सखा संग लेहिं बुलाई ❀ बन मृगया नित खेलहिं जाई ॥
पावन मृग मारहिं जिय जानी ❀ दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी ॥

श्रीरामचन्द्रजी भाइयों और मित्रोंको बुलाकर साथमें लेते और जाकर वनमें नित्य आखेट करते थे। वे हृदयमें पवित्र मृग जानकर मारते थे और लाकर प्रतिदिन राजाको दिखलाते थे।

जे मृग रामबान के मारे ❀ ते तनु तजि सुरलोक सिधारे॥
अनुज सखा संग भोजन करहीं ❀ मातु पिता अग्या अनुसरहीं॥

जो हिरन श्रीरामचन्द्रजीके वाणसे मारे गये वे शरीर छोड़कर देवलोकको चले गये। श्रीरामचन्द्रजी अपने छोटे भाइयों और मित्रोंके साथ भोजन करते और मातापिताकी आज्ञाका पालन करते थे।

जेहि बिधि सुखी होहिं पुरलोगा ❀ करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा॥
बेद पुरान सुनहिं मन लाई ❀ आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई॥

नगरनिवासी जिस प्रकार सुखी होते, वही संयोग कृपानिधान करते थे। वे मन लगाकर वेद और पुराण सुनते तथा भाइयोंको स्वयं समझाकर कहते थे।

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा ❀ मातु पिता गुरु नावहिं माथा॥
आयसु मांगि करहिं पुरकाजा ❀ देखि चरित हरषइ मन राजा॥

श्रीरामचन्द्रजी प्रातःकाल उठकर माता, पिता और गुरुको मस्तक नवाते तथा आज्ञा मांगकर नगरका कार्य करते थे। राजा यह चरित देखकर मनमें प्रसन्न होते थे।

दो०—ब्यापक अकल अनीह अज ❀ निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना बिधि ❀ करत चरित्र अनूप॥ २३७॥

जो स्वयं व्यापक, कलाशून्य, इच्छारहित, अजन्मा, निर्गुण और नाम तथा रूपविहीन हैं, वे परमात्मा भक्त-जनोंके लिये अनेक प्रकारके अनुपम चरित करते हैं।

(विस्वामित्रके संग)

यह सब चरित कहा मैं गाई ❀ आगिलि कथा सुनहु मन लाई॥
बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी ❀ बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी॥

मैंने यह सब चरित्र गा सुनाया, अब मन लगाकर आगेकी कथा सुनो। ज्ञानी महामुनि विश्वामित्र वनमें एक आश्रममें उसे शुभ जानकर वसते थे।

जहं जप जग्य जोग मुनि करहीं ❀ अति मारीच सुबाहुहि डरहीं॥
देखत जग्य निसाचर धावहिं ❀ करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं॥

वहां मुनि लोग जप, यज्ञ और योग करते थे, पर मारीच और सुबाहु नामक राक्षससे अत्यन्त डरते थे। यज्ञ देखते ही राक्षस दौड़ते और उपद्रव करते थे, जिससे मुनि लोग दुःख पाते थे।

गाधि-तनय-मन चिंता ब्यापी ❀ हरि बिनु मरिहि न निसिचर पापी ॥
तब मुनिबर मन कीन्ह बिचारा ❀ प्रभु अवतरेउ हरन महिभारा ॥

गाधिके पुत्र विश्वामित्रके मनमें चिन्ता हुई कि भगवान्‌के बिना पापी राक्षस नहीं मरेंगे। तब मुनिवरने मनमें विचार किया कि पृथिवीका भार हरण करनेके लिये प्रभुने अवतार लिया है।

एहूँ मिस देखउँ पद जाई ❀ करि बिनती आनउँ दोउ भाई ॥
ग्यान-बिराग-सकल-गुन-अयना ❀ सो प्रभु मैं देखब भरि नयना ॥

इसी बहाने जाकर चरणोंके दर्शन करूं और विनती करके दोनों भाइयोंको ले आऊं। ज्ञान, वैराग्य और सम्पूर्ण गुणोंके धाम जो प्रभु हैं उन्हें मैं नेत्र भरकर देखूंगा।

दो०—बहु बिधि करत मनोरथ ❀ जात लागि नहिं बार।
करि मज्जन सरयूजल ❀ गये भूप दरबार ॥२३८॥

अनेक प्रकारके मनोरथ करते हुए जाते देर नहीं लगी और वे सरयू नदीके जलमें स्नान करके राजाके दरबारमें गये।

मुनि आगमन सुना जब राजा ❀ मिलन गयउ लेइ बिप्रसमाजा ॥
करि दंडवत मुनिहिं सनमानी ❀ निज आसन बैठारेन्हि आनी ॥

राजाने जब मुनिका आगमन सुना तब बहुतसे ब्राह्मणोंको लेकर उनसे मिलने गये। दण्डवत करके मुनिका सम्मान किया और उन्हें लाकर अपने आसनपर बिठलाया।

चरन पखारि कीन्हि अति पूजा ❀ मो सम आजु धन्य नहिं दूजा ॥
बिबिध भाँति भोजन करवावा ❀ मुनिबर हृदय हरष अति पावा ॥

चरण धोकर उनकी बड़ी पूजा की और कहा कि आज मेरे समान धन्य दूसरा नहीं है। राजाने मुनिको अनेक प्रकारका भोजन कराया और मुनिवरने हृदयमें अत्यन्त आनन्द पाया।

पुनि चरनन्हि मेले सुत चारी ❀ राम देखि मुनि देह बिसारी ॥
भये मगन देखत मुख सोभा ❀ जनु चकोर पूरनससि लोभा ॥

फिर चारों पुत्रोंको मुनिके चरणोंमें डाल दिया। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर मुनिको देहकी सुध भूल गयी। मुखकी शोभा देखते ही वे आनन्दमग्न हो गये, मानों पूर्ण चन्द्रमाको देखकर चकोर लुभा गया हो।

तब मन हरषि बचन कह राऊ ❀ मुनि अस कृपा न कीन्हेहु काऊ ॥
केहि कारन आगमन तुम्हारा ❀ कहहु सो करत न लावउँ बारा ॥

तब मनमें प्रसन्न होकर राजाने यह वचन कहा कि हे मुनि, ऐसी कृपा कभी नहीं की। आपका आना किस कारण हुआ, उसे कहिये। मैं उसे करनेमें देर नहीं लगाऊंगा।

असुरसमूह सतावहिं मोही ❀ मैं जाचन आयउँ नृप तोही ॥
अनुज समेत देहु रघुनाथा ❀ निसि-चर-बध मैं होब सनाथा ॥

मुनिने कहा कि राक्षसोंके समूह मुझे सताते हैं। हे राजा, मैं तुमसे मांगने आया हूं। भाईसहित श्रीरामचन्द्रजीको मुझे दो, जिससे राक्षसोंका वध हो और मैं सनाथ होऊं।

दो०—देहु भूप मन हरषित ❀ तजहु मोह अग्यान।
धर्म सुजस प्रभु तुम कहँ ❀ इन्ह कहँ अति कल्यान ॥२३९॥

हे राजा, प्रसन्न मनसे दो और मोह तथा अज्ञान छोड़ दो। हे प्रभो, तुम्हे धर्म और सुयश होगा और इनका भी अत्यन्त कल्याण होगा।

सुनि राजा अति अप्रिय बानी ❀ हृदय कंप मुखदुति कुम्हिलानी ॥
चौथेपन पायउ सुत चारी ❀ विप्र वचन नहिं कहेहु बिचारी ॥

अत्यन्त अप्रिय वाणी सुनकर राजाका हृदय कँप गया और मुखकी कान्ति कुम्हला गयी। उन्होंने कहा कि मैंने चारों पुत्र चौथेपनमें पाये हैं। हे ब्राह्मण, आपने विचारकर वचन नहीं कहे।

मांगहु भूमि धेनु धन कोसा ❀ सरबस देउ आजु सह रोसा ॥
देह प्रान तें प्रिय कछु नाहीं ❀ सोउ मुनि देउँ निमिष एक माहीं ॥

पृथिवी, गाय, धन, और कोष, आप जो चाहें मांगिये, आज मैं विना चिढ़े हुए सर्वस्व दूंगा। देह और प्राणसे प्यारा कुछ नहीं होता। हे मुनि, मैं उसे भी एक पलकभरमें दे डालूंगा।

सब सुत प्रिय मोहि प्रानकी नाईं ❀ राम देत नहिं बनइ गोसाईं ॥
कहं निसिचर अति घोर कठोरा ❀ कहं सुन्दर सुत परम किसोरा ॥

सभी पुत्र मुझे प्राणकी भांति प्यारे हैं। हे स्वामी, श्रीरामचन्द्रजीको देते नहीं बनता। कहां अत्यन्त घोर कठोर राक्षस और कहां अत्यन्त किशोर सुन्दर पुत्र !

सुनि नृपगिरा प्रेम-रस-सानी ❀ हृदय हरष माना मुनि ग्यानी ॥
तब बसिष्ठ बहु बिधि समुझावा ❀ नृपसंदेह नास कहँ पावा ॥

प्रेमरससे सनी हुई राजाकी वाणी सुनकर ज्ञानी मुनिने अपने हृदयमें प्रसन्नता अनुभव की। तब वशिष्ठ मुनिने अनेक प्रकारसे समझाया और राजाका सन्देह दूर हुआ।

अति आदर दोउ तनय बोलाये ❀ हृदय लाइ बहुभांति सिखाये ॥
मेरे प्राननाथ सुत दोऊ ❀ तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ ॥

उन्होंने बड़े आदरसे दोनों पुत्रोंको बुलाया और हृदयसे लगाकर उन्हें अनेक प्रकारसे सिखलाया। राजाने कहा कि हे मुनि, दोनों पुत्र मेरे प्राणोंके स्वामी हैं। आप ही अब उनके पिता हैं और कोई नहीं है।

दो०—सौंपे भूप रिषिहि सुत ❀ बहुबिधि देइ असीस।
जननी भवन गये प्रभु ❀ चले नाइ पद सीस ॥२४०॥

अनेक प्रकारकी आशिष देकर राजाने ऋषिको पुत्र सौंपे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी माताके घर गये और चरणोंमें शिर नवाकर चले।

सो०—पुरुषसिंह दोउ बीर ❀ हरषि चले मुनि-भय-हरन।
कृपासिंधु मतिधीर ❀ अखिल-बिस्व-कारन-करन ॥२४१॥

वीर पुरुषोंमें सिंहके समान दोनों भाई प्रसन्न होकर चल दिये; जो मुनियोंका भय दूर कर देनेवाले, कृपासागर, धीर बुद्धिवाले, सारे जगतके कारण और उसकी प्रेरक शक्ति हैं।

अरुन नयन उर बाहु बिसाला ❀ नीलजलज तनु स्याम तमाला ॥
कटि पट पीत कसे बरभाथा ❀ रुचिर-चाप-सायक दुहुँ हाथा ॥

उनके नेत्र लाल थे, भुजाएँ और हृदय—दोनों विशाल थे, नीलकमल और तमालके समान श्याम शरीर था। कमरमें पीतांबरसे सुन्दर तरकस कसे हुए थे और दोनों हाथोंमें सुन्दर धनुषवाण था।

स्याम गौर सुंदर दोउ भाई ❀ बिस्वामित्र महानिधि पाई ॥
प्रभु ब्रह्मन्य देव मैं जाना ❀ मोहि निति पिता तजेउ भगवाना ॥

सांवले और गोरे—दोनों भाई सुन्दर थे। उन्हें विश्वामित्रने महानिधिके रूपमें पाया। मुनिने सोचा कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्मण्यदेव हैं, यह मैंने जान लिया; क्योंकि मेरे लिये भगवान्‌ने पिताको भी छोड़ दिया।

चले जात मुनि दीन्हि देखाई ❀ सुनि ताड़का क्रोध करि धाई ॥
एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा ❀ दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ॥

जाते हुए ही मुनिने श्रीरामचन्द्रजीको ताड़का राक्षसी दिखला दी। यह राक्षसी सुनते ही क्रोध करके दौड़ी। भगवान्‌ने एक ही वाणसे उसके प्राण ले लिये और दीन जानकर उसे परमपद दिया।

तब रिषि निजनाथहि जिय चीन्ही ❀ बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही ॥
जा तें लाग न छुधा पिपासा ❀ अतुलितबल तन तेज प्रकासा ॥

तब ऋषिने अपने हृदयमें स्वामीको पहिचानकर उन दोनों विद्यासागर भाइयोंको वह विद्या दी जिससे भूख और प्यास नहीं लगती और शरीरमें अतोल बल और तेज प्रकाशित होता है ।

दो०—आयुध सर्ब समर्पि कै ❀ प्रभु निजआस्रम आनि ।
कंद मूल फल भोजन ❀ दीन्ह भगत हित जानि ॥२४२॥

सम्पूर्ण शस्त्रास्त्र समर्पण कर फिर मुनि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको अपने आश्रममें ले आये और उन्हें भक्त-हितकारी जानकर भोजनके लिये कंद, मूल और फल दिये ।

प्रात कहा मुनि सन रघुराई ❀ निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई ॥
होम करन लागे मुनिझारी ❀ आपु रहे मख की रखवारी ॥

सवेरे श्रीरामचन्द्रजीने मुनिसे कहा कि आप जाइये और निर्भय होकर यज्ञ कीजिये । मुनियोंके समूह यज्ञ करने लगे और यज्ञकी रक्षा करनेके लिये श्रीरामचन्द्रजी स्वयं रहे ।

सुनि मारीच निसाचर कोही ❀ लेइ सहाय धावा मुनिद्रोही ॥
बिनु फर बान राम तेहि मारा ❀ सत जोजन गा सागरपारा ॥

सुनते ही मुनियोंका शत्रु, क्रोधी राक्षस मारीच अपने सहायकोंको लेकर दौड़ा । श्रीरामचन्द्रजीने उसको बिना नोकका बाण मारा, जिससे वह सौ योजन दूर समुद्रके पार चला गया ।

पावकसर सुबाहु पुनि मारा ❀ अनुज निसाचर कटकु संघारा ॥
मारि असुर द्विज - निर्भय - कारी ❀ अस्तुति करहिं देव - मुनि - झारी ॥

फिर उन्होंने अग्निबाणसे सुबाहु राक्षसको मारा । छोटे भाई लक्ष्मणने राक्षसोंकी सेनाका संहार किया । ब्राह्मणोंको भयशून्य कर देनेवाले भगवान्‌ने राक्षसोंको मार डाला, तब देवता और मुनियोंके समूह स्तुति करने लगे ।

तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया ❀ रहे कीन्हि बिप्रन्ह पर दाया ॥
भगति हेतु बहु कथा पुराना ❀ कहे बिप्र जद्यपि प्रभु जाना ॥

फिर वहाँ कुछ दिनोंतक श्रीरामचन्द्र [illegible] और ब्राह्मणोंपर दया की । ब्राह्मणोंने बहुतसी भक्तिमूलक कथाएँ और पुराण वर्णन किये, यद्यपि प्रभु उन [illegible] जानते थे ।

तब मुनि सादर कहा बुझाई ❀ चरित एक प्रभु देखिअ जाई ॥
धनुष जग्य सुनि रघु-कुल-नाथा ❀ हरषि चले मुनिबर के साथा ॥

तब मुनिने आदरपूर्वक समझाकर कहा कि हे प्रभो, जाकर एक चरित्र देखिये । धनुषयज्ञकी बात सुनकर श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्न होकर मुनिवर विश्वामित्रके साथ चल दिये ।

अहिल्या उद्धार ।   অহিল্যা উদ্ধার ।

आस्रम एक दीख मग माहीं ❀ खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं ॥
पूछा मुनिहि सिला प्रभु देखी ❀ सकल कथा मुनि कही बिसेखी ॥

उन्होंने मार्गमें एक आश्रम देखा। वहां पशु-पक्षी आदि कोई-जीव-जन्तु नहीं था। प्रभुने पत्थरकी शिलाको देखकर मुनिसे पूछा और मुनिने उसकी समस्त कथा विस्तारपूर्वक वर्णन की।

दो०—गौतमनारी साप बस ❀ उपल देह धरि धीर।
चरन-कमल-रज चाहति ❀ कृपा करहु रघुबीर ॥२४३॥

उन्होंने कहा कि गौतम मुनिकी स्त्री अहल्याने शापवश पत्थरकी देह धैर्यपूर्वक धारण कर रखी है, वह आपके चरणकमलोंकी रज चाहती है। हे रघुबीर, कृपा कीजिये।

छं०—परसत पद पावन सोकनसावन प्रगट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन-सुख-दायक सनमुख होइ कर जोरि रही ॥
अतिप्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही ॥

शोकको नष्ट कर देनेवाले पवित्र चरणोंको स्पर्श करते ही वह पूर्ण तपोमयी नारी अहल्या प्रकट हुई और भक्तोंको सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको देखते ही सामने आ, हाथ जोड़कर खड़ी हो गयी। वह अत्यन्त प्रेमसे अधीर थी, उसका शरीर पुलकायमान था और उसके मुखसे वचन न कहते बनता था। अत्यन्त बड़भागिनी वह चरणोंसे लिपट गयी और उसके दोनों नेत्रोंसे जलकी धारा बहने लगी।

धीरज मन कीन्हा प्रभु कहं चीन्हा रघुपति कृपा भगति पाई।
अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ग्यानगम्य जय रघुराई ॥
मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जन-सुख-दाई।
राजीवबिलोचन भव-भय-मोचन पाहि पाहि सरनहि आई ॥

अहल्याने मनमें धीरज किया और प्रभुको पहिचाना तथा श्रीरामचन्द्रजीकी कृपा और भक्तिको पाया। अत्यन्त पवित्र वाणीसे वह स्तुति करने लगी कि हे ज्ञानसे जाननेयोग्य श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो! हे रावणके शत्रु, हे भक्तोंको सुख देनेवाले प्रभु, मैं स्त्री, अपवित्र हूं और आप संसारको पवित्र करनेवाले हैं। हे कमलनेत्र, हे संसारका भय दूर कर देनेवाले, मैं आपकी शरणमें आयी हूं। मेरी रक्षा करो! मेरी रक्षा करो!

मुनि साप जो दीन्हा अति भल कीन्हा परम अनुग्रह मैं माना।
देखेउँ भरि लोचन हरि भवमोचन इहइ लाभ संकर जाना ॥

विनती प्रभु मोरी मैं मतिभोरी नाथ न माँगउँ वर आना।
पद-कमल-परागा रस अनुरागा मम मन मधुप करइ पाना॥

मुनिने जो शाप दिया, वह बहुत ही अच्छा किया। मैं उसे बड़ी कृपा मानती हूँ कि मैंने संसारको छुड़ा देनेवाले भगवानको नेत्र भरकर देख लिया, जिसे शिवजी बड़ा लाभ मानते हैं। हे प्रभो, मेरी बुद्धि बहुत भोली है और मैं, हे नाथ, कोई दूसरा वरदान नहीं मांगती। मेरी विनती यही है कि मेरा मनरूपी भौंरा आपके चरणकमलोंकी रजके रसको प्रेमके साथ पान किया करे।

जेहि पद सुरसरिता परमपुनीता प्रगट भई सिव सीस धरी।
सोई पदपंकज जेहि पूजत अज मम सिर धरेउ कृपाल हरी॥
एहि भांति सिधारी गौतमनारी बार बार हरि चरन परी।
जो अति मन भावा सो वर पावा गइ पतिलोक अनंद भरी॥

जिस चरणसे अत्यन्त पवित्र गंगाजी प्रकट हुईं, जिन्हें शिवजीने अपने शिरपर धारण किया, उसी चरण-कमलको, जिसे ब्रह्माजी पूजते हैं, कृपालु भगवान्ने मेरे शिरपर रखा। इस प्रकार बार बार भगवान्के चरणोंमें गिरकर गौतम ऋषिकी पत्नी अहल्या गयी। उसके मनको जो सबसे अधिक अच्छा लगा, वह वरदान उसने पाया और आनन्दसे भरी हुई वह अपने पतिके लोकको गयी।

दो०—अस प्रभु दीनबंधु हरि ❀ कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ ताहि भजु ❀ छाड़ि कपट जंजाल॥२४४॥

प्रभु श्रीरामचन्द्र भगवान् ऐसे दीनबन्धु हैं कि कारणके बिना ही दया दिखलानेवाले हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि हे दुष्ट, कपट और जंजाल छोड़कर उसे भज।

(सीता-स्वयंवर)

चले राम लछिमन मुनि संगा ❀ गये जहां जगपावनि गंगा॥
गाधिसूनु सब कथा सुनाई ❀ जेहि प्रकार सुरसरि महि आई॥

श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी मुनि विश्वामित्रके साथ चले और वहां गये जहां संसारको पवित्र करनेवाली गङ्गाजी थीं। विश्वामित्रजीने वह सब कथा सुनायी, जिस प्रकार गङ्गाजीका पृथिवीपर आना हुआ।

तब प्रभु रिषिन्ह समेत नहाये ❀ विविध दान महिदेवन्ह पाये॥
हरषि चले मुनि-बृन्द-सहाया ❀ बेगि बिदेह नगर नियराया॥

तब प्रभुने ऋषियोंसमेत स्नान किया और ब्राह्मणोंने बहुत तरहका दान पाया। फिर श्रीरामचन्द्रजी मुनियोंके झुण्डके साथ प्रसन्न होकर चले और जल्दी ही जनकपुरके पास आ गये।

पुररम्यता राम जब देखी ❀ हरषे अनुज समेत बिसेखी ॥
बापी कूप सरित सर नाना ❀ सलिल सुधासम मनिसोपाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब नगरकी रमणीकता देखी तब उन्हें भाईसहित बड़ा आनन्द हुआ। वहां अनेक बावड़ियां, कुएं, नदियां और तालाब थे; जिनका जल अमृतके समान था औ सीढ़ियां मणियोंकी बनी हुई थीं।

गुंजत मंजु मत्त रस भृंगा ❀ कूंजत कल बहुबरन बिहंगा ॥
बरन बरन बिकसे बनजाता ❀ त्रिबिध समीर सदा सुखदाता ॥

वहां रसमें मत्त सुन्दर भौंरे गूंज रहे थे और अनेक रंगोंके पक्षी सुंदर शब्द कर रहे थे। अनेक रंगोंके कमल खिले हुए थे और सुख देनेवाला शीतल मंद सुगंध पवन सदैव बहता था।

दो०—सुमनबाटिका बाग बन ❀ बिपुल बिहंगनिवास।
फूलत फलत सुपल्लवत ❀ सोहत पुर चहुं पास ॥२४५॥

नगरके चारों ओर फुलवाड़ियां, बाग और वन फूलते, फलते और सुन्दर पत्तोंसे हरेभरे रहते तथा शोभा पाते थे। ये सब बहुतसे पक्षियोंका निवासस्थान बने हुए थे।

बनइ न बरनत नगरनिकाई ❀ जहां जाइ मन तहंइ लोभाई ॥
चारु बजार बिचित्र अंबारी ❀ मनिमय बिधि जनु स्वकर सवांरी ॥

नगरकी सुन्दरता वर्णन करते नहीं बनती। जिधर मन जाता था वहीं लुभा रहता था। सुन्दर बाजार और विचित्र अटारियां मणियोंसे बनी हुई थीं, मानों ब्रह्माने उन्हें अपने हाथसे सजाया हो।

धनिक बनिक बर धनद समाना ❀ बैठे सकल बस्तु लेइ नाना ॥
चौहट सुंदर गली सुहाई ❀ संतत-रहहिं सुगंध सिंचाई ॥

कुबेरके समान धनी श्रेष्ठ बनिये अनेक प्रकारकी समस्त वस्तुएँ रखकर बैठे हुए थे। चौराहा और सुन्दर गलियां शोभायमान थीं, जो सदैव सुगन्धित जलसे छिड़की हुई रहती थीं।

मंगलमय मंदिर सब केरे ❀ चित्रित जनु रतिनाथ चितेरे ॥
पुर-नर-नारि सुभग सुचिसंता ❀ धरमसील ग्यानी गुनवंता ॥

सबके घर मंगलरूप थे, मानों उन्हें चित्रकार कामदेवने चित्रित किया हो। नगरके स्त्रीपुरुष सब सुन्दर, पवित्र, साधु, धर्मात्मा, ज्ञानी और गुणवान थे।

अति अनूप जहं जनकनिवासू ❀ बिथकहिं बिबुध बिलोकि बिलासू ॥
होत चकित चित कोट बिलोकी ❀ सकल-भुवन-सोभा जनु रोकी ॥

वहां राजा जनकका अत्यन्त अनुपम निवासस्थान था और देवता भी उसके भोग-विलासको देखकर थक जाते थे। कोटको देखकर चित्त चकित हो जाता था, मानों उसने समस्त भुवनोंकी शोभाको रोक रखा हो।

दो०—धवलधाम मनि-पुरट-पट ❀ सुघटित नाना भांति।
सियनिवास सुंदर सदन ❀ सोभा किमि कहि जाति॥२४६॥

सफेद महल सोना, मणियों और वस्त्रोंसे अनेक प्रकारसे सजाये हुए थे। जिस सुन्दर महलमें सीताजी रहती थीं, उसकी शोभा कैसे कही जा सकती है?

सुभग द्वार सब कुलिस कपाटा ❀ भूप भीर नट मागध भाटा॥
बनी बिसाल बाजि - गज - साला ❀ हय-गज-रथ - संकुल सब काला॥

सब द्वार सुन्दर थे और उनमें हीरोंके किवाड़ थे। राजद्वारपर नट, मागधों और भाटोंकी भीड़ थी। बड़ी-बड़ी घुड़सालें और हाथीखाने बने हुए थे, जो घोड़ों, हाथियों और रथोंसे सर्वदा भरे रहते थे।

सूर सचिव सेनप बहुतेरे ❀ नृपगृह सरिस सदन सब केरे॥
पुर बाहिर सर सरित समीपा ❀ उतरे जहँ तहँ बिपुल महीपा॥

बहुतसे वीर, मंत्री और सेनापति थे। इन सबके घर राजभवनके समान थे। नगरके बाहर तालाबों और नदियोंके किनारे जहां-तहां बहुतसे राजा उतरे हुए थे।

देखि अनूप एक अँवराई ❀ सब सुपास सब भाँति सुहाई॥
कौसिक कहेउ मोर मन माना ❀ इहां रहिय रघुबीर सुजाना॥

आमोंके वृक्षोंका एक अनुपम झुरमुट सब प्रकार सुन्दर और वहां सब सुविधाएं देखकर विश्वामित्रने कहा कि यह मेरे मनको अच्छा लगता है। हे सुजान रघुवीर, यहां रहिये।

भलेहि नाथ कहि कृपानिकेता ❀ उतरे तहँ मुनि-बृंद-समेता॥
बिस्वामित्र महामुनि आये ❀ समाचार मिथिलापति पाये॥

"बहुत अच्छा स्वामी" यह कहकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी वहां मुनियोंसहित उतरे। मिथिलापति राजा जनकने यह समाचार पाया कि महामुनि विश्वामित्र आये हुए हैं।

दो०—संग सचिव सुचि भूरिभट ❀ भूसुर बर गुरु ग्याति।
चले मिलन मुनिनायकहि ❀ मुदित राउ एहि भाँति॥२४७॥

राजा जनक प्रसन्न हो पवित्र मंत्री, बहुतसे योद्धाओं, गुरु, श्रेष्ठ ब्राह्मणों और अपनी जातिवालोंको साथ लेकर इस भांति मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्रसे मिलने चले।

कीन्ह प्रनाम चरन धरि माथा ❀ दीन्हि असीस मुदित मुनिनाथा ॥
बिप्रबृंद सब सादर बंदे ❀ जानि भाग्य बड़ राउ अनंदे ॥

राजाने चरणोंमें मस्तक रखकर प्रणाम किया और मुनिनाथ विश्वामित्रने प्रसन्न होकर आशिष दी। फिर उन्होंने समस्त ब्राह्मण-समूहकी आदरपूर्वक वन्दना की। राजा अपना बड़ा भाग्य समझकर खूब प्रसन्न हुए।

कुसल प्रस्न कहि बारहिं बारा ❀ बिस्वामित्र नृपहि बैठारा ॥
तेहि अवसर आये दोउ भाई ❀ गये रहे देखन फुलवाई ॥

विश्वामित्रने बारबार कुशलप्रश्न कर राजाको बिठलाया। उसी समय दोनों भाई आये, जो फुलवाड़ी देखने गये हुए थे।

स्याम गोर मृदु बयस किसोरा ❀ लोचन सुखद बिस्व-चित-चोरा ॥
उठे सकल जब रघुपति आये ❀ बिस्वामित्र निकट बैठाये ॥

दोनों भाई सावंले और गोरे थे, उनकी कोमल किशोर अवस्था थी और वे आंखोंको सुख देनेवाले तथा संसारका चित्त चुरा लेनेवाले थे। जब श्रीरामचन्द्रजी आये तब सब लोग खड़े हुए। विश्वामित्रने उन्हें समीप बिठलाया।

भये सब सुखी देखि दोउ भ्राता ❀ बारि बिलोचन पुलकित गाता ॥
मूरति मधुर मनोहर देखी ❀ भयउ बिदेहु बिदेहु बिसेखी ॥

दोनों भाइयोंको देखकर सब सुखी हुए, सबके नेत्रोंमें जल आ गया और शरीर पुलकायमान हो गया। मधुर और मनोहर मूर्ति देखकर राजा जनकको विशेषकर अपनी देहकी सुध भूल गयी।

दो०—प्रेममगन मन जानि नृपु ❀ करि बिबेकु धरि धीर।
बोलेउ मुनिपद नाइ सिरु ❀ गदगद गिरा गंभीर ॥२४८॥

मनको प्रेममें मग्न जानकर राजा जनक ज्ञानसे धीर रखकर मुनिके चरणोंको शिर नवा गंभीर वाणीसे गद्गद् कंठ होकर बोले।

कहहु नाथ सुन्दर दोउ बालक ❀ मुनि-कुल-तिलक कि नृप-कुलपालक ॥
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा ❀ उभय बेष धरि की सोइ आवा ॥

हे नाथ, कहो कि ये दोनों सुन्दर बालक मुनिकुलके तिलक हैं या राजकुलके पालन करनेवाले, अथवा वही ब्रह्म दो रूप रखकर उपस्थित हुआ है, जिसे वेद 'नेति' कहकर गाते हैं।

सहज बिरागरूप मन मोरा ❀ थकित होत जिमि चंदचकोरा ॥
ता तें प्रभु पूछउं सतिभाऊ ❀ कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ ॥

मेरा मन सहज ही विरागरूप है। वह इन्हें देखकर उसी भांति थक रहा है जैसे चन्द्रमाको देखकर चकोर थक जाता है। हे प्रभो, इसी कारण सच्चे भावसे पूछता हूं। हे स्वामी, कहिये। छिपाव मत कीजिये।

इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा ❁ बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा॥
कह मुनि बिहँसि कहेउ नृप नीका ❁ बचन तुम्हार न होइ अलीका॥

इन्हें देखते ही अत्यंत प्रेम उत्पन्न हुआ है और मनने जबर्दस्ती ब्रह्मानन्दको त्याग दिया है। मुनिने हँसकर कहा कि हे राजा, आपने अच्छा कहा। आपका वचन असत्य नहीं हो सकता।

ये प्रिय सबहि जहां लगि प्रानी ❁ मन मुसुकाहिं राम सुनि बानी॥
रघु-कुल-मनि दसरथके जाये ❁ मम हित लागि नरेस पठाये॥

जहांतक प्राणी हैं, ये उन सबको प्यारे हैं। श्रीरामचन्द्रजी यह बात सुनकर मनमें मुस्कुराने लगे। ये रघुकुलमें मणिके समान राजा दशरथके पुत्र हैं। राजाने मेरे लाभके लिये इन्हें भेजा है।

दो०—राम लखन दोउ बंधु बर ❁ रूप-सील-बल-धाम।
मख राखेउ सब साखि जगु ❁ जिते असुर संग्राम॥२४६॥

दोनों सुन्दर भाई श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी रूप, शील और बलके घर हैं। इन्होंने राक्षसोंको संग्राममें जीतकर मेरे यज्ञकी रक्षा की है, इसका सब संसार साक्षी है।

मुनि तव चरन देखि कह राऊ ❁ कहि न सकउँ निज पुन्यप्रभाऊ॥
सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता ❁ आनंदहू के आनंददाता॥

राजाने कहा कि हे मुनि, आपके चरण देखकर मैं अपने पुण्यके प्रभावको कह नहीं सकता। सांवले और गोरे दोनों भाई सुन्दर हैं और आनन्दको भी आनन्द देनेवाले हैं।

इन्ह कै प्रीति परस्पर पावनि ❁ कहि न जाइ मन भाव सुहावनि॥
सुनहु नाथ कह मुदित बिदेहू ❁ ब्रह्म जीव इव सहज सनेहू॥

इनकी पवित्र पारस्परिक प्रीतिका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह मनको रुचनेवाली और सुन्दर है। राजा जनकने प्रसन्न होकर कहा कि हे नाथ, सुनिये, इनमें ब्रह्म और जीवकी भांति स्वाभाविक प्रेम है।

पुनि पुनि प्रभुहि चितव नरनाहू ❁ पुलक गात उर अधिक उछाहू॥
मुनिहि प्रसंसि नाइ पद सीसू ❁ चलेउ लिवाइ नगर अवनीसू॥

राजा बारबार प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखते थे। उनका शरीर पुलकायमान था और हृदयमें बड़ा उत्साह था। मुनिकी प्रशंसा कर और चरणोंमें मस्तक नवाकर राजा उन्हें नगरको लिवा ले चले।

सुंदर सदन सुखद सब काला ❀ तहाँ बास लेइ दीन्ह भुआला ॥
करि पूजा सब बिधि सेवकाई ❀ गयउ राउ गृह बिदा कराई ॥

जो भवन सब ऋतुओंमें सुखदायी और सुन्दर था, उसमें राजाने मुनिको ठहराया। सब प्रकार पूजा और सेवा कर विदा माँगकर राजा अपने घरपर गये।

दो०—रिषय संग रघु-बंस-मनि ❀ करि भोजन बिस्राम।
बैठे प्रभु भ्राता सहित ❀ दिवस रहा भरि जाम ॥२५०॥

भोजन और विश्राम कर रघुवंशमें मणिके समान प्रभु श्रीरामचन्द्रजी भाई लक्ष्मणसमेत ऋषियोंके साथ बैठे। उस समय पहरभर दिन शेष था।

लषन हृदय लालसा बिसेखी ❀ जाइ जनकपुर आइय देखी ॥
प्रभुभय बहुरि मुनिहिं सकुचाहीं ❀ प्रगट न कहहिं मनहिं मुसुकाहीं ॥

लक्ष्मणजीके हृदयमें बड़ी लालसा थी कि जाकर जनकपुर देख आवें। एक तो श्रीरामचन्द्रजीका भय था, दूसरे वे मुनिसे संकोच करते थे, इससे प्रकट कुछ न कहते थे, पर मनमें मुस्कुराते थे।

राम अनुजमनकी गति जानी ❀ भगतबछलता हिय हुलसानी ॥
परमबिनीत सकुचि मुसुकाई ❀ बोले गुरुअनुसासन पाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने भाईके मनकी बात जान ली, उनके हृदयमें भक्तवत्सलता हो आयी और वे गुरुकी आज्ञा पाकर अत्यन्त विनीत भावसे संकोचपूर्वक मुस्कुराते हुए बोले।

नाथ लषन पुर देषन चहहीं ❀ प्रभुसकोच डर प्रगट न कहहीं ॥
जौं राउर आयसु मैं पावउँ ❀ नगर देखाइ तुरत लेइ आवउँ ॥

हे नाथ, लक्ष्मण जनकपुर देखना चाहते हैं, पर आपके संकोच और डरसे खुलकर नहीं कहते। यदि मैं आपकी आज्ञा पाऊँ तो इन्हें नगर दिखलाकर तुरन्त ही ले आऊँ।

सुनि मुनीस कह बचन सप्रीती ❀ कस न राम तुम्ह राखहु नीती ॥
धरम-सेतु-पालक तुम्ह ताता ❀ प्रेमबिबस सेवक-सुख-दाता ॥

सुनकर मुनीश्वरने यह वचन कहा कि हे राम, तुम भला नीतिकी रक्षा कैसे न करो। हे तात, तुम धर्मकी मर्यादाके रक्षक हो और प्रेमके वश होकर सेवकोंको सुख देनेवाले हो।

दो०—जाइ देखि आवहु नगरु ❀ सुखनिधान दोउ भाइ।
करहु सुफल सबके नयन ❀ सुंदर बदन देखाइ ॥२५१॥

हे सुखधाम, तुम दोनों भाई जाकर नगर देख आओ और अपना सुन्दर मुखड़ा दिखलाकर सबके नेत्रोंको सफल करो।

मुनि-पद-कमल बंदि दोउ भ्राता ❀ चले लोक-लोचन-सुख-दाता॥
बालकवृंद देखि अति सोभा ❀ लगे संग लोचन मनु लोभा॥

संसारके नेत्रोंको सुख देनेवाले दोनों भाई मुनिके चरणकमलोंकी वंदना कर चले। अत्यन्त शोभा देखकर लड़कोंका समूह उनके साथ हो गया। उनके नेत्र और मन लुभा गये थे।

पीतबसन परिकर कटि भाथा ❀ चारु चाप सर सोहत हाथा॥
तन अनुहरत सुचंदन खोरी ❀ स्यामल गौर मनोहर जोरी॥

पीतांबरका फेटा, कमरमें तरकस और हाथमें सुन्दर धनुषबाण शोभित हो रहा था। शरीरके योग्य सुन्दर चन्दनकी खौर थी और यह सांवली गोरी जोड़ी बड़ी मनोहर थी।

केहरिकंधर बाहु बिसाला ❀ उर अति रुचिर नाग-मनि-माला॥
सुभग सोन सरसी-रुह-लोचन ❀ बदन मयंक ताप-त्रय-मोचन॥

उनके सिंहके समान कंधे, विशाल बाहु, हृदयमें अत्यन्त सुन्दर गजमुक्ताओंकी मालाएं, सुन्दर लाल कमलके समान नेत्र थे, और मुख चन्द्रमाके समान तीनों तापोंको दूर कर देनेवाला था।

कानन्हि कनकफूल छवि देहीं ❀ चितवत चितहिं चोरि जनु लेहीं॥
चितवनि चारु भृकुटि बर बांकी ❀ तिलक-रेख-सोभा जनु चाँकी॥

कानोंमें सोनेके फूल शोभा दे रहे थे, जो देखते ही चित्तको मानों चुरा लेते थे। सुन्दर चितवन और सुन्दर बांकी भौंहें थीं। तिलककी रेखा भी मानों छाप जैसी शोभा पा रही थी।

दो०—रुचिर चौतनी सुभग सिर ❀ मेचक कुंचित केस।
नख-सिख-सुंदर बंधु दोउ ❀ सोभा सकल सुदेस॥२५२॥

सुन्दर शिरपर उत्तम चौतनी टोपियां थीं। बाल काले और घुंघराले थे। दोनों भाई नखसे लेकर शिखापर्य्यन्त सुन्दर थे। उनके समस्त शरीरमें छवि थी।

देखन नगर भूपसुत आये ❀ समाचार पुरबासिन्ह पाये।
धाये धाम काम सब त्यागी ❀ मनहुँ रंक निधि लूटन लागी॥

नगरवासियोंने यह समाचार पाया कि राजाके पुत्र नगर देखने आये हैं। वे सब काम एक ओर रख, घर छोड़कर भागे, मानों निर्धन कोष लूटनेके लिये भागा हो।

निरख सहज सुंदर दोउ भाई ❁ होहिं सुखी लोचन फल पाई ॥
जुवती भवनझरोखन्हि लागीं ❁ निरखहिं रामरूप अनुरागीं ॥

स्वभावसे ही सुन्दर दोनों भाइयोंको देखकर वे सब नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते थे। युवतियां घरोंके झरोखोंसे लगी हुई प्रेमसे श्रीरामचन्द्रजीके स्वरूपको देखती थीं।

कहहिं परस्पर बचन सप्रीती ❁ सखि इन्ह कोटि-काम-छबि जीती ॥
सुर नर असुर नाग मुनि माहीं ❁ सोभा असि कहुं सुनियत नाहीं ॥

वे आपसमें प्रीतिपूर्वक यह बात कहती थीं कि हे सखी, इन्होंने करोड़ कामदेवकी शोभाको जीत लिया है। देवता, मनुष्य, राक्षस, नाग और मुनि—सबमें ऐसी सुन्दरता कहीं नहीं सुनी।

बिस्नु चारि भुज बिधि मुख चारी ❁ बिकटबेख मुख पंच पुरारी ॥
अपर देव अस कोउ न आहीं ❁ यह छबि सखी पटतरिय जाहीं ॥

भगवान् विष्णुके चार भुजाएं और ब्रह्माके चार मुख हैं। शिवजीके पाँच मुख हैं और उनका भयंकर भेष है। अन्य देवताओंमें ऐसा कोई नहीं है, जिससे हे सखी, इस सुन्दरताकी उपमा दी जाय।

दो०—बयकिसोर सुखमासदन ❁ स्यामगौर सुखधाम।
अंग अंग पर वारियहि ❁ कोटिकोटिसत काम ॥२५३॥

ये अवस्थामें किशोर, सुन्दरताके घर, सांवले और गोरे तथा सुखके धाम हैं। इनके अङ्ग-अङ्गपर करोड़ों कामदेवोंको न्योछावर करना चाहिये।

कहहु सखी अस को तनु धारी ❁ जो न मोह अस रूप निहारी ॥
कोउ सप्रेम बोली मृदुबानी ❁ जो मैं सुना सो सुनहु सयानी ॥

हे सखी, कहो, ऐसा कौन शरीरधारी है, जो ऐसा रूप देखकर मोहित न हो जावे। कोई स्त्री प्रेमपूर्वक मीठी वाणीसे कहने लगी कि हे सयानी, मैंने जो सुना है उसे सुनो।

ए दोऊ दसरथ के ढोटा ❁ बाल मरालन्ह के कल जोटा ॥
मुनि-कौसिक-मख के रखवारे ❁ जिन्ह रनअजिर निसाचर मारे ॥

ये दोनों राजा दशरथके पुत्र हैं, जो बालहंसोंकी सुन्दर जोड़ीके समान हैं। ये विश्वामित्र मुनिके यज्ञकी रक्षा करनेवाले हैं, जिन्होंने लड़ाईके मैदानमें राक्षसोंको मारा है।

स्यामगात कल कंजबिलोचन ❁ जो मारीच-सुभुज-मद-मोचन ॥
कौसल्यासुत सो सुखखानी ❁ नाम राम धनुसायक पानी ॥

२५

जिनका शरीर सांवला है, सुन्दर कमल जैसे जिनके नेत्र हैं, जिन्होंने मारीच और सुबाहु नामक राक्षसोंका मद नष्ट किया है, और जो सुखकी खान हैं—वही कौशल्याके पुत्र हैं जिनका नाम राम है और जिनके हाथमें धनुषवाण है।

गौर किसोर बेष बर काछे ❀ कर सर चाप रामके पाछे ॥
लछिमन नाम राम-लघु-भ्राता ❀ सुनु सखि तासु सुमित्रा माता ॥

गोरे, किशोर अवस्थावाले, सुन्दर भेष धारण किये और हाथमें धनुषवाण लिये हुए रामके पीछे जो हैं उनका नाम लक्ष्मण है, ये श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई हैं। हे सखी, सुन, उनकी माता सुमित्रा हैं।

दो०—बिप्रकाजु करि बंधु दोउ ❀ मग मुनिबधू उधारि।
आये देखन चापमख ❀ सुनि हरषीं सब नारि ॥२५४॥

दोनों भाई ब्राह्मणोंका कार्य कर और मार्गमें गौतम मुनिकी स्त्री अहिल्याका उद्धार कर धनुषयज्ञ देखने आये हैं। यह सुनकर सब स्त्रियां प्रसन्न हुईं।

देखि रामछबि कोउ एक कहई ❀ जोगु जानकिहि यह बरु अहई ॥
जो सखि इन्हहिं देख नरनाहू ❀ पन परिहरि हठि करइ बिबाहू ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी सुन्दरताको देखकर कोई एक स्त्री कहने लगी कि जानकीके योग्य वर यह है। हे सखी, यदि राजा जनक इन्हें देख लें तो प्रण छोड़कर हठपूर्वक विवाह करें।

कोउ कह ए भूपति पहिचाने ❀ मुनिसमेत सादर सनमाने ॥
सखि परंतु पन राउ न तजई ❀ बिधिबस हठि अबिबेकहि भजई ॥

कोई कहने लगी कि इन्हें राजाने पहचान लिया है और मुनिसमेत इनका सादर सम्मान किया है। परन्तु हे सखी, राजा प्रण न छोड़ेंगे। दैववश हठ करके अपनी अज्ञानताको गहे ही रहेंगे।

कोउ कह जौं भल अहइ बिधाता ❀ सब कहँ सुनिय उचित-फल-दाता ॥
तौ जानकिहि मिलिहि बरु एहू ❀ नाहिं न आलि इहां संदेहू ॥

कोई कहने लगी कि यदि विधाता अच्छा है और सुना है वह सबको उचित फल देनेवाला है, तो जानकीको यही वर मिलेगा। हे सखी, इसमें संदेह नहीं है।

जौं बिधिबस अस बनइ सँजोगू ❀ तौ कृतकृत्य होहिं सब लोगू ॥
सखि हमरे आरति अति ताते ❀ कबहुँक ए आवहिं एहि नाते ॥

यदि दैववश ऐसा संयोग बन जाय तो सब लोग कृतकृत्य हो जायँ। हे सखी, मुझे इस कारण अत्यंत प्रीति है कि इस नाते ये कभी फिर आयँगे।

दो०—नाहिं त हम कहँ सुनहु सखि ❀ इन्ह कर दरसन दूरि।
यह संघट तब होइ जब ❀ पुन्य पुराकृत भूरि ॥२५५॥

नहीं तो हे सखी, सुनो, हम सबको इनका दर्शन दूर है। यह संयोग तब हो सकता है जब पूर्वजन्ममें किये हुए हमारे बहुतसे पुण्य हों।

बोली अपर कहेहु सखि नीका ❀ एहि बिवाह अतिहित सबही का ॥
कोउ कह संकर चाप कठोरा ❀ ए स्यामल मृदुगात किसोरा ॥

दूसरी स्त्री कहने लगी कि हे सखी, भला कहा। इस विवाहमें सभीका अत्यन्त हित है। कोई कहने लगी कि शिवजीका धनुष कठोर है और ये साँवले राजकुमार शरीरके कोमल और अवस्थामें किशोर हैं।

सब असमंजस अहइ सयानी ❀ यह सुनि अपर कहइ मृदुबानी ॥
सखि इन्ह कहँ कोउ कोउ अस कहहीं ❀ बड़ प्रभाउ देखत लघु अहहीं ॥

हे सयानी, सभी बातें दुविधाकी हैं। यह सुनकर दूसरी स्त्रीने मीठी वाणीसे कहा कि हे सखी, इनके संबंधमें कोई-कोई ऐसा कहते हैं कि ये देखनेमें छोटे हैं, पर इनका प्रभाव बड़ा है।

परसि जासु पद-पंकज-धूरी ❀ तरी अहल्या कृत-अघ-भूरी ॥
सो कि रहिहि बिनु सिवधनु तोरे ❀ यह प्रतीति परिहरिय न भोरे ॥

जिनके चरणकमलकी धूलको छूकर अहल्या तर गयी जिसने बहुत पाप किये थे वे शिवजीका धनुष बिना तोड़े क्या रह सकते हैं? भूलकर भी यह विश्वास नहीं छोड़ना चाहिये।

जेहि बिरंचि रचि सीय सँवारी ❀ तेहि स्यामल बरु रचेउ बिचारी ॥
तासु बचन सुनि सब हरषानी ❀ ऐसेइ होउ कहहिं मृदुबानी ॥

जिस ब्रह्माने रचकर सीताको सँवारा है उसीने विचारकर साँवला वर बनाया है। उस सखीका कथन सुनकर सब प्रसन्न हुईं और मीठी वाणीसे कहने लगीं कि ऐसा ही हो।

दो०—हिय हरषहिं बरषहिं सुमन ❀ सुमुखि - सुलोचनि - बृंद।
जाहिं जहाँ जहँ बंधु दोउ ❀ तहँ तहँ परमानंद ॥२५६॥

सुन्दर मुख और सुन्दर नेत्रोंवाली स्त्रियोंके झुण्ड हृदयमें प्रसन्न होकर फूल बरसाते थे। जहाँ जहाँ दोनों भाई जाते थे वहाँ वहाँ बड़ा आनन्द होता था।

पुर पूरब दिसि गे दोउ भाई ❀ जहँ धनु-मख-हित भूमि बनाई ॥
अतिबिस्तार चारु गच ढारी ❀ बिमलबेदिका रुचिर सँवारी ॥

दोनों भाई नगरकी पूर्व दिशामें गये, जहां धनुषयज्ञके लिये भूमि बनायी गयी थी। उसकी बहुत अधिक लंबाई-चौड़ाई थी। सुन्दर गच ढली हुई थी और निर्मल वेदी अच्छे ढंगसे सजायी गयी थी।

चहुँ दिसि कंचनमंच बिसाला ❀ रचे जहां बैठहिं महिपाला ॥
तेहि पाछे समीप चहुँ पासा ❀ अपर मंचमंडली बिलासा ॥

चारों दिशाओंमें सोनेके विशाल मंच बनाये थे, जिनपर राजा लोग बैठें। इनके पीछे समीपमें ही चारों ओर और भी बहुतसे मंच शोभित थे।

कछुक ऊंचि सब भांति सुहाई ❀ बैठहिं नगर लोग जहं जाई ॥
तिन्हके निकट बिसाल सुहाये ❀ धवलधाम बहुबरन बनाये ॥

ये कुछ ऊंचे और सब प्रकार सुन्दर थे, जिनपर नगरके लोग जाकर बैठें। इनके पास ही अनेक रङ्गोंके बनाये हुए उज्ज्वल विशाल मण्डप शोभित थे।

जहँ बैठे देखहिं सब नारी ❀ जथाजोग निजकुल अनुहारी ॥

आय हैं। यह सुनकर [illegible]

[illegible] रचना ❀ सादर प्रभुहि देखावहिं रचना ॥
पुर बालक कहि कहि मृदुब[illegible]रन

[illegible]अपने कुलकी मर्यादाके अनुसार देखें। जनकपुरके बालक मीठे जहांपर यथायोग्य बैठकर सब स्त्रियां [illegible]नावट दिखलाते थे। वचन कह-कहकर आदरपूर्वक श्रीरामचन्द्रजीको [illegible]

कर हठपूर्वक [illegible]

दो०—सब सिसु एहि मिसप्रेमबस ❀ परसि मनोहर गात ।
तनु पुलकहिं अति हरष हिय ❀ देखि देखि दोउ भ्रात ॥२५७॥

प्रेमके वश होकर इसी बहाने मनोहर शरीर छूकर सब बालकोंके शरीर पुलकायमान हो जाते थे। दोनों भाइयोंको देख देखकर वे हृदयमें अत्यन्त प्रसन्न होते थे।

सिसु सब राम प्रेमबस जाने ❀ प्रीतिसमेत निकेत बखाने ॥
निज निज रुचि सब लेहिं बोलाई ❀ सहित सनेह जाहिं दोउ भाई ॥

सब बालकोंने जब श्रीरामचन्द्रजीको प्रेमके वश जाना तब उन्होंने प्रेमपूर्वक अपने-अपने घर दिखलाये। अपनी-अपनी रुचिसे सब उन्हें बुला लेते थे और दोनों भाई प्रेमपूर्वक वहां जाते थे।

रामु देखावहिं अनुजहिं रचना ❀ कहि मृदु मधुर मनोहर बचना ॥
लवनिमेष महं भुवननिकाया ❀ रचइ जासु अनुसासन माया ॥

श्रीरामचन्द्रजी कोमल, मीठे और मनोहर वचन कहकर लक्ष्मणजीको रचना दिखलाते थे। जिसकी आज्ञासे माया पलकभरमें समस्त भुवनोंकी रचना करती है,

भगति हेतु सोइ दीन-दयाला ❀ चितवत चकित धनुष-मख-साला ॥
कौतुक देखि चले गुरु पाहीं ❀ जानि बिलंबु त्रास मन माहीं ॥

वही दीनदयालु भक्तिके लिये धनुष-यज्ञशालाको चकित होकर देखते हैं। कौतुक देखकर दोनों भाई गुरुके पास चले। देर हुई जानकर उन्हें मनमें डर था।

जासु त्रास डर कहुँ डर होई ❀ भजन प्रभाउ देखावत सोई ॥
कहि बातैं मृदु मधुर सुहाईं ❀ किये बिदा बालक बरिआईं ॥

जिनके डरसे डरको भी डर लगता है वही अपने भजनका प्रभाव दिखलाते हैं। दोनों भाइयोंने कोमल मीठी, सुन्दर बातें कहकर जबर्दस्ती बालकोंको विदा किया।

दो०—सभय सप्रेम बिनीत अति ❀ सकुच सहित दोउ भाइ।
गुरु-पद-पंकज नाइ सिर ❀ बैठे आयसु पाइ ॥२५८॥

भय और प्रेमपूर्वक दोनों भाई नम्रतासे गुरुके चरणकमलोंको अत्यन्त संकोचसहित शिर नवाकर और आज्ञा पाकर बैठे।

निसिप्रवेस मुनि आयसु दीन्हा ❀ सबहीं संध्याबंदन कीन्हा ॥
कहत कथा इतिहास पुरानी ❀ रुचिर रजनि जुगजाम सिरानी ॥

सन्ध्यासमय मुनिने आज्ञा दी और सबने संध्यावंदन किया। पुरानी कथाएँ और इतिहास कहते दो पहर सुहावनी रात बीत गयी।

मुनिबर सयन कीन्ह तब जाई ❀ लगे चरन चाँपन दोउ भाई ॥
जिन्ह के चरनसरोरुह लागी ❀ करत बिबिध जप जोग बिरागी ॥

तब मुनिवर विश्वामित्रने जाकर शयन किया और दोनों भाई चरण दबाने लगे। जिनके चरणकमलोंके लिये वैरागीजन अनेक प्रकारका जप और योग करते हैं।

तेइ दोउ बंधु प्रेम जनु जीते ❀ गुरु-पद-कमल पलोटत प्रीते ॥
बार बार मुनि आग्या दीन्ही ❀ रघुबर जाइ सयन तब कीन्ही ॥

वे दोनों भाई प्रेमसे गुरुके चरणकमलोंको दबाते हैं मानों प्रेमने उन्हें जीत लिया हो। मुनिने जब बार बार आज्ञा दी तब श्रीरामचन्द्रजीने जाकर शयन किया।

चापत चरन लखन उर लाये ❀ सभय सप्रेम परम सचु पाये ॥
पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता ❀ पौढ़े धरि उर पदजलजाता ॥

फिर लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके चरण दबाने लगे। उन्होंने उस समय उनके चरणोंको हृदयसे लगा लिया। फिर वे भय और प्रेमसे संकोच कर अत्यन्त सकुचा गये। श्रीरामचन्द्रजीने बार-बार कहा कि हे तात सोओ। पश्चात् चरणकमलोंको हृदयमें धारण कर वे भी पौढ़ गये।

दो०—उठे लषन निसि बिगत सुनि ❀ अरुन-सिखा-धुनि कान।
गुर तें पहिलेहि जगतपति ❀ जागे राम सुजान॥ २५९॥

रात्रि व्यतीत होनेपर मुर्गेकी बोली कानों सुनकर लक्ष्मणजी उठे। गुरुसे पहिले ही संसारके स्वामी सुजान श्रीरामचन्द्रजी जागे।

सकल सौच करि जाइ नहाये ❀ नित्य निबाहि मुनिहि सिर नाये॥
समय जानि गुर आयसु पाई ❀ लेन प्रसून चले दोउ भाई॥

शौच करके जाकर सबने स्नान किया और नित्यक्रिया कर मुनिको शिर नवाया। समय जानकर गुरुकी आज्ञासे दोनों भाई फूल लेनेके लिये चले।

भूपबाग वर देखेउ जाई ❀ जहँ बसंतरितु रही लोभाई॥
लागे बिटप मनोहर नाना ❀ बरन बरन बर बेलिबिताना॥

उन्होंने जाकर राजाका सुन्दर बाग देखा, जहां वसन्तऋतु लुभा रही थी। अनेक प्रकारके मनोहर वृक्ष लगे थे और रङ्गबिरङ्गी सुन्दर बेलोंके मण्डप बने हुए थे।

नव पल्लव फल सुमन सुहाये ❀ निज संपति सुररूख लजाये॥
चातक कोकिल कीर चकोरा ❀ कूजत बिहग नटत कल मोरा॥

नये पत्ते, फल और फूल शोभित हो रहे थे और सब वृक्ष अपनी सम्पदासे कल्पवृक्षको भी लजाते थे। चातक, कोयल, तोता, चकोर—सब पक्षी चहचहाते थे और सुन्दर मोर नाचते थे।

मध्य बाग सर सोह सुहावा ❀ मनिसोपान बिचित्र बनावा॥
बिमलसलिल सरसिज बहुरंगा ❀ जलखग कूजत गुंजत भृंगा॥

बागके बीचमें सुन्दर सरोवर शोभित था, जिसकी मणियोंकी सीढ़ियां बड़ी विचित्र बनी हुई थीं। निर्मल जलमें अनेक रङ्गके कमल थे और जलके पक्षी चहचहाते तथा भौंरे गुंजार करते थे।

दो०—बागुतड़ाग बिलोकि प्रभु ❀ हरषे बंधुसमेत।
परमरम्य आराम यह ❀ जो रामहि सुख देत॥ २६०॥

बाग और सरोवर देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी भाई लक्ष्मणसमेत प्रसन्न हुए। यह बाग अत्यन्त रमणीक है, जो श्रीरामचन्द्रजीको सुख देता है।

चहु दिसि चितइ पूंछि मालीगन ❀ लगे लेन दल फूल मुदितमन ॥
तेहि अवसर सीता तहं आई ❀ गिरिजापूजन जननि पठाई ॥

चारों ओर देख, मालियोंसे पूछकर दोनों भाई प्रसन्न मनसे फूल-पत्ती लेने लगे। उसी समय वहाँ सीताजी आयीं। माताने उन्हें पार्वतीकी पूजा करनेके लिये भेजा था।

संग सखी सब सुभग सयानी ❀ गावहिं गीत मनोहर बानी ॥
सरसमीप गिरिजागृह सोहा ❀ बरनि न जाइ देखि मन मोहा ॥

सङ्गमें सब सखियां सौभाग्यवती और चतुर थीं, जो मनोहर ध्वनिसे गीत गाती थीं। सरोवरके पास पार्वतीका मन्दिर शोभित था। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। देखकर मन मोहित हो जाता था।

मज्जन करि सर सखिन्ह समेता ❀ गई मुदितमन गौरिनिकेता ॥
पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा ❀ निजअनुरूप सुभग बर मांगा ॥

सरोवरमें सखियोंसमेत स्नान कर सीताजी प्रसन्न मनसे पार्वतीके मन्दिरमें गयीं। उन्होंने अत्यन्त प्रेमसे पूजा की और अपने योग्य ही सुन्दर वर मांगा।

एक सखी सिय संग बिहाई ❀ गइ रही देखन फुलवाई ॥
तेइ दोउ बंधु बिलोके जाई ❀ प्रेमबिबस सीता पहिं आई ॥

एक सखी सीताजीका साथ छोड़कर फुलवाड़ी देखने चली गयी थी। उसने जाकर दोनों भाइयोंको देखा और प्रेमसे विवश होकर वह सीताजीके पास आयी।

दो०—तासु दसा देखी सखिन्ह ❀ पुलक गात जल नयन।
कहु कारन निजहरष कर ❀ पूछहिं सब मृदुबयन ॥ २६१ ॥

सखियोंने उसकी दशा देखी। उसका शरीर पुलकायमान था और नेत्रोंमें जल छाया हुआ था। सब मीठे वचनोंसे उसे पूछती थीं कि अपनी प्रसन्नताका कारण तो कह!

देखन बाग कुअंर दुइ आये ❀ बयकिसोर सब भाँति सुहाये ॥
स्याम गौर किमि कहउं बखानी ❀ गिरा अनयन नयन बिनु बानी ॥

उसने कहा कि दो राजकुमार बाग देखने आये हैं। उनकी किशोर अवस्था है और वे सब प्रकार सुन्दर हैं। उनमें एक सांवला है और एक गोरा। उन्हें बखानकर कैसे कहूं? कहनेवाली जीभको नेत्र नहीं हैं और देखनेवाले नेत्रोंको जीभ नहीं हैं।

सुनि हरषीं सब सखी सयानी ❀ सियहिय अति उतकंठा जानी ॥
एक कहइ नृपसुत तेइ आली ❀ सुने जे मुनि संग आये काली ॥

सुनकर सब चतुर सखियां प्रसन्न हुईं। सीताजीके हृदयमें अत्यन्त उत्कण्ठा जानकर एक सखी कहने लगी कि हे सखी, ये वही राजपुत्र हैं जो सुना है कि कल मुनिके संग आये हैं।

जिन्ह निजरूप मोहनी डारी ❀ कीन्हे स्ववस नगर-नर-नारी ॥
बरनत छबि जहं तहं सब लोगू ❀ अवसि देखियहि देखन जोगू ॥

जिन्होंने अपने रूपकी मोहनी डालकर नगरके सब स्त्री-पुरुषोंको अपने वशमें कर लिया है; जिनकी छविका वर्णन सब लोग जहां-तहां करते हैं कि उनको अवश्य देखना चाहिये; वे देखनेयोग्य हैं।

तासु बचन अति सियहि सुहाने ❀ दरस लागि लोचन अकुलाने ॥
चली अग्र करि प्रियसखि सोई ❀ प्रीति पुरातनि लखइ न कोई ॥

सीताजीको उसके वचन अत्यन्त अच्छे लगे और दर्शनोंके लिये उनके नेत्र व्याकुल होने लगे। उसी प्यारी सखीको आगे कर वे चलीं। उनकी पुरानी प्रीतिको कोई नहीं जानता।

दो०—सुमिरि सीय नारदबचन ❀ उपजी प्रीति पुनीत।
चकित बिलोकति सकल दिसि ❀ जनु सिसु मृगी सभीत ॥२६२॥

नारदजीका कथन स्मरण कर सीताजीको पवित्र प्रेम उत्पन्न हुआ। वे चकित होकर भयभीत हिरनीके बच्चेके समान सब ओर देखने लगीं।

कंकन-किंकिनि-नूपुर-धुनि सुनि ❀ कहत लखन सन राम हृदय गुनि ॥
मानहुं मदन दुंदुभी दीन्ही ❀ मनसा बिस्वबिजय कहं कीन्ही ॥

कंकण, करधनी और पाजेबोंका शब्द सुन और हृदयमें विचारकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे कहने लगे कि मानों कामदेवने अपने नगारेपर डंका दिया है और संसारको जीतनेकी इच्छा की है।

अस कहि फिर चितये तेहि ओरा ❀ सिय-मुख-ससि भये नयन चकोरा ॥
भये बिलोचन चारु अचंचल ❀ मनहुं सकुचि निमि तजे दृगंचल ॥

ऐसा कहकर फिर उन्होंने उस ओर निगाह डाली और उनके नेत्र सीताजीके चन्द्रमुखके चकोर हो गये सुन्दर नेत्र एकटक हो गये मानों संकोच करके निमिने नेत्रोंका वास ही छोड़ दिया हो।

देखि सीयसोभा सुख पावा ❀ हृदय सराहत बचनु न आवा ॥
जनु बिरंचि सब निजनिपुनाई ❀ बिरचि बिस्व कहं प्रगटि देखाई ॥

सीताजीकी शोभा देखकर श्रीरामचन्द्रजीने सुख पाया। वे हृदयमें उसे सराहते थे और मुखसे कुछ कहते न बनता था। वह शोभा कैसी थी, मानों ब्रह्माने अपनी सब चतुरता रचकर संसारको प्रत्यक्ष दिखलायी हो।

सुंदरता कहुँ सुंदर करई ❀ छबिगृह दीपसिखा जनु बरई ॥
सब उपमा कबि रहे जुठारी ❀ केहि पटतरउँ बिदेहकुमारी ॥

सीताजीकी वह शोभा सुन्दरताको भी सुन्दर बनाती है और ऐसी प्रतीत होती है मानों छविके घरमें दीपककी लौ जल रही हो। कविजन सब उपमाओंको जूंठा कर चुके हैं, तब राजा जनककी पुत्री सीताकी उपमा किससे दें।

दो०—सियसोभा हिय बरनि प्रभु ❀ आपनि दसा बिचारि।
बोले सुचि मन अनुज सन ❀ बचन समय अनुहारि ॥२६३॥

अपने हृदयमें सीताजीकी शोभाका वर्णन कर और अपनी दशाको विचारकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी पवित्र मनसे समयानुकूल बात छोटे भाई लक्ष्मणसे कहने लगे।

तात जनकतनया यह सोई ❀ धनुषजग्य जेहि कारन होई ॥
पूजन गौरि सखीं लेइ आईं ❀ करत प्रकासु फिरइ फुलवाईं ॥

हे तात, ये वही जानकी हैं जिनके कारण धनुषयज्ञ हो रहा है। सखियां उन्हें पार्वतीकी पूजा करनेके लिये लेकर आयी हैं और वे फुलवाड़ीको प्रकाशित करती फिर रही हैं।

जासु बिलोकि अलौकिक सोभा ❀ सहज पुनीत मोर मन छोभा ॥
सो सब कारन जान बिधाता ❀ फरकहिं सुभग अंग सुनु भ्राता ॥

जिसकी अलौकिक शोभाको देखकर मेरा स्वभावसे ही पवित्र मन चलायमान हो गया। इसका सब कारण तो विधाता जाने, परन्तु हे भाई, सुनो, मेरे शुभ अङ्ग फड़क रहे हैं।

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ ❀ मनु कुपंथ पगु धरहिं न काऊ ॥
मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी ❀ जेहिं सपनेहु परनारि न हेरी ॥

रघुवंशियोंका यह सहज स्वभाव है कि उनका मन कभी कुमार्गमें पैर नहीं रखता। मुझे अपने मनका अत्यन्त विश्वास है कि जिसने स्वप्नमें भी परायी स्त्रीको नहीं देखा।

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी ❀ नहिं लावहिं परतिय मन डीठी ॥
मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं ❀ ते नरबर थोरे जग माहीं ॥

संग्राममें शत्रु जिनकी पीठ नहीं पाते, जिनका मन परायी स्त्रियोंमें दृष्टि नहीं लगाता और मङ्गतोंको जिनके यहां इनकार नहीं होता, ऐसे उत्तम पुरुष संसारमें कम हैं।

दो०—करत बतकही अनुज सन ❀ मन सियरूप लुभान।
मुख-सरोज-मकरंद-छबि ❀ करइ मधुप इव पान ॥२६४॥

श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीसे बातें करते थे, पर मन सीताजीके रूपमें लुभाया हुआ भौंरेकी भांति मुखरूपी कमलके सुन्दरतारूपी रसको पी रहा था।

चितवति चकित चहूँ दिसि सीता ❀ कहँ गये नृपकिसोर मनचीता ॥
जहँ बिलोकि मृग-सावक-नयनी ❀ जनु तहँ बरिस कमल-सित-स्रेनी ॥

सीताजी चकित होकर चारों दिशाओंमें देखती थीं कि मन जिनको चाहता था वे राजकिशोर कहां गये। हिरनके बच्चे जैसे नेत्रोंवाली सीताजी जिधर देखती थीं उधर ही मानों श्वेतकमलोंकी पंक्ति बरसती थी।

लता ओट तब सखिन लखाये ❀ स्यामल गौर किसोर सुहाये ॥
देखि रूप लोचन ललचाने ❀ हरषे जनु निजनिधि पहिचाने ॥

तब सखियोंने सुन्दर सांवले और गोरे किशोरोंको लताकी आड़में दिखलाया। रूप देखकर नेत्र ललचाने लगे, मानों वे अपना खजाना पहिचानकर प्रसन्न हुए हों।

थके नयन रघुपति-छबि देखे ❀ पलकन्हिहू परिहरी निमेखे ॥
अधिक सनेह देह भइ भोरी ❀ सरदससिहि जनु चितव चकोरी ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर नेत्र थक गये और पलकोंने भी झँपना छोड़ दिया। अत्यंत स्नेहके कारण उन्हें देहकी सुध न रही और वे श्रीरामचन्द्रजीको उसी भांति देखने लगीं, जैसे चकोरी शरद ऋतुके पूर्णचन्द्रमाको देखती हो।

लोचन मग रामहिं उर आनी ❀ दीन्हें पलककपाट सयानी ॥
जब सिय सखिन्ह प्रेमबस जानी ❀ कहि न सकहिं कछु मन सकुचानी ॥

नेत्रोंके द्वारसे श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें लाकर चतुर सीताजीने पलकरूपी कपाट बन्द कर लिये। जब सखियोंने सीताजीको प्रेमके वशमें जाना तब उन्हें मनमें संकोच हुआ, पर वे कुछ न कह सकती थीं।

दो०—लताभवनतें प्रगट भये ❀ तेहि अवसर दोउ भाइ ॥
निकसे जनु जुग बिमलबिधु ❀ जलदपटल बिलगाइ ॥ २६५ ॥

उसी समय दोनों भाई लता-भवनसे बाहर हुए, मानों दो निर्मल चन्द्र मेघोंके मण्डलको फाड़कर प्रकट हुए हों।

सोभासींव सुभग दोउ बीरा ❀ नील-पीत-जलजात-सरीरा ॥
मोरपंख सिर सोहत नीके ❀ गुच्छे बिच बिच कुसुमकली के ॥

दोनों वीर सुन्दर और शोभाकी सीमा हैं। इनके शरीर नीलकमल और पीतकमलकी चमक जैसे हैं शिरपर सुन्दर मोरपंख शोभित हैं, जिनके बीच-बीचमें फूलोंकी कलियोंके गुच्छे गुंथे हुए हैं।

भाल तिलक स्रमबिंदु सुहाये ❀ स्रवन सुभग भूषन छबि छाये ॥
बिकट भृकुटि कच घूघरवारे ❀ नवसरोज लोचन रतनारे ॥

मस्तकपर तिलक और पसीनेकी बूंदे शोभित हैं। कानोंमें सुन्दर भूषणोंकी शोभा छायी हुई है। टेढ़ी भौंहें, घूंघरवाले बाल, नये कमल जैसे लाल नेत्र,

चारु चिबुक नासिका कपोला ❀ हासबिलास लेत मन मोला ॥
मुखछबि कहि न जाइ मोहि पाहीं ❀ जो बिलोकि बहु काम लजाहीं ॥

सुन्दर ठोड़ी, नाक, गाल और मुस्कुराहट—सब मनको मोल लिये लेते हैं। जिसे देखकर बहुतसे कामदेव लज्जित होते हैं उस मुखकी शोभा मुझसे नहीं कही जा सकती।

उर मनिमाल कंबुकल ग्रीवां ❀ काम-कलभ-कर भुज बलसीवां ॥
सुमनसमेत बामकर दोना ❀ सांवर कुंअर सखी सुठि लोना ॥

उनके हृदयमें मणियोंकी माला है, शंखसा सुन्दर गला है, बलकी सीमा भुजाएँ सुन्दर हाथीके बच्चेकी सूँड़के समान हैं। बायें हाथमें पुष्पोंसमेत दोना है। हे सखी, साँवले राजकुमार बड़े सलोने हैं।

दो०—केहरिकटि पट पीत धर ❀ सुखमा - सील - निधान।
देखि भानु-कुल-भूषनहि ❀ बिसरा सखिन्ह अपान ॥२६६॥

उनकी सिंह जैसी कमर है और उसमें वे पीतांबर धारण किये हुए हैं। वे सुन्दरता और शीलके स्थान हैं। सूर्यवंशके भूपण श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सखियोंको अपनी सुधबुध भूल गयी।

धरि धीरज एक आलि सयानी ❀ सीता सन बोली गहि पानी ॥
बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू ❀ भूपकिसोर देखि किन लेहू ॥

धीरज रखकर एक चतुर सखी हाथ पकड़कर सीताजीसे बोली कि पार्वतीजीका ध्यान फिर करना। राजकुमारोंको क्यों नहीं देख लेती!

सकुचि सीय तब नयन उघारे ❀ सनमुख दोउ रघुसिंह निहारे ॥
नखसिख देखि राम के सोभा ❀ सुमिरि पितापन मन अति छोभा ॥

तब संकोच करके सीताजीने नेत्र खोले और रघुवंशमें सिंहके समान श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी, दोनोंको सामने ही देखा। श्रीरामचन्द्रजीकी नखशिख सुन्दरता देखकर और अपने पिता राजा जनकके प्रणका स्मरण कर सीताजीका मन अत्यंत क्षोभित हुआ।

परबस सखिन्ह लखी जब सीता ❀ भये गहरु सब कहहिं सभीता ॥
पुनि आउब एहि बिरियां काली ❀ अस कहि मन बिहंसी एक आली ॥

सखियोंने जब सीताजीको पराये वशमें देखा तब सब डरकर कहने लगीं कि देर हुई। कल इसी समय फिर आयेंगी। ऐसा कहकर एक सखी मनमें हँसी।

गूढ़ गिरा सुनि सिय सकुचानी ❀ भयेउ बिलंब मातुभय मानी ॥
धरि बड़ि धीर राम उर आने ❀ फिरी अपनपौ पितुबस जाने ॥

इस गूढ़ वाणीको सुनकर सीताजीको संकोच हुआ। देर हो गयी थी, इससे उन्हें माताका भी डर लगा। सीताजीने बड़ा धीरज रखकर श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें लाकर रख लिया और अपना मान पिताजीके हाथमें जानकर वहांसे लौट पड़ीं।

दो०—देखन मिस मृग बिहँग तरु ❀ फिरइ बहोरि बहोरि।
निरखि निरखि रघुबीरछबि ❀ बाढ़इ प्रीति न थोरि ॥२६७॥

हिरण, पक्षी और वृक्षोंको देखनेके बहाने सीताजी बारबार लौटती हैं। श्रीरामचन्द्रजीकी शोभा देख देखकर उनकी प्रीति बहुत अधिक बढ़ती जाती है।

जानि कठिन सिवचाप बिसूरति ❀ चली राखि उर स्यामलमूरति ॥
प्रभु जब जात जानकी जानी ❀ सुख सनेह सोभा गुन खानी ॥

शिवजीके धनुषको कठिन जानकर वे दुःखपूर्वक सोचने लगीं और वह सांवली मूर्ति हृदयमें रखकर चल दीं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने जब सुख, स्नेह और शोभा तथा गुणोंकी खान सीताजीको जाते हुए समझा,-

परम-प्रेम-मय मृदुमसि कीन्ही ❀ चारु चित्त भीती लिखि लीन्ही ॥
गई भवानी भवन बहोरी ❀ बंदि चरन बोली करजोरी ॥

तब उन्होंने परम प्रेमरूपी कोमल स्याहीसे अपने हृदय-पटलपर उनका चित्र लिख लिया। सीताजी पार्वतीजीके मन्दिरमें फिर गयीं और चरणोंकी वंदना कर हाथ जोड़कर बोलीं।

जय जय गिरि-बर-राज-किसोरी ❀ जय महेस-मुख-चंद-चकोरी ॥
जय गज-बदन-षड़ानन माता ❀ जगतजननि दामिनि-दुति-गाता ॥

हे श्रेष्ठ पर्वतोंके राजा हिमाचलकी पुत्री, तुम्हारी जय हो, तुम्हारी जय हो, हे शिवजीके चन्द्रमुखकी चकोरी, तुम्हारी जय हो! हे गजानन, और छः मुखवाले स्वर्गीय कार्तिककी माता, तुम्हारी जय हो! तुम संसारकी माता हो और तुम्हारे शरीरकी दमक बिजली जैसी है।

नहिं तव आदि मध्य अवसाना ❀ अमितप्रभाव बेद नहिं जाना ॥
भव-भव-बिभव-पराभव-कारिनि ❀ बिस्वबिमोहनि स्व-बस-बिहारिनि ॥

तुम्हारा न आरंभ है,न मध्य है और न अन्त है। तुम्हारा असीम प्रभाव वेद भी नहीं जानते। तुम संसार-की उत्पत्ति, पालन और संहार करनेवाली, संसारको मोहनेवाली और अपनी इच्छासे विहार करनेवाली हो।

दो०—पतिदेवता सुतीय महुँ ❀ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि ❀ सहस सारदा सेख ॥२६८॥

हे माता, पतिव्रता स्त्रियोंमें तुम्हारी गिनती पहिले है। तुम्हारी असीम महिमा है, जिसे हजार सरस्वती और शेषनाग भी नहीं कह सकते।

सेवत तोहि सुलभ फल चारी ❀ बरदायिनि त्रिपुरारि पियारी॥
देवि पूजि पदकमल तुम्हारे ❀ सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥

तुम्हारी सेवा करनेसे चारों फल सुलभ हो जाते हैं। तुम वर देनेवाली और त्रिपुरदैत्यके शत्रु शिवजीकी प्यारी हो। हे देवि, तुम्हारे चरणकमल पूजकर सुर, नर और मुनि—सब सुखी होते हैं।

मोर मनोरथ जानहु नीके ❀ बसहु सदा उरपुर सबही के॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेही ❀ अस कहि चरन गहे बैदेही॥

तुम मेरे मनोरथको भलीभांति जानती हो; क्योंकि सभीके हृदयरूपी नगरमें तुम सदा बसती हो, इसीसे उसे प्रकट नहीं किया। ऐसा कहकर सीताजीने (गौरीजीके) चरण पकड़ लिये।

बिनय-प्रेम-बस भई भवानी ❀ खसी माल मूरति मुसुकानी॥
सादर सियप्रसाद सिर धरेऊ ❀ बोली गौरि हरषु उर भरेऊ॥

भवानीजी विनती और प्रेमके वशमें हो गयीं, जिससे माला खिसक पड़ी और मूर्ति मुस्कुराने लगी। सीताजीने वह प्रसाद (माला) आदरपूर्वक शिरपर रख लिया और गौरीजी हृदयमें आनन्द भरे हुए बोलीं।

सुनु सिय सत्य असीस हमारी ❀ पूजिहि मनकामना तुम्हारी॥
नारदबचन सदा सुचि साचा ❀ सो बर मिलिहि जाहि मन राचा॥

हे सीताजी, हमारी सत्य आशिष सुनो। तुम्हारे मनकी इच्छा पूर्ण होगी। नारदजीका वचन सदा सत्य और पवित्र होता है। जिसमें मन रङ्ग गया है वही वर मिलेगा।

छं०—मन जाहि राचेउ मिलिहि सो बर सहज सुंदर साँवरो।
करुनानिधान सुजान सीलसनेह जानत रावरो॥
एहि भांति गौरि असीस सुनि सियसहित हिय हरषित अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदितमन मंदिर चली॥

जिसमें मन रङ्ग गया है वही स्वभावसे ही सुन्दर साँवला वर मिलेगा। दयानिधान और सुजान श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा शील और प्रेम जानते हैं। पार्वतीजीकी इस प्रकारकी आशिष सुनकर सखियोंको सीताजीसमेत हृदयमें आनन्द हुआ। तुलसीदासजी कहते हैं कि बार-बार भवानीकी पूजा कर वे सब प्रसन्न मनसे राजभवनके लिये चल दीं।

सो०—जानि गौरि अनुकूल ❀ सिय - हिय-हरष न जात कहि।
मंजुल - मंगल - मूल ❀ बाम अंग फरकन लगे॥ २६९॥

पार्वतीको अपने अनुकूल जानकर सीताजीके हृदयमें जो प्रसन्नता हुई, वह कही नहीं जाती। शुभसूचक उनके सुन्दर बाँये अंग फड़कने लगे।

हृदय सराहत सीय लोनाई ❀ गुरुसमीप गवने दोउ भाई॥
राम कहा सब कौसिक पाहीं ❀ सरल सुभाव छुआ छल नाहीं॥

सीताजीका सलोनापन हृदयमें सराहते हुए दोनों भाई गुरुजीके पास गये। श्रीरामचन्द्रजीने सीधे स्वभावसे सब हाल विश्वामित्रजीसे कह दिया, छल नहीं किया।

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही ❀ पुनि असीस दुहु भाइन्ह दीन्ही॥
सुफल मनोरथ होहिं तुम्हारे ❀ राम लषन सुनि भये सुखारे॥

फूल पाकर मुनिने पूजा की और फिर दोनों भाइयोंको आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे मनोरथ पूरे हों यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सुखी हुए।

करि भोजन मुनिबर बिग्यानी ❀ लगे कहन कछु कथा पुरानी॥
बिगतदिवस गुरुआयसु पाई ❀ संध्या करन चले दोउ भाई॥

महाज्ञानी मुनिवर भोजन कर कुछ पुरानी कथाएं कहने लगे। दिन बीत जानेपर गुरुकी आज्ञा पाकर दोनों भाई संध्या करनेके लिये चले।

प्राचीदिसि ससि उयेउ सुहावा ❀ सय-मुख-सरिस देखि सुख पावा॥
बहुरि बिचार कीन्ह मन माहीं ❀ सीय-बदन-सम हिमकर नाहीं॥

उसी समय पूर्व दिशामें सुन्दर चन्द्रमा उदय हुआ। उसे सीताजीके मुखके समान देखकर श्रीरामचन्द्रजीने सुख पाया। फिर मनमें विचार किया कि यह चन्द्रमा सीताजीके मुखके समान नहीं है।

दो०—जनम सिंधु पुनि बंधु बिष ❀ दिन मलीन सकलंकु।
सिय-मुख-समता पाव किमि ❀ चंद बापुरो रंकु॥ २७०॥

सीताजीके मुखकी समता बेचारा दीन चंद्रमा कैसे पा सकता है जिसका जन्म समुद्रसे है, फिर जिसका भाई विष है, जो दिनमें मलिन रहता है, और जो कलङ्की है !

घटइ बढ़इ बिरहिनि-दुख दाई * ग्रसइ राहु निज संधिहि पाई ॥
कोक-सोक-प्रद पंकजद्रोही * अवगुन बहुत चंद्रमा तोही ॥

जो घटता और बढ़ता है, जो वियोगिनियोंको दुःख देनेवाला है, राहु अपना अवसर पाकर जिसे ग्रस लेता है, चकवा-चकवीको जो शोकित करनेवाला और कमलोंका वैरी है। हे चन्द्र, तुझमें बहुत अवगुण हैं।

बैदेही-मुख-पटतर दीन्हे * होइ दोष बड़ अनुचित कीन्हे ॥
सिय-मुख-छबि बिधुब्याज बखानी * गुरु पहिं चले निसा बड़ि जानी ॥

सीताजीके मुखकी समता देनेसे बड़ा दोष होगा, अनुचित काम होगा। चन्द्रमाके बहाने सीताजीके मुखकी छविका वर्णन कर और बहुत रात हुई जानकर श्रीरामचन्द्रजी गुरुके पास चले।

करि मुनि-चरन-सरोज प्रनामा * आयसु पाइ कीन्ह बिस्रामा ॥
बिगतनिसा रघुनायक जागे * बंधु बिलोकि कहन अस लागे ॥

मुनिके चरणकमलोंको प्रणामकर और आज्ञा पाकर उन्होंने विश्राम किया। रात बीतनेपर श्रीरामचन्द्रजी जगे और भाईको देखकर ऐसा कहने लगे।

उयेउ अरुन अवलोकहु ताता * पंकज-लोक-कोक-सुख-दाता ॥
बोले लषन जोरि जुग पानी * प्रभु-प्रभाव-सूचक मृदुबानी ॥

हे तात, देखो। कमल, संसार और चकवा-चकवीको सुख देनेवाला सूर्य उदय हुआ। श्रीलक्ष्मणजी दोनों हाथ जोड़कर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव सूचित करनेवाले मीठे वचन बोले।

दो०—अरुनउदय सकुंचे कुमुद * उडु-गन-जोति मलीन।
तिमि तुम्हार आगमन सुनि * भये नृपति बलहीन ॥२७१॥

सूर्य उदय हुआ, जिससे कुमुद सकुचा गये और तारागणोंका तेज मलिन पड़ गया; इसी भांति आपका आना सुनकर राजा लोग बलहीन हो गये।

नृप सब नखत करहिं उँजियारी * टारि न सकहिं चापतम भारी ॥
कमल कोक मधुकर खगनाना * हरषे सकल निसा अवसाना ॥

सब राजा तारागणोंके समान प्रकाश करेंगे, परन्तु धनुषके समान भारी अंधकारको टाल न सकेंगे। रात्रिके अन्त होनेपर कमल, चकवा-चकवी, भौंरे, और अनेक प्रकारके पक्षी—सब प्रसन्न हुए हैं।

ऐसेहि प्रभु सब भगत तुम्हारे ❀ होइहहिं टूटे धनुष सुखारे ॥
उयेउ भानु बिनु स्रम तम नासा ❀ दुरे नखत जग तेज प्रकासा ॥

इसी भांति, हे स्वामी, आपके सब भक्त धनुष टूटनेपर सुखी होंगे। सूर्य उदय हुआ, जिससे परिश्रम विनाही अन्धकार नष्ट हो गया, तारागण छिप गये और संसारमें प्रकाश छा गया।

रबि निज-उदय-ब्याज रघुराया ❀ प्रभुप्रताप सब नृपन्ह दिखाया ॥
तव भुज-बल-महिमा उदघाटी ❀ प्रगटी धनु बिघटनपरिपाटी ॥

हे रघुराज, सूर्यने अपने उदयके बहाने सब राजाओंको आपका प्रताप दिखलाया है। आपकी भुजाओंके बलकी महिमाको प्रकट करनेके लिये ही यह धनुष तोड़नेकी रीति प्रकट हुई है।

बंधुबचन सुनि प्रभु मुसुकाने ❀ होइ सुचि सहज पुनीत नहाने ॥
नित्यक्रिया करि गुरु पहिं आये ❀ चरनसरोज सुभग सिर नाये ॥

भाई लक्ष्मणजीकी बात सुनकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराये और शौच जाकर स्वभावानुसार पवित्र स्नान किया। नित्यक्रिया करके वे गुरुजीके पास आये और सुन्दर चरणकमलोंको शिर नवाया।

सतानंद तब जनक बोलाये ❀ कौसिक मुनि पहिं तुरत पठाये ॥
जनकबिनय तिन्ह आनि सुनाई ❀ हरषे बोलि लिये दोउ भाई ॥

तब राजा जनकने सतानन्दको बुलाया और उन्हें विश्वामित्र मुनिके पास शीघ्र भेजा। उन्होंने आकर राजा जनककी विनती सुनायी, जिसे सुनकर मुनि प्रसन्न हुए और दोनों भाइयोंको बुला लिया।

दो०—सतानंदपद बंदि प्रभु ❀ बैठे गुरु पहिं जाइ।
चलहु तात मुनि कहेउ तब ❀ पठएउ जनक बोलाइ ॥२७२॥

सतानंदके चरणोंकी वंदनाकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी गुरुके पास जाकर बैठे। तब मुनिने कहा कि हे तात, चलो, राजा जनकने बुला भेजा है।

सीयस्वयंबर देखिय जाई ❀ ईस काहि धौं देइ बड़ाई ॥
लषन कहा जसभाजन सोई ❀ नाथ कृपा तव जा पर होई ॥

जाकर सीताजीका स्वयंवर देखना चाहिये। देखें, ईश्वर किसे बड़ाई दे। लक्ष्मणजीने कहा, हे नाथ, जिसपर आपकी कृपा होगी वही यशपात्र है।

हरषे मुनि सब सुनि बरबानी ❀ दीन्ह असीस सबहि सुखमानी ॥
पुनि मुनि बृंद समेत कृपाला ❀ देखन चले धनुष - मख-साला ॥

यह श्रेष्ठ वचन सुनकर सब मुनि प्रसन्न हुए और सबने सुखी होकर आशीर्वाद दिया। फिर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी मुनियोंके समूहसमेत धनुष-यज्ञशाला देखने चले।

रंगभूमि आये दोउ भाई ❀ अस सुधि सब पुरबासिन्ह पाई ॥
चले सकल गृहकाज बिसारी ❀ बाल जुबान जरठ नर नारी ॥

जब सब नगरवासियोंने यह संवाद पाया कि दोनों भाई रंगभूमिमें आये, तब बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष—सब अपने-अपने घरका काम छोड़कर चल दिये।

देखी जनक भीर भइ भारी ❀ सुचि सेवक सब लिये हंकारी ॥
तुरत सकल लोगन्ह पहिं जाहू ❀ आसन उचित देहु सब काहू ॥

राजा जनकने जब यह देखा कि भारी भीड़ हो गयी है तब सब पवित्र सेवक बुला लिये, और कहा कि तुरन्त सब लोगोंके पास जाओ और सब किसीको उचित आसन दो।

दो०—कहि मृदु बचन बिनीत तिन्ह ❀ बैठारे नर नारि।
उत्तम मध्यम नीच लघु ❀ निज निज थल अनुहारि ॥२७३॥

उन सेवकोंने मीठे और नम्र वचन कहकर उत्तम, मध्यम, नीच और लघु, सभी श्रेणीके पुरुषों और स्त्रियोंको अपने-अपने स्थानके अनुसार बिठलाया।

राजकुंवर तेहि अवसर आये ❀ मनहुं मनोहरता तन छाये ॥
गुनसागर नागर बरबीरा ❀ सुंदर स्यामल गौर सरीरा ॥

उसी समय राजकुमार आये। उनके शरीर मानों सुन्दरतासे छाये हुए थे। वे गुणोंके समुद्र, चतुर और श्रेष्ठ थे और उनका सुन्दर शरीर सांवला और गोरा था।

राज समाज बिराजत रूरे ❀ उडुगन महं जनु जुग बिधु पूरे ॥
जिन्ह कै रही भावना जैसी ❀ प्रभुमूरति तिन्ह देखी तैसी ॥

दोनों सुन्दर भाई राजाओंके समाजमें विराज रहे हैं, मानों ताराओंके बीचमें दो पूर्ण चन्द्र हों। जिनकी जैसी भावना थी उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीकी मूर्तिको वैसा ही देखा।

देखहिं भूप महा रनधीरा ❀ मनहु बीररस धरे सरीरा ॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी ❀ मनहुं भयानक मूरति भारी ॥

राजा उन्हें महारणधीर-रूपमें देखते थे, मानों वीररस शरीर रखे हुए हो। दुष्ट राजा लोग प्रभुको देखकर डर गये, मानों उनकी भारी भयानक मूर्ति है।

रहे असुर छल छोनिप बेषा ❀ तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देखा ॥
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई ❀ नरभूषन लोचन - सुख - दाई ॥

जो राक्षस छलसे राजाके वेशमें थे उन्होंने प्रभुको प्रत्यक्ष कालके समान देखा। नगरवासियोंने दोनों भाइयोंके नेत्रोंको सुखदेनेवाले और मनुष्योंमें भूषणरूप देखा।

दो०—नारि बिलोकहिं हरषि हिय ❀ निज - निज - रुचि अनुरूप ॥
जनु सोहत शृंगार धरि ❀ मूरति परमअनूप ॥२७४॥

स्त्रियां उन्हें हृदयमें प्रसन्न होकर अपनी-अपनी रुचिके अनुसार देखती थीं, मानों शृङ्गाररस अत्यन्त अनुपम शरीर रखकर सोहता हो।

बिदुषन प्रभु बिराटमय दीसा ❀ बहु-मुख-कर - पग - लोचन-सीसा ॥
जनकजाति अवलोकहिं कैसे ❀ सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे ॥

विद्वानोंको प्रभु विराटरूपमें दीख पड़े, जिनके बहुतसे मुख, हाथ, पैर, नेत्र और शिर थे। राजा जनककी जातिके लोग उन्हें कैसे देखते थे जैसे वे सज्जन, सगे और प्यारे लगते हों।

सहित बिदेह बिलोकहिं रानी ❀ सिसुसम प्रीति न जाइ बखानी ॥
जोगिन्ह परम-तत्त्वमय भासा ❀ सांत - सुद्ध-सम सहज प्रकासा ॥

राजा जनक-सहित रानियां उन्हें बालकके समान देख रही थीं। उन सबकी प्रीतिका वर्णन नहीं किया जा सकता। योगियोंको वे परम तत्वमय शुद्ध शान्तरसके समान स्वभावतः प्रकाशरूप प्रतीत हुए।

हरिभगतन देखे दोउ भ्राता ❀ इष्टदेव इव सब सुखदाता ॥
रामहिं चितव भाव जेहि सीया ❀ सो सनेह सुख नहिं कथनीया ॥

भगवान्के भक्तोंने दोनों भाइयोंको सब सुख देनेवाले इष्टदेवके समान देखा। जिस भावसे सीताजी श्रीरामचन्द्रजीकी ओर निगाह डालती थीं वह स्नेह और सुख कहने योग्य नहीं है।

उर अनुभवति न कहि सक सोऊ ❀ कवन प्रकार कहइ कबि कोऊ ॥
जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ ❀ तेहि तस देखेउ कोसलराऊ ॥

हृदय उसे अनुभव करता है, पर वह भी कह नहीं सकता। कोई कवि उसे किस प्रकार कहे? जिसका जिस प्रकारसे जैसा भाव था उसने कोशलराज श्रीरामचन्द्रजीको वैसा ही देखा।

दो०—राजत राजसमाज महं ❀ कोसल - राज - किसोर।
सुंदर-स्यामल - गौर-तनु ❀ बिस्व - बिलोचन-चोर ॥२७५॥

राजाओंके उस समाजमें कोशल देशके राजा दशरथके कुमार विराज रहे थे। सुन्दर साँवले और गोरे उनके शरीर थे और वे संसारके नेत्रोंको भी चुरा लेनेवाले थे।

सहज मनोहर मूरति दोऊ ❀ कोटि-काम-उपमा लघु सोऊ ॥
सरद-चंद-निंदक मुख नीके ❀ नीरजनयन भावते जी के ॥

दोनों मूर्तियां स्वभावसे ही मनोहर थीं। करोड़ों कामदेवोंकी उपमा भी थोड़ी है। सुन्दर मुख शरद ऋतुके चन्द्रमाकी निन्दा करनेवाले थे और कमल जैसे नेत्र जीको प्यारे लगनेवाले थे।

चितवनि चारु मार-मद-हरनी ❀ भावत हृदय जात नहिं बरनी ॥
कलकपोल स्रुतिकुंडल लोला ❀ चिबुक अधर सुंदर मृदु बोला ॥

कामदेवके मदको हरण करनेवाली सुन्दर चितवन मनको भाती थी। उसका वर्णन नहीं किया जाता। उनके सुन्दर गाल, कानोंमें चलायमान कुण्डल, सुन्दर ठोढ़ी और ओंठ तथा कोमल बोली थी।

कुमुद-बंधु-कर-निंदक हांसा ❀ भृकुटी बिकट मनोहर नासा ॥
भाल बिसाल तिलक झलकाहीं ❀ कच बिलोकि अलिअवलि-लजाहीं ॥

कुमुदिनीके भाई चन्द्रमाकी किरणोंको निन्दा करनेवाली उनकी हँसी थी, भौंहें टेढ़ी थीं और सुन्दर नाक थी। विशाल मस्तकपर तिलक झलक रहे थे और बाल देखकर भौंरोंकी पंक्तियाँ लजाती थीं।

पीत चौतनी सिरन्ह सुहाई ❀ कुसुमकली बिच बीच बनाई ॥
रेखा रुचिर कंबु कलग्रीवाँ ❀ जनु त्रिभुवनसोभा की सीवाँ ॥

शिरोंपर पीली चौतनी टोपियां शोभित थीं, जिनके बीच-बीचमें फूलोंकी कलियां सजायी गयी थीं। सुन्दर शंखके समान गले, जिनमें सुन्दर रेखाएँ पड़ी हुई थीं जो मानों तीनों भुवनोंकी सुन्दरताकी सीमा थीं।

दो०—कुंजर-मनि-कंठाकलित ❀ उरन्ह तुलसिकामाल।
बृषभकंध केहरिठवनि ❀ बलनिधि बाहु बिसाल ॥२७६॥

गजमुक्ताओंके कंठे, हृदयमें तुलसीकी मालाएं, बैल जैसे कंधे, सिंह जैसी चाल और बलके भंडार जैसी विशाल भुजाएं थीं।

कटि तूनीर पीत पट बाँधे ❀ कर सर धनुष बाम बर काँधे ॥
पीत-जग्य-उपबीत सोहाये ❀ नखसिख मंजु महा छबि छाये ॥

उनकी कमरमें तरकस बँधा हुआ था, वे पीतांबर पहिने हुए थे, उनके हाथमें बाण और श्रेष्ठ बायें कंधेपर धनुष था। पीले यज्ञोपवीत शोभित हो रहे थे और नखशिख अत्यन्त सुन्दर शोभा छायी हुई थी।

देखि लोग सब भये सुखारे ❀ एकटक लोचन टरत न टारे ॥
हरषे जनक देखि दोउ भाई ❀ मुनि-पद-कमल गहे तब जाई ॥

उन्हें देखकर सब लोग सुखी हुए, नेत्र एकटक हो गये, हटानेपर भी वे न हटते थे। राजा जनक दोनों भाइयोंको देखकर प्रसन्न हुए और फिर जाकर उन्होंने मुनिके चरणकमलोंको पकड़ लिया।

करि बिनती निजकथा सुनाई ❀ रंगअवनि सब मुनिहि देखाई ॥
जहँ जहँ जाहिं कुअरबर दोऊ ❀ तहँ तहँ चकित चितव सब कोऊ ॥

राजा जनकने विनती करके अपनी कथा सुनायी और मुनिको सारी रङ्गभूमि दिखलायी। जहां-जहां दोनों सुन्दर कुमार जाते थे उसी ओर सब कोई चकित होकर देखते थे।

निज निज रुख रामहिं सब देखा ❀ कोउ न जान कछु मरम बिसेखा ॥
भलि रचना मुनि नृप सन कहेऊ ❀ राजा मुदित महासुख लहेऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजीको सबने अपनी-अपनी भावनाके अनुसार देखा। इसका विशेष मर्म कोई कुछ न जानता था। राजासे मुनिने कहा कि रचना अच्छी है। राजाने इससे प्रसन्न होकर बड़ा सुख पाया।

दो०—सब मंचन्ह तें मंच एक ❀ सुंदर बिसद बिसाल।
मुनिसमेत दोउ बंधु तहं ❀ बैठारे महिपाल ॥२७७॥

एक मंच सब मंचोंसे अधिक सुन्दर, उज्ज्वल और विशाल था। वहीं राजाने मुनिसमेत दोनों भाइयोंको बिठलाया।

प्रभुहि देखि सब नृप हिय हारे ❀ जनु राकेस उदय भये तारे ॥
अस प्रतीति सब के मन माहीं ❀ राम चाप तोरब सक नाहीं ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सब राजा मनमें हार गये; जैसे पूर्ण चन्द्रमाके उदय होनेपर तारागण हो जाते हैं (फीके पड़ जाते हैं)। सबके मनमें यह विश्वास हो गया कि श्रीरामचन्द्रजी धनुष तोड़ेंगे, इसमें संदेह नहीं।

बिनु भंजेहु भवधनुष बिसाला ❀ मेलिहि सीय रामउर माला ॥
अस बिचारि गवनेहु घर भाई ❀ जस प्रताप बल तेज गवांई ॥

(परन्तु) शिवजीका बड़ा भारी धनुष तोड़े विना भी सीताजी श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें वरमाला डाल देंगी। हे भाई, ऐसा विचारकर और अपयश, प्रताप, बल और तेज न पाकर अपने घरको विदा हो।

बिहंसे अपर भूप सुनि बानी ❀ जे अबिबेक अंध अभिमानी ॥
तोरेहु धनुष ब्याहु अवगाहा ❀ बिनु तोरे को कुअरि बिआहा ॥

दूसरे राजा लोग, जो अज्ञानी, अन्धे और घमण्डी थे, यह बात सुनकर हँसे और कहा कि धनुष तोड़ लेनेपर भी विवाह कठिन है; फिर बिना तोड़े राजकुमारीको कौन ब्याह पायेगा ?

एक बार कालहु किन होऊ ❀ सियहित समर जितब हम सोऊ ॥
यह सुनि अपर भूप मुसुकाने ❀ धरमसील हरिभगत सयाने ॥

एक बार काल भी क्यों न होवे, सीताके लिये संग्राममें हम उसे भी जीतेंगे। यह सुनकर दूसरे राजा लोग मुस्कुराये, जो चतुर, भगवान्‌के भक्त और धर्मात्मा थे।

सो०—सीय बिआहब राम ❀ गरबु दूरि करि नृपन्ह को।
जीति को सक संग्राम ❀ दसरथ के रनबांकुरे ॥ २७८ ॥

राजाओंका गर्व दूर कर श्रीरामचन्द्रजी सीताजीका पाणिग्रहण करेंगे। वे राजा दशरथके रणबांकुरे पुत्र हैं। उन्हें संग्राममें कौन जीत सकता है ?

बृथा मरहु जनि गाल बजाई ❀ मनमोदकन्हि कि भूख बुताई ॥
सिख हमार सुनि परम पुनीता ❀ जगदंबा जानहु जिय सीता ॥

व्यर्थ गाल बजाकर मत मरो। मनमोदकोंसे क्या भूख जाती है ? हमारी परम पवित्र सीख सुनक हृदयमें सीताको संसारकी माता जानो।

जगतपिता रघुपतिहि बिचारी ❀ भरि लोचन छबि लेहु निहारी ॥
सुंदर सुखद सकल-गुन-रासी ❀ ए दोउ बंधु संभु-उर-बासी ॥

श्रीरामचन्द्रजीको संसारका पिता विचारकर नेत्र भरकर छवि निहार लो। ये दानों भाई, सुन्दर, सुख देनेवाले, सब गुणोंकी राशि और शिवजीके हृदयमें बसनेवाले हैं।

सुधासमुद्र समीप बिहाई ❀ मृगजल निरखि मरहु कत धाई ॥
करहु जाइ जा कहु जोइ भावा ❀ हम तौ आजु जनमफल पावा ॥

अमृतका समुद्र पास छोड़ मृगतृष्णाके जलको देखकर दौड़-दौड़कर क्यों मरते हो ? जिसको जो भावे जाकर करो। हमने तो आज जीवनका फल पा लिया।

अस कहि भले भूप अनुरागे ❀ रूप अनूप बिलोकन लागे ॥
देखहिं सुर नभ चढ़े बिमाना ❀ बरषहिं सुमन करहिं कल गाना ॥

ऐसा कहकर अच्छे राजा लोग प्रेममें मग्न हो गये और श्रीरामचन्द्रजीका अनुपम रूप देखने लगे। आकाशमें विमानोंपर चढ़े हुए देवता देख रहे थे। वे फूल बरसाते और सुन्दर गान करते थे।

दो०—जानि सुअवसर सीय तब ❀ पठई जनक बोलाइ ।
चतुर सखी सुंदर सकल ❀ सादर चलीं लेवाइ ॥ २७९ ॥

तब अच्छा अवसर जानकर राजा जनकने सीताजीको बुला भेजा। सब सुन्दर और चतुर सखियां उन्हें आदरसहित लिवा चलीं।

सियसोभा नहिं जाइ बखानी ❀ जगदंबिका रूप - गुन - खानी ॥
उपमा सकल मोहि लघु लागी ❀ प्राकृत - नारि - अंग - अनुरागी ॥

सीताजीकी शोभा वर्णन नहीं की जाती। (वे) संसारकी माता रूप और गुणोंकी खान हैं। मुझे सारी उपमाएं हलकी प्रतीत हुईं; क्योंकि संसारकी साधारण स्त्रियोंके अङ्गोंके वर्णनमें वे आ चुकी हैं।

सीय बरनि तेहि उपमा देई ❀ कुकबि कहाइ अजस को लेई ॥
जौं पटतरिय तीय महँ सीया ❀ जग अस जुबति कहां कमनीया ॥

सीताजीका वर्णन कर और वही उपमाएँ देकर कौन कुकवि कहलावे और अपयश लेवे? यदि सीताजीको स्त्रियोंमेंसे किसीकी उपमा दी जाय तो ऐसी सुन्दर स्त्री संसारमें कहां है?

गिरा मुखर तनु अरध भवानी ❀ रति अति दुखित अतनु पति जानी ॥
बिष बारुनी बंधु प्रिय जेही ❀ कहिय रमासम किमि बैदेही ॥

सरस्वती वाचाल हैं, भवानीका शरीर आधा है, अपने पतिको शरीररहित जानकर रति अत्यन्त दुःखित है। सीताजीको लक्ष्मीके समान भी क्योंकर कहा जाय, जिन्हें विष और मदिरा—अपने दोनों भाई प्यारे हैं?

जौं छवि - सुधा - पयो - निधि होई ❀ परम - रूप - मय कच्छप सोई ॥
सोभा रजु मंदरु सिंगारू ❀ मथइ पानिपंकज निज मारू ॥

यदि छविके अमृतका समुद्र हो, वही अत्यन्त रूपवान कच्छप हो, शोभाकी रस्सी हो, शृंगार-रसका मंदराचल पर्वत हो और कामदेव अपने कमल जैसे हाथोंसे मन्थन करे।

दो०—एहि बिधि उपजइ लच्छि जब ❀ सुन्दरता - सुख - मूल ।
तदपि सकोचसमेत कबि ❀ कहहिं सीय सम तूल ॥२८०॥

तो इस प्रकार जब सुन्दरता और सुखकी मूल लक्ष्मी उत्पन्न हो, तब भी कवि सीताजीको उसके समान संकोच करते हुए कह सकते हैं।

चलीं संग लइ सखीं सयानी ❀ गावति गीत मनोहर बानी ॥
सोह नवलतनु सुंदर सारी ❀ जगत जननि अतुलित छबि भारी ॥

चतुर सखियां मनोहर वाणीसे गीत गाती हुई सीताजीको संग लेकर चलीं। उनके नवल (युवा) शरीर-पर सुन्दर साड़ी शोभित थी और संसारकी माता सीताजीकी भारी शोभा अतोल थी।

भूषन सकल सुदेस सुहाये ❀ अंग अंग रचि सखिन्ह बनाये ॥
रंगभूमि जब सिय पगु धारी ❀ देखि रूप मोहे नर नारी ॥

सब भूषण यथास्थान शोभित थे। सखियोंने उन्हें अङ्ग-अङ्गमें भलीभांति सजाया था। सीताजीने जब रंगभूमिमें पैर रखा तब रूप देखकर पुरुष और स्त्री सब मोहित हो गये।

हरषि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ❀ बरषि प्रसून अपछरा गाई ॥
पानिसरोज सोह जयमाला ❀ अवचट चितये सकल भुआला ॥

देवताओंने प्रसन्न होकर नगारे बजाये और फूल बरसाये। अप्सराएँ गाने लगीं। सीताजीके कमल जैसे हाथमें जयमाला शोभित थी। उन्होंने अचानक सब राजाओंकी ओर देखा।

सीय चकितचित रामहि चाहा ❀ भये मोहबस सब नरनाहा ॥
मुनिसमीप देखे दोउ भाई ❀ लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥

सीताजीका चित्त चकित था। वे श्रीरामचन्द्रजीको चाहती थीं। इधर सब राजा लोग मोहके वशमें हो गये। सीताजीने दोनों भाइयोंको विश्वामित्र मुनिके पास देखा। अपना खजाना पाकर नेत्र बड़ी उत्कंठासे (वहाँ) जा लगे।

दो०—गुरु-जन-लाज समाज बड़ ❀ देखि सीय सकुचानि।
लगी बिलोकन सखिन्ह तन ❀ रघुबीरहि उर आनि ॥२८१॥

उस बड़े समाजको देखकर गुरुजनोंकी लाजसे सीताजी सकुचा गयीं। वे श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें लाकर सखियोंकी ओर देखने लगीं।

रामरूप अरु सियछबि देखी ❀ नरनारिन्ह परिहरी निमेखी ॥
सोचहिं सकल कहत सकुचाहीं ❀ बिधिसन बिनय करहिं मनमाहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजीका रूप और सीताजीकी छवि देखकर पुरुषों और स्त्रियोंने अपने नेत्रोंके पलकोंका झपना छोड़ दिया। सब यह सोचते थे, पर कहते सकुचाते थे, इसीलिये मनमें ब्रह्मासे विनती कर रहे थे।

हरु बिधि बेगि जनकजड़ताई ❀ मति हमार असि देहि सुहाई ॥
बिनु बिचार पन तजि नरनाहू ❀ सीय राम कर करइ बिआहू ॥

हे ब्रह्मा, राजा जनककी मूर्खता जल्दी दूर कर और उन्हें हमारी जैसी सुन्दर बुद्धि दे कि राजा विचारे बिना ही प्रण छोड़कर सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका विवाह कर दें।

जग भल कहिहि भाव सब काहू ❀ हठ कीन्हे अंतहु उर दाहू ॥
एहि लालसा मगन सब लोगू ❀ बर सांवरो जानकी जोगू ॥

संसार भला कहेगा और सबको अच्छा लगेगा। हठ करनेसे अन्तमें भी हृदयमें जलन होगी। सब लोग इसी लालसामें मग्न थे और कहते थे कि जानकीके योग्य वर सांवला कुमार है।

तब बंदीजन जनक बुलाये ❀ बिरदावली कहत चलि आये ॥
कह नृप जाइ कहहु पन मोरा ❀ चले भाट हिय हरष न थोरा ॥

तब राजा जनकने वंदीजनोंको बुलाया जो बिरदावली कहते हुए चलकर आये। राजाने कहा कि जाकर मेरा प्रण कहो। भाट लोग चले। उनके हृदयमें बड़ा ही आनंद हुआ।

दो०—बोले वंदी बचनबर ❀ सुनहु सकल महिपाल।
पन बिदेह कर कहहिं हम ❀ भुजा उठाइ बिसाल ॥२८२॥

वंदीजन यह श्रेष्ठ वचन बोले कि हे मस्त राजाओ, सुनो, हम अपनी भुजाएं ऊंची उठाकर राजा जनकका प्रण कहते हैं।

नृप-भुज-बल-बिधु सिवधनु राहू ❀ गरुअ कठोर बिदित सब काहू ॥
रावन बान महाभट भारे ❀ देखि सरासन गवहिं सिधारे ॥

राजाओंकी भुजाओंका बल चन्द्रमा है और शिवजीका धनुष राहु है। यह भारी और कठोर है, यह सब किसीको मालूम है। रावण, बाणासुर जैसे बड़े भारी योद्धा धनुषको देखकर घर लौट गये।

सोइ पुरारिकोदंड कठोरा ❀ राजसमाजु आजु जेइ तोरा ॥
त्रि - भुवन - जय - समेत बैदेही ❀ बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही ॥

वही शिवजीका कठोर धनुष आज राजाओंके इस समाजमें जो तोड़ेगा उसे तीनों भुवनोंकी विजयसहित सीताजी विना विचारे हठपूर्वक वर लेंगी।

सुनि पन सकल भूप अभिलाषे ❀ भट मानी अतिसय मन माषे ॥
परिकर बांधि उठे अकुलाई ❀ चले इष्टदेवन्ह सिरु नाई ॥

प्रणको सुनकर सभी राजाओंकी अभिलाषा हुई और जिन्हें अपने योद्धा होनेका अभिमान था वे मनमें अत्यंत क्रोधित हुए और व्याकुल होकर कमरसे फेंटा बांधकर उठे और अपने इष्टदेवताओंको शिर नवाकर चले।

तमकि ताकि तकि सिवधनु धरहीं ❀ उठइ न कोटि भांति बल करहीं ॥
जिन्हके कछु बिचार मन माहीं ❀ चापसमीप महीप न जाहीं।

वे क्रोधमें भर, सीध बांध देखकर शिवजीके धनुषको पकड़ते हैं और करोड़ ढंगोंसे बल लगाते हैं, पर वह नहीं उठता। जिन राजाओंके मनमें कुछ विचार था वे धनुषके पास ही नहीं जाते।

दो०—तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप ❀ उठइ न चलहिं लजाइ।
मनहु पाइ भट-बाहु-बल ❀ अधिक अधिक गरुआइ ॥२८३॥

मूर्ख राजा क्रोधमें भरकर धनुषको पकड़ते हैं, परन्तु जब वह नहीं उठता, तब लजाकर चल देते हैं; मानों वह धनुष योद्धाओंकी भुजाओंका बल पाकर अधिकाधिक भारी होता जाता हो।

भूप सहसदस एकहिं बारा ❀ लगे उठावन टरइ न टारा ॥
डगइ न संभुसरासन कैसे ❀ कामीबचन सतीमन जैसे ॥

दस हजार राजा एक ही बार उठाने लगे, परन्तु वह टाले नहीं टला। शिवजीका धनुष किस तरह नहीं डिगता, जिस तरह कामीके वचनोंसे सतीका मन।

सब नृप भये जोग उपहासी ❀ जैसे बिनु बिराग संन्यासी ॥
कीरति बिजय बीरता भारी ❀ चले चापकर बरबस हारी ॥

सब राजा लोग उपहासयोग्य हो गये, जैसे वैराग्य न होनेसे संन्यासी हो जाता है। कीर्ति, विजय और बड़ी वीरता—सब जबर्दस्ती धनुषके हाथों हार चले।

श्रीहत भये हारि हिय राजा ❀ बैठे निज निज जाइ समाजा ॥
नृपन्ह बिलोकि जनकु अकुलाने ❀ बोले बचन रोष जनु साने ॥

सब राजा मनमें हार खाकर कान्तिहीन हो गये और अपने अपने समाजमें जा बैठे। राजाओंको देखकर राजा जनक व्याकुल हुए और ऐसे वचन बोले, मानों वे क्रोधमें भरे हुए हों।

दीप दीप के भूपति नाना ❀ आये सुनि हम जो पन ठाना ॥
देव दनुज धरि मनुजसरीरा ❀ बिपुलबीर आये रनधीरा ॥

द्वीप-द्वीपसे अनेक राजा लोग उस प्रणको सुनकर आये, जो मैंने किया था। देवता और दैत्य मनुष्यका शरीर रखकर बहुतसे वीर और रणधीर आये।

दो०—कुअंरि मनोहरि बिजय बडि ❀ कीरति अतिकमनीय ॥
पावनिहार बिरंचि जनु ❀ रचेउ न धनुदमनीय ॥२८४॥

परन्तु मन हरनेवाली कुमारी, भारी विजय और अत्यन्त सुन्दर कीर्ति—इन सबको पानेवाला और धनुषको तोड़नेवाला मानों ब्रह्माने बनाया ही नहीं।

कहहु काहि यह लाभ न भावा ❀ काहु न संकरचाप चढ़ावा ॥
रहउ चढ़ाउब तोरब भाई ❀ तिलभरि भूमि न सके छुड़ाई ॥

कहो, यह लाभ किसे अच्छा नहीं लगा, जो किसीने शिवजीका धनुष नहीं चढ़ाया। अरे भाई, चढ़ाना और तोड़ना तो दूर रहा, तिलभर पृथिवी भी नहीं छुड़ा सके।

अब जनि कोउ माखइ भट मानी ❀ बीरबिहीन मही मैं जानी ॥
तजहु आस निज-निज-गृह जाहू ❀ लिखा न बिधि बैदेहिबिबाहू ॥

कोई अभिमानी योद्धा अब बुरा न माने। मैंने जान लिया, कि पृथिवी वीर पुरुषोंसे शून्य है। आशा छोड़ो, और अपने-अपने घर जाओ। ब्रह्माने सीताका विवाह लिखा ही नहीं है।

सुकृत जाइ जौं पन परिहरऊँ ❀ कुअँरिकुआँरि रहउ का करऊँ ॥
जौं जनतेउँ बिनु भट भुइँ भाई ❀ तौ पन करि होतेउँ न हँसाई ॥

यदि मैं प्रणको छोड़ दूँ तो पुण्य नष्ट होता है। कन्या कुमारी रहे। क्या करूँ? अरे भाई, यदि यह जानता कि पृथिवीमें कोई योद्धा नहीं है तो प्रण करके हँसी न कराता।

जनकबचन सुनि सब नरनारी ❀ देखि जानकिहि भये दुखारी ॥
माखे लषन कुटिल भइ भौंहैं ❀ रदपट फरकत नयन रिसौंहैं ॥

राजा जनकके वचन सुनकर सब स्त्री-पुरुष जानकीजीको देखकर दुःखी हुए। लक्ष्मणजी क्रोधमें भर गये। उनकी भौंहें टेढ़ी हो गयीं, ओंठ फड़कने लगे और नेत्र क्रोधसे भर गये।

दो०—कहि न सकत रघु-बीर-डर ❀ लगे बचन जनु बान।
लाइ राम-पद-कमल सिर ❀ बोले गिरा प्रमान ॥२८५॥

श्रीरामचन्द्रजीके डरसे कुछ कह न सकते थे, परन्तु राजा जनकके वचन उन्हें ऐसे लगे, मानों वाण हों। वे श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको शिर नवाकर यथार्थ वचन बोले।

रघुबंसिन्हि महँ जहँ कोउ होई ❀ तेहि समाज अस कहइ न कोई ॥
कही जनक जसि अनुचित बानी ❀ बिद्यमान रघु-कुल-मनि जानी ॥

रघुवंशियोंमेंसे कोई जहां होता है, उस समाजमें ऐसा अनुचित वचन कोई नहीं कहता, जैसा राजा जनकने रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजीको विद्यमान जानकर भी कहा है।

सुनहु भानु-कुल-पंकज-भानू ❀ कहउँ सुभाव न कछु अभिमानू ॥
जौं तुम्हार अनुसासन पावउँ ❀ कंदुक इव ब्रह्मांड उठावउँ ॥

हे सूर्यकुलरूपी कमलके सूर्य, सुनिये। स्वभावसे ही कहता हूँ, कुछ अभिमानसे नहीं। यदि आपकी आज्ञा पा जाऊं तो इस ब्रह्माण्डको गेंदकी भांति उठा लूं।

काचे घट जिमि डारउं फोरी ❀ सकउं मेरु मूलक इव तोरी ॥
तव प्रतापमहिमा भगवाना ❀ का बापुरो पिनाक पुराना ॥

और उसे कच्चे घड़ेकी भांति फोड़ डालूं। मैं मेरु पर्वतको मूलीकी भांति तोड़ सकता हूं। हे भगवन्, आपके प्रतापकी महिमाके आगे बेचारा पुराना धनुष क्या है?

नाथ जानि अस आयसु होऊ ❀ कौतुक करउं बिलोकिय सोऊ ॥
कमलनाल जिमि चाप चढ़ावउं ❀ जोजन सत प्रमान लेइ धावउं ॥

हे नाथ, ऐसा जानकर आज्ञा दे दीजिये। फिर जो कौतुक करूं वह भी देखिये। इस धनुषको कमलकी डण्डीके समान चढ़ाऊं और सौ योजनकी दूरीतक लेकर दौड़ जाऊँ।

दो०—तोरउं छत्रकदंड जिमि ❀ तव प्रताप बलनाथ।
जौं न करउं प्रभु-पद-सपथ ❀ कर न धरउं धनु भाथ ॥२८६॥

हे नाथ, आपके प्रतापके बलसे इसे छता (कुकुरमुता) का डंडीके समान तोड़ दूँ। यदि यह न करूं तो हे स्वामी, आपके चरणोंकी शपथ है, धनुष और तरकस हाथमें न लूं।

लषन सकोप बचन जब बोले ❀ डगमगानि महि दिग्गज डोले ॥
सकल लोक सब भूप डेराने ❀ सियहिय हरष जनक सकुचाने ॥

जब लक्ष्मणजी क्रोधसमेत यह वचन बोले तब पृथिवी डगमगाने लगी और दिग्पाल हिल गये। सब लोग और सब राजा डर गये, सीताजीके हृदयमें प्रसन्नता हुई और राजा जनक सकुचा गये।

गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं ❀ मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं ॥
सयनहिं रघुपति लषन निवारे ❀ प्रेमसमेत निकट बैठारे ॥

गुरु विश्वामित्र, श्रीरामचन्द्रजी और सब मुनि मनमें प्रसन्न हुए। ये सब बारबार पुलकायमान होते थे। इशारेसे श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको रोक दिया और उन्हें प्रेमसे पास बिठलाया।

बिस्वामित्र समय सुभ जानी ❀ बोले अति-सनेह-मय बानी ॥
उठहु राम भंजहु भवचापा ❀ मेटहु तात जनकपरितापा ॥

शुभ समय जानकर अत्यन्त प्रेमभरी वाणीसे विश्वामित्र मुनि बोले, कि हे राम, उठो, और शिवजीके धनुषको तोड़ो। हे तात, राजा जनकके दुःखको मिटाओ।

सुनि गुरुबचन चरन सिरु नावा ❀ हरषु बिषादु न कछु उर आवा ॥
ठाढ़े भये उठि सहज सुभाये ❀ ठवनि जुवा मृगराज लजाये ॥

गुरुके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने चरणोंमें शिर नवाया। उनके हृदयमें हर्ष शोक, कुछ नहीं हुआ। सहज स्वभावसे वे उठकर खड़े हुए। उनकी चालसे तरुण सिंह भी लजाते हैं।

दो०—उदित उदय-गिरि-मंच पर ❀ रघुबर बालपतंग।
बिकसे संतसरोज सब ❀ हरषे लोचनभृंग ॥ २८७ ॥

मंचरूपी उदयाचलपर श्रीरामचन्द्रजीरूपी प्रभातकालके सूर्य उदय हुए, जिससे कमलरूपी सब सज्जन खिल गये और उनके नेत्ररूपी भौंरे प्रसन्न हुए।

नृपन्ह केरि आसा निसि नासी ❀ बचन नखतअवली न प्रकासी ॥
मानी महिप कुमुद सकुचाने ❀ कपटी भूप उलूक लुकाने ॥

राजाओंकी आशाकी रात्रि नष्ट हो गयी और उनके वचनरूपी तारागणोंका समूह प्रकाशित नहीं रहा। अभिमानी राजारूपी कुमुद सकुचा गये और कपटी राजारूपी घूघू छिप गये।

भये बिसोक कोक मुनि देवा ❀ बरषहिं सुमन जनावहिं सेवा ॥
गुरुपद बंदि सहित अनुरागा ❀ राम मुनिन्ह सन आयसु माँगा ॥

चकवा और चकवीरूपी मुनि और देवताओंके शोक दूर हो गये और वे फूल बरसाने और अपनी सेवा बतलाने लगे। प्रेमसे गुरुके चरणोंकी वंदना कर श्रीरामचन्द्रजीने मुनियोंसे आज्ञा मांगी।

सहजहि चले सकल-जग-स्वामी ❀ मत्त-मंजु-बर-कुंजर-गामी ॥
चलत राम सब पुर-नर-नारी ❀ पुलक-पूरि-तन भये सुखारी ॥

सब संसारके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी मत्त, सुन्दर गजराजकी चालसे सहज स्वभावसे ही चले। श्रीरामचन्द्रजीके चलते ही नगरके सब स्त्री-पुरुष सुखी हुए और उनका शरीर पुलकावलीमें भर गया।

बंदि पितर सब सुकृत सँभारे ❀ जौं कछु पुन्य प्रभाउ हमारे ॥
तौं सिवधनु मृनाल की नाईं ❀ तोरहिं राम गनेस गोसाईं ॥

उन्होंने अपने पूर्वपुरुषोंकी वंदना कर सब पुण्यकार्योंका स्मरण किया और कहा कि हमारे पुण्योंका यदि कुछ प्रभाव हो तो हे गणेशभगवान्, श्रीरामचन्द्रजी शिवजीके धनुषको कमलकी डण्डीके समान तोड़ डालें।

दो०—रामहिं प्रेम समेत लखि ❀ सखिन्ह समीप बोलाइ।
सीतामातु सनेहबस ❀ बचन कहइ बिलखाइ ॥ २८८ ॥

प्रेमसे श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सखियोंको बुलाकर सीताजीकी माता नेहवश बिलखकर ये वचन कहने लगीं।

सखि सब कौतुक देखनिहारे ❀ जेउ कहावत हितू हमारे॥
कोउ न बुझाइ कहइ नृप पाहीं ❀ ए बालक अस हठ भल नाहीं॥

हे सखी, सब तमाशा देखनेवाले हैं। ये भी हमारे हितकारी कहलाते हैं। कोई भी राजाको समझाकर नहीं कहता कि ये बालक हैं। ऐसा हठ अच्छा नहीं।

रावन बान छुआ नहीं चापा ❀ हारे सकल भूप करि दापा॥
सो धनु राज-कुअँर-कर देहीं ❀ बालमराल कि मंदर लेहीं॥

रावण और बाणासुरने धनुषको छुआतक नहीं और सब राजा अभिमान करके हार गये। वही धनुष राजकुमारके हाथमें दे रहे हैं। बालहंस क्या मंदराचल पर्वत उठा सकते हैं?

भूपसयानप सकल सिरानी ❀ सखि बिधिगति कहिजाति न जानी॥
बोली चतुर सखी मृदु बानी ❀ तेजवंत लघु गनिय न रानी॥

राजाकी सारी चतुराई जाती रही है। हे सखी, विधाताकी लीला कुछ जानी नहीं जाती। चतुर सखी मीठी वाणीसे बोली कि हे रानी, तेजवानको छोटा नहीं गिनना चाहिये।

कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा ❀ सोखेउ सुजस सकल संसारा॥
रबिमंडल देखत लघु लागा ❀ उदय तासु त्रि-भुवन-तम भागा॥

कहां कुम्भजऋषि और कहां अपार समुद्र! परन्तु उन्होंने इसे सुखा दिया, जिसका सुयश सारे संसारमें है। सूर्यमण्डल देखनेमें छोटा लगता है, परन्तु उसके उदय होनेसे त्रिभुवनका अंधेरा भाग जाता है।

दो०—मंत्र परमलघु जासु बस ❀ बिधि हरि हर सुर सर्ब।
महा-मत्त-गज-राज कहँ ❀ बस कर अंकुस खर्ब॥ २८६॥

मंत्र बहुत ही छोटा होता है, जिसके वशमें ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि सब देवता होते हैं। छोटासा अंकुश अत्यंत मत्त गजराजको वशमें कर लेता है।

काम कुसुम-धनु-सायक लीन्हे ❀ सकलभुवन अपने बस कीन्हे॥
देबि तजिय संसउ अस जानी ❀ भंजब धनुष राम सुनु रानी॥

कामदेवने फूलोंका धनुषबाण लेकर सब भुवनोंको अपने वशमें किया है। ऐसा जानकर हे देवि, संदेह दूर कीजिये। हे रानी, सुनिये। श्रीरामचन्द्रजी धनुष तोड़ेंगे।

सखीवचन सुनि भइ परतीती ❁ मिटा बिषाद बढ़ी अतिप्रीती ॥
तब रामहिं बिलोकि बैदेही ❁ सभय हृदय बिनवति जेहि तेही ॥

सखीके वचन सुनकर प्रतीति हुई, दुःख मिट गया और बड़ा प्रेम बढ़ा। उस समय सीताजी श्रीरामचन्द्रजीको देखकर मनमें डरकर जिसकी तिसकी विनती करने लगीं।

मनहीं मन मनाव अकुलानी ❁ होउ प्रसन्न महेस भवानी ॥
करहु सुफल आपनि सेवकाई ❁ करि हित हरहु चापगरुआई ॥

वे व्याकुल होकर मन ही मन मनाती थीं कि हे महादेव, हे पार्वती, आप प्रसन्न हों। अपनी सेवा सफल करो और मेरा हित करके धनुषका भारीपन हर लो।

गननायक बरदायक देवा ❁ आजु लगे कीन्हेउ तुअ सेवा ॥
बार बार सुनि बिनती मोरी ❁ करहु चापगरुता अति थोरी ॥

हे गणनायक, आप देवताओंको भी वरके देनेवाले हैं। मैंने आजतक आपकी सेवा की है। आप मेरी विनतीको वार-वार सुनकर धनुषका भारीपन बिलकुल थोड़ा कर दें।

दो०—देखि देखि रघुबीर तन ❁ सुर मनाव धरि धीर।
भरे बिलोचन प्रेमजल ❁ पुलकावली सरीर ॥२६०॥

(वे) श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देख देखकर धीरज रखकर देवताओंको मना रही थीं। उनके नेत्र प्रेमके जलसे भरे हुए थे और शरीर पुलकायमान था।

नीके निरखि नयन भरि सोभा ❁ पितुपनु सुमिरि बहुरि मन छोभा ॥
अहह तात दारुन हठ ठानी ❁ समुझत नहिं कछु लाभ न हानी ॥

उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीकी शोभाको नेत्र भरकर भलीभांति देखा, पर पिताके प्रणका स्मरण कर मन फिर क्षोभित हुआ। वे सोचने लगीं कि हाय पिताजी! आपने कठिन हठ किया है। आप लाभ और हानि कुछ नहीं समझते।

सचिव सभय सिख देइ न कोई ❁ बुधसमाज बड़ अनुचित होई ॥
कहँ धनु कुलिसहु चाहि कठोरा ❁ कहं स्यामल मृदुगात किसोरा ॥

मंत्री डरे हुए हैं, कोई सीख नहीं देता; पण्डितोंके समाजमें बड़ा अनुचित कार्य हो रहा है। कहां धनुष, जिसकी कठोरता वज्रसे भी अधिक है, और कहां कोमल शरीरवाले सांवले राजकिशोर!

बिधि केहि भांति धरउं उर धीरा ❁ सिरिस-सुमन-कन बेधिय हीरा ॥
सकल सभा कै मति भइ भोरी ❁ अब मोहि संभु-चाप गति तोरी ॥

हे देव, हृदयमें किस प्रकार धीरज रखूं? सिरसके फूलोंके कणसे भी क्या कभी हीरा बींधा जाता है? सभाके सब लोगोंकी बुद्धि भोली हो गयी है। हे शिवजीके धनुष, अब मैं तेरी ही शरणमें हूं।

निज जड़ता लोगन्ह पर डारी ❀ होहु हरुअ रघुपतिहि निहारी॥
अति परिताप सीयमन माहीं ❀ लव निमेष जुगसय सम जाहीं॥

अपनी जड़ता लोगोंपर डालकर श्रीरामचन्द्रजीको देखकर हलके हो जाओ। सीताजीके मनमें बड़ा संताप था। उनको एक-एक लव और निमेष सौ-सौ युगके समान बीत रहे थे।

दो०—प्रभुहि चितइ पुनि चितइ महि ❀ राजत लोचन लोल।
खेलत मनसिज-मीन-जुग ❀ जनु बिधुमंडल डोल॥२६१॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखकर वे फिर पृथिवीकी ओर देखती थीं। उनके चञ्चल नेत्र ऐसे शोभित थे मानों चन्द्रमण्डलके झूलेमें दो कामदेवरूपी मछलियां खेल रही हों।

गिराअलिनि मुखपंकज रोकी ❀ प्रगट न लाजनिसा अवलोकी॥
लोचनजलु रह लोचन कोना ❀ जैसे परम कृपन कर सोना॥

वाणीरूपी भौंरी मुखरूपी कमलमें बंद रह गयी। लज्जारूपी रात्रि देखकर वह बाहर नहीं हुई। नेत्रोंका जल नेत्रोंके कोनोंमें ही रह गया, जैसे महाकृपणका सोना।

सकुची व्याकुलता बड़ि जानी ❀ धरि धीरज प्रतीति उर आनी॥
तन मन बचन मोर पनु साचा ❀ रघु-पति-पद-सरोज चितु राचा॥

अपनेमें बड़ी व्याकुलता जानकर संकोच हुआ, फिर धीरज रखकर वे हृदयमें विश्वास लायीं और सोचा कि यदि तन, मन और वचनसे मेरा प्रण सत्य है और यदि श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें चित्त जम गया है,

तो भगवान सकल-उर-बासी ❀ करिहहिं मोहि रघुबरकी दासी॥
जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू ❀ सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू॥

तो सबके हृदयमें बसनेवाले भगवान् मुझे श्रीरामचन्द्रजीकी दासी करेंगे। जिसका जिसपर सत्य प्रेम होता है वह उसे मिलता है, इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

प्रभुतन चितइ प्रेमपनु ठाना ❀ कृपानिधान राम सब जाना॥
सियहि बिलोकि तकेउ धनु कैसे ❀ चितव गरुड़ लघुब्यालहि जैसे॥

श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखकर सीताजीने प्रेमका प्रण ठान लिया। कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी यह सब जान गये। उन्होंने सीताजीको देखकर धनुषको कैसे ताका जैसे गरुड़ छोटे सर्पको ताकता है।

दो०—लषन लखेउ रघु-बंस-मनि ❀ ताकेउ हरकोदंड ।
पुलकि गात बोले बचन ❀ चरन चापि ब्रह्मंड ॥ २६२ ॥

लक्ष्मणजीने जब यह देखा कि रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजीने शिवजीके धनुषको ताका, तब पुलकित शरीर होकर वे पृथिवीको चरणोंसे दबाकर बोले।

दिसिकुंजरहु कमठ अहि कोला ❀ धरहु धरनि धरि धीर न डोला ॥
राम चहहिं संकरधनु तोरा ❀ होहु सजग सुनि आयसु मोरा ॥

हे दिग्गजो, हे कच्छप, हे शेषनाग और हे बाराह—सब धीरज रखकर पृथिवीको रखो, वह डोले नहीं। श्रीरामचन्द्रजी शिवजीका धनुष तोड़ना चाहते हैं। मेरी आज्ञा सुनकर सावधान हो जाओ।

चापसमीप राम जब आये ❀ नरनारिन्ह सुर सुकृत मनाये ॥
सब कर संसय अरु अग्यानू ❀ मंदमहीपन्ह कर अभिमानू ॥

श्रीरामचन्द्रजी जब धनुषके पास आये तब स्त्री और पुरुष—सबने देवताओं और पुण्य कार्योंको मनाया। सबका संदेह और अज्ञान, मूर्ख राजाओंका अभिमान,

भृगुपति केरि गरबगरुआई ❀ सुर - मुनि - बरन्ह केरि कदराई ॥
सिय कर सोच जनकपछितावा ❀ रानिन्ह कर दारुन-दुख-दावा ॥

परशुरामका अभिमान और भारीपन, देवताओं और मुनिवरोंकी कायरता, सीताका सोच और राजा जनकका पश्चात्ताप तथा रानियोंके कठोर दुःखका दावानल—

संभुचाप बड़ बोहित पाई ❀ चढ़े जाइ सब संग बनाई ॥
राम - बाहु - बल सिंधु अपारू ❀ चहत पार नहिं कोउ कनहारू ॥

शिवजीके धनुषरूपी बड़े जहाजको पाकर सब साथ बनाकर जा चढ़े। श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाओंके बलरूपी अपार समुद्रके पार जाना चाहते हैं परन्तु कोई कर्णधार नहीं है।

दो०—राम बिलोके लोग सब ❀ चित्र लिखे से देखि ।
चितई सीय कृपायतन ❀ जानी बिकल बिसेखि ॥२६३॥

श्रीरामचन्द्रजीने सब लोगोंको देखा कि वे चित्रमें लिखे जैसे दीखते हैं। कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीकी ओर देखा और उन्हें विशेष व्याकुल जाना।

देखी बिपुल बिकल बैदेही ❀ निमिष बिहात कलपसम तेही ॥
तृषित बारि बिनु जो तनु त्यागा ❀ मुये करइ का सुधा तड़ागा ॥

धनुर्भङ्ग ।　　　　ধনুর্ভঙ্গ

श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीको अत्यन्त व्याकुल देखा। उन्हें निमेष कल्पके समान बीतते थे। बिना पानी, प्यासे ही, किसीने यदि शरीर त्याग दिया तो मर जानेके बाद अमृतका सरोवर क्या करेगा ?

का बरषा जब कृषी सुखाने ❀ समय चुके पुनि का पछिताने ॥
अस जिय जानि जानकी देखी ❀ प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेखी ॥

सब खेती सूख जानेपर वर्षासे क्या ? समयपर चूक जानेसे फिर पछतानेसे क्या ? ऐसा हृदयमें जानकर प्रभुने सीताजीको देखा और वे विशेष प्रेम देखकर पुलकायमान हो गये।

गुरहि प्रनाम मनहिं मन कीन्हा ❀ अतिलाघव उठाइ धनु लीन्हा ॥
दमकेउ दामिनि जिमि जब लयऊ ❀ पुनि नभ-धनु-मंडल-सम भयऊ ॥

गुरुको मन-ही-मन प्रणाम किया और बड़ी शीघ्रतासे धनुषको उठा लिया। उन्होंने जब उसे हाथमें लिया तब वह बिजलीकी भांति दमका और फिर आकाशमें इन्द्रधनुषके समान हो गया।

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ❀ काहु न लखा देख सब ठाढ़े ॥
तेहि छन राम मध्य धनु तोरा ❀ भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा ॥

उठाते, चढ़ाते और जोरसे खींचते किसीने भी नहीं देखा—यद्यपि सब खड़े देखते थे। उसी क्षण श्रीरामचन्द्रजीने बीचसे धनुषको तोड़ दिया, जिसकी भयंकर कठोर ध्वनिसे भुवन भरगया।

छं०—भरे भुवन घोर कठोर रव रबिबाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ॥
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल बिकल बिचारहीं।
कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति बचन उचारहीं ॥

भयङ्कर कठोर शब्दसे भुवन भर गये, सूर्यके घोड़े मार्ग छोड़कर चल दिये। दिग्गज चिंघार रहे हैं, पृथिवी डोल रही है और शेषनाग, वाराह तथा कच्छप कुलबुला रहे हैं। देवता, दैत्य, और मुनि, सब कानोंमें हाथ दिये व्याकुल होकर विचार रहे हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीने धनुष तोड़ दिया। सब जय-जयकार कर रहे हैं।

सो०—संकर चाप जहाज ❀ सागर रघुबर - बाहु - बल।
बूड़ सो सकल समाज ❀ चढ़ जो प्रथमहिं मोहबस॥२६४॥

शिवजीका धनुष जहाज और श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाओंका बल समुद्र है। उसपर जो समाज पहिले ही मोहबश चढ़ा था वह सब डूब गया।

प्रभु दोउ चापखंड महि डारे ❀ देखि लोग सब भये सुखारे ॥
कौसिक - रूप - पयोनिधि पावन ❀ प्रेमबारि अवगाह सुहावन ॥

प्रभुने धनुषके दोनों खण्ड पृथिवीपर डाल दिये, जिन्हें देखकर सबलोग सुखी हुए। विश्वामित्ररूपी पवित्र समुद्र है, जिसमें गहरा प्रेमरूपी सुन्दर जल है।

राम - रूप - राकेस निहारी ❀ बढ़त बीचि पुलकावलि भारी ॥
बाजे नभ गहगहे निसाना ❀ देवबधू नाचहिं करि गाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीके रूपका पूर्ण चन्द्रमा देखकर उसमें भारी पुलकावली रूपी लहरें बढ़ रही हैं। आकाशमें खूब जोरसे नगारे बजने लगे और देवताओंकी स्त्रियां गान करके नाचने लगीं।

ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा ❀ प्रभुहि प्रसंसहि देहिं असीसा ॥
बरिसहिं सुमन रंग बहु माला ❀ गावहिं किन्नर गीत रसाला ॥

ब्रह्मादि देवता, सिद्ध और मुनीश्वर—सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी प्रशंसा कर रहे हैं और आशीर्वाद दे रहे हैं। अनेक रङ्गके फूलोंकी लड़ियां बरसा रहे हैं, किन्नर रसीले गीत गा रहे हैं।

रही भुवन भरि जय जय बानी ❀ धनुष - भंग - धुनि जात न जानी ॥
मुदित कहहिं जहं तहं नर नारी ❀ भंजेउ राम संभुधनु भारी ॥

भुवनोंमें 'जय-जयकार' शब्द भर रहा है और धनुष टूटनेका शब्द जान नहीं पड़ता। जहां-तहां पुरुष स्त्री—सब प्रसन्न होकर कह रहे हैं कि श्रीरामचन्द्रजीने शिवजीका भारी धनुष तोड़ डाला।

दो०—बंदी मागध सूतगन ❀ बिरद बदहिं मतिधीर।
करहिं निछावरि लोग सब ❀ हय गज मनि धन चीर ॥२६५॥

धीर बुद्धिवाले वंदीजन, मागध और सूत—सब यश वर्णन कर रहे हैं और सब लोग हाथी, घोड़े, रत्न, धन और वस्त्र न्योछावर कर रहे हैं।

झांझि मृदंग संख सहनाई ❀ भेरि ढोल दुंदुभी सुहाई ॥
बाजहिं बहु बाजने सुहाये ❀ जहं तहं जुवतिन मंगल गाये ॥

झांझ, मृदङ्ग, शंख, सहनाई, ढोल, भेरी और नगारे, सब शोभित हो रहे हैं। बहुतसे सुन्दर बाजे बज रहे हैं और जहां-तहां युवतियां मङ्गल गा रही हैं।

सखिन्ह सहित हरषीं सब रानी ❀ सूखत धानु परा जनु पानी ॥
जनक लहेउ सुख सोच बिहाई ❀ पैरत थके थाह जनु पाई ॥

सखियोंसहित सब रानियां प्रसन्न हुईं, मानों सूखते हुए धानमें पानी पड़ गया हो। सोच छोड़कर राजा जनकने सुख पाया, मानों तैरते-तैरते थककर थाह पायी हो।

श्रीहत भये भूप धनु टूटे ❀ जैसे दिवस दीप छबि छूटे ॥
सीयसुखहि बरनिय केहि भाँती ❀ जनु चातकी पाइ जलस्वाती ॥

धनुष टूट जानेपर राजा तेजहीन हो गये; जैसे दिनमें दीपककी शोभा जाती रहती है। सीताजीके सुखका वर्णन किस प्रकार किया जाय, मानों चातकी स्वातीका जल पाकर सुखी हुई हो।

रामहि लखन बिलोकत कैसे ❀ ससिहि चकोरकिसोरकु जैसे ॥
सतानंद तब आयसु दीन्हा ❀ सीता गमनु राम पहिं कीन्हा ॥

लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीको कैसे देखते हैं जैसे चकोरका बच्चा चन्द्रमाको। तब सतानन्दने आज्ञा दी और सीताजी श्रीरामचन्द्रजीके समीप गयीं।

दो०—संग सखी सुंदर चतुर ❀ गावहिं मंगल चार।
गवनी बाल-मराल-गति ❀ सुखमा अंग अपार ॥२६६॥

सङ्गमें सुन्दर-चतुर सखियां थीं, जो मङ्गलाचार गा रही थीं। सीताजी बालहंसकी चालसे चलीं। उनके शरीरमें अपार सुन्दरता थी।

सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसी ❀ छबि-गन-मध्य महाछबि जैसी ॥
करसरोज जयमाल सुहाई ❀ बिस्व-बिजय-सोभा जनु छाई ॥

सखियोंके बीचमें सीताजी कैसी शोभा पा रही हैं; जैसे मूर्तिमान छवियोंके बीचमें महाछवि हो। कमल जैसे हाथमें जयमाला शोभित है, मानों संसारकी विजयकी शोभा छायी हो।

तन सकोच मन परमउछाहू ❀ गूढ़ प्रेम लखि परइ न काहू ॥
जाइ समीप राम छबि देखी ❀ रहि जनु कुअँरि चित्रअवरेखी ॥

उनके शरीरको संकोच है, पर मनमें बड़ा आनन्द है। उनका गूढ़ प्रेम किसीको देख नहीं पड़ता। पास जाकर कुमारी सीताने श्रीरामचन्द्रजीको छविको देखा और वे मानों चित्रमें लिखीसी रह गयीं।

चतुरसखी लखि कहा बुझाई ❀ पहिरावहु जयमाल सुहाई ॥
सुनत जुगलकर माल उठाई ❀ प्रेमबिबस पहिराइ न जाई ॥

देखकर चतुर सखीने समझाकर कहा कि सुन्दर जयमाला पहनाओ। सुनते ही सीताजीने दोनों हाथोंमें मालाको उठाया। प्रेमके विवश होनेसे वह पहनायी नहीं जाती।

सोहत जनु जुगजलज सनाला ❀ ससिहि सभीत देत जयमाला ॥
गावहिं छबि अवलोकि सहेली ❀ सिय जयमाल रामउर मेली ॥

उस समय वे ऐसी शोभा पा रही थीं, मानों डंडीसहित दो कमल डरते हुए चन्द्रमाको जयमाल पहनाते हों। सीताजीने श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें जयमाल डाल दी। सखियां शोभा देखकर गीत गा रही थीं।

सो०—रघुबरउर जयमाल ❀ देखि देव बरिसहिं सुमन।
सकुचे सकल भुआल ❀ जनु बिलोकि रबि कुमुदगन ॥२६७॥

श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें जयमाला देखकर देवता फूल बरसाने लगे, पर सब राजा लोग सकुचा गये; जैसे सूर्यको देखकर कुमुद-समूह।

पुर अरु ब्योम बाजने बाजे ❀ खल भये मलिन साधु सब राजे ॥
सुर किन्नर नर नाग मुनीसा ❀ जय जय जय कहि देहिं असीसा ॥

जनकपुरमें और आकाशमें बाजे बजने लगे, दुष्ट तेजहीन हो गये और सब सज्जन आनंदित हुए। देवता, किन्नर, मनुष्य, नाग और मुनीश्वर—सब 'जय हो, जय हो, जय हो', कहकर आशीर्वाद देने लगे।

नाचहिं गावहिं बिबुधबधूटी ❀ बार बार कुसुमांजलि छूटी ॥
जहँ तहँ बिप्र बेदधुनि करहीं ❀ बंदी बिरदावलि उच्चरहीं ॥

देवताओंकी स्त्रियां नाचने-गाने लगीं और बारबार फूलोंकी अंजलियां फेंकी जाने लगीं। जहां-तहां ब्राह्मण वेदध्वनि करने लगे और बंदीजन विरदावलीका बखान करने लगे।

महि पाताल नाक जसु ब्यापा ❀ राम बरी सिय भंजेउ चापा ॥
करहिं आरती पुर-नर-नारी ❀ देहिं निछावरि बित्त बिसारी ॥

पृथिवी, पाताल और स्वर्ग—सर्वत्र यश फैल गया कि श्रीरामचन्द्रजीने धनुषको तोड़ा और सीताजीको वर लिया। नगरके सब स्त्री-पुरुष आरती कर रहे हैं और अपनी सामर्थको भूलकर न्योछावर दे रहे हैं।

सोहति सीय राम कै जोरी ❀ छबि सिंगार मनहु एक ठोरी ॥
सखी कहहिं प्रभुपद गहु सीता ❀ करत न चरनपरस अतिभीता ॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीकी जोड़ी शोभा पा रही है, मानों छवि और श्रृंगार एक स्थानपर हों। सखियां कह रही हैं कि हे सीता प्रभुके चरणोंको पकड़ो, परन्तु सीताजी अत्यन्त डरी हुई हैं और वे चरणोंको स्पर्श नहीं करतीं।

दो०—गौतम-तिय-गति सुरति करि ❀ नहिं परसति पग पानि।
मन बिहँसे रघु-बंस-मनि ❀ प्रीति अलौकिक जानि ॥२६८॥

गौतम मुनिकी स्त्री अहल्याकी दशाको यादकर सीताजी हाथोंसे चरणोंको नहीं छूतीं। रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजी सीताजीकी अलौकिक प्रीति जानकर मनमें हँसे।

तब सिय देखि भूप अभिलाषे ❀ कूर कपूत मूढ़ मन माषे॥
उठि उठि पहिरि सनाह अभागे ❀ जहँ तहँ गाल बजावन लागे॥

तब सीताजीको देखकर राजा लोग ललचाये और क्रूर, कपूत और मूर्ख राजा मनमें क्रोधित हुए। अभागे उठ-उठकर और कवच पहनकर जहां-तहां गाल बजाने लगे।

लेहु छड़ाय सीय कह कोऊ ❀ धरि बांधहु नृपबालक दोऊ॥
तोरे धनुष चांड़ नहिं सरई ❀ जीवत हमहिं कुअँरि को बरई॥

कोई कहने लगा कि सीताको छीन लो और दोनों राजकुमारोंको पकड़ बांधो। धनुष तोड़ लेनेसे ही काम पूरा नहीं हो जाता। हमारे जीते राजकुमारीको कौन वरेगा?

जौं बिदेह कछु करइ सहाई ❀ जीतहु समर सहित दोउ भाई॥
साधुभूप बोले सुनि बानी ❀ राजसमाजहिं लाज लजानी॥

यदि राजा जनक कुछ सहायता करें तो दोनों भाइयोंसहित उन्हें युद्धमें जीतो। यह वाणी सुनकर सज्जन राजाओंने कहा कि इस राजसमाजमें तो लाज भी लज्जित हो गयी।

बलु प्रतापु बीरता बड़ाई ❀ नाक पिनाकहिं संग सिधाई॥
सोइ सूरता कि अब कहुँ पाई ❀ असि बुधि तौ बिधि मुहं मसि लाई॥

बल, प्रताप, वीरता, बड़ाई और मर्यादा—सब धनुषके ही साथ चली गयी। वही वीरता क्या अब कहींसे पा गये? ऐसी ही बुद्धि है, तभी तो दैवने सबका मुंह काला किया है।

दो०—देखहु रामहिं नयन भरि ❀ तजि इरिषा मदु कोहु।
लषन-रोषु-पावकु प्रबलु ❀ जानि सलभ जनि होहु॥२६६॥

ईर्षा, मद और क्रोध छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको नेत्र भरकर देखो। जान-बूझकर श्रीलक्ष्मणजीके क्रोधकी प्रबल आगमें पतंग मत बनो।

बैनतेयबलि जिमि चह कागू ❀ जिमि सस चहइ नाग-अरि-भागू॥
जिमि चह कुसल अकारन कोही ❀ सब संपदा चहइ सिवद्रोही॥

गरुड़के भागको जैसे कौआ चाहता हो, हाथीके शत्रु सिंहका भाग जैसे खरगोश चाहता हो, जैसे अकारण क्रोध करनेवाला कुशल चाहता हो, शिवका वैरी सब संपदाओंको चाहता हो,

लोभी लोलुप कीरति चहई ❀ अकलंकता कि कामी लहई ॥
हरि-पद - बिमुख परमगति चाहा ❀ तस तुम्हार लालच नरनाहा ॥

लोभी और लोलुप कीर्ति चाहता हो, व्यभिचारी कलंकहीन रहना चाहता हो और भगवान्‌के चरणोंसे विमुख रहकर कोई मोक्ष चाहता हो, वैसे ही, हे राजाओ, तुम्हारा यह लालच है।

कोलाहल सुनि सीय सकानी ❀ सखी लेवाइ गईं जहँ रानी ॥
राम सुभाय चले गुरु पाहीं ❀ सियसनेहु बरनत मन माहीं ॥

कोलाहल सुनकर सीताजी डरीं और सखियां उन्हें वहां लिवा गयीं, जहां रानी थीं। श्रीरामचन्द्रजी मनमें सीताजीके स्नेहका वर्णन करते हुए सहज स्वभावसे गुरुके पास चले।

रानिन्ह सहित सोचबस सीया ❀ अब धौं बिधिहि काह करनीया ॥
भूप बचन सुनि इत उत तकहीं ❀ लषन रामडर बोलि न सकहीं ॥

रानियोंसहित सीताजी सोचके वशमें थीं कि नहीं मालूम, ब्रह्माको अब क्या करना है। लक्ष्मणजी राजाओंकी बातें सुनकर इधर-उधर ताक रहे हैं, पर श्रीरामचन्द्रजीके डरसे बोल नहीं सकते।

दो०—अरुन नयन भृकुटीकुटिल ❀ चितवत नृपन्ह सकोप।
मनहुँ मत्त-गज-गन निरखि ❀ सिंहकिसोरहि चोप ॥२००॥

उनकी आंखें लाल और भौंहें टेढ़ी थीं और वे राजाओंको क्रोधमें भरकर देख रहे थे; मानों मत्त हाथियोंके समूहको देखकर सिंहके बच्चेको उत्साह हो।

खरभर देखि बिकल पुरनारी ❀ सब मिलि देहिं महीपन्ह गारी ॥
तेहि अवसर सुनि सिव-धनु-भंगा ❀ आये भृगु - कुल-कमल-पतंगा ॥

खलबली देखकर नगरकी स्त्रियां व्याकुल हो गयीं। सब मिलकर राजाओंको गालियां देती थीं। उसी समय शिवजीके धनुषका टूटना सुनकर भृगुवंशरूपी कमलके सूर्य परशुरामजी वहां आये।

देखि महीप सकल सकुचाने ❀ बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥
गौर सरीर भूति भलि भ्राजा ❀ भालबिसाल त्रिपुंड बिराजा ॥

उन्हें देखकर सब राजा सकुचा गये, जैसे बाजकी झपटसे लवा पक्षी छिप गये हों। गोरे शरीरपर सुन्दर भस्म शोभा पा रही है और विशाल मस्तकपर त्रिपुण्ड विराज रहा है।

सीस जटा ससिबदन सुहावा ❀ रिसिबस कछुक अरुन होइ आवा ॥
भृकुटीकुटिल नयन रिसि राते ❀ सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते ॥

शिरपर जटायें हैं, चंद्रमा जैसा मुख शोभित है जो क्रोधके कारण कुछ-कुछ लाल हो आया है। क्रोधसे भौंहें टेढ़ी और आखें लाल हैं। साधारण रीतिसे देखनेपर भी मालूम होता है, मानों क्रोधित हो रहे हों।

बृषभ कंध उर बाहु बिसाला ❀ चारु जनेउ माल मृगछाला ॥
कटि मुनि बसन तून दुइ बाँधे ❀ धनु सर कर कुठार कल काँधे ॥

बैल जैसे कंधे हैं, हृदय और भुजाएं विशाल हैं; सुन्दर जनेऊ, माला, और मृगछाला है। कमरमें मुनि-वस्त्र (कौपीन) है, दो तरकस बांधे हुए हैं, हाथमें धनुषबाण है और सुन्दर कुठार कंधेपर है।

दो०—सांत बेष करनी कठिन ❀ बरनि न जाइ सरूप।
धरि मुनितनु जनु बीररस ❀ आयउ जहं सब भूप ॥३०१॥

उनका भेष तो शांत है परन्तु कर्म कठोर हैं। उनके स्वरूपका वर्णन नहीं किया जा सकता, मानों वीररस मुनिका शरीर रखकर वहां आया, जहां सब राजा थे।

देखत भृगु-पति-बेषु कराला ❀ उठे सकल भयबिकल भुआला ॥
पितु समेत कहि निज निज नामा ❀ लगे करन सब दंडप्रनामा ॥

परशुरामजीका भयंकर भेष देखते ही भयसे व्याकुल होकर सब राजा उठ खड़े हुए। पितासहित अपना-अपना नाम कहकर सब उन्हें दण्डवत और प्रणाम करने लगे।

जेहि सुभाय चितवहिं हित जानी ❀ सो जानइ जनु आइ खुटानी ॥
जनक बहोरि आइ सिरु नावा ❀ सीय बोलाइ प्रनाम करावा ॥

हित समझकर भी जिसकी ओर वे सहज स्वभावसे देखते हैं वह समझता है, मानों मेरी आयु पूरी हो गयी। फिर राजा जनकने आकर शिर नवाया और सीताजीको बुलाकर प्रणाम कराया।

आसिष दीन्हि सखी हरखानी ❀ निज समाज लेइ गईं सयानी ॥
बिस्वामित्र मिले पुनि आई ❀ पद सरोज मेले दोउ भाई ॥

उन्होंने सीताजीको आशीर्वाद दिया। उसे सुनकर सखियां प्रसन्न हुईं और वे सीताजीको स्त्रियोंके समाजमें ले गयीं। फिर विश्वामित्र मुनि आकर मिले और दोनों भाइयोंको चरण कमलोंमें डाल दिया।

रामु लषनु दसरथके ढोटा ❀ दीन्हि असीस देखि भल जोटा ॥
रामहिं चितइ रहे थकि लोचन ❀ रूप अपार मार-मद-मोचन ॥

उन्होंने कहा कि ये दशरथके पुत्र राम और लक्ष्मण हैं। सुन्दर जोड़ी देखकर परशुरामने आशीर्वाद दिया और नेत्र भरकर श्रीरामचन्द्रजीको देखते रहे। श्रीरामचन्द्रजीका अपार रूप कामदेवके मदको भी नष्ट करनेवाला है

दो०—बहुरि बिलोकि बिदेह सन ❀ कहहु काह अति भीर।
पूछत जानि अजान जिमि ❀ ब्यापेउ कोपु सरीर ॥ ३०२ ॥

फिर देखकर राजा जनकसे परशुरामने पूछा कि कहो, यह भीड़ क्यों है? वे जानते हुए भी बिना जानेकी भांति पूछ रहे हैं। उनके शरीरमें क्रोध छा गया है।

समाचार कहि जनक सुनाये ❀ जेहि कारन महीप सब आये ॥
सुनत बचन फिरि अनत निहारे ❀ देखे चापखंड महि डारे ॥

राजा जनकने सब समाचार कह सुनाए, जिस कारण सब राजा आये हुए थे। वचन सुनते ही तब उन्होंने दूसरी ओर देखा और धनुषके टुकड़े पृथिवीपर पड़े हुए देखे।

अति रिस बोले बचन कठोरा ❀ कहु जड़ जनक धनुष केइ तोरा ॥
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू ❀ उलटउँ महि जहँ लगि तव राजू ॥

अत्यंत क्रोधमें भरकर वे कठोर वचन बोले कि अरे मूर्ख जनक! यह कह कि धनुष किसने तोड़ा है। अरे मूर्ख, उसे जल्दी दिखला, नहीं तो आज जहांतक तेरा राज्य है, वहांतक सारी पृथिवी उलट दूंगा।

अतिडर उतर देत नृप नाहीं ❀ कुटिल भूप हरषे मनमाहीं ॥
सुर मुनि नाग नगर-नर-नारी ❀ सोचहिं सकल त्रास उर भारी ॥

अत्यंत डरसे राजा उत्तर नहीं देते हैं। दुष्ट राजा मनमें प्रसन्न हुए। देवता, मुनि, नाग और नगरकी नर-नारियां, सबके हृदयमें बड़ा भारी डर था। वे सब चिन्ता करने लगे।

मन पछिताति सीयमहतारी ❀ बिधि अब सवंरी बात बिगारी ॥
भृगुपति कर सुभाव सुनि सीता ❀ अरधनिमेष कलपसम बीता ॥

सीताजीकी माता मनमें पछता रही थीं कि दैवने अब बनी हुई बात बिगाड़ दी। परशुरामका स्वभाव सुनकर सीताजीको आधा निमेष एक कल्पके समान व्यतीत हुआ।

दो०—सभय बिलोके लोग सब ❀ जानि जानकी भीरु।
हृदय न हरषु बिषादु कछु ❀ बोले श्रीरघुबीरु ॥ ३०३ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने सब लोगोंको डरा हुआ देखा और जाना कि सीताजी भयसे कातर हैं। श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें हर्ष और शोक—कुछ नहीं था। वे बोले।

नाथ संभु धनु भंजनि-हारा ❀ होइहि कोउ एक दास तुम्हारा ॥
आयसु काह कहिय किन मोही ❀ सुनि रिसाइ बोले मुनि कोही ॥

हे नाथ, शिवजीके धनुषको तोड़नेवाला आपका ही कोई एक दास होगा, क्या आज्ञा है ? मुझसे क्यों नहीं कहते ? क्रोधी मुनि यह सुनकर क्रोधमें भरकर बोले ।

सेवकु सो जो करइ सेवकाई ❀ अरिकरनी करि करिय लराई ॥

सुनहु राम जेइ सिव धनु तोरा ❀ सहस-बाहु-सम सो रिपु मोरा ॥

सेवक वह है जो सेवा करे । यदि वह शत्रु जैसा काम करे तो लड़ाई करनी चाहिये । हे राम, सुनो । जिसने शिवजीका धनुष तोड़ा है, वह सहस्रबाहुके समान मेरा शत्रु है ।

सो बिलगाउ बिहाइ समाजा ❀ नत मारे जइहहिं सब राजा ॥

सुनि मुनिबचन लषन मुसुकाने ❀ बोले परसुधरहि अपमाने ॥

इस समाजको छोड़कर वह अलग हो जावे, नहीं तो सब राजा मारे जायंगे । मुनिके वचन सुनकर लक्ष्मणजी मुस्कुराये और परशुरामजीका अपमान करते हुए बोले ।

बहु धनुहीं तोरी लरिकाईं ❀ कबहु न तुम्ह रिस कीन्हि गोसाईं ॥

एहि धनुपर ममता केहि हेतू ❀ सुनि रिसाइ कह भृगु-कुल-केतू ॥

हे स्वामी, लड़कपनमें बहुतसे छोटे-छोटे धनुष तोड़े थे, पर आपने कभी नहीं क्रोध किया था । इसी धनुषपर ममता क्यों है ? यह सुन क्रोधमें भरकर परशुरामजीने कहा ।

दो०—रे नृपबालक कालबस ❀ बोलत तोहि न संभार ।
धनुहीं सम त्रिपुरारि-धनु ❀ बिदित सकलसंसार ॥२०४॥

अरे राजपुत्र, तू कालके वशमें है । तू समझकर नहीं बोलता । सारे संसारमें प्रसिद्ध शिवजीका यह धनुष क्या छोटे धनुषके बराबर है ?

लषन कहा हँसि हमरे जाना ❀ सुनहु देव सब धनुष समाना ॥

का छति लाभु जून धनु तोरे ❀ देखा राम नये के भोरे ॥

लक्ष्मणजीने हंसकर कहा कि हे देव, सुनो । मेरी समझमें सब धनुष समान हैं । पुराने धनुषके तोड़ डालनेमें क्या हानि और लाभ है ? नया होनेके भरोसे श्रीरामचन्द्रजीने उसे देखा था ।

छुवत टूट रघुपतिहु न दोषू ❀ मुनि बिनु काज करिय कत रोषू ॥

बोले चितइ परसु की ओरा ❀ रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा ॥

वह छूते ही टूट गया । इसमें श्रीरामचन्द्रजीका दोष नहीं है । हे मुनि ! आप अकारण ही क्रोध क्यों करते हैं ? परशुरामजी अपने फरसेकी ओर देखकर बोले, "अरे दुष्ट, मेरा स्वभाव नहीं सुना है ?"

बालकु बोलि बधउं नहिं तोही ❀ केवल मुनि जड़ जानहि मोही ॥
बालब्रह्मचारी अतिकोही ❀ बिस्वबिदित छत्रिय - कुल-द्रोही ॥

बालक जानकर तुझे नहीं मारता। मूर्ख, मुझे केवल मुनि जानता है? मैं बालब्रह्मचारी और अत्यन्त क्रोधी तथा क्षत्रियवंशका संसारमें प्रसिद्ध शत्रु हूं।

भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही ❀ बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ॥
सहस - बाहु - भुज - छेदनि - हारा ❀ परसु बिलोकु महीपकुमारा ॥

अपनी भुजाओंके बलसे मैंने पृथिवीको राजाओंसे रहित कर दिया और उसे कई बार ब्राह्मणोंको दे दिया। अरे राजकुमार, सहस्रबाहुकी भुजाओंको काटनेवाले मेरे फरसेको देख।

दो०—मातुपितहि जनि सोचबस ❀ करसि महीपकिसोर।
गरभनके अरभकदलन ❀ परसु मोर अति घोर ॥२०५॥

अरे राजाके किशोर पुत्र, माता और पिताको सोचके वशमें मत कर। मेरा फरसा गर्भके बच्चोंको भी मार डालनेवाला बड़ा भयङ्कर है।

बिहंसि लषन बोले मृदुबानी ❀ अहो मुनीस महा भटमानी ॥
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू ❀ चहत उड़ावन फूंकि पहारू ॥

लक्ष्मणजी हंसकर मीठी वाणीसे बोले कि अहो मुनीश्वर, आप तो बड़े अभिमानी योद्धा हैं। बार-बार मुझे फरसा दिखलाते हैं और फूंककर ही पहाड़ उड़ाना चाहते हैं।

इहां कुम्हड़बतिआ कोउ नाहीं ❀ जे तरजनी देखि मरि जाहीं ॥
देखि कुठारु सरासन बाना ❀ मैं कछु कहेउं सहित अभिमाना ॥

यहां कोई कुम्हड़े की बतिया नहीं है, जो तर्जनी उंगली देखकर मर जाया करती है। फरसा, धनुष और बाण देखकर मैंने कुछ अभिमानसमेत कहा है।

भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी ❀ जो कछु कहहु सहउं रिस रोकी ॥
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई ❀ हमरे कुल इन्ह पर न सुराई ॥

भृगुमुनिके वंशका समझकर और आपका यज्ञोपवीत देखकर आपने जो कुछ कहा वह मैं अपनी रिस रोककर सहे लेता हूं। देवता, ब्राह्मण, ईश्वरके भक्त और गाय—इनपर दिखलानेके लिये हमारे वंशमें वीरता नहीं है।

बधे पाप अपकीरति हारे ❀ मारतहू पा परिय तुम्हारे ॥
कोटि-कुलिस-सम बचन तुम्हारा ❀ व्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा ॥

मारनेसे पाप होता है और हारनेसे अयश। इसलिये मारनेपर भी मैं आपके चरणोंमें पड़ता हूं। करोड़ वज्रके समान तो आपका वचन ही है। आप धनुष-बाण और फरसा व्यर्थ ही रखते हैं।

दो०—जो बिलोकि अनुचित कहेउ ⊛ छमहु महामुनि धीर।
सुनि सरोष भृगु-बंस-मनि ⊛ बोले गिरा गंभीर॥ ३०६॥

हे धीर महामुनि, देखकर जो अनुचित कहा हो उसे क्षमा कीजिये। भृगुवंशमें मणिके समान परशुरामजी यह सुनकर क्रोधसे गंभीर वचन बोले—

कौसिक सुनहु मंद यहु बालकु ⊛ कुटिल कालबस निज-कुल-घालकु॥
भानु - बंस - राकेस - कलंकू ⊛ निपट निरंकुस अबुध असंकू॥

हे विश्वामित्र, सुनो। यह बालक मंद है, दुष्ट है, कालके वशमें है और अपने कुलका नाश करनेवाला है। सूर्यवंशरूपी पूर्ण चंद्रमाका यह कलंक है, बिलकुल निरंकुश, मूर्ख और निडर है।

कालकवलु होइहि छन माहीं ⊛ कहउं पुकारि खोरि मोहि नाहीं॥
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा ⊛ कहि प्रताप बल रोष हमारा॥

एक क्षणमें ही यह कालका ग्रास हो जायगा। मैं पुकारकर कहता हूं। मुझे दोष न होगा। यदि बचाना चाहते हो तो मेरा प्रताप, बल और क्रोध कहकर तुम रोको।

लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा ⊛ तुम्हहिं अछत को बरनइ पारा॥
अपने मुंह तुम्ह आपनि करनी ⊛ बार अनेक भाँति बहु बरनी॥

लक्ष्मणजीने कहा कि हे मुनि, आपके रहते आपके सुयशको वर्णन कर कौन पार पा सकता है? अपने ही मुंहसे आपने अपनी करतूत अनेक प्रकारसे बहुत बार वर्णन की।

नहिं संतोषु तो पुनि कछु कहहू ⊛ जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू॥
बीरब्रत्ति तुम्ह धीर अछोभा ⊛ गारी देत न पावहु सोभा॥

यदि संतोष न हुआ हो तो कुछ फिर कहिये। क्रोधको रोककर कठिन दुःख मत सहिये। आपकी वीरों जैसी प्रवृत्ति है, आप धीर और क्रोधरहित हैं, गालियां देते हुए शोभा नहीं पाते।

दो०—सूर समर करनी करहिं ⊛ कहि न जनावहिं आपु।
बिद्यमान रन पाइ रिपु ⊛ कायर करहिं प्रलापु॥ ३०७॥

वीर मनुष्य संग्राममें शूरता करते हैं, स्वयं कहकर नहीं बतलाते। संग्राममें शत्रुको उपस्थित पाकर कायर लोग बका करते हैं।

तुम्ह तौ कालु हांक जनु लावा ❀ बार बार मोहि लागि बोलावा ॥
सुनत लषन के बचन कठोरा ❀ परसु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥

आप तो मानों कालको ही साथमें ले आये हैं, जिसे बार-बार मेरे लिये बुलाते हैं। लक्ष्मणजीके कठोर वचन सुनते ही उन्होंने भयंकर फरसेको संभालकर हाथमें लिया।

अब जनि देइ दोसु मोहि लोगू ❀ कटुबादी बालक बधजोगू ॥
बाल बिलोकि बहुत मैं बांचा ❀ अब यह मरनहार भा सांचा ॥

अब लोग मुझे दोष न देवें। कड़ुवे वचन बोलनेवाला यह बालक मारडाले जानेयोग्य है। बालक देखकर मैंने इसे बहुत बचाया, परन्तु अब यह सत्य ही मरनेवाला हुआ है।

कौसिक कहा छमिअ अपराधू ❀ बाल-दोष-गुन गनहिं न साधू ॥
कर कुठारु मैं अकरुनकोही ❀ आगे अपराधी गुरुद्रोही ॥

विश्वामित्रने कहा कि अपराध क्षमा कीजिये। साधुजन बालकोंके गुण और दोष नहीं गिनते। हाथमें फरसा है, मैं अकारण ही क्रोध करनेवाला हूं और गुरुका वैरी अपराधी सामने है।

उतर देत छांड़उं बिनु मारे ❀ केवल कौसिक सील तुम्हारे ॥
न तु एहि काटि कुठार कठोरे ❀ गुरुहि उरिन होतेउं स्रम थोरे ॥

हे विश्वामित्र, केवल आपके शीलके कारण उसे उत्तर देनेपर भी विना मारे हुए छोड़ता हूं, नहीं तो इसी कठोर फरसेसे उसे काटकर थोड़े ही परिश्रमसे गुरुसे उऋण हो जाता।

दो०—गाधिसूनु कह हृदय हंसि ❀ मुनिहि हरिअरइ सूझ।
अजगव खंडेउ ऊख जिमि ❀ अजहुं न बूझ अबूझ ॥ ३०८ ॥

विश्वामित्रने अपने मनमें हँसकर कहा कि कि मुनिको हरा ही हरा सूझ रहा है। जिन्होंने वज्र जैसे शिवजीके धनुषको ईखके गन्नेकी भांति तोड़ डाला उन्हें अब भी नहीं समझा, अजान ही बने हुए हैं।

कहेउ लषन मुनि सील तुम्हारा ❀ को नहिं जान बिदित संसारा ॥
माता पितहि उरिन भये नीके ❀ गुररिन रहा सोच बड़ जी के ॥

लक्ष्मणजीने कहा कि हे मुनि, आपका शील कौन नहीं जानता? सारे संसारमें प्रसिद्ध है। माता-पितासे आप भलीभांति उऋण हो गये। गुरुका ऋण रह गया है उसीका हृदयमें बड़ा शोच है।

सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा ❀ दिन चलि गयेउ ब्याज बहु बाढ़ा ॥
अब आनिय ब्यवहरिया बोली ❀ तुरत देउं मैं थैली खोली ॥

वह मानों हमारे ही शिर निकाला है। दिन बीत गये; इससे बहुत व्याज बढ़ गया है। अब साहूकारको बुला लाइये। मैं थैली खोलकर तुरन्त दे दूंगा।

सुनि कटुबचन कुठारु सुधारा ❀ हाय हाय सब सभा पुकारा ॥
भृगुबर परसु देखावहु मोही ❀ बिप्र बिचारि बचउ नृपद्रोही ॥

कड़ुवे वचन सुनकर जब परशुरामने फरसा संभाला तब सब सभा हाय-हाय पुकारने लगी। लक्ष्मणजीने कहा कि हे भृगुवंशमें पूज्य, मुझे फरसा दिखलाते हो। हे राजाओंके शत्रु, मैं ब्राह्मण विचारकर बचा रहा हूं।

मिले न कबहुं सुभट रन गाढ़े ❀ द्विज देवता घरहिं के बाढ़े ॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे ❀ रघुपति सैनहिं लषन निवारे ॥

भारी युद्धमें कभी आपको अच्छे योद्धा नहीं मिले। ब्राह्मण और देवता घरमें ही बड़े होते हैं। यह सुनकर सब लोग पुकारने लगे कि यह अनुचित है। (फिर) श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको इशारेसे ही रोक दिया।

दो०—लषनउतर आहुतिसरिस ❀ भृगु-बर-कोप कृसानु।
बढ़त देखि जलसम बचन ❀ बोले रघु-कुल-भानु ॥३०६॥

आहुतिके समान लक्ष्मणजीके उत्तरसे परशुरामका आगके समान क्रोध बढ़ता हुआ देखकर रघुकुलके सूर्य श्रीरामचन्द्रजी जलके समान वचन बोले।

नाथ करहु बालक पर छोहू ❀ सूध दूधमुख करिय न कोहू ॥
जौं पै प्रभुप्रभाउ कछु जाना ❀ तौ कि बराबरि करइ अयाना ॥

हे नाथ, बालकपर दया कीजिये। यह बिलकुल दुधमुँहा है। क्रोध न कीजिये। यदि श्रीमान्के प्रभावको कुछ भी जानता होता तो यह नादान क्या बराबरी करता?

जौं लरिका कछु अचगरि करहीं ❀ गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं ॥
करिय कृपा सिसु सेवकु जानी ❀ तुम्ह सम सील धीर मुनि ग्यानी ॥

यदि लड़के कुछ दुष्टता करते हैं तो गुरु, माता और पिता मनमें प्रसन्न होते हैं। इसे अपना बचा और सेवक जानकर कृपा कीजिये। हे मुनि, आप समदर्शी, शीलवान, धीर और ज्ञानी हैं।

रामबचन सुनि कछुक जुड़ाने ❀ कहि कछु लषन बहुरि मुसुकाने ॥
हंसत देखि नखसिख रिस ब्यापी ❀ राम तोर भ्राता बड़ पापी ॥

(वे) श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर कुछ शीतल हुए। लक्ष्मणजी कुछ कहकर फिर मुस्कुराये। लक्ष्मणजीको हंसता देख नखशिख सारे शरीरमें क्रोध छा गया और वे कहने लगे कि राम, तेरा भाई बड़ा पापी है।

गौर सरीर स्याम मन माहीं ❀ काल-कूट-मुख पयमुख नाहीं ॥
सहज टेढ़ अनुहरइ न तोही ❀ नीच मीचसम देख न मोही ॥

इसका शरीर गोरा है, पर यह मनमें काला है। यह दुधमुंहा नहीं, विषमुँहा है। स्वभावसे ही टेढ़ा है, तेरा अनुसरण नहीं करता। नीच, मुझे मृत्युके समान नहीं देखता।

दो०—लषन कहेउ हँसि सुनहु मुनि ❀ क्रोध पाप कर मूल।
जेहि बस जन अनुचित करहिं ❀ चरहिं विस्वप्रतिकूल ॥३१०॥

लक्ष्मणजीने हँसकर कहा कि हे मुनि, सुनिये। पापका मूल क्रोध है, जिसके वशमें होकर लोग अनुचित कर्म कर डालते हैं और सारे संसारके विरुद्ध चलते हैं।

मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया ❀ परिहरि कोप करिय अब दाया ॥
टूट चाप नहिं जुरहिं रिसाने ❀ बैठिय होइहहिं पाय पिराने ॥

हे मुनिराज, मैं आपका सेवक हूं। क्रोध छोड़कर अब दया कीजिये। टूटा हुआ धनुष क्रोध करनेसे नहीं जुड़ जायगा। पैरोंमें पीड़ा होने लगी होगी, वैठ जाइये।

जौं अतिप्रिय तौ करिय उपाई ❀ जोरिय कोउ बड़ गुनी बोलाई ॥
बोलत लखनहिं जनक डेराहीं ❀ मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥

यदि यही अत्यन्त प्यारा हो तो उपाय करना चाहिये और किसी बड़े गुणीको बुलाकर जुड़वाना चाहिये। लक्ष्मणजीके बोलनेसे राजा जनकको डर लगता था। उन्होंने कहा, बस चुप रहो। अनुचित करना अच्छा नहीं।

थर थर कांपहिं पुर-नर-नारी ❀ छोट कुमारु खोट अति भारी ॥
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी ❀ रिस तन जरइ होइ बलहानी ॥

नगरके पुरुष और स्त्री—सब थर-थर कांपते और कहते थे कि छोटा राजकुमार बड़ा भारी खोटा है। लक्ष्मणजीके निडर वचन सुन-सुनकर परशुरामजीका शरीर क्रोधसे जलता और बल क्षीण होता था।

बोले रामहिं देइ निहोरा ❀ बचउं बिचारि बंधु लघु तोरा ॥
मन मलीन तनु सुंदर कैसे ❀ बिष-रस-भरा कनकघट जैसे ॥

श्रीरामचन्द्रजीपर अहसान लादकर परशुरामजी बोले कि तेरा छोटा भाई जानकर बचाता हूं। इसका मन मैला है, पर शरीर कैसा सुन्दर है; जैसे विषैले रससे भरा हुआ सोनेका घड़ा।

दो०—सुनि लछिमन बिहंसे बहुरि ❀ नयन तरेरे राम।
गुरु समीप गवने सकुचि ❀ परिहरि बानी बाम ॥ ३११ ॥

सुनकर लक्ष्मणजी फिर हँसे; तब श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें नेत्रोंसे डाँटा। सकुचाकर लक्ष्मणजी टेढ़ी बातें कहना छोड़कर गुरुके पास चले गये।

अतिबिनीत मृदु सीतल बानी ❀ बोले राम जोरि जुगपानी ॥
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना ❀ बालकबचन करिय नहिं काना ॥

श्रीरामचन्द्रजी दोनों हाथ जोड़कर अत्यन्त नम्र, कोमल, शीतल वचन बोले। हे नाथ, सुनिये। आप स्वभावसे ही चतुर हैं। बालककी बातोंपर कान नहीं देना चाहिये।

बररै बालक एक सुभाऊ ❀ इन्हहिं न बिदुष बिदूषहिं काऊ ॥
तेहि नाहीं कछु काज बिगारा ❀ अपराधी मैं नाथ तुम्हारा ॥

बर्रे और बालक, दोनोंका एक ही स्वभाव होता है। विद्वान् इन्हें कभी दोष नहीं देते। फिर उसने कुछ कार्य भी नहीं बिगाड़ा। हे नाथ, आपका अपराधी तो मैं हूं।

कृपा कोप बध बंध गोसाईं ❀ मो पर करिय दासकी नाईं ॥
कहिय बेगि जेहि बिधि रिसि जाई ❀ मुनिनायक सोइ करउं उपाई ॥

हे स्वामी, आप अपने सेवककी भांति मुझपर दया या क्रोध कीजिये। मुझे मारिये या बांधिये। हे मुनिश्रेष्ठ, आप जल्दी कहिये, जिस प्रकार आपका क्रोध जावे, वही उपाय करूं।

कह मुनि राम जाय रिस कैसे ❀ अजहुं अनुज तव चितव अनैसे ॥
एहि के कंठ कुठार न दीन्हा ❀ तौ मैं काह कोप करि कीन्हा ॥

मुनिने कहा कि हे राम, क्रोध कैसे जावे। अब भी तेरा छोटा भाई टेढ़ी निगाहसे देखता है। यदि इसके गलेपर कुठार नहीं मारा, तो क्रोध करके मैंने क्या किया?

दो०—गर्भ स्रवहिं अवनिपरवंनि ❀ सुनि कुठारगति घोर।
परसु अछत देखउं जियत ❀ बैरी भूपकिसोर ॥ ३१२ ॥

मेरे फरसेकी भयंकर गति सुनकर राजाओंकी रानियोंके गर्भ गिर जाते हैं। इस फरसेके रहते हुए भी अपने वैरी राजपुत्रको जीता देखता हूं।

बहइ न हाथु दहइ रिस छाती ❀ भा कुठार कुंठित नृपघाती ॥
भयउ बाम बिधि फिरेउ सुभाऊ ❀ मोरे हृदय कृपा कसि काऊ ॥

हाथ नहीं चलता। क्रोधसे छाती जलती है। राजाओंका काटनेवाला यह फरसा बेकाम हो गया है। दैव ही प्रतिकूल हो गया, जो मेरा स्वभाव पलट गया। किसीपर मेरे हृदयमें कृपा कैसी?

आजु दया दुख दुसह सहावा ❀ सुनि सौमित्रि बहुरि सिरु नावा ॥
बाउकृपा मूरति अनुकूला ❀ बोलत बचन झरत जनु फूला ॥

आज दयाने दुःसह दुःख सहाया है। यह सुनकर लक्ष्मणजीने फिर शिर नवाया और कहा कि जिस हवा (क्रोध) की आपपर कृपा है, उसीके अनुकूल मूर्ति (शरीर) भी है। वचन बोलते हुए मानों फूल झड़ते हैं।

जौं पै कृपा जरहिं मुनि गाता ❀ क्रोधु भये तनु राखु बिधाता ॥
देखु जनक हठि बालकु एहू ❀ कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू ॥

हे मुनि, यदि कृपासे ही शरीर जलता है तो क्रोध होनेपर तो शरीरका रखनेवाला दैव ही है। परशुरामने यह सुनकर कहा कि अरे जनक, देख। इस बालकको रोक। यह मूर्ख यमपुरीमें घर करना चाहता है।

बेगि करहु किन आँखिन ओटा ❀ देखत छोट खोट नृपढोटा ॥
बिहँसे लषन कहा मुनि पाहीं ❀ मूँदे आँखि कतहुँ कोउ नाहीं ॥

इसे जल्दी ही आंखकी आड़में क्यों नहीं करता ? राजाका पुत्र देखनेमें छोटा है, पर है खोटा। लक्ष्मणजी हँसे और मुनिसे कहा कि आंख बंद कर लेनेपर कहीं कोई नहीं है।

दो०—परसुराम तब राम प्रति ❀ बोले उर अतिक्रोधु ।
संभुसरासनु तोरि सठ ❀ करसि हमार प्रबोधु ॥ २१२ ॥

परशुरामजी तब हृदयमें, अत्यन्त क्रोध कर श्रीरामचन्द्रजीसे बोले कि अरे मूर्ख, शिवजीका धनुष तोड़कर मुझे समझाता है।

बंधु कहइ कटु संमत तोरे ❀ तूं छल बिनय करसि कर जोरे ॥
करु परितोषु मोर संग्रामा ❀ नाहिं त छाडु कहाउब रामा ॥

तेरी ही सलाहसे तेरा भाई कडुवे वचन बोलता है और तू छलसे हाथ जोड़कर विनती करता है। लड़ाईमें मुझे संतोष दिला, नहीं तो राम कहलाना छोड़।

छल तजि करहि समर सिवद्रोही ❀ बंधुसहित न त मारउँ तोही ॥
भृगुपति बकहिं कुठार उठाये ❀ मन मुसुकाहिं राम सिर नाये ॥

रे शिवजीके शत्रु, छल छोड़कर मुझसे युद्ध कर, नहीं तो मैं तुझे भाई समेत मारता हूं। फरसा उठाकर परशुरामजी बक रहे थे और शिर नीचा किये श्रीरामचन्द्रजी मनमें मुस्कुरा रहे थे।

गुनहु लषन कर हम पर रोषू ❀ कतहुँ सुधाइहु तें बड़ दोषू ॥
टेढ़ जानि बंदइ सब काहू ❀ बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू ॥

अपराध तो लक्ष्मणका है और मुझपर क्रोध कर रहे हो। कहीं कहीं सीधेपनसे भी बड़ी बुराई होती है। टेढ़े चन्द्रमाको राहु ग्रस्त नहीं बनाता और उसे टेढ़ा जानकर सब कोई नमस्कार करते हैं।

राम कहेउ रिस तजहु मुनीसा * कर कुठारु आगे यह सीसा ॥
जेहि रिस जाइ करिय सोइ स्वामी * मोहि जानिय आपन अनुगामी ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे मुनीश्वर, क्रोध छोड़िये। आपके हाथमें फरसा है और सामने यह शिर है। हे स्वामी, जिससे क्रोध जावे वही कीजिये। मुझे आप अपना अनुयायी जानिये।

दो०—प्रभु सेवकहि समरु कस * तजहु बिप्रबर रोसु।
बेष बिलोकि कहेसि कछु * बालकहू नहिं दोसु ॥ ३१४ ॥

स्वामी और सेवकमें युद्ध कैसा ! हे द्विजवर, क्रोध छोड़िये। आपका भेष देखकर उसने कुछ कह दिया। बालकका भी दोष नहीं है।

देखि कुठारु-बान-धनु-धारी * भइ लरिकहि रिसु बीरु बिचारी ॥
नाम जान पै तुम्हहि न चीन्हा * बंससुभायं उतरु तेइ दीन्हा ॥

आपको फरसा, धनुष और बाण धारण किये हुये देख वीर समझकर लड़केको भी क्रोध हो आया। आपका नाम जानता था, पर आपको पहचानता न था। अपने वंशके स्वभावसे उसने आपको उत्तर दिया।

जौं तुम्ह अवतेहु मुनि की नाईं * पदरज सिर सिसु धरत गोसाईं ॥
छमहु चूक अनजानत केरी * चहिय बिप्रउर कृपा घनेरी ॥

यदि आप मुनिकी भांति आते तो हे स्वामी, आपके चरणोंकी रजको बालक शिरपर रखता। अनजानमें हुई भूलको क्षमा कीजिये। ब्राह्मणके हृदयमें बहुत अधिक कृपा होनी चाहिये।

हमहि तुम्हहि सरबरि कसि नाथा * कहहु न कहां चरन कहं माथा ॥
राम मात्र लघु नामु हमारा * परसुसहित बड़ नामु तुम्हारा ॥

हे नाथ, हमारी और आपकी बराबरी कैसी ? कहिये न, कहां चरण और कहां मस्तक ! मेरा छोटा नाम केवल 'राम' है और 'परसु' सहित आपका बड़ा नाम (परशुराम) है।

देव एकगुनु धनुष हमारे * नवगुन परम पुनीत तुम्हारे ॥
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे * छमहु बिप्र अपराध हमारे ॥

हे देव, हमारा एक गुण धनुष है, और आपके हैं अत्यन्त पवित्र नौ गुण। हम आपसे सब प्रकार हारे हैं। हे ब्राह्मण, हमारे अपराध क्षमा कीजिये।

दो०—बार बार मुनि बिप्रबर ❀ कहा राम सन राम ।
बोले भृगुपति सरुष हँसि ❀ तहूँ बंधुसम बाम ॥ २१५ ॥

परशुरामजीसे श्रीरामचन्द्रजीने बार-बार 'मुनि' 'विप्रवर' कहा, तब परशुरामजी क्रोधसे हँसकर बोले कि तू भी भाईके समान टेढ़ा है।

निपटहि द्विज करि जानहि मोही ❀ मैं जस बिप्र सुनावउँ तोही ॥
चाप स्रुवा सर आहुति जानू ❀ कोपु मोर अतिघोर कृसानू ॥

कोरा ब्राह्मण करके ही मुझे जानता है। मैं जैसा ब्राह्मण हूँ, तुझे सुनाता हूँ। धनुषको स्रुवा और बाणको आहुति जान। मेरा अत्यन्त भयङ्कर क्रोध अग्नि है।

समिध सेन चतुरंग सुहाई ❀ महामहीप भये पसु आई ॥
मैं यहि परसु काटि बलि दीन्हे ❀ समरजग्य जग कोटिक कीन्हे ॥

सुन्दर चतुरङ्गिनी सेना समिधा है। बड़े बड़े राजा लोग आकर बलिपशु हुए। उनको मैंने इसी फरसेसे काटकर बलि-दान किया है और ऐसे संग्रामरूपी यज्ञ संसारमें करोड़ों किये हैं।

मोर प्रभाव बिदित नहिं तोरे ❀ बोलसि निदरि बिप्र के भोरे ॥
भंजेउ चापु दापु बड़ बाढ़ा ❀ अहमिति मनहुँ जीति जगु ठाढ़ा ॥

तुझे मेरा प्रभाव नहीं मालूम है, इसीसे तू ब्राह्मणके भरोसे अपमान करके बोलता है। शिवजीका धनुष तोड़ लिया, इससे बड़ा घमण्ड बढ़ गया है। ऐसा अहंकार है, मानों संसारको जीतकर खड़ा हो।

राम कहा मुनि कहहु बिचारी ❀ रिस अति बड़ि लघु चूक हमारी ॥
छुवतहि टूट पिनाक पुराना ❀ मैं केहि हेतु करउँ अभिमाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे मुनि, विचारकर कहिये। हमारी चूक तो बहुत थोड़ी है, पर आप क्रोध बहुत अधिक कर रहे हैं। धनुष पुराना था। छूते ही टूट गया। मैं किस लिये अभिमान करूँ ?

दो०—जौं हम निदरहिं बिप्र बदि ❀ सत्य सुनहु भृगुनाथ ।
तौ अस को जग सुभट जेहि ❀ भयबस नावहिं माथ ॥ २१६ ॥

हे भृगुनाथ, सत्य ही सुनिये। यदि ब्राह्मण कहकर हम आपका निरादर करते हैं तो संसारमें ऐसा कौन योद्धा है, जिसको हम डरकर शिर झुकावें ?

देव दनुज भूपति भट नाना ❀ समबल अधिक होउ बलवाना ॥
जौं रन हमहिं प्रचारइ कोऊ ❀ लरहिं सुखेन काल किन होऊ ॥

देवता, दैत्य, राजा और अनेक योद्धा, चाहे वे बलमें बराबर हों या अधिक बलवान् हों, कोई यदि हमें युद्धके लिये ललकारे, तो हम उसके साथ सुखसे लड़ें—फिर वह काल ही क्यों न हो।

छत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुलकलंकु तेहिं पावँर आना॥
कहउँ सुभाउ न कुलहि प्रसंसी। कालहु डरहिं न रन रघुबंसी॥

क्षत्रियका शरीर धारण कर जो युद्धसे डरे, उसे नीच और कुलका कलङ्क जानना चाहिये। मैं स्वभावसे कहता हूँ, कुलकी प्रशंसा करके नहीं, कि रघुके वंशवाले संग्राममें कालसे भी नहीं डरते।

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई॥
सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के। उघरे पटल परसुधर मति के॥

परन्तु ब्राह्मणवंशकी प्रभुता ऐसी है कि जो आपसे डरे, वह भयरहित हो जाय। श्रीरामचन्द्रजीके गूढ़ मीठे वचन सुनकर परशुरामजीकी बुद्धिके पर्दे खुल गये।

राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू॥
देत चापु आपुहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय भयऊ॥

उन्होंने कहा कि हे राम, यदि आप लक्ष्मीपति हैं, तो हाथमें यह धनुष लीजिये और खींचिये, जिससे मेरा संदेह मिट जाय। श्रीरामचन्द्रजीके हाथमें देते ही धनुष अपने आप चला गया, तब परशुरामजीके मनको बड़ा विस्मय हुआ।

दो०—जाना राम प्रभाउ तब पुलक प्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले बचन हृदय न प्रेमु अमात॥२१७॥

तब उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव जाना। उनका शरीर प्रसन्न हो गया और पुलकावली हो गयी। उनके हृदयमें प्रेम नहीं समाता। वे हाथ जोड़कर ये वचन बोले।

जय रघुबंस बनज बन भानू। गहन दनुज कुल दहन कृसानू॥
जय सुर बिप्र धेनु हित कारी। जय मद मोह कोह भ्रम हारी॥

हे रघुवंशरूपी कमलवनके सूर्य, हे घोर राक्षसवंशको जलानेके लिये अग्निरूप, आपकी जय हो। हे देवता, ब्राह्मण और गायके हितकारी, आपकी जय हो। हे मद, मोह, क्रोध और भ्रमको दूरकर देनेवाले आपकी जय हो।

बिनय सील करुना गुन सागर। जयति बचन रचना अति नागर॥
सेवक सुखद सुभग सब अंगा। जय सरीर छबि कोटि अनंगा॥

हे नम्रता, शील, दया और गुणोंके समूह, हे वचनोंकी रचनामें अत्यंत चतुर, आपकी जय हो। आपके सब अङ्ग सुन्दर और सेवकोंको सुख देनेवाले हैं। आपके शरीरकी शोभा करोड़ कामदेवोंके समान है। आपकी जय हो।

करउँ काह मुख एक प्रसंसा ❀ जय महेस-मन-मानस-हंसा ॥
अनुचित बचन कहेउँ अग्याता ❀ छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता ॥

एक मुखसे मैं आपकी क्या प्रशंसा करूं? हे शिवजीके मनरूपी मानसरोवरके हंस, आपकी जय हो। मैंने बिना जाने अनुचित वचन कहे हैं। आप दोनों भाई क्षमाके धाम हैं, मुझे क्षमा कीजिये।

कहि जय जय जय रघु-कुल-केतू ❀ भृगुपति गये बनहिं तप हेतू ॥
अपभय सकल महीप डराने ❀ जहँ तहँ कायर गवहिं पराने ॥

हे रघुवंशकी विजय-पताका श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो, जय हो, जय हो,—ऐसा कहकर परशुरामजी तप करनेके लिये वनमें चले गये। सब राजा लोग अपने ही डरसे डर गये और वे सब कायर जहां-तहां अपने-अपने घरको भाग गये।

दो०—देवन दीन्ही दुन्दुभी ❀ प्रभु पर बरषहिं फूल।
हरषे पुर-नर-नारि सब ❀ मिटा मोहमय सूल ॥ ३१८ ॥

देवता नगारे बजाने लगे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीपर वे फूल बरसाते हैं। जनकपुरके नर और नारी, सब प्रसन्न हुए। मोहके कारण उन्हें जो पीड़ा हो रही थी वह मिट गयी।

(श्रीजानकी मंगल)

अति गहगहे बाजने बाजे ❀ सबहिं मनोहर मंगल साजे ॥
जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनी ❀ करहिं गान कल कोकिलबयनी ॥

अत्यन्त गंभीर ध्वनिसे बाजे बजने लगे। सबने सुन्दर मङ्गल-साज सजाये। सुन्दर मुख और नेत्रोंवाली स्त्रियोंके बहुतसे समूह मिलकर कोयलके समान मीठे स्वरसे गान करने लगे।

सुखु बिदेह कर बरनि न जाई ❀ जनमदरिद्र मनहुँ निधि पाई ॥
बिगतत्रास भइ सीय सुखारी ❀ जनु बिधु उदय चकोरकुमारी ॥

राजा जनकका सुख वर्णन नहीं किया जा सकता, मानों किसी जन्मके दरिद्रने खजाना पा लिया हो। सीताजीका डर दूर हुआ और वे सुखी हुईं, मानों चन्द्रमाके उदय होनेपर चकोरकी बच्ची प्रसन्न हुई हो।

जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा ❀ प्रभुप्रसाद धनु भंजेउ रामा ॥
मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाईं ❀ अब जो उचित सो कहिय गोसाईं ॥

राजा जनकने विश्वामित्रको प्रणाम किया और कहा कि आपके ही प्रसादसे श्रीरामचन्द्रजीने धनुषको तोड़ा। मुझे दोनों भाइयोंने कृतकृत्य कर दिया। हे स्वामी, अब जो उचित हो, वह कहिये।

कह मुनि सुनु नरनाथ प्रबीना ❀ रहा बिबाह चापआधीना ॥
टूटतही धनु भयेउ बिबाहू ❀ सुर नर नाग बिदित सब काहू ॥

मुनिने कहा कि हे चतुर राजा, सुनो। विवाह धनुषके अधीन था। धनुष टूटते ही विवाह हो गया—यह देवता, मनुष्य और नाग—सबको मालूम है।

दो०—तदपि जाइ तुम्ह करहु अब ❀ जथा - बंस - ब्यवहारु।
बूझि बिप्र कुल बृद्ध गुरु ❀ बेदबिदित आचारु ॥ ३१६ ॥

फिर भी जैसी वंशकी रीति हो, वैसा वेदानुकूल आचार अब तुम जाकर ब्राह्मणों, वंशके बूढ़े लोगों और गुरुसे पूछकर करो।

दूत अवध पुर पठवहु जाई ❀ आनहिं नृप दसरथहि बोलाई ॥
मुदित राउ कहि भलेहि कृपाला ❀ पठये दूत बोलि तेहि काला ॥

जाकर अयोध्याको दूत भेजो जो राजा दशरथको बुला लावें। प्रसन्न होकर राजा जनकने कहा कि हे कृपालु, बहुत अच्छा, और उसी समय दूतोंको बुलाकर भेज दिया।

बहुरि महाजन सकल बोलाये ❀ आइ सबन्हि सादर सिरु नाये ॥
हाट बाट मंदिर सुरबासा ❀ नगरु सवाँरहु चारिहु पासा ॥

फिर सब महाजनोंको बुलवाया। आकर सबने आदरपूर्वक शिर नवाया। राजा जनकने उनसे कहा कि बाजार, रास्ता, घर और देवमन्दिर—नगरको चारों ओरसे सजाओ।

हरषि चले निज निज गृह आये ❀ पुनि परिचारक बोलि पठाये ॥
रचहु बिचित्र बितान बनाई ❀ सिर धरि बचन चले सचुपाई ॥

वे सब प्रसन्न होकर चले और अपने-अपने घर आये। फिर राजा जनकने अपने सेवकोंको बुला भेजा और आज्ञा दी कि विचित्र मण्डप बनाकर सजाओ। वे सब मौनपूर्वक आज्ञा शिरोधार्य कर चले।

पठये बोलि गुनी तिन्ह नाना ❀ जे बितान-बिधि-कुसल सुजाना ॥
बिधिहि बंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा ❀ बिरचे कनककदलि के खंभा ॥

इन सेवकोंने बहुतसे गुणियोंको बुला भेजा जो मण्डप बनानेकी विधिमें कुशल और सुजान थे। ब्रह्माकी वंदनाकर गुणियोंने कार्य आरम्भ किया और सोनेके केलोंके खंभे बनाये।

दो०—हरितमनिन्ह के पत्र फल ❀ पदुमराग के फूल।
रचना देखि बिचित्र अति ❀ मन बिरंचि कर भूल ॥३२०॥

उनमें हरे रङ्गकी मणियोंके पत्ते और फल तथा पद्मरागमणियोंके फूल लगाये। अत्यंत विचित्र रचनाको देखकर ब्रह्माका भी मन भूल जाता था।

बेनु हरित-मनि-मय सब कीन्हे ❀ सरल सपरब परहिं नहिं चीन्हे ॥
कनककलित अहिबेलि बनाई ❀ लखि नहिं परइ सपरन सुहाई ॥

हरे रङ्गकी मणियोंके सब बाँस सीधे और पत्तोंसमेत बनाये। वे पहचान नहीं पड़ते थे। सोनेकी सुन्दर नाग-बेल पत्तोंसमेत बनायी, जो बड़ी सुन्दर लगती थी और पहचानी नहीं जाती थी।

तेहिके रचि पचि बंध बनाये ❀ बिच बिच मुकुता दाम सुहाये ॥
मानिक मरकत कुलिस पिरोजा ❀ चीरि कोरि पचि रचे सरोजा ॥

इस बेलके बहुत ही सुन्दर बन्द बनाये। बीच-बीचमें मोतियोंकी मालाएँ शोभा पा रही थीं। माणिक, मरकतमणि, वज्रमणि और पिरोजाओंको चीरकर, खोदकर और पच्चीकारी कर कमलोंको बनाया।

किये भृंग बहुरंग बिहंगा ❀ गुंजहिं कूजहिं पवनप्रसंगा ॥
सुरप्रतिमा खंभन्हि गढ़ि काढ़ी ❀ मंगलद्रब्य लिये सब ठाढ़ी ॥
चौके भाँति अनेक पुराईं ❀ सिंधुर - मनि - मय सहज सुहाई ॥

भौंरे और अनेक रङ्गोंके पक्षी बनाये, जो हवा लगनेसे गुंजार करते और चहकते थे। खंभोंमें गढ़कर देवताओंकी मूर्तियां बनायीं। ये सब मांगलिक वस्तुओंको लिये खड़ी हुई थीं। अनेक भांतिके चौके पुरवाये, जो सिन्दूर और मणियोंसे बने हुए स्वतः सुन्दर थे।

दो०—सौरभपल्लव सुभग सुठि ❀ किये नील - मनि - कोरि।
हेमबौर मरकत घवरि ❀ लसत पाटमय डोरि ॥ ३२१ ॥

नीलमणिकी कोरोंके सुन्दर और सुहावने आमके पत्ते बनाये, सोनेका बौर लगाया, मरकतमणिके गुच्छे बनाये, जिनमें रेशमकी डोर शोभित हो रही थी।

रचे रुचिर बर बंदनवारे ❀ मनहु मनोभव फन्द सवांरे ॥
मंगल कलस अनेक बनाये ❀ ध्वजपताक पट चंवर सुहाये ॥

सुन्दर श्रेष्ठ बन्दनवार बनाये, मानों कामदेवने अपने फंदे संभाले हों। अनेक मङ्गल कलश बनाये। ध्वजा, पताकाएँ, वस्त्र और चँवर शोभित थे।

दीप मनोहर मनिमय नाना ❀ जाइ न बरनि बिचित्र बिताना ॥
जेहिं मंडप दुलहिनि बैदेही ❀ सो बरनइ असि मति कबि केही ॥

अनेक प्रकारकी मणियोंके सुन्दर दीपक बनाये। विचित्र मण्डपका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस मण्डपमें सीताजी दुलहिन हों; उसका वर्णन कर सके, ऐसी बुद्धि किस कविकी है ?

दूलहु रामु रूप-गुन-सागर ❀ सो बितानु तिहुं लोक उजागर ॥
जनकभवन के सोभा जैसी ❀ गृह गृह प्रति पुर देखिय तैसी ॥

जिस मण्डपमें रूप और गुणके समुद्र श्रीरामचन्द्रजी दूलह थे वह तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध है। राजा जनकके घरकी जैसी शोभा थी वैसी ही नगरके प्रत्येक घरमें दिखलाई पड़ती थी।

जेइं तिरहुति तेहि समय निहारी ❀ तेहि लघु लाग भुवनदस चारी ॥
जो संपदा नीच गृह सोहा ❀ सो बिलोकि सुरनायकु मोहा ॥

जिसने तिरहुतिको उस समय देखा उसे चौदहों लोक तुच्छ प्रतीत होते थे। वहां नीचके घर भी जो संपदा शोभित थी उसे देखकर देवताओंके राजा इन्द्र भी मोहित होते थे।

दो०—बसइ नगर जेहि लच्छि करि ❀ कपट नारि बर बेषु।
तेहि पुर कै सोभा कहत ❀ सकुचहिं सारद सेषु ॥ ३२२ ॥

जिस नगरमें कपटसे स्त्रीका सुन्दर भेष धारणकर लक्ष्मीजी रहती हैं, उस नगरकी शोभा कहते शारदा और शेष भी संकोच करते हैं।

पहुंचे दूत रामपुर पावन ❀ हरषे नगरु बिलोकि सुहावन ॥
भूपद्वार तिन्ह खबरि जनाई ❀ दसरथ नृप सुनि लिये बोलाई ॥

दूत श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र नगर अयोध्यामें पहुंचे और सुन्दर नगर देखकर प्रसन्न हुए। राजद्वारमें उन्होंने समाचार बतलाया, जिसे सुनकर राजा दशरथने उन्हें बुला लिया।

करि प्रनामु तिन्ह पाती दीन्ही ❀ मुदित महीप आपु उठि लीन्ही ॥
बारि बिलोचन बांचत पाती ❀ पुलक गात आई भरि छाती ॥

प्रणाम करके उन्होंने चिट्ठी दी, जिसे प्रसन्न होकर राजाने स्वयं उठकर लिया। पत्र पढ़ते ही नेत्रोंमें जल छा गया, शरीर पुलकायमान हो गया और छाती भर आयी।

राम लषनु उर कर बर चीठी ❀ रहि गये कहत न खाटी मीठी ॥
पुनि धरि धीर पत्रिका बांची ❀ हरषी सभा बात सुनि सांची ॥

हृदयमें श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी हैं और हाथमें वह श्रेष्ठ चिट्ठी है। वे चुप रह गये। न अच्छी बतलाते हैं और न बुरी। फिर धीरज रखकर चिट्ठीको पढ़ा और सब बात सुनकर सब सभाजन प्रसन्न हुए।

खेलत रहे तहां सुधि पाई ❀ आये भरत सहित हित भाई ॥
पूछत अतिसनेह सकुचाई ❀ तात कहां तें पाती आई ॥

जहाँ खेल रहे थे वहां संवाद पाया। वहींसे भाई भरत प्रेमपूर्वक आये। सकुचाकर अत्यन्त प्रेमसे वे पूछने लगे कि हे पिताजी, चिट्ठी कहांसे आयी है ?

दो०—कुसल प्रान प्रिय बंधु दोउ ❀ अहहिं कहहु केहि देस।
सुनि सनेहसाने बचन ❀ बांचो बहुरि नरेस ॥ ३२३ ॥

कहिये, प्राणों जैसे प्यारे दोनों भाई कुशलतापूर्वक किस देशमें हैं ? प्रेमभरे वचन सुनकर राजाने चिट्ठी फिर पढ़ी।

सुनि पाती पुलके दोउ भ्राता ❀ अधिक सनेह समात न गाता ॥
प्रीति पुनीत भरत कै देखी ❀ सकलसभा सुख लहेउ बिसेखी ॥

चिट्ठी सुनकर दोनों भाई पुलकित हो गये। अत्यधिक प्रेम शरीरमें न समाता था। भरतजीकी पवित्र प्रीति देखकर सभाके सब लोगोंने विशेष सुख पाया।

तब नृप दूत निकट बैठारे ❀ मधुर मनोहर बचन उचारे ॥
भैआ कहहु कुसल दोउ बारे ❀ तुम नीके निज नयन निहारे ॥

तब राजाने दूतोंको पास बिठलाया और सुन्दर मीठे वचन बोले, हे भैया, कहो। दोनों बच्चे कुशलसे तो हैं ? तुमने अपनी आंखों उन्हें सकुशल देखा है ?

स्यामल गौर धरे धनुभाथा ❀ बय किसोर कौसिकमुनि साथा ॥
पहिचानहु तुम्ह कहहु सुभाऊ ❀ प्रेमबिबस पुनि पुनि कह राऊ ॥

वे सांवले और गोरे हैं। धनुष और तरकस धारण किये हुए हैं। किशोर अवस्था है और विश्वामित्र मुनि साथमें हैं। क्या तुम उन्हें पहचानते हो ? यदि पहचानते हो तो उनका स्वभाव बतलाओ। राजा दशरथ प्रेमसे विवश होकर बार-बार कहते थे।

जा दिन तें मुनि गये लेवाई ❀ तब तें आजु सांचि सुधि पाई ॥
कहहु बिदेह कवन बिधि जाने ❀ सुनि प्रिय बचन दूत मुसुकाने ॥

जिस दिनसे मुनि लिवाकर ले गये हैं उस दिनसे आज सच्ची सुध पायी है। यह कहो कि राजा जनकने उन्हें किस प्रकार जाना। राजा दशरथके ये प्यारे वचन सुनकर दूत मुस्कुराये।

दो०—सुनहु मही-पति-मुकुट-मनि ❀ तुम्ह सम धन्य न कोउ।
राम लषन जिन्ह के तनय ❀ बिस्वबिभूषन दोउ ॥३२४॥

हे राजाओंके शिरोमणि, सुनिये। आपके समान धन्य कोई नहीं है, कि जिनके पुत्र श्रीरामजी और लक्ष्मणजी—दोनों संसारके भूषण हैं।

पूछन जोग न तनय तुम्हारे ❀ पुरुषसिंह तिहु पुर उँजियारे ॥
जिन्ह के जस प्रताप के आगे ❀ ससि मलीन रबि सीतल लागे ॥

आपके पुत्र पूछनेयोग्य नहीं हैं। वे पुरुषोंमें सिंहके समान तीनों लोकोंमें प्रकाश करनेवाले हैं। जिनके यश और प्रतापके आगे चन्द्रमा मलीन और सूर्य शीतल प्रतीत होता है।

तिन्ह कहं कहिय नाथ किमि चीन्हे ❀ देखिय रबि कि दीप कर लीन्हे ॥
सीयस्वयंबर भूप अनेका ❀ सिमिटे सुभट एक तें एका ॥

उनको, हे नाथ,आप कहते हैं कि कैसे पहचाना? सूर्य क्या हाथमें दीपक लेकर देखा जाता है? सीताजीके स्वयंवरमें एक-से-एक बढ़कर अनेक राजा इकट्ठे हुए थे।

संभुसरासन काहु न टारा ❀ हारे सकल बीर बरियारा ॥
तीन लोक महं जे भट मानी ❀ सब कै सकति संभुधनु भानी ॥

शिवजीका धनुष किसीसे भी न उठा। सब वीर और बलवान हार गये। तीनों लोकोंमें जो अभिमानी योद्धा थे, उन सबकी शक्ति शिवजीके धनुषने भंजन कर दी।

सकइ उठाइ सरासुर मेरू ❀ सोउ हिय हारि गयेउ करि फेरू ॥
जेइ कौतुक सिवसैलु उठावा ❀ सोउ तेहि सभा पराभव पावा ॥

जो देवता और राक्षस मेरु पर्वतको भी उठा सकते हैं वे भी हृदयमें हारकर फेरी देकर चले गये। जिस रावणने खेलमें शिवजीका पर्वत उठा लिया था, उसने भी उस सभामें हार पायी।

दो०—तहाँ राम रघु-बंस-मनि ❀ सुनिय महा महिपाल।
भंजेउ चाप प्रयास बिनु ❀ जिमि गज पंकजनाल ॥३२५॥

हे महाराज, सुनिये। वहां रघुकुलमणि श्रीरामचन्द्रजीने धनुषको परिश्रमके बिना ही तोड़ दिया, जैसे हाथी कमलकी डंडी तोड़ देता है।

सुनि सरोष भृगुनायक आये ❀ बहुत भाँति तिन्ह आँखि देखाये ॥
देखि रामबलु निजधनु दीन्हा ❀ करि बहु बिनय गवन बन कीन्हा ॥

यह सुनते ही क्रोधित होकर परशुरामजी आये। उन्होंने अनेक प्रकारसे आँखें दिखलायीं। अन्तमें श्रीरामचंद्रजीका बल देखकर उन्होंने अपना धनुष दे दिया और बहुत विनती कर वे वनको चले गये।

राजन रामु अतुलबल जैसे ❀ तेजनिधान लषनु पुनि तैसे ॥
कंपहिं भूप बिलोकत जाके ❀ जिमि गज हरिकिसोर के ताके ॥

हे राजा, श्रीरामचन्द्रजी जैसे अपार बलवान हैं, वैसे ही लक्ष्मणजी तेजके धाम हैं। जिनके देखते ही राजा लोग कांपते हैं; जैसे सिंहके बच्चेके देखनेपर हाथी।

देव देखि तव बालक दोऊ ❀ अब न आँखि तर आवत कोऊ ॥
दूत-बचन-रचना प्रिय लागी ❀ प्रेम - प्रताप - बीर - रस - पागी ॥

हे देव, आपके दोनों बालक देखकर अब कोई आंखों तले नहीं आता। राजा दशरथको दूतोंकी प्रेम, प्रताप, वीरता और रससे सनी हुई वचन-रचना बहुत प्यारी प्रतीत हुई।

सभासमेत राउ अनुरागे ❀ दूतन्ह देन निछावरि लागे ॥
कहि अनीति ते मूंदहिं काना ❀ धरमु बिचारि सबहिं सुखु माना ॥

सभासमेत राजा स्नेहमें भर गये और दूतोंको न्योछावर देने लगे। ऐसा नीति-विरुद्ध है, यह कहकर दूतोंने अपने कानोंको बंद कर लिया। इस कथनको धर्मानुकूल जानकर सबने सुख माना।

दो०—तब उठि भूप बसिष्ठ कहं ❀ दीन्हि पत्रिका जाइ।
कथा सुनाई गुरहि सब ❀ सादर दूत बोलाइ ॥ ३२६ ॥

तब उठकर राजाने जाकर वशिष्ठ मुनिको चिट्ठी दी और आदरपूर्वक दूतोंको बुलाकर गुरुको सब कथा सुनायी।

सुनि बोले गुरु अति सुख पाई ❀ पुन्यपुरुष कहं महि सुख छाई ॥
जिमि सरिता सागर महं जाहीं ❀ जद्यपि ताहि कामना नाहीं ॥

सुनकर गुरु अत्यन्त सुख पाकर बोले कि धर्मात्मा पुरुषोंके लिये यह पृथिवी सुखसे छायी हुई है। यद्यपि समुद्रको कामना नहीं है, तथापि जैसे नदियां उसमें जाती हैं,

तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाये ❀ धरमसील पहिं जाहिं सुभाये ॥
तुम्ह गुरु-बिप्र - धेनु - सुर - सेवी ❀ तसि पुनीत कौसल्या देवी ॥

वैसे ही सुख और संपदा विना बुलाये स्वभावसे ही धर्मात्माके पास चली जाती हैं। तुम गुरु, ब्राह्मण, गो और देवताओंकी सेवा करनेवाले ऐसी ही पवित्र कौशल्या देवी हैं।

सुकृती तुम्ह समान जग माहीं ❀ भयउ न है कोउ होनेउ नाहीं ॥
तुम्ह तें अधिक पुन्य बड़ का के ❀ राजन राम सरिस सुत जा के ॥

तुम्हारे समान पुण्यात्मा मनुष्य संसारमें नहीं हुआ, न कोई है, और न होनेका। हे राजा, तुमसे अधिक और किसके भारी पुण्य हैं जिनके पुत्र श्रीरामचन्द्रजी जैसे हैं।

बीर बिनीत धरम - ब्रत - धारी ❀ गुनसागर बर बालक चारी ॥
तुम्ह कहं सर्बकाल कल्याना ❀ सजहु बरात बजाइ निसाना ॥

चारों श्रेष्ठ बालक वीर, नम्र, धर्मकी प्रतिज्ञा धारण करनेवाले और गुणोंके समुद्र हैं। तुम्हारे लिये सदा ही कल्याण है। अब डंका बजाकर बारात सजाओ।

दो०—चलहु बेगि सुनि गुरुबचन ❀ भलेहि नाथ सिरु नाइ।
भूपति गवने भवन तब ❀ दूतन्ह बास देवाइ ॥३२७॥

जल्दी चलिये। गुरुजीका यह वचन सुनकर शिर नवाकर राजाने कहा कि हे स्वामी, बहुत अच्छा। फिर दूतोंके ठहरनेका प्रबंध कराकर राजा घर गये।

राजा सब रनिवास बोलाई ❀ जनकपत्रिका बाँचि सुनाई ॥
सुनि संदेस सकल हरषानी ❀ अपरकथा सब भूप बखानी ॥

राजाने सब रनिवासको बुलाया और राजा जनककी चिट्ठी पढ़ सुनायी। सन्देश सुनकर सब रानियां प्रसन्न हुईं। राजाने और सब कथा भी वर्णन की।

प्रेमप्रफुल्लित राजहिं रानी ❀ मनहुं सिखिनि सुनि बारिदबानी ॥
मुदित असीस देहिं गुरुनारी ❀ अति - आनंद - मगन महतारी ॥

प्रेमसे प्रसन्न होकर रानियां विराज रही थीं; मानों मेघकी गर्जना सुनकर मोरनी प्रसन्न हुई हो। गुरु (वृद्ध) स्त्रियां प्रसन्न होकर आशीर्वाद देती थीं और माताएँ बड़े आनन्दमें मग्न थीं।

लेहिं परसपर अतिप्रिय पाती ❀ हृदय लगाइ जुड़ावहिं छाती ॥
राम लषन कै कीरति करनी ❀ बारहिं बार भूपबर बरनी ॥

वे अत्यन्त प्यारी पत्रीको परस्पर लेतीं और हृदयसे लगाकर छाती शीतल करती थीं। श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीका यश और कार्य श्रेष्ठ राजाने बार-बार वर्णन किया।

मुनिप्रसाद कहि द्वार सिधाये ❀ रानिन्ह तब महिदेव बोलाये ॥
दिये दान आनंदसमेता ❀ चले बिप्रबर आसिष देता ॥

यह सब मुनिका प्रसाद है—यह कहकर राजा द्वारपर चले गये, तब रानियोंने ब्राह्मणोंको बुलाया और आनन्दसमेत अनेक प्रकारके दान दिये। श्रेष्ठ ब्राह्मण आशीर्वाद देते हुए चले।

सो०—जाचक लिये हँकारि ❀ दीन्हि निछावरि कोटि बिधि।
चिरजीवहु सुत चारि ❀ चक्रवर्ति दसरत्थ के ॥३२८॥

मंगतोंको बुला लिया और उन्हें करोड़ों तरहकी वस्तुएं न्योछावरमें दीं। वे कहने लगे कि चक्रवर्ती राजा दशरथके चारों पुत्र चिरजिव हों।

कहत चले पहिरे पट नाना ❀ हरषि हने गहगहे निसाना ॥
समाचार सब लोगन्ह पाये ❀ लागे घर घर होन बधाये ॥

इस प्रकार कहते वे अनेक प्रकारके कपड़े पहने हुए गये और प्रसन्न होकर खूब जोरसे बाजे बजाने लगे। सब लोगोंने समाचार पाये और घर-घर बधाइयां होने लगीं।

भुवन चारि दस भयउ उछाहू ❀ जनक-सुता-रघुबीर-बिआहू ॥
सुनि सुभ कथा लोग अनुरागे ❀ मग गृह गली सवाँरन लागे ॥

राजा जनककी पुत्री सीता और श्रीरामचन्द्रजीके विवाहके कारण चौदहों भुवनोंमें आनन्द छा गया। सब लोग वह शुभ समाचार सुनकर प्रेममें भर गये और मार्ग, घर और गलियां सजाने लगे।

जद्यपि अवध सदैव सुहावनि ❀ रामपुरी मंगलमय पावनि ॥
तदपि प्रीति कै रीति सुहाई ❀ मंगलरचना रची बनाई ॥

यद्यपि अयोध्या सदा ही सुन्दर है; क्योंकि वह राम-पुरी, मङ्गलमय और पवित्र है, तथापि प्रीतिकी सुन्दर रीतिके अनुसार सबने सजाकर मङ्गल रचना बनायी।

ध्वज पताक पट चामर चारू ❀ छावा परमबिचित्र बजारू ॥
कनककलस तोरन मनिजाला ❀ हरद दूब दधि अच्छत माला ॥

ध्वजाओं, पताकाओं, वस्त्रों और सुन्दर चँवरोंसे बाजारको बड़े विचित्र ढंगसे छा दिया। सोनेके कलश, तोरण, मणियोंके जाल, हल्दी, दूब, दही, अक्षत और माल—सब रखे।

दो०—मंगलमय निज-निज-भवन ❀ लोगन्ह रचे बनाइ।
बीथी सीचीं चतुरसम ❀ चौकें चारु पुराइ ॥३२९॥

सब लोगोंने अपने-अपने घरोंको सजाकर मङ्गलमय बना दिया और चतुरसम (बराबर मिले हुए चार पदार्थों) से गलियोंमें छिड़काव कर सुन्दर चौक पुराये।

जहं तहं जूथ जूथ मिलि भामिनि ॥ सजि नवसप्त सकल-दुति-दामिनि ॥
बिधुबदनी मृग-सावक-लोचनि ॥ निजसरूप रति-मान-बिमोचनि ॥

चन्द्रमुखी, हिरनके बच्चे जैसे नेत्रोंवाली, अपने स्वरूपसे रतिके अभिमानको भी दूरकर देनेवाली और बिजलीकी भांति चमकीली सर्व स्त्रियां सोलहों शृंगार कर और जहां-तहां टोलियोंकी टोलियां बनाकर—।

गावहिं मंगल मंजुल बानी ॥ सुनि कलरव कलकंठ लजानी ॥
भूपभवन किमि जाइ बखाना ॥ बिस्वबिमोहन रचेउ बिताना ॥

सुन्दर वाणीसे मङ्गल गीत गाने लगीं, जिनका मधुर स्वर सुनकर कोयल लज्जित हो गयी। राजभवनका वर्णन कैसे किया जा सके, जहां संसारको मोहित करनेवाला मण्डप बनाया गया हो !

मंगलद्रव्य मनोहर नाना ॥ राजत बाजत बिपुल निसाना ॥
कतहुं बिरद बंदी उच्चरहीं ॥ कतहुं बेदधुनि भूसुर करहीं ॥

वहां तरह-तरहके सुन्दर मांगलिक पदार्थ शोभा पा रहे थे और असंख्य बाजे बज रहे थे। कहीं बन्दीजन यश वर्णन कर रहे थे और कहीं ब्राह्मण वेदध्वनि कर रहे थे।

गावहिं सुंदरि मंगलगीता ॥ लेइ लेइ नाम राम अरु सीता ॥
बहुत उछाहु भवन अति थोरा ॥ मानहु उमगि चला चहु ओरा ॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीका नाम ले-लेकर सुन्दर स्त्रियां मङ्गल गीत गा रही थीं। भवन बहुत कम था और आनन्द अधिक, इससे मानों वह उमड़कर चारों ओर फैल गया हो।

दो०—सोभा दसरथ भवन कै ॥ को कबि बरनइ पार।
जहां सकल-सुर सीस-मनि ॥ राम लीन्ह अवतार ॥३२०॥

राजा दशरथके महलकी शोभाका वर्णन कर कौन कवि पार पा सकता है, जहां सब देवताओंके शिरोमणि श्रीरामचन्द्रजीने अवतार लिया हो ?

भूप भरत पुनि लिये बोलाई ॥ हय गय स्यंदन साजहु जाई ॥
चलहु बेगि रघुबीर-बराता ॥ सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता ॥

फिर राजाने भरतजीको बुला लिया और कहा कि जाकर हाथी, घोड़े और रथ सजाओ और रामचन्द्रकी बारातमें जल्दी चलो। सुनते ही दोनों भाई पुलकित हो गये।

भरत सकल साहनी बोलाये ॥ आयसु दीन्ह मुदित उठि धाये ॥
रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे ॥ बरन बरन बरबाजि बिराजे ॥

भरतजीने सब सरदारोंको बुलाया और आज्ञा दी। वे सब प्रसन्नतापूर्वक प्रणाम कर विदा हुए। उन्होंने घोड़ोंपर खूब बनाकर जीन सजाये और तरह-तरहके रङ्गोंके बढ़िया घोड़े सजकर खड़े हुए।

सुभग सकल सुठि चंचलकरनी ❀ अय इव जरत धरत पग धरनी ॥
नाना जाति न जाहिं बखाने ❀ निदरि पवनु जनु चहत उड़ाने ॥

सब घोड़े सुन्दर, सुहावने और चंचल गतिवाले थे और वे जलते हुए लोहेपर पैर रखनेकी भांति धरतीपर पैर रखते थे। वे अनेक जातियोंके थे, जिनका वर्णन नहीं हो सकता। वे सब मानों हवाका अनादर कर उड़ जाना चाहते थे।

तिन्ह सब छयल भये असवारा ❀ भरतसरिस बय राजकुमारा ॥
सब सुन्दर सब भूषनधारी ❀ कर सरचाप तून कटि भारी ॥

उन घोड़ोंपर वे सब छबीले राजकुमार सवार हुए, जो आयुमें भरतके बराबर थे। ये सब सुन्दर थे और समस्त गहनोंको धारण किये हुए थे। हाथमें धनुषबाण था और कमरमें भारी तरकस।

दो०—छरे छबीले छयल सब ❀ सूर सुजान नबीन।
जुग-पद-चर असवारप्रति ❀ जे असि-कला-प्रबीन ॥ ३३१ ॥

वे सब बांके, पतले, छबीले, वीर, चतुर और जवान थे। प्रत्येक सवारके साथ दो पैदल सिपाही थे, जो तलवार चलानेकी विद्यामें चतुर थे।

बांधे बिरद बीर रनगाढ़े ❀ निकसि भये पुर बाहिर ठाढ़े ॥
फेरहिं चतुर तुरग गति नाना ❀ हरषहिं सुनि सुनि पनव निसाना ॥

घमासान संग्राममें वीरता दिखलानेका बाना बांधे हुए वे सब निकलकर नगरके बाहर खड़े हुए। वहां वे चतुर घोड़ोंको अनेक प्रकारकी चालोंसे फेरने लगे और बाजोंकी ध्वनि सुन-सुनकर प्रसन्न होने लगे।

रथ सारथिन्ह बिचित्र बनाये ❀ ध्वज पताक मनि भूषन लाये ॥
चवंर चारु किंकिनि धुनि करहीं ❀ भानु - जानु - सोभा अपहरहीं ॥

रथवानोंने रथोंको ध्वजा, पताका, मणि और भूषण—सब लगाकर बड़ा विचित्र सजाया। उनमें सुन्दर चंवर लगे थे और घंटियां शब्द कर रही थीं। वे रथ सूर्यके रथकी शोभाको भी छीन रहे थे।

सावकरन अगनित हय हाते ❀ ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते ॥
सुन्दर सकल अलंकृत सोहे ❀ जिन्हहिं बिलोकत मुनिमन मोहे ॥

वहां असंख्य श्यामकर्ण घोड़े थे। उन्हें रथवानोंने उन रथोंमें जोता। वे सब गहने पहने हुए बड़े सुन्दर शोभित हो रहे थे, जिन्हें देखते ही मुनियोंके मन भी मोहित हो गये।

जे जल चलहिं थलहि की नाईं ❀ टाप न बूड़ बेग अधिकाई ॥
अस्त्र सस्त्र सब साज बनाई ❀ रथी सारथिन्ह लिये बोलाई ॥

वे घोड़े जलमें भी थलकी भांति ही चलते थे। वेग अधिक होनेसे उनकी टापें न डूबती थीं। अस्त्र शस्त्र और सब साज सजाकर रथवानोंने रथमें बैठनेवालोंको बुला लिया।

दो०—चढ़ि चढ़ि रथ बाहर नगर ❀ लागी जुरन बरात।
होत सगुन सुंदर सबन्हि ❀ जो जेहि कारज जात ॥ ३३२ ॥

रथपर चढ़-चढ़कर बारात नगरके बाहर इकट्ठी होने लगी। जो लोग जिस किसी कामसे कहीं जाते थे उन सबको सुन्दर शकुन हो रहे थे।

कलित करिबरन्हि परी अँबारी ❀ कहि न जाइ जेहि भाँति सवाँरी ॥
चले मत्तगज घंट बिराजी ❀ मनहुँ सुभग सावन-घन-राजी ॥

सुन्दर श्रेष्ठ हाथियोंपर अंबारियां रख दी गयीं। उन्हें जिस प्रकार सजाया गया, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मतवाले हाथी चले, जिनपर घंटे विराज रहे थे, मानों सुन्दर सावनके मेघोंके दल हों।

बाहन अपर अनेक बिधाना ❀ सिबिका सुभग सुखासन जाना ॥
तिन्ह चढ़ि चले बिप्र बर-बृंदा ❀ जनु तनु धरे सकल-श्रुति-छंदा ॥

सुन्दर पालकियां और बैठनेमें सुखकर गाड़ियां—अनेक प्रकारकी बहुतसी सवारियां थीं। उनपर चढ़-कर श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके समूह चले, मानों वेदोंके सब छंद शरीर धारण किये हुए हों।

मागध सूत बंदि गुनगायक ❀ चले जान चढ़ि जो जेहि लायक ॥
बेसर ऊँट बृषभ बहु जाती ❀ चले बस्तु भरि अगनित भांती ॥

गुणोंका गान करनेवाले मागध, सूत और बंदीजन आदि अपने-अपने योग्य सवारियोंपर बैठकर चले। अनेक जातिके खच्चर, ऊंट और बैल असंख्य प्रकारकी वस्तुओंको लादकर ले चले।

कोटिन्ह काँवरि चले कहारा ❀ बिबिधबस्तु को बरनइ पारा ॥
चले सकल-सेवक-समुदाई ❀ निज-निज-साजु-समाजु बनाई ॥

करोड़ों कांवरें लेकर कहार लोग चले। अनेक प्रकारकी वस्तुओंका पूरा वर्णन कौन कर सकता है? अपनी अपनी सुन्दर टोलियां बनाकर सब सेवकोंके समूह चले।

दो०—सब के उर निर्भर हरषु ❀ पूरित पुलक सरीर।
कबहि देखिबे नयनभरि ❀ रामु लषनु दोउ बीर ॥ ३३३ ॥

सबके हृदयमें आनन्द भर रहा था और सारा शरीर पुलकायमान हो रहा था कि श्रीरामचन्द्रजी, और लक्ष्मणजी,—दोनों वीरोंको कब नेत्र भरकर देखेंगे।

गरजहिं गज घंटाधुनि घोरा ❀ रथरव बाजिहिंस चहुँ ओरा ॥
निदरि घनहिं घुम्मरहिं निसाना ❀ निज पराइ कछु सुनिय न काना ॥

हाथी गरजते थे, घंटोंका घोर शब्द हो रहा था, रथोंकी घरघराहट हो रही थी और चारों ओर घोड़े हींसते थे। बादलोंका अनादर कर बाजोंसे घनघोर शब्द हो रहा था और अपना-पराया, कुछ भी कानोंसे न सुनाई पड़ता था।

महाभीर भूपति के द्वारे ❀ रज होइ जाइ पषान पबारे ॥
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नारी ❀ लिये आरती मंगलथारी ॥

राजाकी ड्योढ़ीपर बड़ी भारी भीड़ थी। पांवोंसे घिसकर पत्थर भी धूल हो जाते थे। स्त्रियां मंगल थाल और आरती लिये हुए अटारियोंपर चढ़ी हुई देख रही थीं।

गावहिं गीत मनोहर नाना ❀ अतिआनंद न जाइ बखाना ॥
तब सुमंत्र दुइ स्यंदन साजी ❀ जोते रबि-हय-निंदक बाजी ॥

वे तरह-तरहके सुन्दर गीत गा रही थीं। बड़ा आनन्द छाया हुआ था, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तब सुमन्तने दो रथोंको सजाकर घोड़ोंको जोता, जो सूर्यके घोड़ोंको भी नीचा दिखलानेवाले थे।

दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने ❀ नहिं सारद पहिं जाहिं बखाने ॥
राजसमाज एक रथ साजा ❀ दूसर तेजपुंज अतिभ्राजा ॥

वे उन दोनों सुन्दर रथोंको राजाके पास लाये। इनका वर्णन सरस्वतीसे भी नहीं हो सकता। एक रथ राजसी सामानसे सजा हुआ था और दूसरा तेजके समूहसे अत्यन्त शोभित हो रहा था।

दो०—तेहि रथ रुचिर बसिष्ठ कहँ ❀ हरषि चढ़ाइ नरेसु।
आपु चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि ❀ हर गुरु गौरि गनेसु ॥ ३३४ ॥

उस सुन्दर रथमें राजा प्रसन्न होकर वशिष्ठजीको चढ़ाकर महादेवजी, गुरुजी, पार्वतीजी और गणेशजीका स्मरणकर स्वयं भी रथपर सवार हुए।

सहित बसिष्ठ सोह नृपु कैसे ❀ सुर-गुरु-संग पुरंदरु जैसे ॥
करि कुलरीति बेदबिधि राऊ ❀ देखि सबहि सुब भाँति बनाऊ ॥

वशिष्ठजीसमेत राजा कैसे शोभा पाते हैं, जैसे देवताओंके गुरु बृहस्पतिके संग इन्द्र हों। वे विधिके अनुसार कुलकी रीति पूरी कर राजाने सब प्रकारकी सम्पूर्ण सजावट देखी।

सुमिरि राम गुरुआयसु पाई ❀ चले महीपति संख बजाई ॥
हरषे बिबुध बिलोकि बराता ❀ बरषहिं सुमन सु-मंगल-दाता ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण कर गुरुजीकी आज्ञा पाकर राजा शंख बजाकर चल दिये। बारात देखकर देवता प्रसन्न हुए। वे मंगलदायक फूलोंकी वर्षा करने लगे।

भयउ कोलाहल हय गय गाजे ❀ ब्योम बरातबाजने बाजे ॥
सुर नर नाग सुमंगल गाई ❀ सरस राग बाजहिं सहनाई ॥

बड़ा कोलाहल हुआ। हाथी चिंघाड़ने और घोड़े हिनहिनाने लगे। आकाशमें बारातके बाजे बजने लगे। देवता, मनुष्य और नाग मंगल गीत गाने लगे, शहनाइयां रसीले रागसे बजने लगीं।

घंट-घंटि-धुनि बरनि न जाहीं ❀ सरव करहिं पाइक फहराहीं ॥
करहिं बिदूषक कौतुक नाना ❀ हासकुसल कलगान सुजाना ॥

घंटों और घंटियोंकी ध्वनिका वर्णन नहीं किया जा सकता। टहलुए हाथोंमें झंडियां फहराते थे। हंसानेमें चतुर और सुन्दर गानेमें सुजान विदूषक (भांड़) तरह-तरहके तमाशे करते जाते थे।

दो०—तुरग नचावहिं कुअँर वर ❀ अकनि मृदंग निसान।
नागर नट चितवहिं चकित ❀ डगहिं न ताल बंधान ॥ ३३५ ॥

मृदंगके डंकेका शब्द सुनकर सुन्दर राजकुमार घोड़ोंको ऐसे नचाते थे कि चतुर नट चकित होकर देख रहे थे। वे घोड़े डिगते न थे। तालसे बंधसे गये थे।

बनइ न बरनत बनी बराता ❀ होहिं सगुन सुंदर सुभदाता ॥
चारा चाषु बाम दिसि लेई ❀ मनहुं सकल मंगल कहि देई ॥

बारातकी सजावटका वर्णन नहीं करते बनता। सुन्दर मङ्गलप्रद शकुन हो रहे थे। बाईं दिशामें नीलकंठ पक्षी चुग रहा था, मानों वह सब मङ्गलोंकी सूचना दे रहा हो।

दाहिन काग सुखेत सुहावा ❀ नकुलदरस सब काहू पावा ॥
सानुकूल बह त्रिबिध बयारी ❀ सघट सबाल आव बरनारी ॥

दाहिनी ओर सुन्दर खेतमें कौआ शोभित था। सब किसीने न्योलेके भी दर्शन पाये। सामनेसे शीतल, मंद और सुगंधित वायु बह रही थी और सुन्दर स्त्रियां बच्चोंको लिये भरे हुए घड़ेसमेत आ रही थीं।

लोवा फिरि फिरि दरस देखावा ❀ सुरभी सनमुख सिसुहि पियावा ॥
मृगमाला फिरि दाहिनि आई ❀ मंगलगन जनु दीन्ह देखाई ॥

लोमड़ी आकर बार-बार दिखायी देने लगी। गायें सामने ही अपने बच्चोंको दूध पिलाती थीं। फिर हिरनोंका समूह दाहिनी ओर आया; मानों बहुतसे मङ्गल दिखलाई दिये हों।

छेमकरी कह छेम बिसेखी ❀ स्यामा बाम सुतरु पर देखी॥
सनमुख आयउ दधि अरु मीना ❀ करपुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना॥

सफेद चील बोल-बोलकर मानों विशेष कल्याणकी बात कह रही थी। बायीं ओर सुन्दर वृक्षपर श्यामा चिड़िया भी दिखलाई दी। सामने दही और मछली, तथा हाथमें पुस्तक लिये हुए दो चतुर ब्राह्मण आ गये।

दो०—मंगलमय कल्यानमय ❀ अभिमत - फल - दातार।
जनु सब साँचे होन हित ❀ भये सगुन एक बार॥३३६॥

आनन्दमय, कल्याण करनेवाले और मनचाहा फल देनेवाले सब शकुन मानों सच्चे होनेके लिये एक साथ ही हुए।

मंगल सगुन सुगम सब ता के ❀ सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाके॥
राम सरिस बर दुलहिनि सीता ❀ समधी दसरथ जनक पुनीता॥

जिसके सुन्दर पुत्र सगुण ब्रह्म हैं उसके लिये सब शुभ शकुन सुलभ हैं। श्रीरामचन्द्रजी जैसा वर और सीताजी जैसी दुलहिन तथा पवित्र राजा दशरथ और जनक समधी!

सुनि अस ब्याह सगुन सब नाचे ❀ अब कीन्हे बिरंचि हम साँचे॥
एहि बिधि कीन्ह बरात पयाना ❀ हय गय गाजहिं हने निसाना॥

ऐसा विवाह सुनकर सब शकुन नाचने लगे और कहने लगे कि ब्रह्माने अब हमें सच्चा किया। इस प्रकार बारातने प्रस्थान किया। हाथी और घोड़े शब्द करने तथा बाजे बजने लगे।

आवत जानि भानु - कुल - केतू ❀ सरितन्हि जनक बँधाये सेतू॥
बीच बीच बरबासु बनाये ❀ सुर-पुर-सरिस संपदा छाये॥

सूर्यकुलकी पताका राजा दशरथको आता हुआ समझकर राजा जनकने नदियोंपर पुल बंधवा दिये। बीच-बीचमें ठहरनेके लिये सुन्दर स्थान बनवा दिये, जो इन्द्रपुरीके समान संपदासे भरे हुए थे।

असन सयन बर बसन सुहाये ❀ पावहिं सब निज निज मन भाये॥
नित नूतन सुख लखि अनुकूले ❀ सकल बरातिन्ह मंदिर भूले॥

अपने-अपने मनकी रुचिके अनुसार सब बाराती भोजन, बिस्तर और सुन्दर पवित्र कपड़े पाते थे। नित्य नये सुखों और सुविधाओंको देखकर सब बाराती अपने घरोंको भूल गये।

दो०—आवत जानि बरातबर ❀ सुनि गहगहे निसान।
सजि गज रथ पदचर तुरग ❀ लेन चले अगवान ॥३३७॥

बाजोंकी आनंदध्वनि सुनकर सुन्दर बारातको आता हुआ समझ हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सिपाही सजाकर अगवानी लेने चले।

कनककलस भरि कोपर थारा ❀ भाजनु ललित अनेकप्रकारा॥
भरे सुधासम सब पकवाने ❀ भांति भांति नहिं जाहिं बखाने॥

सोनेके कलसे भरकर सुन्दर परातों, थालों और अनेक प्रकारके सुन्दर बर्तनोंमें अमृतके समान तरह-तरहके सब पकवान भरे, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता।

फल अनेक बरबस्तु सुहाई ❀ हरषि भेंट हित भूप पठाई॥
भूषन बसन महामनि नाना ❀ खग मृग हय गय बहुबिधि जाना॥

राजा जनकने प्रसन्न होकर भेंट देनेके लिये अनेक फल और सुन्दर श्रेष्ठ वस्तुएँ भेजीं। भूषण, वस्त्र, तरह-तरहकी महामणियां और अनेक प्रकारकी सवारियां, हाथी, घोड़े, हिरण, और पक्षी—

मंगल सगुन सुगंध सुहाये ❀ बहुत भांति महिपाल पठाये॥
दधि चिउरा उपहार अपारा ❀ भरि भरि कावरि चले कहारा॥

शुभशकुनसूचक और सुन्दर सुगंधित द्रव्य, अनेक प्रकारके पदार्थ राजाने भेजे। दही, चिउड़ा और भेंटमें देनेकी असंख्य चीजें अपनी कांवरोंमें भर-भरकर कहार चले।

अगवानन्ह जब दीखि बराता ❀ उर आनंद पुलक भर गाता॥
देखि बनाव सहित अगवाना ❀ मुदित बरातिन्ह हने निसाना॥

अगवानी करनेवालोंने जब बारात देखी, तब उनके हृदयमें आनंद हुआ और उनका सारा शरीर पुलकायमान हो गया। सज-धजसमेत अगवानी लेनेवालोंको देखकर बारातियोंने प्रसन्न होकर बाजे बजाये।

दो०—हरषि परसपर मिलनहित ❀ कछुक चले बगमेल।
जनु आनंदसमुद्र दुइ ❀ मिलत बिहाइ सुबेल ॥३३८॥

प्रसन्न होकर परस्पर मिलनेके लिये कुछ लोग अपनी पंक्ति अलग बनाकर चले, मानों दो आनन्दसमुद्र मर्यादा छोड़कर मिल रहे हों।

बरषि सुमन सुरसुंदरि गावहिं ❀ मुदित देव दुंदुभी बजावहिं॥
बस्तु सकल राखी नृप आगे ❀ बिनय कीन्ह तिन्ह अतिअनुरागे॥

फूल बरसाकर देवताओंकी स्त्रियां गाने लगीं और देवता प्रसन्न होकर नगारे बजाने लगे। अगवानी करनेवालोंने सब वस्तुएँ राजा दशरथके सामने रखीं और अत्यंत प्रेमसे विनती की।

प्रेमसमेत राय सब लीन्हा ❀ भइ बकसीस जाचकन्हि दीन्हा ॥
करि पूजा मान्यता बड़ाई ❀ जनवासे कहँ चले लेवाई ॥

राजाने सब वस्तुएँ प्रेमसे ले लीं और मांगनेवालोंको बहुतसा इनाम दिया। पूजा, प्रशंसा और आदर करके वे सब बारातियोंको जनवासेमें लिवा ले चले।

बसन बिचित्र पांवड़े परहीं ❀ देखि धनद धनमद परिहरहीं ॥
अतिसुंदर दीन्हेउ जनवासा ❀ जहं सब कहं सब भांति सुपासा ॥

आगे-आगे पैरोंके नीचे ऐसे विचित्र कपड़े बिछते जाते थे जिन्हें देखकर कुबेर भी अपने धनका घमण्ड छोड़ देवें। जहां सबको सब प्रकारकी सुविधा थी वहां अत्यंत सुन्दर जनवासा दिया।

जानी सिय बरात पुर आई ❀ कछु निज महिमा प्रगटि जनाई ॥
हृदय सुमिरि सब सिद्धि बोलाई ❀ भूपपहुनई करन पठाई ॥

सीताजीने जब जाना कि नगरमें बारात आ गयी तब कुछ अपनी महिमा प्रगट करके दिखलायी। उन्होंने हृदयमें स्मरण कर सब सिद्धियोंको बुलाया और उन्हें राजा दशरथका आतिथ्य-सत्कार करनेको भेज दिया।

दो०–सिधि सब सियआयसु अकनि ❀ गईं जहां जनवास।
लिये संपदा सकलसुख ❀ सुर-पुर-भोग-बिलास ॥३३६॥

सीताजीकी आज्ञा सुनकर सब सिद्धियां समस्त संपदाओं, सुखों और इन्द्रपुरीके भोग-विलासोंको लिये हुए वहां गयीं, जहां जनवासा था।

निजनिज बास बिलोकि बराती ❀ सुरसुख सकल सुलभ सब भांती ॥
बिभवभेद कछु कोउ न जाना ❀ सकल जनक कर करहिं बखाना ॥

बारातियोंने अपने-अपने रहनेकी जगह देखकर देवताओंके समस्त सुखोंको सब प्रकार सुलभ पाया। इस संपदाका भेद किसीने कुछ भी नहीं जाना। सब राजा जनककी प्रशंसा करते थे।

सियमहिमा रघुनायक जानी ❀ हरषे हृदय हेतु पहिचानी ॥
पितुआगमन सुनत दोउ भाई ❀ हृदय न अति आनंद अमाई ॥

परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीकी महिमाको जान लिया और वे उनके हृदयकी बात समझकर प्रसन्न हुए। दोनों भाई पिताका आगमन सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उनके हृदयमें वह बहुत अधिक आनन्द समाता न था।

सकुचन्ह कहि न सकत गुरपाहीं * पितु-दरसन-लालच मनु माहीं ॥
बिस्वामित्र बिनय बड़ि देखी * उपजा उर संतोष बिसेखी ॥

संकोचके कारण गुरुसे कह न सकते थे, पर मनमें पिताजीके दर्शनोंका लोभ था। बड़ी नम्रता देखकर विश्वामित्रके हृदयमें विशेष संतोष उत्पन्न हुआ।

हरषि बंधु दोउ हृदय लगाये * पुलक अंग अंबक जल छाये ॥
चले जहां दसरथ जनवासे * मनहु सरोवर तकेउ पिआसे ॥

उन्होंने प्रसन्न होकर दोनों भाइयोंको अपनी छातीसे लगाया, जिससे शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया। वे जनवासेके लिये, जहां राजा दशरथ थे, चले; मानों किसी प्यासेने तालाब देखा हो।

दो०—भूप बिलोके जबहिं मुनि * आवत सुतन्ह समेत।
उठेउ हरषि सुखसिंधु महु * चले थाह सी लेत ॥ ३४० ॥

राजाने जब मुनिको पुत्रोंसमेत आते देखा तब प्रसन्न होकर उठे और सुखके समुद्रमें मानों थाह लेते हुए चले।

मुनिहिं दंडवत कीन्ह महीसा * बार बार पदरज धरि सीसा ॥
कौसिक राउ लिये उर लाई * कहि असीस पूछी कुसलाई ॥

चरणोंकी रजको बार-बार शिरपर रखकर राजाने मुनिको दण्डवत किया। विश्वामित्रने राजाको छातीसे लगा लिया और आशीर्वाद कहकर कुशलता पूछी।

पुनि दंडवत करत दोउ भाई * देखि नृपति उर सुख न समाई ॥
सुत हिय लाइ दुसह दुख मेटे * मृतकसरीर प्रान जनु भेंटे ॥

फिर दोनों भाइयोंको दण्डवत करते देखकर राजाके हृदयमें सुख न समाता था। पुत्रोंको हृदयसे लगाकर राजा दशरथने अपने कठिन दुःख नष्ट कर दिये; मानों किसी मरे हुएके शरीरमें प्राण पड़ गये हों।

पुनि बसिष्ठपद सिर तिन्ह नाये * प्रेममुदित मुनिबर उर लाये ॥
बिप्रबृंद बंदे दुहुं भाई * मनभावती असीसैं पाईं ॥

फिर उन्होंने वशिष्ठजीके चरणोंको शिर नवाया। प्रेमसे प्रसन्न होकर मुनिवरने उन्हें हृदयसे लगा लिया। फिर दोनों भाइयोंने ब्राह्मणोंके समूहकी वंदना की और मनचाहा आशीर्वाद पाया।

भरत सहानुज कीन्ह प्रनामा * लिये उठाइ लाइ उर रामा ॥
हरषे लषन देखि दोउ भ्राता * मिले प्रेम - परि - पूरित गाता ॥

भरतजीने अपने छोटे भाई शत्रुघ्नसहित प्रणाम किया। श्रीरामचन्द्रजीने उठाकर उन्हें हृदयसे लगा लिया। दोनों भाइयोंको देखकर लक्ष्मणजी प्रसन्न हुए और प्रेमसे परिपूर्ण शरीर हो वे उनसे मिले।

दो०—पुरजन परिजन जातिजन ❀ जाचक मंत्री मीत।
मिले जथाबिधि सबहि प्रभु ❀ परमकृपालु बिनीत ॥३४१॥

नगरवासी, कुटुम्बी, जातिके लोग, याचक, मंत्री और मित्र—सबसे अत्यन्त कृपालु और नम्र प्रभु श्रीराम चन्द्रजी यथाविधि मिले।

रामहिं देखि बरात जुड़ानी ❀ प्रीति कि रीति न जाति बखानी ॥
नृप समीप सोहहिं सुत चारी ❀ जनु धनधरमादिक तनुधारी ॥

श्रीरामचन्द्रजीको देखकर बाराती लोग शीतल हुए। प्रीतिकी रीति वर्णन नहीं की जाती। राजाके पास चारों पुत्र शोभित हैं, मानों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष शरीर धारण किये हुए हों।

सुतन्ह समेत दसरथहि देखी ❀ मुदित नगर - नर - नारि बिसेखी ॥
सुमन बरषि सुर हनहिं निसाना ❀ नाकनटी नाचहिं करि गाना ॥

पुत्रोंसमेत राजा दशरथको देखकर नगरके पुरुष और स्त्रियां—सब विशेष प्रसन्न हुए। फूल बरसाकर देवता बाजे बजाते और गा-गाकर अप्सराएँ नाचती थीं।

सतानंद अरु बिप्र सचिवगन ❀ मागध सूत बिदुष बंदीजन ॥
सहित बरात राउ सनमाना ❀ आयसु मांगि फिरे अगवाना ॥

सतानन्द, ब्राह्मण, मंत्रिगण, मागध, सूत, विदूषक और बंदीजन आदि अगवानीके लिये आनेवाले सब लोगोंने बारातियों समेत राजा दशरथका सम्मान किया और आज्ञा मांगकर लौट गये।

प्रथम बरात लगन तें आई ❀ ता तें पुर प्रमोद अधिकाई ॥
ब्रह्मानंद लोग सब लहहीं ❀ बढ़हु दिवसनिसि बिधि सन कहहीं ॥

बारात लग्नसे पहिले आ गयी थी, इसलिये नगरमें बहुत अधिक आनंद छा गया। सभी लोग ब्रह्मानन्दको पा रहे हैं और ब्रह्मासे कह रहे हैं कि दिन और रात बड़े हो जावें।

दो०—रामु सीय सोभाअवधि ❀ सुकृतअवधि दोउ राज।
जहं तहं पुरजन कहहिं अस ❀ मिलि नर -नारि - समाज ॥३४२॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी शोभाकी सीमा हैं और पुण्यकी सीमा हैं, राजा दशरथ और राजा जनक—ऐसा नगरनिवासी पुरुषों और स्त्रियोंके समूह मिलकर जहां-तहां कहते थे।

जनक - सुकृत - मूरति बैदेही ❀ दसरथसुकृत रामु धरे देही ॥
इन्ह सम काहु न सिव अवराधे ❀ काहु न इन्ह समान फल लाधे ॥

राजा जनकके पुण्योंकी मूर्ति सीताजी हैं और राजा दशरथके पुण्य देह रखे हुए श्रीरामचन्द्रजी हैं। शिवजीकी आराधना इनके समान और किसीने भी नहीं की, और न किसीने इनके समान फल प्राप्त किया है।

इन्ह सम कोउ न भयउ जग माहीं ❀ है नहि कतहूं होनेउ नाहीं ॥
हम सब सकल सुकृत के रासी ❀ भये जग जनमि जनक-पुर-बासी ॥

संसारमें इनके समान कोई नहीं हुआ, न कहीं है, और न होनेका। हम सब समस्त पुण्योंकी राशि हैं, जो संसारमें जन्म लेकर जनकपुरके वासी हुए।

जिन्ह जानकी - राम-छबि देखी ❀ को सुकृती हम सरिस बिसेखी ॥
पुनि देखब रघु-बीर-बिआहू ❀ लेब भली बिधि लोचन लाहू ॥

और जिन्होंने श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीकी छविको देखा। हमारे समान अधिक पुण्यवान और कौन है? फिर श्रीरामचन्द्रजीका विवाह देखेंगे और भले प्रकार नेत्रोंका लाभ लेंगे।

कहहिं परस्पर कोकिलबयनी ❀ एहि बिबाह बड़ लाभ सुनयनी ॥
बड़े भाग बिधि बात बनाई ❀ नयन अतिथि होइहहिं दोउ भाई ॥

कोकिलकीसी मीठी बोलनेवाली स्त्रियां परस्पर कहती थीं कि हे सुन्दर नेत्रोंवाली सखी, इस विवाहसे बड़ा लाभ है। बड़े भाग्यसे ब्रह्माने बात बनायी है कि दोनों भाई हमारे नेत्रोंके मेहमान होंगे।

दो०—बारहिं बार सनेहबस ❀ जनक बोलाउब सीय।
लेन आइहहिं बंधु दोउ ❀ कोटि - काम - कमनीय ॥३४३॥

प्रेमवश राजा जनक सीताजीको बार-बार बुलाएंगे और उन्हें करोड़ों कामदेवों जैसे सुन्दर भाई बार-बार लेने आयेंगे।

बिबिध भांति होइहि पहुनाई ❀ प्रिय न काहि अस सासुर माई ॥
तब तब राम लषनहि निहारी ❀ होइहहिं सब पुरलोग सुखारी ॥

इनका यहां अनेक प्रकारसे आतिथ्य-सत्कार हुआ करेगा। हे माई, ऐसी ससुराल किसे न प्यारी लगेगी? जब-जब यह आवेंगे तब-तब श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको देखकर सब नगरनिवासी सुखी हुआ करेंगे।

सखि जस राम लषन कर जोटा ❀ तैसइ भूप संग दुइ ढोटा ॥
स्याम गौर सब अंग सुहाये ❀ ते सब कहहिं देखि जे आये ॥

हे सखी, जैसी श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीकी जोड़ी है वैसे ही दो कुमार राजाके साथ हैं। सांवले और गोरे उनके सब अंग सुन्दर हैं, यह वे सब कहते हैं, जो देखकर आए हैं।

कहा एक मैं आजु निहारे ❀ जनु बिरंचि निजहाथ सँवारे॥
भरतु रामही की अनुहारी ❀ सहसा लखि न सकहिं नरनारी॥

एक सखीने कहा कि मैंने आज ही उन्हें देखा है, मानों ब्रह्माने अपने हाथसे उन्हें संवारा है। भरतजी श्रीरामचन्द्रजीकी अनुहार हैं। स्त्री-पुरुष उन्हें यकायक पहचान नहीं सकते।

लखन सत्रुसूदन एकरूपा ❀ नख सिख तें सब अंग अनूपा॥
मन भावहिं मुख बरनि न जाहीं ❀ उपमा कहं त्रिभुवन कोउ नाहीं॥

लक्ष्मणजी और शत्रुघ्न एक ही रूपके हैं। उनके नखसे शिखातक सब अङ्ग अनुपम हैं। वे मनको भाते हैं, पर उनका मुखसे वर्णन नहीं किया जा सकता। उपमा देनेके लिये तीनों भुवनोंमें कोई नहीं है।

छं०—उपमा न कोउ कह दास तुलसी कतहुं कबिकोबिद कहहिं।
बल-बिनय-बिद्या-सील-सोभा-सिंधु इन्ह से एइ अहहिं॥
पुर नारि सकल पसारि अंचल बिधिहि बचन सुनावहीं।
ब्याहिअहु चारिउ भाइ एहिं पुर हम सुमंगल गावहीं॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि कवियों और पण्डितोंका कथन है कि इनकी कोई उपमा कहीं नहीं है। बल, नम्रता, विद्या, शोभा और शीलके समुद्र इनके समान यही हैं। नगरकी सब स्त्रियां अञ्चल पसारकर ब्रह्मासे यह प्रार्थना करती हैं कि इन चारों भाइयोंका विवाह इसी नगरमें कराना, जिसमें हमें सुन्दर मङ्गल गीत गानेको मिलें।

सो०—कहहिं परस्पर नारि ❀ बारिबिलोचन पुलकतन।
सखि सबु करब पुरारि ❀ पुन्य-पयोनिधि भूप दोउ॥३४४॥

नेत्रोंमें जल भरे हुए, पुलकित शरीर होकर स्त्रियां कह रही हैं कि हे सखि, शिवजी सब करेंगे। राजा जनक और राजा दशरथ पुण्यके समुद्र हैं।

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं ❀ आनंद उमगि उमगि उर भरहीं॥
जे नृप सीयस्वयंबर आये ❀ देखि बंधु सब तिन्ह सुख पाये॥

इस प्रकार सब अपने-अपने मनमें इच्छा करने और उमंग-उमंगकर हृदयमें आनन्द भरने लगे। जो राजा सीताजीके स्वयंवरमें आये हुए थे उन सबने चारों भाइयोंको देखकर सुख पाया।

कहत रामजसु बिसद बिसाला ❀ निज निज भवन गये महिपाला ॥
गये बीति कछु दिन एहि भांती ❀ प्रमुदित पुरजन सकल बराती ॥

श्रीरामचंद्रजीका उज्ज्वल महायश वर्णन करते हुए राजा लोग अपने-अपने घर गये। इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। सब बाराती और नगरनिवासी आनन्दमें थे।

मंगलमूल लगनदिनु आवा ❀ हिमरितु अगहनमासु सुहावा ॥
ग्रह तिथि नखत जोगु बर बारू ❀ लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू ॥

मंगलमय लग्नका दिन आया। हेमन्त ऋतु, सुन्दर अगहनका महीना, ग्रह, तिथि, नक्षत्र, योग और वार, सब श्रेष्ठ थे। लग्न शोधकर ब्रह्माने विचार किया।

पठइ दीन्हि नारद सन सोई ❀ गनी जनकके गनकन्ह जोई ॥
सुनी सकल लोगन यह बाता ❀ कहहिं जोतिषी आहिं बिधाता ॥

उसी लग्नपत्रिकाको नारदजीके हाथों भेज दिया, जिसे राजा जनकके गणकोंने भी गणित कर निकाला। सब लोगोंने यह बात सुनी। वे कहने लगे कि ज्योतिषी ब्रह्मा हैं।

दो०—धेनु-धूलि-बेला बिमल ❀ सकल-सुमंगल-मूल।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन ❀ जानि सगुन अनुकूल ॥ ३४५ ॥

अनुकूल शकुन जानकर ब्राह्मणोंने राजा जनकसे कहा कि गोधूली वेला शुद्ध और सब सुन्दर मंगलोंकी मूल है।

उपरोहितहि कहेउ नरनाहा ❀ अब बिलंब कर कारन काहा ॥
सतानंद तब सचिव बोलाये ❀ मंगल सकल साजि सब ल्याये ॥

राजा जनकने पुरोहितसे कहा कि अब देर करनेका कारण क्या है ? सतनान्दने तब मंत्रियोंको बुलाया। वे सब समस्त मांगलिक वस्तुओंको सजाकर लाये।

संख निसान पनव बहु बाजे ❀ मंगलकलस सगुन सुभ साजे ॥
सुभग सुआसिनि गावहिं गीता ❀ करहिं बेदधुनि बिप्र पुनीता ॥

बहुतसे शंख, नगारे और ढोल बजने लगे, मंगलकलश और शुभ शकुनसूचक वस्तुएं सजायी जाने लगीं। सुन्दर सौभाग्यवती स्त्रियां गीत गाने लगीं और पवित्र ब्राह्मण वेदध्वनि करने लगे।

लेन चले सादर एहि भांती ❀ गये जहां जनवास बराती ॥
कोसलपति कर देखि समाजू ❀ अति लघु लाग तिन्हहिं सुरराजू ॥

इस प्रकार आदरपूर्वक लेनेके लिये चले और वहां गये जहां जनवासेमें बाराती लोग थे। कोशल देशके राजा दशरथका समाज देखकर उन्हें देवताओंके राजा इन्द्र भी बहुत छोटे प्रतीत हुए।

समउ समउ अब धारिअ पाऊ ❀ यह सुनि परा निसानहिं घाऊ ॥
गुरहि पूछि करि कुलबिधि राजा ❀ चले संग मुनि-साधु-समाजा ॥

समय हो गया, अब पधारिये—यह सुनकर नगारेपर डंका पड़ा। गुरुको पूछकर राजाने अपने कुलकी रीति पूरी की और मुनि एवं साधुजनोंकी मंडली साथमें लेकर चले।

दो०—भाग्यबिभव अवधेस कर ❀ देखि देव ब्रह्मादि।
लगे सराहन सहसमुख ❀ जानि जनम निज बादि ॥३४६॥

राजा दशरथका भाग्य और वैभव देखकर ब्रह्मा आदि देवता अपना जन्म व्यर्थ जानकर सहस्र मुखसे प्रशंसा करने लगे।

सुरन्ह सुमंगल अवसरजाना ❀ बरषहिं सुमन बजाइ निसाना ॥
सिव ब्रह्मादिक बिबुधबरूथा ❀ चढ़े बिमानन्हि नाना जूथा ॥

देवताओंने सुन्दर मंगलका अवसर जानकर नगारे बजाये और फूल बरसाने लगे। शिव, ब्रह्मा आदि देवताओंके समूह अनेक मण्डलियां बनाकर विमानोंमें सवार हुए।

प्रेम-पुलक-तन हृदय उछाहू ❀ चले बिलोकन रामबिआहू ॥
देखि जनकपुर सुर अनुरागे ❀ निज निज लोक सबहि लघु लागे ॥

उनका शरीर प्रेमसे पुलकायमान था, हृदयमें आनन्द था, वे श्रीरामचन्द्रजीका विवाह देखनेके लिये चले। जनकपुर देखकर देवताओंमें प्रेम भर गया। उन्हें अपने-अपने लोक छोटे प्रतीत हुए।

चितवहिं चकित बिचित्र बिताना ❀ रचना सकल अलौकिक नाना ॥
नगर-नारि-नर रूपनिधाना ❀ सुघर सुधरम सुसील सुजाना ॥

सब चकित होकर विचित्र मण्डप और उसकी अनेक प्रकारकी समस्त अलौकिक रचनाको देखते थे। नगरके स्त्री-पुरुष—सब अत्यन्त रूपवान, सुन्दर, धर्मात्मा, शीलवान और चतुर थे।

तिन्हहि देखि सब सुर-सुर-नारी ❀ भये नखत जनु बिधु उजिआरी ॥
बिधिहि भयउ आचरजु बिसेखी ❀ निज करनी कछु कतहुँ न देखी ॥

उन्हें देखकर सब देवता और उनकी स्त्रियां—सभी ऐसे हो गये जैसे चंद्रमाके प्रकाशमें तारागण। ब्रह्माको विशेष आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपनी कुछ करनी उसमें कहीं भी नहीं देखी।

दो०—सिव समुझाये देव सब ❀ जनि आचरज भुलाहु।
हृदय बिचारहु धीर धरि ❀ सिय-रघुबीर-बिआहु॥ ३४७॥

शिवजीने सब देवताओंको समझाया कि आश्चर्यमें मत भूल जाओ। धीरज रखकर हृदयमें विचार करो। यह सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका विवाह है।

जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं ❀ सकल-अमंगल-मूल नसाहीं॥
करतल होहिं पदारथ चारी ❀ तेइ सिय रामु कहेउ कामारी॥

संसारमें जिनका नाम लेते ही सब अनिष्टोंका मूल नष्ट हो जाता है और चारों पदार्थ मुट्ठीमें हो जाते हैं, उन्हें कामदेवके शत्रु शिवजीने सीता और राम कहा।

एहि बिधि संभु सुरन्ह समुझावा ❀ पुनि आगे बरबसह चलावा॥
देवन्ह देखे दसरथ जाता ❀ महामोदु मन पुलकित गाता॥

इस प्रकार शिवजीने देवताओंको समझाया और फिर जबर्दस्तीकर आगे बढ़ाया। देवताओंने राजा दशरथको जाते हुए देखा। इससे उनके मनमें अत्यन्त आनंद हुआ और शरीर पुलकायमान हो गया।

साधु समाजु संग महिदेवा ❀ जनु तनु धरे करहिं सुख सेवा॥
सोहत साथ सुभग सुत चारी ❀ जनु अपबरग सकल तनुधारी॥

उनके संगमें ब्राह्मण और साधुजनोंकी मण्डली थी, मानों शरीर धारणकर सुख ही सेवा कर रहे हों। साथमें सुन्दर चार पुत्र शोभित थे, मानों चार प्रकारके सब मोक्ष शरीर धारण किये हुए हों।

मरकत-कनक-बरन बर जोरी ❀ देखि सुरन्ह भइ प्रीति न थोरी॥
पुनि रामहि बिलोकि हिय हरषे ❀ नृपहि सराहि सुमन तिन्ह बरषे॥

मरकतमणि और सोने जैसे रङ्गकी श्रेष्ठ जोड़ी देखकर देवताओंको बड़ी प्रीति हुई। फिर श्रीरामचन्द्रजीको देखकर वे हृदयमें प्रसन्न हुए और राजाकी प्रशंसाकर उन्होंने फूल बरसाये।

दो०—रामरूप नख-सिख-सुभग ❀ बारहिं बार निहारि।
पुलक गात लोचन सजल ❀ उमासमेत पुरारि॥ ३४८॥

श्रीरामचन्द्रजीका नखशिख सुन्दर रूप बार-बार देखकर पार्वतीसमेत शिवजीके नेत्रोंमें जल छा गया और शरीर पुलकायमान हो गया।

केकि-कंठ-दुति स्यामल अंगा ❀ तड़ितबिनिंदक बसन सुरंगा॥
ब्याहबिभूषन बिबिध बनाये ❀ मंगलमय सब भांति सुहाये॥

मोरके कंठकी चमक जैसा सांवला शरीर है। विजलीकी भी निन्दा करनेवाले सुन्दर रङ्गके वस्त्र हैं। व्याहके अनेक प्रकारके गहने सजाये हुये हैं जो मङ्गलमय और सब भांति सुंदर हैं।

सरद - बिमल-बिधु-बदन सुहावन ❀ नयन नवल-राजीव-लजावन ॥
सकल अलौकिक सुंदरताई ❀ कहि न जाइ मनही मन भाई ॥

शरत्पूर्णिमाके निर्मल चन्द्रमा जैसा सुन्दर मुख और नये कमलको भी लजानेवाले नेत्र—समस्त सुन्दरता अलौकिक है! वह कही नहीं जाती, मन-ही-मन भाती है।

बंधु मनोहर सोहहिं संगा ❀ जात नचावत चपल तुरंगा ॥
राजकुअँर बरबाजि देखावहिं ❀ बंसप्रसंसक बिरद सुनावहिं ॥

साथमें सुन्दर भाई शोभित हैं, जो चंचल घोड़े नचाते जाते हैं। राजकुमार श्रेष्ठ घोड़ोंको दिखलाते हैं और वंशकी प्रशंसा करनेवाले वंदीजन यश सुना रहे हैं।

जेहि तुरंग पर रामु बिराजे ❀ गति बिलोकि खगनायकु लाजे ॥
कहि न जाइ सब भाँति सुहावा ❀ बाजिबेषु जनु काम बनावा ॥

जिस घोड़ेपर श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हैं उसकी चाल देखकर गरुड़ भी लजा गये। कहा नहीं जाता, वह सब भांति सुन्दर है, मानों उस घोड़ेका रूप कामदेवने बनाया है।

छं०—जनु बाजिबेषु बनाइ मनसिजु रामहित अतिसोहई।
आपने बय बल रूप गुन गति सकल भुवन बिमोहई ॥
जगमगत जीन जराव जोति सुमोति मनि मानिक लगे।
किंकिनि ललाम लगाम ललित बिलोकि सुर नर मुनि ठगे ॥

मानों कामदेव श्रीरामचन्द्रजीके लिए घोड़ेका रूप रखकर अत्यन्त शोभित हो रहा है। वह अपनी अवस्था, बल, रूप, गुण और चालसे समस्त भुवनोंको मोहित कर रहा है। जीनके जड़ाऊ कामकी ज्योति जगमगा रही है और उसमें सुन्दर मोती, मणि और माणिक लगे हुए हैं। मनोहर घुंघरू और सुन्दर लगाम देखकर देवता, मुनि और मनुष्य सब ठग गये।

दो०—प्रभुमनसहिं लयलीन मनु ❀ चलत बाजि छबि पाव।
भूषित उडुगन तड़ितघन ❀ जनु बर बरहि नचाव ॥३१६॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी इच्छामें मन लवलीनकर चलता हुआ घोड़ा ऐसी शोभा पाता है मानों तारागण और बिजलीसमेत बादल श्रेष्ठ मोरको नचा रहा हो।

जेहि बर बाजि रामु असवारा ❀ तेहि सारदहु न बरनइ पारा ॥
संकर राम - रूप - अनुरागे ❀ नयन पंचदस अतिप्रिय लागे ॥

जिस श्रेष्ठ घोड़ेपर श्रीरामचन्द्रजी सवार थे उसका वर्णनकर सरस्वती भी पार नहीं पा सकतीं। शिवजो श्रीरामचन्द्रजीके रूपमें मोहित हो गये। उस समय उन्हें अपनी पंद्रह आंखें अत्यन्त प्यारी मालूम हुईं।

हरि हितसहित रामु जब जोहे ❀ रमासमेत रमापति मोहे ॥
निरखि रामछबि बिधि हरषाने ❀ आठहि नयन जानि पछिताने ॥

भगवान् विष्णुने जब श्रीरामचन्द्रजीको प्रेमपूर्वक देखा तब वे लक्ष्मीसमेत मोहित हो गये। श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर ब्रह्मा प्रसन्न हुए और अपने आठ ही नेत्र जानकर पछताये।

सुर-सेनप-उर बहुत उछाहू ❀ बिधि तें डेवढ़ सु - लोचन - लाहू ॥
रामहिं चितव सुरेस सुजाना ❀ गौतमसाप परमहित माना ॥

देवताओंके सेनापति स्वामी कार्तिकके हृदयमें बड़ा उत्साह हुआ। उन्होंने ब्रह्मासे ड्योढ़े नेत्रोंका लाभ उठाया। देवताओंके सुजान स्वामी इन्द्रने श्रीरामचन्द्रजीको देखा और गौतम ऋषिके शापको अत्यंत हितकारी माना।

देव सकल सुरपतिहि सिहाहीं ❀ आजु पुरंदरसम कोउ नाहीं ॥
मुदित देवगन रामहिं देखी ❀ नृपसमाज दुहुं हरष बिसेखी ॥

सब देवता इन्द्रकी प्रशंसा करने लगे कि आज इन्द्रके समान कोई नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर देवता प्रसन्न हुए और दोनों राजसमाजोंमें बहुत आनन्द छा गया।

छं०—अतिहरष राजसमाजु दुहुं दिसि दुंदुभी बाजहिं घनी।
बरषहिं सुमन सुर हरषि कहि जयजयति जय रघु-कुल-मनी ॥
एहि भांति जानि बरात आवत बाजने बहु बाजहीं।
रानी सुआसिनि बोलि परिछन हेतु मंगल साजहीं ॥

दोनों राजसमाजोंमें बड़ा आनंद छा रहा है, सभी दिशाओंमें बहुतसे नगारे बज रहे हैं, देवता प्रसन्न होकर और यह कहकर कि हे रघुकुलमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो, जय हो, जय हो—फूल बरसाते हैं। इस प्रकार बारातको आती हुई जानकर बहुतसे बाजे बज रहे हैं और रानी सौभाग्यवती स्त्रियोंको बुलाकर परिछन करनेके लिए समस्त मांगलिक वस्तुओंको सजा रही हैं।

दो०—सजि आरती अनेक बिधि ❀ मंगल सकल सवाँरि।
चलीं मुदित परिछन करन ❀ गजगामिनि बरनारि ॥३५०॥

आरती सजाकर और अनेक प्रकारकी समस्त मांगलिक वस्तुओंको संभालकर हाथीकी चालसे चलनेवाली श्रेष्ठ स्त्रियां प्रसन्न होकर परिछन करनेके लिए चलीं।

बिधुबदनी सब सब मृगलोचनि ❀ सब निज तन छबि रति-मद-मोचनि ॥
पहिरे बरन बरन बर चीरा ❀ सकल बिभूषन सजे सरीरा ॥

सबका मुख चन्द्रमा जैसा था, सबके नेत्र हिरण जैसे थे; सब अपने शरीरकी सुन्दरतासे रतिके अभिमानको नष्ट कर देनेवाली थीं। वे रंग-रंगके सुंदर वस्त्र पहिने हुए थीं और शरीरमें सब गहने सजे हुए थे।

सकल सुमंगल अंग बनाये ❀ करहिं गान कलकंठ लजाये ॥
कंकन किंकिनि नूपुर बाजहिं ❀ चाल बिलोकि काम गज लाजहिं ॥

सब अङ्ग सुन्दर मंगल वेशसे सजाये हुए थे और वे कोयलके कंठको लजा देनेवाले स्वरसे गान कर रही थीं। कंकण, करधनी और पाजेवें बज रही थीं और चाल देखकर मतवाले हाथी भी लजाते थे।

बाजहिं बाजन बिबिधप्रकारा ❀ नभ अरु नगर सुमंगल चारा ॥
सची सारदा रमा भवानी ❀ जे सुरतिय सुचि सहज सयानी ॥

आकाश और नगरमें अनेक प्रकारके बाजे बज रहे थे और सुन्दर मंगलाचार हो रहे थे। इन्द्राणी, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती—देवताओंकी जो स्त्रियाँ स्वभावसे ही चतुर और पवित्र हैं।

कपट-नारि-बर-बेस बनाई ❀ मिलीं सकल रनिवासहिं जाई ॥
करहिं गान कल मंगलबानी ❀ हरषबिबस सब काहु न जानी ॥

वे सब कपटसे सुन्दर स्त्री-भेष बनाकर रनवासमें जा मिलीं। वे सब मंगल वाणीसे सुन्दर गान करने लगीं। उन्हें किसीने भी नहीं जाना; क्योंकि सब आनंदमें विकल हो रही थीं।

छं०—को जान केहि आनंदबस सब ब्रह्म बर परिछन चलीं ॥
कलगान मधुर निसान बरषहिं सुमन सुर सोभा भलीं ॥
आनंदकंद बिलोकि दूलह सकल हिय हरषित भईं।
अंभोज-अंबक-अंबु उमगि सुअंग पुलकावलि छईं ॥

कौन किसको जानता था? अत्यंत आनन्दमें मग्न होकर सब ब्रह्मरूप वरका परिछन करनेके लिये

चलीं। सुन्दर गान हो रहा है, सुहावने नगारे बज रहे हैं, देवता फूल बरसा रहे हैं और बड़ी शोभा हो रही है। आनन्दके मूल दूलह श्रीरामचन्द्रजीको देखकर वे सब हृदयमें प्रसन्न हो गयीं, जिससे उनके कमल जैसे नेत्रोंमें जल उमड़ आया और सुन्दर अंगमें पुलकावली छा गयी।

दो०—जो सुख भा सिय-मातु-मन ❀ देखि राम - बर - बेष।
सो न सकहिं कहि कलप सत ❀ सहस सारदा सेष॥ ३५१॥

श्रीरामचन्द्रजीका सुन्दर वेश देखकर सीताजीकी माताके मनमें जो सुख हुआ उसे हजार सरस्वती और शेषनाग सौ कल्पतक भी नहीं कह सकते।

नयन नीर हटि मंगल जानी ❀ परिछन करहिं मुदित मन रानी॥
बेदबिहित अरु कुलआचारू ❀ कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू॥

मंगल समय जान नेत्रोंके जलको रोककर प्रसन्न मनसे रानियां परिछन करने लगीं। वेदकी विधि और कुलकी रीतिके अनुसार—सब व्यवहार भले प्रकार किया।

पंच सबद सुनि मंगल गाना ❀ पट पाँवड़े परहिं बिधि नाना॥
करि आरती अरघ तिन्ह दीन्हा ❀ राम गवन मंडप तब कीन्हा॥

पंचोंकी आज्ञा और मङ्गलगान सुनकर अनेक प्रकारके वस्त्रोंके पांवड़े पड़ने लगे। उन्होंने आरती करके अर्घ्य दिया, फिर श्रीरामचन्द्रजी मण्डपमें गये।

दसरथ सहित समाज बिराजे ❀ बिभव बिलोकि लोकपति लाजे॥
समय समय सुर बरषहिं फूला ❀ सांति पढ़हिं महिसुर अनुकूला॥

अपनी मण्डलीसहित राजा दशरथ विराजमान हुए। उनका ऐश्वर्य देखकर लोकपाल भी लजा गये। समय-समयपर देवता फूल बरसाते हैं और ब्राह्मण लोग समयानुसार शान्तिपाठ पढ़ रहे हैं।

नभ अरु नगर कोलाहल होई ❀ आपन पर कछु सुनइ न कोई॥
एहि बिधि राम मंडपहिं आये ❀ अरघु देइ आसन बैठाये॥

आकाश और नगरमें कोलाहल हो रहा है। कोई अपना और पराया कुछ नहीं सुनता। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी मण्डपमें आये। उन्हें अर्घ्य देकर आसनपर बिठलाया गया।

छं०—बैठारि आसन आरती करि निरखि बरु सुख पावहीं।
मनि बसन भूषन भूरि वारहिं नारि मंगल गावहीं॥
ब्रह्मादि सुरबर बिप्रबेष बनाइ कौतुक देखहीं।
अवलोकि रघु-कुल-कमल-रबि-छबि सुफल जीवन लेखहीं॥

वरको आसनपर बिठलाकर और आरती करके तथा देखकर सब सुख पा रहे हैं। स्त्रियां मंगल गीत गा रही हैं और बहुतसी मणियां, वस्त्र और गहने न्योछावर कर रही हैं। ब्रह्मा आदि श्रेष्ठ देवता ब्राह्मणका भेष रखकर कौतुक देख रहे हैं और रघुवंशरूपी कमलके सूर्य श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर अपने जीवनको सफल मान रहे हैं।

दो०—नाऊ बारी भाट नट ❀ रामनिछावरि पाइ।
मुदित असीसहिं नाइ सिर ❀ हरषु न हृदय समाइ ॥ ३५२ ॥

नाई, बारी, भाट और नट—सब श्रीरामचन्द्रजीकी न्योछावर पाकर और प्रसन्न होकर सिर नवाकर आशिष देते हैं। उनके हृदयमें आनन्द नहीं समाता।

मिले जनकु दसरथु अतिप्रीती ❀ करि बैदिक लौकिक सब रीती ॥
मिलत महा दोउ राज बिराजे ❀ उपमा खोजि खोजि कबि लाजे ॥

सब वेदरीति और लोकरीति करके राजा दशरथ और राजा जनक बड़े प्रेमसे मिले। मिलते हुए दोनों महाराज ऐसे शोभित हुए कि कवि लोग उपमा ढूँढ़ ढूँढ़कर लज्जित हो गये।

लही न कतहुं हारि हिय मानी ❀ इन्ह सम एइ उपमा उर आनी ॥
सामध देखि देव अनुरागे ❀ सुमन बरषि जसु गावन लागे ॥

कहीं नहीं मिली, इससे उन्होंने मनमें हार मान ली और हृदयमें यही उपमा आयी कि इनके समान यही हैं। समधियोंका मिलना देखकर देवता लोग प्रेमसे भर गये और फूल बरसाकर उनके यश गाने लगे।

जगु बिरंचि उपजावा जब तें ❀ देखे सुने ब्याह बहु तब तें ॥
सकल भांति सम साज समाजू ❀ सम समधी देखे हम आजू ॥

संसारमें ब्रह्माने जबसे उत्पन्न किया तबसे बहुतसे विवाह देखे और सुने हैं, परन्तु सभी प्रकार बराबर साज और समाज तथा एक समान समधी हमने आज ही देखे हैं।

देवगिरा सुनि सुंदर सांची ❀ प्रीति अलौकिक दुहुं दिसि मांची ॥
देत पांवड़े अरघु सुहाये ❀ सादर जनकु मंडपहिं ल्याये ॥

सुन्दर सची देववाणी सुनकर दोनों ओर अलौकिक प्रीति छा गयी। सुन्दर पांवड़े और अर्घ्य देते हुए राजा जनक आदरपूर्वक मण्डपमें ले आये।

छं०—मंडप बिलोकि बिचित्ररचना रुचिरता मुनिमन हरे।
निजपानि जनक सुजान सब कहं आनि सिंहासन धरे ॥

कुल-इष्ट-सरिस बसिष्ठ पूजे बिनय करि आसिष लही।
कौसिकहिं पूजत परमप्रीति कि रीति तौ न परइ कही॥

मण्डपकी विचित्र रचना और सुन्दरता देखनेमें मुनियोंके मनको भी हरण कर लेनेवाली है। चतुर राजा जनकने अपने हाथसे सबके लिये लाकर सिंहासन रखे। अपने कुलके इष्टदेवके समान वशिष्ठ मुनिकी पूजा की, और विनती करके आशीर्वाद पाया। विश्वामित्रजीकी पूजा करते समय जो अत्यन्त प्रेम हुआ, उसकी रीति तो वर्णन ही नहीं की जा सकती।

दो०—बामदेव आदिक रिषय ❀ पूजे मुदित महीस।
दिये दिब्य आसन सबहि ❀ सब सन लही असीस॥३५३॥

राजाने प्रसन्न होकर वामदेव आदि ऋषियोंको पूजा, सबको सुन्दर आसन दिये, और सबसे आशीर्वाद पाया।

बहुरि कीन्ह कोसलपति पूजा ❀ जानि ईससम भाउ न दूजा॥
कीन्हि जोरि कर बिनय बड़ाई ❀ कहि निज भाग्य बिभव बहुताई॥

फिर ईश्वरके समान जानकर—किसी दूसरे भावसे नहीं—राजा जनकने राजा दशरथकी पूजा की और अपने भाग्य और वैभवको बहुत सराहकर हाथ जोड़कर विनय और बड़ाई की।

पूजे भूपति सकल बराती ❀ समधी सम सादर सब भाँती॥
आसन उचित दिये सब काहू ❀ कहउँ कहा मुख एक उछाहू॥

राजाने सब बारातियोंकी सब प्रकार आदरपूर्वक समधीके समान ही पूजा की और सब किसीको योग्य आसन दिया। उस आनन्दका वर्णन एक मुखसे मैं क्या करूँ?

सकल बरात जनक सनमानी ❀ दान मान बिनती बर बानी॥
बिधि हरिहर दिसिपति दिनराऊ ❀ जे जानहिं रघुबीर प्रभाऊ॥

राजा जनकने दान देकर, आदर-सत्कार करके और श्रेष्ठ वाणीसे विनती करके बारातके सब लोगोंका सम्मान किया। ब्रह्मा, विष्णु और महेश तथा दिक्पाल और सूर्य जो श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव जानते हैं।

कपट बिप्र बर बेषु बनाये ❀ कौतुक देखहिं अति सचुपाये॥
पूजे जनक देवसम जाने ❀ दिये सुआसन बिनु पहिचाने॥

सब कपटसे ब्राह्मणका श्रेष्ठ भेष बनाये हुए बिलकुल चुप होकर तमाशा देखते थे; इन सबको राजा जनकने देवताओंके समान जानकर पूजा और बिना पहचाने ही सुन्दर आसन दिये।

छं०—पहिचान को केहि जान सबहि अपान सुधि भोरी भई।
आनंदकंद बिलोकि दूलह उभय दिसि आनँदमई॥
सुर लखे राम सुजान पूजे मानसिक आसन दये।
अवलोकि सीलु सुभाउ प्रभु को बिबुध मन प्रमुदित भये॥

कौन पहचानता और किसको जानता? सभीको अपनी सुध भुला गयी। आनंदकंद श्रीरामचन्द्रजीको दूल्हा देखकर दोनों ओर आनंद छा गया। चतुर श्रीरामचन्द्रजीने देवताओंको देखा और पूजकर उन्हें मानसिक आसन दिये। देवता लोग श्रीरामचन्द्रजीका शील और स्वभाव देखकर मनमें प्रसन्न हुए।

दो०—रामचंद्र-मुख-चन्द्र - छबि ❀ लोचन चारु चकोर।
करत पान सादर सकल ❀ प्रेम प्रमोद न थोर॥३५४॥

वे सब श्रीरामचन्द्रजीके चन्द्रमुखकी शोभाको चकोरकी भांति अपने सुन्दर नेत्रोंसे आदरपूर्वक पान करते थे। उन्हें बड़ा प्रेम और आनंद हुआ।

समउ बिलोकि बसिष्ठ बोलाये ❀ सादर सतानंद सुनि आये॥
बेगि कुअँरि अब आनहु जाई ❀ चले मुदित मुनिआयसु पाई॥

समय देखकर वशिष्ठ मुनिने आदरपूर्वक सतानन्दको बुलाया। सुनकर सतानद आये। वशिष्ठजीने कहा कि अब जाकर सीताजीको जल्दी लाओ। मुनिकी आज्ञा पाकर वे प्रसन्न होकर चले।

रानी सुनि उपरोहित बानी ❀ प्रमुदित सखिन्ह समेत सयानी॥
बिप्रबधू कुलबृद्ध बोलाई ❀ करि कुलरीति सुमंगल गाई॥

पुरोहितकी वाणी सुनकर चतुर रानियां सखियोंसमेत प्रसन्न हुईं और ब्राह्मणोंकी स्त्रियों और कुलकी बूढ़ी स्त्रियोंको बुलाकर उन्होंने सुन्दर मंगलगानपूर्वक कुलकी रीति की।

नारिबेष जे सुर-बर-बामा ❀ सकल सुभाय सुंदरी स्यामा॥
तिन्हहिं देखि सुख पावहिं नारी ❀ बिनु पहिचानि प्रान तें प्यारी॥

देवताओंकी जो सुन्दर स्त्रियां वहां स्त्रीके रूपमें थीं, वे सब स्वभावसे ही सुन्दर और सोलह-सोलह वर्षकी अवस्थावाली थीं। उन्हें देखकर स्त्रियां सुख पाती थीं और पहचाने बिना ही वे उन्हें प्राणोंसे भी प्यारी लगती थीं।

छं०—मंडप सनमानहिं रानी ❀ उमा-रमा सारद - सम जानी॥
सीता समाज बनाई ❀ मुदित मण्डपहिं चलीं लेवाई॥

पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वतीके समान जानकर रानी उनका बार-बार सम्मान करती थीं। सीताजीका शृंगार कर और अपना समूह बनाकर वे सब उन्हें प्रसन्न होकर मण्डपमें लिवा ले चलीं।

छं०—चलि ल्याइ सीतहि सखी सादर सजि सुमंगल भामिनी ॥
नव सप्त साजे सुन्दरी सब मत्त-कुंजर-गामिनी ॥
कलगान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं काम कोकिल लाजहीं।
मंजीर नूपुर कलित कंकन तालगति बरबाजहीं ॥

सखियां और स्त्रियां सुन्दर मांगलिक वस्तुओंको सजाकर सीताजीको आदरपूर्वक लिवा ले चलीं। सोलह शृंगार किये हुये सब सुन्दरियां मतवाले हाथीकी चालसे चलनेवाली हैं। सुन्दर गान सुनकर मुनिजन अपना ध्यान छोड़ देते हैं और कामदेव तथा कोयल भी लजाती है। उनके कंकन, सुन्दर पाजेब और बिछिया, सब सुन्दर तालकी गतिसे बज रहे थे।

दो०—सोहति बनिताबृंद महं ❁ सहज सुहावनि सीय।
छबि-ललना-गन मध्य जनु ❁ सुखमातिय कमनीय ॥३५५॥

स्वभावसे ही सुन्दर सीताजी स्त्रियोंके समूहमें शोभा पा रही हैं, मानों छबिरूपी स्त्रीगणोंके बीचमें सुन्दरता सुन्दर स्त्रीके रूपमें हो।

सिय सुंदरता बरनि न जाई ❁ लघुमति बहुत मनोहरताई ॥
आवत दीखि बरातिन्ह सीता ❁ रूपरासि सब भांति पुनीता ॥

सीताजीकी सुन्दरता वर्णन नहीं की जा सकती। मेरी बुद्धि कम है और सुन्दरता बहुत है। रूपकी राशि और सब प्रकार पवित्र सीताजीको बारातियोंने आते देखा।

सबहि मनहिं मन किये प्रनामा ❁ देखि राम भये पूरनकामा ॥
हरषे दसरथ सुतन्ह समेता ❁ कहि न जाइ उर आनंद जेता ॥

सबने मन-ही-मन प्रणाम किया और श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सबकी सब इच्छाएं पूर्ण हो गयीं। पुत्रोंसमेत राजा दशरथ प्रसन्न हुए। उनके हृदयमें जितना आनंद था वह कहा नहीं जाता।

सुर प्रनामु करि बरसहिं फूला ❁ मुनि-असीस-धुनि मंगलमूला ॥
गान-निसान-कोलाहलु भारी ❁ प्रेम-प्रमोद-मगन नरनारी ॥

प्रणाम करके देवता फूल बरसाते हैं। मुनियोंके आशीर्वादकी मंगलमूल ध्वनि हो रही है। गीतों और बाजोंका भारी कोलाहल हो रहा है और पुरुष एवं स्त्री—सब प्रेम और आनन्दमें मग्न हो रहे हैं।

एहि बिधि सीय मंडपहिं आई ❁ प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई ॥
तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू ❁ दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू ॥

इस प्रकार सीताजी मण्डपमें आयीं। मुनिराज प्रसन्न होकर शान्तिपाठ करने लगे। दोनों कुलगुरुओंने उस समयकी रीति, व्यवहार और आचार—सब किये।

छं०—आचारु करि गुरु गौर गनपति मुदित बिप्र पुजावहीं।
सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अतिसुख पावहीं ॥
मधुपर्क मंगलद्रव्य जो जेहि समय मुनि मन महँ चहहिं।
भरे कनककोपर कलस सो तब लिये परिचारक रहहिं ॥

ब्राह्मण लोग प्रसन्न होकर कुलाचारपूर्वक गुरु, पार्वती और गणेशजीका पूजन करा रहे हैं, जिसे देवता प्रकट होकर ग्रहण करते और आशीर्वाद देते हैं तथा अत्यन्त सुख पाते हैं। मुनि अपने मनमें मधुपर्क आदि मांगलिक पदार्थोंमेंसे, जिसको जिस समय चाहते हैं, उसे उसी समय सेवक लोग सोनेके कलश और परातोंमें भरे हुए उपस्थित मिलते हैं।

कुलरीति प्रीतिसमेत रबि कहि देत सबु सादर कियो।
एहि भांति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंहासन दियो ॥
सिय-राम अवलोकनि परसपर प्रेम काहु न लखि परइ।
मन-बुद्धि-बर-बानी-अगोचर प्रगट कबि कैसे करइ ॥

सूर्यनारायण प्रेमपूर्वक अपने कुलकी सब रीतिं बतलाते हैं। उसीके अनुसार आदरपूर्वक सब काम हुआ। इस प्रकार देवताओंको पुजाकर सीताजीको बैठनेके लिये सुन्दर सिंहासन दिया गया। श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीका परस्पर देखना और प्रेम किसीको देख नहीं पड़ता, क्योंकि वह मन, वाणी और बुद्धिकी पहुंचके बाहर है। कवि उसे कैसे प्रकट कर सकता है?

दो०—होम समय तनु धरि अनलु ❁ अतिसुख आहुति लेहिं।
बिप्रबेष धरि बेद सब ❁ कहि बिबाहबिधि देहिं ॥३२६॥

होमके समय अग्निदेव शरीर धारणकर बड़े सुखसे आहुतियां लेने लगे। वेद ब्राह्मणका वेश रखकर विवाहकी समस्त विधि बतला रहे हैं।

जनक-पाट-महिषी जग जानी ❁ सीयमातु किमि जाइ बखानी ॥
सुजस सुकृत सुख सुंदरताई ❁ सब समेटि बिधि रची बनाई ॥

राजा जनककी पटरानी संसारमें प्रसिद्ध सीताजीकी माताका वर्णन कैसे किया जाय, मानों ब्रह्माने सुयश, सत्कर्म, सुख और सुन्दरता – सबको इकट्ठा कर उन्हें सजाकर बनाया हो।

समउ जानि मुनिबरन्ह बोलाई ❀ सुनत सुआसिनि सादर ल्याई॥
जनक – बाम – दिसि सोह सुनयना ❀ हिमगिरि संग बनी जनु मयना॥

समय जानकर मुनिवरोंने उन्हें बुलाया। सुनते ही सौभाग्यवती स्त्रियां उन्हें आदरपूर्वक ले आयीं। राजा जनककी बाईं ओर सुनयना महारानी शोभा पा रही हैं, मानों हिमाचलके संगमें मैना शोभा पा रही हो।

कनककलस मनिकोपर रूरे ❀ सुचि - सुगंध - मंगल - जल-पूरे॥
निजकर मुदित राय अरु रानी ❀ धरे राम के आगे आनी॥

पवित्र, सुगंधित और मांगलिक जलसे भरे हुए सोनेके कलशों और मणियोंसे जड़ी हुई सुंदर परातोंको राजा और रानीने प्रसन्न होकर अपने हाथों श्रीरामचन्द्रजीके आगे लाकर रखा।

पढ़हिं वेद मुनि मंगलबानी ❀ गगन सुमन झरि अवसर जानी॥
बर बिलोक दंपति अनुरागे ❀ पाय पुनीत पखारन लागे॥

मुनिजन मंगलवाणीसे वेद पढ़ने लगे, समय जानकर आकाशसे फूल बरसने लगे। वर श्रीरामचन्द्रजीको देखकर राजा और रानी प्रेममग्न हो गये और पवित्र चरण धोने लगे।

छं०—लागे पखारन्ह पायपंकज प्रेम जनु पुलकावली।
नभ नगर गान-निसान-जय-धुनि उमगि जनु चहुं दिसि चली॥
जे पद सरोज मनोज - अरि - उर - सर सदैव बिराजहीं।
जे सुकृत सुमिरत बिमलता मन सकल कलिमल भाजहीं॥

प्रेमसे जब वे चरणकमल धोने लगे तब शरीर पुलकायमान हो गया। नगरमें और आकाशमें गीतों, नगारों और जय-जयकारकी ध्वनि होने लगी, जो मानों उमड़कर चारों दिशाओंको चल दी। जो चरणकमल कामदेवके शत्रु शिवजीके हृदयरूपी सरोवरमें सदैव विराजते हैं, जिस पुण्यचरणके स्मरण करते ही मन निर्मल हो जाता है और कलियुगके सब दोष दूर हो जाते हैं।

जे परसि मुनिबनिता लही गति रही जो पातकमई।
मकरंद जिन्ह को संभुसिर सुचिता अवधि सुर बरनई॥
करि मधुप मुनि मन जोगिजन जे सेइ अभिमत गति लहहिं।
तेइ पद पखारत भाग्यभाजन जनक जय जय सब कहहिं॥

जिन्हें छूकर गौतम मुनिकी स्त्री अहल्याने, जो पापमय थी, मोक्ष प्राप्त की, जिनकी रजको शिवजी शिरपर धारण करते हैं और देवता जिन्हें पवित्रताकी सीमा कहकर वर्णन करते हैं, मुनि और योगीजन अपने मनको भौंरा बनाकर जिनकी सेवासे मनोवांछित फल पाते हैं उन्हीं चरणोंको भाग्यशाली राजा जनक धोते हैं और सब जय-जयकार कह रहे हैं।

बर-कुअँरि-करतल जोरि साखोच्चार दोउ कुलगुरु करहिं।
भयो पानि गहन बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनंद भरहिं॥
सुखमूल दूलह देखि दंपति पुलक तनु हुलसेउ हियो।
करि लोक - बेद - बिधान कन्यादान नृपभूषन कियो॥

दोनों कुलगुरु वर और कन्याके हाथपर हाथ रखकर शाखोच्चार कर रहे हैं। पाणिग्रहण हुआ देखकर ब्रह्मा, देवता, मनुष्य और मुनि सब आनन्दित होते हैं। आनंदकन्द दूल्हा श्रीरामचन्द्रजीको देखकर राजा जनक और उनकी रानीका शरीर पुलकायमान हो गया और हृदय उमड़ आया। राजाओंके भूषण राजा जनकने लोक-रीति और वेदरीति पूरी कर कन्यादान किया।

हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई।
तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिस्व कल कीरति नई॥
क्यों करहिं बिनय बिदेह कियो बिदेह मूरति साँवरी।
करि होमु बिधिवत गांठि जोरी होन लागी भाँवरी॥

जिस प्रकार हिमाचलने शिवजीको पार्वती और समुद्रने भगवान् विष्णुको लक्ष्मी दीं उसी प्रकार राजा जनकने श्रीरामचंद्रजीको सीताजी समर्पित कर दीं। यह सुन्दर नयी कीर्ति सारे संसारमें हो गयी, राजा जनक विनती क्योंकर करें, उन्हें सांवली मूर्ति श्रीरामचंद्रजीने विदेह कर दिया? होम करके विधिपूर्वक ग्रंथिबंधन किया और भांवरी पड़ने लगी।

दो०—जयधुनि बंदी - बेद धुनि ❀ मंगलगान निसान।
सुनि हरषहिं बरसहिं बिबुध ❀ सुर-तरु-सुमन सुजान॥ ३५७॥

जय-जयकारकी ध्वनि, वंदीजनोंकी ध्वनि, वेदध्वनि, मंगल गीतोंकी ध्वनि और नगारोंकी ध्वनि—सबको सुनकर सुजान देवता प्रसन्न होते और कल्पवृक्षके फूल बरसाते हैं।

कुअंरु कुअंरि कल भावंरि देहीं ❀ नयनलाभु सब सादर लेहीं॥
जाइ न बरनि मनोहर जोरी ❀ जो उपमा कछु कहउं सो थोरी॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी—दोनों सुन्दर भांवरें डाल रहे हैं और सब आदरपूर्वक नेत्रोंका लाभ ले रहे हैं। मनोहर जोड़ीका वर्णन नहीं किया जा सकता। उसकी जो कुछ भी उपमा दी जाय वही थोड़ी है।

राम सीय सुंदर परिछाहीं ❀ जगमगाति मनि खंभन्ह माहीं॥
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा ❀ देखत रामबिबाहु अनूपा॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीकी सुन्दर परछाईं मणिके खंभोंमें जगमगाती है, मानों कामदेव और रति बहुतसे रूप रखकर श्रीरामचन्द्रजीका अनुपम विवाह देख रहे हों।

दरसलालसा सकुच न थोरी ❀ प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी॥
भये मगन सब देखनिहारे ❀ जनक समान अपान बिसारे॥

दर्शनोंकी लालसा है, परंतु संकोच भी कम नहीं है, इसीलिये बारंबार प्रकट होते और छिपते हैं। देखनेवाले सब लोग मग्न हो गये और राजा जनकके समान ही अपनी सुध भूल गये।

प्रमुदित मुनिन्ह भावँरी फेरी ❀ नेगसहित सब रीति निबेरी॥
रामु सीयसिर सेंदुरु देहीं ❀ सोभा कहि न जाति बिधि केहीं॥

प्रसन्न होकर मुनियोंने भाँवरी पूरी की और नेगसहित सब रीतियां निपटायीं। श्रीरामचन्द्रजी सीताजीके शिरमें सिन्दूर लगा रहे हैं। यह शोभा किसी प्रकार भी कही नहीं जाती।

अरुन पराग जलजु भरि नीके ❀ ससिहि भूष अहि लोभ अमी के॥
बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुसासन ❀ बर दुलहिनि बैठे एक आसन॥

मानों सांप अमृतके लोभसे लाल कमलमें लाल रजको भली भांति भरकर चन्द्रमाको भूषित कर रहा हो। फिर वशिष्ठजीने आज्ञा दी और वर एवं वधू—दोनों एक ही आसनपर बैठे।

छं०—बैठे बरासन राम जानकि मुदित मन दसरथ भये।
तनु पुलक पुनि पुनि देखि अपने सुकृत - सुर-तरु-फल नये॥
भरि भुवन रहा उछाहु रामबिबाहु भा सबही कहा।
केहि भांति बरनि सिरात रसना एकु यहु मंगल महा॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी—दोनों एक ही श्रेष्ठ आसनपर बैठ गये और राजा दशरथ मनमें प्रसन्न हुए। अपने सत्कर्मरूपी कल्पवृक्षमें नये फल लगते देखकर बार-बार उनका शरीर पुलकायमान होने लगा। समस्त भुवनोंमें उत्साह भर गया और सभीने यह कहा कि श्रीरामचन्द्रजीका विवाह हुआ। इस महामंगलका किस प्रकार वर्णन करके एक जीभ पार पावे?

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साजु सवाँरि कै।
मांडवी स्रुतिकीरति उरमिला कुअँरि लईं हँकारि कै॥
कुस-केतु-कन्या प्रथम जो गुन-सील-सुख-सोभा-मई।
सब रीति-प्रीति-समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई॥

तब राजा जनकने वशिष्ठजीकी आज्ञा पाकर और व्याहका सामान सजाकर माण्डवी, श्रुतिकीर्ति और उर्मिला—तीनों राजकुमारियोंको बुलवा लिया। पहले कुशकेतुकी कन्या राजकुमारी माण्डवीको, जो गुण, शील, सुख और शोभामयी है, प्रीति समेत सब रीति पूरीकर राजाने भरतको व्याह दिया।

जानकी-लघु-भगिनी सकल सुंदर सिरोमनि जानि कै।
सो जनक दीन्ही ब्याहि लषनहि सकल बिधि सनमानि कै॥
जेहि नाम स्रुतिकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुनआगरी।
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप सील उजागरी॥

सीताजीकी छोटी बहिन (उर्मिला) को सब प्रकार सुन्दर और शिरोमणि जानकर राजा जनकने सब प्रकार सम्मान करके लक्ष्मणजीके साथ व्याह दिया। जिसका नाम श्रुतिकीर्त्ति है, जो सुन्दर नेत्रों और सुन्दर मुखवाली है, जो सब गुणोंसे भरी हुई है, और जिसका रूप एवं शील उज्ज्वल है उसे राजा जनकने शत्रुघ्नको दिया।

अनुरूप बर दुलहिनि परसपर लखि सकुचि हियँ हरषहीं।
सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुरगन बरषहीं॥
सुंदरी सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं।
जनु जीवउर चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं॥

सब दूल्हा और दुलहिन अपनी-अपनी बराबरकी जोड़ीको परस्पर देखकर सकुचाते और मनमें प्रसन्न होते हैं। सब लोग प्रसन्न होकर सुंदरताकी सराहना करते हैं और देवता लोग फूल बरसाते हैं। सुन्दर वरोंके साथ सब दुलहिनें एक ही मण्डपमें शोभा पा रही हैं, मानों जीवके हृदयमें चारों अवस्थाएँ अपने स्वामियों-समेत विराज रही हैं।

दो०—मुदित अवधपति सकल सुत ❀ बधुन्ह समेत निहारि।
जनु पाये महि-पाल-मनि ❀ क्रियन्ह सहित फल चारि॥३२५॥

सब पुत्रोंको बहुओंसमेत देखकर राजा दशरथ प्रसन्न हुए, मानों राजाओंमें रत्न जैसे किसी नरेशने क्रियाओंसमेत चारों फल पा लिये हों।

जसि रघुबीर ब्याहबिधि बरनी * सकलकुअँर ब्याहे तेहि करनी ॥
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी * रहा कनकमनि मंडप पूरी ॥

श्रीरामचन्द्रजीके विवाहकी जैसी विधि वर्णन की गयी है उसी विधिसे सब राजकुमारोंका विवाह हुआ। बहुत अधिक दहेजका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। सोने और मणियोंसे सारा मण्डप भरा हुआ था।

कंबल बसन बिचित्र पटोरे * भाँति भाँति बहुमोल न थोरे ॥
गज रथ तुरग दास अरु दासी * धेनु अलंकृत कामदुहा सी ॥

ऊनी कपड़े और अनेक प्रकारके बहुतसे बहुमूल्य विचित्र रेशमी वस्त्र, हाथी, घोड़ा, रथ, दास और दासियां, कामधेनुके समान सजाई हुई गायें,

बस्तु अनेक करिय किमि लेखा * कहि न जाइ जानहिं जिन्ह देखा ॥
लोकपाल अवलोकि सिहाने * लीन्ह अवधपति सब सुख माने ॥

और अनेक प्रकारकी वस्तुएँ—सबकी कैसे गिनती करें!—वर्णन नहीं किया जा सकता। जिन्होंने उन्हें देखा है वही जानते हैं। उन्हें देखकर लोकपाल भी प्रसन्न हुए। उन सबको राजा दशरथने सुख मानकर ले लिया।

दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि भावा * उबरा सो जनवासहिं आवा ॥
तब कर जोरि जनकु मृदुबानी * बोले सब बरात सनमानी ॥

मंगतोंमेंसे जिसको जो पसंद आया उसे वही दिया। जो वस्तुएँ देनेसे रहीं वे जनवासेमें आ गयीं। तब सब बारातका आदर कर राजा जनक मीठी वाणीसे हाथ जोड़कर बोले।

छं०—सनमानि सकल बरात आदर दान बिनय बड़ाइ कै।
प्रमुदित महा मुनिबृंद बंदे पूजि प्रेम लड़ाइ कै ॥
सिरनाइ देव मनाइ सब सन कहत करसंपुट किये।
सुर साधु चाहत भाव सिंधु कि तोष जलअंजलि दिये ॥

सब बारातका आदर, दान, विनय और बड़ाईसे सम्मानकर राजा जनकने अत्यंत प्रसन्न होकर मुनियोंके समूहोंकी प्रेमके साथ पूजा और वंदना की। शिर नवाकर देवताओंको मनाकर राजा जनक हाथ जोड़े हुए सब लोगोंसे कहने लगे कि देवता और सज्जन भाव ही चाहते हैं। पानीकी एक अंजलि देनेसे क्या समुद्र भी संतुष्ट होता है?

करजोरि जनकु बहोरि बंधुसमेत कोसलराय सों।
बोले मनोहर बयन सानि सनेह सील सुभाय सों ॥

सनबंध राजन रावरे हम बड़े अब सबविधि भये।
यह राज साज समेत सेवक जानिबी बिनु गथ लये।

फिर हाथ जोड़कर राजा जनक भाइयों समेत राजा दशरथसे प्रेम और शीलमें सने हुए मनोहर वचन स्वभावसे बोले कि हे राजन् ! आपके साथ संबन्ध होनेसे हम अब सब प्रकार बड़े हुए। इस सारे राजपाट-समेत आप मुझे अपना बिना मोल लिया हुआ सेवक जानिये।

ए दारिका परिचारिका करि पालबी करुनामई।
अपराधु छमिबो बोलि पठये बहुत हौं ढीठ्यो दई॥
पुनि भानु-कुल-भूषन सकल-सनमान-निधि समधी किये।
कहि जात नहिं बिनती परसपर प्रेम परिपूरन हिये॥

टहलिनी समझकर इन कन्याओंका दयापूर्वक पालन कीजियेगा। मैंने आपको यहां बुला भेजा, यह बड़ी ढिठाई की। आप अपराध क्षमा कीजियेगा। फिर सूर्यवंशके भूषण राजा दशरथने समधी राजा जनकका सब प्रकार बहुत ही सम्मान किया। प्रेमसे हृदय भरा हुआ होनेके कारण एकको दूसरेसे बिनती नहीं कहते बनती।

वृंदारकागन सुमन बरषहिं राउ जनवासहिं चले।
दुंदुभी जयधुनि वेदधुनि नभ नगर कौतूहल भले॥
तब सखी मंगलगान करत मुनीसआयसु पाइ कै।
दूलह दुलहिनिन्हि सहित सुंदरि चलीं कोहबर ल्याइ कै॥

जब राजा जनवासेको जाने लगे तब देवता फूल बरसाने लगे। आकाशमें और नगरमें नगारे बजने और जयजयकार तथा वेदध्वनि होनेसे खूब कौतूहल होने लगा। तब मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर मंगल गीत गाती हुई सुन्दर सखियां दूलहोंको दुलहिनोंसमेत लेकर कोहबरके लिये चलीं।

दो०—पुनि पुनि रामहिं चितव सिय ❀ सकुचति मन सकुचै न।
हरत मनोहर - मीन - छवि ❀ प्रेम पियासे नैन॥ ३५६॥

सीताजी बार-बार श्रीरामचन्द्रको देखती हैं। वे संकोच करती हैं, पर मन नहीं सकुचाता। श्रीरामचन्द्र-जीके प्रेमके प्यासे नेत्र मछलीकी सुन्दर शोभाको हर लेते हैं।

स्याम सरीर सुभाय सुहावन ❀ सोभा कोटि - मनोज - लजावन॥
जावकजुत पदकमल सुहाये ❀ मुनि-मन-मधुप रहत जिन्ह छाये॥

स्वभावसे ही सुन्दर सांवले शरीरकी शोभा करोड़ों कामदेवोंको भी लजानेवाली है। महावरसमेत सुन्दर चरणकमल शोभित हैं, जिनमें मुनियोंका मनरूपी भौंरा सदा लगा रहता है।

पीत पुनीत मनोहर धोती ❀ हरत बाल-रबि-दामिनि-जोती ॥
कल किंकिनि कटिसूत्र मनोहर ❀ बाहु बिसाल बिभूषन सुन्दर ॥

पीले रङ्गकी पवित्र सुन्दर धोती प्रातःकालके सूर्य और बिजलीकी आभाको भी हरण करती है। सुन्दर करधनी, मनोहर मेखला, लंबी-लंबी भुजाएं, सुन्दर भूषण—

पीत जनेउ महाछबि देई ❀ करमुद्रिका चोरि चित लेई ॥
सोहत ब्याहसाज सब साजे ❀ उर आयत भूषन उर राजे ॥

और पीला जनेऊ—सब अत्यंत शोभा दे रहे हैं। हाथकी अंगूठी तो चित्त ही चुरा लेती है। विशाल स्वरूप है, जिसपर सब गहने शोभित हैं। ब्याहके सब साजसे सजे हुए वे शोभा पा रहे हैं।

पियर उपरना कांखा सोती ❀ दुहु आँचरन्हि लगे मनि मोती ॥
नयन कमल कल कुंडल काना ❀ बदनु सकल सौंदर्जनिधाना ॥

जनेऊकी भांति बगलसे होकर पीला दुपट्टा पड़ा हुआ है, जिसके दोनों किनारोंपर मणि और मोती लगे हुऐ हैं। कमल जैसे नेत्र हैं, कानोंमें सुन्दर कुण्डल हैं और सारा शरीर अत्यंत सुन्दर है।

सुंदर भृकुटि मनोहर नासा ❀ भालतिलकु रुचिरता निवासा ॥
सोहत मौरु मनोहर माथें ❀ मंगलमय मुकुतामनि गाथें ॥

सुन्दर भौंहें, मनोहर नाक, मस्तकपर सुन्दरताका निवास जैसा तिलक और शिरपर सुन्दर मौर, जो मंगलमय मुक्तामणियोंसे गुंथा हुआ है, शोभा पा रहा है।

छं०—गाथे महामनि मौरु मंजुल अंग सब चितचोरहीं।
पुरनारि सुरसुन्दरी बरहिं बिलोकि सब तृन तोरहीं ॥
मनि बसिन भूषन बारि आरति करहिं मंगल गावहीं।
सुर सुमन बरसहिं सूत मागध बंदि सुजस सुनावहीं ॥

सुन्दर मौरमें महामणियां गुंथी हुई हैं, सब अंग चित्तको चुरा लेनेवाले हैं; जनकपुरकी स्त्रियां और देवताओंकी सुन्दरियां, सब वरको देखकर तिनका तोड़ती हैं; मणियां, वस्त्र और भूषण न्योछावर कर सब आरती करती और मंगल गाती हैं; देवता फूल बरसाते हैं, और सूत, मागध और बंदीजन सुन्दर कीर्ति वर्णन करते हैं।

कोहबरहिं आने कुअँर कुअँरि सुआसिनिन्हि सुख पाइ कै।
अति प्रीति लौकिक रीति लागीं करन मंगल गाइ कै ॥

लहकौरि गौरि सिखाव रामहि सीय सन सारद कहहिं ।
रनिवासु हास-बिलास-रस-बस जनम को फल सब लहहिं ॥

सौभाग्यवती स्त्रियां सुख पाकर चारों राजकुमारों और कुमारियोंको कोहबरमें ले आयीं और मंगल गाकर अत्यंत प्रीतिसे लौकिक रीति करने लगीं। पार्वतीजी श्रीरामचन्द्रजीको ग्रास खा लेनेकी सीख दे रही हैं और उसीके लिये सीताजीसे सरस्वती कह रही हैं। सारा रनवास हंसी और विनोदके रसमें डूबा हुआ है। सब अपने जीवनका फल पा रहे हैं।

निज पानि-मनि महुँ देखि प्रतिमूरति सु-रूप-निधान की।
चालति न भुजबल्ली बिलोकनि-बिरह-भय-बस जानकी ॥
कौतुक बिनोद प्रमोदु प्रेमु न जाइ कहि जानहिं अली।
बर कुअँरि सुन्दर सकल सखी लिवाइ जनवासहिं चली ॥

अपने हाथमें पहनी हुई मणियोंमें सून्दर रूपनिधान श्रीरामचन्द्रजीकी प्रतिमूर्ति देखकर सीताजी अपनी भुजाओंको हिलाती नहीं; क्योंकि उन्हें भय है कि वैसा होनेसे दर्शनमें वियोग हो जायगा। हंसी, विनोद, आनंद और प्रेम कहा नहीं जाता, उसे सखियां ही जानती हैं। सब सखियां वरों और सुन्दर कुमारियोंको लेकर जनवासेके लिये चलीं।

तेहि समय सुनिय असीस जहँ तहँ नगर नभ आनंद महा।
चिरजिअहु जोरी चारु चारिहुँ मुदितमन सबही कहा ॥
जोगींद्र सिद्ध मुनीस देव बिलोकि प्रभु दुंदुभि हनी।
चले हरषि बरषि प्रसून निज-निज-लोक जय जय जय भनी ॥

उसी समय जहां-तहां चारों ओरसे आशीर्वाद सुनाई पड़ने लगा और नगर एवं आकाशमें बड़ा आनंद छा गया। सभीने प्रसन्न मनसे यह कहा कि चारों सुन्दर जोड़ियां चिरंजीवि हों। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर योगिराज, सिद्ध, मुनीश्वर और देवता—सबने नगारे बजाये और प्रसन्न हो फूल बरसाकर जय—जयकार करते हुए अपने-अपने लोकको चले गये।

दो०—सहित बधूटिन्ह कुअँर सब ❁ तब आये पितु पास।
सोभा मंगल मोद भरि ❁ उमगेउ जनु जनवास ॥३६०॥

तब सब राजकुमार बहुओंसमेत पिताजीके पास आये; मानों शोभा मंगल, और आनन्दसे भरकर जनवासा ही उमड़ पड़ा हो।

पुनि जेवनार भई बहुभांती ❀ पठये जनक बोलाइ बराती ॥
परत पावंडे बसन अनूपा ❀ सुतन्ह समेत गवन किय भूपा ॥

फिर अनेक प्रकारसे जेवनार हुई और राजा जनकने बारातियोंको बुला भेजा। अनुपम वस्त्रोंके पावंड़े पड़ने लगे और राजा दशरथने पुत्रोंसमेत गमन किया।

सादर सब के पाय पखारे ❀ जथाजोग पीढ़न बैठारे ॥
धोये जनक अवध-पति-चरना ❀ सील सनेहु जाइ नहिं बरना ॥

आदरपूर्वक सबके पैर धोये और यथायोग्य आसनोंपर बिठलाया। राजा जनकने अयोध्यानरेश राजा दशरथके चरण धोये। शील और स्नेहका वर्णन नहीं किया जाता।

बहुरि राम-पद-पंकज धोये ❀ जे हर हृदयकमल महं गोये ॥
तीनिउ भाइ रामसम जानी ❀ धोये चरन जनक निज पानी ॥

फिर उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल धोये, जो शिवजीके हृदयकमलमें छिपे रहते हैं। श्रीरामचन्द्रजीके समान जानकर तीनों भाइयोंके चरणोंको भी राजा जनकने अपने हाथोंसे धोया।

आसन उचित सबहि नृप दीन्हे ❀ बोलि सूपकारी सब लीन्हे ॥
सादर लगे परन पनवारे ❀ कनककील मनिपान सवांरे ॥

राजाने सबको उचित आसन दिये और सब रसोइयोंको बुला लिया। आदरके साथ पत्तलें पड़ने लगीं, जो मणियोंके पत्तों और सोनेकी कीलोंसे बनायी गयी थीं।

दो०—सूपोदन सुरभी सरपि ❀ सुंदर स्वादु पुनीत ।
छन महुं सब के परुसि गे ❀ चतुर सुआर बिनीत ॥३२१॥

नम्रताके साथ चतुर रसोइयोंने सुन्दर, स्वादिष्ट और पवित्र दालभात और गायका घी सबको एक क्षणमें परोस दिया।

पंचकवलि करि जेवन लागे ❀ गारि गान सुनि अति अनुरागे ॥
भांति अनेक परे पकवाने ❀ सुधासरिस नहिं जाहिं बखाने ॥

'पंच कवल' की विधि पूरीकर भोजन करने लगे। गालियोंका गाना सुनकर सब प्रेममें मग्न हो गये। अनेक प्रकारके पकवान परोसे गये, जो अमृतके समान थे, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता।

परुसन लगे सुआर सुजाना ❀ बिंजन बिबिध नाम को जाना ॥
चारि भांति भोजन बिधि गाई ❀ एक एक बिधि बरनि न जाई ॥

चतुर रसोइये अनेक प्रकारके व्यंजन परोसने लगे, उनका नाम कौन जानता है ? पाकशास्त्रमें चार प्रकारकी भोजनविधि वर्णन की गई है, जिनमेंसे किसी एक विधिका भी वर्णन नहीं किया जा सकता ।

छरस रुचिर बिंजन बहु जाती ❀ एक एक रस अगनित भांती ॥
जेंवत देहिं मधुर धुनि गारी ❀ लेइ लेइ नाम पुरुष अरु नारी ॥

सुन्दर छहो रसोंके अनेक प्रकारके व्यंजन थे, जिनमेंसे एक ही एक रसके असंख्य प्रकारके थे । भोजन करते हुए स्त्रियों और पुरुषोंका नाम ले-लेकर स्त्रियां मीठे स्वरसे गालियां दे रही थीं ।

समय सुहावनि गारि बिराजा ❀ हंसत राउ सुनि सहित समाजा ॥
एहि बिधि सबही भोजनु कीन्हा ❀ आदरसहित आचमन दीन्हा ॥

समयानुसार सुहावनी गालियां बड़ी सुन्दर लगती थीं । राजा दशरथ उन्हें सुनकर अपने समाजसमेत हँसने लगे । इस प्रकार सभीने भोजन किया और पीछे सबको आचमन कराया गया ।

दो०—देइ पान पूजे जनक ❀ दसरथ सहित समाज ।
जनवासे गवने मुदित ❀ सकल - भूप - सिरताज ॥३६२॥

समाज समेत राजा दशरथको पान देकर राजा जनकने पूजा । सब राजाओंके शिरोमणि राजा दशरथ प्रसन्न होकर जनवासेको गये ।

नित नूतन मंगल पुर माहीं ❀ निमिषसरिस दिन जामिनि जाहीं ॥
बड़े भोर भूपति - मनि जागे ❀ जाचक गुनगन गावन लागे ॥

नगरमें नित्य नये मंगल होने लगे, निमेषके समान रातदिन बीतने लगे । बड़े सवेरे ही राजा दशरथ जग गये । मंगते उनके गुणोंके समूहोंको गाने लग गये ।

देखि कुअंर बर बधुन्ह समेता ❀ किमि कहि जात मोद मन जेता ॥
प्रातक्रिया करि गे गुरु पाहीं ❀ महाप्रमोद प्रेमु मनु माहीं ॥

पुत्रोंको सुन्दर बहुओंसमेत देखकर उनके मनको जितना आनंद हुआ, वह कैसे कहा जा सकता है ? प्रातःकृत्य करके वे गुरुके पास गये। उनके मनमें बड़ा आनन्द और प्रेम था ।

करि प्रनामु पूजा कर जोरी ❀ बोले गिरा अमिय जनु बोरी ॥
तुम्हरी कृपा सुनहु मुनिराजा ❀ भयउं आज मैं पूरनकाजा ॥

प्रणाम और पूजा कर हाथ जोड़कर वे ऐसी वाणी बोले, मानों वह अमृतसे सनी हुई हो । हे मुनिराज, सुनिये, आपकी कृपासे आज मेरे सब कार्य पूर्ण हुए ।

अब सब बिप्र बोलाइ गोसाईं ❀ देहु धेनु सब भांति बनाईं ॥
सुनि गुरु करि महिपाल बड़ाई ❀ पुनि पठये मुनिबृंद बोलाईं ॥

हे स्वामी, अब सब ब्राह्मणोंको बुलाकर सब प्रकार सजी हुई गायें दीजिये। यह सुनकर गुरुने राजाकी बड़ाई की और फिर मुनियोंके समूहोंको बुला भेजा।

दो०—बामदेव अरु देवरिषि ❀ बालमीक जाबालि।
आये मुनि-बर-निकर तब ❀ कौसिकादि तपसालि ॥३६३॥

वामदेव, नारद,वाल्मीकि, जाबालि और तपोनिधि विश्वामित्र आदि श्रेष्ठ मुनियोंके समूह तब वहां आये।

दंड प्रनाम सबहि नृप कीन्हे ❀ पूजिसप्रेम बरासन दीन्हे ॥
चारि लच्छ बरधेनु मंगाई ❀ काम-सुरभि-सम सील सुहाई ॥

राजाने सबको दण्डवत और प्रणाम किया और प्रेमपूर्वक पूजा करके ऊंचा आसन दिया। कामधेनुके समान सुन्दर जातिकी चार लाख बढ़िया गायें मंगायीं।

सब बिधि सकल अलंकृत कीन्ही ❀ मुदित महिप महिदेवन दीन्ही ॥
करत बिनय बहुबिधि नरनाहू ❀ लहेउं आजु जग जीवनलाहू ॥

सबको सब प्रकार सजाया और प्रसन्न होकर सज्जन ब्राह्मणोंको दे दिया। राजाने अनेक प्रकारसे विनती करते हुए कहा कि संसारमें जन्म लेनेका लाभ आज पा लिया।

पाइ असीस महीसु अनंदा ❀ लिये बोलि पुनि जाचक बृंदा ॥
कनक बसन मनि हय गय स्यंदन ❀ दिये बूझि रुचि रबि-कुल-नंदन ॥

आशीर्वाद पाकर आनन्दित हो सूर्यवंशी राजा दशरथने फिर मंगतोंके समूह बुला लिये और उनकी रुचि बूझकर उन्होंने उन्हें सोना, कपड़ा, मणि, हाथी, घोड़े और रथ दिये।

चले पढ़त गावत गुनगाथा ❀ जय जय जय दिन-कर-कुल-नाथा ॥
एहि बिधि राम-बिबाह उछाहू ❀ सकइ न बरनि सहसमुख जाहू ॥

वे सब गुणोंकी कथा कहते और गाते हुए चले कि हे सूर्यवंशके स्वामी, आपकी जय हो, जय हो, जय हो! इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके विवाहका उत्सव हुआ, जिसे हजार मुँहवाले शेषनाग भी वर्णन नहीं कर सकते।

दो०—बार बार कौसिकचरन ❀ सीसु नाइ कह राउ।
यह सबु सुखु मुनिराज तव ❀ कृपा-कटाच्छ-प्रभाउ ॥३६४॥

विश्वामित्र मुनिके चरणोंको बार-बार शिर नवाकर राजा दशरथ कहने लगे कि हे मुनिराज, यह सब सुख आपकी कृपादृष्टिके प्रभावसे ही हुआ है।

जनक सनेहु सीलु करतूती ❀ नृपु सब भांति सराह बिभूती ॥
दिन उठि बिदा अवधपति मांगा ❀ राखहिं जनक सहित अनुरागा ॥

राजा जनकका स्नेह, शील, सत्कर्म और विभूति—सबको राजा दशरथने सब प्रकार सराहा। प्रतिदिन उठकर राजा दशरथ विदा मांगते हैं, परन्तु राजा जनक प्रेमके साथ रख लेते हैं।

नित नूतन आदरु अधिकाई ❀ दिनप्रति सहस भांति पहुनाई ॥
नित नव नगर अनंद उछाहू ❀ दसरथ गवंन सुहाइ न काहू ॥

नित्य नया आदर बढ़ता जाता है और प्रतिदिन हजारों तरहसे सत्कार होता है। नगरमें नित्य नया आनन्द और उत्साह रहता है और राजा दशरथका जाना किसीको नहीं सुहाता।

बहुत दिवस बीते एहि भांती ❀ जनु सनेहरजु बंधे बराती ॥
कौसिक सतानंद तब जाई ❀ कहा बिदेह नृपहि समुझाई ॥

इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, मानों बाराती लोग प्रेमकी रस्सीसे बंधे हुए हों। तब विश्वामित्र और सतानंदने जाकर राजा जनकको समझाकर कहा:—

अब दसरथ कहँ आयसु देहू ❀ जद्यपि छांड़ि न सकहु सनेहू ॥
भलेहिं नाथ कहि सचिव बोलाये ❀ कहि जय जीव सीस तिन्ह नाये ॥

यद्यपि आप प्रेम नहीं छोड़ सकते, तथापि अब राजा दशरथको आज्ञा दीजिये। राजा जनकने कहा कि "हे स्वामी, बहुत अच्छा।" फिर उन्होंने मंत्रियोंको बुलाया, जिन्होंने 'जय जीव' कहकर शिर नवाया।

दो०—अवध नाथ चाहत चलन ❀ भीतर करहु जनाउ।
भये प्रेमबस सचिव सुनि ❀ बिप्र सभासद राउ ॥३९५॥

राजा जनकने कहा कि अयोध्यापति राजा दशरथ जाना चाहते हैं, यह बात भीतर जाकर बतलाओ। यह सुनकर मंत्री, ब्राह्मण, सभासद और स्वयं राजा जनक—सब प्रेमके वशमें हो गये।

पुरबासी सुनि चलिहि बराता ❀ पूछत बिकल परसपर बाता ॥
सत्य गवनु सुनि सब बिलखाने ❀ मनहुं सांझ सरसिज सकुचाने ॥

यह सुनकर कि बारात विदा होगी, सब नगरवासी व्याकुल होकर परस्पर उस विषयमें पूछने लगे। जानेकी बात सत्य है, यह सुनकर सब दुःखी हुए, मानों संध्यासमय कमल सकुचा गये हों।

जहँ जहँ आवत बसे बराती ❀ तहँ तहँ सिद्ध चला बहु भांती ॥
बिबिधभांति मेवा पकवाना ❀ भोजनसाजु न जाइ बखाना ॥

आनेपर बाराती लोग जहां-जहां ठहरे थे, वहां-वहां अनेक प्रकारका सीधा अर्थात् चावल आदि कच्चा अन्न आने लगा। अनेक प्रकारके मेवा, पकवान और भोजनका सामान था—सबका वर्णन नहीं किया जा सकता।

भरि भरि बसह अपार कहारा ❀ पठये जनक अनेक सुआरा ॥
तुरग लाख रथ सहस पचीसा ❀ सकल सवाँरे नख अरु सीसा ॥

राजा जनकने बैलोंपर लाद-लादकर वह सब सामान कहारोंके साथ भेजा और साथ ही बहुतसे रसोइये भी। एक लाख घोड़े और पचीस हजार रथ, सबको नखसे लेकर चोटीतक सजाया।

मत्त सहस दस सिन्धुर साजे ❀ जिन्हहिं देखि दिसिकुंजर लाजे ॥
कनक बसन मनि भरि भरि जाना ❀ महिषीं धेनु बस्तु बिधि नाना ॥

दस हजार मतवाले हाथियोंको सजाया, जिन्हें देखकर दिग्गज भी लजा गये। सोने, मणियों और वस्त्रोंसे भरी हुई गाड़ियां, भैंसे, गायें और अनेक प्रकारकी वस्तुएँ दीं।

दो०—दाइज अमित न सकिय कहि ❀ दीन्ह बिदेह बहोरि।
जो अवलोकत लोकपति ❀ लोक - संपदा थोरि ॥३६६॥

फिर राजा जनकने असीम दहेज दिया, जिसे कहा नहीं जा सकता। उसे देखकर लोकपतियोंके लोकोंकी सम्पदा भी कम प्रतीत होती थी।

सब समाजु एहि भांति बनाई ❀ जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ॥
चलिहि बरात सुनत सब रानी ❀ बिकल मीनगन जनु लघु पानी ॥

राजा जनकने इस प्रकार सब सामान तैयार कर अयोध्या भेज दिया। बारात बिदा होगी, यह सुनते ही सब रानियां व्याकुल हो गयीं, जैसे थोड़े पानीमें मछलियां।

पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं ❀ देइ असीस सिखावनु देहीं ॥
होयेहु सन्तत पियहि पियारी ❀ चिर अहिवात असीस हमारी ॥

वे बारबार सीताजीको गोदमें लेतीं और आशिष देकर सीख देती हैं कि सदा अपने पतिकी प्यारी बनी रहना। तुम्हारा अहिवात सदा रहे, यही हमारा आशीर्वाद है।

सासु - ससुर - गुरु - सेवा करेहू ❀ पतिरुख लखि आयसु अनुसरेहू ॥
अति - सनेह - बस सखी सयानी ❀ नारिधरमु सिखवहिं मृदुबानी ॥

सासु, श्वसुर और गुरुकी सेवा करना। पतिका रुख देखकर उनकी आज्ञाका अनुसरण करना। चतुर सखियां अत्यन्त प्रेमके वश होकर मीठी वाणीसे स्त्रीधर्म सिखलाने लगीं।

सादर सकल कुआंरि समुझाई ❀ रानिन्ह वार बार उर लाई ॥
बहुरि बहुरि भेटहिं महतारी ❀ कहहिं बिरंचि रची कत नारी ॥

आदरपूर्वक सब कुमारियोंको समझाकर रानियोंने उन्हें वार-वार हृदयसे लगाया। माताएँ बार-वार भेंटती और कहती हैं कि ब्रह्माने स्त्रीको क्यों बनाया।

दो०—तेहि अवसर भाइन्ह सहित ❀ राम भानु - कुल - केतु।
चले जनकमन्दिर मुदित ❀ बिदा करावन हेतु ॥३६७॥

उसी समय सूर्यवंशकी पताका श्रीरामचन्द्रजी भाइयोंसमेत विदा करानेके लिये प्रसन्न होकर राजा जनकके राजभवनको चले।

चारिउ भाइ सुभाय सुहाये ❀ नगर - नारि - नर देखन धाये ॥
कोउ कह चलन चहतहहिं आजू ❀ कीन्ह बिदेह बिदा कर साजू ॥

चारों भाई स्वभावसे ही सुंदर हैं। नगरके स्त्री-पुरुष उन्हें देखने दौड़े। कोई कहता कि ये आज जाना चाहते हैं। राजा जनकने विदाकी तैयारी कर दी है।

लेहु नयन भरि रूप निहारी ❀ प्रिय पाहुने भूपसुत चारी ॥
को जानइ केहि सुकृत सयानी ❀ नयन अतिथि कीन्हे बिधि आनी ॥

अपने मेहमान प्यारे चारों राजपुत्रोंके रूपको नेत्र भरकर देख लो। हे सयानी सखी, कौन जानता है, किसके पुण्यसे ब्रह्माने लाकर इन्हें हमारे नेत्रोंका मेहमान बनाया है।

मरनसील जिमि पाव पियूखा ❀ सुरतरु लहइ जनम कर भूखा ॥
पाव नारकी हरिपद जैसे ❀ इन्ह कर दरसन हम कहं तैसे ॥

मरनेवालेको जैसे अमृत मिल जाय, जन्मके भूखेको जैसे कल्पवृक्ष मिल जाय और नरकमें बसनेवाले पापीको जैसे मोक्ष मिल जाय उसी प्रकार हमारे लिये इनके दर्शन हैं।

निरखि रामसोभा उर धरहू ❀ निज-मन-फनि-मूरति-मनि करहू ॥
एहि बिधि सबहि नयनफल देता ❀ गये कुअंर सब राजनिकेता ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी शोभा देखकर हृदयमें धारण कर लो और इनकी मूर्तिको अपने मनरूपी सांपकी मणि बना लो। इस प्रकार सबको नेत्रोंका फल देते हुए सब राजकुमार राजभवनको गये।

दो०—रूपसिंधु सब बन्धु लखि ❀ हरषि उठेउ रनिवासु।
करहिं निछावरि आरती ❀ महामुदितमन सासु॥ ३६८॥

रूपके समुद्र सब भाइयोंको देखकर रनवास प्रसन्न हो उठा और सासु मनमें अत्यन्त आनंदित होकर आरती और न्योछावर करने लगीं।

देखि रामछबि अति अनुरागीं ❀ प्रेम बिबस पुनि पुनि पद लागीं॥
रही न लाज प्रीति उर छाई ❀ सहज सनेहु बरनि किमि जाई॥

श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर वे अत्यन्त प्रेममें मग्न हो गयीं और प्रेमसे विवश होकर बार-बार चरणोंमें लगीं। उन्हें लज्जा नहीं रही और हृदयमें प्रेम छा गया। उनका स्वाभाविक प्रेम कैसे वर्णन किया जा सकता है।

भाइन्ह सहित उबटि अन्हवाये ❀ छरस असन अति हेतु जेंवाये॥
बोले रामु सुअवसर जानी ❀ सील-सनेह-सकुच-मय बानी॥

भाइयोंसमेत उनका उबटना किया और नहलाया, तथा अत्यंत प्रेमसे छहों रसोंके व्यञ्जन खिलाये। सुन्दर अवसर जानकर शील, संकोच और प्रेमसे भरी हुई वाणी श्रीरामचन्द्रजी बोले।

राउ अवधपुर चहत सिधाये ❀ बिदा होन हम इहां पठाये॥
मातु मुदित मन आयसु देहू ❀ बालक जानि करब नित नेहू॥

राजा अयोध्याको जाना चाहते हैं। हमें विदा होनेके लिये यहां भेजा है। हे माताओ, प्रसन्न मनसे आज्ञा दीजिये। अपना बालक जानकर सदा प्रेम करना।

सुनत बचन बिलखेउ रनिवासू ❀ बोलि न सकहिं प्रेमबस सासू॥
हृदय लगाइ कुअंरि सब लीन्हीं ❀ पतिन्ह सौंपि बिनती अति कीन्हीं॥

श्रीरामचन्द्रजीकी यह बात सुनते ही सारा रनिवास दुःखी हो उठा। सासु प्रेमके वशमें होनेसे बोल नहीं सकती हैं। उन्होंने सब कुमारियोंको हृदयसे लगा लिया और उन्हें अपने-अपने पतिको सौंपकर अत्यन्त विनती की।

छं०—करि बिनय सिय रामहिं समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहइ।
बलि जाउं तात सुजान तुम कहं बिदित गति सबकी अहइ॥
परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रानप्रिय सिय जानिबी।
तुलसी सुसील सनेह लखि निज किंकरी करि मानिबी॥

विनय करके सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीको समर्पित कर दिया और हाथ जोड़कर बार-बार कहने लगीं, कि हे पुत्र, मैं बलि जाती हूं। तुम चतुर हो। तुमको सबकी गति मालूम है। यह जानो कि सीता परिवार और

नगरके लोगों तथा मुझे और राजाको प्राणोंके समान प्यारी है। तुलसीदासजी कहते हैं कि इसका सुन्दर शील और प्रेम देखकर इसे अपनी दासी करके मानना।

सो०—तुम परिपूरन काम ❀ जान सिरोमनि भाव प्रिय।
जन-गुन-गाहक राम ❀ दोषदलन करुनायतन ॥३६९॥

हे राम, तुम पूर्ण काम, ज्ञानियोंके शिरोमणि, भावको प्यारा समझनेवाले, भक्तोंके गुणोंके ग्राहक, दोषोंको नष्टकर देनेवाले और करुणाके घर हो।

अस कहि रही चरन गहि रानी ❀ प्रेमपंक जनु गिरा समानी ॥
सुनि सनेहसानी बरबानी ❀ बहु बिधि राम सासु सनमानी ॥

ऐसा कहकर रानीने श्रीरामचन्द्रजीके चरण पकड़ लिये, मानों वाणी प्रेमके कीचड़में फँस गयी हो। प्रेमसे भरी हुई सुन्दर वाणी सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने सासुका अनेक प्रकारसे सम्मान किया।

राम बिदा मांगी कर जोरी ❀ कीन्ह प्रनाम बहोरि बहोरी ॥
पाइ असीस बहुरि सिरु नाई ❀ भाइन्ह सहित चले रघुराई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने हाथ जोड़कर बिदा मांगी और बार-बार प्रणाम किया। आशिष पाकर श्रीरामचन्द्रजीने फिर शिर नवाया और भाइयोंसमेत वे लौटे।

मंजु-मधुर-मूरति उर आनी ❀ भईं सनेह सिथिल सब रानी ॥
पुनि धीरजु धरि कुअंरि हंकारी ❀ बार बार भेटहिं महतारी ॥

सब रानियोंने सुन्दर कोमल मूर्ति अपने हृदयमें स्थापित की और प्रेमसे गद्गद हो गयीं। फिर धीरज रखकर माताओंने कुमारियोंको बुलाया और वे बार-बार उन्हें भेंटने लगीं।

पहुंचावहिं फिर मिलहिं बहोरी ❀ बढ़ी परसपर प्रीति न थोरी ॥
पुनि पुनि मिलति सखिन्ह बिलगाई ❀ बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई ॥

बिदा करती हैं और लौटाकर फिर मिलती हैं। परस्पर बहुत अधिक प्रीति बढ़ गयी। सखियोंको अलग करके वे बार-बार मिलती हैं; जैसे हालकी ब्याई हुई गाय अपने छोटे-बछड़ेसे मिलती है।

दो०—प्रेम बिबस नरनारि सब ❀ सखिन्ह सहित रनिवासु।
मानहुं कीन्ह बिदेहपुर ❀ करुना-बिरह-निवासु ॥ ३७० ॥

सभी स्त्रियों और पुरुषों तथा सखियोंसमेत वह रनवास प्रेमके वशमें हो रहा है; मानों जनकपुरमें करुणा और विरहने वास किया हो।

सुक सारिका जानकी ज्याये ❀ कनकपिंजरन्हि राखि पढ़ाये ॥
ब्याकुल कहहिं कहाँ बैदेही ❀ सुनि धीरजु परिहरइ न केही ॥

सीताजीने तोतों और मैनाओंको पाला तथा उन्हें सोनेके पिंजड़ोंमें रखकर पढ़ाया था। वे सब व्याकुल होकर कहने लगे कि सीताजी कहां हैं ? उनकी यह करुणा सुनकर किसका धीरज नहीं छूटता था !

भये बिकल खग मृग एहि भांती ❀ मनुजदसा कैसे कहि जाती ॥
बंधुसमेत जनकु तब आये ❀ प्रेम उमगि लोचन जल छाये ॥

पक्षी और पशु जहां ऐसे व्याकुल हुए हों वहांके मनुष्योंकी दशा कैसे कही जा सकती है ? तब राजा जनक अपने भाईसमेत वहां आये। प्रेम उमड़नेसे उनके नेत्रोंमें जल छाया हुआ था।

सीय बिलोकि धीरता भागी ❀ रहे कहावत परम बिरागी ॥
लीन्हि राय उर लाइ जानकी ❀ मिटी महामरजाद ग्यान की ॥

यद्यपि वे बड़े विरक्त कहलाते थे तथापि सीताजीको देखकर उनका भी धीरज भाग गया। राजाने सीताजीको हृदयसे लगा लिया और उनके ज्ञानकी बड़ी मर्यादा मिट गयी।

समुझावत सब सचिव सयाने ❀ कीन्ह बिचारु अनवसर जाने ॥
बारहिं बार सुता उर लाई ❀ सजि सुंदर पालकी मंगाई ॥

सब चतुर मंत्री समझाने लगे। अनुकूल अवसर जानकर राजाने विचार किया। उन्होंने बार-बार पुत्री सीताको हृदयसे लगाया और सुन्दर पालकीको सजाकर मंगवाया।

दो०—प्रेम बिबस परिवारु सब ❀ जानि सुलगन नरेस।
कुअंरि चढ़ाई पालकिन्ह ❀ सुमिरे सिद्ध गनेस॥ ३७१॥

सारा परिवार प्रेमके वशमें हो रहा है, यह जानकर राजाने सुन्दर लग्नमें सिद्धि देनेवाले गणेशजीका स्मरण कर कुमारियोंको पालकियोंमें बिठलाया।

बहुबिधि भूप सुता समुझाई ❀ नारिधरम कुलरीति सिखाई ॥
दासी दास दिये बहुतेरे ❀ सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे ॥

राजाने पुत्रीको बहुत तरहसे समझाया और स्त्रीधर्म तथा कुलकी रीति सिखलायी। बहुतसी दासियां और दास, जो सीताजीके प्यारे और पवित्र सेवक थे, दिये।

सीय चलत ब्याकुल पुरबासी ❀ होहिं सगुन सुभ मंगलरासी ॥
भूसुर सचिव समेत समाजा ❀ संग चले पहुंचावन राजा ॥

सीताजीके चलते ही नगरवासी व्याकुल हुए। सब प्रकार मंगल करनेवाले शुभ शकुन होने लगे। राजा जनक ब्राह्मणों, मंत्रियों और अपने समाजसमेत पहुंचानेके लिये साथ-साथ चले।

समय बिलोकि बाजने बाजे ❀ रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे ॥
दसरथ बिप्र बोलि सब लीन्हे ❀ दान मान परिपूरन कीन्हे ॥

समय देखकर बाजे बजने लगे; बारातियोंने रथ, हाथी और घोड़े सजाये। राजा दशरथने सब ब्राह्मणोंको बुला लिया और दान-मानसे उन्हें संतुष्ट कर दिया।

चरन-सरोज-धूरि धरि सीसा ❀ मुदित महीपति पाइ असीसा ॥
सुमिरि गजानन कीन्ह पयाना ❀ मंगलमूल सगुन भये नाना ॥

चरणकमलोंकी धूलको शिरपर रखकर और आशीर्वाद पाकर राजा प्रसन्न हुए। गणेशजीका स्मरण कर उन्होंने प्रस्थान किया। सब प्रकार कल्याण करनेवाले बहुतसे शकुन हुए।

दो०—सुर प्रसून बरषहिं हरषि ❀ करहिं अपछरा गान।
चले अवधपति अवधपुर ❀ मुदित बजाइ निसान ॥३७२॥

प्रसन्न होकर देवता फूल बरसाते हैं और अप्सराएं गीत गाती हैं। अयोध्यापति राजा दशरथ नगारा बजाकर प्रसन्न हो अयोध्याको चल दिये।

नृप करि बिनय महाजन फेरे ❀ सादर सकल मांगने टेरे ॥
भूषन बसन बाजि गज दीन्हे ❀ प्रेम पोषि ठाढ़े सब कीन्हे ॥

विनती करके राजाने सब प्रतिष्ठित लोगोंको लौटा दिया, फिर आदरपूर्वक सब मंगतोंको बुलवाया और उन्हें गहने, कपड़े, हाथी और घोड़े दिये तथा प्रेमपूर्वक संतुष्ट कर सबको खड़ा किया।

बार बार बिरदावलि भाखी ❀ फिरे सकल रामहि उर राखी ॥
बहुरि बहुरि कोसलपति कहहीं ❀ जनकु प्रेमबस फिरन न चहहीं ॥

सब मङ्गते बार-बार विरुदावली कहने लगे और फिर श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें स्थापित कर वे सब लौटे। राजा दशरथ बार-बार कहते थे, पर प्रेमके वशमें होनेके कारण राजा जनक लौटना नहीं चाहते थे।

पुनि कह भूपति बचन सुहाये ❀ फिरिय महीप दूरि बड़ि आये ॥
राउ बहोरि उतरि भये ठाढ़े ❀ प्रेमप्रबाह बिलोचन बाढ़े ॥

फिर राजा दशरथ ये सुन्दर वचन कहने लगे कि हे राजन्! अब लौटिये। आप बहुत दूरतक आ गये। फिर राजा जनक उतरकर खड़े हुए। उनके विशाल नेत्रोंमें प्रेमके आंसुओंका प्रवाह बढ़ आया।

तब बिदेहु बोले कर जोरी ❀ बचन सनेहसुधा जनु बोरी ॥
करउं कवन बिधि बिनय बनाई ❀ महाराज मोहि दीन्हि बड़ाई ॥

तब राजा जनक हाथ जोड़कर मानों प्रेमके अमृतमें डूबे हुए ये वचन बोले कि हे महाराज, मैं आपकी विनती किस प्रकार बनाकर करूं ? आपने ही मुझे बड़प्पन दिया है।

दो०—कोसलपति समधी सजन ❀ सनमाने सब भांति।
मिलनि परसपर बिनय अति ❀ प्रीति न हृदय समाति ॥३७३॥

कोशलपति राजा दशरथने सज्जन समधीका सब प्रकार सम्मान किया। वह परस्पर मिलना, अत्यंत विनय और प्रीति—सब हृदयमें नहीं समाते।

मुनिमंडलिहि जनक सिरु नावा ❀ आसिरबाद सबहि सन पावा ॥
सादर पुनि भेंटे जामाता ❀ रूप-सील-गुन-निधि सब भ्राता ॥

राजा जनकने मुनियोंके समूहको शिर नवाया और सबसे आशीर्वाद पाया। फिर रूप, शील और गुणके भाण्डार सब भाइयों—अपने जामाताओंसे उन्होंने आदरपूर्वक भेंट की।

जोरि पंक-रुह-पानि सुहाये ❀ बोले बचन प्रेम जनु जाये ॥
राम करउ केहि भांति प्रसंसा ❀ मुनि-महेस-मन-मानस-हंसा ॥

सुन्दर कमल जैसे हाथ जोड़कर वे मानों प्रेमसे ही उत्पन्न यह वचन बोले कि हे राम, मैं आपकी प्रशंसा किस प्रकार करूं ? आप मुनिवरों और शिवजीके मनरूपी मानसरोवरके हंस हैं।

करहिं जोग जोगी जेहि लागी ❀ कोहु मोहु ममता मदु त्यागी ॥
ब्यापकु ब्रह्म अलखु अबिनासी ❀ चिदानन्दु निरगुन गुनरासी ॥

क्रोध, मोह, ममता और मद छोड़कर योगिजन जिसके लिये योग करते हैं; जो व्यापक, ब्रह्म, कभी न नष्ट होनेवाला, जाननेमें न आनेवाला, चैतन्य, आनंदरूप, निर्गुण और गुणका भाण्डार है,

मन समेत जेहि जान न बानी ❀ तरकि न सकहिं सकल अनुमानी ॥
महिमा निगम नेति कहि कहई ❀ जो तिहु काल एक रस अहई ॥

मनसमेत वाणी, अर्थात् मन और वाणी दोनों जिसे नहीं जानते, जिसके विषयमें तर्क नहीं किया जा सकता, सब अनुमानसे ही जिसे जानते हैं, जिसकी महिमाको वेद 'नेति' कहकर प्रतिपादन करते हैं, और जो भूत, भविष्यत् और वर्तमान, तीनों कालोंमें एकरस रहता है,

दो०—नयन बिषय मो कहँ भयउ ❀ सो समस्त-सुख-मूल।
सबहि लाभ जग जीव कहँ ❀ भये ईस अनुकूल ॥३७४॥

वह सब सुखोंका मूल प्रभु मुझे नेत्रोंसे दिखलाई दिया। ईश्वरके अनुकूल होनेपर सांसारी प्राणियोंको सभी लाभ होते हैं।

सबहि भाँति मोहि दीन्हि बड़ाई ❀ निजजन जानि लीन्ह अपनाई ॥
होहिं सहस दस सारद सेषा ❀ करहिं कलपकोटिक भरि लेखा ॥

आपने सब प्रकार मुझे बड़प्पन दिया और अपना भक्त जानकर अपना लिया। दस हजार सरस्वती और शेषनाग हों और करोड़ों कल्पों तक गिनती किया करें।

मोर भाग्य राउर गुनगाथा ❀ कहि न सिराहिं सुनहु रघुनाथा ॥
मैं कछु कहउँ एक बल मोरे ❀ तुम्ह रीझहु सनेह सुठि थोरे ॥

तो भी हे रघुनाथजी, सुनिये। मेरे भाग्य और आपके गुणोंकी कथा कहकर पार नहीं पा सकते, परन्तु मैं कुछ कहता हूं; क्योंकि मुझे एक बल यह है कि आप थोड़े ही सुन्दर स्नेहसे रीझ जाते हैं।

बार बार मागउँ कर जोरे ❀ मनु परिहरइ चरन जनि भोरे ॥
सुनि बरबचन प्रेम जनु पोषे ❀ पूरनकामु रामु परितोषे ॥

बारबार हाथ जोड़कर मांगता हूं कि भूलकर भी मेरा मन आपके चरणोंको न छोड़े। प्रेमसे सींचे हुए जैसे सुन्दर वचन सुनकर पूर्णकाम श्रीरामचन्द्रजी सन्तुष्ट हो गये।

करि बर बिनय ससुर सनमाने ❀ पितु कौसिक बसिष्ठ सम जाने ॥
बिनती बहुरि भरत सन कीन्ही ❀ मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही ॥

उन्होंने सुन्दर विनती कर ससुरका आदर किया और उन्हें अपने पिता राजा दशरथ, विश्वामित्र और वशिष्ठके समान जाना। फिर उन्होंने भरतजीसे विनती की और प्रेमके साथ मिलकर फिर आशिष दी।

दो०—मिले लषन रिपुसूदनहि ❀ दीन्हि असीस महीस।
भये परसपर प्रेमबस ❀ फिरि फिरि नावहिं सीस ॥३७५॥

राजा जनक लक्ष्मण और शत्रुघ्नसे भी मिले और आशिष दी। वे सब परस्पर प्रेमके वशमें हो गये और बार-बार शिर झुकाने लगे।

बार बार करि विनय बड़ाई ❀ रघुपति चले संग सब भाई ॥
जनक गहे कौसिकपद जाई ❀ चरनरेनु सिर नयनन्हि लाई ॥

बार-बार विनती और बड़ाई करके श्रीरामचन्द्रजी सब भाइयोंसमेत विदा हुए। राजा जनकने जाकर विश्वामित्रके चरण पकड़ लिये और चरणोंकी रजको शिर और आंखोंमें लगाया।

सुनु मुनीसबर दरसन तोरे ❁ अगम न कछु प्रतीति मन मोरे ॥
जो सुखु सुजसु लोकपति चहहीं ❁ करत मनोरथ सकुचत अहहीं ॥

हे श्रेष्ठ मुनीश्वर, सुनिये। मेरे मनमें यह विश्वास है कि आपके दर्शनोंसे कुछ भी दुर्लभ नहीं है। जो सुख और सुयश लोकोंके स्वामी चाहते हैं, परन्तु मनोरथ करते उन्हें संकोच होता है,

सो सुखु सुजसु सुलभ मोहि स्वामी ❁ सब सिधि तव दरसन अनुगामी ॥
कीन्ह बिनय पुनि पुनि सिरु नाई ❁ फिरे महीस आसिषा पाई ॥

हे स्वामी, वही सुख और सुयश मुझे सुलभ है। सब सिद्धियाँ आपके दर्शनोंकी अनुगामिनी हैं। राजा जनकने बार-बार शिर नवाकर विनती की, और फिर आशीर्वाद पाकर लौटे।

चली बरात निसान बजाई ❁ मुदित छोट बड़ सब समुदाई ॥
रामहिं निरखि ग्राम-नर-नारी ❁ पाइ नयनफल होहिं सुखारी ॥

नगारे बजाकर बारात चल दी, छोटे और बड़े सब लोग प्रसन्न हुए। गांवके स्त्री-पुरुष श्रीरामचन्द्रजीको देखकर नेत्रोंका फल पाते और सुखी होते हैं।

दो०—बीच बीच बर बास करि ❁ मग लोगन्ह सुखु देत।
अवध समीप पुनीत दिन ❁ पहुँची आइ जनेत ॥३७८॥

बीच-बीचमें सुन्दर पड़ाव डालती और मार्गके लोगोंको सुख देती हुई बारात एक पवित्र दिन अयोध्याके समीप आ पहुंची।

हने निसान पनव बर बाजे ❁ भेरि-संख-धुनि हय गय गाजे ॥
झांझि भेरि डिंडिमी सुहाई ❁ सरस राग बाजहिं सहनाई ॥

नगारे, ढोल और सुन्दर बाजे बजने लगे, तुरही और शंखकी ध्वनि होने लगी; तथा हाथी चिंघारने और घोड़े हिनहिनाने लगे। झांझ, नरसिंहा और डुगडुगी बजकर शोभित होने लगी और रसीले रागसे सहनाइयां बजने लगीं।

पुरजन आवत अकनि बराता ❁ मुदित सकल पुलकावलि गाता ॥
निज निज सुंदर सदन सवांरे ❁ हाट बाट चौहट पुर द्वारे ॥

बारात आती सुनकर सब नगरवासी प्रसन्न हो गये और उनका शरीर पुलकायमान हो गया। सबने अपने-अपने सुन्दर घरों, रास्तों, बाजारों, चौराहों और नगरके द्वारोंको सजाया।

गली सकल अरगजा सिंचाई ❁ जहँ तहँ चौकें चारु पुराईं ॥
बना बजारु न जाइ बखाना ❁ तोरन केतु पताक बिताना ॥

सब गलियोंमें अरगजाका छिड़काव कराया और जहां-तहां सुन्दर चौक पुराये। तोरणों, ध्वजाओं, पताकाओं और मण्डपोंसे बाजार ऐसा सजा कि वर्णन नहीं किया जा सकता।

सफल पूगफल कदलि रसाला ❀ रोपे बकुल कदंब तमाला ॥
लगे सुभग तरु परसत धरनी ❀ मनिमय आलबाल कलकरनी ॥

सुपारी, केला, आम, मौलसिरी, कदम्ब और पान—सबके वृक्ष फल समेत रोप दिये। जमीनको छूते हुए ये सब सुन्दर वृक्ष लग गये। बड़ी कारीगरीसे उनके थाले मणियोंसे बनाये।

दो०—बिबिध भांति मंगलकलस ❀ गृह गृह रचे सवांरि।
सुर ब्रह्मादि सिहाहिं सब ❀ रघु-बर- पुरी निहारि ॥३७७॥

अनेक प्रकारके मंगल कलश सजाकर घर-घर रखे गये। रघुवंशमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीका नगर देखकर ब्रह्मा आदि सब देवता सिहाते हैं।

भूपभवन तेहि अवसर सोहा ❀ रचना देखि मदनमन मोहा ॥
मंगल सगुन मनोहरताई ❀ रिधि सिधि सुख संपदा सोहाई ॥

उस समय राजाका महल ऐसा शोभित हुआ कि सजावट देखकर कामदेवका भी मन मोहित हो गया मंगल, शुभ शकुन, सुन्दरता, ऋद्धि, सिद्धि, सुख और सुन्दर सम्पदा—

जनु उछाह सब सहज सुहाये ❀ तनु धरि धरि दसरथगृह आये ॥
देखन हेतु रामबैदेही ❀ कहहु लालसा होइ न केही ॥

और स्वभावसे ही सुन्दर सब उत्साह मानों शरीर रख-रखकर राजा दशरथके घर आये हों। भला यह कहो कि श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीको देखनेके लिये किसे अभिलाषा न होगी?

जूथ जूथ मिलि चलीं सुआसिनि ❀ निजछबि निदरहिं मदनबिलासिनि ॥
सकल सुमंगल सजे आरती ❀ गावहिं जनु बहुबेष भारती ॥

सौभाग्यवती स्त्रियां झुण्डके झुण्ड मिलकर चलीं। वे अपनी छविसे कामदेवकी स्त्री रतिको भी लजानेवाली थीं। सब सुन्दर मांगलिक वस्तुओंसे आरती सजाये हुए गाती हैं, मानों बहुतसे भेष धारण किये सरस्वती गा रही हैं।

भूपतिभवन कोलाहलु होई ❀ जाइ न बरनि समउ सुखु सोई ॥
कौसल्यादि राममहतारी ❀ प्रेमबिबस तनुदसा बिसारी ॥

राजाके महलमें कोलाहल हो रहा है। उस समयका सुख क्या वर्णन किया जा सकता है? प्रेमसे विवश होकर कौशल्या आदि माताओंको अपने शरीरकी सुध भूल गयी।

दो०—दिये दान बिप्रन्ह बिपुल ❀ पूजि गनेस पुरारि।
प्रमुदित परमदरिद्र जनु ❀ पाइ पदारथ चारि ॥३१८॥

उन्होंने गणेशजी और शिवजीको पूजकर ब्राह्मणोंको बहुतसे दान दिये। वे सब ऐसी प्रसन्न थीं, मानों अत्यंत गरीब चारों पदार्थ पाकर प्रसन्न हो।

मोद-प्रमोद-बिबस सब माता ❀ चलहिं न चरन सिथिल भये गाता ॥
रामदरस हित अति अनुरागीं ❀ परिछन साजु सजन सब लागीं ॥

सब माताएं आनंद और उत्सवमें बेबस हो रही हैं। उनका शरीर ऐसा शिथिल हो गया कि पैर नहीं चलते। श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेके लिये उनमें बड़ा प्रेम उमड़ आया और वे सब परिछन करनेका सामान सजाने लगीं।

बिबिधबिधान बाजने बाजे ❀ मंगल मुदित सुमित्रा साजे ॥
हरद दूब दधि पल्लव फूला ❀ पान पूगफल मङ्गलमूला ॥

अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे। प्रसन्न होकर सुमित्राने मांगलिक वस्तुओंको सजाया। हल्दी, दूब, दही, पत्ते, फूल, पान और मंगलोंका मूल सुपारी,

अच्छत अंकुर रोचन लाजा ❀ मंजुल मंजरि तुलसि बिराजा ॥
छुहे पुरटघट सहज सुहाये ❀ मदन सकुन जनु नीड़ बनाये ॥

अक्षत, जव, गोरोचन, खीलें और सुन्दर मंजरियोंसमेत तुलसीपत्र—सब वस्तुएं सजायीं। स्वभावसे ही सुन्दर रंगे हुए सोनेके घड़े शोभित हुए, मानों कामदेवने संकोच कर अपने रहनेके लिये घोंसले बनाये हों।

सगुन सुगन्ध न जाहिं बखानी ❀ मङ्गल सकल सजहिं सब रानी ॥
रची आरती बहुत बिधाना ❀ मुदित करहिं कल मंगल गाना ॥

शकुन और सुगन्धकी वस्तुओंका वर्णन नहीं किया जा सकता। सब रानियां समस्त मांगलिक वस्तुओंको सजा रही हैं। बहुत विधानपूर्वक आरती सजायी गयी। सब प्रसन्नतासे सुन्दर मंगल गीत गाने लगीं।

दो०—कनकथार भरि मंगलन्ह ❀ कमल करन्हि लिये मातु।
चलीं मुदित परिछन करन ❀ पुलकपल्लवित गातु ॥३१९॥

मांगलिक वस्तुओंसे भरे हुए सोनेके थालोंको कमल जैसे हाथोंमें लिये हुए माताएं प्रसन्न होकर परिछन करनेको चलीं। उनका शरीर पुलकायमान हो रहा है।

धूपधूम नभ मेचक भयऊ ❀ सावन घनघमंड जनु ठयऊ ॥
सुर-तरु-सुमन-माल सुर बरषहिं ❀ मनहुं बलाक अवलि मनु करषहिं ॥

धूपके धुएंसे आकाश काला हो गया, मानों सावनमें घुमड़कर बादल छा गये हों। कल्पवृक्षके फूलोंकी मालाओं देवता बरसाते हैं, जो चित्तको आकर्षित करनेवाली मानों बगुलोंकी पंक्तियां हैं।

मंजुल मनिमय बंदनवारे ❀ मनहुं पाक - रिपु-चाप सवांरे ॥
अटहिं दुरहिं अटन्हिपर भामिनि ❀ चारु चपल जनु दमकहिं दामिनि ॥

सुन्दर मणियोंके वंदनवार हैं; मानों इन्द्रधनुष सुधारकर रखे हों। अटारियोंपर स्त्रियां कभी दिखलाई देती हैं और कभी छिप जाती हैं, मानों सुन्दर चंचल बिजलियां दमकती हों।

दुंदुभिधुनि घनगरजनि घोरा ❀ जाचक चातक दादुर मोरा ॥
सुर सुगन्ध सुचि बरषहिं बारी ❀ सुखी सकल ससि पुर-नर-नारी ॥

नगारोंकी ध्वनि मानों बादलोंकी घोर गरज है, मंगते मानों पपीहा, मेंडक और मोर हैं। देवता पवित्र सुगन्धित जल बरसाते हैं वही मानों जल है। नगरके सब स्त्री और पुरुष चंद्रमा अथवा धानकी भांति सुखी हो रहे हैं।

समय जानि गुरु आयसु दीन्हा ❀ पुर प्रबेसु रघु-कुल-मनि कीन्हा ॥
सुमिरि संभु गिरिजा गनराजा ❀ मुदित महीपति सहित समाजा ॥

समय जानकर गुरुने आज्ञा दी और रघुकुलमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजीने नगरमें प्रवेश किया। शिवजी और पार्वतीजी तथा गणेशका स्मरण कर राजा अपने समाजसमेत प्रसन्न हुए।

दो०—होहिं सगुन बरषहिं सुमन ❀ सुर दुंदुभी बजाइ।
बिबुधबधू नाचहिं मुदित ❀ मंजुल मंगल गाइ ॥ ३८० ॥

शकुन हो रहे हैं और देवता नगारे बजाकर फूल बरसाते हैं। देवताओंकी स्त्रियां सुंदर मंगल गीत गाकर प्रसन्नतापूर्वक नाचती हैं।

मागध सूत बंदि नट नागर ❀ गावहिं जस तिहु लोक उजागर ॥
जयधुनि बिमल बेद-बर-बानी ❀ दस दिसि सुनिय सु-मंगल-सानी ॥

मागध, सूत, बंदीजन और चतुर नट, सब तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध यश गाते हैं। सुंदर मंगलोंसे सनी हुई जय-जय ध्वनि और पवित्र उत्तम वेद-ध्वनि दसों दिशाओंसे सुन पड़ने लगी।

बिपुल बाजने बाजन लागे ❀ नभ सुर नगर लोग अनुरागे ॥
बने बराती बरनि न जाहीं ❀ महामुदित मन सुख न समाहीं ॥

बहुतसे बाजे बजने लगे और आकाशमें देवता तथा नगरमें सब लोग प्रेमसे भर गये। बाराती लोग ऐसे सज गये कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। वे सब अत्यंत प्रसन्न हुए। मनमें सुख न समाता था।

पुरबासिन्ह तब राउ जोहारे * देखत रामहिं भये सुखारे ॥
करहिं निछावरि मनिगन चीरा * बारि बिलोचन पुलक सरीरा ॥

तब नगरनिवासियोंने जाकर राजाको प्रणाम किया और श्रीरामचंद्रजीके दर्शन करते ही सुखी हो गये। उनके नेत्रोंमें जल छा गया, शरीर पुलकायमान हो गया और वे मणियों एवं वस्त्रोंकी न्योछावर करने लगे।

आरति करहिं मुदित पुरनारी * हरषहिं निरखि कुअंर बर चारी ॥
सिबिका सुभग ओहार उघारी * देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी ॥

नगरकी स्त्रियां चारों कुमारोंको देखकर प्रसन्न होती और प्रसन्न होकर आरती करती हैं। सौभाग्यवती स्त्रियां पालकीका उघार खोलकर दुलहिनोंको देखकर सुखी होती हैं।

दो०—एहि बिधि सबही देत सुख * आये राजदुआर।
मुदित मातु परिछन करहिं * बधुन्ह समेत कुमार ॥ ३८१ ॥

इस प्रकार बहुओंसमेत चारों राजकुमार सभीको सुख देते हुए जब राजाके महलकी ड्योढ़ीपर आये तब माताएं प्रसन्न होकर परिछन करने लगीं।

करहिं आरती बारहिं बारा * प्रेम प्रमोदु कहइ को पारा ॥
भूषन मनि पट नाना जाती * करहिं निछावरि अगनित भांती ॥

वे बार-बार आरती करती हैं। उनके प्रेम और आनंदका वर्णन कर कौन पार पा सकता है? गहने, मणियां और अनेक प्रकारके कपड़े कई तरहसे न्योछावर करती हैं।

बधुन्ह समेत देखि सुत चारी * परमानंद मगन महतारी ॥
पुनि पुनि सीय-राम-छबि देखी * मुदित सुफल जग जीवन लेखी ॥

बहुओंसमेत चारों पुत्रोंको देखकर माताएं परम आनंदमें मग्न हो गयीं। सीता और श्रीरामचंद्रजीकी शोभाको बार-बार देखकर वे प्रसन्न हुईं और संसारमें अपना जीवन सफल माना।

सखा सीयमुख पुनि पुनि चाही * गान करहिं निज सुकृत सराही ॥
बरषहिं सुमन छनहिं छन देवा * नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा ॥

सखियां सीताजीका मुख बार-बार देखतीं हैं और अपने पुण्योंको सराहकर गीत गाती हैं। क्षण-क्षणमें देवता फूल बरसाते हैं और नाचते, गाते तथा अपनी सेवा दिखलाते हैं।

देखि मनोहर चारिउ जोरी * सारद उपमा सकल ढंढोरी ॥
देत न बनहिं निपट लघु लागी * एकटक रही रूपअनुरागी ॥

चारों सुन्दर जोड़ियोंको देखकर सरस्वतीने सब उपमाओंको खोजा, परन्तु सब उपमाएं बहुत हलकी मालूम हुईं, इससे कोई भी उपमा देते नहीं बनती। रूपके प्रेममें भरकर वे इन्हें एकटक देखती ही रह गयीं।

दो०—निगमनीति कुलरीति करि ❀ अरघ पावँड़े देत।
बधुन्ह सहित सुत परिछि सब ❀ चलीं लेवाइ निकेत ॥ ३८२ ॥

शास्त्रविधि और अपने कुलकी रीतिसे परिछन पूरीकर अर्घ्य देती और पांवों-तले कपड़े डालती हुई वे सब बहुओंसमेत पुत्रोंको घर ले चलीं।

चारि सिंहासन सहज सुहाये ❀ जनु मनोज निजहाथ बनाये ॥
तिन्ह पर कुअँरि कुअँर बैठारे ❀ सादर पाय पुनीत पखारे ॥

स्वभावसे ही सुन्दर चार सिंहासन थे, मानों कामदेवने उन्हें अपने हाथसे बनाया हो। उनपर पुत्रों और बहुओंको बिठलाया और फिर आदरपूर्वक पवित्र पैर धोये।

धूप दीप नैवेद बेदबिधि ❀ पूजे बरदुलहिनि मंगलनिधि ॥
बारहिं बार आरती करहीं ❀ ब्यजन चारु चामर सिर ढरहीं ॥

सब मंगलोंके भाण्डार वरों और दुलहिनोंकी धूप, दीप, नैवेद्य आदिसे वेदविधिके अनुसार पूजा की। फिर वे बार-बार आरती करने लगीं और उनके मस्तकपर पंखा और सुन्दर चँवर झलने लगीं।

बस्तु अनेक निछावरि होहीं ❀ भरीं प्रमोद मातु सब सोहीं ॥
पावा परमतत्व जनु जोगी ❀ अमृत लहेउ जनु संतत रोगी ॥

अनेक प्रकारकी वस्तुओंकी न्योछावर हो रही है। आनंदमें भरी हुई सब माताएं शोभा पा रही हैं। किसी योगीने मानों परमतत्त्व पा लिया हो, सदा रोगी रहनेवालेने मानों अमृत पा लिया हो।

जनमरंक जनु पारस पावा ❀ अंधहि लोचनलाभु सुहावा ॥
मूकबदन जनु सारद छाई ❀ मानहु समर सूर जय पाई ॥

जन्मके दरिद्रीने मानों पारस पा लिया हो और अंधेको मानों सुन्दर नेत्र मिल गये हों, गूंगेके मुखमें मानों सरस्वती छा गयी हों और किसी योद्धाने मानों संग्राममें विजय पा ली हो।

दो०—एहि सुख तें सत-कोटि-गुन ❀ पावहिं मातु अनंदु।
भाइन्ह सहित बिआहि घर ❀ आये रघु-कुल-चंदु ॥ ३८३ ॥

जब रघुकुलमें चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी विवाह करके अपने भाइयोंसमेत घर लौटे तब इन सब लोगोंके सुखोंसे सौ करोड़ गुना अधिक सुख सब माताओंको हुआ।

दो०—लोकरीति जननी करहिं * बर दुलहिनि सकुचाहिं।
मोद बिनोद बिलोकि बड़ * राम मनहिं मुसुकाहिं॥ ३८४॥

माताएं लोकरीति करती हैं, परन्तु वर और दुलहिन संकोच करती हैं। श्रीरामचन्द्रजी बड़ा आनन्द और विनोद होता देखकर मन-ही-मन मुस्कुराते हैं।

देव पितर पूजे बिधि नीकी * पूजी सकल बासना जी की॥
सबहि बंदि माँगहिं बरदाना * भाइन्ह सहित रामकल्याना॥

फिर उन्होंने उत्तम विधिसे देवता और पितरोंकी पूजा की; क्योंकि मनकी सब इच्छाएं पूरी हो गयीं। सबकी वंदना कर वे यह वरदान मांगती हैं कि भाइयोंसमेत श्रीरामचन्द्रजीका कल्याण हो।

अंतरहित सुर आसिष देहीं * मुदित मातु अंचल भरि लेहीं॥
भूपति बोलि बराती लीन्हे * जान बसन मनि भूषन दीन्हे॥

छिपे हुए देवता आशीर्वाद देते हैं और माताएं उसे प्रसन्न होकर अंचल पसारकर लेती हैं। राजाने बाराती लोगोंको बुला लिया और उन्हें सवारियां, कपड़े, मणियां और गहने दिये।

आयसु पाइ राखि उर रामहिं * मुदित गये सब निज निज धामहिं॥
पुर-नर-नारि सकल पहिराये * घर घर बाजन लगे बधाये॥

आज्ञा पाकर श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर वे सब प्रसन्न होकर अपने-अपने घर गये। नगरके सब स्त्रीपुरुषोंको राजा दशरथने पहनावा पहिनाया और घर-घर बधाइयां बजने लगीं।

जाचक जन जाचहिं जोइ जोई * प्रमुदित राउ देहिं सोइ सोई॥
सेवक सकल बजनियाँ नाना * पूरन किये दान सनमाना॥

मंगते जो-जो मांगते हैं राजा दशरथ प्रसन्न होकर वही-वही देते हैं। सब सेवकों और अनेक प्रकारके बाजोंके बजानेवालों—सबको दान और सम्मानसे संतुष्ट कर दिया।

दो०—देहिं असीस जोहारि सब * गावहिं गुन-गन-गाथ।
तब गुरु-भूसुर-सहित * गृह गवनु कीन्ह नरनाथ॥३८५॥

सब प्रणाम करके आशीर्वाद देते और गुणोंके समूहकी कहानी गाते हैं। फिर महाराज दशरथने गुरु और ब्राह्मणोंसमेत घरको गमन किया।

जो बसिष्ठ अनुसासन दीन्हा * लोक बेद बिधि सादर कीन्हा॥
भू-सुर-भीर देखि सब रानी * सादर उठीं भाग्य बड़ जानी॥

वशिष्ठजीने जिसके लिये आज्ञा दी वह सब राजा दशरथने लोकरीति और वेदविधिके अनुसार आदरपूर्वक किया। ब्राह्मणोंकी भीड़ देख अपना बड़ा भाग्य समझकर सब रानियां आदरपूर्वक उठीं।

पाय पखारि सकल अन्हवाये ❀ पूजि भली विधि भूप जेवांये॥
आदर दान प्रेम परिपोषे ❀ देत असीस चले मन तोषे॥

पैर धोकर उन सबको नहलाया और भली प्रकार पूजा कर राजाने उन्हें भोजन कराया तथा प्रेमपूर्वक आदर और दान देकर संतुष्ट किया। वे मनमें संतुष्ट होकर आशीर्वाद देते हुए चले।

बहु विधि कीन्हि गाधि-सुत-पूजा ❀ नाथ मोहि सम धन्य न दूजा॥
कीन्हि प्रसंसा भूपति भूरी ❀ रानिन्ह सहित लीन्हि पगधूरी॥

अनेक प्रकारसे विश्वामित्रकी पूजा की और कहा कि हे नाथ! मेरे समान और कोई दूसरा मनुष्य धन्य नहीं है। राजाने उनकी बड़ी प्रशंसा की और सब रानियोंसमेत उनके चरणोंकी रजको शिरोधार्य किया।

भीतर भवन दीन्ह बर बासू ❀ मनु जोगवत रह नृपुरनिवासू॥
पूजे गुरु-पद-कमल बहोरी ❀ कीन्ह बिनय उर प्रीति न थोरी॥

उन्हें ठहरनेके लिये महलके अन्दर सुन्दर स्थान दिया, जिससे राजा और रनवास उनका मन देखते रह सकें। फिर उन्होंने गुरुके चरणकमलोंकी पूजा और विनती की। उनके हृदयमें बहुत प्रीति उत्पन्न हुई।

दो०—बधुन्ह समेत कुमार सब ❀ रानिन्ह सहित महीसु।
पुनि पुनि बंदत गुरुचरन ❀ देत असीस मुनीसु॥३८६॥

बहुओंसमेत चारों राजकुमार और सब रानियोंसमेत राजा बार-बार गुरुके चरणोंकी वंदना करते हैं और मुनीश्वर आशीर्वाद देते हैं।

बिनय कीन्हि उर अति अनुरागे ❀ सुत संपदा राखि सब आगे॥
नेगु मांगि मुनिनायकु लीन्हा ❀ आसिरबादु बहुतबिधि दीन्हा॥

पुत्रों और संपदाको आगे रखकर राजाने हृदयमें बड़ा प्रेम भरकर विनती की। मुनिराज वशिष्ठने अपनी दक्षिणा मांग ली और अनेक प्रकारसे आशीर्वाद दिया।

उर धरि रामहिं सीयसमेता ❀ हरषि कीन्ह गुरु गवनु निकेता॥
बिप्रबधू सब भूप बोलाई ❀ चैल चारुभूषन पहिराई॥

सीताजीसमेत श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धारणकर गुरुने प्रसन्न होकर अपने घर गमन किया। राजाने सब ब्राह्मणियोंको बुलाया और उन्हें बढ़िया वस्त्र तथा सुन्दर गहने पहनाये।

बहुरि बोलाइ सुआसिनि लीन्ही ❀ रुचि बिचारि पहिरावनि दीन्ही ॥
नेगी नेग जोग सब लेहीं ❀ रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं ॥

फिर सौभाग्यवती स्त्रियोंको बुला लिया और उनकी रुचिके अनुसार उन्हें पहनावा दिया। नेगी लोग सब नेगजोग लेने लगे और राजाओंमें मणिके समान राजा दशरथने उन्हें इच्छानुसार सब दिये।

प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने ❀ भूपति भली भांति सनमाने ॥
देव देखि रघु - बीर - बिबाहू ❀ बरषि प्रसून प्रसंसि उछाहू ॥

राजाने जिनको अपना प्यारा और पूज्य मेहमान समझा उनका खूब सम्मान किया। श्रीरामचन्द्रजीका विवाह देखकर देवता लोगोंने फूल बरसाकर आनन्दोत्सवकी प्रशंसा की।

दो०—चले निसान बजाइ सुर ❀ निज - निज - पुर सुख पाइ।
कहत परसपर रामजसु ❀ प्रेमु न हृदय समाइ ॥३८७॥

फिर डंका बजाकर सब देवता सुख पाकर अपने-अपने नगरको विदा हुये। वे परस्पर श्रीरामचन्द्रजीका यश कहते जाते हैं। उनके हृदयमें प्रेम नहीं समाता।

सब बिधि सबहि समदि नरनाहू ❀ रहा हृदय भरि पूरि उछाहू ॥
जहं रनिवासु तहां पगुधारे ❀ सहित बधूटिन्ह कुअंर निहारे ॥

राजा दशरथने सबका सब प्रकार समान बुद्धिसे आदर किया। उनका हृदय आनन्दसे भरपूर हो रहा था। फिर वे वहां गये जहां रनवास था। वहां जाकर उन्होंने बहुओंसमेत पुत्रोंको देखा।

लिये गोद करि मोद समेता ❀ को कहि सकइ भयउ सुख जेता ॥
बधू सप्रेम गोद बैठारी ❀ बारबार हिय हरषि दुलारी ॥

आनंदसे उन्होंने गोदमें उठा लिया। उन्हें जितना सुख हुआ उसे कौन कह सकता है? उन्होंने बड़े प्रेमसे बहुओंको गोदमें बिठलाया और हृदयमें प्रसन्न होकर बार-बार प्यार किया।

देखि समाज मुदित रनिवासू ❀ सब के उर अनंद किय बासू ॥
कहेउ भूप जिमि भयउ बिबाहू ❀ सुनि सुनि हरष होइ सब काहू ॥

उस समयका समाज देखकर सारा रनवास प्रसन्न हो गया और सबके हृदयमें आनंद छा गया। जिस प्रकार विवाह हुआ, वह सब हाल राजाने सुनाया। हाल सुन-सुनकर सब लोगोंको प्रसन्नता होती थी।

जनकराजगुन सील बड़ाई ❀ प्रीतिरीति संपदा सुहाई ॥
बहुबिधि भूप भाट जिमि बरनी ❀ रानी सब प्रमुदित सुनि करनी ॥

राजा जनकके गुण, शील, बड़ाई, प्रीति, व्यवहार और सुन्दर सम्पदा—सबका वर्णन राजाने अनेक प्रकारसे भाटकी भांति किया। सब रानियां करनी सुनकर प्रसन्न हुईं।

दो०—सुतन्ह समेत नहाइ नृप ॐ बोलि विप्र गुरु ग्याति।
भोजनु कीन्ह अनेक विधि ॐ घरी पंच गइ राति ॥३८८॥

पुत्रोंसमेत नहाकर गुरु, ब्राह्मणों और जातिवालोंको बुलाकर राजाने अनेक प्रकारका भोजन किया। इसमें ५ घड़ी रात बीत गयी।

मंगलगान करहिं बरभामिनि ॐ भइ सुखमूल मनोहर जामिनि ॥
अँचइ पान सब काहू पाये ॐ स्रग-सुगंध-भूषित छवि छाये ॥

सुन्दर स्त्रियां मंगल गीत गाने लगीं। वह रात बड़ी सुन्दर और सुख देनेवाली हुई। आचमन कर सब किसीने पान खाये और माला एवं सुगंधित द्रव्योंको धारण कर सब कान्तिमान हो गये।

रामहिं देखि रजायसु पाई ॐ निज-निज-भवन चले सिर नाई ॥
प्रेम प्रमोद विनोद बड़ाई ॐ समउ समाज मनोहरताई ॥

श्रीरामचन्द्रजीको देखकर और आज्ञा पाकर सब लोग शिर नवाकर अपने-अपने घर गये। प्रेम, आनंद, विनोद, बड़ाई, समय, समाज और सुन्दरता—

कहि न सकहिं सत सारद सेसू ॐ वेद बिरंचि महेस गनेसू ॥
सो मैं कहउं कवन बिधि बरनी ॐ भूमिनाग सिर धरइ कि धरनी ॥

सबको सौ शेषनाग और सरस्वती तथा वेद, ब्रह्मा, शिव और गणेश भी नहीं कह सकते, उसका वर्णन मैं किस प्रकार करूं? पृथिवीपर उत्पन्न होनेवाले सांप भी क्या शिरपर धरतीको रखते हैं?

नृप सब भांति सबहि सनमानी ॐ कहि मृदुबचन बोलाई रानी ॥
वधू लरिकिनी परघर आईं ॐ राखेहु नयन पलककी नाईं ॥

सब प्रकार सबका आदर कर राजाने मीठी वाणीसे रानियोंको बुलाया और कहा कि बहुएँ लड़की हैं। ये दूसरे घरमें आयी हैं। इनको पलक जिस प्रकार नेत्रोंकी रक्षा करते हैं उसी भाँति रखना।

दो०—लरिका स्रमित उनीदबस ॐ सयन करावहु जाइ।
अस कहि गे विश्रामगृह ॐ रामचरन चितु लाइ ॥३८९॥

लड़के थके हुए और नींदके वशमें हैं। इन्हें ले जाकर सुलाओ। राजा ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें चित्त लगाकर विश्रामभवनको गये।

भूपबचन सुनि सहज सुहाये ❀ जटित कनकमनि पलँग डसाये ॥
सुभग-सुरभि-पय-फेनु समाना ❀ कोमल कलित सुपेती नाना ॥

स्वभावसे ही सुन्दर राजाके वचन सुनकर मणियोंसे जड़े हुए सोनेके पलंग बिछवाये। गायके दूधके फेनके समान सुन्दर, कोमल और सफेद कई बिछौने कराये।

उपबरहन बर बरनि न जाहीं ❀ स्रग सुगंध मनिमंदिर माहीं ॥
रतन दीप सुठि चारु चँदोवा ❀ कहत न बनइ जान जेइ जोवा ॥

बढ़िया तकियोंका वर्णन नहीं किया जा सकता। मणियोंसे बने हुए उस भवनमें मालाओंकी सुगंधि छा रही है। सुन्दर मणियोंके दीपक और सुन्दर चंदोवे, इनका वर्णन नहीं करते बनता। वही जानते हैं जिसने उन्हें देखा है।

सेज रुचिर रचि राम उठाये ❀ प्रेमसमेत पलँग पौढ़ाये ॥
अग्या पुनि पुनि भाइन्ह दीन्हीं ❀ निज-निज-सेज सयन तिन्ह कीन्ही ॥

सुन्दर सेज सजाकर फिर श्रीरामचन्द्रजीको उठाया और प्रेमपूर्वक पलंगपर पौढ़ा दिया। श्रीरामचन्द्रजीने भाइयोंको जब बार-बार आज्ञा दी तब उन्होंने जाकर अपनी-अपनी शय्यापर शयन किया।

देखि स्याम मृदु मंजुल गाता ❀ कहहिं सप्रेम बचन सबमाता ॥
मारग जात भयावनि भारी ❀ केहि बिधि तात ताड़का मारी ॥

सुन्दर सांवला कोमल शरीर देखकर सब माताएं प्रेमपूर्वक यह वचन कहती हैं कि हे तात, रास्तेमें जाते हुए तुमने अत्यंत भयंकर ताड़काको किस प्रकार मार डाला ?

दो०—घोर निसाचर बिकट भट ❀ समर गनहिं नहिं काहु ।
मारे सहित सहाय किमि ❀ खल मारीच सुबाहु ॥३६०॥

राक्षस बड़े भयङ्कर और योद्धा होते हैं और वे संग्राममें किसीको भी नहीं गिनते। दुष्ट मारीच और सुबाहुको सहायकोंसमेत कैसे मारा ?

मुनिप्रसाद बलि तात तुम्हारी ❀ ईस अनेक करवरे टारी ॥
मखरखवारी करि दुहुँ भाई ❀ गुरुप्रसाद सब बिद्या पाई ॥

हे तात, मैं तुम्हारी बलि जाऊँ। मुनिके प्रसादसे ईश्वरने तुम्हारी बहुतसी आपदाओंको टाल दिया। यज्ञकी रक्षा करके दोनों भाइयोंने गुरुके प्रसादरूपमें सब विद्याओंको पाया।

मुनि तिय तरी लगत पग धूरी ❀ कीरति रही भुवन भरि पूरी ॥
कमठ पीठि पबिकूट कठोरा ❀ नृप समाज महँ सिवधनु तोरा ॥

चरणकी रज लगते ही गौतम मुनिकी स्त्री अहल्या तर गयी, जिसकी कीर्ति सब भुवनोंमें फैल रही है। कछुएकी पीठ और वज्रसे भी कठोर शिवजीके धनुषको तुमने राजाओंकी सभामें तोड़ डाला।

बिस्व बिजय जसु जानकि पाई ❀ आये भवन ब्याहि सब भाई ॥
सकल अमानुष करम तुम्हारे ❀ केवल कौसिक कृपा सुधारे ॥

और संसारको विजय करनेके यशके समान सीताजीको पाया और चारों भाई ब्याह करके घर आ गये। तुम्हारे ये सब काम मनुष्यकी शक्तिके बाहर हैं, केवल विश्वामित्र मुनिकी कृपाने ही इन्हें पूरा किया है।

आजु सुफल जग जनमु हमारा ❀ देखि तात बिधुबदन तुम्हारा ॥
जे दिन गये तुम्हहिं बिनु देखे ❀ ते बिरंचि जनि पारहिं लेखे ॥

हे तात, तुम्हारा चन्द्रमुख देखकर संसारमें हमारा जन्म लेना आज सफल हुआ। जितने दिन तुम्हें बिना देखे बीते हैं उन्हें ब्रह्मा हमारी आयुकी गिनतीमें न डालें।

दो०—राम प्रतोषीं मातु सब ❀ कहि बिनीत बर बयन।
सुमिरि संभु-गुरु-बिप्र-पद ❀ किये नींदबस नयन ॥ ३६१ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने सुन्दर नम्र वचन कहकर सब माताओंको संतुष्ट किया और शिवजी, गुरुजी और ब्राह्मणोंके चरण स्मरण कर नेत्रोंको निद्राके वशमें कर लिया।

नींदहु बदन सोह सुठि लोना ❀ मनहुँ सांझ सरसीरुह सोना ॥
घर घर करहिं जागरन नारी ❀ देहिं परस्पर मंगल गारी ॥

नींदमें भी सुन्दर लावण्यमय मुख सुहावना लगता है, मानों वह सन्ध्यासमयका लाल कमल हो। स्त्रियां घर-घर जागरण कर रही हैं और आपसमें मंगल गालियां दे रही हैं।

पुरी बिराजति राजति रजनी ❀ रानी कहहिं बिलोकहु सजनी ॥
सुंदरि बधुन्ह सासु लेइ सोई ❀ फनिकन्ह जनु सिर मनि उर गोई ॥

रानियां कहती हैं कि हे सखियो, देखो, अयोध्यापुरीकी शोभासे आजकी रात कैसी शोभा पा रही है। सासुएँ सुन्दर बहुओंको लेकर सो गयीं, मानों नागिनने अपने शिरकी मणिको हृदयमें छिपा लिया हो।

प्रात पुनीतकाल प्रभु जागे ❀ अरुनचूड़ बर बोलन लागे ॥
बंदि मागधन्ह गुनगन गाये ❀ पुरजन द्वार जोहारन आये ॥

सवेरे ही पवित्र समयमें, जब सुन्दर मुर्गे बोलने लगे, प्रभु श्रीरामचन्द्रजी जग गये। बंदीजन और मागध गुणोंका गान करने लगे और नगरनिवासी ड्योढ़ीपर प्रणाम करने आये।

बंदि बिप्र गुरु सुर पितु माता ❀ पाइ असीस मुदित सब भ्राता ॥
जननिन्ह सादर बदन निहारे ❀ भूपतिसंग द्वार पगु धारे ॥

ब्राह्मण, गुरु, देवता, पिता और माताओंकी वंदना कर आशीर्वाद पाकर सब भाई प्रसन्न हुए। माताओंने आदरपूर्वक मुख देखे और फिर राजाके साथ वे द्वारपर पधारे।

दो०—कीन्ह सौचसब सहजसुचि ❀ सरित पुनीत नहाइ।
प्रातक्रिया करि तात पहिं ❀ आये चारिउ भाइ ॥३९२॥

स्वभावसे ही पवित्र चारों भाइयोंने सब शौचविधि पूरी की और पवित्र नदी सरयूमें नहाकर प्रातःक्रिया करके पिताके पास लौट आये।

भूप बिलोकि लिये उर लाई ❀ बैठे हरषि रजायसु पाई ॥
देखि राम सब सभा जुड़ानी ❀ लोचन-लाभ-अवधि अनुमानी ॥

देखते ही राजाने उन्हें हृदयसे लगा लिया। आज्ञा पाकर प्रसन्न हो चारों भाई बैठे। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सब सभा शीतल हुई। सबने अनुमान किया कि नेत्रोंके लाभकी सीमा यही है।

पुनि वसिष्ठ मुनि कौसिक आये ❀ सुभग आसनन्हि मुनि बैठाये ॥
सुतन्ह समेत पूजि पद लागे ❀ निरखि राम दोउ गुरु अनुरागे ॥

फिर वहां वशिष्ठ और विश्वामित्र मुनि आये। दोनों मुनियोंको सुन्दर आसनोंपर बिठलाया। पुत्रोंसमेत पूजा कर राजा दशरथने उनके पैर छुए। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर दोनों गुरु प्रेममें भर गये।

कहहिं वसिष्ठ धरम इतिहासा ❀ सुनहिं महीप सहित रनिवासा ॥
मुनिमन अगम गाधि-सुत-करनी ❀ मुदित बसिष्ठ बिपुलबिधि बरनी ॥

वशिष्ठजी धर्मसंबंधी इतिहास कहते हैं और राजा दशरथ रनवाससमेत सुनते हैं। वशिष्ठजीने प्रसन्न होकर बहुत तरहसे विश्वामित्रकी तपस्याका वर्णन किया, जो मुनियोंके मनके लिये भी अगम्य है।

बोले वामदेव सब साँची ❀ कीरति कलित लोक तिहुं माँची ॥
सुनि आनंद भयउ सब काहू ❀ राम-लखन-उर अधिक उछाहू ॥

वामदेव ऋषि कहने लगे कि यह सब सत्य है। विश्वामित्रजीकी सुन्दर कीर्ति तीनों लोकोंमें फैली हुई है। सुनकर सब किसीको आनंद हुआ। श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके हृदयमें विशेष आनन्द हुआ।

दो०—मंगल मोद उछाह नित ❀ जाहिं दिवस एहि भांति।
उमगी अवध अनंद भरि ❀ अधिक अधिक अधिकाति ॥३९३॥

इसी तरह नित्य मंगल, आनंद और उत्सवमें दिन बीतते जाते हैं। आनंदसे भरकर अयोध्यापुरी उमड़ उठी। उसका वेग अधिक-अधिक बढ़ता ही गया।

सुदिन सोधि कलकंकन छोरे ❀ मंगल मोदबिनोद न थोरे ॥
नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं ❀ अवध जनम जाचहिं बिधि पाहीं ॥

शुभ दिन विचारकर सुन्दर कंकण खोले गये, मंगलाचार हुए और बड़ा आनंद, विनोद रहा। नित्य नया सुख देखकर देवता भी सिहाते हैं और ब्रह्मासे मांगते हैं कि हमारा अयोध्यामें जन्म हो।

बिस्वामित्र चलन नित चहहीं ❀ राम - सनेह - बिनय - बस रहहीं ॥
दिन दिन सयगुन भूपतिभाऊ ❀ देखि सराह महा - मुनि - राऊ ॥

विश्वामित्रजी नित्य ही विदा होना चाहते हैं, परन्तु श्रीरामचंद्रजीके प्रेम और विनतीके वशमें होकर रह जाते हैं। दिनपर दिन राजाका सौ गुना भाव देखकर महामुनिराज विश्वामित्रने प्रशंसा की।

मांगत बिदा राउ अनुरागे ❀ सुतन्ह समेत ठाढ़ भये आगे ॥
नाथ सकल संपदा तुम्हारी ❀ मैं सेवक समेत सुत नारी ॥

विदा मांगते ही राजा प्रेममें भर गये और पुत्रोंसमेत आगे खड़े हुए। उन्होंने कहा कि हे नाथ, सब आपकी ही संपदा है। पुत्रस्त्रीसमेत मैं आपका सेवक हूं।

करबि सदा लरिकन्ह पर छोहू ❀ दरसन देत रहब मुनि मोहू ॥
अस कहि राउ सहित सुत रानी ❀ परेउ चरन मुख आव न बानी ॥

लड़कोंपर सदा दया करते रहना और हे मुनि, मुझे भी दर्शन देते रहना, ऐसा कहकर राजा पुत्रों और रानियोंसमेत चरणोंमें पड़ गये। उनके मुखसे शब्द न निकला।

दीन्हि असीस बिप्र बहुभांती ❀ चले न प्रीतिरीति कहि जाती ॥
राम सप्रेम संग सब भाई ❀ आयसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥

ब्राह्मण विश्वामित्रने अनेक प्रकारसे आशीर्वाद दिया और विदा हुए। उनसे प्रीति और व्यवहार कहा नहीं जाता। सब भाइयोंसमेत श्रीरामचन्द्रजी प्रेमपूर्वक उन्हें पहुंचाने गये और आज्ञा पाकर लौट आये।

दो०—रामरूप भूपतिभगति ❀ ब्याह उछाह अनंद।
जात सराहत मनहिं मन ❀ मुदित गाधि-कुल-चंद ॥ ३६४ ॥

गाधिके कुलमें चंद्रमाके समान विश्वामित्रजी आनंदमें भरे हुए श्रीरामचन्द्रजीके रूप, राजा दशरथकी भक्ति, विवाहका आनंद और उत्सव, सबको मन-ही-मन सराहते जाते हैं।

बामदेव रघु - कुल - गुर ग्यानी ❀ बहुरि गाधिसुत कथा बखानी ॥
सुनि मुनि सुजस मनहिं मन राऊ ❀ बरनत आपन पुन्यप्रभाऊ ॥

वामदेव ऋषि और रघुकुलके गुरु ज्ञानी वशिष्ठजीने फिर विश्वामित्रकी कथा वर्णन की। मुनिका सुयश सुनकर राजा दशरथ मन-ही-मन अपने पुण्यका प्रभाव वर्णन करने लगे।

बहुरे लोग रजायसु भयऊ ❀ सुतन्ह समेत नृपति गृहँ गयऊ॥
जहँ तहँ रामब्याहु सब गावा ❀ सुजसु पुनीत लोक तिहुँ छावा॥

फिर आज्ञा हुई और सब लोग अपने-अपने घरोंको लौटे। राजा दशरथ भी पुत्रोंसमेत महलमें गये। जहां-तहां सब श्रीरामचन्द्रजीका विवाह गाते थे। पवित्र सुयश तीनों लोकोंमें छा गया।

आये ब्याहि रामु घर जब तें ❀ बसै अनंद अवध सब तब तें॥
प्रभुबिआह जस भयउ उछाहू ❀ सकहिं न बरनि गिरा अहिनाहू॥

जिस समयसे अपना विवाह कर श्रीरामचन्द्रजी घर आये उसी समयसे अयोध्यामें सब आनन्द आकर बस गये। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके विवाहमें जैसा उत्सव हुआ, उसके सरस्वती और शेषनाग भी वर्णन नहीं कर सकते।

कबि-कुल-जीवन-पावन जानी ❀ राम-सीय-जसु मंगलखानी॥
तेहिं तें मैं कछु कहा बखानी ❀ करन पुनीत हेतु निज-बानी॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीका यश मंगलोंकी खान और कविवंशके जीवनको पवित्र कर देनेवाला है, ऐसा जानकर, इन्हीं कारणोंसे अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये मैंने भी कुछ वर्णन कर कहा है।

छं०—निज-गिरा-पावनि-करन कारन रामजसु तुलसी कहेउ।
रघु-बीर-चरित अपार बारिधि पार कबि कौनें लहेउ॥
उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं।
बैदेहि-राम-प्रसाद तें जन सर्बदा सुख पावहीं॥

अपनी वाणीको पवित्र करनेके लिये तुलसीदासजीने श्रीरामचन्द्रजीका यश वर्णन किया है। श्रीरामचन्द्रजी-का चरित अपार समुद्र है। उसका पार किस कविने पाया है? यज्ञोपवीत और विवाहके उत्सव और आनंदको सुनकर जो लोग आदरपूर्वक उसे गायेंगे वे श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीकी कृपासे सदा सुख पावेंगे।

सो०—सिय-रघु-बीर-बिबाहु ❀ जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु ❀ मंगलायतन रामजसु॥३६१॥

सीता और श्रीरामचन्द्रजीके विवाहको जो लोग प्रेमके साथ गायेंगे और सुनेंगे उनके लिये सदैव आनंदोत्सव रहेगा; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीका यश समस्त मंगलोंका घर है।

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमल
सन्तोषसम्पादनो नाम प्रथमः सोपानः समाप्तः॥

चित्रमय रामायण

[प्रथम भाग]

चित्रमय रामायणमें क्या ही भावपूर्ण तीन रंगे
तथा एक रंगे चित्र दिये गये हैं !
चित्रोंके भाव आदरणीय हैं ।
सुनहली रेशमी जिल्द सहित

मूल्य ३॥)

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

द्वितीय सोपान

अयोध्याकांड

श्लोकाः

वामाङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगा मस्तके
भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्।
सोऽयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा
शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशंकरः पातु माम् ॥१॥

जिसके वाम अंगमें पार्वती, मस्तकपर गंगा, ललाटपर द्वितीयाका चंद्रमा, कण्ठमें विष, हृदयमें सर्पराज सुशोभित हैं वही भस्मसे विभूषित, देवताओंमें श्रेष्ठ, सबके स्वामी, अविनाशी, संहार करनेवाले, सर्वव्यापी, कल्याणरूप, चंद्रमा जैसे शुक्ल वर्णवाले और कल्याण करनेवाले महादेव मेरी रक्षा करें।

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवासदुःखतः।
मुखाम्बुजश्रीरघुनन्दनस्य मे सदाऽस्तु सा मञ्जुलमङ्गलप्रदा ॥२॥

श्रीरामचन्द्रजीके मुखकमलकी जो शोभा न तो राज्याभिषेकसे दीप्त हुई और न वनवासके दुःखसे मलिन हुई वही सदा मेरे लिये सुन्दर मंगल देनेवाली हो।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपितबामभागम् ।
पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥३॥

नीलकमलके समान श्याम और कोमल जिनका शरीर है; जिनके बायें भागमें सीताजी सुशोभित हैं, जिनके दोनों हाथोंमें विशाल धनुष और सुन्दर बाण हैं, उन रघुवंशियोंके स्वामी श्रीरामचंद्रजीको मैं नमस्कार करता हूं ।

दो०—श्रीगुरु-चरन-सरोज-रज ❀ निज-मनु-मुकुर सुधारि ।
बरनउं रघुबर-बिमल-जसु ❀ जो दायकु फलचारि ॥ १ ॥

श्रीगुरुके चरणकमलोंकी रजसे अपने मनरूपी दर्पणको साफ करके मैं श्रीरामचन्द्रजीका निर्मल यश वर्णन करता हूं, जो चारों फल देनेवाला है ।

जब तें राम ब्याहि घर आये ❀ नित नवमंगल मोद बधाये ॥
भुवन चारिदस भूधर भारी ❀ सुकृत मेघ बरषहिं सुखबारी ॥

जबसे श्रीरामचन्द्रजी विवाहकर घर आये तबसे नित्य नये मंगल, आनन्द और बधाइयां रहने लगीं । चौदह भुवनरूपी भारी पर्वतोंपर पुण्यरूपी बादल सुखरूपी जल बरसाने लगे ।

रिधि सिधि संपति नदी सोहाई ❀ उमगि अवध अंबुधि कहुं आई ॥
मनिगन पुर-नर-नारि-सुजाती ❀ सुचि अमोल सुन्दर सब भांती ॥

ऋद्धि, सिद्धि और सम्पत्तिकी सुन्दर नदी उमड़कर अयोध्यारूपी समुद्रमें आकर मिल गयी । नगरके कुलीन स्त्री और पुरुष समुद्रकी मणियोंके समूहके समान हैं, जो सब प्रकार पवित्र, अनमोल और सुन्दर हैं ।

कहि न जाइ कछु नगरबिभूति ❀ जनु एतनिअ बिरंचि करतूती ॥
सबबिधि सब पुरलोग सुखारी ❀ रामचन्द-मुख-चंदु निहारी ॥

नगरके ऐश्वर्यका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता, मानों ब्रह्माकी करतूत इतनी ही है । श्रीरामचंद्रजीका चन्द्रमुख देखकर नगरके सब लोग सब प्रकार सुखी हो गये ।

मुदित मातु सब सखी सहेली ❀ फलित बिलोकि मनोरथ बेली ॥
राम-रूप-गुन-सीलु-सुभाऊ ❀ प्रमुदित होहिं देखि सुनि राऊ ॥

अपनी मनोरथरूपी बेलको फलती देखकर सब माताएं और सखियां-सहेलियां प्रसन्न हुईं । श्रीरामचंद्रजीका रूप, गुण, शील और स्वभाव देख और सुनकर राजा दशरथ प्रसन्न होते हैं ।

दो०—सबके उर अभिलाषु अस ❀ कहहिं मनाइ महेसु ।
आपु अछत जुवराजु पदु ❀ रामहिं देउ नरेसु ॥ २ ॥

सबके हृदयमें यही अभिलाषा है और सब शिवजीको मनाकर यही कहते हैं कि अपने रहते हुए ही राजा श्रीरामचन्द्रजीको युवराज-पद दे दें।

एक समय सब सहित समाजा ❀ राजसभा रघुराजु बिराजा ॥
सकल - सुकृत - मूरति नरनाहू ❀ रामसुजसु सुनि अतिहि उछाहू ॥

एक बार राजा दशरथ सब समाज समेत राजसभामें विराजमान थे। समस्त पुण्योंकी मूर्ति राजा वहां श्रीरामचन्द्रजीका सुयश सुनकर बड़े ही आनन्दित हुए।

नृप सब रहहिं कृपा अभिलाषें ❀ लोकपु करहिं प्रीतिरुख राखें ॥
त्रिभुवन तीनिकाल जगमाहीं ❀ भूरि भाग दसरथसम नाहीं ॥

सब राजा लोग राजा दशरथकी कृपाके अभिलाषी रहते थे और लोकपाल भी उनका रुख देखकर प्रेम करते थे। संसारमें तीनों लोकों और तीनों कालोंमें राजा दशरथके समान बड़भागी कोई नहीं था।

मंगलमूल रामु सुत जासू ❀ जो कछु कहिय थोर सब तासू ॥
राय सुभाय मुकुरु कर लीन्हा ❀ बदनु बिलोकि मुकुटु सम कीन्हा ॥

मंगलोंके मूल श्रीरामचन्द्रजी जिसके पुत्र हैं उसके लिये जो कुछ कहा जाय, सब थोड़ा है। स्वभावसे ही राजाने दर्पण हाथमें लिया और मुख देखकर मुकुटको ठीक किया।

स्रवनसमीप भये सितकेसा ❀ मनहुं जरठपनु अस उपदेसा ॥
नृप जुबराज राम कहुं देहू ❀ जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥

कानोंके पास बाल सफेद हो गये हैं, मानों बुढ़ापा यह उपदेश दे रहा हो कि हे राजा, श्रीरामचन्द्रजीको युवराज-पद देकर अपने जन्म और जीवनके लाभ क्यों नहीं उठा लेते।

दो०—यह बिचारु उर आनि नृप ❀ सुदिनु सुअवसरु पाइ।
प्रेम पुलकि तन मुदित मन ❀ गुरुहि सुनायेउ जाइ ॥ ३ ॥

हृदयमें यह विचार लाकर राजा दशरथने शुभ दिन और सुअवसर पाकर प्रेमसे पुलकित शरीर हो प्रसन्न मनसे जाकर गुरुको सुनाया।

कहइ भुआलु सुनिय मुनिनायक ❀ भये रामु सब बिधि सब लायक ॥
सेवक सचिव सकल पुरबासी ❀ जे हमारे अरि मित्र उदासी ॥

राजा कहने लगे कि हे मुनिराज, सुनिये। श्रीरामचंद्रजी सब प्रकार सब योग्य हो गये। सेवक, मंत्री, सब नगरवासी हमारे शत्रु-मित्र तथा उदासीन लोग,—

सबहि राम प्रिय जेहि बिधि मोही ❀ प्रभु असीस जनु तनु धरि सोही ॥
बिप्र सहित परिवार गोसाईं ❀ करहिं छोहु सब रउरेहि नाईं ॥

सबको श्रीरामचन्द्रजी वैसे ही प्यारे हैं जैसे मुझे; मानों आपका आशीर्वाद शरीर रखकर शोभित हो। हे स्वामिन्, उन्हें परिवारसमेत सब ब्राह्मण आपकी ही तरह प्यार करते हैं।

जे गुरु-चरन-रेनु सिर धरहीं ❀ ते जनु सकल बिभव बस करहीं ॥
मोहि सम यहु अनुभयउ न दूजे ❀ सब पायेउँ रज पावनि पूजे ॥

जो लोग गुरुके चरणोंकी रजको शिरपर धारण करते हैं वे मानों सब ऐश्वर्य वशमें कर लेते हैं। यह अनुभव मेरे समान और किसी दूसरेको नहीं हुआ। आपके चरणोंकी पवित्र रजकी पूजा कर मैंने सब कुछ पाया है।

अब अभिलाषु एकु मन मोरें ❀ पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें ॥
मुनि प्रसन्न लखि सहज सनेहू ❀ कहेउ नरेस रजायसु देहू ॥

मेरे मनमें अब एक अभिलाषा है। हे नाथ, वह आपकी दयासे पूर्ण होगी। राजाने मुनिको प्रसन्न देखकर और अपनेपर उनका स्वाभाविक प्रेम पाकर कहा कि आज्ञा दीजिये।

दो०—राजन राउर नामु जसु ❀ सब अभिमतदातार।
फल अनुगामी महिपमनि ❀ मन अभिलाषु तुम्हार ॥ ४ ॥

गुरु वशिष्ठजीने कहा कि हे राजा, आपका नाम और यश सब मनोरथोंको पूरा करनेवाला है। हे राजाओंमें मणिके समान राजा दशरथ, सब फल आपके मनकी अभिलाषाके पीछे-पीछे चलते हैं।

सब बिधि गुरु प्रसन्न जिय जानी ❀ बोलेउ राउ रहसि मृदुबानी ॥
नाथ रामु करिअहिं जुवराजू ❀ कहिय कृपा करि करिय समाजू ॥

हृदयमें गुरुको सब प्रकार प्रसन्न जानकर राजा आनंदमें भरकर मीठी वाणीसे बोले कि हे नाथ, श्रीरामचन्द्रजीको युवराजका पद देना चाहिये। यदि आप कृपापूर्वक कहें तो सामान जुटाया जाय।

मोहि अछत यहु होइ उछाहू ❀ लहहिं लोग सब लोचन लाहू ॥
प्रभुप्रसाद सिव सबइ निबाहीं ❀ यह लालसा एक मन माहीं ॥

मेरे रहते यह उत्सव हो जावे और सब लोग नेत्रोंका लाभ उठा लें। आपकी कृपासे शिवजीने और तो सब बातें पूरी कीं। यही एक अभिलाषा मनमें और है।

पुनि न सोचु तनु रहउ कि जाऊ ❀ जेहिं न होइ पाछें पछिताऊ ॥
सुनि मुनि दसरथ बचन सुहाये ❀ मंगल-मोद-मूल मन भाये ॥

फिर चाहे शरीर रहे या छूट जावे, सोच नहीं; जिससे पीछे पछतावा न होवे। मुनिके मनको राजा दशरथके सुहावने और आनंद-मंगलमय वचन बहुत अच्छे लगे।

सुनु नृप जासु बिमुख पछिताहीं ❀ जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं ॥
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी ❀ रामु पुनीत - प्रेम - अनुगामी ॥

उन्होंने कहा कि हे राजा, सुनो। जिसके विमुख होनेसे लोग पछताते हैं और जिसके भजन विना दाह नहीं मिटता, वही प्रभु तुम्हारे पुत्र हुए हैं। श्रीरामचन्द्रजी पवित्र प्रेमके पीछे चलनेवाले हैं।

दो०—बेगि बिलंबु न करिय नृप ❀ साजिय सबुइ समाजु।
सुदिनु सुमंगलु तबहिं जब ❀ रामु होहिं जुबराजु ॥५॥

हे राजा, देर न करो, शीघ्रतासे सभी समाजको सजाओ। जब श्रीरामचन्द्रजी युवराज हो जायँ तभी शुभ दिन और सुन्दर मंगल है।

मुदित महीपति मंदिर आये ❀ सेवक सचिव सुमंत्रु बोलाये ॥
कहि जय जीव सीस तिन्ह नाये ❀ भूप सुमंगल बचन सुनाये ॥

प्रसन्नतापूर्वक राजा महलमें आये और सेवकों तथा सुमन्त नामक मंत्रीको बुलाया। उन्होंने 'जय जीव' कहकर शिर नवाया। फिर राजाने उत्तम मंगलकारक वचन सुनाये।

प्रमुदित मोहि कहेउ गुरु आजू ❀ रामहिं राय देहु जुबराजू ॥
जौं पांचहि मत लागइ नीका ❀ करहु हरषि हिय रामहिं टीका ॥

आज गुरुने प्रसन्नतापूर्वक मुझसे कहा है कि हे राजा, तुम श्रीरामचन्द्रजीको युवराज-पद दे दो। यदि यह मत पंचोंको भला लगे तो हृदयमें प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजीका राजतिलक करो।

मंत्री मुदित सुनत प्रियबानी ❀ अभिमत बिरव परेउ जनु पानी ॥
बिनती सचिव करहिं कर जोरी ❀ जियहु जगतपति बरिस करोरी ॥

यह प्यारी बात सुनते ही मन्त्री प्रसन्न हुए, मानों मनोरथरूपी वृक्षमें पानी पड़ गया हो। मंत्री लोग हाथ जोड़कर विनती करने और कहने लगे कि हे संसारके स्वामी, करोड़ बरस जीओ।

जगमंगल भल काजु बिचारा ❀ बेगिय नाथ न लाइय बारा ॥
नृपहि मोदु सुनि सचिव सुभाखा ❀ बढ़त बौंड़ जनु लही सुसाखा ॥

संसारका कल्याण करनेवालेने अच्छे कामको करनेका विचार किया है। हे नाथ, शीघ्रता कीजिये। देर मत लगाइये। मंत्रियोंके मीठे वचन सुनकर राजाको आनन्द हुआ, मानों बढ़ते हुए बौरमें सुन्दर शाखा निकल आयी हो।

दो०—कहेउ भूप मुनिराज कर ❀ जोइ जोइ आयसु होइ।
राम-राज-अभिषेक-हित ❀ बेगि करहु सोइ सोइ ॥ ६ ॥

राजाने कहा कि श्रीरामचन्द्रजीका राजतिलक होनेके लिये मुनिराजकी जो-जो आज्ञा हो वही-वही शीघ्र करो।

हरषि मुनीस कहेउ मृदुबानी ❀ आनहु सकल सु-तीरथ-पानी ॥
औषध मूल फूल फल पाना ❀ कहे नाम गनि मंगल नाना ॥

प्रसन्न होकर मुनीश्वर वशिष्ठजीने मीठी वाणीसे कहा कि सब सुन्दर तीर्थोंका पानी ले आओ। ओषधियां, मूल, फूल, फल और पान--अनेक मांगलिक वस्तुओंके नाम गिनकर बतलाये।

चामर चरम बसन बहु भांती ❀ रोम पाट पट अगनित जाती ॥
मनिगन मंगलबस्तु अनेका ❀ जो जग जोगु भूपअभिषेका ॥

चँवर, मृगचर्म, अनेक प्रकारके कपड़े, अनेक जातियोंके ऊनी और रेशमी कपड़े, मणियां और अनेक माँगलिक वस्तुएं, जो संसारमें राजतिलकके योग्य थीं, सबको बतलाया।

बेदबिदित कहि सकल बिधाना ❀ कहेउ रचहु पुर बिबिधबिताना ॥
सफल रसाल पूँगफल केरा ❀ रोपहु बीथिन्ह पुर चहुँ फेरा ॥

वेदमें लिखी हुई सब विधि बतलाकर उन्होंने कहा कि नगरमें अनेक मण्डपोंकी रचना करो। फलोंसमेत आम, सुपारी और केलेके वृक्षोंको गलियों और नगरके चारों ओर लगाओ।

रचहु मंजु मनि चौकइं चारू ❀ कहहु बनावन बेगि बजारू ॥
पूजहु गनपति गुरु कुलदेवा ❀ सब बिधि करहु भूमि-सुर-सेवा ॥

सुन्दर मणियोंके मनोहर चौक पुराओ और बाजारको शीघ्रतासे सजानेके लिये कहो। गणेशजी, गुरु, और कुलदेवताओंकी पूजा करो और सब प्रकार ब्राह्मणोंकी सेवा करो।

दो०—ध्वज पताक तोरन कलस ❀ सजहु तुरग रथ नाग।
सिर धरि मुनिबर बचन सबु ❀ निज-निज-काजहिं लाग ॥७॥

ध्वजा, पताका, तोरण, कलश, हाथी, घोड़ा और रथ—सबको सजाओ। मुनिवरकी आज्ञाओंको शिरोधार्य कर सब अपने-अपने काममें लग गये

जो मुनीस जेहि आयसु दीन्हा ❀ सो तेहि काजु प्रथम जनु कीन्हा ॥
बिप्र साधु सुर पूजत राजा ❀ करत रामहित मंगलकाजा ॥

मुनीश्वरने जिसको जो आज्ञा दी वह कार्य मानों उसने पहिले ही कर रखा हो। राजा दशरथ ब्राह्मणों, साधुओं और देवताओंको पूजते हैं और श्रीरामचन्द्रजीका कल्याण करनेवाले मंगल कार्योंको करते हैं।

सुनत रामअभिषेक सुहावा ❀ बाज गहागह अवध बधावा ॥
राम-सीय-तन सगुन जनाये ❀ फरकहिं मंगल अंग सुहाये ॥

श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर राजतिलक होनेकी बात सुनकर अयोध्यामें खूब जोरसे बधाइयां बजने लगीं। श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके शरीरमें शकुन प्रकट होने लगे और मंगलसूचक शुभ अंग फड़कने लगे।

पुलकि सप्रेम परसपर कहहीं ❀ भरत-आगमनु-सूचक अहहीं ॥
भये बहुत दिन अतिअवसेरी ❀ सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी ॥

पुलकायमान होकर प्रेमके साथ वे परस्पर कहते हैं कि ये शकुन भरतजीके आनेकी सूचना देनेवाले हैं। बहुत दिन हो गये। बड़ी प्रतीक्षा की। अब इन शकुनोंसे किसी प्यारेको भेंट होनेका विश्वास होता है।

भरतसरिस प्रिय को जग माहीं ❀ इहइ सगुनफलु दूसर नाहीं ॥
रामहिं बंधुसोचु दिन राती ❀ अंडन्हि कमठ हृदय जेहि भांती ॥

भरतके समान संसारमें और कौन प्यारा है? शकुनोंका फल यही है, दूसरा नहीं। कछुएके जीमें जिस प्रकार अण्डोंका सोच रहता है उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजीको रात-दिन भाई भरतका सोच रहता है।

दो०—एहि अवसर मंगलु परम ❀ सुनि रहँसेउ रनिवासु।
सोभत लखि बिधु बढ़त जनु ❀ बारिधि बीचिबिलास ॥८॥

इसी अवसरपर परम मंगल संवाद सुनकर सारा रनवास आनन्दमें मग्न हो गया और ऐसा शोभित हुआ, मानों चन्द्रमाको देखकर समुद्रमें लहरोंका वेग बढ़ रहा हो।

प्रथम जाइ जिन्ह बचन सुनाये ❀ भूषन बसन भूरि तिन्ह पाये ॥
प्रेम पुलकि तन मनु अनुरागीं ❀ मंगलकलस सजन सब लागीं ॥

पहिले जाकर जिन्होंने संवाद सुनाया उन्होंने बहुतसे गहने और कपड़े पाये। प्रेमसे शरीर पुलकायमान हो गया और मन भर गया और सब मंगल-कलश सजाने लगीं।

चौकइं चारु सुमित्रा पूरी ❀ मनिमय बिबिधभांति अतिरूरी ॥
आनंद मगन राममहतारी ❀ दिये दान बहु बिप्र हँकारी ॥

सुमित्राने अत्यन्त सुन्दर मणियोंसे अनेक प्रकारके सुन्दर चौक पूरे। श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्याजी आनन्दमें मग्न हो गयीं और ब्राह्मणोंको बुलाकर बहुत तरहका दान दिया।

पूजीं ग्रामदेबि सुर नागा ❀ कहेउ बहोरि देन बलिभागा ॥
जेहि बिधि होइ राम कल्यानू ❀ देहु दया करि सो बरदानू ॥
गावहिं मंगल कोकिलबयनी ❀ बिधुबदनी मृग-सावक-नयनी ॥

उन्होंने ग्रामदेवी, देवताओं और नागोंकी पूजा की और फिर बलि-भेंट देनेको भी कहा। उन्होंने विनती की कि जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीका, कल्याण हो, वही वरदान दया करके दीजिये। कोयल जैसे स्वर, चंद्रमा जैसे मुख और हिरणके बच्चे जैसे नेत्रोंवाली स्त्रियां मंगल गीत गाने लगीं।

दो०—राम-राज-अभिषेकु सुनि ❀ हिय हरषे नरनारि।
लगे सुमंगल सजन सब ❀ बिधि अनुकूल बिचारि ॥९॥

श्रीरामचन्द्रजीके राजतिलककी बात सुनकर सब स्त्रीपुरुष हृदयमें प्रसन्न हुए और ब्रह्माको अपने अनुकूल समझकर सब सुन्दर मंगल सजाने लगे।

तब नरनाह बसिष्ठ बोलाये ❀ रामधाम सिख देन पठाये ॥
गुरु आगमनु सुनत रघुनाथा ❀ द्वार आइ पद नायउ माथा ॥

तब राजाने वशिष्ठजीको बुलाया और सीख देनेके लिये श्रीरामचन्द्रजीके भवनमें भेजा। गुरुका आगमन सुनते ही श्रीरामचन्द्रजीने द्वारपर आकर चरणोंमें शिर नवाया।

सादर अरघ देइ घर आने ❀ सोरहभांति पूजि सनमाने ॥
गहे चरन सियसहित बहोरी ❀ बोले रामु कमल कर जोरी ॥

आदरपूर्वक अर्घ्य देकर घरमें ले आये और षोड़शोपचार पूजा करके सम्मान किया, फिर सीताजीसमेत चरण पकड़ लिये और कमलके समान हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजी बोले।

सेवकसदन स्वामिआगमनू ❀ मंगलमूल अमंगलदमनू ॥
तदपि उचित जन बोलि सप्रीती ❀ पठइय काज नाथ असि नीती ॥

सेवकके घर स्वामीका आगमन मंगलोंका मूल और अमंगलोंको नष्ट करनेवाला होता है। तोभी हे नाथ, ऐसी नीति है कि यदि कार्य हो तो किसी योग्य मनुष्यको भेजकर प्रेमपूर्वक बुला लेना था।

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू ❀ भयउ पुनीत आजु यह गेहू ॥
आयसु होइ सो करउं गोसाईं ❀ सेवकु लहइ स्वामिसेवकाईं ॥

हे प्रभो, आपने अपनी प्रभुताको छोड़कर प्रेम किया, इससे आज यह घर पवित्र हो गया। हे स्वामिन्, जो आज्ञा हो वही करूं। यह सेवक स्वामीकी सेवाका कार्य पा जावे।

दो०—सुनि सनेहसाने बचन ❀ मुनि रघुबरहि प्रसंस।
राम कस न तुम्ह कहहु अस ❀ हंस-बंस-अवतंस ॥१०॥

प्रेमसे सने हुए वचन सुनकर मुनिने श्रीरामचन्द्रजीकी प्रशंसा की और कहा कि हे राम, तुम सूर्यवंशके भूषण हो। तुम भला ऐसा क्यों न कहो!

बरनि राम गुन सील सुभाऊ ❀ बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ ॥
भूप सजेउ अभिषेकसमाजू ❀ चाहत देन तुम्हहिं जुबराजू ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुण, शील और स्वभावका वर्णन कर प्रेमसे पुलकायमान होकर मुनिराज बोले कि राजाने राजतिलकका सामान सजाया है और वे तुम्हें युवराज-पद देना चाहते हैं।

राम करहु सब संजम आजू ❀ जौं बिधि कुसल निबाहइ काजू ॥
गुरु सिख देइ राम पहिं गयऊ ❀ राम हृदय अस बिसमय भयऊ ॥

हे राम, तुम आज सब संयम करो, जिससे ब्रह्मा कुशलपूर्वक सब काम निवाह दें। सीख देकर गुरु राजाके पास गये और श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें ऐसा आश्चर्य हुआ कि—

जनमे एक संग सब भाई ❀ भोजन सयन केलि लरिकाई ॥
करनबेध उपबीत बियाहा ❀ संग संग सब भयउ उछाहा ॥

हम सब भाइयोंने एक साथ जन्म लिया, लड़कपनमें भोजन और शयन किया तथा खेले। कर्णवेध, यज्ञोपवीत और विवाह—सब उत्सव भी साथ-ही-साथ हुए।

बिमलबंस यहु अनुचित एकू ❀ बंधु बिहाइ बड़ेहिं अभिषेकू ॥
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई ❀ हरउ भगतमन कै कुटिलाई ॥

निर्मल वंशमें यही एक अनुचित है कि और भाइयोंको छोड़कर बड़ेको ही राजतिलक हो। तुलसीदासजी कहते हैं कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका यह प्रेमसहित सुन्दर पछतावा भक्तोंके मनकी कुटिलताको दूर करे।

दो०—तेहि अवसर आये लखन ❀ मगन प्रेम आनंद।
सनमाने प्रिय बचन कहि ❀ रघु - कुल - कैरव - चंद ॥११॥

उसी समय प्रेम और आनन्दमें मग्न लक्ष्मणजी वहां आये। रघुकुलरूपी कुमुदके लिये चंद्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजीने प्रिय वचन कहकर उनका सम्मान किया।

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना ❀ पुर प्रमोद नहिं जाइ बखाना ॥
भरत आगमनु सकल मनावहिं ❀ आवहिं बेगि नयनफलु पावहिं ॥

अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे। नगरके आनन्दका वर्णन नहीं किया जा सकता। सब भरतजीका आना मनाते हैं और कहते हैं कि वे जल्दी ही आवें और नेत्रोंका फल पावें।

हाट बाट घर गली अथाई ❀ कहहिं परस्पर लोग लोगाई ॥
कालि लगन भलि केतिक बारा ❀ पूजिहि बिधि अभिलाषु हमारा ॥

बाजार, रास्ता, घर, गली और बैठक—सर्वत्र पुरुष और स्त्रियां कह रही हैं कि वह शुभ लग्न कल किस समय है कि जब ब्रह्मा हमारे मनकी अभिलाषा पूरी करेगा।

कनकसिंहासन सीयसमेता ❀ बैठहिं रामु होइ चित चेता ॥
सकल कहहिं कब होइहि काली ❀ बिघन मनावहिं देव कुचाली ॥

श्रीरामचन्द्रजी जब सीतासमेत सोनेके सिंहासनपर बैठ जावें तब मनचाही हो जावे। सब कह रहे हैं कि कल कब हो, परन्तु खोटी चालवाले देवता विघ्न मना रहे हैं।

तिन्हहिं सुहाइ न अवध बधावा ❀ चोरहिं चंदिनि राति न भावा ॥
सारद बोलि बिनय सुर करहीं ❀ बारहिं बार पांय ले परहीं ॥

अयोध्याकी बधाइयाँ उन्हें नहीं अच्छी लगतीं; जैसे चोरको चांदनी रात नहीं भाती। सरस्वतीको बुलाकर देवता विनती कर रहे हैं और बारबार पावोंपर गिरते हैं।

दो०—बिपति हमारि बिलोकि बड़ि ❀ मातु करिय सोइ आजु।
रामु जाहिं बन राजु तजि ❀ होइ सकल सुरकाजु ॥ १२ ॥

हमारी बड़ी विपत्ति देखकर हे मां, आज वही करो, जिससे श्रीरामचन्द्रजी राज छोड़कर वनको चले जावें और देवताओंके सब काम पूरे हों।

सुनि सुरबिनय ठाढ़ि पछिताती ❀ भइउं सरोजबिपिन हिमराती ॥
देखि देव पुनि कहहिं निहोरी ❀ मातु तोहि नहिं थोरिउ खोरी ॥

देवताओंकी विनती सुनकर सरस्वती खड़ी-खड़ी पछता रही हैं कि हाय! मैं कमलके वनके लिये पालेकी रात हुई हूं। देखकर देवता फिर दीनता दिखलाकर कहने लगे कि हे माता, तुम्हें थोड़ा भी दोष नहीं लगेगा।

बिसमय - हरष - रहित रघुराऊ ❀ तुम्ह जानहु सब राम प्रभाऊ ॥
जीव करमबस सुख - दुख - भागी ❀ जाइय अवध देवहित लागी ॥

श्रीरामचन्द्रजी विस्मय और हर्षसे रहित हैं। तुम तो श्रीरामचन्द्रजीका सब प्रभाव जानती हो। कर्मके वशमें होकर जीव सुख और दुःख भोगता है। देवताओंका हितसाधन करनेके लिये तुम अयोध्या जाओ।

बारबार गहि चरन सँकोची ❀ चली बिचारि बिबुधमति पोची ॥
ऊंच निवास नीच करतूती ❀ देखि न सकहिं पराइ बिभूती ॥

बार-बार चरण पकड़कर देवताओंने सरस्वतीको संकोचमें डाल दिया। सरस्वतीजी यह विचारकर विदा हुईं कि देवताओंकी बुद्धि नीच है। इनका निवास तो ऊँचा है, परन्तु इनके कर्म नीच हैं। ये दूसरेका ऐश्वर्य देख नहीं सकते।

कैकयी और मंथरा ।

কৈকয়ী ও মন্থরা ।

आगिलु काजु बिचारि बहोरी ❁ करिहहिं चाह कुसल कबि मोरी ॥
हरषि हृदय दसरथपुर आई ❁ जनु ग्रहदसा दुसह दुखदाई ॥

परन्तु मेरे अगले कामको विचारकर कुशल कवि मेरी फिर चाह करेंगे। हृदयमें प्रसन्न होकर सरस्वती अयोध्यापुरीमें आयीं, मानों दुःसह दुःख देनेवाली कोई ग्रहदशा वहां आयी हो।

दो०—नामु मंथरा मंदमति ❁ चेरी कैकइ केरि।
अजस पेटारी ताहि करि ❁ गई गिरा मति फेरि ॥ १३ ॥

कैकेयीकी एक मंद बुद्धिवाली दासी थी, जिसका नाम मंथरा था। उसे अपयशकी पिटारी बनाकर सरस्वती उसकी बुद्धिको पलट गयीं।

(कुबरीकी कुटिलाई)

दीख मंथरा नगरु बनावा ❁ मंजुल मंगल बाज बधावा ॥
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू ❁ रामतिलक सुनि भा उरदाहू ॥

मंथराने नगरकी सजावट देखी। सुन्दर मंगलाचार हो रहे थे और बधाइयां बज रही थीं। उसने लोगोंसे पूछा कि कौनसा उत्सव है? श्रीरामचन्द्रजीके तिलककी बात सुनकर हृदयमें जलन हुई।

करइ बिचारु कुबुद्धि कुजाती ❁ होइ अकाज कवनि बिधि राती ॥
देखि लागि मधु कुटिल किराती ❁ जिमि गँव तकइ लेउँ केहि भांती ॥

वह खोटी बुद्धि और नीच जातिवाली मंथरा विचार करने लगी कि रात ही में यह काम किस प्रकार बिगड़ जाय। जैसे दुष्ट भिलनी शहदके छत्तेको लगा हुआ देखकर यह मौका ताके कि मैं उसे किस प्रकार ले लूं।

भरतमातु पहिं गइ बिलखानी ❁ का अनमनि हसि कह हंसि रानी ॥
उतरु देइ नहिं लेइ उसासू ❁ नारिचरित करि ढारइ आंसू ॥

बिलखती हुई वह भरतजीकी माता कैकेयीके पास गयी। रानीने हँसकर कहा कि तू उदास क्यों है? मंथरा उत्तर नहीं देती, लंबी सांस लेती है और स्त्रीचरित्र करके आंसू बहाती है।

हंसि कह रानि गालु बड़ तोरे ❁ दीन्ह लखन सिख अस मन मोरे ॥
तबहुं न बोल चेरि बड़ि पापिनि ❁ छाड़इ स्वास कारि जनु सांपिनि ॥

रानीने हँसकर कहा कि तेरे बड़े गाल हैं। मेरे मनमें ऐसा प्रतीत होता है कि लक्ष्मणजीने सीख दी है। दासी मंथरा तब भी नहीं बोली। वह बड़ी पापिनी है। वह ऐसी लंबी सांस छोड़ने लगी, मानों काली नागिन हो।

दो०—सभय रानि कह कहसि किन ❁ कुसल रामु महिपालु।
लखनु भरतु रिपुदमनु सुनि ❁ भा कुबरी उर सालु ॥ १४ ॥

रानीने कुछ डरकर कहा कि कहती क्यों नहीं ? श्रीरामचन्द्रजी, राजा दशरथ, लक्ष्मणजी, भरतजी और शत्रुघ्न—सब कुशलसे तो हैं ? यह सुनते ही कुबरी मंथराके हृदयमें छेद हो गया।

कत सिख देइ हमहि कोउ माई ❀ गाल करब केहि कर बलु पाई ॥
रामहि छाड़ि कुसल केहि आजू ❀ जिन्हहि जनेसु देइ जुबराजू ॥

हे माता, मुझे कोई क्या सीख देगा ? किसका बल पाकर गाल बजाऊँगी ? आज श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर और किसकी कुशल है, जिन्हें राजा युवराज-पद दे रहे हैं ?

भयउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन ❀ देखत गरब रहत उर नाहिन ॥
देखहु कस न जाइ सब सोभा ❀ जो अवलोकि मोर मनु छोभा ॥

कौशल्याको ब्रह्मा बड़ा दाहिना हुआ है, जिसे देखकर उनके हृदयमें घमंड ही नहीं समाता। जाकर वह सब शोभा क्यों न देखो, जिसे देखकर मेरा मन क्षुब्ध हुआ है।

पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारे ❀ जानति हहु बस नाहु हमारे ॥
नींद बहुत प्रिय सेज तुराई ❀ लखहु न भूप कपट चतुराई ॥

पुत्र विदेशमें है और तुम्हें कुछ भी सोच नहीं है। जानती हो कि पति राजा दशरथ हमारे वशमें हैं। तुम्हें नींद बहुत है और तोशक-तकियेसे सजी हुई सेज प्यारी है। तुम राजाकी चतुरता और कपट नहीं देखती।

सुनि प्रिय बचन मलिन मनु जानी ❀ झुकी रानि अब रहु अरगानी ॥
पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी ❀ तब धरि जीभ कढ़ावउँ तोरी ॥

मंथराके प्रिय वचन सुनकर और उसका मन मैला जानकर रानी कैकेयीने झुककर कहा कि अब अलग हो और चुप रह ! घर फोड़नेवाली, ऐसी बात यदि फिर कभी कहेगी तो पकड़कर तेरी जीभ कढ़ा लूँगी।

दो०—काने खोरे कूबरे ❀ कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि ❀ भरतमातु मुसुकानि ॥१५॥

काने, लंगड़े और कुबरे, सबको दुष्ट और खोटी चालवाला जानना चाहिये। उसपर तू स्त्री और फिर दासी है, ऐसा कहकर भरतजीकी माता कैकेयी मुस्कुराने लगीं।

प्रियबादिनि सिख दीन्हिउँ तोही ❀ सपनेहु तो पर कोपु न मोही ॥
सुदिनु सुमंगल-दायकु सोई ❀ तोर कहा फुर जेहि दिन होई ॥

हे प्रिय बोलनेवाली, मैंने तुझे सीख दी है। स्वप्नमें भी मुझे तुझपर क्रोध नहीं है। सुन्दर मंगलप्रद शुभ दिन वही होगा जिस दिन तेरा कहना सत्य होगा।

जेठ स्वामि सेवकु लघु भाई ❀ यह दिन-कर-कुल-रीति सुहाई ॥
रामतिलकु जौं साचेउ काली ❀ देउँ मांगु मन भावत आली ॥

बड़ा भाई स्वामी और छोटा सेवक होता है, यह सूर्यवंशकी उत्तम रीति है। श्रीरामचन्द्रजीका राजतिलक यदि सत्य ही कल हो, तो हे सखि, जो तेरे मनको भावे, मांग ले, मैं दूंगी।

कौसल्यासम सब महतारी ❀ रामहिं सहज सुभाय पियारी ॥
मो पर करहिं सनेहु बिसेखी ❀ मैं करि प्रीति परीछा देखी ॥

श्रीरामचंन्द्रजीको सहज स्वभावसे सब माताएँ कौशल्याके समान ही प्यारी हैं। मुझसे वे विशेष प्रेम करते हैं। मैंने उनकी प्रीतिकी परीक्षा कर देखी है।

जौं बिधि जनमु देइ करि छोहू ❀ होहिं रामसिय पूतपतोहू ॥
प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरे ❀ तिन्हके तिलक छोभु कस तोरे ॥

यदि दया करके ब्रह्मा फिर जन्म देवे तो श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी मेरे पुत्र और बहू होवें। मुझे श्रीरामचन्द्रजी प्राणोंसे भी अधिक प्यारे हैं। उनको राजतिलक होनेसे तुझे क्षोभ क्यों हुआ है ?

दो०—भरतसपथ तोहि सत्य कहु ❀ परिहरि कपट दुराउ ।
हरष समय बिसमय करसि ❀ कारन मोहि सुनाउ ॥१६॥

तुझे भरतकी सौगंद है, छल और छिपाव छोड़कर सत्य कह। आनंदके समय शोक करती है, इसका क्या कारण है, मुझे सुना।

एकहि बार आस सब पूजी ❀ अब कछु कहब जीभ करि दूजी ॥
फोरइ जोग कपारु अभागा ❀ भलेउ कहत दुख रउरेहिं लागा ॥

मंथराने कहा कि एक ही वारमें सब आशा पूरी हो गयी। अब दूसरी जीभ लगाकर फिर कुछ कहूंगी। मेरा अभागा कपाल फोड़ने ही योग्य है। भला कहनेपर भी तुमको दुःख हुआ !

कहहिं झूठि फुरि बात बनाई ❀ ते प्रिय तुम्हहिं करुइ मैं माई ॥
हमहुं कहब अब ठकुरसोहाती ❀ नाहिं त मौन रहब दिन राती ॥

जो बातको बनाकर झूठा सच्चा कहते हैं, हे माता, वे तुम्हें प्यारे लगते हैं और मैं कड़वी। मैं भी अब मालिकको सोहानेवाली बात कहा करूंगी, नहीं तो दिनरात चुप ही रहूंगी।

करि कुरूप बिधि परबस कीन्हा ❀ बवा सो लुनिय लहिय जो दीन्हा ॥
कोउ नृप होउ हमहिं का हानी ❀ चेरि छांड़ि अब होब कि रानी ॥

ब्रह्माने मुझे कुरूप बनाकर पराये वशमें किया है। जो बोया है वही काटना है और जो दिया है वही मिलेगा। कोई राजा हो, हमारी क्या हानि है? दासी छोड़कर क्या अब रानी होऊंगी?

जारइ जोगु सुभाउ हमारा ❀ अनभल देखि न जाइ तुम्हारा ॥
ता तें कछुक बात अनुसारी ❀ छमिय देबि बड़ि चूक हमारी ॥

हमारा स्वभाव जलानेके लायक है, इससे तुम्हारा बुरा नहीं देखा जाता। इसीलिये कुछ उचित बातें कहीं। हे देवि! क्षमा करो, हमारी बड़ी भूल हुई।

दो०—गूढ़-कपट-प्रिय-बचन सुनि ❀ तीय अधरबुधिरानि।
सुरमाया बस बैरिनिहि ❀ सुहृद जानि पतियानि ॥१७॥

स्त्रियोंकी बुद्धि होंठोंमें होती है, कहने, सुननेसे बिग जाया करती है, गूढ़, छलसे भरे हुए और प्रिय वचन सुनकर रानीने देवताओंकी मायाके वशमें होनेके कारण अपनी बैरिनको अपना मित्र जानकर विश्वास कर लिया।

सादर पुनि पुनि पूछति ओही ❀ सबरीगान मृगी जनु मोही ॥
तसि मति फिरी अहइ जसि भावी ❀ रहसी चेरि घात जनु फाबी ॥

रानी आदरके साथ बार-बार उसीको पूछती है, मानों किसी भीलनीके गीतसे हिरनी मोहित हो गयी हो। जैसी होनहार है उसीके अनुसार बुद्धि पलट गयी। यह देखकर दासी प्रसन्न हुई, मानों उसकी घात लग गयी है।

तुम्ह पूछहु मैं कहत डेराऊं ❀ धरेउ मोर घरफोरी नाऊं ॥
सजि प्रतीति बहुबिधि गढ़ि छोली ❀ अवध साढ़साती तब बोली ॥

तुम पूछती हो, पर मैं कहते डरती हूं। तुमने मेरा नाम घरफोड़ी रखा है, इस प्रकार बहुत तरहसे छील-छालकर विश्वास उत्पन्न कर, फिर अयोध्याके लिये शनिकी ७॥ वर्षकी दशाके समान मंथरा बोली।

प्रिय सियरामु कहा तुम्ह रानी ❀ रामहिं तुम्ह प्रिय सो फुरि बानी ॥
रहा प्रथम अब ते दिन बीते ❀ समउ फिरे रिपु होहिं पिरीते ॥

हे रानी, तुमने कहा कि मुझे सीता और रामचन्द्रजी प्यारे हैं और श्रीरामचन्द्रजीको तुम प्यारी हो, यह बात सत्य है। परन्तु यह सब पहिले था। वे दिन अब बीत गये। समय पलट जानेपर मित्र भी शत्रु हो जाते हैं।

भानु कमल - कुल - पोषनि - हारा ❀ बिनु जर जारि करइ सोइ छारा ॥
जरि तुम्हारि चह सवति उखारी ❀ रूंधहु करि उपाउ बरबारी ॥

सूर्य कमलोंके समूहका पालनेवाला है, परन्तु जलके बिना वही जलाकर छार कर डालता है। सौत, कौशल्या, तुम्हारी जड़ उखाड़ना चाहती है। उपायरूपी श्रेष्ठ जलसे उसे रोको।

दो०—तुम्हहिं न सोचु सोहागबल ❀ निज बस जानहु राउ।
मन मलीन मुहु मीठ नृपु ❀ राउर सरल सुभाउ ॥१८॥

तुम्हें अपने सुहागके घमण्डमें सोच नहीं है,और जानती हो कि राजा अपने वशमें हैं। तुम्हारा स्वभाव सीधा है। राजा मुंहके मीठे हैं पर मनके मैले हैं।

चतुर गंभीर राममहतारी ❀ बीचु पाइ निजबात सवांरी ॥
पठये भरतु भूप ननिअउरें ❀ राम - मातु - मत जानब रउरें ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी माता चतुर और गंभीर हैं। मौका पाकर उन्होंने अपनी बात संभाल ली है। राजाने भरतको ननिहाल भेज दिया है। तुम जान लो कि यह सब श्रीरामचन्द्रजीकी माताकी सलाहसे हुआ है।

सेवहिं सकल सवति मोहि नीकें ❀ गरबित भरतमातु बल पी कें ॥
सालु तुम्हार कौसिलहि माई ❀ कपट चतुर नहिं होइ जनाई ॥

कौशल्या जानती हैं कि सब सौतें भलीभांति मेरी सेवा करती हैं, परन्तु पतिके बलसे भरतकी माताको घमण्ड है। हे माता, कौशल्याको तुम्हारा ही दुःख है, परन्तु वे कपट करनेमें चतुर हैं, इससे मालूम नहीं होता।

राजहिं तुम्ह पर प्रेमु बिसेखी ❀ सवति सुभाउ सकइ नहिं देखी
रचि प्रपंचु भूपहि अपनाई ❀ राम-तिलक-हित लगन धराई ॥

राजाको तुमपर विशेष प्रेम है। सौत उसे स्वभावसे ही देख नहीं सकती। प्रपंच रचकर राजाको अपना करके कौशल्याने श्रीरामचन्द्रजीके राजतिलकके लिये लग्नको रखाया है।

यह कुल उचित राम कहु टीका ❀ सबहि सोहाइ मोहि सुठि नीका ॥
आगिल बात समुझि डर मोही ❀ देउ दैव फिरि सो फलु ओही ॥

श्रीरामचन्द्रजीको राजतिलक देना—यह कुलकी रीतिके अनुसार उचित ही हुआ है। सभीको यह अच्छा लगता है और मुझे यह और भी अच्छा है। परन्तु आगेकी बात सोचकर मुझे डर लगता है। फिर, दैव जो फल देगा वह भोगना पड़ेगा।

दो०—रचि पचि कोटिक कुटिलपन ❀ कीन्हेसि कपटप्रबोधु।
कहेसि कथा सत सवति कै ❀ जेहि बिधि बाढ़ बिरोधु ॥१९॥

दुष्टतासे भरी हुई करोड़ों बातें बनाकर मंथराने कैकेयीको कपट-ज्ञान सिखलाया। सौतोंकी सैकड़ों बातें सुनायीं, जिनसे विरोध बढ़े।

भावीबस प्रतीति उर आई ❀ पूंछ रानि पुनि सपथ देवाई ॥
का पूछहु तुम्ह अबहु न जाना ❀ निज हित अनहित पसु पहिचाना ॥

होनहारके वशमें होनेसे हृदयमें विश्वास हो गया और फिर रानीने सौगंद दिलाकर पूछा। मंथरा ने कहा कि क्या पूछती हो ? तुमने अभीतक नहीं जाना। अपना भला और बुरा तो पशु भी पहचानते हैं।

भयउ पाखु दिनु सजत समाजू ❀ तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू ॥
खाइय पहिरिय राज तुम्हारे ❀ सत्य कहे नहिं दोषु हमारे ॥

सब समाज सजते एक पखवारा हो गया और तुमने आज मुझसे उसकी खबर पायी है। तुम्हारे राजमें मैं खाती और पहनती हूं, इससे सत्य कहनेमें हमारा दोष नहीं है।

जौं असत्य कछु कहब बनाई ❀ तौ बिधि देइहि हमहिं सजाई ॥
रामहिं तिलक कालि जौं भयऊ ❀ तुम्ह कहुं बिपति बीजु बिधि बयऊ ॥

यदि मैं कुछ बनाकर असत्य कहूं तो ब्रह्मा हमें उसकी सजा देगा। यदि कल श्रीरामचन्द्रजीको राजतिलक हो गया तो ब्रह्माने तुम्हारे लिये विपत्तिका बीज बो दिया।

रेख खंचाइ कहउं बलु भाखी ❀ भामिनि भइहु दूध कइ माखी ॥
जौं सुत सहित करहु सेवकाई ❀ तौ घर रहहु न आन उपाई ॥

मैं लकीर खींचकर बलपूर्वक कहती हूं। हे रानी, तुम तो दूधकी मक्खी हो गयी। यदि पुत्रसमेत सेवा करोगी तो घरमें रह सकोगी, और कोई उपाय नहीं है।

दो०—कद्रू बिनतहि दीन्ह दुख ❀ तुम्हहिं कौसिला देब।
भरतु बंदि गृह सेइहहिं ❀ लषनु रामके नेब ॥ २० ॥

सर्पोंकी माता कद्रू ने पक्षियोंकी माता विनताको दुःख दिया था, तुम्हें कौशल्या देंगी। भरतजी बंदी घरमें रखे जायेंगे और लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीके नायब होंगे।

कैकयसुता सुनत कटुबानी ❀ कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी ॥
तन पसेव कदली जिमि कांपी ❀ कुबरी दसन जीभ तब चाँपी ॥

यह कठोर वाणी सुनकर कैकेयी कुछ कह नहीं सकी। वह डरकर सूख गयी। उसके शरीरमें पसीना आ गया और वह केलेकी भांति कांपने लगी। कैकेयीकी यह दशा देखकर कुबरीने अपनी जीभको दांतोंसे दबाया।

कहि कहि कोटिक कपटकहानी ❀ धीरज धरहु प्रबोधेसि रानी ॥
कीन्हेसि कठिन पढ़ाइ कुपाठू ❀ फिरि न नवइ जिमि उकठ कुकाठू ॥

कपट भरी हुई करोड़ों कहानियां कह-कहकर मंथराने रानीको समझाया कि धीरज धरो। बुरी सीख

देकर मंथराने रानीको बहुत कठोर बना दिया। जैसे गंठीली और टेढ़ी लकड़ी फिर नहीं झुकती, वैसे ही कैकेयी भी नहीं झुकी।

फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली ❀ बकिहि सराहइ मानि मराली॥
सुनु मंथरा बात फुरि तोरी ❀ दहिनि आँखि नित फरकइ मोरी॥

भाग्य पलट गया और कुचाल प्यारी लगी। कैकेयी बगलीके समान मंथराको हंसिनी मानकर प्रशंसा करने लगी। उसने कहा कि हे मंथरा, सुन, तेरी बात सत्य है, मेरी दाहिनी आंख नित्य फड़कती है।

दिन प्रति देखहुँ राति कुसपने ❀ कहउँ न तोहि मोहबस अपने॥
काह करउँ सखि सूधसुभाऊ ❀ दाहिन बाम न जानउँ काऊ॥

प्रतिदिन रातको बुरे स्वप्न देखा करती हूँ। मोहके वशमें होनेके कारण तुझे नहीं सुनाती। क्या करूँ सखी, मेरा स्वभाव सीधा है, शत्रु और मित्र मैं किसीको भी नहीं जानती।

दो०—अपने चलत न आजु लगि ❀ अनभल काहु क कीन्ह।
केहि अघ एकहि बार मोहि ❀ दैव दुसह दुखु दीन्ह॥ २१॥

अपना वश चलते आजतक किसीका बुरा नहीं किया, फिर ब्रह्माने किस पापसे एक साथ ही मुझे कठोर दुःख दिया?

नैहर जनमु भरब बरु जाई ❀ जियत न करब सवति सेवकाई॥
अरिबस दैव जियावत जाही ❀ मरनु नीक तेहि जीव न चाही॥

मैं जीतेजी सौतकी सेवा न करूंगी, चाहे अपने मातापिताके घर जाकर जीवन बिताऊँ। शत्रुके वशमें करके जिसे दैव जीवित रखता है उसका मरना ही अच्छा! उसे जीना नहीं चाहिये।

दीनबचन कह बहु बिधि रानी ❀ सुनि कुबरी तिय माया ठानी॥
अस कस कहहु मानि मन ऊना ❀ सुखु सोहागु तुम्ह कहँ दिन दूना॥

रानी बहुत तरहके दीन वचन कहने लगी, जिन्हें सुनकर कुबरीने स्त्रीचरित्रकी माया फैलायी। मंथराने कहा कि मनको छोटा करके ऐसा क्यों कहती हो? तुम्हारा सुख और सौभाग्य दिन दूना बढ़े।

जेहि राउर अतिअनभल ताका ❀ सोइ पाइहि यहु फलु परिपाका॥
जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि ❀ भूख न बासर नींद न जामिनि॥

जिसने तुम्हारा बहुत बुरा करना सोचा है उसीको इसका पूरा फल मिलेगा। हे रानी, जबसे मैंने यह खोटी सलाह सुनी है तबसे न दिनको भूख लगती है और न रातको नींद आती है।

पूछेउँ गुनिन्ह रेख तिन्ह खांची ❁ भरत भुआल होहिं यहु सांची ॥
भामिनि करहु त कहउँ उपाऊ ❁ हैं तुम्हरी सेवाबस राऊ ॥

मैंने गुणियोंसे पूछा, उन्होंने रेखा खींचकर कहा है कि भरतजी राजा होंगे, यह सत्य है। हे रानी, यदि करो तो उपाय बतलाऊँ। राजा दशरथ तुम्हारी सेवाके वशमें हैं।

दो०—परउँ कूप तव बचन पर ❁ सकउँ पूत पति त्यागि।
कहसि मोर दुख देखि बड़ ❁ कस न करब हित लागि ॥२२॥

कैकेयीने कहा कि तेरे कहनेपर मैं कुएंमें भी गिर सकती हूं, पुत्र और पतिको भी मैं त्याग सकती हूं। तू मेरा भारी दुःख देखकर कहती है। मैं अपने भलेके लिये उसे क्यों न करूंगी?

कुबरी करि कबूलि कैकेई ❁ कपटछुरी उरपाहन टेई ॥
लखइ न रानि निकट दुखु कैसे ❁ चरइ हरित त्रिन बलिपसु जैसे ॥

कुबरी मंथराने कैकेयीको राजी करके अपनी कपटरूपी छुरीको उसके हृदयरूपी पत्थरपर रगड़कर तेज कर लिया। रानी अपने पासका दुःख भी वैसे ही नहीं देखती जैसे बलि किया जानेवाला पशु हरे तिनके खाता है।

सुनत बात मृदु अंत कठोरी ❁ देति मनहुँ मधु माहुर घोरी ॥
कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाहीं ❁ स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाहीं ॥

मंथराकी बात सुननेमें मीठी है, पर उसका परिणाम कठोर है, मानों वह विष मिलाकर शहद दे रही हो। दासी मंथरा कहने लगी कि हे रानी, तुमको वह कथा याद है कि नहीं जिसे तुमने मुझसे कहा था?

दुइ बरदान भूप सन थाती ❁ मांगहु आजु जुड़ावहु छाती ॥
सुतहि राजु रामहि बनबासू ❁ देहु लेहु सब सवतिहुलासू ॥

राजाके पास दो वरदानोंकी धरोहर रखी हुई है। आज मांगकर छाती ठंडी कर लो। पुत्र-भरतको राज और श्रीरामचन्द्रजीको वनवास दो और सौतका सब आनन्द छीन लो।

भूपति रामसपथ जब करई ❁ तब मांगेहु जेहि बचन न टरई ॥
होइ अकाजु आजु निसि बीते ❁ बचनु मोर फुर मानहु जी ते ॥

राजा जब श्रीरामचन्द्रजीकी सौगन्द खा जावें तब मांगना, जिसमें वे अपने वचनसे न टलें। आजकी रात बीत जानेपर काम बिगड़ जायगा। मेरी इस बातको प्राणसे भी प्यारी मानो।

दो०—बड़ कुघातु करि पातकिनि ❁ कहेसि कोपगृह जाहु।
काज सवांरेहु सजग सब ❁ सहसा जनि पतियाहु ॥२३॥

पापिनीने बड़ा बुरा आघात कर कहा कि कोपभवनमें जाओ। सावधान रहकर सब काम बनाना और सहसा विश्वास मत कर लेना।

कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी ❀ बार बार बड़ि बुद्धि बखानी॥
तोहि सम हितु न मोर संसारा ❀ बहे जात कइ भइसि अधारा॥

रानीने कुबरीको प्राणोंके समान प्यारी समझा और उसकी बड़ी बुद्धिकी बार-बार प्रशंसा की। रानीने कहा कि तेरे समान मेरा हितकारी संसारमें दूसरा नहीं। तू बहकर जाते हुएका आधार हो गयी है।

जौं बिधि पुरब मनोरथ काली ❀ करउँ तोहि चषपूतरि आली॥
बहुबिधि चेरिहि आदरु देई ❀ कोपभवन गवनी कैकेई॥

यदि ब्रह्माने कल मेरा मनोरथ पूरा कर दिया तो हे सखि, मैं तुझे आंखकी पुतली बना लूंगी। बहुत प्रकारसे दासीका आदर करके कैकेयी कोपभवनको चली गयी।

बिपति बीजु बरसारितु चेरी ❀ भुइँ भइ कुमति कैकई केरी॥
पाइ कपटजलु अंकुर जामा ❀ बर दोउ दल दुखफल परिनामा॥

विपत्तिरूपी बीजके लिये कैकेयीकी दुष्ट बुद्धिरूपी जमीन तैयार हो गयी, जिसमें मंथरारूपी वर्षाऋतुका कपटरूपी जल पाकर अङ्कुर उगा, जिसके पत्ते दोनों वरदान और जिसका फल अंतमें मिलनेवाला दुःख है।

कोप समाजु साजि सब सोई ❀ राजु करत निज कुमति बिगोई॥
राउर नगर कोलाहलु होई ❀ यह कुचालि कछु जान न कोई॥

कैकेयी क्रोधका सब सामान सजाकर सो गयी। अपनी दुष्ट बुद्धिसे उसने राज करते अपना नाश कर लिया। राजाके नगरमें कोलाहल हो रहा था, परन्तु इस कुचालको कोई कुछ न जानता था।

दो०—प्रमुदित पुर नरनारि सब ❀ सजहिं सुमंगल चार।
एक प्रबिसहिं एक निर्गमहिं ❀ भीर भूपदरबार॥२४॥

नगरके स्त्री और पुरुष—सब प्रसन्न हो रहे हैं। शुभ मंगलाचारके साज सज रहे हैं। राजाके दरबारमें भारी भीड़ लगी हुई है। एक आदमी आता और एक जाता है।

बालसखा सुनि हिय हरषाहीं ❀ मिलि दस पांच राम पहिं जाहीं॥
प्रभु आदरहिं प्रेमु पहिचानी ❀ पूछहिं कुसल खेम मृदुबानी॥

श्रीरामचन्द्रजीके बचपनके मित्र सुनकर हृदयमें प्रसन्न हो रहे हैं और दस दस, पाँच पांच इकट्ठे होकर श्रीरामचन्द्रजीके पास जाते हैं। प्रेमको पहिचानकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी उनका आदर करते और मीठी वाणीसे कुशल क्षेम पूछते हैं।

फिरहिं भवन प्रियआयसु पाई ❀ करत परसपर रामबड़ाई ॥
को रघुबीरसरिस संसारा ❀ सील सनेहु निबाहनिहारा ॥

वे प्यारी आज्ञा पाकर घर लौटते और परस्पर श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई करते जाते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीके समान शील और स्नेहको निबाहनेवाला संसारमें और कौन है ?

जेहि जेहि जोनि करमबस भ्रमहीं ❀ तहँ तहँ ईसु देउ यह हमहीं ॥
सेवक हम स्वामी सियनाहू ❀ होउ नात यह ओर निबाहू ॥

हे ईश्वर, कर्मके वश होकर जिस जिस योनिमें हमें जन्म लेना पड़े उसमें वहां वहां हमें यह देना कि हम सेवक हों और सीतापति श्रीरामचन्द्रजी स्वामी और यह सम्बन्ध अन्ततक निभ जावे।

अस अभिलाषु हृदय सब काहू ❀ कैकयसुता हृदय अतिदाहू ॥
को न कुसंगति पाइ नसाई ❀ रहइ न नीचमते चतुराई ॥

सबके हृदयमें ऐसी अभिलाषा हो रही है परन्तु कैकयीके हृदयमें बड़ी जलन है। बुरा साथ पाकर कौन नहीं नष्ट होता ? नीचकी सलाहसे चतुराई नहीं रहती।

(कैकेयीकी कुचाल)

दो०—सांझ समय सानंद नृप ❀ गयउ कैकई गेह।
गवनु निठुरतानिकट किय ❀ जनु धरि देह सनेह ॥२५॥

संध्यासमय राजा दशरथ आनदपूर्वक कैकेयीके महलमें गये मानों प्रेमने देह रखकर निष्ठुरताके समीप गमन किया हो।

कोपभवन सुनि सकुचेउ राऊ ❀ भयबस अगहुड़ परइ न पाऊ ॥
सुरपति बसइ बाहुबल जाके ❀ नरपति सकल रहहिं रुख ताके ॥

कैकेयीका कोप भवनमें होना सुनकर राजा सहमगये। डरके कारण उनका पैर आगे न पड़ने लगा। जिसके बाहुबलसे देवताओंके स्वामी इन्द्र बसते हैं और सब राजा जिसका रुख ताकते रहते हैं।

सो सुनि तियरिसि गयउ सुखाई ❀ देखहु कामप्रताप बड़ाई ॥
सूल कुलिस असि अंगवनिहारे ❀ ते रतिनाथ सुमनसर मारे ॥

वह स्त्रीका क्रोधित होना सुनकर सख गया, यह कामदेवका प्रताप और बड़ाई देखिये। जो त्रिशूल, वज्र और तलवारके वारको अपने अंगपर ओढ़नेवाले, सह लेनेवाले हैं उन्हें भी रतिनाथ कामदेवने फूलोंके बाणसे मार दिया।

सभय नरेसु प्रिया पहिं गयऊ ❀ देखि दसा दुख दारुन भयऊ ॥
भूमिसयन पट मोट पुराना ❀ दिये डारि तन भूषन नाना ॥

राजा दशरथ डरते डरते प्यारी कैकेयीके पास गये । वहां जानेपर उसकी दशा देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। कैकेयी पृथिवीपर पड़ी हुई है, मोटा और पुराना कपड़ा पहन रखा है और शरीरके अनेक प्रकारके भूषण उतारकर फेंक दिये हैं।

कुमतिहि कसि कुबेसता फाबी ❀ अन-अहिवातु-सूच जनु भावी ॥
जाइ निकट नृप कह मृदुबानी ❀ प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी ॥

यह बुरा भेष दुष्ट बुद्धिवाली कैकेयीको ऐसा फब गया मानों होनहारने विधवापनकी सूचना दी हो। पास जाकर राजाने मीठी वाणीसे कहा कि हे प्राणप्यारी, तुम क्यों क्रोधित हुई हो ?

छं०—केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि निवारई ।
मानहु सरोष भुअंगभामिनि विषम भांति निहारई ॥
दोउ बासना रसना दसन बर मरमु ठाहरु देखई ।
तुलसी नृपतिभवितव्यता बस काम कौतुक लेखई ।

हे रानी, तुम किसलिये क्रोधित हुई हो—यह कहकर राजा हाथसे छूते हैं और कैकेयी अपने पतिके उस हाथको हटा देती है और ऐसी टेढ़ी निगाहसे देखती है मानों क्रोधमें भरी हुई नागिन हो, जिसकी दो वासनाएं जीभ और जिसके दोनों वरदान दांतके समान हैं और जो काटनेके लिये मर्मस्थान देख रही हो। तुलसीदासजी कहते हैं कि राजा होनहारके वशमें हो रहे हैं और कामदेव अपना कौतुक दिखला रहा है।

सो०—बार बार कह राउ ❀ सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि ।
कारन मोहि सुनाउ ❀ गजगामिनि निज कोप कर ॥२६॥

राजा बार बार कहने लगे कि हे सुन्दर मुख और नेत्रोंवाली, कोयल जैसे वचन बोलनेवाली और हे हाथी जैसी मंद गतिसे चलनेवाली, अपने क्रोधका कारण तो मुझे बतलाओ !

अनहित तोर प्रिया केहि कीन्हा ❀ केहि दुइ सिर केहि जम चह लीन्हा ॥
कहु केहि रंकहि करउं नरेसू ❀ कहु केहि नृपहि निकासउं देसू ॥

हे प्रिये, तेरा बुरा किसने किया ? दो शिर किसके हैं और यमराज किसे लेना चाहते हैं ? कहो, किस कंगालको राजा बनाऊँ और किस राजाको देशनिकाला दूँ ?

सकउं तोर अरि अमरउ मारी ❀ काह कीट बपुरे नरनारी ॥
जानसि मोर सुभाउ बरोरू ❀ मन तव आनन चंद चकोरू ॥

तेरा शत्रु अमर हो,तो भी उसे मार सकता हूं,फिर कीड़ोंके समान बेचारे साधारण स्त्री और पुरुष क्या हैं ? हे सुन्दर जंघोंवाली, तू मेरा स्वभाव जानती है कि मेरा मन तेरे मुखरूपी चन्द्रमाके लिये चकोरके समान है ।

प्रिया प्रान सुत सरबसु मोरे ❀ परिजन प्रजा सकल बस तोरे ॥
जौं कछु कहउ कपट करि तोही ❀ भामिनि राम - सपथ-सत मोही ॥

हे प्यारी, मेरे प्राण, पुत्र और सर्वस्व तथा प्रजा और कुटुम्बी, सब तेरे वशमें हैं । यदि तुमसे कपट करके मैं कुछ कहता होऊँ तो हे रानी, मुझे श्रीरामचन्द्रजीकी सौ सौगंद है ।

बिहँसि मांगु मनभावति बाता ❀ भूषनु सजहि मनोहर गाता ॥
घरी कुघरी समुझि जिय देखू ❀ बेगि प्रिया परिहरहि कुबेखू ॥

जो बात तेरे मनको भाती हो वह हँसकर मांग और मनको हरण करनेवाले अपने शरीरमें गहनोंको सजा । समय और कुसमयको अपने हृदयमें समझ देखो और हे प्यारी, यह बुरा भेष जल्दी दूर करो ।

दो०—यह सुनि मन गुनि सपथ बड़ि ❀ बिहँसि उठी मतिमंद ।
भूषन सजति बिलोकि मृगु ❀ मनहुं किरातिनि फंद ॥ २७ ॥

यह सुनकर मनमें श्रीरामचन्द्रजीकी सौगंदको बड़ा समझकर मंद बुद्धिवाली कैकेयी मुस्कुराने लगी और गहने सजाने लग गयी मानों हिरनको देखकर भीलनी फंदा सँभाल रही है ।

पुनि कह राउ सुहृद जिय जानी ❀ प्रेम पुलकि मृदु मंजुल बानी ॥
भामिनि भयउ तोर मनभावा ❀ घरघर नगरु अनंदबधावा ॥

हृदयमें उसे अपना मित्र जानकर फिर राजा प्रेमसे पुलकायमान होकर सुन्दर मीठी वाणीसे कहने लगे कि हे रानी, तेरी मनचाही हो गयी । नगरमें घर घर आनंद बधाइयां हो रही हैं ।

रामहिं देउं कालि जुबराजू ❀ सजहि सुलोचनि मंगलसाजू ॥
दलकि उठेउ सुनि हृदय कठोरू ❀ जनु छुइ गयउ पाक बरतोरू ॥

कल मैं श्रीरामचन्द्रजीको युवराज पद दूंगा । हे सुन्दर नेत्रोंवाली, मंगल साज सजो । यह सुनकर कैकेयीका कठोर हृदय तमक उठा मानों पका हुआ बलतोड़ छू गया हो ।

ऐसेउ पीर बिहँसि तेइ गोई ❀ चोरनारि जिमि प्रगटि न रोई ॥
लखी न भूप कपट चतुराई ❀ कोटि-कुटिल-मनि गुरू पढ़ाई ॥

ऐसी पीड़ा भी कैकेयीने हँसकर छिपा ली जैसे चोरकी स्त्री सबके सामने नहीं रोती । राजाने इस कपट भरी हुई चतुराईको नहीं देखा क्योंकि उसे करोड़ों दुष्टोंके शिरोमणि गुरु मंथराने पढ़ाया था ।

जद्यपि नीतिनिपुन नरनाहू ⊛ नारिचरित जलनिधि अवगाहू ॥
कपटसनेह बढ़ाइ बहोरी ⊛ बोली बिहँसि नयन मुँह मोरी ॥

यद्यपि राजा दशरथ नीतिमें निपुण थे तथापि स्त्रीचरित्रका समुद्र अथाह है। फिर कैकेयी कपटसे स्नेह बढ़ाकर नेत्र और मुख मटकाकर हँसकर बोली।

दो०—मांगु मांगु पै कहहु पिय ⊛ कबहुं न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ ⊛ तेउ पावत संदेहु ॥ २८ ॥

हे प्यारे, मांगो मांगो तो कहते हो पर कभी न देते हो और न लेते हो। दो वरदान देने कहे थे उनके भी पानेमें संदेह है।

जानेउं मरमु राउ हंसि कहई ⊛ तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई ॥
थाती राखि न मांगेहु काऊ ⊛ बिसरि गयउ मोहि भोर सुभाऊ ॥

राजा हँसकर कहने लगे कि मैंने मर्म जान लिया। तुम्हें क्रोधित होना बहुत प्यारा है। तुमने वरदानोंकी धरोहर रखकर उन्हें कभी नहीं मांगा और अपने भोले स्वभावके कारण मुझे उनकी याद ही भूल गयी।

झूठेहु हमहिं दोष जनि देहू ⊛ दुइकै चारि मांगि किन लेहू ॥
रघु-कुल-रीति सदा चलि आई ⊛ प्रान जाहु बरु बचनु न जाई ॥

झूठा ही हमें दोष मत दो; दोके बदलेमें चार वरदान क्यों नहीं मांग लेती ? रघुवंशमें सदासे ही यह रीति चली आ रही है कि चाहे प्राण चले जावें पर वचन नहीं जाय।

नहिं असत्यसम पातकपुंजा ⊛ गिरिसम होहिं कि कोटिक गुंजा ॥
सत्यमूल सब सुकृत सुहाये ⊛ वेद पुरान बिदित मुनि गाये ॥

झूठके समान पापका समूह नहीं है। करोड़ों घुंघची क्या एक पहाड़के समान हो सकती हैं ? वेदों और पुराणोंसे विदित है और मुनियोंने बतलाया है कि सब सुन्दर सत्कर्मोंका मूल सत्य ही है।

तेहि पर राम सपथ करि आई ⊛ सुकृत-सनेह-अवधि रघुराई ॥
बात दृढ़ाइ कुमति हंसि बोली ⊛ कुमत-कुबिहंग-कुलहजनु खोली ॥

उसपर मैं श्रीरामचन्द्रजीकी सौगंध खा चुका हूं। श्रीरामचन्द्रजी मेरे पुण्यों और प्रेमकी सीमा हैं। बातको पक्की करके वह दुष्ट बुद्धिवाली कैकेयी हंसकर बोली मानों दुर्बुद्धरूपी अशुभ पक्षीने अपने डैनोंको फैलाया हो।

दो०—भूप मनोरथ सुभग बन ⊛ सुख सु-बिहंग-समाजु।
भिल्लिनि जिमि छाड़न चहति ⊛ बचन भयंकर बाजु ॥ २९ ॥

राजाका मनोरथ सुन्दर वन है और उनका सुख ही सुन्दर पक्षियोंका समूह है। कैकेयी भीलनीके समान अपने भयंकर वचनोंका बाज छोड़ना ही चाहती है।

सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का ❁ देहु एक बर भरतहि टीका ॥
मागउँ दूसर बर कर जोरी ❁ पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी ॥

हे प्राणप्रिय, जो मेरे मनको अच्छा लगता है उसे सुनो। एक वर तो यह दो कि भरतको राजतिलक हो। हाथ जोड़कर दूसरा वर मांगती हूं। हे नाथ, मेरा मनोरथ पूरा करो।

तापसबेष बिसेषि उदासी ❁ चौदह बरिस राम बनबासी ॥
सुनि मृदुबचन भूपहिय सोकू ❁ ससिकर छुअत बिकल जिमि कोकू ॥

तपस्वीका भेष रखकर राज विलासादिसे विशेष उदासीन होकर श्रीरामचन्द्रजी १४ वर्षतक बनवासी रहें। यह कोमल वचन सुनकर राजाके हृदयको वड़ा शोक हुआ जैसे चन्द्रमाकी किरण छूते ही चकवा व्याकुल हो जाता है।

गयउ सहमि नहिं कछु कहि आवा ❁ जनु सचान बन झपटेउ लावा ॥
बिबरन भयउ निपट नरपालू ❁ दामिनि हनेउ मनहुँ तरु तालू ॥

राजा सहम गये, उनसे कुछ कहते नहीं बना, मानों बटेरके वनमें बाज झपटा हो। राजाका रंग बिलकुल उतर गया, मानों ताड़के वृक्षपर बिजली गिर पड़ी हो।

माथे हाथ मूंदि दोउ लोचन ❁ तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन ॥
मोर मनोरथ सुर-तरु-फूला ❁ फरत करिनि जिमि हतेउ समूला ॥
अवध उजारि कीन्हि कैकेई ❁ दीन्हेसि अचल बिपति कै नेई ॥

मस्तकपर हाथ रखकर राजाने दोनों नेत्र बंद कर लिये मानों सोच शरीर धारण कर सोच रहा हो। वे सोचने लगे कि मेरे मनोरथरूपी फूले हुए कल्पवृक्षके फलते ही मानों कैकेयीरूपी हथिनीने उसे समूल नष्ट कर डाला हो। कैकेयीने अयोध्याको उजाड़ दिया। उसने अटल विपत्तिकी नींव दे दी।

दो०—कवने अवसर का भयउ ❁ गयउ नारिबिस्वास।
जोग-सिद्धि-फल-समयजिमि ❁ जतिहि अबिद्यानास ॥ ३० ॥

किस समय क्या हो गया? स्त्रीका विश्वास उठ गया, जैसे योगकी सिद्धिका फल प्राप्त होनेके समय यतीकी अविद्या नष्ट हो जाती है।

एहि बिधि राउ मनहिं मन झांखा ❁ देखि कुभांति कुमति मनु मांखा ॥
भरत कि राउर पूत न होहीं ❁ आनेहु मोल बेसाहि कि मोहीं ॥

इस प्रकार राजा मन ही मन झींख रहे थे तब कुभांति देखकर दुष्टबुद्धि (कैकेयी) कहने लगी मानों वह क्रोधित मूर्ति हो। भरत क्या आपके पुत्र नहीं होते? क्या मुझे मोल खरीद कर लाये हो?

जो सुनि सरु अस लागु तुम्हारे ❀ काहे न बोलेहु बचनु संभारे॥
देहु उतर अरु कहहु कि नाहीं ❀ सत्यसंध तुम्ह रघुकुल माहीं॥

जो मेरे वचन सुनते ही तुम्हारे बाण जैसे लगे! बातको संभालकर क्यों नहीं निकालते? उत्तर दो या इनकार कर दो। रघुवंशमें तुम सत्य प्रतिज्ञावाले हो।

देन कहेहु अब निज बरुदेहू ❀ तजहु सत्य जग अपजस लेहू॥
सत्य सराहि कहेउ बरु देना ❀ जानेहु लेइहि मांगि चबेना॥

वरदान देने कहे थे, अब चाहे मत दो और सत्यको छोड़कर संसारमें अपयश लो। सत्यकी प्रशंसा करके वरदान देनेको कहा था। जाना होगा कि यह चबेना मांग लेगी!

सिवि दधीचि बलि जो कछु भाषा ❀ तनुधनु तजेउ बचनुपनु राखा॥
अति-कटु-बचन कहति कैकेई ❀ मानहुं लोन जरे पर देई॥

शिवि, दधीचि और बलिने जो कुछ भी कहा हो, परन्तु उन्होंने अपना शरीर और धन छोड़ दिया किन्तु अपनी बात और प्रतिज्ञाको रखा। कैकेयी अत्यन्त कड़वे वचन कहने लगी मानों जलेपर नमक छिड़कती हो।

दो०—धरम-धुरं-धर धीर धरि ❀ नयन उघारे राय।
सिर धुनि लीन्हि उसास असि ❀ मारेसि मोहि कुठाय॥३१॥

धर्मधुरंधर राजाने धीरज रखकर नेत्र खोले। उन्होंने अपना शिर धुनकर एक लंबी सांस ली और कहा कि बड़े कुठांवमें मुझे तलवारसे मारा।

आगे दीखि जरति रिसि भारी ❀ मनहुं रोष तरवारि उघारी॥
मूठि कुबुद्धि धार निठुराई ❀ धरी कूबरी सान बनाई॥

राजाने सामने देखा कि कैकेयी भारी क्रोधसे जल रही है, मानों उसने अपनी क्रोधरूपी तलवारको म्यानसे बाहर निकाल लिया हो। कैकेयीकी दुर्बुद्धि ही उसकी मूंठ है, निष्ठुरता ही धार है जिसपर कुबरीरूपी सान खूब अच्छी तरह रखी है।

लखीं महीप कराल कठोरा ❀ सत्य कि जीवनु लेइहि मोरा॥
बोलेउ राउ कठिन करि छाती ❀ बानी सबिनय तासु सोहाती॥

राजाने उसे बड़ी ही डरावनी और कठोर देखा और सोचा कि यह क्या सचमुच ही मेरा जीवन ले लेगी? अपना हृदय कड़ा करके राजा विनयपूर्वक उसे भले लगनेवाले वचन बोले।

प्रिया वचन कस कहसि कुभाँती ❀ भीरु प्रतीति प्रीति करि हाँती ॥
मोरें भरत राम दुइ आंखी ❀ सत्य कहउँ करि संकर साखी ॥

हे प्यारी, डर, भरोसा और प्रेम नष्ट करके ऐसी बुरी तरह वचन कैसे कहती हो ? मैं शिवजीको साक्षी कर सत्य कहता हूँ कि भरत और रामचन्द्र मेरे दोनों नेत्र हैं।

अवसि दूत मैं पठउब प्राता ❀ ऐहहिं वेगि सुनत दोउ भ्राता ॥
सुदिन सोधि सब साजु सजाई ❀ देउँ भरत कहँ राजु बजाई ॥

मैं सबेरे अवश्य ही दूत भेजूँगा और दोनों भाई सुनते ही शीघ्र आ जायेंगे। फिर शुभ दिन विचारकर और सब साज सजाकर मैं बड़ी धूमधामसे भरतको राज्य दे दूँगा।

दो०—लोभु न रामहिं राजु कर ❀ बहुत भरत पर प्रीति।
मैं बड़ छोट विचारि जिय ❀ करत रहेउँ नृपनीति ॥३१॥

श्रीरामचन्द्रजीको राज्यका लोभ नहीं है और उन्हें भरतजीपर बड़ा प्रेम भी है। मैं हृदयमें बड़े और छोटेका विचार कर राजनीतिके अनुसार कार्य करता था।

राम-सपथ सत कहउँ सुभाऊ ❀ राममातु कछु कहेउ न काऊ ॥
मैं सब कीन्ह तोहि बिनु पूछे ❀ तेहि तें परेउ मनोरथ छूछे ॥

मुझे श्रीरामचन्द्रजीकी सौ सौगन्द है। मैं स्वभावसे ही कहता हूं कि श्रीरामचन्द्रजीकी माताने कभी कुछ भी नहीं कहा। मैंने तुझे पूछे बिना ही सब कुछ किया इसीसे मनोरथ निष्फल हुआ।

रिस परिहरु अब मंगल साजू ❀ कछु दिन गये भरत जुवराजू ॥
एकहि बात मोहि दुख लागा ❀ बर दूसर असमंजस मांगा ॥

क्रोध छोड़ दो और अब मंगल सजो। कुछ दिनके बाद भरतजीको ही युवराज पद दिया जायगा। परन्तु एक ही बातका मुझे दुःख हो रहा है कि तुमने दूसरा वर ठीक नहीं माँगा।

अजहूं हृदय जरत तेहि आँचा ❀ रिस परिहास कि सांचेहु सांचा ॥
कहु तजि रोषु रामअपराधू ❀ सब कोउ कहइ रामु सुठि साधू ॥

उसकी आंचसे मेरा हृदय अब भी जल रहा है। वह क्या क्रोध है कि हँसी है या सचमुच ही ठीक है ? क्रोध दूर कर श्रीरामचन्द्रजीका अपराध बतलाओ। सब कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजी अच्छे साधु हैं।

तुहूँ सराहसि करसि सनेहू ❀ अब सुनि मोहि भयउ संदेहू ॥
जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला ❀ सो किमि करिहि मातुप्रतिकूला ॥

तू भी उनकी प्रशंसा और प्रेम करती है परन्तु अब सुनकर मुझे संदेह हुआ है। जिसका स्वभाव शत्रुके लिये भी अनुकूल हो वह माताके प्रतिकूल कोई काम कैसे कर सकता है?

दो०—प्रिया हास रिस परिहरहि ❀ मांगु बिचारि बिबेकु।
जेहि देखउं अब नयन भरि ❀ भरत राजु अभिषेकु ॥३३॥

हे प्यारी, हंसी और क्रोधको छोड़ दो और विचारकर बुद्धिमानीके साथ वर मांगो जिससे अब मैं भरतजीका राजतिलक नेत्र भरकर देखूं।

जिअइ मीन बरु बारिबिहीना ❀ मनि बिनु फनिक जिअइ दुखदीना ॥
कहउं सुभाउ न छल मन माहीं ❀ जीवन मोर राम बिनु नाहीं ॥

चाहे जल बिना मछली जीती रहे, मणिको खोकर चाहे सांप दुःखी और दीन होकर जीता रहे; परन्तु मैं स्वभावसे ही कहता हूं, मेरे मनमें छल नहीं है, कि श्रीरामचन्द्रजीके बिना मेरा जीना नहीं हो सकता।

समुझि देखु जिय प्रिया प्रबीना ❀ जीवन राम-दरस-आधीना ॥
सुनि मृदुबचन कुमति अति जरई ❀ मनहुं अनल आहुति घृत परई ॥

हे प्यारी, तू स्वयं चतुर है, हृदयमें समझ देख, मेरा जीना श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनोंके अधीन है। कोमल वचन सुनकर वह दुष्ट बुद्धिवाली कैकेयी और भी अधिक जलने लगी, मानों आगमें घीकी आहुति पड़ रही हो।

कहइ करहु किन कोटि उपाया ❀ इहाँ न लागिहि राउरि माया ॥
देहु कि लेहु अजस करि नाहीं ❀ मोहि न बहुत प्रपंच सोहाहीं ॥

कैकेयी कहने लगी--तुम करोड़ उपाय क्यों न करो, तुम्हारी माया यहां नहीं लग सकती। वरदान दो या इनकार करके अपयश लो। मुझे बहुत प्रपंच नहीं अच्छे लगते।

राम साधु तुम्ह साधु सयाने ❀ राममातु भलि सब पहिचाने ॥
जस कौसिला मोर भल ताका ❀ तस फल उन्हहिं देउं करि साका ॥

श्रीरामचन्द्रजी साधु हैं, तुम चतुर साधु हो और श्रीरामचन्द्रजीकी माता भी भली हैं। मैंने सबको पहिचान लिया है। कौशल्याने जैसा मेरा भला सोचा है वैसा फल मैं उन्हें साका करके दूंगी।

दो०—होत प्रात मुनिबेष धरि ❀ जौं न रामु बनु जाहिं।
मोर मरनु राउर अजसु ❀ नृप समुझिय मनु माहिं ॥३४॥

सवेरा होते ही मुनिका भेष धारण कर यदि श्रीरामचन्द्रजी वनको नहीं जायेंगे तो हे राजा, मेरा मरण और अपना अपयश मनमें समझ लीजिये।

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी ❀ मानहु रोष तरंगिनि बाढ़ी ॥
पाप पहार प्रगट भइ सोई ❀ भरी क्रोध जल जाइ न जोई ॥

ऐसा कहकर वह दुष्ट कैकेयी उठकर खड़ी हो गयी। मानों क्रोधकी नदीमें बाढ़ आ गयी हो। यह नदी पापरूपी पहाड़से प्रगट हुई है और क्रोधरूपी जलसे भरी हुई है जिसे देखा नहीं जाता।

दोउ वर कूल कठिनहठ धारा ❀ भवँर कूबरी-बचन-प्रचारा ॥
ढाहत भूपरूप तरुमूला ❀ चली विपतिबारिधि अनुकूला ॥

दोनों वरदान ही दोनों किनारे और कठोर हठ ही भयंकर धारा है जिसमें कुबरी मंथराके वचनोंका प्रचार ही भंवर है। यह नदी राजारूपी वृक्षको समूल नष्ट करती हुई विपत्तिरूपी समुद्रकी ओर चली जाती है।

लखी नरेस बात सब साँची ❀ तियामिसु मीचु सीस पर नाँची ॥
गहि पद बिनय कीन्हि बैठारी ❀ जनि दिन-कर-कुल होसि कुठारी ॥

राजाने देखा कि सब बात सत्य है और स्त्रीके बहानेसे मृत्यु शिरपर नाच रही है। उन्होंने कैकेयीके चरण पकड़, बैठालकर विनंती की और कहा कि सूर्यवंशको काटनेके लिये कुल्हाड़ी मत बन।

माँगु माथ अबहीं देउँ तोही ❀ रामबिरहँ जनि मारसि मोही ॥
राखु राम कहुँ जेहि तेहि भांती ❀ नाहिं त जरिहि जनम भरि छाती ॥

मेरा शिर मांग, मैं तुझे अभी दूंगा, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें मुझे मत मार। जिस तरह हो श्रीरामचन्द्रजीको रख, नहीं तो जन्मभर छाती जलेगी।

दो०—देखि ब्याधि असाधि नृपु ❀ परेउ धरनि धुनि माथ।
कहत परम आरतबचन ❀ राम राम रघुनाथ ॥३५॥

राजाने व्याधिको असाध्य देखा वे माथा ठोककर पृथ्वीपर गिर पड़े। वे अत्यंत दीन वचनसे राम राम और रघुनाथ पुकार उठे।

ब्याकुल राउ सिथिल सब गाता ❀ करिनि कलपतरु मनहुँ निपाता ॥
कंठ सूख मुख आव न बानी ❀ जनु पाठीन दीन बिनु पानी ॥

राजा व्याकुल हुए जिससे उनका सारा शरीर शिथिल हो गया, मानों हथिनीने कल्पतरुको नष्ट कर दिया हो। कंठ सूख गया और मुंहसे वाणी नहीं निकली, मानों पानी बिना मछली दुखी हो।

पुनि कह कटु कठोरु कैकेई ❀ मनहुं घाय महुं माहुरु देई ॥
जौं अंतहु अस करतबु रहेऊ ❀ मांगु मांगु तुम्ह केहि बलु कहेऊ ॥

फिर कड़वे और कठोर वचनसे कैकेयी कहने लगी मानों घावमें जहर भर रही हो। यदि अन्तमें यही करना था तो मांगो मांगो, ऐसा तुमने किस बलपर कहा था?

दुइ कि होइ एक समय भुआला ❀ हंसब ठठाइ फुलाउब गाला ॥
दानि कहाउब अरु कृपनाई ❀ होइ कि खेम कुसल रउताई ॥

हे राजा, ठट्ठा मारकर हंसना और गालोंका फुलाना, ये दोनों काम क्या एक ही समयमें हो सकते हैं? दानी भी कहलाना चाहते हो और कंजूसी भी करते हो? सरदारी रखकर भी क्या कुशल क्षेम होती है?

छाड़हु बचन कि धीरज धरहू ❀ जनि अबला जिमि करुना करहू ॥
तनु तिय तनय धाम धनु धरनी ❀ सत्यसंध कहं तृनसम बरनी ॥

वचन छोड़ दो या धीरज रखो। स्त्रियोंके समान विलाप मत करो। सत्य प्रतिज्ञावालेके लिये यह कहा गया है कि शरीर, स्त्री, पुत्र, महल, धन और पृथिवी, सब तिनकेके समान हैं।

दो०—मरमबचन सुनि राउ कह ❀ कहु कछु दोषु न तोर।
लागेउ तोहि पिसाच जिमि ❀ कालु कहावत मोर ॥३६॥

ऐसी चुभनेवाली बाते सुनकर राजा कहने लगे कि तू कह। इसमें तेरा कुछ भी दोष नहीं है। पिशाचके समान तुझे लगा हुआ मेरा काल यह सब कहलाता है।

चहत न भरतु भूपतहि भोरे ❀ बिधिबस कुमति बसी जिय तोरे ॥
सो सबु मोर पाप परिनामू ❀ भयउ कुठाहर जेहि बिधि बामू ॥

भरत तो भूलकर भी राजा नहीं होना चाहते। दैववश तेरे हृदयमें दुर्बुद्धि बसी हुई है। यह सब मेरे पापका फल है जिसके कारण कुसमयमें ब्रह्मा प्रतिकूल हो गया।

सुबस बसिहि फिरि अवध सुहाई ❀ सब गुनधाम राम प्रभुताई ॥
करिहहिं भाइ सकल सेवकाई ❀ होइहि तिहुं पुर रामबड़ाई ॥

सुन्दर अयोध्यापुरी सुन्दर निवासोंसे फिर बस जायगी, सब गुणोंके स्थान श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुता भी हो जायगी, सब भाई सेवा करेंगे और तीनों लोकोंमें श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई होगी।

तोर कलंक मोर पछिताऊ ❀ मुयेहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ॥
अब तोहि नीक लाग करु सोई ❀ लोचन ओट बैठु मुहु गोई ॥

परन्तु तेरा कलंक और मेरा पछतावा मरनेपर भी न मिटेगा कभी दूर न होगा। अब तुझे जो अच्छा लगे वही कर। मुंह छिपाकर आंखसे ओझल होकर बैठ।

जब लगि जिअउँ कहउँ करजोरी ❀ तब लगि जनि कछु कहसि बहोरी ॥
फिरि पछितैहसि अंत अभागी ❀ मारसि गाइ नहारुहि लागी ॥

हाथ जोड़कर कहता हूँ कि जबतक मैं जीता रहूँ तबतक तू फिर कुछ मत कहना। अरी अभागिनी, अन्तमें तू फिर पछतायगी! बाजके लिये तू गायको मारती है?

दो०—परेउ राउ कहि कोटिबिधि ❀ काहे करसि निदानु ।
कपटसयानि न कहति कछु ❀ जागति मनहुँ मसानु ॥३७॥

करोड़ तरहसे यह कहकर कि तू नाश क्यों कर रही है, राजा गिर पड़े। कपट करनेमें चतुर कैकेयी कुछ कहती नहीं, मानों स्मशान जगा रही है।

राम राम रट बिकल भुआलू ❀ जनु बिनु पंख बिहंग बेहालू ॥
हृदय मनाव भोरु जनि होई ❀ रामहि जाइ कहइ जनि कोई ॥

राजा व्याकुल होकर राम रामकी रट लगा गये, मानों पंख बिना पक्षी व्याकुल हो। वे अपने मनमें मनाने लगे कि सवेरा ही न हो। कोई जाकर श्रीरामचन्द्रजीको यह बात न सुनावे।

उदय करहु जनि रबि रघुकुलगुर ❀ अवध बिलोकि सूल होइहि उर ॥
भूपप्रीति कैकइकठिनाई ❀ उभयअवधि बिधि रची बनाई ॥

हे रघुवंशके गुरु सूर्य, अपना उदय मत करो क्योंकि अयोध्याको देखकर तुम्हारे हृदयमें पीड़ा होगी ब्रह्माने राजाकी प्रीति और कैकेयीकी कठोरता, दोनोंको अपनी सीमातक भलीभांति बना दिया।

बिलपत नृपहि भयउ भिनुसारा ❀ बीना-बेनु-संख-धुनि द्वारा ॥
पढ़हिं भाट गुन गावहिं गायक ❀ सुनत नृपहि जनु लागहिं सायक ॥

राजाको इस प्रकार विलाप करते हुए सबेरा हुआ और द्वारपर वीणा, बांसुरी और शंखकी ध्वनि होने लगी। भाट लोग गुणोंका वर्णन करने लगे और गवैये गाने लगे। सुनते ही ये सब राजाको बाणके समान चुभने लगे।

मंगल सकल सोहाहिं न कैसें ❀ सहगामिनिहि बिभूषन जैसें ।
तेहि निसि नींद परी नहि काहू ❀ रामदरस लालसा उछाहू ॥

सती होनेको जानेवाली स्त्रीको जैसे गहने नहीं सुहाते वैसे ही ये सब मांगलिक कार्य राजाको नहीं अच्छे लगते। श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेकी अभिलाषाके उत्साहके कारण उस रातको किसीको भी नींद नहीं आयी।

दो०—द्वार भीर सेवक सचिव ❀ कहहिं उदित रबि देखि ।
जागे अजहुँ न अवधपति ❀ कारनु कवनु बिसेखि ॥३८॥

ड्योढ़ीपर सेवकों और मंत्रियोंकी भीड़ लग गयी। ये सब सूर्यको उदय हुआ देखकर कहने लगे कि अयोध्यापति राजा दशरथ अबतक नहीं जगे! इसका विशेष कारण क्या है?

पछिले पहर भूपु नित जागा ❀ आजु हमहिं बड़ अचरजु लागा ॥
जाहु सुमंत्र जगावहु जाई ❀ कीजिय काजु रजायसु पाई ॥

राजा नित्य रात्रिके अन्तिम पहरमें जागा करते थे परन्तु आज हमें बड़ा आश्चर्य लग रहा है। हे सुमंत्र, जाओ और जाकर जगाओ, फिर आज्ञा पाकर कार्य करें।

गये सुमंत्रु तब राउर पाहीं ❀ देखि भयावन जात डेराहीं ॥
धाइ खाइ जनु जाइ न हेरा ❀ मानहुं बिपति-बिषाद-बसेरा ॥

तब सुमंत्र राजाके पास गये। चारोंओर भयावना देखकर वे डरते जाते थे। देखा न जाता था, मानों दौड़कर काटता हो और मानों वहां दुःख और विपत्तिका निवास हो।

पूछे कोउ न ऊतरु देई ❀ गये जेहि भवन भूप कैकेई ॥
कहि जय जीव बैठ सिरु नाई ❀ देखि भूपगति गयउ सुखाई ॥

पूछनेपर कोई उत्तर न देता था। जिस भवनमें राजा और कैकेयी, दोनों थे, वहां सुमंत्र पहुंच गये। 'जय जीव' कहकर और शिर नवाकर सुमंत्र बैठ गये। राजाकी दशा देखकर वे मुरझा गये।

सोच बिकल बिबरन महि परेऊ ❀ मानहुं कमलमूल परिहरेऊ ॥
सचिव सभीत सकइ नहिं पूछी ❀ बोली असुभभरी सुभछूछी ॥

राजाका रंग उतरा हुआ था और शोकमें व्याकुल वे पृथिवीपर पड़े हुए थे, मानों जड़से उखड़ा हुआ कमल हो। भयभीत होनेसे मंत्री सुमंत्र कुछ पूछ नहीं सकते। फिर अशुभसे भरी हुई और शुभसे शून्य कैकेयी बोली।

दो०—परी न राजहि नींद निसि ❀ हेतु जानु जगदीसु ॥
रामु रामु रटि भोरु किय ❀ कहइ न मरमु महीसु ॥ ३६ ॥

कारण तो ईश्वर ही जाने, परन्तु रातभर राजाको नींद नहीं आयी। राजा कुछ भेद नहीं बतलाते, परन्तु उन्होंने राम राम रटकर सवेरा किया है।

आनहु रामहिं बेगि बोलाई ❀ समाचार तब पूछेहु आई ॥
चलेउ सुमंत्रु रायरुखु जानी ❀ लखी कुचालि कीन्हि कछु रानी ॥

जाकर श्रीरामचन्द्रजीको जल्दी ही बुला लाओ, तब आकर समाचार पूछना। राजाका रुख जानकर सुमंत्र चले। उन्होंने यह जान लिया कि रानीने कुछ कुचाल की है।

सोच बिकल मग परइ न पाऊ ❀ रामहिं बोलि कहिहिं का राऊ ॥
उर धरि धीरजु गयउ दुआरे ❀ पूछहिं सकल देखि मनुमारे ॥

इस शोकसे व्याकुल होनेके कारण मार्गमें पैर नहीं पड़ता कि श्रीरामचन्द्रजीको बुलाकर राजा क्या कहेंगे ? हृदयमें धीरज रखकर वे द्वारपर गये। उनको मन मारे हुए देखकर सब पूछने लगे।

समाधानु करि सो सबही का ❀ गयउ जहां दिन-कर-कुल-टीका ॥
राम सुमंत्रहि आवत देखा ❀ आदर कीन्ह पितासम लेखा ॥

सबका समाधान कर वे वहां गये जहां सूर्यवंशके तिलक श्रीरामचन्द्रजी थे। श्रीरामचन्द्रजीने जब सुमंत्रको आते देखा तब पिताके समान समझकर उनका आदर किया।

निरख बदनु कहि भूपरजाई ❀ रघु - कुल - दीपहिं चलेउ लेवाई ॥
राम कुभांति सचिवसंग जाहीं ❀ देखि लोग जहं तहं बिलखाहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजीका मुख देखकर उन्होंने राजाकी आज्ञा कह सुनायी और रघुकुलमें दीपकके समान श्रीरामचन्द्रजीको लिवा ले चले। श्रीरामचन्द्रजी मंत्रीके संग बुरी तरह जा रहे हैं और उन्हें देखकर जहां तहां लोग व्याकुल हो रहे हैं।

दो०—जाइ दीख रघु-बंस-मनि ❀ नरपति निपट कुसाजु।
सहमि परेउ लखि सिंघिनहिं ❀ मनहुं बृद्ध गजराजु ॥४०॥

रघुवंशमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजीने जाकर राजाको बिलकुल बुरे भेषमें देखा, मानों सिंहनीको देखकर हाथियोंका बूढ़ा राजा डरकर गिर पड़ा हो।

सूखहिं अधर जरहिं सबु अंगू ❀ मनहुं दीन मनिहीन भुअंगू ॥
सरुष समीप देखि कैकेई ❀ मानहुं मीचु घरी गनि लेई ॥

होंठ सूख रहे हैं और सब अङ्ग जल रहे हैं, मानों मणिहीन सांप दीन हो रहा हो। क्रोधमें भरी हुई कैकेयीको पासमें देखा, मानों मृत्यु घड़ियां गिन रही हो।

करुनामय मृदु राम सुभाऊ ❀ प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ ॥
तदपि धीर धरि समउ बिचारी ❀ पूछी मधुरबचन महतारी ॥

श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव करुणासे भरा हुआ और कोमल है। उन्होंने पहिले ही यह दुःख देखा। इसके पहिले कभी सुना भी न था। फिर भी धीरज रखकर और समय विचारकर उन्होंने मीठे वचनोंसे माता कैकेयीसे पूछा।

मोहि कहु मातु तात-दुखु-कारनु ❀ करिय जतनु जेहिं होइ निवारनु ॥
सुनहु राम सब कारन एहू ❀ राजहिं तुम्ह पर बहुत सनेहू ॥

हे माता, पिताजीके दुःखी होनेका कारण मुझसे कहिये, जिससे वही उपाय किया जाय, जिसमें वह दूर होवे। कैकेयीने कहा कि हे राम, सुनो। सब कारण यही है कि राजाको तुमपर बड़ा प्रेम है।

देन कहेन्हि मोहिं दुइ बरदाना ❀ मागेउँ जो कछु मोहिं सोहाना ॥
सो सुनि भयउ भूप उर सोचू ❀ छाड़ि न सकहिं तुम्हार संकोचू ॥

मुझे दो वरदान देनेको कहा था। जो कुछ मुझे अच्छा लगा वह मैंने माँग लिया। उसे सुनकर राजाके हृदयमें शोक हो गया है। वे तुम्हारा संकोच नहीं छोड़ सकते।

दो०—सुत सनेहु इत बचनु उत ❀ संकट परेउ नरेसु।
सकहु त आयसु धरहु सिर ❀ मेटहु कठिन कलेसु ॥ ४१ ॥

इधर पुत्रका प्रेम और उधर वचन—इसी संकटमें राजा पड़े हुए हैं। यदि कर सको तो आज्ञा शिरोधार्य करो और इस कठिन दुःखको मिटा दो।

निधरक बैठि कहइ कटु बानी ❀ सुनत कठिनता अति अकुलानी ॥
जीभ कमान बचन सर नाना ❀ मनहुँ महिप मृदु-लच्छ-समाना ॥

बेखटके बैठकर कैकेयी कठोर वचन कहने लगी, जिन्हें सुनते ही कठोरता भी अत्यन्त व्याकुल हुई। कैकेयीकी जीभ मानों कमानके समान, उसके वचन अनेक बाणोंके समान और राजा कोमल लक्ष्यके समान हैं।

जनु कठोरपनु धरे सरीरू ❀ सिखइ धनुषबिद्या बरबीरू ॥
सबु प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई ❀ बैठि मनहु तनु धरि निठुराई ॥

मानों कठोरता शरीर रखे हुए किसी श्रेष्ठ वीरको धनुष-विद्या सिखला रही हो। कैकेयीने श्रीरामचन्द्रजीको सब प्रसंग सुनाया, मानों शरीर धारण किये हुए निठुरता बैठी हो।

मन मुसकाइ भानु-कुल-भानू ❀ राम सहज-आनंद-निधानू ॥
बोले बचन बिगत सब दूषन ❀ मृदु मंजुल जनु बागबिभूषन ॥

स्वभावसे ही आनंदके भाण्डार, सूर्यकुलके सूर्य, श्रीरामचन्द्रजी मनमें मुस्कुराकर सब दोषोंसे रहित, सुन्दर और मीठे वचन बोले, मानों वे सरस्वतीको विभूषित करते हों।

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी ❀ जो पितु-मातु-बचन-अनुरागी ॥
तनय मातु-पितु-तोषनि-हारा ❀ दुर्लभ जननि सकल संसारा ॥

हे माता, सुनो। वही पुत्र बड़ा भाग्यवान् है जो अपने पिता और माताके वचनोंका भक्त हो। माता और पिताको संतोष देनेवाला पुत्र, हे माता, सारे संसारमें दुर्लभ है।

दो०—मुनिगन मिलनु बिसेषि बन ❀ सबहि भांति हित मोर।
तेहि महं पितुआयसु बहुरि ❀ संमत जननी तोर ॥ ४२ ॥

वनमें मुनियोंसे बहुत मिलना होता है, उसमें भी पिताजीकी आज्ञा है और फिर तुम्हारी भी सम्मति है। हे माता, वहाँ मेरा सब प्रकार कल्याण होगा।

भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू ❀ बिधि सबबिधि मोहिं सनमुख आजू ॥
जौं न जाउं बन ऐसेहु काजा ❀ प्रथम गनिय मोहि मूढ़समाजा ॥

मेरे प्राणप्रिय भरत राज्य पावेंगे, आज ब्रह्मा मेरे सब प्रकार अनुकूल है। यदि ऐसे कार्यके लिये भी मैं वनमें न जाऊँ तो मुझे मूर्ख-मंडलीमें पहिले गिना जाना चाहिये।

सेवहिं अरंडु कलपतरु त्यागी ❀ परिहरि अमृतु लेहिं बिषु माँगी ॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं ❀ देखु बिचारि मातु मनमाहीं ॥

हे माता, मनमें विचारकर देखो। जो कल्पवृक्षको छोड़कर अंडीके पेड़की सेवा करते हैं और जो अमृत छोड़कर विष मांग लेते हैं वे भी ऐसा समय पाकर नहीं चूकते।

अंब एक दुखु मोहि बिसेखी ❀ निपट बिकल नरनायक देखी ॥
थोरिहि बात पितहि दुखु भारी ❀ होति प्रतीति न मोहि महतारी ॥

हे माता, राजाको बहुत व्याकुल देखकर मुझे एक बड़ा दुःख है कि थोड़ी बातके लिये ही पिताजीको भारी दुःख हुआ है। इससे हे माता, मुझे विश्वास नहीं होता।

राउ धीरु गुन-उदधि-अगाधू ❀ भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू ॥
ता तें मोहि न कहत कछु राऊ ❀ मोरि सपथ तोहि कहु सतिभाऊ ॥

राजा बड़े धीर और गुणोंके अथाह समुद्र हैं। मुझसे कुछ बड़ा अपराध हुआ है, इसी कारण राजा मुझसे कुछ नहीं कह रहे हैं। तुम्हें मेरी सौगंद है, सच्चे भावसे बतला दे।

दो०—सहज सरल रघुबरबचन ❀ कुमति कुटिल करि जान।
चलइ जोंक जिमि बक्रगति ❀ जद्यपि सलिलु समान ॥ ४३ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके स्वभावसे ही सरल वचनोंको उस दुष्ट बुद्धिवाली कैकेयीने कुटिल समझा, जैसे यद्यपि जल समान होता है तथापि जोंक उसमें टेढ़ी चालसे चलती है।

रहँसी रानि रामरुख पाई ❀ बोली कपटसनेहु जनाई ॥
सपथ तुम्हार भरत कइ आना ❀ हेतु न दूसर मैं कछु जाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीका रुख पाकर रानी प्रसन्न हुई और कपटसे स्नेह दिखलाकर बोली। मुझे तुम्हारी और भरतकी सौगंद है, मैं दूसरा कुछ कारण नहीं जानती।

तुम्ह अपराध जोगु नहिं ताता ❀ जननी-जनक-बंधु-सुख-दाता ॥
राम सत्य सबु जो कछु कहहू ❀ तुम्ह पितु मातु-बचन-रत अहहू ॥

हे पुत्र, तुम अपराध करनेयोग्य नहीं, माता-पिता और भाई—सबको सुख देनेवाले हो। हे राम, तुम जो कुछ कहते हो, वह सब सत्य है। तुम पिता और माताके वचनोंमें अनुरक्त हो।

पितहिं बुझाइ कहहु बलि सोई ❀ चौथेपन जेहिं अजसु न होई ॥
तुम्ह सम सुअन सुकृत जेहिं दीन्हे ❀ उचित न तासु निरादरु कीन्हे ॥

हे पुत्र, मैं बलि जाऊं, तुम पिताजीको समझाकर वही कहो जिससे चौथेपनमें उन्हें अपयश न हो। जिस सत्कर्मने तुम्हारे जैसे पुत्र दिये, उसका निरादर करना उचित नहीं।

लागहिं कुमुख बचन सुभ कैसे ❀ मगह गयादिक तीरथ जैसे ॥
रामहिं मातुबचन सब भाये ❀ जिमि सुरसरिगत सलिल सुहाये ॥

उस बुरे मुखवाली कैकेयीके शुभ वचन वैसे ही लगते हैं, जैसे मगध देशमें गया आदि तीर्थ। श्रीरामचन्द्रजीको माताके सब वचन बहुत अच्छे लगे, जैसे गंगाजीमें मिल जानेपर सब तरहका जल अच्छा हो जाता है।

दो०—गइ मुरुछा रामहिं सुमिरि ❀ नृप फिरि करवट लीन्हि।
सचिव रामआगमनु कहि ❀ बिनय समयसम कीन्हि ॥४४॥

राजाकी मूर्च्छा दूर हुई और उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण कर फिर करवट ली। मंत्री सुमंत्रने श्रीरामचन्द्रजीके आनेकी बात कहकर समयानुसार विनती की।

अवनिप अकनि रामु पगु धारे ❀ धरि धीरजु तब नयन उघारे ॥
सचिव सँभारि राउ बैठारे ❀ चरन परत नृप रामु निहारे ॥

राजाने जब यह सुना कि श्रीरामचन्द्रजी आ गये तब धीरज रखकर उन्होंने नेत्र खोले। मंत्रीने संभालकर राजाको बिठलाया और राजाने श्रीरामचन्द्रजीको चरणोंमें पड़ते हुए देखा।

लिये सनेहबिकल उर लाई ❀ गइ मनि मनहुँ फनिक फिरि पाई ॥
रामहिं चितइ रहेउ नरनाहू ❀ चला बिलोचन बारिप्रबाहू ॥

प्रेमसे व्याकुल होकर उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीको हृदयसे लगा लिया, मानों सांपने अपनी खोयी हुई मणिको फिर पा लिया हो। राजा श्रीरामचन्द्रजीको देखते ही रह गये। उनके नेत्रोंसे जलकी धारा बह चली।

सोकबिबस कछु कहइ न पारा ❀ हृदय लगावत बारहिं बारा ॥
बिधिहि मनाव राउ मनमाहीं ❀ जेहि रघुनाथ न कानन जाहीं ॥

शोकसे बेवश होनेसे राजा दशरथ कुछ कह न सकते थे। वे बारबार श्रीरामचन्द्रजीको हृदयसे लगाते थे। राजा मनमें ब्रह्माको मनाते थे कि ऐसा हो, जिसमें श्रीरामचन्द्रजी वनको न जावें।

सुमिरि महेसहि कहइ निहोरी ❀ बिनती सुनहु सदासिव मोरी ॥
आसुतोष तुम्ह अवढर दानी ❀ आरति हरहु दीनजनु जानी ॥

शिवजीको स्मरण कर राजा विनती करके कहने लगे कि हे सदाशिव, आप मेरी विनती सुनिये। आप शीघ्र ही प्रसन्न हो जानेवाले और बिना विचारे ही दया करके दान देनेवाले हो। मुझे अपना दीन भक्त जानकर दुःख दूर कीजिये।

दो०—तुम्ह प्रेरक सबके हृदय ❀ सो मति रामहिं देहु।
बचन मोर तजि रहहिं घर ❀ परिहरि सील सनेहु ॥४५॥

आप सबके हृदयकी प्रेरणा करनेवाली शक्ति हैं, इसलिये श्रीरामचंद्रजीको ऐसी बुद्धि दीजिये, जिससे वे शील और स्नेह छोड़कर और मेरी आज्ञा भंगकर घरपर ही रहें।

अजसु होउ जग सुजसु नसाऊ ❀ नरक परउं बरु सुरपुर जाऊ ॥
सब दुख दुसह सहावहु मोहीं ❀ लोचनओट राम जनि होहीं ॥

चाहे संसारमें अपयश हो और सारे सुयश नष्ट हो जावें, मैं चाहे नरकमें पड़ूँ या वैकुण्ठको जाऊँ—मुझे सब कठिन दुःखोंको सहवाओ, परन्तु श्रीरामचन्द्रजी आंखसे ओझल न होवें।

अस मन गुनइ राउ नहिं बोला ❀ पीपर-पात-सरिस मनु डोला ॥
रघुपति पितहि प्रेम बस जानी ❀ पुनि कछु कहहिं मातु अनुमानी ॥

राजा अपने मनमें इस तरह सोच रहे हैं, बोलते नहीं। उनका मन पीपलके पत्तेके समान डोल रहा है। पिताको प्रेमके वशमें जानकर श्रीरामचन्द्रजीने यह अनुमान किया कि माता कैकेयी कुछ फिर कहेंगी।

देस काल अवसर अनुसारी ❀ बोले बचन बिनीत बिचारी ॥
तात कहउं कछु करउं ढिठाई ❀ अनुचित छमब जानि लरिकाई ॥

देश, काल और समयके अनुसार वे विचारकर नम्र वचन कहने लगे कि हे पिताजी, मैं ढिठाई कर कुछ कहता हूं। लड़कपन समझकर, यदि वह अनुचित हो तो क्षमा कीजियेगा।

अति-लघु-बात लागि दुखु पावा ❀ काहु न मोहि कहि प्रथम जनावा ॥
देखि गोसाइँहि पूँछिउँ माता ❀ सुनि प्रसंगु भये सीतल गाता ॥

आप बहुत छोटी बातके लिये दुःखी हो रहे हैं। पहिले कहकर मुझे किसीने भी नहीं बतलाया। आपको देखकर जब मैंने मातासे पूछा तब सारा प्रसंग सुनकर शरीर शीतल हो गया।

दो०—मंगलसमय सनेहबसु ❀ सोचु परिहरिय तात।
आयसु देइय हरषि हिय ❀ कहि पुलके प्रभुगात ॥४६॥

हे पिताजी, मंगलके समय प्रेमवश होकर शोक नहीं कीजिये और हृदयमें प्रसन्न होकर आज्ञा दीजिये। ऐसा कहकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका शरीर पुलकायमान हो गया।

धन्य जनमु जगतीतल तासू ❀ पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू ॥
चारि पदारथ करतल ता के ❀ प्रिय पितुमातु प्रानसम जाके ॥

इस पृथिवीतलपर उसका जन्म धन्य है, जिसका चरित्र सुनकर पिताको आनंद मिले। चारों पदार्थ उसकी मुट्ठीमें हैं, जिसको अपने मातापिता प्राणोंके समान प्यारे हों।

आयसु पालि जनमफलु पाई ❀ ऐहउँ बेगिहि होउ रजाई ॥
बिदा मातु सन आवउँ मांगी ❀ चलिहउँ बनहिं बहुरि पग लागी ॥

मुझे आज्ञा दीजिये। आपकी आज्ञाका पालन कर और अपने जन्मका फल पाकर मैं शीघ्र ही लौट आऊंगा। मातासे बिदा मांग आऊं, फिर आपके चरणोंसे लगकर वनको चला जाऊंगा।

अस कहि रामु गवनु तब कीन्हा ❀ भूप सोकबस उतरु न दीन्हा ॥
नगर ब्यापि गइ बात सुतीछी ❀ छुअत चढ़ी जनु सब तनु बीछी ॥

तब ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजी चले गये। शोकके वशमें होनेके कारण राजाने कुछ उत्तर नहीं दिया। यह बड़ी तीखी बात नगरभरमें फैल गयी, मानों छूते ही सारे शरीरमें बिच्छू चढ़ गया हो।

सुनि भये बिकल सकल नरनारी ❀ बेलि बिटप जिमि देखि दवारी ॥
जो जहं सुनइ धुनइ सिरु सोई ❀ बड़ बिषाद नहिं धीरज होई ॥

सुनकर सब स्त्रीपुरुष व्याकुल हो गये, जैसे लताएँ और वृक्ष वनकी आगको देखकर हो जाते हैं। जहां जो सुनता वही अपना शिर धुनने लग जाता। सबको बड़ा दुःख हुआ। किसीको धीरज नहीं होता।

दो०—मुख सुखाहिं लोचन स्रवहिं ❀ सोक न हृदय समाइ।
मनहुं करुन-रस-कटकई ❀ उतरी अवध बजाइ ॥४७॥

मुख सूखते हैं, नेत्रोंसे आंसू बहते हैं और हृदयमें शोक नहीं समाता, मानों करुणारसकी सेना डंका बजाकर अयोध्यामें आ उतरी हो।

मिलेहि मांझ बिधि बात बिगारी ❀ जहं तहं देहिं कैकइहि गारी॥
एहि पापिनिहि बूझिका परेऊ ❀ छाइ भवन पर पावकु धरेऊ॥

मिलकर जहां-तहां लोग कैकेयीको गालियां देने लगे और कहने लगे कि ब्रह्माने बातको बीचमें ही बिगाड़ दिया। इस पापिनीको क्या समझ पड़ा, जो छाये हुए घरपर अग्नि रख दी।

निजकर नयन काढ़ि चह दीखा ❀ डारि सुधा बिषु चाहत चीखा॥
कुटिल कठोर कुबुद्धि अभागी ❀ भइ रघु - बंस - बेनु - बन आगी॥

अपने हाथसे नेत्रोंको निकालकर देखना चाहती है, अमृतको गिराकर विषको चखना चाहती है! यह दुष्ट, कठोर, दुर्बुद्धि रखनेवाली और अभागिन कैकेयी रघुकुलरूपी बांसके वनके लिये अग्नि हो गयी।

पालव बैठि पेडु एहि काटा ❀ सुख महुं सोक ठाटु धरि ठाटा॥
सदा राम एहि प्रानसमाना ❀ कारन कवन कुटिलपनु ठाना॥

इसने डालपर बैठकर उसी पेड़को काटा है और सुखके समयमें शोकका ठाट बना डाला है। श्रीरामचन्द्रजी इसको सदा प्राणोंके समान थे, फिर क्या कारण है कि इसने ऐसा दुष्टपन ठान रखा है?

सत्य कहहिं कबि नारिसुभाऊ ❀ सबबिधि अगम अगाध दुराऊ॥
निजप्रतिबिंबु बरुक गहि जाई ❀ जानि न जाइ नारिगति भाई॥

कविजन सत्य कहते हैं कि स्त्रीका स्वभाव सब प्रकार अगम्य, अथाह और गुप्त होता है। अपनी परछाहीं चाहे भले ही पकड़ ली जाय, परन्तु हे भाई, स्त्रीकी गति नहीं जानी जा सकती।

दो०—काह न पावक जारि सक ❀ का न समुद्र समाइ।
का न करइ अबला प्रबल ❀ केहि जग कालु न खाइ॥४८॥

अग्नि किसे नहीं जला सकती? समुद्रमें क्या नहीं समा सकता? प्रबला स्त्री क्या नहीं कर सकती और काल संसारमें किसे नहीं खाता?

का सुनाइ बिधि काह सुनावा ❀ का देखाइ चह काह देखावा॥
एक कहहिं भल भूप न कीन्हा ❀ बरु बिचारि नहिं कुमतिहि दीन्हा॥

ब्रह्माने क्या सुनाकर क्या सुनाया और क्या दिखलाकर क्या दिखलाना चाहता है! कोई कहने लगे कि राजाने अच्छा नहीं किया। उस दुष्ट बुद्धिवालीको विचार करके दोनों वरदान नहीं दिये।

जो हठि भयउ सकल दुख भाजनु ❀ अबलाबिबस ग्यानु गुनु गा जनु ॥
एक धरमपरमिति पहिचाने ❀ नृपहि दोसु नहिं देहिं सयाने ॥

जो वे दोनों वरदान जबर्दस्ती सब दुःखोंके पात्र हो गये, मानों स्त्रीके वशमें होनेसे राजाका सब ज्ञान और गुण जाता रहा हो। दूसरे लोग, जो धर्मकी मर्यादाको पहिचानते हैं, और चतुर हैं, राजाको दोष नहीं देते।

सिबि-दधीचि-हरिचंद-कहानी ❀ एक एक सन कहहिं बखानी ॥
एक भरत कर संमत कहहीं ❀ एक उदास भाय सुनि रहहीं ॥

वे परस्पर एक दूसरेसे राजा शिवि, दधीचि ऋषि और हरिश्चन्द्रकी कथा वर्णनकर कहने लगे। कोई कहने लगे कि इसमें भरतकी भी सम्मति है। इसे सुनकर कोई तो उदासीन भावसे चुप रह जाते हैं।

कान मूँदि कर रद गहि जीहा ❀ एक कहहिं यह बात अलीहा ॥
सुकृत जाहिं अस कहत तुम्हारे ❀ राम भरतु कहुँ प्रानपियारे ॥

परन्तु कोई कानोंपर हाथ रखकर और दांतोंतले जीभ दबाकर यह कहने लगते हैं कि यह बात असत्य है। ऐसा कहनेसे तुम्हारे पुण्य नष्ट हो जायँगे। भरतजीको श्रीरामचन्द्रजी प्राणोंके समान प्यारे हैं।

दो०—चंदु चवइ बरु अनलकन ❀ सुधा होइ बिष तूल।
सपनेहु कबहुँ न करहिं कछु ❀ भरतु रामप्रतिकूल ॥ ४९ ॥

चाहे चंद्रमा आगके कण बरसाने लगे और अमृत विषके समान हो जावे, परन्तु भरतजी श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिकूल कभी स्वप्नमें भी कुछ न करेंगे।

एक बिधातहि दूषन देहीं ❀ सुधा देखाइ दीन्ह बिषु जेहीं ॥
खरभरु नगर सोचु सब काहू ❀ दुसह दाहु उर मिटा उछाहू ॥

कोई ब्रह्माको ही दोष दे रहे हैं, जिसने अमृत दिखलाकर विष दिया। नगरमें खलबली पड़ी हुई है, सब किसीको शोक हो रहा है। सबके हृदयका उत्साह मिट गया और उसमें कठोर पीड़ा होने लगी।

बिप्रबधू कुलमान्य जठेरी ❀ जे प्रिय परम कैकई केरी ॥
लगीं देन सिख सीलु सराही ❀ बचन बानसम लागहिं ताही ॥

ब्राह्मणोंकी स्त्रियां और कुलकी पूज्य तथा बड़ी स्त्रियां, जो कैकेयीको बहुत प्यारी थीं, स्वभावकी प्रशंसा कर सीख देने लगीं। परन्तु कैकेयीको उनके वचन वाणके समान लगने लगे।

भरत न मोहि प्रिय रामुसमाना ❀ सदा कहहु यहु सबु जगु जाना ॥
करहु राम पर सहजसनेहू ❀ केहि अपराध आजु बनु देहू ॥

सब संसार जानता है और तुम यह सदा कहा करती थी कि भरत मुझे श्रीरामचन्द्रजीके समान प्यारे नहीं हैं। तुम स्वभावसे ही श्रीरामचन्द्रजीपर प्रेम किया करती थी, परन्तु आज किस अपराधके कारण उन्हें वनवास दे रही हो ?

कबहुं न कियहु सवतिआरेसू ❀ प्रीतिप्रतीति जान सबु देसू ॥
कौसल्या अब काह बिगारा ❀ तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा ॥

तुमने कभी सौतियाडाह नहीं किया, सारा देश तुम्हारी प्रीति और विश्वासको जानता है। अब कौशल्याने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, जिसके लिये तुमने नगरपर वज्रपात किया है।

दो०—सीय कि पिय संग परिहरिहि ❀ लषनु कि रहिहहिं धाम।
राजु कि भूंजब भरत पुर ❀ नृपु कि जियहि बिनु राम ॥५०॥

सीताजी क्या पतिका साथ छोड़ देंगी ? लक्ष्मणजी क्या घर रहेंगे ? भरतजी क्या अयोध्यामें राज्य भोगेंगे और श्रीरामचन्द्रजीके बिना क्या राजा जीवित रहेंगे ?

अस बिचारि उर छाड़हु कोहू ❀ सोक कलंक कोठि जनि होहू ॥
भरतहिं अवसि देहु जुबराजू ❀ कानन काह राम कर काजू ॥

ऐसा विचारकर हृदयसे क्रोध दूर करो और शोक और कलंकका द्वार मत बनो। अवश्य ही भरतजीको युवराज-पद दो, परन्तु वनमें श्रीरामचन्द्रजीका क्या काम है ?

नाहिन रामु राज के भूखे ❀ धरमधुरीन बिषयरस रूखे ॥
गुरुगृह बसहिं रामु तजि गेहू ❀ नृप सन अस बरु दूसर लेहू ॥

श्रीरामचन्द्रजी राजके भूखे नहीं हैं; क्योंकि वे धर्मधुरंधर और भोगविलासके स्वादसे उदासीन हैं। श्रीरामचन्द्रजी राजमहल छोड़कर गुरुके घरमें जाकर रहें—ऐसा दूसरा वरदान तुम राजासे लो।

जौं नहिं लगिहहु कहे हमारे ❀ नहिं लागिहि कछु हाथ तुम्हारे ॥
जौं परिहास कीन्हि कछु होई ❀ तौ कहि प्रगट जनावहु सोई ॥

यदि तुम हमारा कहना न मानोगी तो तुम्हारे हाथ कुछ न लगेगा। यदि कुछ हँसी ही की हो तो उसे स्पष्ट कहकर बतला दो।

रामसरिस सुत कानन जोगू ❀ काह कहिहि सुनि तुम्ह कहुं लोगू ॥
उठहु बेगि सोइ करहु उपाई ❀ जेहि बिधि सोक कलंक नसाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके समान पुत्र क्या वनके योग्य हैं ? सुनकर लोग तुमको क्या कहेंगे ? उठो और जिस तरह यह शोक और कलंक दूर हो, शीघ्रतापूर्वक वही उपाय करो।

छं०—जेहि भांति सोक कलंक जाइ उपाइ करि कुल पालही।
हठि फेरु रामहिं जात बन जनि बात दूसरि चालही॥
जिमि भानु बिनु दिनु प्रान बिनु तनु चंदु बिनु जिमि जामिनी।
तिमि अवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझि धौं जिय भामिनी॥

जिस तरह शोक और कलंक जावे, वही उपाय करके कुलकी रक्षा करो। वन जाते हुए श्रीरामचन्द्रजीको जबर्दस्ती लौटा लो, दूसरी बात मत चलाओ। जैसे सूर्य बिना दिन, प्राण बिना शरीर और चन्द्रमा बिना रात्रि होती है, वैसे ही तुलसीदासजी कहते हैं कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके बिना अयोध्या हो जायगी। हे रानी, यह अपने मनमें खूब समझ लो।

सो०—सखिन्ह सिखावन दीन्ह ❀ सुनत मधुर परिनाम हित।
तेइ कछु कान न कीन्ह ❀ कुटिल प्रबोधी कूबरी॥ ५१॥

सखियोंने सीख दी, जो सुननेमें मधुर और परिणाममें हित करनेवाली थी, परन्तु कुटिलद्वारा पढ़ायी हुई होनेके कारण उसने कुछ भी नहीं सुना।

उतरु न देइ दुसह रिस रूखी ❀ मृगिन्ह चितव जनु बाघिनि भूखी॥
ब्याधि असाधि जानि तिन्ह त्यागी ❀ चलीं कहत मतिमंद अभागी॥

वह रूखी कैकेयी कठिनतासे सहन किये जाने योग्य क्रोधमें भर रही है और उन्हें कुछ भी उत्तर नहीं देती। उन सबको वह ऐसे देखती है जैसे भूखी सिंहिनी हिरनियोंको। उन सखियोंने असाध्य व्याधि समझकर छोड़ दिया और वे कैकेयीको मंद बुद्धिवाली और अभागिनी कहती हुई चलीं।

राज करत यहि दैव बिगोई ❀ कीन्हेसि अस जस करइ न कोई॥
एहि बिधि बिलपहिं पुर-नर-नारी ❀ देहिं कुचालिहि कोटिक गारी॥

राज करते हुए इसे दैवने बरबाद किया। जैसा इसने किया वैसा कोई न करेगा। नगरके स्त्री और पुरुष—सब इस प्रकार विलाप करने और बुरी चालवाली कैकेयीको करोड़ों गालियां देने लगे।

जरहिं बिषमजर लेहिं उसासा ❀ कवनि राम बिनु जीवन आसा॥
बिपुल बियोग प्रजा अकुलानी ❀ जनु जल-चर-गन सूखत पानी॥

सब विषम ज्वरसे जल रहे और लंबी साँस ले रहे हैं; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीके बिना जीनेकी क्या आशा? श्रीरामचन्द्रजीके भारी वियोगसे प्रजा व्याकुल हो गयी; जैसे पानी सूखते ही जलके जीव व्याकुल हो जाते हैं।

अतिबिषादबस लोग लोगाई ❀ गये मातु पहिं रामु गोसाईं॥
मुखप्रसन्न चित चौगुन चाऊ ❀ मिटा सोचु जनि राखइ राऊ॥

पुरुष और स्त्री—सब अत्यन्त शोकके वशमें हो गये। समर्थ श्रीरामचन्द्रजी माताके पास गये। उनका मुख प्रसन्न था। उनके मनमें चौगुना उल्लास था। उनका यह सोच मिट चुका था कि राजा कहीं रोक न दें।

दो०—नवगयंदु रघुबीरमनु ❀ राजु अलानसमान।
छूट जानि बनगवनु सुनि ❀ उर अनंदु अधिकान ॥५२॥

श्रीरामचन्द्रजीका मन नये हाथीके और अयोध्याका राज उसे बांधनेकी रस्सीके समान है। वन जाना सुनकर अपनेको छुटा हुआ जानकर उनके हृदयमें बहुत अधिक आनंद बढ़ा।

(कौसल्याकी आज्ञा)

रघु-कुल-तिलक जोरि दोउ हाथा ❀ मुदित मातु पद नायेउ माथा ॥
दीन्हि असीस लाइ उर लीन्हे ❀ भूषनबसन निछावरि कीन्हे ॥

रघुकुलतिलक श्रीरामचन्द्रजीने दोनों हाथ जोड़कर प्रसन्नतापूर्वक माताके चरणोंमें शिर नवाया। माताने आशीर्वाद दिया और अपने हृदयसे लगा लिया तथा गहने और कपड़े न्योछावर किये।

बारबार मुख चूमति माता ❀ नयन नेहजलु पुलकित गाता ॥
गोद राखि पुनि हृदय लगाये ❀ स्रवत प्रेम रस पयद सुहाये ॥

माता बार-बार श्रीरामचन्द्रजीका मुख चूमने लगी, प्रेमसे नेत्रोंमें जल छा गया और शरीर पुलकायमान हो गया। उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीको गोदमें बैठाकर फिर हृदयसे लगा लिया। अत्यन्त प्रेमके वेगसे उनके स्तनोंसे सुन्दर दूध बहने लगा।

प्रेमु प्रमोदु न कछु कहि जाई ❀ रंक धनदपदबी जनु पाई ॥
सादर सुंदर बदन निहारी ❀ बोली मधुर बचन महतारी ॥

उनका प्रेम और आनन्द कुछ वर्णन नहीं किया जाता, मानों किसी कंगालने कुबेरकी पदवी पा ली हो। बड़े आदरके साथ सुन्दर मुख देखकर माता कौशल्या ये मीठे वचन बोलीं।

कहहु तात जननी बलिहारी ❀ कबहिं लगन मुद-मंगलकारी ॥
सुकृत सील सुख सींव सुहाई ❀ जनमलाभ कइ अवधि अघाई ॥

हे पुत्र, कहो। माता बलैया लेती है। आनन्द मंगल करनेवाली वह लग्न किस समय है, जो पुण्य, शील, और सुखकी सुन्दर सीमा है और जो जन्म लेनेके लाभकी पूर्ण अवधि है।

दो०—जेहि चाहत नरनारि सब ❀ अतिआरत एहि भाँति।
जिमि चातक चातकि त्रिषित ❀ बृष्टि सरद रितु स्वाति ॥५३॥

जिस लग्नको सब नरनारी अत्यन्त उत्कंठित होकर उसी भांति चाहते हैं जैसे प्यासे पपीहा-पपीही शरदऋतुमें स्वातिके नक्षत्रकी वर्षा चाहते हैं।

तात जाउं बलि बेगि नहाहू ❀ जो मन भाव मधुर कछु खाहू ॥
पितुसमीप तब जायेहु भैया ❀ भइ बड़ि बार जाइ बलि मैया ॥

हे पुत्र, बलैयां लूं। जाओ, जल्दी स्नान करो और जो मनको भावे वह मिठाई कुछ खाओ। भैया, तब पिताके पास जाना। बहुत समय हो गया है। माता बलैयां लेती है।

मातु बचन सुनि अतिअनुकूला ❀ जनु सनेह-सुर-तरु के फूला ॥
सुखमकरंद भरे स्रियमूला ❀ निरखि राम-मन-भवंरु न भूला ॥

श्रीरामचन्द्रजीने माताके अत्यन्त अनुकूल वचन सुने, मानों वे प्रेमरूपी कल्पवृक्षके, जिसका मूल राज्यश्री है, फूल हों; जो सुखरूपी परागसे भरे हुए हैं। इन्हें देखकर श्रीरामचन्द्रजीका मनरूपी भौंरा भूल नहीं गया।

धरम धुरीन धरमगति जानी ❀ कहेउ मातु सन अति मृदु बानी ॥
पिता दीन्ह मोहि कानन राजू ❀ जहं सब भांति मोर बड़ काजू ॥

धर्मकी गतिको जानकर धर्मधुरंधर श्रीरामचन्द्रजीने मातासे अत्यन्त मीठी वाणीसे कहा कि पिताजीने मुझे वनका राज्य दिया है, जहां सब प्रकार मेरा बड़ा काम बनेगा।

आयसु देहि मुदितमन माता ❀ जेहि मुदमंगल कानन जाता ॥
जनि सनेह बस डरपसि भोरे ❀ आनंदु अंब अनुग्रह तोरे ॥

हे माता, प्रसन्न मनसे आज्ञा दो, जिसमें वन जाते हुए आनन्द-मंगल हों। हे माता, प्रेमके वश होकर भूलकर भी मत डरना; क्योंकि तुम्हारी कृपासे वहां आनन्द ही होगा।

दो०—बरष चारि दस बिपिन बसि ❀ करि पितु-बचन प्रमान।
आइ पाय पुनि देखिहउं ❀ मनु जनि करसि मलान ॥५४॥

चौदह वर्ष बनमें रहकर पिताके बचनोंका पालन करके मैं लौटूंगा और आपके चरणोंके फिर दर्शन करूंगा। मनको मैला मत करो।

बचन बिनीत मधुर रघुबर के ❀ सरसम लगे मातुउर करके ॥
सहमि सूखि सुनि सीतल बानी ❀ जिमि जवास परे पावस पानी ॥

श्रीरामचन्द्रजीके मीठे कोमल वचन माताके हृदयमें बाणकी भांति चुभ गये और पीड़ा करने लगे। शीतल वाणी सुनकर वे भयभीत हुईं और सूख गयीं, जैसे वर्षाऋतुका पानी पड़नेसे जवास।

कहि न जाइ कछु हृदय-बिषादू ❀ मनहुँ मृगी सुनि केहरिनादू ॥
नयन सजल तन थरथर कांपी ❀ मांजहि खाइ मीन जनु मांपी ॥

हृदयका दुःख कुछ कहा नहीं जाता; मानों हिरनने सिंहकी गर्जना सुनी हो। उनके नेत्रोंमें जल छा गया और शरीर थर-थर कांपने लगा; मानों मांजा खाकर मछली व्याकुल हुई हो।

धरि धीरज सुतबदन निहारी ❀ गदगदबचन कहति महतारी ॥
तात पितहि तुम्ह प्रानपियारे ❀ देखि मुदित नित चरित तुम्हारे ॥

धीरज रखकर माताने पुत्रका मुख देखा और गद्गद होकर ये वचन कहने लगी कि हे पुत्र, पिताको तुम प्राणोंके समान प्यारे हो। तुम्हारे चरित्र देखकर वे नित्य प्रसन्न होते हैं।

राजु देन कहु सुभदिन साधा ❀ कहेउ जान बन केहि अपराधा ॥
तात सुनावहु मोहि निदानू ❀ को दिन-कर-कुल भयउ कृसानू ॥

राज देनेके लिये शुभ दिन नियत किया था, फिर किस अपराधके कारण वन जानेको कह दिया। हे पुत्र, मुझे इसका मूल कारण सुनाओ कि सूर्यवंशके लिये अग्नि कौन हो गया ?

दो०—निरखि रामरुख सचिवसुत ❀ कारन कहेउ बुझाइ।
सुनि प्रसंग रहि मूक जिमि ❀ दसा बरनि नहिं जाइ ॥५५॥

श्रीरामचन्द्रजीका रुख देखकर मंत्रीके पुत्रने सब कारण समझाकर कहा। प्रसङ्ग सुनकर कौशल्या गूंगेकी भांति रह गयीं। उनकी दशाका वर्णन नहीं किया जा सकता।

राखि न सकइ न कहि सक जाहू ❀ दुहूं भाँति उर दारुन दाहू ॥
लिखत सुधाकर गा लिखि राहू ❀ बिधिगति बाम सदा सब काहू ॥

वे न तो रख सकती हैं और न यह कह सकती हैं कि जाओ। दोनों ही भांति उनके हृदयमें कठोर दाह हो रहा है। दैवगति सबके लिये सदा टेढ़ी है कि चन्द्रमा लिखते हुए राहु लिख गया।

धरम सनेह उभय मति घेरी ❀ भइ गति साँप छुछुंदरि केरी ॥
राखउं सुतहि करउं अनुरोधू ❀ धरम जाइ अरु बंधुबिरोधू ॥

धर्म और स्नेह—दोनोंने कौशल्याकी बुद्धिको घेर लिया। उस समय उनकी गति सांप और छछून्दर जैसी हो गयी। यदि मैं अनुरोध करके पुत्रको रखूं तो धर्म जाता है और भाइयोंसे विरोध होता है।

कहउं जान बन तौ बड़ि हानी ❀ संकट—सोच-बिबस भइ रानी ॥
बहुरि समुझि तियधरमु सयानी ❀ रामुभरतु दोउ सुत सम जानी ॥

यदि वन जानेके लिये कहती हूं तो बड़ी हानि होती है। रानी कौशल्या संकट और सोचके वशमें हो गयीं। फिर चतुर रानी स्त्रीधर्म समझकर और श्रीरामचंद्रजी और भरतजी दोनों पुत्रोंको समान जानकर।

सरल सुभाउ राम महतारी ❀ बोली बचन धीर धरि भारी॥
तात जाउँ बलि कीन्हेहु नीका ❀ पितुआयसु सब धरम क टीका॥

श्रीरामचंद्रजीकी माता सीधे स्वभावसे भारी धीरज रखकर ये वचन कहने लगीं कि हे पुत्र मैं तुम्हारी बलैया लेती हूं। तुमने अच्छा किया। पिताकी आज्ञा सबसे बड़ा धर्म है।

दो०—राज देन कहि दीन वन ❀ मोहि न सो दुखलेसु।
तुम्ह बिनु भरतहि भूपतिहि ❀ प्रजहि प्रचंड कलेसु॥५६॥

राज देनेको कहकर वन दिया, मुझे इसका कुछ भी दुःख नहीं है परन्तु तुम्हारे बिना भरत, राजा और प्रजा, सबको घोर क्लेश होगा।

जौं केवल पितु आयसु ताता ❀ तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता॥
जौं पितुमातु कहेउ बन जाना ❀ तौ कानन सत-अवध-समाना॥

हे पुत्र यदि केवल पिताकी ही आज्ञा हो तो माताको बड़ा समझकर मत जाओ। यदि पिता और माता, दोनोंने वन जानेको कहा हो तो वन ही सौ अयोध्याओंके समान है।

पितु बनदेव मातु बनदेवी ❀ खग मृग चरनसरोरुह सेवी॥
अंतहुँ उचित नृपति बनबासू ❀ बय बिलोकि हिय होइ हरासू॥

वनके देवता तुम्हारे पिता और वनकी देवी तुम्हारी माता हैं। पशु और पक्षी तुम्हारे चरणकमलोंके सेवक हैं। राजाके लिये वनमें वास करना अन्तमें उचित ही है परन्तु तुम्हारी अवस्था देखकर जीमें घबड़ाहट होती है।

बड़भागी बनु अवध अभागी ❀ जो रघु-बंस-तिलकु तुम त्यागी॥
जौं सुत कहउँ संग मोहि लेहू ❀ तुम्हरे हृदय होइ संदेहू॥

हे रघुवंशके तिलक, वन बड़ा भाग्यवान है परन्तु अयोध्यापुरी बड़ी अभागिनी है जिसे तुम छोड़ दोगे। हे पुत्र, यदि मैं यह कहूँ कि मुझे सङ्ग ले चलो तो तुम्हारे मनमें संदेह होगा।

पूत परमप्रिय तुम्ह सबही के ❀ प्रान प्रान के जीवन जी के॥
ते तुम कहहु मातु बन जाऊँ ❀ मैं सुनि बचन बैठि पछताऊँ॥

हे पुत्र, तुम सभीको अत्यन्त प्यारे हो। तुम प्राणके प्राण और जीवके भी जीवन हो। वही तुम कहते हो कि हे माता मैं वनको जाता हूँ। तुम्हारी यह बात सुन मैं बैठकर पछताती हूँ।

दो०—यह बिचारि नहिं करउँ हठ ❀ झूठ सनेह बढ़ाइ ॥
मानि मातु कर नात बलि ❀ सुरति बिसरि जनि जाइ ॥५७॥

यही विचारकर झूठा स्नेह बढ़ाकर हठ नहीं करती हूँ। हे पुत्र, मैं तुम्हारी बलैयां लेती हूँ। माताका नाता मानकर मेरी याद मत भुला देना।

देव पितर सब तुम्हहि गोसांई ❀ राखहु नयन पलककी नांई ॥
अवधि अंबु प्रियपरिजनु मीना ❀ तुम्ह करुनाकर धरमधुरीना ॥

हे पुत्र, देव और पितर सब तुम्हारी रक्षा करें, जैसे पलकें नेत्रोंकी रक्षा करती हैं। बनवासके १४ वर्षकी अवधि जल है और प्यारे कुटुम्बी लोग मछली हैं और तुम धर्मधुरंधर और दयाके भण्डार हो।

अस बिचारि सोई करहु उपाई ❀ सबहिं जिअत जेहि भेंटहु आई ॥
जाहु सुखेन बनहिं बलि जाऊं ❀ करि अनाथ जन-परिजन-गाऊं ॥

ऐसा विचारकर वही उपाय करना जिसमें सबके जीवित रहते हुए ही आकर मिल सको मैं बलिहारी जाती हूँ। प्रजाजनों, कुटुम्बियों और अयोध्याको अनाथ करके सुखपूर्वक बनको जाओ।

सब कर आजु सुकृतफल बीता ❀ भयउ करालु कालु बिपरीता ॥
बहुबिधि बिलपि चरन लपटानी ❀ परमअभागिनि आपुहि जानी ॥

सबके पुण्योंका फल आज समाप्त हुआ और करालकाल प्रतिकूल हो गया। बहुत तरहसे विलाप करके कौशल्याजी अपनेको बड़ी मन्द भाग्यवाली समझकर चरणोंसे लपट गयीं।

दारुन—दुसह—दाह उर व्यापा ❀ बरनि न जाइ बिलापकलापा ॥
राम उठाइ मातु उर लाई ❀ कहि मृदुबचन बहुरि समुझाई ॥

उनका हृदय अत्यन्त कठोर दाहसे जलने लगा। उनके अनेक प्रकारके विलापका वर्णन नहीं किया जा सकता। श्रीरामचन्द्रजीने उठाकर माताको हृदयसे लगा लिया और फिर मीठे वचन कहकर समझाया।

दो०—समाचार तेहि समय सुनि ❀ सीय उठी अकुलाइ।
जाइ सासु-पद-कमल-जुग ❀ बंदि बैठि सिरुनाइ ॥५८॥

उस समय सब समाचार सुनकर सीताजी व्याकुल हो उठीं और जाकर सासुके दोनों चरणकमलोंको वंदनाकर शिर झुकाये हुये बैठ गयीं।

दीन्ह असीस सासु मृदुबानी ❀ अति सुकुमारि देखि अकुलानी ॥
बैठि नमित मुख सोचति सीता ❀ रूपरासि पति-प्रेम-पुनीता ॥

सासुने मीठी वाणीसे आशीष दी और उन्हें अत्यन्त सुकुमारी देखकर व्याकुल हुईं। रूपका भाण्डार और पतिके प्रेममें पवित्र सीताजी नीचे मुख किये बैठी हुई सोचने लगीं।

चलन चहत बन जीवननाथू ❀ केहि सुकृती सन होइहि साथू ॥
की तनु प्रान कि केवल प्राना ❀ बिधि करतबु कछु जाइ न जाना ॥

मेरे प्राणनाथ वनको विदा होना चाहते हैं। किस पुण्यके प्रभावसे मैं इनके साथ जा सकूँगी? या तो शरीर और प्राण—दोनों ही उनके साथी होंगे या केवल प्राण! दैवको क्या करना है, कुछ जाना नहीं जाता!

चारु चरननख लेखति धरनी ❀ नूपुरमुखर मधुर कबि बरनी ॥
मनहुँ प्रेमबस बिनती करहीं ❀ हमहि सीयपद जनि परिहरहीं ॥

सुन्दर चरणोंके नखसे सीताजी पृथिवी खोदने लगीं। उस समय नूपुरोंका जो मधुर शब्द हुआ, उसे कविने वर्णन किया है कि मानों वे नूपुर प्रेमके वश होकर विनती कर रहे हैं कि सीताजीके चरण हमें त्याग न दें।

मंजुबिलोचन मोचति बारी ❀ बोली देखि राममहतारी ॥
तात सुनहु सिय अतिसुकुमारी ❀ सासु-ससुर-परिजनहि पियारी ॥

सीताजी सुन्दर नेत्रोंसे आँसू गिरा रही हैं, यह देखकर श्रीरामचन्द्रजीकी माता बोली कि हे पुत्र सुनो। सीताजी अत्यन्त सुकुमारी और सास-ससुर और कुटुम्बियोंको प्यारी हैं।

दो०—पिता जनक भूपालमनि ❀ ससुर भानु-कुल-भानु ।
पति रवि-कुल-कैरव-बिपिन ❀ बिधु-गुन-रूप-निधानु ॥५६॥

राजाओंमें मणिके समान राजा जनक सीताजीके पिता, सूर्यकुलके सूर्य राजा दशरथ ससुर और गुण एवं रूपके भाण्डार तथा सूर्यकुलरूपी कुमुदके वनके लिये चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी पति हैं।

मैं पुनि पुत्रबधू प्रिय पाई ❀ रूपरासि गुन सील सुहाई ॥
नयनपुतरि करि प्रीति बढ़ाई ❀ राखउँ प्रान जानकिहि लाई ॥

फिर मैंने रूपकी राशि, सुन्दर, गुणवती और अच्छे स्वभाववाली प्यारी पुत्रवधूको पाया और उसे नेत्रोंकी पुतली बनाकर प्रेमको बढ़ाया। सीताजीको मैं प्राणोंसे लगाये रहती हूँ।

कलपबेलि जिमि बहुबिधि लाली ❀ सींचि सनेहसलिल प्रतिपाली ॥
फूलत फलत भयेउ बिधि बामा ❀ जानि न जाइ काह परिनामा ॥

कल्पवृक्षकी बेलके समान इसको मैंने बहुत तरहसे प्यार किया है और प्रेमरूपी जलसे सींचकर इसे पाला है। फूलने और फलनेके समय दैव प्रतिकूल हो गया। परिणाम क्या होगा, यह मालूम नहीं होता।

पलंगपीठ तजि गोद हिंडोरा ❀ सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा ॥
जिवनमूरि जिमि जोगवत रहेउं ❀ दीपबाति नहिं टारन कहेउं ॥

पलंग, पीढ़ा, गोद और हिंडोलेको छोड़कर सीताजीने कठोर पृथिवीपर कभी पैर भी नहीं रखा। संजीवनी मूलके समान मैं इसे देखती रहती हूं। दीपककी वत्ती बढ़ानेके लिये भी मैं कभी नहीं कहती।

सोइ सिय चलन चहति बन साथा ❀ आयसु काह होइ रघुनाथा ॥
चंद - किरिन - रस - रसिक चकोरी ❀ रबिरुख नयन सकइ किमि जोरी ॥

वही सीताजी तुम्हारे साथ वन जाना चाहती है। हे रामचन्द्रजी, उसके लिये क्या आज्ञा होती है? चन्द्रमाकी किरणोंके रससे प्रेम करनेवाली चकवी सूर्यकी ओर आंखें करके कैसे देख सकती है?

दो०—करि केहरि निसिचर चरहिं ❀ दुष्ट जंतु बन भूरि।
बिषबाटिका कि सोह सुत ❀ सुभग सजीवनि मूरि ॥६०॥

हाथी, सिंह, राक्षस आदि अनेक दुष्ट प्राणी वनमें फिरा करते हैं। हे पुत्र, सुन्दर संजीवनी जड़ी क्या विषके बगीचोंमें शोभा देती है?

बनहित कोल किरात किसोरी ❀ रची बिरंचि बिषय-सुख-भोरी ॥
पाहन कृमि जिमि कठिन सुभाऊ ❀ तिन्हहिं कलेसु न कानन काऊ ॥

ब्रह्माने वनके लिये भोग विलासके सुखोंको न जाननेवाली कोल और भीलोंकी लड़कियोंको बनाया है। पत्थरके कीड़ेके समान जिनका कठोर स्वभाव है, उन्हें वनमें किसी तरहका क्लेश नहीं होता है।

कै तापसतिय काननजोगू ❀ जिन्ह तपहेतु तजा सब भोगू ॥
सिय बन बसिहि तात केहि भांती ❀ चित्रलिखित कपि देखि डेराती ॥

अथवा तपस्वियोंकी स्त्रियां वनमें रहनेके योग्य हैं, जिन्होंने तपस्याके लिये सब भोग छोड़ दिये हों। हे पुत्र, सीता वनमें किस प्रकार बसेगी, जो चित्रमें बना हुआ बन्दर देखकर भी डरती है?

सुर-सर - सुभग बनज - बन-चारी ❀ डाबर जोग कि हंसकुमारी ॥
अस बिचारि जस आयसु होई ❀ मैं सिख देउं जानकिहि सोई ॥

देवताओंके सुन्दर सरोवरके कमलोंके वनमें विचरनेवाली हंसिनी क्या किसी गढ़ेके योग्य है? इन सब बातोंका विचार करनेके पश्चात् फिर जैसी तुम्हारी आज्ञा हो, मैं सीताजीको वैसी ही शिक्षा दूं।

जौं सिय भवन रहइ कह अंबा ❀ मोहि कह होइ बहुत अवलंबा ॥
सुनि रघुबीर मातु - प्रिय-बानी ❀ सील सनेह सुधा जनु सानी ॥

कौशल्या माता कहने लगी कि यदि सीता घर रह जाय तो मुझको बड़ा सहारा हो जाय। शील और प्रेमकी अमृतसे सनी हुई होनेके समान माताकी प्यारी वाणी सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने—

दो०—कहि प्रियबचन बिबेकमय ❀ कीन्ह मातु परितोष।
लगे प्रबोधन जानकिहि ❀ प्रगटि बिपिन गुन दोष ॥६१॥

ज्ञानसे भरे हुए प्यारे वचन कहकर माताको संतुष्ट किया और फिर वनके गुण और दोष बताकर सीताजीको समझाने लगे।

मातुसमीप कहत सकुचाहीं ❀ बोले समउ समुझि मनमाहीं ॥
राजकुमारि सिखावनु सुनहू ❀ आनि भांति जिय जनि कछु गुनहू ॥

माताके पास कुछ कहते हुए श्रीरामचन्द्रजीको संकोच लगता है, परन्तु मनमें समय समझकर वे कहने लगे—हे राजकुमारी, मेरी सीख सुनो। हृदयमें किसी दूसरे प्रकार कुछ मत समझना।

आपन मोर नीक जौं चहहू ❀ बचनु हमार मानि गृह रहहू ॥
आयसु मोर सासुसेवकाई ❀ सबबिधि भामिनि भवन भलाई ॥

यदि अपना और मेरा भला चाहती हो तो मेरी आज्ञा मानकर घर रहो। हे भामिनि, घर रहनेमें मेरी आज्ञाका पालन, सासुकी सेवा और सब तरहकी भलाई है।

एहि तें अधिक धरमु नहिं दूजा ❀ सादर सासु-ससुर-पद-पूजा ॥
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी ❀ होइहि प्रेमबिकल मतिभोरी ॥

आदरपूर्वक सासु और ससुरके चरणोंकी पूजा करना, इससे बढ़कर दूसरा धर्म नहीं है। माता जब-जब मेरी याद करेंगी और वे भोली बुद्धिवाली होनेके कारण प्रेमसे व्याकुल हो जायंगी,

तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी ❀ सुंदरि समुझायेहु मृदुबानी ॥
कहउं सुभाव सपथ सत मोहीं ❀ सुमुखि मातुहित राखउं तोही ॥

तब तब तुम पुरानी कथाएँ कहकर, हे सुन्दरि, उन्हें मीठी वाणीसे समझाना। मैं स्वभावसे कहता हूं, मुझे सौ सोगंद है। हे सुन्दर मुखवाली सीता, मैं तुम्हें माताकी भलाईके लिये ही छोड़ता हूं।

दो०—गुरु-स्त्रुति-संमत धरमफलु ❀ पाइअ बिनहिं कलेस।
हठबस सब संकट सहे ❀ गालव नहुष नरेस ॥६२॥

गुरु और वेदद्वारा कहे हुए धर्मके फलको बिना किसी प्रकारका क्लेश उठाये हुये ही पा जाओगी। गालव मुनि और नहुष राजाने हठके वशमें होकर सब संकट सहे थे।

मैं पुनि करि प्रमान पितुबानी ❀ बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥
दिवस जात नहिं लागिहि बारा ❀ सुंदरि सिखवनु सुनहु हमारा ॥

हे सुमुखि, हे सयानी, सुनो । मैं पिताजीकी आज्ञाका पालन कर फिर जल्दी ही लौटूंगा । हे सुन्दरी हमारी सीख सुनो, दिन जाते देर नहीं लगेगी ।

जौं हठ करहु प्रेमबस बामा ❀ तौ तुम्ह दुखु पाउब परिनामा ॥
काननु कठिन भयंकरु भारी ❀ घोर घाम हिम बारि बयारी ॥

हे वामा, यदि प्रेमके वशमें होकर हठ करोगी तो उसके परिणाममें तुम्हें दुःख ही मिलेगा । वन बड़ा कठोर और डरावना होता है । धूप, वर्षा, शीत और वायु वहां बड़ी भयङ्कर होती है ।

कुस कंटक मग काँकर नाना ❀ चलब पयादेहिं बिनु पदत्राना ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे ❀ मारग अगम भूमिधर भारे ॥

मार्गमें कुश, कांटे और तरह-तरहके कंकड़ रहते हैं जिनपर जूते बिना पैदल ही चलना होगा । तुम्हारे कमल जैसे चरण कोमल और सुन्दर हैं और मार्गमें अगम्य भारी पर्वत हैं ।

कंदर खोह नदीं नद नारे ❀ अगम अगाध न जाहिं निहारे ॥
भालु बाघ बृक केहरि नागा ❀ करहिं नाद सुनि धीरजु भागा ॥

गुफाएँ, खोह, नदियां, नद और नाले—सब ऐसे अगम्य और अथाह हैं कि उनकी ओर देखा भी नहीं जाता । रीछ, बाघ, भेड़िया, सिंह और हाथी—सब ऐसे शब्द करते हैं कि सुनकर धीरज भी भाग जाता है ।

दो०—भूमिसयन बलकलबसन ❀ असनु कंद - फलु - मूल ।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं ❀ सबुइ समय अनुकूल ॥ ६२ ॥

पृथिवीपर सोना, पेड़की छालसे शरीर ढकना और कन्द-मूल-फल खाना—वे भी क्या सदा रोज-रोज मिलते हैं ? जैसा समय होता है उसीके अनुकूल मिलते हैं ।

नरअहार रजनीचर चरहीं ❀ कपटबेष बिधि कोटिक करहीं ॥
लागइ अति पहार कर पानी ❀ बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी ॥

वहां मनुष्यभक्षी राक्षस फिरते हैं, जो कपटसे करोड़ों तरहके भेष रख लेते हैं । पहाड़का पानी बहुत लगता है । वनके दुःख वर्णन नहीं किये जाते ।

ब्याल कराल बिहंग बन घोरा ❀ निसि-चर-निकर नारि-नर-चोरा ॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आये ❀ मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाये ॥

घना वन; भयंकर सर्प और पक्षी; स्त्रियों और पुरुषोंको चुरा ले जानेवाले राक्षस—इन सबकी याद आने पर अत्यन्त धीर मनुष्य भी डर जाते हैं, फिर हे हिरन जैसे नेत्रवाली सीताजी; तुम तो स्वभावसे ही डरपोक हो।

हंसगवनि तुम्ह नहिं बनजोगू ॥ सुनि अपजसु मोहिं देइहि लोगू ॥
मानस-सलिल-सुधा प्रतिपाली ॥ जिअइ कि लवन पयोधि मराली ॥

हे हंसके समान मन्द गतिसे चलनेवाली सीताजी, तुम वन जाने योग्य नहीं हो। सुनकर लोग मुझे अपयश देंगे। मानसरोवरके जलरूपी अमृतसे पली हुई हंसिनी क्या खारी समुद्रमें जीवित रह सकती है?

नव-रसाल-बन बिहरन सीला ॥ सोह कि कोकिल बिपिन करीला ॥
रहहु भवन अस हृदय बिचारी ॥ चंदबदनि दुखु कानन भारी ॥

नये आमोंके वनमें विहार करनेवाली कोयल क्या करीलके वनमें शोभा पा सकती है? ऐसा हृदयमें विचारकर घरपर ही रहो। हे चन्द्रमुखी, वनमें बहुत दुःख हैं।

दो०—सहज सुहृद-गुर-स्वामि-सिख ॥ जो न करइ सिर मानि।
सो पछिताइ अघाइ उर ॥ अवसि होइ हितहानि ॥ ६४ ॥

जो अपने मित्र, गुरु और स्वामीकी सीखको स्वभावसे ही शिरोधार्य कर नहीं मानता वह पीछे मनमें खूब पछताता है। उसके हितकी हानि भी अवश्य ही होती है।

सुनि मृदुबचन मनोहर पियके ॥ लोचन ललित भरे जल सिय के ॥
सीतलसिख दाहक भइ कैसे ॥ चकइहि सरदचंद निसि जैसे ॥

पतिके मनोहर मीठे वचन सुनकर सीताजीके सुन्दर नेत्रोंमें आंसू भर आये। श्रीरामचन्द्रजीकी शीतल सीख उन्हें वैसी ही जलानेवाली हुई जैसी चकईको शरदऋतुकी पूर्ण चन्द्रमावाली रात।

उतर न आव बिकल बैदेही ॥ तजन चहत सुचि स्वामि सनेही ॥
बरबस रोकि बिलोचनबारी ॥ धरि धीरजु उर अवनिकुमारी ॥

सीताजीसे कुछ बोलते न बना। वे यह जानकर व्याकुल हो गयीं कि पवित्र प्रेमी मेरे स्वामी मुझे छोड़ जाना चाहते हैं। नेत्रोंके आंसुओंको जबर्दस्ती रोककर और अपने हृदयमें धीरज रखकर सीताजी—

लागि सासुपग कह कर जोरी ॥ छमबि देबि बड़ि अबिनय मोरी ॥
दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई ॥ जेहि बिधि मोर परमहित होई ॥
मैं पुनि समुझि दीखि मनमाहीं ॥ पिय-बियोग सम दुख जग नाहीं ॥

सासुके चरणोंसे लिपटकर और हाथ जोड़कर कहने लगीं कि हे देवि, मेरी बड़ी भारी ढिठाईको क्षमा

करना-प्राणनाथने मुझे वही सीख दी है, जिससे मेरा परम कल्याण हो, परन्तु मैंने फिर मनमें समझ देखा है कि पतिके वियोगके समान दूसरा दुःख संसारमें नहीं है।

दो०—प्राननाथ करुनायतन ❀ सुंदर सुखद सुजान।
तुम्ह बिनु रघु-कुल-कुमुद-बिधु ❀ सुरपुर नरकसमान ॥६५॥

हे प्राणनाथ, हे दयानिधान, हे सुजान, हे सुन्दर सुख देनेवाले, हे रघुवंशरूपी कुमुदके लिये चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी, आपके विना स्वर्ग भी नरकके समान है।

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई ❀ प्रियपरिवार सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सहाई ❀ सुत सुंदर सुसील सुखदाई ॥

मात, पिता, बहिन, प्यारा भाई, प्यारा परिवार, मित्रोंका समूह, सासु, ससुर, गुरु, सम्बन्धी, सहायक और सुन्दर, सुशील तथा सुखदेनेवाले पुत्र,

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते ❀ पिय बिनु तियहि तरनिहु ते ताते ॥
तन धन धाम धरनि पुरराजू ❀ पतिबिहीन सब सोकसमाजू ॥

हे नाथ, जहांतक स्नेह और संबंध हैं, वे सब स्त्रीको पतिके विना सूर्यसे भी अधिक तपानेवाले हैं। तन, धन, घर, पृथिवी, नगर और राज्य—यह सब पति न होनेपर शोकका समाज है।

भोग रोगसम भूषन भारू ❀ जम - जातना - सरिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं ❀ मो कहँ सुखद कतहुँ कछु नाहीं ॥

अनेक प्रकारके भोग रोगके समान और भूषण बोझके समान हैं। संसार यमराजकी यातनाके समान है हे प्राणनाथ, आपके विना संसारमें मुझे सुख देनेवाला कहीं कुछ भी नहीं है।

जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी ❀ तइसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकलसुख साथ तुम्हारे ❀ सरद-बिमल-बिधु-बदन निहारे ॥

हे नाथ, पुरुषके विना स्त्री वैसी ही है जैसी प्राणके बिना देह और जलके विना नदी। हे नाथ, शरद ऋतुके निर्मल चन्द्रमाके समान आपका मुख देखकर आपके साथ मुझे सब सुख मिलेंगे।

दो०—खग मृग परिजन नगर बन ❀ बलकल बिमल दुकूल।
नाथसाथ सुर-सदन-सम ❀ परनसाल सुखमूल ॥६६॥

आपके साथमें वन नगर होगा, पशु और पक्षी कुटुम्बी होंगे, छाल ही उज्ज्वल वस्त्र होंगे और पत्तोंकी झोपड़ी देवताओंके भवनके समान सुखकी मूल होगी।

बनदेवी बनदेव उदारा ❀ करिहहिं सासु-ससुर-सम-सारा ॥
कुस-किसलय-साथरी सुहाई ❀ प्रभुसंग मंजु मनोजतुराई ॥

वनके उदार देवता और देवियाँ सासु और ससुरके समान शुद्ध व्यवहार करेंगी । स्वामीके साथ कुश और कोमल पत्तोंकी सुन्दर बिछौनी कामदेवकी तोशकके समान सुन्दर होगी ।

कंद मूल फल अमिअ अहारू ❀ अवध-सौध-सत-सरिस पहारू ॥
छिनुछिनु प्रभु-पद-कमल बिलोकी ❀ रहिहउँ मुदित दिवस जिमि कोकी ॥

कंद, मूल और फलोंका भोजन अमृतके समान होगा । अयोध्याके सौ राजमहलोंके समान पहाड़ होंगे । स्वामीके चरणकमलोंको एक-एक क्षण पीछे देख-देखकर मैं चकईकी भाँति दिनभर प्रसन्न रहूँगी ।

बनदुख नाथ कहे बहुतेरे ❀ भय बिषाद परिताप घनेरे ॥
प्रभु-बियोग-लव - लेस समाना ❀ सब मिलि होहिं न कृपानिधाना ॥

हे नाथ, आपने वनके बहुतेरे दुःख और अगणित भय, शोक और सन्ताप बतलाये हैं; परन्तु हे कृपानिधान, ये सब मिलकर स्वामीके वियोगसे होनेवाले दुःखके लवलेशके बराबर भी नहीं हो सकते ।

अस जिय जानि सुजान सिरोमनि ❀ लेइय संग मोहि छाड़िअ जनि ॥
बिनती बहुत करउँ का स्वामी ❀ करुनामय उर - अंतर-जामी ॥

हे सुजान शिरोमणि, ऐसा जीमें जानकर मुझे संग ले चलिये, छोड़िये नहीं । हे स्वामी, अधिक विनती क्या करूँ ? हे दयामय, आप हृदयके भीतरकी बातोंको जाननेवाले हैं ।

दो०-राखिअ अवध जो अवधि लगि ❀ रहत जानि अहि प्रान ।
दीनबंधु सुंदर सुखद ❀ सील - सनेह - निधान ॥६७॥

हे दीनबन्धु, हे शील और स्नेहके भाण्डार, हे सुन्दर सुखदेनेवाले, यदि आप यह समझें कि चौदह वर्षकी अवधि समाप्त होनेतक इसके प्राण बने रहेंगे, तो अयोध्यामें छोड़ जाइये ।

मोहि मग चलत न होइहि हारी ❀ छिनु छिनु चरनसरोज निहारी ॥
सबहि भाँति पिय सेवा करिहउँ ❀ मारगजनित सकल स्रम हरिहउँ ॥

क्षण-क्षणमें आपके चरण कमल देखकर मार्गमें चलनेसे मुझे थकावट न होगी । हे स्वामी, मैं सब प्रकार आपकी सेवा करूँगी और रास्ता चलनेसे जो थकावट होगी वह सब दूर कर दूँगी ।

पाय पखारि बैठि तरुछाहीं ❀ करिहउँ बाउ मुदित मनमाहीं ॥
स्रम-कन-सहित स्याम तनु देखे ❀ कहँ दुखसमउ प्रानपति पेखे ॥

वृक्षकी छायामें बैठकर आपके पैर धोऊंगी और मनमें प्रसन्न होकर हवा करूंगी। पसीनेकी बूंद समेत आपके श्याम शरीरको देखूंगी। प्राणनाथको देख लेनेपर फिर दुःखका अवसर कहां?

सम महि तृन-तरु-पल्लव डासी ❀ पाय पलोटिहि सब निसि दासी ॥
बारबार मृदुमूरति जोही ❀ लागिहि ताति बयारि न मोही ॥

समान भूमिमें तिनकों और वृक्षोंके पत्तोंको बिछाकर यह दासी रातभर चरण दाबती रहेगी। बारबार आपकी सुन्दर मूर्ति देखकर मुझे गरम हवा न लगेगी।

को प्रभुसँग मोहि चितवनिहारा ❀ सिंघबधुहि जिमि ससक सियारा ॥
मैं सुकुमारि नाथ बनजोगू ❀ तुम्हहि उचित तपु मो कहुँ भोगू ॥

स्वामीके सङ्ग होनेपर मेरी ओर देखनेवाला है कौन; जैसे सिंहिनीको सियार और खरगोश नहीं देख सकते? हे स्वामी, मैं सुकुमारी हूं और आप वनके योग्य हैं! आपको तप करना और मुझे भोग भोगना उचित है!

दो०—ऐसेउ बचन कठोर सुनि ❀ जौं न हृदय बिलगान ।
तौ प्रभु-बिषम-बियोग-दुखु ❀ सहिहहिं पावँर प्रान ॥६८॥

ऐसे कठोर वचन सुनकर भी यदि मेरा हृदय नहीं फटा तो स्वामीके वियोगका विषम दुःख भी ये नीच प्राण सह लेंगे।

अस कहि सीय बिकल भइ भारी ❀ बचनबियोगु न सकी संभारी ॥
देखि दसा रघुपति जियँ जाना ❀ हठि राखें नहिं राखिहि प्राना ॥

ऐसा कहकर सीताजी बहुत व्याकुल हुईं। वियोग-संबन्धी वचनोंको वे संभाल नहीं सकीं। उनकी दशा देखकर श्रीरामचन्द्रजीने मनमें जान लिया कि हठपूर्वक रखनेसे यह प्राण नहीं रखेगी।

कहेउ कृपालु भानु-कुल-नाथा ❀ परिहरि सोचु चलहु बन साथा ॥
नहिं बिषाद कर अवसरु आजू ❀ बेगि करहु बन-गवन-समाजू ॥

सूर्यकुलके स्वामी कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि सोच छोड़कर हमारे साथ वनको चलो। आज शोक करनेका अवसर नहीं है। जल्दीसे वनको चलनेकी तैयारी करो।

कहि प्रियबचन प्रिया समुझाई ❀ लगे मातुपद आसिष पाई ॥
बेगि प्रजादुख मेटब आई ❀ जननी निठुर बिसरि जनि जाई ॥

प्रिय वचन कहकर श्रीरामचन्द्रजीने प्रिया सीताको समझाया। फिर वे माताके चरणोंमें पड़ गये और आशीर्वाद पाया। माताने कहा कि जल्दी लौटकर प्रजाका दुःख मिटाना। इस निठुर माताको भुला मत देना।

फिरिहि दसा बिधि बहुरि कि मोरी ❀ देखिहउँ नयन मनोहर जोरी ॥
सुदिन सुघरी तात कब होइहि ❀ जननी जिअत बदनबिधु जोइहि ॥

हे दैव, क्या फिर भी मेरी दशा फिरेगी कि मैं इस मनोहर जोड़ीको नेत्र भरकर देखूँगी ? हे पुत्र वह शुभ दिन और शुभ घड़ी कब होगी जब माता जीवित रहकर तुम्हारा चन्द्रमुख फिर देखेगी ?

दो०—बहुरि बच्छ कहि लाल कहि ❀ रघुपति रघुबर तात ।
कबहिं बोलाइ लगाइ हिय ❀ हरषि निरखिहउँ गात ॥६९॥

हे पुत्र, वत्स, लाल, रघुपति और रघुवर कह-कहकर फिर कब बुलाकर हृदयसे लगाऊँगी और आनन्दित होकर तुम्हारा शरीर देखूँगी ?

लखि सनेह कातरि महतारी ❀ बचन न आव बिकल भइ भारी ॥
राम प्रबोधु कीन्ह बिधि नाना ❀ समउ सनेहु न जाइ बखाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब यह देखा कि स्नेहसे माता कातर हो रही हैं और इतनी अधिक व्याकुल हो गयी हैं कि मुखसे वचन नहीं निकलता, तब उन्होंने अनेक प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजीको समझाया। उस समयका स्नेह कहनेमें नहीं आता ।

तब जानकी सासुपग लागी ❀ सुनिय माय मैं परम अभागी ॥
सेवा समय दैव बनु दीन्हा ❀ मोर मनोरथ सुफल न कीन्हा ॥

तब सीताजी सासुके पैरोंसे लग गयीं और कहा कि हे माता, सुनिये, मैं बड़ी अभागिनी हूँ। दैवने सेवा करनेके समय वन दिया और मेरा मनोरथ सफल नहीं किया।

तजब छोभु जनि छांड़िअ छोहू ❀ करमु कठिन कछु दोषु न मोहू ॥
सुनि सियबचन सासु अकुलानी ❀ दसा कवनि बिधि कहउँ बखानी ॥

आप शोकको दूर कर दीजिये,परन्तु स्नेहको नहीं छोड़िये। कर्मकी गति बड़ी कठोर है। मेरा कुछ भी दोष नहीं है। सीताजीके वचन सुनकर सासु व्याकुल हो गयीं। उनकी दशाको मैं किस प्रकार वर्णन कर कहूँ।

बारहिं बार लाइ उर लीन्ही ❀ धरि धीरज सिख आसिष दीन्ही ॥
अचल होउ अहिवात तुम्हारा ❀ जब लगि गंग-जमुन-जल-धारा ॥

उन्होंने सीताजीको बारबार हृदयसे लगाया और धीरज रखकर सीख और आशिष दी। (बोलीं,) जबतक गङ्गा और जमुनामें जलकी धारा है तबतक तुम्हारा सौभाग्य अचल होवे।

दो०—सीतहि सासु असीस सिख ❀ दीन्हि अनेक प्रकार ।
चली नाइ पदपदुम सिरु ❀ अति हित बारहिं बार ॥ ७० ॥

सीताजीको सासुने अनेक प्रकारकी सीख और आशिष दी। बड़े प्रेमसे बारबार चरणकमलोंको शिर नवाकर सीताजी चलीं।

(लक्ष्मणजीका सहगमन)

समाचार जब लछिमन पाये ❀ ब्याकुल बिलख बदन उठि धाये ॥
कंप पुलक तन नयन सनीरा ❀ गहे चरन अतिप्रेम अधीरा ॥

जब लक्ष्मणजीने ये सब समाचार पाये तब वे व्याकुल होकर उदास मुखसे उठकर दौड़े हुए आये। उनका पुलकायमान शरीर कांप रहा है और नेत्रोंमें जल छाया हुआ है। उन्होंने अत्यन्त प्रेमसे अधीर होकर चरण पकड़ लिये।

कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े ❀ मीनु दीनु जनु जल ते काढ़े ॥
सोच हृदय बिधि का होनिहारा ❀ सब सुख सुकृत सिरान हमारा ॥

लक्ष्मणजी कुछ कह नहीं सकते, खड़े देख रहे हैं; मानों जलसे निकाल लेनेपर मछली दीन हो रही हो। वे अपने हृदयमें सोचने लगे कि हे दैव, होनेवाला क्या है? हमारा सब सुख और पुण्य चुक गया।

मो कहुं काह कहब रघुनाथा ❀ रखिहहिं भवन कि लेइहहिं साथा ॥
राम बिलोकि बंधु करजोरे ❀ देह गेह सब सन तृनु तोरे ॥

श्रीरामचन्द्रजी मुझसे क्या कहेंगे—घर रखेंगे कि साथ ले चलेंगे? श्रीरामचन्द्रजीने हाथ जोड़े हुए भाईको देखा, जिसने शरीर और घर—सबसे नाता तोड़ दिया है।

बोले बचनु राम नयनागर ❀ सील-सनेह-सरल-सुख-सागर ॥
तात प्रेमबस जनि कदराहू ❀ समुझि हृदय परिनाम उछाहू ॥

तब नीतिकुशल और स्नेह, शील, सरलता और सुखके समुद्र श्रीरामचन्द्रजी यह वचन बोले कि हे भाई, तुम प्रेमके वशमें होकर और अपने हृदयमें परिणामके आनन्दको समझकर कातर मत बनो।

दो०—मातु-पिता-गुरु-स्वामि-सिख ❀ सिर धरि करहिं सुभाय।
लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर ❀ नतरु जनमु जग जाय ॥७१॥

माता, पिता, गुरु और स्वामीकी सीखको स्वभावसे ही शिरोधार्य कर जो लोग मानते हैं उन्होंने अपने जन्म लेनेका लाभ पा लिया; नहीं तो संसारमें जन्म व्यर्थ ही जाता है।

अस जिय जानि सुनहु सिख भाई ❀ करहु मातु-पितु-पद-सेवकाई ॥
भवन भरत रिपुसूदनु नाहीं ❀ राउ बृद्ध मम दुखु मन माहीं ॥

हे भाई, ऐसा मनमें जानकर सीख सुनो और माता-पिताके चरणोंकी सेवा करो। भरत और शत्रुघ्न घरपर नहीं हैं, राजा वृद्ध हैं और उनके मनको मेरे वन जानेका दुःख है।

मैं बन जाउँ तुम्हहिं लेइ साथा ❀ होइ सबहि बिधि अवध अनाथा ॥
गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू ❀ सब कहुँ परइ दुसह-दुख-भारू ॥

यदि तुम्हें साथ लेकर मैं वन जाऊँ तो अयोध्या सभी तरहसे अनाथ हो जायगी। गुरु, पिता, माता, प्रजा और परिवार—सबपर कठिन दुःखका भार आ पड़ेगा।

रहहु करहु सब कर परितोषू ❀ नतरु तात होइहि बड़ दोषू ॥
जासु राज प्रियप्रजा दुखारी ❀ सो नृपु अवसि नरकअधिकारी ॥

इसलिये तुम रहो और सबको संतुष्ट करो, नहीं तो हे भाई, बड़ा दोष होगा। जिसके राज्यमें प्यारी प्रजा दुःखी रहती है, वह राजा अवश्य ही नरक पानेका अधिकारी होता है।

रहहु तात असि नीति बिचारी ❀ सुनत लषन भये ब्याकुल भारी ॥
सिअरे बचन सूखि गये कैसे ❀ परसत तुहिन तामरसु जैसे ॥

ऐसी नीतिको विचारकर हे भाई, यहीं रहो। यह सुनते ही लक्ष्मणजी बहुत व्याकुल हुए। श्रीरामचन्द्रजीके शीतल वचनोंसे वे उसी प्रकार सूख गये जैसे पाला पड़ते ही कमल सूख जाते हैं।

दो०—उतरु न आवत प्रेमबस ❀ गहे चरन अकुलाइ।
नाथ दासु मैं स्वामि तुम्ह ❀ तजहु त कहा बसाइ ॥ ७२ ॥

लक्ष्मणजीको उत्तर नहीं देते बनता। उन्होंने प्रेमके वश व्याकुल होकर श्रीरामचन्द्रजीके चरण पकड़ लिये और कहा कि हे नाथ, मैं आपका दास हूँ और आप मेरे स्वामी हैं। यदि आप छोड़ें तो क्या वश चलता है?

दीन्हि मोहि सिख नीकि गोसाईं ❀ लागि अगम अपनी कदराईं ॥
नरवर धीर धरम-धुर-धारी ❀ निगम नीति कहुँ ते अधिकारी ॥

हे स्वामिन्, आपने मुझे सीख तो अच्छी दी है, पर अपनी कायरताके कारण वह मुझे अगम्य मालूम हो रही है। जो मनुष्य श्रेष्ठ, धीर और धर्मधुरंधर होते हैं वही शास्त्र और नीतिके अधिकारी होते हैं।

मैं सिसु प्रभु-सनेह-प्रतिपाला ❀ मंदर मेरु कि लेहिं मराला।
गुरु पितु मातु न जानउँ काहू ❀ कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू ॥

मैं तो स्वामीके स्नेहसे पला हुआ बालक हूँ। हंस क्या मंदराचल या मेरु पर्वतको उठा सकते हैं? हे नाथ, मैं स्वभावसे ही कह रहा हूँ, आप विश्वास कीजिये, कि मैं गुरु, पिता और माता—किसीको भी नहीं जानता।

जहँ लगि जगत सनेह सगाई ❀ प्रीति प्रतीति निगम निजु गाई ॥
मोरे सबहि एक तुम्ह स्वामी ❀ दीनबंधु उर-अंतर-जामी ॥

जहांतक संसारमें प्रेम और सम्बन्ध हैं, शास्त्रने बतलाया है कि वे सब अपनी प्रीति और विश्वासपर हैं। हे स्वामी, हे दीनबन्धु, हे हृदयके भीतरके भावोंको जाननेवाले, मेरे सब कुछ एक आप हैं।

धरम नीति उपदेसिअ ताही ❀ कीरति-भूति-सुगति-प्रिय जाही ॥
मन-क्रम-बचन चरनरत होई ❀ कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई ॥

धर्म और नीतिका उपदेश उसे देना चाहिये जिसे कीर्ति, ऐश्वर्य, और सद्गति प्यारी हो। हे कृपाके समुद्र! जो मन, वाणी और कर्मसे चरणोंमें अनुरक्त हो, उसे क्या चरणोंको छोड़ना चाहिये?

दो०—करुनासिंधु सुबंधु के ❀ सुनि मृदुबचन बिनीत।
समुझाये उर लाइ प्रभु ❀ जानि सनेह सभीत ॥७२॥

सुन्दर भाईके कोमल दीन वचन सुनकर और स्नेहसे डरा हुआ समझकर दयासागर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें हृदयसे लगाकर समझाया।

मांगहु बिदा मातु सन जाई ❀ आवहु बेगि चलहु बन भाई ॥
मुदित भये सुनि रघुबर बानी ❀ भयउ लाभ बड़ गइ बड़ि हानी ॥

हे भाई, जाकर मातासे विदा मांगो और जल्दी आकर वनको चलो। श्रीरामचन्द्रजीकी यह वाणी सुनकर लक्ष्मणजी प्रसन्न हुए। उन्हें बड़ा लाभ हुआ और भारी हानि दूर हो गयी।

हरषित हृदय मातु पहिं आये ❀ मनहुं अंध फिरि लोचन पाये ॥
जाइ जननि पग नायउ माथा ❀ मनु रघुनंदन-जानकि-साथा ॥

हृदयमें प्रसन्न होकर वे माताके पास आये, मानों अन्धेने फिर नेत्र पा लिये हों। जाकर उन्होंने माताके चरणोंमें मस्तक नवाया, परन्तु उनका मन श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके साथ था।

पूछे मातु मलिन मनु देखी ❀ लखन कहा सब कथा बिसेखी ॥
गई सहमि सुनि बचन कठोरा ❀ मृगी देखि दव जनु चहुँ ओरा ॥

मनमलीन देखकर जब माताने पूछा तब लक्ष्मणजीने सब कथाको विस्तारपूर्वक कह सुनाया। माता सुमित्रा लक्ष्मणजीके कठोर वचन सुनकर डर गयीं; जैसे चारों ओर वनकी आग देखकर हिरनी डर जाती है।

लखन लखेउ भा अनरथु आजू ❀ एहि सनेह बस करब अकाजू ॥
माँगत बिदा सभय सकुचाहीं ❀ जाइ संग बिधि कहिहि कि नाहीं ॥

लक्ष्मणजीने देखा कि आज अनर्थ हुआ। इस प्रेमके वशमें होकर ये काम बिगाड़ डालेंगी। लक्ष्मणजीको भय हो रहा है और विदा मांगते हुए वे सकुचाते हैं कि हे दैव, संग जानेको वे कह देंगी या नहीं।

दो०—समुझि सुमित्रा राम-सिय ❀ रूप - सुसीलु - सुभाउ।
नृपसनेहु लखि धुनेउ सिर ❀ पापिनि दीन्ह कुदाउ॥७४॥

श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके रूप, सुन्दर शील और स्वभावको समझकर और राजाका प्रेम देखकर सुमित्राने अपना शिर धुन लिया और कहा कि पापिनी कैकेयीने बड़ा बुरा घात किया।

धीरज धरेउ कुअवसर जानी ❀ सहज सुहृद बोली मृदुबानी॥
तात तुम्हारि मातु बैदेही ❀ पिता रामु सब भांति सनेही॥

कुसमय समझकर उन्होंने धीरज रखा और स्वभावसे ही हित करनेवाली कोमल वाणीसे वे कहने लगीं कि हे पुत्र, तुम्हारी माता सीताजी हैं और पिता श्रीरामचन्द्रजी जो सब प्रकार तुमसे प्रेम करते हैं।

अवध तहां जहं रामनिवासू ❀ तहइं दिवस जहं भानुप्रकासू॥
जौं पै सीय रामु बन जाहीं ❀ अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं॥

अयोध्या वहीं है जहां श्रीरामचन्द्रजीका निवास हो। दिन वहीं है जहां सूर्यका प्रकाश हो। यदि सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी वनको जाते हैं तो अयोध्यामें रहनेका तुम्हारा कुछ भी काम नहीं है।

गुरु पितु मातु बंधु सुर साईं ❀ सेइअहि सकल प्रान की नाईं॥
राम प्रानप्रिय जीवनु जी के ❀ स्वारथरहित सखा सबही के॥

गुरु, पिता, माता, भाई, देवता और स्वामी—सबकी सेवा अपने प्राणोंकी भांति करनी चाहिये। श्रीरामचन्द्रजी सभीके प्राणप्यारे, स्वार्थरहित मित्र और प्राणोंके भी प्राण हैं।

पूजनीय प्रिय परम जहां ते ❀ सब मानिअहि राम के नाते॥
अस जियं जानि संग बनु जाहू ❀ लेहु तात जग जीवनलाहू॥

जहांतक पूज्य और अत्यन्त प्यारे हैं उन सबको श्रीरामचन्द्रजीके सम्बन्धसे मानना चाहिये। ऐसा अपने हृदयमें जानकर उनके साथ वनको जाओ और हे पुत्र, संसारमें जन्म लेनेका लाभ उठाओ।

दो०—भूरि भागभाजन भयेहु ❀ मोहि समेत बलि जाउं।
जौं तुम्हरे मनु छाड़ि छलु ❀ कीन्ह रामपद ठाउं॥७५॥

मैं बलैया लेती हूं। यदि तुम्हारे मनने छल छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें ठिकाना किया है तो तुम मुझ समेत बड़भागी हुए।

पुत्रवती जुबती जग सोई ❀ रघुपति भगतु जासु सुत होई ॥
नतरु बाँझ भलि बादि बिआनी ❀ रामबिमुख सुत तें हित हानी ॥

संसारमें वही स्त्री पुत्रवती है जिसका पुत्र श्रीरामचन्द्रजीका भक्त हो, नहीं तो वह बाँझ ही अच्छी; क्योंकि उसका प्रसव करना ही व्यर्थ है। श्रीरामचन्द्रजीके विमुख पुत्रसे हितकी हानि होती है।

तुम्हरेहि भाग राम बन जाहीं ❀ दूसर हेतु तात कछु नाहीं ॥
सकल सुकृत कर बड़ फलु एहू ❀ राम-सीय-पद सहज सनेहू ॥

हे पुत्र, तुम्हारे ही भाग्यसे श्रीरामचन्द्रजी वनको जा रहे हैं और दूसरा कारण कुछ भी नहीं है। सब पुण्योंका सबसे बड़ा फल यही है कि श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके चरणोंमें स्वभावसे ही प्रेम हो।

राग रोष इरिषा मदु मोहू ❀ जनि सपनेहुँ इनके बस होहू ॥
सकलप्रकार बिकार बिहाई ❀ मन क्रम बचन करेहु सेवकाई ॥

प्रेम, क्रोध, ईर्षा, मद और मोह—इनके वशमें स्वप्नमें भी मत होना। सब प्रकारके विकारोंको दूरकर मन, वाणी और कर्मसे सेवा करना।

तुम्ह कहुँ बन सब भाँतिसुपासू ❀ संग पितु मातु राम सिय जासू ॥
जेहि न रामु बन लहहिं कलेसू ❀ सुत सोइ करेहु इहइ उपदेसू ॥

सब प्रकारकी सुविधा वनमें तुम्हारे लिये है, जिनके संगमें पिता-माता श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी हैं। हे पुत्र, मेरा यही उपदेश है कि तुम वही करना जिसमें श्रीरामचन्द्रजी वनमें क्लेश न पावें।

छं०—उपदेसु यहु जेहि तात तुम्हरे रामसिय सुख पावहीं।
पितु मातु प्रिय परिवारु पुर सुख सुरति बन बिसरावहीं ॥
तुलसी सुतहि सिख देइ आयसु दीन्ह पुनि आसिष दई।
रति होउ अबिरल अमल सिय-रघु-बीर-पद नितनित नई ॥

यही उपदेश है जिससे तुम्हारे भरसक श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी सुख पावें, और वनमें पिता, माता, प्यारे परिवार, नगर और सुखकी याद भूल जावें। तुलसीदासजी कहते हैं कि माता सुमित्राने पुत्र लक्ष्मणको सीख देकर आज्ञा दी और फिर आशीर्वाद दिया कि श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके चरणोंमें तुम्हारा सघन प्रेम नित्य नया होवे।

सो०—मातु चरन सिरु नाय ❀ चले तुरत संकित हृदय।
बागुर बिषम तोराइ ❀ मनहुँ भाग मृगु भागबस ॥ ७६ ॥

माताके चरणोंको शिर नवाकर, मनमें डरते हुए, लक्ष्मणजी तुरन्त चल दिये, मानों, कठिन जालको भाग्यवश तुड़ाकर हिरन भाग चला हो।

गये लषन जहं जानकिनाथू ❀ भे मनु मुदित पाइ प्रिय साथू॥
बंदि राम-सिय-चरन सुहाये ❀ चले संग नृपमंदिर आये॥

अपना प्यारा साथ पाकर लक्ष्मणजी मनमें प्रसन्न हुए और वहां गये जहां सीताजीके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी थे। श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके सुन्दर चरणोंकी वन्दना कर वे साथ चले और राजा दशरथके महलमें आये।

कहहिं परसपर पुर-नर-नारी ❀ भलि बनाइ बिधि बात बिगारी॥
तन कृस मनु दुखु बदन मलीने ❀ बिकल मनहु माखी मधु छीने॥

नगरके स्त्री और पुरुष सब परस्पर कहते हैं कि दैवने अच्छी बातको बनाकर बिगाड़ दिया। सबके शरीर दुर्बल हो गये, मनमें दुःख और मुख मलीन हो गये। शहद छिन जानेपर जैसे मक्खी व्याकुल होती है वैसे ही सब व्याकुल हो गये।

कर मीजहिं सिरु धुनि पछिताहीं ❀ जनु बिनु पंख बिहग अकुलाहीं॥
भइ बड़ि भीर भूप दरबारा ❀ बरनि न जाइ बिषाद अपारा॥

सब हाथ मलते और शिर धुनकर पछताते हैं, मानों पंखोंके बिना पक्षी व्याकुल हो रहे हों। राजाके दरबारमें बड़ी भारी भीड़ हो गयी। अपार दुःखका वर्णन नहीं किया जा सकता।

सचिव उठाइ राउ बैठारे ❀ कहि प्रियबचन राम पगु धारे॥
सियसमेत दोउ तनय निहारी ❀ ब्याकुल भयउ भूमिपति भारी॥

यह प्रिय वचन कहकर मंत्रीने राजाको उठाकर बतलाया कि श्रीरामचन्द्रजी आ गये। सीता समेत दोनों पुत्रोंको देखकर राजा अत्यन्त व्याकुल हुए।

दो०—सीयसहित सुत सुभग दोउ ❀ देखि देखि अकुलाइ।
बारहिं बार सनेहबस ❀ राउ लेइ उर लाइ॥७७॥

सीता समेत दोनों सुन्दर पुत्रोंको देख-देखकर व्याकुल हो राजा प्रेमवश उन्हें बार बार हृदयसे लगाने लगे।

सकइ न बोलि बिकल नरनाहू ❀ सोकजनित उर दारुन दाहू॥
नाइ सीस पद अतिअनुरागा ❀ उठि रघुबीर बिदा तब मांगा॥

राजा व्याकुल हो रहे हैं, शोकसे उनके हृदयमें कठोर दाह उत्पन्न हो गया है, वे बोल नहीं सकते। तब श्रीरामचन्द्रजीने उठकर बड़े प्रेमसे उनके चरणोंमें शिर नवाकर बिदा मांगी।

पितु असीस आयसु मोहि दीजै ❀ हरषसमय बिसमउ कत कीजै ॥
तात किये प्रिय प्रेमप्रमादू ❀ जस जग जाइ होइ अपबादू ॥

हे पिताजी, मुझे आशीर्वाद और आज्ञा दीजिये। आनन्दके समय आप दुःख क्यों कर रहे हैं? हे पिता इस समय अपने प्यारोंसे प्रेम करना प्रमाद ही होगा, क्योंकि उससे संसारमें यश नष्ट हो जायगा और निन्दा होगी।

सुनि सनेहबस उठि नरनाहाँ ❀ बैठारे रघुपति गहि बाहां ॥
सुनहु तात तुम्ह कहुं मुनि कहहीं ❀ रामु चराचरनायकु अहहीं ॥

यह सुन प्रेमवश उठकर राजाने श्रीरामचंद्रजीको बांह पकड़कर बिठलाया और कहा कि हे पुत्र, सुनो। तुम्हारे लिये मुनिजन कहते हैं कि श्री श्रीरामचन्द्रजी चराचरके स्वामी हैं।

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी ❀ ईसु देइ फलु हृदय बिचारी ॥
करइ जो करमु पाव फलु सोई ❀ निगम नीति असि कह सबु कोई ॥

शुभ और अशुभ कर्मोंके अनुसार ईश्वर हृदयमें विचारकर फल देते हैं। जो कर्म करता है वही फल पाता है। यही शास्त्रकी नीति है और यही सब कोई कहता है।

दो०—औरु करइ अपराध कोउ ❀ और पाव फलु भोगु।
अतिबिचित्र भगवंतगति ❀ को जग जानइ जोगु ॥७८॥

परन्तु कोई और तो अपराध करे और उसके फलका भोग कोई दूसरा ही भोगे—भगवानकी यह गति बड़ी विचित्र है। संसारमें इसे जाननेयोग्य कौन है?

राय रामराखन हित लागी ❀ बहुत उपाय किये छलु त्यागी ॥
लखी रामरुख रहत न जाने ❀ धरम-धुरंधर धीर सयाने ॥

श्रीरामचन्द्रजीको रख लेनेके लिये राजाने छल छोड़कर बहुतसे उपाय किये। परन्तु रुख देखकर उन्होंने जान लिया कि धर्मधुरंधर, धीर और चतुर श्रीरामचन्द्रजी नहीं रहेंगे।

तब नृप सीय लाइ उर लीन्ही ❀ अतिहित बहुत भांति सिख दीन्ही ॥
कहि बन के दुख दुसह सुनाये ❀ सासु ससुर पितु सुख समुझाये ॥

तब राजाने सीताजीको हृदयसे लगा लिया और बड़े प्रेमसे अनेक प्रकारकी सीख दी। उन्होंने सीताजीको वनके दुस्सह दुःख कह सुनाये और सासु-ससुर और पिताके सुखोंको समझाया।

सियमन रामचरन अनुरागा ❀ घरु न सुगमु बनु बिषमु न लागा ॥
औरउ सबहि सीय समुझाई ❀ कहि कहि बिपिन बिपति अधिकाई ॥

मनमें श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेम होनेसे सीताजीको न तो घरका रहना सहज मालूम हुआ और न वनवास कठिन। वनके कष्टोंको विस्तारपूर्वक कह-कहकर और सब लोगोंने भी सीताजीको समझाया।

सचिवनारि गुरनारि सयानी ❀ सहित सनेह कहहिं मृदुबानी ॥
तुम्ह कहुँ तौ न दीन्ह बनबासू ❀ करहु जो कहहिं ससुर-गुरु-सासू ॥

मंत्रीकी स्त्री और चतुर गुरुआनी प्रेमके साथ मीठी वाणीसे कहने लगीं, कि तुमको तो वनवास दिया नहीं है। तुम वही करो जो सासु, ससुर और गुरु कहते हैं।

दो०—सिख सीतल हित मधुर मृदु ❀ सुनि सीतहि न सोहानि।
सरद-चंद-चंदिनि लगत ❀ जनु चकई अकुलानि ॥७९॥

यह कोमल, मीठी, हितकारी और शीतल सीख सुनकर सीताजीको अच्छी नहीं लगी। वे ऐसी व्याकुल हो गयीं; जैसी शरद ऋतुके चन्द्रमाकी चाँदनी लगते ही चकई।

सीय सकुचबस उतरु न देई ❀ सो सुनि तमकि उठी कैकेयी ॥
मुनि-पट-भूषन भाजन आनी ❀ आगे धरि बोली मृदुबानी ॥

संकोचके वश होकर सीताजी कुछ उत्तर नहीं देती हैं। वह सीख सुनकर कैकेयी लाल हो उठी। मुनियोंके कपड़े, गहने और बर्तन लाकर उसने आगे रख दिये और कोमल वाणीसे कहने लगी।

नृपहिं प्रानप्रिय तुम्ह रघुबीरा ❀ सील सनेह न छाड़िहि भीरा ॥
सुकृतु सुजसु परलोकु नसाऊ ❀ तुम्हहिं जान बन कहिहि न काऊ ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, राजाको तुम प्राणोंके समान प्यारे हो। वे तुम्हारा शील और स्नेह नहीं छोड़ना चाहते, इसीलिये वे संकटमें हैं। पुण्य, सुकीर्ति और परलोक भले ही नष्ट हो जावे, पर वे तुम्हें वन जानेके लिये कभी न कहेंगे।

अस बिचारि सोइ करहु जो भावा ❀ राम जननिसिख सुनि सुखु पावा ॥
भूपहिं बचन बानसम लागे ❀ करहिं न प्रान पयान अभागे ॥

ऐसा विचारकर जो अच्छा लगे वही करो। माताकी सीख सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने सुख पाया, परन्तु राजाको ये वचन बाणके समान चुभे। उन्होंने कहा कि ये अभागे प्राण अब भी नहीं निकलते।

लोग बिकल मुरछित नरनाहू ❀ काह करिय कछु सूझ न काहू ॥
राम तुरत मुनिबेष बनाई ❀ चले जनक जननिहिं सिरु नाई ॥

लोग व्याकुल हो रहे हैं और राजा मूर्च्छित। किसीको कुछ नहीं सूझता कि क्या करना चाहिये। इसी समय तुरन्त मुनियों जैसा भेष बनाकर और पिता एवं माताको शिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजी चल दिये।

दो०—सजिबन-साजु-समाजु सबु ❁ बनिता - बंधु - समेत।
बंदि बिप्र गुर-चरन प्रभु ❁ चले करि सबहि अचेत ॥८०॥

स्त्री और भाई-समेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी वनका सब सामान सजाकर, तैयार हो, ब्राह्मणों और गुरुजनोंके चरणोंकी वंदना कर और सभीको अचेत कर चल दिये।

(वन-यात्रा)

निकसि बसिष्ठद्वार भये ठाढ़े ❁ देखे लोग बिरहदव दाढ़े ॥
कहि प्रियवचन सकल समुझाये ❁ बिप्रबृंद रघुबीर बोलाये ॥

राजद्वारसे निकलकर वे वशिष्ठजीके द्वारपर खड़े हुए। उन्होंने देखा कि लोग विरहरूपी दावानलमें जल रहे हैं। प्यारे वचन कहकर श्रीरामचन्द्रजीने सबको समझाया और फिर ब्राह्मणोंको बुलाया।

गुरु सन कहि बरषासन दीन्हे ❁ आदर दान बिनयबस कीन्हे ॥
जाचक दान मान संतोषे ❁ मीत पुनीत प्रेम परितोषे ॥

गुरुसे कहकर उन्हें वर्षभरके लिये भोजन दिया और आदर, दान एवं विनतीसे उन्हें प्रसन्न किया। मांगनेवालोंको दान और मानसे संतोष दिलाया और मित्रोंको पवित्र प्रेमसे सन्तुष्ट किया।

दासी दास बोलाइ बहोरी ❁ गुरहिं सौंपि बोले कर जोरी ॥
सब कै सार संभार गोसाईं ❁ करबि जनक जननी की नाईं ॥

फिर दास-दासियोंको बुलाकर और उन्हें गुरुको सौंपकर श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोड़कर बोले कि हे स्वामिन्; आप इन सबकी देखभाल माता-पिताकी भांति करना।

बारहिं बार जोरि जुगपानी ❁ कहत राम सब सन मृदुबानी ॥
सोइ सब भांति मोर हितकारी ❁ जेहिं तें रहइ भुआल सुखारी ॥

दोनों हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजी मीठी वाणीसे सबसे वारवार कहने लगे कि मेरा सब प्रकार हित करनेवाला वही है, जिससे राजा सुखी रहें।

दो०—मातु सकल मोरे बिरह ❁ न होहिं दुख दीन।
सोइ उपाय तुम्ह करेहु सब ❁ पुरजन परम प्रबीन ॥८१॥

हे अत्यन्त चतुर नगरवासियो, तुम सब वही उपाय करना, जिससे सब माताएं मेरे विरहमें दीन और दुःखी न होवें।

एहि बिधि राम सबहिं समुझावा ❁ गुरु-पद-पदुम हरषि सिरु नावा ॥
गनपति गौरि गिरीस मनाई ❁ चले असीस पाइ रघुराई ॥

इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीने सबको समझाया और प्रसन्न होकर गुरुके चरणकमलोंको शिर नवाया। श्रीरामचन्द्रजी गणेश, गौरी और महादेवजीको मनाकर तथा आशीर्वाद पाकर चल दिये।

रामु चलत अति भयेउ बिषादू ❀ सुनि न जाइ पुर आरतनादू॥
कुसगुन लंक अवध अतिसोकू ❀ हरष-बिषाद-बिबस सुरलोकू॥

श्रीरामचन्द्रजीके चलते ही सबको बड़ा शोक हुआ। नगरका आर्त्तनाद (हाहाकार) सुना नहीं जाता था। उसी समय लंकामें अशुभ शकुन हुए, अयोध्यामें बड़ा शोक छा गया और देवलोकमें सब आनन्द और शोक, दोनोंके ही वशमें हो गये।

गइ मुरुछा तब भूपति जागे ❀ बोलि सुमंत्रु कहन अस लागे॥
रामु चले बन प्रान न जाहीं ❀ केहि सुख लागि रहत तन माहीं॥

जब मूर्छा दूर हुई तब राजा चैतन्य हुए और सुमंत्रको बुलाकर ऐसा कहने लगे कि रामचन्द्र तो वनको चल दिये, पर प्राण नहीं जाते। अब ये किस सुखके लिये शरीरमें रहते हैं?

एहि तें कवन व्यथा बलवाना ❀ जो दुखु पाइ तजहिं तनु प्राना॥
पुनि धरि धीर कहइ नरनाहू ❀ लेइ रथ संग सखा तुम्ह जाहू॥

इससे भी अधिक कठोर और कौन व्यथा होगी जिससे दुःख पाकर प्राण शरीरको छोड़ेंगे। फिर धीरज रखकर राजा कहने लगे कि हे सखा, तुम रथ लेकर संग जाओ।

दो०—सुठि सुकुमार कुमार दोउ ❀ जनक सुता सुकुमारि।
रथ चढ़ाइ देखराइ बनु ❀ फिरेहु गये दिनु चारि॥८२॥

दोनों सुन्दर कुमार सुकुमार हैं और राजा जनककी पुत्री सीताजी भी सुकुमारी हैं। इन सबको रथपर चढ़ाकर और वन दिखलाकर चार दिन बीत जानेपर लौट आना।

जौं नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई ❀ सत्यसंध दृढ़ब्रत रघुराई॥
तौ तुम्ह बिनय करेहु कर जोरी ❀ फेरिय प्रभु मिथिलेसुकिसोरी॥

यदि दोनों धीर भाई न लौटें, क्योंकि रामचन्द्र सत्य प्रतिज्ञ और दृढ़व्रती हैं, तो तुम हाथ जोड़कर विनती करना कि हे प्रभु, सीताजीको लौटा दीजिये।

जब सिय कानन देखि डेराई ❀ कहेहु मोरि सिख अवसरु पाई॥
सासु ससुर अस कहेउ संदेसू ❀ पुत्रि फिरिय बन बहुत कलेसू॥

जब सीताजी वन देखकर डरें तब अवसर पाकर मेरी सीख कहना कि सासु और ससुरने ऐसा संदेश कहा है कि हे पुत्री, तुम अयोध्याको लौट चलो; क्योंकि वनमें बहुत कष्ट हैं।

पितुगृह कबहुं कबहुं ससुरारी ❀ रहेहु जहां रुचि होइ तुम्हारी ॥
एहि बिधि करेहु उपाइ कदंबा ❀ फिरइ त होइ प्रानअवलंबा ॥

कभी अपने पिताके घरमें और कभी ससुरालमें, जहां तुम्हारी रुचि होवे, रहना। इसी तरहसे तुम बहुतसे उपाय करना। सीता यदि लौट आवे तो प्राणोंका सहारा हो जावे।

नाहिं त मोर मरनु परिनामा ❀ कछु न बसाइ भये बिधि बामा ॥
अस कहि मुरुछि परा महि राऊ ❀ राम लषनु सिय आनि देखाऊ ॥

नहीं तो अन्तमें मेरा मरना निश्चित है। दैव प्रतिकूल हो गया। कुछ वश नहीं चलता। ऐसा कहकर राजा मूर्छित होकर पृथिवीपर गिर पड़े कि श्रीराम, लक्ष्मण और सीताको लाकर दिखलाओ।

दो०—पाइ रजायसु नाइ सिरु ❀ रथु अतिबेग बनाइ।
गयेउ जहां बाहर नगर ❀ सीय सहित दोउ भाइ ॥८३॥

आज्ञा पाकर सुमंत्रने शिर नवाया और फिर बहुत जल्दीसे रथ सजाकर वे नगरके बाहर वहां गये जहां सीता समेत दोनों भाई थे।

तब सुमंत्र नृपबचन सुनाये ❀ करि बिनती रथु रामु चढ़ाये ॥
चढ़ि रथ सीयसहित दोउ भाई ❀ चले हृदय अवधहि सिरु नाई ॥

तब सुमन्त्रने राजाके वचन कह सुनाये और विनती करके श्रीरामचन्द्रजीको रथपर विठलाया। सीताजी समेत दोनों भाई रथपर चढ़कर अपने हृदयमें अयोध्याको शिर नवाकर चल दिये।

चलत राम लखि अवध अनाथा ❀ बिकल लोग सब लागे साथा ॥
कृपासिंधु बहुबिधि समुझावहिं ❀ फिरहिं प्रेमबस पुनि फिरि आवहिं ॥

श्रीरामचन्द्रजीके चलते ही अयोध्याको अनाथ हुआ देखकर सब लोग व्याकुल हो गये और साथ हो लिये। कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी बहुत प्रकारसे समझाते हैं। समझानेपर सब लोग लौटने लगते हैं, परन्तु प्रेमके वशमें होकर फिर लौट आते हैं।

लागति अवध भयावनि भारी ❀ मानहु कालराति अँधियारी ॥
घोर जंतुसम पुर-नर-नारी ❀ डरपहिं एकहि एक निहारी ॥

अयोध्या बड़ी भयावनी लगती है मानों अँधेरी काल-रात्रि हो, जिसमें नगरके पुरुष और स्त्री भयंकर जन्तुओंके समान हैं जो एक दूसरेको देखकर डरते हैं।

घर मसान परिजन जनु भूता ❀ सुत हित मीतु मनहु जमदूता ॥
बागन्ह बिटप बेलि कुम्हिलाहीं ❀ सरित सरोवर देखि न जाहीं ॥

घर श्मशानके समान है। कुटुम्बी मानों भूत हैं, और पुत्र, हितकारी और मित्र मानों यमके दूत हैं। बागोंमें वृक्ष और लताएं मुरझा गयीं और नदियों और तालाबोंकी ओर देखा नहीं जाता।

दो०—हय गय कोटिन्ह केलिमृग ❀ पुरपसु चातक मोर।
पिक रथांग सुक सारिका ❀ सारस हंस चकोर ॥८४॥

हाथी, घोड़े, क्रीड़ाके लिये पाले हुए हिरण, नगरके पशु, पपीहा, मोर, कोयल, चकवा, तोता, मैना, सारस, हंस और चकोर आदि करोड़ों जीव,

रामबियोग बिकल सब ठाढ़े ❀ जहं तहं मनहुं चित्र लिखि काढ़े ॥
नगरु सकल बनु गहबर भारी ❀ खग मृग बिपुल सकल नरनारी ॥

सब श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें जहां-तहां व्याकुल खड़े हुए हैं; मानों वे चित्रमें लिखकर बनाये गये हों। सारा नगर बड़ा घना वन है, जिसमें सब स्त्री-पुरुष असंख्य पशु-पक्षियोंके समान हैं।

बिधि कैकई किरातिनि कीन्ही ❀ जेहिं दव दुसह दसहुं दिसि दीन्ही ॥
सहि न सके रघु-बर-बिरहागी ❀ चले लोग सब ब्याकुल भागी ॥

दैवने कैकेयीको भीलनी बना दिया। जिसने दशों दिशाओंमें दुःसह दावानल प्रज्वलित कर दिया श्रीरामचन्द्रजीकी विरहरूपी अग्निको सह नहीं सके, इसलिये सब लोग व्याकुल होकर भाग चले।

सबहिं बिचारु कीन्ह मनमाहीं ❀ राम लषन सिय बिनु सुख नाहीं ॥
जहां रामु तहं सबुइ समाजू ❀ बिनु रघुबीर अवध नहिं काजू ॥

सबने मनमें विचार किया कि श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीके बिना सुख नहीं है। जहां श्रीरामचन्द्रजी हैं वहीं सब कुछ है। श्रीरामचन्द्रजीके बिना अयोध्यामें कोई काम नहीं है।

चले साथ अस मंत्रु दृढ़ाई ❀ सुरदुर्लभ सुखु सदन बिहाई ॥
राम-चरन-पंकज प्रिय जिन्हहीं ❀ बिषय-भोग बस करहिं कि तिन्हहीं ॥

ऐसी सलाहको पक्की करके सब लोग देव-दुर्लभ सुख देनेवाले घरोंको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके साथ चल दिये। जिनको श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल प्यारे हैं उन्हें विषय-भोग क्या वशमें कर सकते हैं?

दो०—बालक बृद्ध बिहाइ गृह ❀ लगे लोग सब साथ।
तमसा तीर निवासु किय ❀ प्रथम दिवस रघुनाथ ॥ ८५ ॥

बालक और वृद्ध, सब लोग घरबार छोड़कर साथ हो लिये। पहले दिन श्रीरामचन्द्रजी तमसा नदीके किनारे जाकर ठहरे।

रघुपति प्रजा प्रेमबस देखी ❀ सदय हृदय दुखु भयउ बिसेखी ॥
करुनामय रघुनाथ गोसाईं ❀ बेगि पाइअहि पीर पराई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब प्रजाको प्रेमवश देखा तब उनके दयालु हृदयको विशेष दुःख हुआ। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी दयानिधान हैं। पराये दुःखोंका उन्हें जल्दी ही पता चल जाता है।

कहि सप्रेम मृदुबचन सुहाये ❀ बहुबिधि राम लोग समुझाये ॥
किये धरम उपदेस घनेरे ❀ लोग प्रेमबस फिरहिं न फेरे ॥

प्रेमके साथ सुन्दर, मीठे वचन कहकर श्रीरामचन्द्रजीने लोगोंको बहुत तरहसे समझाया। बहुतसे धर्मसम्बन्धी उपदेश दिये, परन्तु प्रेमके वशमें होनेसे लोग लौटाये नहीं लौटते थे।

सील सनेह छाँड़ि नहिं जाई ❀ असमंजसबस भे रघुराई ॥
लोग-सोग-स्रम-बस गये सोई ❀ कछुक देवमाया मति मोई ॥

शील और स्नेह छोड़ा नहीं जाता, इसलिये श्रीरामचन्द्रजी बड़ी दुविधामें पड़ गये। सब लोग शोक और परिश्रमसे थके होनेके कारण सो गये और कुछ देवताओंकी मायाने भी उनकी बुद्धिको मोह लिया।

जबहिं जामजुग जामिनि बीती ❀ राम सचिव सन कहेउ सप्रीती ॥
खोजु मारि रथ हांकहु ताता ❀ आनु उपाय बनिहि नहिं बाता ॥

जब दोपहर रात बीत गयी तब श्रीरामचन्द्रजीने मंत्रीसे प्रेमपूर्वक कहा कि हे तात, और किसी उपायसे बात न बनेगी। रथको ऐसा हांको कि उसका कोई चिह्न न बनने पावे।

दो०—राम लषनु सिय जान चढ़ि ❀ संभुचरन सिरु नाइ।
सचिव चलायेउ तुरत रथ ❀ इत उत खोज दुराइ ॥८६॥

शिवजीके चरणोंमें शिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी—सब रथमें चढ़े। फिर तुरन्त ही मंत्रीने रथको इधर-उधर उसके चिह्नोंको छिपाकर हांक दिया।

जागे सकल लोग भये भोरू ❀ गे रघुनाथ भयेउ अतिसोरू ॥
रथ कर खोज कतहुं नहिं पावहिं ❀ राम राम कहि चहुं दिसि धावहिं ॥

सवेरा होनेपर जब सब लोग जागे, तब इस बातसे बड़ा कोलाहल हुआ कि श्रीरामचन्द्रजी चले गये, रथके चिह्नोंका कहीं पता नहीं चलता। सब राम-राम कहकर चारों दिशाओंमें दौड़ने लगे।

मनहुं बारिनिधि बूड़ जहाजू ❀ भयउ बिकल बड़ बनिकसमाजू ॥
एकहिं एक देहिं उपदेसू ❀ तजे राम हम जानि कलेसू ॥

मानों समुद्रमें जहाज डूब जानेसे वैश्योंका बड़ा समूह व्याकुल हुआ हो। वे एक दूसरेको उपदेश देने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीने हम लोगोंको दुःखदायी जानकर छोड़ दिया।

निंदहिं आपु सराहहिं मीना ❀ धिग जीवनु रघु - बीर - बिहीना ॥
जौं पै प्रियबियोगु बिधि कीन्हा ❀ तौ कस मरनु न मांगे दीन्हा ॥

सब लोग अपनी निन्दा और मछलियोंकी प्रशंसा करते हैं, क्योंकि जलके बिना मछलियां मर जाया करती हैं। वे सब कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीके बिना हमारा जीना धिक्कार है। परन्तु यदि देवने प्यारे श्रीरामचन्द्र जीका वियोग ही किया है तो वह मांगनेपर मृत्यु क्यों नहीं देता ?

एहि बिधि करत प्रलापकलापा ❀ आये अवध भरे परितापा ॥
बिषम बियोगु न जाइ बखाना ❀ अवधिआस सब राखहिं प्राना ॥

इस प्रकार बहुत बिलाप करते और दुःखसे भरे हुए वे सब अयोध्यामें आये। कठोर वियोगका वर्णन नहीं किया जा सकता। चौदह वर्षकी अवधि समाप्त हो जानेपर श्रीरामचन्द्रजीके लौटनेकी आशासे सबने प्राण रख छोड़े हैं।

दो०—राम-दरस-हित नेम ब्रत ❀ लगे करन नरनारि।
मनहुं कोक कोकी कमल ❀ दीन बिहीन तमारि ॥८७॥

सब स्त्री-पुरुष श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन पानेके लिये व्रत और नियम करने लगे मानों सूर्यके बिना चकवा चकवी और कमल दीन हो गये हों।

(शृंगवेरपुर)

सीता सचिव सहित दोउ भाई ❀ सृंगवेरपुर पहुंचे जाई ॥
उतरे रामु देवसरि देखी ❀ कीन्ह दंडवत हरख बिसेखी ॥

सीताजी और मंत्री समेत दोनों भाई शृङ्गवेरपुर जाकर पहुंचे। गङ्गाजीको देखकर श्रीरामचन्द्रजी रथसे उतरे और बड़ी प्रसन्नतासे दण्डवत की।

लषन सचिव सिय किये प्रनामा ❀ सबहिं सहित सुख पायउ रामा ॥
गंग सकल-मुद-मंगल - मूला ❀ सब सुखकरनि हरनि सब सूला ॥

लक्ष्मणजी, सीताजी और मंत्रीने प्रणाम किया और सब समेत श्रीरामचन्द्रजीने सुख पाया। गंगाजी सब आनन्द और मङ्गलोंकी मूल हैं। वे सब सुखोंको देनेवाली और सब दुःखोंको दूर करनेवाली हैं।

कहि कहि कोटिक कथाप्रसंगा ❀ राम बिलोकहिं गंगतरंगा ॥
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई ❀ बिबुध - नदी - महिमा अधिकाई ॥

करोड़ों कथा-प्रसंग कह कहकर श्रीरामचन्द्रजी गंगाकी तरंगोंको देखने लगे। श्रीरामचन्द्रजीने मंत्री, भाई और प्रिया सीताजीको गङ्गाजीकी बड़ी महिमा कह सुनाई।

मज्जनु कीन्ह पंथस्रमु गयेऊ ❀ सुचि जलु पियत मुदित मन भयेऊ ॥
सुमिरत जाहि मिटइ स्रमु भारू ❀ तेहि स्रमु यह लौकिक व्यवहारू ॥

सबने वहां स्नान किया जिससे मार्गकी थकावट दूर हो गयी, पवित्र जल पीते ही मन प्रसन्न हो गया। जिन श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करनेसे सारे श्रम दूर हो जाते हैं उन्हें श्रम (थकावट) का होना और मिटना, यह लौकिक व्यवहार ही है।

दो०—सुद्ध सच्चिदानंदमय ❀ कंद भानु - कुल - केतु ।
चरित करत नरअनुहरत ❀ संसृति - सागर - सेतु ॥८८॥

क्योंकि सूर्यकुलकी पताकारूप श्रीरामचन्द्रजी शुद्ध, सत्, चित् आनंदकन्द परमात्मा हैं। वे मनुष्योंके समान चरित्र करते हैं, परन्तु वे वास्तवमें संसाररूपी समुद्रको पार करनेके लिये पुलके समान हैं।

यह सुधि गुह निषाद जब पाई ❀ मुदित लिये प्रिय बंधु बोलाई ॥
लिये फल मूल भेंट भरि भारा ❀ मिलन चलेउ हिय हरष अपारा ॥

गुह निषादने जब यह सम्वाद सुना तब अपने प्रियजनों और कुटुम्बियोंको आनन्दित होकर बुला लिया। भेंट देनेको बहुतसे फलमूल लेकर और उन्हें पात्रोंमें भर भरकर गुह निषाद हृदयमें अत्यन्त आनंदित होकर मिलने चला।

करि दंडवत भेंट धरि आगे ❀ प्रभुहि बिलोकत अति अनुरागे ॥
सहज—सनेह—बिबस रघुराई ❀ पूँछी कुसल निकट बैठाई ॥

उसने दण्डवत कर भेंटको आगे रखा और प्रभु श्रीरामचंद्रजीको बड़े प्रेमसे देखने लगा। श्रीरामचंद्रजीने स्वाभाविक स्नेहके वशमें हो पास बिठलाकर उससे कुशलता पूछी।

नाथ कुसल पदपंकज देखे ❀ भयउँ भागभाजनु जन लेखे ॥
देव धरनि धनु धामु तुम्हारा ❀ मैं जनु नीचु सहित परिवारा ॥

गुह निषादने कहा—हे नाथ, आपके चरणकमल देखकर सब कुशल है। मैं भाग्यशाली हुआ और मनुष्योंमें गिने जाने योग्य हो गया। हे देव, पृथिवी, धन और महल, सब आपके हैं और मैं भी परिवार समेत आपका नीच दास हूं।

कृपा करिय पुर धारिय पाऊ ❀ थापिय जनु सबु लोगु सिहाऊ ॥
कहेहु सत्य सब सखा सुजाना ❀ मोहि दीन्ह पितु आयसु आना ।

कृपा कीजिये और नगरमें पधारिये। मुझे अपना दास बना लीजिये, जिसमें सब ले
श्रीरामचन्द्रजीने कहा, हे चतुर मित्र, तुमने जो कुछ कहा वह सब सत्य है, परंतु पिताजीने मुझे और ही आज्ञा दी है।

दो०—बरष चारिदस बास बन ❀ मुनि - ब्रत - बेष - अहारु।
ग्रामवास नहिं उचित सुनि ❀ गुहहि भयउ दुखभारु ॥८९॥

चौदह वर्षतक वनका निवास, मुनियोंका व्रत, भेष और भोजन मुझे करना है, अतः गांवमें जाकर बसना उचित नहीं। यह सुनकर गुहको भारी दुःख हुआ।

राम लषन सिय रूप निहारी ❀ कहहिं सप्रेम ग्राम नरनारी॥
ते पितु मातु कहहु सखि कैसे ❀ जिन्ह पठये बन बालक ऐसे॥

श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीका रूप देखकर गांवके पुरुष और स्त्री सब प्रेमके साथ कहते हैं कि हे सखि, यह कहो कि ये माता-पिता कैसे हैं, जिन्होंने ऐसे बालकोंको वनमें भेज दिया।

एक कहहिं भल भूपति कीन्हा ❀ लोयनलाहु हमहिं बिधि दीन्हा॥
तब निषादपति उर अनुमाना ❀ तरु सिंसुपा मनोहर जाना॥

कोई कहने लगा कि राजाने अच्छा ही किया, जिससे ब्रह्माने हमलोगोंको भी नेत्रोंका लाभ दे दिया। तब निषाद-राजाने अपने हृदयमें विचार किया और एक शीशमके वृक्षको निवासयोग्य सुन्दर समझा।

लेइ रघुनाथहि ठाउँ देखावा ❀ कहेउ राम सब भाँति सुहावा॥
पुरजन करि जोहारु घर आये ❀ रघुबर संध्या करन सिधाये॥

श्रीरामचन्द्रजीको ले जाकर यह स्थान दिखलाया। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि यह सब प्रकार सुन्दर है। ग्रामवासी लोग प्रणाम करके अपने घर लौटें और श्रीरामचन्द्रजी सन्ध्या करनेके लिये विदा हुए।

गुह सवाँरि साथरी डसाई ❀ कुस किसलयमय मृदुल सुहाई॥
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी ❀ दोना भरि भरि राखेसि आनी॥

गुह निषादने कुश और कोमल पत्तोंका सुन्दर कोमल बिछौना संभालकर बिछा दिया और जिन पवित्र फल-मूलोंको मीठा और कोमल समझा उन्हें दोनेमें भर-भरकर लाकर रख दिया।

दो०—सिय-सुमंत्र-भ्राता - सहित ❀ कंद मूल फल खाइ।
सयन कीन्ह रघु-बंस-मनि ❀ पाय पलोटत भाइ॥९०॥

सीताजी, सुमन्त्र और भाई लक्ष्मण समेत कंद-मूल और फल खाकर रघुवंशमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजीने शयन किया। भाई लक्ष्मणजी पैर दबाने लगे।

...नु प्रभु सोवत जानी ❀ कहि सचिवहि सोवन मृदुबानी ॥
कछुक दूरि सजि बानसरासन ❀ जागन लगे बैठि बीरासन ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सोता हुआ जानकर लक्ष्मणजी मीठी वाणीसे मन्त्रीको सोनेके लिये कहकर उठे और कुछ दूरीपर धनुषबाणको सजाकर और वीरासनसे बैठकर जागने लगे ।

गुह बोलाइ पाहरू प्रतीती ❀ ठावं ठावं राखे अति प्रीती ॥
आपु लषन पहिं बैठेउ जाई ❀ कटि भाथा सरचाप चढ़ाई ॥

गुह निषादने विश्वासपात्र पहरेदारोंको बुलाकर बड़े प्रेमसे जगह-जगह नियत कर दिया और कमरमें तरकस बांध धनुषपर बाण चढ़ाकर स्वयं लक्ष्मणजीके पास जाकर बैठ गया ।

सोवत प्रभुहि निहारि निषादू ❀ भयउ प्रेमबस हृदय बिषादू ॥
तनु पुलकित जलु लोचन बहई ❀ बचन सप्रेम लषन सन कहई ॥

प्रेमके वशमें होनेके कारण गुह निषादके हृदयमें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सोते हुए देखकर बड़ा दुःख हुआ । शरीर पुलकायमान हो गया, नेत्रोंसे जल बहने लगा और वह प्रेमके साथ लक्ष्मणजीसे यह वचन कहने लगा ।

भूपति भवनु सुभाय सुहावा ❀ सुरपति सदनु न पटतर पावा ॥
मनिमय रचित चारु चौबारे ❀ जनु रतिपति निजहाथ सवांरे ॥

राजाका महल स्वभावसे ही ऐसा सुन्दर है कि देवताओंके स्वामी इन्द्रका महल भी उसकी बराबरी नहीं कर सकता । उसके मणियों जड़े चौबारे ऐसे सुन्दर हैं, मानों कामदेवने उन्हें अपने हाथसे संभाला हो ।

दो०—सुचि सुबिचित्र सुभोगमय ❀ सुमन सुगंधु सुबास ।
पलंग मंजु मनिदीप जहं ❀ सब बिधि सकल सुपास ॥९१॥

जो राजमहल पवित्र, बड़ा विचित्र, सुन्दर भोग्य वस्तुओंसे भरा हुआ है और जहां फूलों एवं सुगन्धित पदार्थोंकी सुगन्ध भरी हुई है, जहां सुन्दर पलंग और मणियोंके दीपक हैं और जहां सब प्रकारकी सारी सुविधाएँ हैं ।

बिबिध बसन उपधान तुराई ❀ छीरफेन मृदु बिसद सुहाई ॥
तहं सियराम सयन निसि करहीं ❀ निज छबि रति मनोज मदु हरहीं ॥

जहां दूधके फेनके समान कोमल, स्वच्छ और सुन्दर तरह-तरहके वस्त्र, गद्दी और तकिये हैं वहां रातको सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी सोते थे और अपनी शोभासे रति और कामदेवके अभिमानको चूर किया करते थे ।

तेइ सिय रामु साथरी सोये ❀ स्रमित बसन बिनु जाहिं न जोये ॥
मातु पिता परिजन पुरबासी ❀ सखा सुसील दास अरु दासी ॥

वही सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी आज थके हुए इस स्थानपर सोये हुए हैं, जहां कपड़ा भी नहीं है। उन्हें देखा नहीं जाता। माता-पिता, कुटुम्बी, नगरनिवासी, सखा, सुन्दर स्वभाववाले दास और दासियां—

जोगवहिं जिन्हहिं प्रान की नाईं ❀ महि सोवत तेइ राम गोसाईं ॥
पिता जनक जग बिदित प्रभाऊ ❀ ससुर सुरेससखा रघुराऊ ॥

सब जिन्हें अपने प्राणोंकी भांति देखते रहते थे वही समर्थ श्रीरामचन्द्रजी पृथिवीपर सो रहे हैं। राजा जनक, जिनकी महिमा संसारमें प्रसिद्ध है, जिनके पिता हैं; इन्द्रके मित्र रघुराज दशरथ जिनके श्वसुर हैं;

रामचंदु पति सो बैदेही ❀ सोवत महि बिधि बाम न केही ॥
सिय रघुबीर कि कानन जोगू ❀ करमु प्रधान सत्य कह लोगू ॥

श्रीरामचन्द्रजी जिनके पति हैं, वही सीताजी पृथिवीपर सो रही हैं! भला दैव किसके प्रतिकूल नहीं होता? सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी क्या वनके योग्य हैं? लोग सत्य कहते हैं कि कर्म ही प्रधान है।

दो०—कैकयनंदिनि मंदमति ❀ कठिन कुटिलपन कीन्ह।
जेहि रघुनंदनु जानकिहि ❀ सुखु अवसर दुखु दीन्ह ॥९२॥

मंदबुद्धि कैकेयीने बड़ी भारी दुष्टता की, जिसने श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीको सुखके समय दुःख दिया।

भइ दिनकरकुल बिटप कुठारी ❀ कुमति कीन्ह सबु बिस्व दुखारी ॥
भयउ विषाद निषादहि भारी ❀ रामु सीय महिसयन निहारी ॥

दुर्बुद्धि कैकेयी सूर्यवंशरूपी वृक्षके लिए कुठार हो गयी। उसने सारे संसारको दुःखी किया। श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीको पृथिवीपर सोते देखकर गुह-निषादको बड़ा भारी दुःख हुआ।

बोले लषन मधुर मृदु बानी ❀ ग्यान बिराग भगति रससानी ॥
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता ❀ निज कृत करम भोगु सबु भ्राता ॥

तब लक्ष्मणजी ज्ञान, वैराग्य और भक्तिके रससे सनी हुई यह कोमल मीठी वाणी कहने लगे कि हे भाई, सुख-दुःखका देनेवाला कोई किसीको नहीं है। अपने किये हुए कर्मोंको सब भोगते हैं।

जोग बियोग भोग भल मंदा ❀ हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ॥
जनमु मरनु जहँ लगि जगजालू ❀ संपति बिपति करमु अरु कालू ॥

संयोग, वियोग, अच्छा और बुरा भोग, शत्रु,मित्र और उदासीन—सब भ्रमके फंदे हैं। जन्म, मरण और जहांतक संसारके जाल हैं; संपत्ति, विपत्ति, कर्म और काल,

धरनि धामु धनु पुर परिवारू ❀ सरगु नरकु जहँ लगि ब्यवहारू ॥
देखिअ सुनिअ गुनिअ मन माहीं ❀ मोहमूल परमारथु नाहीं ॥

धरती, घर, धन, नगर, परिवार, स्वर्ग, नरक आदि जहाँतक व्यवहार हैं, जिन्हें देखा, सुना और मनमें माना जाता है, उन सबका मूल मोह है—परमार्थ नहीं।

दो०—सपनें होइ भिखारि नृप ❀ रंक नाकपति होइ।
जागें लाभु न हानि कछु ❀ तिमि प्रपंचु जियँ जोइ ॥ ९३ ॥

जिस प्रकार स्वप्नमें कोई राजा भिखारी और कोई कंगाल इन्द्र हो जाता है, परन्तु जग जानेपर किसीको कुछ हानि-लाभ नहीं होता, उसी भाँति इस संसारको मनमें समझना चाहिये।

अस बिचारि नहिं कीजिअ रोषू ❀ काहुहि बादि न देइअ दोषू ॥
मोहनिसाँ सबु सोवनिहारा ❀ देखिअ सपन अनेक प्रकारा ॥

ऐसा विचारकर क्रोध नहीं करना चाहिये और किसीको व्यर्थ ही दोष भी नहीं देना चाहिये। मोहरूपी रात्रिमें सब लोग सो रहे हैं, जिन्हें अनेक प्रकारके स्वप्न दिखलायी पड़ते हैं।

एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी ❀ परमारथी प्रपंचबियोगी ॥
जानिअ तबहिं जीव जग जागा ❀ जब सब बिषय बिलास बिरागा ॥

इस जगत्‌रूपी रातमें परमार्थ लग्न और संसारसे विरक्त योगिजन ही जागते हैं। जीवको संसारमें तभी जगा हुआ जानना चाहिये जब सब विषयों और भोग-विलासोंसे उसे वैराग्य हो जाय।

होइ बिबेकु मोहभ्रम भागा ❀ तब रघुनाथ - चरन अनुरागा ॥
सखा परम परमारथु एहू ❀ मन - क्रम - बचन रामपद नेहू ॥

विवेक होनेसे जब मोह और भ्रम भाग जाता है तब श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम उत्पन्न होता है। हे सखा, बड़ा परमार्थ यही है कि मन, वाणी और कर्मसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हो।

रामु ब्रह्म परमारथरूपा ❀ अबिगत अलख अनादि अनूपा ॥
सकल - बिकार - रहित गतभेदा ❀ कहि नित नेति निरूपहिं बेदा ॥

श्रीरामचन्द्रजी ब्रह्म, परमार्थरूप, व्यापक, अदृश्य, अनादि, अनुपम, सब विकारोंसे अलग और भेदरहित हैं। वेद 'नित्य' और 'अनंत' कहकर उनका निरूपण करते हैं।

दो०—भगत भूमि भूसुर सुरभि ❀ सुर हित लागि कृपाल।
करत चरित धरि मनुज तनु ❀ सुनत मिटहिं जगजाल ॥ ९४ ॥

भक्तों, पृथिवी, ब्राह्मणों, गो और देवताओंके हितके लिये कृपालु श्रीरामचन्द्रजी मनुष्यका शरीर रखकर चरित्र करते हैं, जिन्हें सुनते ही संसारके जाल कट जाते हैं।

सखा समुझि अस परिहरि मोहू ❀ सिय-रघुबीर-चरन-रत होहू ॥
कहत रामगुन भा भिनुसारा ❀ जागे जगमंगल-दातारा ॥

हे सखा, ऐसा समझकर मोह छोड़ दो और सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें अनुरक्त हो जाओ। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको कहते हुए सवेरा हो गया और संसारको आनन्द देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी जाग उठे।

सकल सौच करि राम नहावा ❀ सुचि सुजान बटछीर मंगावा ॥
अनुजसहित सिर जटा बनाये ❀ देखि सुमंत्र नयनजल छाये ॥

सब शौच-क्रिया पूरी कर पवित्र और सुजान श्रीरामचन्द्रजीने स्नान किया और वट वृक्षका दूध मंगवाया। फिर उन्होंने भाई लक्ष्मणसमेत शिरपर जटाएँ बनायीं, जिन्हें देखकर सुमंत्रके नेत्रोंमें जल छा गया।

हृदय दाहु अति बदन मलीना ❀ कह कर जोरि बचन अति दीना ॥
नाथ कहेउ अस कोसलनाथा ❀ लेइ रथ जाहु रामके साथा ॥

सुमन्त्रके हृदयमें बड़ी पीड़ा होने लगी, मुख मलीन हो गया और वे हाथ जोड़कर अत्यन्त दीन वचन कहने लगे कि हे नाथ, कोशलपति राजा दशरथने मुझे यह आज्ञा दी है कि रथ लेकर श्रीरामचन्द्रजीके साथ जाओ।

बन देखाइ सुरसरि अन्हवाई ❀ आनहु फेरि बेगि दोउ भाई ॥
लखनु रामु सिय आनेहु फेरी ❀ संसय सकल सकोच निबेरी ॥

वन दिखलाकर और गंगाजीका स्नान कराकर दोनों भाइयोंको जल्दी ही लौटा लाना, सब संशय और संकोच दूरकर लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीको लौटा कर ले आना।

दो०-नृप अस कहेउ गोसाइँ जस ❀ कहिय करउँ बलि सोइ।
करि बिनती पायन्ह परेउ ❀ दीन्ह बाल जिमि रोइ ॥९५॥

राजा दशरथने ऐसी आज्ञा दी है। हे स्वामिन्, मैं आपकी बलैया लूं। आप जैसा कहें, वैसा ही करूं। विनती करके सुमंत्र पैरोंमें पड़ गये और बालककी भांति रो पड़े।

तात कृपा करि कीजिय सोई ❀ जातें अवध अनाथ न होई ॥
मंत्रिहि राम उठाइ प्रबोधा ❀ तात धरमु मगु तुम्ह सब सोधा ॥

हे तात, कृपा करके वही कीजिये, जिससे अयोध्या अनाथ न होवे। श्रीरामचन्द्रजीने उठाकर मंत्रीको समझाया और कहा कि हे तात, तुमने सब धर्ममार्ग छान डाला है।

सिबि दधीचि हरिचंद नरेशा ❀ सहे धरमहित कोटि कलेसा॥
रंतिदेव बलिभूप सुजाना ❀ धरमु धरेउ सहि संकट नाना॥

राजा शिवि, दधीच मुनि और राजा हरिश्चन्द्रने धर्मके लिये करोड़ों कष्ट सहन किये। हे सुजान, इसी भांति राजा रंतिदेव और राजा बलिने अनेक संकटोंको सहकर धर्म धारण किया।

धरमु न दूसर सत्यसमाना ❀ आगम निगम पुरान बखाना॥
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा ❀ तजे तिहूँपुर अपजसु छावा॥

वेद, शास्त्र और पुराण कहते हैं कि सत्यके समान दूसरा धर्म नहीं है। मैंने उसी धर्मको सहज ही पा लिया है, उसे छोड़नेसे तीनों लोकोंमें अपयश छा जायगा।

संभावित कहुँ अपजसलाहू ❀ मरन-कोटि-सम दारुन दाहू॥
तुम्ह सन तात बहुत का कहऊं ❀ दिये उतरु फिरि पातकु लहऊं॥

श्रेष्ठ पुरुषके लिये अपयशका मिलना करोड़ बार मृत्यु होनेके समान कठिन दुःखदायी है। हे तात तुमसे बहुत क्या कहूं? फिर उत्तर देनेमें भी पाप लगता है।

दो०-पितुपद गहि कहि कोटि नति ❀ बिनय करब कर जोरि।
चिंता कवनिहुं बात कै ❀ तात करिय जनि मोरि॥९६॥

पिताजीके चरण पकड़कर और मेरे करोड़ प्रणाम कहकर आप हाथ जोड़कर विनती करना कि हे तात, मेरी किसी बातके लिये चिन्ता मत कीजिये।

तुम्ह पुनि पितुसम अतिहित मोरें ❀ विनती करउं तात कर जोरें॥
सब बिधि सोइ करतब्य तुम्हारे ❀ दुखु न पाव पितु सोच हमारे॥

फिर, तुम पिताजीके समान ही मेरे अत्यन्त हितकारी हो। हे तात, मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं। तुम्हारा सब प्रकार वही कर्तव्य है, जिससे पिताजी हमारे सोचमें दुःख न पावें।

सुनि रघुनाथ-सचिव-संबादू ❀ भयेउ सपरिजन बिकल निषादू॥
पुनि कछु लषन कही कटुबानी ❀ प्रभु बरजेउ बड़ अनुचित जानी॥

श्रीरामचन्द्रजी और मन्त्रीकी बातचीत सुनकर गुह निषाद अपने कुटुम्बियोंसमेत व्याकुल हो गया। फिर लक्ष्मणजीने कुछ कठोर वाक्य कहे, परन्तु बहुत अनुचित जानकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें वैसा कहनेसे रोक दिया।

सकुचि राम निजसपथ देवाई ❀ लषन संदेसु कहिअ जनि जाई ॥
कह सुमंत्रु पुनि भूप संदेसू ❀ सहि न सकिहि सिय बिपिन कलेसू ॥

संकोच करके श्रीरामचन्द्रजीने सुमन्त्रको अपनी सौगन्द दिलायी कि लक्ष्मणका संदेश जाकर मत कहना। फिर सुमन्त्रने राजाका संदेश कहा कि सीताजी वनके क्लेश न सहन कर सकेंगी।

जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया ❀ सोइ रघुबरहिं तुम्हहि करनीया ॥
नतरु निपट अवलंब बिहीना ❀ मैं न जियब जिमि जल बिनु मीना ॥

जिस प्रकार सीताजी अयोध्याको लौट आवें वही तुम्हें और श्रीरामचन्द्रजीको करना चाहिये, नहीं तो बिलकुल निराश्रित होकर मैं जीता न रहूंगा, जैसे जलके बिना मछली।

दो०—मइकें ससुरें सकलसुख ❀ जबहिं जहां मनु मान।
तहं तब रहिहि सुखेन सिय ❀ जब लगि बिपति बिहान ॥९७॥

पिता राजा जनकके यहां और ससुरालमें सब सुख हैं। जब जहां मन माने, तब वहां सीताजी उस समय-तक सुखपूर्वक रहें, जबतक कि विपत्तिकाल समाप्त न हो जावे।

बिनती भूप कीन्हि जेहि भांती ❀ आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥
पितु संदेस सुनि कृपानिधाना ❀ सियहि दीन्हि सिख कोटि बिधाना ॥

राजाने दीनता और प्रेमसे जिस प्रकार विनती की थी उसे कहा नहीं जा सकता। पिताजीका संदेश सुनकर दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीको करोड़ों तरहकी सीख दी।

सासु ससुर गुरु प्रिय परिवारू ❀ फिरहु त सबकर मिटइ खंभारू ॥
सुनि पतिबचन कहति बैदेही ❀ सुनहु प्रानपति परमसनेही ॥

उन्होंने कहा कि हे सीता, यदि तुम लौट जाओ तो सासु, श्वसुर, गुरु और प्यारा परिवार, सबका क्षोभ मिट जाय। पतिके वचन सुनकर सीताजी कहने लगीं कि हे प्राणनाथ, हे परम स्नेही, सुनो।

प्रभु करुनामय परम बिबेकी ❀ तनु तजि रहति छांह किमि छेंकी ॥
प्रभा जाइ कहं भानु बिहाई ❀ कहं चंद्रिका चंदु तजि जाई ॥

हे प्रभु, आप दयामय और अत्यन्त ज्ञानी हैं। शरीरको छोड़कर शरीरकी छाया अलग कैसे रह सकती है! सूर्यको छोड़कर प्रकाश कहां जाय? चन्द्रमाको छोड़कर चांदनी कहां जाय?

पतिहिं प्रेममय बिनय सुनाई ❀ कहति सचिव सन गिरा सुहाई ॥
तुम्ह पितु-ससुर-सरिस हितकारी ❀ उतरु देउं फिरि अनुचित भारी ॥

पतिको प्रेममय विनती सुनाकर सीताजी मंत्रीसे यह सुन्दर वाणी कहने लगीं कि आप पिता और श्वसुरके समान हितकारी हैं, फिर भी मैं आपको उत्तर देती हूं, यह बड़ा अनुचित है।

दो०—आरतिबस सनमुख भइउँ ❀ बिलगु न मानब तात।
आरज-सुत-पद-कमल-बिनु ❀ बादि जहां लगि नात ॥९८॥

हे तात, विपत्तिके वशमें होनेसे ही आपके सामने हुई हूं। आप बुरा न मानिये। जितने सम्बन्ध हैं, सब आर्यपुत्र श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंके बिना व्यर्थ हैं।

पितु बैभव बिलासु मैं डीठा ❀ नृप-मनि-मुकुट-मिलित पदपीठा ॥
सुखनिधान अस पितुगृह मोरे ❀ पियबिहीन मन भाव न भोरे ॥

मैंने पिताजीके ऐश्वर्यके सुखको देखा है, जिनके चरण रखनेकी चौकीसे बड़े-बड़े राजाओंके मणियों जड़े मुकुट लगते हैं। ऐसा सुखका भाण्डार मेरे पिताका घर पतिके विना मेरे मनको भूलकर भी नहीं अच्छा लगता।

ससुर चक्कवइ कोसलराऊ ❀ भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ ॥
आगे होइ जेहि सुरपति लेई ❀ अरधसिंहासन आसन देई ॥

मेरे श्वसुर चक्रवर्ती कोशलराज हैं, जिनका प्रताप चौदह लोकमें प्रकट है और जिन्हें इन्द्र आगे आकर लेते हैं और बैठनेके लिये आधा सिंहासन देते हैं।

ससुरु एतादृस अवध निवासू ❀ प्रिय परिवारु मातुसम सासू ॥
बिनु रघुपति - पद - पदुम - परागा ❀ मोहि कोउ सपनेहु सुखद न लागा ॥

ऐसे श्वसुर, अयोध्याका निवास, प्यारा परिवार और माताके समान सासु—कोई भी श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी रजके विना मुझे स्वप्नमें भी सुख देनेवाला नहीं प्रतीत होता।

अगम पंथ बन भूमि पहारा ❀ करि केहरि सर सरित अपारा ॥
कोल किरात कुरंग बिहंगा ❀ मोहि सब सुखद-प्रान-पति-संगा ॥

अगम्य मार्ग, वन, पृथिवी, पर्वत, हाथी, सिंह, तालाब और असंख्य नदियां, कोल, भील, हिरण, पक्षी—सब प्राणनाथके साथमें मुझे सुखदायी हैं।

दो०—सासु ससुर सन मोरि हुति ❀ बिनय करबि परि पाय।
मोरि सोचु जनि करिय कछु ❀ मैं बन सुखी सुभाय ॥९९॥

सासु और श्वसुरसे मेरी ओरसे पैर पकड़ विनती करना कि वे मेरा कुछ सोच न करें। मैं स्वभावसे ही वनमें सुखी हूं।

प्राननाथ प्रिय देवर साथा ❀ बीर धुरीन धरे धनु भाथा ॥
नहिं मगस्रमु भ्रमु दुखु मन मोरे ❀ मोहि लगि सोचु करिय जनि भोरे ॥

मेरे साथ प्राणपति श्रीरामचंद्रजी और प्यारे देवर लक्ष्मणजी हैं। वे धीरोंमें धुरंधर और धनुष एवं तरकस लिये हुए हैं। मुझे मार्गकी थकावट नहीं है और न मेरे मनमें संदेह या दुःख है। मेरे लिये वे भूलकर भी सोच न करें।

सुनि सुमंत्रु सिय सीतलि बानी ❀ भयेउ बिकल जनु फनि मनिहानी ॥
नयन सूझ नहिं सुनइ न काना ❀ कहि न सकइ कछु अति अकुलाना ॥

सीताजीकी शीतल वाणी सुनकर सुमंत्र व्याकुल हो गये, मानों किसी सर्पकी मणि चली गई हो। उन्हें नेत्रोंसे दिखाई और कानोंसे सुनाई न पड़ने लगा। वे कुछ कह नहीं सकते, अत. बड़े व्याकुल हुए।

राम प्रबोधु कीन्ह बहुभांती ❀ तदपि होति नहिं सीतलि छाती ॥
जतन अनेक साथहित कीन्हे ❀ उचित उतरु रघुनंदन दीन्हे ॥

श्रीरामचन्द्रजीने यद्यपि बहुत प्रकारसे समझाया तथापि सुमंत्रकी छाती शीतल नहीं होती। यद्यपि सुमंत्रने प्रेमके साथ अनेक यत्न किये तथापि श्रीरामचन्द्रजीने सब बातोंका उचित उत्तर दे दिया।

मेटि जाइ नहिं रामरजाई ❀ कठिन करमगति कछु न बसाई ॥
राम-लषन-सिय-पद सिरु नाई ❀ फिरेउ बनिकु जिमि मूरु गवाँई ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा टाली नहीं जाती। कर्मकी गति कठिन है। उससे कुछ वश नहीं चलता। श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीके चरणोंको शिर नवाकर सुमंत्र इस प्रकार लौटे जैसे कोई वैश्य अपनी पूंजी गँवाकर लौटा हो।

दो०—रथ हाँकेउ हय रामतन ❀ हेरि हेरि हिहिनाहिं।
देखि निषाद बिषादबस ❀ धुनहिं सीस पछिताहिं ॥१००॥

सुमंत्रने जब रथ हांका तब घोड़े श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देख-देखकर हिनहिनाने लगे। यह देखकर गुह निषाद दुःखी होकर शिर धुनने और पछताने लगे।

जासु बियोग बिकल पसु ऐसे ❀ प्रजा मातु पितु जीवहिं कैसे ॥
बरबस राम सुमंत्रु पठाये ❀ सुरसरितीर आप तब आये ॥

जिसके वियोगमें पशु ऐसे व्याकुल हों, उसके बिना प्रजा, माता और पिता कैसे जीते हैं ? श्रीरामचन्द्रजी-ने सुमंत्रको जबर्दस्ती लौटा दिया और फिर आप गङ्गाजीके किनारे आये।

(केवटकी भक्ति)

माँगी नाव न केवटु आना ❀ कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना ॥
चरन-कमल-रज कहुँ सबु कहई ❀ मानुषकरनि मूरि कछु अहई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने नाव माँगी, पर केवट उसे नहीं लाया और कहने लगा कि आपका भेद मैंने जान लिया। आपके चरणकमलोंकी रजको सब कहते हैं कि वह मनुष्य बना देनेवाली कोई ओषधि है।

छुअत सिला भइ नारि सुहाई ❀ पाहन तें न काठ कठिनाई ॥
तरनिउ मुनिघरनी होइ जाई ❀ बाट परै मोरि नाव उड़ाई ॥

उसे छूते ही चट्टान सुन्दर स्त्री बन गयी। काठ पत्थरसे कड़ा नहीं होता। मेरी नाव भी मुनिकी स्त्री हो जायगी। मेरी नाव उड़ जानेसे बीच रास्तेमें डाका पड़ जायगा।

एहि प्रतिपालउँ सबु परिवारू ❀ नहिं जानउँ कछु अउर कबारू ॥
जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू ❀ मोहि पदपदुम पखारन कहहू ॥

इसीसे सब परिवार पालता हूं, और कोई धंधा मैं नहीं जानता। हे प्रभो, यदि आप अवश्य ही पार जाना चाहते हों तो मुझे चरणकमल धोनेकी आज्ञा दीजिये।

छं०—पदकमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहउँ।
मोहि राम राउर आन दसरथसपथ सब साँची कहउँ ॥
बरु तीर मारहु लखन पै जब लगि न पाय पखारिहउँ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पारु उतारिहउँ ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, मुझे आपकी सौगंद है और राजा दशरथकी सौगंद है, मैं सब सत्य कहता हूं कि मैं चरणकमल धोकर आप सब लोगोंको नावपर चढ़ाऊंगा। हे नाथ, मैं उतराई नहीं चाहता हूं। लक्ष्मणजी चाहे तीर मार दें, पर जबतक मैं पैर न धोलूंगा तबतक—तुलसीदासजी कहते हैं—हे नाथ, हे कृपालु, मैं पार न उतारूंगा।

सो०—सुनि केवट के बयन ❀ प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहँसे करुना अयन ❀ चितइ जानकी-लखन-तन ॥१०१॥

केवटके प्रेमसे सने हुए अटपटे वचन सुनकर दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी सीताजी और लक्ष्मणजीकी ओर देखकर मुस्कुराये।

कृपासिंधु बोले मुसुकाई ❀ सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई ॥
बेगि आनु जलु पाय पखारू ❀ होत बिलंबु उतारहि पारू ॥

श्रीराम पर केवटकी भक्ति। কৈবর্ত্তের রামভক্তি।

कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराकर बोले कि तू वही कर जिससे तेरी नाव न जाय। शीघ्र जल ले आ और पैर धो। देरी हो रही है, पार उतार।

जासु नामु सुमिरत एक बारा ❀ उतरहिं नर भवसिंधु अपारा॥
सोइ कृपालु केवटहि निहोरा ❀ जेहिं जगु किय तिहु पगहु तें थोरा॥

जिनका नाम एक बार स्मरण करते ही मनुष्य अपार संसार-समुद्र-पार उतर जाते हैं और जिन्होंने संसारको अपने तीन चरणोंसे भी छोटा कर दिया वही कृपालु श्रीरामचन्द्रजी केवटकी विनती कर रहे हैं।

पदनख निरखि देवसरि हरषी ❀ सुनि प्रभुबचन मोह मति करषी॥
केवट रामरजायसु पावा ❀ पानि कठवता भरि लेइ आवा॥

चरणोंके नख देखकर गंगाजी प्रसन्न हुईं और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर मोहसे उनकी बुद्धि खिंच गयी। जब केवटने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पायी तब कठौता भरकर पानी ले आया।

अतिआनंद उमगि अनुरागा ❀ चरनसरोज पखारन लागा॥
बरषि सुमन सुर सकल सिहाहीं ❀ एहि सम पुन्यपुंज कोउ नाहीं॥

अत्यन्त आनन्दसे उमंगकर केवट प्रेममें मग्न हो गया और श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल धोने लगा। फूल बरसाकर सब देवता उसकी प्रशंसा करने लगे कि इसके समान पुण्यवान कोई नहीं है।

दो०—पद पखारि जलु पान करि ❀ आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहिं पुनि ❀ मुदित गयेउ लेइ पार॥१०२॥

चरणोंको धोकर केवटने परिवार समेत जलपान किया और अपने पितरोंको भवसागरके पार उतारकर फिर वह प्रसन्नतापूर्वक प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको गङ्गाजीके पार ले गया।

उतरि ठाढ़ भये सुरसरि रेता ❀ सीय रामु गुह लषनु समेता॥
केवट उतरि दंडवत कीन्हा ❀ प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा॥

सीताजी, श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी निषादसमेत पार उतरकर गङ्गाजीकी रेतीमें खड़े हुए। केवटने भी नावसे उतरकर दण्डवत की। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको यह सङ्कोच हुआ कि उसे पार उतारनेके लिये कुछ नहीं दिया।

पियहिय की सिय जाननिहारी ❀ मनिमुंदरी मनु मुदित उतारी॥
कहेउ कृपालु लेहु उतराई ❀ केवट चरन गहेउ अकुलाई॥

पतिके मनकी बातें जाननेवाली सीताजीने प्रसन्न मनसे अपनी मणिसे जड़ी हुई मुन्दरी उतार दी। उसे लेकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि यह उतराई लो। यह सुनते ही व्याकुल होकर केवटने चरण पकड़ लिये।

नाथ आजु मैं काह न पावा ❀ मिटे दोष - दुख - दारिद - दावा ॥
बहुत काल मैं कीन्हि मजूरी ❀ आजु दीन्हि बिधि बनि भलि भूरी ॥

हे नाथ, मेरे दोष, दुःख और दरिद्रताकी अग्नि शान्ति हो गयी। आज मैंने क्या नहीं पाया ? बहुत समय मैंने मजूरी की, परन्तु आज ब्रह्माने भलीभांतिसे पूरी मजूरी दी है।

अब कछु नाथ न चाहिय मोरें ❀ दीनदयाल अनुग्रह तोरें ॥
फिरती बार मोहि जोइ देबा ❀ सो प्रसाद मैं सिर धरि लेबा ॥

हे नाथ, हे दीनदयालु, आपकी दयासे अब मुझे कुछ नहीं चाहिये। लौटते समय आप मुझे जो कुछ देंगे, वह प्रसाद मैं शिरपर रखकर ले लूंगा।

दो०—बहुत कीन्ह प्रभु लखन सिय ❀ नहिं कछु केवट लेइ ॥
बिदा कीन्ह करुनायतन ❀ भगति बिमलु बरु देइ ॥१०२॥

श्रीरामचंद्रजी, सीताजी और लक्ष्मणजीने बहुत प्रयत्न किया, परंतु जब केवटने कुछ भी नहीं लिया, तब दयानिधान श्रीरामचंद्रजीने उसे अपनी निर्मल भक्तिका वरदान देकर बिदा किया।

तब मज्जनु करि रघुकुलनाथा ❀ पूजि पारथिव नायेउ माथा ॥
सिय सुरसरिहिं कहेउ कर जोरी ❀ मातु मनोरथ पुरउबि मोरी ॥

तब रघुकुलके स्वामी श्रीरामचंद्रजीने स्नान किया और पार्थिव पूजनकर मस्तक नवाया। सीताजीने हाथ जोड़कर गङ्गाजीसे कहा कि हे माता, मेरा मनोरथ पूरा करना।

पति-देवर-संग कुसल बहोरी ❀ आइ करउं जेहि पूजा तोरी ॥
सुनि सियबिनय प्रेम-रस-सानी ❀ भइ तब बिमल बारि बरबानी ॥

जिससे फिर पति और देवरके साथ सकुशल लौट आकर तुम्हारी पूजा करूं। तब प्रेमके रससे सनी हुई सीताजीकी विनती सुनकर निर्मल जलसे श्रेष्ठ वाणी हुई।

सुनु रघुबीरप्रिया बैदेही ❀ तव प्रभाउ जग बिदित न केही ॥
लोकप होहिं बिलोकत तोरें ❀ तोहि सेवहिं सब बिधि कर जोरें ॥

हे श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारी सीताजी, सुनो, तुम्हारा प्रभाव संसारमें किसे नहीं मालूम है ? तुम्हारे देखते ही लोक लोकपाल हो जाते हैं और सब सिद्धियां हाथ जोड़े हुए तुम्हारी सेवा करती हैं।

तुम्ह जो हमहिं बड़ि बिनय सुनाई ❀ कृपा कीन्हि मोहि दीन्हि बड़ाई ॥
तदपि देबि मैं देबि असीसा ❀ सफल होन हित निज बागीसा ॥

तुमने जो मुझे बड़ी विनती सुनायी, यह बड़ी कृपा की और मुझे बड़ाई दी है। तो भी हे देवि, मैं अपनी वाणीके सफल होनेके लिये तुम्हें आशिष दूंगी।

दो०—प्राननाथ देवरसहित ❀ कुसल कोसला आइ।
पूजिहि सब मनकामना ❀ सुजस रहिहि जग छाइ ॥१०४॥

प्राणपति और देवरके साथ कुशलपूर्वक अयोध्याको लौटोगी। तुम्हारे मनकी सब कामनाएँ पूरी होंगी और संसारमें तुम्हारा सुयश छा जायगा।

गंगबचन सुनि मंगलमूला ❀ मुदित सीय सुरसरि अनुकूला ॥
तब प्रभु गुहहि कहेउ घर जाहू ❀ सुनत सूख मुखु भा उर दाहू ॥

गङ्गाजीके मंगल-मूल वचन सुनकर और उन्हें अनुकूल जानकर सीताजी प्रसन्न हुईं। तब प्रभुने निषादसे कहा कि घर जाओ। यह सुनते ही निषादका मुख सूख गया और हृदयमें पीड़ा होने लगी।

दीन बचन गुह कह कर जोरी ❀ बिनय सुनहु रघुकुलमनि मोरी ॥
नाथ साथ रहि पंथु देखाई ❀ करि दिन चारि चरनसेवकाई ॥

निषाद हाथ जोड़कर यह दीन वचन कहने लगा कि हे रघुकुलमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजी, मेरी विनती सुनिये। हे नाथ, आपके साथ रहकर और आपको मार्ग दिखलाकर चार दिन आपके चरणोंकी सेवा करूंगा।

जेहि बन जाइ रहब रघुराई ❀ परनकुटी मैं करबि सुहाई ॥
तब मोहि कहं जसि देबि रजाई ❀ सोइ करिहउं रघुबीर दोहाई ॥

हे रघुराज, आप जिस वनमें जाकर रहेंगे उसमें मैं सुन्दर पर्णकुटी बना दूंगा। फिर मुझे आपकी सौगंद है, हे श्रीरामचन्द्रजी, आप जैसी मुझे आज्ञा देंगे, मैं वही करूंगा।

सहज सनेहु राम लखि तासू ❀ संग लीन्ह गुह हृदय हुलासू ॥
पुनि गुह ग्याति बोलि सब लीन्हें ❀ करि परितोषु बिदा तब कीन्हें ॥

निषादका स्वाभाविक स्नेह देखकर श्रीरामचन्द्रजीने उसे साथमें ले लिया। इससे निषादके हृदयमें बड़ी प्रसन्नता हुई। फिर निषादने अपनी जातिके सब लोगोंको बुला लिया और उन्हें समझाकर विदा किया।

दो०—तब गनपति सिव सुमिरि प्रभु ❀ नाइ सुरसरिहि माथ।
सखा-अनुज-सिय-सहित बन ❀ गवनु कीन्ह रघुनाथ ॥१०५॥

तब गणेशजी और शिवजीका स्मरण कर गङ्गाजीको मस्तक नवाकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने सखा निषाद, भाई लक्ष्मण और सीताजीसमेत वनको गमन किया।

(प्रयाग)

तेहि दिन भयेउ बिटप तर बासू ❁ लखन सखा सब कीन्ह सुपासू ॥
प्रात प्रातकृत करि रघुराई ❁ तीरथराजु दीख प्रभु जाई ॥

उस दिन वृक्षके नीचे वास हुआ। लक्ष्मणजी और गुह निषादने सब आराम कर दिया। सवेरे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने प्रातःकृत्य किया और फिर जाकर तीर्थराज प्रयागको देखा।

सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी ❁ माधवसरिस मीतु हितकारी ॥
चारि पदारथ भरा भंडारू ❁ पुन्य प्रदेस देस अति चारू ॥

इस तीर्थराजका मंत्री सत्य है, प्यारी स्त्री श्रद्धा है और माधवजी जैसे हितकारी मित्र हैं। इसका भाण्डार चार पदार्थोंसे भरा हुआ है और पुण्यस्थान ही इसका अत्यन्त सुन्दर देश है।

छेत्रु अगमु गढ़ु गाढ़ु सुहावा ❁ सपनेहुँ नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा ॥
सेन सकल तीरथ बरबीरा ❁ कलुष-अनीक-दलन रनधीरा ॥

इसका फैलाव अगम्य, दृढ़ और सुन्दर किला है जिसे विपक्षी स्वप्नमें भी नहीं पा सकते। समस्त तीर्थ-रूपी सुंदर वीरोंकी सेना है, जो पापोंकी सेनाको नष्ट करनेमें रणधीर है।

संगमु सिंहासनु सुठि सोहा ❁ छत्रु अषयबटु मुनिमनु मोहा ॥
चँवर जमुन अरु गंग तरंगा ❁ देखि होहिं दुख दारिद भंगा ॥

त्रिवेणीका संगम इसका सुंदर सिंहासन शोभित है। मुनियोंके मनको मोहित कर लेनेवाला अक्षयवट इसका छत्र है। गंगा और यमुनाकी तरंगें इसका चँवर हैं और इसे देखते ही दुःख और दारिद्र्य नष्ट हो जाते हैं।

दो०—सेवहिं सुकृती साधु सुचि ❁ पावहिं सब मन काम।
बंदी बेद-पुरान-गन ❁ कहहिं बिमल गुनग्राम ॥१०६॥

पुण्यवान, महात्मा और पवित्र लोग इसकी सेवा करते हैं, और उनकी सब मनोकामनाएँ पूरी हो जाती हैं। वेद और पुराणोंके समूह ही इसके वंदीजन हैं, जो इसके शुद्ध गुणसमूहोंका बखान करते हैं।

को कहि सकइ प्रयागप्रभाऊ ❁ कलुष-पुंज-कुंजर-मृग-राऊ ॥
अस तीरथपति देखि सुहावा ❁ सुखसागर रघुबर सुख पावा ॥

तीर्थराज प्रयागका प्रभाव कौन कह सकता है, जो पापोंके समूहरूपी हाथीके लिये सिंहके समान है ? ऐसे सुंदर तीर्थराजको देखकर सुखके समुद्र श्रीरामचन्द्रजीने भी सुख पाया।

कहि सिय लषनहि सखहिं सुनाई ❀ श्रीमुख तीरथ-राज-बड़ाई॥
करि प्रनामु देखत बन बागा ❀ कहत महातम अति अनुरागा॥

उन्होंने अपने श्रीमुखसे तीर्थराजकी बड़ाई कहकर सीताजी, लक्ष्मणजी और निषादको सुनायी। प्रणाम करके वन और बागीचोंको देखते हुए वे बड़े प्रेमसे तीर्थराजका माहात्म्य कहने लगे।

एहि बिधि आइ बिलोकी बेनी ❀ सुमिरत सकल सुमंगल देनी॥
मुदित नहाइ कीन्हि सिव सेवा ❀ पूजि जथाबिधि तीरथदेवा॥

इस प्रकार आकर उन्होंने त्रिवेणीको देखा, जो स्मरण करते ही सभी सुन्दर मङ्गलोंको देनेवाली है। प्रसन्नतापूर्वक स्नान कर उन्होंने शिवजीकी आराधना की और विधिपूर्वक तीर्थ-देवोंका पूजन किया।

तब प्रभु भरद्वाज पहिं आये ❀ करत दंडवत मुनि उर लाये॥
मुनि-मन-मोद न कछु कहि जाई ❀ ब्रह्मानंदरासि जनु पाई॥

फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी भरद्वाज ऋषिके पास आये। दण्डवत करते ही उन्हें मुनिने हृदयसे लगा लिया। मुनिके मनको जो आनन्द हुआ, उसका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता; मानों उन्होंने ब्रह्मानन्दकी राशि पा ली हो।

दो०—दीन्हि असीस मुनीस उर ❀ अति अनंदु अस जानि।
लोचनगोचर सुकृतफल ❀ मनहुँ किये बिधि आनि॥१०७॥

यह जानकर कि; मानों ब्रह्माने पुण्योंका फल आंखोंके सामने लाकर दिखला दिया, मुनीश्वरके हृदयमें अत्यन्त आनन्द हुआ और उन्होंने आशीर्वाद दिया।

कुसलप्रस्न करि आसनु दीन्हे ❀ पूजि प्रेम परिपूरन कीन्हे॥
कंद मूल फल अंकुर नीके ❀ दिये आनि मुनि मनहुँ अमी के॥

कुशलप्रश्न करनेके बाद मुनीश्वरने आसन दिया और पूजाकर उन्हें प्रेमसे सन्तुष्ट कर दिया। मुनिने अच्छे-अच्छे कंद, मूल, फल और अंकुर लाकर दिये; मानों वे सब अमृतके हों।

सीय-लषन-जन-सहित सुहाये ❀ अतिरुचि राम मूलफल खाये॥
भये बिगत स्रम राम सुखारे ❀ भरद्वाज मृदुबचन उचारे॥

सीताजी, लक्ष्मणजी और निषादसमेत श्रीरामचन्द्रजीने सुन्दर फल-मूलोंको बड़ी रुचिसे खाया। श्रीरामचन्द्रजीकी थकावट दूर हो गयी और वे सुखी हुए। फिर भरद्वाज मुनि यह मीठे वचन कहने लगे।

आजु सुफल तपु तीरथु त्यागू ❀ आजु सुफल जपु जोग बिरागू ॥
सुफल सकल-सुभ-साधन-साजू ❀ राम तुम्हहिं अवलोकत आजू ॥

मेरा तप, तीर्थवास और त्याग आज सफल हुआ; मेरा जप, योग और वैराग्य भी आज ही सफल हुआ। हे राम, आज आपके दर्शन करते ही सारे शुभ साधनाओंकी सामग्री सफल हो गयी।

लाभ अवधि सुख अवधि न दूजी ❀ तुम्हरे दरस आस सब पूजी ॥
अब करि कृपा देहु बरु एहू ❀ निज-पद-सरसिज सहज सनेहू ॥

लाभकी सीमा इससे बढ़कर नहीं और न सुखकी सीमा ही इसके सिवाय कोई दूसरी है। आपके दर्शनोंसे सब आशाएँ पूरी हो गयीं। अब कृपाकर यह वर दीजिये कि आपके चरणकमलोंमें स्वाभाविक प्रेम हो।

दो०—करम बचन मनु छाड़ि छलु ❀ जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहुँ नहिं ❀ कियें कोटि उपचार ॥१०८॥

मन, वाणी और कर्मसे छल छोड़कर जबतक आपका भक्त न हो, तबतक करोड़ों उपाय करनेपर भी स्वप्नमें भी सुख नहीं मिलता।

सुनि मुनिबचन रामु सकुचाने ❀ भाव भगति आनंद अघाने ॥
तब रघुबर मुनि सुजसु सुहावा ❀ कोटि भांति कहि सबहिं सुनावा ॥

भाव-भक्ति और आनन्दसे भरे हुए मुनिके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीको संकोच हुआ, फिर श्रीरामचन्द्रजीने मुनिका सुन्दर सुयश करोड़ों तरहसे कहकर सबको सुनाया।

सो बड़ सो सब-गुन-गन-गेहू ❀ जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू ॥
मुनि रघुबीर परसपर नवहीं ❀ बचन अगोचर सुख अनुभवहीं ॥

हे मुनीश्वर, जिसे आप आदर दें वही बड़ा है और वही सब गुणोंका भाण्डार है। मुनीश्वर और श्रीरामचन्द्रजी परस्पर नम्रता दिखलाते थे और वह सुख अनुभव करते थे, जिसका मुंहसे वर्णन नहीं किया जा सकता।

यह सुधि पाइ प्रयागनिवासी ❀ बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी ॥
भरद्वाजआस्रम सब आये ❀ देखन दसरथसुअन सुहाये ॥

यह खबर पाकर प्रयागके रहनेवाले ब्रह्मचारी, तपस्वी, मुनि सिद्ध और उदासीन—सब राजा दशरथके सुन्दर पुत्रोंको देखनेके लिये भरद्वाजके आश्रममें आये।

राम प्रनाम कीन्ह सब काहू ❀ मुदित भये लहि लोयन लाहू ॥
देहिं असीस परमसुखु पाई ❀ फिरे सराहत सुंदरताई ॥

श्रीरामचंद्रजीने सब किसीको प्रणाम किया। वे सब अपने नेत्रोंको सफल कर प्रसन्न हुए और अत्यन्त सुख पाकर आशीर्वाद देने लगे। फिर वे श्रीरामचंद्रजीकी शोभाकी प्रशंसा करते हुए लौट चले।

दो०—राम कीन्ह बिस्राम निसि ❀ प्रात प्रयाग नहाय।
चले सहित सिय लषन जन ❀ मुदित मुनिहिं सिरु नाय ॥१०९॥

श्रीरामचंद्रजीने रातको वहीं विश्राम किया। सवेरे प्रयाग-स्नानकर और मुनिको शिर नवाकर वे लक्ष्मणजी, सीताजी और निषादसमेत प्रसन्नतापूर्वक चले।

राम सप्रेमु कहेउ मुनि पाहीं ❀ नाथ कहिय हम केहि मगु जाहीं ॥
मुनि मन बिहंसि राम सन कहहीं ❀ सुगम सकलमगु तुम्ह कहं अहहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजीने प्रेमके साथ मुनिसे कहा कि हे नाथ, यह बतलाइये कि हम किस मार्ग होकर जावें। मनमें मुस्कुराकर मुनि श्रीरामचन्द्रजीसे कहने लगे कि आपको सब मार्ग सुगम हैं।

साथ लागि मुनि सिष्य बोलाये ❀ सुनि मन मुदित पचासक आये ॥
सबन्हि राम पर प्रेम अपारा ❀ सकल कहहिं मगु दीख हमारा ॥

साथ जानेके लिये मुनिने शिष्योंको बुलाया। सुनते ही मनमें आनन्दित होकर लगभग पचास शिष्य आ गये। सब शिष्योंका श्रीरामचंद्रजीपर अपार प्रेम था। वे सब कहने लगे कि हमारा देखा हुआ मार्ग है।

मुनि बटु चारि संग तब दीन्हे ❀ जिन्ह बहु जनम सुकृत सब कीन्हे ॥
करि प्रनामु रिषि आयसु पाई ❀ प्रमुदित हृदय चले रघुराई ॥

फिर मुनिने ऐसे चार ब्रह्मचारियोंको साथमें कर दिया, जिन्होंने बहुत जन्मोंमें सब पुण्य किये थे। प्रणाम करके और ऋषिकी आज्ञा पाकर श्रीरामचन्द्रजी हृदयमें आनन्दित होकर बिदा हुए।

ग्राम निकट निकसहिं जब जाई ❀ देखहिं दरसु नारिनर धाई ॥
होहिं सनाथ जनमफल पाई ❀ फिरहिं दुखित मनु संग पठाई ॥

वे सब जब जाकर किसी गांवके पाससे निकलते हैं तब स्त्रियां और पुरुष दौड़कर आते और दर्शन करते हैं। दर्शन कर अपने जन्मका फल पाकर वे स्त्री-पुरुष कृतकृत्य हो जाते हैं और कुछ दूरतक संग जाकर दुःखित मनसे लौटते हैं।

दो०—बिदा किये बटु बिनय करि ❀ फिरे पाइ मनकाम।
उतरि नहाये जमुनजल ❀ जो सरीरसम स्याम ॥११०॥

विनती करके श्रीरामचन्द्रजीने ब्रह्मचारियोंको बिदा किया, जो अपने मनके इच्छानुसार फल पाकर लौटे। फिर श्रीरामचन्द्रजीने पार जाकर यमुनाजीके जलमें स्नान किया, जो उनके शरीरके समान ही श्याम रंगका है।

सुनत तीरबासी नरनारी ❀ धाये निज निज काज बिसारी ॥
लषन - राम - सिय - सुंदरताई ❀ देखि करहिं निज भाग्य बड़ाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके आनेकी बात सुनकर नगरवासी पुरुष और स्त्रियां—सब अपना-अपना काम भुलाकर दौड़े। श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीकी सुन्दरता देखकर वे अपने भाग्यकी बड़ाई करने लगे।

अति लालसा सबहिं मन माहीं ❀ नाउं गाउं बूझत सकुचाहीं ॥
जे तिन्ह महं बयबृद्ध सयाने ❀ तिन्ह करि जुगुति रामु पहिचाने ॥

सभीके मनमें बड़ी लालसा थी, पर नाम और रहनेका गांव पूछते उन्हें बड़ा संकोच होता था। उनमें जो लोग वयोवृद्ध और चतुर थे उन्होंने युक्तिसे श्रीरामचन्द्रजीको पहचान लिया।

सकलकथा तिन्ह सबहिं सुनाई ❀ बनहि चले पितुआयसु पाई ॥
सुनि सबिषाद सकल पछिताहीं ❀ रानी राय कीन्ह भल नाहीं ॥

उन्होंने सबको सारी कथा कह सुनाई कि पिताकी आज्ञा पाकर ये वनमें आये हैं। सुनकर शोकसे सब पछताने लगे कि राजा और रानीने अच्छा नहीं किया।

तेहि अवसरु एक तापसु आवा ❀ तेजपुंज लघुबयस सुहावा ॥
कबि अलषितगति बेषु बिरागी ❀ मन - क्रम - बचन राम अनुरागी ॥

उसी अवसरपर वहां एक तपस्वी आया जो तेजस्वी, छोटी अवस्थावाला और सुन्दर था। कविजन उसकी गति नहीं जान सकते। वैरागीके समान उसका भेष था और मन, वाणी और कर्मसे वह श्रीरामचंद्रजीका भक्त था।

दो०—सजल नयन तन पुलकि निज ❀ इष्टदेउ पहिचानि।
परेउ दंड जिमि धरनितल ❀ दसा न जाइ बखानि ॥१११॥

अपने इष्टदेवको पहिचानकर उसके नेत्रोंमें जल छा गया, शरीर पुलकायमान हो गया और वह दण्डके समान पृथिवीपर पड़ रहा। उसकी दशाका वर्णन नहीं किया जा सकता।

राम सप्रेम पुलकि उर लावा ❀ परमरंकु जनु पारसु पावा ॥
मनहुं प्रेमु परमारथु दोऊ ❀ मिलत धरे तनु कह सबु कोऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजीने पुलकित होकर बड़े प्रेमके साथ उसे हृदयसे लगाया; मानों किसी महादरिद्रिने पारस पा लिया हो। सब लोग यह कहने लगे कि मानों प्रेम और परमार्थ, दोनों शरीर धारण किये हुए मिल रहे हैं।

बहुरि लषन पायन्ह सोइ लागा ❀ लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा ॥
पुनि सिय चरन धूरि धरि सीसा ❀ जननि जानि सिसु दीन्हि असीसा ॥

फिर वह लक्ष्मणजीके पैरोंमें पड़ गया। लक्ष्मणजीने प्रेमसे उमंगमें आकर उसे उठा लिया। फिर सीताजीके चरणोंकी धूलको उसने शिरपर रखा। सीता माताने उसे पुत्र समझकर आशिष दी।

कीन्ह निषाद दंडवत तेही ❀ मिलेउ मुदित लखि रामसनेही ॥
पियत नयनपुट रूपु पियूखा ❀ मुदित सुअसनु पाइ जिमि भूखा ॥

निषादने उसे दण्डवत की। वह भी श्रीरामचन्द्रजीका भक्त जानकर गुहसे आनंदित होकर मिला। नेत्ररूपी दोनेसे रूपरूपी अमृतको पीते-पीते वह ऐसा प्रसन्न हुआ जैसे भूखा बढ़िया भोजन खाकर प्रसन्न हो।

ते पितु मातु कहहु सखि कैसे ❀ जिन्ह पठये बन बालक ऐसे ॥
राम - लषन - सिय - रूपु निहारी ❀ होहिं सनेह बिकल नरनारी ॥

स्त्रियां कहने लगीं कि हे सखि, यह कहो, वे माता-पिता कैसे हैं जिन्होंने ऐसे बालकोंको वनमें भेज दिया। रामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीका रूप देखकर स्त्री और पुरुष सब प्रेमसे व्याकुल हो जाते हैं।

दो०—तब रघुबीर अनेकबिधि ❀ सखहि सिखावनु दीन्ह।
रामरजायसु सीस धरि ❀ भवन गवँनु तेइँ कीन्ह ॥११२॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने अनेक प्रकारसे सखा निषादको सीख दी। निषादने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा शिरोधार्य कर अपने घरके लिये प्रस्थान किया।

(प्रयागसे प्रस्थान)

पुनि सिय राम लषन कर जोरी ❀ जमुनहिं कीन्ह प्रनाम बहोरी ॥
चले ससीय मुदित दोउ भाई ❀ रबितनुजा कै करत बड़ाई ॥

फिर सीताजी, श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीने हाथ जोड़कर यमुनाजीको फिर प्रणाम किया। सूर्य-पुत्री यमुनाजीकी बड़ाई करते हुए दोनों भाई सीताजीसमेत आनन्दित होकर चले।

पथिक अनेक मिलहिं मग जाता ❀ कहहिं सप्रेम देखि दोउ भ्राता ॥
राजलषन सब अंग तुम्हारे ❀ देखि सोचु अति हृदय हमारे ॥

मार्गमें जाते हुए उन्हें अनेक यात्री मिलते थे, जो दोनों भाइयोंको देखकर प्रेमके साथ कहते थे कि आपके शरीरमें राजाओंके सब लक्षण हैं, उन्हें देखकर हमारे हृदयमें बड़ा सोच होता है।

मारग चलहु पयादेहिं पायें ❀ ज्योतिष झूठ हमारेहि भायें ॥
अगमु पंथु गिरि कानन भारी ❀ तेहि महँ साथ नारि सुकुमारी ॥

आप पांव-पैदल ही मार्ग चल रहे हैं। हमारी समझसे ज्योतिष मिथ्या है। अगम्य मार्ग और पर्वत हैं, भारी वन है, उसपर भी साथमें सुकुमार स्त्री है।

करि केहरि बन जाइ न जोई ❀ हम संग चलहिं जो आयसु होई ॥
जाब जहां लगि तहं पहुंचाई ❀ फिरब बहोरि तुम्हहिं सिरु नाई ॥

वनमें हाथी और सिंह हैं, जो देखे नहीं जाते। यदि आज्ञा हो तो संगमें हम चलें। जहांतक आप जावेंगे वहांतक पहुंचाकर हम आपको शिर नवाकर फिर लौट आवेंगे।

दो०—एहि बिधि पूछहिं प्रेम बस ❀ पुलकगात जलु नैन।
कृपासिंधु फेरहिं तिन्हहिं ❀ कहि बिनीत मृदु बैन ॥११३॥

इस प्रकार प्रेमवश पुलकित शरीर होकर नेत्रोंमें जल भरे हुए सब पूछते हैं और कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी मीठे और विनीत वचन कहकर उन सबको लौटा देते हैं।

जे पुर गांव बसहिं मग माहीं ❀ तिन्हहिं नाग-सुर-नगर सिहाहीं ॥
केहिं सुकृती केहि घरी बसाये ❀ धन्य पुन्यमय परम सुहाये ॥

श्रीरामचन्द्रजीके मार्गमें जो नगर और गांव बसते हैं उनकी प्रशंसा नागलोक और देवलोक भी करते हैं कि उन्हें किस पुण्यात्माने किस घड़ीमें बसाया जो वे अत्यन्त सुन्दर, पुण्यरूप और धन्य हैं।

जहं जहं रामचरन चलि जाहीं ❀ तिन्ह समान अमरावति नाहीं ॥
पुन्यपुंज मग - निकट - निवासी ❀ तिन्हहिं सराहहिं सुर-पुर-बासी ॥

जहां-जहां चलकर श्रीरामचन्द्रजीके चरण जाते हैं, उन स्थानोंके समान इन्द्रपुरी भी नहीं है। मार्गोंके पासमें बसनेवाले लोग बड़े पुण्यवान हैं। स्वर्गके निवासी देवता भी उनकी बड़ाई करते हैं।

जे भरि नयन बिलोकहिं रामहिं ❀ सीता-लषन-सहित घनस्यामहिं ॥
जे सर सरित राम अवगाहहिं ❀ तिन्हहिं देव-सर-सरित-सराहहिं ॥

क्योंकि सीताजी और लक्ष्मणजी समेत घनश्याम श्रीरामचन्द्रजीको वे नेत्र भरकर देखते हैं। जिन सरोवरों और नदियोंमें श्रीरामचन्द्रजी स्नान करते हैं उनकी प्रशंसा देवताओंके सरोवर और नदियां भी करती हैं।

जेहि तरुतर प्रभु बैठहिं जाई ❀ करहिं कलपतरु तासु बड़ाई ॥
परसि राम-पद-पदुम-परागा ❀ मानति भूमि भूरि निजभागा ॥

जिस पेड़के नीचे प्रभु श्रीरामचन्द्रजी बैठते हैं, उसकी बड़ाई कल्पवृक्ष भी करते हैं। श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी रजका स्पर्श कर पृथिवी अपना बड़ा भाग्य मानती है।

दो०—छाहं करहिं घन बिबुधगन ❁ बरषहिं सुमन सिहाहिं ।
देखत गिरि बन बिहंग मृग ❁ रामु चले मगु जाहिं ॥११४॥

श्रीरामचन्द्रजीके ऊपर मार्गमें बादल छाया करते और देवता फूल बरसाते तथा प्रशंसा करते हैं। पर्वत, वन, पक्षी, और हिरनोंको देखते हुए श्रीरामचंद्रजी मार्गपर चले जा रहे हैं।

सीता-लषन-सहित रघुराई ❁ गावं निकट जब निकसहिं जाई ॥
सुनि सब बाल बृद्ध नर नारी ❁ चलहिं तुरत गृहकाज बिसारी ॥

सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचंद्रजी जब किसी गांवके पास होकर निकलते हैं तब सुनते ही बालक, बूढ़े, पुरुष, स्त्री—सब अपना गृहकार्य भूलकर तुरन्त चल देते हैं।

राम-लषन-सिय-रूप निहारी ❁ पाइ नयनफलु होहिं सुखारी ॥
सजल बिलोचन पुलक सरीरा ❁ सब भये मगन देखि दोउ बीरा ॥

वे श्रीरामचंद्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीका रूप देखकर अपने नेत्रोंका फल पाकर सुखी होते हैं। दोनों वीरोंको देखकर सब मग्न हो गये, नेत्रोंमें जल छा गया और उनके शरीर पुलकायमान हो गये।

बरनि न जाइ दसा तिन्ह केरी ❁ लहि जनु रंकन्ह सुर-मनि-ढेरी ॥
एकन्ह एक बोलि सिख देहीं ❁ लोचन लाहु लेहु छन एहीं ॥

उनकी दशा वर्णन नहीं की जाती, मानों गरीबोंने देव-मणियोंके ढेरको पा लिया हो। एकको एक बुलाता और यह सीख देता है कि इस क्षणमें नेत्रोंका लाभ ले लो।

रामहि देखि एक अनुरागे ❁ चितवत चले जाहिं संग लागे ॥
एक नयनमग छबि उर आनी ❁ होहिं सिथिल तन मन बरबानी ॥

श्रीरामचंद्रजीको देखकर कोई-कोई ऐसे प्रेममें भर गये कि वे उन्हें देखते-देखते साथ ही लगे चले जा रहे हैं। कोई नेत्रोंके द्वारसे श्रीरामचंद्रजीकी छविको हृदयमें लाकर तन, मन और सुंदर वचन—सबकी ओरसे शिथिल हो जाते हैं।

दो०—एक देखि बटछाहं भलि ❁ डासि मृदुल तृन पात ।
कहहिं गवांइय छिनुक स्रमु ❁ गवनब अबहिं कि प्रात ॥११५॥

कोई-कोई लोग बरगदके पेड़की भली छाया देखकर वहां मुलायम तिनके और पत्ते बिछाकर श्रीरामचंद्रजीसे कहते हैं कि एक क्षण ठहरकर थकावट दूर कीजिये। आगे अभी जाइयेगा कि सबेरे?

एक कलस भरि आनहिं पानी ❁ अंचइय नाथ कहहिं मृदुबानी ॥
सुनि प्रिय बचन प्रीति अति देखी ❁ राम कृपालु सुसील बिसेखी ॥

कोई-कोई कलश भरकर पानी ले आते हैं और मीठी वाणीसे कहते हैं कि हे नाथ, इसे पीजिये। अत्यंत सुशील, कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने प्यारे वचन सुनकर उनकी अत्यंत प्रीति देखी।

जानी स्रमित सीय मनमाहीं ❀ घरिक बिलम्बु कीन्ह बटछाहीं ॥
मुदित नारिनर देखहिं सोभा ❀ रूपअनूप नयन मनु लोभा ॥

उन्होंने अपने मनमें सीताजीको भी थका हुआ समझा; अतः बरगदकी छायामें बैठकर एक घड़ी विश्राम किया। स्त्री और पुरुष—सब प्रसन्न होकर श्रीरामचंद्रजीकी शोभा देखने लगे। अनुपम रूपको देखकर उनके नेत्र और मन लुभा गये।

एकटक सब सोहहिं चहुँओरा ❀ रामचंद्र मुख - चंद्र - चकोरा ॥
तरुन-तमाल-बरन तनु सोहा ❀ देखत कोटि-मदन-मनु मोहा ॥

श्रीरामचन्द्रजीके मुखरूपी चन्द्रमाके चारों ओर बैठे एकटक देखते हुए वे सब चकोरकी भांति शोभा पा रहे हैं। श्रीरामचन्द्रजीका नये तमाल पत्रके रंगका सांवला शरीर शोभायमान हो रहा है, जिसे देखकर करोड़ों कामदेवोंके मन भी मोहित हो जाते हैं।

दामिनिबरन लषनु सुठि नीके ❀ नखसिख सुभग भावते जीके ॥
मुनिपट कटिन्ह कसे तूनीरा ❀ सोहहिं करकमलनि धनुतीरा ॥

बिजलीके रङ्गवाले लक्ष्मणजी बड़े सुन्दर हैं, नखसे लेकर चोटीतक मनोहर हैं और जीको बहुत प्यारे लगते हैं। दोनों मुनियोंके वस्त्र धारण किये हुए हैं, कमरमें तरकस कसे हुए हैं और दोनोंके कमलके समान हाथोंमें धनुषबाण शोभित हो रहे हैं।

दो०—जटा मुकुट सीसनि सुभग ❀ उर भुज नयन बिसाल।
सरद-परब- बिधु-बदन बर ❀ लसत स्वेद - कन - जाल ॥११६॥

दोनोंके शिरोंपर जटाओंके सुन्दर मुकुट हैं, हृदय (छाती), भुजा और नेत्र विशाल हैं। शरदपूर्णिमाके चन्द्रमाके समान श्रेष्ठ मुखपर पसीनेकी बहुतसी बून्दें बड़ी शोभा पा रही हैं।

बरनि न जाइ मनोहर जोरी ❀ सोभा बहुत थोरि मति मोरी ॥
राम - लषन - सिय - सुंदरताई ❀ सब चितवहिं चित मन मति लाई ॥

मनोहर जोड़ीका वर्णन नहीं किया जा सकता। इसकी शोभा बहुत है और मेरी बुद्धि थोड़ी है। श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीकी सुन्दरताकी ओर सब लोग मन, बुद्धि और चित्त लगाकर देखने लगे।

थके नारि नर प्रेम पियासे ❀ मनहुँ मृगी मृग देखि दियासे ॥
सीयसमीप ग्रामतिय जाहीं ❀ पूछत अतिसनेह सकुचाहीं ॥

प्रेमके प्यासे स्त्री और पुरुष —सब थककर ऐसे खड़े हो गये; मानों दीपकको देखकर हिरनी और हिरन खड़े हो गये हों। गाँवकी स्त्रियां सीताजीके पास जाती हैं, पर अत्यन्त स्नेह होनेसे पूछते हुए उन्हें संकोच होता है।

बार बार सब लागहिं पाये ❀ कहहिं बचन मृदुसरस सुभाये ॥
राजकुमारि बिनय हम करहीं ❀ तिय सुभाय कछु पूछत डरहीं ॥

बार-बार सब पैरों पड़ती और स्वभावसे मीठे और सरल वचन कहती हैं कि हे राजकुमारी, हम विनती कर रही हैं। स्त्री-स्वभाव होनेसे पूछते हुए कुछ डर लगता है।

स्वामिनि अबिनय छमबि हमारी ❀ बिलगु न मानब जानि गवाँरी ॥
राजकुअँर दोउ सहज सलोने ❀ इन्ह तें लहि दुति मरकत सोने ॥

हे स्वामिनि, हमारी ढिठाईको क्षमा करना। हमें गँवारिन जानकर बुरा मत मानना। दोनों राजकुमार स्वभावसे ही लावण्यमय हैं। मरकतमणि और सोनेने इन्हींसे दमक पायी है।

दो०—स्यामल गौर किसोर बर ❀ सुंदर सुखमा अयन।
सरद-सर्बरी-नाथ-मुखु ❀ सरदसरोरुह नयन ॥११७॥

दोनों राजकुमार सांवले और गोरे हैं, सुन्दर किशोर अवस्था है, सुन्दरता और शोभाके स्थान हैं, शरदऋतुके पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाले हैं और शरदऋतुके कमलके समान उनके नेत्र हैं।

कोटि मनोज लजावनिहारे ❀ सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे ॥
सुनि सनेहमय मंजुलबानी ❀ सकुचि सीय मन महु मुसुकानी ॥

हे सुन्दर मुखवाली, यह कहो कि करोड़ों कामदेवोंको भी लजानेवाले ये तुम्हारे कौन हैं। यह प्रेम भरी सुन्दर वाणी सुनकर सीताजी सकुचाकर मनमें मुस्कुरायीं।

तिन्हहिं बिलोकि बिलोकति धरनी ❀ दुहुँ सकोच सकुचति बरबरनी ॥
सकुचि सप्रेम बाल-मृग-नयनी ❀ बोली मधुरबचन पिकबयनी ॥

उन्हें देखकर सीताजी पृथिवीकी ओर देखने लगीं। सुन्दर रङ्गवाली सीताजी श्रीरामचन्द्रजी और स्त्रियों—दोनोंके ही संकोचसे सकुचाने लगीं। फिर हिरनके बच्चेके समान नेत्र और कोयलके समान बोलीवाली सीताजी सकुचाकर प्रेमके साथ ये मीठे वचन कहने लगीं।

सहज सुभाय सुभग तन गोरे ❀ नामु लषनु लघुदेवर मोरे ॥
बहुरि बदनुबिधु अंचल ढांकी ❀ पियतन चितइ भौंह करि बांकी ॥

सुन्दर गोरे शरीर और सहज स्वभाव वाले ये मेरे छोटे देवर हैं; जिनका नाम लक्ष्मण है। फिर अपना चंद्रमुख अञ्चलसे ढककर और अपने प्यारे श्रीरामचंद्रजीकी ओर देखकर टेढ़ी भौंह करके—

खंजनमंजुतिरीछे नयननि ❀ निजपति कहेउ तिन्हहिं सिय सयननि॥
भईं मुदित सब ग्रामबधूटी ❀ रंकन्ह रायरासि जनु लूटी॥

खंजन पक्षीके समान सुन्दर बांके नेत्रोंके इशारेसे सीताजीने उन स्त्रियोंसे कहा कि वे मेरे पति हैं। गांवकी सब स्त्रियां यह सुनकर प्रसन्न हो गयीं; मानों कंगालोंने राज-सामग्रीके ढेरको लूट लिया हो।

दो०—अतिसप्रेम सियपाय परि ❀ बहुबिधि देहिं असीस।
सदा सोहागिनि होहु तुम्ह ❀ जब लगि महि अहिसीस॥११८॥

बड़े प्रेमके साथ सीताजीके पैरों पड़कर वे सब अनेक प्रकारसे आशिष देने लगीं कि जबतक शेषनागके शिरपर पृथिवी है, तबतक तुम सदा सौभाग्यवती बनी रहो।।

पारबतीसम पतिप्रिय होहू ❀ देबि न हम पर छाड़बि छोहू॥
पुनि पुनि बिनय करिय कर जोरी ❀ जौं एहि मारग फिरिय बहोरी॥

तुम अपने पतिको पार्वतीके समान प्यारी बनी रहो। हे देवि, हमपरसे दया दूर मत करना। हम सब हाथ जोड़कर बार-बार यह विनती करती हैं कि यदि इसी मार्गसे फिर लौटना हो तो—

दरसन देब जानि निजु दासी ❀ लखी सीय सब प्रेमपियासी॥
मधुरबचन कहि कहि परितोषी ❀ जनु कुमुदिनी कौमुदी पोषी॥

अपनी दासी जानकर दर्शन देना। सीताजीने देखा कि वे सब प्रेमकी प्यासी हैं; अतः उन्होंने उन सबको मीठे वचन कह-कहकर संतुष्ट किया; मानों चांदनीने कुमुदिनीको खिला दिया हो।

तबहिं लषन रघुबररुख जानी ❀ पूछेउ मगु लोगन्हि मृदुबानी॥
सुनत नारिनर भये दुखारी ❀ पुलकित गात बिलोचन बारी॥

तब श्रीरामचंद्रजीका रुख जानकर लक्ष्मणजीने मीठी वाणीसे लोगोंसे मार्ग पूछा। सुनते ही सब स्त्री-पुरुष दुःखी हो गये, उनके शरीर पुलकायमान हो गये और नेत्रोंमें आंसू आ गये।

मिटा मोदु मन भये मलीने ❀ बिधि निधि दीन्हि लेत जनु छीने॥
समुझि करमगति धीरजु कीन्हा ❀ सोधि सुगम मगु तिन्ह कहि दीन्हा॥

उनका आनन्द जाता रहा, उनके मन मलीन हो गये; ब्रह्माने जो सम्पत्ति दी थी, उसे मानों वह छीन रहा हो। कर्मकी गति समझकर सबने धीरज रखा और विचारकर उन्होंने सुगम मार्ग बतला दिया।

दो०—लषन-जानकी-सहित तब ❀ गवनु कीन्ह रघुनाथ।
फेरे सब प्रियबचन कहि ❀ लिये लाइ मन साथ॥११९॥

तब लक्ष्मण और जानकीजी समेत श्रीरामचन्द्रजीने प्रस्थान किया और उन सबको प्यारे वचन कहकर लौटाया, पर उनके मन अपने साथ ही ले लिये।

फिरत नारिनर अति पछिताहीं ❀ दैवहि दोषु देहिं मन माहीं॥
सहित विषाद परसपर कहहीं ❀ बिधिकरतब उलटे सब अहहीं॥

लौटते हुए स्त्रियों और पुरुषोंको बड़ा पछतावा होता है और वे मनमें दैवको दोष देते हैं। शोकके साथ वे सब परस्पर कहते हैं कि ब्रह्माके सब काम उलटे हैं।

निपट निरंकुस निठुर निसंकू ❀ जेहि ससि कीन्ह सरुज सकलंकू॥
रूखु कलपतरु सागरु खारा ❀ तेहिं पठये बन राजकुमारा॥

विधाता बिलकुल निरंकुश, निष्ठुर और निडर है। जिस ब्रह्माने चंद्रमाको रोगी और कलङ्की, कल्पवृक्षको पेड़ और समुद्रको खारा बनाया, उसीने इन राजकुमारोंको वनमें भेजा है।

जौं पै इन्हहिं दीन्ह बनबासू ❀ कीन्ह बादि बिधि भोगबिलासू॥
ए बिचरहिं मग बिनु पदत्राना ❀ रचे बादि बिधि बाहन नाना॥

यदि विधाताने इन्हें वनवास दिया है तो भोग-विलास व्यर्थ ही बनाये। जब ये जूतोंके बिना ही मार्ग चलते हैं, तब विधाताने तरह-तरहकी सवारियाँ व्यर्थ ही बनायीं।

ए महि परहिं डासि कुसपाता ❀ सुभगसेज कत सृजत बिधाता॥
तरु बर-बास इन्हहिं बिधि दीन्हा ❀ धवलधामु रचि रचि स्रमु कीन्हा॥

जब कुश और पत्ते बिछाकर ये पृथिवीपर सोते हैं, तब विधाताने सुन्दर पलँग क्यों बनाये? जब ब्रह्माने इन्हें सुन्दर पेड़ोंके नीचे निवास दिया है तब सफेद महल बना-बनाकर व्यर्थ ही परिश्रम किया है।

दो०—जौं ए मुनि-पट-धर जटिल ❀ सुंदर सुठि सुकुमार।
बिबिधभांति भूषन बसन ❀ बादि किये करतार॥१२०॥

यदि ये अत्यन्त सुन्दर और सुकुमार राजपुत्र मुनियोंके समान कपड़े धारण करते और जटाएँ रखते हैं तो तरह-तरहके भूषण और वस्त्र विधाताने व्यर्थ ही बनाये।

जौं ए कंद मूल फल खाहीं ❀ बादि सुधादि असन जग माहीं॥
एक कहहिं ए सहज सुहाये ❀ आपु प्रगट भये बिधि न बनाये॥

यदि ये कंद-मूल-फल खाते हैं, तो संसारमें अमृत आदि भोजन व्यर्थ ही हैं। कोई कहने लगा कि ये स्वभावसे ही सुन्दर हैं। ये स्वयं प्रकट हुए हैं। इन्हें ब्रह्माने नहीं बनाया।

जहँ लगि बेद कही बिधिकरनी ❀ स्रवन नयन मन गोचर बरनी ॥
देखहु खोजि भुअन दसचारी ❀ कहँ अस पुरुष कहाँ असि नारी ॥

वेदोंने जहांतक बतलाया है, वहांतक ब्रह्माकी रचनाको कानसे सुनने, नेत्रोंसे देखने और मनसे समझनेमें आनेयोग्य बतलाया है। चौदह लोकोंको खोजकर देखो, ऐसा पुरुष कहां है और ऐसी स्त्री कहां है ?

इन्हहिं देखि बिधि मनु अनुरागा ❀ पटतर जोगु बनावइ लागा ॥
कीन्ह बहुत स्रम ऐक न आये ❀ तेहिं इरिषा बन आनि दुराये ॥

इन्हें देखकर ब्रह्माके मनमें बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ और वह इनकी समानताके योग्य मनुष्य बनाने लगा। बहुत परिश्रम किया, परन्तु समता नहीं आयी। उसी ईर्ष्यासे इन्हें वनमें लाकर छिपाया है।

एक कहहिं हम बहुत न जानहिं ❀ आपुहि परम धन्य करि मानहिं ॥
ते पुनि पुन्यपुंज हम लेखे ❀ जे देखहिं देखिहहिं जिन्ह देखे ॥

कोई कहने लगा कि हम बहुत नहीं जानते। हम अपनेको ही बहुत धन्य मानते हैं। फिर, हमने उनको भी बड़ा पुण्यवान् समझा है, जिन्होंने इन्हें देखा है, जो इन्हें देख रहे हैं, या जो इन्हें देखेंगे।

दो०—एहि बिधि कहि कहि बचन प्रिय ❀ लेहिं नयन भरि नीर।
किमि चलिहहिं मारग अगम ❀ सुठि सुकुमार सरीर ॥१२१॥

इस प्रकार प्यारे वचन कह-कहकर नेत्रोंमें जल भर लाते हैं कि सुन्दर सुकुमार शरीरवाले ये राजपुत्र अगम्य मार्गपर कैसे चलेंगे।

नारि सनेह बिकलबस होहीं ❀ चकई सांझ समय जनु सोहीं ॥
मृदु-पद-कमल कठिन मगु जानी ❀ गहबरि हृदय कहहिं बरबानी ॥

प्रेमके वशमें होनेसे स्त्रियां व्याकुल होती हैं मानों संध्या समय चकवी शोभित हो। चरणकमलोंको कोमल और मार्गको कठिन जानकर वे सोचभरे हृदयसे सुन्दर वाणीसे कहने लगीं।

परसत मृदुलचरन अरुनारे ❀ सकुचति महि जिमि हृदय हमारे ॥
जौं जगदीस इन्हहिं बनु दीन्हा ❀ कस न सुमनमय मारगु कीन्हा ॥

इनके लाल कोमल चरणोंको छूते हुए पृथिवी सकुचाती है; जैसे हमारे हृदय। यदि जगदीशने इन्हें वन दिया है तो मार्गको फूलोंका ही क्यों नहीं बनाया ?

जौं मांगा पाइय बिधि पाहीं ❀ ए रखिअहि सखि आखिन्ह माहीं ॥
जे नरनारि न अवसर आये ❀ तिन्ह सिय रामु न देखन पाये ॥

हे सखि, यदि विधातासे मांगा हुआ वर मिले तो इनको आंखोंमें रखें। उस अवसरपर जो स्त्रीपुरुष पहुंच न सके उन्होंने सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको देख नहीं पाया।

सुनि सरूप बूझहिं अकुलाई ❀ अब लगि गये कहां लगि भाई ॥
समरथ धाइ बिलोकहिं जाई ❀ प्रमुदित फिरहिं जनमफलु पाई ॥

वे शोभा सुनकर व्याकुल हो उठते और पूछने लगते कि हे भाई, अबतक वे कितनी दूर पहुंचे होंगे। इनमें जो सामर्थ्यवान होते, वे दौड़ जाकर दर्शन करते और अपने जन्मका फल पाकर आनन्दित होकर लौटते थे।

दो०—अबला बालक बृद्धजन ❀ कर मीजहिं पछिताहिं।
होहिं प्रेमबस लोग इमि ❀ राम जहाँ जहं जाहिं ॥१२२॥

स्त्रियां, बालक और बूढ़े, सब लोग हाथ मल-मलकर पछताने लगे। श्रीरामचन्द्रजी जहां-जहां जाते हैं, लोग इसी प्रकार प्रेमके वशमें हो जाते हैं।

गावं गावं अस होइ अनंदू ❀ देखि भानु-कुल-कैरव-चंदू ॥
जे कछु समाचार सुनि पावहिं ❀ ते नृपरानिहिं दोषु लगावहिं ॥

सूर्यकुलरूपी कुमुदके चन्द्रमा श्रीरामचन्द्रजीको देखकर गांव-गांव ऐसा आनन्द होता था। जो कोई यह समाचार सुन पाते वे राजा और रानीको दोष लगाते थे।

कहहिं एक अतिभल नरनाहू ❀ दीन्ह हमहिं जेहि लोचनलाहू ॥
कहहिं परसपर लोग लोगाई ❀ बातैं सरल सनेह सुहाई ॥

कोई कहते कि राजा दशरथ बहुत ही अच्छे हैं, जिन्होंने हमें नेत्रोंका लाभ दिया है। स्त्रियां और पुरुष सीधी, स्नेहभरी सुन्दर बातें परस्पर कहते हैं।

ते पितु मातु धन्य जिन्ह जाये ❀ धन्य सो नगरु जहां तें आये ॥
धन्य से देसु सैलु बनु गाऊं ❀ जहं जहं जाहिं धन्य सोइ ठाऊं ॥

वे मातापिता धन्य हैं, जिन्होंने इन्हें पैदा किया। वह नगर धन्य है जहांसे ये आये हैं। वह देश, पर्वत, वन और गांव धन्य हैं जहां-जहां ये जाते हैं।

सुखु पायेउ बिरंचि रचि तेही ❀ ए जेहि के सब भांति सनेही ॥
राम-लषन-पथि-कथा सुहाई ❀ रही सकल मग कानन छाई ॥

ब्रह्माने उसीको रचकर सुख पाया है, जिसके ये सब प्रकार स्नेही हैं। श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके मार्गकी सुन्दर कथा सब वनों और सब मार्गोंमें छा गयी।

दो०—एहि बिधि रघु-कुल-कमल-रबि ❀ मग लोगन्ह सुख देत।
जाहिं चले देखत बिपिन ❀ सिय-सौमित्रि-समेत ॥१२३॥

रघुवंशरूपी कमलके सूर्य श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार मार्गके लोगोंको सुख देते और वन देखते हुए सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत चले जा रहे हैं।

आगे रामु लषनु बने पाछे ❀ तापसबेष बिराजत काछे ॥
उभय बीच सिय सोहति कैसे ❀ ब्रह्म-जीव-बिच माया जैसे ॥

आगे-आगे श्रीरामचन्द्रजी और पीछे तपस्वियोंका भेष धारण किये हुए सुहावने लक्ष्मणजी जा रहे हैं। दोनोंके बीचमें सीताजी कैसी शोभा पाती हैं कि मानों ब्रह्म और जीवके बीचमें माया हो।

बहुरि कहउँ छबि जसि मन बसई ❀ जनु मधु-मदन-मध्य रति लसई ॥
उपमा बहुरि कहउँ जिय जोही ❀ जनु बुध बिधु बिच रोहिनि सोही ॥

वह छवि जैसी मेरे मनमें बस रही है, मैं (तुलसीदास) फिर कहता हूं कि मानों वसन्तऋतु और कामदेवके बीचमें रति शोभा पा रही हो। हृदयमें देखकर एक उपमा फिर कहता हूं कि मानों बुध और चन्द्रमाके बीचमें रोहिणी शोभित हो।

प्रभु-पद-रेख बीच बिच सीता ❀ धरति चरन मग चलति सभीता ॥
सीय-राम-पद-अंक बराये ❀ लषनु चलहिं मग दाहिन बायें ॥

पृथिवीपर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका जो चिह्न पड़ता है उसके बीचोबीच चरण रखती हुई सीताजी भयपूर्वक रास्ता चली जाती हैं। सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके चिह्नोंको बचाते हुए लक्ष्मणजी मार्गके दाहिने और बायें चलते हैं।

राम-लषन-सिय-प्रीति सुहाई ❀ बचन अगोचर किमि कहि जाई ॥
खग मृग मगन देखि छबि होहीं ❀ लिये चोरि चित राम बटोहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजी,लक्ष्मणजी और सीताजीकी सुन्दर प्रीति वाणीकी पहुंचके बाहर है,वह कैसे कही जा सकती है? छविको देखकर पशु और पक्षी आनन्दित हो जाते हैं। बटोही श्रीरामचन्द्रजीने उनके चित्त चुरा लिये।

दो०—जिन्ह जिन्ह देखे पथिक प्रिय ❀ सियसमेत दोउ भाइ।
भव-मग-अगम-अनंदु तेइ ❀ बिनु श्रमु रहे सिराइ ॥१२४॥

जिन-जिनने प्यारे बटोहियों, सीताजीसमेत दोनों भाइयोंको देखा, वे संसाररूपी कठिन मार्गसे आनन्दसे ही,परिश्रमके बिना पार हो गये।

अजहुँ जासु उर सपनेहु काऊ ❀ बसहिं लषन-सिय-रामु बटाऊ ॥
राम-धाम-पथु पाइहि सोई ❀ जो पथ पाव कबहुँ मुनि कोई ॥

अब भी कभी स्वप्नमें भी जिसके हृदयमें लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी—तीनों बटोही बसते हैं वही श्रीरामचन्द्रजीके स्थानके मार्गको, उस मार्गको जिसे कभी कोई ही मुनि पाता है, पायेगा।

तब रघुबीर स्त्रमित सिय जानी ❀ देखि निकट बटु सीतल-पानी ॥
तहँ बसि कंद मूल फल खाई ❀ प्रात नहाइ चले रघुराई ॥

जब श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीको थका हुआ समझा, तब निकट ही बरगदका वृक्ष और ठंढा पानी देखकर और कंद-मूल-फल खाकर वहीं विश्राम किया और प्रातःकाल होनेपर स्नान करके वे आगे चले।

(वाल्मीकि-आश्रम)

देखत बन सर सैल सुहाये ❀ बालमीकिआश्रम प्रभु आये ॥
रामु दीख मुनिबासु सुहावन ❀ सुंदर गिरि काननु जलु पावन ॥

वन, सरोवर और सुन्दर पर्वत देखते हुए प्रभु श्रीरामचन्द्रजी वाल्मीकि मुनिके आश्रममें आ गये। श्रीरामचन्द्रजीने मुनिका सुन्दर निवासस्थान देखा, जिसमें सुन्दर वन, पर्वत और पवित्र जल है।

सरनि सरोज बिटप बन फूले ❀ गुंजत मंजु मधुप रस भूले ॥
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं ❀ बिरहित बैर मुदित मन चरहीं ॥

तालाबोंमें कमल और वनमें वृक्ष फूले हुए हैं और फूलोंके रससे मतवाले होकर सुन्दर भौंरे गूंज रहे हैं। पशु और पक्षी बहुत कोलाहल कर रहे हैं और वैर त्यागकर मनमें आनन्दित होकर घूम रहे हैं।

दो०—सुचि सुंदर आस्रमु निरखि ❀ हरषे राजिवनैन ।
सुनि रघु-बर-आगमन मुनि ❀ आगे आइउ लैन ॥१२५॥

पवित्र सुन्दर आश्रम देखकर कमलनेत्र श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्न हुए। श्रीरामचन्द्रजीका आना सुनकर मुनि उन्हें लेनेके लिये आगे आये।

मुनि कहुँ रामु दंडवत कीन्हा ❀ आसिरबादु बिप्रबर दीन्हा ॥
देखि राम छबि नयन जुड़ाने ❀ करि सनमानु आस्रमहिं आने ॥

श्रीरामचन्द्रजीने मुनिको दण्डवत् की। ब्राह्मण-श्रेष्ठ मुनिने उन्हें आशीर्वाद दिया। श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर मुनिके नेत्र शीतल हो गये। वे आदर करके उन्हें आश्रममें ले आये।

मुनिबर अतिथि प्रानप्रिय पाये ❀ तब मुनि आसन दिये सुहाये ॥
कंद मूल फल मधुर मंगाये ❀ सिय सौमित्रि राम फल खाये ॥

प्राणके समान प्यारे अतिथिको जब मुनिवरने पाया तब उन्होंने सुन्दर आसन दिये और मीठे कंद-मूल-फल मँगवाये। सीताजी, लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजीने उन फलोंको खाया।

बालमीकि मन आनँदु भारी ❀ मंगलमूरति नयन निहारी॥
तब करकमल जोरि रघुराई ❀ बोले बचन स्रवन-सुखदाई॥

मङ्गलमूर्ति श्रीरामचन्द्रजीको अपने नेत्रोंसे देखकर वाल्मीकि मुनिके मनको बड़ा आनन्द हुआ। तब अपने कमलके समान हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजी कानोंको सुख देनेवाले ये वचन बोले।

तुम्ह त्रि-काल-दरसी मुनिनाथा ❀ बिस्व बदर जिमि तुम्हरे हाथा॥
अस कहि प्रभु सब कथा बखानी ❀ जेहि जेहि भांति दीन्ह बनु रानी॥

हे मुनिनाथ, आप त्रिकालदर्शी हैं। सारा संसार बेरके समान आपके हाथमें है। ऐसा कहकर फिर जिस-जिस प्रकार रानीने वनवास दिया, उस सब कथाका प्रभु श्रीरामचंद्रजीने वर्णन किया।

दो०—तात बचन पुनि मातुहित ❀ भाइ भरत अस राउ।
मो कहुं दरस तुम्हार प्रभु ❀ सब मम पुन्यप्रभाउ॥ १२६॥

पिताकी आज्ञा, फिर माताका हित, भरतके समान भाईको राजतिलक, मुझे आपके दर्शन—यह सब हे प्रभो, मेरे पुण्योंका ही प्रभाव है।

देखि पाय मुनिराय तुम्हारे ❀ भये सुकृत सबु सुफल हमारे॥
अब जहं राउर आयसु होई ❀ मुनि उदबेगु न पावइ कोई॥

हे मुनिनाथ, आपके चरण देखकर हमारे सब पुण्य सफल हुए। अब जहां आपकी आज्ञा होवे और जहां हमारे रहनेसे कोई मुनि कष्ट न पावे; (वहीं रहें)

मुनि तापस जिन्ह तें दुखु लहहीं ❀ ते नरेस बिनु पावकु दहहीं॥
मंगलमूल बिप्रपरितोषू ❀ दहइ कोटि कुल भू-सुर-रोषू॥

क्योंकि मुनि और तपस्वी जिनसे दुःख पाते हैं वे राजा आगके विना ही जलकर भस्म हो जाते हैं। ब्राह्मणोंकी प्रसन्नता सब मङ्गलोंका मूल है और ब्राह्मणोंका क्रोध करोड़ों कुलोंको भस्म कर डालता है।

अस जिय जानि कहिय सोइ ठाऊं ❀ सिय-सौमित्रि-सहित जहं जाऊं॥
तहं रचि रुचिर परन-तृन-साला ❀ बासु करउ कछु कालु कृपाला॥

ऐसा हृदयमें जानकर वही स्थान बतलाइये, जहां मैं सीताजी और लक्ष्मणसमेत जाऊं और वहां, हे कृपालु, पत्तों और तिनकोंसे सुन्दर कुटी बनाकर कुछ समयतक निवास करूं।

सहज सरल सुनि रघुबरबानी ❀ साधु साधु बोले मुनि ज्ञानी ॥
कस न कहहु अस रघु-कुल-केतू ❀ तुम्ह पालक संतत स्रुतिसेतू ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी स्वभावसे ही सरल वाणी सुनकर ज्ञानी मुनि कहने लगे कि आप धन्य हैं, आपका कथन यथार्थ है। हे रघुवंशके पताकारूप श्रीरामचन्द्रजी, आप ऐसा क्यों न कहेंगे? आप सदा ही वेदोंकी मर्यादाको पालनेवाले हैं।

छं०—स्रुति-सेतु-पालक राम तुम्ह जगदीसमाया जानकी।
जो सृजति जगपालति हरति रुख पाइ कृपानिधान की॥
जो सहससीसु अहीसु महि धरु लषनु स - चराचर-धनी।
सुरकाज धरि नरराज तनु चले दलन खल - निसिचर-अनी॥

हे राम, आप वेदोंकी मर्यादाके रक्षक जगदीश्वर हैं और सीताजी आपकी माया हैं, जो आप दयासागरका रुख पाकर संसारको उत्पन्न करती, पालती और संहार करती हैं। जिनके हजार शिर हैं, जो सर्पोंके राजा हैं और जो पृथिवीको धारण किये हुए हैं, वे चर और अचरके स्वामी शेषनाग लक्ष्मणजी हैं। आप सब देवताओंके कार्यके लिये मनुष्ययोनिमें राजाका शरीर धारणकर दुष्टों और राक्षसोंकी सेनाको नष्ट करनेके लिये जा रहे हैं।

सो०—राम सरूप तुम्हार ❀ बचनअगोचर बुद्धिपर।
अबिगत अकथ अपार ❀ नेति नेति नित निगम कह ॥१२७॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आपका स्वरूप वाणीसे कहनेयोग्य नहीं। वह बुद्धिकी पहुंचसे बाहर, व्यापक, अकथनीय और अनन्त है। वेद उसे सर्वदा 'नेति' 'नेति' कहते हैं।

जग पेखन तुम्ह देखनिहारे ❀ बिधि - हरि - संभु - नचावनिहारे ॥
तेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा ❀ अउर तुम्हहि को जाननिहारा ॥

संसार दृश्य है और आप देखनेवाले तथा ब्रह्मा, विष्णु और शिवको नचानेवाले हैं। वे भी आपका मर्म नहीं जानते, फिर आपको जाननेवाला और कौन है?

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई ❀ जानत तुम्हहिं तुम्हहिं होइ जाई ॥
तुम्हरिहि कृपा तुम्हहिं रघुनंदन ❀ जानहिं भगत भगत-उर-चंदन ॥

आपको वही जानता है जिसे आप ज्ञानवान् कर देते हैं। आपको जानते ही वह आपहीसा हो जाता है हे रघुनन्दन, हे भक्तोंके हृदयके चन्दन, आपकी ही कृपासे आपको भक्त लोग जानते हैं।

चिदानंदमय देह तुम्हारी ❀ बिगतबिकार जान अधिकारी ॥
नरतनु धरेउ संत - सुर - काजा ❀ कहहु करहु जस प्राकृत राजा ॥

आपकी देह चैतन्य, आनन्दस्वरूप और निर्विकार है, जिसे अधिकारी ही जानते हैं। आपने संतजनों और देवताओंके लिए मनुष्य-शरीर धारण किया है, इसीलिये साधारण राजाओंके समान आप कहते और करते हैं।

राम देखि सुनि चरित तुम्हारे ❀ जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे ॥
तुम्ह जो कहहु करहु सबु सांचा ❀ जस काछिय तस चाहिय नाँचा ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आपके चरित्र देख और सुनकर मूर्ख मोहित हो जाते हैं और पण्डितजन सुखी। आप जो कुछ कहते हैं, वह सब सत्य कर दिखलाते हैं। जैसे ढंगसे साज पहने वैसे ही नाचना भी चाहिये।

दो०—पूछेहु मोहिं कि रहउं कहं ❀ मैं पूछत सकुचाउं।
जहं न होहु तहं देहुं कहि ❀ तुम्हहिं देखावउं ठाउं ॥१२८॥

आपने मुझसे पूछा है कि मैं कहां रहूं। परन्तु मुझे पूछते हुए संकोच होता है कि आप जहां न हों, वहां आपको रहनेको बतला दूं और वही स्थान दिखला दूं।

सुनि मुनिवचन प्रेमरस साने ❀ सकुचि राम मनमहुं मुसुकाने ॥
बालमीकि हंसि कहहिं बहोरी ❀ बानी मधुर अमियरस बोरी ॥

प्रेमके रससे सने हुए मुनिके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी सकुचाकर मनमें मुस्कुराने लगे। फिर अमृतके रसमें डूबी हुई मीठी वाणीसे वाल्मीकि मुनि हँसकर कहने लगे।

सुनहु राम अब कहउँ निकेता ❀ जहाँ बसहु सिय-लषन-समेता ॥
जिन्ह के स्रवन समुद्रसमाना ❀ कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। अब स्थान बतलाता हूं जहां सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत बसो। जिनके कान समुद्रके समान हैं, जिन्हें आपकी कथारूपी बहुतसी सुन्दर नदियां—

भरहिं निरंतर होहिं न पूरे ❀ तिन्हके हिय तुम्ह कहुं गृह रूरे ॥
लोचन चातक जिन्ह करि राखे ❀ रहहिं दरसजलधर अभिलाषे ॥

सर्वदा भरती रहती हैं, पर जो पूरे नहीं होते, उनके हृदय आपके लिये सुन्दर घर हैं। जिन्होंने अपने नेत्रोंको पपीहा बना रखा है, जो आपके दर्शनरूपी बादलोंके अभिलाषी रहते हैं।

निदरहिं सरित सिंधु सर भारी ❀ रूपबिंदु जल होहिं सुखारी ॥
तिन्ह के हृदयसदन सुखदायक ❀ बसहु बंधु-सिय-सह रघुनायक ॥

जो नदी, समुद्र और भारी सरोवरका निरादर कर देते हैं और केवल आपके रूपरूपी जलकी एक बून्दसे सुखी होते हैं, हे रघुनायक, उनके सुख देनेवाले हृदयमन्दिरोंमें आप लक्ष्मणजी और सीताजीसमेत निवास करो।

दो०—जस तुम्हार मानस बिमल ❀ हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुनगन चुनइ ❀ राम बसहु मन तासु ॥१२९॥

हे राम, आपके यशरूपी निर्मल मानसरोवरसे आपके गुणोंके समूहरूपी मोतियोंको जिसकी जीभरूपी हंसिनी चुनती है उसके मनमें वास करो।

प्रभुप्रसाद सुचि सुभग सुबासा ❀ सादर जासु लहइ नित नासा ॥
तुम्हहि निबेदित भोजनु करहीं ❀ प्रभुप्रसाद पटु भूषन धरहीं ॥

जिसकी नाक नित्य आदरपूर्वक आपके प्रसादकी सुन्दर और पवित्र सुगन्धि सूंघती है, जो आपका भोग लगाकर भोजन करते हैं और आपके प्रसाद-रूप वस्त्राभूषण धारण करते हैं,

सीस नवहिं सुर-गुरु-द्विज देखी ❀ प्रीतिसहित करि बिनय बिसेखी ॥
कर नित करहिं रामपद पूजा ❀ रामभरोस हृदय नहिं दूजा ॥

जो देवता, गुरु और ब्राह्मणको देखकर प्रेमके साथ बड़ी विनती करके शिर झुकाते हैं; जिनके हाथ नित्य श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी पूजा करते हैं, जिनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीका ही भरोसा है, किसी दूसरेका नहीं,

चरन रामतीरथ चलि जाहीं ❀ राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा ❀ पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा ॥

और जिनके चरण चलकर श्रीरामचन्द्रजीके तीर्थोंमें जाते हैं, हे श्रीरामचन्द्रजी, आप उनके मनमें वास कीजिये। जो नित्य आपके मंत्रराजको जपते हैं और परिवारसमेत आपकी पूजा करते हैं।

तरपन होम करहिं बिधि नाना ❀ बिप्र जेंवाइ देहिं बहु दाना ॥
तुम्ह तें अधिक गुरहि जिय जानी ❀ सकल भाय सेवहिं सनमानी ॥

अनेक प्रकारसे जो तर्पण और होम करते हैं और ब्राह्मणोंको खिलाकर बहुतसा दान देते हैं, जो अपने हृदयमें गुरुको आपसे भी अधिक जानकर बड़ी प्रीतिसे आदरपूर्वक सेवा करते हैं,

दो०—सबु करि मांगहिं एकु फलु ❀ राम - चरन - रति होउ।
तिन्हके मनमंदिर बसहु ❀ सिय रघुनंदन दोउ ॥१३०॥

और जो सब सत्कर्म करके एक ही फल मांगते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम होवे, उनके मनरूपी मंदिरोंमें सीताजीसमेत दोनों रघुनन्दन (श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी) आप सब लोग निवास कीजिये।

काम कोह मद मान न मोहा ❀ लोभ न छोभ न राग न द्रोहा ॥
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया ❀ तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ॥

जिनको न काम है न क्रोध, न मद है न अभिमान, न मोह है न लोभ, न क्षोभ है न स्नेह, न द्रोह है न कपट, और न दंभ है न माया, हे रघुराज, आप उनके हृदयमें वास कीजिये।

सब के प्रिय सब के हितकारी ❀ दुख-सुख-सरिस प्रसंसा गारी ॥
कहहिं सत्य प्रियबचन बिचारी ❀ जागत सोवत सरन तुम्हारी ॥

जो सबके प्यारे और सबका हित करनेवाले हैं; जिन्हें दुःख और सुख, प्रशंसा और गालियां—दोनों समान हैं; जो विचारकर सत्य और प्यारा वचन कहते हैं; जो जागते और सोते, प्रत्येक समय आपकी शरणमें रहते हैं;

तुम्हहिं छांड़ि गति दूसरि नाहीं ❀ राम बसहु तिन्ह के मनमाहीं ॥
जननीसम जानहिं परनारी ❀ धनु पराव बिष तें बिष भारी ॥

और जिनको आपको छोड़कर दूसरी गति नहीं है, हे श्रीरामचन्द्रजी, आप उनके मनमें वास कीजिये। जो परस्त्रीको अपनी माताके समान जानते हैं, जो पराए धनको विषसे भी भारी विष समझते हैं,

जे हरषहिं परसंपति देखी ❀ दुखित होहिं परबिपति बिसेखी ॥
जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पियारे ❀ तिन्ह के मन सुभसदन तुम्हारे ॥

जो दूसरोंकी सम्पत्ति देखकर प्रसन्न होते हैं और दूसरोंकी विपत्तिसे विशेष दुःखी होते हैं और हे राम, जिन्हें आप प्राणके समान प्यारे हैं उनके मन ही आपके सुन्दर निवासस्थान हैं।

दो०—स्वामि सखा पितु मातु गुरु ❀ जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मनमंदिर तिन्ह के बसहु ❀ सीयसहित दोउ भ्रात ॥१३१॥

हे तात, जिनके स्वामी, सखा, पिता, माता और गुरु—सब आप ही हैं उनके मनरूपी मंदिरमें सीताजी-समेत दोनों भाई वास कीजिये।

अवगुन तजि सब के गुन गहहीं ❀ बिप्र-धेनु-हित संकट सहहीं ॥
नीतिनिपुन जिन्ह कइ जग लीका ❀ घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका ॥

जो अवगुणोंको छोड़कर सबके गुणोंको ग्रहण करते हैं, जो गाय और ब्राह्मणके लिए सब संकट सहते हैं, जो नीतिमें निपुण हैं और संसारमें जिनकी मर्यादा है, उनका सुन्दर मन ही आपका घर है।

गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा ❀ जेहि सब भांति तुम्हार भरोसा ॥
रामभगत प्रिय लागहिं जेही ❀ तेहि उर बसहु सहित बैदेही ॥

जो आपके गुणों और अपने दोषोंको समझता है, जिसे सब प्रकार आपका भरोसा है और जिसे रामभक्तजन प्यारे लगते हैं, उसके हृदयमें आप सीताजीसमेत निवास कीजिये।

जाति पांति धनु धरमु बड़ाई ❀ प्रिय परिवार सदन सुखदाई ॥
सब तजि तुम्हहिं रहइ लउ लाई ❀ तेहि के हृदय रहहु रघुराई ॥

जाति-पांति, धर्म-धन, प्रशंसा और प्यारा परिवार तथा सुख देनेवाला घर—सबको छोड़कर आपहीमें जो लव लगाए रहते हैं, उनके हृदयमें, हे श्रीरामचन्द्रजी, आप रहिए।

सरगु नरकु अपबरगु समाना ❀ जहं तहं देख धरे धनुबाना ॥
करम-बचन-मन राउर चेरा ❀ राम करहु तेहि के उर डेरा ॥

स्वर्ग, नरक और मोक्ष जिसे समान हैं, जो धनुषबाण धारण किए हुए आपको जहां-तहां देखता है, और जो मन, वाणी और कर्मसे आपका सेवक है, हे राम, उसके हृदयमें आप निवास कीजिये।

दो०—जाहि न चाहिय कबहुं कछु ❀ तुम्ह सन सहज सनेहु ।
बसहु निरंतर तासु मन ❀ सो राउर निजगेहु ॥१३२॥

जिसे कभी कुछ न चाहिये और जिसे आपसे स्वाभाविक प्रेम हो, उसके मनमें आप सदैव वास कीजिये वही आपका अपना घर है।

एहि विधि मुनिबर भवन देखाये ❀ बचन सप्रेम राममन भाये ॥
कह मुनि सुनहु भानु-कुल-नायक ❀ आस्रमु कहउं समय सुखदायक ॥

इस प्रकार मुनिवरने श्रीरामचन्द्रजीको रहनेके लिए भवन दिखलाये। प्रेमसे भरे हुए मुनिके वचन श्रीरामचंद्रजीके मनको बहुत प्रिय लगे। मुनिने कहा कि हे सूर्यवंशके स्वामी, सुनिये। अब समयानुकूल सुख देनेवाला आश्रम बतलाता हूं।

चित्रकूट गिरि करहु निवासू ❀ जहं तुम्हार सब भांति सुपासू ॥
सैल सुहावन कानन चारू ❀ करि-केहरि-मृग - बिहंग बिहारू ॥

चित्रकूट पर्वतपर निवास करो। वहां आपको सब प्रकारका आराम मिलेगा। वह सुहावना पर्वत है; वहां सुन्दर वन है; हाथी, सिंह, हिरन और पक्षी क्रीड़ा करते हैं।

नदी पुनीत पुरान बखानी ❀ अत्रिप्रिया निज-तप-बल आनी ॥
सुरसरिधार नाउं मंदाकिनि ❀ जो सबु पातक - पोतक-डाकिनि ॥

पवित्र नदी है, जिसका वर्णन पुराणोंमें है, जिसे अत्रि मुनिकी पत्नी अपनी तपस्याके बलसे वहां लायी है, जो गंगाजीकी धारा है और जिसका नाम मंदाकिनी है, जो सब पापरूपी बालकोंको खा जानेके लिये डाकिनीके समान है।

अत्रि आदि मुनिबर बहु बसहीं ❀ करहिं जोग जप तप तन कसहीं ॥
चलहु सफल स्रम सब कर करहू ❀ राम देहु गौरव गिरिबरहू ॥

अत्रि आदि बहुतसे श्रेष्ठ मुनि वहां बसते और योगाभ्यास करते और जप-तपसे शरीरको कसते हैं। हे श्रीरामचन्द्रजी, वहां चलिये और सबका श्रम सफल कीजिये तथा उस श्रेष्ठ पर्वतको भी गौरव दीजिये।

दो०—चित्र-कूट-महिमा अमित ❀ कही महामुनि गाइ।
आइ नहाये सरितबर ❀ सिय समेत दोउ भाइ ॥१३३॥

महामुनि वाल्मीकिने चित्रकूटकी असीम महिमा गाकर वर्णन की। फिर सीताजी समेत दोनों भाई उस श्रेष्ठ नदीमें आकर नहाये।

(चित्रकूट-निवास)

रघुबर कहेउ लषन भल घाटू ❀ करहु कतहु अब ठाहर ठाटू ॥
लषन दीख पय उतर करारा ❀ चहु दिसि फिरेउ धनुष जिमि नारा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे लक्ष्मण, यह घाट अच्छा है। अब कहीं ठहरनेकी तदबीर करो। तब लक्ष्मणजीने जलकी धाराकी उत्तर ओरवाले करारेको देखा, जिसके चारों ओर नदीके जलका प्रवाह धनुषके समान फिरा हुआ था।

नदी पनच सर सम दम दाना ❀ सकल कलुष कलि साउज नाना ॥
चित्रकूटु जनु अचलु अहेरी ❀ चुकइ न घात मार मुठभेरी ॥

नदी धनुषकी प्रत्यंचा है, शम, दम और दान उसके बाण हैं, कलियुगके सारे पाप उन बाणोंके अनेक लक्ष्य हैं और चित्रकूट पर्वत ही मानों अचल शिकारी है, जिसकी चोट कभी नहीं चूकती और जो एकही मुठभेड़में पापोंको मार डालता है।

अस कहि लषन ठाउँ देखरावा ❀ थलु बिलोकि रघुबर सुखु पावा ॥
रमेउ राममनु देवन्ह जाना ❀ चले सहित सुरपति परधाना ॥

ऐसा कहकर लक्ष्मणजीने स्थान दिखलाया। स्थान देखकर श्रीरामचन्द्रजीने सुख पाया। जब देवताओंने यह जाना कि उस स्थानमें श्रीरामचन्द्रजीका मन लग गया, तब वे देवताओंके स्वामी इन्द्रको प्रधान बनाकर और साथ लेकर चले।

कोल-किरात-बेष सब आये ❀ रचे परन-तृन-सदन सुहाये ॥
बरनि न जाहिं मंजु दुइ साला ❀ एक ललित लघु एक बिसाला ॥

सब देवता कोलों और भीलोंके भेषमें वहां आये और पत्तों तथा तिनकोंकी सुन्दर कुटियां बनायीं । दो कुटियां ऐसी सुन्दर थीं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता । उनमें एक कुटी सुन्दर छोटी थी और दूसरी बड़ी ।

दो०—लषन - जानकी - सहित प्रभु ❀ राजत रुचिर निकेत ।
सोह मदनु मुनिबेष जनु ❀ रति - रितु-राज-समेत ॥ १३४ ॥

लक्ष्मणजी और सीताजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी उस सुन्दर स्थानमें विराजमान हैं; मानों मुनिका भेष रखकर कामदेव रति और वसंतसमेत शोभित हो ।

अमरनाग किन्नर दिसिपाला ❀ चित्रकूट आये तेहि काला ॥
रामु प्रनामु कीन्ह सब काहू ❀ मुदित देव लहि लोचन लाहू ॥

उसी समय वहां देवता, नाग, किन्नर और दिक्पाल चित्रकूटमें आये । श्रीरामचन्द्रजीने सब किसीको प्रणाम किया । नेत्रोंका लाभ और श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन पाकर देवता प्रसन्न हुए ।

बरषि सुमन कह देव समाजू ❀ नाथ सनाथ भये हम आजू ॥
करि बिनती दुख दुसह सुनाये ❀ हरषित निज निज सदन सिधाये ॥

फूल बरसाकर देवताओंका वह समूह कहने लगा, कि हे नाथ, आज हम सनाथ हुए । बिनती करके देवताओंने अपने दुस्सह दुःखोंको सुनाया और फिर प्रसन्न होकर वे अपने-अपने घरको बिदा हुए ।

चित्रकूट रघुनंदनु छाये ❀ समाचार सुनि सुनि मुनि आये ॥
आवत देखि मुदित मुनिबृंदा ❀ कीन्ह दंडवत रघु - कुल - चंदा ॥

श्रीरामचन्द्रजीके चित्रकूटमें बसनेका समाचार सुन-सुनकर मुनिजन वहां आये । आनन्दित होकर मुनिजनोंको वहां आते देखकर रघुवंशमें चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजीने दंडवत की ।

मुनि रघुबरहिं लाइ उर लेहीं ❀ सुफल होन हित आसिष देहीं ॥
सिय सौमित्रि-राम - छबि देखहिं ❀ साधन सकल सफलकरि लेखहिं ॥

मुनिजन श्रीरामचन्द्रजीको हृदयसे लगा लेते हैं और सफल होनेके लिये उन्हें आशीर्वाद देते हैं । वे सीताजी, लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजीकी शोभाको देखते हैं और यह मानते हैं कि सब साधनाएँ सफल हुईं ।

दो०—जथाजोग सनमानि प्रभु ❀ बिदा किये मुनिबृंद ।
करहिं जोग जप जाग तप ❀ निज आस्रमन्हि सुछंद ॥१३५॥

यथायोग्य सबका सम्मान कर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने मुनिजनोंको बिदा किया । वे सब अपने-अपने आश्रमोंमें स्वच्छन्द होकर योग, जप, तप और यज्ञ करने लगे ।

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई ❀ हरषे जनु नवनिधि घर आई ॥
कंद मूल फल भरि भरि दोना ❀ चले रंक जनु लूटनु सोना ॥

कोल और भीलोंने जब यह समाचार पाया तब वे प्रसन्न हुए, मानों घरमें नव निधियां आ गयी हों। कंद-मूल और फलोंको दोनोंमें भर-भरकर वे चल दिये; मानों कोई कंगाल सोना लूटने जाता हो।

तिन्ह महं जिन्ह देखे दोउ भ्राता ❀ अपर तिन्हहिं पूछहिं मगु जाता ॥
कहत सुनत रघुबीर निकाई ❀ आइ सबन्हि देखे रघुराई ॥

उनमेंसे जिन्होंने दोनों भाइयोंको देखा था उनसे दूसरे लोग मार्गमें जाते हुए पूछते थे। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई कहते और सुनते सबने आकर श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन किये।

करहिं जोहारु भेंट धरि आगे ❀ प्रभुहि बिलोकहिं अति अनुरागे ॥
चित्र लिखे जनु जहं तहं ठाढ़े ❀ पुलक सरीर नयन जल बाढ़े ॥

आगे भेंट रखकर सब प्रणाम करते हैं और बड़े प्रेमसे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखते हैं। वे सब चित्रमें लिखेकी भांति जहां-तहां खड़े हो गये, उनके शरीर पुलकायमान हो गये और नेत्रोंमें जल भर आया।

राम सनेह मगन सब जाने ❀ कहि प्रिय बचन सकल सनमाने ॥
प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी ❀ बचन बिनीत कहहिं कर जोरी ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब सबको प्रेममग्न समझा, तब प्यारे वचन कहकर उन सबका सम्मान किया। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको बार-बार प्रणाम कर वे हाथ जोड़कर नम्रतासे ये वचन कहने लगे —

दो०—अब हम नाथ सनाथ सब ❀ भये देखि प्रभु पाय।
भाग हमारे आगमनु ❀ राउर कोसलराउ ॥१३६॥

हे नाथ, हे प्रभो, आपके चरणोंको देखकर हम सब अब सनाथ हो गये। हे कोशलराज, हमारे ही भाग्यसे आपका आना हुआ है।

धन्य भूमि बन पंथु पहारा ❀ जहं जहं नाथ पाउ तुम्ह धारा ॥
धन्य बिहंग मृग काननचारी ❀ सफल जनम भये तुम्हहिं निहारी ॥

हे नाथ, जहां-जहां आपने अपने चरण रखे हैं वह पृथिवी वन, मार्ग और पहाड़ धन्य हैं। वनमें फिरनेवाले पक्षी और मृग धन्य हैं, जिनका जन्म आपके दर्शन कर सफल हो गया।

हम सब धन्य सहित परिवारा ❀ दीख दरसु भरि नयन तुम्हारा ॥
कीन्ह बासु भल ठाउं बिचारी ❀ इहां सकल रितु रहब सुखारी ॥

अपने परिवारसमेत हम सब धन्य हैं, जिन्होंने नेत्र भरकर आपके दर्शन किये। आपने विचार कर अच्छे स्थानपर वास किया। यहां आप सब ऋतुओंमें सुखी रहेंगे।

हम सब भांति करबि सेवकाई ❀ करि-केहरि-अहि-बाघ बराई ॥
बन बेहड़ गिरि कन्दर खोहा ❀ सब हमार प्रभु पग पग जोहा ॥

हाथी, सिंह, सर्प और बाघ—सबको अलग रखकर हम सब आपकी सब प्रकार सेवा करेंगे। हे प्रभो, वन, वेहड़, पर्वत, खोह और कंदरा—सब हमारे पग-पग देखे हुए हैं।

जहं तहं तुम्हहिं अहेर खेलाउब ❀ सर निरझर भल ठाउं देखाउब ॥
हम सेवक परिवार समेता ❀ नाथ न सकुचब आयसु देता ॥

जहां-तहां आपको आखेट खिलायँगे और सरोवर, झरना आदि सुन्दर स्थानोंको दिखलायँगे। अपने परिवारसमेत हम सब आपके सेवक हैं। हे नाथ, आज्ञा देते हुए संकोच न कीजियेगा।

दो०—बेदबचन मुनिमन अगम ❀ ते प्रभु करुनाअयन।
बचन किरातन्हके सुनत ❀ जिमि पितु बालक बयन ॥१३७॥

जो श्रीरामचन्द्रजी वेदोंके वचनों और मुनियोंके मनकी पहुंचसे भी बाहर हैं वे दयानिधान प्रभु, भीलोंके वचनोंको ऐसे सुन रहे हैं, जैसे पिता बालकके वचनोंको सुनता हो।

रामहिं केवल प्रेमु पियारा ❀ जानि लेउ जो जाननिहारा ॥
राम सकल-बन-चर तब तोषे ❀ कहि मृदु बचन प्रेम परिपोषे ॥

श्रीरामचन्द्रजीको केवल प्रेम प्यारा है, जो जाननेवाला हो, वह जान ले। फिर श्रीरामचन्द्रजीने सब वनवासियोंको प्रेमभरे मीठे वचन कहकर सुखी और संतुष्ट किया।

बिदा किये सिरु नाइ सिधाये ❀ प्रभुगुन कहत सुनत घर आये ॥
एहि बिधि सिय समेत दोउ भाई ❀ बसहिं बिपिन सुर मुनि सुखदाई ॥

उन सबको श्रीरामचन्द्रजीने विदा किया। वे सब शिर नवाकर विदा हुए और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको कहते-सुनते अपने घर आये। देवता और मुनियोंको सुख-देनेवाले दोनों भाई सीताजीसमेत इस प्रकार वनमें बसने लगे।

जब तें आइ रहे रघुनायकु ❀ तब तें भयेउ बनु मंगल-दायकु ॥
फूलहिं फलहिं बिटप बिधि नाना ❀ मंजु-बलित-बर-बेलि बिताना ॥

जबसे श्रीरामचन्द्रजी वहां आकर बसे तबसे वह वन मंगलदायक हो गया। तरह-तरहके वृक्ष फूलने और फलने लगे, जिनपर लपटी हुई मनोहर वेलोंके सुन्दर जाल छाये हुए थे।

सुरतरु सरिस सुभाय सुहाये ❀ मनहुँ बिबुधबन परिहरि आये ॥
गुंज मंजुतर मधुकर स्रेनी ❀ त्रिबिध बयारि बहइ सुखदेनी ॥

ये वृक्ष कल्पवृक्षके समान स्वभावसे ही सुन्दर थे; मानों देवताओंके वनको छोड़कर आये हों। भौंरोंकी बहुत ही सुन्दर पंक्तियां गुंजार करती थीं और शीतल, मंद, सुगंधित और सुखदाई वायु बहती थी।

दो०—नीलकंठ कलकंठ सुक ❀ चातक चक्क चकोर।
भांति भांति बोलहिं बिहंग ❀ स्रवनसुखद चितचोर ॥१३८॥

नीलकंठ, कोयल, तोता, चातक, चकवा-चकोर—तरह-तरहके पक्षी बोलते थे, जिनका बोल कानोंको सुख देनेवाला और चित्तको चुरा लेनेवाला था।

करि केहरि कपि कोल कुरंगा ❀ बिगत बैर बिचरहिं सब संगा ॥
फिरत अहेर रामछबि देखी ❀ होहिं मुदित मृगबृंद बिसेखी ॥

हाथी, सिंह, बन्दर, शूकर और हिरन—सब वैरभावरहित होकर साथ-साथ घूमते थे। आखेट खेलनेके लिये फिरते हुए श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर हिरनोंके समूह विशेष प्रसन्न होते थे।

बिबुधबिपिन जहँ लगि जग माहीं ❀ देखि रामबनु सकल सिहाहीं ॥
सुरसरि सरसइ दिनकर-कन्या ❀ मेकलसुता गोदावरि धन्या ॥

संसारमें जहांतक देवताओंके वन हैं, वे सब श्रीरामचन्द्रजीके वनको देखकर प्रशंसा करते थे। गंगा, सरस्वती, सूर्यकी पुत्री यमुना, नर्मदा, गोदावरी और धन्या,

सब सर सिंधु नदी नद नाना ❀ मंदाकिनि कर करहिं बखाना ॥
उदय अस्त गिरि अरु कैलासू ❀ मंदर मेरु सकल-सुर-बासू ॥

सब सरोवर, समुद्र नदियां और अनेक नद मन्दाकिनी नदीकी बड़ाई करते थे। उदयाचल, अस्ताचल और कैलाश, मंदराचल और मेरु पर्वत, जिनपर सब देवताओंका वास है—

सैल हिमाचल आदिक जेते ❀ चित्रकूटजसु गावहिं तेते ॥
बिंधि मुदित मन सुखु न समाई ❀ स्रम बिनु बिपुल बड़ाई पाई ॥

हिमालय आदि जितने पर्वत हैं, वे सब चित्रकूट पर्वतका यश गाते थे। विन्ध्याचल बड़ा प्रसन्न था, उसके मनमें सुख न समाता था, क्योंकि बिना परिश्रम ही उसने बहुत बड़ाई प्राप्त कर ली।

दो०—चित्रकूटके बिहंग मृग ❀ बेलि बिटप तृन जाति।
पुन्यपुंज सब धन्य अस ❀ कहहिं देव दिनराति ॥१३९॥

चित्रकूटके पक्षी, हिरन, बेल, वृक्ष और तरह-तरहकी घास—सब अत्यंत पुण्यवान हैं, धन्य हैं--ऐसा रात-दिन देवता कहते थे।

नयनवंत रघुबरहि बिलोकी ❀ पाइ जनम फल होहिं बिसोकी ॥
परसि चरनरज अचर सुखारी ❀ भये परमपद के अधिकारी ॥

जिनके नेत्र थे, वे श्रीरामचन्द्रजीको देखकर और अपने जन्मका फल पाकर चिन्तारहित हो जाते थे। गतिरहित पदार्थ श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी धूलको छूकर सुखी और परमपदके अधिकारी हो गये।

सो बनु सैलु सुभाय सुहावन ❀ मंगलमय अति-पावन-पावन ॥
महिमा कहिय कवन बिधि तासू ❀ सुखसागर जहं कीन्ह निवासू ॥

जहां सुखसागर श्रीरामचन्द्रजीने निवास किया, वह वन और पर्वत स्वभावसे ही सुहावना, मङ्गलस्वरूप और अत्यंत पवित्रसे भी पवित्र है। उसकी महिमा किस प्रकार कही जाय ?

पयपयोधि तजि अवध बिहाई ❀ जहं सिय-लषन-राम रहे आई ॥
कहि न सकहिं सुखमा जसि कानन ❀ जौं सत सहस होहिं सहसानन ॥

क्षीरसागरको छोड़कर और अयोध्याको त्यागकर जहां सीताजी, लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजी आकर रहे हों, उस वनकी जैसी कुछ शोभा थी, उसे यदि शेषनाग सौ हजार भी हो जायँ, तो कह नहीं सकते।

सो मैं बरनि कहौं बिधि केहीं ❀ डाबरकमठ कि मंदर लेहीं ॥
सेवहिं लषनु करम-मन-बानी ❀ जाइ न सीलु सनेहु बखानी ॥

उसका वर्णन मैं किस प्रकार करूं ? पोखरका कछुआ क्या मंदराचल उठा सकता है ? मन, वाणी और कर्मसे लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करते थे। उनके शील और प्रेमका वर्णन नहीं करते बनता।

दो०—छिनु छिनु लखि सिय-राम-पद ❀ जानि आपु पर नेहु।
करत न सपनेहु लषनु चितु ❀ बंधु-मातु-पितु-गेहु ॥१४०॥

क्षण-क्षणमें सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंको देखकर और अपनेपर उनका प्रेम जानकर लक्ष्मणजी स्वप्नमें भी अपना मन भाई, माता, पिता और घरकी ओर नहीं डुलाते थे।

राम संग सिय रहति सुखारी ❀ पुर-परिजन-गृह-सुरति बिसारी ॥
छिनु छिनु पिय-बिधु-बदनु निहारी ❀ प्रमुदित मनहुं चकोर कुमारी ॥

नगरनिवासियों और कुटुम्बियों तथा घरकी याद भुलाकर सीताजी श्रीरामचन्द्रजीके सङ्गमें सुखी रहती थीं। क्षण-क्षणमें प्यारेके चन्द्रमुखको देखकर वे आनन्दित रहती थीं, जैसे चन्द्रमाको देखकर चकोरी।

नाह नेहु नित बढ़त बिलोकी ❀ हरषित रहति दिवस जिमि कोकी ॥
सिय मनु रामचरन अनुरागा ❀ अवध-सहस-सम बन प्रिय लागा ॥

स्वामीका प्रेम नित्य बढ़ता देखकर वे प्रसन्न रहती थीं; जैसे दिनमें चकवी। सीताजीके मनमें श्रीराम-चन्द्रजीके चरणोंका प्रेम होनेसे उन्हें हजार अयोध्याओंके समान वह वन प्यारा लगता था।

परनकुटी प्रिय प्रियतम संगा ❀ प्रिय परिवारु कुरंग बिहंगा ॥
सासु-ससुर-सम मुनितिय मुनिबर ❀ असनु अमिय सम कंद मूल फर ॥

प्रियतमके संगमें पत्तोंकी वह कुटी ही प्यारी लगती थी। हिरनों और पक्षियोंका प्यारा परिवार था, श्रेष्ठ मुनिजन और उनकी स्त्रियां श्वसुर और सासके समान थीं, कंद-मूल-फलोंका अमृतके समान भोजन था।

नाथ साथ साथरी सुहाई ❀ मयन-सयन-सय-सम सुखदाई ॥
लोकप होहिं बिलोकत जासू ❀ तेहि कि मोह सक बिषय बिलासू ॥

स्वामीके साथमें पत्तोंकी सुन्दर शय्या कामदेवके सोनेकी शय्याके समान सुख देनेवाली थी। जिसको देखते ही मनुष्य लोकपाल हो जाते हैं उसे विषय-सुख क्या मोह सकता है?

दो०—सुमिरत रामहिं तजहिं जन ❀ तृन सम बिषय बिलासु।
रामप्रिया जग जननि सिय ❀ कछु न आचरजु तासु ॥१४१॥

श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करते ही जब मनुष्य विषयोंके सुखको तिनकेके समान छोड़ देते हैं, तब श्रीरामचन्द्रजीकी प्यारी सीताजी, जो संसारकी माता हैं, यदि उसे छोड़ दें तो इसमें उनके संबंधमें आश्चर्यकी बात कुछ भी नहीं है।

सीय लखनु जेहि बिधि सुखु लहहीं ❀ सोइ रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं ॥
कहहिं पुरातन कथा कहानी ❀ सुनहिं लखनु सिय अति सुखु मानी ॥

जिस प्रकार सीताजी और लक्ष्मणजी सुख पाते, श्रीरामचन्द्रजी वही करते तथा वही कहते थे। श्रीराम-चन्द्रजी प्राचीन कथा-कहानियां कहते थे तथा लक्ष्मणजी और सीताजी अत्यन्त सुख मानकर उन्हें सुनते थे।

जब जब राम अवध सुधि करहीं ❀ तब तब बारि बिलोचन भरहीं ॥
सुमिरि मातु पितु परिजन भाई ❀ भरत-सनेह-सील-सेवकाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी जब-जब अयोध्याकी याद करते तब-तब नेत्रोंमें जल भर लाते थे। माता, पिता, कुटुम्बी-लोगों, भाइयों और भरतजीके स्नेह, शील और सेवा-भावका स्मरण कर—

कृपासिंधु प्रभु होहिं दुखारी ❀ धीरजु धरहिं कुसमउ बिचारी ॥
लखि सिय लखनु बिकल होइ जाहीं ❀ जिमि पुरुषहिं अनुसर परिछाहीं ॥

कृपासागर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी दुःखी होते थे, परन्तु कुसमयका विचार कर धीरज रखते थे। जिस प्रकार परछांई पुरुषका अनुसरण करती है उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजीको देखकर सीताजी और लक्ष्मणजी भी व्याकुल हो जाते थे।

प्रिया-बंधु - गति लखि रघुनंदनु ❀ धीर कृपाल भगत - उर - चंदनु॥
लगे कहन कछु कथा पुनीता ❀ सुनि सुख लहहिं लषनु अरु सीता॥

धीर, कृपालु और भक्तके हृदयके चन्दन श्रीरामचन्द्रजी प्रिया सीताजी और भाई लक्ष्मणजीकी दशा देखकर कोई पवित्र कथा कहने लगते, जिसे सुनकर लक्ष्मणजी और सीताजी सुख पाते थे।

दो०—राम - लषन - सीता - सहित ❀ सोहत परन निकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर ❀ सची - जयंत समेत॥१४२॥

जैसे इन्द्राणी और जयंतसमेत इन्द्र अमरावतीमें बसते हैं वैसे ही सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजी उस पर्णकुटीमें शोभा पा रहे थे।

जोगवहिं प्रभु सियलषनहिं कैसे ❀ पलक बिलोचनगोलक जैसे॥
सेवहिं लषन सीय रघुबीरहिं ❀ जिमि अबिबेकी पुरुष सरीरहिं॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी सीताजी और लक्ष्मणजीकी रक्षा कैसे करते रहते थे; जैसे पलक नेत्रोंकी पुतलियोंकी। सीताजी और लक्ष्मणजी श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा वैसे ही करते रहते थे; जैसे अज्ञानी मनुष्य शरीरकी।

एहि बिधि प्रभु बन बसहिं सुखारी ❀ खग मृग सुर तापस-हित - कारी॥
कहेउँ राम बन गवनु सुहावा ❀ सुनहु सुमंत्र अवध जिमि आवा॥

पक्षी, हिरन, देवता और तपस्वी—सबका हित करनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार सुखसे वनमें वास करने लगे। तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीका सुहावना वनगमन मैंने कहा। सुमंत्र जिस प्रकार अयोध्यामें लौटकर आये, वह सुनो।

(सुमंत्रका लौटना)

फिरेउ निषाद प्रभुहिं पहुंचाई ❀ सचिवसहित रथ देखेसि आई॥
मंत्री बिकल बिलोकि निषादू ❀ कहि न जाइ जस भयेउ बिषादू॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको पहुंचाकर निषाद लौटा और मंत्रीसमेत रथको आकर देखा। मंत्रीको व्याकुल देखकर निषादको जैसा शोक हुआ, वह कहा नहीं जाता।

राम राम सिय लषनु पुकारी ❀ परेउ धरनितल व्याकुल भारी॥
देखि दखिनदिसि हय हिहिनाहीं ❀ जनु बिनु पंख बिहंग अकुलाहीं॥

हा राम ! हा राम ! हा सीता ! हा लक्ष्मण ! इस प्रकार मंत्री पुकारने लगा और भारी व्याकुल होकर पृथिवीपर गिर पड़ा। दक्षिण दिशाकी ओर देखकर घोड़े हिनहिनाते हैं; मानों पंखोंके बिना पक्षी व्याकुल हो रहे हों।

दो०- नहिं तृन चरहिं न पियहिं जलु ❀ मोचहिं लोचन बारि।
व्याकुल भये निषाद सब ❀ रघु-बर-बाजि निहारि ॥१४३॥

तब श्रीरामचन्द्रजीके घोड़ोंको देखकर, जो न घास चरते हैं और न जल पीते हैं, किन्तु अपने नेत्रोंसे आंसू बहा रहे हैं, निषाद व्याकुल हो गया।

धरि धीरजु तब कहइ निषादू ❀ अब सुमंत्र परिहरहु बिषादू ॥
तुम्ह पंडित परमारथज्ञाता ❀ धरहु धीर लखि बिमुख बिधाता ॥

तब धीरज रखकर निषाद कहने लगा कि हे सुमंत्र, अब शोक छोड़ दो। तुम पण्डित हो और परमार्थको जाननेवाले हो। विधाताको प्रतिकूल समझकर धीरज रखो।

बिबिधकथा कहि कहि मृदुबानी ❀ रथ बैठारेउ बरबस आनी ॥
सोकसिथिल रथु सकइ न हांकी ❀ रघु-बर - बिरह - पीर उर बांकी ॥

मीठी वाणीसे तरह-तरहकी कथाएँ कहकर निषादने मंत्रीको जबर्दस्ती लाकर रथमें बिठाया। शोकसे सुमंत्र ऐसे शिथिल हो गये कि रथ न हांक सके। उनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीके वियोगकी बड़ी कठोर पीड़ा हो रही थी।

चरफराहिं मग चलहिं न घोरे ❀ बनमृग मनहुं आनि रथ जोरे ॥
अढुकि परहिं फिरि हेरहिं पीछे ❀ राम बियोग बिकल दुख तीछे ॥

घोड़े तड़फड़ाते थे और मार्ग नहीं चलते थे; मानों जंगली हिरनोंको लाकर रथमें जोत दिया हो। चलते-चलते वे अड़ जाते और मुड़कर पीछेकी ओर देखने लगते थे। श्रीरामचन्द्रजीके वियोगके तीक्ष्ण दुःखसे वे बड़े व्याकुल हो रहे थे।

जो कहु रामु लषनु बैदेही ❀ हिकरि हिकरि हित हेरहिं तेही ॥
बाजि बिरहगति कहि किमि जाती ❀ बिनु मनि फनिक बिकल जेहि भाँती ॥

श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीका जो नाम लेता उसकी ओर वे हींस-हींसकर बड़े प्रेमसे देखते थे। घोड़ोंकी विरहकी दशा कैसे कही जाय? वे ऐसे व्याकुल थे; जैसे मणिके बिना सर्प व्याकुल होता है।

दो०—भयेउ निषादु बिषादुबस ❀ देखत सचिवतुरंग।
बोलि सुसेवक चारि तब ❀ दिये सारथीसंग ॥१४४॥

मंत्री और घोड़ोंको देखकर निषाद शोकके वशमें हो गया। फिर उसने चार विश्वासपात्र सेवकोंको बुलाकर सुमंत्रके साथ कर दिया।

गुह सारथिहि फिरेउ पहुँचाई ❀ बिरहबिषादु बरनि नहिं जाई ॥
चले अवध लेइ रथहि निषादा ❀ होहिं छनहिं छन मगन बिषादा ॥

कुछ दूरतक सुमंत्रको विदा करके निषाद लौट आया। उसका विरहदुःख वर्णन नहीं किया जाता। निषादने जिन चार निषादोंको साथ कर दिया था वे रथ लेकर अयोध्याको चले। वे क्षण-क्षणमें दुःखमें डूबते जाते थे।

सोच सुमंत्र बिकल दुखदीना ❀ धिग जीवन रघु-बीर-बिहीना ॥
रहहिं न अंतहुँ अधमुसरीरू ❀ जसु न लहेउ बिछुरत रघुबीरू ॥

शोकके कारण सुमंत्र व्याकुल, दुःखी और दीन होकर कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीके बिना यह जीवन धिक्कार है। अन्तमें जब यह अधम शरीर नहीं ही रहेगा तब श्रीरामचन्द्रजीका वियोग होते ही इसने (छूटकर) यश क्यों नहीं ले लिया।

भये अजस - अघ - भाजन प्राना ❀ कवन हेतु नहिं करत पयाना ॥
अहह मंदमनु अवसर चूका ❀ अजहुँ न हृदय होत दुइ टूका ॥

मेरे प्राण अपयश और पापके भाजन हुए। अब ये किस कारण शरीर नहीं छोड़ जाते? हाय! मूर्ख मन, अवसर चूक गया! अब भी हृदयके दो टुकड़े नहीं हो जाते!

मींजि हाथ सिरु धुनि पछिताई ❀ मनहु कृपिन धनरासि गँवाई ॥
बिरद बांधि बरबीरु कहाई ❀ चलेउ समर जनु सुभट पराई ॥

हाथ मलकर और शिर धुनकर सुमंत्र पछताने लगे; मानों किसी कंजूसने धनकी ढेरी गवां दी हो; अथवा मानों कोई योद्धा यशस्वी होकर और श्रेष्ठ वीर कहलाकर संग्रामसे भाग चला हो।

दो०—बिप्र बिबेकी बेदबिद ❀ संमत साधु सुजाति।
जिमि धोखे मदपान कर ❀ सचिव सोच तेहि भांति ॥१४५॥

प्रतिष्ठित, साधु, कुलीन, वेदज्ञ और विवेकी ब्राह्मणको धोखेमें मदिरा पी लेनेपर जैसा शोक होता है वैसी ही शोक सुमंत्रको हुआ।

जिमि कुलीन तिय साधु सयानी ❀ पतिदेवता करम - मन - बानी ॥
रहइ करमबस परिहरि नाहू ❀ सचिवहृदय तिमि दारुनदाहू ॥

जैसे कोई कुलीन, सती, चतुर, और मन, वाणी और कर्मसे पतिको ही देवता माननेवाली स्त्री अपने स्वामीको छोड़कर रहे और फिर उसके हृदयमें जैसी कठोर पीड़ा हो वैसी ही पीड़ा मंत्रीके हृदयमें हुई।

लोचन सजल डीठि भइ थोरी ❀ सुनइ न स्रवन बिकल मति भोरी ॥
सूखहिं अधर लागि मुहुँ लाटी ❀ जिउ न जाइ उर अवधिकपाटी ॥

नेत्रोंमें जल छा गया, दृष्टि कम हो गयी, कानोंसे सुनायी न पड़ने लगा और भोली बुद्धि व्याकुल हो गयी। ओंठ सूखने लगे और मुंह मुरझा गया, फिर भी प्राण नहीं निकलते थे; क्योंकि हृदयमें १४ वर्ष श्रीरामचन्द्रजीके लौट आनेकी अवधिके किवाड़ लगे हुए थे।

बिबरन भयेउ न जाइ निहारी ❀ मारेसि मनहुँ पिता महतारी ॥
हानि गलानि बिपुल मन ब्यापी ❀ जम-पुर - पंथ सोच जिमि पापी ॥

रंग ऐसा फीका पड़ गया कि उनकी ओर देखा नहीं जाता; मानों उन्होंने अपने माता और पिताको मार डाला हो। उनके मनमें हानि और ग्लानि इतनी अधिक छायी हुई थी जैसे कोई पापी यमपुरीके रास्तेमें सोच कर रहा हो।

बचनु न आउ हृदय पछिताई ❀ अवध काह मैं देखब जाई ॥
रामरहित रथु देखहि जोई ❀ सकुचिहि मोहि बिलोकत सोई ॥

मुंहसे वचन नहीं निकलता, परन्तु वे हृदयमें पछताने लगे कि मैं अयोध्यामें जाकर क्या देखूंगा। श्रीरामचन्द्रजीके विना रथको जो कोई देखेगा उसे ही मुझे देखकर संकोच होगा।

दो०—धाइ पूछिहहिं मोहि जब ❀ बिकल नगर नरनारि ॥
उतरु देब मैं सबहिं तब ❀ हृदय बज्रु बैठारि ॥१४६॥

नगरके व्याकुल स्त्री-पुरुष जब दौड़कर मुझे पूछेंगे तब अपनी छातीपर वज्र रखकर मैं सबको उत्तर दूंगा।

पुछिहहिं दीन दुखित सब माता ❀ कहब काह मैं तिन्हहिं बिधाता ॥
पूछिहि जबहिं लषनमहतारी ❀ कहिहउँ कवन संदेस सुखारी ॥

हे विधाता, दीन और दुःखी सब माताएं पूछेंगी तब मैं उनसे क्या कहूंगा? लक्ष्मणजीकी माता सुमित्रा जब पूछेंगी तब मैं उन्हें सुखी करनेवाला कौनसा संदेश कहूंगा?

जननि जब आइहि धाई ❀ सुमिरि बच्छु जिमि धेनु लवाई ॥
उतरु देब मैं तेही ❀ गे बनु राम लषनु बैदेही ॥

बछड़ेको याद करके नयी ब्यायी हुई गायकी भांति जब श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्या दौड़कर आवेंगी तब उनके पूछनेपर मैं उन्हें उत्तर दूंगा कि श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी—सब वनको चले गये।

जोइ पूछिहि तेहि ऊतरु देबा ❀ जाइ अवध अब येहु सुखु लेबा ॥
पूछिहि जबहिं राउ दुखदीना ❀ जिवनु जासु रघुनाथअधीना ॥

जो कोई पूछेगा उसीको उत्तर दूंगा, यही सुख अब अयोध्यामें जाकर मैं लूंगा ! दुःखी और दीन राजा, जिनका जीना श्रीरामचन्द्रजीके अधीन है, पूछेंगे —

देइहउं उतरु कवन मुंहु लाई ❀ आयेउं कुसल कुअंर पहुंचाई ॥
सुनत लषन - सिय - राम - संदेसू ❀ तृन जिमि तनु परिहरिहि नरेसू ॥

तब मैं कौन मुंह लाकर उन्हें उत्तर दूंगा कि कुमारोंको पहुंचाकर कुशलपूर्वक लौट आया। लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका संदेश सुनते ही राजा तिनके समान अपने शरीरको छोड़ देंगे।

दो०—हृदय न बिदरेउ पंक जिमि ❀ बिछुरत प्रीतमु नीरु।
जानतहौं मोहि दीन्ह बिधि ❀ यह जातना सरीरु ॥१४७॥

जैसे प्रियतम जलका वियोग होते ही कीचड़ फट जाता है, वैसे ही मेरा हृदय फट नहीं गया ! जानता हूं, मुझे दैवने यह यातना-शरीर दिया है।

एहि बिधि करत पंथ पछितावा ❀ तमसातीर तुरतु रथु आवा ॥
बिदा किये करि बिनय निषादा ❀ फिरे पांय परि बिकल बिषादा ॥

मार्गमें मंत्री इस प्रकार पछतावा करते जा रहे थे। शीघ्र ही तमसा नदीके किनारे रथ आ गया। मंत्रीने विनती करके निषादोंको बिदा किया, जो शोकसे व्याकुल हो पैरों पड़कर लौट आये।

पैठत नगर सचिव सकुचाई ❀ जनु मारेसि गुरु - बाभन - गाई ॥
बैठि बिटपतर दिवसु गंवावा ❀ सांझसमय तब अंवसरु पावा ॥

नगरमें घुसते हुए मंत्रीको संकोच होने लगा; मानो उन्होंने गुरु, ब्राह्मण और गायको मार डाला हो। उन्होंने वृक्षके नीचे बैठकर दिन व्यतीत किया और जब सन्धासमय हुआ तब नगरमें जानेका उन्हें अवसर मिला।

अवधप्रबेसु कीन्ह अंधियारे ❀ पैठ भवन रथु राखि दुआरे ॥
जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाये ❀ भूप द्वार रथ देखन आये ॥

अंधकार हो जानेपर उन्होंने अयोध्यामें प्रवेश किया और रथको द्वारपर ही छोड़कर वे महलके भीतर गये। सुमंत्रके आनेका समाचार जिन-जिनने सुन पाया वे सब राजद्वारपर रथ देखनेके लिये आये।

रथु पहिचानि बिकल लखि घोरे ❀ गरहिं गात जिमि आतप ओरे॥
नगर-नारि-नर ब्याकुल कैसे ❀ निघटत नीर मीन गन जैसे॥

रथको पहचानकर और घोड़ोंको व्याकुल देखकर उनके शरीर ऐसे शिथिल हो गये, जैसे धूपमें ओले गले जाते हैं। नगरके स्त्री और पुरुष—सब ऐसे व्याकुल हुए; जैसे पानीके सूख जाते ही मछलियां व्याकुल होती हैं।

दो०—सचिव आगमनु सुनत सबु ❀ बिकल भयेउ रनिवासु।
भवनु भयंकरु लाग तेहि ❀ मानहुँ प्रेतनिवासु॥१४८॥

मंत्रीका आना सुनते ही सारा रनवास व्याकुल हो गया। उन्हें राजमहल ऐसा भयंकर प्रतीत हुआ; मानों वह प्रेतका निवासस्थल हो।

अतिआरति सब पूछहिं रानी ❀ उतरु न आव बिकल भइ बानी॥
सुनइ न स्रवन नयन नहिं सूझा ❀ कहहु कहां नृप जेहि तेहि बूझा॥

अत्यन्त दुःखी होकर सब रानियां पूछती हैं; परन्तु सुमंत्रसे कुछ जवाब नहीं दिया जाता, उनकी वाणी व्याकुल हो गयी। उन्हें कानोंसे सुनायी और आंखोंसे दिखलायी न पड़ने लगा। वे जिसको पाते उसीसे पूछने लगते कि बतलाओ राजा कहां हैं?

दासिन्ह दीख सचिव बिकलाई ❀ कौसल्यागृह गईं लेवाई॥
जाइ सुमंत्र दीख कस राजा ❀ अमियरहित जनु चंदु बिराजा॥

दासियोंने जब मन्त्रीकी व्याकुलता देखी तब वे उन्हें कौशल्याके महलमें लिवा ले गयीं। सुमंत्रने जाकर राजाको कैसा देखा; मानों अमृतशून्य चन्द्रमा हो।

आसन-सयन-बिभूषण-हीना ❀ परेउ भूमितल निपट मलीना॥
लेइ उसासु सोच एहि भांती ❀ सुरपुर तें जनु खंसेउ जजाती॥

वे आसन, शय्या और गहनोंसे रहित बिलकुल मलीन होकर पृथिवीपर पड़े हुए थे, लम्बी सांसें ले रहे थे; और उन्हें ऐसा सोच हो रहा था; मानों स्वर्गसे राजा ययाति खसक पड़े हों।

लेत सोच भरि छिनु छिनु छाती ❀ जनु जरि पंख परेउ संपाती॥
राम राम कह रामसनेही ❀ पुनि कह राम लषनु बैदेही॥

क्षण-क्षणमें शोकसे वे छाती भर लाते थे मानों पंख जल जानेपर संपाती गिर पड़ा हो। राजा बार-बार राम, राम, प्यारे राम कहकर फिर राम, लक्ष्मण, सीता कहने लगे।

दो०—देखि सचिव जय जीव कहि ❀ कीन्हेउ दंड प्रनामु।
सुनत उठेउ ब्याकुल नृपति ❀ कहु सुमंत्रु कहं रामु ॥१४९॥

राजाको देखकर मंत्रीने जय-जीव कहकर दण्डवत् प्रणाम किया। सुनते ही राजा व्याकुल होकर उठ बैठे और कहने लगे—सुमंत्र, यह कहो, श्रीरामचन्द्रजी कहां हैं ?

भूप सुमंत्रु लीन्ह उर लाई ❀ बूड़त कछु अधार जनु पाई ॥
सहित सनेह निकट बैठारी ❀ पूछत राउ नयन भरि बारी ॥

राजाने सुमंत्रको हृदयसे लगा लिया; मानों डूबते हुए कुछ आधार मिल गया हो। प्रेमसमेत पास बिठलाकर और नेत्रोंमें आंसू भरकर राजा पूछने लगे।

राम कुसल कहु सखा सनेही ❀ कहं रघुनाथ लषनु बैदेही ॥
आने फेर कि बनहिं सिधाये ❀ सुनत सचिवलोचन जल छाये ॥

हे प्यारे मित्र, यह कहो कि रामचन्द्र कुशलसे तो हैं ? रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीता कहां हैं ? उन्हें लौटा लाये हो कि वे वनको चले ही गये। यह सुनते ही मंत्रीकी आंखोंमें आंसू भर आये।

सोक बिकल पुनि पूछ नरेसू ❀ कहु सिय-राम-लषन-संदेसू ॥
राम - रूप - गुन - सील - सुभाऊ ❀ सुमिरि सुमिरि उर सोचत राऊ ॥

शोकसे व्याकुल होकर राजा फिर पूछने लगे कि रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीताका संदेश कहो। श्रीरामचन्द्रजीका रूप, गुण, शील और स्वभाव वार-वार स्मरण कर राजा हृदयमें सोचने लगे।

राज सुनाइ दीन्ह बनबासू ❀ सुनि मन भयेउ न हरष हरांसू ॥
सो सुत बिछुरत गये न प्राना ❀ को पापी बड़ मोहि समाना ॥

राजतिलक होनेकी वात सुनाकर वनवास दिया, परन्तु उनके मनको उसे सुनकर न प्रसन्नता हुई और न इसे सुनकर शोक ! उसी पुत्रका वियोग होते ही प्राण नहीं निकले—मेरे समान बड़ा पापी और कौन है ?

दो०—सखा राम-सिय-लषनु जहं ❀ तहां मोहि पहुंचाउ।
नाहिं त चाहत चलन अब ❀ प्रान कहउं सतिभाउ ॥१५०॥

हे मित्र ! रामचन्द्र, लक्ष्मण और सीता जहां हों वहीं मुझे पहुंचाओ, नहीं तो, मैं सच्चे भावसे कहता हूं, अब प्राण चलना चाहते हैं।

पुनि पुनि पूछत मंत्रिहि राऊ ❀ प्रियतम - सुअन - संदेस सुनाऊ ॥
करहि सखा सोइ बेगि उपाऊ ❀ राम -लषन - सिय नयन देखाऊ ॥

राजा बार-बार मंत्रीको पूछने लगे कि मेरे अत्यन्त प्यारे पुत्रोंका संदेश सुनाओ। हे मित्र, शीघ्र वही उपाय करो जिससे श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीको आंखों दिखला सको।

सचिव धीर धरि कह मृदुबानी ❀ महाराज तुम्ह पंडित ग्यानी ॥
बीर सुधीर धुरंधर देवा ❀ साधुसमाजु सदा तुम्ह सेवा ॥

धीरज रखकर मंत्री सुमंत्र कोमल वाणीसे कहने लगे कि हे महाराज, आप ज्ञानवान और पंडित हैं, और वीर, अत्यन्त धैर्यवान तथा धुरन्धर राजा हैं, आपने सज्जनोंके समाजकी सदैव सेवा की है।

जनम मरन सब दुख सुख भोगा ❀ हानि लाभु प्रियमिलन बियोगा ॥
काल करम बस होहिं गोसाईं ❀ बरबस राति दिवस की नाईं ॥

जन्म-मृत्यु, दुःख-सुख, हानि-लाभ, प्रिय वस्तुका संयोग और वियोग, सब भोग रात और दिनकी भांति, हे स्वामिन्, काल और कर्मके वश होकर बरबस हुआ करते हैं।

सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं ❀ दोउ सम धीर धरहिं मनमाहीं ॥
धीरज धरहु बिबेकु बिचारी ❀ छाड़िय सोचु सकलु हितकारी ॥

जो मूर्ख होते हैं वे सुखमें प्रसन्न होते हैं और दुःखमें विलाप करते हैं, परन्तु धीर मनुष्य अपने मनमें दोनोंको ही समान समझते हैं। विवेकसे विचारकर धीरज रखिये और हे सबके हितकारी, शोक दूर कर दीजिये।

दो०—प्रथम बासु तमसा भयेउ ❀ दूसर सुरसरि तीर।
न्हाइ रहे जलपानु करि ❀ सियसमेत दोउ बीर ॥ १५१ ॥

पहिला निवास तमसा नदीके किनारे हुआ और दूसरा गङ्गाजीके तटपर। दोनों वीर वहां सीताजीसमेत स्नानकर जलपान कर रहे थे।

केवट कीन्ह बहुत सेवकाई ❀ सो जामिनि सिगरौर गवाँई ॥
होत प्रात बटछीरु मंगावा ❀ जटामुकुट निज सीस बनावा ॥

केवट निषादने वहां उनकी बड़ी सेवा की। वह रात उन्होंने शृंगवेरपुरमें बितायी। सवेरा होते ही प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने बरगदका दूध मंगाया और अपने शिरपर जटाओंका मुकुट बनाया।

रामसखा तब नाव मंगाई ❀ प्रिया चढ़ाइ चढ़े रघुराई ॥
लषनु बानधनु धरे बनाई ❀ आपु चढ़े प्रभुआयसु पाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादने तब नाव मंगवायी और सीताजीको चढ़ाकर श्रीरामचन्द्रजी चढ़े। धनुष और बाणको सजाकर हाथमें लिये हुए लक्ष्मणजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर स्वयं चढ़े।

विकल बिलोकि मोहि रघुबीरा ❀ बोले मधुर बचन धरि धीरा ॥
तात प्रनामु तात सन कहेहू ❀ बार बार पद पंकज गहेहू ॥

मुझे व्याकुल देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी धीरज रखकर ये मधुर वचन कहने लगे कि हे तात, पिताजीसे प्रणाम कहना और बार-बार मेरी ओरसे चरणकमल पकड़ना ।

करबि पाय परि बिनय बहोरी ❀ तात करिय जनि चिंता मोरी ॥
बनमग मंगल कुसल हमारे ❀ कृपा अनुग्रह पुन्य तुम्हारे ॥

फिर पैरों पड़कर विनती करना कि हे तात, मेरी चिन्ता मत कीजिये । आपकी कृपा, दया और पुण्यसे वनके मार्गमें हमारा कुशलमङ्गल है ।

छं०—तुम्हरे अनुग्रह तात कानन जात सब सुखु पाइहउँ ।
प्रतिपालि आयसु कुसल देखन पाय पुनि फिरि आइहउँ ॥
जननी सकल परितोषि परि परि पाय करि बिनती घनी ।
तुलसी करेहु सोइ जतनु जेहि कुसली रहहिं कोसलधनी ॥

हे पिताजी, आपकी दयासे वनमें जाते हुए सब सुख पाऊँगा । आपकी आज्ञाका पालन कर आपके चरणोंके दर्शन करनेके लिए कुशलपूर्वक फिर लौट आऊँगा । बार-बार पैरों पड़कर और बहुत विनती करके सब माताओंको संतोष दिलाकर—तुलसीदासजी कहते हैं—वही यत्न करना, जिससे कोशलदेशके राजा दशरथ कुशलपूर्वक रहें ।

सो०—गुरु सन कहब संदेसु ❀ बार बार पदपदुम गहि ।
करब सोइ उपदेसु ❀ जेहि न सोच मोहि अवधपति ॥१५२॥

बार-बार चरणकमल पकड़कर गुरु वशिष्ठसे यह संदेश कहना कि वे वही उपदेश करें, जिससे अयोध्यापति राजा दशरथ मेरे लिये शोक न करें ।

पुरजन परिजन सकल निहोरी ❀ तात सुनायेहु बिनती मोरी ॥
सोइ सब भाँति मोर हितकारी ❀ जा तें रह नरनाहु सुखारी ॥

नगरनिवासी और कुटुम्बी, सबसे मेरी ओरसे निहोरा करके, हे तात, मेरी यह विनती सुनाना कि सब प्रकार मेरा हित करनेवाला वही है, जिससे राजा दशरथ सुखी रहें ।

कहब संदेसु भरत के आये ❀ नीति न तजिइ राजपदु पाये ॥
पालेहु प्रजहि करम - मन - बानी ❀ सेयेहु मातु सकल सम जानी ॥

भरतके आ जानेपर यह संदेश कहना कि राज-पद पाकर नीति नहीं छोड़नी चाहिये। मन, वाणी और कर्मसे प्रजाका पालन करना और सब माताओंको बराबर जानकर उनकी सेवा करना।

अउर निबाहेहु भायप भाई ❀ करि पितु-मातु-सुजन-सेवकाई ॥
तात भाँति तेहि राखब राऊ ❀ सोच मोर जेहि करहि न काऊ ॥

और हे भाई! पिता, माता और सुजनोंकी सेवा करके भाईपन निबाहना। हे तात, राजाको इस प्रकार रखना, जिससे वे मेरा शोक कभी न करें।

लषन कहे कछु बचन कठोरा ❀ बरजि राम पुनि मोहि निहोरा ॥
बार बार निज सपथ देवाई ❀ कहबि न तात लषनलरिकाई ॥

लक्ष्मणजीने कुछ कठोर वचन कहे, परन्तु उन्हें रोककर फिर श्रीरामचंद्रजीने मुझसे विनती की और बार-बार अपनी सौगंध दिलायी कि हे तात, लक्ष्मणजीका लड़कपन पिताजीसे मत कहना।

दो०—कहि प्रनामु कछु कहन लिय ❀ सिय भइ सिथिल सनेह ।
थकित बचन लोचन सजल ❀ पुलक पल्लवित देह ॥ १५३ ॥

प्रणाम कहकर सीताजी कुछ कहने ही लगी थीं कि उनका शरीर स्नेहसे शिथिल हो गया, वाणी रुक गयी, नेत्रोंमें जल छा गया और शरीर पुलकायमान होकर रोमावली खड़ी हो गयी।

तेहि अवसर रघुबर रुख पाई ❀ केवट पारहिं नाव चलाई ॥
रघु-कुल-तिलक चले एहि भांती ❀ देखेउँ ठाढ़ कुलिस धरि छाती ॥

उसी समय श्रीरामचन्द्रजीका रुख पाकर केवटने उस पारके लिये नाव चला दी। इस प्रकार रघुवंशतिलक श्रीरामचन्द्रजी चल दिये और अपनी छातीपर वज्र रख मैंने खड़ा होकर उन्हें देखा।

मैं आपन किमि कहउँ कलेसू ❀ जियत फिरेउँ लेइ रामसंदेसू ॥
अस कहि सचिव बचन रहि गयऊ ❀ हानि गलानि सोच बस भयऊ ॥

मैं अपना दुःख कैसे कहूं, जो श्रीरामचन्द्रजीका संदेश लेकर जीवित लौटा। ऐसा कहकर मंत्री चुप रह गये आर वे हानि, ग्लानि और शोकके वशमें हो गये।

सूत बचन सुनतहि नरनाहू ❀ परेउ धरनि उर दारुनदाहू ॥
तलफत बिषम मोह मन मापा ❀ मांजा मनहुँ मीन कहँ ब्यापा ॥

सुमंत्रके वचन सुनते ही राजा पृथिवीपर गिर पड़े। उनके हृदयमें बड़ी कठोर वेदना होने लगी। मनमें घोर मोह व्याप्त हो जानेसे वे छटपटाने लगे, मानों मछलीको मांजा (बरसातका रोग) हो गया हो।

करि बिलाप सब रोवहिं रानी ❀ महाबिपति किमि जाइ बखानी ॥
सुनि बिलाप दुखहू दुख लागा। ❀ धीरजहू कर धीरजु भागा ॥

विलाप करके सब रानियां रोने लगीं। उस महान् विपत्तिका वर्णन कैसे किया जा सकता है? विलाप सुनकर दुःखको भी दुःख लगता था और धैर्यका भी धैर्य भागता था।

दो०—भयेउ कोलाहल अवध अति ❀ सुनि नृप राउर सोरु।
बिपुल बिहंगबन परेउ निसि ❀ मानहु कुलिस कठोरु ॥ १५४ ॥

राजमहलमें शोर होता सुनकर अयोध्यामें बड़ा कोलाहल हुआ; मानों बहुतसे पक्षियोंके वनपर रातमें कठोर वज्रपात हुआ हो।

(दशरथका मरण)

प्रान कंठगत भयेउ भुआलू ❀ मनिबिहीन जनु ब्याकुल ब्यालू ॥
इंद्री सकल बिकल भइ भारी ❀ जनु सर सरसिज बन बिनु बारी ॥

राजाके प्राण कण्ठमें आ गये। वे ऐसे व्याकुल हुए, जैसे मणिके विना सर्प। उनकी सारी इंद्रियां बहुत व्याकुल हुईं; जैसे सरोवरमें जलके विना कमलोंका वन।

कौसल्या नृप दीख मलाना ❀ रबि-कुल-रबि अथयेउ जिय जाना ॥
उर धरि धीर राममहतारी ❀ बोली बचन समय अनुसारी ॥

कौशल्याने राजाको मलिन देखकर हृदयमें यह जान लिया कि सूर्यकुलका सूर्य अस्त हुआ! फिर भी श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्याजी हृदयमें धीरज रखकर समयानुसार ये वचन कहने लगीं—

नाथ समुझि मन करिय बिचारू ❀ राम-बियोग-पयोधि अपारू ॥
करनधार तुम्ह अवधजहाजू ❀ चढ़ेउ सकल प्रिय-पथिक-समाजू ॥

हे नाथ, समझ करके मनमें विचार कीजये। श्रीरामचन्द्रजीके वियोगका समुद्र अपार है। आप कर्णधार हैं और अयोध्या जहाज है, जिसमें सारे प्रियजनरूपी यात्रियोंका समूह चढ़ा हुआ है।

धीरजु धरिय त पाइय पारू ❀ नाहिं त बूड़िहि सब परिवारू ॥
जौं जिय धरिय बिनय पिय मोरी ❀ रामु लषनु सिय मिलहिं बहोरी ॥

धीरज धरियेगा तो पार जा लगेंगे, नहीं तो सारा परिवार डूब जायगा। हे प्यारे, आप मेरी विनतीको अपने हृदयमें धारण करेंगे तो श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी—सब फिर मिल जायंगे।

दो०—प्रिया बचन मृदु सुनत नृपु ❀ चितयेउ आंखि उघारि।
तलफत मीन मलीन जनु ❀ सींचेउ सीतलबारि ॥१५५॥

प्यारी कौशल्याके कोमल वचन सुनकर राजा आंख खोलकर देखने लगे; मानों छटपटाती हुई मछलीपर किसीने ठंडा पानी डाल दिया हो।

धरि धीरजु उठि बैठि भुआलू ❀ कहु सुमंत्र कहं रामु कृपालू ॥
कहां लषनु कहं रामसनेही ❀ कहं प्रिय-पुत्र-बधू बैदेही ॥

धीरज रखकर राजा उठकर बैठ गये। वे कहने लगे—हे सुमंत्र, यह बतलाओ कि कृपालु रामचन्द्र कहां हैं, लक्ष्मण कहां हैं, प्यारे राम कहां हैं, प्यारी पुत्रवधू, सीता कहां हैं?

बिलपत राउ बिकल बहुभांती ❀ भइ जुगसरिस सिराति न राती ॥
तापस-अंध-साप सुधि आई ❀ कौसल्यहि सब कथा सुनाई ॥

राजा व्याकुल होकर बहुत तरहसे विलाप करने लगे। वह रात युगके समान हो गयी और काटे नहीं कटी। राजा दशरथको अंधे तपस्वीके शापकी याद हो आयी, जिसकी सारी कथा उन्होंने कौशल्याको कह सुनायी।

भयेउ बिकल बरनत इतिहासा ❀ राम रहित धिग जीवनआसा ॥
सो तनु राखि करब मैं काहा ❀ जेहि न प्रेमपनु मोर निबाहा ॥

इतिहास वर्णन करते-करते वे व्याकुल हो गये और कहने लगे कि रामचन्द्रके विना जीनेकी आशाको धिक्कार है। उस शरीरको रखकर मैं क्या करूंगा, जिसने मेरा प्रेम-प्रण नहीं निबाहा।

हा रघुनन्दन प्रानपिरीते ❀ तुम्ह बिनु जियत बहुत दिन बीते ॥
हा जानकी लषन हा रघुबर ❀ हा पितु-हित-चित-चातक-जलधर ॥

हाय प्राणप्यारे रघुनन्दन! तुम्हारे विना जीते हुए बहुत दिन बीत गये! हाय जानकी! हाय लक्ष्मण! हाय रामचन्द्र! हाय पिताके हितके लिये चित्तरूपी पपीहाके बादल!

दो०—राम राम कहि राम कहि ❀ राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरह ❀ राउ गयेउ सुरधाम ॥१५६॥

अन्तमें बार-बार राम-राम, राम-राम कह-कहकर राजा दशरथ श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें शरीर छोड़कर देवलोकको सिधार गये।

जियन मरन फलु दसरथु पावा ❀ अंड अनेक अमल जसु छावा ॥
जियत राम-बिधु-बदनु निहारा ❀ रामबिरह मरि मरनु संवारा ॥

राजा दशरथजीने जीने और मरनेका फल पा लिया, जिनका निर्मल यश अनेक ब्रह्माण्डोंमें छा गया।

जबतक जिये, श्रीरामचन्द्रजीका चन्द्रमुख देखा किये और जब श्रीरामचन्द्रजीका वियोग हुआ तब शरीर त्यागकर अपना मरण सुधार लिया।

सोकबिकल सब रोवहिं रानी ❀ रूप सील बलु तेज बखानी ॥
करहिं बिलाप अनेक प्रकारा ❀ परहिं भूमितल बारहिं बारा ॥

शोकसे व्याकुल होकर सब रानियां राजा दशरथके रूप, शील; बल और तेजका बखानकर रोने लगीं। वे अनेक प्रकारसे विलाप करने और बार-बार पृथिवी-तलपर पछाड़ खाने लगीं।

बिलपहिं बिकल दास अरु दासी ❀ घर घर रुदनु करहिं पुरबासी ॥
अथयेउ आजु भानु-कुल-भानू ❀ धरमअवधि गुन-रूप-निधानू ॥

दास और दासियां व्याकुल होकर विलाप करने लगीं। अयोध्यामें रहनेवाले सब लोग अपने-अपने घरोंमें रोने लगे कि धर्मकी मर्यादा, गुण तथा रूपके स्थान और सूर्यवंशके सूर्य आज अस्त हो गये!

गारी सकल कैकइहि देहीं ❀ नयनबिहीन कीन्ह जग जेहीं ॥
एहि बिधि बिलपत रैनि बिहानी ❀ आये सकल महामुनि ग्यानी ॥

सब नगरनिवासी कैकेयीको गालियां दे रहे हैं, जिसने संसारको नेत्रविहीन कर दिया! इस प्रकार विलाप करते हुए रात बीत गयी और सब ज्ञानवान महामुनि वहां आये।

दो०—तब बसिष्ठ मुनि समयसम ❀ कहि अनेक इतिहास।
सोक निवारेउ सबहि कर ❀ निज बिग्यान प्रकास ॥१५७॥

तब वशिष्ठ मुनिने समयानुसार अनेक इतिहास कहकर अपने विज्ञानके प्रकाशसे सबका शोक दूर किया।

तेल नाव भरि नृपतनु राखा ❀ दूत बोलाइ बहुरि अस भाखा ॥
धावहु बेगि भरत पहिं जाहू ❀ नृप सुधि कतहुं कहहु जनि काहू ॥

तेलसे नाव भरवाकर उसमें राजाका शरीर रख दिया। और फिर दूतोंको बुलाकर यह कहा कि जल्दी ही दौड़ो और तुमलोग भरतके पास जाओ। राजाके विषयका समाचार कहीं किसीसे भी मत कहना।

एतनेइ कहेहु भरत सन जाई ❀ गुरु बोलाय पठये दोउ भाई ॥
सुनि मुनिआयसु धावन धाये ❀ चले बेगि बरबाजि लजाये ॥

भरतजीसे जाकर इतना ही कहना कि दोनों भाइयोंको गुरुने बुला भेजा है। मुनिकी आज्ञा सुनकर दूत दौड़ चले। वे इतनी जल्दी चले कि उन्हें देखकर श्रेष्ठ घोड़े भी लजाते थे।

अनरथु अवध अरंभेउ जब ते ❀ कुसगुन होहिं भरत कहं तब ते ॥
देखहिं राति भयानकसपना ❀ जागि करहिं कटु कोटि कलपना ॥

यहां अयोध्यामें जबसे अनर्थ होना आरम्भ हुआ, भरतको वहां (ननिहालमें) बुरे शकुन होने लगे। उन्हें रातमें भयङ्कर स्वप्न दिखलायी देते थे और जागनेपर वे उनके सम्बन्धमें करोड़ों तरहकी बुरी कल्पनाएं करते थे।

विप्र जेंवाइ देहिं दिन दाना ❀ सिव अभिषेक करहिं बिधिनाना॥
मांगहिं हृदय महेस मनाई ❀ कुसल मातु पितु परिजन भाई॥

प्रति दिन ब्राह्मण-भोजन कराके दान देते और अनेक तरहसे शिवजीका अभिषेक करते थे। शिवजीको मनाकर अपने हृदयमें माता, पिता, भाई और कुटम्बी—सबकी कुशलता मांगते थे।

दो०—एहि विधि सोचत भरत मन ❀ धावन पहुंचे आइ।
गुरु अनुसासन स्रवन सुनि ❀ चले गनेसु मनाइ॥१५८॥

इस प्रकार भरतजी मनमें सोच ही रहे थे कि दूत आ पहुंचे। गुरुकी आज्ञा कानों सुनकर भरतजी गणेशजीको मनाकर विदा हुए।

चले समीरबेग हय हांके ❀ नाघत सरित सैल बन बांके॥
हृदय सोचु बड़ कछु न सोहाई ❀ अस जानहिं जिय जाउं उड़ाई॥

वे हवाकी भांति तेज चलनेवाले घोड़ोंको हांकते और नदी, पर्वत और विकट जंगलोंको पार करते हुए चल दिये। उनके हृदयमें बड़ा शोक था और कुछ न अच्छा लगता था। वे अपने जीमें ऐसा सोचते थे कि उड़कर पहुंच जावें।

एक निमेष बरषसम जाई ❀ एहि बिधि भरत नगरु नियराई॥
असगुन होहिं नगर पैठारा ❀ रटहिं कुभांति कुखेत करारा॥

एक-एक निमेष वर्षके समान बीत रहा था। इस प्रकार भरतजी अयोध्याके समीप आये। नगरमें भीतर जानेके समय उन्हें अशकुन होने लगे। बुरे स्थानमें बैठकर कौए बुरी तरह भयंकर शब्द करने लगे।

खर सियार बोलहिं प्रतिकूला ❀ सुनि सुनि होइ भरतमनु सूला॥
श्रीहत सर सरिता बन बागा ❀ नगरु बिसेषि भयावनु लागा॥

गधे और सियार प्रतिकूल बोलने लगे। इनकी बोली सुन-सुनकर भरतजीके मनको बड़ी पीड़ा होती थी। नदी, तालाब, वन और बाग—सब कान्तिहीन (फीके) हो रहे थे, अयोध्यापुरी विशेष भयंकर लगती थी।

खग मृग हय गय जाहिं न जोये ❀ राम - बियोग - कुरोग बिगोये॥
नगर-नारि - नर निपट दुखारी ❀ मनहुं सबन्हि सब संपति हारी॥

पक्षी, हिरन, हाथी, घोड़े देखे नहीं जाते थे। श्रीरामचन्द्रजीके वियोग-रूपी बुरे रोगने उन्हें सता रखा था! नगरके स्त्री-पुरुष—सब बहुत दुःखी थे; मानों सभीने अपनी सब सम्पत्ति हार दी हो।

दो०—पुरजन मिलहिं न कहहिं कछु ❁ गंवहि जोहारहिं जाहिं ।
भरत कुसल पूछि न सकहिं ❁ भय बिषादु मन माहिं ॥१५९॥

नगरनिवासी मिलते थे, पर वे कुछ कहते न थे, दण्डवत करके चुपचाप चले जाते थे। मनमें भय और शोक होनेके कारण भरतजी किसीसे कुशल न पूछ सकते थे।

हाट बाट नहिं जाइ निहारी ❁ जनु पुर दह दिसि लागि दवारी ॥
आवत सुत सुनि कैकयनंदिनि ❁ हरषी रबि-कुल-जलरुह-चंदिनि ॥

बाजार और सड़कें देखी नहीं जातीं; मानों नगरमें दशों दिशाओंमें दावाग्नि लग रही हो। पुत्रको आता हुआ सुनकर सूर्यकुलरूपी कमलके लिये चांदनीके समान कैकेयी प्रसन्न हुई।

सजि आरती मुदित उठि धाई ❁ द्वारेहिं भेंटि भवन लेइ आई ॥
भरत दुखित परिवारु निहारा ❁ मानहुं तुहिन बनजबनु मारा ॥

वह आरती सजाकर प्रसन्नतासे उठ दौड़ी और द्वारपर ही पुत्रसे मिलकर घर ले आयी। भरतजीने देखा कि परिवार दुःखी हो रहा है; मानों कमलोंके वनपर पाला पड़ गया हो।

कैकेई हरषित एहि भांती ❁ मनहुं मुदित दव लाइ किराती ॥
सुतहि ससोच देखि मनु मारे ❁ पूछति नैहर कुसल हमारे ॥

कैकेयी इस प्रकार आनन्दित हो रही है, मानों वनमें आग लगाकर भीलनी प्रसन्न हो। पुत्रको शोकित और मनमलीन देखकर कैकेयी पूछने लगी कि मेरे पिताके घर तो कुशल है?

सकल कुसल कहि भरत सुनाई ❁ पूछी निज-कुल-कुसल-भलाई ॥
कहु कहं तात कहां सब माता ❁ कहं सिय रामु लषन प्रियभ्राता ॥

भरतजीने वहांकी सब कुशलता कह सुनायी और फिर अपने कुटुम्बकी कुशल-भलाई पूछी। यह बतलाओ कि पिताजी कहां हैं और सब माताएँ कहां हैं। सीताजी, श्रीरामचन्द्रजी और प्यारे भाई लक्ष्मणजी कहां हैं?

दो०—सुनि सुतबचन सनेहमय ❁ कपटनीर भरि नयन ।
भरत-स्रवन-मन-सूल-सम ❁ पापिनि बोली बयन ॥१६०॥

पुत्रके प्रेमभरे हुए वचन सुनकर और आंखोंमें कपटके आंसू भरकर पापिनी कैकेयी भरतजीके कानों और मनके लिये शूलके समान ये वचन कहने लगी।

तात बात मैं सकल संवारी ❁ भइ मंथरा सहाय बिचारी ॥
कछुक काज बिधि बीच बिगारेउ ❁ भूपति सुर-पति-पुर पगु धारेउ ॥

हे पुत्र, मैंने सब बात संभाल ली है। बेचारी मंथरा सहायक हुई। दैवने बीचमें कुछ काम बिगाड़ दिया और वह यह कि राजा स्वर्गवासी हो गये।

सुनत भरतु भये बिबस बिषादा ❀ जनु सहमेउ करि केहरिनादा ॥
तात तात हा तात पुकारी ❀ परे भूमितल ब्याकुल भारी ॥

सुनते ही भरतजी शोकके वशमें हो गये; मानों सिंहकी गर्जनासे हाथी सहम गया हो। हा पिता! हा पिता! हा पिता! पुकारकर भरतजी अत्यन्त व्याकुल होकर पृथिवीपर गिर पड़े।

चलत न देखन पायेउँ तोही ❀ तात न रामहिं सौंपेहु मोही ॥
बहुरि धीर धरि उठे संभारी ❀ कहु पितु मरन हेतु महतारी ॥

अन्तकालमें आपको नहीं देख पाया! हा पिता, आपने मुझे श्रीरामचन्द्रजीको नहीं सौंप दिया! फिर भरतजी धीरज रखकर, सँभलकर उठ बैठे और पूछने लगे कि हे माता, पिताके मरनेका कारण बतलाओ।

सुनि सुतबचन कहति कैकेई ❀ मरमु पाँछि जनु माहुर देई ॥
आदिहु ते सबु आपनि करनी ❀ कुटिल कठोर मुदितमन बरनी ॥

पुत्रके वचन सुनकर कैकेयी कहने लगी; मानों घाव लगाकर पीछे उसमें विष मिला रही हो। दुष्ट और कठोर कैकेयीने प्रसन्न मनसे अपनी सब करतूत आरंभसे कह सुनायी।

दो०—भरतहि बिसरेउ पितुमरन ❀ सुनत राम-बन-गौनु ॥
हेतु अपनपउ जानि जिय ❀ थकित रहे धरि मौनु ॥१६१॥

श्रीरामचन्द्रजीका वन जाना सुनकर भरतजीको पिताका मरण भूल गया और उसका कारण अपनेको ही हृदयमें जानकर चुप होकर थकित रह गये।

बिकल बिलोकि सुतहि समुझावति ❀ मनहुँ जरे पर लोन लगावति ॥
तात राउ नहिं सोचन जोगू ❀ बढ़इ सुकृत जस कीन्हेउ भोगू ॥

पुत्रको व्याकुल देखकर कैकेयी समझाने लगी; मानों जलेपर नमक लगा रही हो। हे पुत्र, राजा शोक करनेयोग्य नहीं हैं। जैसे उनके बड़े पुण्य थे वैसे ही उन्होंने भोग भी भोगे।

जीवत सकल जनम फल पाये ❀ अंत अमरपति-सदन सिधाये ॥
अस अनुमानि सोच परिहरहू ❀ सहित समाज राज पुर करहू ॥

जीतेजी उन्होंने जन्म पानेके सारे फल पा लिये और अन्तमें देवताओंके स्वामी इन्द्रके धामको सिधार गये। ऐसा समझकर शोक छोड़ दो और समाजसमेत अयोध्यामें राज करो।

सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारू ❀ पाके छत जनु लाग अँगारू ॥
धीरजु धरि भरि लेहिं उसासा ❀ पापिनि सबहिं भाँति कुल नासा ॥

कैकेयीके इन सुन्दर वचनोंको सुनकर राजकुमार भरतजी सहम गये; मानो पके हुए फोड़ेसे अङ्गार छू गया हो। धीरज रखकर वे लम्बी साँस खींचने लगे और कहने लगे कि अरी पापिनि, तूने सब प्रकार कुलका नाश कर दिया।

जौं पै कुरुचि रही अति तोही ❀ जनमत काहे न मारे मोही ॥
पेड़ काटि तैं पालउ सींचा ❀ मीनजियन निति बारि उलीचा ॥

यदि तेरी अत्यन्त नीच वासना ऐसी ही थी तो जन्म देनेके साथ ही मुझे क्यों नहीं मार डाला? तूने पेड़को काटकर पत्तोंको पानी दिया है और मछलियोंके जीनेके लिये पानीको बाहर निकाल दिया है।

दो०—हंसबंसु दसरथु जनकु ❀ राम लखन से भाइ।
जननी तूं जननी भई ❀ बिधि सन कछु न बसाइ ॥१६२॥

सूर्यवंशके समान कुल, दशरथजीसे पिता और श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीसे मेरे भाई हुए, परन्तु हे माता, मेरी माता तू हुई? ब्रह्मासे कुछ भी वश नहीं चलता।

जबतैं कुमति कुमत जिय ठयऊ ❀ खंड खंड होइ हृदय न गयऊ ॥
बर मांगत मन भइ नहिं पीरा ❀ गरि न जीह मुंह परेउ न कीरा ॥

अरी कुमति, जबसे यह बुरा विचार तेरे हृदयमें हुआ, तेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो गया? वर मांगते हुए मनको दुःख नहीं हुआ, जीभ नहीं गल गयी और मुंहमें कीड़े नहीं पड़ गये!

भूप प्रतीति तोरि किमि कीन्ही ❀ मरनकाल बिधि मति हरि लीन्ही ॥
बिधिहु न नारि हृदय गति जानी ❀ सकल कपट अघ अवगुन खानी ॥

राजाने तेरा विश्वास कैसे कर लिया! मरनेके समय दैवने उनकी बुद्धिका हरण कर लिया था! दैवने भी स्त्रीके हृदयकी गति नहीं जान पायी। उसका हृदय सब कपट, पाप और अवगुणोंका स्थान होता है।

सरल सुसील धरमरत राऊ ❀ सो किमि जानइ तीयसुभाऊ ॥
अस को जीव जंतु जग माहीं ❀ जेहि रघुनाथ प्रान प्रिय नाहीं ॥

राजा सीधे, सुशील और धर्ममें तत्पर थे। वे भला स्त्रीके उस स्वभावको कैसे जान सकते थे? संसारमें ऐसा कौन जीवजन्तु है, जिसे श्रीरामचन्द्रजी प्राणोंके समान प्यारे नहीं हों।

भे अति अहित राम तेउ तोही ❀ को तूं अहसि सत्य कहु मोही ॥
जो हसि सो हसि मुह मसि लाई ❀ आंखि ओट उठि बैठहि जाई ॥

वही श्रीरामचन्द्रजी तेरे लिये भारी शत्रु हो गये! मुझे सत्य बतला कि तू कौन है? तू जो कुछ है सो है। मुंह काला करके उठ और जाकर आंखसे ओझल होकर बैठ!

दो०—राम - बिरोधी - हृदय तें ❀ प्रगट कीन्ह बिधि मोहि।
मो समान को पातकी ❀ बादि कहउँ कछु तोहि ॥१६३॥

दैवने मुझे श्रीरामचन्द्रजीसे विरोध करनेवाले हृदयसे उत्पन्न किया है। मेरे समान पापी और कौन है? मैं तुझे व्यर्थ ही कुछ कहता हूं।

सुनि सत्रुघन मातुकुटिलाई ❀ जरहिं गात रिस कछु न बसाई॥
तेहि अवसरु कुबरी तहं आई ❀ बसन बिभूषन बिबिध बनाई॥

माताकी दुष्टता सुनकर क्रोधसे शत्रुघ्नका शरीर जलने लगा, परन्तु उनका कुछ वश नहीं चलता था। उस समय वहां कूबरी मंथरा तरह-तरहके गहनों और कपड़ोंसे अपनेको सजाकर आयी।

लखि रिस भरेउ लषन-लघु-भाई ❀ बरत अनल घृतआहुति पाई॥
हुमगि लात तकि कूबर मारा ❀ परि मुंह भरि महि करति पुकारा॥

लक्ष्मणजीके छोटे भाई शत्रुघ्न उसे देखकर क्रोधमें भर गये; मानों जलती हुई अग्निमें घीकी आहुति पड़ गयी हो। उन्होंने कूबरीके कूबरमें ताककर उछलकर एक लात मारी, जिससे वह चिल्लाती हुई मुंहके बल पृथिवीपर गिर पड़ी।

कूबर टूटेउ फूट कपारू ❀ दलितदसन मुख रुधिरप्रचारू॥
आहि दइब मैं काह नसावा ❀ करत नीक फलु अनइस पावा॥

कूबर टूट गया, कपाल फट गया, दांत टूट गये और मुंहसे रक्त बहने लगा। वह रोती हुई कहने लगी—हाय दैव, मैंने क्या बिगाड़ा है? अच्छा करते हुए मुझे बुरा फल मिला।

सुनि रिपुहन लखि नख सिख खोटी ❀ लगे घसीटन धरि धरि झोंटी॥
भरत दयानिधि दीन्हि छुड़ाई ❀ कौसल्या पहिं गे दोउ भाई॥

सुनते ही उसे नखसे लेकर चोटीतक खोटा जानकर शत्रुघ्न उसे शिरके बाल पकड़-पकड़कर घसीटने लगे, परन्तु दयानिधान भरतजीने उसे छुड़ा दिया और फिर दोनों भाई कौशल्याके पास गये।

दो०—मलिन बसनबिबरन बिकल ❀ कृस सरीर दुखभारु।
कनक-कलप-बर-बेलि - बन ❀ मानहुं हनी तुसारु ॥१६४॥

कौशल्याजीके कपड़े मैले हो रहे थे, रंग फीका हो गया था, दुःखके बोझेसे उनका शरीर दुबला हो रहा था और वे अत्यन्त व्याकुल हो रही थीं, मानों सोनेके कल्पवृक्षकी सुन्दर बेलिके वनको पाला मार गया हो।

भरतहिं देखि मातु उठि धाई ❀ मुरुछित अवनि परी झइं आई ॥
देखत भरतु बिकल भये भारी ❀ परे चरन तनदसा बिसारी ॥

भरतको देखते ही माता कौशल्या उठ दौड़ीं और चक्कर आ जानेसे वे मूर्च्छित होकर पृथिवीपर गिर पड़ीं। देखते ही भरतजी अत्यन्त व्याकुल हुए और अपने शरीरकी दशा भूलकर चरणोंमें पड़ गये।

मातु तात कहं देहि देखाई ❀ कहं सिय रामलखन दोउ भाई ॥
कैकइ कत जनमी जग मांझा ❀ जौं जनमि त भइ काहे न बांझा ॥

वे कहने लगे—हे माता, पिताजी कहां हैं ? उन्हें मुझे दिखलाओ। सीताजी और दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी कहां हैं ? संसारमें कैकेयीने क्यों जन्म लिया ? यदि जन्म ही लिया था तो बांझ क्यों नहीं हुई ?

कुलकलंक जेहि जनमेउ मोही ❀ अपजसभाजन प्रिय-जन-द्रोही ॥
को तिभुवन मोहि सरिस अभागी ❀ गति असि तोरि मातु जेहि लागी ॥

जिसने कुलके कलंक, अपयशके पात्र और प्रियजनोंके द्रोही मुझे जन्म दिया। तीनों लोकोंमें मेरे समान अभागा कौन है, जिसके कारण ही हे माता, तुम्हारी ऐसी दशा हुई है !

पितु सुरपुर बन रघु-कुल-केतू ❀ मैं केवल सब अनरथहेतू ॥
धिग मोहिं भयेउं बेनु-बन-आगी ❀ दुसह दाहु दुख-दूषन - भागी ॥

पिताजी देवलोकको गये और रघुकुलके पताकारूप श्रीरामचन्द्रजी वनको चले गये—इस सब अनर्थका कारण केवल मैं ही हूं ! मुझे धिक्कार है ! बांसके वनके लिये मैं आग हुआ। मैं दुस्सह पीड़ा, दुःख और दोषोंका भागी हुआ।

दो०—मातु भरत के बचन मृदु ❀ सुनि पुनि उठी संभारि।
लिये उठाइ लगाइ उर ❀ लोचन मोचति बारि ॥१६५॥

भरतजीके कोमल वचन सुनकर फिर कौशल्या माता सँभलकर उठीं और उन्हें उठाकर हृदयसे लगा लिया। वे अपने नेत्रोंसे आंसू गिराने लगीं।

सरल सुभाय माय हिय लाये ❀ अतिहित मनहुं राम फिरि आये ॥
भेंटेउ बहुरि लषनु-लघु - भाई ❀ सोक सनेह न हृदय समाई ॥

सीधे स्वभावसे माताने उन्हें बड़े प्रेमपूर्वक हृदयसे लगा लिया; मानों श्रीरामचन्द्रजी लौट आये हों। फिर लक्ष्मणजीके छोटे भाई शत्रुघ्नको उन्होंने हृदयसे लगा लिया। उनके हृदयमें शोक और प्रेम समाता न था।

देखि सुभाउ कहत सब कोई ❀ राममातु अस काहे न होई ॥
माता भरतु गोद बैठारे ❀ आंसु पोछि मृदुबचन उचारे ॥

उन्हें देखकर स्वभावसे ही सब कोई कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीकी माता ऐसी क्यों न हों? माता कौशल्याने भरतजीको गोदमें बिठलाया और आंसू पोंछकर वे ये कोमल वचन कहने लगीं—

अजहुं बच्छु बलि धीरजु धरहू ❀ कुसमउ समुझि सोक परिहरहू ॥
जनि मानहु हिय हानि गलानी ❀ काल-करम-गति अघटित जानी ॥

हे वत्स, मैं बलैया लेती हूं! तुम अब भी धीरज धरो और कुसमय समझकर शोक दूर करो। इसे काल और कर्मकी असाधारण गति जानकर अपने हृदयमें हानि और ग्लानि मत मानो।

काहुहि दोसु देहु जनि ताता ❀ भा मोहि सब बिधि बाम बिधाता ॥
जो एतेहु दुख मोहि जिआवा ❀ अजहुं को जानइ का तेहि भावा ॥

हे पुत्र, किसीको भी दोष मत दो। मेरे दैव ही सब प्रकार प्रतिकूल हुआ है। इतना दुःख पड़ जानेपर भी यदि मुझे जीवित रखा है तो अभी कौन जानता है, उसे क्या अच्छा लग रहा है?

दो०—पितुआयसु भूषन बसन ❀ तात तजे रघुबीर।
बिसमउ हरषु न हृदय कछु ❀ पहिरे बलकल चीर ॥१६६॥

हे पुत्र, पिताजीकी आज्ञासे श्रीरामचन्द्रजीने गहने और कपड़े त्याग दिये और पेड़ोंकी छालके कपड़े पहिन लिये। इससे उनके हृदयको विस्मय और हर्ष—कुछ भी नहीं हुआ।

मुख प्रसन्न मन राग न रोषू ❀ सबकर सब बिधि करि परितोषू ॥
चले बिपिन सुनि सिय संग लागी ❀ रहइ न राम-चरन-अनुरागी ॥

उनका मुख प्रसन्न था। मनमें न अनुराग था और न क्रोध। सबको सब प्रकार संतोष दिलाकर श्रीरामचन्द्रजी वनको चल दिये। यह सुनते ही सीताजी भी उनके साथ लग गयीं। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें अनुराग होनेसे किसी तरह भी वे नहीं रहीं।

सुनतहि लषनु चले उठि साथा ❀ रहहिं न जतन किये रघुनाथा ॥
तब रघुपति सबही सिरु नाई ❀ चले संग सिय अरु लघु भाई ॥

सुनते ही लक्ष्मणजी भी उठकर साथमें चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें रखनेका यत्न किया, परन्तु वे रुके नहीं। फिर श्रीरामचन्द्रजी सबको शिर नवाकर सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणसमेत चल दिये।

राम लषन सिय बनहिं सिधाये ❀ गइउं न संग न प्रान पठाये ॥
यह सबु भा इन्ह आंखिन्ह आगे ❀ तउ न तजा तनु प्रान अभागे ॥

श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी वनको चले गये ! उनके साथ न तो मैं ही गयी और न अपने प्राणोंको ही भेजा। यह सब मेरी इन आंखोंके आगे हुआ, फिर भी इन अभागे प्राणोंने शरीर नहीं छोड़ा।

मोहि न लाज निजनेहु निहारी ❀ रामसरिस सुत मैं महतारी ॥
जिअइ मरइ भल भूपति जाना ❀ मोर हृदय सत-कुलिस-समाना ॥

मुझे अपना प्रेम देखकर लज्जा भी नहीं आ रही है; क्योंकि मैं श्रीरामचन्द्रजीके समान पुत्रकी माता हूं। भलीभांति जीना और मरना तो राजा जानते थे। मेरा हृदय तो सौ वज्रोंके समान है।

दो०—कौसल्याके बचन सुनि ❀ भरतसहित रनिवासु।
ब्याकुल बिलपत राजगृह ❀ मानहुं सोकनिवासु ॥ १६७ ॥

कौशल्याके वचन सुनकर भरतसमेत सारा रनिवास व्याकुल होकर विलाप करने लगा; मानों राजमहल शोकका निवासस्थान हो।

बिलपहिं बिकल भरत दोउ भाई ❀ कौसल्या लिये हृदय लगाई ॥
भांति अनेक भरत समुझाये ❀ कहि बिबेकमय बचन सुनाये ॥

भरतजी और शत्रुघ्न—दोनों भाई व्याकुल होकर विलाप करने लगे। कौशल्या माताने उन्हें अपने हृदयसे लगा लिया। उन्होंने भरतजीको बहुत तरहसे समझाया और ज्ञानसे भरी हुई बातें कहकर सुनायीं।

भरतहु मातु सकल समुझाई ❀ कहि पुरान स्रुति कथा सुहाई ॥
छलबिहीन सुचि सरल सुबानी ❀ बोले भरत जोरि जुगपानी ॥

पुराणों और वेदोंकी सुन्दर कथाएं कहकर भरतजीने भी सब माताओंको समझाया, फिर दोनों हाथ जोड़कर भरतजी छलरहित, पवित्र, सरल और सुन्दर वाणी बोले—

जे अघ मातु-पिता-सुत मारे ❀ गाइगोठ महि-सुर-पुर जारे ॥
जे अघ तिय-बालक-बध कीन्हे ❀ मीत महीपति माहुर दीन्हे ॥

जो पाप माता, पिता और पुत्रको मारने और गोशाला एवं ब्राह्मणोंके नगरको जलानेसे होते हैं, जो पाप स्त्री और बालककी हत्या करने तथा मित्र और राजाको विष देनेसे होते हैं,

जे पातक उपपातक अहहीं ❀ करम-बचन-मन-भव कबि कहहीं ॥
ते पातक मोहि होहु बिधाता ❀ जौं यहु होइ मोर मत माता ॥

मन, वाणी और कर्मसे होनेवाले जितने पातक और उपपातक हैं, जिन्हें विद्वान् कहा करते हैं, हे माता यदि इसमें (राम-वनवासमें) मेरा मत रहा हो तो वे सब पातक, हे दैव, मुझे लगें।

दो०-जे परिहरि हरि - हर - चरन ❀ भजहिं भूतगन घोर।
तिन्ह कइ गति मोहि देउ बिधि❀ जौं जननी मत मोर ॥१६८॥

हे माता, यदि इसमें मेरी सम्मति हो तो हे दैव, मुझे उन्हीं मनुष्योंकी गति दो, जो भगवान विष्णु और शिवके चरण छोड़कर घोर भूत-प्रेतोंको भजते हैं।

बेचहिं बेद धरमु दुहि लेहीं ❀ पिसुन पराय पाप कहि देहीं ॥
कपटी कुटिल कलहप्रिय क्रोधी ❀ बेदबिदूषक बिस्वबिरोधी ॥

जो वेदों (ज्ञान) को बेचते हैं, धर्मको दूह लेते हैं, जो चुगली करनेवाले पराये पापोंको कह देते हैं, जो कपटी, दुष्ट, कलहप्रिय, क्रोधी, वेदकी निन्दा करनेवाले, जगत्के विरोधी—

लोभी लंपट लोलुप चारा ❀ जे ताकहिं परधनु परदारा ॥
पावउँ मैं तिन्ह कै गति घोरा ❀ जौं जननी येहु संमत मोरा ॥

लोभी, लम्पट, लोलुप और चालाक हैं, और जो दूसरोंकी स्त्रियां और दूसरोंका धन ताका करते हैं, हे माता ! यदि इसमें मेरी सम्मति हो तो मैं उन सबकी घोर गतिको पाऊँ।

जे नहिं साधुसंग अनुरागे ❀ परमारथपथ बिमुख अभागे ॥
जे न भजहिं हरि नरतनु पाई ❀ जिन्हहिं न हरि-हर-सुजसु सुहाई ॥

जिन्होंने सत्संगमें प्रेम नहीं किया और जो अभागे परमार्थके मार्गसे विमुख हैं, जो मनुष्यका शरीर पाकर भगवानका भजन नहीं करते और जिन्हें भगवान विष्णु और शिवका सुयश नहीं सुहाता,

तजि स्रुतिपंथु बामपथु चलहीं ❀ बंचक बिरचि बेषु जगु छलहीं ॥
तिन्ह कइ गति मोहि संकर देऊ ❀ जननी जौं एहु जानउँ भेऊ ॥

जो वेदका मार्ग छोड़कर उलटे मार्गसे चलते हैं और जो ठग भेष बनाकर संसारको धोखा देते हैं हे, माता ! यदि मैं इसका भेद जानता होऊँ तो हे शिव, आप मुझे उन सबकी गति दीजिये।

दो०—मातु भरत के बचन सुनि ❀ सांचे सरल सुभाय।
कहति रामप्रिय तात तुम्ह ❀ सदा बचन मन काय ॥१६९॥

सत्य, सरल और स्वभावसे कहे हुए भरतजीके वचन सुनकर माता कहने लगीं कि हे, पुत्र ! तुम मन, वाणी और शरीरसे, सब प्रकार सर्वदा श्रीरामचन्द्रजीको प्यारे हो।

राम प्रानहुँ तें प्रान तुम्हारे ❀ तुम्ह रघुपतिहि प्रानहुँ तें प्यारे ॥
बिधु बिष चवइ स्रवइ हिमु आगी ❀ होइ बारिचर बारिबिरागी ॥

श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारे प्राणोंके भी प्राण हैं और तुम श्रीरामचन्द्रजीको प्राणोंसे भी प्यारे हो। चाहे चन्द्रमासे विष टपकने लगे, हिम आग गिराने लगे, जलचर जीव जलसे विरक्त हो जावें,

भये ग्यान बरु मिटइ न मोहू ❁ तुम्ह रामहिं प्रतिकूल न होहू॥
मत तुम्हार यहु जो जग कहहीं ❁ सो सपनेहुँ सुख सुगति न लहहीं॥

और चाहे ज्ञान हो जानेपर भी मोह न दूर हो; परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके विरुद्ध तुम हो नहीं सकते। संसारमें जो लोग श्रीरामचन्द्रजीके वनगमनमें तुम्हारी सम्मति बतलाते हैं वे स्वप्नमें भी सुख और सद्गति नहीं पा सकते।

अस कहि मातु भरतु हिय लाये ❁ थन पय स्रवहिं नयन जल छाये॥
करत बिलाप बहुत एहि भांती ❁ बैठेहि बीति गई सब राती॥

ऐसा कहकर माताने भरतजीको हृदयसे लगा लिया। उनके स्तनोंसे दूध बहने लगा और नेत्रोंमें जल छा गया। इस प्रकार बहुत विलाप करते हुए बैठे-ही-बैठे सब रात बीत गयी।

बामदेव बसिष्ठ तब आये ❁ सचिव महाजन सकल बोलाये॥
मुनि बहु भांति भरत उपदेसे ❁ कहि परमारथ बचन सुदेसे॥

तब वामदेव और वशिष्ठ मुनि आये। उन्होंने मंत्रियों और सब महाजनोंको बुलाया। मुनिने परमार्थ तत्त्वसे भरे हुए शुभ वचन कहकर भरतजीको बहुत तरहसे उपदेश दिया।

दो०—तात हृदय धीरजु धरहु ❁ करहु जो अवसरु आजु॥
उठे भरत गुरुबचन सुनि ❁ करन कहेउ सब काजु॥१७०॥

उन्होंने कहा—हे तात, अपने हृदयमें धीरज रखो और वह करो जिसे करनेका आज अवसर है। गुरुके वचन सुनकर भरतजी उठे और सब कार्य होनेकी आज्ञा दी।

नृपतनु बेदबिहित अन्हवावा ❁ परम बिचित्र बिमान बनावा॥
गहि पगु भरत मातु सब राखी ❁ रहीं रामदरसन अभिलाखी॥

वेदविधिके अनुसार राजाके शरीरको स्नान कराया गया। विमान बहुत ही विचित्र बनाया गया। भरतने चरणोंको पकड़कर सब माताओंको रोका, जो श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन पानेकी अभिलाषासे रह गयीं।

चंदन अगरु भार बहु आये ❁ अमित अनेक सुगन्ध सुहाये॥
सरजुतीर रचि चिता बनाई ❁ जनु सुर-पुर-सोपान सुहाई॥

चंदन और अगरके बहुतसे गट्ठ और असंख्य प्रकारके बहुतसे सुगंधित पदार्थ आये। सरयू नदीके किनारे रचकर सुन्दर चिता बनायी; मानों वह स्वर्गकी सीढ़ी हो।

एहि बिधि दाहक्रिया सब कीन्ही ❀ बिधिवत न्हाइ तिलांजुलि दीन्ही ॥
सोधि सुमृति सब बेद पुराना ❀ कीन्ह भरत दसगात बिधाना ॥

इस प्रकार भरतजीने सब दाहक्रिया की और विधिपूर्वक स्नान करके तिलांजलि दी। स्मृतियों, सब वेदों और पुराणोंको शोधकर भरतजीने दशगात्रका विधान पूरा किया।

जहं जस मुनिबर आयसु दीन्हा ❀ तहँ तस सहस भांति सब कीन्हा ॥
भये बिसुद्ध दिये सब दाना ❀ धेनु बाजि गज वाहन नाना ॥

मुनिवर वशिष्ठने जहां जैसी आज्ञा दी वहां सब वैसा ही हजार तरहसे किया। शुद्ध हो जानेपर भरतजीने सब दान दिये। गाय, घोड़ा, हाथी आदि सब तरहकी सवारियां,

दो०—सिंहासनु भूषन बसन ❀ अन्न धरनि धन धाम ॥
दिये भरत लहि भूमिसुर ❀ भे परिपूरन काम ॥१७१॥

सिंहासन, गहने, कपड़े, अन्न, पृथिवी, धन और महल—सब भरतजीने दिये, जिन्हें पाकर ब्राह्मण पूर्ण-काम (तृप्त) हो गये।

(अवधमें राजसभा)

पितुहित भरत कीन्हि जसि करनी ❀ सो मुख लाख जाइ नहिं बरनी ॥
सुदिन सोधि मुनिबर तब आये ❀ सचिव महाजन सकल बोलाये ॥

पिताके कल्याणके लिये भरतजीने जैसी क्रिया की उसका लाख मुखोंसे भी वर्णन नहीं किया जा सकता। फिर शुभ दिन विचारकर मुनिवर वशिष्ठ आये। उन्होंने मंत्रियों और सब महाजनोंको बुलाया।

बैठे राजसभा सब जाई ❀ पठये बोलि भरत दोउ भाई ॥
भरत बसिष्ठ निकट बैठारे ❀ नीति-धरम-मय बचन उचारे ॥

सब राजसभामें जाकर बैठे और भरत, शत्रुघ्न—दोनों भाइयोंको बुला भेजा। वशिष्ठजीने भरतजीको अपने पास बिठलाया और नीति और धर्मसे परिपूर्ण वचन कहने लगे।

प्रथम कथा सब मुनिबर बरनी ❀ कैकइ कुटिल कीन्हि जसि करनी ॥
भूप धरम व्रत सत्य सराहा ❀ जेहि तनु परिहरि प्रेम निबाहा ॥

कुटिला कैकेयीने जैसी करतूत की, वह सब कथा मुनिवर वशिष्ठने पहिले कह सुनायी। फिर उन्होंने राजाके धर्मव्रत और सत्यकी प्रशंसा की, जिन्होंने शरीर छोड़कर अपना प्रेम निबाहा।

कहत राम-गुन-सील सुभाऊ ❀ सजल नयन पुलकेउ मुनिराऊ ॥
बहुरि लषन-सिय-प्रीति बखानी ❀ सोक सनेह मगन मुनिग्यानी ॥

श्रीरामचन्द्रजीका गुण, शील और स्वभाव कहते कहते मुनिराज वशिष्ठके नेत्रोंमें जल छा गया और उनका शरीर पुलकायमान हो गया। फिर शोक और प्रेममें डूबे हुए ज्ञानी मुनिने लक्ष्मणजी और सीताजीकी प्रीतिका वर्णन किया।

दो०—सुनहु भरत भावी प्रबल ❀ बिलखि कहेउ मुनिनाथ ॥
हानि लाभ जीवनु मरनु ❀ जसु अपजसु बिधि हाथ ॥१७२॥

मुनिराज वशिष्ठने दुःखी होकर कहा कि हे भरत, सुनो, होनहार प्रबल है। हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश—सब विधाताके हाथमें है।

अस बिचारि केहि देइय दोषू ❀ ब्यरथ काहि पर कीजिय रोषू ॥
तात बिचार करहु मन माहीं ❀ सोचजोग दसरथ नृप नाहीं ॥

ऐसा विचारकर दोष किसे दिया जाय और व्यर्थ ही किसपर क्रोध किया जाय? हे तात, मनमें विचार करो। राजा दशरथ शोक करनेयोग्य नहीं हैं।

सोचिय बिप्र जो बेदबिहीना ❀ तजि निज धरम बिषय लयलीना ॥
सोचिय नृपति जो नीति न जाना ❀ जेहि न प्रजा प्रिय प्रानसमाना ॥

उस ब्राह्मणका शोक करना चाहिये जो वेदविहीन हो और अपना धर्म छोड़कर विषयोंमें लवलीन रहा हो। उस राजाका शोक करना चाहिये जो नीति नहीं जानता हो और जिसे अपनी प्रजा प्राणोंके समान प्यारी न हो।

सोचिय बयसु कृपिन धनवानू ❀ जो न अतिथि सिव भगति सुजानू ॥
सोचिय सूद्र बिप्र अपमानी ❀ मुखर मानप्रिय ग्यानगुमानी ॥

उस वैश्यका शोक करना चाहिये, जो धनवान होकर कृपण हो, जो चतुर न हो और जो न अतिथियों और शिवजीका भक्त हो। उस शूद्रका शोक करना चाहिये, जो ब्राह्मणका अपमान करनेवाला, बहुत बोलनेवाला, प्रतिष्ठा चाहनेवाला और ज्ञानका अभिमानी हो।

सोचिय पुनि पतिबंचक नारी ❀ कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी ॥
सोचिय बटु निज ब्रत परिहरई ❀ जो नहिं गुरुआयसु अनुसरई ॥

फिर, उस स्त्रीका शोक करना चाहिये, जो पतिसे छल करती हो, दुष्टा हो, कलह पसन्द करती हो और स्वेच्छाचारिणी हो। उस ब्रह्मचारीका शोक करना चाहिये, जो अपना व्रत तोड़ दे और गुरुजीकी आज्ञाका अनुसरण नहीं करे।

दो०—सोचिय गृही जो मोहबस ❀ करइ करमपथ त्याग ।
सोचिय जती प्रपंचरत ❀ बिगत बिबेक बिराग ॥१७३॥

उस गृहस्थका शोक करना चाहिये, जो मोहके वशमें होकर कर्ममार्गको छोड़ देवे। उस यतीका शोक करना चाहिये, जो प्रपंचोंमें लगा रहता हो और विवेक एवं वैराग्यसे रहित हो।

बैखानस सोइ सोचन जोगू ❀ तप बिहाइ जेहि भावइ भोगू ॥
सोचिय पिसुन अकारन क्रोधी ❀ जननि-जनक-गुरु-बंधु-बिरोधी ॥

शोक करनेयोग्य वह तपस्वी है, जिसे तप छोड़कर भोग अच्छा लगता हो। शोक उसका करना चाहिये, जो चुगली करनेवाला, अकारण ही क्रोधित हो जानेवाला और माता, पिता, गुरु और भाई सबका विरोधी हो।

सबबिधि सोचिय परअपकारी ❀ निज तनु पोषक निरदय भारी ॥
सोचनीय सबही बिधि सोई ❀ जो न छाड़ि छल हरिजन होई ॥

उसका सब प्रकार शोक करना चाहिये, जो दूसरोंको हानि पहुंचानेवाला, अपना शरीर पालनेवाला तथा भारी निर्दयी हो। सब प्रकार शोक करनेयोग्य वही है, जो छल छोड़कर भगवानका भक्त नहीं हो जाता।

सोचनीय नहिं कोसलराऊ ❀ भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ ॥
भयउ न अहइ न अब होनिहारा ❀ भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥
बिधि हरि हर सुरपति दिसिनाथा ❀ बरनहिं सब दसरथ-गुन-गाथा ॥

राजा दशरथ शोक करनेयोग्य नहीं हैं। चौदह लोकोंमें उनका प्रभाव प्रकट है। हे भरतजी, तुम्हारे पिता जैसे थे वैसा राजा न तो हुआ, न है और न अब होगा। ब्रह्मा, शिव, विष्णु, इन्द्र, दिशाओंके स्वामी—सब राजा दशरथके गुणोंकी कथाएँ कहते हैं।

दो०—कहहु तात केहि भांति कोउ ❀ करिहि बड़ाई तासु।
राम लषन तुम्ह सत्रुहन ❀ सरिस सुअन सुचि जासु ॥१७४॥

हे तात, कहो, उसकी बड़ाई कोई किस प्रकार करे, जिसके श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी, शत्रुघ्न और स्वयं तुम सरीखे पवित्र पुत्र हैं ?

सब प्रकार भूपति बड़भागी ❀ बादि बिषाद करिय तेहि लागी ॥
यहु सुनि समुझि सोच परिहरहू ❀ सिर धरि राजरजायसु करहू ॥

राजा सब प्रकार बड़े भाग्यमान थे। उनके लिये शोक करना व्यर्थ है। यह सुनकर और समझकर शोकको दूर करो और राजाकी आज्ञा शिरोधार्य कर पालन करो।

राय राजुपदु तुम्ह कहं दीन्हा ❀ पितावचन फुर चाहिय कीन्हा ॥
तजे रामु जेहि बचनहिं लागी ❀ तनु परिहरेउ रामबिरहागी ॥

राजाने तुमको राजगद्दी दी है। पिताका वचन तुम्हें सत्य करना चाहिये। जिन्होंने अपने वचनके ही लिये श्रीरामचन्द्रजीको छोड़ दिया और फिर श्रीरामचन्द्रजीकी विरहाग्निमें अपना शरीर त्याग दिया।

नृपहिं बचन प्रिय नहिं प्रिय प्राना ❀ करहु तात पितु बचनु प्रवाना ॥
करहु सीस धरि भूपरजाई ❀ हइ तुम्ह कहं सब भांति भलाई ॥

राजाको अपने वचन प्यारे थे। प्राण प्यारे नहीं थे। हे तात, अपने पिताके वचनोंको मानो। राजाकी आज्ञा शिरोधार्य कर पूरी करो, इसीमें तुम्हारी सब प्रकार भलाई है।

परसुराम पितुअग्या राखी ❀ मारी मातु लोग सब साखी ॥
तनय जजातिहि जौबन दयऊ ❀ पितुअग्या अघ अजसु न भयऊ ॥

परशुरामने अपने पिताजीकी आज्ञाको माना और अपनी माताको मार डाला, इसके साक्षी सब लोग हैं। राजा ययातिको उनके पुत्रने अपनी युवावस्था दे दी परन्तु पिताकी आज्ञा होनेसे उसे पाप और अपयश नहीं हुआ।

दो०—अनुचित उचित बिचारु तजि ❀ जे पालहिं पितु बयन।
ते भाजन सुख सुजस के ❀ बसहिं अमरपति अयन ॥१७५॥

अनुचित और उचितका विचार छोड़कर जो पिताकी आज्ञाका पालन करते हैं वे सुख और सुयशके पात्र हैं और देवताओंके स्वामी इन्द्रके भवनमें निवास करते हैं।

अवसि नरेस बचन फुर करहू ❀ पालहु प्रजा सोक परिहरहू ॥
सुरपुर नृपु पाइहि परितोषू ❀ तुम्ह कहुं सुकृत सुजसु नहिं दोषू ॥

राजाका वचन अवश्य सत्य करो, प्रजाका पालन करो और शोकको छोड़ दो। इससे राजाको स्वर्गमें संतोष मिलेगा और तुमको पुण्य और सुयश होगा, दोष नहीं।

बेदबिहित संमत सबही का ❀ जेहि पितु देइ सो पावइ टीका ॥
करहु राजु परिहरहु गलानी ❀ मानहु मोर बचनु हित जानी ॥

वेदमें कहा गया है और सर्वसम्मत भी है कि जिसको पिता देता है वही राजतिलक पाता है। मेरा वचन अपने लिये हितकारी जानकर मानो—राज्य करो और ग्लानि छोड़ दो।

सुनि सुखु लहब रामबैदेही ❀ अनुचित कहब न पंडित केही ॥
कौसल्यादि सकल महतारी ❀ तेउ प्रजासुख होहिं सुखारी ॥

श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा राज्य करना सुनकर सुख पायेंगे और कोई पंडित भी अनुचित नहीं कहेगा कौशल्या आदि माताएँ भी प्रजाके-सुखसे सुखी होंगी।

मरम तुम्हार राम कर जानिहि ❀ सो सब बिधि तुम्ह सन भलमानिहि ॥
सौंपेहु राजु राम के आये ❀ सेवा करेहु सनेह सुहाये ॥

वे तुम्हारे और श्रीरामचन्द्रजीके मर्मको जानती हैं, इसलिये वे तुमसे सब प्रकार भला मानेंगी। श्रीरामचन्द्रजीके लौट आनेपर राज सौंप देना और सुन्दर प्रेमके साथ सेवा करना।

दो०—कीजिय गुर आयसु अवसि ❀ कहहिं सचिव कर जोरि।
रघुपति आये उचित जस ❀ तस तब करब बहोरि ॥१७६॥

मंत्री हाथ जोड़कर भरतजीसे कहने लगे कि गुरुजीकी आज्ञाका अवश्य पालन कीजिये। श्रीरामचन्द्रजीके लौट आनेपर उस समय फिर जैसा उचित हो वैसा कीजियेगा।

कौसल्या धरि धीरजु कहई ❀ पूत पथ्य गुरुआयसु अहई ॥
सो आदरिय करिय हित मानी ❀ तजिय बिषादु कालगति जानी ॥

धीरज रखकर कौशल्या कहने लगीं कि गुरुकी आज्ञा हित करनेवाली और पवित्र है। उसीमें अपना कल्याण समझकर उसका आदर करो और पालन करो तथा कालकी गति जानकर शोक छोड़ दो।

बन रघुपति सुरपुर नरनाहू ❀ तुम्ह एहि भांति तात कदराहू ॥
परिजन प्रजा सचिव सब अंबा ❀ तुम्हहीं सुत सब कहं अवलंबा ॥

श्रीरामचन्द्रजी वनमें हैं और राजा स्वर्गमें, हे पुत्र! तुम इस प्रकार कातर हो रहे हो! कुटुम्बियों, प्रजाजनों, मंत्रियों और सब माताओं—सबको; हे पुत्र एक तुम्हीं सहारे हो!

लखि बिधि बाम कालु कठिनाई ❀ धीरजु धरहु मातु बलि जाई ॥
सिर धरि गुरुआयसु अनुसरहू ❀ प्रजा पालि पुर-जन-दुख हरहू ॥

दैवकी प्रतिकूलता और कालकी कठोरता देखकर धीरज रखो। माता तुम्हारी बलैंया लेती है। गुरुजीकी आज्ञा शिरोधार्य कर उसीका अनुसरण करो और प्रजाका पालन कर नगरनिवासियोंको दुःखोंको दूर करो।

गुरु के बचन सचिव अभिनंदनु ❀ सुने भरत हिय हित जनु चंदनु ॥
सुनी बहोरि मातु मृदुबानी ❀ सील सनेह सरलरस सानी ॥

भरतजीने गुरुकी आज्ञा और मंत्रियोंका अभिनन्दन सुना जो उनके हृदयको चन्दनके समान लगा। फिर उन्होंने शील, स्नेह और सरलताके रससे सनी हुई माताकी कोमल वाणी सुनी।

छं०—सानी सरलरस मातुबानी सुनि भरत ब्याकुल भये।
लोचनसरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नये ॥

सो दसा देखत समय तेहि बिसरी सबहि सुधि देह की।
तुलसी सराहत सकल सादर सीव सहजसनेह की ॥

सरलताके रससे सनी हुई माताकी वाणी सुनकर भरतजी व्याकुल हो गये, उनके कमलके समान नेत्रोंसे आंसू टपकने और हृदयमें वियोगके नये अंकुरको सींचने लगे। उस समय भरतजीकी यह दशा देखते ही सबको अपनी देहकी दशा भूल गयी। तुलसीदासजी कहते हैं कि उस स्वाभाविक प्रेमकी सीमाको सबलोग आदरके साथ सराहने लगे।

सो०—भरतु कमलकर जोरि ❀ धीर-धुरंधर धीर धरि ॥
बचन अमिय जनु बोरि ❀ देत उचित उत्तर सबहिं ॥१७७॥

धीरधुरंधर भरतजी कमलके समान हाथ जोड़कर और धीरज रखकर मानों अमृतमें डुबाये हुए वचनोंसे सबको उचित उत्तर देने लगे।

मोहि उपदेसु दीन्ह गुरु नीका ❀ प्रजा सचिव संमत सबही का ॥
मातु उचित धरि आयसु दीन्हा ❀ अवसि सीस धरि चाहउं कीन्हा ॥

गुरुजीने मुझे उत्तम उपदेश दिया है जो प्रजा और मंत्री, सर्वसम्मत है। माताने भी उचित ही समझकर आज्ञा दी है। उसे शिरोधार्य कर अवश्य ही पालन करना चाहता हूं।

गुरु-पितु-मातु-स्वामि-हित-बानी ❀ सुनि मन मुदित करिय भलि जानी ॥
उचित कि अनुचित किये बिचारू ❀ धरमु जाइ सिर पातकभारू ॥

गुरु, पिता, माता और स्वामीकी हित-वाणी सुनकर उसे भला समझकर प्रसन्न मनसे मानना चाहिये। वह उचित है या अनुचित, यह विचार करनेसे धर्म जाता है और शिरपर पापका बोझ बढ़ता है।

तुम्ह तउ देहु सरल सिख सोई ❀ जो आचरत मोर भल होई ॥
जद्यपि यह समुझत हउं नीके ❀ तदपि होत परितोषु न जी के ॥

आप लोग तो मुझे वही सरल सीख दे रहे हैं जिसके अनुसार आचरण करनेसे मेरा भला हो। यद्यपि मैं यह अच्छी तरह समझता हूं तथापि हृदयको संतोष नहीं होता।

अब तुम्ह बिनय मोरि सुनि लेहू ❀ मोहि अनुहरत सिखावनु देहू ॥
उत्तर देउं छमब अपराधू ❀ दुखित-दोष गुन गनहिं न साधू ॥

अब आप मेरी विनती सुन लीजिये और मेरी ओर देखकर सीख दीजिये। मैं आपको उत्तर देता हूं, यह अपराध क्षमा कीजिये। साधुजन दुःखी लोगोंके गुण और दोष नहीं गिनते।

दो०—पितु सुरपुर सिय रामु बनु ❀ करन कहहु मोहि राजु।
एहि ते जानहु मोर हित ❀ कै आपन बड़ काजु ॥१७८॥

पिताजी स्वर्गमें हैं, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी वनमें हैं और आप मुझसे राज्य करनेके लिये कह रहे हैं, इसीमें क्या आप मेरा हित और अपना बड़ा कार्य जानते हैं ?

हित हमार सिय-पति-सेवकाई ❀ सो हरि लीन्हि मातुकुटिलाई ॥
मैं अनुमानि दीख मन माहीं ❀ आन उपाय मोर हित नाहीं ॥

मेरा भला तो सीतापति रामचन्द्रजीकी सेवा करनेमें है, उसे दुष्टतासे माता केकयीने हर लिया। मैंने अपने मनमें अनुमान करके देख लिया है कि और किसी उपायसे मेरा कल्याण नहीं।

सोकसमाजु राजु केहि लेखे ❀ लषनराम-सिय-पद बिनु देखे ॥
बादि बसन बिनु भूषन भारू ❀ बादि बिरति बिनु ब्रह्मबिचारू ॥

लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके चरणोंको बिनदेखे हुए यह शोकका समाज—राज किस गिनतीमें है ? वस्त्रोंके बिना भूषणोंका बोझ व्यर्थ है, ब्रह्मविचारके बिना वैराग्य व्यर्थ है,

सरुज सरीर बादि बहु भोगा ❀ बिनु हरिभगति जाप जप जोगा ॥
जाय जीव बिनु देह सुहाई ❀ बादि मोर सबु बिनु रघुराई ॥

रोगी शरीर होनेसे बहुत से भोग व्यर्थ हैं, भगवद्भक्तिके बिनजप और योग व्यर्थ है, जीवके बिना सुन्दर देह व्यर्थ और श्रीरामचन्द्रजीके बिना मेरा सब व्यर्थ है।

जाउँ राम पहिं आयसु देहू ❀ एकहिं आँक मोर हित एहू ॥
मोहि नृप करि भल आपन चहहू ❀ सोउ सनेह जड़तावस कहहू ॥

मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं श्रीरामचन्द्रजीके पास चला जाऊँ, इसी एक बातमें मेरा हित है। मुझे राजा बनाकर आप अपना भला चाहते हैं, यह भी आप प्रेम और अज्ञानके वश होकर कह रहे हैं।

दो०—कैकेइसुअन कुटिल मति ❀ राम बिमुख गतलाज।
तुम्ह चाहत सुखु मोहबस ❀ मोहि से अधम के राज ॥१७९॥

कैकयीका पुत्र, दुष्टबुद्धि, श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिकूल और लज्जाहीन मुझसे नीचके राज्यमें आप मोहके वश होकर ही सुख चाहते हैं।

कहउँ साँच सब सुनि पतियाहू ❀ चाहिअ धरमसील नरनाहू ॥
मोहि राजु हठि देइहहु जबहीं ❀ रसा रसातल जाइहि तबहीं ॥

मैं सच कहता हूं, सुनकर आप सब लोग विश्वास कर लीजिये। राजा धर्मशील होना चाहिये। हठ करके आप मुझे जिस समय राज देंगे उसी समय पृथिवी रसातलको चली जायगी।

मोहि समान को पापनिवासू ❀ जेहि लगि सीयराम बनबासू ॥
राय राम कहुं कानन दीन्हा ❀ बिछुरत गमनु अमरपुर कीन्हा ॥

मेरे समान पापी और कौन है जिसके कारण सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको वनवास हुआ है? राजाने श्रीरामचन्द्रजीको वनवास दिया और वियोग होते ही स्वर्गको सिधार गये।

मैं सठ सब अनरथ कर हेतू ❀ बैठ बात सब सुनउं सचेतू ॥
बिनु रघुबीर बिलोकि प्रबासू ❀ रहे प्रान सहि जग उपहासू ॥

सब अनर्थोंका कारण मैं दुष्ट हूं जो बैठा हुआ सावधानीके साथ सब बातें सुन रहा हूं। श्रीरामचन्द्रजीके बिना निवासको देखकर भी ये प्राण संसारकी हँसी सहकर बने रहे!

राम पुनीत विषयरस रूखे ❀ लोलुप भूमि भोग के भूखे ॥
कहं लगि कहउं हृदयकठिनाई ❀ निदरि कुलिसु जेहि लहीबड़ाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी पवित्र और विषयोंके रससे उदासीन हैं। लालची लोग पृथिवीके राज्यके भूखे होते हैं अपने हृदयकी कठोरताको मैं कहांतक कहूं इसने वज्रका भी निरादर करके बड़ाई पा ली!

दो०—कारन तें कारजु कठिन ❀ होइ दोषु नहिं मोर।
कुलिस अस्थि तें उपल तें ❀ लोह कराल कठोर ॥१८०॥

कारणसे कार्य कठिन होता है, इससे मेरा दोष नहीं है। हड्डियोंसे वज्र और पत्थरसे लोहा अधिक भयंकर और कठोर होता है। (केकयीके पुत्र होनेसे भरतजीका कारण केकयी है और भरतजी केकयीका कार्य है। भरतजी यह कहते हैं कि केकयीकी कठोरतासे मेरी कठोरता स्वभावतः अधिक होनी चाहिये क्योंकि कारणसे कार्य कठिन होता है इसके लिये दोषी नहीं हूं।)

कैकेईभव तनु अनुरागे ❀ पावंर प्रान अघाइ अभागे ॥
जौं प्रियबिरह प्रान प्रिय लागे ❀ देखब सुनब बहुत अब आगे ॥

कैकयीसे उत्पन्न शरीरसे प्रेम करनेसे ये नीच अभागे प्राण सन्तुष्ट हो लें। प्यारे श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें भी यदि प्राण प्यारे लगे तो आगे बहुत देखना और सुनना है!

लषन - राम - सिय कहुं बनु दीन्हा ❀ पठइ अमरपुर पतिहित कीन्हा ॥
लीन्ह बिधवपन अपजसु आपू ❀ दीन्हेउ प्रजहिं सोकु संतापू ॥

लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीको वन दिया और स्वर्ग भेजकर अपने पतिका भला किया। स्वयं वैधव्य और अपयश पाया और प्रजाको शोक और संताप दिया।

मोहि दीन्ह सुखु सुजसु सुराजू ❀ कीन्ह कैकईं सब कर काजू ॥
एहि तें मोर काह अब नीका ❀ तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका ॥

मुझे सुख, सुयश और सुन्दर राज्य दिया। केकयीने सबका काम बनाया। इससे अच्छा अब मेरे लिये क्या होगा? उसपर भी आप राजतिलक देनेको कहते हैं!

कैकइजठर जनमि जग माहीं ❀ यह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं ॥
मोरि बात सब बिधिहि बनाई ❀ प्रजा पांच कत करहु सहाई ॥

संसारमें कैकयीके पेटसे जन्म लेकर मेरे लिये यह कुछ अनुचित नहीं है। मेरी बात तो सब ब्रह्माने ही बना दी है, फिर उसमें प्रजा और पंच क्यों सहायता कर रहे हैं?

दो०—ग्रहग्रहीत पुनि बातबस ❀ तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पियाइअ बारुनी ❀ कहहु कवन उपचार ॥१८१॥

कोई आदमी ग्रहोंके फेरमें हो, फिर उसे सन्निपात भी हो गया हो, उसीको फिर बिच्छू डंक मार जाय— इतनेपर भी उसे मदिरा पिलाना, कहो कौनसी चिकित्सा है?

कैकइसुअन जोगु जग जोई ❀ चतुर बिरंचि दीन्ह मोहि सोई ॥
दसरथतनय राम - लघु - भाई ❀ दीन्हि मोहि बिधि बादि बड़ाई ॥

केकयीके पुत्रको मिलनेयोग्य संसारमें जो कुछ है वही मुझे चतुर दैवने दिया है। राजा दशरथके पुत्र और श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई होनेकी बड़ाई ब्रह्माने मुझे व्यर्थ ही दी है।

सब कहहु कढ़ावन टीका ❀ रायरजायसु सब कहँ नीका ॥
उतरु देउँ केहि बिधि केहि केही ❀ कहहु सुखेन जथा रुचि जेही ॥

आप सब राजतिलक लगवानेको कहते हैं। इसके लिये राजाकी आज्ञा भी है और यह सबको अच्छा भी लगता है। मैं किस किसको किस प्रकार उत्तर दूं? जिसकी जैसी रुचि हो वह वैसाही सुखसे कहे।

मोहि कु-मातु-समेत बिहाई ❀ कहहु कहिहि के कीन्हि भलाई ॥
मो बिनु को सचराचर माहीं ❀ जेहि सियराम प्रानप्रिय नाहीं ॥

कुमाता केकयी समेत मुझे छोड़कर, भला कहो, ऐसी भलाई किसने की है? मुझे छोड़कर चर अचरमें कौन है जिसे सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी प्राणोंके समान प्यारे नहीं हैं।

परम हानि सबु कहँ बड़ लाहू ❀ अदिनु मोर नहिं दूषन काहू ॥
संसय सील प्रेम बस अहहू ❀ सबुइ उचित सबु जो कछु कहहू ॥

जो बड़ी भारी हानि है वह सबको बड़ा लाभ मालूम होता है। मेरे दिन ही बुरे हैं, किसीका दोष नहीं है। आप सब सन्देह, शील और प्रेमके वशमें हैं, इसलिये जो कुछ भी कहते हैं वह सभी उचित हैं।

दो०—राममातु सुठि सरलचित ❀ मो पर प्रेम बिसेखि ॥
कहइ सुभाय सनेहबस ❀ मोरि दीनता देखि ॥१८२॥

श्रीरामचन्द्रजीकी माताका सुन्दर सरल चित्त है और उन्हें मुझपर विशेष प्रेम है। वे अपने स्वभावसे मेरे प्रेमके वशमें होकर और मेरी दीनता देखकर वैसा कह रही हैं।

गुरु बिबेकसागर जगु जाना ❀ जिन्हहिं बिस्व कर-बदर-समाना ॥
मो कहँ तिलकसाज सज सोऊ ❀ भये बिधि बिमुख बिमुख सबु काऊ ॥

संसार जानता है कि गुरु वशिष्ठजी विवेकके समुद्र हैं जिनके लिये सारा संसार हाथमें रखे हुए बेरके फलके समान है, वे भी मुझको राजतिलक देनेका साज सजते हैं। दैवके प्रतिकूल हो जानेपर सभी प्रतिकूल हो जाते हैं।

परिहरि रामसीय जग माहीं ❀ कोउ न कहहि मोर मत नाहीं ॥
सो मैं सुनब सहब सुखु मानी ❀ अंतहु कीच तहां जहँ पानी ॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर संसारमें कोई न कहेगा कि इसमें मेरी सम्मति नहीं है। इसलिये सब कुछ मैं सुख मानकर सुनूंगा और सहूंगा। अन्तमें कीचड़ वहीं होता है जहां पानी हो।

डरु न मोहि जगु कहहि कि पोचू ❀ परलोकहु कर नाहिं न सोचू ॥
एकइ उर बस दुसह दवारी ❀ मोहि लगि भे सियरामु दुखारी ॥

मुझे इस बातका डर नहीं है कि संसार मुझे अधम कहेगा और न मुझे परलोकका ही सोच है। एक ही दुःसह दावाग्नि हृदयमें जल रही है; कि मेरे कारण सीताजी और रामचन्द्रजी दुःखी हुए।

जीवनु लाहु लषन भल पावा ❀ सबु तजि रामचरन मनु लावा ॥
मोर जनम रघुबरबन लागी ❀ झूंठ काह पछिताउँ अभागी ॥

लक्ष्मणजीने जन्म लेनेका लाभ अच्छा पाया कि सब छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लगाया। मेरा जन्म तो श्रीरामचन्द्रजीके वनवासके लिये हुआ है, फिर मैं अभागा झूठ ही क्यों पछताऊं ?

दो०—आपनि दारुन दीनता ❀ कहउँ सबहिं सिरु नाइ ॥
देखे बिनु रघुनाथपद ❀ जिय कै जरनि न जाइ ॥१८३॥

सबको शिर झुकाकर मैं अपनी कठोर दीनता निवेदन करता हूं कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके दर्शन किये विना जीकी जलन न जायगी ।

आन उपाय मोहि नहिं सूझा ❁ को जिय कै रघुबर बिनु बूझा ॥
एकहि आँक इहइ मन माहीं ❁ प्रातकाल चलिहउं प्रभु पाहीं ॥

और कोई उपाय मुझे नहीं दिखलायी दिया । श्रीरामचन्द्रजीके विना मेरे जीकी बात और कौन समझता है ? मनमें केवल एक निश्चय यही हो रहा है कि मैं सवेरे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास चलूंगा ।

जद्यपि मैं अनभल अपराधी ❁ भइ मोहि कारन सकल उपाधी ॥
तदपि सरन सनमुख मोहि देखी ❁ छमि सब करिहहिं कृपा बिसेखी ॥

यद्यपि मैं दुष्ट और अपराधी हूं और मेरे ही कारण सब अनर्थ हुए हैं, तथापि जब श्रीरामचन्द्रजी मुझे सामने शरणमें आया हुआ देखेंगे तब सब अपराध क्षमा करके मुझपर विशेष कृपा करेंगे ।

सीलु सकुच सुठि सरल सुभाऊ ❁ कृपा - सनेह - सदन - रघुराऊ ॥
अरिहु क अनभल कीन्ह न रामा ❁ मैं सिसु सेवकु जद्यपि बामा ॥

श्रीरामचन्द्रजी बड़े शीलवान् हैं, उनका स्वभाव संकोची और अत्यन्त सीधा है; वे कृपा और स्नेहके धाम हैं, श्रीरामचन्द्रजीने कभी शत्रुका भी बुरा नहीं किया, फिर मैं तो यद्यपि प्रतिकूल हूं, तथापि उनका बालक और सेवक हूं ।

तुम्ह पै पांच मोर भल मानी ❁ आयसु आसिष देहु सुबानी ॥
जेहि सुनि बिनय मोहि जनु जानी ❁ आवहिं बहुरि राम रजधानी ॥

इसलिये आप पंच लोग भी मेरा भला जानकर सुन्दर वाणीसे आशीर्वाद और आज्ञा दीजिये जिससे मेरी [विन]ती सुनकर और मुझे अपना भक्त समझकर श्रीरामचन्द्रजी अयोध्याको फिर लौट आवें ।

दो०—जद्यपि जनम कुमातु तें ❁ मैं सठ सदा सदोस ।
आपन जानि न त्यागिहहिं ❁ मोहि रघुबीर भरोस ॥१८४॥

यद्यपि कुमातासे मेरा जन्म हुआ है और मैं दुष्ट सदा ही दोषी हूं, तथापि मुझे श्रीरामचन्द्रजीका भरोसा है कि वे अपना समझकर मुझे नहीं छोड़ेंगे

भरत बचन सब कहुं प्रिय लागे ❁ राम - सनेह - सुधा जनु पागे ॥
लोग बियोग - बिषम - बिष दागे ❁ मंत्र सबीज सुनत जनु जागे ॥

भरतजीके वचन सबको प्यारे लगे मानों वे श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमरूपी अमृतमें मग्न हो गये हों । सब लोग श्रीरामचन्द्रजीके वियोगरूपी कठोर विषसे जले हुए थे, वे मानों बीजसमेत मंत्र सुनते ही जाग उठे ।

मातु सचिव गुरु पुर-नर-नारी ❀ सकल सनेह बिकल भये भारी ॥
भरतहिं कहहिं सराहि सराही ❀ राम-प्रेम-मूरति-तनु आही ॥

माताएँ, मन्त्री, गुरु, नगरकी स्त्रियां और पुरुष, सब प्रेमसे अत्यन्त विकल हो गये और बार बार प्रशंसा करके भरतजीसे कहने लगे कि आपका शरीर श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमकी मूर्ति है।

तात भरत अस काहे न कहहू ❀ प्रान समान रामप्रिय अहहू ॥
जो पावँरु अपनी जड़ताई ❀ तुम्हहिं सुगाइ मातुकुटिलाई ॥

हे तात, हे भरत, जब आप श्रीरामचन्द्रजीको प्राणोंके समान प्यारे हैं तब आप ऐसा क्यों न कहेंगे? जो नीच अपनी मूर्खतासे माता कैकेयीकी दुष्टताका आपपर सन्देह करता है,

सो सठ कोटिक-पुरुष-समेता ❀ बसहि कलपसत नरकनिकेता ॥
अहि-अघ-अवगुन नहिं मनि गहई ❀ हरइ गरल दुखु दारिद दहई ॥

वह दुष्ट करोड़ों पीढ़ियोंसमेत सौ कल्पपर्य्यन्त नरकमें वास करेगा। सर्पके पापों और अवगुणोंको सर्प-मणि नहीं ग्रहण करती। वह तो विषको दूर करती और दुःख और दरिद्रताको जलाती ही है।

दो०—अवसि चलिय बन राम जहँ ❀ भरत मंत्र भल कीन्ह।
सोकसिंधु बूड़त सबहिं ❀ तुम अवलंबनु दीन्ह ॥१८५॥

हे भरत, आपने अच्छी सलाह की है। जहां श्रीरामचन्द्रजी हैं वहां वनमें अवश्य चलना चाहिये। शोकके समुद्रमें डूबते हुए सब लोगोंको आपने यह आधार दिया है।

भा सब के मन मोदु न थोरा ❀ जनु घनधुनि सुनि चातक मोरा ॥
चलत प्रात लखि निरनउ नीके ❀ भरतु प्रानप्रिय भे सबही के ॥

सबको मनमें बड़ी प्रसन्नता हुई जैसे मेघोंकी गर्जना सुनकर मोर और पपीहे प्रसन्न होते हैं। सवेरे चलनेका निर्णय अच्छी तरह जानकर भरतजी सबके प्राणोंके समान प्यारे हो गये।

मुनिहिं बंदि भरतहिं सिरु नाई ❀ चले सकल घर बिदा कराई ॥
धन्य भरत जीवनु जग माहीं ❀ सीलु सनेहु सराहत जाहीं ॥

मुनिकी वंदना कर और भरतजीको शिर नवाकर सब लोग विदा माँग माँगकर अपने अपने घरको चल दिये। वे सब भरतजीके शील और प्रेमकी प्रशंसा करते जाते थे और कहते थे कि संसारमें भरतजीका जीवन धन्य है।

कहहिं परसपर भा बड़ काजू ❀ सकल चलइ कर साजहिं साजू ॥
जेहि राखहिं रह घर रखवारी ❀ सो जानइ जनु गरदनि मारी ॥
कोउ कह रहन कहिय नहिं काहू ❀ को न चहइ जग जीवनु लाहू ॥

वे परस्पर कहने लगे कि यह तो बड़ा काम हुआ। सब लोग चलनेकी तैयारियां करने लगे। रखवालीके लिये घर रहनेको जिसे रखते वह यह समझता कि मानों उसकी गर्दन मार दी गयी हो। कोई कोई कहते थे कि रहनेके लिये किसीको भी मत कहो। संसारमें जीवनका लाभ कौन नहीं चाहता ?

दो०—जरउ सो संपति सदन सुखु ❀ सुहृद मातु पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद ❀ करइ न सहज सहाइ ॥१८६॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके सामने जाते जो सम्पत्ति, घर, सुख, मित्र, माता, पिता और भाई स्वभावतः सहायता नहीं करते वे सब जल जायं !

(भरतका चित्रकूट-प्रयाण)

घर घर साजहिं बाहन नाना ❀ हरषु हृदय परभात पयाना ॥
भरत जाइ घर कीन बिचारू ❀ नगरु बाजि गज भवनु भंडारू ॥

घर घर तरह तरहकी सवारियां तैयार होने लगीं। सबको हृदयमें इस बातसे प्रसन्नता थी कि सवेरे ही प्रस्थान होगा। भरतजीने घर जाकर विचार किया कि नगर, घोड़े, हाथी, महल, भण्डार—

संपति सब रघुपति कै आही ❀ जौं बिनु जतन चलउं तजि ताही ॥
तौ परिनाम न मोहि भलाई ❀ पापसिरोमनि साइं दोहाई ॥

और सब सम्पत्ति श्रीरामचन्द्रजीकी है। यदि उसकी रक्षाका यत्न किये बिना ही उसे छोड़कर चल दूं तो अन्तमें मेरी भलाई नहीं होगी। स्वामीकी सौगंद खाकर कहता हूं कि मैं पापियोंका शिरोमणि कहलाऊंगा।

करइ स्वामिहित सेवकु सोई ❀ दूषन कोटि देइ किन कोई ॥
अस बिचारि सुचि सेवक बोले ❀ जे सपनेहुं निज धरमु न डोले ॥

चाहे कोई करोड़ दोष ही क्यों न लगावे, परन्तु सेवक वही है जो स्वामीका हित करे। ऐसा विचारकर भरतजीने विश्वासी सेवकोंको बुलाया जो स्वप्नमें भी अपने धर्मसे विचलित नहीं हुए थे।

कहि सबु मरमु धरमु भल भाखा ❀ जो जेहि लायक सो तहं राखा ॥
करि सबु जतनु राखि रखवारे ❀ राममातु पहं भरत सिधारे ॥

मर्मकी सब बातें बतलाकर भरतजीने उन सबको धर्मोपदेश किया और फिर जो जिस योग्य था उसे वहीं

नियुक्त कर दिया। रक्षकोंको नियुक्त कर और सब यत्न करके भरतजी श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्याके पास गये।

दो०—आरत जननी जानि सब ❀ भरत सनेहसुजान।
कहेउ बनावन पालकी ❀ सजन सुखासन जान ॥१८७॥

प्रेमको भलीभांति जाननेवाले भरतजीने सब माताओंको दुःखी जानकर पालकी और सुखपालकी सवारियां सजाकर तैयार करनेकी आज्ञा दी।

चक्क चक्कि जिमि पुर - नर - नारी ❀ चहत प्रात उर आरत भारी ॥
जागत सब निसि भयउ बिहाना ❀ भरत बोलाये सचिव सुजाना ॥

चकवा और चकवीके समान नगरके पुरुष और स्त्रियां, सब चाहते हैं कि सवेरा हो। वे सब हृदयमें बहुत व्याकुल हो रहे हैं। सब रात जागते हुए ही बीती और सवेरा हुआ। भरतजीने चतुर मन्त्रियोंको बुलाया।

कहेउ लेहु सब तिलक समाजू ❀ बनहिं देब मुनि रामहिं राजू ॥
बेगि चलहु सुनि सचिव जोहारे ❀ तुरत तुरग रथ नाग संवारे ॥

मंत्रियोंसे भरतजीने कहा कि राजतिलकका सब सामान साथ लेते चलो। मुनि वनमें ही श्रीरामचन्द्रजीका राजतिलक करेंगे। जल्दी चलनेकी आज्ञा सुनकर मन्त्रियोंने प्रणाम किया और शीघ्र ही हाथी, घोड़ा और रथ, सबको सजाया।

अरुंधती अरु अगिनिसमाजू ❀ रथ चढ़ि चले प्रथम मुनिराजू ॥
बिप्रबृंद चढ़ि बाहन जाना ❀ चले सकल तप - तेज - निधाना ॥

अपनी पत्नी अरुन्धती और अग्निहोत्रकी सामग्रीसमेत मुनिराज वशिष्ठजी रथपर चढ़कर पहिले चले। तप और तेजके स्थान सब ब्राह्मणोंके समूह वाहनों और गाड़ियोंपर चढ़कर चले।

नगर लोग सब सजि सजि जाना ❀ चित्रकूट कहुं कीन्ह पयाना ॥
सिबिका सुभग न जाहिं बखानी ❀ चढ़ि चढ़ि चलत भईं सब रानी ॥

तरह तरहकी सवारियां सजाकर नगरके सब लोगोंने चित्रकूटके लिये प्रस्थान किया। सुन्दर पालकियोंका वर्णन नहीं किया जा सकता। उनपर चढ़ चढ़कर सब रानियां विदा हुईं।

दो०—सौंपि नगरु सुचि सेवकनि ❀ सादर सबहिं चलाइ।
सुमिरि राम-सिय-चरन तब ❀ चले भरतु दोउ भाइ ॥१८८॥

विश्वासी सेवकोंको नगर सौंपकर और आदरपूर्वक सबको आगे विदा करके फिर भरत और शत्रुघ्न दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके चरणोंको स्मरण कर चल दिये।

राम-दरस-बस सब नरनारी ❀ जनु करि करिनि चले तकि बारी ॥
बन सिय राम समुझि मन माहीं ❀ सानुज भरत पयादेहि जाहीं ॥

स्त्री और पुरुष, सब श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेकी इच्छाके वशमें हो रहे हैं मानों हाथी और हथिनियां पानीको देखकर चल दी हों। मनमें यह समझकर कि सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी वनमें हैं, छोटे भाई शत्रुघ्न समेत भरतजी पैदल ही जा रहे हैं।

देखि सनेहु लोग अनुरागे ❀ उतरि चले हय गय रथ त्यागे ॥
जाइ समीप राखि निजडोली ❀ राममातु मृदुबानी बोली ॥

भरतजीका यह प्रेम देखकर लोग प्रेममें भर गये और हाथी, घोड़े तथा रथ, सबको छोड़ छोड़ उतरकर पैरों चलने लगे। यह देखकर श्रीरामचन्द्रजीकी माता पास जाकर और अपनी पालकी ठहराकर मीठी वाणीसे कहने लगीं।

तात चढ़हु रथ बलि महतारी ❀ होइहि प्रिय परिवारु दुखारी ॥
तुम्हरे चलत चलिहि सबु लोगू ❀ सकल सोक कृस नहिं मग जोगू ॥

हे पुत्र, माता बलैया लेती है। तुम रथपर चढ़ो। न चढ़नेसे प्यारा परिवार दुःखी होगा। तुम्हारे पैदल चलनेसे सब लोग पैदल चलेंगे। शोकसे सब लोग दुबले हो रहे हैं, इसलिये पैदल रास्ता चलनेयोग्य नहीं है।

सिर धरि वचन चरन सिरु नाई ❀ रथ चढ़ि चलत भये दोउ भाई ॥
तमसा प्रथमदिवस करि बासू ❀ दूसर गोमतितीर निवासू ॥

माताके वचनोंको शिरोधार्य कर और चरणोंमें शिर नवाकर दोनों भाई रथपर चढ़कर आगेको चले। पहिले दिन तमसा नदीके किनारे वास किया और दूसरा निवास गोमतीके किनारे हुआ।

दो०—पय अहार फल असन एक ❀ निसि भोजन एक लोग ॥
करत रामहित नेम व्रत ❀ परिहरि भूषन भोग ॥१८९॥

कोई दूध ही पीकर रहते; कोई फलाहार ही करते और कोई रात्रिको एक बार भोजन करके ही रह जाते। वे सब भूषण और भोग छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके लिये व्रत और नियम करने लगे।

सई तीर बसि चले बिहाने ❀ सृंगवेरपुर सब नियराने ॥
समाचार सब सुने निषादा ❀ हृदय बिचार करइ सबिषादा ॥

सई नदीके किनारे बसकर बड़े सवेरे सब लोग आगे चले और शृंगवेरपुरके समीप पहुंच गये। जब गुह निषादने सब समाचार सुने तब दुःखी होकर वह अपने मनमें विचार करने लगा।

कारन कवन भरतु बन जाहीं ❀ है कछु कपटभाउ मन माहीं ॥
जौं पै जिय न होति कुटिलाई ❀ तौ कत संग लीन्हि कटकाई ॥

भरतजी वन जा रहे हैं, इसका कारण क्या है ? इनके मनमें कुछ कपटभाव है। यदि हृदयमें कुटिलता नहीं होती तो संगमें सेना क्यों ले रखी है ?

जानहिं सानुज रामहिं मारी ❀ करउँ अकंटक राजु सुखारी ॥
भरत न राजनीति उर आनी ❀ तब कलंकु अब जीवनहानी ॥

जानते हैं कि लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजीको मारकर सुखी होकर मैं अकंटक राज्य करूँगा। परन्तु भरतजीने अपने हृदयमें राजनीतिपर विचार नहीं किया। तब तो इन्हें कलंक ही था, परन्तु अब तो प्राणोंका नाश ही है।

सकल सुरासुर जुरहिं जुझारा ❀ रामहिं समर न जीतनिहारा ॥
का आचरजु भरत अस करहीं ❀ नहिं बिषबेलि अमिय फल फरहीं ॥

सब देवता और दैत्य योद्धा इकट्ठे हो जावें; परन्तु संग्राममें श्रीरामचन्द्रजीको जीतनेवाला कोई नहीं है। भरतजी यदि ऐसा करते हैं तो क्या आश्चर्य है ? विषकी बेलमें अमृतके फल नहीं लगते।

दो०—अस बिचारि गुह ग्याति सन ❀ कहेउ सजग सब होहु ।
हथवासहु बोरहु तरनि ❀ कीजिय घाटारोहु ॥ १९० ॥

ऐसा विचारकर गुह निषादने अपनी जातिवालोंसे कहा कि सब लोग सावधान हो जाओ। मिलकर पकड़ लो, नौकाओंको डुबा दो और घाटोंको रोक लो।

होहु संजोइल रोकहु घाटा ❀ ठाटहु सकल मरइ के ठाटा ॥
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ ❀ जियत न सुरसरि उतरन देऊँ ॥

सावधान होकर घाटोंको रोक लो और सब लोग मरनेके लिये तैयारी करो। मैं भरतजीके सामने लोहा लूँगा और जीते जी गङ्गाजीको उतरने नहीं दूँगा।

समरु मरनु पुनि सुर-सरि-तीरा ❀ रामकाजु छनभंगु सरीरा ॥
भरत भाइ नृपु मैं जन नीचू ❀ बड़े भाग असि पाइय मीचू ॥

संग्राममें मरना और वह भी गङ्गाजीके किनारे ! यह श्रीरामचन्द्रजीका कार्य है और शरीर तो क्षणभंगुर है। भरतजी श्रीरामचन्द्रजीके भाई हैं और राजा हैं--मैं नीच मनुष्य हूँ। बड़े भाग्यसे ही ऐसी मृत्यु मिलती है।

स्वामिकाज करिहउँ रन रारी ❀ जस धवलिहहुँ भुवन दससारी ॥
तजउँ प्रान रघु-नाथ-निहोरे ❀ दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरे ॥

स्वामीके कार्यके लिये रणक्षेत्रमें लड़ाई करूंगा और अपने यशसे चौदहों भुवनोंको उज्ज्वल कर दूं अथवा श्रीरामचन्द्रजीके लिये प्राण त्याग दूंगा। मेरे दोनों हाथोंमें आनन्दके लड्डू हैं।

साधुसमाज न जाकर लेखा ❀ राम भगत महं जासु न रेखा॥
जाय जियत जग सो महिभारू ❀ जननी - जौवन- बिटप - कुठारू॥

साधुओंके समाजमें जिसकी गिनती नहीं है और श्रीरामचन्द्रजीके भक्तोंमें जिसकी प्रशंसा नहीं है, अपनी माताके यौवनरूपी वृक्षको नष्ट करनेके लिये कुल्हाड़ीके समान है। संसारमें जन्म लेकर वह पृथ्वीका बोझ बनकर जीता है।

दो०—बिगतबिषाद निषादपति ❀ सबहि बढ़ाइ उछाहु।
सुमिरि राम मांगेउ तुरत ❀ तरकस धनुष सनाहु॥ १९१॥

निषादोंके स्वामी गुहने शोकरहित होकर सबका उत्साह बढ़ाया और फिर श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण कर शीघ्र ही अपना धनुष, तरकस और कवच मांगा।

बेगहि भाइहु सजहु संजोऊ ❀ सुनि रजाइ कदराइ न कोऊ॥
भलेहि नाथ सब कहहिं सहरषा ❀ एकहिं एक बढ़ावहिं करषा॥

हे भाइयो, जल्दी ही सब तैयारी कर लो। मेरी आज्ञा सुनकर कोई कायरता न दिखलाना। सब आनन्दित होकर कहने लगे कि हे स्वामिन्, बहुत अच्छा! वे सब परस्पर एक दूसरेकी उमंग बढ़ाने लगे।

चले निषाद जोहारि जोहारी ❀ सूर सकल रन रूचइ रारी॥
सुमिरि राम-पद-पंकज - पनहीं ❀ भाथा बांधि चढ़ाइन्हि धनुहीं॥

सब निषाद जोहार जोहारकर चल दिये। वे सब बड़े शूर हैं और उन्हें रणक्षेत्रमें लड़ाई बहुत भाती है। श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी जूतियां स्मरण कर वे सब तरकस बांधकर धनुष चढ़ाने लगे।

अंगरी पहिरि कूंड़ि सिर धरहीं ❀ फरसा बांस सेल सम करहीं॥
एक कुसल अति ओड़न खांडे ❀ कूदहिं गगन मनहुं छिति छांडे॥

कवच पहिनकर शिरपर लोहेकी टोपी रखने और फरसे, भाले और बरछियां आदि सुधारने लगे। कोई कोई तलवार चलानेमें अत्यन्त कुशल थे। वे आकाशमें कूद जाते थे मानों पृथिवी छोड़े हुए हों।

निज निज साजु समाजु बनाई ❀ गुहराउतहिं जोहारे जाई॥
देखि सुभट सब लायक जाने ❀ लेइ लेइ नाम सकल सनमाने॥

अपना अपना साज समाज बनाकर बुलाते ही सबनें पहुंचकर जोहार किया। योद्धाओंको देखकर गुह-निषादने समझा कि वे सब योग्य हैं। उन्होंने नाम ले लेकर सबका आदर किया।

दो०—भाइहु लावहु धोख जनि ❀ आजु काज बड़ मोहि।
सुनि सरोष बोले सुभट ❀ बीर अधीर न होहिं ॥१६२॥

निषादने कहा—भाइयो, आज मेरा बड़ा काम है, धोखा नहीं देना। यह सुनकर सब योद्धा क्रोधमें भरकर बोले, हे वीर, आप अधीर न होवें।

रामप्रताप नाथ बल तोरे ❀ करहिं कटकु बिनु भट बिनु घोरे ॥
जीवत पाउ न पाछे धरहीं ❀ रुंड-मुंड-मय मेदिनि करहीं ॥

हे स्वामिन्, श्रीरामचन्द्रजीके प्रताप और आपके बलसे सारी सेनाको योद्धाशून्य और घोड़ारहित कर देंगे। जीतेजी पैर पीछे नहीं रखेंगे और पृथिवीको रुण्डों-मुंडोंसे भर देंगे।

दीख निषादनाथ भल टोलू ❀ कहेउ बजाउ जुझाऊ ढोलू ॥
एतना कहत छींक भइ बायें ❀ कहेउ सगुनिअन्ह खेत सुहाये ॥

निषादोंके स्वामीने देखा कि अच्छा दल है। फिर उन्होंने कहा कि जुझाऊ ढोल बजाओ। यह कहते ही बाईं ओर छींक हुई। इसपर शकुन विचारनेवालोंने कहा कि क्षेत्र सुहावना है।

बूढ़ एकु कह सगुन बिचारी ❀ भरतहि मिलिय न होइहि रारी ॥
रामहिं भरतु मनावन जाहीं ❀ सगुन कहइ अस बिग्रहु नाहीं ॥

शकुन विचारकर एक वृद्ध कहने लगा कि भरतजीसे मेल होगा, लड़ाई न होगी। भरतजी श्रीरामचंद्रजीको मनाने जा रहे हैं। शकुन यह कह रहा है कि लड़ाई नहीं है।

सुनि गुह कहइ नीक कह बूढ़ा ❀ सहसा करि पछिताहिं बिमूढ़ा ॥
भरत सुभाउ सीलु बिनु बूझे ❀ बड़ि हितहानि जानि बिनु जूझे ॥

सुनकर निषाद कहने लगा कि बुड्ढा ठीक कहता है। मूर्ख मनुष्य सहसा काम करके फिर पछताते हैं। भरतजीका शील-स्वभाव समझे बिना और उन्हें बिना जाने लड़ाई करनेसे हितकी बड़ी हानि होगी।

दो०—गहहु घाट भट सिमिटि सब ❀ लेउँ मरमु मिलि जाइ।
बूझि मित्र अरि मध्य गति ❀ तब तस करिहउँ आइ ॥१६३॥

हे योद्धाओ, तुम सब इकट्ठे होकर घाट घेर रखो और जाकर मैं उनसे मिलकर भेद लेता हूँ। उनकी दशा समझकर कि वे शत्रु हैं या मित्र, या उदासीन, फिर आकर वैसा उपाय करूँगा।

लखब सनेहु सुभाय सुहाये ❀ बैरु प्रीति नहिं दुरइ दुराये ॥
अस कहि भेंट संजोवन लागे ❀ कंद मूल फल खग मृग मांगे ॥

सुन्दर स्वभावसे प्रेमको पहिचान लूँगा। वैर और प्रीति छिपाये नहीं छिपती। ऐसा कहकर निषाद भरतजीके लिये भेंट ले जानेकी तैयारी करने लगा और कंद, मूल, फल, पक्षी और हिरन—सबको मंगवाया।

मीन पीन पाठीन पुराने ❀ भरि भरि भार कहारन्ह आने॥
मिलन साजु सजि मिलन सिधाये ❀ मंगलमूल सगुन सुभ पाये॥

पुरानी मोटी मछलियां भर भरकर कहार लोग भार ले आये। मिलनेका सब सामान सजाकर निषाद मिलनेके लिये विदा हुआ। उसे मङ्गलसूचक शुभ शकुन होने लगे।

देखि दूरि ते कहि निजनामू ❀ कीन्ह मुनीसहिं दंडप्रनामू॥
जानि रामप्रिय दीन्हि असीसा ❀ भरतहिं कहेउ बुझाइ मुनीसा॥

दूरसे ही देखकर और अपना नाम कहकर निषादने मुनीश्वर वशिष्ठजीको दण्डवत-प्रणाम किया। श्रीरामचन्द्रजीका प्यारा समझकर मुनीश्वरने निषादको आशीर्वाद दिया और भरतजीको समझाकर बतलाया।

रामसखा सुनि स्यंदनु त्यागा ❀ चले उतरि उमगत अनुरागा॥
गाउँ जाति गुह नाउँ सुनाई ❀ कीन्ह जोहारु माथ महि लाई॥

वह श्रीरामचन्द्रजीका सखा है, यह सुनते ही उन्होंने रथ छोड़ दिया और उतरकर प्रेमसे उमंगते हुए चले। ग्राम, जाति और नाम बतलाकर निषादने पृथिवीपर अपना मस्तक रखकर प्रणाम किया।

दो०—करत दंडवत देखि तेहि ❀ भरत लीन्ह उर लाय।
मनहुँ लषन सन भेंट भइ ❀ प्रेमु न हृदय समाइ॥१६४॥

निषादको दण्डवत करते देखकर भरतजीने उसे हृदयसे लगा लिया; मानो लक्ष्मणजीसे भेंट हुई हो उनके हृदयमें प्रेम न समाता था।

भेंटत भरतु ताहि अतिप्रीती ❀ लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती॥
धन्य धन्य धुनि मंगलमूला ❀ सुर सराहि तेहि बरिसहिं फूला॥

भरतजी निषादसे बड़े प्रेमके साथ मिलने लगे। उस समय सब लोग प्रेमकी रीतिकी प्रशंसा करने लगे। मङ्गलसूचक 'धन्य', 'धन्य'की आवाज होने लगी। निषादकी प्रशंसा कर देवता फूल बरसाने लगे।

लोक बेद सब भांतिहि नीचा ❀ जासु छांह छुइ लेइय सींचा॥
तेहि भरि अंक राम-लघु-भ्राता ❀ मिलत पुलकपरिपूरित गाता॥

लोक और वेद—दोनोंमें जो सभी प्रकार नीच माना जाता है, जिसकी छायाको छूकर भी स्नान करना

होता है, उसी निषादको छातीसे लिपटकर श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई भरतजी मिल रहे हैं और उनका सारा शरीर पुलकायमान हो रहा है।

राम राम कहि जे जमुहाहीं ❁ तिन्हहिं न पापपुंज समुहाहीं॥
येहि तौ राम लाइ उर लीन्हा ❁ कुलसमेत जगु पावन कीन्हा॥

'राम', 'राम' कहकर जो लोग जँभाई लेते हैं, पापोंके समूह उनके सामने नहीं होते। इसे तो श्रीरामचन्द्रजीने हृदयसे ही लगा लिया और कुलसमेत सारा संसार पवित्र कर दिया।

करम-नास-जलु सुरसरि परई ❁ तेहि को कहहु सीस नहिं धरई॥
उलटा नामु जपत जगु जाना ❁ बालमीकि भये ब्रह्म समाना॥

कर्मनाशा नदीका जल जब गङ्गा नदीमें जाकर मिल जाता है तब उसे कहो कौन शिरपर नहीं रखता? संसार जानता है कि उलटा नाम 'मरा' जपकर ही वाल्मीकि मुनि ब्रह्मके समान हो गये।

दो०—स्वपच सवर खस जमन जड़ ❁ पावँर कोल किरात।
राम कहत पावन परम ❁ होत भुवन बिख्यात॥१९५॥

यह बात सब भुवनोंमें प्रसिद्ध है कि चाण्डाल, शबर, खस, यवन, मूर्ख, नीच, कोल और किरात—सब श्रीरामचन्द्रजीका नाम लेते ही परम पवित्र हो जाते हैं।

नहिं अचरज जुग जुग चलि आई ❁ केहि न दीन्हि रघुबीर बड़ाई॥
राम-नाम-महिमा सुर कहहीं ❁ सुनि सुनि अवध लोग सुखु लहहीं॥

इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। यह तो युगयुगान्तरसे होता आया है। श्रीरामचन्द्रजीने किसको बड़ाई नहीं दी है? इस प्रकार देवता श्रीरामचन्द्रजीके नामका माहात्म्य कहने लगे, जिसे सुन-सुनकर अयोध्याके लोग सुख पाने लगे।

रामसखहिं मिलि भरत सप्रेमा ❁ पूछी कुसल सुमंगल षेमा॥
देखि भरत कर सीलु सनेहू ❁ भा निषाद तेहि समय बिदेहू॥

भरतजीने प्रेमके साथ श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादसे मिलकर कुशलक्षेम और मङ्गल पूछा। भरतजीका शील और स्नेह देखकर निषादको उस समय अपनी देहकी सुध भूल गयी।

सकुच सनेहु मोदु मन बाढ़ा ❁ भरतहिं चितवत एकटक ठाढ़ा॥
धरि धीरज पद बंदि बहोरी ❁ बिनय सप्रेम करत कर जोरी॥

निषादके मनमें संकोच, स्नेह और आनन्द बढ़ने लगा और वह खड़ा होकर भरतजीको एकटक देखने लगा। फिर धीरज रखकर और चरणोंकी वंदनाकर वह हाथ जोड़कर प्रेमपूर्वक विनती करने लगा।

कुसल मूल पदपंकज पेखी ॐ मैं तिहुँ काल कुसल निज लेखी ॥
अब प्रभु परम अनुग्रह तोरे ॐ सहित कोटि कुल मंगल मोरे ॥

आपके कुशलके मूल चरणकमलोंको देखकर मैंने तीनों कालमें अपना कुशल समझ लिया है। हे प्रभो, अब आपके अत्यन्त अनुग्रहसे करोड़ कुलोंसमेत मेरा सब प्रकार मंगल है।

दो०—समुझि मोरि करतूति कुलु ॐ प्रभु महिमा जिय जोइ।
जो न भजइ रघु-बीर-पद ॐ जग बिधिबंचित सोइ ॥१९६॥

मेरे कुल और करतूतको समझकर और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी महिमाको अपने हृदयमें देखकर जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंको नहीं भजता, संसारमें उसीको ब्रह्माने ठग लिया।

कपटी कायरु कुमति कुजाती ॐ लोक बेद बाहेर सब भाँती ॥
राम कीन्ह आपन जबही तें ॐ भयउँ भुवन भूषन तबही तें ॥

मैं कपटी, कायर, कुमति और कुजाति था और लोक और वेदसे सब प्रकार पतित था; परन्तु जबसे श्रीरामचन्द्रजीने मुझे अपना कर लिया है तभीसे मैं भुवनोंका भूषण हो गया हूं।

देखि प्रीति सुनि बिनय सुहाई ॐ मिलेउ बहोरि भरत-लघु-भाई ॥
कहि निषाद निज नामु सुबानी ॐ सादर सकल जोहारी रानी ॥

प्रीति देखकर और सुन्दर विनय सुनकर भरतजीके छोटे भाई शत्रुघ्न निषादसे फिर मिले। निषादने सुन्दर वाणीसे अपना नाम कहकर सब रानियोंको आदरपूर्वक प्रणाम किया।

जानि लषनसम देहिं असीसा ॐ जियहु सुखी सय लाख बरीसा ॥
निरखि निषादु नगर-नर-नारी ॐ भये सुखी जनु लषनु निहारी ॥

निषादको लक्ष्मणजीके समान जानकर रानियां आशीर्वाद देने लगीं कि सौ लाख वर्षतक सुखसे जीवित रहो। नगरके सब स्त्री-पुरुष निषादको देखकर ऐसे सुखी हुए; मानों उन्होंने लक्ष्मणजीको देख लिया हो।

कहहिं लहेउ एहि जीवनु लाहू ॐ भेंटेउ रामभद्र भरि बाहू ॥
सुनि निषादु निज-भाग-बड़ाई ॐ प्रमुदित मन लै चलेउ लेवाई ॥

सब कहने लगे कि अपने जीवनका लाभ इसने पा लिया, जो कल्याणरूप श्रीरामचन्द्रजीसे भुजाएँ भर कर मिला है। अपने भाग्यकी प्रशंसा सुन, निषाद मनमें प्रसन्न होकर सबको लिवा ले चला।

दो०—सनकारे सेवक सकल ॐ चले स्वामि रुख पाइ।
घर तरु तर सर बाग बन ॐ बास बनायेन्हि जाइ ॥१९७॥

निषादने सब सेवकोंको इशारा कर दिया जो अपने स्वामीका रुख पाकर चल दिये और जिन्होंने जाकर घरोंमें, वृक्षोंके नीचे, तालाबोंपर, बागों और जङ्गलोंमें सबके ठहरनेको स्थान बनाये ।

सृंगबेरपुर भरत दीख जब ❀ भे सनेहबस अंग सिथिल तब ॥
सोहत दिये निषादहि लागू ❀ जनु तनु धरे बिनय अनुरागू ॥

भरतजीने जब शृंगवेरपुर देखा तब प्रेमके वश होकर उनका सारा शरीर शिथिल हो गया। निषादका सहारा लिये जाते हुए भरतजी ऐसे शोभित होते थे; मानों विनय और प्रेम शरीर धारण किये हुए हों।

एहि बिधि भरत सेनु सब संगा ❀ दीख जाइ जगपावनि गंगा ॥
रामघाट कहँ कीन्ह प्रनामू ❀ भा मनु मगनु मिले जनु रामू ॥

इस प्रकार सब सेनासमेत जाकर भरतजीने संसारको पवित्र करनेवाली गङ्गाजीको देखा। भरतजीने रामघाटको प्रणाम किया। उनका मन ऐसा आनंदित हुआ; मानों श्रीरामचन्द्रजी मिल गये हों।

करहिं प्रनाम नगर-नर-नारी ❀ मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी ॥
करि मज्जनु मांगहि कर जोरी ❀ रामचंद्रपद प्रीति न थोरी ॥

नगरकी स्त्रियां और पुरुष—सब गंगाजीको प्रणाम करते हैं और उनका ब्रह्ममय जल देखकर प्रसन्न होते हैं। गंगाजीमें स्नानकर वे सब हाथ जोड़कर मांगते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम कम न हो।

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू ❀ सकल-सुखद-सेवक-सुर-धेनू ॥
जोरिपानि बर मांगहु एहू ❀ सीयराम-पद सहज सनेहू ॥

भरतजी कहने लगे—हे गंगे, आपकी बालू सब सुख देनेवाली और सेवकोंकी कामधेनु है। हाथ जोड़कर मैं यही वर मांगता हूं कि सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मेरा स्वाभाविक प्रेम हो।

दो०—एहि बिधि मज्जनु भरतु करि ❀ गुरु अनुसासन पाइ ।
मातु नहानीं जानि सब ❀ डेरा चले लेवाइ ॥१९८॥

इस प्रकार स्नान कर और गुरुकी आज्ञा पाकर तथा यह जानकर कि सब माताओंने स्नान कर लिया है, भरतजी डेरोंके लिए सबको लेकर चले।

जहं तहं लोगन्ह डेरा कीन्हा ❀ भरत सोधु सबही कर लीन्हा ॥
गुरसेवा करि आयसु पाई ❀ राममातु पहिं गे दोउ भाई ॥

जहां-तहां लोगोंने डेरा डाल दिया। भरतजीने सभीकी संभाल कर ली। गुरु-पूजा करके और उनकी आज्ञा पाकर दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजीकी माताके पास गये।

चरन चांपि कहि कहि मृदुबानी ❀ जननी सकल भरतु सनमानी ॥
भाइहिं सौंपि मातुसेवकाई ❀ आपु निषादहि लीन्ह बोलाई ॥

चरण दबाकर और मीठे वचन कह-कहकर भरतजीने सब माताओंका सम्मान किया। माताकी सेवाका काम भाई शत्रुघ्नको सौंपकर भरतजीने निषादको बुला लिया।

चले सखा कर सों कर जोरे ❀ सिथिल सरीरु सनेहु न थोरे ॥
पूछत सखहि सो ठाउं देखाऊ ❀ नेकु नयन - मन - जरनि जुड़ाऊ ॥

वे मित्र निषादके हाथसे अपना हाथ मिलाये हुए चले। अत्यधिक प्रेमसे उनका शरीर शिथिल हो गया। मित्र निषादसे वे पूछने लगे—वह स्थान दिखलाओ और मेरे मन और नेत्रोंकी जलनको तनिक शीतल करो,

जहं सिय रामु लखनु निसि सोये ❀ कहत भरे जल लोचनकोये ॥
भरतबचन सुनि भयउ बिषादू ❀ तुरत तहां लेइ गयउ निषादू ॥

जहां रातको सीताजी, श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी सोये थे। यह कहते-कहते भरतजीके नेत्रोंमें आंसू भर आये। भरतजीके वचन सुनकर निषादको बड़ा दुःख हुआ और वह उन्हें लेकर तुरन्त ही वहां गया।

दो०—जहं सिंसुपा पुनीततरु ❀ रघुबर किये बिस्रामु।
अतिसनेह सादर भरत ❀ कीन्हे दंड प्रनामु ॥१९९॥

शीशमके पवित्र वृक्षके नीचे श्रीरामचन्द्रजीने विश्राम किया था, वहां भरतजीने बड़े प्रेमसे आदरपूर्वक दण्डवत-प्रणाम किया।

कुस साथरी निहारि सुहाई ❀ कीन्ह प्रनामु प्रदच्छिन जाई ॥
चरन - रेख - रज आंखिन्ह लाई ❀ बनइ न कहत प्रीति अधिकाई ॥

कुशोंकी सुहावनी बिछौनी देखकर और उसकी प्रदक्षिणा करके भरतजीने उन्हें प्रणाम किया। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका चिह्न जहां बना था वहांकी धूल भरतजीने आंखोंसे लगायी। उनके प्रेमकी अधिकता कहते नहीं बनती।

कनकबिंदु दुइ चारिक देखे ❀ राखे सीस सीयसम लेखे ॥
सजल बिलोचन हृदय गलानी ❀ कहत सखा सन बचन सुबानी ॥

जो दो-चार सोनेके सितारे दिखलाई दिये उन्हें भरतजीने सीताजीके समान समझा और अपने शिरपर रखा। भरतजीके नेत्रोंमें जल छा गया, हृदयमें ग्लानि हो गयी और सुन्दर वाणीसे वे मित्र निषादसे ये वचन कहने लगे:—

ओहत सीयबिरह दुतिहीना ❀ जथा अवध नरनारि मलीना ॥
पिता जनक देउं पटतर केही ❀ करतल भोगु जोगु जग जेही ॥

हाय ! सीताजीके वियोगमें जैसे अयोध्याके स्त्री-पुरुष मलीन हो गये हैं, वैसे ही ये सितारे भी शोभा-रहित और कान्तिहीन हो गये ! संसारमें सारे भोग और योग जिनकी मुट्ठीमें है, वे राजा जनक जिस सीता-जीके पिता हैं उन्हें किसकी उपमा दूं ?

ससुर भानु-कुल-भानु भुआलू ❀ जेहि सिहात अमरावतिपालू ॥
प्राननाथु रघुनाथ गोसाईं ❀ जो बड़ होत सो रामबड़ाई ॥

जिनकी प्रशंसा इन्द्र भी करते थे, वे सूर्यकुलके सूर्य राजा दशरथ जिनके श्वसुर थे, जो बड़ा होता है वह श्रीरामचन्द्रजीके बड़प्पन देनेसे ही होता है, यही रघुवंशके स्वामी और मेरे स्वामी श्रीरामचन्द्रजी जिनके प्राण-पति हैं।

दो०—पतिदेवता सु-तीय-मनि ❀ सीय साथरी देखि।
बिहरत हृदय न हहरि हर ❀ पबि तें कठिन बिसेखि ॥२००॥

उन सीताजीकी, जो पतिव्रता और सुन्दर स्त्रियोंमें मणिके समान हैं, बिछौनी देखकर मेरा हृदय भी हहराकर नहीं फटता ! यह वज्रसे भी अधिक कठोर है !

लालनजोग लखन लघु लोने ❀ भे न भाइ अस अहहिं न होने ॥
पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे ❀ सिय रघुबीरहिं प्रानपियारे ॥

छोटे सलोने लक्ष्मणजी प्यार करनेयोग्य हैं। ऐसे भाई न तो हुए, न हैं और न होंगे। वे नगरवासियोंके प्यारे, माता-पिताके दुलारे तथा सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके प्राणप्यारे हैं।

मृदुमूरति सुकुमार सुभाऊ ❀ ताति बाउ तन लाग न काऊ ॥
ते बन सहहिं बिपति सब भांती ❀ निदरे कोटि कुलिस एहि छाती ॥

उनका कोमल शरीर है, सुकुमार स्वभाव है, गरम हवा उनके शरीरको कभी नहीं लगी, वही लक्ष्मणजी बनमें सब प्रकारकी विपत्तियां सह रहे हैं। इस छातीने करोड़ वज्रोंका भी निरादर कर दिया।

राम जनमि जगु कीन्ह उजागर ❀ रूप सील सुख सब गुनसागर ॥
पुरजन परिजन गुरु पितु माता ❀ रामसुभाउ सबहिं सुखदाता ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जन्म लेकर सारे संसारमें प्रकाश कर दिया ! रूप, शील, सुख और समस्त गुणोंके वे समुद्र हैं। नगरनिवासी, कुटुम्बी, गुरु, माता, पिता—सबको श्रीरामचन्द्रजी स्वभावसे ही सुख देनेवाले हैं।

बैरिउ रामबड़ाई करहीं ❀ बोलनि मिलनि बिनय मन हरहीं ॥
सारद कोटि कोटि सत सेखा ❀ करि न सकहिं प्रभु-गुन-गन-लेखा ॥

शत्रु भी श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई करते हैं कि उनका बोलना, मिलना और विनय-भाव मनको हर लेता है। करोड़ सरस्वती और सौ करोड़ शेषनाग प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहोंकी गिनती नहीं कर सकते।

दो०—सुखसरूप रघु-बंस-मनि ❀ मंगल-मोद-निधान।
ते सोवत कुस डासि महि ❀ बिधिगति अतिबलवान ॥२०१॥

जो श्रीरामचन्द्रजी रघुवंशमें मणिके समान, सुखके स्वरूप और आनन्दमङ्गलके भाण्डार हैं, वे पृथिवीपर कुश बिछाकर सोते हैं! दैवकी गति बड़ी बलवान है।

राम सुना दुख कान न काऊ ❀ जीवनतरु जिमि जोगवइ राऊ ॥
पलक नयन फनि मनि जेहि भांती ❀ जोगवहिं जननि सकल दिनराती ॥

श्रीरामचन्द्रजीने दुःख कभी कानोंसे भी नहीं सुना! जीवन-वृक्षकी भांति राजा उनके लिये यत्नवान रहते थे! जिस प्रकार सर्प अपनी मणिकी और पलकें नेत्रोंकी रक्षा करती हैं उसी प्रकार सब माताएँ रात-दिन उनकी रक्षा करती थीं।

ते अब फिरत बिपिन पदचारी ❀ कंदमूल फलफूल अहारी ॥
धिग कैकेइ अमंगलमूला ❀ भइसि प्रान प्रियतम-प्रतिकूला ॥

वही श्रीरामचन्द्रजी अब वनमें पैदल घूमते और कंदमूल तथा फलफूल खाकर रहते हैं। कैकेयीको धिक्कार है जो सब अनर्थोंका मूल है और जो अपने प्राणोंके सबसे अधिक प्यारेके भी प्रतिकूल हो गयी!

मैं धिगधिग अघउदधि अभागी ❀ सब उतपात भयेउ जेहि लागी ॥
कुलकलंकु करि सृजेउ बिधाता ❀ साइं द्रोह मोहि कीन्ह कुमाता ॥

मुझ अभागेको बार-बार धिक्कार है जो पापका समुद्र है और जिसके कारण ही सब उत्पात हुआ! विधाताने मुझे कुलका कलङ्क बनाकर उत्पन्न किया! कुमाता कैकेयीने मुझे स्वामि-द्रोही कर दिया!

सुनि सप्रेम समुझाव निषादू ❀ नाथ करिय कत बादि बिषादू ॥
राम तुम्हहिं प्रिय तुम्ह प्रिय रामहिं ❀ एह निरजोसु दोसु बिधि बामहिं ॥

भरतजीकी बातें सुनकर निषाद प्रेमपूर्वक समझाने लगा कि हे नाथ, आप व्यर्थ ही शोक क्यों कर रहे हैं? श्रीरामचन्द्रजी आपको प्यारे हैं और आप श्रीरामचन्द्रजीको प्यारे हैं। अतः किसीका दोष नहीं, केवल प्रतिकूल दैवका ही दोष है!

छं०—बिधि बाम की करनी कठिन जेहि मातु कीन्ही बावरी।
तेहि राति पुनि पुनि करहिं प्रभु सादर सराहन रावरी॥
तुलसी न तुम्ह सों राम प्रीतमु कहत हौं सौंहैं किये।
परिनाम मंगलु जानि अपने आनिये धीरजु हिये॥

प्रतिकूल विधाताका यह कार्य बड़ा कठिन है, जिसने माता कैकेयीको बावला बना दिया। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी उस रातको बार-बार आदरपूर्वक आपकी प्रशंसा करते थे। मैं सौगंद खाकर कहता हूं कि—तुलसीदासजी कहते हैं—आपके समान श्रीरामचन्द्रजीको कोई प्यारा नहीं है। इसका परिणाम मङ्गलकर होगा, यह समझकर अपने हृदयमें धीरज रखिये।

सो०—अंतरजामी रामु ❀ सकुच सप्रेम कृपायतन।
चलिय करिय बिस्रामु ❀ यह बिचारि दृढ़ आनि मन॥२०२॥

मनमें यह दृढ़ विचार लाकर चलिये और विश्राम कीजिये कि श्रीरामचन्द्रजी अन्तर्यामी, संकोची, प्रेममय और दयाके स्थान हैं।

सखाबचन सुनि उर धरि धीरा ❀ बास चले सुमिरत रघुबीरा॥
यह सुधि पाइ नगर-नर-नारी ❀ चले बिलोकन आरत भारी॥

मित्र निषादके वचन सुनकर और हृदयमें धीरज रखकर भरतजी श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करते हुए डेरेको चले। नगरकी स्त्रियों और पुरुषोंने जब यह संवाद पाया तब अत्यन्त दुःखी होकर वे सब देखनेको चल दिये।

परदछिना करि करहिं प्रनामा ❀ देहिं कैकइहि खोरि निकामा॥
भरि भरि बारि बिलोचन लेहीं ❀ बामबिधातहि दूषन देहीं॥

प्रदक्षिणा करके वे सब भरतजीको प्रणाम करने और कैकेयीको व्यर्थ दोष देने लगे। बार-बार वे नेत्रोंमें आंसू भर लेते और प्रतिकूल दैवको दोष देने लगे।

एक सराहहिं भरतसनेहू ❀ कोउ कह नृपति निबाहेउ नेहू॥
निंदहिं आपु सराहि निषादहि ❀ को कहि सकइ बिमोह बिषादहि॥

कोई-कोई भरतजीके प्रेमकी प्रशंसा करने लगे और कोई-कोई कहने लगे कि राजाने प्रेम निबाहा। सब निषादकी प्रशंसा करके अपनी निन्दा करने लगे, उनके दुःख और व्याकुलताको कौन कह सकता है?

एहि बिधि राति लोगु सबु जागा ❀ भा भिनुसारु गुदारा लागा ॥
गुरहिं सुनाव चढ़ाइ सुहाईं ❀ नईं नाव सब मातु चढ़ाईं ॥
दंड चारि महँ भा सब पारा ❀ उतरि भरत तब सबहिं संभारा ॥

इस प्रकार सब लोग रातभर जागते रहे, फिर सवेरा हुआ और सब लोग गङ्गाजीके पार उतरने लगे। गुरुजीको एक सुहावनी नौकापर चढ़ाकर सब माताओंको नयी नौकापर चढ़ाया। चार घड़ीमें सब लोग गङ्गापार पहुंच गये, फिर भरतजीने पार उतरकर सबकी संभाल की।

दो०—प्रातक्रिया करि मातुपद ❀ बंदि गुरहि सिरु नाइ।
आगे किये निषादगन ❀ दीन्हेउ कटकु चलाइ ॥२०३॥

प्रातःकृत्य समाप्त कर, माताके चरणोंकी वंदना करके भरतजीने गुरुको शिर नवाया और निषादोंको आगे कर सेनाको चलनेकी आज्ञा दे दी।

कियेउ निषादनाथु अगुआईं ❀ मातु पालकी सकल चलाईं ॥
साथ बोलाइ भाइ लघु दीन्हा ❀ बिप्रन्ह सहित गवनु गुरु कीन्हा ॥

निषादोंके स्वामी निषादको अगुआ करके माताओंकी सब पालकियां रवाना कीं। छोटे भाई शत्रुघ्नको बुलाकर उनके साथ कर दिया। फिर ब्राह्मणोंसमेत गुरु वशिष्ठने प्रस्थान किया।

आपु सुरसरिहिं कीन्ह प्रनामू ❀ सुमिरे लखन सहित सियरामू ॥
गवने भरत पयादेहि पाये ❀ कोतल संग जाहिं डोरिआये ॥

भरतजीने स्वयं गङ्गाजीको प्रणाम किया और लक्ष्मणजीसमेत सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण किया। भरतजीने पांव-पैदल ही प्रस्थान किया। डोरीसे बंधे हुए कोतल घोड़े साथ जा रहे थे।

कहहिं सुसेवक बारहिं बारा ❀ होइय नाथ अस्व असवारा ॥
रामु पयादेहि पाय सिधाये ❀ हम कहँ रथ गज बाजि बनाये ॥

स्वामिभक्त सेवक बार-बार कहते थे, हे नाथ, घोड़ेपर सवार हो जाइये। भरतजीने कहा कि श्रीरामचन्द्रजी तो पांव-पैदल ही वनको गये और हमारे लिये ये रथ, हाथी और घोड़े बनाये गये हैं!

सिरभर जाउँ उचित अस मोरा ❀ सब तें सेवकधरमु कठोरा ॥
देखि भरतगति सुनि मृदुबानी ❀ सब सेवकगन गरहिं गलानी ॥

मुझे तो उचित यह है कि मैं सिरके बल जाऊं। सेवकका धर्म सबसे कठोर है! भरतजीकी दशा देखकर और मीठी वाणी सुनकर सब सेवक ग्लानिसे बड़े दुःखी हुए।

दो०—भरत तीसरे पहर कहँ ❀ कीन्ह प्रवेसु प्रयाग।
कहत राम सिय राम सिय ❀ उमगि उमगि अनुराग ॥२०४॥

'सीताराम'-'सीताराम' कहते और प्रेममें बार-बार उमँगते हुए भरतजीने तीसरे पहर प्रयागमें प्रवेश किया।

झलका झलकहिं पायन्ह कैसे ❀ पंकजकोस ओसकन जैसे ॥
भरत पयादेहि आये आजू ❀ भयउ दुखित सुनि सकलसमाजू ॥

भरतजीके पैरोंमें छाले पड़ गये, जो ऐसे चमकने लगे जैसे कमलकी कलियोंपर ओसकी बूंदें। आज भरतजी पैदल ही चलकर आये हैं, यह सुनकर सारा समाज दुःखी हुआ।

खबरि लीन्ह सब लोग नहाये ❀ कीन्ह प्रनामु त्रिबेनिहि आये ॥
सबिधि सितासित नीर नहाने ❀ दिये दान महिसुर सनमाने ॥

जब भरतजीने यह खबर ले ली कि सब लोग स्नान कर चुके, तब उन्होंने भी आकर त्रिवेणीजीको प्रणाम किया। उन्होंने विधिपूर्वक गंगा और यमुनाके जलमें स्नान किया और दान देकर ब्राह्मणोंका सम्मान किया।

देखत स्यामल-धवल-हलोरे ❀ पुलकि सरीर भरत कर जोरे ॥
सकल-काम-प्रद तीरथराऊ ❀ बेदबिदित जग प्रगट प्रभाऊ ॥

गङ्गा और यमुनाके जलकी उज्ज्वल और श्यामल लहरें देखकर भरतजीका शरीर पुलकित हो गया और वे हाथ जोड़कर कहने लगे, हे तीर्थराज, आप सारी इच्छाएँ पूरी करनेवाले हैं। आपका प्रभाव वेदमें प्रसिद्ध है और संसारमें प्रकट है।

मांगउँ भीख त्यागि निजधरमू ❀ आरत काह न करइ कुकरमू ॥
अस जिय जानि सुजान सुदानी ❀ सफल करहिं जग जाचकबानी ॥

अपना धर्म छोड़कर मैं आपसे एक भीख मांगता हूं। दुःखी मनुष्य कौन कुकर्म नहीं करता। अपने मनमें यही जानकर चतुर और श्रेष्ठ दानी संसारमें याचकोंकी मांग पूरी किया करते हैं।

दो०—अरथ न धरम न कामरुचि ❀ गति न चहउँ निरबान ॥
जनम जनम रति रामपद ❀ यह बरदानु न आन ॥२०५॥

मेरी रुचि न अर्थमें है, न धर्ममें और न काममें, और न मैं मोक्षपद ही चाहता हूं। जन्म-जन्ममें श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हो, यही वरदान मैं मांगता हूं, दूसरा नहीं।

जानहु राम कुटिल करि मोही ❀ लोग कहउ गुरु-साहिब-द्रोही ॥
सीताराम-चरन रति मोरे ❀ अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरे ॥

श्रीरामचन्द्रजी मुझे दुष्ट ही क्यों न समझें और लोग मुझे गुरु-द्रोही और स्वामि-द्रोही क्यों न कहें, परन्तु आपके अनुग्रहसे सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मेरी भक्ति दिन-दिन बढ़ती रहे।

जलदु जनम भरि सुरति बिसारउ ❀ जाचत जलु पबिपाहन डारउ ॥
चातक रटनि घटे घटि जाई ❀ बढ़े प्रेमु सब भांति भलाई ॥

चाहे मेघ जन्मभर पपीहेकी याद भुलाये रहे और जल मांगते ही वज्र और पत्थर गिरावे, चाहे पपीहेका रटना भी घटते-घटते घट जाय; परन्तु प्रेमके बढ़नेमें ही सब प्रकार भलाई है।

कनकहि बान चढ़इ जिमि दाहे ❀ तिमि प्रिय-तम-पद-नेम निबाहे ॥
भरतबचन सुनि मांझ त्रिबेनी ❀ भइ मृदुबानि सु-मंगल-देनी ॥

जैसे तपानेसे सोनेकी चमक बढ़ जाती है वैसे ही अपने अत्यन्त प्यारेके चरणोंका प्रेम निबाहनेसे भी (मन दिव्य) होता है। भरतजीका वचन सुनकर त्रिवेणीके बीचसे सुन्दर मंगल देनेवाली कोमल वाणी हुई—

तात भरत तुम्ह सब बिधि साधू ❀ राम - चरन - अनुराग - अगाधू ॥
बादि गलानि करहु मन माहीं ❀ तुम्ह सम रामहिं कोउ प्रिय नाहीं ॥

हे तात, हे भरत, तुम सब प्रकारसे साधु हो। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें तुम्हारा अथाह प्रेम है। तुम मनमें व्यर्थ ही ग्लानि करते हो। श्रीरामचन्द्रजीको तुम्हारे समान और कोई प्यारा नहीं है।

दो०—तनु पुलकेउ हिय हरषु सुनि ❀ बेनिबचन अनुकूल।
भरत धन्य कहि धन्य सुर ❀ हरषित बरषहिं फूल ॥२०६॥

त्रिवेणीजीका अनुकूल वचन सुनकर भरतजीका हृदय आनन्दित और शरीर पुलकायमान हो गया। देवता-गण भरतजीको बार-बार धन्य-धन्य कहकर प्रसन्नतासे फूल बरसाने लगे।

(भरत और भरद्वाज)

प्रमुदित तीरथ-राज-निवासी ❀ बैखानस बटु गृही उदासी ॥
कहहिं परसपर मिलि दस पांचा ❀ भरतु सनेहु सीलु सुचि साँचा ॥

तपस्वी, ब्रह्मचारी, गृहस्थ और उदासीन—तीर्थराज प्रयाग-निवासी सभी आनंदित हुए। दस-पाँच मिलकर परस्पर कहने लगे कि भरतजीका प्रेम और शील पवित्र और सत्य है।

सुनत राम-गुन-ग्राम सुहाये ❀ भरद्वाज मुनिबर पहिं आये ॥
दंडप्रनामु करत मुनि देखे ❀ मूरतिवंत भाग निज लेखे ॥

श्रीरामचंद्रजीके सुहावने गुणोंके समूहोंको सुनते हुए भरतजी मुनिवर भरद्वाजके पास आ गये। मुनिने भरतजीको दण्डवत्-प्रणाम करते हुए देखा और उन्हें अपना मूर्तिमान भाग्य समझा।

धाइ उठाइ लाइ उर लीन्हे ❀ दीन्हि असीस कृतारथ कीन्हे ॥
आसन दीन्ह नाइ सिरु बैठे ❀ चहत सकुच गृह जनु भजि पैठे ॥

मुनिने दौड़कर भरतजीको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया और आशीर्वाद देकर कृतार्थ किया। फिर मुनिने उन्हें आसन दिया, जिसपर भरतजी सिर झुकाकर बैठ गये; मानों भागकर वे संकोचके घरमें घुसना चाहते हों।

मुनि पूछब किछु यह बड़ सोचू ❀ बोले रिषि लखि सीलसंकोचू ॥
सुनहु भरत हम सब सुधि पाई ❀ बिधिकरतब पर कछु न बसाई ॥

भरतजीको इस बातका बड़ा सोच था कि मुनिजी कुछ पूछेंगे। भरतजीका शील और संकोच देखकर ऋषि कहने लगे—हे भरत, सुनो। हमें सब हाल मालूम हो चुका है। विधाताकी करतूतपर कुछ वश नहीं चलता।

दो०—तुम्ह गलानि जिय जनि करहु ❀ समुझि मातुकरतूति।
तात कैकेइहि दोषु नहिं ❀ गई गिरा मतिधूति ॥२०७॥

माताकी करतूत समझकर तुम अपने मनमें ग्लानि मत करो। हे तात, कैकेयीका भी दोष नहीं है, सरस्वतीने ही उसकी बुद्धि भ्रष्ट कर दी थी।

यहउ कहत भल कहिहि न कोऊ ❀ लोक बेद बुधसंमत दोऊ ॥
तात तुम्हार बिमलजसु गाई ❀ पाइहि लोकउ बेदु बड़ाई ॥

यह कहनेसे भी कोई भला नहीं कहेगा; क्योंकि पण्डितोंको लोक और वेद—दोनोंकी ही बातें मान्य होती हैं। हे तात, तुम्हारा निर्मल यश गाकर लोक और वेद—दोनों ही बड़ाई पावेंगे।

लोक-बेद-संमत सब कहई ❀ जेहि पितु देइ राजु सो लहई ॥
राउ सत्यब्रत तुम्हहिं बोलाई ❀ देत राजु सुखु धरमु बड़ाई ॥

सब कहते हैं कि लोक और वेद—दोनोंको ही यह बात मान्य है कि जिसको पिता देता है वही राज्य पाता है। सत्यप्रतिज्ञ राजा दशरथ तुम्हें बुलाकर यदि राज्य देते तो सुख, धर्म और बड़ाई सब कुछ होता।

रामगवनु बन अनरथमूला ❀ जो सुनि सकल बिस्व भइ सूला ॥
सो भावीबस रानि अयानी ❀ करि कुचालि अंतहु पछितानी ॥

परन्तु अनर्थका मूल तो श्रीरामचन्द्रजीका वनको जाना हुआ, जिसे सुनकर सारे संसारको पीड़ा हुई। यह भी होनहारके वश ही हुआ। अनजान रानी कैकेयी कुचाल करके अन्तमें तो पछतायी।

तहउँ तुम्हार अलप अपराधू ❀ कहइ सो अधम अयान असाधू ॥
करतेहु राजु तो तुम्हहिं न दोषू ❀ रामहि होत सुनत संतोषू ॥

उसमें भी जो कोई तुम्हारा थोड़ा भी अपराध कहे तो वह नीच, अनजान और दुष्ट है। यदि राज्य भी करते तो तुम्हें दोष नहीं होता और सुनते ही श्रीरामचन्द्रजीको संतोष होता।

दो०—अब अति कीन्हेहु भरत भल ❀ तुम्हहिं उचित मत एहु ॥
सकल सुमंगल-मूल जग ❀ रघुबरचरन सनेहु ॥२०८॥

हे भरत, अब तुमने बहुत ही अच्छा किया। यही निश्चय तुम्हारे लिये उचित भी था। संसारमें सब शुभ मंगलोंका मूल श्रीरामचंद्रजीके चरणोंका प्रेम है।

सो तुम्हार धनु जीवनु प्राना ❀ भूरि भाग को तुम्हहिं समाना ॥
यह तुम्हार आचरजु न ताता ❀ दसरथसुअन राम-प्रिय-भ्राता ॥

यही प्रेम तुम्हारा धन और जीवन-प्राण है! तुम्हारे समान बड़भागी और कौन है? हे तात, तुम्हारे लिये यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है, क्योंकि तुम राजा दशरथके पुत्र और श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे भाई हो।

सुनहु भरत रघु-पति-मन माहीं ❀ प्रेमपात्रु तुम्ह सम कोउ नाहीं ॥
लषन राम सीतहिं अतिप्रीती ❀ निसि सबु तुम्हहिं सराहत बीती ॥

हे भरत, सुनो। श्रीरामचन्द्रजीके मनमें तुम्हारे समान प्रेमपात्र और कोई नहीं है। लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका तुमपर बड़ा प्रेम है। उस दिन उनकी सारी रात तुम्हारी प्रशंसा करते ही बीती।

जाना मरमु नहात प्रयागा ❀ मगन होहिं तुम्हरे अनुरागा ॥
तुम्ह पर अस सनेहु रघुबर के ❀ सुख जीवनु जग जस जड़ नर के ॥

प्रयाग-स्नान करते समय मैंने सारा भेद जान लिया। वे तुम्हारे प्रेममें मग्न हो जाते हैं। तुमपर श्रीरामचन्द्रजीका वैसा ही प्रेम है जैसा संसारमें मूर्ख मनुष्योंको जिन्दगीके सुखपर होता है।

यह न अधिक रघुबीरबड़ाई ❀ प्रनत-कुटुंब-पाल रघुराई ॥
तुम्ह तउ भरत मोर मत एहू ❀ धरे देह जनु रामसनेहू ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी यह बड़ाई कुछ अधिक नहीं है; क्योंकि वे दीन भक्तोंके कुटुम्बोंके पालनेवाले हैं। हे भरत, मेरा मत यही है कि तुमने तो मानों श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमकी देह ही धारण की है।

दो०—तुम कहँ भरत कलंक यह ❀ हम सब कहँ उपदेसु।
राम-भगति-रस-सिद्धि-हित ❀ भा यह समउ गनेसु ॥२०९॥

हे भरत, तुम्हारे लिये यह कलंक और हमलोगोंके लिये उपदेश है। श्रीरामचन्द्रजीके भक्ति-रसकी सिद्धिके लिये यह समय श्रीगणेश हो गया।

नवबिधु बिमल तात जसु तोरा ❀ रघुबर किंकर कुमुद चकोरा ॥
उदित सदा अथइहि कबहूं ना ❀ घटिहि न जग नभ दिन दिन दूना ॥

हे तात, तुम्हारा यश नवीन चन्द्रमाकी भांति निर्मल है, जिसके चकोर और कुमुद हैं श्रीरामचन्द्रजीके सेवक। यह चन्द्रमा सदैव उदय ही रहेगा, कभी अस्त नहीं होगा। संसाररूपी आकाशमें यह घटेगा नहीं, दिन-दिन दूना होगा।

कोक तिलोक प्रीति अति करही ❀ प्रभुप्रतापु रबि छबिहि न हरिही ॥
निसि दिन सुखद सदा सब काहू ❀ ग्रसिहि न कैकइकरतब राहू ॥

तीनों लोक-रूपी चकवा इससे बड़ा प्रेम करेगा और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप-सूर्य इसकी शोभाका हरण नहीं करेगा। रात और दिन, दोनोंमें ही यह सबको सदैव सुख देनेवाला होगा और कैकेयीका करतूतरूपी राहु इसको ग्रस न सकेगा।

पूरन रामु-सु-प्रेम-पियूषा ❀ गुरुअवमान दोख नहिं दूषा ॥
रामभगत अब अमिय अघाहू ❀ कीन्हिहु सुलभ सुधा बसुधाहू ॥

यह चन्द्रमा श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर प्रेमरूपी अमृतसे पूर्ण है और गुरुके अपमान-दोषसे दूषित नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीके भक्त अब इसके अमृतसे तृप्त हों, क्योंकि तुमने यह अमृत पृथिवीपर भी सुलभ कर दिया।

भूप भगीरथ सुरसरि आनी ❀ सुमिरत सकल-सु-मंगल-खानी ॥
दसरथ-गुन-गन बरनि न जाहीं ❀ अधिक कहा जेहि सम जग नाहीं ॥

राजा भगीरथ गङ्गाजीको लाये थे, जिन्हें स्मरण करना सब शुभ मङ्गलोंकी खान है। राजा दशरथके गुणोंका वर्णन करते नहीं बनता। अधिक क्या, जिनके समान संसारमें कोई नहीं है।

दो०—जासु सनेह-सकोच-बस ❀ राम प्रगट भये आइ।
जे हर-हिय-नयननि कबहुं ❀ निरखे नहीं अघाइ ॥ २१० ॥

जिनके स्नेह और संकोचके वशमें होकर वही श्रीरामचन्द्रजी आकर प्रकट हुए, जिन्हें अपने हृदयके नेत्रोंसे देखते-देखते शिवजी कभी तृप्त नहीं होते।

कीरति बिधु तुम्ह कीन्ह अनूपा ❀ जहं बस रामु प्रेम-मृग-रूपा ॥
तात गलानि करहु जिय जाये ❀ डरहु दरिद्रहि पारस पाये ॥

तुमने अपना सुयशरूपी चन्द्रमा अनुपम बनाया, जहां श्रीरामचन्द्रजीका प्रेमरूपी मृग बसता है। हे तात, तुम अपने हृदयमें व्यर्थ ही ग्लानि करते हो, पारस पत्थर पाकर दरिद्रतासे डरते हो ?

सुनहु भरत हम झूठ न कहहीं ❀ उदासीन तापस बन रहहीं ॥
सब साधनु कर सुफलु सुहावा ❀ लषनु राम-सिय - दरसनु पावा ॥

हे भरत, सुनो, हम असत्य नहीं कहते, हम उदासीन हैं, तपस्वी हैं और वनमें रहते हैं। सब साधनोंका उत्तम फल यही है कि हमने लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके दर्शन पा लिये।

तेहि फल कर फलु दरसु तुम्हारा ❀ सहित प्रयाग सुभाग हमारा ॥
भरत धन्य तुम्ह जगु जसु जयऊ ❀ कहि अस प्रेम मगन मुनि भयऊ ॥

उस फलका भी फल तुम्हारा दर्शन है। प्रयाग-समेत हमारा सौभाग्य है। हे भरत, तुम धन्य हो! तुमने संसारमें यश जीत लिया। ऐसा कहकर मुनि प्रेममें मग्न हो गये।

सुनि मुनिबचन सभासद हरषे ❀ साधु सराहि सुमन सुर बरषे ॥
धन्य धन्य धुनि गगन प्रयागा ❀ सुनि सुनि भरतु मगन अनुरागा ॥

मुनिके वचन सुनकर सभासद् प्रसन्न हुए और देवताओंने 'साधु', 'साधु' कह प्रशंसा करके फूल बरसाये। प्रयागराज धन्य हैं, ऐसी आकाशवाणी बार-बार सुनकर भरतजी प्रेममें मग्न हो गये।

दो०—पुलकगात हिय रामु सिय ❀ सजल सरोरुह नयन।
करि प्रनामु मुनिमंडलिहिं ❀ बोले गदगद बयन ॥ २११ ॥

उनका शरीर पुलकायमान हो गया, हृदयमें सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान बँध गया और कमल नेत्रोंमें जल भर आया। मुनियोंकी मण्डलीको प्रणाम करके वे गद्गद् कण्ठसे ये वचन बोले—

मुनिसमाजु अरु तीरथराजू ❀ साँचिहु सपथ अघाइ अकाजू ॥
एहि थल जौं किछु कहिय बनाई ❀ एहि सम अधिक न अघ अधमाई ॥

पहले तो मुनियोंका यह समाज और फिर तीर्थराज! यहां सच्ची सौगंद खानेसे भी व्यर्थ पाप लगता है। इस स्थानपर यदि कोई कुछ बनाकर कहे तो इसके बराबर अधिक पाप और नीचता दूसरी नहीं।

तुम्ह सर्बग्य कहउँ सतिभाऊ ❀ उर - अंतर - जामी रघुराऊ ॥
मोहि न मातुकरतब कर सोचू ❀ नहिं दुख जिय जग जानहि पोचू ॥

मैं सच्चे भावसे कहता हूं, आप सर्वज्ञ हैं और श्रीरामचन्द्रजी हृदयके भीतरकी बात जाननेवाले हैं, मुझे माताकी करतूतका सोच नहीं है और न हृदयमें इसी बातका दुःख है कि संसार मुझे नीच समझेगा।

नाहिं न डरु बिगरहि परलोकू ❀ पितहु मरन कर मोहि न सोकू ॥
सुकृत सुजसु भरि भुवन सुहाये ❀ लछिमन - राम - सरिस सुत पाये ॥

परलोक बिगड़ जानेका डर भी नहीं है, और न मुझे पिताके मरनेका ही शोक है। उनका पुण्य और सुयश तो संसारमें छा रहा है कि उन्होंने लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजीके समान पुत्र पाये —

रामबिरह तजि तन छनभंगू ❀ भूप सोच कर कवन प्रसंगू ॥
राम - लषन-सिय बिनु पग पनहीं ❀ करि मुनिबेष फिरहिं बन बनहीं ॥

और फिर श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें यह क्षणभंगुर शरीर छोड़ दिया। उनके लिये सोच करनेकी तो कोई बात ही नहीं है! श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी बिना जूता पहिने, मुनिका भेष बनाकर, वन-वनमें घूम रहे हैं।

दो०—अजिन बसन फल असन महि ❀ सयन डासि कुस पात।
बसि तरुतर नित सहत हिम ❀ आतप बरषा बात ॥२१२॥

मृगछालाके कपड़े पहनते हैं, फलाहार करते हैं, कुश और पत्ते बिछाकर पृथिवीपर शयन करते हैं और पेड़के नीचे रहकर नित्य शीत, गर्मी, वर्षा और वायु सहते हैं।

एहि दुख दाह दहइ दिन छाती ❀ भूख न बासर नींद न राती ॥
एहि कुरोग कर औषधु नाहीं ❀ सोधेउँ सकल बिस्व मन माहीं ॥

इसी दुःखकी जलनसे मेरी छाती दिनभर जलती है, दिनमें भूख नहीं लगती और न रातमें नींद ही आती है। इस भयंकर रोगकी ओषधि नहीं है, मैं ने अपने मनमें सारा संसार ढूंढ़ लिया है।

मातु कुमत बढ़ई अघमूला ❀ तेहि हमार हित कीन्ह बसूला ॥
कलि कुकाठ कर कीन्ह कुजंत्रू ❀ गाड़ि अवध पढ़ि कठिन कुमंत्रू ॥

पापोंकी जड़ माताकी दुष्ट बुद्धि बढ़ई है। उसीने हमारे हितको अपना बसूला बनाया और पापरूपी बुरे काठको बनाया कुयंत्र, जिसे कठिन कुमंत्र पढ़कर अयोध्यामें गाड़ दिया।

मोहि लगि यह कुठाटु तेहि ठाटा ❀ घालेसि सबु जगु बारह बाटा ॥
मिटइ कुजोगु राम फिरि आये ❀ बसइ अवध नहिं आन उपाये ॥

उसीने मेरे लिये यह सब बुरा ठाठ रचा और सबका नाश कर संसारको बारहबाट कर दिया। श्रीरामचन्द्रजीके लौट आनेसे यह कुयोग मिट जायगा, और किसी दूसरे उपायसे अयोध्या न बसेगी।

भरत बचन सुनि मुनि सुख पाई ❀ सबहिं कीन्हि बहु भांति बड़ाई ॥
तात करहु जनि सोचु बिसेखी ❀ सब दुखु मिटिहि रामपग देखी ॥

भरतजीके वचन सुनकर मुनिने सुख पाया और सभीने बहुत तरहसे भरतजीकी बड़ाई की। उन्होंने कहा, हे तात, अधिक शोक मत करो। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके दर्शनसे सब दुःख मिट जायंगे।

दो०—करि प्रबोधु मुनिबर कहेउ ❀ अतिथि प्रेमप्रिय होहु।
कंद मूल फल फूल हम ❀ देहिं लेहु करि छोहु ॥२१३॥

मुनिवरने समझाकर कहा कि अब तुम हमारे प्रेमप्यारे अतिथि हो, जाओ और जो कंद-मूल, फल-फूल हम देवें उन्हें कृपाकर ग्रहण करो।

सुनि मुनि बचन भरत हिय सोचू ❀ भयउ कुअवसरु कठिन संकोचू ॥
जानि गरुइ गुरुगिरा बहोरी ❀ चरन बंदि बोले कर जोरी ॥

मुनिके वचन सुनकर भरतजीके हृदयमें सोच हुआ कि यह कठोर अवसर बुरा आ गया। उन्हें बहुत संकोच हुआ। फिर गुरुजीकी वाणीको महत्वपूर्ण समझकर भरतजी उनके चरणोंकी वंदना कर हाथ जोड़कर बोले।

सिर धरि आयसु करिय तुम्हारा ❀ परम धरम यहु नाथ हमारा ॥
भरतबचन मुनिबर मन भाये ❀ सुचि सेवक सिष निकट बोलाये ॥

हे नाथ, शिरपर रखकर हम आपकी आज्ञाका पालन करेंगे, क्योंकि हमारा यही परम धर्म है। मुनिवरको मनमें भरतजीके वचन बहुत प्यारे लगे। फिर मुनिने अपने पवित्र सेवकों और शिष्योंको अपने पास बुलाया।

चाहिय कीन्हि भरतपहुनाई ❀ कंद मूल फल आनहु जाई ॥
भलेहि नाथ कहि तिन्ह सिरु नाये ❀ प्रमुदित निज निज काज सिधाये ॥

मुनिने कहा कि भरतजीका आतिथ्य करना चाहिये, इसलिये जाकर कन्द, मूल और फल ले आओ। "बहुत अच्छा, स्वामिन्"—यह कहकर उन सबने शिर नवाये और आनन्दित होकर अपना-अपना काम करनेके लिये चले गये।

मुनिहि सोचु पाहुन बड़ नेवता ❀ तसि पूजा चाहिय जस देवता ॥
सुनि रिधिसिधि अनिमादिक आई ❀ आयसु होइ सो करहिं गोसाई ॥

मुनिको इस बातका बड़ा सोच हुआ कि बड़े भारी मेहमानको न्योता दिया है। जैसा देवता हो उसकी पूजा भी वैसी ही होनी चाहिये। यह सुनकर सब ऋद्धियां और अणिमादिक सिद्धियां वहां आयीं और कहने लगीं कि हे स्वामिन्, जो आज्ञा हो वह हम करें।

दो०—रामबिरह ब्याकुल भरतु ❀ सानुज सहित समाज।
पहुनाई करि हरहु स्रमु ❀ कहा मुदित मुनिराज ॥२१४॥

मुनिराज भरद्वाजने प्रसन्न होकर कहा कि छोटे भाई शत्रुघ्न और सब समाज-समेत भरतजी श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें व्याकुल हो रहे हैं। इन सबकी मेहमानी करके थकावट दूर कर दो।

रिधि सिधि सिर धरि मुनि-बर-बानी ❀ बड़ भागिनि आपुहि अनुमानी ॥
कहहिं परसपर सिधिसमुदाई ❀ अतुलित अतिथि राम-लघु-भाई ॥

मुनिकी सुन्दर वाणीको शिरपर रखकर ऋद्धियों और सिद्धियोंने अपनेको वड़भागिनी समझा। सब सिद्धियां परस्पर कहने लगीं कि श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई अद्वितीय अतिथि हैं।

मुनिपद बंदि करिय सोइ आजू ❀ होइ सुखी सब राजसमाजू ॥
अस कहि रचे रुचिर गृह नाना ❀ जेहि बिलोकि बिलखाहिं बिमाना ॥

मुनिके चरणोंकी वन्दना कर आज वही कार्य करना चाहिये, जिससे यह सब राज-समाज सुखी हो। ऐसा कहकर उन्होंने वहुतसे सुन्दर घर बनाये, जिन्हें देखकर विमान भी लजा जावें।

भोग बिभूति भूरि भरि राखे ❀ देखत जिन्हहिं अमर अभिलाखे ॥
दासी दास साजु सब लीन्हे ❀ जोगवत रहहिं मनहिं मनु दीन्हे ॥

उन घरोंमें भोगनेके लिये बहुतसी विभूतियां भर रखीं, जिन्हें देखते ही देवता भी ललचा जायं। सब, सामग्री लिये हुए दास और दासियां मन लगाये हुए उनकी रुचिको पूरा करनेके लिये तैयार थीं।

सबु समाजु सजि सिधि पल माहीं ❀ जे सुख सुरपुर सपनेहुं नाहीं ॥
प्रथमहिं बास दिये सब केही ❀ सुंदर सुखद जथारुचि जेही ॥

सिद्धियोंने पलभरमें वह सब समान सजा दिया। देवलोकमें जो सुख स्वप्नमें भी नहीं होते वे वहां थे। पहिले तो सबको, जिसकी जैसी रुचि थी, उसके अनुसार ठहरनेको सुन्दर-सुखदाई स्थान दिये।

दो०—बहुरि सपरिजन भरत कहुं ❀ रिषि अस आयसु दीन्ह।
बिधि-बिसमय-दायकबिभव ❀ मुनिबर तपबल कीन्ह ॥२१५॥

फिर कुटुम्बियों समेत भरतजीको ऋषिने ठहरनेकी आज्ञा दी। मुनिवरने वहां अपनी तपस्याके वलसे ब्रह्माको भी विस्मयमें डाल देनेवाला ऐश्वर्य फैला दिया।

मुनिप्रभाउ जब भरत बिलोका ❀ सब लघु लगे लोकपति लोका ॥
सुख समाजु नहिं जाइ बखानी ❀ देखत बिरति बिसारहिं ग्यानी ॥

भरतजीने जब मुनिका प्रभाव देखा तब उन्हें लोकपति और लोक—सब छोटे मालूम हुए। उस सुख-सामग्रीका वर्णन नहीं किया जाता। उसे देखते ही ज्ञानी भी वैराग्य भुला देवें।

आसन सयन सुबसन बिताना ❀ बन बाटिका बिहंग मृग नाना ॥
सुरभि फूल फल अमियसमाना ❀ बिमल जलासय बिबिध बिधाना ॥

आसन, शय्या, सुन्दर वस्त्र, चांदनियां, वन, वाटिका, पक्षी और तरह-तरहके हिरन, सुगंधित फूल, अमृतके समान फल, अनेक प्रकारके निर्मल जलाशय—सब वहां थे।

असन पान सुचि अमित अमी से ❀ देखि लोग सकुचात जमी से ॥
सुरसुरभी सुरतरु सबही के ❀ लखि अभिलाष सुरेस सची के ॥

अमृतके समान खाने-पीनेकी पवित्र और असीम सामग्रीको देखकर लोग संयमीकी भांति सकुचाये। सबके वासस्थानोंमें कामधेनु और कल्पवृक्ष थे, जिन्हें देखकर इन्द्र और इन्द्राणीके जी भी ललचाते थे।

रितु बसंत बह त्रिबिध बयारी ❀ सब कहं सुलभ पदारथ चारी ॥
स्रक चंदन बनितादिक भोगा ❀ देखि हरष बिसमयबस लोगा ॥

वसंत ऋतु हो गयी और शीतल, मन्द, सुगन्धित—तीनों प्रकारकी वायु बहने लगी और सबको चारों पदार्थ सहज हो गये। मालाएं, चंदन, स्त्रियां आदि भोग्य वस्तुएं देखकर सब लोग आनन्द और आश्चर्यके वशमें हो गये।

दो०—संपति चकई भरतु चक ❀ मुनिआयसु खेलवार।
तेहि निसि आस्रमपींजरा ❀ राखे भा भिनुसार ॥२१६॥

खेल करनेवालेके समान मुनिकी आज्ञाने सम्पत्तिरूपी चकई और भरतरूपी चकवेको उस रात आश्रमरूपी पिंजड़ेमें रखा और उसमें रहते हुए ही सवेरा हो गया।

(प्रयागसे प्रयाण)

कीन्ह निमज्जन तीरथराजा ❀ नाइ मुनिहिं सिरु सहित समाजा ॥
रिषि आयसु असीस सिर राखी ❀ करि दंडवत बिनय बहु भाखी ॥

भरतजीने तीर्थराजमें स्नान किया और फिर समाज-समेत मुनिको शिर नवाया। उन्होंने ऋषिकी आज्ञा और आशीर्वादको शिरोधार्य किया और दण्डवत् करके बहुत विनती की।

पथ-गति-कुसल साथ सब लीन्हे ❀ चले चित्रकूटहि चितु दीन्हे ॥
रामसखा कर दीन्हे लागू ❀ चलत देह धरि जनु अनुरागू ॥

चित्रकूटमें मन लगाये हुए सब लोग रास्ता जाननेवाले चतुर लोगोंको साथमें लेकर चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादके हाथका सहारा लिये हुए भरतजी जा रहे हैं; मानों देह धारण किये हुए प्रेम हो।

नहिं पदत्रान सीस नहिं छाया ❀ प्रेमु नेमु ब्रत धरमु अमाया ॥
लषन - राम - सिय - पंथ - कहानी ❀ पूछत सखहि कहत मृदुबानी ॥

भरतजीके पैरोंमें जूते नहीं हैं और न शिरपर छाया (छत्र) ही है। उनका प्रेम, नियम, व्रत और धर्म—सब मायाशून्य हैं। लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके मार्गकी कहानियां वे मित्र निषादसे पूछते हैं और वह कोमल वाणीसे कहता जाता है।

राम - बास - थल - बिटप बिलोके ❀ उर अनुराग रहत नहिं रोके ॥
देखि दसा सुर बरिसहिं फूला ❀ भइ मृदु महि मगु मंगलमूला ॥

श्रीरामचन्द्रजीके ठहरनेके स्थानोंके वृक्ष देखकर हृदयमें प्रेम रोके नहीं रुकता। दशा देखकर देवता फूल बरसाते हैं, इससे पृथिवी कोमल हो जानेसे मार्ग मंगलका मूल हो गया।

दो०—किये जाहिं छाया जलद ❀ सुखद बहइ बरबात।
तस मगु भयउ न राम कहँ ❀ जस भा भरतहिं जात ॥२१७॥

बादल छाया किये जा रहे हैं, सुख देनेवाली सुन्दर वायु बह रही है। चित्रकूटको जाते हुए भरतजीको मार्ग जैसा सुखदायी हुआ वैसा श्रीरामचन्द्रजीको भी नहीं हुआ था।

जड़ चेतन मग जीव घनेरे ❀ जे चितये प्रभु जिन्ह प्रभु हेरे ॥
ते सब भये परम - पद - जोगू ❀ भरतदरस मेटा भवरोगू ॥

मार्गके जड़ और चेतन—दोनों ही प्रकारके वे सब बहुतसे जीव, जिन्होंने श्रीरामचन्द्रजीको देख लिया अथवा जिन्हें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने देखा, परमपद पाने योग्य हो गये। भरतजीके दर्शनसे उनका संसार-रोग मिट गया।

यह बड़ि बात भरत कइ नाहीं ❀ सुमिरत जिनहिं राम मन माहीं ॥
बारेक राम कहत जग जेऊ ❀ होत तरन तारन नर तेऊ ॥

भरतजीके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है, जिन्हें श्रीरामचन्द्रजी मनमें स्मरण करते हैं। संसारमें जो मनुष्य एक बार भी 'राम' कहते हैं वे स्वयं भी तर जाते हैं और दूसरोंके तारनेवाले भी हो जाते हैं।

भरतु राम प्रिय पुनि लघुभ्राता ❀ कस न होइ मगु मंगलदाता ॥
सिद्ध साधु मुनिबर अस कहहीं ❀ भरतहिं निरखि हरषु हिय लहहीं ॥

भरतजी श्रीरामचन्द्रजीको प्यारे हैं, फिर उनके छोटे भाई हैं, उन्हें मार्ग मंगल देनेवाला क्यों न होवे? सिद्ध, साधु और श्रेष्ठ मुनि—सब ऐसा कहते हैं और भरतजीको देखकर हृदयमें आनन्द पाते हैं।

देखि प्रभाउ सुरेसहि सोचू ❀ जग भल भलेहि पोच कहं पोचू ॥
गुरु सन कहेउ करिय प्रभु सोई ❀ रामहिं भरतहि भेंट न होई ॥

भरतजीका प्रभाव देखकर इन्द्रको सोच हुआ। संसार भलेको भला और बुरेको बुरा है। इन्द्रने अपने गुरुसे कहा कि हे प्रभो, वही कीजिये, जिसमें श्रीरामचन्द्रजीसे भरतजीको भेंट न होवे।

दो०—राम सकोची प्रेमबस ❀ भरतु सुप्रेम पयोधि।
बनी बात बिगरन चहति ❀ करिय जतनु छलु सोधि॥२१८॥

प्रेमके वश होकर श्रीरामचन्द्रजी संकोच कर जानेवाले हैं और भरतजी श्रेष्ठ प्रेमके समुद्र हैं। बनी हुई बात बिगड़ना चाहती है। कोई छल सोचकर उपाय कीजिये।

बचन सुनत सुरगुरु मुसुकाने ❀ सहसनयनु बिनु लोचन जाने ॥
कह गुरु बादि छोभु छलु छाड़ू ❀ इहां कपट कर होइय भांड़ू ॥

वचन सुनते ही देवगुरु बृहस्पति मुस्कुराने लगे और उन्होंने यह समझ लिया कि हजार नेत्र रखनेपर भी इन्द्र नेत्रहीन ही हैं। गुरुने कहा कि तुम्हारा क्षोभ व्यर्थ है। तुम छल छोड़ दो। यहां छलका भेद खुल जायगा।

माया-पति-सेवक सन माया ❀ करइ त उलटि परइ सुरराया ॥
तब किछु कीन्ह रामरुख जानी ❀ अब कुचालि करि होइहि हानी ॥

हे देवराज, माया-पतिके सेवकके साथ यदि माया की जायगी तो वह उलटी हो पड़ेगी। श्रीरामचन्द्रजीका रुख जानकर उस समय कुछ किया था, परन्तु अब कोई कुचाल करनेसे हानि ही होगी।

सुनु सुरेस रघु-नाथ-सुभाऊ ❀ निज अपराध रिसाहिं न काऊ ॥
जो अपराधु भगत कर करई ❀ राम - रोष - पावक सो जरई ॥

हे देवराज इन्द्र, श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव सुनो। अपने साथ अपराध करनेपर वे किसीपर भी क्रोधित नहीं होते; परन्तु उनके भक्तके साथ जो कोई अपराध करता है वह श्रीरामचन्द्रजीके क्रोधकी अग्निमें जल जाता है।

लोकहु बेद बिदित इतिहासा ❀ यह महिमा जानहिं दुरबासा ॥
भरतसरिस को रामसनेही ❀ जगु जप राम राम जप जेही ॥

लोक और वेद—दोनोंमें ही इसकी कथा प्रसिद्ध है। इस महिमाको दुर्वासा ऋषि जानते हैं। भरतजीके समान श्रीरामचन्द्रजीका प्रेमी और कौन है? संसार श्रीरामचन्द्रजीको जपता है और श्रीरामचन्द्रजी भरतजीको जपते हैं।

दो०—मनहुँ न आनिय अमरपति ❀ रघुबर - भगत - अकाजु।
अजसु लोक परलोक दुख ❀ दिन दिन सोकसमाजु ॥२१९॥

हे देवताओंके स्वामी, श्रीरामचन्द्रजीके भक्तका अनिष्ट मनमें भी मत लाओ। इससे लोकमें अपयश और परलोकमें दुःख होता है, और दिन-दिन शोकका समूह बढ़ता है।

सुनु सुरेसु उपदेसु हमारा ❀ रामहिं सेवक परमपियारा ॥
मानत सुख सेवकसेवकाई ❀ सेवकबैर बैरु अधिकाई ॥

हे इन्द्र, हमारा उपदेश सुनो। श्रीरामचन्द्रजीको सेवक बहुत प्यारा होता है। सेवककी सेवा करनेपर वे स्वयं सुख मानते हैं और सेवकसे वैर करनेपर अधिक वैर!

जद्यपि सम नहिं राग न रोषू ❀ गहहिं न पाप पुन्य गुन दोषू ॥
करम प्रधान बिस्व करि राखा ❀ जो जस करइ सो तस फल चाखा ॥

यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी समदर्शी हैं, उन्हें न प्रेम है न क्रोध; वे पाप और पुण्य, गुण और दोष, ग्रहण नहीं करते, संसारको उन्होंने कर्म प्रधान कर रखा है; जो जैसा करेगा उसे वैसा ही फल भी चखनेके लिये मिलेगा—

तदपि करहिं सम-बिषम-बिहारा ❀ भगत अभगत हृदय अनुसारा ॥
अगुन अलेप अमान एक रस ❀ रामु सगुन भये भगत-प्रेम-बस ॥

तथापि भक्त और अभक्तके हृदयके अनुसार सम और विषम भावसे वे विहार करते हैं। श्रीरामचन्द्रजी यद्यपि निर्गुण, अनुमानसे परे, अभिमानशून्य और एकरस हैं तथापि भक्तके प्रेमके वशमें होकर उन्होंने सगुणरूप धारण किया है।

राम सदा सेवकरुचि राखी ❀ बेद-पुरान - साधु - सुर - साखी ॥
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई ❀ करहु भरत-पद-प्रीति सुहाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने सर्वदा अपने सेवककी रुचिको पूरा किया है। इसके साक्षी वेद, पुराण, साधुजन और देवता हैं। ऐसा हृदयमें जानकर दुष्टता छोड़ो और भरतजीके चरणोंमें सुहावना प्रेम करो।

दो०—रामभगत परहितनिरत ❀ परदुख दुखी दयाल।
भगतसिरोमनि भरत तें ❀ जनि डरपहु सुरपाल ॥२२०॥

हे देवताओंकी रक्षा करनेवाले इन्द्र, भक्त-शिरोमणि भरतसे तुम मत डरो, क्योंकि वे श्रीरामचन्द्रजीके भक्त, परोपकार-लग्न, दूसरोंके दुःखसे दुःखी होनेवाले और दयालु हैं।

सत्यसंध प्रभु सुर - हित - कारी ❀ भरत राम-आयसु - अनुसारी ॥
स्वारथबिबस बिकल तुम्ह होहू ❀ भरतदोसु नहिं राउर मोहू ॥

देवताओंका हित करनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजी सत्यप्रतिज्ञ हैं और भरतजी श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाके अनुसार चलनेवाले हैं। स्वार्थके वशमें होकर तुम व्याकुल होते हो, परन्तु इसमें भरतजीका दोष नहीं, तुम्हारा ही मोह है।

सुनि सुरबर सुर-गुरु-बर बानी ❀ भा प्रमोदु मन मिटी गलानी॥
बरषि प्रसून हरषि सुरराऊ ❀ लगे सराहन भरतसुभाऊ॥

देवगुरु बृहस्पतिकी श्रेष्ठ वाणी सुनकर देवश्रेष्ठ इन्द्रको आनन्द हुआ, उनके मनकी ग्लानि मिट गयी। फूल बरसाकर देवराज प्रसन्नतापूर्वक भरतजीके स्वभावकी प्रशंसा करने लगे।

एहि बिधि भरत चले मग जाहीं ❀ दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं॥
जबहिं रामु कहि लेहिं उसासा ❀ उमगत प्रेम मनहुँ चहुँ पासा॥

इस प्रकार भरतजी मार्गमें चले जा रहे हैं। उनकी दशा देखकर मुनि और सिद्धजन प्रशंसा कर रहे हैं। 'हे राम' कहकर जिस समय भरतजी लम्बी सांस लेते हैं उस समय मानों चारों ओरसे प्रेम उमड़ने लगता है।

द्रवहिं बचन सुनि कुलिस पषाना ❀ पुरजन प्रेम न जाइ बखाना॥
बीच बास करि जमुनहिं आये ❀ निरखि नीरु लोचन जल छाये॥

उनके वचनोंको सुनकर वज्र और पत्थर भी पिघल जाते हैं। अयोध्यावासियोंके प्रेमका वर्णन नहीं किया जाता। बीचमें ठहरकर जब सब यमुनाजीपर पहुंचे तब जल देखकर उनके नेत्रोंमें आंसू आ गये।

दो०—रघु-बर-बरन बिलोकि बर ❀ बारि समेत समाज।
होत मगन बारिधि बिरह ❀ चढ़े बिबेक जहाज॥२२१॥

रघुश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीके वर्णवाला यमुनाजीका श्रेष्ठ जल देखकर सब समाजसमेत भरतजी श्रीरामचन्द्रजीके वियोग-समुद्रमें डूबने लगे, पर विवेकरूपी जहाजपर चढ़ लिये।

जमुनतीर तेहि दिन करि बासू ❀ भयउ समयसम सबहिं सुपासू॥
रातिहिं घाट घाट की तरनी ❀ आईं अगनित जाहिं न बरनी॥

उस दिन यमुनाजीके किनारे सबने वास किया। वहां सबको समयानुसार सुभीता रहा। रातमें ही बहुतसे घाटोंकी असंख्य नौकाएं वहां आ गयीं, जिनका वर्णन नहीं किया जाता।

प्रात पार भये एकहि खेवा ❀ तोषे रामसखा की सेवा॥
चले नहाइ नदिहि सिरु नाई ❀ साथ निषादनाथ दोउ भाई॥

सवेरे सब लोग एकही खेवेमें पार उतर गये। श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादकी सेवासे सब सन्तुष्ट हुए। फिर स्नान करके निषादोंके राजा गुहसमेत भरत-शत्रुघ्न, दोनों भाई यमुनाजीको शिर नवाकर चल दिये।

आगे मुनि-बर-बाहन आछे ❀ राजसमाजु जाइ सबु पाछे ॥
तेहि पाछे दोउ बंधु पयादे ❀ भूषन बसन बेष सुठि सादे ॥

आगे-आगे वशिष्ठादि मुनिवरोंकी बढ़िया सवारियां थीं और उनके पीछे सारा राजसमाज जा रहा था। उसके पीछे दोनों भाई सादे भूषण-वस्त्र पहिने मामूली भेषसे पैदल ही चल रहे थे।

सेवक सुहृद सचिवसुत साथा ❀ सुमिरत लषनु सीय रघुनाथा ॥
जहं जहं राम-बास-बिस्रामा ❀ तहं तहं करहिं सप्रेम प्रनामा ॥

सेवक, मित्र और मंत्रीके पुत्र उनके साथ थे और वे लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करते जाते थे। जहां-जहां श्रीरामचन्द्रजीके बसने और विश्राम करनेके स्थल मिलते वहां-वहां वे प्रेमपूर्वक प्रणाम करते थे।

दो०—मगबासी नरनारि सुनि ❀ धामकाम तजि धाइ।
देखि सरूप सनेह बस ❀ मुदित जनमफलु पाइ ॥२२२॥

मार्गमें बसनेवाले स्त्रीपुरुष सुनते ही अपना घर-बार और काम-काज छोड़ दौड़-दौड़कर आते और इनका स्वरूप देखकर जन्मफल पाते और स्नेहके वशमें होकर प्रसन्न हो जाते थे।

कहहिं सप्रेम एक एक पाहीं ❀ रामलखनु सखि होहिं कि नाहीं ॥
बय बपु बरन रूपु सोइ आली ❀ सीलु सनेहु सरिस सम चाली ॥

प्रेमके साथ सब स्त्रियां एक दूसरेसे कहने लगीं कि हे सखि, ये श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी हैं कि नहीं? हे सखि, इनकी आयु, शरीर, रंग, रूप—सब वही है, शील और स्नेह भी वैसा ही है और चाल भी उन्हींके समान है।

बेषु न सो सखि सीय न संगा ❀ आगे अनी चली चतुरंगा ॥
नहिं प्रसन्नमुख मानस खेदा ❀ सखि संदेहु होइ येहि भेदा ॥

परन्तु हे सखि, इनका भेष वैसा नहीं है और न इनके संगमें सीताजी ही हैं, उनके आगे चतुरंगिणी सेना जा रही है। इनके मुख प्रसन्न नहीं हैं, मन मलिन हैं। हे सखि, इसी भेदसे संदेह होता है।

तासु तरक तियगन मन मानी ❀ कहहिं सकल तोहि सम न सयानी ॥
तेहि सराहि बानी फुरि पूजी ❀ बोली मधुरबचन तिय दूजी ॥

उस स्त्रीके इस तर्कको स्त्रियोंने मनमें मान लिया और वे कहने लगीं कि तेरे समान चतुर कोई नहीं है। उस स्त्रीकी प्रशंसाकर उसकी यथार्थ बातका समर्थन करती हुई एक दूसरी स्त्री मीठे वचन बोली।

कहि सप्रेम सब कथाप्रसंगू ❀ जेहि बिधि राम - राज-रस भंगू ॥
भरतहि बहुरि सराहन लागी ❀ सीलु सनेहु सुभाय सुभागी ॥

जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके राज-तिलकका आनन्द-भंग हुआ वह सब कथा-प्रसंग इसने बड़े प्रेमके साथ कह सुनाया। फिर वह सौभाग्यवती भरतजीकी और उनके शील, स्नेह और स्वभावकी प्रशंसा करने लगी।

दो०—चलत पयादेंहि खात फल ❀ पिता दीन्ह तजि राजु।
जात मनावन रघुबरहिं ❀ भरतसरिस को आजु ॥२२३॥

पिताका दिया हुआ राज्य छोड़कर, फल खाते हुए, ये पैदल ही चल रहे हैं और श्रीरामचन्द्रजीको मनाने जा रहे हैं। भरतजीके समान आज दूसरा कौन है ?

भायप भगति भरत आचरनू ❀ कहत सुनत दुख - दूषन - हरनू ॥
जो किछु कहब थोर सखि सोई ❀ रामबंधु अस काहे न होई ॥

भरतजीका भाईपन, उनकी भक्ति और उनका आचरण कहने-सुननेसे दुःख और दोषोंको दूर कर देनेवाला है। हे सखि, जो कुछ भी कहें, वही थोड़ा है। श्रीरामचन्द्रजीके भाई होकर ये ऐसे क्यों न होवें ?

हम सब सानुज भरतहिं देखे ❀ भइन्हि धन्य जुबतीजन लेखे ॥
सुनि गुन देखि दसा पछिताहीं ❀ कैकेइ - जननि-जोग सुतु नाहीं ॥

छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत भरतको देखकर हम सब, स्त्रियोंकी गिनतीमें, धन्य हो गयीं। भरतजीके गुण सुनकर और उनकी दशा देखकर वे सब पछताने लगीं कि कैकेयी माताके योग्य यह पुत्र नहीं हैं।

कोउ कह दूषनु रानिहि नाहिंन ❀ बिधि सबु कीन्ह हमहिं जो दाहिन ॥
कहँ हम लोक - बेद - बिधि - हीनी ❀ लघुतिय कुल - करतूति - मलीनी ॥

कोई कहने लगी कि रानीका दोष नहीं है। सब कुछ ब्रह्माने किया है, जो हमारे अनुकूल है। कहां तो हम हैं जो लोक और वेद-विधिसे हीन हैं, जो तुच्छ नारियाँ हैं, जिनके कुलके आचरण भी मलिन हैं,

बसहिं कुदेस कुगांव कुबामा ❀ कहँ यह दरसु पुन्यपरिनामा ॥
अस अनंद अचरजु प्रतिग्रामा ❀ जनु मरुभूमि कलपतरु जामा ॥

जो कुदेश और खोटे गांवमें बसती हैं और जो खोटी स्त्रियां हैं; और कहां पुण्योंके फलस्वरूप यह दर्शन हैं। ऐसा आनन्द और आश्चर्य प्रत्येक गांवमें हुआ; मानों मरुस्थलमें कल्पवृक्ष उग आया हो।

दो०—भरतदरस देखत खुलेउ ❀ मग लोगन्ह कर भागु।
जनु सिंहलबासिन्ह भयउ ❀ बिधिबस सुलभ प्रयागु ॥२२४॥

भरतजीके दर्शन करते ही मार्गमें बसनेवाले लोगोंके भाग्य खुल गये; मानों दैववश सिंहल देशवासियोंके लिये प्रयाग सुलभ हो गया हो।

निज-गुन-सहित राम - गुन - गाथा ❀ सुनत जाहिं सुमिरत रघुनाथा ॥
तीरथ मुनिआस्रम सुरधामा ❀ निरखि निमज्जहिं करहिं प्रनामा ॥

अपने गुणोंसमेत श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा सुनते हुए भरतजी श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करते हुए जा रहे थे। मार्गमें जहां तीर्थ, ऋषियोंके आश्रम और देवताओंके मन्दिर देखते वहां स्नानपूर्वक प्रणाम करते थे।

मनहीं मन मांगहिं बरु एहू ❀ सीय - राम - पद - पदुम सनेहू ॥
मिलहिं किरात कोल बनबासी ❀ बैखानस बटु जती उदासी ॥

भरतजी मन-ही-मन यह वरदान मांगते थे कि सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें स्नेह होवे। किरात, कोल, वनवासी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, यती और उदासीन उन्हें मार्गमें मिलते थे।

करि प्रनामु पूछहिं जेहि तेही ❀ केहि बन लषनु रामु बैदेही ॥
ते प्रभुसमाचार सब कहहीं ❀ भरतहिं देखि जनमफलु लहहीं ॥

प्रणाम करके वे जिस-तिससे पूछते थे कि लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी किस वनमें हैं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके सब समाचार वे सुनाते और भरतजीके दर्शन कर अपने जीवनका फल पाते थे।

जे जन कहहिं कुसल हम देखे ❀ ते प्रिय राम - लषन - सम लेखे ॥
एहि बिधि बूझत सबहिं सुबानी ❀ सुनत राम बन - बास - कहानी ॥

जो लोग यह कहते कि हमने उन्हें कुशलपूर्वक देखा है, उन्हें भरतजी श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीके समान प्यारा समझते थे। सबको इसी प्रकार सुन्दर वाणीसे वे पूछते थे और श्रीरामचन्द्रजीके वनवासकी कहानी सुनते थे।

दो०—तेहि बासर बसि प्रातहीं ❀ चले सुमिरि रघुनाथ।
रामदरस की लालसा ❀ भरत सरिस सब साथ ॥२२५॥

उस दिन ठहरकर दूसरे दिन सवेरे ही भरतजी श्रीरामचन्द्रजीको स्मरणकर चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेकी अभिलाषा भरतजीके ही समान सब साथियोंको थी।

मंगल सगुन होहिं सब काहू ❀ फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू ॥
भरतहि सहित समाज उछाहू ❀ मिलिहहिं रामु मिटिहि दुखदाहू ॥

सब किसीको मंगलसूचक शकुन होने लगे और सुख देनेवाले शुभ नेत्र और भुजाएँ फड़कने लगीं। इससे सब समाजसमेत भरतजीको बड़ा उत्साह हुआ कि श्रीरामचन्द्रजी मिलेंगे और दुःखदाह मिट जायगा।

करत मनोरथ जस जिय जाके ❀ जाहिं सनेहसुरा सब छाके ॥
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहिं ❀ बिहवल बचन प्रेमरस बोलहिं ॥

जैसा जिसके जीमें था वह वैसा ही मनोरथ करता था। सब प्रेम-मदिरासे छके हुए जा रहे थे। अंग शिथिल था, मार्गमें पांव डगमँगाते थे और प्रेमके वशमें होनेसे विह्वल वचन बोलने लगते थे।

रामसखा तेहि समय देखावा ❀ सैलसिरोमनि सहज सुहावा ॥
जासु समीप सरित पय तीरा ❀ सीयसमेत बसहिं दोउ बीरा ॥

उसी समय श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादने स्वभावसे ही सुहावना पर्वतोंमें शिरोमणि चित्रकूट दिखलाया, जिसके पास मंदाकिनी नदीके किनारे श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी, दोनों वीर सीताजीसमेत, बसते हैं।

देखि करहिं सब दंडप्रनामा ❀ कहि जय जानकिजीवन रामा ॥
प्रेममगन अस राजसमाजू ❀ जनु फिरि अवध चले रघुराजू ॥

उसे देखकर सब 'जानकीजीवन श्रीरामचन्द्रजीकी जय' कहकर दण्डवत् प्रणाम करने लगे। वह राजसमाज प्रेममें ऐसा मग्न हो गया; मानों श्रीरामचन्द्रजी लौटकर अयोध्याको चल दिये हों।

दो०—भरत प्रेमु तेहि समय जस ❀ तस कहि सकइ न सेषु ॥
कबिहि अगम जिमि ब्रह्मसुखु ❀ अह-मम-मलिन - जनेषु ॥२२६॥

उस समय भरतजीको जैसा प्रेम हुआ उसे शेषनाग भी नहीं कह सकते, फिर कविके लिये तो वह अगम्य ही है, जैसे अहंकार और ममतासे मलिन लोगोंके लिये ब्रह्मानंद।

सकल सनेह सिथिल रघुबर के ❀ गये कोस दुइ दिनकर ढरके ॥
जलु थलु देखि बसे निसि बीते ❀ कीन्ह गवनु रघुनाथ पिरीते ॥

श्रीरामचन्द्रजीके प्रेममें सब शिथिल हो रहे थे। वे सब सूर्य अस्त हो जानेपर भी दो कोस चले गये। फिर जलका स्थान देखकर वे सब ठहरे और श्रीरामचन्द्रजीके उन प्रेमियोंने रात बीतनेपर प्रस्थान किया।

(लक्ष्मण-मोह)

उहां रामु रजनी अवसेखा ❀ जागे सीय सपन अस देखा ॥
सहित समाज भरत जनु आये ❀ नाथबियोग ताप तन ताये ॥

उधर रात रहते हुए ही श्रीरामचन्द्रजी जग गये। उस रातको सीताजीने यह स्वप्न देखा कि मानों स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके वियोगकी अग्निसे शरीर तपाये हुए भरतजी सब समाजसमेत आये हुए हों।

सकल मलिनमन दीन दुखारी ❀ देखी सासु आन अनुहारी ॥
सुनि सियसपन भरे जल लोचन ❀ भये सोचबस सोचबिमोचन ॥

सब मनमलिन और दीन-दुःखी हो रहे हैं। सीताजीने सासुओंको कुछ और ही रूपमें देखा। सीताजीका स्वप्न सुनकर श्रीरामचन्द्रजीके नेत्रोंमें आंसू आ गये। शोकको दूर कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी शोकके वशमें हो गये।

लषन सपन यह नीक न होई ❀ कठिन कुचाह सुनाइहि कोई ॥
अस कहि बंधुसमेत नहाने ❀ पूजि पुरारि साधु सनमाने ॥

वे कहने लगे—हे लक्ष्मण, यह स्वप्न अच्छा नहीं है। कठोर अनचाही बात कोई सुनायेगा। ऐसा कह भाई लक्ष्मणसमेत श्रीरामचन्द्रजीने स्नान किया और शिवजीकी पूजाकर साधुओंका सम्मान किया।

छंद—सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भये।
नभ धूरि खग मृग भूरि भागे बिकल प्रभु आस्रमु गये ॥
तुलसी उठे अवलोकि कारनु काह चित सचकित रहे।
सब समाचार किरात कोलन्हि आइ तेहि अवसर कहे ॥

देवताओं और मुनियोंका सम्मान करके श्रीरामचंद्रजी उनकी वंदना करके बैठ गये और उत्तर दिशाकी ओर देखने लगे। आकाशमें धूल छायी हुई थी, बहुतसे पक्षी और हिरन व्याकुल होकर भागे हुए प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके आश्रममें आ गये थे। तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजी यह देखकर उठे कि इसका कारण क्या है। उनका चित्त चकित हो गया। उसी समय कोल-भीलोंने आकर सब समाचार कह सुनाये।

सो०—सुनत सुमंगल बैन ❀ मन प्रमोद तन पुलक भर।
सरदसरोरुह नैन ❀ तुलसी भरे सनेह जल ॥२२७॥

शुभ मंगल-वचन सुनते ही तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीका मन आनन्दित हो गया, शरीर पुलकायमान हो गया और शरदऋतुके कमलके समान नेत्र प्रेम-जलसे भर गये।

बहुरि सोच बस भे सियरवनू ❀ कारन कवन भरतआगवनू ॥
एक आइ अस कहा बहोरी ❀ सेन संग चतुरंग न थोरी ॥

फिर सीतारमण श्रीरामचन्द्रजी सोचमें पड़ गये कि भरतजीका आना किस कारण हुआ! फिर किसी एकने आकर ऐसा कहा कि उनके संगमें चतुरंगिणी सेना भी बहुत है!

सो सुनि रामहिं भा अति सोचू ❀ इत पितुबच उत बंधुसंकोचू ॥
भरतसुभाउ समुझि मन माहीं ❀ प्रभु चितहित थिति पावत नाहीं ॥

यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजीको बड़ा सोच हुआ—इधर पिताका वचन और उधर भाईका संकोच। मन में भरतजीका स्वभाव समझकर प्रभु श्रीरामचन्द्रके चित्तमें कोई बात जमने नहीं पाती।

समाधान तब भा यह जाने ❀ भरतु कहे महुं साधु सयाने॥
लषन लखेउ प्रभु-हृदय-खभारू ❀ कहत समयसम नीतिविचारू॥

फिर यह जानकर समाधान हो गया कि भरतजी आज्ञाके वशवर्ती, साधु और चतुर हैं। लक्ष्मणजीने देखा कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके हृदयमें क्षोभ है, अतः वे समयानुसार नीतिपूर्ण विचार कहने लगे—

बिन पूछे कछु कहउं गोसाईं ❀ सेवकु समय न ढीठु ढिठाईं॥
तुम्ह सरबग्य सिरोमनि स्वामी ❀ आपनि समुझि कहउं अनुगामी॥

हे स्वामिन्, विना पूछे हुए कुछ कहता हूं। समयपर धृष्टता देनेवाला सेवक धृष्ट नहीं समझा जाता। हे स्वामिन्, आप सर्वज्ञ हैं, शिरोमणि हैं और मैं पीछे चलनेवाला सेवक हूं; अपनी समझसे कहता हूं।

दो०—नाथ सुहृद सुठि सरलचित ❀ सील - सनेह - निधान।
सब पर प्रीति प्रतीति जिय ❀ जानिय आपु समान॥२२८॥

हे नाथ, आप शुद्धहृदय, अत्यन्त सरलचित्त तथा शील और स्नेहके भाण्डार हैं। हृदयमें सबपर आपका प्रेम और विश्वास है, और सबको आप अपने ही समान जानते हैं।

बिषयी जीव पाइ प्रभुताई ❀ मूढ़ मोहबस होहिं जनाई॥
भरतु नीतिरत साधु सुजाना ❀ प्रभु-पद - प्रेमु सकलजगु जाना॥

परन्तु विषयी जीव प्रभुता पाकर जान-बूझकर मूर्ख और अज्ञानके वशमें हो जाते हैं। भरतजी नीतिमें तत्पर, साधु और चतुर हैं। सारा संसार जानता है कि उन्हें स्वामीके चरणोंमें प्रेम है।

तेऊ आज राजपदु पाई ❀ चले धरममरजाद मिटाई॥
कुटिल कुबंधु कुअवसरु ताकी ❀ जानि रामु बनबास एकाकी॥

वह भी आज राजपद पाकर धर्मकी मर्यादा तोड़कर चलने लगे। दुष्ट, खोटा भाई (भरत) बुरा अवसर ताककर, यह जानकर कि श्रीरामचन्द्रजी वनवासकी अवस्थामें अकेले हैं,

करि कुमंत्रु मन साजि समाजू ❀ आये करइ अकंटक राजू॥
कोटि प्रकार कलपि कुटिलाई ❀ आये दलु बटोरि दोउ भाई॥

और मनमें कुमंत्रणा करके सब समाज सजाकर अकंटक राज्य करनेके लिये आया है। करोड़ प्रकारकी दुष्टताओंकी कल्पना करके भरत और शत्रुघ्न—दोनों भाई सेना इकट्ठी करके आये हैं।

जौं जिय होति न कपट कुचाली ❀ केहि सोहाति रथ-बाजि-गजाली ॥
भरतहि दोषु देइ को जाये ❀ जग बौराइ राजपदु पाये ॥

यदि जीमें कपट और कुचाल न होती तो रथ, घोड़े हाथियोंकी पंक्ति किसे भाती ? भरतको व्यर्थ ही दोष कौन देवे ! राज-पद पाकर संसार बावला हो जाता है ।

दो०—ससि-गुरु-तिय-गामी नहुष ❀ चढ़ेउ भूमि - सुर - जान ।
लोकबेद तें बिमुख भा ❀ अधम न बेन समान ॥२२९॥

चंद्रमाने गुरुकी स्त्रीसे भोग किया, राजा नहुष ब्राह्मणोंकी पालकीपर चढ़े और राजा वेणु के समान लोक और वेदसे विमुख तथा नीच कोई दूसरा नहीं हुआ ।

सहसबाहु सुरनाथु त्रिसंकू ❀ केहि न राजपद दीन्ह कलंकू ॥
भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ ❀ रिपु रिन रंच न राखब काऊ ॥

सहस्रबाहु, इन्द्र और त्रिशंकु—किसको राज्यमदने कलंकित नहीं किया ? भरतने यह उपाय उचित ही किया, शत्रु और ऋणको कमी तनिक भी नहीं रखना चाहिये ।

एक कीन्हि नहिं भरत भलाई ❀ निदरे रामु जानि असहाई ॥
समुझि परिहि सोउ आजु बिसेखी ❀ समर सरोष राममुखु पेखी ॥

परन्तु भरतने एक काम अच्छा नहीं किया । असहाय जानकर श्रीरामचन्द्रजीका निरादर किया । यह भी आज संग्राममें श्रीरामचन्द्रजीका क्रोधपूर्ण मुख देखकर अच्छी तरह समझ पड़ेगा ।

एतना कहत नीतिरस भूला ❀ रन-रस-बिटपु पुलक मिस फूला ॥
प्रभुपद बंदि सीसरज राखी ❀ बोले सत्य सहज बलु भाखी ॥

इतना कहते-कहते लक्ष्मणजीको नीतिरस भूल गया और पुलकावलीके मिस युद्ध-रसके वृक्षमें फूल लगने लगे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी वंदना कर और उनकी रजको अपने शिरपर रखकर लक्ष्मणजी अपना सच्चा और स्वाभाविक बल बतलाते हुए बोले—

अनुचित नाथ न मानब मोरा ❀ भरत हमहिं उपचार न थोरा ॥
कहँ लगि सहिय रहिय मनु मारें ❀ नाथसाथ धनु हाथ हमारें ॥

हे नाथ, मेरा कहना अनुचित न मानियेगा । भरतने हमारे लिये थोड़ा उपाय नहीं किया है । कहांतक सहें और मन मारे रहें । हे स्वामिन्, आप हमारे साथ हैं और धनुष हमारे हाथमें है ।

दो०—छत्रिजाति रघु-कुल-जनमु ❀ रामअनुज जगु जान ।
लातहुँ मारें चढ़ति सिर ❀ नीच को धूरिसमान ॥२३०॥

मैं क्षत्रिय जातिका हूं, रघुवंशमें मेरा जन्म हुआ है और संसार जानता है कि मैं श्रीरामचन्द्रजीका छोटा भाई हूं। धूलके समान नीच और कौन है, परन्तु लात मारनेपर वह भी तो शिरपर चढ़ती है।

उठि कर जोरि रजायसु मांगा ❀ मनहुं वीररस सोवत जागा ॥
बांधि जटा सिर कसि कटि भाथा ❀ साजि सरासनु सायकु हाथा ॥

उठकर लक्ष्मणजीने हाथ जोड़कर आज्ञा मांगी; मानों वीर-रस सोतेसे जाग गया हो। शिरपर जटाएँ बांधकर और कटिसे तरकस कसकर उन्होंने हाथमें धनुषवाण ले लिया।

आजु रामसेवक जसु लेऊं ❀ भरतहिं समर सिखावन देऊं ॥
रामनिरादर कर फलु पाई ❀ सोवहु समरसेज दोउ भाई ॥

लक्ष्मणजी कहने लगे—आज मैं श्रीरामचन्द्रजीका सेवक होनेका यश लूंगा और संग्राममें भरतको सीख दूंगा कि तुमने श्रीरामचन्द्रजीका जो निरादर किया, उसका फल पाकर दोनों भाई रणशय्यापर सोओ।

आइ बना भल सकलसमाजू ❀ प्रगट करउं रिस पाछिल आजू ॥
जिमि करिनिकर दलइ मृगराजू ❀ लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥

सब समाज आनेसे अच्छा मौका लग गया। पिछला क्रोध मैं आज प्रकट करूंगा। जैसे सिंह हाथियोंके समूहका मर्दन करता है और जैसे बाज झपटकर लवा पक्षीको ले जाता है।

तैसेहि भरतहि सेनसमेता ❀ सानुज निदरि निपातउं खेता ॥
जौं सहाय कर संकरु आई ❀ तौ मारउं रन रामदोहाई ॥

वैसे ही सेना और छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत भरतका निरादर करके रणक्षेत्रमें मारूंगा। उनकी सहायता करनेके लिये यदि शिवजी आवें तोभी, हे रामचन्द्रजी, मुझे आपकी सौगंद है, मैं उन्हें मारूंगा।

दो०—अतिसरोष भाषे लषनु ❀ लखि सुनि सपथप्रवान।
सभय लोक सब लोकपति ❀ चाहत भभरि भगान ॥२३१॥

लक्ष्मणजी अत्यन्त क्रोधमें यह सब कह गये। उन्हें देखकर और उनकी बातें सुनकर तथा उनकी सौगंदको सत्य मानकर सब लोक भयभीत हो गये और लोकपति भरभराकर भाग जानेकी इच्छा करने लगे।

जगु भयमगन गगन भइ बानी ❀ लषन-बाहु- बलु बिपुल बखानी ॥
तात प्रतापप्रभाउ तुम्हारा ❀ को कहि सकइ को जाननिहारा ॥

संसारमें डर छा गया। उसी समय लक्ष्मणजीकी भुजाओंके भारी बलका वर्णन करती हुई आकाशवाणी हुई कि हे तात! तुम्हारा प्रताप और तुम्हारा प्रभाव जाननेवाला कौन है, और कौन कह सकता है?

अनुचित उचित काजु कछु होऊ ❀ समुझि करिय भल कह सबु कोऊ ॥
सहसा करि पाछें पछिताहीं ❀ कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं ॥

कुछ भी काम हो, उचित और अनुचित समझकर करना चाहिये, जिसमें सब कोई भला कहे। वेद बतलाते हैं कि जो पण्डितजन कोई काम सहसा करके फिर पीछे पछताते हैं, वे पण्डित नहीं हैं।

सुनि सुरबचन लषन सकुचाने ❀ राम सीय सादर सनमाने ॥
कही तात तुम्ह नीति सुहाई ❀ सबतें कठिन राजमदु भाई ॥

देववाणी सुनकर लक्ष्मणजी सकुचा गये। फिर श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीने आदरपूर्वक उनका सम्मान किया। श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे - हे भाई, तुमने बड़ी अच्छी नीति कही। हे तात, राजमद सबसे कठिन है।

जो अंचवत नृप मातहिं तेई ❀ नाहिं न साधु सभा जेहिं सेई ॥
सुनहु लषन भल भरतसरीसा ❀ बिधिप्रपंच महं सुना न दीसा ॥

आचमन करते ही, राजपद पाते ही, जो राजा मतवाले हो जाते हैं, वे वही होते हैं जिन्होंने साधुजनोंकी सभाका सेवन नहीं किया। हे लक्ष्मण! सुनो, विधाताकी सृष्टिमें भरतजीके समान भला कोई दूसरा न तो देखा है और न सुना है।

दो०—भरतहि होइ न राजमदु ❀ बिधि - हरि - हर - पद पाइ।
कबहुं कि कांजीसीकरनि ❀ छीरसिंधु बिनसाइ ॥२३२॥

ब्रह्मा, विष्णु और शिवका पद पाकर भी भरतजीको राजमद न होगा। कांजीकी बून्दोंसे क्षीरसमुद्र क्या कभी फट जाता है?

तिमिरु तरुन तरनिहि मकु गिलई ❀ गगनु मगन मकु मेघहि मिलई ॥
गोपद जल बूड़हिं घटजोनी ❀ सहज छमा बरु छाड़इ छोनी ॥

अंधकार चाहे तरुण सूर्यको निगल जावे, चाहे आकाश प्रसन्नतासे बादलमें मिल जावे, गायके खुरके गढ़ेमें भरे हुए जलमें चाहे कुम्भजऋषि डूब जावें, पृथिवी चाहे अपनी स्वाभाविक क्षमा छोड़ देवे—

मसकफूंक मकु मेरु उड़ाई ❀ होइ न नृपमद भरतहि भाई ॥
लषन तुम्हार सपथ पितुआना ❀ सुचि सुबंधु नहिं भरतसमाना ॥

और मच्छरकी फूंकसे चाहे मेरु पहाड़ उड़ जावे; परन्तु भाई, भरतजीको राजमद नहीं हो सकता। लक्ष्मण, मुझे तुम्हारी और पिताजीकी सौगन्द है, भरतजीके समान पवित्र और अच्छा भाई कहीं नहीं है।

सगुनषीरु अवगुनजलु ताता ❀ मिलइ रचइ परपंचु बिधाता ॥
भरत हंसु रबिबंसु तड़ागा ❀ जनमि कीन्ह गुनदोषु बिभागा ॥

हे तात, उत्तम गुणरूपी दूध और अवगुणरूपी जलको मिलाकर विधाता यह संसार रचता है। सूर्यवंशरूपी सरोवरमें भरतजी हंसके समान हैं, जिन्होंने जन्म लेकर गुण और दोषोंका विभाग किया है।

गहि गुन पय तजि अवगुन बारी ❀ निज जस जगत कीन्ह उंजियारी ॥
कहत भरतु-गुन-सीलु-सुभाऊ ❀ प्रेमपयोधि मगन रघुराऊ ॥

दूधरूपी गुणोंको ग्रहणकर और अवगुणरूपी जलको छोड़कर उन्होंने अपने यशसे संसारको उज्ज्वल कर दिया है। भरतजीका गुण, शील और स्वभाव कहते-कहते श्रीरामचन्द्रजी प्रेमरूपी समुद्रमें मग्न हो गये।

दो०—सुनि रघुबरबानी बिबुध ❀ देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सो ❀ प्रभु को कृपानिकेतु ॥२३३॥

श्रीरामचन्द्रजीकी श्रेष्ठ वाणी सुनकर और भरतजीपर उनका प्रेम देखकर सब देवता प्रशंसा करने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीके समान स्वामी और दयाका भाण्डार और कौन है?

जौं न होत जग जनम भरतको ❀ सकल-धरम-धुर धरनि धरत को ॥
कबि-कुल-अगम भरत-गुन-गाथा ❀ को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा ॥

संसारमें यदि भरतजीका जन्म न होता तो पृथिवीके सम्पूर्ण धर्मके भारको कौन धारण करता? भरतजीके गुणोंकी कहानी कविजनोंके लिए भी अगम्य है। हे रघुनाथजी, आपको छोड़कर उसे और कौन जानता है?

लखनु रामु सिय सुनि सुरबानी ❀ अतिसुखु लहेउ न जाइ बखानी ॥

देववाणी सुनकर लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीने बड़ा सुख पाया। उसका वर्णन नहीं किया जाता।

(भरतागमन)

इहाँ भरतु सब सहित सुहाये ❀ मंदाकिनी पुनीत नहाये ॥

इधर अपने सब सहायकोंसमेत भरतजीने पवित्र मंदाकिनीमें स्नान किया।

सरितसमीप राखि सब लोगा ❀ माँगि मातु-गुरु-सचिव-नियोगा ॥
चले भरतु जहं सियरघुराई ❀ साथ निषादनाथ लघुभाई ॥

नदीके पासमें सब लोगोंको ठहराकर और माता, गुरु एवं मंत्रीकी आज्ञा मांगकर निषादोंके राजा गुह और छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत भरतजी वहांको चले, जहां सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी थे।

समुझि मातुकरतब सकुचाहीं ❀ करत कुतरक कोटि मन माहीं ॥
रामु लखनु सिय सुनि मम नाऊँ ❀ उठि जनि अनत जाहिं तजि ठाऊँ ॥

माताकी करतूत समझकर भरतजी सकुचाने लगे। अपने मनमें वे करोड़ों कुतर्क करने लगे। वे सोचने लगे—मेरा नाम सुनकर श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी अपना स्थान छोड़कर कहीं दूसरी जगह न उठ जावें।

दो०—मातु मते महुँ मानि मोहि ❀ जो कछु करहिं सो थोर।
अघ अवगुन छमि आदरहिं ❀ समुझि आपनी ओर ॥२३४॥

माताके मतमें मुझे मानकर वे जो कुछ भी करेंगे वह थोड़ा ही है; परन्तु अपनी ओर देखकर वे पापों और अवगुणोंको क्षमा करके मेरा आदर करेंगे।

जौं परिहरहिं मलिन मन जानी ❀ जौं सनमानहिं सेवकु मानी ॥
मोरे सरन राम की पनहीं ❀ राम सुस्वामि दोसु सब जनहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजी मुझे मलिनमन जानकर चाहे त्याग दें अथवा सेवक मानकर मेरा आदर करें—दोनों ही अवस्थाओंमें मुझे तो श्रीरामचन्द्रजीकी जूतियां ही शरण हैं। श्रीरामचन्द्रजी अच्छे स्वामी हैं, सब दोष सेवकका ही है।

जग जस भाजन चातक मीना ❀ नेम प्रेम निज निपुन नबीना ॥
अस मन गुनत चले मग जाता ❀ सकुच सनेह सिथिल सब गाता ॥

संसारमें यशके पात्र तो पपीहे और मछलियां हैं, जो क्रमशः अपने नियम और प्रेमको नित्य नया रखनेमें चतुर हैं। मनमें ऐसा सोचते हुए भरतजी रास्ता चले जा रहे हैं। संकोच और स्नेहसे उनका सारा शरीर शिथिल हो रहा है।

फेरति मनहिं मातुकृत खोरी ❀ चलत भगतिबल धीरजधोरी ॥
जब समुझत रघुनाथ सुभाऊ ❀ तब पथ परत उताइल पाऊ ॥

माताकी की हुई दुष्टता भरतजीके मनको पीछे लौटाती है; परन्तु भक्तिके बलसे वे धीरजके मार्गपर चलने लगते हैं। किन्तु जब वे श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव समझते हैं तब मार्गमें उनके पैर जल्दी-जल्दी उठने लगते हैं।

भरतदसा तेहि अवसर कैसी ❀ जलप्रवाह जल-अलि-गति जैसी ॥
देखि भरत कर सोचु सनेहू ❀ भा निषाद तेहि समय बिदेहू ॥

उस समय भरतजीकी दशा कैसी हो रही थी, जैसी जलके प्रवाहमें जलभौंरेकी गति हुआ करती है। भरतजीका सोच और स्नेह देखकर उस समय निषादको अपने शरीरकी सुध भूल गयी।

दो०—लगे होन मंगल सगुन ❀ सुनि गुनि कहत निषादु।
मिटिहि सोचु होइहि हरषु ❀ पुनि परिनाम बिषादु ॥ २३५ ॥

इसी समय शुभ शकुन होने लगे, जिन्हें सुनकर और समझकर निषादने कहा कि सोच मिट जायगा और आनन्द हो जायगा, परन्तु परिणाममें फिर दुःख ही होगा।

सेवक बचन सत्य सब जाने ❀ आस्रमनिकट जाइ नियराने ॥
भरत दीख बन - सैल - समाजू ❀ मुदित छुधित जनु पाइ सुनाजू ॥

सेवक निषादकी सब बातें भरतजीने सत्य समझीं और वे आश्रमके समीप जा पहुंचे। भरतजीने वह पर्वत, वन और समाज देखा। वह सब देखकर वे ऐसे प्रसन्न हुए; मानों कोई भूखा अच्छा अन्न पा गया हो।

ईति भीति जनु प्रजा दुखारी ❀ त्रिबिध ताप पीड़ित ग्रहभारी ॥
जाइ सुराज सुदेस सुखारी ❀ होहिं भरतगति तेहि अनुहारी ॥

जैसे ईति (अति वृष्टि, अनावृष्टि, टिड्डियोंसे हानि, चूहोंसे बरबादी, चिड़ियोंसे नाश, लूट-चढ़ाई और महामारी—कुल सातों प्रकारके उपद्रव), भीति, भारी ग्रहदशा और दैहिक, दैविक तथा भौतिक—तीनों तरहके दुःख सबसे पीड़ित होकर कहींकी प्रजा दुःखी हो और फिर अच्छे देश और अच्छे राज्यमें जाकर सुखी हो जाय, उसीके समान भरतजीकी दशा हो गयी।

रामबास बनसंपति भ्राजा ❀ सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ॥
सचिव बिरागु बिबेकु नरेसू ❀ बिपिन सुहावन पावन देसू ॥

श्रीरामचन्द्रजीके निवाससे वनकी सब सम्पत्तियां ऐसी शोभित हुईं, मानों अच्छे राजाको पाकर प्रजा सुखी हुई हो। विवेक राजा है, वैराग्य मंत्री है, सुहावना वन पवित्र देश है।

भट जमनियम सैल रजधानी ❀ सांति सुमति सुचि सुंदर रानी ॥
सकल अंग संपन्न सुराऊ ❀ रामचरनआस्रित चित चाऊ ॥

संयम और नियम योद्धा हैं, पर्वत राजधानी है, शान्ति और सुबुद्धि पवित्र और सुन्दर रानियां हैं। सुंदर राजा सर्वाङ्ग-सम्पन्न है और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें आश्रित रहनेसे उसका चित्त सदैव प्रसन्न रहता है।

दो०—जीति मोह-महि-पालु-दल ❀ सहित बिबेक भुआलु।
करत अकंटक राज्य पुर ❀ सुख संपदा सुकालु ॥ २३६ ॥

यह विवेकरूपी राजा, मोहरूपी राजाको सेनासमेत जीतकर अकंटक राज्य कर रहा है। इसकी राजधानीमें सदा सुख, सम्पत्ति और सुकाल रहता है।

वनप्रदेस मुनिबास घनेरे ❀ जनु पुर नगर गाउँगन खेरे ॥
बिपुल बिचित्र बिहंग मृग नाना ❀ प्रजासमाजु न जाइ बखाना ॥

वन-प्रदेशमें मुनियोंके बहुतसे स्थान हैं, जो मानों शहर, कस्बे, गाँव और खेड़े हैं। तरह-तरहके बहुतसे विचित्र पक्षी और हिरन ही प्रजाका समाज है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

खगहा करि हरि बाघ बराहा ❀ देखि महिष बृष साजु सराहा ॥
बयरु बिहाइ चरहिं एक संगा ❀ जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा ॥

गैंड़ा, हाथी, सिंह, बाघ, शूकर, भैंसा, बैल—इनका समाज देखकर सराहनेयोग्य है। ये सब वैर छोड़कर जहां-तहां एक संग चरते हैं। यही मानों चतुरंगिणी सेना है।

झरना झरहिं मत्तगज गाजहिं ❀ मनहुँ निसान बिबिधबिधि बाजहिं ॥
चक चकोर चातक सुक पिक गन ❀ कूजत मंजु मराल मुदितमन ॥

झरने झर रहे हैं और मतवाले हाथी गर्जना करते हैं—यही मानों अनेक प्रकारसे नगारे बज रहे हैं। चकवा, चकोर, पपीहा, तोता, कोयल और हंस—सबके झुण्ड मनमें प्रसन्न होकर बोल रहे हैं।

अलिगन गावत नाचत मोरा ❀ जनु सुराज मंगल चहुँ ओरा ॥
बेलि बिटप तृन सफल सफूला ❀ सब समाजु मुद-मंगल-मूला ॥

भौंरोंके समूह गा रहे हैं और मोर नाच रहे हैं; मानों अच्छे राज्यमें चारों ओर आनन्द-मंगल हो रहे हों। बेलि, वृक्ष और घास—सब फूल-फल रहे हैं और सभी समाज आनन्द और मंगलका मूल हो रहा है।

दो०—रामसैल सोभा निरखि ❀ भरत हृदय अति प्रेमु।
तापस तपफलु पाइ जिमि ❀ सुखी सिराने नेमु ॥ २३७ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके पर्वतकी शोभा देखकर भरतजीके हृदयमें बड़ा प्रेम हुआ, जैसे कोई तपस्वी अपनी तपस्याका फल पाकर नियमोंके समाप्त हो जानेपर सुखी हुआ हो।

तब केवट ऊँचे चढ़ि धाई ❀ कहेउ भरत सन भुजा उठाई ॥
नाथ देखियहि बिटपबिसाला ❀ पाकरि जंबु रसाल तमाला ॥

तब निषादने दौड़कर ऊँचेपर चढ़कर और बांह उठाकर भरतजीसे कहा—हे नाथ! पाकर, जामुन, आम और तमालके वे बड़े पेड़ देखिये।

तिन्ह तरुबरन्ह मध्य बटु सोहा ❀ मंजु बिसालु देखि मनु मोहा ॥
नील सघन पल्लव फल लाला ❀ अबिचल छांह सुखद सब काला ॥

उन श्रेष्ठ वृक्षोंके बीचमें जो वह सुन्दर विशाल बरगदका वृक्ष शोभित हो रहा है, जिसे देखकर मन मोहित हो जाता है, जिसके पत्ते नीले और घने हैं, फल लाल हैं; जिसकी अखण्ड छाया सब ऋतुओंमें सुखदायक है—

मानहुँ तिमिर-अरुन-मय रासी ❀ बिरची बिधि सकेलि सुखमासी ॥
ए तरु सरितसमीप गोसाईं ❀ रघुबर परनकुटी जहँ छाई ॥

और मानों ब्रह्माने अन्धकार और ललाईके समूहको समेटकर उसे शोभारूप ही रच दिया हो। हे स्वामिन्, इसी वृक्षके पास नदी है, जहां श्रीरामचन्द्रजीने अपनी पर्णकुटीको छाया है।

तुलसी तरुबर बिबिध सुहाये ❀ कहुँ कहुँ सिय कहुँ लषन लगाये ॥
बटछाया बेदिका बनाई ❀ सिय निज-पानि-सरोज सुहाई ॥

वहां तुलसीके श्रेष्ठ वृक्ष शोभित हो रहे हैं, जिन्हें कहीं-कहीं सीताजीने और कहीं-कहीं लक्ष्मणजीने लगाया है। सीताजीने अपने सुन्दर कर-कमलोंसे बरगदकी छायामें वेदीको बनाया है—

दो०—जहँ बैठि मुनि-गन-सहित ❀ नित सिय राम सुजान।
सुनहिं कथा इतिहास सब ❀ आगम निगम पुरान ॥ २३८ ॥

जहां मुनियोंके समूह-समेत नित्य बैठकर सीताजी और सुजान श्रीरामचन्द्रजी वेद, शास्त्र और पुराण—सबका इतिहास और सबकी कथाएँ सुनते हैं।

सखावचन सुनि बिटप निहारी ❀ उमगे भरत बिलोचन बारी ॥
करत प्रनाम चले दोउ भाई ❀ कहत प्रीति सारद सकुचाई ॥

मित्रके वचन सुनकर और उस वृक्षको देखकर भरतजीके नेत्रोंमें पानी उमड़ आया। दोनों भाई उसे प्रणाम करते हुए चले। उनकी प्रीति कहते हुए सरस्वती भी सकुचाती हैं।

हरषहिं निरखि राम-पद-अंका ❀ मानहुँ पारसु पायेउ रंका ॥
रज सिर धरि हिय नयनन्हि लावहिं ❀ रघुबर-मिलन-सरिस-सुख पावहिं ॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके चिह्न देखकर वे प्रसन्न होते हैं; मानों किसी गरीबने पारस पा लिया हो। उन चरण-चिह्नोंकी धूलको शिरपर रखकर हृदय और नेत्रोंसे लगाते हैं और श्रीरामचन्द्रजीसे भेंट होनेके समान सुख पाते हैं।

देखि भरतगति अकथ अतीवा ❀ प्रेम मगन मृग खग जड़जीवा ॥
सखहिं सनेहबिबस मग भूला ❀ कहि सुपंथ सुर बरषहिं फूला ॥

भरतजीकी अत्यन्त अकथनीय दशा देखकर हिरण, पक्षी और जड़ पदार्थ भी प्रेममें मग्न हो गये। प्रेम-विवश होनेके कारण मित्र निषाद रास्ता भूल गया, फिर देवताओंने सुन्दर रास्ता बतलाकर फल बरसाये।

निरखि सिद्ध साधक अनुरागे ❀ सहज सनेह सराहन लागे॥
होत न भूतल भाउ भरत को ❀ अचर सचर चर अचर करत को॥

भरतजीको देखकर साधक-सिद्ध लोग प्रेममें भर गये और उनके स्वाभाविक प्रेमकी प्रशंसा करने लगे कि यदि पृथिवीपर भरतका जन्म न होता तो अचरको सचर और चरको अचर कौन कर देता।

दो०—प्रेमु अमिय मंदरु बिरहु ❀ भरतु पयोधि गंभीर।
मथि प्रगटे सुर-साधु-हित ❀ कृपासिंधु रघुबीर॥२३९॥

भरतरूपी गहरे समुद्रको विरहरूपी मंदराचलसे मथकर कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने देवताओं और साधुओंके कल्याणके लिये प्रेमरूपी अमृत प्रकट कर दिया।

(बंधु-मिलाप)

सखासमेत मनोहर जोटा ❀ लखेउ न लषन सघन बन ओटा॥
भरत दीख प्रभुआस्रमु पावन ❀ सकल-सु-मंगलु-सदनु सुहावन॥

मित्र निषादसमेत इस मनोहर जोड़ी—भरत और शत्रुघ्न—को घने वनकी आड़ होनेसे लक्ष्मणजीने नहीं देख पाया। भरतजीने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका पवित्र सुन्दर आश्रम देखा, जो सभी सुन्दर मङ्गलोंका भाण्डार था।

करत प्रबेस मिटे दुखदावा ❀ जनु जोगी परमारथु पावा॥
देखे भरत लषन प्रभुआगें ❀ पूछे बचन कहत अनुरागें॥

उसमें प्रवेश करते ही दुःखकी पीड़ा मिट गयी; मानों किसी योगीने परमार्थ पा लिया हो। भरतजीने देखा कि लक्ष्मणजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके आगे खड़े हैं और उन्होंने कुछ पूछा है जिसका उत्तर वे बड़े प्रेमसे दे रहे हैं।

सीस जटा कटि मुनिपट बांधे ❀ तून कसे कर सर धनु कांधे॥
बेदी पर मुनि-साधु-समाजू ❀ सीयसहित राजत रघुराजू॥

उनके शिरपर जटाएँ हैं, कमरमें मुनियोंका वस्त्र बांधे हुए हैं, तरकस कसा हुआ है, हाथमें बाण लिये हुए हैं और कन्धेमें धनुष पड़ा हुआ है। वेदीपर मुनियों और साधुजनोंका समाज है, जहां सीताजीसमेत श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हैं।

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा ❀ जनु मुनिवेष कीन्ह रतिकामा ॥
करकमलनि धनुसायकु फेरत ❀ जियकी जरनि हरत हँसि हेरत ॥

छालके कपड़े हैं, जटाएँ रखी हुई हैं, सांवला शरीर है; मानों रति और कामदेवने मुनिका भेष रखा हो। अपने करकमलोंसे वे धनुष और वाण घुमा रहे हैं। जिनकी ओर वे हंसकर देख लेते हैं, उनके हृदयकी जलन मिट जाती है।

दो०—लसत मंजु मुनि-मंडली ❀ मध्य सीय रघुचंदु।
ग्यानसभा जनु तनु धरे ❀ भगति सच्चिदानंदु ॥२४०॥

मुनियोंकी सुन्दर मण्डलीके बीचमें सीताजीसमेत रघुवंशमें चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी शोभा पा रहे हैं; मानों मूर्तिमान ज्ञानकी सभामें भक्ति और सच्चिदानन्द भगवान् शरीर धारण किये हुए हों।

सानुज सखा समेत मगन मन ❀ बिसरे हरष-सोक-सुख-दुख-गन ॥
पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं ❀ भूतल परे लकुट की नाईं ॥

छोटे भाई शत्रुघ्न और मित्र निषादसमेत भरतजी प्रसन्न-मन होकर हर्ष, शोक और सुख-दुःख सब भूल गये। वे यह कहकर दण्डकी भांति पृथिवीपर गिर पड़े कि हे नाथ! मेरी रक्षा करो, हे स्वामिन् मेरी रक्षा करो।

बचन सप्रेम लषन पहिचाने ❀ करत प्रनामु भरत जिय जाने ॥
बंधुसनेह सरस एहि ओरा ❀ उत साहिबसेवा बरजोरा ॥

प्रेमभरे भरतजीके ये वचन लक्ष्मणजी पहिचान लिये और अपने हृदयमें यह जान लिया कि भरतजी प्रणाम कर रहे हैं। इधर भाईका सरस प्रेम और उधर स्वामीकी सेवाका प्रवल आकर्षण!

मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई ❀ सुकबि लषनमन की गति भनई ॥
रहे राखि सेवा पर भारू ❀ चढ़ी चंग जनु खैंच खेलारू ॥

उनसे न तो मिला ही जाता है और न छोड़ते ही बनता है। अच्छे कवि लक्ष्मणजीके मनकी उस समयकी गतिका इस प्रकार वर्णन करते हैं कि मानों कोई खिलाड़ी चढ़ी हुई पतंगको खींच रहा हो। अन्तमें सेवाको महत्त्व देकर लक्ष्मणजी यथास्थान बने रहे।

कहत सप्रेम नाइ महि माथा ❀ भरत प्रनाम करत रघुनाथा ॥
उठे राम सुनि प्रेम अधीरा ❀ कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा ॥

लक्ष्मणजी प्रेमके साथ कहने लगे कि हे श्रीरामचन्द्रजी, पृथिवीपर मस्तक झुकाकर भरतजी प्रणाम कर

रहे हैं। सुनते ही श्रीरामचन्द्रजी प्रेमसे अधीर होकर उठ बैठे! उस समय कहीं उनके वस्त्र रहे और कहीं तरकस, कहीं धनुष और कहीं बाण!

दो०—बरबस लिये उठाइ उर ❀ लाये कृपानिधान।
भरत राम की मिलनि लखि ❀ बिसरे सबहिं अपान ॥२४१॥

कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने भरतजीको बलपूर्वक उठा लिया और अपने हृदयसे लगा लिया। भरतजी और श्रीरामचन्द्रजीका मिलना देखकर सब अपनेको भूल गये।

मिलनिप्रीति किमि जाइ बखानी ❀ कबि कुल अगम करम मन बानी ॥
परम-प्रेम - पूरन दोउ भाई ❀ मन बुधि चित अहमिति बिसराई ॥

उस मिलापका प्रेम कैसे वर्णन किया जा सकता है। कविजनोंके लिये वह मन, वाणी और कर्मसे अगम्य है। दोनों भाई मन, बुद्धि, चित्त और अहंकारको भुलाकर परम प्रेमसे परिपूर्ण हैं।

कहहु सुप्रेम प्रगट को करई ❀ केहि छाया कबि मति अनुसरई ॥
कबिहिं अरथ आखर बलु सांचा ❀ अनुहरि ताल गतिहि नटु नाचा ॥

भला कहो, उस सुन्दर प्रेमको कौन व्यक्त कर सकता है? कविकी बुद्धि किसकी छायाका अनुसरण करे? कविको सच्चा बल अक्षरों और उनके अर्थका है; जैसे नट तालकी गतिका अनुसरण करके नाचता है।

अगम सनेहु भरतरघुबर को ❀ जहं न जाइ मनु बिधि-हरि-हर-को ॥
सो मैं कुमति कहउं केहि भांती ❀ बाजु सुराग कि गाँडरताँती ॥

भरतजी और श्रीरामचन्द्रजीका प्रेम अगम्य है, जहां ब्रह्मा, विष्णु और शिवके मनकी भी पहुंच नहीं है! उस प्रेमका वर्णन मैं दुर्बुद्धि कैसे करूं? गांडरकी तांतसे क्या अच्छा राग बज सकता है?

मिलनि बिलोकि भरतरघुबर की ❀ सुरगन सभय धुकधुकी धरकी ॥
समुझाये सुरगुरु जड़ जागे ❀ बरषि प्रसून प्रसंसन लागे ॥

श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीका मिलना देखकर देवताओंकी छाती डरसे धड़कने लग गयी। परन्तु जब उन्हें देवगुरु बृहस्पतिने समझाया तब मूर्खोंको ज्ञान हुआ और फिर वे फूल बरसाकर प्रशंसा करने लगे।

दो०—मिलि सप्रेम रिपुसूदनहिं ❀ केवट भेंटेउ राम।
भूरि भायं भेंटे भरत ❀ लछिमन करत प्रनाम ॥२४२॥

प्रेमके साथ शत्रुघ्नसे मिलकर श्रीरामचन्द्रजीने निषादसे भेंट की। लक्ष्मणजी बड़े भावसे प्रणाम करते हुए भरतजीसे मिले।

भेंटेउ लषन ललकि लघुभाई ❀ बहुरि निषादु लीन्ह उर लाई ॥
पुनि-मुनिगन दुहुँ भाइन्ह बंदे ❀ अभिमत आसिष पाइ अनंदे ॥

फिर लक्ष्मणजी अत्यन्त उत्कण्ठित होकर अपने छोटे भाई शत्रुघ्नसे मिले। फिर उन्होंने गुह निषादको हृदयसे लगा लिया। फिर दोनों भाइयोंने मुनिजनोंकी वंदना की और मनचाहा आशीर्वाद पाकर वे आनंदित हुए।

सानुज भरत उमगि अनुरागा ❀ धरि सिर सिय-पद-पदुम परागा ॥
पुनि पुनि करत प्रनाम उठाये ❀ सिर करकमल परसि बैठाये ॥

प्रेममें उमंगकर छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत भरतजी सीताजीके चरणकमलोंकी रजको शिरपर रखकर बार-बार प्रणाम करने लगे। सीताजीने उन्हें उठा लिया और उनके शिरपर अपना कमलके समान हाथ रखकर उन्हें बिठलाया।

सीय असीस दीन्हि मन माहीं ❀ मगन सनेह देहसुधि नाहीं ॥
सबबिधि सानुकूल लखि सीता ❀ भे निसोच उर अपडर बीता ॥

सीताजीने अपने मनमें भरतजीको आसीस दी, वे प्रेममें मग्न हो गयीं, उन्हें अपने शरीरकी सुध भूल गयी। सीताजीको सब प्रकारसे प्रसन्न देखकर भरतजीके हृदयका झूठा डर दूर हो गया और वे निश्चिन्त हो गये।

कोउ किछु कहइ न कोउ किछु पूछा ❀ प्रेम भरा मनु निजगति छूछा ॥
तेहि अवसरु केवटु धीरजु धरि ❀ जोरि पानि बिनवत प्रनामु करि ॥

न कोई कुछ कहता था और न कोई कुछ पूछता था, प्रेमसे भरा हुआ मन अपनी स्वाभाविक चञ्चलतासे शून्य हो गया। उस समय धीरज रखकर और हाथ जोड़कर केवट (गुह निषाद) प्रणाम करके विनती करने लगा—

दो०—नाथ साथ मुनिनाथ के ❀ मातु सकल पुरलोग।
सेवक सेनप सचिव सब ❀ आये बिकल बियोग ॥२४३॥

हे नाथ, मुनिनाथ वशिष्ठजीके साथ सब माताएँ, नगर-निवासी, सेवक, सेनापति और मंत्री—सब आपके वियोगसे व्याकुल होकर आये हैं।

सीलसिंधु सुनि गुरआगवनू ❀ सियसमीप राखे रिपुदवनू ॥
चले सबेग रामु तेहि काला ❀ धीर-धरम-धुर दीनदयाला ॥

शीलके समुद्र दीनदयालु, धीर और धर्मधुरन्धर श्रीरामचन्द्रजीने जब गुरुका आगमन सुना तब सीताजीके पास शत्रुघ्नको छोड़कर उसी समय वे शीघ्रताके साथ चल दिये।

गुरहि देखि सानुज अनुरागे ❀ दंडप्रनाम करन प्रभु लागे॥
मुनिबर धाइ लिये उर लाई ❀ प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई॥

गुरुको देखते ही प्रभु श्रीरामचन्द्रजी छोटे भाई लक्ष्मणजी-समेत प्रेममें भर गये और दण्डवत्प्रणाम करने लगे। मुनिवर वशिष्ठने दौड़कर उन्हें हृदयसे लगा लिया और प्रेममें उमंगकर दोनों भाइयोंसे मिले।

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू ❀ कीन्ह दूरि तें दंडप्रनामू॥
रामसखा रिषि बरबस भेंटा ❀ जनु महि लुठत सनेहु समेटा॥

प्रेमसे पुलकायमान होकर केवटने अपना नाम कहकर दूरसे वशिष्ठजीको दण्डवत्-प्रणाम किया। ऋषिने जबर्दस्ती श्रीरामचन्द्रजीके मित्र निषादसे भेंट की; मानों पृथिवीपर लोटते हुए स्नेहको समेट लिया हो।

रघुपति भगति सुमंगल मूला ❀ नभ सराहि सुर बरिसहिं फूला॥
एहि सम निपट नीच कोउ नाहीं ❀ बड़ बसिष्ठसम को जग माहीं॥

सुन्दर मंगलोंके मूल श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिकी प्रशंसा कर देवता आकाशसे फूल बरसाने लगे। इस निषादके समान निपट नीच कोई नहीं है और वशिष्ठजीके समान बड़ा संसारमें और कौन है?

दो०—जेहि लखि लषनहु तें अधिक ❀ मिले मुदित मुनिराउ।
सो सीता-पति-भजन को ❀ प्रगट प्रतापप्रभाउ॥ २४४॥

फिर भी जिसे देखकर मुनिराज वशिष्ठ आनन्दित होकर लक्ष्मणजीसे भी अधिक मिले, यह सब सीतापति श्रीरामचन्द्रजीके भजनका ही प्रत्यक्ष प्रताप और प्रभाव है।

आरत लोगु रामु सबु जाना ❀ करुनाकर सुजान भगवाना॥
जो जेहि भाय रहा अभिलाखी ❀ तेहि तेहि कै तसि तसि रुख राखी॥

करुणानिधान भगवान् श्रीरामचन्द्रजी भलीभांति जाननेवाले हैं! उन्होंने जान लिया कि सब लोग दुःखी हैं, फिर जो जिस भावसे अभिलाषी था उसकी वैसी ही इच्छा उन्होंने पूरी की।

सानुज मिलि पलमहु सब काहू ❀ कीन्ह दूरि दुखु दारुन दाहू॥
यह बड़ि बात राम कै नाहीं ❀ जिमि घट कोटि एक रबि छाहीं॥

पलभरमें छोटे भाई-समेत सबसे मिलकर कठोर दुःख-दाह दूर कर दिया। श्रीरामचन्द्रजीके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है; जैसे करोड़ों घड़ोंमें एक क्षणमें एक ही सूर्यकी छाया पड़ जाती है।

मिलि केवटहि उमगि अनुरागा ❀ पुरजन सकल सराहहिं भागा ॥
देखीं राम दुखित महतारी ❀ जनु सुबेलिअवलीं हिममारी ॥

प्रेममें उमंगकर निषादसे मिलकर सब नगर-निवासी उसके भाग्यकी प्रशंसा करते हैं। श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि सब माताएँ बहुत दुःखित हैं; मानों सुन्दर लताओंकी पंक्तियोंको पालेने मार दिया हो।

प्रथम राम भेंटी कैकेई ❀ सरल सुभाय भगति मति भेई ॥
पग परि कीन्ह प्रबोधु बहोरी ❀ कालकरम बिधि सिर धरि खोरी ॥

स्वाभाविक सरलता और भक्ति-बुद्धिसे पहिले श्रीरामचन्द्रजी कैकेयीसे मिले। चरणोंमें पड़कर और फिर काल, कर्म और दैवके शिरपर दोष रखकर श्रीरामचन्द्रजीने कैकेयीको समझाया।

दो०—भेंटी रघुबर मातु सब ❀ करि प्रबोधु परितोषु।
अंब ईसआधीन जगु ❀ काहु न देइय दोषु ॥२४५॥

श्रीरामचन्द्रजीने सब माताओंसे भेंट की और उन्हें ज्ञान देकर संतुष्ट कर कहा कि हे माताओ, संसार ईश्वरके अधीन है। किसीको दोष नहीं देना चाहिये।

गुर तिय-पद बंदे दुहु भाई ❀ सहित बिप्रतिय जे संग आई ॥
गंग-गौरि-सम सब सनमानी ❀ देहिं असीस मुदित मृदुबानी ॥

फिर दोनों भाइयोंने ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंसमेत, जो संगमें आयी थीं, गुरुवशिष्ठकी पत्नीके चरणोंकी वन्दना की और गंगा और पार्वतीके समान सबका सम्मान किया। ये सब अत्यन्त प्रसन्न होकर मीठी वाणीसे आशिष देने लगीं।

गहि पद लगे सुमित्राअंका ❀ जनु भेंटी संपति अति रंका ॥
पुनि जननीचरननि दोउ भ्राता ❀ परे प्रेम ब्याकुल सब गाता ॥

फिर चरण पकड़कर दोनों भाई सुमित्राकी गोदमें ऐसे लिपट गये; मानों अत्यन्त निर्धनसे सम्पत्ति आ मिली हो। फिर दोनों भाई (कौशल्या) माताके चरणोंमें आकर पड़ गये। उनका सारा शरीर प्रेममें व्याकुल हो गया।

अति अनुराग अंब उर लाये ❀ नयन सनेह सलिल अन्हवाये ॥
तेहि अवसर कर हरष बिषादू ❀ किमि कबि कहइ मूक जिमि स्वादू ॥

माताने उन्हें बड़े प्रेमसे हृदयसे लगा लिया और अपने नेत्रोंके प्रेमाश्रुओंसे स्नान करवा दिया। उस समयके हर्ष और शोकका कवि कैसे वर्णन कर सकता है, जैसे गूंगा अपने स्वादका।

मिलि जननिहि सानुज रघुराऊ ❀ गुरुसन कहेउ कि धारिय पाऊ ॥
पुरजन पाइ मुनीसनियोगू ❀ जल थल तकि तकि उतरे लोगू ॥

भाई लक्ष्मणसमेत श्रीरामचन्द्रजी जब अपनी मातासे मिल चुके तब उन्होंने गुरुसे कहा कि पधारिये। मुनीश्वरकी आज्ञा पाकर नगर-निवासी सब लोग जल और स्थान देख-देखकर उतरे।

दो०—महिसुर मंत्री मातु गुरु ❀ गने लोग लिये साथ।
पावनु आस्रमु गवन किय ❀ भरत लषन रघुनाथ ॥२४६॥

ब्राह्मण, मंत्री, माताओं और गुरु आदि गिने हुए प्रमुख लोगोंको भरतजी, लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजीने साथमें ले लिया और फिर पवित्र आश्रमके लिये प्रस्थान किया।

सीय आइ मुनि-बर-पग लागी ❀ उचित असीस लही मनमांगी ॥
गुरुपतिनिहिं मुनितियन्ह समेता ❀ मिली प्रेमु कहि जाइ न जेता ॥

आकर सीताजी मुनिवरके चरणोंमें पड़ गयीं और मनमांगी उचित आशिष पायी। फिर सीताजी मुनिपत्नियोंसमेत गुरु वशिष्ठकी पत्नीसे मिलीं। उनका जितना प्रेम था, वह कहा नहीं जाता।

बंदि बंदि पग सिय सबही के ❀ आसिरबचन लहे प्रिय जी के ॥
सासु सकल जब सीय निहारी ❀ मूंदे नयन सहमि सुकुमारी ॥

सभीके चरणोंकी बार-बार वंदना करके सीताजीने अपने जीको प्यारे लगनेवाले आशीर्वाद पाये। सुकुमारी सीताजीने जब सब सासुओंको देखा तब सहमकर अपने नेत्र बंद कर लिये—

परीं बधिकबस मनहु मरालीं ❀ काह कीन्ह करतार कुचालीं ॥
तिन्ह सिय निरखि निपट दुखु पावा ❀ सो सबु सहिय जो दैउ सहावा ॥

मानों हंसिनियां वधिकके वशमें पड़ गयी हों। वे सोचने लगीं कि विधाताने यह क्या कुचाल कर दी। सीताजीको देखकर सासुओं ने भी बड़ा दुःख पाया। दैव जो कुछ सहावे वह सब सहना ही पड़ता है।

जनकसुता तब उर धरि धीरा ❀ नील-नलिन-लोयन भरि नीरा ॥
मिली सकल सासुन्ह सिय जाई ❀ तेहि अवसर करुना महि छाई ॥

तब अपने हृदयमें धीरज रखकर और नील कमलके समान नेत्रोंमें जल भरकर जिस समय राजा जनककी पुत्री सीताजी सब सासुओंसे जाकर मिली उस समय पृथिवीपर करुणा-रस छा गया।

दो०—लागि लागि पग सबनि सिय ❀ भेंटति अति अनुराग।
हृदय असीसहिं प्रेमबस ❀ रहिहहु भरी सोहाग ॥२४७॥

सबके चरणोंमें बार-बार पड़कर सीताजी बड़े प्रेमसे मिलने लगीं और वे प्रेमके वशमें होकर हृदयसे आशिष देने लगीं कि तुम अखण्ड सौभाग्यवती रहो।

बिकल सनेह सीय सब रानी ❀ बैठन सबहिं कहेउ गुरुग्यानी ॥
कहि जनगति मायिक मुनिनाथा ❀ कहे कछुक परमारथगाथा ॥

सीताजी समेत सब रानियां प्रेममें व्याकुल हो गयीं। ज्ञानी गुरुने सबसे बैठनेको कहा। फिर मायामय संसारकी गतिका वर्णन कर मुनिनाथ वशिष्ठजीने कुछ परमार्थकी कथाएँ कहीं।

नृप कर सुर-पुर-गवन सुनावा ❀ सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा ॥
मरनहेतु निज नेहु बिचारी ❀ भे अति बिकल धीर-धुर-धारी ॥

फिर उन्होंने राजा दशरथके देवलोक सिधारनेका हाल सुनाया, जिसे सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने दुस्सह दुःख पाया। यह विचारकर कि राजा दशरथके मरनेका कारण मेरा प्रेम है, धीरधुरंधर श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त व्याकुल हो गये।

कुलिसकठोर सुनत कटुबानी ❀ बिलपत लषन सीय सब रानी ॥
सोक बिकल अति सकल समाजू ❀ मानहुँ राजु अकाजेउ आजू ॥

राजाके स्वर्गवास-संबंधी वज्रसे भी कठोर कड़वी वाणी सुनकर लक्ष्मणजी, सीताजी और सब रानियां विलाप करने लगीं। सारा समाज शोकसे अत्यन्त व्याकुल हो गया; मानों राजाका स्वर्गवास आज ही हुआ हो।

मुनिवर बहुरि राम समुझाये ❀ सहित समाज सुरसरित न्हाये ॥
ब्रतु निरंबु तेहि दिन प्रभु कीन्हा ❀ मुनिहु कहे जलु काहु न लीन्हा ॥

मुनिवर वशिष्ठने फिर श्रीरामचन्द्रजीको समझाया और सब समाजसमेत गङ्गाजीमें स्नान किया। उस दिन प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने निर्जलव्रत किया और वशिष्ठमुनिके कहनेपर भी किसीने जल ग्रहण नहीं किया।

दो०—भोरु भये रघुनंदनहिं ❀ जो मुनि आयसु दीन्ह।
स्रद्धा-भगति-समेत प्रभु ❀ सो सबु सादर कीन्ह ॥२४८॥

प्रातःकाल होनेपर मुनिने श्रीरामचन्द्रजीको जो आज्ञा दी, वह सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने श्रद्धा और भक्तिसमेत आदरपूर्वक किया।

करि पितु क्रिया बेद जसि बरनी ❀ भे पुनीत पातक-तम-तरनी ॥
जासु नाम पावक अघतूला ❀ सुमिरत सकल-सु-मंगल-मूला ॥

जैसा वेदमें वर्णन किया है, उसके अनुसार पिताकी क्रिया करके पापरूपी अन्धकारके लिये सूर्यके समान

श्रीरामचन्द्रजी पवित्र हुए। पापरूपी रूईके लिये जिनका नाम अग्नि है और जिनका स्मरण सभी शुभमङ्गलोंका मूल है।

सुद्ध सो भयउ साधु संमत अस ❀ तीरथ आवाहन सुरसरि जस ॥
सुद्ध भये दुइ बासर बीते ❀ बोले गुरु सन राम पिरीते ॥

वे श्रीरामचन्द्रजी शुद्ध हुए, यह साधुसम्मत उसी प्रकार है जिस प्रकार गङ्गाजीमें तीर्थोंका आवाहन। शुद्ध हुए जब दो दिन बीत गये तब प्यारे श्रीरामचन्द्रजी गुरुजीसे बोले –

नाथ लोग सब निपट दुखारी ❀ कंद-मूल-फल-अंबु-अहारी ॥
सानुज भरत सचिव सब माता ❀ देखि मोहि पल जिमि जुग जाता ॥

हे नाथ, सब लोग यहां अत्यन्त दुःखी हैं; क्योंकि वे सब कंद, मूल, फल और जलका ही भोजन करके रहते हैं। छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत भरत, मंत्री और सब माताएं—इन सबको देखकर मुझे एक-एक पल युगके समान बीत रहा है।

सबसमेत पुर धारिय पाऊ ❀ आपु इहां अमरावति राऊ ॥
बहुत कहेउं सबु कियेउं ढिठाई ❀ उचित होइ तस करिय गोसाईं ॥

सबको साथ लेकर आप अयोध्याको पधारिये। आप यहां हैं और राजा इन्द्रपुरीमें! मैंने यह सब बहुत कहा और धृष्टता की। हे स्वामिन्! जैसा उचित हो, वैसा कीजिये।

दो०—धरमसेतु करुणायतन ❀ कस न कहहु अस राम ॥
लोग दुखित दिन दुइ करसु ❀ देखि लहहिं बिस्राम ॥२४६॥

वशिष्ठजी कहने लगे कि हे राम! आप धर्मकी मर्यादा हैं, करुणाके स्थान हैं, आप भला ऐसा क्यों न कहें? ये दुःखी लोग दो दिनसे आपके दर्शन पाकर विश्राम पा रहे हैं।

रामबचन सुनि सभय समाजू ❀ जनु जलनिधि महुं बिकल जहाजू ॥
सुनि गुरगिरा सु-मंगल-मूला ❀ भयउ मनहुं मारुत अनुकूला ॥

श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर सारा समाज भयभीत हो गया; मानों समुद्रमें जहाज डूब रहा हो। फिर सुन्दर मंगलोंका मूल गुरुकी वाणी सुनी; मानों डूबते जहाजको बचानेके लिये अनुकूल हवा चलने लगी हो।

पावनि पय तिहुं काल नहाहीं ❀ जो बिलोकि अघओघ नसाहीं ॥
मंगलमूरति लोचन भरि भरि ❀ निरखहिं हरषि दंडवत करिकरि ॥

जिसे देखकर पापोंके समूह नष्ट हो जाते हैं उस पवित्र जलमें वे सब तीनों कालमें स्नान करते हैं। मंगलमूर्ति श्रीरामचन्द्रजीको नेत्र भर-भरकर वे सब देखते और दण्डवत् कर-करके प्रसन्न होते हैं।

राम-सैल-बन देखन जाहीं ❁ जहं सुख सकल सकल दुख नाहीं ॥
झरना झरहिं सुधासम बारी ❁ त्रिबिध-ताप-हर त्रिबिध बयारी ॥

सब लोग श्रीरामचन्द्रजीके पर्वत और वनको देखने जाते हैं जहां सब सुख हैं, और सब दुःखोंमेंसे कोई भी नहीं है। जहां झरनोंसे अमृतके समान जल झरता है और जहां तीनों तरहके तापोंको दूर कर देनेवाली शीतल, मंद और सुगन्धित वायु बहती है,

बिटप बेलि त्रिन अगनित जाती ❁ फल प्रसून पल्लव बहु भांती ॥
सुंदर सिला सुखद तरु छाहीं ❁ जाइ बरनि बन छबि केहि पाहीं ॥

जहां असंख्य जातियोंके वृक्ष, वेलें और घासें हैं, बहुत प्रकारके फल, फूल और पत्ते हैं, शिलाएं सुन्दर हैं और वृक्षोंकी छाया सुखद है। वनकी शोभाका वर्णन किससे किया जा सकता है!

दो०—सरनि सरोरुह जल बिहंग ❁ कूंजत गूंजत भृंग।
बैरबिगत बिहरत बिपिन ❁ मृग बिहंग बहुरंग ॥२५०॥

सरोवरमें कमल खिले हुए हैं, जलके पत्ती बोल रहे हैं, भौंरे गूंज रहे हैं और अपना स्वाभाविक वैर छोड़कर रंग-विरंगके पत्ती और हिरण वनमें विहार कर रहे हैं।

कोल किरात भिल्ल बनबासी ❁ मधु सुचि सुंदर साधु सुधा सी ॥
भरि भरि परनपुटी रचि रूरी ❁ कंद मूल फल अंकुर जूरी ॥

वनमें रहनेवाले कोल, किरात और भील मीठे, पवित्र, सुन्दर और अमृतके समान स्वादिष्ट कंद, मूल, फल और अंकुर इकट्ठे करके दोनोंमें भर-भरकर उन्हें अच्छी तरह सजाकर—

सबहिं देहिं करि बिनय प्रनामा ❁ कहि कहि स्वाद भेद गुन नामा ॥
देहिं लोग बहु मोल न लेहीं ❁ फेरत राम दोहाई देहीं ॥

विनती और प्रणाम करके सबको देते और उसका स्वाद, भेद, गुण और नाम कह-कहकर बतलाते हैं; लोग बहुतेरा देते हैं; परन्तु वे कीमत नहीं लेते और जब कोई दी हुई चीज लौटाने लगता है तब श्रीरामचन्द्रजीकी शपथ दिलाते हैं।

कहहिं सनेहमगन मृदुबानी ❁ मानत साधु प्रेम पहिचानी ॥
तुम्ह सुकृती हम नीच निषादा ❁ पावा दरसनु रामप्रसादा ॥

तब वे स्नेहमें मग्न होकर मीठी वाणीसे कहते हैं और उत्तम प्रेम पहिचान कर मान जाते हैं। वनवासिजन कहने लगे—आप पुण्यवान् हैं और हमसब हैं नीच निषाद। श्रीरामचन्द्रजीके प्रसादसे हम सबने भी दर्शन पालिये।

हमहि अगम अति दरसु तुम्हारा ❁ जस मरुधरनि देव-धुनि-धारा ॥
रामकृपाल निषाद नेवाजा। ❁ परिजन प्रजउ चहिय जस राजा ॥

आपके दर्शन हम सब लोगोंके लिये अत्यन्त अलभ्य थे; जैसे मरुभूमिमें गङ्गाजीकी धारा। श्रीरामचन्द्रजी कृपालु हैं, निषादोंपर दया करनेवाले हैं। जैसा राजा हो वैसा ही उसकी प्रजा और कुटुम्बियोंको भी होना चाहिये।

दो०—यह जिय जानि संकोचु तजि ❁ करिय छोहु लखि नेहु।
हमहिं कृतारथ करन लगि ❁ फल त्रिन अंकुर लेहु ॥२५१॥

हृदयमें यह जानकर संकोच छोड़कर हमपर दया कीजिये और हमारा प्रेम देखकर हमें कृतार्थ करनेके लिये ये फल, तृण और अंकुर लीजिये।

तुम्ह प्रिय पाहुन बन पगु धारे ❁ सेवाजोगु न भाग हमारे ॥
देब काह हम तुम्हहि गोसाईं ❁ ईंधनु पात किरात मिताई ॥

आप प्यारे पाहुने हैं और वनमें पधारे हैं। आपकी सेवा करनेयोग्य हमारे भाग्य नहीं हैं! हे स्वामिन्, आपको हम क्या देंगे? किरातोंकी मित्रता ईंधन और पत्तोंकी होती है।

यह हमारि अति बड़ि सेवकाई ❁ लेहिं न बासनबसन चोराई ॥
हम जड़ जीव जीव-गन-घाती ❁ कुटिल कुचाली कुमति कुजाती ॥

हमारी बहुत बड़ी सेवा यही है कि आपके कपड़ों और बर्त्तनोंको चुरा नहीं लेते! अनेक जीवोंकी हत्या करनेवाले हम सब मूर्ख प्राणी हैं, और दुष्ट, दुर्बुद्धि, खोटी चालवाले और बुरी जातिके हैं।

पाप करत निसिबासर जाहीं ❁ नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं ॥
सपनेहुं धरम बुद्धि कस काऊ ❁ यह रघु-नंदन-दरस-प्रभाऊ ॥

हमें पाप करते हुए दिनरात बीतते हैं। हमारी कमरमें न कपड़ा है और पेट ही अघाता है। स्वप्नमें भी धर्म-बुद्धि हमलोगोंमेंसे किसीको कैसे हो? यह जो कुछ है वह श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनोंका प्रभाव है।

जब तें प्रभु-पद-पदुम निहारे ❁ मिटे दुसह दुख दोष हमारे ॥
बचन सुनत पुरजन अनुरागे ❁ तिन्हके भाग सराहन लागे ॥

जबसे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको देखा है तबसे हमारे सब दुस्सह दुःख और दोष मिट गये। वनवासियोंके ये वचन सुनते ही अयोध्यापुरीके रहनेवाले सब लोग प्रेममें भर गये और उनके भाग्यकी प्रशंसा करने लगे।

छं०—लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं।
बोलनि मिलनि सिय-राम-चरन-सनेहु लखि सुखु पावहीं॥
नरनारि निदरहिं नेहु निज सुनि कोल भिल्लनि की गिरा।
तुलसी कृपा रघु-बंस-मनि की लोह लेइ नौका तिरा॥

सब लोग उनके भाग्यकी प्रशंसा करने लगे और प्रेमसे भरे हुए वचन सुनाने लगे। वे उनका बोलना, मिलना और सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेम देखकर सुखी होने लगे। कोल और भीलोंकी वाणी सुनकर पुरुष और स्त्रियां सब अपने प्रेमका निरादर करने लगीं। तुलसीदासजी कहते हैं कि रघुवंशमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजीकी यह कृपा है जो नौकाको लेकर लोहा तिर गया।

सो०—बिहरहिं बन चहुं ओर ❀ प्रतिदिन प्रमुदित लोग सब।
जल ज्यों दादुर मोर ❀ भये पीन पावस प्रथम॥२५२॥

प्रति दिन सब लोग आनन्दित होकर वनमें चारों ओर विहार करते हैं। वे सब ऐसे पुष्ट हो गये जैसे बरसातमें पहिला पानी पड़ते ही मेंढक और मोर हो जाते हैं।

पुर नर नारि मगन अति प्रीती ❀ बासर जाहिं पलकसम बीती॥
सीय सासु प्रति बेष बनाई ❀ सादर करइ सरिस सेवकाई॥

अयोध्यामें रहनेवाले पुरुष और स्त्रियां—सब गहरे प्रेममें मग्न रहते हैं। उनके दिन पलक बंद करनेके समान बीत जाते हैं। सीताजी प्रतिवेष बनाकर, (कई सीता बनकर) आदरपूर्वक सब सासुओंकी एक समान सेवा करती हैं।

लखा न मरमु राम बिनु काहू ❀ माया सब सियमाया माहू॥
सीय सासु सेवा बस कीन्ही ❀ तिन्ह लहि सुख सिख आसिष दीन्ही॥

श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर यह भेद और किसीने भी नहीं जाना। सीताजीकी मायामें सारी माया निवास करती है। सीताजीने सासुओंको अपनी सेवाके वशमें कर लिया। सासुओंने सुख पाकर सीताजीको सीख और आशिष दी।

लखि सियसहित सरल दोउ भाई ❀ कुटिल रानि पछितानि अघाई॥
अवनि जमहिं जांचति कैकेई ❀ महि न बीचु बिधि मीचु न देई॥

सीताजीसमेत दोनों भाइयोंकी सरलता देखकर दुष्ट रानी कैकेयी बहुत ही पछताने लगी। कैकेयी पृथिवीसे और यमराजसे याचना करती है, परन्तु न तो पृथिवी बीच देती है और न दैव ही मृत्यु देता है।

लोकहु बेद बिदित कबि कहहीं ⊛ राम बिमुख थलु नरक न लहहीं ॥
यह संसउ सबके मन माहीं ⊛ रामगवनु बिधि अवध कि नाहीं ॥

लोक और वेद दोनोंमें प्रसिद्धि है और कविजन भी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिकूल आचरण करनेवालेको नरकमें भी स्थान नहीं मिलता। सबके मनमें यह सन्देह था कि हे दैव! श्रीरामचन्द्रजीका लौटना अयोध्याको होगा कि नहीं।

दो०—निसि न नींद नहिं भूख दिन ⊛ भरतु बिकल सुठि सोच।
नीच कीच बिच मगन जस ⊛ मीनहिं सलिल संकोच ॥२५३॥

भरतजी इसी बातके मारी सोचमें व्याकुल हो रहे हैं; जैसे पानी कम हो जानेपर मछलियां तलके कीचड़में मग्न रहती हैं। उन्हें न रातको नींद आती है और दिनको भूख लगती है।

(सभाका आरंभ)

कीन्हि मातुमिस काल कुचाली ⊛ ईति भीति जस पाकत साली ॥
केहि बिधि होइ रामअभिषेकू ⊛ मोहि अवकलत उपाउ न एकू ॥

भरतजी सोचने लगे—माताके मिससे कालने कुचाल की है; जैसे पकते हुए धानकी दशा ईति और भीतिसे होती है। अब श्रीरामचन्द्रजीका राज्याभिषेक किस प्रकार हो? मुझे एक भी उपाय नहीं सूझ पड़ता।

अवसि फिरहिं गुरु आयसु मानी ⊛ मुनि पुनि कहब रामरुचि जानी ॥
मातु कहेहु बहुरहिं रघुराऊ ⊛ रामजननि हठ करबि कि काऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजी गुरुकी आज्ञा मानकर अवश्य ही लौट चलेंगे, परन्तु मुनि भी तो उनकी रुचि जानकर ही उनसे कहेंगे। माताके कहनेसे भी श्रीरामचन्द्र लौट चलेंगे, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीकी माता क्या कभी हठ करेंगी?

मोहि अनुचर कर केतिक बाता ⊛ तेहि महं कुसमउ बाम बिधाता ॥
जौं हठ करउं त निपट कुकरमू ⊛ हरगिरि तें गुरु सेवकधरमू ॥

मुझ सेवककी बात ही कितनी है, उसमें भी बुरा समय है और दैव प्रतिकूल है! यदि मैं हठ करूं तो यह निपट कुकर्म होगा। सेवकके धर्मकी गुरुता शिवजीके पर्वत कैलाशसे भी अधिक है।

एकउ जुगुति न मन ठहरानी ⊛ सोचत भरतहिं रयनि बिहानी ॥
प्रात नहाइ प्रभुहिं सिर नाई ⊛ बैठत पठये रिषय बोलाई ॥

मनमें एक भी युक्ति नहीं जमी और इस प्रकार सोचते हुए भरतजीको रात बीतने आयी। सवेरे स्नान करके प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको शिर नवाकर बैठते ही वशिष्ठ ऋषिने उन्हें बुला भेजा।

दो०—गुरु-पद-कमल प्रनामु करि ❀ बैठे आयसु पाइ।
बिप्र महाजन सचिव सब ❀ जुरे सभासद आइ ॥२५४॥

गुरुके चरणकमलोंको प्रणाम करके और आज्ञा पाकर भरतजी बैठ गये। ब्राह्मण, महाजन, मंत्री—सब सभासद आकर इकट्ठे हुए।

बोले मुनिबरु समयसमाना ❀ सुनहु सभासद भरत सुजाना ॥
धरमधुरीन भानु-कुल-भानू ❀ राजा रामु स्वबस भगवानू ॥

फिर समयके अनुसार मुनिवर वशिष्ठजी बोले कि हे चतुर सभासदो और हे भरत! सुनो, सूर्यकुलके सूर्य राजा श्रीरामचन्द्रजी धर्म-धुरन्धर, स्वतन्त्र और उत्पत्ति, मृत्यु, सद्गति, दुर्गति, विद्या, और अविद्या, सबको जाननेवाले भगवान् हैं।

सत्यसंध पालक श्रुतिसेतू ❀ रामजनमु जग मंगल हेतू ॥
गुरु-पितु-मातु-बचन-अनुसारी ❀ खल-दल-दलन देव-हित-कारी ॥

वे सत्यप्रतिज्ञ और वेदकी मर्यादाकी रक्षा करनेवाले हैं। श्रीरामचन्द्रजीका जन्म संसारके कल्याणके लिये हुआ है। ये गुरु, पिता और माताके आज्ञानुसार चलनेवाले और दुष्टोंके समूहका नाश करनेवाले तथा देवताओंका हित करनेवाले हैं।

नीति प्रीति परमारथ स्वारथु ❀ कोउ न रामसम जान जथारथु ॥
बिधि हरि हरु ससि रबि दिसि पाला ❀ माया जीव करम कुलि काला ॥

नीति, प्रीति, स्वार्थ और परमार्थको श्रीरामचन्द्रजीके समान यथार्थ कोई नहीं जानता। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, चन्द्रमा, सूर्य, दिक्पाल, माया, जीव, सम्पूर्ण कर्म, काल—

अहिप महिप जहँ लगि प्रभुताई ❀ जोग सिद्धि निगमागम गाई ॥
करि बिचार जियँ देखहु नीकें ❀ रामरजाइ सीस सबही कें ॥

शेषनाग और राजा आदि जहाँतक प्रभुता और योगकी सिद्धि वेदों और शास्त्रोंने बतलायी है, हृदयमें भलीभाँति विचारकर देखो, श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा सभीके शिरपर है।

दो०—राखें राम रजाइ रुख ❀ हम सब कर हित होइ।
समुझि सयाने करहु अब ❀ सब मिलि संमत सोइ ॥२५५॥

श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा और रुख रखनेसे ही हम सबका भला होगा। यह समझकर अब सब चतुर मिलकर यही निश्चय करो।

सब कहु सुखद रामअभिषेकू ❀ मंगल-मोद-मूल मगु एकू ॥
केहि बिधि अवध चलहिं रघुराऊ ❀ कहहु समुझि सोइ करिअ उपाऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजीका राज्याभिषेक सभीको सुखदायी है। मंगल और आनन्दका मूलमार्ग एक ही है। परन्तु श्रीरामचन्द्रजी अयोध्याको किस तरह चलेंगे ? सब लोग समझकर कहो, वही उपाय किया जाय।

सब सादर सुनि मुनिबर-बानी ❀ नय - परमारथ - स्वारथ - सानी ॥
उतरु न आव लोग भये भोरे ❀ तब सिरुनाइ भरत कर जोरे ॥

मुनिवर वशिष्ठजीकी नीति, परमार्थ और स्वार्थसे सनी हुई वाणी सब लोगोंने आदरपूर्वक सुनी। लोगोंसे उत्तर देते नहीं बना, वे भोले जैसे हो गये। तब शिर नवाकर भरतजीने हाथ जोड़े।

भानुबंस भये भूप घनेरे ❀ अधिक एक तें एक बड़ेरे ॥
जनम हेतु सब कहं पितु माता ❀ करम सुभासुभ देइ बिधाता ॥

वे कहने लगे—सूर्यवंशमें एक-एकसे बढ़-चढ़कर बहुतसे राजा हुए हैं। सबके जन्म देनेका कारण माता-पिता होते हैं और शुभाशुभ कर्म दैव ही देता है।

दलि दुख सजइ सकल कल्याना ❀ असि असीस राउरि जग जाना ॥
सोइ गोसाइं बिधि गति जेहि छेकी ❀ सकइ को टारि टेक जो टेकी ॥

संसार जानता है कि आपका आशीर्वाद ऐसा है कि दुःखोंको नष्टकर सारे कल्याण प्रस्तुत कर देता है। आप वही स्वामी हैं, जिन्होंने दैवकी गतिको भी रोक दिया। आपने जो टेक टेक दी है उसे कौन टाल सकता है ?

दो०—बूझिय मोहि उपाउ अब ❀ सो सब मोर अभागु।
सुनि सनेहमय बचन गुरु ❀ उर उमगा अनुरागु ॥२५६॥

आप मुझसे अब उपाय पूछते हैं, यह सब मेरा अभाग्य ही है। भरतजीके प्रेमभरे वचन सुनकर गुरु वशिष्ठजीके हृदयमें प्रेम उमड़ आया।

तात बात फुरि राम कृपाहीं ❀ रामबिमुख सिधि सपनेहु नाहीं ॥
सकुचउं तात कहत एक बाता ❀ अरध तजहिं बुध सरबसु जाता ॥

हे तात ! सत्य बात है, परन्तु यह सब श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे ही है; क्योंकि श्रीरामचन्द्रजीके विमुख स्वप्नमें भी सिद्धि नहीं मिलती। हे तात, एक बात कहते हुए सकुचाता हूं। पण्डित लोग सर्वस्व जाता देखकर आधा छोड़ देते हैं।

तुम्ह कानन गवंनहु दोउ भाई ❀ फेरियहि लषनु सीय रघुराई ॥
सुनि सुबचन हरषे दोउ भ्राता ❀ भे प्रमोद-परि-पूरन गाता ॥

तुम दोनों भाई वनको जाओ और लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको हम लौटा ले जावें। वशिष्ठजीके ये सुन्दर वचन सुनकर दोनों भाई प्रसन्न हुए, उनका शरीर आनन्दसे परिपूर्ण हो गया।

मन प्रसन्न तनु तेज बिराजा ❀ जनु जिये राउ रामु भये राजा ॥
बहुत लाभु लोगन्ह लघु हानी ❀ सम दुखसुख सब रोवहिं रानी ॥

उनके मन प्रसन्न हो गये और शरीरपर तेज छा गया; मानों राजा दशरथजी जी उठे हों और श्रीरामचन्द्रजी राजा हो गये हों। सब लोगोंको लाभ बहुत अधिक था और हानि कम; परन्तु रानियोंको इससे दुःख और सुख समान ही था, इससे वे सब रोने लगीं।

कहहिं भरतु मुनि कहा सो कीन्हे ❀ फलु जग जीवन्ह अभिमत दीन्हे ॥
कानन करउं जनम भरि बासू ❀ एहि तें अधिक न मोर सुपासू ॥

भरतजी कहने लगे कि मुनिने जो कुछ कहा है उसे करनेसे संसारमें जन्म लेनेका फल और अभीष्ट-सिद्धि है। मैं वनमें जन्मभर निवास करूंगा। इससे अधिक भलाई मेरे लिये और कुछ नहीं है।

दो०—अंतरजामी राम सिय ❀ तुम्ह सरबग्य सुजान।
जौं फुर कहहु त नाथ निज ❀ कीजिय बचन प्रवानु ॥२५७॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी अन्तर्यामी हैं और आप सुजान और सर्वज्ञ हैं। यदि आप सत्य ही कह रहे हैं तो हे नाथ, अपने वचनोंको पूरा कर दिखलाइये।

भरतबचन सुनि देखि सनेहू ❀ सभासहित मुनि भयउ बिदेहू ॥
भरत - महा - महिमा जलरासी ❀ मुनिमति ठाढ़ि तीर अबला सी ॥

भरतजीके वचन सुनकर और उनका प्रेम देखकर सभासमेत मुनिवर वशिष्ठजीको देहकी सुध भूल गयी। भरतजीकी महामहिमा सागरके समान है, जिसके किनारेपर मुनिकी बुद्धि अबला स्त्रीके समान खड़ी रह गयी।

गा चह पार जतनु हिय हेरा ❀ पावति नाव न बोहितु बेरा ॥
अउर करहि को भरत बड़ाई ❀ सरसी सीपि कि सिन्धु समाई ॥

वह पार जाना चाहती है। उसने अपने हृदयमें उपायोंको खोजा; परन्तु उसे न नाव मिलती है, न जहाज और न बेड़ा ही। भरतजीकी बड़ाई और कौन कर सकता है? तालाबकी सीपमें क्या समुद्र समा सकता है?

भरतु मुनिहि मनभीतर भाये ❀ सहित समाज राम पहिं आये ॥
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह सुआसनु ❀ बैठे सब सुनि मुनिअनुसासनु ॥

वशिष्ठजीको अपने मनमें भरतजी बहुत अच्छे लगे और सब समाजसमेत वे श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने प्रणाम करके सुन्दर आसन दिया और मुनिकी आज्ञा सुनकर सब लोग बैठ गये।

बोले मुनिबरु बचन बिचारी ❀ देश काल अवसर अनुहारी ॥
सुनहु राम सरबग्य सुजाना ❀ धरम-नीति-गुन-ग्यान-निधाना ॥

फिर देश, काल और अवसरके अनुसार विचार करके मुनिवर वशिष्ठजी ये वचन बोले—हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। आप सर्वज्ञ हैं, सुजान हैं, धर्म, नीति और ज्ञान—सबके भाण्डार हैं।

दो०—सब के उर अंतर बसहु ❀ जानहु भाउ कुभाउ।
पुरजन जननी-भरत-हित ❀ होइ सो कहिय उपाउ ॥२५८॥

आप सबके हृदयके भीतर बसते हैं और अच्छे-बुरे भावोंको जानते हैं। अब वह उपाय कहिये, जिसमें नगर-निवासियों, माताओं और भरतजीका कल्याण होवे।

आरत कहहिं बिचारि न काऊ ❀ सूझ जुआरिहि आपन दाऊ ॥
सुनि मुनिबचन कहत रघुराऊ ❀ नाथ तुम्हारेहि हाथ उपाऊ ॥

दुःखी मनुष्य कभी विचारकर नहीं कहते। जुआरीको अपना ही दाव दिखलायी पड़ता है। मुनिके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि हे नाथ, उपाय आपके ही हाथ है।

सब कर हित रुख राउरि राखे ❀ आयसु किये मुदित फुर भाखे ॥
प्रथम जो आयसु मो कहुं होई ❀ माथे मानि करउं सिख सोई ॥

आपका रुख रखनेमें ही सबका हित है। सत्य बोलने और आज्ञा करनेसे सबको प्रसन्नता होगी। सबसे पहिले जो आज्ञा मुझे हो, जो सीख हो, उसको मैं अपने मस्तकपर रखकर करूं।

पुनि जेहि कहं जस कहब गोसाईं ❀ सो सब भांति घटिहि सेवकाईं ॥
कह मुनि राम सत्य तुम्ह भाखा ❀ भरत-सनेह-बिचारु न राखा ॥

हे स्वामिन्, फिर आप जिसको जैसा कहेंगे वह सब प्रकारसे कर लायगा। वशिष्ठ मुनि कहने लगे कि हे श्रीरामचन्द्रजी, आपने सब सत्य कहा, परन्तु भरतजीके प्रेमका विचार नहीं रखा।

तेहि तें कहउं बहोरि बहोरी ❀ भरत-भगति-बस भइ मति मोरी ॥
मोरे जान भरत रुचि राखी ❀ जो कीजिय सो सुभ सिव साखी ॥

इसीके कारण मैं आपसे बार-बार कहता हूं। भरतजीकी भक्तिके वशमें मेरी बुद्धि हो गयी है। मेरी सम्मतिसे भरतजीकी रुचि रखकर जो कुछ भी किया जायगा वह शुभ ही होगा, इसके साथी शिव भगवान् हैं।

दो०—भरतबिनय सादर सुनिअ ❀ करिअ बिचारु बहोरि।
करब साधुमत लोकमत ❀ नृपनय निगम निचोरि ॥२५९॥

आदरके साथ आप भरतजीकी विनती सुनिये और फिर उसपर विचार कीजिये। राजनीति और शास्त्रोंके सारको समझकर लोकमत और साधुजनोंके मतको कीजिये।

गुरुअनुरागु भरत पर देखी ❀ रामहृदय आनंदु बिसेखी ॥
भरतहिं धरम-धुरं-धर जानी ❀ निजसेवक तन - मानस - बानी ॥

भरतजीपर गुरुका प्रेम देखकर श्रीरामचन्द्रजीको अपने हृदयमें विशेष आनन्द हुआ। भरतजीको धर्म-धुरन्धर और मन, वाणी और शरीरसे अपना सेवक जानकर—

बोले गुरु - आयसु - अनुकूला ❀ बचन मंजु मृदु मंगलमूला ॥
नाथ सपथ पितु चरन दोहाई ❀ भयउ न भुवन भरतसम भाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी गुरुकी आज्ञाके अनुकूल सुन्दर, कोमल और मंगल-मूल वचन बोले—हे नाथ, मुझे आपकी सौगंद है और पिताजीके चरणोंकी सौगंद है, संसारमें भरतजीके समान भाई नहीं हुआ।

जे गुरु - पद - अंबुज - अनुरागी ❀ ते लोकहुँ बेदहुँ बड़भागी ॥
राउर जा पर अस अनुरागू ❀ को कहि सकइ भरत कर भागू ॥

गुरुके चरणकमलोंमें जिनका प्रेम हो वे लोक और वेद—दोनोंमें ही बड़भागी हैं। भरतजीके भाग्यको कौन कह सकता है, जिनपर आपका ऐसा प्रेम है ?

लखि लघुबंधु बुद्धि सकुचाई ❀ करत बदन पर भरतबड़ाई ॥
भरत कहहिं सोइ किये भलाई ❀ अस कहि राम रहे अरगाई ॥

अपना छोटा भाई देखकर भरतजीकी प्रशंसा मुँहपर करते हुए बुद्धिको संकोच होता है। भरतजी जो कुछ कहें, वही करनेमें भलाई है—ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजी उदासीन हो गये।

दो०—तब मुनि बोले भरतसन ❀ सबु संकोचु तजि तात।
कृपासिंधु प्रियबंधु सन ❀ कहहु हृदय कइ बात ॥२६०॥

तब मुनिने भरतजीसे कहा कि हे तात; सब संकोच छोड़कर कृपासागर प्यारे भाईको हृदयकी सब बात सुनाओ।

सुनि मुनिबचन रामरुख पाई ❀ गुरु साहिब अनुकूल अघाई ॥
लखि अपने सिर सब छरुभारू ❀ कहि न सकहिं किछु करहिं बिचारू ॥

मुनिके वचन सुनकर और श्रीरामचन्द्रजीका रुख पाकर और गुरु तथा स्वामीकी अनुकूलतासे संतुष्ट होकर, अपने ही शिरपर सब तरहका भार देखकर भरतजी कुछ कह नहीं सके। वे विचार करने लगे।

पुलकि सरीर सभा भये ठाढ़े ❀ नीरजनयन नेहजल बाढ़े ॥
कहब मोर मुनिनाथ निबाहा ❀ एहि तें अधिक कहउँ मैं काहा ॥

पुलकित शरीर होकर वे सभामें खड़े हुए। उनके कमलनेत्रोंमें प्रेमके आंसुओंका वेग बढ़ आया। वे कहने लगे—जो कुछ मुझे कहना था, वह सब मुनिनाथ वशिष्ठजीने कह दिया। इससे अधिक मैं और क्या कहूं?

मैं जानउँ निजनाथ सुभाऊ ❀ अपराधिहु पर कोह न काऊ ॥
मोपर कृपा सनेहु बिसेखी ❀ खेलत खुनस न कबहूं देखी ॥

मैं अपने स्वामीका स्वभाव जानता हूं। अपराधीपर भी वे कभी क्रोध नहीं करते। मुझपर तो उनकी विशेष कृपा और प्रीति है। मैंने खेलमें भी कभी उनका क्रोध नहीं देखा है।

सिसुपन तें परिहरेउँ न संगू ❀ कबहुं न कीन्ह मोर मन भंगू ॥
मैं प्रभु कृपारीति जिय जोही ❀ हारेहु खेल जितावहिं मोही ॥

बचपनसे मैंने उनका संग नहीं छोड़ा, परन्तु उन्होंने कभी मेरे जीको तोड़ा नहीं। प्रभुकी कृपा करनेकी रीतिको मैंने हृदयमें समझ लिया है। हार जानेपर भी मुझे खेलमें ये जिता देते थे।

दो०—महूँ सनेह-सकोच-बस ❀ सनमुख कहे न बयन।
दरसन तृपित न आजु लगि ❀ प्रेम पियासे नयन ॥ २६१ ॥

स्नेह और संकोचके वशमें होनेके कारण मैंने भी सामने कभी वचन नहीं कहे। आजतक दर्शनोंसे तृप्ति नहीं हुई। ये नेत्र प्रेमके प्यासे बने ही हुए हैं।

बिधि न सकेउ सहि मोर दुलारा ❀ नीच बीचु जननी मिसु पारा ॥
यहउ कहत मोहि आजु न सोभा ❀ अपनी समुझि साधु सुचि को भा ॥

मेरा यह दुलार दैव नहीं सह सका। नीचने माताके बहाने अंतर डाल दिया। यह कहते हुए भी आज मेरी शोभा नहीं है। अपनी समझसे साधु और पवित्र कौन हुआ है?

मातु मंदि मैं साधु सुचाली ❀ उर अस आनत कोटि कुचाली ॥
फरइ कि कोदव बालि सुसाली ❀ मुकता प्रसव कि संबुक काली ॥

माता अधम है और मैं साधु तथा अच्छे चलनका हूँ—हृदयमें ऐसा लाते ही करोड़ कुचालें उत्पन्न हो जाती हैं। कोदोंकी बालीमें क्या उत्तम अन्न लग सकता है? तालाबकी सीपसे क्या मोती निकल सकता है?

सपनेहुँ दोस कलेसु न काहू ❀ मोर अभाग उदधिअवगाहू ॥
बिनु समझें निज-अघ-परिपाकू ❀ जारिउँ जाय जननि कहि काकू ॥

यह सब मेरे अभाग्यके समुद्रका स्नान है। किसीको स्वप्नमें भी दोष और क्लेश नहीं। अपने पापोंके फलको समझे बिना मैंने बुरा-भला कहकर माताको जाकर जलाया।

हृदय हेरि हारेउँ सब ओरा ❀ एकहि भांति भलेहि भल मोरा ॥
गुरु गोसाइँ साहिब सियरामू ❀ लागत मोहि नीक परिनामू ॥

सब ओरसे अपने हृदयमें खोजकर हार गया हूँ। एक ही प्रकारसे भले ही मेरा भला हो। मेरे गुरु समर्थ हैं और सीताजी तथा श्रीरामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं, इसलिये मुझे परिणाम अच्छा प्रतीत होता है।

दो०—साधु-सभा-गुरु-प्रभु-निकट ❀ कहउँ सुथल सतिभाउ।
प्रेम प्रपंचु कि झूठ फुर ❀ जानहिं मुनि रघुराउ ॥ २६२ ॥

अच्छे स्थानपर, साधुजनोंकी सभामें, गुरु और स्वामीके सामने सच्चे भावसे कहता हूँ। मुनि और श्रीरामचन्द्रजी जानते हैं कि यह सब प्रेम है या छल, और सत्य है या झूठ!

भूपतिमरनु प्रेमु पनु राखी ❀ जननी कुमति जगतु सबु साखी ॥
देखि न जाहिं बिकल महतारीं ❀ जरहिं दुसह जर पुर-नर-नारीं ॥

राजाकी मृत्यु प्रेम और प्रतिज्ञा रखनेके लिये हुई। माताकी दुर्बुद्धिका साक्षी तो सारा संसार है। व्याकुल माताएँ देखी नहीं जातीं। नगरके स्त्री-पुरुष दुस्सह दाहसे जल रहे हैं।

महीं सकल अनरथ कर मूला ❀ सो सुनि समुझि सहेउँ सब सूला ॥
सुनि बनगवनु कीन्ह रघुनाथा ❀ करि मुनिबेष लखनु-सिय-साथा ॥

इस सब अनर्थका मूल मैं ही हूँ, यह सुनकर और समझकर मैंने सब दुःख सह लिये। फिर यह सुनकर कि मुनिका भेष बनाकर लक्ष्मणजी और सीताजीके साथ श्रीरामचन्द्रजी वनको चले गये—

बिनु पानहिन्ह पयादेहि पायें ❀ संकरु साखि रहेउँ एहि घायें ॥
बहुरि निहारि निषादसनेहू ❀ कुलिस कठिन उर भयउ न बेहू ॥

मैं नंगे पैरों और पांवपैदल इधर दौड़ा, इसके साक्षी शंकरजी हैं। फिर गुह निषादका प्रेम देखकर भी वज्रके समान कठोर हृदयमें छेद नहीं हुआ!

अब सबु आँखिन्ह देखेउँ आई ❀ जियत जीव जड़ सबइ सहाई ॥
जिन्हहिं निरखि मग साँपिनि बीछीं ❀ तजहिं बिषमबिष तामस तीछीं ॥

अब आकर सब कुछ आंखों देख लिया। इस मूर्ख जीवने सब कुछ जीतेजी ही सहन कर लिया। जिन्हें मार्गमें देखकर सांपिनी और बीछी भी अपना कठोर विष और तमोगुणी तीक्ष्ण स्वभाव छोड़ देती हैं,

दो०—तेइ रघुनंदनु लषनु सिय ❀ अनहित लागे जाहि।
तासु तनय तजि दुसह दुख ❀ दैव सहावइ काहि ॥२६३॥

वही श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी जिसे शत्रु मालूम हुए उसके पुत्रको छोड़कर दैव और किसे दुस्सह दुःख सहन करावे ?

सुनि अति बिकल भरत-बर-बानी ❀ आरति-प्रीति-बिनय-नय-सानी ॥
सोकमगन सब सभा खभारू ❀ मनहुँ कमलबन परेउ तुषारू ॥

अत्यन्त व्याकुल भरतजीकी दुःख, प्रेम, नम्रता और नीतिसे सनी हुई सुन्दर वाणी सुनकर सब लोग शोकमग्न हो गये। सारी सभामें क्षोभ छा गया; मानों कमलके वनपर पाला पड़ गया हो।

कहि अनेकबिधि कथा पुरानी ❀ भरतप्रबोधु कीन्ह मुनि ग्यानी ॥
बोले उचित बचन रघुनंदू ❀ दिन-कर-कुल-कैरव-बन-चंदू ॥

अनेक प्रकारकी पुरानी कथाएं कहकर ज्ञानी मुनिने भरतजीको ज्ञानोपदेश किया। फिर सूर्यवंशरूपी कुमुद-वनके लिये चंद्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी उचित वचन बोले।

तात जाय जिय करहु गलानी ❀ ईसअधीन जीवगति जानी ॥
तीनि काल त्रिभुवन मत मोरे ❀ पुन्यसिलोक तात तर तोरे ॥

हे तात, जीवकी गति ईश्वरके अधीन जानकर तुम अपने जीमें व्यर्थ ही ग्लानि करते हो! तीनों काल और तीनों लोकोंमें मेरे मतसे जो पवित्र कीर्तिवाले हैं वे सब हे तात, तुम्हारे नीचे हैं।

उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई ❀ जाइ लोकु परलोकु नसाई ॥
दोष देहिं जननिहि जड़ तेई ❀ जिन्ह गुरु-साधु-सभा नहिं सेई ॥

तुम्हारे विषयमें किसी तरहकी दुष्टताकी बात हृदयमें लाते ही लोक और परलोक दोनों ही व्यर्थ नष्ट हो जाते हैं। माता कैकेयीको वही मूर्ख दोष देते हैं, जिन्होंने गुरुजनों और साधुजनोंकी सभाका सेवन नहीं किया।

दो०—मिटिहहिं पाप प्रपंच सब ❀ अखिल अमंगल भार।
लोकु सुजसु परलोकु सुखु ❀ सुमिरत नामु तुम्हार ॥२६४॥

तुम्हारा नाम स्मरण करनेसे सारे अशुभ-समूह और पापके सारे प्रपंच नष्ट हो जायंगे, और इस लोकमें यश और परलोकमें सुख मिलेगा।

कहउँ सुभाउ सत्य सिव साखी ❀ भरत भूमि रह राउरि राखी ॥
तात कुतरक करहु जनि जायें ❀ बैर प्रेम नहिं दुरइ दुरायें ॥

मैं स्वभावसे ही सत्य कहता हूँ। इसके साक्षी शिवजी हैं। हे भरत, तुम्हारे रखनेसे ही पृथिवी रहेगी। हे तात, व्यर्थ ही कुतर्क मत करो। वैर और प्रेम छिपाये नहीं छिपता।

मुनि गुनि निकट बिहंग मृग जाहीं ❀ बाधक बधिक बिलोकि पराहीं ॥
हित अनहित पसु पंछिउ जाना ❀ मानुषतनु गुन-ग्यान-निधाना ॥

मुनि समझकर पक्षी और हिरन पास चले जाते हैं, परन्तु बहेलियोंके बालकोंको देखकर वे भाग जाते हैं। पशु और पक्षी भी अपना शत्रु और मित्र पहिचानते हैं। फिर मनुष्यका शरीर तो गुण और ज्ञानका स्थान है।

तात तुम्हहिं मैं जानउँ नीकें ❀ करउँ काह असमंजस जी कें ॥
राखेउ राउ सत्य मोहि त्यागी ❀ तनु परिहरेउ प्रेम मनु लागी ॥

हे तात, तुम्हें मैं भलीभांति जानता हूँ; परन्तु क्या करूँ, जीमें बड़ा असमंजस हो गया है। मुझे त्यागकर राजाने सत्यको रखा और अपनी प्रतिज्ञा और प्रेमके लिये शरीर त्याग दिया।

तासु बचन मेटत मन सोचू ❀ तेहि तें अधिक तुम्हार संकोचू ॥
ता पर गुरु मोहि आयसु दीन्हा ❀ अवसि जो कहहु चहउँ सो कीन्हा ॥

उनके वचनको मेटते हुए मनको शोक होता है, और उससे भी अधिक होता है तुम्हारा संकोच! उस-पर गुरुजीने मुझे आज्ञा दी है—तुम जो कुछ कहो उसे ही मैं अवश्य करना चाहता हूँ।

दो०—मनु प्रसन्न करि सकुच तजि ❀ कहहु करउँ सोइ आजु।
सत्य-संध - रघुबर - बचन ❀ सुनि भा सुखी समाजु ॥२६५॥

मन प्रसन्न करके संकोच छोड़कर कहो। उसे ही मैं आज करूँगा। सत्यप्रतिज्ञ श्रीरामचन्द्रजीके ये वचन सुनकर सारा समाज सुखी हो गया।

सुरगन-सहित सभय सुरराजू ❀ सोचहिं चाहत होत अकाजू ॥
करत उपाउ बनत कछु नाहीं ❀ रामसरन सब गे मन माहीं ॥

उधर देवताओं-समेत देवराज इन्द्र भयभीत हो गये और सोचने लगे कि अब काम बिगड़ना चाहता है। कुछ उपाय करते नहीं बनता, इसलिये वे सब मनमें श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें गये।

बहुरि बिचारि परसपर कहहीं ❀ रघुपति भगत-भगति-बस अहहीं ॥
सुधि करि अंबरीष दुरबासा ❀ भे सुर सुरपति निपट निरासा ॥

फिर विचार करके परस्पर कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजी भक्तकी भक्तिके वशमें हैं। राजा अंबरीष और दुर्वासा मुनिकी बात स्मरण कर सब देवता और इन्द्र बिलकुल निराश हो गये।

सहे सुरन्ह बहुकाल बिषादा ❀ नरहरि किये प्रगट प्रहलादा ॥
लगि लगि कान कहहिं धुनि माथा ❀ अब सुरकाज भरतके हाथा ॥

पहिले देवताओंने बहुत समयतक दुःख सहन किये, तब प्रह्लादने नरसिंह भगवान्‌को प्रकट किया था। सब देवता एक दूसरेके कानसे लग-लगकर अपना-अपना शिर धुनकर कहने लगे कि अब देवताओंका काम भरतजीके हाथ है।

आन उपाउ न देखिय देवा ❀ मानत रामु सु-सेवक सेवा ॥
हिय सप्रेम सुमिरहु सब भरतहिं ❀ निज-गुन-सील रामबस करतहिं ॥

हे देवताओ, और कोई उपाय नहीं दिखलायी पड़ता। अच्छे सेवककी सेवाको श्रीरामचन्द्रजी मानते हैं। इसलिये सब लोग अपने हृदयमें प्रेमके साथ भरतजीका स्मरण करो, जिन्होंने अपने गुण और शीलसे श्रीरामचन्द्रजीको अपने वशमें कर लिया है।

दो०—सुनि सुरमत सुरगुरु कहेउ ❀ भल तुम्हार बड़भागु ।
सकल सु-मंगल-मूल जग ❀ भरत-चरन-अनुरागु ॥२६६॥

देवताओंका मत सुनकर देवगुरु बृहस्पतिने कहा कि यह अच्छा है। तुम्हारा बड़ा भाग्य है। संसारमें भरतजीके चरणोंका प्रेम सभी शुभमंगलोंका मूल है।

सीतापति सेवक सेवकाई ❀ काम-धेनु-सय-सरिस सुहाई ॥
भरतभगति तुम्हरें मन आई ❀ तजहु सोचु बिधि बात बनाई ॥

सीतापति श्रीरामचन्द्रजीके सेवककी सेवा सौ कामधेनुओंके समान सुहावनी है। तुम्हारे मनमें भरतजीकी भक्ति उत्पन्न हो गयी है, इसलिये अब सोच छोड़ दो। दैवने बात बना दी है।

देखु देवपति भरतप्रभाऊ ❀ सहज-सुभाय-बिबस रघुराऊ ॥
मन थिर करहु देव डरु नाहीं ❀ भरतहिं जानि रामपरछाहीं ॥

हे देवराज इन्द्र, भरतजीका प्रभाव तो देखो, जिनके सहज स्वभावके वशमें श्रीरामचन्द्रजी हो रहे हैं। भरतजीको श्रीरामचन्द्रजीकी परछाईं जानकर हे देवताओ, अपना मन स्थिर करो, अब डर नहीं है।

सुनि सुरगुरु - सुर - संमत सोचू ❀ अंतरजामी प्रभुहिं संकोचू ॥
निज सिर भारु भरत जिय जाना ❀ करत कोटि बिधि उर अनुमाना ॥

देवगुरु बृहस्पति और देवताओंकी सम्मति और चिन्ताकी बात सुनकर अन्तर्यामी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको संकोच हुआ। इधर भरतजीने अपने हृदयमें जब सारा भार अपने ही शिरपर समझा तब वे अपने हृदयमें करोड़ों तरहके अनुमान लगाने लगे।

करि बिचारु मन दीन्ही ठीका ❀ रामरजायसु आपन नीका ॥
निज पन तजि राखेउ पनु मोरा ❀ छोहु सनेहु कीन्ह नहिं थोरा ॥

विचार करके उन्होंने अपने मनमें यह निश्चय कर लिया कि अपना भला श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञामें ही है। श्रीरामचन्द्रजीने अपना प्रण छोड़कर मेरा प्रण रखा है और कृपा और स्नेह भी कम नहीं किया है।

दो०—कीन्ह अनुग्रह अमित अति ❀ सब बिधि सीतानाथ।
करि प्रनामु बोले भरतु ❀ जोरि जलज - जुग - हाथ ॥

सीतापति श्रीरामचन्द्रजीने मुझपर सब प्रकारसे अत्यन्त असीम दया की है। कमलके समान अपने दोनों हाथ जोड़कर भरतजी प्रणाम करके बोले।

कहउँ कहावउँ का अब स्वामी ❀ कृपा - अंबु - निधि अंतरजामी ॥
गुरु प्रसन्न साहिब अनुकूला ❀ मिटी मलिन मनकलपित सूला ॥

हे स्वामिन्, अब क्या कहूं और क्या कहलाऊँ? आप कृपासागर और अन्तर्यामी हैं। गुरुजीको प्रसन्न और स्वामीको अनुकूल देखकर मेरे मैले मनकी कल्पित पीड़ा दूर हो गयी।

अपडर डरेउँ न सोच समूले ❀ रबिहि न दोषु देव दिसि भूले ॥
मोर अभागु मातुकुटिलाई ❀ बिधिगति बिषम कालकठिनाई ॥

मैं झूठे डरसे डर गया था। मेरी चिन्ता निर्मूल थी। हे देव, कोई दिशा भूल जाय तो उसके लिए सूर्य दोषी नहीं। मेरा अभाग्य, माताकी कुटिलता, दैवकी प्रतिकूल गति और कालकी कठोरता—

पाउँ रोपि सब मिलि मोहि घाला ❀ प्रनतपाल पन आपन पाला ॥
यह नइ रीति न राउरि होई ❀ लोकहु बेद बिदित नहिं गोई ॥

सबने मिलकर पैर रोपकर मेरा नाश कर दिया; परन्तु दीनोंको पालनेवाले आपने अपना प्रण पूरा किया। यह आपकी कोई नयी रीति नहीं है। लोक और वेद—दोनोंमें ही प्रकट है, छिपी हुई नहीं।

जगु अनभल भल एकु गोसाईं ❀ कहिय होइ भल कासु भलाईं ॥
देव देव - तरु - सरिस सुभाऊ ❀ सनमुख बिमुख न काहुहि काऊ ॥

हे स्वामिन्! संसार बुरा है, एक आप ही भले हैं। फिर, भला कहिये, किससे भलाई हो? हे देव, आपका स्वभाव कल्पवृक्षके समान है, जो सामने होनेपर कभी किसीसे विमुख नहीं होता।

दो०—जाइ निकट पहिचानि तरु ❀ छाहं समनि सब सोच।
मांगत अभिमत पाव जगु ❀ राउ रंक भल पोच ॥२६८॥

पास जाकर, कल्पवृक्षको पहिचानकर, जिसकी छाया सब सोच दूर कर देती है, मांगते ही राजा-रंक और भले-बुरे—सारा संसार उससे मनचाहा फल पा जाता है।

लखि सब बिधि-गुरु-स्वामि-सनेहू ❀ मिटेउ छोभु नहिं मन संदेहू ॥
अब करुनाकर कीजिअ सोई ❀ जन हित प्रभुचित छोभु न होई ॥

गुरु और स्वामीका सब प्रकार प्रेम देखकर मेरा क्षोभ मिट गया। अब मेरे मनमें संदेह नहीं है। हे करुणानिधान, अब आप वही कीजिये, जिसमें मुझ सेवकका भला हो और आपके चित्तको क्षोभ न हो।

जो सेवकु साहिबहिं संकोची ❀ निजहित चहइ तासु मति पोची ॥
सेवकहित साहिबसेवकाई ❀ करइ सकल सुख लोभ बिहाई ॥

जो सेवक स्वामीको संकोचमें डालकर अपना भला करना चाहता है उसकी बुद्धि नीच है। सेवकका हित स्वामीकी सेवामें ही है, जो उसे सब सुख और सारा लोभ छोड़कर करनी चाहिये।

स्वारथु नाथ फिरें सबही का ❀ कियें रजाइ कोटि बिधि नीका ॥
यह स्वारथ-परमारथ-सारू ❀ सकलसुकृत फल सुगति सिंगारू ॥

हे नाथ, आपके लौटनेमें सभीका स्वार्थ है और आपकी आज्ञाका पालन करना करोड़ तरहसे अच्छा है। यह स्वार्थ और परमार्थका सार है, सब पुण्योंका फल है और सत्‌गतिका शृंगार भी यही है।

देव एक बिनती सुनि मोरी ❀ उचित होइ तस करब बहोरी ॥
तिलक समाजु साजि सबु आना ❀ करिय सुफल प्रभु जौं मनमाना ॥

हे देव, मेरी एक विनती सुन लीजिए; फिर जैसा उचित हो वैसा कीजियेगा। राजतिलकका सब सामान सजाकर लेता आया हूं। हे प्रभो, यदि हृदय स्वीकार करता हो तो उसे सफल कीजिए।

दो०—सानुज पठइअ मोहिं बन ❀ कीजिअ सबहिं सनाथ।
नतरु फेरिअहिं बन्धु दोउ ❀ नाथ चलउं मैं साथ ॥२६९॥

छोटे भाईसमेत मुझे वनको भेज दीजिये और आप सबको सनाथ कीजिये, नहीं तो हे नाथ, दोनों भाइयोंको अयोध्याको लौटा दीजिये और मैं आपके साथ चलता हूं।

न तरु जाहिं बन तीनिउ भाई ❁ बहुरिअ सीयसहित रघुराई ॥
जेहि विधि प्रभु प्रसन्न मन होई ❁ करुनासागर कीजिअ सोइ ॥

नहीं तो तीनों भाई वनको चले जावें और हे श्रीरामचन्द्रजी, सीताजीसमेत आप लौट जाइये। हे प्रभो हे दयासागर, जिस प्रकार आपका मन प्रसन्न होवे, वही कीजिये।

देव दीन्ह सबु मोहि अभारू ❁ मोरे नीति न धरम बिचारू ॥
कहउँ बचन सब स्वारथहेतू ❁ रहत न आरत कें चित चेतू ॥

हे देव, यद्यपि आपने मेरे शिरपर सब भार डाल दिया है तथापि मुझे नीति और धर्मका विचार नहीं है। मैं तो सारी बातें स्वार्थके लिए कहता हूं। दुःखी मनुष्यके चित्तमें चेतना नहीं रहती।

उतरु देइ सुनि स्वामिरजाई ❁ सो सेवक लखि लाज लजाई ॥
अस मैं अवगुन-उदधि-अगाधू ❁ स्वामि सनेह सराहत साधू ॥

स्वामीकी आज्ञा सुनकर जो सेवक उत्तर देता है उसे देखकर लज्जाको भी लज्जा आती है। मैं अवगुणोंका ऐसा अथाह समुद्र हूं और स्वामी मेरे स्नेहकी अच्छी सराहना करते हैं।

अब कृपाल मोहि सो मत भावा ❁ सकुच स्वामि मन जाइ न पावा ॥
प्रभु-पद-सपथ कहउँ सतिभाऊ ❁ जग मंगल-हित एक उपाऊ ॥

हे कृपालु, अब मुझे वही बात अच्छी लगती है जिससे स्वामीका मन संकोच न पावे। मुझे प्रभुके चरणोंकी सौगंद है। मैं सच्चे भावसे कहता हूं कि संसारका मंगल होनेके लिये एक उपाय है।

दो०—प्रभु प्रसन्न मन सकुच तजि ❁ जो जेहि आयसु देब।
सो सिर धरि धरि करिहि सबु ❁ मिटिहि अनट अबरेब ॥२७०॥

हे प्रभो, प्रसन्न मनसे संकोच छोड़कर आप जिसको जो आज्ञा देंगे उसे अपने शिरोपर रख-रखकर सब लोग करेंगे और यह अनुचित कुपेच मिट जायगा।

भरत बचन सुचि सुनि सुर हरषे ❁ साधु सराहि सुमन सुर बरषे ॥
असमंजसबस अवधनिवासी ❁ प्रमुदित मन तापस-बन-बासी ॥

भरतजीके पवित्र वचन सुनकर देवता प्रसन्न हुए। उन्होंने अच्छी तरह प्रशंसा कर पुष्पवृष्टि की। अयोध्यापुरीके रहनेवाले असमंजसमें पड़ गये और तपस्वी तथा वनवासी लोग मनमें आनन्दित हो गये।

चुपहि रहे रघुनाथ संकोची ❁ प्रभु गति देखि सभा सब सोची ॥
जनक दूत तेहि अवसर आये ❁ मुनि बसिष्ठ सुनि बेगि बोलाये ॥

संकोचमें पड़कर श्रीरामचन्द्रजी चुप ही रहे। उनकी यह दशा देखकर सब सभा शोचमें पड़ गयी। उसी समय राजा जनकके दूत वहां आये। सुनते ही वशिष्ठ मुनिने उन्हें जल्दीसे बुलाया।

करि प्रनामु तिन्ह रामु निहारे ❀ बेषु देखि भये निपट दुखारे॥
दूतन्ह मुनिबर बूझी बाता ❀ कहहु बिदेह भूप कुसलाता॥

प्रणाम करके उन्होंने जब श्रीरामचन्द्रजीको देखा तब उनका भेष देखकर वे अत्यन्त दुःखी हुए। मुनिवर वशिष्ठने दूतसे यह बात पूछी कि भला कहो, राजा जनक कुशलसे तो हैं ?

सुनि सकुचाइ नाइ महि माथा ❀ बोले चरबर जोरे हाथा॥
बूझब राउर सादर साईं ❀ कुसलहेतु सो भयउ गोसाईं॥

सुनकर संकोचसे पृथिवीकी ओर शिर झुकाकर वे श्रेष्ठ दूत हाथ जोड़े हुए बोले—हे स्वामिन्, आदरके साथ आपका पूछना ही कुशलका कारण हुआ—

दो०—नाहिं त कोसलनाथ कें ❀ साथ कुसल गइ नाथ।
मिथिला अवध बिसेष तें ❀ जगु सब भये अनाथ॥२७१॥

नहीं तो हे नाथ, कोशलपति राजा दशरथके साथ ही कुशलता चली गयी। सारा संसार और विशेषकर मिथिला और अयोध्या उनके बिना अनाथ हो गयी।

कोसलपति गति सुनि जनकौरा ❀ भे सब लोक सोकबस बौरा॥
जेहिं देखे तेहि समय बिदेहू ❀ नामु सत्य अस लाग न केहू॥

कोशलपति राजा दशरथकी गति सुनकर जनकपुरमें सब लोग शोकके वशमें होकर बावले हो गये। उस समय राजा विदेहको जिन्होंने देखा उनमेंसे किसीको भी ऐसा न प्रतीत हुआ कि उनका नाम 'विदेह' सत्य है।

रानि-कु-चालि सुनत नरपालहि ❀ सूझ न कछु जस मनि बिनु ब्यालहि॥
भरतराजु रघुबर-बन-बासू ❀ भा मिथिलेसहि हृदय हरासू॥

रानी कैकेयीकी खोटी चाल सुनते ही राजाको कुछ भी न सूझ पड़ा, जैसे मणिके बिना सर्पको नहीं दिखलायी पड़ता। भरतजीको राजतिलक दिया और श्रीरामचन्द्रजीको वनवास; इससे मिथिलेशको हृदयमें बड़ा ही खेद हुआ।

नृप बूझे बुध-सचिव-समाजू ❀ कहहु बिचारि उचित का आजू॥
समुझि अवध असमंजस दोऊ ❀ चलिय कि रहिय न कह कछु कोऊ॥

राजाने पण्डितों और मंत्रियोंसे पूछा कि विचारकर कहिये कि आज क्या करना उचित है ? अयोध्याकी ओर दोनों ही बातोंको बेमेल समझकर किसीने कुछ नहीं कहा कि चलना चाहिये या रहना चाहिये।

नृपहि धीर धरि हृदय बिचारी ❀ पठये अवध चतुर चर चारी ॥
बूझि भरत सतिभाउ कुभाऊ ❀ आयेहु बेगि न होहि लखाऊ ॥

फिर राजाने ही धीरज रखकर हृदयमें विचार किया और चार चतुर दूत अयोध्याको भेजे, और आज्ञा दी कि भरतजीके सद्भाव और दुर्भावको जानकर जल्दी लौट आना, यह प्रगट न होने पावे ।

दो०—गये अवधचर भरतगति ❀ बूझि देखि करतूति ।
चले चित्रकूटहि भरतु ❀ चार चले तिरहूति ॥२७२॥

दूत अयोध्याको गये । (फिर) वहां भरतजीकी दशाको जानकर और उनकी करतूत देखकर दूत तो उधर तिरहुतके लिये चले और इधर भरतजी चित्रकूटको विदा हुए ।

दूतन्ह आइ भरत कइ करनी ❀ जनकसमाज जथामति बरनी ॥
सुनि गुरु परिजन सचिव महीपति ❀ भे सब सोच सनेह बिकल अति ॥

दूतोंने आकर अपनी बुद्धिके अनुसार भरतजीकी करनी राजा जनककी सभामें वर्णन की । उसे सुनकर गुरु, कुटुम्बी, मंत्री, राजा—सब शोच और स्नेहसे अत्यन्त व्याकुल हो गये ।

धरि धीरज करि भरत बड़ाई ❀ लिये सुभट साहनी बोलाई ॥
घर पुर देस राखि रखवारे ❀ हय गय रथ बहु जान संवारे ॥

धीरज रखकर और भरतजीकी बड़ाई कर राजा जनकने अच्छे-अच्छे योद्धा और सेनापति बुला लिये; और उन्हें राजभवन, नगर और देशकी रखवालीका काम सौंपकर हाथी, घोड़ा, रथ और बहुतसी सवारियां तैयार करायीं ।

दुघरी साधि चले ततकाला ❀ किय बिस्राम न मग महिपाला ॥
भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा ❀ चले जमुन उतरन सबु लागा ॥

द्विघटिका मुहूर्त साधकर वे उसी समय चल दिये । राजाने मार्गमें भी विश्राम नहीं किया । आज सवेरे ही प्रयाग-स्नान कर विदा हुए और जब सब लोग यमुनाजीके पार उतरने लगे—

खबरि लेन हम पठये नाथा ❀ तिन्ह कहि अस महि नायेउ माथा ॥
साथ किरात छसातक दीन्हे ❀ मुनिबर तुरत बिदा चर कीन्हे ॥

तब हे नाथ, खबर लानेके लिये हमलोगोंको आगे भेज दिया । ऐसा कहकर उन दूतोंने पृथिवीकी ओर शिर झुका लिया । मुनिवर वशिष्ठने छः-सात किरातोंको साथ कर दिया और तुरन्त ही दूतोंको विदा किया ।

दो०—सुनत जनक आगवनु सबु ❀ हरषेउ अवधसमाजु ।
रघुनंदनहिं सकोचु बड़ ❀ सोचबिबस सुरराजु ॥२७३॥

राजा जनकका आगमन सुनते ही अयोध्याका सारा समाज प्रसन्न हो गया, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीको बड़ा संकोच हुआ और देवराज इन्द्र तो सोचमें डूब गये।

गरइ गलानि कुटिल कैकेई ❀ काहि कहइ केहि दूषनु देई ॥
अस मन आनि मुदित नरनारी ❀ भयउ बहोरि रहब दिन चारी ॥

दुष्टा कैकेयी ग्लानिसे गली जा रही थी। वह किससे कहे और किसे दोष लगावे? स्त्री और पुरुष— सब मनमें यह जानकर प्रसन्न हुए कि फिर चार दिनके लिये रहना हो गया।

एहि प्रकार गत बासर सोऊ ❀ प्रात नहान लाग सबु कोऊ ॥
करि मज्जनु पूजहिं नरनारी ❀ गनप गौरि तिपुरारि तमारी ॥

इस प्रकार वह दिन भी बीत गया। सवेरे सब लोगोंने नहाना आरंभ किया। स्त्रियां और पुरुष सब लोग स्नान करके गणेशजी, पार्वतीजी, शिवजी और सूर्यकी पूजा करने लगे।

रमा-रमन-पद बंदि बहोरी ❀ बिनवहिं अंजलि अंचल जोरी ॥
राजाराम जानकीरानी ❀ आनंदअवधि अवधरजधानी ॥

फिर वे लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुके चरणोंकी वंदना करके अंजलि बांधकर और अंचल पसारकर विनती करने लगे कि श्रीरामचन्द्रजी राजा और सीताजी रानी हों, आनन्दकी सीमा अयोध्या राजधानी हो।

सुबस बसउ फिरि सहित समाजा ❀ भरतहिं रामु करहु जुबराजा ॥
एहि सुखसुधा सींचि सब काहू ❀ देव देहु जग-जीवन-लाहू ॥

सब समाजसमेत वे फिर अच्छी तरह वहां बसे और श्रीरामचन्द्रजी भरतजीको युवराज बनावें, इस सुखरूपी अमृतसे सब किसीको सींचकर हे देव, संसारमें जीवन धारण करनेका लाभ दीजिये।

दो०—गुरुसमाज भाइन्ह सहित ❀ रामराजु पुर होउ।
अछत रामराजा अवध ❀ मरिय मांग सबु कोउ ॥ २७४ ॥

सब कोई यह मांगते थे कि गुरु, समाज और भाइयोंसमेत अयोध्यापुरीमें श्रीरामचन्द्रजीका राज होवे और अयोध्यामें श्रीरामचन्द्रजीके राजा रहते ही हमारी मृत्यु होवे।

सुनि सनेहमय पुर-जन-बानी ❀ निंदहिं जोग बिरति मुनि ग्यानी ॥
एहि बिधि नित्य करम करि पुरजन ❀ रामहिं करहिं प्रनाम पुलकि तन ॥

अयोध्यावासियोंकी प्रेमभरी वाणी सुनकर ज्ञानी मुनि योग और वैराग्यकी भी निन्दा करने लगे। इस प्रकार नित्य कर्म करके नगरवासी पुलकित-शरीर होकर श्रीरामचन्द्रजीको प्रणाम करते हैं।

ऊँच नीच मध्यम नर नारी ❀ लहहिं दरसु निज निज अनुहारी ॥
सावधान सबही सनमानहिं ❀ सकल सराहत कृपानिधानहिं ॥

उत्तम, मध्यम और अधम, सभी स्त्री-पुरुष अपनी-अपनी रुचिके अनुसार श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन पाते हैं। कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी सबका यथोचित आदर करते हैं और सब लोग श्रीरामचन्द्रजीकी प्रशंसा करते हैं।

लरिकाइहि तें रघुबरबानी ❀ पालत नीति प्रीति पहिचानी ॥
सील-सँकोच-सिंधु रघुराऊ ❀ सुमुख सुलोचन सरलसुभाऊ ॥

बचपनसे ही श्रीरामचन्द्रजीका यह स्वभाव है कि वे नीति और प्रीतिको पहिचानकर पालते हैं। श्रीरामचन्द्रजी शील और संकोचके समुद्र हैं। उनका मुख और नेत्र सुन्दर हैं और स्वभाव सरल है।

कहत राम-गुन-गन अनुरागे ❀ सब निज भाग सराहन लागे ॥
हम सम पुन्यपुंज जग थोरे ❀ जिन्हहिं रामु जानत करि मोरे ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको कहते-कहते वे सब प्रेममें भर गये और अपना भाग्य सराहने लगे कि हमारे समान पुण्यवान संसारमें कम ही हैं, जिन्हें श्रीरामचन्द्रजी अपना करके जानते हों।

(जनकका आगमन)

दो०—प्रेममगन तेहि समय सब ❀ सुनि आवत मिथिलेसु ।
सहित सभा संभ्रम उठेउ ❀ रबि-कुल-कमल-दिनेसु ॥२७५॥

उस समय सब लोग यह सुनकर कि मिथिलानरेश जनकजी आ रहे हैं, प्रेममें मग्न हो गये। सूर्यकुलरूपी कमलके सूर्य श्रीरामचन्द्रजी सभासमेत सहसा उठकर खड़े हो गये।

भाइ-सचिव-गुरु-पुरजन-साथा ❀ आगे गवन कीन्ह रघुनाथा ॥
गिरिबरु दीख जनकपति जबहीं ❀ करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं ॥

भाई, मंत्री, गुरु और अयोध्याके नागरिक—सबके साथ श्रीरामचन्द्रजी आगे बढ़कर गये। उधर राजा जनकको जबसे वह श्रेष्ठ पर्वत चित्रकूट दिखलायी पड़ा तभीसे उन्होंने उसे प्रणाम करके रथ छोड़ दिया।

रामदरसु लालसा उछाहू ❀ पथश्रम लेसु कलेसु न काहू ॥
मन तहँ जहँ रघुबर बैदेही ❀ बिनु मन तन दुख सुख सुधि केही ॥

सबको श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेकी लालसा और उत्साह था। किसीको रास्तेकी थकावट और क्लेशका लेश भी न था। सबका मन वहाँ था जहाँ सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी थे और जब मन ही न था तब शरीरको दुःख है या सुख—इसकी सुध किसे होती?

आवत जनकु चले एहि भांती ❀ सहितसमाज प्रेम मति मांती ॥
आये निकट देखि अनुरागे ❀ सादर मिलन परसपर लागे ॥

राजा जनक इस प्रकार चले आ रहे थे। सब समाजसमेत उनकी बुद्धि प्रेमसे पगली हो रही थी। समीप आ जानेपर देखकर सब लोग प्रेममें भर गये और आदरपूर्वक परस्पर मिलने लगे।

लगे जनकु मुनि - जन - पद बंदन ❀ रिषिन्ह प्रनामु कीन्ह रघुनंदन ॥
भाइन्ह सहित रामु मिलि राजहिं ❀ चले लेवाइ समेत समाजहिं ॥

राजा जनक मुनिजनोंके चरणोंकी वंदना करने लगे और श्रीरामचन्द्रजीने ऋषियोंको प्रणाम किया। भाइयोंसमेत श्रीरामचन्द्रजी राजा जनकसे मिलकर उन्हें सब समाजसमेत लेकर चले।

दो०—आस्रम सागर सांतरस ❀ पूरन पावन पाथु।
सेन मनहुं करुनासरित ❀ लियें जात रघुनाथ ॥२७६॥

आश्रमरूपी समुद्र शांतिरसके पवित्र जलसे भरा हुआ है। उसमें श्रीरामचन्द्रजी मानों राजा जनककी सेनारूपी करुणाकी नदी लिये हुए जा रहे हैं।

बोरति ग्यान बिराग करारें ❀ बचन ससोक मिलत नद नारें ॥
सोच उसास समीरतरंगा ❀ धीरज तट-तरु - बर कर भंगा ॥

करुणाकी यह नदी अपने ज्ञान और वैराग्यके किनारोंको डुबाती हुई जाती है। शोकभरे वचनरूपी नदी और नाले उसमें आकर मिलते हैं। शोक भरी हुई लंबी सांसें ही हवाके झोंकेसे उठनेवाली तरंगें हैं, धीरजरूपी किनारेके बड़े-बड़े वृक्षोंको यह गिराती जा रही है।

बिषम बिषाद तोरावति धारा ❀ भय भ्रम भंवर अवर्त अपारा ॥
केवटु बुध बिद्या बड़ि नावा ❀ सकहिं न खेइ ऐक नहिं आवा ॥

विषम दुःख ही उस नदीकी वेगवान धारा है, भय भँवर और भ्रम अपार चक्र हैं, पण्डितजन केवट हैं और विद्या बड़ी नाव है; परन्तु वे उसे पार नहीं ले जा सकते, क्योंकि उसका खेना एकको भी नहीं आता।

बनचर कोल किरात बेचारे ❀ थके बिलोकि पथिक हिय हारे ॥
आस्रम उदधि मिली जब जाई ❀ मनहुं उठेउ अंबुधि अकुलाई ॥

वनके फिरनेवाले बेचारे कोल और किरात ही रास्ता चलनेवाले हैं, जो उस नदीको देखकर थक गये और अपने मनमें हार मान गये। जब यह नदी आश्रमरूपी समुद्रमें जाकर मिली तब मानों समुद्र व्याकुल हो उठा हो।

सोक बिकल दोउ राज समाजा ❀ रहा न ग्यान न धीरज लाजा ॥
भूप - रूप - गुन - सील सराही ❀ रोवहिं सोकसिंधु अवगाही ॥

दोनों ही राज-समाज शोकमें व्याकुल हो गये! उन्हें न ज्ञान रहा, न धैर्य और न लज्जा! सब राजा दशरथके रूप, गुण और शीलकी प्रशंसा करने लगे, रोकर शोकके समुद्रमें डुबकियां लगाने लगे।

छं०—अवगाहि सोकसमुद्र सोचहिं नारि नर व्याकुल महा।
देइ दोष सकल सरोष बोलहिं बाम बिधि कीन्हो कहा ॥
सुर सिद्ध तापस जोगिजन मुनि देखि दसा बिदेह की।
तुलसी न समरथ कोउ जो तरि सकइ सरित सनेह की ॥

स्त्री और पुरुष, सब अत्यन्त व्याकुल होकर शोकके समुद्रमें डुबकियां लगाते और सोचते हैं। वे सब प्रतिकूल दैवको दोष देकर क्रोधके साथ कहते हैं कि उसने यह क्या किया! तुलसीदासजी कहते हैं कि देवता, सिद्धजन, तपस्वी, योगी और मुनि—सबमें ऐसा सामर्थ्यवान् कोई न था जो राजा जनककी दशा देखकर उस स्नेहकी नदीको पार कर सकता हो।

सो०—किये अमित उपदेस ❀ जहंतहं लोगन्ह मुनिबरन्ह।
धीरजु धरिय नरेस ❀ कहेउ बसिष्ठ बिदेह सन॥२७७॥

श्रेष्ठ मुनियोंने जहाँ-तहाँ लोगोंको असंख्य उपदेश दिये और वशिष्ठजीने राजा जनकसे कहा कि हे राजा, धीरज रखिये।

जासु ग्यानरबि भवनिसि नासा ❀ बचनकिरन-मुनिकमल-बिकासा ॥
तेहि कि मोह ममता नियराई ❀ यह सिय-राम- सनेह बड़ाई ॥

जिसके ज्ञानरूपी सूर्यसे संसाररूपी रात्रि नष्ट हो जाती है और जिसके वचनरूपी किरणोंसे मुनिजनरूपी कमल खिल जाते हैं, उसके पास क्या मोह और ममता जा सकती है? परन्तु जो कुछ हुआ, यह सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीकी महिमा है।

बिषयी साधक सिद्ध सयाने ❀ त्रिबिध जीव जग बेद बखाने ॥
राम-सनेह-सरस मन जासू ❀ साधुसभा बड़ आदर तासू ॥

वेदोंने संसारमें तीन प्रकारके जीव बतलाये हैं—विषयी, साधक और चतुर सिद्ध। इनमें जिसका मन श्रीरामचंद्रजीके स्नेह-रससे भरा हुआ है सज्जनोंकी सभामें उसीका बड़ा आदर होता है।

सोह न रामप्रेम बिनु ग्यानू ❀ करनधार बिनु जिमि जलजानू ॥
मुनि बहुबिधि बिदेहु समुझाये ❀ रामघाट सब लोग नहाये ॥

ज्ञान न हो तो श्रीरामचन्द्रजीका प्रेम शोभा नहीं पाता, जैसे कर्णधारके विना नाव। वशिष्ठ मुनिने राजा जनकको बहुत प्रकारसे समझाया और फिर सब लोगोंने रामघाटपर जाकर स्नान किया।

सकल - सोक - संकुल नरनारी ❀ सो बासरु बीतेउ बिनु बारी ॥
पसु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारू ❀ प्रिय परिजन कर कवनु बिचारू ॥

स्त्रियां और पुरुष—सब शोकमें भरे हुए थे। उनका वह दिन जल ग्रहण किये विना ही बीत गया। पशु, पक्षी और हिरण—किसीने भी कुछ न खाया, फिर प्यारे लोगों और कुटुम्बियोंका विचार ही क्या है?

दो०—दोउ समाज निमिराज ❀ रघुराज नहाने प्रात।
बैठे सब बट-बिटप-तर ❀ मन मलीन कृस गात ॥२७८॥

निमिराज जनक और रघुराज श्रीरामचन्द्रजी, तथा दोनों समाजोंने प्रातःकाल स्नान किया और मन-मलिन तनक्षीण दशामें बरगदके वृक्षके नीचे आकर बैठे।

जे महिसुर दसरथ-पुर-बासी ❀ जे मिथिला-पति-नगर-निवासी ॥
हंस - बंस - गुरु जनकपुरोधा ❀ जिन्ह जग मगु परमारथ सोधा ॥

ब्राह्मण, जो राजा दशरथके नगर अयोध्याके रहनेवाले हैं और जो मिथिलानरेश जनककी राजधानी जनकपुरीके निवासी हैं, सूर्यवंशके गुरु वशिष्ठ मुनि और राजा जनकके पुरोहित सतानन्द, जिन्होंने संसारमें परमार्थका मार्ग शोध रखा है;

लगे कहन उपदेस अनेका ❀ सहित धरमु नय बिरति बिबेका ॥
कौसिक कहि कहि कथा पुरानी ❀ समुझाई सब सभा सुबानी ॥

धर्म, नीति, विवेक और वैराग्यसमेत अनेक उपदेश देने लगे। विश्वामित्रने पुरानी कथाएं कह-कहकर सुन्दर वाणीसे सब सभाको समझाया।

तब रघुनाथ कौसिकहिं कहेऊ ❀ नाथ कालि जल बिनु सब रहेऊ ॥
मुनि कह उचित कहत रघुराई ❀ गयउ बीति दिन पहर अढ़ाई ॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने विश्वामित्रसे कहा कि हे नाथ, कल सब लोग जल ग्रहण किये बिना ही रहे हैं। मुनिने कहा कि श्रीरामचन्द्रजी उचित कहते हैं। अब ढाई पहर दिन बीत चुका है।

रिषि रुख लखि कह तिरहुतिराजू ❀ इहां उचित नहिं असनु अनाजू ॥
कहा भूप भल सबहिं सुहाना ❀ पाइ रजायसु चले नहाना ॥

ऋषिका रुख देखकर राजा जनक कहने-लगे कि यहां अन्नका भोजन उचित नहीं है। राजा जनककी कही हुई यह अच्छी बात सबको अच्छी लगी और वे सब आज्ञा पाकर स्नान करनेके लिये चले।

दो०—तेहि अवसर फल फूल दल ❀ मूल अनेक प्रकार।
लेइ आये बनचर बिपुल ❀ भरि भरि कांवरि भार ॥२७९॥

उसी समय वनमें भ्रमण करनेवाले कोल-किरात आदि बहुत लोग अनेक प्रकारके फलों, फूलों, पत्तों और जड़ोंको बड़ी-बड़ी कांवरोंमें भर-भरकर ले आये।

कामद भे गिरि रामप्रसादा ❀ अवलोकत अपहरत बिषादा ॥
सर सरिता बन भूमि बिभागा ❀ जनु उमगत आनंद अनुरागा ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे पर्वत सब कामनाएँ पूर्ण कर देनेवाले हो गये, जिन्हें देखते ही सब दुःख दूर हो जाते हैं। सरोवर, नदी, वन और पृथिवीके अन्य भाग—सब मानों आनन्द और प्रेमसे उमँग रहे हों।

बेलि बिटप सब सफल सफूला ❀ बोलत खग मृग अलि अनुकूला ॥
तेहि अवसर बन अधिक उछाहू ❀ त्रिबिध समीर सुखद सब काहू ॥

वेलि और वृक्ष—सब फूलों और फलोंसे लदे हुए रहने लगे; पक्षी, हिरण और भौंरे अनुकूल बोलने लगे। उस समय वनमें बड़ा उत्साह रहने लगा, सब किसीको सुख देनेवाली शीतल, मन्द और सुगन्धित वायु बहने लगी।

जाइ न बरनि मनोहरताई ❀ जनु महि करति जनक पहुनाई ॥
तब सब लोग नहाइ नहाई ❀ राम जनक मुनि आयसु पाई ॥

मनको हर लेनेवाली सुन्दरताका वर्णन नहीं किया जाता; मानों पृथिवी राजा जनककी मेहमानी कर रही हो। तब सब लोग नहा-नहाकर और श्रीरामचन्द्रजी, राजा जनक और वशिष्ठ मुनिकी आज्ञा पाकर—

देखि देखि तरुबर अनुरागे ❀ जहं तहं पुरजन उतरन लागे ॥
दल फल मूल कंद बिधि नाना ❀ पावन सुंदर सुधा समाना ॥

अपने-अपने प्रेमके अनुसार सुन्दर वृक्ष देख-देखकर जहां-तहां नगरनिवासी लोग उतरने लगे। फिर पवित्र, सुन्दर और अमृतके समान अनेक प्रकारके पत्ते, फल, मूल और कंद—

दो०—सादर सब कहं रामगुरु ❀ पठये भरि भरि भार।
पूजि पितर सुर अतिथिगुरु ❀ लगे करन फलहार ॥२८०॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुरु वशिष्ठजीने डालियोंमें भर-भरकर आदरपूर्वक सबके पास भेज दिये; और सब लोग पितर, देवता, अतिथि और गुरु—सबकी पूजा करके फलाहार करने लगे।

एहि बिधि बासर बीते चारी ❀ राम निरखि नरनारि सुखारी ॥
दुहु समाज असि रुचि मन माहीं ❀ बिनु सियराम फिरब भल नाहीं ॥

इस प्रकार चार दिन बीत गये। श्रीरामचन्द्रजीको देखकर स्त्री और पुरुष—सब सुखी थे। दोनों ही ओरके लोगोंके मनमें यह रुचि थी कि सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके बिना लौटना भला नहीं।

सीताराम संग बनबासू ❀ कोटि अमर-पुर सरिस सुपासू ॥
परिहरि लखन रामु बैदेही ❀ जेहि घरु भाव बाम बिधि तेही ॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके सङ्ग वनवासमें भी करोड़ अमरावतीके समान आराम है। सीताजी, श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको छोड़कर जिसे घर अच्छा लगे उसके विधाता ही प्रतिकूल है।

दाहिन दैव होइ जब सबहीं ❀ रामसमीप बसिय बन तबहीं ॥
मंदाकिनिमज्जनु तिहु काला ❀ रामदरसु मुद - मंगल - माला ॥

जब सब प्रकारसे दैव दाहिना होवे तभी वनमें श्रीरामचन्द्रजीके पास बसना हो सके! तीनों कालमें मंदाकिनीके जलमें स्नान और श्रीरामचन्द्रजीका दर्शन, यह आनन्द और मंगलका समूह है।

अटनु राम गिरि बन तापस थल ❀ असनु अमियसम कंद मूल फल ॥
सुखसमेत संबत दुइ साता ❀ पलसम होहिं न जनियहिं जाता ॥

श्रीरामचन्द्रजीके पर्वत, बन और तपस्वियोंके स्थानोंका भ्रमण होगा, और अमृतके समान कंद, मूल और फलोंका भोजन मिलेगा। चौदह वर्ष सुखके साथ पलके समान बीत जायँगे और जाते हुए मालूम भी न होंगे।

दो०—एहि सुख जोगु न लोग सब ❀ कहहिं कहां अस भागु।
सहज सुभाय समाज दुहु ❀ राम - चरन - अनुरागु ॥२८१॥

सब लोग कहते हैं कि यह सुख पानेके योग्य हम सब नहीं हैं। ऐसा भाग्य कहां है? दोनों ही समाजोंमें सहज-स्वभावसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेम छाया हुआ है।

(दोनों रनिवासोंका मिलन)

एहि बिधि सकल मनोरथ करहीं ❀ बचन सप्रेम सुनत मन हरहीं ॥
सीयमातु तेहि समय पठाई ❀ दासी देखि सुअवसरु आई ॥

सब लोग इस प्रकार मनोरथ कर रहे हैं। प्रेमके साथ कहे हुए उनके वचन सुनते ही मन हर जाते हैं। उसी समय सीताजीकी माताकी भेजी हुई दासी सुन्दर अवसर देखकर आ गयी।

सावकास सुनि सब सिय सासू ❀ आयउ जनक-राज-रनिवासू ॥
कौसल्या सादर सनमानी ❀ आसन दिये समय सम आनी ॥

फिर यह सुनकर कि अवकाश है, राजा जनकका रनवास सीताजीकी सब सासुओंके पास आया। कौशल्याने सबका आदरपूर्वक सम्मान किया और सबको लाकर समयानुसार आसन दिये।

सील सनेहु सकल दुहु ओरा ❀ द्रवहिं देखि सुनि कुलिस कठोरा ॥
पुलक सिथिल तनु बारि बिलोचन ❀ महि नख लिखन लगीं सब सोचन ॥

दोनों ही ओर सब लोगोंमें इतना शील और स्नेह था कि उसे देख और सुनकर कठोर वज्र भी पिघल जाय। सबका शरीर पुलकायमान और शिथिल हो गया, नेत्रोंसे जल बहने लगा और वे सब पैरके नखसे पृथिवीपर लिखने और सोचने लगीं।

सब सिय-राम-प्रीति किसि मूरति ❀ जनु करुना बहुबेष बिसूरति ॥
सीय मातु कह बिधिबुधि बांकी ❀ जो पयफेनु फोर पबिटांकी ॥

वे सब सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीकी प्रीतिकी मूर्ति जैसी थीं; मानों करुणा बहुतसे भेष धारण किये हुए सोच रही हो। सीताजीकी माताने कहा कि विधाताकी बुद्धि ही टेढ़ी है, जो दूधके फेनको वज्रकी टांकी लगाकर फोड़ रहा है।

दो०—सुनिय सुधा देखियहि गरल ❀ सब करतूति कराल।
जहं तहं काक उलूक बक ❀ मानस सकृत मराल ॥२८२॥

विधाताकी सारी करनी बड़ी भयङ्कर है। अमृत तो सुनते ही हैं, परन्तु देखनेमें आता है विष! कौए, उल्लू, बगले जहां-तहां सर्वत्र पाये जाते हैं, परंतु हंस केवल मानसरोवरमें ही मिलते हैं।

सुनि ससोच कह देबि सुमित्रा ❀ बिधिगति बड़ि बिपरीत बिचित्रा ॥
जो सृजि पालइ हरइ बहोरी ❀ बाल-केलि-सम बिधिमति भोरी ॥

सुनकर सुमित्रादेवी शोकके साथ कहने लगीं कि विधाताकी गति बड़ी विचित्र और विपरीत है, जो बालकके खेलके समान पहिले रचकर पालन करता और फिर संहार कर डालता है। दैवकी बुद्धि बड़ी भोली है।

कौसल्या कह दोसु न काहू ❀ करमबिबस दुखु सुखु छति लाहू ॥
कठिन करमगति जान बिधाता ❀ जो सुभ असुभ सकल फलदाता ॥

कौशल्या कहने लगीं कि किसीका भी दोष नहीं है। दुःख-सुख, हानिलाभ—सब कर्मके अधीन हैं। कर्मकी गति बड़ी कठोर है। उसे विधाता ही जानता है, जो शुभ और अशुभ—सब तरहका फल देनेवाला है।

ईस रजाइ सीस सबही कें ❀ उतपति थिति लय बिषहु अमीकें ॥
देबि मोहबस सोचिय बादी ❀ बिधिप्रपंचु अस अचल अनादी ॥

ईश्वरकी आज्ञा सभीके शिरपर है। उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय तथा अमृत और विष, सबके कार्य उसीको आज्ञासे होते हैं। हे देवि, मोहके वश होकर शोक करना व्यर्थ है। विधाताका ऐसा प्रपञ्च अटल और अनादि है।

भूपति जियब मरब उर आनी ❀ सोचिय सखि लखि निज-हित-हानी ॥
सीयमातु कह सत्य सुबानी ❀ सुकृतीअवधि अवधपति रानी ॥

राजाके जीने और मरनेकी बात हृदयमें लाकर हे सखि, अपने हितकी हानि होते देखकर शोच होता है। सीताजीकी माताने कहा कि यह सुन्दरवाणी सत्य है। पुण्यवानोंकी सीमारूप अयोध्याके राजाकी आप रानी हैं।

दो०—लषनु रामु सिय जाहु बन ❀ भल परिनाम न पोचु।
गहबरि हिय कह कौसिला ❀ मोहि भरत कर सोचु ॥२८३॥

शोकसे हृदय भरकर कौशल्याजी कहने लगीं कि श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजी वनको जावें, इसका परिणाम भला ही होगा, बुरा नहीं। परन्तु मुझे भरतजीका शोच है।

ईसप्रसाद असीस तुम्हारी ❀ सुत-सुत-बधू-बिबुध-सरि-बारी ॥
रामसपथ मैं कीन्हि न काऊ ❀ सो करि कहउँ सखी सतिभाऊ ॥

ईश्वरके प्रसाद और आपके आशीर्वादसे सब पुत्र और पतोहुएँ गंगाजीके जलके समान निर्मल हैं। मैंने कभी श्रीरामचन्द्रजीकी सौगंद नहीं खायी, परन्तु हे सखि, वह खाकर सच्चे भावसे कहती हूँ—

भरत सील गुन बिनय बड़ाई ❀ भायप भगति भरोस भलाई ॥
कहत सारदहु कर मति हीचे ❀ सागर सीप कि जाहिं उलीचे ॥

भरतजीका, शील, गुण, नम्रता, बड़ाई, भाईपन, भक्ति, भरोसा और भलाई—सबका वर्णन करते हुए सरस्वतीकी भी बुद्धि हिचकती है। सीपसे क्या समुद्र उलीचे जा सकते हैं?

जानउँ सदा भरत कुलदीपा ❀ बार बार मोहि कहेउ महीपा ॥
कसे कनकु मनि पारिखि पायें ❀ पुरुष परिखियहिं समयँ सुभायँ ॥

मैं सदासे ही जानती हूँ कि भरतजी कुलदीपक हैं। राजाने मुझसे ऐसा बारबार कहा था। जिस प्रकार कसनेपर सोनेकी और पारखी मिल जानेपर मणिकी जाँच हो जाती है, उसी प्रकार पुरुषका स्वभाव समय आ पड़नेपर ही परखा जाता है।

अनुचित आजु कहब अस मोरा ❀ सोक सनेहँ सयानप थोरा ॥
सुनि सुर-सरि-सम पावनि बानी ❀ भईं सनेह बिकल सब रानी ॥

आज मेरा ऐसा कहना भी अनुचित है, क्योंकि शोक और स्नेहसे सयानापन कम हो गया है। कौशल्याजीकी गंगाजीके समान यह पवित्र वाणी सुनकर सब रानियां स्नेहसे व्याकुल हो गयीं।

दो०—कौसल्या कह धीर धरि ❀ सुनहु देबि मिथिलेसि।
को बिबेक-निधि-बल्लभहि ❀ तुम्हहिं सकइ उपदेसि ॥२८४॥

कौशल्याजीने फिर धीरज रखकर कहा कि हे देवि मिथिलेश्वरी, सुनिये। आप विवेकके भाण्डार राजा जनककी प्यारी हैं। आपको कौन उपदेश कर सकता है?

रानि राय सन अवसरु पाई ❀ अपनी भांति कहब समुझाई ॥
रखियहि लषनु भरतु गवनहिं बन ❀ जौं यह मत मानइ महीपमन ॥

हे रानी, अवसर पाकर राजासे अपनी ओरसे समझाकर कहना कि वे लक्ष्मणजीको तो रख लें और भरतजी वनको चले जावें। यदि राजाके मनको मेरी यह सलाह जँच जाय,

तौ भल जतनु करब सुबिचारी ❀ मोरे सोचु भरत कर भारी ॥
गूढ़ सनेहु भरत मन माहीं ❀ रहें नीक मोहि लागत नाहीं ॥

तो भलीभांति विचारकर भलाईका यत्न करना। मुझे भरतजीका भारी शोच है। भरतजीके मनमें गूढ़ प्रेम है, उनके रहनेमें मुझे अच्छाई नहीं लगती।

लखि सुभाउ सुनि सरल सुबानी ❀ सब भइं मगन करुनरस रानी ॥
नभ प्रसून झरि धन्य धन्य धुनि ❀ सिथिल सनेह सिद्ध जोगी मुनि ॥

स्वभाव देखकर और सुन्दर, सरल वाणी सुनकर सब रानियां करुणारसमें मग्न हो गयीं। आकाशसे फूल बरसने लगे, धन्य-धन्य ध्वनि होने लगी और सिद्ध, योगी और मुनि, सब लोग स्नेहसे शिथिल हो गये।

सबु रनिवास बिथकि लखि रहेऊ ❀ तब धरि धीर सुमित्रा कहेऊ ॥
देबि दंडजुग जामिनि बीती ❀ राममातु सुनि उठी सप्रीती ॥

सब रनवास थककर देखता ही रह गया, तब धीरज रखकर सुमित्राजी कहने लगीं—हे देवि, दो घड़ी रात बीत गयी है! यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्याजी बड़े प्रेमके साथ उठीं।

दो०—बेगि पाउ धारिय थलहिं ❀ कह सनेह सतिभाय।
हमरें तौ अब ईसगति ❀ कै मिथिलेसु सहाय ॥२८५॥

कौशल्याजी कहने लगीं—आप अब अपने स्थानपर शीघ्र पदार्पण करें। मैं स्नेहपूर्वक सच्चे भावसे कहती हूं कि हमारी शरण तो अब ईश्वर ही है या मिथिलाके राजा हमारे सहायक हैं।

लखि सनेहु सुनि बचन बिनीता ⊛ जनकप्रिया गहे पाय पुनीता॥
देबि उचित अस बिनय तुम्हारी ⊛ दसरथ - घरनि राम - महतारी॥

स्नेह देखकर और विनीत वचन सुनकर राजा जनककी प्यारी रानी सुनयना कौशल्याजीके पवित्र पांव पकड़कर कहने लगीं—हे देवि, आपकी ऐसी नम्रता उचित ही है; क्योंकि आप राजा दशरथकी गृहिणी और श्रीरामचन्द्रजीकी माता हैं।

प्रभु अपने नीचहु आदरहीं ⊛ अगिनि धूम गिरि सिर तिनु धरहीं॥
सेवकु राउ करम - मन - बानी ⊛ सदा सहाय महेसु भवानी॥

स्वामी अपने नीचजनोंका भी आदर करते हैं, जैसे अग्नि धुएंको और पर्वत तिनकोंको अपने शिरपर धारण करते हैं। राजा (जनक) तो मन, वाणी और कर्मसे सेवक ही हैं और पार्वतीसमेत शिवजी सदा ही सहायक हैं।

रउरे अंग जोगु जग को है ⊛ दीप सहाय कि दिनकर सोहै॥
रामु जाइ बनु करि सुरकाजू ⊛ अचल अवधपुर करिहहिं राजू॥

आपकी सहायता करनेयोग्य संसारमें कौन है? सूर्यका सहायक दीपक क्या शोभा पाता है? वनमें जाकर और वहां देवताओंका कार्य करके श्रीरामचन्द्रजी अयोध्यामें अचल राज्य करेंगे।

अमर नाग नर राम बाहु-बल ⊛ सुख बसिहहिं अपने अपने थल॥
यह सब जागबलिक कहि राखा ⊛ देबि न होइ मुधा मुनि भाखा॥

देवता, नाग और मनुष्य, सब श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाओंके बलसे सुखपूर्वक अपने-अपने स्थानपर बसेंगे। यह सब याज्ञवल्क्य मुनिने कह रखा है। हे देवि, मुनिका कहा हुआ असत्य नहीं हो सकता।

दो०—अस कहि पग परि प्रेम अति ⊛ सियहित बिनय सुनाइ।
सियसमेत सियमातु तब ⊛ चली सुआयसु पाइ॥२८६॥

ऐसा कहकर, पैरोंमें पड़कर अत्यन्त प्रेमसे सीताजीको डेरेपर साथ ले जाने देनेके लिये विनती सुनायी और फिर सुन्दर आज्ञा पाकर सीताजीकी माता सीताजीसमेत बिदा हुईं।

प्रिय परिजनहिं मिली बैदेही ⊛ जो जेहि जोगु भांति तेहि तेही॥
तापसबेष जानकी देखी ⊛ भा सबु बिकल बिषाद बिसेखी॥

प्यारे कुटुम्बियोंमें जो जिस योग्य था, उससे उसी प्रकार सीताजी मिलीं। तपस्वीके भेषमें सीताजीको देखकर सब लोग व्याकुल हो गये, उन्हें बड़ा शोक हुआ।

जनक रामगुरु आयसु पाई ❀ चले थलहिं सिय देखी आई ॥
लीन्हि लाइ उर जनक जानकी ❀ पाहुनि पावन प्रेम प्रान की ॥

श्रीरामचन्द्रजीके गुरु वशिष्ठजीकी आज्ञा पाकर राजा जनक डेरेको चल दिये और वहां पहुंचकर सीताजीको देखा। प्रेम और प्राणोंकी पवित्र पाहुनी अपनी पुत्री जानकीको राजा जनकने हृदयसे लगा लिया।

उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू ❀ भयउ भूपमनु मनहु प्रयागू ॥
सियसनेह बटु बाढ़त जोहा ❀ तापर राम - प्रेम-सिसु सोहा ॥

उनके हृदयमें प्रेमका समुद्र उमड़ आया, उस समय राजाका मन मानों प्रयागराज हो गया हो, जिसमें सीताजीका प्रेमरूपी वटवृक्ष बढ़ता हुआ दीखने लगा। उस वटवृक्षपर मानों श्रीरामचन्द्रजीका प्रेमरूपी बालक शोभित हो।

चिरजीवी मुनि ग्यानु बिकल जनु ❀ बूड़त लहेउ बालअवलंबनु ॥
मोहमगन मति नहिं बिदेह की ❀ महिमा सिय - रघुबर - सनेह की ॥

उस समुद्रमें मानों व्याकुल होकर डूबते हुए राजा जनकके ज्ञानरूपी चिरंजीवी मार्कण्डेयमुनिने उस बालकका सहारा पा लिया हो। राजा जनककी बुद्धि मोहमें डूबनेवाली नहीं; परन्तु यह जो कुछ हुआ; वह सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमकी महिमा है।

दो०—सिय पितु-मातु-सनेह-बस ❀ बिकल न सकी संभारि।
धरनिसुता धीरजु धरेउ ❀ समउ सुधरमु बिचारि ॥२८७॥

पिता और माताके स्नेहके वशमें होकर सीताजी व्याकुल हो गयीं, वे अपनेको संभाल नहीं सकीं। फिर समय और अपना धर्म विचारकर पृथिवीकी पुत्री सीताजीने धीरज रखा।

तापसबेष जनक सिय देखी ❀ भयउ प्रेमु परितोषु बिसेषी ॥
पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ ❀ सुजसु धवल जगु कह सबु कोऊ ॥

राजा जनकने जब सीताजीको तपस्विनीके भेषमें देखा तब उन्हें बड़ा प्रेम और संतोष हुआ। वे कहने लगे—हे पुत्रि, तुमने दोनों कुलोंको पवित्र कर दिया, तुम्हारा उज्ज्वल यश संसारमें सब कोई कह रहा है।

जिति सुरसरि कीरतिसरि तोरी ❀ गवनु कीन्ह बिधि अंड करोरी ॥
गंग अवनिथल तीनि बड़ेरे ❀ एहि किये साधुसमाज घनेरे ॥

तुम्हारी कीर्तिरूपी नदीने गङ्गाजीको भी जीत लिया, जिसकी धाराने करोड़ ब्रह्माण्डोंमें होकर गमन किया। पृथिवीपर गङ्गाजीके बड़े-बड़े स्थल तीन ही हैं, परन्तु इसने तो साधुजनोंके बहुतसे समूहोंको अपना स्थान बनाया है।

पितु कह सत्य सनेह सुबानी ❀ सीय सकुचि महि मनहुँ समानी ॥
पुनि पितु मातु लीन्हि उर लाई ❀ सिख आसिष हित दीन्हि सुहाई ॥

पिता राजा जनक स्नेहके साथ यह सुन्दर वाणी सत्य ही कह रहे थे, परन्तु सीताजी संकोचसे मानों पृथिवीमें समा गयी हों। माता और पिताने उन्हें फिर हृदयसे लगा लिया और उन्हें हित करनेवाली सुन्दर सीख और आशिष दी।

कहति न सीय सकुचि मन माहीं ❀ इहाँ बसब रजनी भल नाहीं ॥
लखि रुख रानि जनायेउ राऊ ❀ हृदय सराहत सीलु सुभाऊ ॥

सीताजी अपने मनमें सकुचाकर कुछ कहतीं नहीं, परन्तु वे विचार करने लगीं कि रात्रिको यहां बसना अच्छा नहीं। सीताजीका यह रुख देखकर रानीने राजाको बतला दिया और दोनोंने हृदयमें शील और स्वभावकी प्रशंसा की।

दो०—बारबार मिलि भेंटि सिय ❀ बिदा कीन्हि सनमानि।
कही समय सिर भरतगति ❀ रानि सुबानि सयानि ॥ २८८ ॥

बार-बार मिल भेंटकर और सम्मान करके उन्होंने सीताजीको विदा किया, फिर चतुर रानीने अवसर पाकर सुन्दर वाणीसे भरतजीकी दशा कह सुनायी।

सुनि भूपाल भरतब्यवहारू ❀ सोन सुगंध सुधा ससि सारू ॥
मूँदे सजल नयन पुलके तन ❀ सुजस सराहन लगे मुदित मन ॥

भरतजीका व्यवहार सुनकर राजा जनकने उसे सोनेमें सुगन्ध और चन्द्रमाका सार अमृत समझा। उन्होंने अपने सजल नेत्र बन्द कर लिये, शरीर पुलकायमान हो गया और वे मनमें प्रसन्न होकर भरतजीके सुयशकी प्रशंसा करने लगे।

सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि ❀ भरतकथा भव-बंध-बिमोचनि ॥
धरम राजनय ब्रह्मबिचारू ❀ इहाँ जथामति मोर प्रचारू ॥

हे सुन्दर मुखवाली सुनयना, सावधान होकर सुनो। भरतजीकी कथा संसारके बन्धनोंको छुड़ा देनेवाली है। धर्म, राजनीति और ब्रह्मविचार—इनमें अपनी बुद्धिके अनुसार मेरा प्रवेश है।

सो मति मोरि भरत महिमाहीं ❁ कहइ काह छलि छुअति न छाहीं ॥
बिधि गनपति अहिपति सिव सारद ❁ कबि कोबिद बुध बुद्धि बिसारद ॥

वह मेरी बुद्धि भरतजीकी महिमाका वर्णन तो क्या करे, किसी बहाने उसकी छायाको भी नहीं छूती है। ब्रह्मा, गणेश, शेषनाग, शिवजी, सरस्वती, कवि, पण्डित, चतुर, और बुद्धिमान् —

भरत चरित कीरति करतूती ❁ धरम सील गुन बिमल बिभूती ॥
समुझत सुनत सुखद सब काहू ❁ सुचि सुरसरि रुचि निदर सुधाहू ॥

सबको भरतजीका चरित्र, सुयश, कार्य, धर्म, शील, गुण और निर्मल ऐश्वर्य सुनने और समझनेमें सुख देनेवाला है। यह गंगाजीके समान पवित्र और स्वादमें अमृतका भी निरादर करनेवाला है।

दो०—निरवधि गुन निरुपम पुरुषु ❁ भरतु भरतसम जानि।
कहिय सुमेरु कि सेरसम ❁ कबि-कुल-मति सकुचानि॥२८८॥

भरतजीके गुणोंकी सीमा नहीं है। वे उपमारहित पुरुष हैं। अतः भरतजीके समान भरतजीको ही जानना चाहिये। कवि-जनोंकी बुद्धि इसलिये सकुचा गयी कि सुमेरु पर्वत भी क्या सेरके समान कहा जा सकता है ?

अगम सबहिं बरनत बरबरनी ❁ जिमि जलहीन मीन गमु धरनी ॥
भरत अमित महिमा सुनु रानी ❁ जानहिं रामु न सकहिं बखानी ॥

भरतजीकी उज्ज्वल महिमा वर्णन करना सभीके लिये अगम्य है जैसे जलहीन पृथ्वीपर मछलीका चलना। हे रानी सुनो, भरतजीकी महिमा असीम है। श्रीरामचन्द्रजी उसे जानते हैं, पर वर्णन नहीं कर सकते।

बरनि सप्रेम भरत अनुभाऊ ❁ तिय जियकी रुचि लखि कह राऊ ॥
बहुरहिं लषन भरत बन जाहीं ❁ सब कर भल सबके मन माहीं ॥

प्रेमके साथ भरतजीका अनुभव वर्णनकर राजा जनक स्त्रीके मनकी रुचि देखकर कहने लगे कि लक्ष्मणजी लौट चलें और भरतजी वनको जावें, इसीमें सबका भला है और सबके मनमें भी यही है।

देवि परंतु भरत रघुबर की ❁ प्रीति प्रतीति जाइ नहिं तरकी ॥
भरतु अवधि सनेह ममता की ❁ जद्यपि रामु सीँव समता की ॥

परन्तु हे देवि, भरतजी और श्रीरामचन्द्रजीकी प्रीति और प्रतीतिके विषयमें तर्क नहीं किया जा सकता। यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी समताकी सीमा हैं तथापि भरतजी स्नेह और ममताकी मर्यादा हैं।

परमारथु स्वारथु सुख सारे ❁ भरत न सपनेहुँ मनहुँ निहारे ॥
साधन सिद्धि रामपग नेहू ❁ मोहि लखि परत भरतमत एहू ॥

परमार्थ, स्वार्थ और समस्त सुखोंको स्वप्नमें भी भरतजीने मनमें नहीं सोचा। मुझे भरतजीका मत यह देख पड़ता है कि सब साधनोंकी सिद्धि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेम ही है।

दो०—भोरेहुँ भरत न पेलिहहिं ❀ मनसहुँ रामरजाइ।
करिय न सोचु सनेहबस ❀ कहेउ भूप बिलखाइ ॥२९०॥

राजा जनक बिलखकर कहने लगे कि भरतजी भूलकर भी श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञाको मनसे भंग न करेंगे; इसलिये प्रेमके वशमें होकर सोच न करना चाहिये।

(राज-सभा)

राम भरतु गुन गनत सप्रीती ❀ निसि दंपतिहिं पलकसम बीती ॥
राजसमाज प्रात जुग जागे ❀ न्हाइ न्हाइ सुर पूजन लागे ॥

प्रेमके साथ श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीके गुणोंको गिनते-गिनते राजा जनक और रानी सुनयनाको वह रात पलकके समान बीत गयी। सवेरा होनेपर दोनों ही राज-समाज जागे और नहा-नहाकर देवताओंकी पूजा करने लगे।

गे नहाइ गुरु पहिं रघुराई ❀ बंदि चरन बोले रुख पाई ॥
नाथ भरतु पुरजन महतारीं ❀ सोकबिकल बनबास दुखारीं ॥

श्रीरामचन्द्रजी नहाकर गुरुके पास गये और उनका रुख पाकर चरणोंकी वंदना कर बोले, हे नाथ! भरतजी, नगरनिवासी और माताएँ सब शोकमें व्याकुल और वनवाससे दुःखी हैं।

सहितसमाज राउ मिथिलेसू ❀ बहुत दिवस भये सहित कलेसू ॥
उचित होइ सोइ कीजिय नाथा ❀ हित सब ही कर रउरें हाथा ॥

सब समाज-समेत राजा जनकको भी क्लेश सहते हुए बहुत दिन हो गये। हे नाथ, जो उचित हो वही कीजिये। सभीका हित आपके हाथमें है।

अस कहि अति सकुचे रघुराऊ ❀ मुनि पुलके लखि सील सुभाऊ ॥
तुम्ह बिनु राम सकल सुख साजा ❀ नरकसरिस दुहु राजसमाजा ॥

ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त सकुचा गये। श्रीरामचन्द्रजीका शील और स्वभाव देखकर मुनि पुलकायमान हो गये और कहने लगे कि हे रामचन्द्रजी, आपके बिना समस्त सुखोंकी सामग्री भी दोनों राज-समाजोंके लिये नरकके समान है।

दो०—प्रान प्रानके जीवके ❀ जिव सुखके सुख राम।
तुम्ह तजि तात सुहात गृह ❀ जिन्हहिं तिन्हहिं बिधि बाम ॥२९१॥

हे रामचन्द्रजी, आप प्राणोंके प्राण, जीवके जीव, और सुखके सुख हैं। हे तात, आपको छोड़कर जिन्हें घर अच्छा लगता हो उनके दैव प्रतिकूल है।

सो सुखु धरमु करमु जरि जाऊ ❀ जहँ न राम-पद-पंकज भाऊ॥
जोगु कुजोगु ग्यानु अग्यानू ❀ जहँ नहिं रामप्रेमु परधानू॥

वह सुख, धर्म और कर्म जल जाय, जिसमें श्रीरामचन्द्रजीके चरण-कमलोंमें भाव न हो! वह योग कुयोग और वह ज्ञान अज्ञान है, जिसमें श्रीरामचन्द्रजीका प्रेम प्रधान नहीं है।

तुम्ह बिनु दुखी सुखी तुम्ह तेही ❀ तुम्ह जानहु जिय जो जिय केही॥
राउर आयसु सिर सबही के ❀ बिदित कृपालहिं गति सब नीके॥

आपके बिना सब दुःखी हैं और आपसे सब सुखी हैं। जिसके हृदयमें जो कुछ है उसे आप अपने मनमें जानते हैं। आपकी आज्ञा सभीके शिरपर है। हे कृपालु, आपको सब गति भलीभांति मालूम है।

आपु आस्रमहिं धारिय पाऊ ❀ भयउ सनेहसिथिल मुनिराऊ॥
करि प्रनामु तब रामु सिधाये ❀ रिषि धरि धीर जनक पहिं आये॥

अब आप आश्रममें पदार्पण कीजिये। मुनिराज वशिष्ठ यह कहकर स्नेहसे शिथिल हो गये। फिर, श्रीरामचन्द्रजी प्रणाम करके विदा हुए और वशिष्ठ ऋषि धीरज रखकर राजा जनकके पास आ गये।

रामबचन गुरु नृपहिं सुनाये ❀ सील सनेह सुभाय सुहाये॥
महाराज अब कीजिय सोई ❀ सब कर धरमसहित हित होई॥

गुरु वशिष्ठने श्रीरामचन्द्रजीके शील, स्नेह और स्वभावसे ही सुहावने वचन राजाको सुनाये और कहा—महाराज, अब वही कीजिये, जिसमें धर्म-समेत सबका हित होवे।

दो०—ग्यान निधान सुजान सुचि ❀ धरमधीर नरपाल।
तुम्ह बिनु असमंजस समन ❀ को समरथ एहिकाल॥२९२॥

हे राजन्, आप ज्ञानके भाण्डार हैं, सुजान हैं, पवित्र हैं, और धर्ममें धीर हैं। आपको छोड़कर इस समय दुविधाको दूर कर देनेवाला और कौन समर्थ है?

सुनि मुनिबचन जनकु अनुरागे ❀ लखि गति ग्यानु बिरागु बिरागे॥
सिथिल सनेहँ गुनत मन माहीं ❀ आये इहां कीन्ह भल नाहीं॥

मुनिके वचन सुनकर राजा जनक प्रेममें भर गये। उनकी गति देखकर ज्ञान और वैराग्यको भी वैराग्य हो गया। स्नेहसे शिथिल होकर वे मनमें सोचने लगे कि यहां आये, यह अच्छा नहीं किया।

रामहिं राय कहेउ बन जाना ❀ कीन्ह आपु प्रिय प्रेम प्रवाना ॥
हम अब बन तें बनहिं पठाई ❀ प्रमुदित फिरब बिबेक बड़ाई ॥

राजाने श्रीरामचन्द्रजीको वन जानेकी आज्ञा दी और स्वयं प्यारेके प्रेमको सच्चा कर दिखलाया। अब हम अपना ज्ञान बढ़ाकर श्रीरामचन्द्रजीको एक वनसे दूसरे वनमें भेजकर आनन्दित होकर लौटेंगे!

तापस मुनि महिसुर सुनि देखी ❀ भये प्रेमबस बिकल बिसेखी ॥
समउ समुझि धरि धीरजु राजा ❀ चले भरत पहिं सहितसमाजा ॥

तपस्वी, मुनि और ब्राह्मण—सब राजा जनकको देख और सुनकर प्रेमके वशमें होकर विशेष व्याकुल हो गये। समय समझकर और धीरज रखकर राजा जनक सब समाज-समेत भरतजीके पास चले।

भरत आइ आगें भइ लीन्हे ❀ अवसरसरिस सुआसन दीन्हे ॥
तात भरत कह तिरहुतिराऊ ❀ तुम्हहिं बिदित रघुबीरसुभाऊ ॥

भरतजीने आकर आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और समयके अनुसार सुन्दर आसन दिये। राजा जनक कहने लगे कि हे तात, हे भरत, तुम्हें श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव मालूम है।

दो०—राम सत्यब्रत धरमरत ❀ सब कर सीलु सनेहु।
संकट सहत सकोचबस ❀ कहिय जो आयसु देहु ॥२६३॥

श्रीरामचन्द्रजी सत्यव्रती हैं और धर्ममें तत्पर हैं, उन्हें सबका शील और स्नेह भी है। वे संकोचमें पड़कर सब संकट सह रहे हैं। अब जो आज्ञा हो, वह कहिये।

सुनि तन पुलकि नयन भरि बारी ❀ बोले भरतु धीर धरि भारी ॥
प्रभु प्रिय पूज्य पितासम आपू ❀ कुल-गुरु-सम हित माय न बापू ॥

सुनकर भरतजीका शरीर पुलकायमान हो गया, नेत्रोंमें जल भर आया और वे भारी धीरज रखकर बोले—प्रभु श्रीरामचन्द्रजी प्यारे और पूज्य हैं, आप पिताके समान हैं, कुल-गुरु वशिष्ठजीके समान हितकारी तो माता-पिता भी नहीं हैं।

कौसिकादिमुनि सचिवसमाजू ❀ ग्यान-अंबु-निधि आपुन आजू ॥
सिसु सेवकु आयसु अनुगामी ❀ जानि मोहि सिख देइय स्वामी ॥

विश्वामित्र आदि मुनियों और मंत्रियोंका समाज और ज्ञानसागर आप सब यहां आज एकत्र हैं। हे स्वामिन्, मुझे बालक, सेवक और अपनी आज्ञाका अनुयायी समझकर सीख दीजिये।

एहि समाज थल बूझब राउर ❀ मौन मलिन मैं बोलब बाउर ॥
छोटे बदन कहउं बड़ि बाता ❀ छमब तात लखि बाम बिधाता ॥

इस समाजमें, इस स्थलपर आपका पूछना! मैं गूँगा, मैला और बावला क्या कहूँगा? छोटे मुँह बड़ी बात कहता हूं। हे तात, विधाताको प्रतिकूल समझकर क्षमा कीजिये।

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना ❀ सेवाधरमु कठिन जगु जाना॥
स्वामि धरम स्वारथहिं बिरोधू ❀ बइरु-अंधु प्रेमहिं न प्रबोधू॥

वेद, शास्त्र और पुराण—सबमें प्रसिद्ध है और संसार भी जानता है कि सेवाधर्म बहुत कठिन है। स्वामि-धर्म और स्वार्थका विरोध है; जैसे बहिरे और अंधे मनुष्यको प्रेमका ज्ञान नहीं होता।

दो०—राखि राम रुख धरमु ब्रतु ❀ पराधीन मोहि जानि।
सब के संमत सर्बहित ❀ करिय प्रेम पहिचानि॥२९४॥

श्रीरामचन्द्रजीके रुख, धर्म और व्रतको रखकर और मुझे पराधीन जानकर तथा प्रेम पहिचानकर आप वही कीजिये जो सबका हित करनेवाला हो और जिसके लिये सबकी सलाह हो।

भरतबचन सुनि देखि सुभाऊ ❀ सहितसमाज सराहत राऊ॥
सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे ❀ अरथु अमित अति आखर थोरे॥

भरतजीके वचन सुनकर और उनका स्वभाव देखकर सब समाजसमेत राजा जनक उनकी प्रशंसा करने लगे। भरतजीके वचन सुगम (सरल) किन्तु अगम (गंभीर) थे, सुन्दर और कोमल—किन्तु कठोर थे। उनमें अक्षर कम थे, परन्तु उनका अर्थ अत्यन्त असीम था।

ज्यों मुखु मुकुर मुकुरु निजपानी ❀ गहि न जाइ अस अद्भुत बानी॥
भूपु भरतु मुनिसाधु समाजू ❀ गे जहं बिबुध-कुमुद-द्विजराजू॥

भरतजीकी वाणी ऐसी अद्भुत थी कि उसे ग्रहण नहीं किया जा सकता; जैसे अपने ही हाथमें दर्पण होनेपर भी उसमें दिखलायी पड़नेवाला मुंह! राजा जनक, भरतजी, मुनिजन और साधुओंका समूह—सब लोग वहां गये, जहां देवतारूपी कुमुदोंके चन्द्रमा श्रीरामचन्द्रजी थे।

सुनि सुधि सोच बिकल सब लोगा ❀ मनहुं मीनगन नवजल जोगा॥
देव प्रथम कुल-गुरु-गति देखी ❀ निरखि बिदेह सनेह बिसेखी॥

यह बात सुनकर सब लोग शोकमें व्याकुल हो गये; जैसे नये जलके योगसे मछलियोंका समूह। देवताओंने पहिले सूर्यकुलके गुरु वशिष्ठजीकी दशाको देखा और फिर राजा जनकके विशेष प्रेमको देखा।

राम-भगति-मय भरतु निहारे ❀ सुर स्वारथी हहरि हिय हारे॥
सब कोउ राम प्रेममय पेखा ❀ भये अलेख सोचबस लेखा॥

जब स्वार्थी देवताओंने देखा कि भरतजी तो श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिसे पूर्ण हो रहे हैं तब अपने हृदयमें घबड़ाकर वे हार गये। सब किसीने श्रीरामचन्द्रजीको प्रेममय देखा और चिन्ताके वशमें होकर सब देवता चित्र लिखेसे रह गये।

दो०—रामु सनेह-संकोच बस ❀ कह ससोच सुरराज।
रचहु प्रपंचहि पंच मिलि ❀ नाहिं त भयउ अकाज ॥२९५॥

चिन्तित होकर देवराज इन्द्र कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजी स्नेह और संकोचके वशमें हैं। सब पंच मिलकर कोई प्रपंच रचो, नहीं तो काम बिगड़ा जाता है।

सुरन्ह सुमिरि सारदा सराही ❀ देबि देव सरनागत पाही ॥
फेरि भरतमति करि निज माया ❀ पालु बिबुधकुल करि छलछाया ॥

देवताओंने सरस्वतीको स्मरण किया और स्तुति की कि हे देवि, सब देवता आपके शरणागत हैं। आप इनकी रक्षा करें। अपनी माया करके भरतजीकी बुद्धिको आप पलट दीजिये और अपने छलकी छाया करके देवताओंके समूहको पालिये।

बिबुधबिनय सुनि देबि सयानी ❀ बोली सुर स्वारथ जड़ जानी ॥
मो सन कहहु भरत मति फेरू ❀ लोचन सहस न सूझ सुमेरू ॥

चतुर सरस्वती देवीजी देवताओंका विनय सुनकर और यह जानकर कि देवता स्वार्थी और मूर्ख हैं, इन्द्रको संबोधन कर बोलीं—मुझसे कह रहे हो कि भरतजीकी बुद्धि पलट दो। तुम्हारे हजार नेत्र हैं, पर तुम्हें सूझता सुमेरु पर्वत भी नहीं है।

बिधि-हरि-हर माया बड़ि भारी ❀ सोउ न भरतमति सकइ निहारी ॥
सो मति मोहि कहत करु भोरी ❀ चंदिनि कर कि चंडकर चोरी ॥

ब्रह्मा, विष्णु और शिवजीकी माया बड़ी भारी है; किन्तु वह भी भरतजीकी बुद्धिकी ओर देख नहीं सकती। उसी बुद्धिको मुझसे कहते हो कि पलटा दो। चांदनी क्या सूर्यकी चोरी कर सकती है?

भरतहृदय सियरामु निवासू ❀ तहँ कि तिमिर जहँ तरनिप्रकासू ॥
अस कहि सारद गइ बिधिलोका ❀ बिबुध बिकल निसि मानहुँ कोका ॥

भरतजीके हृदयमें सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका निवास है। जहाँ सूर्यका प्रकाश हो वहां क्या अन्धकार हो सकता है? ऐसा कहकर सरस्वतीजी ब्रह्मलोकको गयीं और सब देवता ऐसे व्याकुल हो गये जैसे रातमें चकवा।

दो०—सुर स्वारथी मलीन मन ❀ कीन्ह कुमंत्रु कुठाटु।
रचि प्रपंचु माया प्रबल ❀ भय भ्रम अरति उचाटु ॥ २९६ ॥

स्वार्थी देवताओंका मन मैला है। उन्होंने खोटी सलाह कर बुरी रचना की। अपनी प्रबल मायासे प्रपंच रचकर उन्होंने भय, भ्रम, दुःख और उच्चाटन उत्पन्न कर दिया।

करि कुचालि सोचत सुरराजू ❀ भरतहाथ सब काजु अकाजू ॥
गये जनकु रघुनाथसमीपा ❀ सनमाने सब रबि-कुल-दीपा ॥

बुरी रचना करके देवराज इन्द्र सोचने लगे कि कामका बनना और बिगड़ना सब भरतजीके हाथमें है। राजा जनक श्रीरामचन्द्रजीके पास गये। सूर्यकुलके दीपक श्रीरामचन्द्रजीने सबका सम्मान किया।

समय समाज धरम अबिरोधा ❀ बोले तब रघुबंस-पुरोधा ॥
जनक भरत संबादु सुनाई ❀ भरत कहाउति कही सुहाई ॥

तब रघुकुलके पुरोहित वशिष्ठजी समय, समाज और धर्मके अनुसार बोले। पहिले उन्होंने राजा जनक और भरतजीकी बातचीत सुनायी और फिर भरतजीका सुन्दर कहना भी कह सुनाया।

तात राम जस आयसु देहू ❀ सो सबु करइ मोर मत एहू ॥
सुनि रघुनाथ जोरि जुग पानी ❀ बोले सत्य सरल मृदु बानी ॥

वे कहने लगे—हे तात, हे राम, मेरा मत भी यही है कि आप जैसी आज्ञा देवें वैसा सब लोग करें। वशिष्ठजीका कथन सुनकर और दोनों हाथ जोड़कर श्रीरामचन्द्रजी सत्य, सरल और मीठी वाणी बोले।

बिद्यमान आपुनु मिथिलेसू ❀ मोर कहब सब भांति भदेसू ॥
राउर राय रजायसु होई ❀ राउरिसपथ सही सिर सोई ॥

आप और राजा जनककी विद्यमानतामें मेरा कुछ कहना सभी प्रकार अयोग्य होगा। आपकी और राजा जनककी जो आज्ञा होगी, मुझे आपकी सौगंद है, वही ठीक है और मेरे शिरपर है।

दो०—रामसपथ सुनि मुनि जनकु ❀ सकुचे सभासमेत।
सकल बिलोकत भरतमुखु ❀ बनइ न ऊतरु देत ॥२९७॥

श्रीरामचन्द्रजीकी सौगंद सुनकर वशिष्ठ मुनि और राजा जनक सब सभासमेत सकुचा गये और सब लोग भरतजीके मुखकी ओर देखने लगे। उनसे उत्तर देते नहीं बनता।

सभा सकुचबस भरत निहारी ❀ रामबंधु धरि धीरजु भारी ॥
कुसमउ देखि सनेहु संभारा ❀ बढ़त बिंधि जिमि घटज निवारा ॥

भरतजीने देखा कि सभाजन संकोचके वशमें हो रहे हैं। तब श्रीरामचन्द्रजीके भाई भरतजीने भारी धीरज रखकर और कुसमय देखकर अपने स्नेहके वेगको रोक लिया; जैसे बढ़ते हुए विन्ध्याचलको अगस्त्य मुनिने रोक लिया था।

सोक कनकलोचन मति छोनी ❀ हरी बिमल-गुन-गन जगजोनी ॥
भरतबिबेक बराह बिसाला ❀ अनायास उधरी तेहि काला ॥

शोकरूपी हिरण्याक्षने जब बुद्धिरूपिणी पृथिवीका हरण कर लिया, तब भरतजीके निर्मल गुणसमूहरूपी ब्रह्मासे उनका विवेकरूपी विशाल वाराह उत्पन्न हुआ, जिसने अनायास उसी समय उद्धार कर दिया।

करि प्रनामु सबु कहं कर जोरे ❀ राम राउ गुरु साधु निहोरे ॥
छमब आजु अति अनुचित मोरा ❀ कहउं बदन मृदु बचन कठोरा ॥

भरतजीने प्रणाम करके सबको हाथ जोड़े और श्रीरामचन्द्रजी, राजा जनक, गुरु वशिष्ठ और साधुजनों-की विनती की। उन्होंने कहा—आज मेरा यह अत्यन्त अनुचित कार्य क्षमा कीजिये। कोमल मुखसे मैं कठोर वचन कहता हूं।

हिय सुमिरी सारदा सुहाई ❀ मानस तें मुखपंकज आई ॥
बिमल बिबेक धरम नय साली ❀ भरतभारती मंजु मराली ॥

भरतजीने अपने हृदयमें सुन्दर सरस्वतीजीका स्मरण किया, जो मनरूपी मानसरोवरसे मुखरूपी कमलमें आ गयीं। विशुद्ध विवेक, धर्म और नीतिसे भरी हुई भरतजीकी वाणी सुन्दर हंसिनीके समान है।

दो०—निरखि बिबेक बिलोचनन्हि ❀ सिथिल सनेह समाजु।
करि प्रनामु बोले भरतु ❀ सुमिरि सीय रघुराजु ॥ २९८ ॥

ज्ञान-नेत्रोंसे सब समाजको स्नेहसे शिथिल देखकर सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण कर भरतजी प्रणाम करके बोले—

प्रभु पितु मातु सुहृद गुरु स्वामी ❀ पूज्य परमहित अंतरजामी ॥
सरल सुसाहिबु सीलनिधानू ❀ प्रनतपालु सरबग्य सुजानू ॥

हे प्रभो, आप पिता, माता, मित्र, गुरु, और स्वामी हैं, पूज्य, अत्यन्त हितकारी और अन्तर्यामी हैं, आपका स्वभाव सरल है, आप अच्छे स्वामी हैं, और शीलके स्थान हैं। आप दीनोंके पालनेवाले, सर्वज्ञ और सुजान हैं।

समरथु सरनागत हितकारी ❀ गुनगाहकु अवगुन-अघ-हारी ॥
स्वामि गोसाइंहिं सरिस गोसाईं ❀ मोहि समान मैं साइं दोहाई ॥

आप समर्थ हैं, शरणागतका हित करनेवाले हैं, गुणोंके ग्राहक और पापों और अवगुणोंको नष्ट कर देनेवाले हैं। हे स्वामिन्, आपके समान आप ही हैं और स्वामीकी सौगन्द है, मेरे समान मैं ही हूं।

प्रभु-पितु-बचन मोहबस पेली ❀ आयेउं इहां समाजु संकेली ॥
जग भल पोच ऊंच अरु नीचू ❀ अमिय अमरपद माहुर मीचू ॥

हे प्रभो, मोहके वश होकर पिताजीके वचनोंका उल्लंघन करके मैं सब समाजको इकट्ठा करके यहां आया हूं। संसारमें अच्छा और बुरा, ऊँचा और नीचा, अमृत और विष, अमरत्व और मृत्यु, सभी हैं।

रामरजाइ मेटि मन माहीं ❀ देखा सुना कतहुं कोउ नाहीं ॥
सो मैं सब बिधि कीन्हि ढिठाई ❀ प्रभु मानी सनेह सेवकाई ॥

ऐसा कहीं कोई नहीं देखा और सुना, जिसने श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा मनसे भी मेट दी हो। मैंने सब प्रकार वही ढिठाई की, किन्तु प्रभुने उसे स्नेहकी सेवा मान लिया।

दो०—कृपा भलाई आपनी ❀ नाथ कीन्ह भल मोर।
दूषन भे भूषनसरिस ❀ सुजसु चारु चहुं ओर ॥२९९॥

हे नाथ, आपने अपनी कृपा और भलाईसे मेरा भला किया। मेरे दोष मेरे भूषणोंके समान हो गये और सुन्दर सुयश चारों ओर फैल गया।

राउरिरीति सुबानि बड़ाई ❀ जगत बिदित निगमागम गाई ॥
कूर कुटिल खल कुमति कलंकी ❀ नीच निसील निरीस निसंकी ॥

आपकी रीति, सुन्दर वाणी और बड़ाई संसारमें विख्यात हैं तथा वेदों और शास्त्रोंने उन्हें गाया है। जो लोग क्रूर, कुटिल, दुष्ट, दुर्बुद्धि, कलंकित, नीच, शीलहीन, निर्भय और नास्तिक हैं—

तेउ सुनि सरन सामुहे आये ❀ सकृत प्रनामु किये अपनाये ॥
देखि दोष कबहुं न उर आने ❀ सुनि गुन साधुसमाज बखाने ॥

वे भी सुनकर जब सामने होकर शरणमें आये तब एक बार प्रणाम करते ही आपने उन्हें अपना लिया। आपने देखकर भी अपने हृदयमें उनके दोषोंका विचार कभी नहीं किया, परन्तु सुनकर ही उनके गुणोंका बखान साधुजनोंके समाजमें किया।

को साहिब सेवकहि नेवाजी ❀ आपु समान साज सब साजी ॥
निज करतूति न समुझिय सपने ❀ सेवक सकुच सोचु उर अपने ॥

ऐसा कौन स्वामी है जो सेवकपर कृपा करके उसका सब साज अपने ही समान सजा देवे, अपने कार्योंको स्वप्नमें भी कुछ न समझे और सेवकके संकोचसे अपने हृदयमें सोच करे ?

सो गोसाइँ नहिं दूसर कोपी ❀ भुजा उठाइ कहउँ पन रोपी ॥
पसु नाचत सुक पाठ प्रबीना ❀ गुन गति नट पाठक आधीना ॥

वह स्वामी आप ही हैं और दूसरा कोई भी नहीं है—मैं भुजा उठाकर और प्रतिज्ञा करके कहता हूं। पशु नाचते और तोते पढ़नेमें चतुर हो जाते हैं, परन्तु उनकी गति और गुण नचानेवाले नट और पढ़ानेवालेके अधीन हैं।

दो०—यों सुधारि सनमानि जन ❀ किये साधु सिरमौर।
को कृपाल बिनु पालिहइ ❀ बिरदावलि बरजोर ॥३००॥

इस प्रकार आपने अपने सेवकोंको सुधारकर और उनका आदर करके उन्हें साधुजनोंमें शिरोमणि बना दिया। हे कृपालु, आपके विना अत्यन्त प्रवल विरुदावलीकी रक्षा कौन करेगा?

सोक सनेह कि बाल सुभायें ❀ आयेउँ लाइ रजायसु बायें ॥
तबहुँ कृपाल हेरि निज ओरा ❀ सबहि भांति भल मानेउ मोरा ॥

शोक, स्नेह या बालस्वभावसे मैं आपकी आज्ञाके प्रतिकूल कार्य करके यहां आया। फिर भी हे दया-निधान, आपने अपनी ओर देखकर सब प्रकार मेरा भला ही माना।

देखेउँ पाय सु-मंगल-मूला ❀ जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला ॥
बड़े समाज बिलोकेउं भागू ❀ बड़ी चूक साहिबअनुरागू ॥

सुन्दर मंगलोंके मूल आपके चरणोंके दर्शन मैंने कर लिये और यह जान लिया कि स्वामी स्वभावसे ही अनुकूल हैं। इस बड़े समाजमें मैं अपने इस भाग्यको देखता हूं कि इतनी बड़ी भूल होनेपर भी स्वामीका मुझपर प्रेम है।

कृपा अनुग्रह अंग अघाई ❀ कीन्हि कृपानिधि सब अधिकाई ॥
राखा मोर दुलार गोसाईं ❀ अपने सील सुभाय भलाईं ॥

आपकी कृपा और अनुग्रहसे मेरे सब अङ्ग भर गये। हे कृपानिधान, आपनें सबकुछ अधिकता ही की। हे स्वामिन्, आपने अपने शील, स्वभाव और भलाईसे मेरा दुलार रखा।

नाथ निपट मैं कीन्हि ढिठाई ❀ स्वामि समाज सकोचु बिहाई ॥
अबिनय बिनय जथारुचि बानी ❀ छमिहि देव अति आरत जानी ॥

स्वामी और समाजके संकोचको छोड़कर हे नाथ, मैंने बड़ी ढिठाई की है। हे देव, मेरी जैसी रुचि हुई उसके अनुसार कही हुई नम्र और कठोर वाणीको यह जानकर क्षमा करेंगे कि मैं अत्यन्त दुःखी हूं।

दो०—सुहृद सुजान सुसाहिबहि ❀ बहुत कहब बड़ि खोरि ।
आयसु देइय देव अब ❀ सबुइ सुधारिय मोरि ॥३०१॥

सुहृद, सुजान और अच्छे स्वामीसे अधिक कहना बड़ा अपराध है। हे देव, अब आप आज्ञा दीजिये और मेरी सब बातोंको सुधार लीजिये।

प्रभु-पद-पदुम-पराग दोहाई ❀ सत्य सुकृत सुखसीवं सुहाई ॥
सो करि कहउं हिये अपने की ❀ रुचि जागत सोवत सपने की ॥

जो सत्य, पुण्य और सुखकी सुहावनी सीमा हैं, उन्हीं प्रभुके चरणकमलोंकी रजकी सौगंद है। यह सौगंद खाकर मैं अपने हृदयकी बात कहता हूं, जो जागते, सोते या स्वप्न देखते हुए, प्रत्येक समयकी मेरी रुचि है।

सहज सनेह स्वामिसेवकाई ❀ स्वारथ छल फल चारि बिहाई ॥
अग्यासम न सुसाहिबसेवा ❀ सो प्रसादु जनु पावइ देवा ॥

स्वार्थ, छल और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों फल छोड़कर स्वाभाविक स्नेहसे स्वामीकी सेवा करनी चाहिये। स्वामीकी आज्ञा पालन करनेके समान दूसरी सेवा नहीं है। हे देव, सेवकको वही प्रसाद मिले।

अस कहि प्रेमबिबस भये भारी ❀ पुलक सरीर बिलोचन बारी ॥
प्रभु-पद-कमल गहे अकुलाई ❀ समउ सनेहु न सो कहि जाई ॥

ऐसा कहकर भरतजी अत्यन्त प्रेमके वशमें हो गये, उनका शरीर पुलकायमान हो गया, नेत्रोंमें जल छा गया। उन्होंने व्याकुल होकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल पकड़ लिये। उस समयके स्नेहका वर्णन नहीं किया जाता।

कृपासिंधु सनमानि सुबानी ❀ बैठाये समीप गहि पानी ॥
भरतबिनय सुनि देखि सुभाऊ ❀ सिथिल सनेह सभा रघुराऊ ॥

सुन्दर वाणीसे आदर करके कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने हाथ पकड़कर भरतजीको पास बिठलाया। भरतजीकी विनता सुनकर और स्वभाव देखकर सब सभासमेत श्रीरामचन्द्रजी स्नेहसे शिथिल हो गये।

छं०—रघुराउ सिथिल सनेह साधु समाज मुनि मिथिलाधनी ।
मन महुं सराहत भरत-भायप-भगति की महिमा घनी ॥
भरतहिं प्रसंसत बिबुध बरषत सुमन मानसमलिन से ।
तुलसी बिकल सब लोग सुनि सकुचे निसागम नलिनसे ॥

श्रीरामचन्द्रजी, साधुजनोंका समाज, वशिष्ठमुनि और मिथिलापति राजा जनक—सब स्नेहसे शिथिल हो गये, और मनमें भरतजीके बन्धुभाव और भक्तिकी प्रगाढ़ महिमाकी प्रशंसा करने लगे। देवता भी मलिन चित्तसे भरतजीकी प्रशंसा करने लगे और फूल बरसाने लगे। तुलसीदासजी कहते हैं कि सब लोग उसे सुनकर व्याकुल हो गये और सकुचा गये; जैसे रात्रिके आनेपर कमल।

सो०—देखि दुखारी दीन ❀ दुहु समाज नरनारि सब।
मघवा महामलीन ❀ मुयेहिं मारि मंगल चहत ॥३०२॥

दोनों समाजोंकी स्त्रियों और पुरुषों—सबको दीन और दुःखी देखकर भी महामलीन इन्द्र मरेको मारकर अपना भला चाहता है!

कपट-कुचालि-सीवं सुरराजू ❀ पर-अकाज-प्रिय आपन काजू॥
काकसमान पाक-रिपु-रीती ❀ छली मलीन कतहुं न प्रतीती॥

देवराज इन्द्र कपट और खोटी चालकी सीमा हैं। दूसरोंका काम बिगाड़ना और अपना काम बनाना उन्हें प्यारा है। पाक दैत्यके शत्रु इन्द्रकी रीति कौएके समान है; जो छली है, मलीन है और जिसका विश्वास किसीपर भी नहीं है।

प्रथम कुमति करि कपटु संकेला ❀ सो उचाटु सब के सिर मेला॥
सुरमाया सब लोग बिमोहे ❀ रामप्रेम अतिसय न बिछोहे॥

पहिले खोटी सलाह करके कपट इकट्ठा किया, जिसने सबके शिरपर उच्चाटन डाल दिया। इससे यद्यपि सब लोग देवताओंकी मायासे मोहित हो गये तथापि वे श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमसे बहुत अधिक वियुक्त नहीं हुए।

भये उचाटबस मन थिर नाहीं ❀ छन बन रुचि छन सदन सोहाहीं॥
दुबिध मनोगति प्रजा दुखारी ❀ सरित सिंधु संगम जनु बारी॥

सब लोग उच्चाटनके वशमें हो गये, उनका मन अस्थिर हो गया, एक क्षणमें उनकी रुचि वनमें रहनेकी होती और दूसरे ही क्षण उन्हें घर अच्छा लगता। मनमें दुविधा होनेसे प्रजाजन ऐसे दुःखी हुए जैसे नदी और समुद्रके संगमपर जल।

दुचित कतहुं परितोषु न लहहीं ❀ एक एक सन मरमु न कहहीं॥
लखि हियं हंसि कह कृपानिधानू ❀ सरिस स्वान मघवान जुबानू॥

दुविधा होनेसे कहीं भी उन्हें संतोष नहीं मिलता। वे परस्पर अपना भेद भी नहीं बतलाते। यह सब देखकर अपने हृदयमें हंसकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि श्वान् (कुत्ता) युवन् (युवा) और मघवन (इन्द्र) एक ही समान हैं।

दो०—भरतु जनकु मुनिजन सचिव ❀ साधु सचेत बिहाइ।
लागि देवमाया सबहिं ❀ जथाजोगु जनु पाइ॥३०३॥

भरतजी, राजा जनक, मुनिजन, मंत्री, साधु और सावधान लोगोंको छोड़कर देवताओंकी माया सब मनुष्योंको जिसे जिस योग्य पाया उसे वैसी ही लग गयी।

कृपासिंधु लखि लोग दुखारे ❀ निज सनेह-सुरपति-छल-भारे॥
सभा राउ गुरु महिसुर मंत्री ❀ भरतभगति सब कै मति जंत्री॥

कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने अपने प्रेम और देवराज इन्द्रके छलके बोझसे सब लोगोंको दुःखी देखा। सभा, राजा जनक, गुरु वशिष्ठ, ब्राह्मण और मन्त्री—सबकी बुद्धिको भरतजीकी भक्तिने बांध दिया।

रामहिं चितवत चित्र लिखे से ❀ सकुचत बोलत बचन सिखे से॥
भरत-प्रीति - नति - बिनय - बड़ाई ❀ सुनत सुखद बरनत कठिनाई॥

वे सब श्रीरामचन्द्रजीको ऐसे देखते हैं मानों चित्रमें लिखे हुए हों। मुँहसे कुछ वचन बोलते हुए वे सब ऐसे सकुचाते हैं मानों सिखलाये हुए हों। भरतजीकी प्रीति, नम्रता, विनती और बड़ाई सुननेमें सुखदायक है, परन्तु वर्णन करनेमें वह कठिन है।

जासु बिलोकि भगति लवलेसू ❀ प्रेममगन मुनिगन मिथिलेसू॥
महिमा तासु कहइ किमि तुलसी ❀ भगति सुभाय सुमति हिय हुलसी॥

जिनकी भक्तिका लवलेश देखकर ही मुनियोंके समूह और राजा जनक प्रेममें मग्न हो गये, उनकी महिमाको यह तुलसी कैसे कहे; क्योंकि भक्तिके स्वभावसे ही मेरे हृदयमें भी सुबुद्धि उमड़ रही है।

आपु छोटि महिमा बड़ि जानी ❀ कबिकुल कानि मानि सकुचानी॥
कहि न सकति गुन रुचि अधिकाई ❀ मतिगति बालबचन की नाईं॥

अपनेको छोटा और महिमाको बड़ा जानकर और कविजनोंकी मर्यादा मानकर मेरी बुद्धि सकुचा गयी। रुचि तो अधिक है, परन्तु भरतजीके गुणोंको वह कह नहीं सकती, बुद्धिकी गति बालकके वचनोंकी भांति हो गयी।

दो०—भरत-बिमल-जसु बिमल बिधु ❀ सुमति चकोर कुमारि॥
उदित बिमल जनहृदय नभ ❀ एकटक रही निहारि॥३०४॥

भरतजीके उज्ज्वल यशके निर्मल चन्द्रको भक्तोंके हृदयरूपी निर्मल आकाशमें उदय हुआ देखकर सुबुद्धिरूपी चकोरकी कन्या एकटक रह गयी।

भरतसुभाउ न सुगम निगमहूँ ❀ लघुमति चापलता कबि छमहूँ ॥
कहत सुनत सतिभाउ भरत को ❀ सीय-राम-पद होइ न रत को ॥

भरतजीका स्वभाव वेदोंके लिये भी सुगम नहीं है। हे कविजनो, मेरी छोटी बुद्धिकी चंचलता क्षमा करना। भरतजीके सच्चे भावको कहते और सुनते, कौन है, जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें अनुरक्त न हो जावे?

सुमिरत भरतहिं प्रेमु रामुको ❀ जेहि न सुलभ तेहि सरिस बाम को ॥
देखि दयालु दसा सबही की ❀ रामु सुजान जानि जन जी की ॥

भरतजीका स्मरण करनेसे जिसे श्रीरामचन्द्रजीका प्रेम सुलभ न हो जाय, उसके समान मंदभाग्य कौन है? सभीकी दशा देखकर और अपने भक्त भरतजीकी अवस्था जानकर दयालु और सुजान—

धरमधुरीन धीर नयनागर ❀ सत्य सनेह सील सुख सागर ॥
देस काल लखि समयसमाजू ❀ नीति - प्रीति - पालक रघुराजू ॥

धर्मधुरन्धर, धीर, नीतिमें चतुर, सत्य, स्नेह, शील और सुखके समुद्र, नीति और प्रीति—दोनोंकी ही रक्षा करनेवाले और रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी देश, काल और उस समयके समाजको देखकर—

बोले बचन बानि सरबसु से ❀ हित परिनाम सुनत ससिरसु से ॥
तात भरत तुम्ह धरमधुरीना ❀ लोक बेद बिद प्रेमप्रबीना ॥

वाणीके सर्वस्वके समान वचन बोले, जिनका परिणाम हितकारी है और जो सुननेमें चन्द्रमाके रस (अमृत)के समान हैं। वे कहने लगे—हे तात, हे भरत, तुम धर्मधुरन्धर हो और लोक और वेद—दोनोंके ही जाननेवाले परम चतुर हो।

दो०—करम बचन मानस बिमल ❀ तुम्ह समान तुम्ह तात।
गुरुसमाज लघु - बंधु - गुन ❀ कुसमय किमि कहि जात ॥२०५॥

हे तात, तुम्हारे समान मन, वाणी और कर्मसे निर्मल स्वयं तुम्हीं हो। कुसमयमें गुरुजनोंके इस समाजमें छोटे भाईके गुणोंको कैसे कहा जा सकता है?

जानहु तात तरनि - कुल - रीती ❀ सत्यसंध पितु कीरति प्रीती ॥
समउ समाज लाज गुरुजन की ❀ उदासीन हित अनहित मन की ॥

हे तात, सूर्यवंशकी रीति और सत्यप्रतिज्ञ पिताके सुयश और प्रेमको जानते हो। समय, समाज, गुरुजनोंकी लज्जा, शत्रु, मित्र और उदासीन लोगोंके मनकी बात—सबको तुम जानते हो।

तुम्हहिं बिदित सबहीकर करमू ❀ आपन मोर परम हित धरमू ॥
मोहि सब भांति भरोस तुम्हारा ❀ तदपि कहउं अवसर अनुसारा ॥

तुम्हें सभीका कर्म मालूम है। अपना तथा मेरा परमहित धर्म भी मालूम है। यद्यपि मुझे सब प्रकार तुम्हारा भरोसा है तथापि अवसरके अनुसार बतलाता हूं।

तात तात बिनु बात हमारी ❀ केवल कुल-गुरु-कृपा संभारी ॥
न तरु प्रजा पुरजन परिवारू ❀ हमहिं सहित सबु होत खुआरू ॥

हे तात, पिताजीके विना हमारी बात कुलके गुरु केवल वशिष्ठजीकी कृपाने ही संभाल रखी है, नहीं तो हमलोगों-समेत प्रजा, कुटुम्बी और नगरनिवासी—सबकी ख्वारी हो जाती।

जौं बिनु अवसरु अथव दिनेसू ❀ जग केहि कहहु न होइ कलेसू ॥
तस उतपातु तात बिधि कीन्हा ❀ मुनि मिथिलेस राखि सबु लीन्हा ॥

यदि असमयमें ही सूर्यास्त हो जावे तो कहो संसारमें किसे क्लेश न होगा? हे तात, दैवने वैसा ही उत्पात किया था, पर वशिष्ठ-मुनि और राजा जनकने सबकी रक्षा कर ली।

दो०—राजकाज सब लाज पति ❀ धरम धरनि धन धाम।
गुरुप्रभाउ पालिहिं सबहि ❀ भल होइहि परिनाम ॥ ३०६ ॥

राज-काज, सम्पूर्ण लज्जा, प्रतिष्ठा, धर्म, पृथिवी, धन और भवन—सबकी रक्षा गुरुजीका प्रभाव करेगा और परिणाम भला होगा।

सहित समाज तुम्हार हमारा ❀ घर बन गुरुप्रसाद रखवारा ॥
मातु-पिता-गुरु स्वामि निदेसू ❀ सकल धरम धरनी धरु सेसू ॥

वनमें और घरमें—सर्वत्र सब समाज-समेत हमारा और तुम्हारा रक्षक गुरुकी कृपा ही है। माता, पिता, गुरु और स्वामीकी आज्ञा पालन करना सभीका धर्म है। इसीके लिये शेषनाग भी पृथिवीको धारण किये हुए हैं।

सो तुम्ह करहु करावहु मोहू ❀ तात तरनि-कुल-पालक होहू ॥
साधन एक सकल सिधि देनी ❀ कीरति सुगति भूतिमय बेनी ॥

इसका ही तुम पालन करो और मुझसे भी पालन कराओ, और हे तात, सूर्यवंशको पालन करनेवाले बनो। साधकोंको सब सिद्धियोंकी देनेवाली यही एक बात है, जो कीर्ति, सद्‌गति और ऐश्वर्यरूपी त्रिवेणी है।

सो बिचारि सहि संकट भारी ❀ करहु प्रजा परिवारु सुखारी ॥
बांटी बिपति सबहि मोहि भाई ❀ तुमहिं अवधि भरि बड़ि कठिनाई ॥

यही विचारकर भारी संकटोंको सहकर प्रजाजनों और कुटुम्बियोंको सुखी बनाओ। विपत्ति सभीके हिस्सेमें पड़ी है और वही मुझपर भी है। मेरे वनवासकी अवधि समाप्त होनेतक तुम्हें बड़ी कठिनाई है।

जानि तुम्हहि मृदु कहउँ कठोरा ❀ कुसमय तात न अनुचित मोरा ॥
होहिं कुठायँ सुबंधु सहाये ❀ ओड़ियहि हाथ असनिहु के घाये ॥

तुम्हें कोमल जानकर भी मैं कठोर वचन कहता हूं। हे तात, कुसमय है, मेरी कोई अनुचित बात नहीं है। बुरे स्थानमें अच्छे भाई ही सहायक होते हैं; जैसे तलवारका घाव लगनेपर भी हाथ ही उसे रोकनेके लिये आगे बढ़ाया जाता है।

दो०—सेवक कर पद नयन से ❀ मुख सो साहिबु होइ।
तुलसी प्रीति की रीति सुनि ❀ सुकबि सराहहिं सोइ ॥ ३०७ ॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि सेवक तो हाथ, पैर और नेत्र जैसे हों, और स्वामी हों मुखके समान। उसीकी प्रीतिकी रीति सुनकर उत्तम कविजन प्रशंसा करते हैं।

सभा सकल सुनि रघुबर बानी ❀ प्रेम-पयोधि अमिय जनु सानी ॥
सिथिल समाज सनेह समाधी ❀ देखि दसा चुप सारद साधी ॥

सब सभाजनोंने श्रीरामचन्द्रजीकी वाणी सुनी, जो मानों प्रेमरूपी समुद्रसे निकले हुए अमृतसे डूबी हुई थी। सब समाज शिथिल हो गया,उसे स्नेहकी समाधि लग गयी और दशा देखकर सरस्वतीजी भी मौन हो गयीं।

भरतहिं भयउ परम संतोषू ❀ सनमुख स्वामि बिमुख दुख दोषू ॥
मुख प्रसन्न मन मिटा बिषादू ❀ भा जनु गूँगेहि गिरा प्रसादू ॥

स्वामीके सामने दुःख और दोष दूर हो जानेसे भरतजीको बड़ा संतोष हुआ। उनका मुख प्रसन्न हो गया, मनका शोक मिट गया; मानों गूँगेपर सरस्वतीकी कृपा हो गयी।

कीन्ह सप्रेम प्रनामु बहोरी ❀ बोले पानिपंकरुह जोरी ॥
नाथ भयेउ सुखु साथ गये को ❀ लहेउँ लाहु जग जनमु भये को ॥

भरतजीने प्रेमके साथ फिर प्रणाम किया और कमलके समान अपने हाथ जोड़कर बोले—हे नाथ, साथ जानेका सुख मिल गया, संसारमें जन्म लेनेका लाभ पा लिया।

अब कृपाल जस आयसु होई ❀ करउँ सीस धरि सादर सोई ॥
सो अवलंब देव मोहिं देई ❀ अवधि पारु पावउँ जेहि सेई ॥

हे कृपालु, अब जैसी आज्ञा होवे, शिरोधार्यकर आदरपूर्वक वही करूं। हे देव, मुझे वही सहारा दीजिये, जिसे पकड़कर मैं आपके वनवासकी अवधिका पार पा जाऊं।

दो०—देव देवअभिषेक हित ❀ गुरुअनुसासनु पाइ।
आनेउँ सब तीरथसलिलु ❀ तेहि कहँ काह रजाइ ॥ ३०८ ॥

हे देव, आपका अभिषेक करनेके लिये गुरुकी आज्ञा पाकर सब तीर्थोंका जल लेता आया हूं, उसके लिये क्या आज्ञा है ?

एकु मनोरथु बड़ मन माहीं ❀ सभय सकोच जात कहि नाहीं ॥
कहहु तात प्रभुआयसु पाई ❀ बोले बानि सनेह सुहाई ॥

मनमें एक बड़ी इच्छा है, पर वह आपके भय और संकोचके कारण कही नहीं जाती। श्रीरामचन्द्रजीने भरतजीसे कहा कि हे तात, कहो। तब भरतजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर प्रेमके साथ यह सुहावनी वाणी बोले—

चित्रकूट मुनि थल तीरथ बन ❀ खग मृग सरि सर निर्झर गिरिगन ॥
प्रभु-पद-अंकित अवनि बिसेखी ❀ आयसु होइ त आवउँ देखी ॥

हे प्रभो, यदि आज्ञा हो तो चित्रकूट पर्वत मुनियोंके आश्रम, तीर्थ, वन, पक्षी, हिरण, नदी, सरोवर, झरने और पर्वतोंके समूह और विशेषकर वह पृथिवी, जिसपर स्वामीके चरण पड़ चुके हैं, सबको देख आऊं।

अवसि अत्रि आयसु सिर धरहू ❀ तात बिगत भय कानन चरहू ॥
मुनिप्रसाद बन मंगलदाता ❀ पावन परम सुहावन भ्राता ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे तात, अवश्य ही तुम अत्रि मुनिकी आज्ञाको अपने शिरपर धारण करके निर्भय होकर वनमें विचरण करो। हे भाई, मुनिकी कृपासे यह सुहावना वन अत्यन्त पवित्र है और मंगलोंको देनेवाला है।

रिषिनायकु जहँ आयसु देहीं ❀ राखेहु तीरथजल थल तेहीं ॥
सुनि प्रभुबचन भरत सुखु पावा ❀ मुनि-पद-कमल मुदित सिरु नावा ॥

ऋषिराज जहांके लिये आज्ञा देवें, उसी स्थानपर तीर्थोंका जल रखना। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर भरतजीने सुख पाया और प्रसन्न होकर मुनिके चरण-कमलोंको शिर नवाया।

दो०—भरत-राम-संबादु सुनि ❀ सकल-सुमंगल-मूल।
सुर स्वारथी सराहि कुल ❀ बरषत सुर-तरु फूल ॥ ३०९ ॥

भरतजी और श्रीरामचन्द्रजीकी बातचीत, जो सभी शुभ मंगलोंका मूल है, सुनकर स्वार्थी देवता लोग उनकी प्रशंसा करके कल्पवृक्षके फूल बरसाने लगे।

(राम-बन-अटन)

धन्य भरत जय राम गोसाईं ❀ कहत देव हरषत बरिआईं ॥
मुनि मिथिलेस सभा सब काहू ❀ भरत बचन सुनि भयेउ उछाहू ॥

हे भरत, आप धन्य हैं। हे स्वामी श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो—ऐसा कहकर देवता बारबार प्रसन्न होने लगे। गुरु वशिष्ठ, राजा जनक और सभाजन—सबको भरतजीके वचन सुनकर उत्साह हुआ।

भरत - राम - गुन - ग्राम - सनेहू ❀ पुलकि प्रसंसत राउ बिदेहू ॥
सेवक स्वामि सुभाउ सुहावन ❀ नेमु पेमु अति पावन पावन ॥

राजा जनक पुलकित होकर भरतजी और श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूह और प्रेमकी प्रशंसा करने लगे। वे कहने लगे—सेवक और स्वामी—दोनोंका ही स्वभाव सुहावना है। इनका नियम और प्रेम अत्यन्त पवित्र है और पवित्र करनेवालोंको भी पवित्र करनेवाला है।

मतिअनुसार सराहन लागे ❀ सचिव सभासद सब अनुरागे ॥
सुनि सुनि राम - भरत-संबादू ❀ दुहु समाज हिय हरषु बिषादू ॥

मंत्री और सभासद लोग—सब प्रेममें भरकर अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार प्रशंसा करने लगे। श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीकी बातचीत सुनकर दोनों ही समाजोंके लोगोंके हृदयोंमें आनन्द और शोक—दोनों ही हुए।

राममातु दुखु सुखु सम जानी ❀ कहि गुन दोष प्रबोधीं रानी ॥
एक कहहिं रघुबीरबड़ाई ❀ एक सराहत भरतभलाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी माताने दुःख और सुख—दोनोंको समान जानकर गुण और दोष—सब बातें कहकर रानियोंको समझाया। फिर कोई रानी श्रीरामचन्द्रजीकी बड़ाई करने लगी और कोई भरतजीकी प्रशंसा करने लगी।

दो०—अत्रि कहेउ तब भरत सन ❀ सैलसमीप सुकूप।
राखिय तीरथतोय तहं ❀ पावन अमिअ अनूप ॥३१०॥

तब अत्रि मुनिने भरतजीसे कहा कि पर्वतके पासमें एक सुन्दर कुआं है वहीं अमृतके समान पवित्र और अनुपम तीर्थोंका जल रखिये।

भरत अत्रिअनुसासन पाई ❀ जलभाजन सब दिये चलाई ॥
सानुज आपु अत्रि मुनि साधू ❀ सहित गये जहं कूप अगाधू ॥

अत्रि मुनिकी आज्ञा पाकर भरतजीने जलके सब पात्र भेज दिये, फिर अत्रि मुनि, अन्य मुनिजन और साधुजन तथा शत्रुघ्नसमेत स्वयम् भरत वहां गये जहां वह अथाह कुआं था।

पावनु पाथ पुन्य थल राखा ❀ प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भाखा ॥
तात अनादि सिद्ध थल एहू ❀ लोपेउ काल बिदित नहिं केहू ॥

उस पवित्र जलको जब पवित्र स्थानपर रख दिया तब प्रेमसे प्रसन्न होकर अत्रि मुनि इस प्रकार कहने लगे—हे तात, यह सिद्धस्थान अनादि है। किसीको भी इसका समय नहीं मालूम है; क्योंकि यह लुप्त हो गया है।

तब सेवकन्ह सरस थलु देखा ❀ कीन्ह सुजल हित कूप बिसेखा ॥
बिधिबस भयेउ बिस्व उपकारू ❀ सुगम अगम अति धरम बिचारू ॥

तब सेवकोंने जलमय स्थान देखकर सुन्दर जलके लिये कुएँको और भी अधिक ठीक कर दिया। दैववश संसारका उपकार हो गया। धर्मका विचार अत्यन्त कठिन है, परन्तु वहां यह सहज हो गया।

भरतकूप अब कहिहहिं लोगा ❀ अतिपावन तीरथजलजोगा ॥
प्रेम सनेम निमज्जत प्रानी ❀ होइहहिं बिमल करममनबानी ॥

अत्रि मुनि कहने लगे—इसे लोग सब 'भरतकुआं' कहकर पुकारेंगे। तीर्थोंके जलके योगसे यह अत्यन्त पवित्र हो गया। प्रेम और स्नेहके साथ इसमें स्नान करते ही सब प्राणी मन, वाणी और कर्मसे निर्मल हो जायँगे।

दो०—कहत कूपमहिमा सकल ❀ गये जहां रघुराउ।
अत्रि सुनायेउ रघुबरहिं ❀ तीरथ - पुन्य - प्रभाउ ॥३११॥

कुएंकी महिमा कहते हुए सब लोग वहां गये जहां श्रीरामचन्द्रजी थे। अत्रि मुनिने श्रीरामचन्द्रजीको तीर्थकी पवित्र महिमा सुनायी।

कहत धरम इतिहास सप्रीती ❀ भयेउ भोरु निसि सो सुख बीती ॥
नित्य निबाहि भरतु दोउ भाई ❀ राम - अत्रि - गुरु आयसु पाई ॥

प्रीति समेत धर्म और इतिहास कहते हुए सवेरा हो गया और वह रात सुखसे बीत गयी। नित्य क्रिया करके श्रीरामचन्द्रजी, अत्रि मुनि और गुरु वशिष्ठकी आज्ञा पाकर दोनों भाई भरत और शत्रुघ्न—

सहित समाज साज सब सादें ❀ चले राम - बनअटन पयादें ॥
कोमल चरन चलत बिनु पनहीं ❀ भइ मृदु भूमि सकुचि मनमनहीं ॥

सब समाज-समेत सब साधारण सामग्री लेकर पैदल ही श्रीरामचन्द्रजीके वनमें भ्रमण करनेके लिये चल दिये। कोमल चरणोंमें नंगे पैर चलनेसे पृथिवी अपने मन-ही-मन सकुचाकर कोमल हो गयी।

कुस कंटक कांकरी कुराईं ❀ कटुक कठोर कुबस्तु दुराईं ॥
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हे ❀ बहत समीर त्रिबिध सुख लीन्हे ॥

कुश, कांटे, कंकड़, गड्ढे आदि कड़वी, कठोर और बुरी चीजोंको छिपाकर पृथिवीने मार्गको कोमल और सुन्दर बना दिया। सुखपूर्वक शीतल, मंद और सुगन्धित पवन चलने लगा।

सुमन बरषि सुर घन करि छाहीं ❀ बिटप फूलि फलि त्रिन मृदुताहीं ॥
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी ❀ सेवहिं सकल रामप्रिय जानी ॥

देवता फूल बरसाकर, बादल छाया करके, वृक्ष फूल और फलकर, घास कोमल होकर, हिरण दर्शन करके और पक्षी सुन्दर वाणी बोलकर, सब भरतजीकी सेवा, यह जानकर कि वे श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे हैं, करने लगे।

दो०—सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु ❀ राम कहत जमुहात।
राम-प्रान-प्रिय भरत कहुं ❀ यह न होइ बड़ बात ॥२१२॥

जमुहाई लेते हुए 'राम' कहनेसे ही साधारण मनुष्योंको भी सब सिद्धियां सुलभ हो जाती हैं, फिर भरतजी तो श्रीरामचन्द्रजीको प्राणोंके समान प्यारे हैं। उनके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है।

एहि बिधि भरत फिरत बन मांहीं ❀ नेम प्रेमु लखि मुनि सकुचाहीं ॥
पुन्य जलासय भूमि बिभागा ❀ खग मृग तरु त्रिन गिरि बन बागा ॥

इस प्रकार भरतजी वनमें फिरते हैं। उनके नियम और प्रेमको देखकर मुनिजन भी सकुचाते हैं। पवित्र सरोवर, भूखण्ड, पक्षी, हिरण, वृक्ष, घास, पहाड़, वन और बाग—

चारु बिचित्र पवित्र बिसेखी ❀ बूझत भरतु दिब्य सबु देखी ॥
सुनि मन मुदित कहत रिषिराऊ ❀ हेतु नामु गुन पुन्य प्रभाऊ ॥

सबको सुन्दर, विचित्र, विशेष पवित्र और अलौकिक देखकर भरतजी पूछते हैं और सुनकर ऋषिराज मनमें प्रसन्न होकर उनके कारण, नाम, गुण, पुण्य और महिमा बतलाते हैं।

कतहुं निमज्जन कतहुं प्रनामा ❀ कतहुं बिलोकत मन अभिरामा ॥
कतहुं बैठि मुनिआयसु पाई ❀ सुमिरत सीय सहित दोउ भाई ॥

भरतजी कहीं स्नान करते हैं और कहीं प्रणाम; कहीं वे मनोहर स्थानोंको देखते हैं और मुनिकी आज्ञा पाकर कहीं बैठकर वे सीताजीसमेत दोनों भाइयों—श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीका स्मरण करते हैं।

देखि सुभाउ सनेहु सुसेवा ❀ देहिं असीस मुदित बनदेवा ॥
फिरहिं गये दिन पहर अढ़ाई ❀ प्रभु-पद-कमल बिलोकहिं आई ॥

स्नेह, स्वभाव और सुन्दर सेवावृत्ति देखकर वनके देवता प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते हैं। ढाई पहर दिन चढ़नेपर वह लौटते हैं और आकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका दर्शन करते हैं।

दो०—देखे थल तीरथ सकल ❀ भरत पांच दिन मांझ।
कहत सुनत हरिहर सुजसु ❀ गयेउ दिवस भइ सांझ॥३१३॥

पांच दिनमें भरतजीने उस स्थानके सभी तीर्थ देख लिए। पांचवां दिन भी भगवान विष्णु और शिवका सुन्दर यश कहते और सुनते बीत गया और सन्ध्या हो गयी।

(अन्तिम सभा)

भोर न्हाइ सबु जुरा समाजू ❀ भरत भूमिसुर तिरहुतिराजू॥
भल दिन आजु जानि मन माहीं ❀ रामु कृपालु कहत सकुचाहीं॥

सबेरे स्नान करके भरतजी, ब्राह्मण लोग, राजा जनक और सब समाज एकत्र हुआ। मनमें यह जानकर कि आज इन सबके विदा होनेके लिये अच्छा दिन है, दयालु श्रीरामचन्द्रजी कहते हुए सकुचाते हैं।

गुरु नृप भरत सभा अवलोकी ❀ सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी॥
सीलु सराहि सभा सब सोची ❀ कहुँ न राम सम स्वामि संकोची॥

गुरु वशिष्ठ, राजा जनक, भरतजी और सभाजनोंको देखकर श्रीरामचन्द्रजी सकुचा गये और नीचे पृथिवीकी ओर देखने लगे। श्रीरामचन्द्रजीके शीलकी प्रशंसा करके सब सभाके लोग सोचने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीके समान संकोच करनेवाला स्वामी कहीं नहीं है।

भरत सुजान रामरुख देखी ❀ उठि सप्रेम धरि धीर बिसेखी॥
करि दंडवत कहत कर जोरी ❀ राखी नाथ सकल रुचि मोरी॥

सुजान भरतजी श्रीरामचन्द्रजीका रुख देखकर बहुत धीरज रखकर प्रेमके साथ उठे और दण्डवत् करके हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे नाथ, आपने मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण की हैं।

मोहि लगि सहेउ सबहिं संतापू ❀ बहुत भांति दुखु पावा आपू॥
अब गोसाइं मोहि देउ रजाई ❀ सेवउं अवध अवधि भरि जाई॥

मेरे ही कारण सबने क्लेश उठाया और आपने भी बहुत प्रकारका दुःख पाया। हे स्वामिन्, अब मुझे आज्ञा दीजिये, जिससे जाकर आपके वनवासकी अवधि समाप्त हो जानेतक अयोध्यापुरीमें ही सेवा करूं।

दो०—जेहि उपाय पुनि पाय जनु ❀ देखइ दीनदयाल।
सो सिख देइय अवधि लगि ❀ कोसलपाल कृपाल॥३१४॥

हे दीनदयालु, हे कोशल देशके पालक, कृपालु, जिस उपायसे यह सेवक आपके चरणोंके फिर दर्शन करे, वही सीख आप मुझे अपने वनवासकी अवधिके लिये दीजिये।

पुरजन परिजन प्रजा गोसाईं ⊛ सब सुचि सरस सनेह सगाईं ॥
राउर बदि भल भव-दुख-दाहू ⊛ प्रभु बिनु बादि परम-पद-लाहू ॥

हे स्वामिन्, नगर-वासी, कुटुम्बी और प्रजाजन—सब पवित्र हैं और सबका आपसे सरस स्नेह सम्बन्ध है। आपका कहलाकर मु॰ संसारके सब दुःख और दाह अच्छे हैं, परन्तु आपके बिना मोक्षकी प्राप्ति भी व्यर्थ है।

स्वामि सुजान जान सब ही की ⊛ रुचि लालसा रहनि जन जी की ॥
प्रनतपालु पालिहि सब काहू ⊛ देव दुहूं दिसि ओर निबाहू ॥

हे स्वामिन, आप सुजान हैं। सभीकी और अपने भक्तके हृदयकी रुचि, लालसा और स्थिति जानते हैं। आप दीनोंको पालनेवाले होकर भी सबकी रक्षा करते हैं। हे देव, मेरा निवाह तो दोनों ही ओरसे होगा।

अस मोहि सब बिधि भूरि भरोसो ⊛ किये बिचारु न सोच खरोसो ॥
आरति मोरि नाथ कर छोहू ⊛ दुहुं मिलि कीन्ह ढीठ हठि मोहू ॥

सब प्रकार मुझे ऐसा भारी भरोसा है। विचार करनेसे मुझे कुछ भी शोच नहीं है। हे नाथ, आपके प्रेम और मेरे दुःख—दोनोंने मिलकर मुझे हठ करके ढीठ कर दिया।

यह बड़ दोषु दूरि करि स्वामी ⊛ तजि सकोचु सिखइअ अनुगामी ॥
भरतबिनय सुनि सबहि प्रसंसी ⊛ खीर नीर बिबरन गति हंसी ॥

हे स्वामिन्, यह बड़ा दोष हुआ। इसे दूर करके संकोच छोड़कर मुझ अनुचरको सीख दीजिये। दूध और पानी अलग-अलग कर देनेका गुण रखनेवाली हंसिनीके समान भरतजीकी यह विनती सुनकर सब लोगोंने उनकी प्रशंसा की।

दो०—दीनबंधु सुनि बंधुके ⊛ बचन दीन छलहीन।
देस-काल-अवसर-सरिस ⊛ बोले रामु प्रबीन ॥३१५॥

भाईके दीनतासे भरे हुए छलहीन वचन सुनकर दीनबन्धु चतुर श्रीरामचन्द्रजी देश, काल और अवसरके योग्य वचन कहने लगे।

तात तुम्हारि मोरि परिजन की ⊛ चिंता गुरुहिं नृपहिं घर बन की ॥
माथेपर गुरु मुनि मिथिलेसू ⊛ हमहिं तुम्हहिं सपनेहु न कलेसू ॥

हे तात, तुम्हारी, मेरी, कुटुम्बियोंकी, घरकी और वनकी—सबकी चिन्ता गुरुजी और राजा जनकको है। शिरपर जब गुरुजी, वशिष्ठ मुनि और मिथिलेश्वर राजा जनक हैं तब हमें और तुम्हें स्वप्नमें भी क्लेश नहीं है

मोर तुम्हार परमपुरुषारथु ❀ स्वारथु सुजसु धरमु परमारथु ॥
पितु आयसु पालिअ दुहु भाई ❀ लोक बेद भल भूप भलाई ॥

मेरा और तुम्हारा यही परम पुरुषार्थ, स्वार्थ, सुयश, धर्म और परमार्थ है कि हम दोनों भाई पिताजीकी आज्ञाका पालन करें, जिसमें लोक और वेद—दोनोंकी मर्यादाकी रक्षा हो और राजाकी भलाई हो।

गुरु-पितु-मातु-स्वामि-सिख पालें ❀ चलेहु कु-मग पग परहि न खालें ॥
अस बिचारि सब सोच बिहाई ❀ पालहु अवध अवधि भरि जाई ॥

गुरु, पिता, माता और स्वामीकी सीख पालन करनेके लिये यदि कुमार्गमें भी चलना पड़े तो नीचा पैर नहीं पड़ता। ऐसा विचारकर सब सोच छोड़कर जाओ और अवधि समाप्त होनेतक अयोध्यापुरीके राज्यका पालन करो।

देसु कोसु पुरजन परिवारू ❀ गुरुपद रजहिं लाग छरुभारू ॥
तुम्ह मुनि-मातु-सचिव-सिख मानी ❀ पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी ॥

देश, कोश, नगर-निवासी और कुटुम्बी—सबका भारी भार गुरुजीके चरणोंकी रजसे लगा हुआ है। तुम गुरु वशिष्ठ मुनि, माताओं और मंत्रियोंकी सीख मानकर पृथिवी, प्रजाजन और राजधानी—सबकी रक्षा करना।

दो०—मुखिया मुखु सों चाहिये ❀ खान पान कहुं एक।
पालइ पोषइ सकल अंग ❀ तुलसी सहित बिबेक ॥३१६॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि मुखियाको मुखके समान होना चाहिये, जो खाने और पीनेके लिए एक ही है और जो विवेकके साथ सब अङ्गोंका पालनपोषण करता है।

राज-धरम-सरबसु एतनोई ❀ जिमि मन मांह मनोरथ गोई ॥
बंधुप्रबोध कीन्ह बहु भांती ❀ बिनु अधार मन तोषु न सांती ॥

राजाके धर्मका सार इतना ही है। इसे छिपाकर रखो, जैसे मनमें मनोरथ। भाई भरतको श्रीरामचन्द्रजीने बहुत तरहसे ज्ञानोपदेश किया, परन्तु आधारके बिना मनको न तो संतोष हुआ और न शान्ति ही।

भरतु सील गुरु सचिव समाजू ❀ सकुच सनेह बिबस रघुराजू ॥
प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही ❀ सादर भरत सीस धरि लीन्ही ॥

भरतजीके शील और गुरु, मंत्री तथा समाजके संकोच और स्नेहके वशमें श्रीरामचन्द्रजी पड़ गये। फिर, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कृपा करके अपनी खड़ाऊं दी, जिन्हें भरतजीने अपने शिरपर रखकर ग्रहण किया।

चरनपीठ करुनानिधान के ❀ जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के ॥
संपुट भरतसनेह रतन के ❀ आखर जुग जनु जीवजतनके ॥

भरतको पादुका प्रदान।

ভরতকে পাদুকা প্রদান

करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी दोनों खड़ाऊँ मानों प्रजाके प्राणोंके दो पहरुआ हैं, भरतजीके स्नेहरूपी रत्नके लिये डिबिया हैं, जीवोंके उद्धारके लिये मानों दो अक्षर 'रा' और 'म' हैं।

कुलकपाट कर कुसल करम के ❀ बिमलनयन सेवा-सु-धरम के ॥
भरत मुदित अवलंब लहे तें ❀ अस सुख जस सिय रामु रहे तें ॥

कुलकी रक्षाके लिये किवाड़ हैं, शुभ कर्मोंके लिये दो हाथ हैं और सेवा तथा सुन्दर धर्मके लिये निर्मल नेत्र हैं। यह सहारा पानेसे भरतजी प्रसन्न हो गये, उन्हें ऐसा सुख हुआ जैसा श्रीरामचन्द्रजी और सीताजीके रह जानेसे मिलता।

(बिदाई)

दो०—मागेउ बिदा प्रनामु करि ❀ राम लिये उर लाइ।
लोग उचाटे अमरपति ❀ कुटिल कुअवसरु पाइ ॥३१७॥

प्रणाम करके जब भरतजीने विदा मांगी तब श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें हृदयसे लगा लिया। उधर कुसमय पाकर दुष्ट इन्द्रने लोगोंका उचाटन कर दिया।

सो कुचालि सब कहँ भइ नीकी ❀ अवधिआस सम जीवन जी की ॥
न तरु लखन-सिय-राम-बियोगा ❀ हहरि मरत सब लोग कुरोगा ॥

यह कुचाल भी सबके लिए अच्छी हो गयी। श्रीरामचन्द्रजीके वनवासकी अवधि सब जीवोंके जीनेके लिये आशाके समान है, नहीं तो लक्ष्मणजी, सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके वियोगरूपी दुष्ट रोगसे सब लोग तड़प-तड़प मर जाते।

रामकृपा अवरेब सुधारी ❀ बिबुधधारि भइ गुनद गोहारी ॥
भेंटत भुज भरि भाइ भरत सो ❀ राम-प्रेमु-रसु कहि न परत सो ॥

श्रीरामचन्द्रकी कृपाने वह कुपेच भी सुधार लिया। देवताओंकी माया लाभदायक और सहायक हो गयी। श्रीरामचन्द्रजी भुजाएं भरकर भाई भरतसे भेंट करने लगे। श्रीरामचन्द्रजीके उस प्रेमका रस कहनेमें नहीं आता।

तन मन बचन उमग अनुरागा ❀ धीर-धुरं-धर धीरजु त्यागा ॥
बारिजलोचन मोचन बारी ❀ देखि दसा सुरसभा दुखारी ॥

मन, वाणी और शरीर—सबमें प्रेम उमड़ आया और धीर-धुरंधर श्रीरामचन्द्रजीने धीरज छोड़ दिया। कमलके समान नेत्रोंसे आंसू गिरने लगे और उनकी दशा देखकर देवताओंकी सभा दुःखी हो गयी।

मुनिगन गुरु धुरधीर जनकसे ❀ ग्यानअनल मन कसे कनकसे ॥
जे बिरंचि निरलेप उपाये ❀ पदुमपत्र जिमि जग जल जाये ॥

मुनिजन, गुरु और राजा जनकके समान धीरधुरन्धर, जिन्होंने अपने मनको सोनेकी भाँति ज्ञानरूप अग्निमें कस लिया है, जो ब्रह्माकी मायासे निर्लेप हैं और संसाररूपी जलमें उत्पन्न होनेपर भी जो कमलके पत्तेके समान हैं—

दो०—तेउ बिलोकि रघुबर-भरत ❀ प्रीति अनूप अपार।
भये मगन मन तन बचन ❀ सहित बिराग बिचार ॥३१८॥

वह भी श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीकी अनुपम और अनन्त प्रीति देखकर ज्ञान और वैराग्यसमेत तन, मन और वचनसे मग्न हो गये।

जहाँ जनक गुरु गति मति भोरी ❀ प्राकृत प्रीति कहत बड़ि खोरी ॥
बरनत रघुबर - भरत - बियोगू ❀ सुनि कठोर कबि जानिहि लोगू ॥

जहां राजा जनक और गुरु वशिष्ठजीकी दशा और बुद्धि भोली हो जाती है, उसे साधारण प्रीति कहनेमें बड़ा दोष होगा। श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीके वियोगका वर्णन करनेसे जब लोग सुनेंगे तब मुझे कठोर कवि जानेंगे।

सो सकोचु रसु अकथ सुबानी ❀ समउ सनेहु सुमिरि सकुचानी ॥
भेंटि भरतु रघुबर समुझाये ❀ पुनि रिपुदवनु हरषि हिय लाये ॥

उसी संकोचके कारण यह रस सुन्दर वाणीके लिए अकथनीय है। श्रीरामचन्द्रजी और भरतजीके उस समयके प्रेमका स्मरण कर वह सकुचा गयी है। भेंट करके श्रीरामचन्द्रजीने भरतजीको समझाया और फिर प्रसन्न होकर शत्रुघ्नको हृदयसे लगा लिया।

सेवक सचिव-भरत-रुख पाई ❀ निज निज काज लगे सब जाई ॥
सुनि दारुन दुखु दुहूँ समाजा ❀ लगे चलनके साजन साजा ॥

मंत्रियों और भरतजीका रुख पाकर सब सेवक गये और अपने-अपने कार्यमें लग गये। वे चलनेकी तैयारियां करने लगे, जिसे सुनकर दोनों ही समाजोंमें घोर दुःख छा गया।

प्रभु-पद-पदुम बंदि दोउ भाई ❀ चले सीस धरि रामरजाई ॥
मुनि तापस बन देव निहोरी ❀ सब सनमानि बहोरि बहोरी ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलकी वन्दना कर और उनकी आज्ञाको शिरोधार्य करके,दोनों भाई मुनियों, तपस्वियों और वनके देवताओंकी विनती करके और बार-बार सबका सम्मान करके बिदा हुए।

दो०—लषनहिं भेंटि प्रनामु करि ❀ सिर धरि सिय-पद-धूरि।
चले सप्रेम असीस सुनि ❀ सकल - सुमंगल-मूरि ॥३१९॥

लक्ष्मणजीसे भेंटकर और उन्हें प्रणाम करके तथा सीताजीके चरणोंकी रजको शिरपर रखकर और सभी शुभ मंगलोंके मूल आशीर्वाद सुनकर वे प्रेमके साथ चल दिये।

सानुज राम नृपहि सिर नाई ❀ कीन्हि बहुत बिधि बिनय बड़ाई ॥
देव दयाबस बड़ दुखु पायेउ ❀ सहित समाज काननहिं आयेउ ॥

छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजीने राजा जनकको शिर नवाया और बहुत तरहसे विनय और बड़ाई की। उन्होंने कहा—हे देव, दयाके वशमें होकर आपने बड़ा दुःख पाया जो सब समाज समेत वनमें पधारे।

पुर पगु धारिय देइ असीसा ❀ कीन्ह धीर धरि गवनु महीसा ॥
मुनि महिदेव साधु सनमाने ❀ बिदा किये हरि-हर-सम जाने ॥

मुझे आशीर्वाद देकर अब नगरको पदार्पण कीजिये। यह सुनकर धीरज रखकर राजा जनक भी चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीने वशिष्ठ मुनि, ब्राह्मणों और साधुजनोंका आदर किया और उन्हें विष्णु और शिवके समान जानकर विदा किया।

सासुसमीप गये दोउ भाई ❀ फिरे बंदि पग आसिष पाई ॥
कौसिक बामदेव जाबाली ❀ परिजन पुरजन सचिव सुचाली ॥

फिर दोनों भाई सासके पास गये और चरणोंकी वंदना कर तथा आशीर्वाद पा लौट आये। विश्वामित्र, वामदेव, जाबालि, कुटुम्बी, नगरनिवासी, मंत्री और सज्जन लोग—

जथाजोग करि बिनय प्रनामा ❀ बिदा किये सब सानुज रामा ॥
नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे ❀ सब सनमानि कृपानिधि फेरे ॥

सबको छोटे भाई लक्ष्मणसमेत श्रीरामचन्द्रजीने यथायोग्य विनय और प्रणाम करके विदा किया। छोटों, बराबरवालों और बड़ों तथा पुरुषों और स्त्रियों—सबको कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने सम्मान करके लौटाया।

दो०—भरत-मातु-पद-बंदि प्रभु ❀ सुचि सनेह मिलि भेंटि।
बिदा कीन्हि सजि पालकी ❀ सकुच सोच सब मेंटि ॥३२०॥

भरतजीकी माता कैकेयीके चरणोंकी वंदना कर और पवित्र स्नेहसे मिल—भेंटकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उनका सारा शोच और संकोच मिटाकर पालकी सजाकर उन्हें विदा किया।

परिजन मातु पितहिं मिलि सीता ❀ फिरी प्रान-प्रिय-प्रेम-पुनीता ॥
करिप्रनामु भेंटी सब सासू ❀ प्रीति कहत कबि हिय न हुलासू ॥

प्राणप्यारे श्रीरामचन्द्रजीके प्रेममें पवित्र सीताजी कुटुम्बियों और माता-पितासे मिलकर लौट आयीं। फिर वे सब सासुओंको प्रणाम करके उनसे मिलीं। उस समयके प्रेमका वर्णन करते कविके हृदयमें उत्साह नहीं होता।

सुनि सिख अभिमत आसिष पाई ❀ रही सीय दुहु प्रीति समाई ॥
रघुपति पटु पालकी मंगाई ❀ करि प्रबोधु सब मातु चढ़ाई ॥

सीताजीने सीख सुनकर इच्छित आशीर्वाद पाया। अयोध्या और जनकपुरी—दोनों ही ओरकी प्रीतिमें वे फँसकर रह गयीं। चतुर श्रीरामचन्द्रजीने पालकीको मंगवाया और समझाकर सब माताओंको उनपर चढ़ाया।

बार बार हिलि मिलि दुहु भाई ❀ सम सनेह जननी पहुंचाई ॥
साजि बाजि गज बाहन नाना ❀ भूप भरत दल कीन्ह पयाना ॥

दोनों भाइयोंने बार-बार अच्छी तरह मिलकर समान प्रेमसे सब माताओंको पहुंचाया। राजा जनक और भरतजीके दलोंने हाथी, घोड़े और तरह-तरहकी सवारियाँ सजाकर प्रस्थान किया।

हृदय रामु सिय लषनु समेता ❀ चले जाहिं सब लोग अचेता ॥
बसह बाजि गज पसु हिय हारें ❀ चले जाहिं परबस मन मारें ॥

सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजी सबके हृदयमें हैं और अचेत अवस्थामें सब लोग चले जा रहे हैं। हाथी, घोड़ा, बैल आदि पशुओंका हृदय हार गया। वे मन मारे हुए परवश चले जा रहे हैं।

दो०—गुरु गुरुतिय पद बंदि प्रभु ❀ सीता लषन समेत ॥
फिरे हरष-बिसमय-सहित ❀ आये परननिकेत ॥३२१॥

गुरु वशिष्ठ और गुरुपत्नी अरुन्धतीके चरणोंकी वंदना करके सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजी आनन्द और विस्मयसहित पर्णकुटीमें लौट आये।

बिदा कीन्ह सनमानि निषादू ❀ चलेउ हृदय बड़ बिरह बिषादू ॥
कोल किरात भिल्ल बनचारी ❀ फेरे फिरे जोहारि जोहारी ॥

आदर करके श्रीरामचन्द्रजीने गुह निषादको विदा किया। निषाद विदा हुआ। उसके हृदयमें वियोगका बड़ा भारी दुःख हुआ। कोल, किरात, भील और वनमें रहनेवाले अन्य लोग—सबको श्रीरामचन्द्रजीने लौटाया और वे सब बारम्बार प्रणाम करके लौट आये।

प्रभु सिय लषन बैठि बट छाहीं ❀ प्रिय-परिजन-बियोग बिलखाहीं ॥
भरत सनेहु सुभाउ सुबानी ❀ प्रिया अनुज सन कहत बखानी ॥

बरगदकी छायामें बैठकर प्रभु सीताजी, लक्ष्मणजी और श्रीरामचन्द्रजी प्यारे कुटुम्बियोंके वियोगमें दुःखी होने लगे। श्रीरामचन्द्रजी सुन्दर वाणीसे भरतजीका स्नेह और स्वभाव छोटे भाई लक्ष्मण और प्यारी सीता-जीसे विस्तारपूर्वक कहने लगे।

प्रीति प्रतीति बचन मन करनी ❀ श्रीमुख राम प्रेमबस बरनी ॥
तेहि अवसर खग मृग जल मीना ❀ चित्रकूट चर अचर मलीना ॥

भरतजीके प्रेम, विश्वास, वचन, मन और कार्य—सबका वर्णन श्रीरामचन्द्रजीने प्रेमके वशमें होकर अपने श्रीमुखसे किया। उस समय चित्रकूटके पक्षी, हिरण, जल, मछलियां—सब चर और अचर प्राणी मलिन हो गये।

बिबुध बिलोकि दसा रघुबरकी ❀ बरषि सुमन कहि गति घर घरकी ॥
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह भरोसो ❀ चले मुदित मन डरु न खरोसो ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी दशा देखकर देवताओंने फूलोंकी वर्षा की और अपनी घर-घरकी दशा कह सुनायी। प्रणाम करके प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें भरोसा दिया और मनमें प्रसन्न होकर वे सब चल दिये। उन्हें कुछ भी भय नहीं रहा।

दो०—सानुज सीयसमेत प्रभु ❀ राजत परनकुटीर।
भगति ग्यानु बैराग जनु ❀ सोहत धरें सरीर ॥३२२॥

छोटे भाई लक्ष्मणजी और सीताजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी पर्णकुटीमें विराजमान हैं; मानों भक्ति और ज्ञानसमेत वैराग्य शरीर धारण किये शोभा पा रहा हो।

मुनि महिसुर गुरु भरत भुआलू ❀ रामबिरह सबु साजु बिहालू ॥
प्रभु-गुन-ग्राम गनत मन माहीं ❀ सब चुपचाप चले मग जाहीं ॥

श्रीरामचंद्रजीके वियोगमें मुनि, ब्राह्मण, गुरु, भरत और राजा जनक—सब लोग बेहाल हो रहे थे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको मनमें समझते हुए सब लोग चुपचाप मार्गमें चले जा रहे थे।

जमुना उतरि पार सबु भयऊ ❀ सो बासर बिनु भोजन गयऊ ॥
उतरि देवसरि दूसर बासू ❀ रामसखा सब कीन्ह सुपासू ॥

यमुनाजीको उतरकर सब लोग पार हुए। वह दिन भोजन बिना ही व्यतीत हो गया। गंगाजीके पार जाकर दूसरा पड़ाव डाला। यहां श्रीरामचन्द्रजीके मित्र गुह निषादने सब सुविधा कर दी।

सई उतरि गोमती नहाये ❀ चौथे दिवस अवधपुर आये ॥
जनकु रहे पुर बासर चारी ❀ राज काज सब साज संभारी ॥

फिर सई नदी पार करके गोमतीमें स्नान किया और चौथे दिन अयोध्यामें पहुंच गये। राजा जनक अयोध्यापुरीमें चार दिन ठहरे। फिर राजकाज और सब सामग्री संभालकर—

सौंपि सचिव गुरु भरतहि राजू ❀ तिरहुति चले साजि सब साजू॥
नगर-नारि-नर गुरु सिख मानी ❀ बसे सुखेन राम-रज-धानी॥

और मंत्रियों, गुरु वशिष्ठ तथा भरतजीको राज्य-भार सौंपकर वे अपना सब साज सजाकर तिरहुतको चल दिये। गुरु वशिष्ठजीकी सीख मानकर नगरके स्त्री-पुरुष—सब लोग श्रीरामचन्द्रजीकी राजधानी अयोध्यापुरीमें सुखसे रहने लगे।

दो०—रामदरस लगि लोग सब ❀ करत नेम उपवास।
तजि तजि भूषन भोग सुख ❀ जियत अवधिकी आस॥३२३॥

श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन पानेके लिये सब लोग भूषण, सुख और भोगविलास छोड़-छोड़कर नियम और व्रत करने लगे। वे चौदह वर्षकी अवधिकी आशापर जीते रहे।

(भरतकी तपस्या)

सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे ❀ निज निज काज पाइ सिख ओधे॥
पुनि सिख दीन्हि बोलि लघु भाई ❀ सौंपी सकल मातुसेवकाई॥

भरतजीने मंत्रियों और स्वामिभक्त सेवकोंको उपदेश दिया और सीख पाकर वे सब अपने-अपने काममें लग गये। फिर छोटे भाई शत्रुघ्नको बुलाकर सीख दी और सब माताओंकी सेवाका भार सौंप दिया।

भूसुर बोलि भरत कर जोरे ❀ करि प्रनाम बरबिनय निहोरे॥
ऊंच नीच कारजु भल पोचू ❀ आयसु देब न करब संकोचू॥

ब्राह्मणोंको बुलाकर भरतजीने हाथ जोड़े और प्रणाम करके उनसे बड़ी नम्रतापूर्वक विनती की—ऊँचा-नीचा, अच्छा-बुरा, कैसा भी कार्य हो, आज्ञा देनेमें संकोच न कीजियेगा।

परिजन पुरजन प्रजा बोलाये ❀ समाधान करि सुबस बसाये॥
सानुज गे गुरगेह बहोरी ❀ करि दंडवत कहत कर जोरी॥

फिर भरतजीने अपने कुटुम्बियों, प्रजाजनों और नगरनिवासियोंको बुलाया और उनका समाधान करके उन्हें अच्छी तरह बसा दिया। फिर वे छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत गुरु वशिष्ठके घर गये और दण्डवत करके हाथ जोड़कर कहने लगे—

आयसु होइ त रहउं सनेमा ❀ बोले मुनि तन पुलकि सप्रेमा॥
समुझब कहब करब तुम्ह जोई ❀ धरमु सारु जग होइहि सोई॥

यदि आज्ञा हो तो मैं नियमपूर्वक रहूं। वशिष्ठ मुनि पुलकित शरीर होकर प्रेमके साथ कहने लगे कि तुम जो कुछ समझोगे, कहोगे, और करोगे, वही संसारमें धर्मका सार होगा।

दो०—सुनि सिख पाइ असीस बड़ि ❀ गनक बोलि दिन साधि।
सिंहासन प्रभुपादुका ❀ बैठारे निरुपाधि ॥३२४॥

गुरुजीकी सीख सुनकर और बड़ा आशीर्वाद पाकर भरतजीने ज्योतिषियोंको बुलाकर शुभदिन स्थिर किया और उपाधिरहित प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी खड़ाऊँ सिंहासनपर प्रतिष्ठित कर दीं।

राममातु गुरुपद सिरु नाई ❀ प्रभु - पद - पीठ - रजायसु पाई ॥
नंदिगाँव करि परनकुटीरा ❀ कीन्ह निवासु धरम - धुर - धीरा ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी माता कौशल्या और गुरु वशिष्ठके चरणोंको शिर नवाकर तथा प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी पादुकाकी आज्ञा पाकर धर्मकी सीमा और धीर भरतजीने नंदिग्राममें पर्णकुटी बनाकर निवास किया।

जटाजूट सिर मुनिपट धारी ❀ महि खनि कुससाथरी सवाँरी ॥
असन बसन बासन ब्रत नेमा ❀ करत कठिन रिषिधरम सप्रेमा ॥

शिरपर जटाजूट रख लिये, मुनियोंके समान कपड़े धारण करने लगे, पृथिवीको खोदकर कुशोंका बिछौना बिछा लिया और भोजन, वस्त्र, पात्र, व्रत और नियम—ऋषियोंके सब कठिन धर्म प्रेमके साथ करने लगे।

भूषन बसन भोग सुख भूरी ❀ मन तन बचन तजे तिनु तूरी ॥
अवधराजु सुरराजु सिहाई ❀ दसरथ धनु सुनि धनद लजाई ॥

भूषण, वस्त्र, भोग-विलास और बहुत प्रकारके सुख—सबको मन, वाणी और शरीरसे तिनकेके समान त्याग दिया। जिस अयोध्याके राज्यकी प्रशंसा इन्द्र भी करते हैं और राजा दशरथके जिस वैभवको सुनकर कुबेर भी लज्जित हो जाते हैं—

तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा ❀ चंचरीक जिमि चंपक बागा ॥
रमाबिलासु रामअनुरागी ❀ तजत बमन जिमि जन बड़भागी ॥

उसी नगरमें भरतजी विरक्त होकर बसने लगे; जैसे चंपकलताके बागमें भौंरा। जो श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमी हैं वे लक्ष्मीके भोगोंको वमनके समान त्याग देते हैं। वे बड़े भाग्यशाली मनुष्य हैं।

दो०—राम-प्रेम-भाजन भरतु ❀ बड़े न येहि करतूति।
चातक हंस सराहियत ❀ टेक बिबेक बिभूति ॥३२५॥

जब टेक और विवेककी विभूतिके कारण ही क्रमशः पपीहे और हंसकी प्रशंसा की जाती है तब भरतजी तो श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमके पात्र ही हैं। उनके लिये यह कोई बड़ा काम नहीं है।

देह दिनहुँ दिन दूबरि होई ❀ घटइ न तेजु बलु मुखछबि सोई ॥
नित नव राम-प्रेम-पनु पीना ❀ बढ़त धरमदलु मनु न मलीना ॥

भरतजीका शरीर दिन-दिन दुबला होने लगा, परन्तु उनका तेज और बल कम नहीं हुआ। मुँहकी शोभा वही बनी रही। श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमका प्रण नित्य नया पुष्ट होता और धर्मका दल बढ़ता जाता था। उनका मन मलिन न रहता था।

जिमि जलु निघटत सरद प्रकासे ❀ बिलसत बेतस बनज बिकासे ॥
सम दम संजम नियम उपासा ❀ नखत भरत हिय बिमल अकासा ॥

जैसे शरदऋतुके प्रकाशित होनेपर जल घट जाता है, बेत बढ़ने लगते हैं और कमल खिल जाते हैं; उसी प्रकार शम, दम, संयम, नियम और व्रत—सब भरतजीके हृदयरूपी आकाशमें नक्षत्रोंके समान चमकने लगे।

ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी ❀ स्वामिसुरति सुरबीथि बिकासी ॥
राम-प्रेम-बिधु अचल अदोखा ❀ सहित समाज सोह नित चोखा ॥

भरतजीका विश्वास ध्रुवतारा है, चौदह वर्षकी अवधि रात्रिकालके समान है, स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण ही देव-पथ प्रकाशित हो रहा है, श्रीरामचन्द्रजीका प्रेम ही निश्चल और निर्दोष चन्द्रमा है, जो नित्य अपने समाजरूपी नक्षत्रोंसहित बहुत सुन्दर शोभा पाता है।

भरत रहनि समुझनि करतूती ❀ भगति बिरति गुन बिमल बिभूती ॥
बरनत सकल सुकबि सकुचाहीं ❀ सेस-गनेस-गिरा - गमु नाहीं ॥

भरतजीके रहनेका ढंग, समझ, करतूत, भक्ति, वैराग्य, गुण, और निर्मल ऐश्वर्य—सबका वर्णन करते श्रेष्ठ कवि भी सकुचाते हैं, वहां शेषनाग, सरस्वती और गणेशजी भी नहीं पहुंच सकते।

दो०—नित पूजत प्रभुपांवरी ❀ प्रीति न हृदय समाति ।
मांगि मांगि आयसु करत ❀ राजकाज बहु भांति ॥३२६॥

भरतजी नित्य प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी खड़ाऊं पूजते हैं। उनके हृदयमें प्रेम नहीं समाता। वे आज्ञा मांग-मांगकर बहुत प्रकारके सभी राजकाज करते हैं।

पुलक गात हिय सिय रघुबीरू ❀ जीह नामु जपु लोचन नीरू ॥
लखनु रामु सिय कानन बसहीं ❀ भरतु भवन बसि तप तनु कसहीं ॥

भरतजीका शरीर पुलकायमान हो रहा है, हृदयमें सीताजी और श्रीरामचन्द्रजी हैं, जीभ उनका नाम जप रही है और नेत्रोंमें जल छाया हुआ है। लक्ष्मणजी, श्रीरामचन्द्रजी और सीताजी वनमें बसते हैं और भरतजी घरमें रहते हुए ही तपस्यासे अपना शरीर कस रहे हैं।

दोउ दिसि समुझि कहत सबु लोगू ❀ सब बिधि भरतु सराहन जोगू ॥
सुनि ब्रत नेम साधु सकुचाहीं ❀ देखि दसा मुनिराज लजाहीं ॥

दोनों ही ओर समझकर सब लोग कहते थे कि भरतजी सब प्रकार प्रशंसा करनेयोग्य हैं। भरतजीका व्रत और नियम सुनकर साधुजन सकुचाते हैं और उनकी दशा देखकर मुनिराज लज्जित हो जाते हैं।

परमपुनीत भरतआचरनू ❀ मधुर - मंजु - मुद - मंगल - करनू ॥
हरन कठिन कलि - कलुष - कलेसू ❀ महा - मोह - निसि - दलन दिनेसू ॥

भरतजीका आचरण अत्यन्त पवित्र, मधुर, सुन्दर और आनन्दमंगल करनेवाला है। वह कलियुगके कठोर पापों और दुःखोंको दूर कर देनेवाला है और महामोहरूपी रात्रिको नष्ट कर देनेके लिये सूर्य ही है।

पाप - पुंज - कुंजर - मृगराजू ❀ समन सकल - संताप - समाजू ॥
जनरंजन भंजन भवभारू ❀ रामसनेह सुधा - कर - सारू ॥

पापोंके समूहरूपी हाथीके लिये वह सिंहके समान है और सब प्रकारके संतापोंके समूहको नष्ट कर देनेवाला है। वह भक्तोंको प्रसन्न करनेवाला, संसारके भारको नष्ट कर देनेवाला और श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमरूपी अमृतकी किरणोंवाले चन्द्रमाका सार है।

छं०—सिय राम - प्रेम-पियूष-पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनि-मन-अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को ॥
दुख दाह दारिद दंभ दूषन सुजस मिस अपहरत को।
कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सनमुख करत को ॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमरूपी अमृतसे भरा हुआ भरतजीका जन्म यदि नहीं होता तो मुनियोंके मनके लिये भी अगम्य यम, नियम, शम, दम और कठोर व्रतोंका आचरण कौन करता? सुयशके बहाने दुःख, दाह, दरिद्र, दम्भ और दोषोंका कौन हरण करता और कलियुगमें तुलसीदासके समान दुष्टोंको हठपूर्वक श्रीरामचन्द्रजीके सामने कौन कर देता?

सो०—भरतचरित करि नेमु ❀ तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय - राम - पद प्रेमु ❀ अवसि होइ भव-रस-बिरति ॥३२७॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि नियम करके आदरपूर्वक जो लोग भरतजीके चरितको सुनेंगे उन्हें सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंसे प्रेम और संसारके विषयोंसे वैराग्य अवश्य हो जायगा।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-
वैराग्यसम्पादनो नाम द्वितीयः सोपानः समाप्तः ॥

※ श्रीगणेशाय नमः ※

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

तृतीय सोपान

अरण्यकांड

श्लोकाः

मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्ददं
वैराग्याम्बुजभास्करं ह्यघघनध्वान्तापहं तापहम् ।
मोहाम्भोधरपूगपाटनविधौ श्वासं भवं शङ्करं
वन्दे ब्रह्मकुलं कलङ्कशमनं श्रीरामभूपप्रियम् ॥ १ ॥

राजा श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे श्रीमहादेवजीको मैं प्रणाम करता हूं, जो धर्मरूपी वृक्षके मूल, ज्ञानरूपी समुद्रको आनन्द देनेवाले पूर्णचन्द्र, वैराग्यरूपी कमलके लिये सूर्य, पापरूपी घने अंधकारको दूर कर देनेवाले, तापहारी, मोहरूपी बादलोंके पटल छिन्न-भिन्न करनेके लिये पवनस्वरूप, कल्याणकारी, ब्रह्म-सम्भूत और कलंक दूर कर देनेवाले हैं।

सान्द्रानन्दपयोदसौभगतनुं पीताम्बरं सुन्दरं
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीरभारं वरम्

राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन संशोभितं
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं भजे ॥ २ ॥

सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत मार्गमें विचरते हुए सुन्दर श्रीरामचन्द्रजीको मैं भजता हूं, जिनका शरीर सघन और सुन्दर बादलके समान है, जो सुन्दर पीताम्बर धारण किये और हाथमें धनुष और बाण लिये हुए हैं, जिनको कटिमें बंधा हुआ श्रेष्ठ तरकस शोभित हो रहा है, कमलके समान जिनके विशाल नेत्र हैं और जिनके शिरपर जटाजूट शोभित हो रहा है।

सो०—उमा रामगुन गूढ़ ❀ पंडित मुनि पावहिं बिरति।
पावहिं मोह बिमूढ़ ❀ जे हरि बिमुख न धरमरति ॥१॥

शिवजी कहने लगे—हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजीके गुण गूढ़ हैं। उन्हें जाननेसे पण्डितों और मुनिजनोंको वैराग्य होता है; परन्तु जो महामूर्ख हैं, भगवान्से विमुख हैं, और जिन्हें धर्ममें प्रेम नहीं है; उन्हें श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंसे मोह हो जाता है।

पुर-नर-भरत प्रीति मैं गाई ❀ मति अनुरूप अनूप सुहाई ॥
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन ❀ करत जे बन सुर-नर-मुनि-भावन ॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि अयोध्यापुरीके निवासियों और भरतजीकी अनुपम और सुहावनी प्रीतिका वर्णन मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार किया। अब, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके अत्यन्त पवित्र चरित सुनो, जिन्हें वे वनमें करते हैं और जो देवता, मुनि और मनुष्य—सबको अच्छे लगते हैं।

एक बार चुनि कुसुम सुहाये ❀ निज कर भूषन राम बनाये ॥
सीतहि पहिराये प्रभु सादर ❀ बैठे फटिकसिला पर सुंदर ॥

एक बार सुन्दर फूलोंको चुनकर श्रीरामचन्द्रजीने अपने हाथोंसे उनके गहने बनाये, जिन्हें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने आदरपूर्वक सीताजीको पहिनाया और सुन्दर स्फटिकशिलापर बैठ गये।

सुर-पति-सुत धरि बायस बेखा ❀ सठ चाहत रघुपति बल देखा ॥
जिमि पिपीलिका सागर थाहा ❀ महा-मंद-मति पावन चाहा ॥

इसी समय देवताओंके स्वामी इन्द्रके पुत्र जयंतने कौएका रूप धारण किया। वह दुष्ट श्रीरामचन्द्रजीका बल देखना चाहता था। जैसे चींटी समुद्रको थाह लेना चाहती हो उसी प्रकार उस मंदबुद्धिने श्रीरामचन्द्रजीके बलकी थाह पानी चाही।

सीता चरन चोंच हति भागा ❀ मूढ़ मंदमति कारन कागा ॥
चला रुधिर रघुनायकु जाना ❀ सींक धनुष सायकु संधाना ॥

वह मूर्ख कौआ मन्दबुद्धि होनेके कारण सीताजीके चरणोंमें चोंच मारकर भागा। जब चोंच लगनेके स्थानसे खून बह चला तब श्रीरामचन्द्रजीको मालूम हुआ। उसी समय उन्होंने धनुषपर सींकका बाण चढ़ाया।

दो०—अतिकृपाल रघुनायक ❀ सदा दीन पर नेह।
ता सन आइ कीन्ह छलु ❀ मूरख अवगुनगेह ॥२॥

श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त दयालु हैं। वे दीनोंपर सदा प्रेम करते हैं। अवगुणके भाण्डार इस मूर्खने उनसे आकर छल किया।

प्रेरित मंत्र ब्रह्मसर धावा ❀ चला भाजि बायस भय पावा॥
धरि निजरूप गयेउ पितु पाहीं ❀ रामबिमुख राखा तेहि नाहीं॥

ब्रह्मास्त्रके मन्त्रसे अभिमन्त्रित होकर वह बाण दौड़ा, जिससे कौआ भयभीत हो गया और भाग चला। वह अपना रूप रखकर पिता इन्द्रके पास गया, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होनेके कारण उन्होंने भी उसे नहीं रखा।

भा निरास उपजी मन त्रासा ❀ जथा चक्रभय रिषि दुर्बासा॥
ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोका ❀ फिरा स्रमित ब्याकुल भय सोका॥

वह निराश हो गया और उसके मनमें बड़ा भय उत्पन्न हुआ; जैसे सुदर्शनचक्रके भयसे दुर्वासा ऋषिकी दशा हुई थी। ब्रह्मपुरी, शिवजीके स्थान कैलाश आदि लोकोंमें वह भय और शोकसे व्याकुल थका हुआ फिरता रहा—

काहू बैठन कहा न ओही ❀ राखि को सकइ राम कर द्रोही॥
मातु मृत्यु पितु समनसमाना ❀ सुधा होइ बिष सुनु हरिजाना॥

परन्तु किसीने भी उससे बैठनेके लिए नहीं कहा। श्रीरामचन्द्रजीसे द्रोह करनेवालेको कौन रख सकता है? कागभुशुण्डिजी कहते हैं कि हे गरुड़जी, सुनिये। उसकी माता मृत्युके समान हो जाती है और पिता यमराजके समान! अमृत विष हो जाता है!

मित्र करइ सतरिपु कै करनी ❀ ता कहुँ बिबुधनदी बैतरनी॥
सब जगु तेहि अनलहु तें ताता ❀ जो रघुबीर-बिमुख सुनु भ्राता॥

उसके मित्र सौ शत्रुओंके समान काम करते हैं और उसके लिए गंगा नदी भी वैतरणी नदीके समान हो जाती है। हे भाई, सुनो, जो श्रीरामचन्द्रजीसे विमुख हैं उसके लिए यह सारा संसार अग्निसे भी अधिक गरम है।

दो०—जिमि जिमि भाजत सक्रसुत ❀ ब्याकुल अति दुखदीन।
तिमि तिमि धावत रामसर ❀ पाछे परम प्रबीन ॥३॥

अत्यन्त दुःखी और दीन होकर व्याकुल दशामें इन्द्रका पुत्र जयन्त ज्यों-ज्यों भागता है त्यों-त्यों श्रीरामचन्द्रजीका वह अत्यन्त चतुर बाण भी पीछे दौड़ता जाता है।

नारद देखा बिकल जयंता ❀ लागि दया कोमल चित संता ॥
पठवा तुरत राम पहिं ताही ❀ कहेसि पुकारि प्रनतहित पाही ॥

नारदजीने जब देखा कि जयन्त व्याकुल हो रहा है तब उन्हें दया हो आयी, क्योंकि सन्तजनोंका चित्त कोमल होता है। उन्होंने उसे तुरन्त ही श्रीरामचन्द्रजीके पास भेजा। श्रीरामचन्द्रजीके पास जाकर वह पुकारकर कहने लगा कि हे दीनोंका हित करनेवाले, मेरी रक्षा कीजिये।

आतुर सभय गहेसि पद जाई ❀ त्राहि त्राहि दयालु रघुराई ॥
अतुलित बल अतुलित प्रभुताई ❀ मैं मतिमंद जानि नहिं पाई ॥

दुःखी और भयभीत जयन्तने चरण पकड़ लिए और पुकारने लगा कि हे दयालु, हे रघुराज, मेरी रक्षा कीजिए, मेरी रक्षा कीजिये। आपका बल अतुल है। आपकी प्रभुता भी अतुल है। मैं मन्दबुद्धि हूं ! मैंने उसे जान नहीं पाया था।

निज कृत करमजनित फल पायेउँ ❀ अब प्रभु पाहि सरन तकि आयेउँ ॥
सुनि कृपाल अति आरत बानी ❀ एक नयन करि तजा भवानी ॥

अपने किए हुए कर्मका फल मैंने पा लिया। अब आपकी शरणमें आया हूं। हे प्रभो, मेरी रक्षा कीजिये। शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, अत्यधिक दुःखभरी हुई वाणी सुनकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने जयन्तका एक नेत्र फोड़कर और एक बना रहने देकर छोड़ दिया।

सो०—कीन्ह मोह बस द्रोह ❀ जद्यपि तेहि कर बध उचित।
प्रभु छाड़ेउ करि छोह ❀ को कृपाल रघुबीर सम ॥४॥

जयन्तने मोहके वशमें होकर द्रोह किया था। यद्यपि उसका वध ही उचित था तथापि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने दया करके उसे जीता छोड़ दिया। श्रीरामचन्द्रजीके समान दयालु कौन है ?

रघुपति चित्रकूट बसि नाना ❀ चरित किये स्रुति सुधा समाना ॥
बहुरि राम अस मन अनुमाना ❀ होइहि भीर सबहिं मोहि जाना ॥

चित्रकूटमें बसकर श्रीरामचन्द्रजीने बहुतसे चरित किए, जो कानोंको सुननेमें अमृतके समान हैं। फिर श्रीरामचन्द्रजीने मनमें ऐसा अनुमान किया कि यहां सभी लोगोंने मुझे जान लिया है, इसलिये यहांपर भीड़ होगी।

सकल मुनिन्ह सन बिदा कराई ❀ सीतासहित चले दोउ भाई ॥
अत्रिके आश्रम जब प्रभु गयऊ ❀ सुनत महामुनि हरषित भयऊ ॥

फिर सब मुनियोंसे विदा लेकर सीताजीसमेत दोनों भाई चल दिये। प्रभु श्रीरामचंद्रजी जब अत्रि मुनिके आश्रममें गये तब यह समाचार सुनते ही महामुनि अत्रि आनन्दित हो गये।

पुलकित गात अत्रि उठि धाये ❀ देखि रामु आतुर चलि आये ॥
करत दंडवत मुनि उर लाये ❀ प्रेमबारि दोउ जन अन्हवाये ॥

पुलकित शरीर होकर महामुनि अत्रि उठ दौड़े। मुनिको इस प्रकार आते देखकर श्रीरामचन्द्रजी जल्दी-जल्दी आगे बढ़ आये। श्रीरामचन्द्रजीने मुनिको दण्डवत की और मुनिने उन्हें हृदयसे लगा लिया और प्रेमके आंसुओंसे दोनों भाइयोंको स्नान करा दिया।

देखि रामछबि नयन जुड़ाने ❀ सादर निज आस्रम तब आने ॥
करि पूजा कहि बचन सुहाये ❀ दिये मूल फल प्रभु मन भाये ॥

श्रीरामचन्द्रजीको शोभा देखकर जब मुनिके नेत्र शीतल हो गये तब वे उन्हें आदरपूर्वक अपने आश्रममें ले आये और उनकी पूजा करके सुन्दर वचन कहकर उन्होंने उन्हें फलफूल दिये, जो प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके मनको अच्छे लगे।

सो०—प्रभु आसन आसीन ❀ भरि लोचन सोभा निरखि।
मुनिबर परम प्रबीन ❀ जोरि पानि अस्तुति करत ॥५॥

आसनपर विराजमान प्रभु श्रीरामचंद्रजीकी शोभाको नेत्रभर देखकर अत्यंत चतुर मुनिवर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे—

छं०—नमामि भक्तवत्सलं ❀ कृपालु सील कोमलम्।
भजामि ते पदाम्बुजं ❀ अकामिनां स्वधामदम् ॥
निकाम - श्याम - सुन्दरं ❀ भवाम्बुनाथ - मन्दरम्।
प्रफुल्ल - कञ्ज - लोचनं ❀ मदादि - दोष - मोचनम् ॥

हे भक्तवत्सल, हे कृपालु, हे कोमल शीलवाले, मैं आपको प्रणाम करता हूं। मैं आपके चरण कमलोंकी सेवा करता हूं, जो निष्काम पुरुषको वैकुण्ठ देनेवाले हैं। आप इच्छारहित हैं, आपका शरीर सुन्दर और सांवला है, आप संसाररूपी समुद्रके मंदराचल हैं। आपके नेत्र खिले हुए कमलके समान हैं और आप मद आदि दोषोंको दूर कर देनेवाले हैं।

प्रलम्ब - बाहु - विक्रमं ❀ प्रभोऽप्रमेयवैभवम् ।
निषङ्ग - चाप - सायकं ❀ धरं त्रि - लोक - नायकम् ॥
दिनेश - वंश - मण्डनं ❀ महेश - चाप - खण्डनम् ।
मुनीन्द्र - सन्त - रञ्जनम् ❀ सुरारि - वृन्द - भञ्जनम् ॥

आपकी लम्बी भुजाओंका पराक्रम अपार है। हे प्रभो, आपका ऐश्वर्य असीम है। आप तीनों लोकोंके स्वामी हैं और धनुष, बाण और तरकस धारण किये हुए हैं। आप सूर्यवंशके भूषण, शिवजीके धनुषको तोड़नेवाले, मुनिवरों और संतजनोंको प्रसन्न करनेवाले और देवताओंके शत्रुओंके समूहको नष्ट कर देनेवाले हैं।

मनोज - वैरि - वन्दितं ❀ अजादि - देव - सेवितम् ।
विशुद्ध बोध विग्रहं ❀ समस्तदूषणापहम् ॥
नमामि इन्दिरापतिं ❀ सुखाकरं सतां गतिम् ।
भजे सशक्ति सानुजं ❀ शची - पति - प्रियानुजम् ॥

कामदेवके शत्रु शिवजी आपकी वंदना करते हैं, ब्रह्मा आदि देवता आपकी सेवा करते हैं, आपका स्वरूप विशुद्ध ज्ञानमय है, आप सब दोषोंको नष्ट कर देनेवाले हैं। आप लक्ष्मीके पति हैं, सुखके भाण्डार हैं और सन्तजनोंकी गति हैं। मैं आपको प्रणाम करता हूं। शक्ति सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजी समेत मैं आपका भजन करता हूं। आप शचीके पति इन्द्रको प्यारे हैं और उसके छोटे यही हैं।

त्वदङ्घ्रिमूल ये नराः ❀ भजन्ति हीनमत्सराः ।
पतन्ति नो भवार्णवे ❀ वितर्क - वीचि - सङ्कुले ॥
विविक्तवासिनसदा ❀ भजन्ति मुक्तये मुदा ।
निरस्य इन्द्रियादिकं ❀ प्रयान्ति ते गतिंस्वकाम् ॥

ईर्ष्यारहित होकर जो मनुष्य आपके चरणोंको भजते हैं वे कुतर्ककी लहरोंसे परिपूर्ण भवसागरमें नहीं गिरते। एकान्तवासी साधुजन मुक्ति पानेके लिये आनन्दके साथ सदैव आपका भजन करते हैं और वे इंद्रियादिक सुखोंसे अलग रहकर अपनी गति—नित्यमुक्ति पा जाते हैं।

त्वमेकमद्भुतं प्रभुं ❀ निरीहमीश्वरं विभुं ।
जगद्गुरुं च शाश्वतं ❀ तुरीयमेव केवलम् ॥
भजामि भाववल्लभं ❀ कुयोगिनां सुदुर्लभम् ।
स्व-भक्त-कल्प पादपं ❀ समं सुसेव्यमन्वहम् ॥

आप एक हैं, अद्भुत हैं, स्वामी हैं, कामनारहित हैं, ऐश्वर्यवान् हैं, समर्थ हैं, जगद्गुरु हैं, नित्य हैं, तीनों गुणोंसे परे निर्गुण ब्रह्म हैं और पूर्ण हैं। आप प्रेमके प्यारे हैं, कुयोगियोंके लिये अत्यंत दुर्लभ हैं, अपने भक्तोंके लिये कल्पवृक्ष हैं और समान भावसे प्रति दिन सेवा करनेयोग्य हैं। मैं आपका भजन करता हूं।

अनूप रूप भूपतिं ❀ नतोऽहमुर्विजापतिम्।
प्रसीद मे नमामि ते ❀ पदाब्जभक्ति देहि मे॥
पठन्ति ये स्तवं इदं ❀ नरादरेण ते पदम्।
व्रजन्ति नात्र संशयः ❀ त्वदीयभक्तिसंयुताः॥

उपमारहित रूपवाले, राजा सीतापति श्रीरामचन्द्रजीको मैं प्रणाम करता हूं। आप मुझपर प्रसन्न हों। मैं आपको नमस्कार करता हूं। आप मुझे अपने चरणकमलोंकी भक्ति दीजिये जो मनुष्य इस स्तुतिको आदरके साथ पढ़ते हैं वे आपकी भक्तिसे युक्त होकर वैकुण्ठको चले जाते हैं, इसमें संदेह नहीं है।

दो०—बिनती करि मुनि नाइ सिरु ❀ कह कर जोरि बहोरि।
चरनसरोरुह नाथ जनि ❀ कबहुं तजइ मति मोरि॥६॥

विनती करके मुनिने शिर नवाया और हाथ जोड़कर फिर कहने लगे कि हे नाथ, आपके चरणकमलोंको मेरी बुद्धि कभी नहीं छोड़े।

अनसूया के पद गहि सीता ❀ मिली बहोरि सुसील बिनीता॥
रिषि-पतिनी-मन सुख अधिकाई ❀ आसिष देइ निकट बैठाई॥

फिर अनुसूयाके चरण पकड़कर सुशीला और नम्रा सीताजी उनसे मिलीं। ऋषिपत्नीने मनमें अत्यन्त सुखी होकर आशीर्वाद दिया और पास बिठला लिया।

दिब्य बसन भूषन पहिराये ❀ जे नित नूतन अमल सुहाये॥
कह रिषिबधू सरस मृदु बानी ❀ नारिधरमु कछु ब्याज बखानी॥

फिर अनुसूयाने सीताजीको दिव्य गहने और कपड़े पहनाये, जो नित्य नये, स्वच्छ और सुन्दर रहते थे। फिर किसी बहानेसे ऋषिपत्नी अनुसूया रसीली मीठीवाणीसे स्त्रीधर्मका निरूपण करके कहने लगीं—

मातु-पिता-भ्राता-हितकारी ❀ मितप्रद सबु सुनु राजकुमारी॥
अमितदानि भर्ता बैदेही ❀ अधम सो नारि जो सेव न तेही॥

हे राजकुमारी, सुनो। माता, पिता, भाई और हित करनेवाले, सब एक सीमातक ही देनेवाले हैं, किन्तु हे सीता, असीम दाता पति ही है। ऐसे पतिकी सेवा जो नहीं करती वह अधम है।

धीरजु धरम मित्र अरु नारी ❀ आपदकाल परखियहि चारी ॥
वृद्ध रोगबस जड़ धनहीना ❀ अंध बधिर क्रोधी अति दीना ॥

धीरज, धर्म, मित्र, और स्त्री, इन चारोंकी परीक्षा आपत्तिकालमें ही लेनी चाहिये। बूढ़ा, रोगी, मूर्ख धनहीन, अंधा, बहिरा, क्रोधी और अत्यन्त दीन—

ऐसेहु पति कर किये अपमाना ❀ नारि पाव जमपुर दुख नाना ॥
एकइ धरम एक ब्रतु नेमा ❀ काय बचन मन पतिपद प्रेमा ॥
जगु पतिब्रता चारि बिधि अहहीं ❀ बेद पुरान संत सब कहहीं ॥

ऐसे पतिका भी अपमान करनेसे स्त्रीको यमपुरीमें अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। स्त्रीका एक ही धर्म है और उसके लिये एक ही नियम और व्रत है कि मन, वाणी और शरीरसे अपने पतिके चरणोंमें प्रेम रखे। वेद, पुराण और संत-जन, सब कहते हैं कि संसारमें चार तरहकी पतिव्रता स्त्रियाँ होती हैं—

दो०—उत्तम मध्यम नीच लघु ❀ सकल कहउँ समुझाइ।
आगे सुनहिं ते भव तरहि ❀ सुनहु सीय चित लाइ ॥७॥

उत्तम, मध्यम, नीच और अधम। इन सबको समझाकर कहती हूँ। हे सीताजी मन लगाकर सुनो। जो इसे आगे सुनेंगे वे संसारसे तर जायँगे।

उत्तम के अस बस मन माहीं ❀ सपनेहु आन पुरुष जगु नाहीं ॥
मध्यम परपति देखइ कैसे ❀ भ्राता पिता पुत्र निज जैसे ॥

उत्तम पतिव्रता स्त्रीके मनमें ऐसा निश्चय होता है कि स्वप्नमें भी संसारमें दूसरा पुरुष है ही नहीं। मध्यम श्रेणीकी पतिव्रता स्त्रियां अन्य स्त्रियोंके पतियोंको उसी प्रकार देखती हैं जैसे अपने भाई, पिता और पुत्रको।

धरम बिचारि समुझि कुल रहई ❀ सो निकृष्ट तिय स्रुति अस कहई ॥
बिनु अवसर भय ते रह जोई ❀ जानेहु अधम नारि जग सोई ॥

वेद ऐसा कहते हैं कि जो स्त्री अपना धर्म विचारकर और कुलकी प्रतिष्ठाको समझकर रह जाय वह नीच है, परन्तु संसारमें अधम स्त्री उसीको जानना चाहिये जो अवसर न मिलने अथवा डरके कारण बच जावे।

पतिबंचक पर-पति-रति करई ❀ रौरव नरक कलपसत परई ॥
छन सुख लागि जनम सत कोटी ❀ दुख न समुझ तेहि सम को खोटी ॥

जो स्त्री अपने पतिसे छल करती है और दूसरेके पतिसे प्रेम, उसे सौ कल्पतक रौरव नरकमें रहना पड़ता है। एक क्षणके सुखके लिये जो स्त्री सौ करोड़ जन्मोंके दुःखको नहीं समझती, उसके समान खोटा और कौन है?

बिनु स्रम नारि परम गति लहई ❀ पति-ब्रत-धरम छाड़ि छल गहई ॥
पति प्रतिकूल जनम जहँ जाई ❀ बिधवा होइ पाइ तरुनाई ॥

जो स्त्री छल छोड़कर पतिव्रत-धर्मका पालन करती हैं वह अनायास ही स्वर्ग पा जाती है, परन्तु पतिसे विमुख रहनेवाली स्त्री जहां जाकर जन्म लेती है वहीं युवा अवस्थामें विधवा हो जाती है।

सो०—सहज अपावनि नारि ❀ पति सेवत सुभ गति लहइ ।
जसु गावत स्रुति चारि ❀ अजहुं तुलसिका हरिहि प्रिय ॥८॥

स्त्री स्वभावसे ही अपवित्र होती है; परन्तु पतिकी सेवा करते ही वह शुभगति पा जाती है और चार वेद उसका यश गाते हैं। आज भी तुलसीपत्र भगवान्‌को प्यारे हैं।

सुनु सीता तव नामु ❀ सुमिरि नारि पतिब्रत करहिं ।
तोहि प्रानप्रिय रामु ❀ कहेउँ कथा संसारहित ॥९॥

हे सीता, सुनो। तुम्हारा नाम स्मरण कर स्त्रियां पतिव्रत-धर्म धारण करेंगी। तुम्हें तो श्रीरामचन्द्रजी अपने प्राणके समान प्यारे हैं। मैंने यह कथा संसारके हितके लिये कही है।

सुनि जानकी परम सुखु पावा ❀ सादर तासु चरन सिरु नावा ॥
तब मुनि सन कह कृपानिधाना ❀ आयसु होइ जाउँ बन आना ॥

अनुसूयाका उपदेश सुनकर सीताजीने अत्यन्त सुख पाया और आदरपूर्वक उनके चरणोंमें अपना शिर नवाया। तब कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने मुनिसे कहा कि यदि आज्ञा हो तो किसी दूसरे वनको जाऊं।

संतत मोपर कृपा करेहू ❀ सेवकु जानि तजेहु जनि नेहू ॥
धरम-धुरंधर प्रभु कै बानी ❀ सुनि सप्रेम बोले मुनि ग्यानी ॥

आप सदा मुझपर कृपा करते रहियेगा और सेवक जानकर प्रेम न छोड़ दीजियेगा। धर्म-धुरन्धर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी वाणी सुनकर ज्ञानी मुनि प्रेमके साथ कहने लगे—

जासु कृपा अज सिव सनकादी ❀ चहत सकल परमारथबादी ॥
ते तुम्ह राम अकाम पियारे ❀ दीनबंधु मृदु बचन उचारे ॥

ब्रह्मा, शिव, सनकादिक और परमार्थवादी, सब लोग जिसकी कृपा चाहते हैं; हे श्रीरामचन्द्रजी, आप वही हैं, निष्काम लोगोंको प्यारे हैं और दीनबन्धु हैं जिन्होंने ये कोमल वचन कहे हैं।

अब जानी मैं श्रीचतुराई ❀ भजिय तुम्हहिं सब देव बिहाई ॥
जेहि समान अतिसय नहिं कोई ❀ ता कर सील कस न अस होई ॥

अब मैंने श्रीजीकी चतुराईको समझ लिया। सब देवताओंको छोड़कर आपका ही भजन करना चाहिये। कोई भी न तो जिसके समान ही है और न अधिक, उसका शील ऐसा क्यों न होवे?

केहि बिधि कहउँ जाहु अब स्वामी ❀ कहहु नाथ तुम्ह अंतरजामी॥
अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा ❀ लोचन जलु बह पुलक सरीरा॥

हे नाथ, आपही कहिये, आप अन्तर्यामी हैं। हे स्वामिन्, मैं किस प्रकार कहूँ कि अब जाओ। ऐसा कहकर धीर मुनिने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखा और देखते ही उनके नेत्रोंसे जल बहने लगा और शरीर पुलकायमान हो गया।

छं०—तन पुलक निर्भर प्रेमपूरन नयन मुख-पंकज दिये।
मन-ग्यान-गुन गोतीत प्रभु मैं दीख जप तप का किये॥
जप जोग धरम समूह ते नर भगति अनुपम पावहीं।
रघुबीर-चरित पुनीत निसि दिनु दास तुलसी गावहीं॥

मुनिका शरीर पुलकायमान हो गया, उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया, वे प्रेममें भर गये, उनके नेत्र भी श्रीरामचन्द्रजीके कमलके समान मुखको एकटक देखते रह गये। उन्होंने सोचा—मैंने ऐसे कौनसे जप-तप किये हैं कि जो मैंने उस प्रभुके दर्शन कर लिये, जो निर्गुण हैं और मन, ज्ञान, और इन्द्रियोंकी पहुंचके बाहर हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि जो मनुष्य रात-दिन श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र चरितको गाते हैं वे जप, योग, पुण्य-समूह और अनुपम भक्ति—सब पाते हैं।

दो०—कलि-मल-समन दमन दुख ❀ रामसुजसु सुख मूल।
सादर सुनहिं जे तिन्हहिं पर ❀ रामु रहहिं अनुकूल॥१०॥

श्रीरामचन्द्रजीका सुयश कलिके दोषोंको दूर करनेवाला, दुःखको नष्ट कर देनेवाला और सुखका मूल है। उसे जो लोग आदरपूर्वक सुनते हैं उनपर श्रीरामचन्द्रजी अनुकूल रहते हैं।

सो०—कठिन काल मल कोसु ❀ धरमु न ग्यानु न जोगु जपु।
परिहरि सकल भरोस ❀ रामहिं भजहिं ते चतुर नर॥११॥

कठिन कलिकाल पापोंका भाण्डार है। इसमें न धर्म है, न ज्ञान है, न योग है, न जप है। चतुर मनुष्य वही हैं जो सब भरोसा छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको भजते हैं।

मुनि-पद-कमल नाइ करि सीसा ❀ चले बनहिं सुर-नर-मुनि ईसा॥
आगे रामु अनुज पुनि पाछे ❀ मुनि-बर-बेष बने अति आछे॥

देवता, मनुष्य और मुनियोंके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी अत्रि मुनिके चरणकमलोंको शिर नवाकर वनको चल दिये। आगे-आगे श्रीरामचन्द्रजी थे और फिर पीछे थे छोटे भाई लक्ष्मण। श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मण-जी दोनोंहीका भेष श्रेष्ठ मुनियोंके समान अत्यन्त अच्छा बना हुआ था।

उभय बीच सिय सोहइ कैसी ❀ ब्रह्म जीव बिच माया जैसी॥
सरिता बन गिरि अवघट घाटा ❀ पति पहिचानि देहिं बर बाटा॥

दोनोंके बीचमें सीताजी कैसे शोभा पा रही हैं जैसे ब्रह्म और जीवके बीचमें माया। नदियां, वन, पर्वत और ऊंचे-नीचे घाट—सब अपने स्वामीको पहचानकर उत्तम मार्ग दे देते थे।

जहं जहं जाहिं देव रघुराया ❀ करहिं मेघ तहं तहं नभ छाया॥
मिला असुर बिराध मग जाता ❀ आवतही रघुबीर निपाता॥

जहां-जहां रघुराज श्रीरामचन्द्रजी जाते थे वहां-वहां आकाशमें मेघ उनपर छाया करते थे। मार्गमें जाते हुए श्रीरामचन्द्रजीको विराध नामका राक्षस मिला, जिसे आते ही उन्होंने मार डाला।

तुरतहिं रुचिर रूप तेहि पावा ❀ देखि दुखी निज धामु पठावा॥
पुनि आये जहं मुनि सरभंगा ❀ सुंदर अनुज जानकी संगा॥

तुरन्त ही उसने सुन्दर रूप पाया। श्रीरामचन्द्रजीने उसे दुःखी देखकर अपने धाम, वैकुण्ठको भेज दिया। फिर वे सुन्दर छोटे भाई लक्ष्मणजी और जानकीजीके साथ वहां आये जहां शरभंग ऋषि थे।

दो०—देखि राम-मुख-पंकज ❀ मुनिवर लोचन भृंग।
सादर पान करत अति ❀ धन्य जनम सरभंग॥१२॥

शरभङ्ग मुनिका जन्म अत्यंत धन्य है! मुनिवर शरभङ्गके नेत्ररूपी भौंरे श्रीरामचन्द्रजीके मुखरूपी कमलको देखकर आदरके साथ रस-पान करने लगे।

कह मुनि सुनु रघुबीर कृपाला ❀ संकर-मानस-राज-मराला॥
जात रहेउं बिरंचि के धामा ❀ सुनेउं स्रवन बन अइहहिं रामा॥

मुनिने कहा कि हे शिवजीके हृदयरूपी मानसरोवरके राजहंस, हे कृपालु, श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। मैं ब्रह्मलोकको जा रहा था कि यह कानों सुना कि श्रीरामचन्द्रजी वनमें आवेंगे।

चितवत पंथ रहेउं दिन राती ❀ अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती॥
नाथ सकल साधन मैं हीना ❀ कीन्ही कृपा जानि जन दीना॥

उस समयसे लेकर दिन-रात मार्ग जोहता रहा। हे प्रभो, अब आपके दर्शन करके छाती शीतल हो गयी। हे नाथ, मैं सब साधनोंसे हीन हूं, परन्तु आपने दीन जन जानकर कृपा की है।

सो कछु देव न मोहि निहोरा ❀ निजपन राखेहु जन-मन-चोरा ॥
तब लगि रहहु दीनहित लागी ❀ जब लगि मिलउँ तुम्हहिं तनु त्यागी ॥

हे देव, उस कृपाका श्रेय कुछ मुझे नहीं है; हे भक्तोंके मनको चुरानेवाले, आपने अपने प्रणकी रक्षा की है। अब आप इस दीन जनके हितके लिये उस समयतक ठहरिये, जबतक मैं शरीर त्यागकर आपमें न मिल जाऊँ।

जोग जग्य जपु तपु व्रत कीन्हा ❀ प्रभु कहँ देइ भगतिबर लीन्हा ॥
एहि बिधि सर रचि मुनि सरभंगा ❀ बैठे हृदय छाँड़ि सब संगा ॥

शरभंग मुनिने जोग, यज्ञ, जप, तप और व्रत—जो कुछ किया था वह सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको अर्पण कर भक्तिका वरदान मांग लिया। इस प्रकार चिता रचकर शरभंग मुनि अपने हृदयसे सब विषयोंको त्यागकर बैठ गये।

दो०—सीता अनुज समेत प्रभु ❀ नील जलद तनु स्याम।
मम हिय बसहु निरंतर ❀ सगुनरूप श्रीराम ॥१३॥

मुनिने कहा—नील मेघके समान साँवले शरीरवाले सगुणरूप प्रभु श्रीरामचन्द्रजी, आप सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत मेरे हृदयमें सदैव निवास कीजिये।

अस कहि जोगअगिनि तनु जारा ❀ रामकृपा बैकुंठ सिधारा ॥
तातें मुनि हरिलीन न भयऊ ❀ प्रथमहिं भेद भगतिबर लयऊ ॥

ऐसा कहकर मुनिने योगाग्निमें शरीर जला दिया और श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे वे वैकुण्ठको सिधार गये। मुनिने पहिले ही भेद-मूलक भक्तिका वरदान ले लिया था, इसी कारण वे भगवान् विष्णु—श्रीरामचन्द्रजीमें लीन नहीं हुए।

रिषिनिकाय मुनिबर-गति देखी ❀ सुखी भये निज हृदय बिसेखी ॥
असतुति करहिं सकल मुनिबृंदा ❀ जयति प्रनतहित करुनाकंदा ॥

ऋषियोंके समूहने जब मुनिवरकी यह गति देखी तब वे अपने-अपने हृदयमें विशेष सुखी हुए। सब मुनियोंका समूह स्तुति करने लगा कि हे दीनोंके हितकारी, हे करुणाके मूल, आपकी जय हो।

पुनि रघुनाथ चले बन आगे ❀ मुनि-बर-बृन्द-बिपुल संग लागे ॥
अस्थिसमूह देखि रघुराया ❀ पूछी मुनिन्ह लागि अतिदाया ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजी वनमें आगे चले। बहुतसे श्रेष्ठ मुनियोंका समूह उनके संग हो लिया। एक स्थलपर हड्डियोंका ढेर देखकर श्रीरामचन्द्रजीको बड़ी दया हो आयी और उन्होंने उसके विषयमें मुनियोंसे पूछा।

जानतहूँ पूछिय कस स्वामी ❀ सबदरसी तुम्ह अंतरजामी ॥
निसिचर-निकर सकल मुनि खाये ❀ सुनि रघुबीर नयन जल छाये ॥

मुनियोंने कहा—हे स्वामिन्, आप सर्वदर्शी और अन्तर्यामी हैं। आप जानकर भी क्यों पूछते हैं? राक्षसोंके समूहने सभी मुनियोंको खा डाला है, उन्हींकी यह हड्डियां हैं। यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजीके नेत्रोंमें जल छा गया।

दो०—निसि-चर-हीन करउँ महि ❀ भुज उठाइ पन कीन्ह।
सकल मुनिन्हके आस्रमन्हि ❀ जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥१४॥

श्रीरामचन्द्रजीने अपनी भुजा उठाकर प्रतिज्ञा की कि मैं पृथिवीको राक्षस-शून्य करके रहूँगा। फिर श्रीरामचन्द्रजीने सब मुनियोंके आश्रममें जा-जाकर उन्हें सुख दिया।

मुनि अगस्त्य करि सिष्य सुजाना ❀ नाम सुतीछन रति भगवाना ॥
मन-क्रम-बचन राम-पद-सेवक ❀ सपनेहु आन भरोस न देवक ॥

अगस्त्य मुनिके सुजान शिष्यका नाम सुतीक्ष्ण था। भगवान्में उनका बड़ा प्रेम था। वे मन, वाणी और कर्मसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके सेवक थे। उन्हें अन्य देवताका भरोसा कभी स्वप्नमें भी न था।

प्रभुआगवनु स्रवन सुनि पावा ❀ करत मनोरथ आतुर धावा ॥
हे बिधि दीनबंधु रघुराया ❀ मो से सठपर करिहहिं दाया ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके आगमनकी बात उन्होंने ज्योंही कानों सुन पायी त्योंही मनोरथ करते हुए शीघ्रतासे उठ दौड़े। वे अपने मनमें कहने लगे—हे विधाता, दीनबन्धु श्रीरामचन्द्रजी क्या मुझ जैसे दुष्टपर दया करेंगे?

सहित अनुज मोहि रामु गोसाईं ❀ मिलिहहिं निज सेवक की नाईं ॥
मोरे जिय भरोस दृढ़ नाहीं ❀ भगति बिरति न ग्यानु मन माहीं ॥

छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत स्वामी श्रीरामचन्द्रजी अपने सेवककी भांति क्या मुझसे मिलेंगे? मेरे हृदयमें पक्का भरोसा नहीं है, क्योंकि मनमें न तो भक्ति है, न वैराग्य और न ज्ञान।

नहिं सतसंग जोग जप जागा ❀ नहिं दृढ़ चरनकमल अनुरागा ॥
एक बानि करुनानिधान की ❀ सो प्रिय जाके गति न आनकी ॥

न तो सत्संग ही किया है और न योग, जप और यज्ञ। चरणकमलोंमें प्रेम भी दृढ़ नहीं है। दयानिधानकी बान एक है और वह यह कि जिसे और किसीका सहारा न हो वह उन्हें प्यारा होता है।

होइहहिं सुफल आजु मम लोचन ❀ देखि बदनपंकज भवमोचन ॥
निर्भर प्रेम मगन मुनि ग्यानी ❀ कहि न जाइ सो दसा भवानी ॥

संसारको छुड़ा देनेवाले मुखकमलको देखकर आज मेरे नेत्र सफल होंगे। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, ज्ञानी मुनि आत्म-समर्पण कर प्रेममें मग्न हो गये। उनकी उस समयकी दशा कही नहीं जाती।

दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा ❀ को मैं चलेउ कहाँ नहिं बूझा ॥
कबहुँक फिरि पाछे पुनि जाई ❀ कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई ॥

उन्हें दिशाओं और विदिशाओंका ज्ञान नहीं रहा; मार्ग नहीं दिखलायी पड़ा; उन्हें यह भी ज्ञान नहीं रहा कि मैं कौन हूं और कहां जा रहा हूं। फिर कभी-कभी वे लौटकर पीछे जाने लगते तो कभी-कभी गुण गाकर नाचने लगते।

अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई ❀ प्रभु देखहिं तरुओट लुकाई ॥
अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा ❀ प्रगटे हृदय हरन भवभीरा ॥

मुनिका प्रेम और भक्ति—दोनों असाधारण थीं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी वृक्षकी आड़में छिपे हुए देख रहे थे। संसारकी व्यथा दूर कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी मुनिकी अत्यधिक प्रीति देखकर हृदयमें प्रकट हुए।

मुनि मग माझ अचल होइ बैसा ❀ पुलकसरीर पनसफल जैसा ॥
तब रघुनाथ निकट चलि आये ❀ देखि दसा निज जन मनु भाये ॥

मार्गके बीचमें मुनि अटल होकर बैठ गये। उनका शरीर पुलकायमान हो गया; जैसे कटहलका फल। तब श्रीरामचन्द्रजी स्वयं चलकर मुनिके पास आए और अपने भक्तकी दशा देखकर मनमें प्रसन्न हुए।

मुनिहिं रामु बहु भांति जगावा ❀ जाग न ध्यानजनित सुख पावा ॥
भूपरूप तब रामु दुरावा ❀ हृदय चतुर्भुजरूप देखावा ॥

मुनिको श्रीरामचन्द्रजीने बहुत तरहसे जगाया, पर वे जागे नहीं, क्योंकि उन्होंने ध्यानसे उत्पन्न सुखको पा लिया था। तब श्रीरामचन्द्रजीने अपना राज-स्वरूप छिपा लिया और मुनिके हृदयमें अपना चतुर्भुज स्वरूप दिखलाया।

मुनि अकुलाइ उठा तब कैसें ❀ बिकल हीनमनि फनिबर जैसें ॥
आगे देखि राम तनु स्यामा ❀ सीता-अनुज-सहित-सुखधामा ॥

फिर व्याकुल होकर मुनि कैसे उठे जैसे मणिहीन होकर श्रेष्ठ सर्प व्याकुल हो। सांवले शरीरवाले सुखधाम श्रीरामचन्द्रजीको सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत आगे देखकर

परेउ लकुट इव चरननि्ह लागी ❀ प्रेममगन मुनिबर बड़भागी ॥
भुजबिसाल गहि लिये उठाई ❀ परमप्रीति राखे उर लाई ॥

बड़भागी मुनिवर प्रेममें मग्न हो गये और चरणोंसे लिपटकर दण्डेकी भांति पड़ रहे। श्रीरामचन्द्रजीने अपनी विशाल भुजाओंसे पकड़कर उन्हें उठा लिया और बड़े प्रेमसे उन्हें अपने हृदयसे लगाये रखा।

मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला ❀ कनकतरुहि जनु भेंट तमाला ॥
रामबदनु बिलोक मुनि ठाढ़ा ❀ मानहुँ चित्र मांझ लिखि काढ़ा ॥

मुनिसे मिलते हुए कृपालु श्रीरामचन्द्रजी ऐसे शोभित हुए; मानों सोनेके पेड़से तमाल वृक्ष भेंट रहा हो। श्रीरामचन्द्रजीका मुख देखकर मुनि खड़े रह गये; मानों किसीने उन्हें चित्रमें खींचकर खड़ा कर दिया हो।

दो०—तब मुनि हृदय धीर धरि ❀ गहि पदु बारहिं बार।
निज आस्रम प्रभु आनि करि ❀ पूजा बिबिध प्रकार ॥१५॥

तब हृदयमें धीरज रखकर बार-बार चरण पकड़कर मुनिने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको अपने आश्रममें लाकर अनेक प्रकारसे उनकी पूजा की।

कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी ❀ अस्तुति करउँ कवनि बिधि तोरी ॥
महिमा अमित मोरि मति थोरी ❀ रबिसनमुख खद्योत अंजोरी ॥

मुनि कहने लगे कि हे प्रभो, मेरी विनती सुनिये। मैं आपकी स्तुति किस प्रकार करूँ? आपकी महिमा अपार है और मेरी बुद्धि है थोड़ी; जैसे सूर्यके सामने पटबीजनाका प्रकाश!

श्याम - तामरस - दाम - शरीरं ❀ जटा-मुकुट-परिधन - मुनि - चीरं ॥
पाणि - चाप - शर - कटि - तूणीरं ❀ नौमि निरंतर श्री - रघु - वीरं ॥

श्याम कमलकी मालाके समान शरीरवाले, जटाओंका मुकुट और मुनियोंके समान वस्त्र धारण किये हुए हाथमें धनुषबाण लिये हुए और कमरमें तरकस बांधे हुए रघुवंशके वीर श्रीरामचन्द्रजीको मैं निरन्तर नमस्कार करता हूं।

मोह-बिपिन - घन - दहन - कृशानुः ❀ संत - सरोरुह - कानन - भानुः ॥
निशिचर - करि बरूथ मृगराजः ❀ त्रातु सदा नो भव - खग-बाजः ॥

मोहरूपी घने वनको जलानेके लिये अग्नि, साधुजनरूपी कमल-वनके लिये सूर्य, राक्षसरूपी हाथियोंके झुण्डके लिये सिंह और संसाररूपी पक्षीके लिये बाजके समान श्रीरामचंद्रजी मेरी सदा रक्षा करें।

अरुण नयन राजीव सुवेशं ❀ सीता नयन चकोर निशेशं ॥
हर हृदि मानस बाल मरालं ❀ नौमि राम - उर - बाहु - विशालं ॥

मैं श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार करता हूं, जिनके लाल नेत्र कमलके समान हैं, जिनका सुन्दर भेष है, सीताजीके नेत्ररूपी चकोरके लिये चन्द्रमाके समान हैं, जो शिवजीके हृदयरूपी मानसरोवरके बालहंस हैं जिनका वक्षस्थल और बाहु—दोनों ही विशाल हैं।

संशय सर्प्प - ग्रसन-उरगादः ❀ शमन सु - कर्कश - तर्क - विषादः
भव - भंजन - रंजन - सुर - यूथः ❀ त्रातु सदा नो कृपावरूथः

कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी मेरी सदा रक्षा करें, जो संशयरूपी सर्पको भक्षण करनेके लिये गरुड़के हैं, जो अत्यन्त कठोर तर्कोंके दुःखको शान्त कर देनेवाले, सांसारिक व्यथाको नष्ट कर देनेवाले और दे समूहको आनन्द देनेवाले हैं।

निर्गुण सगुण विषम सम - रूपं ❀ ज्ञान - गिरा - गो - तीतमरूपं।
अमलमखिलमनवद्यमपारं ❀ नौमि राम भंजन - महि - भारं

पृथिवीके भारको नष्ट कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको मैं नमस्कार करता हूं, जिनका सगुण और नि तथा विषम और सम स्वरूप ज्ञान, सरस्वती और इन्द्रियोंकी पहुंचसे बाहर है, और जो रूपरहित, सम्पूर्ण दोषरहित और अपार हैं।

भक्त - कल्प - पादप - आरामः ❀ तर्जन क्रोध - लोभ - मद - कामः।
अति - नागर - भव - सागर - सेतुः ❀ त्रातु सदा दिन-कर-कुल - केतुः।

सूर्यवंशकी पताकास्वरूप श्रीरामचन्द्रजी मेरी सदा रक्षा करें, जो भक्तजनरूपी कल्पवृक्षके लिये व काम, क्रोध, मद, लोभको डाटनेवाले, अत्यन्त चतुर और संसार-समुद्रके पार होनेके लिये पुल हैं।

अतुलित-भुज - प्रताप-बल - धामा ❀ कलि-मल - विपुल-विभंजन -नामा।
धर्मवर्म नर्मद गुणग्रामः ❀ संतत संतनोतु मम रामः।

जिनकी भुजाओंका प्रताप अतुल है, जो बलके स्थान हैं, जिनका नाम कलियुगके पापोंके समूहको नष्ट देनेवाला है, जो धर्मके लिये कवचके समान है और जिनके गुणोंके समूह सुखदायक हैं, वही मेरा सदैव कल्याण करें।

यदपि बिरज व्यापकु अबिनासी ❀ सबके हृदय निरंतर बासी।
तदपि अनुज - श्री-सहित खरारी ❀ बसतु मनसि मम काननचारी।

यद्यपि आप विशुद्ध, व्यापक, अविनाशी और निरन्तर सबके हृदयमें वास करनेवाले हैं तथापि छोटे लक्ष्मण और सीताजी-समेत, हे खर नामक राक्षसके शत्रु, हे वन-वन भ्रमण करनेवाले, आप मेरे मनमें कीजिये।

जे जानहिं ते जानहु स्वामी ❀ सगुन अगुन उर-अंतर-जामी ॥
जो कोसलपति राजिवनयना ❀ करउ सो रामु हृदय मम अयना ॥

हे स्वामिन्, आपके सगुण, निर्गुण, और हृदयके अन्तर्यामी स्वरूपको जो जानते हैं वे जाना करें। मेरे हृदयको तो वही राम अपना घर बनावें जो कोशल देशके राजा हैं और जो कमलनेत्र हैं।

अस अभिमान जाय जनि भोरे ❀ मैं सेवक रघुपति पति मोरे ॥
सुनि मुनिबचनु राममनु भाये ❀ बहुरि हरषि मुनिबर उर लाये ॥

कभी भूलकर भी मेरा ऐसा अभिमान दूर न होवे कि मैं सेवक हूं और श्रीरामचन्द्रजी मेरे स्वामी हैं। मुनिके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीके मनको वे बहुत ही अच्छे लगे। फिर उन्होंने प्रसन्न होकर मुनिवरको हृदयसे लगा लिया।

परम प्रसन्न जानु मुनि मोही ❀ जो बर मांगहु देउं सो तोही ॥
मुनि कह मैं बरु कबहुं न जांचा ❀ समुझि न परइ झूठ का सांचा ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे मुनि, मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानो। तुम जो वर मांगो वही मैं तुम्हें दूं। मुनि कहने लगे कि मैंने वर कभी नहीं मांगा है, क्योंकि यह समझ नहीं पड़ता कि क्या झूठ है और क्या सत्य?

तुम्हहिं नीक लागइ रघुराई ❀ सो मोहि देहु दास-सुख-दाई ॥
अबिरल भगति बिरति बिग्याना ❀ होहु सकल-गुन-ग्यान-निधाना ॥
प्रभु जो दीन्ह सो बर मैं पावा ❀ अब सो देहु मोहि जो भावा ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, हे भक्तोंको सुख देनेवाले, आपको जो अच्छा लगे, वह मुझे दीजिये। श्रीरामचन्द्रजीने कहा—तुम अटल भक्ति, वैराग्य और ज्ञानविज्ञान और समस्त गुणों और ज्ञानके भाण्डार होओ। मुनि कहने लगे कि हे प्रभो, आपने जो वर दिया वह मैंने पाया; अब वह दीजिये जो मुझे अच्छा लगता है।

दो०—अनुज जानकी सहित प्रभु ❀ चाप बानधर रामु।
मम हियगगन इंदु इव ❀ बसहु सदा यह कामु ॥१६॥

हे प्रभो, श्रीरामचन्द्रजी, धनुषबाणधारी स्वरूपसे आप छोटे भाई लक्ष्मण और सीताजीसमेत मेरे हृदयरूपी आकाशमें चन्द्रमाके समान सदैव वास कीजिये, यही मेरी कामना है।

एवमस्तु करि रमानिवासा ❀ हरषि चले कुंभज रिषि पासा ॥
बहुत दिवस गुरुदरसनु पाये ❀ भये मोहि एहि आस्रमु आये ॥

लक्ष्मीनिवास श्रीरामचन्द्रजीने मुनिसे कहा कि ऐसा ही हो और वे फिर प्रसन्न होकर कुंभज ऋषिके पास चल दिये। सुतीक्ष्ण मुनिने कहा—गुरुके दर्शन किये हुए और इस आश्रममें आये हुए मुझे बहुत दिन व्यतीत हो गये हैं।

अब प्रभु संग जाउं गुरु पाहीं ❀ तुम्ह कहं नाथ निहोरा नाहीं ॥
देखि कृपानिधि मुनिचतुराई ❀ लिये संग बिहंसे दोउ भाई ॥

अब प्रभुके साथ मैं भी गुरुके पास चलता हूं। हे नाथ, आपपर कुछ एहसान नहीं कर रहा हूं। मुनिकी चतुराई देखकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें संग ले लिया और दोनों भाई हँस पड़े।

पंथ कहत निज भगति अनूपा ❀ मुनिआस्रम पहुंचे सुरभूपा ॥
तुरत सुतीच्छन गुरु पहिं गयेऊ ❀ करि दंडवत कहत अस भयेऊ ॥

मार्गमें अपनी अनुपम भक्तिका वर्णन करते हुए देवताओंके राजा श्रीरामचन्द्रजी कुम्भज ऋषिके आश्रममें पहुंचे। सुतीक्ष्णमुनि तुरन्त ही अपने गुरुके पास गये और दण्डवत् करके इस प्रकार कहने लगे—

नाथ कोसलाधीसकुमारा ❀ आये मिलन जगतआधारा ॥
राम अनुज समेत वैदेही ❀ निसि दिनु देव जपत हहु जेही ॥

हे नाथ, कोशलदेशके राजा दशरथके कुमार, संसारके आधार श्रीरामचन्द्रजी, जिन्हें हे देव, आप रात दिन जपा करते हैं, सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणसमेत यहां आपसे मिलने आये हैं।

सुनत अगस्ति तुरत उठि धाये ❀ हरि बिलोकि लोचन जल छाये ॥
मुनि-पद-कमल परे दोउ भाई ❀ रिषि अतिप्रीति लिये उर लाई ॥

सुनते ही अगस्त्यमुनि तुरन्त ही उठकर दौड़े। भगवान श्रीरामचन्द्रजीको देखकर उनके नेत्रोंमें जल छा गया। दोनों भाई श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी मुनिके चरणकमलोंमें पड़ रहे। ऋषिने बड़े प्रेमसे उन्हें हृदयसे लगा लिया।

सादर कुसल पूछि मुनि ग्यानी ❀ आसन पर बैठारे आनी ॥
पुनि करि बहु प्रकार प्रभुपूजा ❀ मोहि सम भागवंत नहिं दूजा ॥
जहं लगि रहे अपर मुनिबृंदा ❀ हरषे सबु बिलोकि सुखकंदा ॥

ज्ञानी मुनिने आदरपूर्वक कुशल-प्रश्न करके उन्हें लाकर आसनपर बिठलाया। फिर बहुत प्रकारसे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी पूजा करके वे कहने लगे कि मेरे समान भाग्यवान दूसरा नहीं है। अगस्त्य मुनिके आश्रममें जो और भी अन्यान्य ऋषियोंके समूह थे, वे सब सुखकंद श्रीरामचन्द्रजीको देखकर प्रसन्न हुए।

दो०—मुनिसमूह महं बैठे ❀ सनमुख सबकी ओर।
सरदइंदु तन चितवत ❀ मानहुं निकर चकोर ॥१७॥

मुनियोंके इस समूहमें सबकी ओर मुख करके श्रीरामचन्द्रजी बैठे। सब ऋषि उनके मुखकी ओर देखने लगे, मानों चकोरोंका समूह शरदऋतुके पूर्णचन्द्रमाकी ओर देख रहा हो।

तब रघुबीर कहा मुनि पाहीं ❀ तुम्ह सन प्रभु दुराउ कछु नाहीं ॥
तुम्ह जानहु जेहि कारन आयेउं ❀ ता तें तात न कहि समुझायेउं ॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने मुनिसे कहा कि हे प्रभो, आपसे कुछ छिपाव नहीं है। जिस कारण मैं आया हूं उसे आप जानते हैं। इसीलिये हे तात, कहकर नहीं समझाया।

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही ❀ जेहि प्रकार मारउं मुनिद्रोही ॥
मुनि मुसुकाने सुनि प्रभु बानी ❀ पूछेहु नाथ मोहि का जानी ॥

हे प्रभो, अब आप मुझे वह मंत्रणा दीजिये जिससे मैं मुनियोंके शत्रुओंको मार डालूं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी वाणी सुनकर मुनि मुस्कुराये और कहने लगे कि हे नाथ, क्या जानकर आपने मुझसे पूछा है?

तुम्हरेइ भजनप्रभाव अघारी ❀ जानउं महिमा कछुक तुम्हारी ॥
ऊमरितरु बिसाल तव माया ❀ फल ब्रह्मांड अनेक निकाया ॥

हे पापोंके नाश करनेवाले, आपके ही भजनके प्रभावसे मैं आपकी महिमाको थोड़ा जानता हूं। आपकी विशाल माया गूलरके वृक्षके समान है, अनेक ब्रह्माण्डोंके समुदाय ही जिसके फल हैं।

जीव चराचर जंतुसमाना ❀ भीतर बसहिं न जानहिं आना ॥
ते फलभच्छक कठिन कराला ❀ तव भय डरत सदा सोउ काला ॥

गूलरोंके भीतर बसनेवाले कीड़ोंके समान चराचर प्राणी हैं जो उनके भीतर बसते हैं और जो किसी दूसरेको नहीं जानते। उन फलोंको खानेवाला जो अत्यंत कठोर और भयंकर काल है, वह भी आपके डरसे सदा डरता है।

ते तुम्ह सकल लोकपति साईं ❀ पूछेहु मोहि मनुजकी नाईं ॥
यह बर मांगउं कृपानिकेता ❀ बसहु हृदय श्री-अनुज-समेता ॥

हे स्वामिन्, आप वही सब लोगोंके स्वामी हैं; फिर भी आपने मुझसे साधारण मनुष्यकी भांति पूछा है। हे कृपानिधान, मैं यह वर मांगता हूं कि आप सीताजी और लक्ष्मणजी-समेत मेरे हृदयमें निवास कीजिये।

अबिरल भगति बिरति सतसंगा ❀ चरनसरोरुह प्रीति अभंगा ॥
जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता ❀ अनुभवगम्य भजहिं जेहि संता ॥

मुझे गंभीर भक्ति, वैराग्य, सत्संग और अपने चरण-कमलोंमें अक्षुण्ण प्रेम दीजिये। ब्रह्म जिसे संतजन भजते हैं, यद्यपि अखण्ड है, अनंत है, अनुभवसे ही जाना जा सकता है।

अस तव रूप बखानउं जानउं ❀ फिरि फिरि सगुन ब्रह्मरति मानउं ॥
संतत दासन्ह देहु बड़ाई ❀ तातें मोहि पूछेहु रघुराई ॥

आपके ऐसे स्वरूपको मैं जानता हूं और इसीका वर्णन भी करता हूं, तथापि मैं घूम-फिरकर बारबार सगुण ब्रह्ममें ही प्रेम मानता हूं। हे श्रीरामचन्द्रजी, आप सदा ही भक्तोंको बड़ाई दिया करते हैं, इसीसे मुझसे वैसा पूछा है।

है प्रभु परम मनोहर ठाऊं ❀ पावन पंचबटी तेहि नाऊं ॥
दंडक बनु पुनीत प्रभु करहू ❀ उग्र सापु मुनिबर कर हरहू ॥

हे प्रभो, एक स्थान अत्यंत मनोहर है, जिसका नाम पवित्र पंचवटी है। हे प्रभो, दण्डकवनको आप पवित्र कीजिये और मुनिवरके तीव्र शापको दूर कीजिये।

बास करहु तहं रघु-कुल-राया ❀ कीजिय सकल मुनिन्ह पर दाया ॥
चले रामु मुनिआयसु पाई ❀ तुरतहिं पंचबटी निअराई ॥

हे रघुराज, आप वहां वास कीजिये और सब मुनियोंपर दया कीजिये। मुनिकी आज्ञा पाकर श्रीरामचन्द्रजी चल दिये और थोड़ी ही देरमें वे पंचवटीके समीप आये।

दो०—गीधराज सो भेंट भइ ❀ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु ❀ रहे परनगृह छाइ ॥१३॥

वहांपर गिद्धोंके राजा जटायुसे श्रीरामचन्द्रजीकी भेंट हुई। उसके साथ बहुत तरहसे प्रीतिको बढ़ाकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी गोदावरी-नदीके समीप पत्तोंकी कुटी छाकर रहने लगे।

जब तें राम कीन्ह तहं बासा ❀ सुखी भये मुनि बीती त्रासा ॥
गिरि बन नदी ताल छबि छाये ❀ दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाये ॥

जबसे श्रीरामचन्द्रजीने वहां निवास किया, सब मुनिजन सुखी हो गये, उनका सारा डर जाता रहा। पहाड़, वन, नदियां और तालाब—सबमें छवि छा गयी और वे दिन-प्रति-दिन अत्यन्त सुन्दर होने लगे।

खग-मृग-बृंद अनंदित रहहीं ❀ मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं ॥
सो बनु बरनि न सक अहिराजा ❀ जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा ॥

पक्षियों और हिरणोंके झुण्ड आनन्दित रहने लगे, मीठी गुञ्जार करते हुए भौंरे अत्यन्त शोभा पाने लगे। उस वनका वर्णन शेषनाग भी नहीं कर सकते; जहां प्रत्यक्ष श्रीरामचन्द्रजी विराजमान हैं।

एक बार प्रभु सुख आसीना ❀ लछिमन बचन कहे छलहीना ॥
सुर नर मुनि सचराचर साईं ❀ मैं पूछेउँ निज प्रभु की नाईं ॥

एक बार जब प्रभु श्रीरामचन्द्रजी सुखसे बैठे हुए थे, लक्ष्मणजी छलहीन वचन कहने लगे कि हे देवता, मनुष्य, मुनि और समस्त चर तथा अचर जगत्‌के स्वामी, अपने प्रभुकी भांति मैं आपसे पूछता हूं।

मोहि समुझाइ कहहु सोइ देवा ❀ सब तजि करउँ चरन-रज-सेवा ॥
कहहु ग्यान बिराग अरु माया ❀ कहहु सो भगति करहु जेहि दाया ॥

हे देव, आप मुझे समझाकर वही कहिए, जिसमें सब छोड़कर आपके चरणोंकी सेवा करूं। आप ज्ञान, वैराग्य और मायाका निरूपण कीजिये और उस भक्तिके विषयमें कहिये, जिससे आप दया करते हैं।

दो०—ईस्वर जीव भेद प्रभु ❀ सकल कहहु समुझाइ ।
जा तें होइ चरन रति ❀ सोक मोह भ्रम जाइ ॥१४॥

हे प्रभो, ईश्वर और जीवका सब भेद समझाकर कहिए, जिससे आपके चरणोंमें प्रेम होवे और शोक, मोह और भ्रम दूर हो जावे।

थोरेहि महँ सब कहउँ बुझाई ❀ सुनहु तात मति मन चित लाई ॥
मैं अरु मोर तोर तैं माया ❀ जेहि बस कीन्हे जीवनिकाया ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे तात! मन, बुद्धि और चित्त लगाकर सुनो; थोड़ेमें ही सब समझाकर कहता हूं। मैं और मेरा, तू और तेरा—यही माया है, जिसने सब जीवोंको वशमें कर रखा है।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई ❀ सो सब माया जानेहु भाई ॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ ❀ बिद्या अपर अबिद्या दोऊ ॥

जो वाणीसे कहा जा सकता है और जहांतक मन पहुंचता है, हे भाई, वह सब माया जानो। उसके जो भेद हैं, उन्हें भी सुनो। एक विद्या और दूसरी अविद्या—दो भेद हैं।

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा ❀ जा बस जीव परा भवकूपा ॥
एक रचइ जग गुनबस जा के ❀ प्रभु प्रेरित नहिं निजबल ता के ॥

इनमें एक अविद्या दुष्ट और दुःखरूपिणी है, जिसके वशमें होकर जीव संसाररूपी कुएंमें पड़ा हुआ है। दूसरी विद्या, जिसके वशमें गुण हैं, संसारको रचती है। यह सब कार्य प्रभुकी प्रेरणासे होता है; क्योंकि उसका अपना बल नहीं है।

ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं ❀ देख ब्रह्म समान सब माहीं ॥
कहिय तात सो परम बिरागी ❀ तिनसम सिद्धि तीनि गुन त्यागी ॥

ज्ञान वह है जहां तनिक भी अभिमान नहीं है और जो सबमें समान भावसे ब्रह्मको देखता है। हे तात, परम वैराग्यवान् उसे कहना चाहिये जिसने सब सिद्धियों और तीनों गुणोंको तिनकेके समान छोड़ दिया हो।

दो०—माया ईस न आपु कहुँ ❀ जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छप्रद सर्ब पर ❀ माया प्रेरक सीव ॥२०॥

जीव वह कहा जाता है जो माया, ईश्वर और स्वयं अपनेको नहीं जानता। ईश्वर सबको बन्धनमें डालनेवाला, मोक्ष देनेवाला, सबसे परे, मायाकी प्रेरणा करनेवाला और सबकी सीमा है।

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना ❀ ग्यान-मोच्छ-प्रद बेद बखाना ॥
जा तें बेगि द्रवउँ मैं भाई ❀ सो मम भगति भगत-सुखदाई ॥

धर्मसे वैराग्य होता है और योगसे ज्ञान। ज्ञान मोक्षको देनेवाला है, ऐसा वेद वर्णन करते हैं। हे भाई, जिससे मैं शीघ्र ही द्रवित हो जाता हूं, वह मेरी भक्ति है, जो भक्तोंको सुख देनेवाली है।

सो सुतंत्र अवलंब न आना ❀ तेहि आधीन ग्यान बिग्याना ॥
भगति तात अनुपम सुखमूला ❀ मिलइ जो संत होहिं अनुकूला ॥

यह भक्ति स्वतंत्र है। इसे दूसरा सहारा नहीं। ज्ञान और विज्ञान—सब उसीके अधीन हैं। हे तात, भक्ति अनुपम सुखका मूल है। यदि संतजन अनुकूल हों तो वह मिलती है।

भगति के साधनु कहउँ बखानी ❀ सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी ॥
प्रथमहिं बिप्रचरन अतिप्रीती ❀ निज निज करम निरत स्रुतिरीती ॥

उस भक्तिके साधन वर्णन कर मैं बतलाता हूं। यह एक सुगम मार्ग है जिससे प्राणी मुझे पा जाते हैं। सर्वप्रथम, ब्राह्मणोंके चरणोंमें अत्यन्त प्रेम हो और वेदकी रीतिके अनुसार अपने-अपने कर्ममें संलग्नता हो।

यहि कर फलु मनु बिषयबिरागा ❀ तब मम चरन उपज अनुरागा ॥
स्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं ❀ मम लीला रति अति मनमाहीं ॥

इसके फलसे जब मनमें विषयोंसे वैराग्य होता है तब मेरे चरणोंमें प्रेम उत्पन्न होता है, श्रवणादि नौ प्रकारकी भक्ति दृढ़ हो जाती है और मनमें मेरी लीलासे अत्यंत प्रेम हो जाता है।

संत-चरन-पंकज अति प्रेमा ❀ मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा ॥
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा ❀ सब मोहि कहँ जानइ दृढ़ सेवा ॥

संतजनोंके चरणकमलोंमें जिसे अत्यंत प्रेम हो; मन, वाणी और कर्मसे दृढ़ नियमपूर्वक जो भजन करता हो; जो गुरु, पिता, माता, भाई, पति और देवता—सब मुझे ही जानता हो और दृढ़तासे सेवा करता हो;

मम गुन गावत पुलक सरीरा ❀ गदगद गिरा नयन बह नीरा ॥
काम आदि मद दंभ न जाके ❀ तात निरंतर बस मैं ता के ॥

मेरे गुण गाते हुए जिसका शरीर पुलकायमान हो जाता हो, जिसकी वाणी गदगद हो जाती हो और जिसके नेत्रोंसे जल बहने लगता हो और जिसे काम आदि मद और दंभ न हो, हे तात, मैं निरंतर उसीके वशमें हूं।

दो०—बचन करम मन मोरि गति ❀ भजन करहिं निहकाम।
तिन्हके हृदय कमल महुं ❀ करउं सदा बिस्राम ॥२१॥

उनके हृदय-कमलमें मैं सदा विश्राम करता हूं, जिनकी मन, वाणी और कर्मसे मेरी ही गति है और जो निष्काम होकर भजन करते हैं।

भगतिजोग सुनि अति सुखु पावा ❀ लछिमनु प्रभुचरनन्हि सिरु नावा ॥
एहि बिधि गये कछुक दिन बीती ❀ कहत बिराग ग्यान गुन नीती ॥

लक्ष्मणजीने यह भक्तियोग सुनकर अत्यंत सुख पाया और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें शिर नवाया। इस प्रकार ज्ञान, वैराग्य, गुण और नीतिकी चर्चा करते हुए कुछ दिन बीत गये।

सूपनखा रावन के बहिनी ❀ दुष्टहृदय दारुनि जसि अहिनी ॥
पंचबटी सो गइ एक बारा ❀ देखि बिकल भइ जुगल कुमारा ॥

रावणकी बहिन शूर्पणखा थी। उसका हृदय बड़ा दुष्ट था और वह सर्पिणीके समान कठोर थी। वह एक बार पंचवटीमें गयी और दोनों कुमारों—श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको देखकर व्याकुल हो गयी।

भ्राता पिता पुत्र उरगारी ❀ पुरुष मनोहर निरखत नारी ॥
होइ बिकल सक मनहिं न रोकी ❀ जिमि रबिमनि द्रव रबिहिं बिलोकी ॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़! भाई, पिता और पुत्र, कोई भी हो, मनोहर पुरुषको देखते ही स्त्री व्याकुल हो जाती है और मनको रोक नहीं सकती—जैसे सूर्यमणि सूर्यको देखकर द्रवित हो जाती है।

रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई ❀ बोली बचन बहुत मुसुकाई ॥
तुम सम पुरुष न मो सम नारी ❀ यह संजोग बिधि रचा बिचारी ॥

सुन्दर रूप रखकर और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास जाकर शूर्पणखा बहुत मुस्कुराकर ये वचन बोली—तुम्हारे समान तो पुरुष नहीं है और न मेरे समान स्त्री है। विधाताने यह संयोग विचारकर रचा है।

मम अनुरूप पुरुष जग माहीं ❀ देखिउं खोजि लोक तिहुं नाहीं ॥
ता तें अब लगि रहेउं कुमारी ❀ मन माना कछु तुम्हहिं निहारी ॥

संसारमें अपने अनुरूप पुरुषको खोजकर देखा, परन्तु तीनों लोकमें वह नहीं है। इसीसे अबतक अविवाहित रही हूं, किन्तु तुम्हें देखकर कुछ मेरा मन मान गया है।

सीतहि चितइ कही प्रभु बाता ❀ अहइ कुमार मोर लघु भ्राता ॥
गइ लछिमन रिपुभगिनी जानी ❀ प्रभु बिलोकि बोले मृदुबानी ॥

सीताजीकी ओर देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने यह बात कही कि मेरा छोटा भाई अविवाहित है। फिर शूर्पणखा लक्ष्मणजीके पास गयी। उसे शत्रु की बहिन जानकर लक्ष्मणजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखकर मीठी वाणीसे बोले।

सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा ❀ पराधीन नहिं तोर सुपासा ॥
प्रभु समरथ कोसलपुर - राजा ❀ जो कछु करहिं उन्हहिं सब छाजा ॥

हे सुन्दरि, सुन। मैं उनका सेवक हूं, मैं पराधीन हूं। मेरे पास तुझे सुविधा न होगी। प्रभु समर्थ हैं। वे कोशलपुरके राजा हैं। वे जो कुछ करेंगे उन्हें सब अच्छा लगेगा।

सेवकु सुख चह मान भिखारी ❀ ब्यसनी धन सुभगति बिभिचारी ॥
लोभी जस चह चार गुनानी ❀ नभ दुहि दूध चहत ये प्रानी ॥

सेवक सुख चाहता हो और भिखारी सम्मान, व्यसनोंमें फँसा हुआ मनुष्य धन चाहता हो और व्यभिचारी सद्गति, लोभी यश चाहता हो और दूत अभिमानी हो—ये सब प्राणी आकाशसे दुहकर दूध लेना चाहते हैं।

पुनि फिरि रामु निकट सो आई ❀ प्रभु लछिमन पहिं बहुरि पठाई ॥
लछिमनु कहा तोहि सो बरई ❀ जो तिनु तोरि लाज परिहरई ॥

शूर्पणखा लौटकर फिर श्रीरामचन्द्रजीके पास आयी। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उसे फिर लक्ष्मणजीके पास भेज दिया। लक्ष्मणजीने उससे कहा कि तुझे वह वरण करेगा जो तिनका तोड़कर लज्जाको छोड़ देगा।

तब खिसिआनि राम पहिं गई ❀ रूप भयंकर प्रगटत भई ॥
सीतहि सभय देखि रघुराई ❀ कहा अनुज सन सैन बुझाई ॥

तब खिसियाकर वह श्रीरामचन्द्रजीके पास गयी और अपना भयंकर स्वरूप प्रकट किया। सीताजीको डरा हुआ देखकर श्रीरामचन्द्रजीने इशारेसे समझाकर लक्ष्मणजीसे कहा।

दो०—लछिमन अति लाघव सो ❀ नाक कान बिनु कीन्ह।
ता के कर रावन कहुं ❀ मनहु चुनौती दीन्ह ॥२२॥

लक्ष्मणजीने बड़ी शीघ्रतासे उसे नाक-कानसे शून्य कर दिया; मानो उसके हाथों रावणको चुनौती दी।

नाक कान बिनु भइ बिकरारा ❀ जनु स्रव सैल गेरु कै धारा॥
खरदूषन पहिं गइ बिलखाता ❀ धिग धिग तव बल पौरुष भ्राता॥

नाक-कान बिना उसका स्वरूप बड़ा विकराल हो गया; मानो पर्वतसे गेरुकी धारा बहती हो। विलाप करती हुई वह खरदूषणके पास गयी और कहने लगी कि हे भाई, तेरे बल और पौरुषको धिक्कार है, धिक्कार है।

तेहिं पूछा सब कहेसि बुझाई ❀ जातुधान सुनि सेन बनाई॥
धाये निसिचर निकर बरूथा ❀ जनु सपच्छ कज्जल - गिरि-जूथा॥

खर और दूषणने जब पूछा तब उसने सब समझाकर कहा; जिसे सुनकर उन्होंने राक्षसोंकी सेना तैयार की। झुण्डके झुण्ड राक्षस दौड़े; मानो पंखोंवाले काजलके पहाड़ोंके झुण्ड हों।

नानावाहन नानाकारा ❀ नानायुधधर घोर अपारा॥
सूपनखा आगे करि लीन्ही ❀ असुभ रूप स्रुति - नासा-हीनी॥

अनेक प्रकारके उनके वाहन हैं,अनेक प्रकारके उनके आकार हैं, अनेक प्रकारके असंख्य कठोर शस्त्रास्त्रोंको वे लिये हुए हैं। अशुभ स्वरूपवाली नाक-कान-विहीन शूर्पणखाको उन्होंने आगे कर लिया।

असगुन अमित होहिं भयकारी ❀ गनहिं न मृत्युबिबस सब झारी॥
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाहीं ❀ देखि बिकट भट अति हरषाहीं॥

भयसूचक असंख्य अपशकुन होने लगे; परन्तु मृत्युके वशमें होनेके कारण वे उनको कुछ समझते न थे। वे सब राक्षस गरजते थे, तर्जना करते थे, आकाशमें उड़ते थे और विकट योद्धाओंको देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते थे।

कोउ कह जियत धरहु दोउ भाई ❀ धरि मारहु तिय लेहु छड़ाई॥
धूरि पूरि नभमंडल रहा ❀ राम बोलाइ अनुज सन कहा॥

कोई कहता था कि दोनों भाइयोंको जीते-जी ही पकड़ लो, पकड़कर मार डालो और स्त्रीको छीन लो। आकाशमण्डल धूलसे भर गया। फिर श्रीरामचन्द्रजीने बुलाकर लक्ष्मणजीसे कहा—

लै जानकिहि जाहु गिरिकंदर ❀ आवा निसिचर-कटकु भयंकर॥
रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी ❀ चले सहित श्री सर-धनु-पानी॥
देखि राम रिपुदल चलि आवा ❀ बिहँसि कठिन कोदंड चढ़ावा॥

राक्षसोंकी भयंकर सेना आ गयी है, इसलिये जानकीको लेकर तुम पर्वतकी किसी गुफामें चले जाओ

सावधान रहना। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी बात सुनकर हाथमें धनुष-बाण लिये हुए लक्ष्मणजी सीताजीसमेत चल दिये। शत्रुकी सेना चढ़ आयी है, यह देख श्रीरामचन्द्रजीने मुसकुराकर कठोर धनुषको चढ़ाया।

छं०—कोदंड कठिन चढ़ाइ सिर जटजूट बांधत सोह क्यों।
मरकत सयल पर लरत दामिनि कोटि सों जुग भुजग ज्यों॥
कटि कसि निषंग बिसाल भुज गहि चाप बिसिख सुधारि कै।
चितवत मनहुं मृगराजु प्रभु गजराज-घटा निहारि कै॥

कठिन धनुष चढ़ाकर श्रीरामचन्द्रजी शिरपर जटाजूट बांधते हुए कैसे शोभित हुए, जैसे दो सर्प मरकत-मणिके पर्वतपर करोड़ों बिजलियोंसे लड़ रहे हों। कमरमें तरकस बांधकर, विशाल भुजाओंसे धनुषको पकड़कर और बाणोंको सुधारकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी देखने लगे; मानों गजराजोंका दल देखकर उनकी ओर सिंह देख रहा हो।

सो०—आइ गये बगमेल ❀ धरहु धरहु धावत सुभट।
जथा बिलोकि अकेल ❀ बालरबिहिं घेरत दनुज॥२३॥

जैसे बाल-सूर्यको अकेला देखकर दैत्य-समूह घेर लेता है, वैसे ही 'पकड़ो'-'पकड़ो' कहते दौड़ते हुए अच्छे-अच्छे राक्षस-योद्धा चारों ओरसे आ गये।

प्रभु बिलोकि सर सकहिं न डारी ❀ थकित भई रजनी-चर-धारी॥
सचिव बोलि बोले खरदूषन ❀ यह कोउ नृपबालकु नरभूषन॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर राक्षसोंकी सेना चकित हो गयी। वे बाण न चला सके। मंत्रीको बुलाकर खर-दूषणने कहा कि मनुष्योंमें भूषण-रूप यह कोई राजपुत्र है।

नाग असुर सुर नर मुनि जेते ❀ देखे जिते हते हम केते॥
हम भरि जनम सुनहु सब भाई ❀ देखी नहिं असि सुंदरताई॥

नाग, राक्षस, देवता, मनुष्य और मुनि जितने हैं, सबको देखा है और कितने हीको तो हमने जीता और मारा भी है। भाइयो, सब लोग सुनो। हमने अपने जन्मभरमें ऐसी सुन्दरता नहीं देखी।

जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा ❀ बध लायक नहिं पुरुष अनूपा॥
देहिं तुरत निज नारि दुराई ❀ जीअत भवन जाहिं दोउ भाई॥

यद्यपि इन्होंने बहिनको कुरूप कर दिया है, तथापि ये अनुपम पुरुष मार डालनेयोग्य नहीं हैं; इनसे कहो कि अपनी जिस स्त्रीको छिपा दिया है उसे तुरत दे दें और दोनों भाई जीते हुए अपने घर जायँ।

मोर कहा तुम्ह ताहि सुनावहु ❀ तासु बचन सुनि आतुर आवहु ॥
दूतन्ह कहा राम सन जाई ❀ सुनत राम बोले मुसुकाई ॥

मेरा कहना तुम उसे सुनाओ और उसका कहना सुनकर शीघ्रतापूर्वक लौट आओ। दूतोंने जाकर खर-दूषणका कथन श्रीरामचन्द्रजीसे कहा। श्रीरामचन्द्रजी उसे सुनते ही मुस्कुराकर बोले—

हम छत्री मृगया बन करहीं ❀ तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहीं ॥
रिपु बलवंत देखि नहिं डरहीं ❀ एक बार कालहु सन लरहीं ॥

हम क्षत्रिय हैं, वनमें शिकार खेलते हैं और तुम्हारे जैसे दुष्ट मृगोंको खोजते-फिरते हैं। बलवान शत्रुको देखकर हम डरते नहीं, एक बार तो कालसे भी लड़ जाते हैं।

जद्यपि मनुज दनुज-कुल-घालक ❀ मुनिपालक खलसालक बालक ॥
जौं न होइ बलु घर फिरि जाहू ❀ समरबिमुख मैं हतउँ न काहू ॥

यद्यपि मैं मनुष्य हूँ तथापि राक्षस-कुलका नाश, मुनियोंका पालन और दुष्टोंका संहार करनेवाला बालक हूँ। यदि बल न हो तो घर लौट जाओ; क्योंकि संग्रामसे विमुख होनेपर मैं किसीको भी नहीं मारता।

रन चढ़ि करिअ कपट चतुराई ❀ रिपु पर कृपा परम कदराई ॥
दूतन्ह जाइ तुरत सब कहेऊ ❀ सुनि खर-दूषन उर अति दहेऊ ॥

लड़ाईके लिये चढ़कर कपट और चतुरता करना तथा शत्रुपर दया दिखलाना भारी कायरपन है। दूतोंने जाकर तुरन्त ही सब हाल कहा। सुनकर खर-दूषणके हृदयमें बड़ी जलन हुई।

छं०—उर दहेउ कहेउ कि धरहु धाये बिकट भट रजनीचरा।
सर-चाप-तोमर-सक्ति-सूल-कृपान-परिघ-परसु-धरा ॥
प्रभु कीन्हि धनुषटंकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
भये बधिर ब्याकुल जातुधानु न ग्यानु तेहि अवसर रहा ॥

खर-दूषणका हृदय जल गया और उसने कहा कि पकड़ लो। यह आज्ञा पाते ही भयंकर योद्धा राक्षस दौड़े। वे धनुष, बाण, तोमर, शक्ति, शूल, तलवार, परिघ और फरसा लिये हुए थे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने पहिले धनुषका कठोर, घोर और भयानक टंकार किया, जिससे राक्षस बहरे और व्याकुल हो गये; उस समय उन्हें ज्ञान न रहा।

दो०—सावधान होइ धाये ❀ जानि सबल आराति।
लागे बरषन राम पर ❀ अस्त्र सस्त्र बहु भाँति ॥२४॥

फिर शत्रुको सबल जानकर वे सब सावधान होकर दौड़े और श्रीरामचन्द्रजीपर बहुत तरहके अस्त्र-शस्त्र बरसाने लगे।

तिन्ह के आयुध तिल सम ❀ करि काटे रघुबीरु।
तानि सरासनु स्रवन-लगि ❀ पुनि छाँड़े निज तीरु ॥२५॥

श्रीरामचन्द्रजीने उनके शस्त्रास्त्रोंको तिलके समान टुकड़े-टुकड़े करके काट डाला और फिर धनुषकी प्रत्यञ्चाको कानतक तानकर अपने बाणोंको छोड़ा।

तोमर छंद—तब चले बान कराल ❀ फुंकरत जनु बहु ब्याल।
कोपेउ समर श्रीराम ❀ चले बिसिख निसित निकाम ॥

तब श्रीरामचन्द्रजीके भयंकर बाण चले; मानों बहुतसे सर्प फुफकार रहे हों। युद्धमें श्रीरामचन्द्रजी क्रोधित हुए और उनके बहुतसे तेज बाण छूटे।

अवलोकि खरतर तीर ❀ मुरि चले निसिचर बीर ॥
भये क्रुद्ध तीनिउ भाइ ❀ जो भागि रन तें जाइ ॥

अत्यन्त तेज बाणोंको देखकर वीर राक्षस मुंह मोड़कर भाग चले। फिर खर, दूषण और त्रिशिरा—तीनों भाई क्रोधित हुए और कहने लगे कि जो रणसे भागकर जायगा—

तेहि बधब हम निज पानि ❀ फिरे मरन मन महुं ठानि ॥
आयुध अनेक प्रकार ❀ सनमुख तें करहिं प्रहार ॥

उसका वध हम अपने हाथोंसे करेंगे। यह सुनकर राक्षस मनमें अपने मरनेका निश्चय करके लौटे, और सामने होकर अनेक प्रकारके शस्त्रास्त्रोंका प्रहार करने लगे।

रिपु परम कोपे जानि ❀ प्रभु धनुष सर संधानि ॥
छांड़े बिपुल नाराच ❀ लगे कटन बिकट पिसाच ॥

शत्रुओंको अत्यन्त क्रोधित जानकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने धनुषपर बाण चढ़ाये और बहुतसे बाण छोड़े, जिनसे भयंकर पिशाच कटने लगे।

उर सीस भुज कर चरन ❀ जहं तहं लगे महि परन ॥
चिक्करत लागत बान ❀ धर परत कुधर समान ॥

छाती, मस्तक, भुजाएं, हाथ और पैर—जहां-तहां पृथिवीपर गिरने लगे। बाण लगते ही राक्षस चिक्कार मारते थे और पहाड़ोंके समान पृथिवीपर गिर पड़ते थे।

भट कटत तन सतखंड ❀ पुनि उठत करि पाखंड ॥
नभ उड़त बहु भुज मुंड ❀ बिनु मौलि धावत रुंड ॥
खग कंक काक सृगाल ❀ कटकटहिं कठिन कराल ॥

कट-कटकर योद्धाओंके शरीरके सौ-सौ टुकड़े हो जाते,परन्तु माया रचकर वे फिर उठ खड़े होते। आकाशमें बहुतसे शिर और भुजाएं उड़ने लगतीं और सिर विना धड़ दौड़ते फिरते। पक्षी, सफेद चील, कौए और सियार—सब कटकटाकर कठोर और भयंकर शब्द करते थे।

छं०—कटकटहिं जंबुक भूत प्रेत पिसाच खप्पर संचहीं।
बेताल बीर कराल ताल बजाइ जोगिन नंचहीं ॥
रघुबीर बान प्रचंड खंडहिं भटन्ह के उर भुज सिरा।
जहं तहं परहिं उठि लरहिं धरु धरु धरु करहिं भयकर गिरा ॥

सियार कटकटाते थे और भूत, प्रेत और पिशाच खप्पर सजाते थे। वीर वैताल भयावनी तालियां बजाते थे तथा जोगिनियां नाचती थीं। श्रीरामचन्द्रजीके प्रचण्ड वाण योद्धाओंके शिर, भुजाओं और छातियोंको काटते थे। योद्धा जहां-तहां गिर पड़ते थे, परन्तु उठकर फिर लड़ते थे और 'पकड़ो', 'पकड़ो' कहकर भयङ्कर शब्द करते थे।

अंतावरी गहि उड़त गीध पिसाच कर गहि धावहीं।
संग्राम-पुर-बासी मनहुं बहु बाल गुडी उड़ावहीं ॥
मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट कहंरत परे।
अवलोकि निज दल बिकट भट तिसिरादि खरदूषन फिरे ॥

योद्धाओंकी आंतें पकड़कर गीध उड़ते थे और पिशाच आंतोंको हाथमें पकड़ कर दौड़ते थे; मानों संग्राम-नगरके रहनेवाले बहुतसे बालक पतंगें उड़ा रहे हों। बहुतसे योद्धा मार डाले, बहुतोंको पछाड़ दिया,बहुत योद्धाओंकी छाती फाड़ डाली। बहुतसे योद्धा पड़े हुए कराहते थे। अपनी सेनाकी यह दशा देखकर खर, दूषण और त्रिशिरा आदि योद्धा व्याकुल होकर सामने हुए।

सर सक्ति तोमर परसु सूल कृपान एकहि बारहीं।
करि कोप श्री-रघु-बीर पर अगनित निसाचर डारहीं ॥
प्रभु निमिष महुं रिपुसर निवारि प्रचारि डारे सायका।
दस दस बिसिख उर मांझ मारे सकल निसिचर-नायका ॥

बाण, शक्ति, तोमर, फरसा, शूल और तलवार—सब शस्त्रास्त्रोंका प्रहार एक ही साथ असंख्य राक्षस क्रोधित होकर श्रीरामचन्द्रजीपर करते थे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने एक निमेषमें शत्रुके बाणोंका निवारण कर अपने बाणोंको छोड़ दिया और राक्षसोंके सभी नायकोंकी छातियोंमें दस-दस बाण मार दिये।

महि परत उठि भट भिरत मरत न करत माया अतिघनी॥
सुर डरत चौदह सहस प्रेत बिलोकि एक अवधधनी।
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक करेउ॥
देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मरेउ॥

राक्षस योद्धा पृथ्वीपर गिर पड़ते हैं और फिर उठकर लड़ने लगते हैं। वे बड़ी गहरी माया रचते हैं और मरते नहीं। उधर चौदह हजार प्रेतों और इधर अकेले श्रीरामचन्द्रजीको देखकर देवता डरते हैं। देवताओं और मुनियों—सबको डरा हुआ देखकर माया-पति प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने एक बड़ा कौतुक किया। वे सब एक दूसरेको श्रीरामचन्द्रजीके रूपमें देखने लगे और संग्राममें सारी शत्रुसेना परस्पर लड़ मरी।

दो०—राम राम कहि तनु तजहिं ❀ पावहिं पद निरबान।
करि उपाइ रिपु मारे ❀ छन महुँ कृपानिधान॥२६॥

राक्षस 'राम'-'राम' कहकर शरीर छोड़ते थे और मोक्षपद पाते थे। कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने उपाय करके एक क्षणमें सब शत्रुओंको मार डाला।

हरषित बरषहिं सुमन सुर ❀ बाजहिं गगन निसान।
अस्तुति करि करि सब चले ❀ सोभित बिबिध बिमान॥२७॥

प्रसन्न होकर देवता फूल बरसाने लगे और आकाशमें नगारे बजने लगे। फिर सब देवता श्रीरामचन्द्रजीकी स्तुति करके अनेक प्रकारके विमानोंमें शोभायमान होकर चल दिये।

जब रघुनाथ समर रिपु जीते ❀ सुर नर मुनि सबके भय बीते॥
तब लछिमनु सीतहिं लेइ आये ❀ प्रभु पद परत हरषि उर लाये॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब संग्राममें शत्रुओंको जीत लिया तब देवता, मनुष्य और मुनि—सबका भय जाता रहा। तब लक्ष्मणजी सीताजीको लेकर आ गये। चरणोंमें पड़ते ही उन्हें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर हृदयसे लगा लिया।

सीता चितव स्याम मृदु गाता ❀ परम प्रेम लोचन न अघाता॥
पंचवटी बसि श्रीरघुनायक ❀ करत चरित सुरमुनिसुखदायक॥

श्रीरामचन्द्रजीके सांवले कोमल शरीरको सीताजी बड़े प्रेमसे देखने लगीं। उनके नेत्र अघाते न थे। पंचवटीमें बसकर श्रीरामचन्द्रजी देवताओं और मुनियोंको सुख देनेवाला चरित करने लगे।

धुआं देखि खरदूषन केरा ❁ जाइ सुपनखा रावनु प्रेरा ॥
बोली वचन क्रोधु करि भारी ❁ देस कोस कै सुरति बिसारी ॥

खरदूषणका धुआं देखकर शूर्पणखाने जाकर रावणको उभाड़ा और अत्यन्त क्रोधित होकर ये वचन कहने लगी कि तूने देश और कोषकी याद ही भुला दी है।

करसि पान सोवसि दिनु राती ❁ सुधि नहिं तव सिरपर आराती ॥
राजु नीतिबिनु धन बिनुधर्मा ❁ हरिहि समर्पेबिनु सतकर्मा ॥

मदिरा पीता और रात-दिन सोता है। तेरे शिरपर शत्रु है और तुझे सुध ही नहीं! नीति बिना राज करना, धर्म बिना धन पाना, भगवान्‌को समर्पण किये बिना सत्कर्म करना और—

बिद्या बिनु बिबेक उपजाये ❁ स्रम फल पढ़े किये अरु पाये ॥
संगतें जती कुमंत्रते राजा ❁ मानते ग्यान पानतें लाजा ॥
प्रीति प्रनयबिनु मदतें गुनी ❁ नासहिं बेगि नीति असि सुनी ॥

विवेक उत्पन्न किये बिना विद्या पढ़ना—इन सबका फल केवल श्रम ही है। नीति ऐसी सुनी है कि संगसे यती, कुमन्त्रसे राजा, अभिमानसे ज्ञान, मदिरा पीनेसे लज्जा, नम्रता बिना प्रेम और मदसे गुणिजन शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

सो०—रिपु रुज पावक पाप ❁ प्रभु अहि गनिय न छोट करि।
अस कहिं बिबिधबिलाप ❁ करि लागी रोदन करन ॥२८॥

शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, स्वामी और सर्प—इनको छोटा नहीं गिनना चाहिये। ऐसा कहकर शूर्पणखा तरह-तरहसे विलाप करके रोने लगी।

दो०—सभा मांझ परि ब्याकुल ❁ बहु प्रकार कह रोइ।
तोहि जियत दसकंधर ❁ मोरि कि अस गति होइ ॥२९॥

बीच सभामें वह व्याकुल होकर गिर पड़ी और रोकर बहुत प्रकारसे कहने लगी कि हे रावण, तेरे जीते क्या मेरी ऐसी गति होनी चाहिये?

सुनत सभासद उठे अकुलाई ❁ समुझाई गहि बांह उठाई ॥
कह लंकेस कहसि निजु बाता ❁ केइ तव नासा कान निपाता ॥

सुनते ही सब सभासद् व्याकुल होकर उठे और उसे समझाया और बाँह पकड़कर उठाया। लंकापति रावण कहने लगा कि बात क्यों नहीं कहती ? तेरे नाक-कान किसने काट लिये ?

अवधनृपति दसरथ के जाये ❀ पुरुषसिंहि बनु खेलन आये ॥
समुझि परी मोहि उन्ह कै करनी ❀ रहित निसाचर करिहहिं धरनी ॥

शूर्पणखा कहने लगी—अयोध्याके राजा दशरथके पुत्र पुरुषोंमें सिंहके समान हैं। वे वनमें शिकार खेलने आए हैं। उनकी करतूत मुझे समझ पड़ी। वे पृथिवीको राक्षसशून्य कर देंगे।

जिन्ह कर भुजबल पाइ दसानन ❀ अभय भये बिचरत मुनि कानन ॥
देखत बालक सकलसमाना ❀ परमधार धन्वी गुन नाना ॥

हे रावण, जिनकी भुजाओंका बल पाकर मुनिजन निर्भय होकर वनमें विचरते हैं, वे देखनेमें बालक हैं, परन्तु हैं कालके समान अत्यन्त धीर, धनुर्धर और अनेक गुणोंवाले।

अतुलित-बल - प्रताप दोउ भ्राता ❀ खल - बध - रत सुरमुनिसुखदाता ॥
सोभाधाम राम अस नामा ❀ तिन्ह के संग नारि एक स्यामा ॥

दोनों भाइयोंका बल और प्रताप अतुल है। हे तात, वे दुष्टोंके मारनेमें लगे हैं और देवता तथा मुनियोंको सुख देनेवाले हैं। उनमें एक शोभाके स्थान हैं, जिनका ऐसा नाम है—राम। उनके संगमें एक श्यामा (षोड़शी) स्त्री भी है।

रूपरासि बिधि नारि संवारी ❀ रति सतकोटि तासु बलिहारी ॥
तासु अनुज काटे स्रुति नासा ❀ सुनि तव भगिनि करहिं परिहासा ॥

वह स्त्री रूपकी राशि है। उसे विधाताने स्वयं संवारा है। सौ करोड़ रति उसपर वार देने योग्य हैं। उसके छोटे भाईने मेरी नाक और कानोंको काट लिया और मुझे तेरी बहिन सुनकर वे हँसी करने लगे।

खरदूषनु सुनि लगे पुकारा ❀ छन महं सकल कटक उन्ह मारा ॥
खरदूषनु तिसिरा कर घाता ❀ सुनि दससीस जरे सब गाता ॥

मेरी पुकार सुनकर जब खर-दूषण गये, तब उन्होंने एक क्षणमें सारी सेना मार डाली। खर-दूषण और त्रिशिराका वध सुनकर रावणका सब शरीर जल उठा।

दो०—सूपनखहि समुझाइ करि ❀ बल बोलेसि बहु भांति।
गयेउ भवन अति सोचबस ❀ नींद परइ नहिं राति ॥३०॥

शूर्पणखाको समझाकर रावणने अपने बलका अनेक प्रकारसे वर्णन किया और फिर अपने घरमें गया। अत्यन्त शोचके वशमें होनेसे रातको उसे नींद न आई।

सुर नर असुर नाग खग माहीं ❀ मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं ॥
खरदूषन मोहि सम बलवंता ❀ तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता ॥

रावणने सोचा—देवता, मनुष्य, राक्षस, नाग और पक्षी—इनमें कोई मेरे नौकरोंकी बराबरीका भी नहीं है। खर-दूषण तो मेरे ही समान बलवान् थे। भगवान्‌के बिना उनको और कौन मार सकता है?

सुररंजन भंजन महिभारा ❀ जौं भगवंत लीन्ह अवतारा ॥
तौ मैं जाइ बयरु हठि करऊँ ❀ प्रभुसर प्रान तजें भव तरऊँ ॥

देवताओंको प्रसन्न करनेवाले और पृथिवीका भार हरण करनेवाले भगवान्‌ने यदि अवतार ले लिया है तो मैं हठपूर्वक जाकर उनसे वैर करूँगा और प्रभुके बाण लगनेसे प्राण छोड़कर संसारसे पार हो जाऊँगा।

होइहि भजनु न तामस देहा ❀ मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा ॥
जौं नररूप भूपसुत कोऊ ❀ हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ ॥

इस तमोगुणी शरीरसे भजन न होगा; इसलिये मन, वाणी और कर्मसे यही मंत्र दृढ़ है। यदि वे मनुष्य-रूपमें कोई राजपुत्र होंगे तो दोनोंको संग्राममें जीतकर उनकी स्त्री हर लूँगा।

चला अकेल जान चढ़ि तहवाँ ❀ बस मारीच सिंधु तट जहवाँ ॥
इहाँ राम जसि जुगुति बनाई ❀ सुनहु उमा सो कथा सुहाई ॥

यह सोचकर रावण अकेला ही विमानपर बैठकर वहाँके लिये चल दिया, जहाँ समुद्रके किनारे मारीच रहता था। महादेवजी कहते हैं, हे पार्वती! इधर श्रीरामचन्द्रजीने जैसी युक्ति बनायी, उसकी सुहावनी कथा सुनो।

दो०—लछिमनु गये बनहिं जब ❀ लेन मूल फल कंद।
जनकसुता सन बोले ❀ बिहँसि कृपा-सुख-बृंद ॥२१॥

लक्ष्मणजी जब वनमें कंद, मूल और फल लेने गये, तब दया और सुखके समूह श्रीरामचन्द्रजी सीताजीसे हँसकर बोले।

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला ❀ मैं कछु करबि ललित नरलीला ॥
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा ❀ जौं लगि करउँ निसाचर-नासा ॥

हे सुन्दर शीलवाली प्रिये, मेरा एक सुन्दर व्रत सुनो। मैं कुछ सुन्दर मनुष्य-लीला करूँगा। जबतक मैं राक्षसोंका नाश करूँ, तबतक तुम अग्निमें निवास करो।

जबहिं राम सबु कहा बखानी ❀ प्रभुपद धरि हियँ अनल समानी ॥
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता ❀ तैसइ सील रूप सुबिनीता ॥

जब श्रीरामचन्द्रजीने सब वर्णन कर कहा, तब सीताजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंको हृदयमें धारण कर अग्निमें प्रवेश कर गयीं। अपनी परिछाईंको सीताजीने वहीं रखा, जिसका शील और रूप वैसा ही था और जो सीताजीके ही समान अत्यन्त नम्र थी।

लछिमनहूं यह मरमु न जाना * जो कछु चरित रचा भगवाना ॥
दसमुखु गयउ जहां मारीचा * नाइ माथ स्वारथरत नीचा ॥

भगवान्‌ने जो कुछ चरित रचा उसका यह भेद लक्ष्मणजीने भी नहीं जाना। रावण वहीं गया जहां मारीच था। स्वार्थमें संलग्न रावणने मारीचको मस्तक नवाया।

नवनि नीच के अति दुखदाई * जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई ॥
भयदायक खल कै प्रिय बानी * जिमि अकाल के कुसुम भवानी ॥

शिवजी कहते हैं—हे भवानी, नीचकी नम्रता बड़ी दुःख देनेवाली है, जैसे अंकुश, धनुष, सर्प और बिल्ली। दुष्टकी प्यारी वाणी भयप्रद है, जैसे कुसमयके फूल।

दो०—करि पूजा मारीच तब * सादर पूछी बात ।
कवन हेतु मन व्यग्र अति * अकसर आयेहु तात ॥२२॥

तब मारीचने आदरके साथ रावणकी पूजा की और फिर यह बात पूछी कि हे तात, मन अत्यन्त व्यग्र क्यों है और अकेले ही क्यों आये हो?

दसमुख सकल कथा तेहि आगे * कही सहित अभिमान अभागें ॥
होहु कपटमृग तुम्ह छलकारी * जेहि बिधि हरि आनउं नृपनारी ॥

अभागे रावणने अभिमानके साथ मारीचके आगे सब कथा कह सुनायी और कहा कि तुम छल करनेवाले कपट-मृग हो जाओ, जिससे मैं राजपत्नीको हर लाऊं।

तेहि पुनि कहा सुनहु दससीसा * ते नररूप चराचरईसा ॥
तासों तात बयरु नहिं कीजै * मारे मरिय जिआये जीजै ॥

फिर मारीचने कहा कि हे रावण, ! सुनो, वे मनुष्य-रूपमें चर और अचर—सबके स्वामी हैं। हे तात उससे वैर नहीं करना चाहिये, जिसके मारनेसे मरना और जिलानेसे जीना होता हो!

मुनिमख राखन गयेउ कुमारा * बिनु फर सर रघुपति मोहि मारा ॥
सत जोजन आयेउं छन माहीं * तिन्ह सन बयरु किये भल नाहीं ॥

ये कुमार मुनिके यज्ञकी रक्षा करने भी गये थे। उस समय श्रीरामचन्द्रजीने मुझे बिना नोकका एक बाण मारा था, जिससे एक क्षणमें सौ योजन दूर आ गिरा। उनसे वैर करनेमें कल्याण नहीं है।

भइ मम कीट भृंगकी नाईं ❀ जहँ तहँ मैं देखउँ दोउ भाई ॥
जौं नर तात तदपि अति सूरा ❀ तिन्हहि बिरोधि न आइहि पूरा ॥

मेरी गति तो भंवरीद्वारा पकड़े हुए कीड़ेके समान हो गयी है कि जहां-तहां मैं दोनों भाइयोंको देखता हूं। यदि वे मनुष्य हों तोभी हे तात, वे अत्यन्त शूरवीर हैं। उनसे विरोध करनेसे पूरा न पड़ेगा।

दो०—जेहि ताड़का सुबाहु हति ❀ खंडेउ हरकोदंड।
खर दूषन तिसिरा बधेउ ❀ मनुज कि अस बरिबंड ॥२३॥

जिन्होंने ताड़का और सुबाहुको मारकर शिवजीके धनुषको तोड़ा और खर, दूषण और त्रिशिराको मार डाला—मनुष्य भी क्या ऐसे बलवान् होते हैं?

जाहु भवन कुलकुसल बिचारी ❀ सुनत जरा दीन्हेसि बहु गारी ॥
गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा ❀ कहु जग मोहि समान को जोधा ॥

अपने कुलकी भलाई सोचकर घर लौट जाओ। यह सुनते ही रावण जल उठा और मारीचको बहुतसी गालियां दीं और कहने लगा—रे मूर्ख! गुरुकी भांति मुझे ज्ञान सिखला रहा है! बतला, संसारमें मेरे समान योद्धा और कौन है?

तब मारीच हृदय अनुमाना ❀ नवहि बिरोधे नहिं कल्याना ॥
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी ❀ बैद बंदि कबि मानसगुनी ॥

तब मारीचने अपने मनमें अनुमान किया कि शस्त्रधारी, मर्म जाननेवाला, प्रभु, दुष्ट, धनी, वैद्य, बंदी, कवि और गुणी मनुष्य—इन नौसे विरोधमें कल्याण नहीं।

उभय भांति देखा निज मरना ❀ तब ताकेसि रघुनायक-सरना ॥
उतरु देत मोहि बधब अभागे ❀ कस न मरउँ रघुपति-सर लागे ॥

मारीचने जब दोनों ही दशाओंमें अपना मरना देखा तब श्रीरामचन्द्रजीकी ही ओर दृष्टि फैलायी। मारीचने सोचा—उत्तर देनेपर यह अभागा जब मुझे मार ही डालेगा तब क्यों न श्रीरामचन्द्रजीका बाण लगनेसे मरूं।

अस जिय जानि दसाननसंगा ❀ चला राम-पद-प्रेम अभंगा ॥
मन अति हरष जनाव न तेही ❀ आजु देखिहउँ परमसनेही ॥

ऐसा हृदयमें जानकर मारीच रावणके साथ चल दिया। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें उसका अखण्ड प्रेम था। उसके मनमें बड़ी प्रसन्नता थी कि आज मैं अपने अत्यन्त स्नेही श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करूंगा। मारीचने अपनी इस प्रसन्नताको रावणपर प्रकट नहीं होने दिया।

স্বর্ণ-মৃগ। সোনার হরিণ।

छं०—निज परम प्रीतमु देखि लोचन सुफल करि सुखु पाइहउँ।
श्रीसहित अनुजसमेत कृपा-निकेत-पद मन लाइहउँ॥
निर्बानदायक क्रोध जाकर भगति अबसहिं बस करी।
निज पानि सर संधानि सो मोहि बधिहि सुखसागर हरी॥

अपने परम प्यारे श्रीरामचन्द्रजीके दर्शनकर अपने नेत्रोंको सुफल करके सुख पाऊंगा और श्रीसीताजी और लक्ष्मणजीसमेत कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लगाऊंगा। जिनका क्रोध भी मोक्षका देनेवाला है, जो किसीके वशमें नहीं हैं, परन्तु जिनकी भक्ति जिन्हें वशमें कर लेती है, वही सुखके समुद्र भगवान् अपने हाथसे बाण चढ़ाकर मुझे मारेंगे।

दो०—मम पाछे धर धावत ❀ धरे सरासन बान॥
फिरि फिरि प्रभुहिं बिलोकिहउँ ❀ धन्य न मो सम आन॥२४॥

पकड़नेके लिए अपने पीछे धनुषबाण लिये दौड़ते हुए प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको मुड़-मुड़कर मैं देखूंगा। मेरे समान धन्य दूसरा नहीं है।

तेहिं बन निकट दसानन गयेऊ ❀ तब मारीच कपटमृग भयऊ॥
अति बिचित्र कछु बरनि न जाई ❀ कनकदेह मनि रचित बनाई॥

फिर रावण उस वनके पास गया। तब मारीच कपट—मृग बन गया। उसने मणियोंसे जड़ी हुई अपनी सोनेकी देह अत्यन्त विचित्र बना ली, जिसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता।

सीता परमरुचिर मृगु देखा ❀ अंग अंग सुमनोहर बेखा॥
सुनहु देव रघुबीर कृपाला ❀ एहि मृग कर अतिसुंदर छाला॥

सीताजीने इस अत्यन्त सुन्दर हिरणको देखा, जिसके प्रत्येक अंगका वेश बड़ा मनोहर था। फिर सीताजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहा—हे देव, हे कृपालु रघुवीर, सुनिये। इस हिरणकी मृगछाला अत्यन्त सुन्दर होगी।

सत्यसंध प्रभु बध कर एही ❀ आनहु चर्म कहति बैदेही॥
तब रघुपति जानत सब कारन ❀ उठे हरषि सुरकाज संवारन॥

सीताजीने कहा—हे सत्यसंध, हे स्वामिन्, इसे मारकर मृगचर्म ले आइये। तब श्रीरामचन्द्रजी, जो सब कारणोंको जानते थे, देवताओंका कार्य संभालनेके लिए प्रसन्न होकर उठे।

मृग बिलोकि कटि परिकर बांधा ❀ करतल चाप रुचिर सर सांधा॥
प्रभु मछिमनहिं कहा समुझाई ❀ फिरत बिपिन निसिचर बहु भाई॥

श्रीरामचन्द्रजीने हिरणको देखकर कमरसे फेंटा बांधा और हाथमें धनुष लेकर उसपर सुन्दर बाण चढ़ाया। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीसे समझाकर कहा कि हे भाई, वनमें बहुतसे राक्षस फिरते हैं।

सीता केरि करेहु रखवारी ❀ बुधि बिबेकु बलु समय बिचारी ॥
प्रभुहि बिलोकि चला मृग भाजी ❀ धाये रामु सरासनु साजी ॥

बुद्धि, विवेक, बल और समयको विचारकर सीताजीकी रखवाली करना। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर हिरण भाग चला और श्रीरामचन्द्रजी उसके पीछे धनुष सजाकर दौड़े।

निगम नेति सिव ध्यान न पावा ❀ मायामृग पाछे सो धावा ॥
कबहुँ निकट पुनि दूरि पराई ❀ कबहुँक प्रगटइ कबहुँ छपाई ॥

जिसे निगम 'नेति' कहते हैं और शिवजी जिसे ध्यानमें भी नहीं पाते, वही मायाके हिरणके पीछे दौड़ रहे हैं। मायाका वह हिरण कभी समीप आता है और फिर कभी दूर भाग जाता है, कभी दिखलायी दे जाता है और कभी छिप जाता है।

प्रगटत दुरत करत छलु भूरी ❀ एहि बिधि प्रभुहि गयेउ लेइ दूरी ॥
तब तकि राम कठिन सर मारा ❀ धरनि परेउ करि घोर पुकारा ॥

इस प्रकार दिखलायी देते, छिपते और बहुतसा छल करते हुए वह कपटमृग प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको बहुत दूर ले गया। तब श्रीरामचन्द्रजीने ताककर एक कठोर वाण मारा, जिससे वह भयंकर शब्द करके पृथ्वीपर गिर पड़ा।

लछिमन कै प्रथमहि लै नामा ❀ पाछे सुमिरेसि मन महुँ रामा ॥
प्रान तजत प्रगटेसि निजु देहा ❀ सुमिरेसि रामु समेत सनेहा ॥
अंतर प्रेमु तासु पहिचाना ❀ मुनि-दुलभ-गति दीन्हि सुजाना ॥

पहिले उसने लक्ष्मणजीका नाम लिया और पीछे मनमें श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण किया। प्राण त्यागते समय उसने अपने शरीरको प्रकट किया और बड़े प्रेमके साथ श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण किया। सुजान श्रीरामचन्द्रजीने उसके भीतरी प्रेमको पहिचान लिया और उसे वह गति दी, जो मुनियोंको भी दुर्लभ है।

दो०—बिपुल सुमन सुर बरषहिं ❀ गावहिं प्रभु - गुन - गाथ।
निज पद दीन्ह असुर कहुँ ❀ दीनबंधु रघुनाथ ॥२७॥

दीनबन्धु श्रीरामचन्द्रजीने जब उस राक्षसको अपना पद दे दिया तब देवता बहुतसे फूल बरसाने लगे और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथाएं गाने लगे।

खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा ❁ सोह चाप कर कटि तूणीरा ॥
आरत गिरा सुनी जब सीता ❁ कह लछिमन सन परम सभीता ॥

दुष्ट मारीचको मारकर श्रीरामचन्द्रजी तुरंत लौटे। उनके हाथमें धनुष और कमरमें तरकस शोभायमान था। सीताजीने जब दुःखभरी मारीचकी पुकार सुनी तब अत्यन्त भयभीत होकर वे लक्ष्मणजीसे कहने लगीं—

जाहु बेगि संकट अति भ्राता ❁ लछिमन बिहँसि कहा सुनु माता ॥
भृकुटिबिलास सृष्टि लय होई ❁ सपनेहुँ संकट परइ कि सोई ॥

हे लक्ष्मण, तुम जल्दी जाओ। तुम्हारे भाई बड़े संकटमें हैं। लक्ष्मणजीने हंसकर कहा कि हे माता, सुनिये। जिनके भौंह फेरनेसे सृष्टिका संहार हो जाता है वह क्या स्वप्नमें भी संकटमें पड़ सकते है?

मरम बचन जब सीता बोला ❁ हरिप्रेरित लछिमन मनु डोला ॥
बन दिसि देव सौंपि सब काहू ❁ चले जहाँ रावन ससि राहू ॥

फिर सीताजी जब कठोर वचन बोलीं तब भगवान्‌की प्रेरणासे लक्ष्मणजीका मन भी चलायमान हो गया। वन और दिशाओंके देवताओं— सब किसीको सौंपकर वे वहांके लिये चल दिये जहां चन्द्रमारूपी रावणका ग्रास करनेके लिये राहु श्रीरामचन्द्रजी थे।

सून बीच दसकंधर देखा ❁ आवा निकट जती के भेखा ॥
जा के डर सुर असुर डेराहीं ❁ निसि न नींद दिन अन्न न खाहीं ॥

इस बीचमें सूना देखकर यतीके भेषमें रावण पास आया। जिसके डरसे देवता और राक्षस डरते हैं, उन्हें रातमें नींद नहीं आती और वे दिनमें अन्न नहीं खाते—

सो दससीस स्वान की नाईं ❁ इत उत चितइ चला भड़िहाईं ॥
इमि कुपंथ पग देत खगेसा ❁ रह न तेज तन बुधि लवलेसा ॥

वही रावण कुत्तेकी भांति इधर-उधर देख चौकन्ना होकर चल दिया! कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, इस प्रकार कुमार्गमें पैर रखते ही शरीरमें तेज और बुद्धिका लवलेश भी नहीं रहता।

नाना बिधि करि कथा सुहाई ❁ राजनीति भय प्रीति देखाई ॥
कह सीता सुनु जती गोसाईं ❁ बोलेहु बचन दुष्ट की नाईं ॥

अनेक प्रकारकी सुन्दर कथाएं कहकर रावणने सीताजीको राजनीतिका भय और प्रेम दिखलाया। सीताजीने कहा कि हे यति! हे गुसाईं! सुनो, दुष्टकी भांति तुमने वचन कहे हैं।

तब रावन निज रूप देखावा ❀ भई सभय जब नामु सुनावा ॥
कह सीता धरि धीरजु गाढ़ा ❀ आइ गयेउ प्रभु रहु खल ठाढ़ा ॥

तब रावणने अपना स्वरूप दिखलाया और जब उसने अपना नाम सुनाया तब सीताजी भयभीत हो गयीं। सीताजीने प्रगाढ़ धीरज रखकर कहा—रे दुष्ट, खड़ा रह। प्रभु आ गये।

जिमि हरिबधुहि छुद्र सस चाहा ❀ भयेसि कालबस निसिचर नाहा ॥
सुनत बचन दससीस लजाना ❀ मन महुँ चरन बंदि सुख माना ॥

ऐ राक्षसोंके स्वामी, तू कालके वशमें हो गया है और मुझे चाहता है जैसे सिंहकी स्त्रीको क्षुद्र खरगोश चाहता हो। सीताजीके वचन सुनकर रावण लज्जित हुआ और मनमें चरणोंकी वंदना करके सुख माना।

दो०—क्रोधवंत तब रावन ❀ लीन्हेसि रथ बैठाइ।
चला गगनपथ आतुर ❀ भय रथ हांकि न जाइ ॥२६॥

क्रोधमें भरकर तब रावणने सीताजीको रथमें बैठा लिया और आकाशमार्गसे शीघ्रतापूर्वक चल दिया। डरके कारण उससे रथ हाँका न जाता था।

हा जगदेकबीर रघुराया ❀ केहि अपराधु बिसारेहु दाया ॥
आरतिहरन सरन-सुख-दायक ❀ हा रघु-कुल-सरोज-दिन-नायक ॥

सीताजी विलाप करने लगीं—हा संसारमें एक ही वीर, हा रघुराज, हा दुःख हरण करनेवाले और शरणागतको सुख देनेवाले, हा रघुवंशरूपी कमलके सूर्य, आपने किस अपराधके कारण दया भुला दी!

हा लछिमनु तुम्हार नहिं दोसा ❀ सो फलु पायउँ कीन्हेउँ रोसा ॥
बिबिध बिलाप करति बैदेही ❀ भूरिकृपा प्रभु दूरि सनेही ॥

हा लक्ष्मण! तुम्हारा दोष नहीं है। मैंने क्रोध किया, उसका फल पाया। सीताजी अनेक प्रकारसे विलाप कर रही हैं कि स्वामीकी कृपा तो बहुत है, परन्तु वे स्नेही दूर हैं।

बिपति मोरि को प्रभुहिं सुनावा ❀ पुरोडास चह रासभु खावा ॥
सीता कै बिलाप सुनि भारी ❀ भये चराचर जीव दुखारी ॥

प्रभुको मेरी विपत्ति कौन सुनायगा? यज्ञके भागको गधा खाना चाहता है! सीताजीका भारी विलाप सुनकर चर-अचर—सब जीव दुःखी हो गये।

गीधराज सुनि आरत बानी ❀ रघु-कुल-तिलक-नारि पहिचानी ॥
अधम निसाचर लीन्हे जाई ❀ जिमि मलेछबस कपिला गाई ॥

दुःखभरी वाणी सुनकर गीधराज जटायुने पहिचान लिया कि वे रघुवंशके भूषण श्रीरामचन्द्रजीकी पत्नी हैं और नीच राक्षस इन्हें लिये जा रहा है, जैसे म्लेच्छके वशमें कपिला गाय हो।

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा ॥ करिहउँ जातुधान कै नासा ॥
धावा क्रोधवंत खगु कैसे ॥ छूटइ पबि परबत कहुँ जैसे ॥

जटायुने कहा—हे सीते, हे पुत्रि, अब मत डरो। मैं राक्षसका नाश करूँगा। यह कहकर वह पक्षी क्रोधमें भरकर कैसे झपटा जैसे वज्र पहाड़पर गिरता हो।

रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही ॥ निर्भय चलेसि न जानेहि मोही ॥
आवत देखि कृतांतसमाना ॥ फिरि दसकंधर कर अनुमाना ॥

जटायुने ललकारकर कहा—अरे दुष्ट! अरे दुष्ट! खड़ा क्यों नहीं होता? निर्भय चला जा रहा है, मुझे नहीं जानता? कालके समान जटायुको आता हुआ देखकर रावणने पीछे लौटकर अनुमान किया?

की मैनाक कि खगपति होई ॥ मम बल जान सहित पति सोई ॥
जाना जरठ जटायू एहा ॥ मम करतीरथ छाड़िहि देहा ॥

यह या तो मैनाक है या पक्षिराज गरुड़। अपने स्वामी विष्णुसमेत वह भी तो मेरे बलको जानता है। मैंने जान लिया! यह बूढ़ा जटायु है। मेरे हाथरूपी तीर्थमें यह शरीर-त्याग करेगा।

सुनत गीध क्रोधातुर धावा ॥ कह सुनु रावन मोर सिखावा ॥
तजि जानकिहि कुसल गृह जाहू ॥ नाहिं त अस होइहि बहुबाहू ॥

सुनते ही गीधराज जटायु क्रोधमें भरकर बड़े वेगसे झपटा और कहने लगा कि अरे रावण, मेरी सीख सुन। सीताजीको छोड़कर कुशलसे अपने घर जा, नहीं तो ऐ बहुत भुजाओंवाले रावण, ऐसा होगा—

राम - रोष - पावक अतिघोरा ॥ होइहि सलभ सकलकुल तोरा ॥
उतरु न देत दसानन जोधा ॥ तबहिं गीध धावा करि क्रोधा ॥

श्रीरामचन्द्रजीके क्रोधकी अत्यन्त घोर अग्निमें तेरा सारा वंश पतंगकी भांति भस्म हो जायगा। योद्धा रावणने जब इसका उत्तर नहीं दिया तब गीध क्रोध करके दौड़ा।

धरि कच बिरथु कीन्ह महि गिरा ॥ सीतहिं राखि गीध पुनि फिरा ॥
चोंचन मारि बिदारेसि देही ॥ दंड एक भइ मुरुछा तेही ॥

जटायुने बाल पकड़कर रावणको रथसे अलग घसीटा, जिससे वह पृथिवीपर गिर पड़ा। फिर सीताजीको एक ओर रखकर गीध जटायु लौटा और चोंचसे मार-मारकर सारी देह विदीर्ण कर दी, जिससे उसे एक घड़ी भरके लिये मूर्च्छा आ गयी।

तब सक्रोध निसिचर खिसियाना ❀ काढ़ेसि परम कराल कृपाना ॥
काटेसि पंख परा खग धरनी ❀ सुमिरि रामु करि अद्भुतकरनी ॥

तब रावण खिसिया गया और क्रोधमें भरकर उसने अत्यन्त भयंकर कृपाण खींच ली और जटायुके पंख काट लिये, जिससे वह पक्षी श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर और अद्भुत पराक्रम दिखलाकर पृथिवीपर गिर पड़ा।

सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी ❀ चला उताइल त्रास न थोरी ॥
करति बिलाप जाति नभ सीता ❀ ब्याधिबिबस जनु मृगी सभीता ॥

फिर सीताजीको रथपर चढ़ाकर रावण उतावलीमें भरा हुआ चल दिया। उसे कम भय न था। विलाप करती हुई सीताजी आकाश-मार्गसे जा रही थीं; मानों कोई डरी हुई हिरणी व्याधके वशमें पड़ गयी हो।

गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी ❀ कहि हरिनामु दीन्ह पट डारी ॥
एहि बिधि सीतहि सो लेइ गयऊ ❀ बन असोक महुँ राखत भयऊ ॥

एक पर्वतपर बैठे हुए बन्दरोंको देखकर सीताजीने भगवान्‌का नाम कहकर अपना वस्त्र गिरा दिया। इस प्रकार वह रावण सीताजीको ले गया और अशोक-वनमें ले जाकर रखा।

दो०—हारि परा खल बहुबिधि ❀ भय अरु प्रीति देखाइ।
तब असोकपादप तर ❀ राखेसि जतनु कराइ ॥२७॥

दुष्ट रावण जब बहुत तरहसे भय और प्रीति दिखलाकर हार गया तब यत्न करवाकर उसने अशोकके वृक्षके नीचे सीताजीको रख दिया।

जेहि बिधि कपटकुरंग संग ❀ धाइ चले श्रीरामु।
सो छबि सीता राखि उर ❀ रटति रहति हरिनामु ॥२८॥

जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी कपट-मृगके संग दौड़कर चल दिये थे, उसी छबिको अपने हृदयमें रखकर सीताजी भगवान्‌का नाम रटती हुई रहने लगीं।

रघुपति अनुजहि आवत देखी ❀ बाहिज चिंता कीन्हि बिसेखी ॥
जनकसुता परिहरेहु अकेली ❀ आयहु तात बचन मम पेली ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब छोटे भाई लक्ष्मणजीको आते हुए देखा तब वे बाहरसे विशेष चिन्ता करने लगे। उन्होंने कहा—हे तात, सीताजीको अकेला छोड़ दिया और मेरे वचनोंको टालकर चले आए!

निसिचर निकर फिरहिं बन माहीं ❀ मम मन सीता आस्रमु नाहीं ॥
गहि पदकमल अनुज कर जोरी ❀ कहेउ नाथ कछु मोहि न खोरी ॥

जटायु वध।

জটায়ু-বধ।

राक्षसोंके भुण्ड वनमें फिर रहे हैं। मेरे मनमें आता है कि सीता आश्रममें नहीं है। कमलके समान चरणोंको पकड़कर और हाथ जोड़कर छोटे भाई लक्ष्मणने कहा—कि हे नाथ, मेरा कुछ दोष नहीं है।

अनुजसमेत गये प्रभु तहवाँ ❀ गोदावरितट आस्रमु जहवाँ ॥
आस्रमु देखि जानकीहीना ❀ भये बिकल जस प्राकृत दीना ॥

छोटे भाईसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी वहां गये जहां गोदावरी-नदीके किनारे आश्रम था। सीताजीसे रहित सूने आश्रमको देखकर श्रीरामचन्द्रजी व्याकुल और दीन हो गये; जैसे कोई साधारण मनुष्य हो।

हा गुनखानि जानकी सीता ❀ रूप-सील-ब्रतु-नेमु-पुनीता ॥
लछिमनु समुझाये बहु भांती ❀ पूछत चले लता तरु पांती ॥

श्रीरामचन्द्रजी विलाप करके कहने लगे—हा गुणोंकी खान जानकी! हा रूप, शील, व्रत, और नियमोंमें पवित्र सीते! लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीको जब बहुत तरहसे समझाया तब बेलों और वृक्षोंकी पंक्तियोंसे पूछते हुए वे चल दिये

हे खग मृग हे मधुकरस्रेनी ❀ तुम्ह देखी सीता मृगनैनी ॥
खंजन सुक कपोत मृग मीना ❀ मधुपनिकर कोकिला प्रबीना ॥

हे पक्षियो, हे मृगो, हे भौंरोंकी श्रेणियो, क्या तुमने मृगनयनी सीताजीको देखा है? खंजन, तोते कबूतर, मृग, मीन, भौंरोंके झुण्ड और चतुर कोयल,

कुंद कली दाड़िम दामिनी ❀ कमल सरद ससि अहिभामिनी ॥
बरुनपास मनोजधनु हंसा ❀ गज केहरि निज सुनत प्रसंसा ॥

कुंदकली, अनार, बिजली, कमल, शरदऋतुका चन्द्रमा, नागिन, वरुण-पाश, कामदेवका धनुष, हंस, हाथी और सिंह—सब अपनी-अपनी प्रशंसा सुनने लगे।

श्रीफल कनक कदलि हरषाहीं ❀ नेकु न संक सकुच मन माहीं ॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू ❀ हरषे सकल पाइ जनु राजू ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—बेल, सुवर्ण और केले प्रसन्न हो रहे हैं। उनके मनमें थोड़ा भी संकोच अथवा शङ्का नहीं है। हे सीते, सुन, आज तेरे बिना सब प्रसन्न हो गये हैं; मानों राज पा लिया हो।

किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं ❀ प्रिया बेगि प्रगटसि कस नाहीं ॥
एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी ❀ मनहुं महा बिरही अति कामी ॥

यह ईर्ष्या तुमसे कैसे सही जाती है? हे प्रिये, जल्दी क्यों नहीं प्रकट होती? इस प्रकार विलाप करते हुए स्वामी श्रीरामचन्द्रजी सीताजीको खोज रहे हैं; मानों अत्यन्त कामी और महा वियोगी हों।

पूरनकाम राम सुखरासी ❀ मनुजचरित कर अज अबिनासी ॥
आगे परा गीधपति देखा ❀ सुमिरत रामचरन जिन्ह रेखा ॥

सुखकी राशि श्रीरामचन्द्रजी पूर्णकाम हैं, अजन्मा हैं और अविनाशी हैं, परन्तु मनुष्यका चरित कर रहे हैं। आगे बढ़नेपर उन्होंने गीधपति जटायुको पड़ा हुआ देखा, जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंके चिह्नका स्मरण कर रहा था।

दो०—करसरोज सिरु परसेउ ❀ कृपासिंधु रघुबीर।
निरखि राम-छबि-धाम-मुख ❀ बिगत भई सब पीर ॥२९॥

कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने अपने कमलके समान हाथसे उसके शिरको स्पर्श किया। शोभा और सुखके स्थान श्रीरामचन्द्रजीके मुखके दर्शन करके जटायुकी सारी पीड़ा दूर हो गयी।

तब कह गीध बचन धरि धीरा ❀ सुनहु राम भंजन भवभीरा ॥
नाथ दसानन यह गति कीन्ही ❀ तेहि खल जनकसुता हरि लीन्ही ॥

तब धीरज रखकर गीध यह वचन कहने लगा—संसारमें भयको नष्ट कर देनेवाले हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। हे नाथ, रावणने यह गति की है और उसी दुष्टने राजा जनककी पुत्री सीताजीको हर लिया है।

लेइ दच्छिन दिसि गयेउ गोसाईं ❀ बिलपति अति कुररी की नाईं ॥
दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना ❀ चलन चहत अब कृपानिधाना ॥

हे स्वामिन्, वह उन्हें दक्षिण दिशाकी ओर ले गया है। सीताजी टिटिहरीके समान भारी विलाप करती जाती थीं। हे प्रभो, आपके दर्शन पानेके लिये प्राण रख छोड़े थे। हे कृपानिधान, अब ये प्राण चलना ही चाहते हैं।

राम कहा तनु राखहु ताता ❀ मुख मुसुकाइ कही तेहि बाता ॥
जाकर नाम मरत मुख आवा ❀ अधमहु मुकुत होइ स्रुति गावा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब यह कहा कि हे तात! शरीरको रखो, तब जटायुने मुस्कुराकर अपने मुखसे यह बात कही—मरते समय जिसका नाम मुखमें आ जानेसे अधम मनुष्य भी मोक्ष पा जाते हैं, यह वेद कहते हैं;

सो मम लोचन गोचर आगे ❀ राखउँ देह नाथ केहि खाँगे ॥
जल भरि नयन कहहिं रघुराई ❀ तात करम निज तें गति पाई ॥

वही परमात्मा जब मेरे नेत्रोंके सामने प्रत्यक्ष हैं। हे नाथ, तब मैं किस कमीके लिए शरीर रखूँ? तब नेत्रोंमें जल भरकर श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि हे तात, अपने कर्मोंसे ही तुमने सद्गति पायी है।

परहित बस जिन्हके मन माहीं ❀ तिन्ह कहुं जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
तनु तजि तात जाहु मम धामा ❀ देउं काह तुम्ह पूरनकामा ॥

जिनके मनमें परोपकार बसता है, उनके लिये संसारमें कुछ भी दुर्लभ नहीं है। हे तात, शरीर छोड़कर मेरे लोकको जाओ। मैं क्या दूं ? तुम पूर्णकाम हो।

दो०—सीताहरन तात जनि ❀ कहेउ पिता सन जाइ।
जौं मैं राम त कुल सहित ❀ कहिहि दसानन आइ ॥ ४० ॥

हे तात, सीता-हरणकी बात पिताजीसे जाकर मत कहना। यदि मैं राम हूं, तो कुल-समेत रावण ही पहुंचकर कहेगा।

गीध देह तजि धरि हरिरूपा ❀ भूषन बहु पट पीत अनूपा ॥
स्याम गात बिसाल भुज चारी ❀ अस्तुति करत नयन भरि बारी ॥

शरीर त्यागकर गीधने भगवानका रूप धारण कर लिया। बहुतसे भूषण और अनुपम पीताम्बर, सब धारण किये। शरीर श्याम था, चार विशाल भुजाएं थीं। नेत्रोंमें जल भरकर वह स्तुति करने लगा—

छं०—जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही।
दस - सीस - बाहु - प्रचंड - खंडन चंडसर मंडन मही ॥
पाथोदगात सरोजमुख राजीव - आयत - लोचनं।
नित नौमि राम कृपालु बाहुबिसाल भव - भय - मोचनं ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो। आपका रूप अनुपम है। आप निर्गुण, सगुण और सत्य ही गुणोंके प्रेरक हैं। दस शिरोंवाले रावणकी प्रचण्ड भुजाओंके खण्डन करनेवाले आपके तेज बाण हैं। आप पृथिवीके भूषण-स्वरूप हैं। आपका शरीर मेघके समान और मुख तथा विशाल नेत्र कमलके समान हैं। आपकी भुजाएं विशाल हैं और आप संसारके भयको छुड़ा देनेवाले हैं। हे कृपालु श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूं।

बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं।
गोविंद गोपद द्वंदहर बिज्ञानघन धरनीधरं ॥
जे राम मंत्र जपंत संत अनंत जन - मन - रंजनं।
नित नौमि राम अकामप्रिय कामादि - खल - दल - गंजनं ॥

आपका बल अपरिमित है, आप अनादि, अजन्मा, अव्यक्त, एक और अगोचर हैं। आप गोविन्द,

इन्द्रियोंसे परे, मोहको दूर कर देनेवाले, विज्ञानघन और पृथिवीको धारण करनेवाले हैं। हे अनन्त, जो संतजन राम-मन्त्रको जपते हैं, उन भक्तोंके मनको आप प्रसन्न करनेवाले हैं। हे निष्काम, भक्तोंके प्यारे, हे काम आदि दुष्टोंके दलके नाश करनेवाले, हे श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नित्य नमस्कार करता हूं।

जेहि श्रुति निरंजन ब्रह्म ब्यापक बिरज अज कहि गावहीं।
करि ध्यान ग्यान बिराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं॥
सो प्रगट करुनाकंद सोभाबृंद अग जग मोहई।
मम हृदय - पंकज - भृंग अंग अनंग बहु छबि सोहई॥

निरंजन, ब्रह्म, व्यापक, शुद्ध और जन्मरहित कहकर वेद जिसका वर्णन करते हैं और अनेक मुनिजन जिसे ध्यान, ज्ञान, वैराग्य और योग करके पाते हैं, वही करुणाकन्द, शोभाधाम, चराचरको मोहित करनेवाले यहां प्रकट हैं, जिनके शरीरमें बहुतसे कामदेवोंके समान छवि शोभित हो रही है—वही श्रीरामचन्द्रजी मेरे हृदय-कमलके भौंरे हों।

जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा।
पस्यंति जे जोगी जतनु करि करत मन गो बस जदा॥
सो राम रमानिवास संतत दासबस त्रिभुवन धनी।
मम उर बसउ सो समन संसृति जासु कीरति पावनी॥

जो अगम भी है और सुगम भी, जिसका स्वभाव निर्मल है, जो विषम और सम दोनों ही है, जो सदा शीतल रहता है, यत्न करके मन और इन्द्रियोंको जब वशमें कर लेते हैं तब योगिजन जिसे देखते हैं, वही राम रमा-निवास और त्रिभुवनके स्वामी सदैव अपने दासोंके वशमें रहते हैं। वही श्रीरामचन्द्रजी, जिनकी पवित्र कीर्ति संसारके तापको शान्त कर देनेवाली है, मेरे हृदयमें वास कीजिये।

दो०—अबिरल भगति माँगि बर ● गीध गयेउ हरिधाम।
तेहिकी क्रिया जथोचित ● निज कर कीन्ही राम॥ ३१॥

अविरल भक्तिका वर मांगकर गीध जटायु भगवान्के लोकको गया। उसकी यथोचित क्रिया श्रीरामचन्द्रजीने अपने हाथों की।

कोमलचित अति दीनदयाला ● कारन बिनु रघुनाथ कृपाला॥
गीध अधम खग आमिषभोगी ● गति दीन्ही जो जाचत जोगी॥

दीनदयालु श्रीरामचन्द्रजीका चित्त अत्यन्त कोमल है। रघुवंशके स्वामी अकारण ही कृपालु हो जाते हैं। गीध नीच मांस-भक्षक पक्षी है, उसे वह गति दी, जिसे योगिजन मांगते हैं।

सुनहु उमा ते लोग अभागी ❀ हरि तजि होहिं बिषयअनुरागी ॥
पुनि सीतहि खोजत दोउ भाई ❀ चले बिलोकत बन बहुताई ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, सुनो। वे लोग अभागे हैं, जो भगवान्‌को छोड़कर विषयानुरागी होते हैं। फिर सीताजीको खोजते हुए दोनों भाई बहुतसे वनोंको देखते हुए चल दिये।

संकुल लता बिटप घन कानन ❀ बहु खग मृग तहँ गज पंचानन ॥
आवत पंथ कबंध निपाता ❀ तेहि सब कही साप कै बाता ॥

लताओं और वृक्षोंसे भरे हुए सघन वन थे, जहां बहुतसे पक्षी, हिरण, हाथी और सिंह थे। रास्तेसे आते हुए श्रीरामचन्द्रजीने कवंध नामक राक्षसको मार डाला, जिसने अपने शापकी सब बात कह सुनायी।

दुर्बासा मोहि दीन्ही सापा ❀ प्रभुपद पेखि मिटा सो पापा ॥
सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही ❀ मोहि न सुहाइ ब्रह्म-कुल-द्रोही ॥

कवंधने कहा— दुर्वासा मुनिने मुझे शाप दिया था, परन्तु प्रभुके चरणोंको देखकर वह पाप मिट गया। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे गन्धर्व! सुन, मैं तुझसे कहता हूं। ब्राह्मणोंसे द्रोह करनेवाला मुझे अच्छा नहीं लगता।

दो०—मन क्रम बचन कपट तजि ❀ जो कर भू-सुर-सेव।
मोहि समेत बिरंचि सिव ❀ बस ताके सब देव ॥४२॥

मन, वाणी और कर्मसे कपट छोड़कर जो ब्राह्मणोंकी सेवा करता है, उसके वशमें मुझसमेत ब्रह्मा, शिव और सब देवता हो जाते हैं।

सापत ताड़त परुष कहंता ❀ बिप्र पूज्य अस गावहिं संता ॥
पूजिय बिप्र सीलगुनहीना ❀ सूद्र न गुन-गन-ग्यान-प्रबीना ॥

संतजन ऐसा कहते हैं कि ब्राह्मण शाप देता हो, मारता हो, कठोर वचन कहता हो, फिर भी वह पूज्य है। ब्राह्मण शील और गुणसे हीन भी हो, तो उनकी पूजा करनी चाहिये; परन्तु शूद्र यदि गुणों और ज्ञानमें प्रवीण हो, तोभी नहीं।

कहि निज धर्म ताहि समुझावा ❀ निज-पद-प्रीति देखि मन भावा ॥
रघु-पति-चरन-कमल सिरु नाई ❀ गयेउ गगन आपनि गति पाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने उसे अपना धर्म कहकर समझाया और अपने चरणोंमें उसकी प्रीति देखकर वह उन्हें मनमें प्यारा लगा। फिर, श्रीरामचन्द्रजीके चरण-कमलोंको शिर नवाकर वह अपनी गति पाकर आकाशमें चला गया।

ताहि देइ गति रामु उदारा ❀ सबरीके आस्रमु पगु धारा ॥
सबरी देखि रामु गृह आये ❀ मुनि के बचन समुझि जिय भाये ॥

उसे गति देकर उदार श्रीरामचन्द्रजीने शबरीके आश्रममें पदार्पण किया। शबरीने जब देखा कि श्रीरामचन्द्रजी घर आये हुए हैं, तब उसने मनको प्यारे लगनेवाले मुनिके वचनोंको समझ लिया।

सरसिज-लोचन बाहुबिसाला ❀ जटामुकुट सिर उर बनमाला ॥
स्याम गौर सुंदर दोउ भाई ❀ सबरी परी चरन लपटाई ॥

कमलके समान उनके नेत्र थे, भुजाएँ विशाल थीं, शिरपर जटाओंका मुकुट था, हृदयमें वनमाला थी, दोनों भाई सुन्दर साँवले और गोरे थे। शबरी उनके चरणोंमें लिपटकर पड़ रही।

प्रेममगन मुख बचन न आवा ❀ पुनि पुनि पदसरोज सिरु नावा ॥
सादर जल लेइ चरन पखारे ❀ पुनि सुंदर आसन बैठारे ॥

वह प्रेममें मग्न हो गयी, मुखसे वचन कहते न बना। उसने बार-बार श्रीरामचन्द्रजीके चरण कमलोंमें शिर नवाया। जल लेकर आदरके साथ उनके चरणोंको धोया और फिर सुन्दर आसनपर बिठलाया।

दो०—कंद मूल फल सुरस अति ❀ दिये राम कहुँ आनि।
प्रेमसहित प्रभु खाये ❀ बारंबार बखानि ॥४३॥

फिर शबरीने अत्यन्त स्वादिष्ट कंद, मूल और फल लाकर श्रीरामचन्द्रजीको दिये। बारबार प्रशंसा करके प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें बड़े प्रेमके साथ खाया।

पानि जोरि आगे भइ ठाढ़ी ❀ प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढ़ी ॥
केहि बिधि अस्तुति करउँ तुम्हारी ❀ अधम जाति मैं जड़मति भारी ॥

फिर शबरी हाथ जोड़कर आगे खड़ी हुई। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर उसका प्रेम उमड़ आया। वह कहने लगी—आपकी स्तुति मैं किस प्रकार करूँ? मैं नीच जातिकी हूँ और बड़ी जड़ बुद्धिवाली हूँ।

अधम तें अधम अधम अति नारी ❀ तिन्ह महँ मैं मतिमंद अघारी ॥
कह रघुपति सुनु भामिनि बाता ❀ मानउँ एक भगति कर नाता ॥

हे पापोंके शत्रु, अधमोंसे अधम और उनसे भी अत्यन्त अधम जो स्त्रियां हैं, उनमें भी मैं मन्द बुद्धि-वाली हूँ। श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि हे भामिनि, मेरी बात सुन। मैं एक भक्तिका ही सम्बन्ध मानता हूँ।

जाति पाँति कुल धर्म बड़ाई ❀ धन बल परिजन गुन चतुराई ॥
भगतिहीन नर सोहइ कैसा ❀ बिनु जल बारिद देखिय जैसा ॥

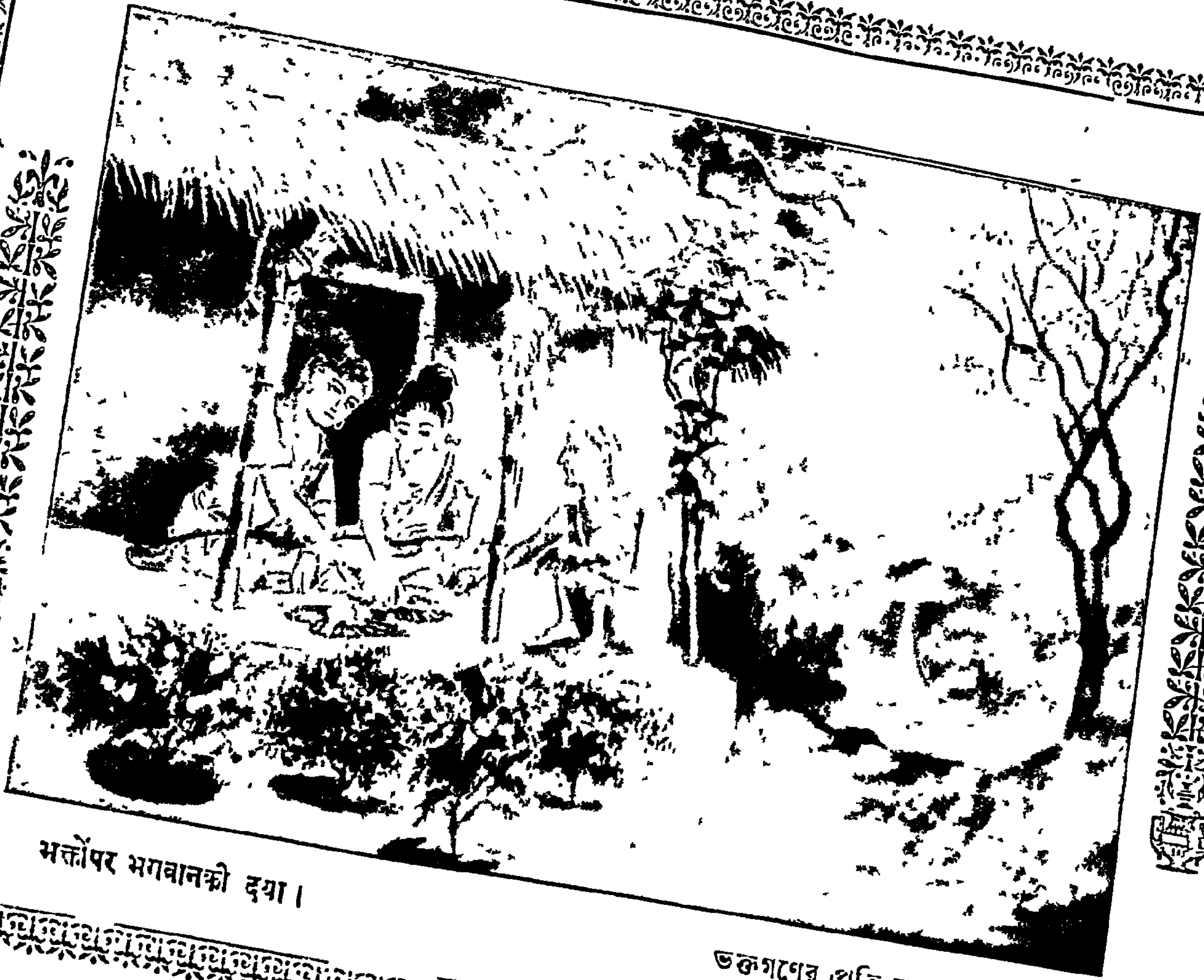

भक्तोंपर भगवानकी दया।

ভক্তগণের প্রতি ভগবানের দয়া।

जाति, पांति, कुल, धर्म, बड़ाई, धन, बल, कुटुम्बी, गुण और चतुरता—ये सब हों; परन्तु भक्तिहीन मनुष्य कैसे शोभित होता है, जैसे जल बिना मेघ दिखलायी देता हो।

नवधा भगति कहउँ तोहि पाहीं ❀ सावधान सुनु धरु मन माहीं ॥
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ❀ दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥

तुमसे मैं ९ प्रकारकी भक्ति कहता हूं। उसे सावधान होकर सुन और मनमें धारण कर। पहिली भक्ति संतजनोंका सत्सङ्ग है, और दूसरी है मेरे कथाप्रसङ्गोंमें प्रेम।

दो०—गुरु-पद-पंकज-सेवा ❀ तीसरि भगति अमान।
चौथि भगति मम गुनगन ❀ करइ कपट तजि गान ॥४४॥

तीसरी भक्ति मानरहित होकर गुरुके चरणकमलोंकी सेवा है। चौथी भक्ति यह है कि कपट छोड़कर मेरे गुणोंका गान करे।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ❀ पंचम भजनु सो बेद प्रकासा ॥
छठ दम सीलु बिरति बहु कर्मा ❀ निरत निरंतर सज्जन धर्मा ॥

मंत्रका जाप, मुझमें दृढ़ विश्वास और भजन—यह पांचवीं भक्ति है, जो वेदोंमें प्रकाशित है। इन्द्रिय-निग्रह, शील, बहुतसे कर्मोंसे वैराग्य और सदा सज्जनोंके धर्ममें तत्परता—यह छठी भक्ति है।

सातव सम मोहि मय जग देखा ❀ मो तें संत अधिक करि लेखा ॥
आठव जथालाभ संतोषा ❀ सपनेहु नहिं देखइ परदोषा ॥

सातवीं भक्ति यह है कि समान भावसे संसारको मुझसे व्याप्त देखता हो और संतजनोंको मुझसे भी अधिक मानता हो। जितना लाभ हो उतनेमें ही संतुष्ट हो जाना और दूसरोंके दोषोंको स्वप्नमें भी न देखना—यह आठवी भक्ति है।

नवम सरल सब सन छलहीना ❀ मम भरोस हिय हरष न दीना ॥
नव महुँ एकउ जिन्हके होई ❀ नारि पुरुष सचराचर कोई ॥

नवीं भक्ति है—सरलता, सबसे निश्छलता, हृदयमें मेरा विश्वास, न किसी बातका हर्ष और न दीनता। इन नौमेंसे जिनको एक प्रकारकी भक्ति भी होती है, वह स्त्री, पुरुष, चर और अचर—कोई भी हो—

सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे ❀ सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरे ॥
जोगि-बृंद-दुर्लभ-गति जोई ❀ तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई ॥

वही, हे भामिनि, मुझे अत्यन्त प्रिय होता है। तुझमें तो सब प्रकारकी दृढ़ भक्ति है। जो गति योगियोंके लिये भी दुर्लभ है, वही आज तेरे लिये सुलभ हुई है।

मम दरसनफल परम अनूपा ❀ जीव पाव निज सहज सरूपा ॥
जनकसुता कै सुधि भामिनी ❀ जानहि कहु करि-बर-गामिनी ॥

मेरे दर्शनोंका फल अत्यन्त अनुपम है। उससे जीव अपने सहज स्वरूप—मोक्ष—को पा जाता है। हे भामिनि, श्रेष्ठ हाथीके समान चालवाली राजा जनककी पुत्री सीताजीकी सुध बतलाओ। यदि जानती हो तो कहो।

पंपासरहि जाहु रघुराई ❀ तहँ होइहि सुग्रीवमिताई ॥
सो सब कहिहि देव रघुबीरा ❀ जानतहूँ पूँछहु मतिधीरा ॥
बार बार प्रभुपद सिरु नाई ❀ प्रेम सहित सब कथा सुनाई ॥

शवरीने कहा—हे श्रीरामचन्द्रजी, आप पंपा-सरोवरपर जाइये, वहाँ सुग्रीवसे आपकी मैत्री हो जायगी। हे देव, हे रघुवीर, हे मतिधीर, आप जानते हुए पूछते हैं। वह सुग्रीव ही सब सुध बतलायेगा। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें बार बार शिर नवाकर शवरीने प्रेमके साथ सब कथा सुनायी।

छंद—कहि कथा सकल बिलोकि हरिमुख हृदय पदपंकज धरे।
तजि जोगपावक देह हरिपद लीन भइ जहँ नहिं फिरे ॥
नर बिबिध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू।
बिस्वास करि कह दास तुलसी रामपद अनुरागहू ॥

सब कथा कहकर और भगवान्‌के मुखको देखकर शवरीने हृदयमें चरण-कमलोंको धारण किया और योगाग्निमें शरीर छोड़कर भगवान्‌के चरणोंमें लीन हो गयी, जहाँसे फिर लौटना नहीं होता। तुलसीदासजी कहते हैं कि हे मनुष्यो, अनेक प्रकारके कर्म, अधर्म, नाना प्रकारके मत—ये शोकप्रद हैं, इन सबको छोड़ दो और विश्वासपूर्वक श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम करो।

दो०—जातिहीन अघ जनम महि ❀ मुकुत कीन्हि असि नारि।
महा-मंद-मन सुखु चहसि ❀ ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥४५॥

तुलसीदासजी कहते हैं—नीच जाति और पृथिवीपर पाप-जन्म, ऐसी स्त्रीको भी जिन्होंने मोक्ष दे दी—ऐसे प्रभुको भूलकर, अरे महा मूर्ख मन, तू सुख चाहता है?

चले राम त्यागा बन सोऊ ❀ अतुलित बलु नरकेहरि दोऊ ॥
बिरही इव प्रभु करत बिषादा ❀ कहत कथा अनेक संबादा ॥

श्रीरामचन्द्रजी चल दिये, वह वन भी छोड़ दिया, दोनों अतुल बलशाली, पुरुषोंमें सिंहके समान हैं। वियोगी मनुष्यके समान प्रभु श्रीरामचन्द्रजी दुःख करते हैं और अनेक कथाएँ तथा संवाद कहते हैं।

लछिमनु देखु बिपिन कइ सोभा ❀ देखत केहि कर मनु नहिं छोभा ॥
नारि सहित सब खग-मृग-बृंदा ❀ मानहुँ मोरि करतहहिं निंदा ॥

वे कहने लगे—हे लक्ष्मण, वनकी शोभा तो देखो। इसे देखते ही किसका मन क्षुब्ध नहीं होता। सब पशुओं और पक्षियोंके झुण्ड अपनी-अपनी स्त्रियोंसमेत हैं, मानो वे मेरी निन्दा करते हों।

हमहिं देखि मृगनिकर पराहीं ❀ मृगी कहहिं तुम्ह कहुँ भय नाहीं ॥
तुम्ह आनंद करहु मृगजाये ❀ कंचनमृग खोजन ए आये ॥

हमें देखकर जब हिरणोंके समूह भागते हैं, तब हिरणियाँ कहने लगती हैं कि तुम्हारे लिये भयकी कोई बात नहीं है, तुम हिरणके उत्पन्न किये हुए हो, इसलिये तुम आनंद करो, ये सोनेका हिरण खोजने आये हैं।

संग लाइ करिनी करि लेहीं ❀ मानहुँ मोहि सिखावनु देहीं ॥
सास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिय ❀ भूप सुसेवित बस नहिं लेखिय ॥

हाथी हथिनियोंको संग लगा लेते हैं, मानो मुझे सीख देते हैं। भलीभांति मनन किये हुए शास्त्रको भी बारबार देखना चाहिये और भलीभांति सेवा करनेपर भी राजाको अपने वशमें न समझना चाहिये।

राखिय नारि जदपि उर माहीं ❀ जुबती सास्त्र नृपति बस नाहीं ॥
देखहु तात बसंत सोहावा ❀ प्रियाहीन मोहि भय उपजावा ॥

स्त्रीको यद्यपि हृदयमें रखो तथापि स्त्री, राजा और शास्त्र—ये वशमें नहीं होते। हे तात, यह सुहावना वसंत देखो, जो प्यारी सीताके बिना मुझे भयंकर मालूम होता है।

दो०—बिरहबिकल बलहीन मोहि ❀ जानेसि निपट अकेल।
सहित बिपिन मधुकर खग ❀ मदन कीन्हि बगमेल ॥४६॥

मुझे विरहमें व्याकुल, बलहीन और निपट अकेला जान लिया है, इसीलिये वन, भौंरों और पक्षियों—सब साथियोंको लेकर कामदेवने चारों ओरसे धावा बोल दिया है।

देखि गयेउ भ्राता सहित ❀ तासु दूत सुनि बात।
डेरा कीन्हेउ मनहुँ तब ❀ कटकु हटकि मनजात ॥४७॥

मानो उसका दूत मुझे भाईसमेत देख गया है। तब उसकी बात सुनकर कामदेवने सेनाको रोककर डेरा डाल दिया है।

बिटप बिसाल लता अरुझानी ❀ बिबिध बितानु दिये जनु तानी ॥
कदलि तालबर ध्वजा पताका ❀ देखि न मोह धीर मनु जाका ॥

विशाल वृक्षोंसे लताएं लपटी हुई हैं, यही मानों तरह-तरहके तंबू तान दिये हैं। केला और ऊंचे ताड़के वृक्ष मानों ध्वजा-पताकाएं हैं। इन्हें देखकर जिसका मन मोहित न हो, वही धीर है।

बिबिध भांति फूले तरु नाना ❀ जनु बानैत बने बहु बाना ॥
कहुं कहुं सुंदर बिटप सुहाये ❀ जनु भट बिलग बिलग होइ छाये ॥

अनेक प्रकारके बहुतसे वृक्ष फूले हुए हैं, मानों बहुत प्रकारके भेषमें वीर सजे हुए हों। कहीं-कहीं सुन्दर वृक्ष शोभित हैं, मानों योद्धा अलग-अलग होकर खड़े हों।

कूजत पिक मानहुं गज माते ❀ ढेक महोख ऊंट बिसराते ॥
मोर चकोर कीर बर बाजी ❀ पारावत मराल सब ताजी ॥

कोयलें बोलती हैं, यही मानों मतवाले हाथी हैं। कुलंग और महोख पक्षी मानों ऊंट और खच्चर हैं। मोर, चकोर और तोते श्रेष्ठ घोड़े हैं और कबूतर तथा हंस मानों सब ताजी घोड़े हैं।

तीतर लावक पद-चर जूथा ❀ बरनि न जाइ मनोजबरूथा ॥
रथ गिरिसिला दुंदुभी झरना ❀ चातक बंदी गुनगन बरना ॥

तीतर और लवा पक्षी मानों पैदल-सेनाका झुण्ड है। कामदेवकी इस सेनाका वर्णन नहीं किया जाता। पर्वतोंकी शिलाएं, रथ, झरने, दुंदुभी और चातक वंदीजन हैं, जो गुणोंका वर्णन करते हैं।

मधुकर-मुखर भेरि सहनाई ❀ त्रिबिध बयारि बसीठी आई ॥
चतुरंगिनी सेन संग लीन्हे ❀ बिचरत सबहिं चुनौती दीन्हे ॥

भौंरोंकी गुंजार ही भेरी और शहनाई है और शीतल, मंद तथा सुगंधित वायु मानों बसीठी आयी है। इस चतुरंगिणी सेनाको संगमें लिये कामदेव सभीको चुनौती देते हुए विचरण कर रहा है।

लछिमन देखत कामअनीका ❀ रहहिं धीर तिन्ह कै जग लीका ॥
एहि के एक परम बलु नारी ❀ तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी ॥

हे लक्ष्मण! कामदेवकी सेनाको देखकर जो धीर बने रहते हैं, उन्हींकी संसारमें मर्यादा होती है। इस कामदेवका एक परम बल है—स्त्री। उससे जो बच जाय, वही भारी योद्धा है।

दो०—तात तीनि अतिप्रबल खल ❀ काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यानधाम मन ❀ करहिं निमिष महुं छोभ ॥४८॥

हे तात! काम, क्रोध और लोभ—ये तीनों दुष्ट बड़े बलवान हैं। विज्ञानके स्थान मुनियोंके मनमें भी ये एक निमेषमें विकार उत्पन्न कर देते हैं।

लोभके इच्छा दंभ बलु ❀ कामके केवल नारि।
क्रोधके परुषवचन बलु ❀ मुनिबर कहहिं बिचारि ॥४९॥

श्रेष्ठ मुनिजन विचारकर इस बातको कहते हैं कि लोभका बल इच्छा और दम्भ, कामका बल केवल स्त्री, और क्रोधका बल कठोर वचन है।

गुनातीत सचराचर स्वामी ❀ रामु उमा सब अंतरजामी ॥
कामिन्ह कै दीनता देखाई ❀ धीरन्हके मन बिरति दृढ़ाई ॥

शिवजी कहते हैं कि हे उमा, श्रीरामचन्द्रजी चर और अचर, सबके स्वामी, सबके अंतर्यामी और गुणोंसे परे हैं। कामियोंके समान दीनता दिखलाकर उन्होंने धीर मनुष्योंके मनमें वैराग्यको दृढ़ किया है।

क्रोध मनोज लोभ मद माया ❀ छूटहिं सकल राम की दाया ॥
सो नर इंद्रजाल नहिं भूला ❀ जापर होइ सो नट अनुकूला ॥

क्रोध, काम, लोभ, मद और माया—सब श्रीरामचन्द्रजीकी दयासे ही छूटते हैं। जिसपर वह नट अनुकूल हो, वह मनुष्य इन्द्रजालमें नहीं भूलता।

उमा कहउँ मैं अनुभव अपना ❀ सत हरि भजनु जगत सब सपना ॥
पुनि प्रभु गये सरोबरतीरा ❀ पंपा नाम सुभग गंभीरा ॥

हे उमा, मैं अपना अनुभव कहता हूं, भगवान्‌का भजन सत्य है और सब संसार स्वप्न है। फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी पंपा नामक सुन्दर और गहरे सरोवरके तटपर गये।

संतहृदय जस निर्मल बारी ❀ बाँधे घाट मनोहर चारी ॥
जहँ तहँ पियहिं बिबिध मृग नीरा ❀ जनु उदारगृह जाचकभीरा ॥

उसमें सन्तोंके हृदयके समान निर्मल जल था। चार मनोहर घाट बंधे हुए थे। जहां-तहां तरह-तरहके मृग पानी पी रहे थे, मानों किसी उदार मनुष्यके घरपर याचकोंकी भीड़ हो।

दो०—पुरइनि सघन ओट जलु ❀ बेगि न पाइय मर्म।
मायाछन्न न देखिये ❀ जैसे निर्गुन ब्रह्म ॥५०॥

जैसे मायासे ढके हुए निर्गुण ब्रह्मको नहीं देखा जा सकता, वैसे ही सघन कमलिनीकी ओटमें जल होनेसे उसका मर्म जल्दी न मिलता था।

सुखी मीन सब एकरस ❀ अति अगाध जल माहिं।
जथा धर्मसीलन्ह के ❀ दिन सुखसंजुत जाहिं ॥५१॥

अत्यन्त गंभीर जलमें सब मछलियां एकरस सुखी थीं, जैसे धर्मशील मनुष्योंके दिन सुखपूर्वक बीतते हैं।

बिकसे सरसिज नाना रंगा ❀ मधुर मुखर गुंजत बहु भृंगा ॥
बोलत जलकुक्कुट कलहंसा ❀ प्रभु बिलोकि जनु करत प्रसंसा ॥

पंपा-सरोवरमें तरह-तरहके कमल खिले हुए थे, जिनपर मधुर स्वरसे बहुतसे भौंरे गूंज रहे थे। इसमें जलकुक्कुट और सुन्दर हंस बोल रहे थे, मानों प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर वे उनकी प्रशंसा करते हों।

चक्रबाक बक खग समुदाई ❀ देखत बनइ बरनि नहिं जाई ॥
सुंदर खगगन गिरा सुहाई ❀ जात पथिकु जनु लेत बोलाई ॥

चकवा, चकवी, बगुला आदि पक्षियोंका समुदाय देखते ही बनता था। इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। सुन्दर पक्षियोंकी वाणी ऐसी सुहावनी थी, मानों मार्गसे जाते हुए बटोहियोंको वे बुला लेते हों।

ताल समीप मुनिन्ह गृह छाये ❀ चहुं दिसि कानन बिटप सुहाये ॥
चंपक बकुल कदंब तमाला ❀ पाटल पनस परास रसाला ॥

सरोवरके पास मुनियोंके घर बने हुए थे और चारों दिशाओंमें वनके वृक्ष शोभित हो रहे थे। चंपा, मौलसिरी, कदम्ब, तमाल, गुलाब, कटहल, पलास, आम—

नवपल्लव कुसुमित तरु नाना ❀ चंचरीक पटली कर गाना ॥
सीतल मंद सुगंध सुभाऊ ❀ संतत बहइ मनोहर बाऊ ॥
कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं ❀ सुनि रव सरस ध्यान मुनि टरहीं ॥

अनेक प्रकारके वृक्ष नये पत्तों और फूलोंसे लदे हुए थे। भौंरोंके झुण्ड उनपर गान कर रहे थे। स्वभावसे ही शीतल, मंद और सुगन्धित मनोहर वायु वहां सदैव बहती थी। कोयलें कुहू-कुहूकी धुन कर रही थीं, जिनका रसीला शब्द सुनकर मुनियोंका भी ध्यान छूट जाता था।

दो०—फलभर नम्र बिटप सब ❀ रहे भूमि नियराइ।
परउपकारी पुरुष जिमि ❀ नवहिं सुसंपति पाइ ॥४२॥

सब वृक्ष फलोंके भारसे नीचे झुके हुए पृथवीके समीपतक आ गये थे, जैसे परोपकारी पुरुष सुन्दर सम्पत्ति पाकर नम्र हो जाते हैं।

देखि राम अति रुचिर तलावा ❀ मज्जनु कीन्ह परम सुख पावा ॥
देखी सुंदर तरु बर छाया ❀ बैठे अनुज सहित रघुराया ॥

अत्यन्त सुन्दर सरोवर देखकर श्रीरामचन्द्रजीने स्नान किया और बड़ा सुख पाया। फिर एक सुन्दर वृक्षकी उत्तम छाया देखी और भाई लक्ष्मणसमेत श्रीरामचन्द्रजी बैठ गये।

तहं पुनि सकल देव मुनि आये ❀ अस्तुति करि निज धाम सिधाये ॥
बैठे परमप्रसन्न कृपाला ❀ कहत अनुज सन कथा रसाला ॥

वहां फिर सब देवता और मुनि आये और स्तुति करके अपने लोकको बिदा हो गये। कृपालु श्रीरामचंद्रजी परम प्रसन्न होकर बैठे और छोटे भाई लक्ष्मणजीसे रसीली कथाएं कहने लगे।

बिरहवंत भगवंतहिं देखी ❀ नारदमन भा सोच बिसेखी ॥
मोर साप करि अंगीकारा ❀ सहत रामु नाना दुखभारा ॥

भगवान्‌को वियोगी देखकर नारदजीके मनमें विशेष सोच हुआ। वे सोचने लगे—मेरे शापको अङ्गीकार करके श्रीरामचन्द्रजी तरह-तरहके दुःखोंके भारको सहन कर रहे हैं।

ऐसे प्रभुहिं बिलोकउं जाई ❀ पुनि न बनिहि अस अवसर आई ॥
यह बिचारि नारद करबीना ❀ गये जहां प्रभु सुखआसीना ॥

जाकर ऐसे प्रभुके दर्शन करूं। फिर ऐसा अवसर नहीं मिलेगा। यह विचारकर नारदजी हाथमें वीणा लिए हुए वहां गये, जहां प्रभु श्रीरामचन्द्रजी सुखसे बैठे हुए थे।

गावत राम चरित मृदुबानी ❀ प्रेमसहित बहुभांति बखानी ॥
करत दंडवत लिये उठाई ❀ राखे बहुत बार उर लाई ॥
स्वागत पूछि निकट बैठारे ❀ लछिमन सादर चरन पखारे ॥

नारदजी प्रेमके साथ मीठी वाणीसे बहुत तरहसे प्रशंसा करते हुए श्रीरामचरित गाते जाते थे। जब नारदजीने दण्डवत् की, तब श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें उठा लिया और बहुत बार हृदयसे लगाकर रखा। फिर स्वागत-संवाद पूछकर श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें पास बिठलाया और लक्ष्मणजीने आदरके साथ उनके चरणोंको धोया।

दो०—नाना बिधि बिनती करि ❀ प्रभु प्रसन्न जिय जानि।
नारद बोले बचन तब ❀ जोरि सरोरुहपानि ॥४२॥

तब प्रभुको जीमें प्रसन्न जानकर नारदजी कमलके समान हाथ जोड़कर अनेक प्रकारसे विनती करके ये वचन कहने लगे—

सुनहु उदार परम रघुनायक ❀ सुंदर अगम सुगम बरदायक ॥
देहु एक बरु मांगउं स्वामी ❀ जद्यपि जानत अंतरजामी ॥

हे परम उदार, सुन्दर, वर देनेवाले, अगम और सुगम श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। हे स्वामिन्, आप अन्तर्यामी हैं और यद्यपि सब जानते हैं, तथापि एक वर मांगता हूं, उसे दीजिये।

जानहु मुनि तुम्ह मोर सुभाऊ ❀ जन सन कबहुं कि करउं दुराऊ ॥
कवन बस्तु असि प्रिय मोहि लागी ❀ जो मुनिबर न सकहु तुम्ह मांगी ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे मुनि, आप मेरा स्वभाव जानते हैं। मैं अपने भक्तसे कभी कभी छिपाव करता हूं ? हे मुनिवर, मेरी कौनसी ऐसी प्यारी वस्तु है जिसे आप नहीं मांग सकते ?

जन कहुं कछु अदेय नहिं मोरें ❀ अस बिस्वास तजहु जनि भोरें ॥
तब नारद बोले हरषाई ❀ अस बर मांगउं करउं ढिठाई ॥

भक्तको न देनेयोग्य मेरे पास कुछ भी नहीं है—ऐसा विश्वास भूलकर भी मत छोड़ना। तब नारदजी प्रसन्न होकर बोले कि मैं ढिठाई करता हूं और ऐसा वरदान मांगता हूं।

जद्यपि प्रभुके नाम अनेका ❀ स्रुति कह अधिक एक तें एका ॥
राम सकल नामन्ह तें अधिका ❀ होउ नाथ अघ-खग-गन-बधिका ॥

यद्यपि प्रभुके नाम असंख्य हैं। वेद कहते हैं कि वे सब एकसे एक बढ़कर हैं; परन्तु 'राम' यह नाम, हे नाथ, पापरूपी पक्षियोंको मारनेवाला सब नामोंसे बढ़कर होवे।

दो०—राका रजनी भगति तव ❀ राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम उडुगन बिमल ❀ बसहु भगत-उरब्योम ॥५४॥

आपकी भक्तिरूपी पूर्णिमाकी रात्रिमें 'राम'-नामरूपी चन्द्रमा आपके अन्य नामरूपी निर्मल तारागणों-समेत भक्तके हृदयरूपी आकाशमें निवास करें।

एवमस्तु मुनि सन कहेउ ❀ कृपासिंधु रघुनाथ ।
तब नारद मन हरष अति ❀ प्रभु पद नायेउ माथ ॥५५॥

कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने जब मुनिसे कहा कि ऐसा ही हो तब नारदजीके मनमें बड़ा हर्ष हुआ और उन्होंने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मस्तक नवाया।

अति प्रसन्न रघुनाथहिं जानी ❀ पुनि नारद बोले मृदुबानी ॥
राम जबहिं प्रेरेहु निज माया ❀ मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया ॥

श्रीरामचन्द्रजीको अत्यन्त प्रसन्न जानकर फिर नारदजी मीठी वाणीसे बोले—हे श्रीरामचन्द्रजी, हे रघुराज, सुनिये, आपने जभी अपनी मायाकी प्रेरणा की और मुझे मोह लिया

तब बिबाह मैं चाहेउं कीन्हा ❀ प्रभु केहि कारन करइ न दीन्हा ॥
सुनु मुनि तोहि कहउं सहरोसा ❀ भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा ॥

तभी मैंने विवाह करना चाहा था, परन्तु प्रभुने उसे किस कारण करने नहीं दिया ? श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे मुनि, सुनिये। आपसे प्रसन्नतापूर्वक कहता हूं। सब भरोसा छोड़कर जो मुझे भजते हैं—

करउं सदा तिन्ह कै रखवारी ❀ जिमि बालकहिं राख महतारी ॥
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई ❀ तहं राखइ जननी अरु गाई ॥

मैं सदा उनकी रखवाली करता हूं; जैसे माता बालककी रक्षा करती है। बालक या गायका बछड़ा जब आग या सर्पको पकड़ लेता है तब वहां माता और गाय दौड़कर बचा लेती है।

प्रौढ़ भये तेहि सुत पर माता ❀ प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता ॥
मोरे प्रौढ़-तनय-सम ग्यानी ❀ बालक सुत सम दास अमानी ॥

प्रौढ़ हो जानेपर भी माता उस पुत्रपर प्रीति तो करती है, परन्तु पिछली बात नहीं होती। ज्ञानी मनुष्य मेरे प्रौढ़ पुत्रके समान हैं और अभिमानशून्य सेवक हैं मेरे बालक पुत्रके समान।

जनहि मोर बल निज बल ताही ❀ दुहुं कहं काम क्रोध रिपु आही ॥
यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं ❀ पायेहु ग्यान भगति नहिं तजहीं ॥

मेरे सेवकको मेरा बल रहता है और उसे (ज्ञानीको) अपना बल। काम और क्रोध दोनोंके ही शत्रु हैं। यही विचारकर पण्डितजन मुझे भजते हैं और ज्ञान पा जानेपर भी भक्तिको नहीं छोड़ देते।

दो०—काम-क्रोध-लोभादि-मद ❀ प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अतिदारुन दुखद ❀ माया रूपी नारि ॥५६॥

काम, क्रोध, लोभ, मद आदि मोहकी प्रबल धाराएं हैं, इनमें मायारूपी स्त्री अत्यन्त कठोर दुःखदायिनी है।

सुनु मुनि कह पुरान स्रुति संता ❀ मोहबिपिन कहु नारि बसंता ॥
जप तप नेमु जलासय झारी ❀ होइ ग्रीसम सोखइ सब नारी ॥

हे मुनि, सुनो। पुराण, वेद और संतजन—सब कहते हैं कि मोहरूपी वनके लिये स्त्री वसंतऋतुके समान है। स्त्री ग्रीष्म होकर जप, तप, नियमरूपी जलाशय-समूहको बिलकुल सुखा देती है।

काम क्रोध मद मत्सर भेका ❀ इनहिं हरषपद बरषा एका ॥
दुर्बासना कुमुदसमुदाई ❀ तिन्ह कहुं सरद सदा सुखदाई ॥

काम, क्रोध, मद, मत्सर—ये सब मेढ़कोंके समान हैं। इनको स्त्रीरूपिणी वर्षाऋतु सुख देनेवाली होती है। दुर्वासनाएँ कुमुदके समूहके समान हैं। उनको स्त्री शरदऋतुके समान सदा ही सुख देनेवाली है।

धर्म सकल सरसीरुह-बृंदा ❀ होइ हिम तिन्हहिं देति दुखु मंदा ॥
पुनि ममता जवास बहुताई ❀ पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई ॥

समस्त धर्म कमलोंके समूहके समान हैं। उन्हें मंद सुख देनेवाली स्त्री हेमंतऋतु होकर जला डालती है। फिर शिशिरऋतु होकर स्त्री जवासेरूपी ममताको बहुतायतसे हराभरा कर देती है।

पाप उलूकनिकर सुखकारी ❀ नारि निबिर रजनी अँधियारी ॥
बुधि बलु सील सत्य सब मीना ❀ बनसी सम त्रिय कहहिं प्रबीना ॥

स्त्री घोर अंधेरी रातके समान है, जो पापरूपी उल्लुओंके समूहको सुख देनेवाली है। प्रवीण मनुष्य कहते हैं कि बुद्धि, बल, शील और सत्य—सब मछलीके समान हैं और स्त्रियां हैं उनके लिये वंशीके समान।

दो०—अवगुनमूल सूलप्रद ❀ प्रमदा सब दुखखानि।
ता तें कीन्ह निवारन ❀ मुनि मैं यह जिय जानि ॥५७॥

हे मुनि, स्त्री अवगुणोंकी जड़, पीड़ा देनेवाली और सब दुःखोंकी खान है, यही अपने हृदयमें जानकर, इसी कारण, मैंने आपको उससे निवारण किया।

सुनि रघुपतिके बचन सुहाये ❀ मुनि तन पुलक नयन भरि आये ॥
कहहु कवन प्रभु कै असि रीती ❀ सेवक पर ममता अरु प्रीती ॥

श्रीरामचन्द्रजीके सुहावने वचन सुनकर नारदमुनिका शरीर पुलकायमान हो गया और उनके नेत्रोंमें जल भर आया। वे कहने लगे—भला कहो, ऐसी रीति, सेवकपर ममता और प्रीति किस प्रभुकी होती है?

जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी ❀ ज्ञानरंक नर मंद अभागी ॥
पुनि सादर बोले मुनि नारद ❀ सुनहु राम बिज्ञानबिसारद ॥

जो मनुष्य भ्रम छोड़कर ऐसे प्रभुको नहीं भजते वे ज्ञानके दरिद्री, मूर्ख और अभागे हैं। फिर नारद मुनि आदरके साथ बोले कि हे विज्ञान-विशारद श्रीरामचन्द्रजी सुनिये।

संतन्ह के लच्छन रघुबीरा ❀ कहहु नाथ भंजन भवभीरा ॥
सुनु मुनि संतन्हके गुन कहऊं ❀ जिन्ह तें मैं उन्हके बस रहऊं ॥

हे नाथ, हे संसारके भयको नष्ट कर देनेवाले, हे रघुवीर, संतजनोंके लक्षण कहिये। श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे मुनि सुनो। मैं संतजनोंके गुण कहता हूं, जिनसे मैं उनके वशमें रहता हूं।

षट बिकार जित अनघ अकामा ❀ अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ॥
अमितबोध अनीह मितभोगी ❀ सत्यसंध कबि कोबिद जोगी ॥
सावधान मानद मदहीना ❀ धीर भगतिपथ परम प्रबीना ॥

जो छहों विकारोंको जीतनेवाले, निष्पाप, कामनारहित, अचल, अकिञ्चन (धनहीन), पवित्र, सुखधाम

अपार ज्ञानी, तृष्णारहित, परिमित-भोगी, सत्यप्रतिज्ञ, कवि, पण्डित, योगी, सावधान, सबको मान देनेवाले, अभिमानहीन, धीर और भक्तिमार्गमें अत्यंत चतुर हैं;

दो०—गुनागार संसार-दुख ❀ रहित बिगत संदेह।
तजि मम चरनसरोज प्रिय ❀ जिन्ह कहुँ देह न गेह ॥४५॥

जो गुणोंके भाण्डार, संसारके दुःखोंसे रहित और सन्देहशून्य हैं, मेरे चरणकमलोंको छोड़कर जिन्हें न तो अपना शरीर प्यारा है और न घरबार।

निज गुन स्रवन सुनत सकुचाहीं ❀ परगुन सुनत अधिक हरषाहीं॥
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती ❀ सरल सुभाउ सबहिं सन प्रीती॥

अपने गुणको कानों सुननेसे जिन्हें संकोच होता है, परन्तु दूसरोंके गुण सुनकर जिन्हें बड़ी प्रसन्नता होती है; जो समदृष्टि और शीतल रहते हैं और नीति नहीं छोड़ते; जिनका स्वभाव सरल होता है और जो सबसे प्रेम करते हैं।

जप तप ब्रत दम संजम नेमा ❀ गुरु-गोबिंद-बिप्र-पद प्रेमा॥
स्रद्धा छमा मइत्री दाया ❀ मुदिता मम पदप्रीति अमाया॥

जो जप, तप, व्रत, दम, संयम और नियम—सब करते हैं और गुरु, गोविन्द भगवान् और ब्राह्मणोंके चरणोंमें जिनका प्रेम होता है; जिनमें श्रद्धा, क्षमा, मैत्री, दया, प्रसन्नता, मायाहीनत्व और मेरे चरणोंमें प्रेम है;

बिरति बिबेक बिनय बिग्याना ❀ बोध जथारथ बेदपुराना॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ ❀ भूलि न देहिं कुमारग पाऊ॥

जिनमें वैराग्य, विवेक, नम्रता, विज्ञान और वेद-पुराणोंका यथार्थ बोध है; जो दंभ, अभिमान और मद कभी नहीं करते और भूलकर भी कुमार्गमें पैर नहीं देते;

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला ❀ हेतु रहित पर-हित-रत-सीला॥
सुनु मुनि साधुन के गुन जेते ❀ कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते॥

जो सदा मेरी लीलाको गाते और सुनते हैं और स्वार्थरहित होकर दूसरोंका भला करनेमें लगे रहना जिनका स्वभाव होता है। हे मुनि, सुनो, साधुजनोंके जितने गुण हैं उन सबको सरस्वती और वेद भी नहीं कह सकते।

छं०—कहि सक न सारद सेष नारद सुनत पदपंकज गहे।
अस दीनबंधु कृपाल अपने भगतगुन निज मुख कहे॥

सिरु नाइ बारहिं बार चरनन्हि ब्रह्मपुर नारद गये।
ते धन्य तुलसीदास आस बिहाइ जे हरिरंग रये॥

साधुजनोंके गुण सरस्वती और शेषनाग भी नहीं कह सकते—यह सुनते ही नारदजीने चरणकमल पकड़ लिये। दीनबन्धु श्रीरामचन्द्रजी ऐसे कृपालु हैं कि अपने भक्तके गुण उन्होंने अपने मुखसे वर्णन किये। चरणोंमें बार-बार शिर नवाकर नारदजी ब्रह्मलोकको गये। तुलसीदासजी कहते हैं कि वे धन्य हैं जो सब आशाएँ छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके रंगमें रँग गये।

दो०—रावनारि जसु पावन ❀ गावहिं सुनहिं जे लोग।
रामभगति दृढ़ पावहिं ❀ बिनु बिराग जप जोग॥५९॥

रावणके शत्रु श्रीरामचन्द्रजीका पवित्र यश जो लोग गाते और सुनते हैं वे वैराग्य, जप और योगके बिना ही श्रीरामचन्द्रजीकी दृढ़ भक्ति पा जाते हैं।

दीप-सिखा-सम जुबतितनु ❀ मन जनि होसि पतंग।
भजहि राम तजि कामु मदु ❀ करहि सदा सतसंग॥६०॥

युवती स्त्रीका शरीर दीपककी लौके समान है। हे मन, तू उसका पतंग मत हो, काम और मद छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर और सदा संतजनोंका संग कर।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-
वैराग्यसम्पादनो नाम तृतीयः सोपानः समाप्तः॥

* श्रीगणेशाय नमः *

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

चतुर्थ सोपान

किष्किन्धाकांड

श्लोकाः

कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ।
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्म्मवर्म्मौ हितौ
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥१॥

कुंद और नीलकमलके समान सुंदर, अत्यन्त बलवान्, विज्ञानके धाम, शोभासम्पन्न, धनुर्विद्याके श्रेष्ठ ज्ञाता, वेदोंद्वारा स्तूयमान, गौ और ब्राह्मणोंके समूहके प्यारे, मायासे मनुष्य-शरीरधारी, सद्धर्मके रक्षक, हितकारी, सीताजीकी खोजमें तत्पर, मार्गमें विचरते हुए वे दोनों रघुवर—श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी—हमें निश्चय भक्ति देनेवाले हों।

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा।

संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम् ॥२॥

वे पुण्यवान् धन्य हैं जो श्रीरामचन्द्रजीके नामरूपी उस अमृतको निरंतर पीते हैं, जो वेदरूपी समुद्रसे निकला है, कलियुगके पापोंको नष्ट कर देनेवाला है, अविनाशी है, श्रीशिवजीके श्रेष्ठ और सुंदर मुखचंद्रमें सदैव शोभित है, संसाररूपी रोगके लिये सुखकर औषधि है और जो श्रीसीताजीका प्राणाधार है।

सो०—मुकुति जनमु महि जानि ॐ ग्यानखानि अघहानिकर।
जहँ बस संभुभवानि ॐ सो कासी सेइय कस न ॥ १ ॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि मुक्तिकी जन्मस्थली, ज्ञानकी खान और पापोंका नाश कर देनेवाली जानकर उस काशीका सेवन क्यों न करना चाहिये, जहाँ शिवजी और पार्वतीजी बसते हैं?

जरत सकल सुरबृंद ॐ बिषमगरल जेहि पान किय।
तेहि न भजसि मन मंद ॐ को कृपाल संकरसरिस ॥ २ ॥

सब देवताओंके समूहके जलनेपर जिसने हलाहल विषको पी लिया—रे मूर्ख मन, तू उसे नहीं भजता! शिवजीके समान कृपालु और कौन है?

आगे चले बहुरि रघुराया ॐ रिष्यमूक परबत नियराया ॥
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवाँ ॐ आवत देखि अतुल-बल - सीवाँ ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजी आगे चले और ऋष्यमूक पर्वतके समीप आ गये। वहां मंत्रियोंसमेत सुग्रीव रहते थे। अतुल बलकी सीमा श्रीरामचन्द्रजीको आते देखकर—

अति सभीत कह सुनु हनुमाना ॐ पुरुष - जुगल बल-रूप - निधाना ॥
धरि बटुरूप देखु तैं जाई ॐ कहेसु जानि जिय सैन बुझाई ॥

अत्यन्त भयभीत होकर कहने लगे कि हे हनुमान, सुनो। दोनों पुरुष बल और रूपके भाण्डार हैं। ब्रह्मचारीका रूप धर तुम जाकर देखो और अपने हृदयमें जानकर मुझसे इशारेसे समझाकर कह देना।

पठये बालि होहिं मन मैला ॐ भागउँ तुरत तजउँ यह सैला ॥
बिप्ररूप धरि कपि तहँ गयेऊ ॐ माथ नाइ पूछत अस भयेऊ ॥

यदि बालिके भेजे हुए हों या इनका मन मैला हो तो मैं तुरंत भागूं और यह पर्वत छोड़ दूं। ब्राह्मणका स्वरूप रखकर हनुमान वहां गये और मस्तक नवाकर इस तरह पूछने लगे—

को तुम्ह स्यामल - गौर - सरीरा ॐ छत्रीरूप फिरहु बन बीरा ॥
कठिन भूमि कोमल - पद - गामी ॐ कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी ॥

हे वीर, साँवले और गोरे शरीरवाले आप दोनों कौन हैं, जो क्षत्रियके रूपमें वनमें फिर रहे हैं? पृथिवी कठोर है, उसपर अपने कोमल चरणोंसे आप चल रहे हैं। हे स्वामिन्, आप वनमें विचरण कर रहे हैं, इसका हेतु क्या है?

मृदुल मनोहर सुंदर गाता ❀ सहत दुसह बन आतप बाता ॥
की तुम्ह तीनि देव महँ कोऊ ❀ नरनारायन की तुम्ह दोऊ ॥

आपका सुंदर शरीर कोमल और मनोहर है और आप वनमें दुःसह धूप और पवनको सह रहे हैं। क्या आप तीन देवताओं, ब्रह्मा, विष्णु और महादेवमेंसे कोई हैं अथवा आप दोनों क्या नर-नारायण हैं?

दो०—जगकारन तारन भव ❀ भंजन धरनीभार।
की तुम्ह अखिल-भुवन-पति ❀ लीन्ह मनुजअवतार ॥२॥

अथवा क्या आप जगत्के कारणस्वरूप, विश्वके उद्धार करनेवाले, पृथिवीके भारको उतारनेवाले और संपूर्ण लोकोंके स्वामी हैं, जिन्होंने मनुष्यका अवतार लिया है।

कोसलेस दसरथ के जाये ❀ हम पितुबचन मानि बन आये ॥
नाम रामु लछिमनु दोउ भाई ❀ संग नारि सुकुमारि सुहाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हम कोशलदेशके राजा दशरथके पुत्र हैं और अपने पिताकी आज्ञा मानकर वनमें आये हुए हैं। हमारा नाम राम और लक्ष्मण है। हम दोनों भाई हैं। हमारे संगमें सुकुमारी और सुन्दरी स्त्री भी थी।

इहाँ हरी निसिचर बैदेही ❀ बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही ॥
आपन चरित कहा हम गाई ❀ कहहु बिप्र निज कथा बुझाई ॥

यहां सीताजीको किसी राक्षसने हर लिया। हे ब्राह्मण, हम उसीको खोजते फिर रहे हैं। अपना चरित तो हमने कह सुनाया, हे ब्राह्मण, अब अपनी कथा समझाकर कहो।

प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना ❀ सो सुखु उमा जाइ नहिं बरना ॥
पुलकित तनु मुख आव न बचना ❀ देखत रुचिर बेषु कै रचना ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको पहचानकर हनुमानजी चरण पकड़कर पड़ रहे। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, वह सुख वर्णन नहीं किया जा सकता। हनुमानजीका शरीर पुलकित हो गया, उनके मुखसे वचन न निकलता था, श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर वेषकी रचना वे देखते रह गये।

पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही ❁ हरष हृदय निजनाथहिं चीन्ही ॥
मोर न्याउ मैं पूछा साईं ❁ तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं ॥
तव मायाबस फिरउँ भुलाना ❁ ता तें मैं नहिं प्रभु पहिचाना ॥

फिर अपने स्वामीको पहचानकर हृदयमें प्रसन्न होकर हनुमानजीने धीरज रखा और स्तुति की। वे कहने लगे—हे स्वामिन्, मैंने आपसे पूछा, यह मेरे लिये उचित ही है; परन्तु आप मनुष्यकी भांति कैसे पूछते हैं? आपकी मायाके वशमें होकर मैं भूला हुआ फिरता हूं, इसीसे मैंने प्रभुको नहीं पहचाना।

दो०—एकु मंद मैं मोहबस ❁ कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ ❁ दीनबंधु भगवान ॥४॥

एक तो मैं मूर्ख, मोहके वशमें, दुष्टहृदय और अज्ञानी हूं, फिर हे दीनबंधु भगवान्, हे प्रभु, आपने भी मुझे भुला दिया!

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरे ❁ सेवक प्रभुहिं परइ जनि भोरे ॥
नाथ जीव तव माया मोहा ❁ सो निस्तरइ तुम्हारेहि छोहा ॥

हे नाथ, यद्यपि मेरे बहुत अवगुण हैं तथापि स्वामीको अपना सेवक भुला नहीं देना चाहिये। हे नाथ, जीव आपकी मायामें मोहित हो जाता है। वह आपकी कृपासे ही निस्तार भी पाता है।

तापर मैं रघुबीर दोहाई ❁ जानउँ नहिं कछु भजन उपाई ॥
सेवक सुत पति मातु भरोसे ❁ रहइ असोच बनइ प्रभु पोसे ॥

इसपर भी हे श्रीरामचन्द्रजी, मुझे आपकी शपथ है, मैं भजन या उपाय—कुछ भी नहीं जानता हूं। हे प्रभो, सेवक अपने स्वामीके और पुत्र अपनी माताके भरोसे जिस प्रकार निश्चिन्त रहता है और उसे पालते ही बनता है, उसी प्रकार मैं निश्चिन्त हूं और आपको मेरी रक्षा करनी ही पड़ेगी।

अस कहि परेउ चरन अकुलाई ❁ निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई ॥
तब रघुपति उठाइ उर लावा ❁ निज लोचन-जल सींचि जुड़ावा ॥

ऐसा कहकर हनुमानजी व्याकुल होकर चरणोंमें गिर पड़े, उन्होंने अपना शरीर प्रकट कर दिया और उनके हृदयमें प्रेम छा गया। तब श्रीरामचन्द्रजीने उठकर उन्हें हृदयसे लगा लिया और अपने नेत्रोंके जलसे सिंचित कर हनुमानजीको शीतल किया।

सुनु कपि जिय मानसि जनि ऊना ❁ तैं मम प्रिय लछिमन तें दूना ॥
समदरसी मोहि कह सब कोऊ ❁ सेवकप्रिय अनन्यगति सोऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे हनुमान, सुनो। अपने हृदयमें खेद मत करो। तुम मुझे लक्ष्मणजीसे दुगुने प्यारे हो। सब कोई मुझे समदर्शी कहते हैं, परन्तु वह मैं भी अनन्यगति सेवकोंका प्यारा हूं।

दो०—सो अनन्य जाके असि ❀ मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर ❀ रूप स्वामि भगवंत ॥५॥

हे हनुमान, अनन्य वह है जिसकी ऐसी बुद्धि नहीं टलती कि मैं सेवक हूं और चर और अचर-समेत समस्त दिखलायी देनेवाले पदार्थोंके स्वामी भगवान् हैं।

देखि पवनसुत पति अनुकूला ❀ हृदय हरष बीते सब सूला॥
नाथ सैलपर कपिपति रहई ❀ सो सुग्रीव दास तव अहई॥

स्वामीको अनुकूल देखकर पवनपुत्र हनुमानका हृदय आनन्दित हो गया, उनकी सारी चिन्ता दूर हो गयी। वे कहने लगे—हे नाथ, पर्वतपर वानरोंका राजा सुग्रीव रहता है। वह आपका दास है।

तेहि सन नाथ मइत्री कीजै ❀ दीन जानि तेहि अभय करीजै॥
सो सीताकर खोज कराइहि ❀ जहं तहं मरकट कोटि पठाइहि॥

हे नाथ, उससे मैत्री कीजिये और दीन जानकर उसे अभय कर दीजिये। वह जहां-तहां करोड़ों बन्दरोंको भेजेगा और सीताजीकी खोज करावेगा।

एहि विधि सकल कथा समुझाई ❀ लिये दुअउ जन पीठि चढ़ाई॥
जब सुग्रीव राम कहुं देखा ❀ अतिसय जनम धन्य करि लेखा॥

इस प्रकार सब कथा समझाकर हनुमानजीने दोनों ही जनों—श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीको पीठपर चढ़ा लिया। जब सुग्रीवने श्रीरामचन्द्रजीको देखा तब अपने जन्मको अत्यन्त धन्य माना।

सादर मिलेउ नाइ पद माथा ❀ भेंटेउ अनुजसहित रघुनाथा॥
कपि कर मनु विचारु एहि रीती ❀ करिहहिं बिधि मोसन ये प्रीती॥

सुग्रीव आदरके साथ मिले और चरणोंमें मस्तक नवाकर छोटे भाई लक्ष्मणसमेत श्रीरामचंद्रजीसे भेंट की। सुग्रीव अपने मनमें इस प्रकार विचार करने लगे कि हे विधाता, क्या ये मुझसे प्रीति करेंगे?

दो०—तब हनुमंत उभय दिसि ❀ की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि ❀ जोरी प्रीति दृढ़ाइ ॥६॥

तब हनुमानने दोनों ओरकी सब कथा कह सुनायी और अग्निको साक्षी बनाकर दृढ़तासे प्रीति-सम्बन्ध जोड़ दिया।

कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा ❀ लछिमनु रामचरित सब भाखा ॥
कह सुग्रीव नयन भरि बारी ❀ मिलिहि नाथ मिथिलेसकुमारी ॥

श्रीरामचन्द्रजी और सुग्रीवने परस्पर मित्रता कर ली, इसलिये कुछ अन्तर नहीं रखा—लक्ष्मणजीने श्री-रामचन्द्रजीका सब चरित कह दिया। उसे सुनकर नेत्रोंमें जल भरकर सुग्रीव कहने लगे कि हे नाथ, मिथिलाके राजा जनककी पुत्री सीताजी मिल जायंगी।

मंत्रिन्ह सहित इहां एक बारा ❀ बैठ रहेउं मैं करत बिचारा ॥
गगनपंथ देखी मैं जाता ❀ परबस परी बहुत बिलपाता ॥

यहां एक बार मैं मंत्रियोंसमेत बैठा हुआ था और विचार कर रहा था कि इतनेमें आकाश-मार्गसे मैंने उन्हें जाते देखा। पराये वशमें पड़ी हुई वे बहुत विलाप कर रही थीं।

राम राम हा राम पुकारी ❀ हमहिं देखि दीन्हेउ पट डारी ॥
मांगा राम तुरत तेहि दीन्हा ❀ पट उर लाइ सोच अति कीन्हा ॥

हमें देखकर उन्होंने राम! राम! हा राम! पुकारकर कपड़ा गिरा दिया था। यह सुनकर श्रीरामचंद्रजीने उस कपड़ेको मांगा और सुग्रीवने उसे तुरंत ही दिया। उस कपड़ेको हृदयसे लगाकर श्रीरामचन्द्रजीने बड़ा सोच किया।

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा ❀ तजहु सोचु मन आनहु धीरा ॥
सब प्रकार करिहउं सेवकाई ❀ जेहि बिधि मिलिहि जानकी आई ॥

सुग्रीव कहने लगे कि हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। सोचको छोड़िये और मनमें धीरज लाइये। सीताजी जिस प्रकारसे आ मिलेंगी वैसी ही मैं सब प्रकारसे आपकी सेवा करूंगा।

दो०—सखाबचन सुनि हरषे ❀ कृपासिंधु बलसींव।
कारन कवन बसहु बन ❀ मोहि कहहु सुग्रीव ॥७॥

बलकी सीमा, कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी मित्रके वचन सुनकर प्रसन्न हुए और कहने लगे, हे सुग्रीव! मुझसे यह कहो कि तुम वनमें किस कारण बसते हो।

नाथ बालि अरु मैं दोउ भाई ❀ प्रीति रही कछु बरनि न जाई ॥
मयसुत मायावी तेहि नाऊं ❀ आवा सो प्रभु हमरे गाऊं ॥

सुग्रीव कहने लगे—हे नाथ, बालि और मैं—दोनों भाइयोंमें ऐसी प्रीति थी जिसका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता। हे प्रभो, मयासुरके पुत्रका नाम मायावी था, वह हमारे गांवमें आया।

अर्धराति पुरद्वार पुकारा ⊛ बाली रिपुबल सहइ न पारा ॥
धावा बालि देखि सो भागा ⊛ मैं पुनि गयेउँ बंधु संग लागा ॥

आधी रातके समय नगरके द्वारपर उसने ललकार दी। बालि शत्रु के बलको सह न सकता था। बालि उसके पीछे दौड़ा और बालिको दौड़ते देखकर वह भी भागा। फिर मैं भी बालिके साथ दौड़ता चला गया।

गिरि-बर-गुहा पैठ सो जाई ⊛ तब बाली मोहिं कहा बुझाई ॥
परखेसु मोहिं एक पखवारा ⊛ नहिं आवउँ तब जानेसु मारा ॥

वह मायावी एक विशाल पर्वतकी गुहामें जाकर घुस गया। तब बालिने मुझे समझाकर कहा कि एक पक्षतक मेरी प्रतीक्षा करना, यदि न आऊँ तो जान लेना कि मार डाला गया।

मास दिवस तहं रहेउँ खरारी ⊛ निसरी रुधिरधार तहं भारी ॥
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई ⊛ सिला देइ तहं चलेउँ पराई ॥

हे खर नामक दैत्यके शत्रु श्रीरामचन्द्रजी, मैं वहां एक मासतक रहा। फिर वहांसे रक्तकी भारी धारा निकली। यह सोचकर कि वालिको मार डाला, अब आकर वह मुझे भी मारेगा, मैं गुहाके द्वारमें एक पत्थरकी चट्टान लगाकर वहांसे भाग आया।

मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु साईं ⊛ दीन्हेउ मोहि राजु बरिआईं ॥
बाली ताहि मारि गृह आवा ⊛ देखि मोहि जिय भेद बढ़ावा ॥

मंत्रियोंने जब देखा कि नगर स्वामी-शून्य है, तब उन्होंने जबर्दस्ती मुझे राज दे दिया। उधर मायावीको मारकर वालि घर लौटा और मुझे देखकर जीमें भेद बढ़ाने लगा।

रिपुसम मोहि मारेसि अति भारी ⊛ हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी ॥
ताके भय रघुबीर कृपाला ⊛ सकलभुवन मैं फिरेउँ बिहाला ॥

फिर उसने शत्रु के समान मुझे बहुत अधिक मारा और मेरी स्त्री और सर्वस्व छीन लिया। हे कृपाल रघुवीर, उसके डरसे व्याकुल होकर मैं सब लोकोंमें घूमता-फिरा।

इहां सापबस आवत नाहीं ⊛ तदपि सभीत रहउ मन माहीं ॥
सुनि सेवकदुख दीनदयाला ⊛ फरकि उठीं दोउ भुजा बिसाला ॥

यद्यपि शापवश वह यहां नहीं आता है तथापि मनमें डरता रहता हूं। अपने सेवक सुग्रीवका दुःख सुनकर दीनदयालु श्रीरामचन्द्रजीकी दोनों विशाल भुजाएँ फड़क उठीं।

दो०—सुनु सुग्रीवं मारिहउँ ⊛ बालिहि एकहि बान।
ब्रह्म-रुद्र-सरनागत ⊛ गये न उबरिहि प्रान ॥ ८ ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे सुग्रीव, सुनो। वालिको मैं एक ही वाणसे मार डालूंगा। ब्रह्मा और रुद्रकी शरणमें जानेपर भी उसके प्राण न बचेंगे।

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी ❀ तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी ॥
निज-दुख-गिरि-सम रज करि जाना ❀ मित्र क दुख रज मेरुसमाना ॥

जो लोग अपने मित्रके दुःखसे दुःखी नहीं होते, उन्हें देखते ही भारी पाप लगता है। पहाड़के समान अपने दुःखोंको भी धूलके समान समझना और धूलके समान भी मित्रके दुःखोंको पहाड़के समान जानना—

जिन्ह के असि मति सहज न आई ❀ ते सठ कत हठि करत मिताई ॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा ❀ गुन प्रगटइ अवगुनन्हि दुरावा ॥

ऐसी बुद्धि जिनको स्वभावसे ही नहीं आई है वे दुष्ट हठ करके मित्रता क्यों करते हैं? कुमार्गका निवारण कर सन्मार्गमें चलावे, गुणोंको प्रकट करे और अवगुणोंको छिपावे,

देत लेत मन संक न धरई ❀ बल अनुमान सदा हित करई ॥
बिपतिकाल कर सतगुन नेहा ❀ स्रुति कह संत मित्र गुन एहा ॥

देने और लेनेमें मनमें शंका न रखे, अपने बलके अनुसार सदा हित करे, संकटकालमें सौ गुना प्रेम करे—वेद कहते हैं कि श्रेष्ठ मित्रोंके गुण यही हैं।

आगे कह मृदुबचन बनाई ❀ पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥
जा कर चित अहि-गति-सम भाई ❀ अस कुमित्र परिहरेहि भलाई ॥

जो सामने बनावटी मीठी बातें कहता हो और पीछे करता हो बुराई, जिसके मनमें कुटिलता हो और हे भाई, जिसके चित्तकी अवस्था सांपकी गतिके समान वक्र हो, ऐसे दुष्ट मित्रोंको छोड़ देनेमें ही भलाई होती है।

सेवक सठ नृप कृपिन कुनारी ❀ कपटी मित्र सूलसम चारी ॥
सखा सोच त्यागहु बल मोरे ❀ सब बिधि घटब काज मैं तोरे ॥

दुष्ट सेवक, कंजूस राजा, दुष्टा स्त्री और कपटी मित्र—ये चारों शूलके समान हैं। हे मित्र तुम मेरे बलपर सोच त्याग दो। सब प्रकारसे मैं तुम्हारा कार्य पूरा करूंगा।

कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा ❀ बालि महाबल अति-रन-धीरा ॥
दुंदुभिअस्थि ताल देखराये ❀ बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाये ॥

सुग्रीवने कहा कि हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। वालि महाबलवान् और रणमें अत्यन्त धीर है। फिर सुग्रीवने दुन्दुभी नामक दैत्यकी हड्डियां और तालके वृक्ष दिखलाये, जिन्हें श्रीरामचन्द्रजीने परिश्रमके बिना ही ढहा दिया।

देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती ॥ बालि बधब इन्ह भइ परतीती ॥
बार बार नावइ पद सीसा ॥ प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा ॥

श्रीरामचन्द्रजीका असीम बल देखकर सुग्रीवकी प्रीति बढ़ी और उन्हें यह भरोसा हो गया कि ये वालिको मार डालेंगे। सुग्रीव बार-बार चरणोंमें मस्तक झुकाने लगे। कपिराज सुग्रीवके मनमें प्रभु श्रीरामचन्द्रजी-को पहचानकर बड़ा हर्ष हुआ।

उपजा ग्यान बचन तब बोला ॥ नाथ कृपा मन भयउ अलोला ॥
सुख संपति परिवार बड़ाई ॥ सब परिहरि करिहउँ सेवकाई ॥

जब ज्ञान उत्पन्न हुआ तब सुग्रीव ये वचन कहने लगे—हे नाथ, आपकी कृपासे मन स्थिर हो गया। सुख, सम्पत्ति, परिवार और बड़प्पन—सबको छोड़कर मैं आपकी सेवा करूंगा।

ए सब रामभगति के बाधक ॥ कहहिं संत तब पद अवराधक ॥
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं ॥ मायाकृत परमारथ नाहीं ॥

ये सब श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिमें बाधा पहुंचानेवाले हैं—ऐसा आपके चरणोंकी आराधना करनेवाले संतजन कहते हैं। संसारमें शत्रु, मित्र, सुख, दुःख मायाके किये हुए हैं। उनमें परमार्थ नहीं।

बालि परमहित जासु प्रसादा ॥ मिलेहु राम तुम्ह समन बिषादा ॥
सपने जेहि सन होइ लराई ॥ जागे समुझत मन सकुचाई ॥

वालि मेरा परम मित्र है, जिसकी कृपासे, हे श्रीरामचन्द्रजी, विषादको शान्त कर देनेवाले आप मुझे मिल गये और जिसके साथ यदि स्वप्नमें भी लड़ाई हो तो जागनेपर समझकर मनमें संकोच होता है।

अब प्रभु कृपा करहु येहि भांती ॥ सब तजि भजन करउँ दिनु राती ॥
सुनि बिरागसंजुत कपिबानी ॥ बोले बिहँसि रामु धनुपानी ॥

हे प्रभु, अब इस प्रकार कृपा कीजिये कि सब छोड़कर मैं दिन-रात आपका भजन करूं। सुग्रीवकी वैराग्यभरी वाणी सुनकर हाथमें धनुष लिये हुए श्रीरामचन्द्रजी हँसकर बोले—

जो कछु कहेहु सत्य सब सोई ॥ सखा बचन मम मृषा न होई ॥
नट मरकट इव सबहिं नचावत ॥ रामु खगेस बेद अस गावत ॥

मैंने जो कुछ कहा है वह सब सत्य है। हे मित्र, मेरा वचन असत्य नहीं होता। कागभुशुण्डिजी कहते हैं कि हे गरुड़, वेद कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजी सबको ऐसे नचाते हैं जैसे मदारी बंदरको।

लेइ सुग्रीवं संग रघुनाथा ॥ चले चापसायक गहि हाथा ॥
तब रघुपति सुग्रीवं पठावा ॥ गर्जेसि जाइ निकट बलु पावा ॥

सुग्रीवको साथ लेकर श्रीरामचन्द्रजी धनुष और बाण हाथमें लेकर चल दिये। फिर उन्होंने सुग्रीवको भेजा जो श्रीरामचन्द्रजीका बल पाकर निकट जाकर गरजने लगा।

सुनत बालि क्रोधातुर धावा ❀ गहि कर चरन नारि समुझावा ॥
सुनु पति जिन्हहिं मिलेउ सुग्रीवाँ ❀ ते दोउ बंधु तेजबलसीवाँ ॥
कोसलेससुत लछिमनरामा ❀ कालहु जीति सकहिं संग्रामा ॥

सुग्रीवकी गर्जना सुनते ही वालि क्रोधमें भरकर बड़ी शीघ्रतासे दौड़ा। उस समय उसकी स्त्री ताराने हाथोंसे उसके चरण पकड़कर समझाया कि हे स्वामी, सुनिये। सुग्रीव जिनसे मिल गया है वे दोनों भाई तेज और बलकी सीमा हैं। कोशलदेशके राजा दशरथके पुत्र श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी संग्राममें कालको भी जीत सकते हैं।

दो०—कहा बालि सुनु भीरु प्रिय ❀ समदरसी रघुनाथ ।
जौं कदापि मोहि मारिहिं ❀ तौ पुनि होउँ सनाथ ॥९॥

वालिने कहा कि, हे भीरु प्यारी, सुन। श्रीरघुनाथजी समदर्शी हैं। यदि कदाचित् वे मुझे मारेंगे भी तो मैं सनाथ हो जाऊंगा।

अस कहि चला महाअभिमानी ❀ तिनुसमान सुग्रीवहि जानी ॥
भिरे उभौ बाली अति तरजा ❀ मुठिका मारि महाधुनि गरजा ॥

ऐसा कहकर अत्यन्त अभिमानी वालि सुग्रीवको तिनकेके समान जानकर चल दिया। बालि और सुग्रीव दोनों भिड़ गये, वालि बड़े वेगसे डपटा और सुग्रीवको घूसा मारकर बड़े जोरसे गरजा।

तब सुग्रीवं बिकल होइ भागा ❀ मुष्टिप्रहार बज्रसम लागा ॥
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला ❀ बंधु न होइ मोर यह काला ॥

तब सुग्रीव व्याकुल होकर भागा। उसे वालिके उस घूसेकी चोट वज्रके समान लगी। सुग्रीव श्रीरामचन्द्रजीके पास जाकर कहने लगा—हे कृपालु श्रीरामचन्द्रजी, मैंने तो कहा था कि वह मेरा भाई नहीं है, काल है।

एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ ❀ तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ ॥
कर परसा सु-ग्रीवं-सरीरा ❀ तनु भा कुलिस गई सब पीरा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—तुम दोनों भाई एक ही रूपके हो, इसी भ्रमके कारण उसे नहीं मारा। फिर श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवका शरीर अपने हाथसे छू दिया, जिससे उनका शरीर वज्रके समान हो गया और सारी पीड़ा दूर हो गयी।

বালি-সুগ্রীব যুদ্ধ।

বালি-সুগ্রীব যুদ্ধ।

मेली कंठ सुमन कै माला ❀ पठवा पुनि बल देइ बिसाला ॥
पुनि नानाबिधि भई लराई ❀ बिटपओट देखहिं रघुराई ॥

फिर सुग्रीवके कंठमें श्रीरामचन्द्रजीने फूलोंकी माला डाल दी और विशाल बल देकर उन्हें फिर भेजा। वालि और सुग्रीवमें फिर अनेक प्रकारसे युद्ध हुआ—जिसे श्रीरामचन्द्रजी वृक्षके आड़से देख रहे थे।

दो०—बहु छलबल सुग्रीव करि ❀ हिय हारा भय मानि।
मारा बाली राम तब ❀ हृदय मांझ सर तानि ॥१०॥

जब सुग्रीव सारे छल-बल कर चुका और डरकर हृदयमें हार गया, तब श्रीरामचन्द्रजीने बालिके हृदयके बीचमें खींचकर बाण मारा।

परा बिकल महि सर के लागे ❀ पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगे ॥
स्यामगात सिर जटा बनाये ❀ अरुननयन सर चाप चढ़ाये ॥

बाणके लगते ही बालि व्याकुल होकर पृथिवीपर गिर पड़ा और फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सामन देखकर उठकर बैठ गया। श्रीरामचन्द्रजीका सांवला शरीर था, वे शिरपर जटाएँ बनाये हुए थे, उनके लाल नेत्र थे और वे धनुषपर बाण चढ़ाये हुए थे।

पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा ❀ सुफल जनम माना प्रभु चीन्हा ॥
हृदय प्रीति मुख बचन कठोरा ❀ बोला चितइ राम की ओरा ॥

बारंबार देखकर बालिने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको पहचाना और अपना जन्म सुफल माना तथा प्रभुके चरणोंसे चित्त लगाया। फिर श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखकर बालि हृदयमें प्रीति रखते हुए मुखसे कठोर वचन बोला--

धरमहेतु अवतरेहु गोसाईं ❀ मारेहु मोहि ब्याध की नाईं ॥
मैं बैरी सुग्रीव पियारा ❀ अवगुन कवन नाथ मोहिं मारा ॥

हे स्वामी, आपने धर्मके निमित्त अवतार लिया है और मुझे मारा है व्याधके समान। मैं आपका वैरी है और सुग्रीव आपको प्यारा है। हे नाथ, मेरा अपराध क्या है जो आपने मुझे मारा?

अनुजबधू भगिनी सुतनारी ❀ सुनु सठ कन्या सम ए चारी ॥
इन्हहिं कुदिष्टि बिलोकइ जोई ❀ ताहि बधे कछु पाप न होई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—अरे दुष्ट, सुन! छोटे भाईकी स्त्री, बहिन, पुत्रकी स्त्री और कन्या—ये चारों बराबर हैं। इन्हें बुरी दृष्टिसे जो कोई भी देखे, उसे मार डालनेसे कुछ भी पाप नहीं होता।

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना ❀ नारिसिखावन करेसि न काना ॥
मम भुज-बल-आस्रित तेहि जानी ❀ मारा चहसि अधम अभिमानी ॥

रे मूर्ख, तुझे बड़ा भारी घमण्ड था। तूने अपनी स्त्रीकी सीखको अपने कानोंसे सुना ही नहीं! अरे नीच अभिमानी! सुग्रीवको मेरी भुजाओंके बलके आश्रित जानकर भी तूने मारना चाहा था।

दो०—सुनहु राम स्वामी सन ❀ चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पापी ❀ अंतकाल गति तोरि ॥ ११ ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। स्वामीसे मेरी चतुराई नहीं चल सकी! हे प्रभु, मैं अब भी पापी हूं। अन्तकालमें अब मुझे आपकी ही गति है।

सुनत राम अति कोमल बानी ❀ बालिसीस परसेउ निज पानी ॥
अचल करउँ तनु राखहु प्राना ❀ बालि कहा सुनु कृपानिधाना ॥

अत्यन्त कोमल वाणी सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने वालिके शिरको अपने हाथसे स्पर्श किया। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि तुम प्राण रख लो, मैं तुम्हारा शरीर अचल—अमर—कर दूंगा। यह सुनकर वालिने कहा कि हे कृपानिधान, सुनिये।

जनम जनम मुनि जतनु कराहीं ❀ अंत राम कहि आवत नाहीं ॥
जासु नामबल संकर कासी ❀ देत सबहिं समगति अविनासी ॥
मम लोचन गोचर सोइ आवा ❀ बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा ॥

मुनि जन्म जन्ममें यत्न करते हैं; परन्तु अन्त समयमें राम कहते भी नहीं बनता। जिसके नामके बलसे काशीमें शिवजी सभीको कभी नाश न होनेवाली एक समान गति दिया करते हैं, वही भगवान् मेरे नेत्रोंके सम्मुख आ गये। हे प्रभु, ऐसा अवसर क्या फिर बनाये बनता है?

छंद—सो नयनगोचर जासु गुन नित नेति कहि स्रुति गावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं ॥
मोहि जानि अति अभिमान-बस प्रभु कहेहु राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बबूरही ॥

वही प्रभु मेरे नेत्रोंके सम्मुख हो रहे हैं—जिनके गुणोंको वेद नित्य 'नेति' कहकर गाते हैं; पवन और मनको जीतकर तथा इन्द्रियोंको निरस करके मुनि जिन्हें कभी-कभी ध्यानमें पाते हैं; हे प्रभु, आपने मुझे अत्यन्त अभिमानके वशमें जानकर यह कहा है कि तुम शरीरको रख लो, परन्तु ऐसा दुष्ट कौन है कि हठ करके कल्पवृक्षको काटकर बबूलके पेड़में पानी लगावेगा?

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर माँगऊँ।
जेहि जोनि जनमउँ करमबस तहँ रामपद अनुरागऊँ ॥

यह तनय मम सम बिनयबल कल्यानप्रद प्रभु लीजिये।
गहि बाँह सुर-नर-नाह आपन दास अंगद कीजिये॥

हे नाथ, अब दया करके देखिये और जो वरदान मांगूं उसे दीजिये। कर्मके वशमें होकर जिस-जिस योनिमें मैं जन्म लूं वहां श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मेरा प्रेम होवे। यह मेरा पुत्र अंगद है जो विनय और बलमें मेरे ही समान है। हे प्रभु, हे कल्याणकर चरणोंवाले श्रीरामचन्द्रजी, आप इसे लीजिये। हे देवता और मनुष्योंके स्वामी, बांह पकड़कर अङ्गदको आप अपना सेवक कर लीजिये।

दो०—रामचरन दृढ़ प्रीति करि ❀ बालि कीन्ह तनुत्याग।
सुमनमाल जिमि कंठ तें ❀ गिरत न जानइ नाग॥ १२॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ प्रीति करके वालिने शरीर त्याग दिया, जैसे कोई हाथी अपने कंठसे फूलोंकी मालाका गिरना न जान पावे।

राम बालि निज धाम पठावा ❀ नगरलोग सब ब्याकुल धावा॥
नानाविधि बिलाप कर तारा ❀ छूटे केस न देह सँभारा॥

श्रीरामचन्द्रजीने वालिको अपने धाम वैकुण्ठको भेज दिया। नगरके सब लोग व्याकुल होकर दौड़ आये। तारा अनेक प्रकारसे विलाप करने लगी, उसके केश छूट गये, उसे अपने शरीरकी संभाल नहीं रही।

तारा बिकल देखि रघुराया ❀ दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया॥
छिति जल पावक गगन समीरा ❀ पंच रचित अति अधम सरीरा॥

ताराको व्याकुल देखकर श्रीरामचन्द्रजीने अपनी मायाको दूर कर लिया और ज्ञान दिया। वे कहने लगे—पृथिवी, जल, अग्नि, आकाश और वायु—इन पांच तत्वोंसे यह अत्यन्त नीच शरीर बना हुआ है।

प्रगट सो तनु तव आगे सोवा ❀ जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा॥
उपजा ग्यान चरन तब लागी ❀ लीन्हेसि परम भगति बर माँगी॥

वही शरीर तुम्हारे आगे प्रत्यक्ष सोया हुआ है परन्तु इसमें जो जीव था वह नित्य है। तुम किसके लिये रो रही हो? इस प्रकार ताराको जब ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब वह चरणोंसे लपट गयी और परमभक्तिका वरदान मांग लिया।

उमा दारुजोषित की नाईं ❀ सबहि नचावत रामु गोसाईं॥
तब सुग्रीवहिं आयसु दीन्हा ❀ मृतककर्म बिधिवत सब कीन्हा॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, स्वामी श्रीरामचन्द्रजी कठपुतलीकी भांति सबको नचाते हैं। तब श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवको आज्ञा दी और उन्होंने वालिका सब मृतक-संस्कार विधिपूर्वक पूरा किया।

रामु कहा अनुजहिं समुझाई ❀ राजु देहु सुग्रीवहि जाई ॥
रघुपति-चरन नाइ करि माथा ❀ चले सकल प्रेरित रघुनाथा ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको समझाकर कहा कि जाकर सुग्रीवको राज दो। रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी प्रेरणासे सब लोग उनके चरणोंको मस्तक नवाकर चले।

दो०—लछिमन तुरत बोलाये ❀ पुरजन बिप्रसमाज।
राजु दीन्ह सुग्रीवं कहुँ ❀ अंगद कहुँ जुवराज ॥ १३ ॥

नगरके लोगों और ब्राह्मण-समाजको तुरंत बुलाकर लक्ष्मणजीने सुग्रीवको राजगद्दी दे दी और अंगदको युवराज बना दिया।

उमा रामसम हित जग माहीं ❀ गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं ॥
सुर नर मुनि सब कै यह रीती ❀ स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, संसारमें श्रीरामचन्द्रजीके समान हितकारी गुरु, माता, पिता, भाई और स्वामी, कोई नहीं है। देवता, मनुष्य और मुनि, सबकी यह रीति है कि वे सब स्वार्थके लिये ही प्रीति करते हैं।

बालि-त्रास-ब्याकुल दिन राती ❀ तनु बहु ब्रन चिन्ता जर छाती ॥
सोइ सुग्रीवं कीन्ह कपिराऊ ❀ अति कृपाल रघुबीर सुभाऊ ॥

बालिके डरसे जो दिन-रात व्याकुल रहता था, जिसके शरीरमें बहुतसे घाव हो गये थे और चिन्तासे जिसकी छाती जलती रहती थी, उसी सुग्रीवको वानरोंका राजा बना दिया। श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव अत्यन्त कृपालु है।

जानतहू अस प्रभु परिहरहीं ❀ काहे न बिपतिजाल नर परहीं ॥
पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोलाई ❀ बहु प्रकार नृपनीति सिखाई ॥

जानते हुए भी ऐसे प्रभुको जो मनुष्य छोड़ देते हैं वे विपत्तिके जालमें क्यों नहीं पड़ें? फिर श्रीरामचन्द्रजीने सुग्रीवको बुला लिया और बहुत प्रकारसे राजनीतिका उपदेश दिया।

कह प्रभु सुनु सुग्रीवं हरीसा ❀ पुर न जाउँ दस चारि बरीसा ॥
गत ग्रीषम बरषा रितु आई ❀ रहिहउँ निकट सैल पर छाई ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे वानरराज सुग्रीव, सुनो। मैं १४ वर्षतक किसी भी नगरमें नहीं जाऊँगा। ग्रीष्मऋतु व्यतीत हुई और अब वर्षाऋतु आ गयी। मैं समीप ही पर्वतपर कुटी छाकर रहूँगा।

अंगदसहित करहु तुम्ह राजू ❀ संतत हृदय धरेहु मम काजू ॥
जब सुग्रीव भवन फिरि आये ❀ राम प्रवरषन गिरि पर छाये ॥

अंगद-समेत तुम राज्य करो और हृदयमें सदैव मेरे कार्यका स्मरण रखो। जब सुग्रीव अपने भवनको लौट आये तब श्रीरामचन्द्रजी प्रवर्षण पर्वतपर जाकर रहने लगे।

दो०—प्रथमहिं देवन्ह गिरि गुहा ❀ राखी रुचिर बनाइ।
राम कृपानिधि कछुक दिन ❀ बास करहिंगे आइ ॥ १४ ॥

देवताओंने वहां पहिलेसे ही पर्वतकी एक गुफाको इसलिये सुन्दर बनाकर रख छोड़ा था कि कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी आकर उसमें कुछ दिनों निवास करेंगे।

सुंदर बन कुसुमित अतिसोभा ❀ गुंजत मधुपनिकर मधुलोभा ॥
कंद मूल फल पत्र सुहाये ❀ भये बहुत जब तें प्रभु आये ॥

वहां सुन्दर वन फूला हुआ था, जिसकी शोभा बहुत अधिक थी। मधुके लोभसे भौंरोंके झुण्ड गूंज रहे थे। जबसे प्रभु श्रीरामचन्द्रजी वहां आये तबसे सुहावने कंद, मूल, फल और पत्ते बहुत होने लगे।

देखि मनोहर सैल अनूपा ❀ रहे तहं अनुज सहित सुरभूपा ॥
मधुकर-खग-मृग-तनु धरि देवा ❀ करहिं सिद्ध मुनि प्रभु की सेवा ॥

उस मनोहर पर्वतको अनुपम देखकर देवताओंके राजा श्रीरामचन्द्रजी वहां छोटे भाई लक्ष्मणसमेत रहने लगे। देवता, सिद्ध और मुनि भौंरों, पक्षियों और हिरणोंका शरीर रखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करने लगे।

मंगलरूप भयउ बन तब तें ❀ कीन्ह निवास रमापति जब तें ॥
फटिकसिला अति सुभ्र सुहाई ❀ सुख आसीन तहां दोउ भाई ॥

जबसे लक्ष्मीपति श्रीरामचन्द्रजीने वहां निवास किया तबसे वह वन मंगलरूप हो गया। स्फटिक पत्थरकी एक अत्यन्त सफेद सुहावनी चट्टान थी। उसपर दोनों भाई सुखसे बैठ गये।

कहत अनुज सन कथा अनेका ❀ भगति बिरति नृप नीति बिबेका ॥
बरषाकाल मेघ नभ छाये ❀ गरजत लागत परम सुहाये ॥

श्रीरामचन्द्रजी अपने छोटे भाई लक्ष्मणजीसे भक्ति, वैराग्य, राजनीति और विवेकसे पूर्ण अनेक कथाएँ कहने लगे। श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—वर्षाऋतु है। आकाशमें बादल छाये हुए हैं, जो गरजते हुए अत्यन्त सुहावने लगते हैं।

दो०—लछिमन देखु मोरगन ❀ नाचत बारिद पेखि।
गृही बिरतिरत हरष जस ❀ बिस्नु भगत कहुं देखि ॥ १५ ॥

हे लक्ष्मण देखो तो, मेघको देखकर मोरोंके झुण्ड नाच रहे हैं; जैसे वैराग्यमें निरत कोई गृहस्थ भगवान विष्णुके भक्तको देखकर प्रसन्न हो।

घन घमंड नभ गरजत घोरा ❀ प्रियाहीन डरपत मन मोरा ॥
दामिनि दमकि रह न घन माहीं ❀ खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं ॥

आकाशमें घुमड़-घुमड़कर बादल घोर गर्जना कर रहे हैं। प्रिया सीताके बिना मेरा मन डर रहा है। बिजली चमकती है, परन्तु बादलोंमें ठहरती नहीं; जैसे दुष्टकी प्रीति स्थिर नहीं होती।

बरसहिं जलद भूमि नियराये ❀ जथा नवहिं बुध बिद्या पाये ॥
बुंद अघात सहहिं गिरि कैसे ❀ खलके बचन संत सह जैसे ॥

पृथिवीके समीप पहुंचकर बादल बरसते हैं, जैसे विद्या पाकर पण्डितजन नम्र हो जाते हैं। बून्दोंके आघातको पर्वत कैसे सहते हैं जैसे दुष्टके वचनोंको संतजन।

छुद्र नदी भरि चली तोराई ❀ जस थोरेहु धन खल इतराई ॥
भूमि परत भा ढाबर पानी ❀ जनु जीवहि माया लपटानी ॥

छोटी-छोटी नदियां उमड़-उमड़कर बड़े वेगसे बहने लगीं; जैसे थोड़े ही धनके पा जानेसे दुष्ट अभिमान करने लग जाते हैं। पृथिवीपर गिरते ही पानी मटमैला हो गया, मानों जीवसे माया लिपट गयी हो।

समिटि समिटि जल भरहि तलावा ❀ जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा ॥
सरिताजल जलनिधि महुं जाई ❀ होहि अचल जिमि जिव हरि पाई ॥

चारों ओरसे समिट समिटकर पानी तालाबको भर रहा है; जैसे अच्छे-अच्छे गुण सज्जनोंके पास आ जाते हैं। नदीका जल समुद्रमें जाकर अचल हो जाता है; जैसे भगवानको पाकर जीव।

दो०—हरित भूमि तिनसंकुल ❀ समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें ❀ गुप्त होहिं सदग्रंथ ॥१६॥

घाससे भरी हुई पृथिवी हरी हो गयी है, जिससे मार्ग नहीं समझ पड़ता; जैसे पाखण्डवादसे अच्छे ग्रन्थोंका लोप हो जाता है।

दादुर धुनि चहु दिसा सुहाई ❀ बेद पढ़हिं जनु बटुसमुदाई ॥
नव पल्लव भये बिटपु अनेका ❀ साधक मन जस मिले बिबेका ॥

चारों दिशाओंमें मेढ़कोंकी टरटर ऐसी शोभित हो रही है, मानों ब्रह्मचारियोंका समूह वेद पढ़ रहा हो। अनेक वृक्षोंमें नये-नये पत्ते निकल आये, जैसे साधना करनेवालेके मनको विवेक मिल गया हो।

अर्क जवास पात बिनु भयऊ * जस सुराजु खल उद्यम गयऊ ॥
खोजत कतहुं मिलइ नहिं धूरी * करइ क्रोध जिमि धर्महि दूरी ॥

आक और जवासा पत्तोंके विना हो गये; जैसे अच्छे राज्यमें दुष्टोंका व्यापार उठ जाय। खोजनेपर भी कहीं धूल नहीं मिलती; जैसे क्रोध धर्मको दूर कर देता है।

ससिसंपन्न सोह महि कैसी * उपकारी कै संपति जैसी ॥
निसि तम घन खद्योत बिराजा * जनु दंभिन कर मिला समाजा ॥

धान्योंसे भरी हुई पृथिवी कैसे शोभा पा रही है, जैसे किसी परोपकारी मनुष्यको सम्पत्ति। रात्रिके अन्धकारमें बहुतसे पटवीजने चमक रहे हैं; मानों दम्भियोंका समाज इकट्ठा हुआ हो।

महावृष्टि चलि फूटि कियारी * जिमि स्वतंत्र भये बिगरहिं नारी ॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना * जिमि बुध तजहिं मोह मद माना ॥

अत्यन्त वृष्टि होनेसे क्यारियां फूट निकलीं; जैसे स्वतन्त्र हो जानेसे स्त्रियां बिगड़ जाती हैं। चतुर किसान खेतीको निराते हैं; जैसे पण्डितजन मोह, मद और अभिमानको त्याग देते हैं।

देखियत चक्रबाक खग नाहीं * कलिहि पाइ जिमि धर्म पराहीं ॥
ऊसर बरषइ तिनु नहिं जामा * जिमि हरि-जन-हिय उपज न कामा ॥

चकवा-चकवी और पक्षी देखनेमें नहीं आते; जैसे कलियुगको पाकर धर्म भाग जाते हैं। ऊसरमें जल बरसता है परन्तु घास नहीं जमती; जैसे भगवानके भक्तोंके हृदयमें काम नहीं उत्पन्न होता।

बिबिध जंतुसंकुल महि भ्राजा * प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा ॥
जहं तहं रहे पथिक थकि नाना * जिमि इंद्रियगन उपजे ग्याना ॥

अनेक प्रकारके जन्तुओंसे भरी हुई पृथिवी शोभित हो रही है; जैसे अच्छे राजाको पाकर प्रजा बढ़ती है। जहां-तहां बहुतसे बटोही थककर ठहरे हुए हैं; जैसे ज्ञान उत्पन्न हो जानेपर इंद्रियां स्थिर हो जाती हैं।

दो०—कबहुं प्रबल बह मारुत * जहं तहं मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजे * कुल सद्धर्म नसाहिं ॥१७॥

कभी जब प्रबल हवा चलने लगती है, जहां-तहां मेघ लुप्त हो जाते हैं; जैसे कपूतके उत्पन्न होनेपर कुलसे सद्धर्मोंका नाश हो जाता है।

कबहुं दिवस महुं निबिड़तम * कबहुंक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि * पाइ कुसंग सुसंग ॥१८॥

दिनमें कभी घना अन्धकार हो जाता है और कभी सूर्य दिखलायी दे जाता है; जैसे कुसंग और सत्संग-को पाकर ज्ञान क्रमशः नष्ट और उत्पन्न हुआ करता है।

बरषा बिगत सरद रितु आई ❀ लछिमन देखहु परम सुहाई ॥
फूलें कास सकल महि छाई ❀ जनु बरषाकृत प्रगट बुढ़ाई ॥

शरदऋतु आनेपर श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—वर्षाऋतु बीत गयी। हे लक्ष्मण, देखो, अत्यन्त सुहावनी शरदऋतु आ गयी। फूले हुए कासोंसे सारी पृथिवी छा गयी; मानों वर्षाऋतुका बुढ़ापा प्रकट हो गया हो।

उदित अगस्त पंथजल सोखा ❀ जिमि लोभहि सोखइ संतोषा ॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा ❀ संतहृदय जस गत-मद-मोहा ॥

अगस्त्य तारा उदय हो गया और उसने मार्गका जल सुखा दिया; जैसे संतोष लोभको सुखा देता है। नदियों और सरोवरोंमें निर्मल जल शोभित हो रहा है; जैसे मद और मोहविहीन संतजनोंका हृदय।

रस रस सूख सरित-सर-पानी ❀ ममतात्याग करहिं जिमि ग्यानी ॥
जानि सरद रितु खंजन आये ❀ पाइ समय जिमि सुकृत सुहाये ॥

नदियों और तालावोंका पानी धीरे-धीरे सूखने लगा; जैसे ज्ञानी मनुष्य धीरे-धीरे ममताका त्याग किया करते हैं। शरदऋतुको पहचानकर खंजन पक्षी आ गये; जैसे समय पाकर सुहावने सत्कर्म।

पंक न रेनु सोह असि धरनी ❀ नीति-निपुन-नृप कै जसि करनी ॥
जलसंकोच बिकल भइ मीना ❀ अबुध कुटुम्बी जिमि धनहीना ॥

कीचड़ और धूल-रहित पृथिवी ऐसी शोभा पा रही है; जैसे नीति-निपुण राजाके कार्य। जलके कम हो जानेपर मछलियां व्याकुल हो गयीं; जैसे धनहीन होनेसे मूर्ख कुटुम्बीजन।

बिनु घन निर्मल सोह अकासा ❀ हरिजन इव परिहरि सब आसा ॥
कहुं कहुं बृष्टि सारदी थोरी ❀ कोउ एक पाव भगति जसि मोरी ॥

बिना बादलोंका निर्मल आकाश ऐसा शोभित हो रहा है; जैसे सब आशाएँ छोड़कर भगवानके भक्त शोभित होते हैं। शरदऋतुमें भी कहीं-कहीं थोड़ी वृष्टि हो जाती है; जैसे मेरी भक्तिको कोई-कोई ही पाता है।

दो०—चले हरषि तजि नगर नृप ❀ तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगति पाइ स्रम ❀ तजहिं आस्रमी चारि ॥१६॥

प्रसन्न होकर राजा, तपस्वी, वैश्य और भिक्षुक नगर छोड़कर चल दिए; जैसे भगवानकी भक्ति पाकर चारों आश्रमोंके लोग श्रम करना छोड़ देते हैं।

सुखी मीन जे नीर अगाधा ❀ जिमि हरिसरन न एकउ बाधा ॥
फूले कमल सोह सर कैसा ❀ निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसा ॥

वे मछलियां सुखी हैं जो अगाध जलमें हैं; जैसे भगवान्‌की शरणमें एक भी बाधा नहीं सताती। फूले हुए कमलोंसे सरोवर कैसा शोभित रहा है; जैसे निर्गुण ब्रह्म सगुण हो जानेपर शोभित होता है।

गुंजत मधुकर मुखर अनूपा ❀ सुन्दर खगरव नानारूपा ॥
चक्रवाकमन दुख निसि पेखी ❀ जिमि दुरजन परसंपति देखी ॥

खूब बोलने वाले अनुपम भौंरे गुंजार कर रहे हैं और तरह तरहके रूपवाले सुन्दर पक्षी गणोंका शब्द हो रहा है। रात देख कर चकवेके मनको दुःख होता है, जैसे पराई सम्पति को देखकर दुष्ट मनुष्यको।

चातक रटत तृषा अति ओही ❀ जिमि सुख लहइ न संकरद्रोही ॥
सरदातप निसि ससि अपहरई ❀ संतदरस जिमि पातकु टरई ॥

पपीहा रट लगा रहा है और उसे बड़ी प्यास है; जैसे शिवजीका द्रोही सुख नहीं पाता। चद्रमा रात्रिमें शरदऋतुके तापको मिटा देता है; जैसे सन्तजनोंके दर्शनसे पातक दूर होता है।

देखि इंदु चकोर समुदाई ❀ चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ॥
मसकदंस बीते हिम त्रासा ❀ जिमि द्विज द्रोह किये कुलनासा ॥

चद्रमाको देखकर चकोरोंका समूह उसकी ओर देख रहा है; जैसे भगवान्‌के भक्त भगवान्‌को पाकर। शीतके डरसे मच्छर और डांस नष्ट हो गये, जैसे ब्राह्मणोंसे द्रोह करनेसे कुलका नाश हो जाता है।

दो०—भूमि जीव संकुल रहे ❀ गये सरद रितु पाइ।
सदगुरु मिले जाहिं जिमि ❀ संसय-भ्रम-समुदाइ ॥२०॥

पृथिवीमें जो जीव जन्तु भरे हुए थे वे शरदऋतुको पाकर चले गये; जैसे सद्गुरुके मिल जानेपर संशय और भ्रमका समूह दूर हो जाता है।

बरषा गत निर्मल रितु आई ❀ सुधि न तात सीता कै पाई ॥
एकबार कैसेहुं सुधि जानउं ❀ कालहु जीति निमिष महुं आनउं ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि वर्षा व्यतीत हो गयी और निर्मल शरद ऋतु आ गयी; परन्तु हे तात, सीताकी सुध नहीं मिली। एक बार यदि किसी प्रकार सुध पा जाऊं, तो काल को भी जीत कर पलभरमें सीताको ले आऊं।

कतहुं रहउ जौं जीवत होई ❀ तात जतनु करि आनउं सोई ॥
सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी ❀ पावा राज कोस पुर नारी ॥

हे तात, कहीं भी हो, यदि जीती होगी तो यत्न करके मैं उसे लाऊंगा। सुग्रीवने भी राज्य, खजाना, नगर और स्त्रीको पाकर मेरी याद भुला दी।

जेहि सायक मारा मैं बाली ❀ तेहि सर हतउं मूढ़ कहुं काली ॥
जासु कृपा छूटहिं मद मोहा ❀ ताकहुं उमा कि सपनेहु कोहा ॥

जिस बाणसे मैंने बालिको मारा था, कल उसी बाणसे मैं मूर्ख सुग्रीवको भी मार डालूँगा। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, जिसकी कृपासे मद और मोह छूट जाते हैं, उसे क्या स्वप्नमें भी क्रोध हो सकता है?

जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी ❀ जिन्ह रघुबीर-चरन-रति मानी ॥
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना ❀ धनुष चढ़ाइ गहे कर बाना ॥

इस चरित्रको ज्ञानी मुनिजन जानते हैं जिन्होंने श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम किया है। लक्ष्मणजीने जब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको क्रोधित जाना, तब उन्होंने धनुष चढ़ाकर हाथमें बाणोंको ले लिया।

दो०—तब अनुजहिं समुझावा ❀ रघुपति करुनासींव।
भय देखाइ लेइ आवहु ❀ तात सखा सुग्रीव ॥२१॥

तब दयाके मर्यादा श्रीरामचन्द्रजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको समझाया और कहा कि हे तात, सुग्रीव अपना मित्र है। उसे डर दिखलाकर ले आओ।

इहाँ पवनसुत हृदय बिचारा ❀ रामकाजु सुग्रीवं बिसारा ॥
निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा ❀ चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा ॥

इधर पवनपुत्र हनुमानजीने अपने हृदयमें विचार किया कि सुग्रीवने श्रीरामचन्द्रजीका कार्य भुला दिया है। फिर पास जाकर हनुमानजीने चरणोंमें शिर नवाया और साम, दाम, भेद और दण्ड—चारों प्रकारसे कहकर सुग्रीवको समझाया।

सुनि सुग्रीव परम भय माना ❀ बिषय मोर हरि लीन्हेउ ग्याना ॥
अब मारुतसुत दूतसमूहा ❀ पठवहु जहं तहं बानरजूहा ॥

सुनकर सुग्रीव बड़े भयभीत हुए और सोचने लगा कि विषयोंने मेरा ज्ञान हरण कर लिया। फिर हनुमानजीसे उन्होंने कहा कि हे पवनपुत्र, अब तुम बन्दरोंके झुण्डोंके दूत बनाकर जहां-तहाँ पठाओ।

कहेहु पाख महुं आव न जोई ❀ मोरे कर ताकर बध होई ॥
तब हनुमंत बोलाये दूता ❀ सब कर करि सनमान बहूता ॥

कहना कि एक पक्षमें जो कोई भी लौटकर न आयगा, वह मेरे हाथों मारा जायगा। तब हनुमानजीने दूतोंको बुलाया और सबका बहुत सम्मान करके—

भय अरु प्रीति नीति देखराई ❀ चले सकल चरनन्हि सिरु नाई ॥
एहि अवसर लछिमनु पुर आये ❀ क्रोध देखि जहं तहं कपि धाये ॥

उन्हें भय, प्रीति और नीति दिखलायी और वे सब चरणोंमें शिर नवाकर चल दिये। इसी समय लक्ष्मणजी नगरमें आये। लक्ष्मणजीका क्रोध देखकर बंदर जहां-तहां भाग गये।

दो०—धनुष चढ़ाइ कहा तब ❀ जारि करउं पुर छार।
ब्याकुल नगर देखि तब ❀ आयेउ बालिकुमार ॥२२॥

तब लक्ष्मणजीने धनुष चढ़ाकर कहा कि मैं नगरको जलाकर भस्म कर डालूंगा। फिर नगरको व्याकुल देखकर वालि-पुत्र अंगद वहां आये।

चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही ❀ लछिमनु अभयबांह तेहि दीन्ही ॥
क्रोधवंत लछिमन सुनि काना ❀ कह कपीस अति भय अकुलाना ॥

चरणोंमें शिर नवाकर अंगदने विनती की और लक्ष्मणजीने उसपर अभय हस्त रखा। कपिराज सुग्रीव कानोंसे यह सुनकर कि लक्ष्मणजी क्रोधित हैं, अत्यन्त भयसे व्याकुल होकर कहने लगे—

सुनु हनुमंत संग लेइ तारा ❀ करि बिनती समुझाउ कुमारा ॥
तारासहित जाइ हनुमाना ❀ चरन बंदि प्रभु सुजसु बखाना ॥

हे हनुमान, सुनो। ताराको संग लेकर जाओ और विनती करके कुमार (ब्रह्मचारी) लक्ष्मणजीको समझाओ। तब हनुमानजीने तारासमेत जाकर चरणोंकी वंदना की और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका सुयश वर्णन किया।

करि बिनती मंदिर लेइ आये ❀ चरन पखारि पलंग बैठाये ॥
तब कपीस चरनन्हि सिरु नावा ❀ गहि भुज लछिमन कंठ लगावा ॥

फिर विनती करके वे लक्ष्मणजीको राजभवनमें ले आये और चरणोंको धोकर पलंगपर बिठलाया। तब कपिराज सुग्रीवने लक्ष्मणजीके चरणोंको शिर नवाया। लक्ष्मणजीने भुजाएं पकड़कर सुग्रीवको अपने गले लगाया।

नाथ बिषयसम मद कछु नाहीं ❀ मुनिमन मोह करइ छन माहीं ॥
सुनत बिनीत बचन सुख पावा ❀ लछिमनु तेहि बहुबिधि समुझावा ॥
पवनतनय सब कथा सुनाई ❀ जेहि बिधि गये दूत समुदाई ॥

सुग्रीवने कहा—हे नाथ, विषयके बराबर और कोई मद नहीं है। एक क्षणमें यह मुनियोंके मनमें भी

मोह उत्पन्न कर देता है। सुग्रीवके विनीत वचन सुनकर लक्ष्मणजीने सुख पाया और उन्हें बहुत तरहसे समझाया। फिर पवनपुत्र हनुमानजीने जिस प्रकार दूतोंके समूह गये थे, वह सब कथा कह सुनायी।

दो०—हरषि चले सुग्रीव तब ❀ अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगे करि ❀ आये जहँ रघुनाथ ॥२३॥

अंगद आदि बंदरोंके साथ तब सुग्रीव प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीको आगे करके चल दिये और वहां आये जहां श्रीरघुनाथजी थे।

नाइ चरन सिरु कह करजोरी ❀ नाथ मोहि कछु नाहिं न खोरी ॥
अतिसय प्रबल देव तव माया ❀ छूटइ राम करहु जौं दाया ॥

चरणोंमें शिर नवाकर सुग्रीव हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे नाथ, मेरा कुछ दोष नहीं है। हे देव, आपकी माया अत्यन्त प्रबल है। हे श्रीरामचन्द्रजी, जब आप दया करते हैं तब वह छूटती है।

बिषयबस्य सुर नर मुनि स्वामी ❀ मैं पामर पसु कपि अति कामी ॥
नारि-नयन-सर जाहि न लागा ❀ घोर-क्रोध-तम-निसि जो जागा ॥

हे स्वामिन्, देवता, मनुष्य और मुनि—सब विषयोंके वशमें हैं, फिर मैं तो अत्यन्त कामी नीच पशु बंदर हूं। स्त्रीके नयन-बाण उसे ही नहीं लगे, जो घोर क्रोधरूपी अन्धेरी रातमें जागता रहा।

लोभपास जेहि गर न बंधाया ❀ सो नर तुम्ह समान रघुराया ॥
यह गुन साधन तें नहिं होई ❀ तुम्हरी कृपा पाव कोइ कोई ॥

जिसने लोभरूपी फांसमें अपना गला नहीं फंसाया, हे श्रीरामचन्द्रजी, वह मनुष्य आपके समान है। यह गुण साधनसे नहीं होता। आपकी कृपासे कोई-कोई ही इसे पाता है।

तब रघुपति बोले मुसुकाई ❀ तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई ॥
अब सोइ जतनु करहु मन लाई ❀ जेहि बिधि सीता कै सुधि पाई ॥

तब श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराकर बोले कि तुम मुझे भाई भरतके समान प्यारे हो। अब मन लगाकर वही उपाय करो जिससे सीताकी सुध मिले।

दो०—एहि बिधि होत बतकही ❀ आये बानरजूथ।
नाना बरन सकल दिसि ❀ देखिय कीसबरूथ ॥२४॥

इस प्रकार बातचीत हो ही रही थी कि इतनेमें बंदरोंके झुण्ड आ गये। सब दिशाओंमें अनेक रंगोंके बंदरोंके झुण्ड दिखलायी पड़ने लगे।

वानर कटक उमा मैं देखा ❀ सो मूरख जो करन चह लेखा ॥
आइ रामपद नावहिं माथा ❀ निरखि वदनु सब होहिं सनाथा ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, बंदरोंकी उस सेनाको मैंने देखा था। जो कोई उसकी गिनती करना चाहता हो वह मूर्ख है। वे आकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मस्तक नवाते हैं और मुख देखकर सब सनाथ हो जाते हैं।

अस कपि एक न सेना माहीं ❀ राम कुसल जेहि पूछी नाहीं ॥
यह कछु नहिं प्रभु कै अधिकाई ❀ बिस्वरूप ब्यापक रघुराई ॥

सेनामें ऐसा एक भी बंदर न था जिससे श्रीरामचन्द्रजीने कुशल न पूछी हो। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके लिये यह कुछ बड़ी बात नहीं है; क्योंकि वे व्यापक हैं, रघुराज हैं और विश्वरूप हैं।

ठाढ़ जहँ तहँ आयसु पाई ❀ कह सुग्रीव सबहिं समुझाई ॥
रामकाजु अरु मोर निहोरा ❀ वानरजूथ जाहु चहुँ ओरा ॥

आज्ञा पाकर जहां-तहां सब बंदर खड़े हो गये। फिर सुग्रीवने सबको समझाकर कहा—हे वानरगण, यह श्रीरामचन्द्रजीका कार्य है और मेरी विनती है कि तुम सब चारों ओर जाओ।

जनकसुता कहँ खोजहु जाई ❀ मासदिवस महँ आयेहु भाई ॥
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाये ❀ आवइ बनिहि सो मोहि मराये ॥

हे भाई, जाकर जानकीजीकी खोज करो। एक मासमें लौट आना। अवधि बिताकर बिना सुध पाये हुए जो लौटकर आवेगा उसको मुझे मरवा डालना होगा।

दो०—वचन सुनत सब वानर ❀ जहँ तहँ चले तुरंत।
तब सुग्रीवँ बोलाये ❀ अंगद नल हनुमंत ॥२५॥

वचन सुनते ही सब बंदर तुरन्त जहां-तहां चल दिये। तब सुग्रीवने अङ्गद, नल और हनुमानको बुलाया।

सुनहु नील अंगद हनुमाना ❀ जामवंत मतिधीर सुजाना ॥
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू ❀ सीतासुधि पूछेहु सब काहू ॥

हे धीर बुद्धिवाले सुजान नील, अङ्गद, हनुमान और सुजान जाम्बवान् सुनो। सब योद्धा मिलकर दक्षिण दिशामें जाओ और सब किसीसे सीताजीकी सुध पूछो।

मन क्रम वचन सो जतन विचारेहु ❀ रामचंद्र कर काजु संवारेहु ॥
भानुपीठि सेइय उर आगी ❀ स्वामिहि सर्वभाव छलु त्यागी ॥

मन, वाणी और कर्मसे श्रीरामचन्द्रजीका कार्य संभालना और वैसा ही यत्न विचारना। सूर्यका पीठसे, अग्निका हृदयसे और स्वामीका छल छोड़कर सर्वभावसे सेवन करना चाहिए।

तजि माया सेइय परलोका ❀ मिटहिं सकल भवसंभव सोका ॥
देह धरे कर यह फलु भाई ❀ भजिय राम सब काम बिहाई ॥

माया छोड़कर परलोकका सेवन करना चाहिये, जिससे संसारसे उत्पन्न होनेवाले सब शोक मिट जावें। हे भाई, देह रखनेका यही फल है कि सब काम छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करे।

सोइ गुनग्य सोई बड़भागी ❀ जो रघुबीर - चरन - अनुरागी ॥
आयसु मांगि चरन सिरु नाई ❀ चले हरषि सुमिरत रघुराई ॥

जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेमी है वही गुणोंको जाननेवाला है और वही बड़भागी है। फिर वे सब आज्ञा मांगकर और चरणोंमें शिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करते हुए प्रसन्न होकर चल दिये।

पाछे पवनतनय सिरु नावा ❀ जानि काजु प्रभु निकट बोलावा ॥
परसा सीस सरोरुहपानी ❀ करमुद्रिका दीन्हि जन जानी ॥

सबसे पीछे पवनपुत्र हनुमानजीने जब शिर नवाया तब कार्य जानकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें पास बुलाया और करकमलसे उनके शिरको स्पर्श किया और अपना भक्त जानकर हाथकी अंगूठी उनको दी।

बहुप्रकार सीतहिं समुझायेहु ❀ कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आयेहु ॥
हनुमत जनम सुफल करि माना ❀ चलेउ हृदय धरि कृपानिधाना ॥
जद्यपि प्रभु जानत सब बाता ❀ राजनीति राखत सुरत्राता ॥

श्रीरामचन्द्रजीने हनुमानजीसे कहा—सीताको बहुत प्रकारसे समझाना और हमारे बल और वियोगकी बात कहकर तुम शीघ्रतासे लौट आना। यह सुनकर हनुमानजीने अपना जन्म सुफल समझा और कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धारणकर चल दिये। देवताओंकी रक्षा करनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजी यद्यपि सब बात जानते हैं तथापि राजनीतिकी मर्यादाका पालन करते हैं।

दो०—चले सकल बन खोजत ❀ सरिता सर गिरि खोह।
राम - काज - लयलीन मन ❀ बिसरा तन कर छोह ॥२६॥

वन, पर्वत, कंदरा, तालाव, नदी—सबको खोजते हुए वे चल दिये। उनका मन श्रीरामचन्द्रजीके कार्यमें लवलीन था। उन्हें अपने शरीरका मोह भूल गया।

कतहुं होइ निसिचर सों भेंटा ❀ प्रान लेहिं एक एक चपेटा ॥
बहुप्रकार गिरि कानन हेरहिं ❀ कोउ मुनि मिलइ ताहि सब घेरहिं ॥

यद कहीं कोई राक्षस मिल जाता था तो एक-एक चपेटेसे वे सब उसके प्राण ले लेते थे। पर्वतों और वनोंको वे बहुत तरहसे देखते थे और यदि कोई मुनि मिल जाता, तो उसे सब घेर लेते थे।

लागि तृषा अतिसय अकुलाने ❀ मिलइ न जल घन गहन भुलाने ॥
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना ❀ मरन चहत सब बिनु जलपाना ॥

एक समय सब बन्दरोंको प्यास लगी जिससे वे अत्यन्त व्याकुल हुए। उन्हें जल न मिलता था और वे अत्यन्त सघन जंगलमें भूले हुए फिरते थे। हनुमानजीने मनमें अनुमान किया कि पानी पिये बिना सब मरना चाहते हैं।

चढ़ि गिरिसिखर चहूं दिसि देखा ❀ भूमिबिबर एक कौतुक पेखा ॥
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं ❀ बहुतेक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं ॥

फिर पर्वतकी चोटीपर चढ़कर जब उन्होंने चारों ओर देखा तब पृथिवीके एक छिद्रमें उन्हें एक कौतुक दिखलायी पड़ा। चकवे, बगले और हंस उड़ रहे थे और बहुतेरे पक्षी उसमें प्रवेश करते थे।

गिरि तें उतरि पवनसुत आवा ❀ सब कहुं लेइ सोइ बिबर देखावा ॥
आगे करि हनुमंतहिं लीन्हा ❀ पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा ॥

पवन-पुत्र हनुमानजी पहाड़से उतरकर आये और फिर सबको ले जाकर वह छिद्र दिखलाया। सबने हनुमानजीको आगे कर लिया और बिना विलंब किये छिद्रमें पैठ गये।

दो०—दीख जाइ उपबन बर ❀ सर बिकसित बहुकंज।
मंदिर एक रुचिर तहं ❀ बैठि नारि तपपुंज ॥२७॥

उन्होंने जाकर देखा कि एक उत्तम बाग है, और एक सरोवर है, जिसमें बहुत कमल फूले हुए हैं, एक सुन्दर मन्दिर है और उसमें एक स्त्री बैठी हुई है, जो तपस्याकी पुञ्ज है।

दूरि तें ताहि सबन्हि सिरु नावा ❀ पूछें निज बृत्तांत सुनावा ॥
तेहि तब कहा करहु जलपाना ❀ खाहु सुरस-सुंदर-फल नाना ॥

सबने दूरसे ही उसे शिर नवाया और पूछनेपर अपना सब वृत्तान्त सुनाया। तब उस स्त्रीने कहा कि जलपान करो और तरह तरहके रसीले सुन्दर फल खाओ।

मज्जनु कीन्ह मधुरफल खाये ❀ तासु निकट पुनि सब चलि आये ॥
तेहि सब आपनि कथा सुनाई ❀ मैं अब जाब जहां रघुराई ॥

फिर सबने वहां स्नान किया और मीठे फलोंको खाया और फिर सब चलकर उसके पास आये। उस तपस्विनी स्त्रीने अपनी सब कथा कह सुनायी और कहा कि मैं अब वहां जाऊंगी जहां श्रीरामचन्द्रजी हैं।

मूंदहु नयन बिबर तजि जाहू ❀ पैहहु सीतहि जनि पछिताहू ॥
नयन मूंदि पुनि देखहिं बीरा ❀ ठाढ़े सकल सिंधुके तीरा ॥

तुम सब अपने नेत्र बन्द कर लो तो इस छिद्रसे निकल जाओगे। तुम घबराओ नहीं। तुम सीताजीको पास जाओगे। यह सुनकर नेत्र बंदकर जब बन्दरोंने फिर देखा तो अपनेको समुद्रके किनारे खड़े हुए पाया।

सो पुनि गई जहां रघुनाथा ❀ जाइ कमलपद नायेसि माथा ॥
नानाभांति बिनय तेहि कीन्ही ❀ अनपायनी भगति प्रभु दीन्ही ॥

वह तपस्विनी फिर वहां गयी जहां श्रीरामचन्द्रजी थे और जाकर चरणकमलोंमें मस्तक नवाया। उसने अनेक प्रकारसे विनती की और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने सदा एकरस रहनेवाली भक्ति दी।

दो०—बदरीबन कहुं सो गई ❀ प्रभुअग्या धरि सीस।
उर धरि राम - चरन-जुग ❀ जे बंदत अज ईस ॥२८॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीके दोनों चरणोंको, जिनकी वंदना ब्रह्मा और शिव करते हैं, हृदयमें धारण कर और प्रभुकी आज्ञाको शिरोधार्य कर वह तपस्विनी वद्रिका आश्रमको चली गयी।

इहां बिचारहिं कपि मनमाहीं ❀ बीती अवधि काज कछु नाहीं ॥
सब मिलि कहहिं परसपर बाता ❀ बिनु सुध लिये करब का भ्राता ॥

इधर सब वानरगण मनमें विचारने लगे कि अवधि बीत गयी और काम कुछ भी नहीं हुआ। सब मिलकर परस्पर बातचीत करने लगे कि हे भाइयो, सीताजीकी सुध लिये बिना हम क्या करेंगे?

कह अंगद लोचन भरि बारी ❀ दुहुं प्रकार भइ मृत्यु हमारी ॥
इहां न सुधि सीता कै पाई ❀ उहां गये मारिहिं कपिराई ॥

नेत्रोंमें जल भरकर अंगदजी कहने लगे कि हमारी मृत्यु तो दोनों ही प्रकार हुई। यहां सीताजीकी सुध नहीं पायी है और वहां जानेसे कपिराज सुग्रीव मार डालेंगे।

पिता बधे पर मारत मोही ❀ राखा राम निहोर न ओही ॥
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं ❀ मरन भयेउ कछु संसय नाहीं ॥

पिताके मारे जानेपर ही वे तो मुझे मार डालते, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने बचा लिया, इसमें सुग्रीवका एहसान नहीं है। अङ्गदजी सबसे बारबार कहने लगे कि अब मरना हुआ, इसमें कुछ संदेह नहीं है।

अंगदबचन सुनत कपिबीरा ❀ बोलि न सकहिं नयन बह नीरा ॥
छन एक सोचमगन होइ रहे ❀ पुनि अस बचन कहत सब भये ॥

अंगदजीके वचन सुनते ही सब वीर वानरोंके नेत्रोंसे जल बहने लगा। वे कुछ बोल नहीं सकते थे। एक क्षणके लिये सब शोक-मग्न हो गये और फिर सब यह बात कहने लगे—

हम सीता कै सोध बिहीना ❀ नहिं जैहहिं जुबराज प्रबीना ॥
अस कहि लवन-सिंधु-तट जाई ❀ बैठे कपि सब दर्भ डसाई ॥

हे चतुर युवराज अंगद, सीताजीका पता लगाये विना हम नहीं लौटेंगे। यह कहकर खारी समुद्रके किनारे जाकर सब वानर कुश बिछाकर बैठ गये।

जामवंत अंगददुख देखी ❀ कही कथा उपदेस बिसेखी ॥
तात राम कहुं नर जनि मानहु ❀ निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु ॥
हम सब सेवक अति बड़भागी ❀ संतत सगुन-ब्रह्म-अनुरागी ॥

अंगदका दुःख देखकर जाम्बवान्ने विशेष उपदेशपूर्ण कथाएं कहीं और कहा कि हे तात, श्रीरामचन्द्रजीको मनुष्य मत मानो। उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा समझो, हम सब उनके सेवक हैं और अत्यन्त बड़भागी हैं, जो सदा सगुण ब्रह्म श्रीरामचन्द्रजीके प्रेमी हैं।

दो०—निज इच्छा प्रभु अवतरइ ❀ सुर-महि-गो-द्विज लागि।
सगुनउपासक संग तहं ❀ रहहिं मोच्छसुख त्यागि ॥२६॥

देवता, पृथिवी और ब्राह्मणके लिये भगवान अपनी इच्छासे जहां अवतार लेते हैं वहां मोक्ष सुखको त्यागकर सगुण ब्रह्मके उपासक भक्तजन साथ रहते हैं।

एहि बिधि कथा कहहिं बहु भांती ❀ गिरिकंदरा सुनी संपाती ॥
बाहेर होइ देखे बहु कीसा ❀ मोहि अहारु दीन्ह जगदीसा ॥

इस प्रकार वे सब बहुत प्रकारकी जो कथाएं कह रहे थे उन्हें संपाती गीधने पहाड़की गुफामें बैठे हुए सुना। बाहर आनेपर देखा तो बहुतसे बन्दर थे। संपाती गीध कहने लगा—जगदीश्वरने मुझे भोजन दिया है।

आजु सबहिं कहुं भच्छन करऊं ❀ दिन बहु चले अहारु बिनु मरऊं ॥
कबहुं न मिल भरि उदर अहारा ❀ आजु दीन्ह बिधि एकहि बारा ॥

आज मैं इन सबका भक्षण करूंगा। बहुत दिन बीत गये, मैं भोजन बिना मर रहा हूं। कभी पेटभर भोजन नहीं मिला। दैवने आज उसे एक ही साथ दे दिया है।

डरपे गीधबचन सुनि काना ❀ अब भा मरनु सत्य हम जाना ॥
कपि सब उठे गीध कहं देखी ❀ जामवंत मन सोच बिसेखी ॥

संपाती गीधके वचन अपने कानोंसे सुनकर बंदर डर गये और कहने लगे कि हमने जान लिया, अब सचमुच ही मरना हुआ ! गीधको देखकर सब बंदर उठ खड़े हुए और जामवंतको मनमें बड़ी चिन्ता हुई।

कह अंगद बिचारि मन माहीं ❀ धन्य जटायू सम कोउ नाहीं ॥
राम-काज-कारन तनु त्यागी ❀ हरिपुर गयेउ परम बड़भागी ॥

तब मनमें विचार करके अंगद कहने लगे कि जटायु धन्य है ! उसके समान कोई नहीं है ! श्रीरामचन्द्रजीके कार्यके लिये उसने अपना शरीर त्याग दिया और वैकुण्ठको चला गया। वह अत्यन्त बड़भागी है।

सुनि खग हरष-सोक-जुत बानी ❀ आवा निकट कपिन्ह भय मानी ॥
तिन्हहिं अभय करि पूछेसि जाई ❀ कथा सकल तिन ताहि सुनाई ॥
सुनि संपाति बंधु कै करनी ❀ रघुपति-महिमा बहुबिधि बरनी ॥

आनन्द और शोकसे भरी हुई यह वाणी सुनकर संपाती पास आया, जिससे बंदरोंको बड़ा भय हुआ ? संपातीने जाकर बन्दरोंको अभय करके जब उससे पूछा तब उन्होंने उसे सब कथा कह सुनायी। अपने भाई जटायुकी करनी सुनकर संपातीने श्रीरामचन्द्रजीकी महिमाको बहुत प्रकारसे वर्णन किया।

दो०—मोहि लेइ जाहु सिंधुतट ❀ देउँ तिलांजलि ताहि।
बचनसहाय करबि मैं ❀ पैहहु खोजहु जाहि ॥३०॥

संपातीने कहा—मुझको लेकर समुद्रके किनारेपर चलो तो मैं उसे तिलांजलि दे दूं। मैं वचनोंसे सहायता करूंगा। जिसे तुम खोज रहे हो, उसे पाओगे।

अनुजक्रिया करि सागरतीरा ❀ कहि निजकथा सुनहु कपिबीरा ॥
हम दोउ बंधु प्रथम तरुनाई ❀ गगन गये रबिनिकट उड़ाई ॥

छोटे भाई जटायुकी क्रियाको समुद्रके किनारे करके संपाती अपनी कथा कहने लगा कि हे वीर वानरो, सुनो। हम दोनों भाई जवानीकी पहिली दशामें आकाशमें उड़कर सूर्यके निकट चले गये।

तेज न सहि सक सो फिरि आवा ❀ मैं अभिमानी रबि नियरावा ॥
जरे पंख अति तेज अपारा ❀ परेउँ भूमि करि घोर चिकारा ॥

सूर्यका तेज नहीं सह सका, इसलिये वह लौट आया; परन्तु मुझे घमण्ड था, सूर्यके पासतक जा पहुंचा, और जब अत्यन्त अपार तेजसे पंख जल गये तब घोर चीत्कार करके मैं पृथिवीपर गिर पड़ा।

मुनि एक नाम चंद्रमा ओही ❀ लागी दया देखि करि मोही ॥
बहुप्रकार तेहिं ग्यान सुनावा ❀ देह-जनित अभिमान छुड़ावा ॥

वहां एक मुनि थे जिनका नाम चन्द्रमा था। मुझे देखकर उन्हें दया हो आयी। बहुत प्रकारसे उन्होंने मुझे ज्ञानोपदेश दिया और शरीरसे उत्पन्न मेरे घमण्डको दूर कर दिया।

त्रेता ब्रह्म मनुजतनु धरिहीं ⊛ तासु नारि निसिचर-पति हरहीं ॥
तासु खोज पठइहि प्रभु दूता ⊛ तिन्हहिं मिले तैं होब पुनीता ॥

मुनिने मुझसे कहा—त्रेतामें स्वयं ब्रह्म मनुष्यका शरीर धारण करेंगे। राक्षसोंका स्वामी (रावण) उनकी स्त्रीकोहरण करेगा। उनकी खोजके लिये प्रभु अपने दूत भेजेंगे, जिनसे मिलकर तू पवित्र हो जायगा।

जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता ⊛ तिन्हहिं देखाइ दिहेसु तैं सीता ॥
मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू ⊛ सुनि मम बचन करहु प्रभुकाजू ॥

तेरे पंख जम आवेंगे, चिन्ता मत कर। तू उन्हें सीताजीको दिखला देना। आज मुनिकी वाणी सत्य हुई। मेरे वचन सुनकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका कार्य करो।

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका ⊛ तहं रह रावन सहज असंका ॥
तहं असोकउपबन जहं रहई ⊛ सीता बैठि सोचरत अहई ॥

चित्रकूट पर्वतके ऊपर लंका बसती है। स्वभावसे ही निडर रावण वहां रहता है। वहीं अशोक वन है, जहां सीताजी शोचमें पड़ी हुई बैठी रहती हैं।

दो०—मैं देखउं तुम्ह नाहीं ⊛ गीधहि दृष्टि अपार।
बूढ़ भयउं न त करतेउं ⊛ कछुक सहाय तुम्हार ॥ ३१ ॥

मैं देखता हूं, परन्तु तुम नहीं देख सकते। गीधकी अपार दृष्टि होती है। अब बूढ़ा हो गया हूं, नहीं तो मैं तुम्हारी कुछ सहायता करता।

जो नाँघइ सतजोजन सागर ⊛ करइ सो रामकाज मतिआगर ॥
मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा ⊛ रामकृपा कस भयेउ सरीरा ॥

जो बुद्धिमान सौ योजन समुद्रको लांघ जायगा वह श्रीरामचन्द्रजीके कार्यको कर सकेगा। मुझे देखकर तुम सब मनमें धीरज धरो। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मेरा शरीर कैसा हो गया है।

पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं ⊛ अति अपार भवसागर तरहीं ॥
तासु दूत तुम्ह तजि कदराई ⊛ रामु हृदय धरि करहु उपाई ॥

जिनके नामका स्मरण करके पापी भी अत्यंन्त अपार भवसागरके पार हो जाते हैं, उसीके दूत तुम सब हो, अतः कायरता छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धारण करके उपाय करो।

असकहि उमा गीध जब गयेऊ ❁ तिन्ह के मन अति बिसमय भयेऊ ॥
निज निज बल सब काहू भाखा ❁ पार जाइ कर संसय राखा ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, ऐसा कहकर जब संपाती गीध चला गया तब उनके मनमें अत्यन्त विस्मय हुआ। सब किसीने अपना-अपना बल कह सुनाया, किन्तु पार जा सकनेमें सन्देह ही बना रखा।

जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा ❁ नहिं तनु रहा प्रथम-बल-लेसा ॥
जबहिं त्रिबिक्रम भयेउ खरारी ❁ तब मैं तरुन रहेउँ बल - भारी ॥

ऋच्छराज जाम्बवान् कहने लगे—अब बूढ़ा हुआ, शरीरमें पहिले जो बल था उसका अब लेश भी नहीं रहा है! खर नामक दैत्यके शत्रु श्रीरामचन्द्रजीने जब त्रिविक्रम-रूप धारण किया था तब मैं युवा था और शरीरमें बहुत अधिक बल था।

दो०—बलि बांधत प्रभु बाढ़ेउ ❁ सो तनु बरनि न जाइ।
उभय घरी महं दीन्ही ❁ सात प्रदच्छिन धाइ ॥ २९ ॥

बलिको प्रतिज्ञाबद्ध कर लेते ही प्रभुने विराट रूप धारण किया था। उस शरीरका वर्णन नहीं किया जा सकता। मैंने दौड़कर दो घड़ीमें उसकी सात प्रदक्षिणा की थी!

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा ❁ जिय संसय कछु फिरती बारा ॥
जामवंत कह तुम्ह सब लायक ❁ पठइय किमि सबही कर नायक ॥

अंगदजी कहने लगे कि मैं पार चला जाऊंगा; परन्तु लौटती बारके लिये जीमें कुछ सन्देह है। जाम्बवान्‌ने यह सुनकर कहा कि आप सब योग्य हैं, परन्तु आप सभीके नायक हैं। आपको कैसे भेजा जाय!

कहइ रिच्छपति सुनु हनुमाना ❁ का चुप साधि रहेउ बलवाना ॥
पवन - तनय - बल पवनसमाना ❁ बुधि - बिबेक - बिग्यान - निधाना ॥

फिर ऋच्छराज जाम्बवान् कहने लगे कि हे हनुमान, सुनो! बल रखकर तुम चुप्पी क्यों साधे हुए हो? तुम पवन-पुत्र हो। पवनके समान तुम्हारा बल है। तुम बुद्धि, विवेक और ज्ञानके भाण्डार हो।

कवन सो काजु कठिन जग माहीं ❁ जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं ॥
रामकाज लगि तव अवतारा ❁ सुनतहिं भयेउ पर्वताकारा ॥

हे तात, संसारमें वह कठिन कार्य कौनसा है जो तुमसे न हो सके! तुम्हारा अवतार श्रीरामचन्द्रजीके कार्यके लिये ही हुआ है। यह सुनते ही हनुमानजी पर्वतके समान विशाल आकारके हो गये।

कनकबरन तनतेज बिराजा ❁ मानहुँ अपर गिरिन्ह कर राजा ॥
सिंहनाद करि बारहिं बारा ❁ लीलहि नांघउँ जलधि अपारा ॥

उनके शरीरकी कांति सोनेके समान थी, उसपर तेज छा रहा था; मानों वे दूसरे पर्वतोंके राजा सुमेरु हों। वे बारबार सिंहके समान गर्जना करने लगे और कहने लगे कि यह अपार समुद्र अनायास ही उल्लंघन कर जाऊंगा।

सहित सहाय रावनहिं मारी ❀ आनउं इहाँ त्रिकूट उपारी ॥
जामवंत मैं पूछउं तोही ❀ उचित सिखावनु दीजेहु मोही ॥

सहायकोंसमेत रावणको मारकर मैं त्रिकूट पर्वतको उखाड़कर यहां ले आऊंगा। हे जाम्बवान्, मैं आपसे पूछता हूं। मुझे उचित सीख दीजिये।

एतना करहु तात तुम्ह जाई ❀ सीतहि देखि कहहु सुधि आई ॥
तब निज भुज-बल राजिवनयना ❀ कौतुक लागि संग कपिसेना ॥

जाम्बवान्ने कहा—हे तात, तुम जाकर अभी इतना ही करो कि सीताजीको देखकर आओ और उनका हाल कहो। फिर पीछेसे कमलनयन श्रीरामचन्द्रजी अपनी भुजाओंके बल सीताजीको ले आयंगे। कौतुकके लिये उनके संगमें बंदरोंकी सेना भी रहेगी।

छं०—कपि-सेन-संग संघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक-पावनु सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं ॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परमपद नर पावई।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई ॥

बंदरोंकी सेनाको संग लेकर राक्षसोंको मारकर श्रीरामचन्द्रजी सीताजीको ले आवेंगे। तीनों लोकोंको पवित्र कर देनेवाले उनके सुयशका देवता और नारदादि मुनिजन वर्णन करेंगे। उस सुयशको सुनने, गाने, कहने और समझनेसे मनुष्यको परमपद (मोक्ष) मिल जायगा। श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका भौंरा तुलसीदास उसी यशको गाता है।

दो०—भवभेषज रघुनाथजसु ❀ सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकलमनोरथ ❀ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि ॥ ३३ ॥

श्रीरामचन्द्रजीका सुयश संसाररूपी रोगकी ओषधि है। उसे जो पुरुष और स्त्री सुनेंगे, त्रिशिराके शत्रु श्रीरामचन्द्रजी उनके सब मनोरथ सिद्ध करेंगे।

सो०—नीलोत्पल तन स्याम ❀ कामकोटि सोभा अधिक।
सुनिय तासु गुनग्राम ❀ जासु नाम अघ-खग-बधिक ॥ ३४ ॥

जिनका शरीर नील कमलके समान श्याम है, जिनकी शोभा करोड़ कामदेवोंसे भी अधिक है, जिनका नाम पापरूपी पक्षियोंके लिये व्याधके समान है, उन श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहको अवश्य सुनना चाहिये।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विशुद्ध सन्तोष सम्पादनो नाम चतुर्थः सोपानः समाप्तः ॥

* श्रीगणेशाय नमः *

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

पञ्चम सोपान

सुन्दरकांड

श्लोकाः

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं
ब्रह्माशम्भुफणीन्द्रसेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं
वन्देऽहं करुणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम् ॥१॥

शान्तियुक्त, नित्य, अपारमहिमासम्पन्न, निष्पाप, मोक्ष और शान्तिको देनेवाले, शिव, ब्रह्मा और शेषसे निरंतर सेवित, वेदान्तसे जाननेयोग्य, व्यापक, जगदीश्वर, देवताओंमें प्रधान, मायासे मनुष्य-रूपधारी, करुणा-निधान, राजाओंके चूड़ामणि, रघुवंशमें श्रेष्ठ, श्रीरामनामसे प्रसिद्ध भगवानको मैं प्रणाम करता हूं।

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च ॥२॥

हे रघुवंशके स्वामी, आप सबके अन्तरात्मा हैं। मैं सत्य कहता हूँ। मेरे हृदयमें दूसरी अभिलाषा नहीं है। हे रघुवंशमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजी, आप मुझे पूर्ण भक्ति दीजिये और मेरे मनको काम आदि दोषों रहित कीजिये।

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम्।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥३॥

मैं पवनपुत्र हनुमानजीको प्रणाम करता हूँ, जो अतुलबल-सम्पन्न हैं, जिनका शरीर सुमेरु पर्वतके सदृश है, जो राक्षसरूपी वनको जलानेके लिये अग्निके समान हैं, ज्ञानियोंमें प्रधान हैं, सब गुणोंके भाण्डार हैं वानरोंके स्वामी हैं, और श्रीरामचन्द्रजीके श्रेष्ठ दूत हैं।

जामवंत के बचन सुहाये ❀ सुनि हनुमंत हृदय अति भाये ॥
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई ❀ सहि दुख कंद मूल फल खाई ॥

जामवन्तके सुहावने वचन सुन कर हनुमानजीको हृदयमें वे बहुत प्रिय लगे। उन्होंने सब वानरोंसे कहा— हे भाइयो, दुःख सहकर और कंद-मूल-फल खाकर तुम सब तबतक मेरी बाट जोहना —

जब लगि आवउं सीतहि देखी ❀ होइ काज मोहि हरष बिसेखी ॥
अस कहि नाइ सबन्हि कहुं माथा ❀ चलेउ हरषि हिय धरि रघुनाथा ॥

जबतक मैं सीताजीको देखकर आ जाऊं। मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है,कार्य सिद्ध होगा। ऐसा कह सबको मस्तक नवाकर और हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीको रखकर हनुमानजी प्रसन्न होकर चल दिये।

सिंधुतीर एक भूधर सुंदर ❀ कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर ॥
बार बार रघुबीर संभारी ❀ तरकेउ पवनतनय बलभारी ॥

समुद्रके किनारे एक पर्वत था, जिसका नाम था सुन्दर। हनुमानजी अनायास ही कूदकर उसके ऊपर चढ़ गये। फिर महाबली पवनपुत्र हनुमानजीने बारंबार श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण कर गर्जना की।

जेहि गिरि चरन देइ हनुमंता ❀ चलेउ सो गा पाताल तुरंता ॥
जिमि अमोघ रघुपति कर बाना ❀ तेही भांति चला हनुमाना ॥
जलनिधि रघुपति-दूत बिचारी ❀ तैं मैनाक होहि स्रमहारी ॥

कूदकर हनुमानजीने जिस पर्वतपर चरण रखा था वह तुरंत ही पातालमें धंस गया। हनुमानजी उसी प्रकार चल दिये; जैसे श्रीरामचन्द्रजीके अमोघ बाण छूटते हैं। हनुमानजीको श्रीरामचन्द्रजीका दूत विचारकर समुद्रने मैनाक पर्वतसे कहा कि मैनाक, तू इनका श्रम दूर करनेवाला हो।

दो०—हनूमान तेहि परसा ❀ कर पुनि कीन्ह प्रनाम।
रामकाजु कीन्हे बिनु ❀ मोहि कहां बिस्राम ॥१॥

(तदनुसार मैनाक पर्वतके ऊंचे उठनेपर) हनुमानजीने उसपर अपना हाथ रखा और फिर उसे प्रणाम किया और कहा कि श्रीरामचन्द्रजीका कार्य किये विना मुझे विश्राम कहां है?

जात पवनसुत देवन्ह देखा ❀ जानइ कहुँ बल-बुद्धि-बिसेखा ॥
सुरसा नाम अहिन्ह कै माता ❀ पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता ॥

देवताओंने जब हनुमानजीको जाते हुए देखा तब उनके बल और बुद्धिको विशेष रूपसे जाननेके लिये उन्होंने सुरसा नामक सर्पोंकी माताको भेजा, जिसने आकर यह बात कही—

आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा ❀ सुनत बचन कह पवनकुमारा ॥
रामकाजु करि फिरि मैं आवउँ ❀ सीता कै सुधि प्रभुहि सुनावउँ ॥

देवताओंने मुझे आज भोजन दिया है ! यह वचन सुनकर हनुमानजी कहने लगे—श्रीरामचन्द्रजीका कार्य करके जब मैं लौट आऊं और सीताजीकी सुध प्रभु श्रीरामचंद्रजीको सुना दूं—

तब तव बदन पैठिहउँ आई ❀ सत्य कहउँ मोहि जान दे माई ॥
कवनेहु जतन देइ नहिं जाना ❀ ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना ॥

तब आकर मैं तुम्हारे मुखमें प्रवेश करूंगा । हे माता, मैं सत्य कहता हूं । मुझे अभी जाने दो । जब किसी यत्नसे नहीं जाने दिया तब हनुमानजीने सुरसासे कहा कि मुझे खा क्यों नहीं लेती ?

जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा ❀ कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा ॥
सोरह जोजन मुख तेहिं ठयेऊ ❀ तुरत पवनसुत बत्तिस भयेऊ ॥

सुरसाने एक योजनतक अपने शरीरका विस्तार किया, हनुमानजीने अपने शरीरका विस्तार उससे दूना कर लिया । फिर सुरसाने जब अपना मुख १६ योजन किया तब हनुमानजी तुरंत ही ३२ योजनके हो गये ।

जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा ❀ तासु दून कपि रूप देखावा ॥
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा ❀ अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा ॥

सुरसाने ज्यों-ज्यों अपन शरीरका विस्तार किया, त्यों-त्यों हनुमानजी उससे दूने विस्तारवाला रूप धारण करते गए । अंतमें सुरसाने जब सौ योजनमें अपना मुँह फैला लिया तब पवनपुत्र हनुमानजीने अत्यंत छोटा स्वरूप बना लिया ।

बदन पइठि पुनि बाहेर आवा ❀ माँगा बिदा ताहि सिरु नावा ॥
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा ❀ बुधि-बल-मरमु तोर मैं पावा ॥

हनुमानजी उस छोटे स्वरूपसे सुरसाके विशाल मुखमें प्रवेश करके फिर बाहर आ गये और विदा मांगते हुए उसे शिर नवाया ! सुरसाने कहा—मैंने तुम्हारी शक्ति और बुद्धिका मर्म जान लिया, जिसके लिए देवताओंने मुझे भेजा था ।

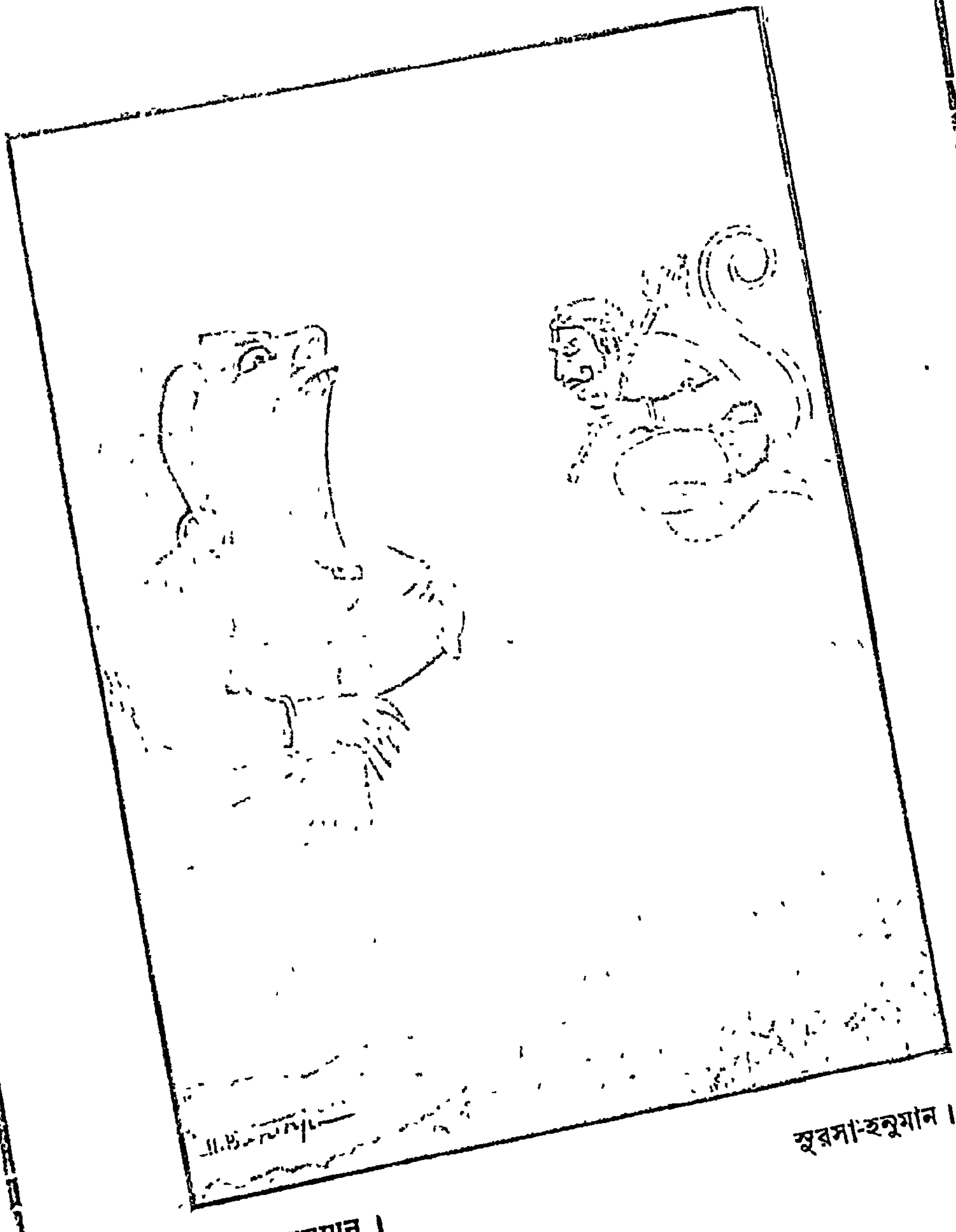

সুরসা-হনুমান।

সুরসা-হনুমান।

दो०—राम काजु सबु करिहहु ❀ तुम्ह बल - बुद्धि - निधान ।
आसिष देइ गई सो ❀ हरषि चलेउ हनुमान ॥ २ ॥

तुम बल और बुद्धिके भाण्डार हो। तुम श्रीरामचंद्रजीका सारा कार्य पूरा करोगे। सुरसा यह आशीर्वाद देकर चली गयी और हनुमानजी प्रसन्न होकर चल दिये।

निसिचर एकु सिंधु महँ रहई ❀ करि माया नभके खग गहई ॥
जीव जंतु जे गगन उड़ाहीं ❀ जल बिलोकि तिन्ह कै परिछाहीं ॥

समुद्रमें एक राक्षस रहता था, जो माया करके आकाशके पक्षियोंको पकड़ लेता था। आकाशमें जो जीव-जन्तु उड़ा करते थे उनकी परछाहींको जलमें देखकर—

गहइ छाँह सक सो न उड़ाई ❀ एहि बिधि सदा गगनचर खाई ॥
सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा ❀ तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा ॥

वह छाया पकड़ लिया करता था। बस, फिर वह पत्ती उड़ न सकता था। इस प्रकार वह राक्षस सदैव पत्तियोंको खाया करता था। राक्षसने वही छल हनुमानजीके साथ भी किया, परन्तु हनुमानजीने उसके कपटको तुरंत ही पहिचान लिया।

ताहि मारि मारुत - सुत बीरा ❀ बारिधि पार गयेउ मतिधीरा ॥
तहाँ जाइ देखी बनसोभा ❀ गुंजत चंचरीक मधुलोभा ॥

उसे मारकर धीर बुद्धिवाले वीर पवन-पुत्र समुद्र-पार गए। वहां जाकर उन्होंने वनकी शोभाको देखा, जहां, शहदके लोभसे भौंरे गुंजार कर रहे थे।

नाना तरु फलु फूल सुहाये ❀ खग-मृग-बृंद देखि मनु भाये ॥
सैल बिसाल देखि एक आगें ❀ तापर धाइ चढ़ेउ भय त्यागें ॥

वहां तरह-तरहके वृक्ष, सुहावने फल-फूल तथा पक्षियों और हिरणोंके झुण्ड थे, जो देखते ही मनको प्रिय लगते थे। आगे एक विशाल पर्वत देखकर हनुमानजी दौड़कर निर्भय होकर उसपर चढ़ गये।

उमा न कछु कपि कै अधिकाई ❀ प्रभु प्रतापु जो कालहि खाई ॥
गिरि पर चढ़ि लंका तेहि देखी ❀ कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेखी ॥
अति उतंग जलनिधि चहुँ पासा ❀ कनककोट कर परमप्रकासा ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, इसमें कुछ हनुमानजीकी बड़ी बात नहीं है। यह सब प्रभु श्रीरामचन्द्र-जीका प्रताप है, जो कालको भी खा जाता है। पर्वतपर चढ़कर हनुमानजीने लङ्काको देखा। उसके बहुत ही

भारी दुर्गका वर्णन नहीं किया जा सकता। वह बहुत ऊँचा था, उसके चारों ओर समुद्र था और सोनेके कोटका अत्यधिक प्रकाश हो रहा था।

छं०—कनक कोट बिचित्र - मणि - कृत सुंदरायतना घना।
चउहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथीं चारु पुर बहुबिधि बना॥
गज बाजि खच्चर निकर पदचर रथ बरूथन्हि को गनइ।
बहुरूप निसिचर - जूथ अति बल सेन बरनत नहिं बनइ॥

विचित्र मणियोंसे जड़ा हुआ सोनेका कोट सुन्दर, लंबा-चौड़ा और मजबूत था। चौराहे, बाजार सड़कें, गलियाँ—सारा नगर बहुत ही अच्छा बना हुआ था। वहाँके हाथी, घोड़ों, खच्चरोंके झुण्डों और पैदल और रथोंके समूहोंको कौन गिने? अनेक रूपधारी महाबलवान् राक्षसोंके झुंडोंकी सेनाका वर्णन करते नहीं बनता।

बन बाग उपबन बाटिका सर कूप बापी सोहहीं।
नर - नाग - सुर - गंधर्ब - कन्या - रूप मुनि मन मोहहीं॥
कहुँ माल देहबिसाल सैलसमान अति बल गर्जहीं।
नाना अखारेन्ह भिरहिं बहुबिधि एक एकन्ह तर्जहीं॥

वन, बाग, बगीचा, बगीचियाँ, सरोवर, कुएँ, बावलियाँ, सब शोभित हो रहे थे। मनुष्य, नाग, देवता और गन्धर्वोंकी कन्याएँ अपने रूपसे मुनियोंके मनको मोहती थीं। कहींपर पर्वतके समान विशाल शरीरवाले अत्यन्त बलवान् मल्ल गर्जना कर रहे थे और अनेक अखाड़ोंमें वे लड़ रहे थे तथा अनेक प्रकारसे एक दूसरेको पछाड़ रहे थे।

करि जतन भट कोटिन्ह बिकटतन नगर चहुँ दिसि रच्छहीं।
कहुँ महिष मानुष धेनु खर अज खल निसाचर भच्छहीं॥
एहि लागि तुलसीदास इन्हकी कथा कछुयक है कही।
रघुबीर - सर - तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पइहहिं सही॥

भयंकर शरीरवाले करोड़ों योद्धा यत्न करके चारों दिशाओंमें नगरकी रक्षा करते थे। कहीं दुष्ट राक्षस भैंसों, मनुष्यों, गायों, गधों और बकरोंको खा रहे थे। तुलसीदासजी कहते हैं कि इसी कारण इनकी कथा बहुत थोड़ी कही है। ये सब श्रीरामचन्द्रजीके बाणरूपी तीर्थमें शरीर त्यागकर अच्छी गति पा जायँगे।

दो०—पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघुरूप धरउँ निसि नगर करउँ पइसार॥३॥

नगरके बहुतसे रक्षक देखकर हनुमानजीने मनमें विचार किया कि अत्यन्त छोटा रूप रखूं और रातमें नगरमें प्रवेश करूँ।

मसकसमान रूपु कपि धरी ❀ लंकहिं चलेउ सुमिरि नरहरी ॥
नाम लंकिनी एक निसिचरी ❀ सो कह चलेसि मोहि निंदरी ॥

मच्छरके समान अर्थात् बहुत ही छोटा रूप रखकर हनुमानजी मनुष्यरूपमें भगवान् श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करके लङ्काको चल दिये। द्वारपर लङ्किनी नामक एक राक्षसी थी। हनुमानजीको लंकामें घुसते देखकर वह कहने लगी—तू मेरा निरादर करके जा रहा है!

जानेहि नहीं मरमु सठ मोरा ❀ मोर अहार जहां लगि चोरा ॥
मुठिका एक महाकपि हनी ❀ रुधिर बमत धरनी ढनमनी ॥

दुष्ट, तू मेरा मर्म नहीं जानता। जितने चोर हैं, सब मेरे आहार हैं। फिर वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमानजीने उसे एक घूंसा मारा, जिससे वह खून गिराती हुई धरतीपर लुढ़कने लगी।

पुनि संभार उठी सो लंका ❀ जोरि पानि कर बिनय ससंका ॥
जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा ❀ चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा ॥

फिर वह लङ्का नामक राक्षसी संभलकर उठी और डरती हुई हाथ जोड़ विनती करने लगी। लंकाने कहा—ब्रह्मदेवने जब रावणको वर दिया था तब चलते हुए उन्होंने मुझे यह चिह्न बतलाया था।

बिकल होसि तैं कपि कें मारें ❀ तब जानेसु निसिचर संघारें ॥
तात मोर अति पुन्य बहूता ❀ देखेउं नयन राम कर दूता ॥

बन्दरके मारनेसे जब तू व्याकुल हो जाय तब जानना कि राक्षसोंका संहार हुआ! हे तात, मेरा पुण्य बहुत अधिक है कि मैंने श्रीरामचन्द्रजीके दूतको अपने नेत्रोंसे देख लिया।

दो०—तात स्वर्ग-अपबर्ग-सुख ❀ धरिय तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि ❀ जो सुख लव सतसंग ॥४॥

हे तात, स्वर्ग और मोक्षके सुखको यदि एक साथ तराजूके एक पलड़ेमें रखा जाय तो सब मिलाकर भी वह उस सुखके बराबर नहीं हो सकता जो एक लवमात्रके सत्संगसे होता है।

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा ❀ हृदय राखि कोसलपुर-राजा ॥
गरल सुधा रिपु करइ मिताई ❀ गोपद सिन्धु अनल सितलाई ॥

कोशल देशके राजधानी अयोध्याके राजाको हृदयमें रखकर नगरमें प्रवेश कीजिये और सब कार्य कीजिये।

उसके लिये विष अमृत हो जाता है, शत्रु उससे मित्रता कर लेता है, समुद्र उसे गौके खुरके गढ़के समान हो जाता है और अग्नि शीतल हो जाती है।

गरुड़ सुमेरु रेनुसम ताही ❀ राम कृपा करि चितवा जाही ॥
अति - लघु-रूप धरेउ हनुमाना ❀ पैठा नगर सुमिरि भगवाना ॥

भारी सुमेरु पर्वत भी उसको धूलके समान है, जिसको श्रीरामचन्द्रजीने कृपा करके देख लिया हो। हनुमानजीने अत्यन्त छोटा रूप धारण किया और भगवान्‌का स्मरणकर वे नगरमें घुस गये।

मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा ❀ देखे जहं तहं अगनित जोधा ॥
गयेउ दसानन मंदिर माहीं ❀ अतिबिचित्र कहि जात सो नाहीं ॥

नगरमें हनुमानजीने प्रत्येक घर देखते हुए सब घरोंको खोज डाला और जहां-तहां असंख्य योद्धाओंको देखा। फिर वे रावणके महलमें गये, जो अत्यन्त विचित्र था। उसका वर्णन नहीं किया जाता।

सयन किये देखा कपि तेही ❀ मंदिर महुं न दीख बैदेही ॥
भवन एक पुनि दीख सुहावा ❀ हरिमंदिर तहं भिन्न बनावा ॥

हनुमानजीने उसमें रावणको सोया हुआ देखा, परन्तु उस महलमें सीताजीको नहीं देखा। फिर एक सुहावना भवन देखा, जिसमें भगवान्‌का मन्दिर अलग बना हुआ था।

दो०—रामायुध अंकित गृह ❀ सोभा बरनि न जाइ।
नव तुलसिका बृंद तहं ❀ देखि हरष कपिराइ ॥५॥

वह घर श्रीरामचन्द्रजीके शस्त्रास्त्रोंसे अंकित था, उसकी शोभाका वर्णन नहीं किया जाता। वहां तुलसीके नवीन वृक्षोंके झुण्ड लगे हुए थे। यह सब देखकर वानरोंके स्वामी हनुमानजी प्रसन्न हो गये।

लंका निसिचर - निकर - निवासा ❀ इहां कहां सज्जन कर बासा ॥
मन महुं तरक करइ कपि लागा ❀ तेही समय बिभीषनु जागा ॥

हनुमानजीने सोचा—लंका राक्षसोंके समूहोंका निवासस्थान है। यहां सज्जनका निवास कहां! हनुमानजी अपने मनमें यह तर्क करने लगे, उसी समय विभीषण जागे।

राम राम तेहि सुमिरन कीन्हा ❀ हृदय हरष कपि सज्जन चीन्हा ॥
एहि सन हठि करिहउं पहिचानी ❀ साधु तें होइ न कारज हानी ॥

विभीषणने 'राम'-'राम' कहकर भगवान्‌का स्मरण किया, इससे हनुमानजीको हृदयमें प्रसन्नता हुई। उन्होंने पहिचान लिया कि यह कोई सज्जन है। हनुमानजीने निश्चय किया कि हठ करके इसके साथ पहिचान करूंगा। साधुसे कार्यकी हानि नहीं होती।

विप्ररूप धरि वचनु सुनाये ◉ सुनत बिभीषनु उठि तहँ आये ॥
करि प्रनामु पूछी कुसलाई ◉ बिप्र कहहु निज कथा बुझाई ॥

फिर हनुमानजीने ब्राह्मणका रूप-रखकर कुछ वचन सुनाये, जिन्हें सुनते ही विभीषण उठकर वहाँ आ गये। प्रणाम करके विभीषणने कुशलता पूछी और कहने लगे कि हे ब्राह्मण, अपना वृतान्त समझाकर कहिये।

की तुम्ह हरिदास न महुँ कोई ◉ मोरें हृदय प्रीति अति होई ॥
की तुम्ह रामु दीन अनुरागी ◉ आयेहु मोहिं करन बड़भागी ॥

क्या आप भगवान्‌के सेवकोंमें कोई हैं? मेरे हृदयमें अत्यन्त प्रीति हो रही है। क्या आप दीन जनोंके प्रेमी श्रीरामचन्द्रजी हैं, जो मुझे बड़भागी बनानेके लिये आये हुए हैं।

दो०—तब हनुमंत कही सब ◉ रामकथा निजनाम।
सुनत जुगलतन पुलक मन ◉ मगन सुमिरि गुनग्राम ॥६॥

तब हनुमानजीने श्रीरामचन्द्रजीका सारा वृत्तान्त और अपना नाम बतलाया, उसको सुनते ही दोनोंके शरीर पुलकायमान हो गये और श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहका स्मरण कर उनके मन मग्न हो गये।

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी ◉ जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी ॥
तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा ◉ करिहहिं कृपा भानुकुल-नाथा ॥

विभीषण कहने लगे—हे पवन-पुत्र, हमारी रहन सुनिये, जैसे दांतोंके बीचमें बेचारी जीभ। हे तात, मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुलके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी क्या कभी कृपा करेंगे?

तामस तनु कछु साधनु नाहीं ◉ प्रीति न पद सरोज मनमाहीं ॥
अब मोहि भा भरोस हनुमंता ◉ बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता ॥

तमोगुणी शरीर है, कुछ साधन नहीं है, मनमें चरणकमलोंकी प्रीति भी नहीं है। हे हनुमान, अब मुझे भरोसा हो गया। भगवान्‌की कृपा हुए बिना सज्जन नहीं मिलते।

जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा ◉ तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा ॥
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती ◉ करहिं सदा सेवक पर प्रीती ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब दया की, तब आपने हठपूर्वक मुझे दर्शन दिये। हनुमानजी कहने लगे—हे विभीषण, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी रीति सुनो। वे अपने सेवकपर सदा प्रीति करते हैं।

कहहु कवन मैं परम कुलीना ◉ कपि चंचल सबही बिधि हीना ॥
प्रात लेइ जो नाम हमारा ◉ तेहि दिन ताहि न मिलइ अहारा ॥

कहो न, मैं कौनसा परम कुलीन हूं? मैं तो बंदर हूं, चंचल हूं और सब प्रकार हीन हूं। सवेरे यदि कोई हमारा नाम ले लेवे, तो उस दिन उसे भोजन नहीं मिले।

दो०—अस मैं अधम सखा सुनु ❀ मोहू पर रघुबीर।
कीन्ही कृपा सुमिरि गुन ❀ भरे बिलोचन नीर ॥७॥

हे सखा, सुनो। मैं ऐसा अधम हूं; परन्तु श्रीरामचन्द्रजीने मुझपर भी कृपा की। ऐसा कहते श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका स्मरण करके हनुमानजीके नेत्रोंमें जल भर गया!

जानतहूं अस स्वामि बिसारी ❀ फिरहिं ते काहे न होहिं दुखारी ॥
एहि बिधि कहत राम-गुन-ग्रामा ❀ पावा अनिर्वाच्य बिस्रामा ॥

जानते हुए भी जो ऐसे स्वामीको छोड़कर भटकतेहैं वे क्यों न दुःखी होवें। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहोंको कहकर उन्होंने अकथनीय आनन्द पाया।

सुनि सब कथा बिभीषन कही ❀ जेहि बिधि जनकसुता तहं रही ॥
तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता ❀ देखा चहउं जानकी माता ॥

यह सुनकर, जिस प्रकार जानकीजी वहां रहती थीं, वह सब कथा विभीषणने कह-सुनायी। तब हनुमानजीने कहा कि हे भाई, सुनो। मैं माता जानकीको देखना चाहता हूं।

जुगुति बिभीषन सकल सुनाई ❀ चलेउ पवनसुत बिदा कराई ॥
करि सोइ रूप गयेउ पुनि तहवां ❀ बन असोक सीता रह जहवां ॥

फिर विभीषणने सारी युक्ति बतलायी और पवन-पुत्र हनुमान विदा होकर चल दिये। फिर वही रूप रखकर हनुमानजी वहां गये जहां अशोक वनमें सीताजी रहती थीं।

देखि मनहिं महुं कीन्ह प्रनामा ❀ बैठेहि बीति जात निसिजामा ॥
कृसतनु सीस जटा एक बेनी ❀ जपति हृदय रघु-पति-गुन-स्रेनी ॥

सीताजीको देखकर हनुमानजीने मनहीमें प्रणाम किया। सीताजीको रात्रिके चार पहर बैठे ही बीत जाते थे। शरीर दुर्बल हो गया था, शिरपर जटाएं और एक वेणी थी और हृदयमें वे श्रीरामचन्द्रजीके गुणगणोंको जप रही थीं।

दो०—निजपद नयन दिये मनु ❀ रामचरन महुं लीन।
परम दुखी भा पवनसुत ❀ देखि जानकी दीन ॥८॥

अपने चरणोंकी ओर उनकी आंखें लगी हुई थीं और मन श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें लीन हो रहा था। जानकीजीको इस दीन अवस्थामें देखकर पवन-पुत्र हनुमानजी अत्यन्त दुःखी हुए।

तरुपल्लव महुँ रहा लुकाई ❀ करइ बिचार करउँ का भाई ॥
तेहि अवसर रावनु तहँ आवा ❀ संग नारि बहु किये बनावा ॥

हनुमानजी वृक्षके पत्तोंमें छिप रहे और विचार करने लगे कि भाई, अब मैं क्या करूँ? उसी समय वहां रावण आया। उसके संगमें शृंगार किये हुए बहुतसी स्त्रियां थीं।

बहु बिधि खल सीतहिं समुझावा ❀ साम दाम भय भेद देखावा ॥
कह रावनु सुनु सुमुखि सयानी ❀ मंदोदरी आदि सब रानी ॥

दुष्ट रावणने सीताजीको बहुत प्रकारसे समझाया; साम, दाम, भय और भेद दिखलाया। रावण कहने लगा—हे सुन्दर मुखवाली, हे चतुर सीता, सुनो। मन्दोदरी आदि सब रानियोंको—

तव अनुचरी करउँ पन मोरा ❀ एक बार बिलोकु मम ओरा ॥
तिनु धरि ओट कहति बैदेही ❀ सुमिरि अवधपति परम सनेही ॥

मैं तुम्हारी दासी बनाऊंगा, यह मेरा प्रण है। तुम एक बार मेरी ओर देखो। तब सीताजी तिनकेको ओट रखकर और अपने परमस्नेही अयोध्यापति श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर कहने लगीं।

सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा ❀ कबहुँ कि नलिनी करइ बिकासा ॥
अस मन समुझु कहति जानकी ❀ खल सुधि नहिं रघु-बीर-बान की ॥
सठ सूने हरि आनेहि मोही ❀ अधम निलज्ज लाज नहिं तोही ॥

हे दश मुखवाले रावण, सुन। जुगनूकी चमकसे भी क्या कभी कमलिनी खिलती है? सीताजी कहने लगी—मनमें तू ऐसा ही समझ। दुष्ट, तुझे श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंकी खबर नहीं है। अरे दुष्ट, तू मुझे श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीकी अनुपस्थितिमें चुरा लाया है। अरे नीच, निर्लज्ज, तुझे लज्जा नहीं है!

दो०—आपुहि सुनि खद्योतसम ❀ रामहिं भानुसमान।
परुष बचन सुनि काढ़ि असि ❀ बोला अति खिसियान ॥ ९ ॥

अपनेको पटबीजनेके समान और श्रीरामचन्द्रजीको सूर्यके समान सुनकर—कठोर वचन सुनकर—रावण अत्यन्त क्रोधित होकर तलवार खींचकर बोला।

सीता तैं मम कृत अपमाना ❀ कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना ॥
नाहिं त सपदि मानु मम बानी ❀ सुमुखि होत न त जीवनहानी ॥

अरे सीता, तूने मेरा अपमान किया है! इस कठोर तलवारसे मैं तेरा शिर काट डालूंगा। या तो तू शीघ्र मेरी बातको मान, नहीं तो हे सुन्दर मुखवाली, तेरे जीवनका नाश होता है!

स्याम - सरोज - दाम - सम सुन्दर ❀ प्रभुभुज करि-कर-सम दसकंधर ॥
सो भुज कंठ कि तव असि घोरा ❀ सुनु सठ अस प्रवानमन मोरा ॥

सीताजीने कहा—हे रावण, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाएँ श्यामकमलकी मालाके समान सुन्दर और हाथीकी सूंड़के समान बलवान् हैं। मेरे कंठमें वे भुजाएं होंगी या तेरी कठोर तलवार—हे दुष्ट, सुन, यह मेरी अटल प्रतिज्ञा है।

चंद्रहास हरु मम परितापं ❀ रघुपति - विरह - अनल - संजातं ॥
सीतल निसित बहसि बर-धारा ❀ कह सीता हरु मम दुखभारा ॥

सीताजीने कहा—अपने इस चन्द्रहास खड्गसे मेरे दुःखको दूर कर, जो श्रीरामचन्द्रजीके वियोगरूपी अग्निसे उत्पन्न हुआ है। तू जिस शीतल, तीव्र और श्रेष्ठ धारवाली तलवारको लिये हुए है उससे मेरे भारी दुःखको दूर कर दे।

सुनत बचन पुनि मारन धावा ❀ मयतनया कहि नीति बुझावा ॥
कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई ❀ सीतहि बहुबिधि त्रासहु जाई ॥
मास दिवस महुं कहा न माना ❀ तौ मैं मारब काढ़ि कृपाना ॥

सीताजीके वचन सुनते ही रावण फिर मारने दौड़ा, परन्तु मय नामक दैत्यकी कन्या मंदोदरीने नीतिका उपदेश देकर समझाया। तब रावणने सब राक्षसियोंको बुलाकर कहा कि जाकर सीताजीको अनेक प्रकारसे डराओ और धमकाओ। सीताने यदि एक मासमें मेरा कहना नहीं माना तो मैं तलवार निकालकर उन्हें मार डालूंगा।

दो०—भवन गयेउ दसकंधर ❀ इहां पिसाचिनिवृंद।
सीतहिं त्रास देखावहिं ❀ धरहिं रूप बहुमंद ॥ १० ॥

उधर रावण अपने महलमें गया, इधर राक्षसियोंके समूह बहुत नीच रूप रख-रखकर सीताजीको डराने-धमकाने लगे।

त्रिजटा नाम राच्छसी एका ❀ राम - चरन - रति निपुन बिबेका ॥
सबन्हौं बोलि सुनायेसि सपना ❀ सीतहिं सेइ करहु हित अपना ॥

त्रिजटा नामक एक राक्षसी थी, जिसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम था और जो चतुर और विचारशीला थी। सभी राक्षसियोंको बुलाकर उसने अपना स्वप्न सुनाया और कहा कि सीताजीकी सेवा करके अपनी भलाई कर लो।

सपनें बानर लङ्का जारी ❀ जातुधानसेना सब मारी ॥
खरआरूढ़ नगन दससीसा ❀ मुंडितसिर खंडित-भुज-बीसा ॥

मैंने स्वप्न देखा है कि एक बन्दरने लंकाको जला दिया है और राक्षसोंकी सब सेनाको मार डाला है। रावणको देखा है कि वह गधेपर चढ़ा हुआ है, नंगा है, उसका शिर मुंड़ा हुआ है और बीसों हाथ कटे हुए हैं।

एहिबिधि सो दच्छिनदिसि जाई ❀ लङ्का मनहुँ बिभीषन पाई ॥
नगर फिरी रघुबीर दोहाई ❀ तब प्रभु सीता बोलि पठाई ॥

इस प्रकार वह रावण दक्षिण दिशाकी ओर जा रहा है और लंका मानों विभीषणने पा ली है। नगरमें श्रीरामचन्द्रजीकी दुहाई फिर गयी है और फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीको बुला भेजा है।

यह सपना मैं कहउँ पुकारी ❀ होइहि सत्य गयें दिन चारी ॥
तासु बचन सुन ते सब डरीं ❀ जनकसुता के चरनन्हिं परीं ॥

मैं पुकारकर कहती हूँ कि यह स्वप्न चार दिन बीतनेपर सत्य होगा। त्रिजटाका कथन सुनकर वे सब राक्षसियां डर गयीं और जानकीजीके चरणोंमें पड़ गयीं।

दो०—जहँ तहँ गईं सकल तब ❀ सीता कर मन सोचु ।
मास दिवस बीतें मोहि ❀ मारिहि निसिचर पोचु ॥ ११ ॥

फिर वे सब राक्षसियां जहां-तहां चली गयीं। सीताजी मनमें सोच करने लगीं कि नीच राक्षस रावण महीनेके दिन बीत जानेपर मुझे मार डालेगा।

त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी ❀ मातु बिपतिसंगिनि तैं मोरी ॥
तजउँ देह करु बेग उपाई ❀ दुसह बिरह अब नहिं सहि जाई ॥

सीताजी हाथ जोड़कर त्रिजटासे कहने लगीं—हे माता, तू मेरी विपत्तिकी संगिनी है। तू शीघ्र ही वह उपाय कर जिससे मैं अपना शरीर छोड़ दूँ। दुःसह वियोग अब नहीं सहा जाता।

आनि काठ रचु चिता बनाई ❀ मातु अनल पुनि देहि लगाई ॥
सत्य करहि मम प्रीति सयानी ❀ सुनइ को स्रवन सूलसम बानी ॥

काठ लाकर तू एक चिता भलीभाँति बना दे। हे माता; फिर उसमें आग लगा देना। हे सयानी, तू मेरी प्रीतिको सत्य कर दिखला। शूलके समान इस वाणीको कानोंसे कौन सुने!

सुनत बचन पद गहि समुझायेसि ❀ प्रभु-प्रताप-बल-सुजस सुनायेसि ॥
निसि न अनल मिलु सुनु सुकुमारी ❀ अस कहि सो निज भवन सिधारी ॥

सीताजीके ये वचन सुनकर त्रिजटाने उन्हें चरण पकड़कर समझाया और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके प्रताप, बल और सुयशको सुनाया। हे सुकुमारी, सुनो। रात्रिमें आग नहीं मिलेगी। ऐसा कहकर वह त्रिजटा भी अपने घर चली गयी।

कह सीता बिधि भा प्रतिकूला ❁ मिलिहि न पावक मिटहि न सूला ॥
देखिअत प्रगट गगन अंगारा ❁ अवनि न आवत एकउ तारा ॥

सीताजी कहने लगीं—दैव प्रतिकूल हो गया! न आग मिलेगी और न व्यथा दूर होगी। आकाशमें अंगारे प्रकट होते दिखलायी पड़ते हैं, परन्तु पृथिवीपर एक भी तारा नहीं आता।

पावकमय ससि स्रवत न आगी ❁ मानहुँ मोहि जानि हतभागी ॥
सुनहि बिनय मम बिटप असोका ❁ सत्य नाम करु हरु मम सोका ॥

चन्द्रमा अग्निमय हो रहा है, परन्तु आग नहीं गिराता; मानों मुझे हतभागिनी जानता हो। हे अशोक वृक्ष, तू मेरी विनती सुन रहा है। तू अपना नाम सत्य कर और मेरे शोकको दूर कर।

नूतन किसलय अनल समाना ❁ देहि अगिनि मम करहि निदाना ॥
देखि परम बिरहाकुल सीता ❁ सो छन कपिहि कलपसम बीता ॥

तेरे नये-नये पत्ते आगके समान हैं, तू ही मुझे आग दे और मेरा अन्त कर दे। सीताजीको श्रीरामचंद्रजी-के वियोगमें अत्यन्त व्याकुल देखकर हनुमानजीको वह क्षण एक कल्पके समान व्यतीत हुआ।

सो०—कपि करि हृदय बिचार ❁ दीन्हि मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अंगार ❁ दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ ॥१२॥

तब हनुमानजीने हृदयमें विचार करके अंगूठीको गिरा दिया, मानों अशोक वृक्षने अङ्गार दिया हो, यह समझकर प्रसन्न होकर सीताजीने उठकर उसे हाथमें ले लिया।

तब देखी मुद्रिका मनोहर ❁ राम-नाम-अंकित अति सुंदर ॥
चकित चितव मुदरी पहिचानी ❁ हरष बिषाद हृदय अकुलानी ॥

तब सीताजीने उस मनोहर अंगूठीको देखा, वह अत्यन्त सुन्दर थी और उसपर श्रीरामचन्द्रजीका नाम खुदा हुआ था। अंगूठीको पहिचानकर सीताजी उसे चकित होकर देखने लगीं। हृदयमें आनन्द और शोकके उद्वेगसे वे व्याकुल हो गयीं।

जीति को सकइ अजय रघुराई ❁ माया तें असि रचि नहिं जाई ॥
सीता मन बिचार कर नाना ❁ मधुरबचन बोलेउ हनुमाना ॥

अशोक-वाटिकामें सीता ।

অশোক-বনে সীতা ।

श्रीरामचन्द्रजी अजेय हैं। उन्हें कौन जीत सकता है? मायासे ऐसी अंगूठी रची नहीं जा सकती। सीताजी मनमें अनेक प्रकारसे विचार कर ही रही थीं कि उसी समय हनुमानजी मीठे वचनोंमें बोले।

रामचंद्र-गुन बरनइ लागा ❀ सुनतहि सीता कर दुख भागा॥
लागीं सुनइ स्रवन मन लाई ❀ आदिहु तें सब कथा सुनाई॥

हनुमानजी श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करने लगे, जिन्हें सुनते ही सीताजीका दुःख दूर हो गया। कान लगाकर मनसे सीताजी सब कथा सुनने लगीं और हनुमानजीने उसे आरम्भसे ही कह सुनाया।

स्रवनामृत जेहि कथा सुहाई ❀ कही सो प्रगट होत किन भाई॥
तब हनुमंत निकट चलि गयेऊ ❀ फिर बैठी मन बिसमय भयेऊ॥

फिर सीताजीने कहा—कानोंको अमृतके समान लगनेवाली इस सुन्दर कथाको जिसने कह सुनाया है वह, हे भाई, प्रकट क्यों नहीं होता? तब हनुमानजी सीताजीके पास चले गये। हनुमानजीके पास पहुंचनेपर सीताजीको मनमें बड़ा विस्मय हुआ और वे मुड़कर बैठ गयीं।

रामदूत मैं मातु जानकी ❀ सत्य सपथ करुनानिधान की॥
यह मुद्रिका मातु मैं आनी ❀ दीन्हि राम तुम्ह कहं सहिदानी॥
नर बानरहि संग कहु कैसें ❀ कही कथा भइ संगति जैसें॥

हे माता, हे जानकी, मैं श्रीरामचन्द्रजीका दूत हूं। करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीकी मुझे सच्ची सौगंद है! हे माता, यह अंगूठी मैं लाया हूं। श्रीरामचन्द्रजीने इसे आपके लिए चिह्न-स्वरूप दिया है। सीताजीने पूछा कि यह बतलाओ कि नर और वानरका संग कैसे हुआ? तब, जिस प्रकार संग हुआ था, वह सब कथा हनुमानजीने कह सुनायी।

दो०—कपि के बचन सप्रेम सुनि ❀ उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह ❀ कृपासिंधु कर दास॥ १३॥

प्रेमके साथ हनुमानजीके वचन सुनकर सीताजीके मनमें विश्वास उत्पन्न हो गया। उन्होंने यह जान लिया कि मन, वाणी और कर्मसे यह कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीका सेवक है।

हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी ❀ सजल नयन पुलकावलि ठाढ़ी॥
बूड़त बिरहजलधि हनुमाना ❀ भयेहु तात मो कहुं जलजाना॥

हनुमानजीको भगवानका भक्त जानकर सीताजीकी प्रीति बहुत बढ़ी। उनके नेत्रोंमें जल छा गया और शरीर पुलकायमान हो गया! हे हनुमान, मैं वियोगके समुद्रमें डूब रही थी। हे तात, तुम मेरे लिए नौकाके समान हो गये!

अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी ❀ अनुजसहित सुखभवन खरारी ॥
कोमलचित कृपालु रघुराई ❀ कपि केहि हेतु धरी निठुराई ॥

मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूं, अब खर नामक राक्षसके शत्रु, सुखके धाम श्रीरामचंद्रजीकी छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत कुशलता बतलाओ कृपालु श्रीरामचन्द्रजी कोमल चित्तवाले हैं। हे हनुमान, वे किस लिये निष्ठुर हो गये?

सहजबानि सेवक - सुख - दायक ❀ कबहुं क सुरति करत रघुनायक ॥
कबहुँ नयन मम सीतल ताता ❀ होइहहिं निरखि स्याम-मृदु-गाता ॥

अपने सहज-स्वभावसे ही वे सेवकोंको सुख देनेवाले हैं। वे रघुनायक, क्या कभी मुझे स्मरण करते हैं? हे तात; सांवला, सुकुमार शरीर देखकर क्या कभी मेरे नेत्र शीतल होंगे?

बचनु न आव नयन भरि बारी ❀ अहह नाथ हौं निपट बिसारी ॥
देखि परम बिरहाकुल सीता ❀ बोला कपि मृदु बचन बिनीता ॥

इस प्रकार कहते-कहते सीताजीका बोलना रुक गया, उनके नेत्र जलसे भर गये! फिर वे बोलीं, हा नाथ, मुझे बिलकुल भुला ही दिया! सीताजीको विरहमें अत्यन्त व्याकुल देखकर हनुमानजी नम्रतासे मीठे वचन बोले—

मातु कुसल प्रभु अनुजसमेता ❀ तव दुख दुखी सु-कृपा निकेता ॥
जनि जननी मानहु जिय ऊना ❀ तुम्ह तें प्रेमु राम कें दूना ॥

हे माता, छोटे भाई लक्ष्मणजीसमेत कृपानिधान प्रभु श्रीरामचन्द्रजी कुशलपूर्वक हैं, परन्तु वे केवल आपके दुःखसे दुःखी हैं। हे माता, आप अपना जी छोटा मत कीजिए। श्रीरामचंद्रजीको आपसे दूना प्रेम है।

दो०—रघुपति कर संदेसु अब ❀ सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयेउ ❀ भरे बिलोचन नीर ॥ १४ ॥

हे माता, अब धीरज रखकर श्रीरामचंद्रजीका संदेश सुनिये—ऐसा कहकर हनुमानजी गद्गद हो गये उनके नेत्रोंमें जल भर गया।

कहेउ राम बियोग तव सीता ❀ मो कहुं सकल भये बिपरीता ॥
नव - तरु - किसलय मनहुँ कृसानू ❀ काल-निसा-सम निसि ससि भानू ॥

हनुमानजी कहने लगे—श्रीरामचन्द्रजीने कहा है कि हे सीता, तेरे वियोगमें मेरे लिये सब बातें प्रतिकूल हैं। वृक्षोंके नये-नये पत्ते मानों आग हैं, रात्रि काल-रात्रिके समान और चन्द्रमा सूर्यके समान हो गया है।

कुवलयविपिन कुंत - बन - सरिसा ❀ बारिद तपत तेल जनु बरिसा ।
जे हित रहे करत तेइ पीरा ❀ उरग-स्वास - सम त्रिबिध समीरा ॥

कमलोंका वन भालोंके वनके समान हो गया है और बादल तो मानों गरम तेल ही बरसाते हैं। जो अभीतक सुखदायक रहे, वही पीड़ा देते हैं; शीतल, मंद और सुगंधित वायु सांपकी फुंकारके समान लगती है।

कहेहू ते कछु दुख घटि होई ❀ काहि कहउं यह जान न कोई ॥
तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा ❀ जानत प्रिया एकु मन मोरा ॥

कहनेसे भी दुःख कुछ कम हो जाता है, परन्तु मैं किससे कहूं, इस दुःखको कोई नहीं जानता! तेरे और अपने प्रेमका तत्त्व, हे प्रिया, एक मेरा मन ही जानता है।

सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं ❀ जानु प्रीतिरस एतनेहि माहीं ॥
प्रभुसंदेसु सुनत बैदेही ❀ मगन प्रेम तन - सुधि नहिं तेही ॥

वह मन सदा तेरे पास रहता है—इतनेमें ही प्रीतिका रस समझ ले। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका संदेश सुनते ही सीताजी प्रेममें मग्न हो गयीं, उन्हें अपने शरीरकी सुध नहीं रही।

कह कपि हृदय धीर धरु माता ❀ सुमिरु राम सेवक - सुख -दाता ॥
उर आनहु रघुपति - प्रभुताई ❀ सुनि मम बचन तजहु कदराई ॥

हनुमानजी कहने लगे कि हे माता, हृदयमें धीरज रखिये और सेवकोंको सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कीजिये। अपने हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताका ध्यान कीजिये और मेरे वचन सुनकर अपनी कायरताको छोड़ दीजिये।

दो०—निसिचर-निकर पतंगसम ❀ रघुपति - बान कृसानु ।
जननी हृदय धीर धरु ❀ जरे निसाचर जानु ॥१५॥

राक्षसोंका समुदाय पतंगोंके समान है और श्रीरामचन्द्रजीके वाण अग्निके समान हैं। हे माता, आप हृदयमें धीरज रखिये और राक्षसोंको जला हुआ समझिये।

जौं रघुबीर होति सुधि पाई ❀ करते नहिं बिलंबु रघुराई ॥
रामबान रबि उये जानकी ❀ तमबरूथ कहं जातुधान की ॥

रघुराज श्रीरामचन्द्रजीने यदि आपकी सुध पायी होती तो वे देरी नहीं करते। हे जानकीजी, श्रीरामचन्द्रजीके वाणरूपी सूर्यके उदय होनेपर राक्षसरूपी अन्धकारका समूह कहां रह सकता है?

अबहिं मातु मैं जाउं लेवाई ❀ प्रभुआयसु नहिं रामदोहाई ॥
कछुक दिवस जननी धरु धीरा ❀ कपिन सहित अइहहिं रघुबीरा ॥

हे माता, मुझे श्रीरामचन्द्रजीकी शपथ है, मैं आपको अभी लिवा ले चलूं; परन्तु श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा नहीं है। हे माता, कुछ दिनोंतक धीरज रखिये। श्रीरामचन्द्रजी वानरोंकी सेनासमेत आयंगे।

निसिचर मारि तोहि लेइ जैहहिं ❀ तिहुं पुर नारदादि जस गैहहिं ॥
हैं सुत कपि सब तुम्हहिं समाना ❀ जातुधान अति भट बलवाना ॥

वे राक्षसोंको मारकर आपको ले जायंगे और तीनों लोकोंमें नारद आदि उनका यश वर्णन करेंगे। सीताजीने कहा—हे पुत्र, क्या सब वानर तुम्हारे ही समान हैं? योद्धा राक्षस तो बड़े बलवान हैं।

मोरे हृदय परम संदेहा ❀ सुनि कपि प्रगट कीन्हि निजदेहा ॥
कनक - भूधरा - कार - सरीरा ❀ समरभयंकर अति बलबीरा ॥
सीता मन भरोस तब भयेऊ ❀ पुनि लघु रूप पवनसुत लयेऊ ॥

मेरे हृदयमें बड़ा संदेह है! सीताजीका यह कथन सुनकर हनुमानजीने अपना शरीर प्रकट किया। हनुमानजीका वह शरीर सोनेके पर्वत सुमेरुके समान आकारमें था और संग्राममें अत्यन्त बलवान वीरोंको भी डर दिलानेवाला था। जब सीताजीने यह देखा तब उनके मनमें भरोसा हो गया। पवनपुत्र हनुमानजीने फिर छोटा रूप बना लिया।

दो०—सुनु माता साखामृग ❀ नहिं बल-बुद्धि-बिसाल।
प्रभुप्रताप तें गरुड़हिं ❀ खाइ परमलघु ब्याल ॥१६॥

हे माता, सुनिये। हम सब बन्दर हैं, बल और बुद्धि भी अधिक नहीं है; परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके प्रताप से अत्यन्त छोटा सर्प भी गरुड़को खा जा सकता है।

मन संतोष सुनत कपिबानी ❀ भगति - प्रताप - तेज-बल सानी ॥
आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना ❀ होहु तात बल - सील - निधाना ॥

हनुमानजीकी भक्ति, प्रताप, तेज और बलसे पूर्ण बातें सुनकर सीताजीके मनमें सन्तोष हुआ। उन्होंने जान लिया कि हनुमानजी श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे हैं, इसलिये उनको आशिष दी कि हे तात, तुम बल और शीलके भाण्डार होओ।

अजर अमर गुननिधि सुत होहू ❀ करहिं बहुत रघुनायक छोहू ॥
करहिं कृपा प्रभु अस सुनि काना ❀ निभर प्रेममगन हनुमाना ॥

हे पुत्र, तुम अजर, अमर और गुणोंके भाण्डार होओ और श्रीरामचन्द्रजी तुमपर बहुत कृपा करें। प्रभु कृपा करें—यह कानोंसे सुनकर हनुमानजी पूर्ण प्रेममें मग्न हो गये।

बार बार नायेसि पद सीसा ❀ बोला बचन जोरि कर कीसा ॥
अब कृतकृत्य भयेउँ मैं माता ❀ आसिष तव अमोघ बिख्याता ॥

हनुमानजीने बार-बार चरणोंमें शिर नवाया और वे हाथ जोड़कर ये वचन बोले—हे माता, अब मैं कृतकृत्य हो गया। विख्यात है कि आपकी आशिष अमोघ है।

सुनहु मातु मोहिं अतिसय भूखा ❀ लागि देखि सुंदर फल रूखा ॥
सुनु सुत करहिं बिपिन रखवारी ❀ परम सुभट रजनीचर भारी ॥
तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं ❀ जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं ॥

हे माता, सुनिये। वृक्षोंपर सुन्दर फल देखकर मुझे बहुत अधिक भूख लग आयी है, सीताजीने कहा—हे पुत्र, सुनो। वनकी रक्षा बहुतसे राक्षस करते हैं, जो बड़े पराक्रमी योद्धा हैं। हनुमानजीने कहा कि हे माता, मुझे उनका डर नहीं है—यदि आप मनमें सुख मानें।

दो०—देखि बुद्धि-बल-निपुन कपि ❀ कहेउ जानकी जाहु।
रघुपति - चरन हृदय धरि ❀ तात मधुर फल खाहु ॥१७॥

हनुमानजीको बुद्धि और बलमें चतुर देखकर सीताजीने कहा कि हे तात, जाओ और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंको हृदयमें रखकर मीठे फल खाओ।

चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा ❀ फल खायेसि तरु तोरइ लागा ॥
रहे तहाँ बहु भट रखवारे ❀ कछु मारेसि कछु जाइ पुकारे ॥

सीताजीको शिर नवाकर हनुमानजी विदा हुए और बागमें घुस गये। उन्होंने फलोंको खाया और वृक्षोंको तोड़ने लगे। वहाँ बहुतसे रक्षक योद्धा थे, जिनमेंसे कुछको हनुमानजीने मार डाला और कुछने जाकर रावणसे पुकार की।

नाथ एक आवा कपि भारी ❀ तेहि असोकबाटिका उजारी ॥
खायेसि फल अरु बिटप उपारे ❀ रच्छक मर्दि मर्दि महि डारे ॥

हे नाथ, एक भारी बंदर आ गया है, जिसने अशोकवाटिकाको उजाड़ दिया है, फल खा डाले हैं, वृक्षोंको उखाड़ डाला है और रखवालोंको रगड़-रगड़कर पृथिवीपर डाल दिया है।

सुनि रावन पठयेउ भट नाना ❀ तिन्हहिं देखि गर्जेउ हनुमाना ॥
सब रजनीचर कपि संघारे ❀ गये पुकारत कछु अधमारे ॥

रखवालोंकी पुकार सुनकर रावणने बहुतसे योद्धाओंको भेजा। उन्हें देखकर हनुमानजीने गर्जना की। हनुमानजीने सब राक्षसोंको मार डाला। कुछ अधमरे राक्षस पुकारते हुए रावणके पास गये

पुनि पठयेउ तेहि अछयकुमारा ⊛ चला संग लेइ सुभट अपारा ॥
आवत देखि बिटप गहि तर्जा ⊛ ताहि निपाति महाधुनि गर्जा ॥

फिर रावणने अक्षयकुमारको भेजा, जो संगमें असंख्य योद्धाओंको लेकर विदा हुआ। अक्षयकुमारको आता हुआ देखकर हनुमानजी वृक्ष लेकर दौड़े और उसे मारकर बड़े जोरसे गर्जना की।

दो०—कछु मारेसि कछु मर्देसि ⊛ कछु मिलयेसि धरि धूरि।
कछु पुनि जाइ पुकारे ⊛ प्रभु मर्कट बलभूरि ॥१८॥

जो राक्षस आये थे, उनमेंसे कुछको मारा, कुछको रगड़ डाला और कुछको पीसकर धूलमें मिला दिया और कुछने फिर जाकर पुकार की कि हे स्वामिन्, बंदर बड़ा बलवान है!

सुनि सुतबध लंकेस रिसाना ⊛ पठयेसि मेघनाद बलवाना ॥
मारेसि जनि सुत बांधेसु ताही ⊛ देखिय कपिहि कहाँ कर आही ॥

पुत्र-वध-सुनकर लङ्कापति रावण क्रोधित हुआ और बलवान मेघनादको भेजा और कह दिया कि हे पुत्र, उसे मारना मत, बांध ले आ। बन्दरको देखें तो कि वह कहांका है?

चला इंद्रजित अतुलित-जोधा ⊛ बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा ॥
कपि देखा दारुन भट आवा ⊛ कटकटाइ गर्जा अरु धावा ॥

इन्द्रको जीतनेवाला मेघनाद अतुल योद्धाओंको लेकर विदा हुआ। भाईका मरना सुनकर उसे क्रोध उत्पन्न हुआ। हनुमानजीने जब यह देखा कि कोई भयानक वीर आया है, तब वे कटकटाकर गर्जे और उसपर दौड़े।

अतिबिसाल तरु एक उपारा ⊛ बिरथ कीन्ह लंकेसकुमारा ॥
रहे महाभट ता के संगा ⊛ गहि गहि कपि मर्दइ निजअंगा ॥

उन्होंने एक अत्यन्त विशाल वृक्षको उखाड़ लिया और लंकापति रावणके कुमारको रथविहीन कर दिया। उसके साथमें जो बड़े योद्धा थे, उन्हें पकड़-पकड़कर हनुमानजी अपने शरीरसे रगड़ने लगे।

तिन्हहिं निपाति ताहि सन बाजा ⊛ भिरे जुगल मानहुँ गजराजा ॥
मुठिका मारि चढ़ा तरु जाई ⊛ ताहि एक छन मुरुछा आई ॥
उठि बहोरि कीन्हेसि बहु माया ⊛ जीति न जाइ प्रभंजनजाया ॥

उन सबको मारकर वे मेघनादसे युद्ध करने लगे। दोनों ऐसे भिड़ गये; मानों दो गजराज हों। मेघनादको घूंसा मारकर हनुमानजी एक वृक्षपर जा चढ़े। घूंसेसे मेघनादको एक क्षणके लिये मूर्च्छा आ गयी। फिर उठकर मेघनादने बहुत माया फैलायी, परन्तु पवनपुत्र हनुमानजी किसी तरह जीते नहीं जा सके।

दो०—ब्रह्म अस्त्र तेहि साधा ❀ कपि मन कीन्ह बिचार।
जौं न ब्रह्म सर मानउँ ❀ महिमा मिटइ अपार ॥१९॥

मेघनादने जब ब्रह्मास्त्रको लिया तब हनुमानजीने मनमें विचार किया कि यदि ब्रह्मवाणको न मानूंगा तो उसकी अपार महिमा मिट जायगी।

ब्रह्मबान कपि कहुँ तेहि मारा ❀ परतिहुँ बार कटकु संघारा ॥
तेहि देखा कपि मुरुछित भयऊ ❀ नागपास बांधेसि लेइ गयऊ ॥

मेघनादने जब हनुमानजीको ब्रह्मवाण मारा तब उन्होंने गिरते हुए भी राक्षसोंकी सेनाका संहार किया। मेघनादने जब देखा कि वंदर मूर्च्छित हो गया, तब नागफांससे बांधकर ले गया।

जासु नाम जपि सुनहु भवानी ❀ भवबंधन काटहिं नर ग्यानी ॥
तासु दूत कि बंध तर आवा ❀ प्रभु कारज लगि कपिहि बंधावा ॥

शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, सुनो। जिसके नामको जपकर ज्ञानी मनुष्य संसारके बंधन काट डालते हैं, उसका दूत क्या किसी बंधनमें पड़ सकता है? प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके कार्यके लिये हनुमानजी स्वयं ही बंध गये।

कपिबंधन सुनि निसिचर धाये ❀ कौतुक लागि सभा सब आये ॥
दस-मुख-सभा दीखि कपि जाई ❀ कहि न जाइ कछु अतिप्रभुताई ॥

बंदरका बंध जाना सुनकर राक्षस दौड़े। कौतुक देखनेके लिये वे सब रावणकी सभामें पहुंचे। हनुमानजीने जाकर रावणकी सभा देखी। उसकी महान् प्रभुताका कुछ वर्णन नहीं किया जा सकता।

कर जोरे सुर दिसिप विनीता ❀ भृकुटि बिलोकत सकल सभीता ॥
देखि प्रताप न कपि मन संका ❀ जिमि अहिगन महं गरुड़ असंका ॥

देवता और दिक्पाल नम्रतापूर्वक हाथ जोड़े हुए हैं और सब भयसहित उसकी भृकुटीकी ओर देख रहे हैं। रावणका प्रताप देखकर हनुमानजीको मनमें कुछ भी शंका नहीं हुई, जैसे सर्पोंके बीचमें गरुड़ निःशंक हो।

दो०—कपिहि बिलोकि दसानन ❀ बिहंसा कहि दुर्बाद।
सुत-बध-सुरति कीन्हि पुनि ❀ उपजा हृदय बिषाद ॥२०॥

बन्दरको देखकर रावण दुर्वचन कहकर हंसा। फिर, जब उसने पुत्रके वधका स्मरण किया तब उसके हृदयमें शोक उत्पन्न हुआ।

कह लंकेस कवन तैं कीसा ❀ केहि के बल घालेहि बन खीसा ॥
की धौं स्रवन सुनेहि नहिं मोही ❀ देखउँ अति असंक सठ तोही ॥

लङ्कापति रावणने कहा कि अरे बंदर, तू कौन है ? किसके बलसे तूने वनको उजाड़ा ? कदाचित् तूने मुझे कानों नहीं सुना। अरे दुष्ट, मैं तुझे बहुत ही निडर देख रहा हूँ।

मारे निसिचर केहि अपराधा ❀ कहु सठ तोहि न प्रान कै बाधा ॥
सुनु रावन ब्रह्मांडनिकाया ❀ पाइ जासु बल बिरचित माया ॥

तूने राक्षसोंको किस अपराधके कारण मार डाला ? दुष्ट बतला; क्या तुझे प्राणोंका भी डर नहीं है ? हनुमानजीने उत्तर दिया—हे रावण सुन। जिसका बल पाकर माया समस्त ब्रह्माण्डोंकी रचना करती है,

जा के बल बिरंचि हरि ईसा ❀ पालत सृजत हरत दससीसा ॥
जा बल सीस धरत सहसानन ❀ अंडकोस समेत गिरि कानन ॥

हे रावण, जिसके बलसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश क्रमशः उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं; जिसके बलसे शेषनाग पर्वत और वनसमेत समस्त ब्रह्माण्डोंको अपने शिरपर धारण करते हैं—

धरे जो बिबिध देह सुरत्राता ❀ तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता ॥
हरकोदंड कठिन जेहि भंजा ❀ तोहि समेत नृप-दल-मद गंजा ॥
खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली ❀ बधे सकल अतुलित-बल-साली ॥

जो देवताओंका रक्षक है और तरह तरहके शरीर धारण किया करता है, जो तुम्हारे जैसे दुष्टोंको उपदेश देनेवाला है, जिसने शिवजीके कठोर धनुषको तोड़ दिया और तुझसमेत राजाओंके झुण्डका अभिमान चूर्ण कर दिया; जिसने अतुल बल-सम्पन्न खर, दूषण, त्रिशिरा और बालि, सबको मार डाला—

दो०—जाके बललवलेस तें ❀ जितेहु चराचर झारि।
तासु दूत मैं जा करि ❀ हरि आनेहु प्रियनारि ॥२१॥

जिसके बलके अत्यल्प अंशसे तूने चर और अचर—सबको जीत लिया और जिसकी प्यारी स्त्रीको तू चुरा लाया है, मैं उसीका दूत हूं।

जानउँ मैं तुम्हारि प्रभुताई ❀ सहसबाहु सन परी लराई ॥
समर बालि सन करि जसु पावा ❀ सुनि कपिबचन बिहँसि बहरावा ॥

मैं तुम्हारी प्रभुताको जानता हूं। सहस्रबाहुसे तुम्हारी लड़ाई हुई थी। तुमने वालिसे युद्ध करके भी यश पाया था। हनुमानजीके ये वचन सुनकर रावणने उन्हें हंसकर टाल दिया।

खायेउं फल प्रभु लागी भूखा ❀ कपिसुभाव तें तोरेउं रूखा ॥
सब के देह परमप्रिय स्वामी ❀ मारहिं मोहि कु-मारग-गामी ॥

हे प्रभो, मुझे भूख लगी थी, फल खा लिये और वानर स्वभावसे वृक्षोंको तोड़ डाला। हे स्वामिन्, देह सबकी अत्यन्त प्यारी होती है। कुमार्गमें चलनेवाले राक्षस मुझे मारने लगे।

जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारे ❀ तेहि पर बांधेउ तनय तुम्हारे ॥
मोहि न कछु बांधे कइ लाजा ❀ कीन्ह चहउं निज प्रभु कर काजा ॥

जिन्होंने मुझे मारा, उनको मैंने मार डाला—उसपर तुम्हारे पुत्रने मुझे बांध लिया! मुझे अपने बांधे जानेकी कुछ भी लज्जा नहीं है, क्योंकि मैं अपने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका कार्य करना चाहता हूं।

बिनती करउं जोरि कर रावन ❀ सुनहु मान तजि मोर सिखावन ॥
देखहु तुम्ह निज कुलहि बिचारी ❀ भ्रम तजि भजहु भगत-भय-हारी ॥

हे रावण, मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं। अभिमान छोड़कर मेरी सीख सुनो। तुम विचार करके अपने कुलको देखो और भ्रम छोड़कर भक्तोंके भयको दूर कर देनेवाले भगवानको भजो।

जा के डर अति काल डेराई ❀ जो सुर असुर चराचर खाई ॥
ता सों बैरु कबहुं नहिं कीजै ❀ मोरे कहे जानकी दीजै ॥

जिसके डरसे काल अत्यन्त डरता है और जो देवता और राक्षस—चराचरको खा जाता है, उससे बैर कभी नहीं करना चाहिये। मेरे कहनेसे जानकीजीको दे दो।

दो०—प्रनतपाल रघुनायक ❀ करुनासिंधु खरारि।
गये सरन प्रभु राखिहहिं ❀ तव अपराध बिसारि ॥ २२ ॥

खर नामक दैत्यके शत्रु श्रीरामचन्द्रजी दयाके समुद्र हैं और दीनोंके पालनेवाले हैं। शरणमें जानेसे प्रभु तुम्हारे अपराध भुलाकर तुम्हारी रक्षा ही करेंगे।

राम - चरन - पंकज उर धरहू ❀ लङ्का अचल राजु तुम्ह करहू ॥
रिषि - पुलस्ति - जसु बिमलमयंका ❀ तेहि ससि महं जनि होहु कलङ्का ॥

श्रीरामचंद्रजीके चरण-कमलोंको हृदयमें धारण करो और फिर तुम लंकामें अचल राज्य करो। पुलस्त्य ऋषिका यश निर्मल चन्द्रमा है। उस चन्द्रमामें कलङ्क-रूप मत हो।

रामनाम बिनु गिरा न सोहा ❀ देखु बिचारि त्यागि मदु मोहा ॥
बसनहीन नहिं सोह सुरारी ❀ सब - भूषन - भूषित बरनारी ॥

अभिमान और मोहको त्यागकर विचार करके देखो, श्रीरामचन्द्रजीके नाम बिना वाणी शोभा नहीं पाती। हे देवताओंके शत्रु, सब गहनोंसे सजी हुई होनेपर भी सुन्दर स्त्री, यदि वस्त्र न हो, शोभित नहीं होती।

रामबिमुख संपति प्रभुताई ❀ जाइ रही पाई बिनु पाई ॥
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं ❀ बरषि गये पुनि तबहिं सुखाहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजीके विमुख मनुष्यकी सम्पत्ति और प्रभुता व्यर्थ ही है, उसका पाना भी नहीं पानेके समान है। जिन नदियोंका मूल (उद्गम) सजल नहीं है, वे बरस जानेपर भी फिर तुरन्त सूख जाती हैं।

सुनु दसकंठ कहउँ पन रोपी ❀ बिमुख राम त्राता नहिं कोपी ॥
संकर सहस बिस्नु अज तोही ❀ सकहिं न राखि राम कर द्रोही ॥

हे रावण, सुनो। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूं। श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होनेवालेको बचानेवाला कोई भी नहीं है। श्रीरामचन्द्रजीके वैरी—तुमको—हज़ार शिव, हज़ार विष्णु और हज़ार ब्रह्मा भी बचा नहीं सकते।

दो०—मोहमूल बहु सूल प्रद ❀ त्यागहु तम अभिमान।
भजहु राम रघुनायक ❀ कृपासिंधु भगवान ॥ २३ ॥

तुम तमोगुण पूर्ण अभिमानको त्याग दो, जिसकी जड़ मोह है और जो बहुत पीड़ा पहुंचानेवाला है। तुम भगवान रघुनायक श्रीरामचन्द्रजीका भजन करो, जो दयाके समुद्र हैं।

जदपि कही कपि अतिहितबानी ❀ भगति-बिबेक-बिरति-नय-सानी ॥
बोला बिहंसि महाअभिमानी ❀ मिला हमहिं कपि गुरु बड़ ग्यानी ॥

यद्यपि हनुमानजीने भक्ति, विवेक, वैराग्य और नीतिसे भरी हुई अत्यन्त हित करनेवाली वाणी कही तथापि वह महा अभिमानी रावण हंसकर कहने लगा कि हमें यह बन्दर गुरु बड़ा ज्ञानी मिला है!

मृत्यु निकट आई खल तोही ❀ लागेसि अधम सिखावन मोही ॥
उलटा होइहि कह हनुमाना ❀ मतिभ्रम तोहि प्रगट मैं जाना ॥

अरे दुष्ट, मृत्यु तेरे पास आ गयी है। नीच, मुझे सीख देने लगा है! हनुमानजीने कहा कि इसका उलटा होगा। मुझे प्रकट मालूम होता है कि तुझे मति-भ्रम हो गया है।

सुनि कपिबचन बहुत खिसियाना ❀ बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना ॥
सुनत निसाचर मारन धाये ❀ सचिवन्ह सहित बिभीषन आये ॥

हनुमानजीके वचन सुनकर रावण बहुतही खिसिआया और कहने लगा कि इस मूर्खको शीघ्र ही क्यों नहीं मार डालते? यह सुनकर हनुमानजीको मारनेके लिये राक्षस दौड़े, उसी समय मंत्रियोंसमेत विभीषण आ गये।

नाइ सीस करि बिनय बहूता ❀ नीतिबिरोध न मारिय दूता ॥
आन दंड कछु करिय गोसाईं ❀ सबहीं कहा मंत्र भल भाई ॥
सुनत बिहँसि बोला दसकंधर ❀ अंगभंग करि पठइय बंदर ॥

शिर नवाकर उन्होंने बहुत ही विनती की, कि दूतको मारना नहीं चाहिये, क्योंकि वैसा करना नीतिके विपरीत है। हे स्वामिन्, कुछ और दण्ड निश्चित कीजिये। इसपर सभी राक्षस कहने लगे कि भाइयो, यह सलाह अच्छी है। यह सुनकर रावण हंसकर कहने लगा कि बंदरको अङ्गभंग करके भेजना चाहिये।

दो०—कपि कै ममता पूँछि पर ❀ सबहिं कहेउ समुझाइ।
तेल बोरि पट बांधि पुनि ❀ पावक देहु लगाइ ॥ २४ ॥

सभीको समझाकर रावणने कहा कि बंदरोंकी ममता पूंछपर होती है। कपड़ेको तेलमें डुबाकर और फिर उसे इसकी पूंछमें बांधकर आग लगा दो।

पूंछहीन बानर तहँ जाइहि ❀ तब सठ निज नाथहिं लेइ आइहि ॥
जिन्ह कै कीन्हेसि बहुत बड़ाई ❀ देखउँ मैं तिन्ह कै प्रभुताई ॥

जब विना पूंछका बंदर वहां जायगा, तब दुष्ट अपने स्वामीको ले आवेगा। जिनकी इसने बहुत बड़ाई की है, मैं उनकी प्रभुता देखूंगा।

बचन सुनत कपि मन मुसुकाना ❀ भइ सहाय सारद मैं जाना ॥
जातुधान सुनि रावनबचना ❀ लागे रचइ मूढ़ सोइ रचना ॥

यह वचन सुनकर हनुमानजी अपने मनमें मुस्कुराये। वे सोचने लगे—मैंने जान लिया, सरस्वतीजी सहायक हो गयीं। रावणके वचन सुनकर मूर्ख राक्षस वही रचना रचने लगे।

रहा न नगर बसन घृत तेला ❀ बाढ़ी पूंछि कीन्ह कपि खेला ॥
कौतुक तहं आये पुरबासी ❀ मारहिं चरन करहिं बहु हांसी ॥

हनुमानजीने एक खेल किया। उनकी पूंछ इतनी लंबी हो गयी कि नगरमें कपड़ा, घी और तेल नहीं बचा, तमाशा देखनेके लिए नगरनिवासी वहाँ आ गये जो पूंछमें लातें मारते और खूब हंसी करते थे।

बाजहिं ढोल देहिं सब तारी ❀ नगर फेरि पुनि पूंछि पजारी ॥
पावक जरत देखि हनुमंता ❀ भयउ परम लघु रूप तुरंता ॥
निबुकि चढ़ेउ कपि कनकअटारी ❀ भईं सभीत निसाचर-नारी ॥

ढोल बजाते और सब ताली बजाते थे। हनुमानजीको नगरमें घुमाकर फिर पूंछमें आग लगा दी। अग्नि-

को जलता हुआ देखकर हनुमानजीने तुरत ही अत्यन्त छोटा रूप कर लिया। हनुमानजी उछलकर एक सोनेकी अटारीपर चढ़ गये, जिससे राक्षसोंकी स्त्रियां भयभीत हो गयीं।

दो०—हरिप्रेरित तेहि अवसर ❀ चले मरुत उनचास।
अट्टहास करि गर्जा ❀ कपिबढ़ि लाग अकास ॥ २५ ॥

भगवान्‌की प्रेरणासे उस समय उनचासों पवन चले। हनुमानजीने अट्टहास करके गर्जनाकी और बढ़कर आकाशसे जा लगे।

देह बिसाल परम हरुआई ❀ मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई ॥
जरइ नगर भा लोग बिहाला ❀ झपट लपट बहुकोटि कराला ॥

हनुमानजीकी विशाल देह बहुत ही हलकी हो गयी और वे दौड़-दौड़कर एक घरसे दूसरे घरपर चढ़ जाने लगे। नगर जलने लगा, लोग बेहाल हो गये, और अग्निकी कई करोड़ भयंकर लपटें झपटने लगीं।

तात मातु हा सुनिय पुकारा ❀ एहि अवसर को हमहिं उबारा ॥
हम जो कहा यह कपि नहिं होई ❀ बानररूप धरे सुर कोई ॥

हाय पिता! हाय माता!—यह चिल्लाहट सुनायी पड़ने लगी। सब कहने लगे—इस समय हमारी रक्षा कौन करेगा? हमने जो कहा था कि यह बंदर नहीं है, कोई देवता बंदरका रूप रखे हुए है।

साधु अवग्या कर फल ऐसा ❀ जरइ नगर अनाथ कर जैसा ॥
जारा नगरु निमिष एक माहीं ❀ एक बिभीषन कर गृह नाहीं ॥

साधुके तिरस्कारका यही फल होता है कि नगर ऐसा जल रहा है; जैसे वह किसी अनाथका हो। हनुमानजीने एक निमेषमें सारा नगर जला दिया, केवल एक विभीषणके घरको नहीं जलाया।

ताकर दूत अनल जेहिं सिरिजा ❀ जरा न सो तेहि कारन गिरिजा ॥
उलटि पलटि लंका सब जारी ❀ कूदि परा पुनि सिंधु मंझारी ॥

महादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती, जिसने अग्निको उत्पन्न किया है, हनुमानजी उसीके दूत हैं। इसी कारण वे नहीं जले। उलट-पलटकर उन्होंने सारी लंकाको जला दिया और फिर समुद्रमें कूद पड़े।

दो०—पूंछि बुझाइ खोइ स्रम ❀ धरि लघुरूप बहोरि।
जनकसुता के आगे ❀ ठाढ़ भयेउ कर जोरि ॥ २६ ॥

पूंछको बुझाकर और थकावटको दूर करके हनुमानजीने फिर छोटा रूप रख लिया और हाथ जोड़कर वे सीताजीके आगे जा खड़े हुए।

मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा ❀ जैसे रघुनायक मोहि दीन्हा ॥
चूड़ामनि उतारि तब दयऊ ❀ हरष समेत पवनसुत लयऊ ॥

हनुमानजीने कहा—हे माता, जैसे श्रीरामचन्द्रजीने मुझे दिया था, वैसे ही आप भी मुझे कुछ चिह्न दीजिये। तब सीताजीने अपनी चूणामणि उतारकर दे दी, जिसे प्रसन्नतापूर्वक हनुमानजीने ले लिया।

कहेउ तात अस मोर प्रनामा ❀ सब प्रकार प्रभु पूरनकामा ॥
दीन-दयालु बिरदु-संभारी ❀ हरहु नाथ मम संकट भारी ॥

सीताजीने कहा—हे तात, मेरा प्रणाम कहना और यह कि हे प्रभो, यद्यपि आप सब प्रकार पूर्णकाम हैं तथापि दीनोंपर दया करनेवाले भी हैं। आप अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करके, हे नाथ, मेरे भारी संकटको दूर कीजिये।

तात सक्र-सुत कथा सुनायेहु ❀ बानप्रताप प्रभुहिं समुझायेहु ॥
मास दिवस महुं नाथ न आवा ❀ तौ पुनि मोहि जियत नहिं पावा ॥

हे तात, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको इन्द्रके पुत्र जयन्तकी कथा सुनाना, वाणका प्रताप समझाना। एक मासके अन्दर यदि स्वामी न आवेंगे तो फिर मुझे जीती न पावेंगे।

कहु कपि केहि बिधि राखउं प्राना ❀ तुम्हहूं तात कहत अब जाना ॥
तोहि देखि सीतल भइ छाती ❀ पुनि मो कहुं सोइ दिनु सोइ राती ॥

हे हनुमान, तुम्हीं कहो, किस प्रकार प्राण रखूँ ? हे तात, अब तो तुम भी जानेके लिए कह रहे हो। तुम्हें देखकर छाती शीतल हुई थी, अब फिर मेरे लिए वही दिन और वही रात!

दो०—जनकसुतहिं समुझाइ करि ❀ बहुबिधि धीरजु दीन्ह।
चरनकमल सिरु नाइ कपि ❀ गवनु राम पहिं कीन्ह ॥ २७ ॥

जानकीजीको समझाकर हनुमानजीने बहुत प्रकारसे धीरज दिया और फिर चरणकमलोंको शिर नवाकर वे श्रीरामचन्द्रजीके पास चल दिये।

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी ❀ गर्भ स्रवहिं सुनि निसिचर-नारी ॥
नाँघि सिंधु एहि पारहिं आवा ❀ सबद किलकिला कपिन्ह सुनावा ॥

चलते समय हनुमानजीने ऊंची आवाजसे भारी गर्जना की, जिसे सुनकर राक्षसोंकी स्त्रियोंके गर्भ गिरने लगे! समुद्रको नांघकर हनुमानजी इस पार आए और बन्दरोंको अपनी किलकारीका शब्द सुनाया।

हरषे सब बिलोकि हनुमाना ❀ नूतन जनम कपिन्ह तब जाना ॥
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा ❀ कीन्हेसि रामचन्द्र कर काजा ॥

हनुमानजीको देखकर सब वानर प्रसन्न हुए और उस समय उन्होंने समझा कि नया जन्म हुआ हनुमानजीका मुख प्रसन्न था और शरीरपर तेज विराजमान था, इससे उन्होंने जान लिया कि इन्होंने श्रीरामचंद्र-जीका कार्य कर लिया है।

मिले सकल अति भये सुखारी ❀ तलफत मीन पाव जिमि बारी ॥
चले हरषि रघुनायक पासा ❀ पूछत कहत नवल इतिहासा ॥

सब वानर हनुमानजीसे मिले और अत्यन्त सुखी हुए, मानों छटपटाती हुई मछलीको पानी मिल गया हो वे सब प्रसन्न होकर लंका आकर हनुमानजीके लौटनेके नवीन वृत्तान्तको पूछते और कहते हुए श्रीरामचन्द्रजीके पास चल दिये।

तब मधुबन भीतर सबु आये ❀ अंगद संमत मधुफल खाये ॥
रखवारे जब बरजइ लागे ❀ मुष्टिप्रहार हनत सब भागे ॥

फिर सब लोग मधुवनके भीतर पहुंचे और अंगदजीकी आज्ञासे मीठे फलोंको खाया। जब रक्षक लोग रोकने लगे तब वानरोंने उन्हें घुसोंसे मारा, जिससे तुरंत ही वे सब रक्षक भाग गये।

दो०—जाइ पुकारे ते सबु ❀ वन उजार जुवराजु ।
सुनि सुग्रीव हरष कपि ❀ करि आये प्रभुकाजु ॥ २८ ॥

उन सब रक्षकोंने जाकर पुकार की कि युवराज अंगदने वनको उजाड़ डाला। यह सुनकर सुग्रीव प्रसन्न हुए कि वानर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका कार्य पूरा कर आये हैं।

जौं न होति सीतासुधि पाई ❀ मधुबन के फल सकहिं कि खाई ॥
एहि बिधि मन बिचार कर राजा ❀ आइ गये कपि सहित समाजा ॥

यदि सीताकी सुध न पायी होती तो मधुवनके फलोंको क्या वे खा सकते थे ? राजा सुग्रीव इस प्रकार मनमें विचार कर रहे थे कि अपने समाजसमेत सब वानर वहां आ गए।

आइ सबन्हि नावा पद सीसा ❀ मिले सबन्हि अतिप्रेम कपीसा ॥
पूछी कुसल कुसलपद देखी ❀ रामकृपा भा काजु बिसेखी ॥

आकर सबने चरणोंमें शिर नवाया। वानरोंके स्वामी सुग्रीव सबसे बड़े प्रेमसे मिले। फिर सुग्रीवने जब कुशल पूछी तब उन्होंने कहा कि आपके चरणोंके दर्शनकर सब कुशल हैं। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे जो विशेष कार्य था वह पूरा हो गया।

नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना ❀ राखे सकल कपिन्ह के प्राना ॥
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ ❀ कपिन्हसहित रघुपति पहं चलेऊ ॥

हे नाथ, वह कार्य हनुमानजीने पूरा किया और सब वानरोंके प्राण बचा लिए। यह सुनकर सुग्रीव हनुमानजीसे फिर मिले और सब वानरोंसमेत श्रीरामचन्द्रजीके पास गये।

राम कपिन्ह जब आवत देखा ❀ किये काजु मन हरष बिसेखा ॥
फटिकसिला बैठे दोउ भाई ❀ परे सकल कपि चरनन्हि जाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब वानरोंको आते देखा तब उनके मनकी विशेष प्रसन्नतासे उन्होंने जान लिया कि इन्होंने काम कर लिया है। दोनों भाई स्फटिक पत्थरकी चट्टानपर बैठे हुए थे, सब वानर उनके चरणोंमें लिपट गये।

दो०—प्रीतिसहित सब भेंटे ❀ रघुपति करुनापुंज।
पूछी कुसल नाथ अब ❀ कुसल देखि पदकंज ॥ २९ ॥

दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी प्रेमके साथ सबसे मिले और कुशल पूछी। वानरोंने कहा कि हे नाथ, आपके चरण-कमल देखकर अब सब कुशल है।

जामवंत कह सुनु रघुराया ❀ जापर नाथ करहु तुम्ह दाया ॥
ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर ❀ सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ॥

जाम्बवान् कहने लगे—हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। हे नाथ, आप जिसपर दया करते हैं उसको सदा शुभ है और निरंतर कुशल है। देवता, मनुष्य और मुनि—सब उसपर प्रसन्न हैं।

सोइ बिजई बिनई गुनसागर ❀ तासु सुजस त्रयलोक उजागर ॥
प्रभु की कृपा भयेउ सबु काजू ❀ जनम हमार सुफल भा आजू ॥

वही विजयी है, वही विनयी है, वही गुणोंका समुद्र है और उसीका सुयश तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध हो जाता है। हे स्वामिन्, आपकी कृपासे सब कार्य हो गया। हमारा जन्म आज सुफल हुआ।

नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी ❀ सहसहु मुख न जाइ सो बरनी ॥
पवनतनय के चरित सुहाये ❀ जामवंत रघुपतिहि सुनाये ॥

हे नाथ, पवनपुत्र हनुमानने जो पराक्रम दिखलाया, उसका हजार मुखोंसे भी वर्णन नहीं करते बनता। फिर जाम्बवान्ने हनुमानजीके सुहावने चरित श्रीरामचन्द्रजीको कह सुनाये।

सुनत कृपानिधि मन अति भाये ❀ पुनि हनुमान हरषि हिय लाये ॥
कहहु तात केहि भाँति जानकी ❀ रहति करति रच्छा स्वप्रान की ॥

सुनकर दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीके मनको वे सब बातें अत्यन्त प्रिय लगीं। उन्होंने प्रसन्न होकर

हनुमानजीको अपने हृदयसे फिर लगा लिया। श्रीरामचन्द्रजीने कहा, हे तात, यह कहो, सीताजी किस प्रकार हैं। वे अपने प्राणोंकी रक्षा तो करती रहती हैं?

दो०—नाम पाहरू दिवस निसि ❀ ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज-पद-जंत्रित ❀ जाहिं प्रान केहि बाट ॥३०॥

हनुमानजीने कहा—हे स्वामिन्, प्राण किस रास्तेसे निकलें—रात-दिन उनको आपका नाम (जिसे वे रटती रहती हैं) पहरेदार है, आपका ध्यान (जिसे वे लगाये रहती हैं) किवाड़ हैं और अपने चरणोंकी ओर लगे हुए उनके जो नेत्र हैं, वही मानों ताला लगा हुआ है।

चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही ❀ रघुपति हृदय लाइ सोइ लीन्ही ॥
नाथ जुगललोचन भरि बारी ❀ बचन कहे कछु जनककुमारी ॥

चलते समय उन्होंने मुझे चूड़ामणि दी। श्रीरामचन्द्रजीने लेकर उसे अपने हृदयसे लगा लिया। फिर हनुमानजी कहने लगे—हे नाथ, दोनों नेत्रोंमें जल भरकर जानकीजीने कुछ संदेश भी कहा है।

अनुजसमेत गहेहु प्रभुचरना ❀ दीनबंधु प्रनतारतिहरना ॥
मन क्रम बचन चरन अनुरागी ❀ केहि अपराध नाथ हौं त्यागी ॥

सीताजीने कहा है कि लक्ष्मणजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरण पकड़ना और प्रार्थना करना कि हे दीनबन्धु, आप भक्तजनोंके दुःखोंको दूर कर देने वाले हैं। मैं मन, वाणी और कर्मसे आपके चरणोंकी अनुरागिणी हूँ—फिर हे नाथ, आपने किस अपराधके कारण मुझे त्याग दिया?

अवगुन एक मोर मैं माना ❀ बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना ॥
नाथ सो नयनन्हि कर अपराधा ❀ निसरत प्रान करहिं हठि बाधा ॥

मैं जानती हूँ कि मेरा एक दोष है कि आपसे वियोग होते ही मेरे प्राण नहीं चल दिये! हे नाथ, यह अपराध नेत्रोंका है, जो निकले हुए प्राणोंको हठपूर्वक रोक लेते हैं।

बिरह अगिनि तनु तूल समीरा ❀ स्वास जरइ छन माहं सरीरा ॥
नयन स्रवहिं जलु निजहित लागी ❀ जरइ न पाव देह बिरहागी ॥
सीता कै अति बिपति बिसाला ❀ बिनहिं कहे भलि दीनदयाला ॥

आपका वियोग अग्निके समान है और मेरा शरीर रूईके समान है। मेरा श्वास पवनके समान है। इनसे यों शरीर एक क्षणमें जल जाये, परन्तु अपने लाभ (दर्शन) के लिये नेत्र जल बरसाते रहते हैं, जिससे विरहाग्निमें शरीर जलने नहीं पाता। हनुमानजीने कहा कि हे दीनदयालु, सीताजीकी विपत्ति अत्यन्त गहरी है, वह बिना कहे ही अच्छी।

दो०—निमिष निमिष करुनानिधि ❀ जाहिं कलपसम बीति।
बेगि चलिय प्रभु आनिय ❀ भुजबल खलदल जीति ॥३१॥

हे दयानिधे, एक-एक निमेष सीताजीको कल्पके समान बीतता है। हे स्वामिन्, शीघ्र चलिये और अपनी भुजाओंके बलसे दुष्टोंके समूहको जीतकर उन्हें ले आइये।

सुनि सीतादुख प्रभु सुखअयना ❀ भरि आये जल राजिवनयना ॥
बचन काय मन मम गति जाही ❀ सपनेहुँ बूझिय बिपति कि ताही ॥

सीताजीका दुःख सुनकर सुखधाम प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके कमल-नेत्रोंमें जल भर आया! उन्होंने कहा—मन, वाणी और शरीरसे जिसको, मेरी ही गति है, उसे क्या स्वप्नमें भी विपत्ति पूछ सकती है?

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई ❀ जब तव सुमिरन भजनु न होई ॥
केतिक बात प्रभु जातुधान की ❀ रिपुहि जीति आनिबी जानकी ॥

हनुमानजीने कहा कि हे प्रभो, विपत्ति तो वही है कि जब कि आपका स्मरण और भजन नहीं होता। हे स्वामिन्, राक्षसोंकी बात ही कितनी है? शत्रुको जीतकर जानकीजीको ले आयेंगे।

सुनु कपि तोहि समान उपकारी ❀ नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥
प्रतिउपकार करउँ का तोरा ❀ सनमुख होइ न सकत मन मोरा ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि हे हनुमान, सुनो। देवता, मनुष्य और मुनियोंमें दूसरा कोई शरीरधारी नहीं है, जो तुम्हारे समान उपकारी हो। मैं तुम्हारा प्रत्युपकार क्या करूँ, मेरा मन तुम्हारे सम्मुख नहीं हो सकता!

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं ❀ देखेउँ कर बिचार मन माहीं ॥
पुनि पुनि कपिहि चितव सुरत्राता ❀ लोचन नीर पुलक अति गाता ॥

हे पुत्र, सुनो। मैंने मनमें विचारकर देख लिया कि मैं तुमसे उऋण नहीं! देवरक्षक श्रीरामचन्द्रजी हनुमानजीकी ओर बार-बार देख रहे थे, उनके नेत्रोंमें जल छाया हुआ था और शरीर अत्यन्त पुलकायमान हो रहा था!

दो०—सुनि प्रभुबचन बिलोकि मुख ❀ गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल ❀ त्राहि त्राहि भगवंत ॥३२॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर और उनके मुखके दर्शन कर हनुमानजी शरीरमें प्रसन्न होकर और प्रेममें विह्वल होकर चरणोंमें लिपट गये और कहने लगे कि हे भगवन्, मेरी रक्षा कीजिये।

बार बार प्रभु चहहिं उठावा ❀ प्रेममगन तेहि उठब न भावा ॥
प्रभु - कर - पंकज कपि कें सीसा ❀ सुमिरि सो दसा मगन गौरीसा ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी बार-बार उठाना चाहते थे, परन्तु हनुमानजी प्रेममें मग्न थे और उन्हें उठना रुचता न था। प्रभुका करकमल हनुमानजीके शिरपर रखा हुआ था। उस दशाका स्मरण कर गौरीपति शंकर मग्न हो गये।

सावधान मन करि पुनि संकर ❀ लागे कहन कथा अतिसुंदर ॥
कपि उठाइ प्रभु हृदय लगावा ❀ कर गहि परमनिकट बैठावा ॥

मनको सावधान करके शंकरजी वही अत्यन्त सुन्दर कथा फिर कहने लगे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने हनुमानजीको उठाकर अपने हृदयसे लगाया और हाथ पकड़कर अपने बिलकुल पास बैठा लिया।

कहु कपि रावनपालित लंका ❀ केहि बिधि दहेहु दुर्ग अतिबंका ॥
प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना ❀ बोला बचन बिगत - अभिमाना ॥

श्रीरामचन्द्रजी पूछने लगे—हे हनुमान, यह बतलाओ कि जिस लङ्काका पालन रावण करता है और जिसका दुर्ग अत्यन्त दृढ़ है, उसे तुमने किस प्रकार जलाया! प्रभुको प्रसन्न जानकर हनुमानजी अभिमान-शून्य वचन बोले—

साखामृग कै बड़ि मनुसाई ❀ साखा तें साखा पर जाई ॥
नाँघि सिंधु हाटकपुर जारा ❀ निसिचर-गन बधि बिपिन उजारा ॥
सो सब तव प्रताप रघुराई ❀ नाथ न कछु मोरी प्रभुताई ॥

बंदरका यही बड़ा पुरुषार्थ है कि वह एक डालसे दूसरी डालपर उछल जाता है। मैंने समुद्र नांघकर स्वर्णपुरी लंकाको जलाया और राक्षसोंको मार-मारकर वनको उजाड़ दिया; हे श्रीरामचन्द्रजी, यह सब आपका प्रताप है। हे नाथ, इसमें मेरी प्रभुता कुछ भी नहीं है!

दो०—ता कहुँ प्रभु कछु अगम नहिं ❀ जा पर तुम्ह अनुकूल ।
तव प्रभाव बड़वानलहि ❀ जारि सकइ खलु तूल ॥३३॥

हे स्वामिन, जिसपर आप दयालु हों, उसके लिये कुछ भी अगम्य नहीं है। आपके प्रतापसे तुच्छ रूई भी बड़वानलको जला सकती है।

नाथ भगति अति - सुख - दायिनी ❀ देहु कृपा करि अनपायिनी ॥
सुनि प्रभु परमसरल कपिबानी ❀ एवमस्तु तब कहेउ भवानी ॥

हे नाथ, आपकी भक्ति अत्यन्त सुख देनेवाली है। कृपा करके आप मुझे अपनी नित्य रहनेवाली भक्ति दीजिये। शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, तब हनुमानजीकी अत्यंत सरल वाणी सुनकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि ऐसा ही हो।

उमा रामसुभाव जेहिं जाना ❀ ताहि भजनु तजि भाव न आना ॥
यह संबाद जासु उर आवा ❀ रघुपति-चरन-भगति सोइ पावा ॥

हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव जिसने जान लिया उसे उनका भजन छोड़कर और कोई बात अच्छी नहीं लगती। यह प्रसंग जिसके हृदयमें आयगा वही श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी भक्ति पायगा।

सुनि प्रभुबचन कहहिं कपिबृंदा ❀ जय जय जय कृपाल सुखकंदा ॥
तब रघुपति कपिपतिहिं बोलावा ❀ कहा चलइ कर करहु बनावा ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर वानरोंके झुण्ड कहने लगे—हे कृपालु, हे सुखमूल, आपकी जय हो, जय हो, जय हो। तब श्रीरामचन्द्रजीने कपिराज सुग्रीवको बुलाया और कहा कि चलनेकी तयारी करो।

अब बिलंबु केहि कारन कीजे ❀ तुरत कपिन्ह कहुं आयेसु दीजे ॥
कौतुक देख सुमन बहु बरषी ❀ नभ तें भवन चले सुर हरषी ॥

अब देरी किस कारण की जाय। तुरन्त ही वानरोंको आज्ञा दे देनी चाहिये। यह सब कौतुक देखकर आकाशसे बहुतसे फूलोंको बरसाकर देवता प्रसन्न होकर अपने-अपने घरको चल दिये।

दो०—कपिपति बेगि बोलाये ❀ आये जूथप जूथ।
नानाबरन अतुल बल ❀ बानर भालु बरूथ ॥३४॥

कपिराज सुग्रीवने जब शीघ्र ही बुलाया तब रीछ और बन्दरोंकी सेनाके झुण्ड और सेनापति आ गये। वें सब तरह-तरहके रङ्गोंवाले और अतुल बलसंपन्न थे।

प्रभु-पद-पंकज नावहिं सीसा ❀ गर्जहिं भालु महाबल कीसा ॥
देखी राम सकल कपि सेना ❀ चितइ कृपा करि राजिवनयना ॥

वे सब महाबलवान् रीछ और बंदर आकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको शिर नवाने और गर्जना करने लगे। श्रीरामचन्द्रजीने कृपा करके कमलनेत्रोंसे दृष्टि डालकर वानरोंकी संपूर्ण सेनाको देखा।

राम-कृपा-बलु पाइ कपिंदा ❀ भये पच्छजुत मनहुं गिरिंदा ॥
हरषि राम तब कीन्ह पयाना ❀ सगुन भये सुंदर सुभ नाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी कृपाका बल पाकर वे सब श्रेष्ठ बन्दर ऐसे हो गये; मानो श्रेष्ठ पर्वतोंको पंख लग गये हों। तब श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर प्रस्थान किया। उस समय तरह-तरहके सुन्दर शुभ शकुन होने लगे।

जासु सकल मंगलमय कीती ❀ तासु पयान सगुन यह नीती ॥
प्रभुपयान जाना बैदेही ❀ फरकि बामअंग जनु कहि देही ॥

जिनकी कीर्ति संपूर्ण मंगलोंसे पूर्ण है, उनके प्रस्थानके समय शकुन हुए—यह केवल नीति है! प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके प्रस्थान करनेकी बात सीताजीने जान ली, मानों उनके वाम अंगने फड़ककर कह दिया हो।

जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई ❀ असगुन भयेउ रावनहि सोई ॥
चला कटकु को बरनइ पारा ❀ गर्जहिं बानर भालु अपारा ॥

जानकीजीको जो-जो शकुन हो रहे थे, रावणको वही अशकुन हुए। सेना चल दी। उसका वर्णन करके कौन पार पा सकता है? असंख्य रीछ और बंदर गर्जना कर रहे थे।

नखआयुध गिरि - पादप - धारी ❀ चले गगन महि इच्छाचारी ॥
केहरिनाद भालु कपि करहीं ❀ डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं ॥

उन सब रीछ और बंदरोंके अस्त्र-शस्त्र नख ही हैं। वृक्षों और पर्वतोंको लिये हुए वे सब अपने इच्छानुसार पृथिवी और आकाशमें चलने लगे। रीछ और बन्दर सिंहके समान गर्जना करते थे, जिससे दिग्गज डगमगाने और चिंघार करने लगे।

छं०—चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे।
मन हरष दिनकर सोम सुर मुनि नाग किन्नर दुख टरे ॥
कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं।
जय राम प्रबलप्रताप कोसलनाथ गुनगन गावहीं ॥

दिग्गज चिंघार करने लगे; पृथिवी हिलने लगी; पहाड़ कांपने लगे; समुद्रमें खलबली मच गयी; सूर्य, चन्द्रमा, देवता, मुनि, नाग, किन्नर—सबके मन प्रसन्न हो गये कि दुःख दूर हुआ। कई करोड़ विकट योद्धा बन्दर कटकटाते और करोड़ों दौड़ते हैं। वे सब कोशलदेशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका जय-जयकार करते हुए उनके प्रबल प्रताप और गुणोंके समूहको गाते जाते हैं।

सहि सक न भार उदार अहिपति बार बारहिं मोहई।
गहि दसन पुनि पुनि कमठपृष्ठ कठोर सो किमि सोहई ॥
रघुबीर-रुचिर-पयान-प्रस्थिति जानि परम सुहावनी।
जनु कमठखर्पर सर्पराज सो लिखत अबिचल पावनी ॥

उदार सर्पराज शेषनाग उस बोझको सह नहीं सके। वे बारबार मूर्च्छित हो जाते हैं। और बारबार अपने

आधार कछुएकी कठोर पीठको दांतोंसे दाब लेते थे। यह कैसा शोभित हो रहा था, मानों श्रीरामचन्द्रजीकी सुन्दर यात्राके अत्यन्त सुहावने वृत्तान्तको जानकर शेषनाग उसे कछुएकी दृढ़ और पवित्र पीठपर लिख रहे हों।

दो०—एहि बिधि जाइ कृपानिधि ❀ उतरे सागरतीर।
जहं तहं लागे खान फल ❀ भालु बिपुल कपिबीर ॥ ३५ ॥

इस प्रकार जानकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रके किनारे वास किया और असंख्य शूरवीर रीछ बन्दर जहां-तहां फल खाने लगे।

उहां निसाचर रहहिं ससंका ❀ जब तें जारि गयेउ कपि लंका ॥
निजनिज गृह सब करहिं बिचारा ❀ नहिं निसिचर-कुल केर उबारा ॥

जबसे हनुमानजी लंका जला गये, तबसे वहां राक्षस सशंक रहने लगे। अपने-अपने घरमें सब विचार करने लगे कि राक्षस-कुलका अब बचाव नहीं है।

जासु दूतबल बरनि न जाई ❀ तेहि आये पुर कवन भलाई ॥
दूतिन्ह सन सुनि पुरजन बानी ❀ मंदोदरी अधिक अकुलानी ॥

जिसके दूतहीके बलका वर्णन नहीं किया जाता, नगरमें उसके स्वयं आनेपर क्या भलाई होगी? दूतियोंद्वारा नगरवासियोंकी यह सब बातें सुनकर मंदोदरीको बड़ी व्याकुलता हुई।

रहसि जोरि कर पतिपद लागी ❀ बोली बचन नीति-रस-पागी।
कंत करषु हरि सन परिहरहू ❀ मोर कहा अतिहित हिय धरहू ॥

पहिले वह हाथ जोड़कर रह गयी और फिर पति—रावणके चरणोंमें पड़कर नीति-रससे सने हुए वचन कहने लगी—हे स्वामिन्, भगवान्‌से विरोध त्याग दो। मेरा कहना अत्यन्त हितकारी है, उसपर हृदयमें ध्यान लगाओ।

समुझत जासु दूत कइ करनी ❀ स्रवहिं गर्भ रजनीचर घरनी ॥
तासु नारि निज सचिव बोलाई ❀ पठवहु कंत जो चहहु भलाई ॥

जिसके दूतके पराक्रमको सोचकर राक्षसोंकी स्त्रियोंके गर्भ गिर जाते हैं, उसकी स्त्रीको, हे स्वामिन्, यदि भलाई चाहते हो, तो अपने मंत्रियोंको बुलाकर भेज दो।

तव कुल-कमल-बिपिन-दुखदाई ❀ सीता सीत निसा-सम आई ॥
सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हे ❀ हित न तुम्हार संभु अज कीन्हे ॥

आपके कुलरूपी कमलवनको दुःख देनेवाली सीता शीतकालकी रात्रिके समान आयी है। हे नाथ, सुनिये। सीताको बिना दिये आपका कल्याण शिव और ब्रह्मा भी करना चाहें तो नहीं कर सकते।

दो०—रामबान अहिगन-सरिस ❀ निकर निसाचर भेक।
जब लगि ग्रसत न तब लगि ❀ जतनु करहु तजि टेक॥ ३६॥

जबतक सर्पोंके समान श्रीरामचन्द्रजीके बाण मेढ़कोंके समान राक्षसोंके झुण्डको अपना ग्रास नहीं बनाते, तबतक हठ छोड़कर यत्न कर लो।

स्रवन सुनी सठ ताकरि बानी ❀ बिहँसा जगतबिदित अभिमानी॥
सभय सुभाव नारि कर साँचा ❀ मंगल महुं भय मन अतिकाँचा॥

संसारमें प्रसिद्ध घमण्डी और दुष्ट रावणने जब कानोंसे मंदोदरीका कथन सुना, तब वह हँसने लगा। रावणने कहा—सचमुच स्त्रियोंका स्वभाव डरपोक होता है। इन्हें मंगलमें भी भय होता है।

जौं आवइ मरकट कटकाई ❀ जियहिं बिचारे निसिचर खाई॥
कंपहिं लोकप जाकी त्रासा ❀ तासु नारि सभीत बड़ि हासा॥

यदि बंदरोंकी सेना आवे तो उसे खाकर बेचारे राक्षस जी जायँ। जिसके डरसे लोकपाल कांपते हैं उसकी स्त्री डरती हो, यह बड़ी हँसीकी बात है।

अस कहि बिहँसि ताहि उर लाई ❀ चलेउ सभा ममता अधिकाई॥
मंदोदरी हृदय कर चिंता ❀ भयेउ कंतपर बिधि बिपरीता॥

ऐसा कहकर रावणने हंसकर मंदोदरीको हृदयसे लगा लिया और अभिमानको बढ़ाकर सभामें चल दिया। मन्दोदरी हृदयमें चिन्ता करने लगी कि स्वामीपर विधाता ही प्रतिकूल हो गया है।

बैठेउ सभा खबरि असि पाई ❀ सिंधुपार सेना सबु आई॥
बूझेसि सचिव उचित मत कहहू ❀ ते सब हंसे मष्ट करि रहहू॥
जितेहु सुरासुर तब स्रम नाहीं ❀ नर बानर केहि लेखे माहीं॥

रावण जाकर सभामें बैठ गया। वहां उसे यह खबर मिली कि समुद्रके उस पार सब सेना आ गयी है। रावणने मंत्रियोंसे पूछा कि उचित सलाह बतलाओ। वे सब हंसने और कहने लगे कि आप चुप रहिये। जब देवताओं और राक्षसोंको जीता, कुछ श्रम नहीं उठाना पड़ा तब मनुष्य और बन्दर किस गिनतीमें है।

दो०—सचिव बैद गुरु तीनि जौं ❀ प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धरमु तन तीनि कर ❀ होइ बेगहीं नास॥३७॥

मंत्री, वैद्य और गुरु यदि किसी प्रकारके भय या आशासे प्रिय बोलने लगें तो राज्य, शरीर और धर्म—तीनोंका शीघ्र ही नाश हो जाता है।

सोइ रावन कहुँ बनी सहाई ❀ अस्तुति करहिं सुनाइ सुनाई ॥
अवसरु जानि बिभीषनु आवा ❀ भ्राताचरन सीसु तेहिं नावा ॥

वही (बात) आकर यहां रावणको सहायक बन गयी कि मंत्री उसे सुना-सुनाकर स्तुति करते हैं। अवसर जानकर वहां विभीषण आये और भाई रावणके चरणोंमें उन्होंने शिर नवाया।

पुनि सिरु नाइ बैठ निजआसन ❀ बोला बचन पाइ अनुसासन ॥
जौं कृपाल पूछेहु मोहि बाता ❀ मति-अनुरूप कहउँ हित ताता ॥

फिर आसनपर बैठकर विभीषण आज्ञा पाकर और शिर नवाकर ये वचन बोले कि हे कृपालु, यदि आप मुझे पूछते हैं तो हे तात, अपनी बुद्धिके अनुरूप मैं आपका हित करनेवाली बात कहूंगा।

जो आपन चाहइ कल्याना ❀ सुजसु सुमति सुभगति सुखनाना ॥
सो पर-नारि-लिलारु गोसाईं ❀ तजइ चौथि के चंद कि नाईं ॥

हे स्वामिन्, जो अपना कल्याण, अनेक प्रकारके सुख, सुयश, सुमति और शुभ गति चाहता हो, उसे परायी स्त्रीके मस्तकको चौथके चन्द्रमाके समान छोड़ देना चाहिये।

चौदहभुवन एक पति होई ❀ भूतद्रोह तिष्ठइ नहिं सोई ॥
गुनसागर नागर नर जोऊ ❀ अलपलोभ भल कहइ न कोऊ ॥

भले ही कोई चौदह भुवनोंका एकमात्र स्वामी होवे, परन्तु वह भी प्राणि-मात्रसे द्रोह करके ठहर नहीं सकता। कोई मनुष्य गुणोंका समुद्र और चतुर हो, परन्तु उसमें यदि थोड़ा भी लोभ हो तो उसे कोई भला नहीं कहता।

दो०—काम क्रोध मद लोभ सब ❀ नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरही ❀ भजहु भजहिं जेहि संत ॥ ३८ ॥

हे नाथ, काम, क्रोध, मद और लोभ—सब नरकके मार्ग हैं। इन सबको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका ही भजन करो जिन्हें सब संतजन भजते हैं।

तात रामु नहिं नर भूपाला ❀ भुवनेस्वर कालहु कर काला ॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता ❀ ब्यापक अजित अनादि अनंता ॥

हे भाई, श्रीरामचन्द्रजी न मनुष्य हैं और न राजा। वे सम्पूर्ण भुवनोंके स्वामी और कालके भी काल हैं। वे ब्रह्म हैं, विकार-शून्य हैं, अजन्मा हैं, भगवान् हैं, व्यापक हैं, अजेय हैं, अनादि हैं और अपार हैं।

गो-द्विज-धेनु-देव-हितकारी ❀ कृपासिंधु मानुष-तनु-धारी ॥
जनरंजन भंजन खलब्राता ❀ बेद-धर्म-रच्छक सुनु भ्राता ॥

वे कृपासागर हैं; पृथिवी, गो, ब्राह्मण और देवताओंका हित करनेवाले हैं, और इसीलिये मनुष्य-शरीर धारण करनेवाले हैं। हे भाई, सुनिये। वे भक्तोंको प्रसन्न करनेवाले, दुष्टोंके समूहका नाश करनेवाले और वेद-धर्मके रक्षक हैं।

ताहि बयरु तजि नाइय माथा ❀ प्रनतारति - भंजन रघुनाथा ॥
देहु नाथ प्रभु कहुं बैदेही ❀ भजहु राम बिनु हेतु सनेही ॥

वैर त्यागकर उसे मस्तक नवाना चाहिये। श्रीरामचन्द्रजी दीनोंके दुःखको दूर कर देनेवाले हैं। हे स्वामिन्, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सीता दे दीजिये और फिर उनका भजन कीजिये। वे विना कारण स्वभावसे ही सबके प्रेमी हैं।

सरन गये प्रभु ताहु न त्यागा ❀ बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि लागा ॥
जासु नाम त्रय - ताप - नसावन ❀ सोइ प्रभु प्रगट समुझु जिय रावन ॥

समस्त संसारसे द्रोह करनेका पाप जिसे लगा हो, उसे भी शरणमें जानेपर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी नहीं त्यागते। हे रावण, अपने हृदयमें समझो। जिसका नाम तीनों तापोंको नष्ट कर देनेवाला है वही प्रभु प्रकट हुआ है।

दो०—बार बार पद लागउं ❀ बिनय करउं दससीस।
परिहरि मान मोह मद ❀ भजहु कोसलाधीस ॥ ३९ ॥

हे रावण, मैं बार-बार आपके पांव पड़ता और आपकी विनती करता हूं कि मद, मोह और मान—सब छोड़कर कोशलपति श्रीरामचन्द्रजीका भजन कीजिये।

मुनि पुलस्ति निज सिष्य सन ❀ कहि पठई यह बात।
तुरत सो मैं प्रभु सन कही ❀ पाइ सुअवसरु तात ॥ ४० ॥

पुलस्त्य मुनिने अपने शिष्यद्वारा यह बात कहला भेजी है। उसे मैंने हे तात, सुअवसर पाकर तुरन्त ही प्रभु (आप) से कह दिया।

माल्यवंत अति सचिव सयाना ❀ तासु बचन सुनि अति सुख माना ॥
तात अनुज तव नीतिबिभूषन ❀ सो उर धरहु जो कहत बिभीषन ॥

अत्यन्त चतुर मन्त्री माल्यवानको विभीषणके वचन सुनकर अत्यन्त सुख हुआ। माल्यवान्‌ने कहा—हे तात, आपका छोटा भाई विभीषण नीतिका अलंकार-स्वरूप है। यह जो कुछ कहता है उसे हृदयमें धारण करो।

रिपु - उतकरष कहत सठ दोऊ ❀ दूरि न करहु इहां हइ कोऊ ॥
माल्यवंत गृह गयेउ बहोरी ❀ कहइ बिभीषनु पुनि कर जोरी ॥

रावण क्रोधित होकर बोला—यहां कोई है ? ये दोनों दुष्ट शत्रु के बड़प्पनकी बातें कर रहे हैं। इन्हें दूर क्यों नहीं कर देते ? यह सुनकर माल्यवान तो फिर घर चला गया और विभीषण फिर हाथ जोड़कर कहने लगे—

सुमति कुमति सबके उर रहहीं ❀ नाथ पुरान निगमु अस कहहीं ॥
जहां सुमति तहं संपति नाना ❀ जहां कुमति तहं बिपति निदाना ॥

हे नाथ, वेद और पुराण ऐसा कहते हैं कि सद्बुद्धि और दुर्बुद्धि सबके हृदयमें रहती है। जहां सद्बुद्धि होती है वहां अनेक प्रकारकी संपत्ति आती है; परन्तु जहां दुर्बुद्धि होती है वहां अन्तमें विपत्ति आती है।

तव उर कुमति बसी बिपरीता ❀ हित अनहित मानहु रिपु प्रीता ॥
कालराति निसिचर - कुल केरी ❀ तेहि सीता पर प्रीति घनेरी ॥

आपके हृदयमें दुर्बुद्धि बस गयी है, इसलिये आप भलाईको बुराई और शत्रुको मित्र—सबको उलटा मानने लगे हैं। जो सीता राक्षस-वंशकी काल रात्रिके समान हैं उनपर आपकी बड़ी प्रीति है।

दो०—तात चरन गहि मांगउं ❀ राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहुं ❀ अहित न होइ तुम्हार ॥४१॥

हे तात, मैं चरण पकड़कर मांगता हूं। मेरा दुलार रख लीजिये। आप श्रीरामचन्द्रजीको सीता दे दीजिये, जिसमें आपका अहित न हो।

बुध - पुरान - स्रुति - संमत बानी ❀ कही बिभीषन नीति बखानी ॥
सुनत दसानन उठा रिसाई ❀ खल तोहि निकट मृत्यु अब आई ॥

पण्डित, पुराण और वेद-सम्मत नीतिकी वाणी विभीषणने व्याख्या करके कह सुनायी। सुनते ही रावण क्रोधमें भरकर उठा और बोला—दुष्ट, अब तेरी मृत्यु तेरे पास आ गयी है।

जियसि सदा सठ मोर जियावा ❀ रिपु कर पच्छ मूढ़ तोहि भावा ॥
कहसि न खल अस को जग माहीं ❀ भुजबल जेहि जीता मैं नाहीं ॥

अरे दुष्ट, मूर्ख, मेरा जिलाया हुआ तो सदैव जीता है और तुझे शत्रुका पक्ष प्यारा लगा ! अरे दुष्ट, कहता क्यों नहीं, संसारमें ऐसा कौन है जिसे मैंने अपनी भुजाओंके बलसे जीता न हो ?

मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती ❀ सठ मिलु जाइ तिन्हहि कहु नीती ॥
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा ❀ अनुज गहे पद बारहिं बारा ॥

मेरे नगरमें बसकर तपस्वियोंपर प्रेम! अरे दुष्ट तू उन्हींसे जाकर मिल और नीतिका उपदेश दे। ऐसा कहकर रावणने पदाघात किया, जिसपर छोटे भाई विभीषणने बार-बार चरण पकड़ लिये।

उमा संत कइ इहइ बड़ाई ❁ मंद करत जो करइ भलाई ॥
तुम्ह पितुसरिस भलेहि मोहि मारा ❁ राम भजे हित नाथ तुम्हारा ॥
सचिव संग लेइ नभपथ गयेऊ ❁ सबहिं सुनाइ कहत अस भयेऊ ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, संतकी बड़ाई यही है कि बुराई करते हुए भी वह भलाई ही करे। विभीषणने कहा—आप मेरे पिताके समान हैं। आपने मुझे मारा, यह भला ही किया; परन्तु हे नाथ, आपका हित श्रीरामचन्द्रजीका भजन करनेमें ही है। फिर, मंत्रियोंको संग लेकर विभीषण आकाश-मार्गमें गये और सबको सुनाकर ऐसा कहने लगे—

दो०—रामु सत्यसंकल्प प्रभु ❁ सभा कालबस तोरि।
मैं रघुबीर-सरन अब ❁ जाउँ देहु जनि खोरि ॥४२॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका संकल्प सत्य ही होता है। तुम्हारी सभा कालके वशमें हो रही है। मुझे अब दोष मत देना, मैं श्रीरामचन्द्रजीकी शरणमें जाता हूं।

अस कहि चला बिभीषन जबहीं ❁ आयूहीन भये सब्रु तबहीं ॥
साधुअवग्या तुरत भवानी ❁ कर कल्यान अखिल कै हानी ॥

विभीषण ऐसा कहकर जिस समय चल दिये उसी समय सब राक्षस आयुहीन हो गए। शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, साधुजनोंका तिरस्कार तुरन्त ही सब कल्याणोंको नष्ट कर देता है।

रावन जबहिं बिभीषनु त्यागा ❁ भयउ बिभव बिनु तबहिं अभागा ॥
चलेउ हरषि रघुनायक पाहीं ❁ करत मनोरथ बहु मन माहीं ॥

विभीषणने जिस समय रावणको त्याग दिया उसी समय वह अभागा वैभवहीन हो गया। विभीषण प्रसन्न होकर मनमें बहुतसे मनोरथ करते हुए श्रीरामचन्द्रजीके पास चल दिये।

देखिहउँ जाइ चरन-जल जाता ❁ अरुन मृदुल सेवक-सुख-दाता ॥
जे पद परसि तरी रिषिनारी ❁ दंडक-कानन-पावन-कारी ॥

वे सोचने लगे—मैं जाकर उन चरणकमलोंके दर्शन करूंगा जो लाल, कोमल, सेवकोंको सुख देनेवाले हैं। जिन चरणोंका स्पर्श करके ऋषि-पत्नी अहल्या तर गयीं, जिन चरणोंने दण्डकारण्यको पवित्र किया है,

जे पद जनकसुता उर लाये ❁ कपट-कुरंग-संग धर धाये ॥
हर-उर-सर-सरोज पद जेई ❁ अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई ॥

जिन चरणोंको जानकीजीने हृदयमें धारण किया, जो चरण कपट-मृगके पीछे उसे पकड़नेको दौड़े, और जो चरण शिवजीके हृदयरूपी सरोवरके कमल हैं, मैं उन्हींके दर्शन करूंगा। मेरा अहोभाग्य है।

दो०—जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि ❀ भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउं ❀ इन्ह नयनन्हि अब जाइ ॥४३॥

जिन चरणोंकी पादुकाओंमें भरतजी मन लगाये हुए हैं, उन चरणोंको अब आज जाकर इन नेत्रोंसे देखूंगा।

एहिबिधि करत सप्रेम बिचारा ❀ आयउ सपदि सिंधु येहि पारा ॥
कपिन्ह बिभीषनु आवत देखा ❀ जाना कोउ रिपुदूत बिसेखा ॥

इस प्रकार प्रेमके साथ विचार करते हुए विभीषण शीघ्र ही समुद्रके इस पार आ गए। वानरोंने जब विभीषणको आते देखा तब समझा कि शत्रुका कोई दूत-विशेष है।

ताहि राखि कपीस पहिं आये ❀ समाचार सबु ताहि सुनाये ॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ❀ आवा मिलन दसाननभाई ॥

उसे रोककर वानर कपिराज सुग्रीवके पास आये और उन्हें सब समाचार सुनाये। सुग्रीवने कहा कि हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। रावणका भाई मिलने आया है।

कह प्रभु सखा बूझिये काहा ❀ कहइ कपीस सुनहु नरनाहा ॥
जानि न जाइ निसाचर माया ❀ कामरूप केहि कारन आया ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे मित्र, क्या बात समझ पड़ती है? सुग्रीव कहने लगे—हे नरनाथ, सुनिये, राक्षसोंकी माया जानी नहीं जाती। ये इच्छानुसार अपना रूप बना लेते हैं। नहीं मालूम, यह किस कारण आया हो?

भेद हमार लेन सठ आवा ❀ राखिय बांधि मोहि अस भावा ॥
सखा नीति तुम्ह नीकि बिचारी ❀ मम पन सरनागत-भयहारी ॥
सुनि प्रभु बचन हरष हनुमाना ❀ सरनागतबच्छल भगवाना ॥

यह दुष्ट हमारा भेद लेने आया है। मुझे तो यह अच्छा लगता है कि उसे बांध रखना चाहिये। श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे मित्र, नीति तो तुमने अच्छी सोची है, परन्तु मेरी प्रतिज्ञा है कि मैं शरणागतके भयको दूर कर देनेवाला हूं। प्रभुके वचन सुनकर हनुमानजी प्रसन्न हुए कि भगवान् शरणागतसे कितना प्रेम करनेवाले हैं।

दो०—सरनागत कहुं जे तजहिं ❀ निज अनहित अनुमानि।
ते नर पावर पापमय ❀ तिन्हहिं बिलोकत हानि ॥४४॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—अपना शत्रु होनेका अनुमान करके जो शरणागतको त्याग देते हैं वे मनुष्य नीच और पापरूप हैं, उन्हें देखनेसे ही अशुभ होता है।

कोटि विप्रबध लागहिं जाहू ❀ आये सरन तजउँ नहिं ताहू ॥
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं ❀ जनम कोटि अघ नासहिं तबहीं ॥

शरणमें आ जानेपर जिसे करोड़ ब्रह्महत्याएं लगी हों मैं उसे भी नहीं छोड़ता जिस समय प्राणी मेरे सम्मुख हो जाता है, उसी समय उसके करोड़ जन्मके पाप नष्ट हो जाते हैं।

पापवंत कर सहज सुभाऊ ❀ भजनु मोर तेहि भाव न काऊ ॥
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई ❀ मोरे सनमुख आव कि सोई ॥

पापी प्राणीका सहज-स्वभाव यह होता है कि उसे मेरा भजन कभी नहीं रुचता। यदि कदाचित् वह विभीषण दुष्ट हृदयवाला ही होता तो क्या वह मेरे सम्मुख आता।

निर्मल मन जन सो मोहि पावा ❀ मोहि कपट छल छिद्र न भावा ॥
भेद लेन पठवा दससीसा ❀ तबहुँ न कछु भय हानि कपीसा ॥

मुझे कपट, या छल-छिद्र नहीं अच्छे लगते। जिस मनुष्यका मन निर्मल होता है वह मुझे पाता है। हे कपिराज सुग्रीव, यदि रावणने उसे भेद लेनेको ही भेजा हो तोभी कुछ भय अथवा हानि नहीं है।

जग महुँ सखा निसाचर जेते ❀ लछिमनु हनइ निमिष महुँ तेते ॥
जौं सभीत आवा सरनाई ❀ रखिहउँ ताहि प्रान की नाईं ॥

हे मित्र, संसारमें जितने राक्षस हैं, उन सबको लक्ष्मण एक निमेषमें मार सकते हैं। यदि वह डरा हुआ शरणमें आया है तो मैं उसे अपने प्राणकी भांति रखूंगा।

दो०—उभय भांति तेहि आनहु ❀ हंसि कह कृपा-निकेत।
जय कृपाल कहि कपि चले ❀ अंगद-हनू-समेत ॥ ४५ ॥

कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने हसकर कहा कि दोनों ही दशाओंमें उसे लेकर आओ। तब, कृपालु श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो, यह कहकर अंगद और हनुमानजी समेत वानर चल दिये।

सादर तेहि आगे करि वानर ❀ चले जहां रघुपति करुनाकर ॥
दूरिहि तें देखे दोउ भ्राता ❀ नयनानंद दान के दाता ॥

आदरके साथ विभीषणको आगे करके बन्दर वहांके लिये चल दिये, जहां करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजी थे। विभीषणने नेत्रोंको आनन्द दान देनेवाले दोनों भाइयोंको दूरसे ही देखा।

बहुरि राम छबिधाम बिलोकी ❀ रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी ॥
भुज प्रलम्ब कंजारुनलोचन ❀ स्यामल गात प्रनत-भय-मोचन ॥

फिर शोभाके धाम श्रीरामचन्द्रजीको देखकर विभीषण पलकोंको रोककर एकटक देखते हुए ठिठककर रह गये। श्रीरामचन्द्रजीकी भुजाएं लंबी थीं, कमलके समान लाल नेत्र थे, श्याम शरीर था और वे दीनोंके भयको दूर कर देनेवाले थे।

सिंहकंध आयत उर सोहा ❀ आनन अमित-मदन-मन मोहा ॥
नयन नीर पुलकित अति गाता ❀ मन धरि धीर कही मृदु बाता ॥

उनके सिंहके समान कंधे थे, विशाल वक्षस्थल शोभित था और मुख असंख्य कामदेवोंके मनको भी मोहित कर लेनेवाला था। विभीषणके नेत्रोंमें जल छा गया और उनका शरीर अत्यन्त पुलकायमान हो गया। वे मनमें धीरज रखकर यह कोमल बात कहने लगे—

नाथ दसानन कर मैं भ्राता ❀ निसि-चर-बंस-जनम सुरत्राता ॥
सहज पापप्रिय तामस देहा ❀ जथा उलूकहिं तम पर नेहा ॥

हे स्वामिन्। मैं रावणका भाई हूं। हे देव-रक्षक, राक्षस-वंशमें मेरा जन्म हुआ है। जैसे उलूकको अन्धकारपर ममता होती है उसी प्रकार मेरी तमोगुणी देह स्वभावसे ही पाप-प्रिय है।

दो०—स्रवन सुजसु सुनि आयउँ ❀ प्रभु भंजन भवभीर।
त्राहि त्राहि आरति हरन ❀ सरन सुखद रघुबीर ॥ ४६ ॥

हे प्रभो, हे संसारके भयको दूर कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, कानोंसे आपका सुयश सुनकर आया हूं। हे दुःखके हरनेवाले, हे शरणागतको सुख देनेवाले, हे रघुवीर, आप मेरी रक्षा कीजिए, मेरी रक्षा कीजिए।

अस कहि करत दंडवत देखा ❀ तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा ॥
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा ❀ भुज-बिसाल गहि हृदय लगावा ॥

ऐसा कहकर विभीषणको जब दण्डवत् करते हुए देखा तब विशेष प्रसन्नताके साथ प्रभु श्रीरामचन्द्रजी तुरंत उठे। प्रभुने विभीषणके दीन वचन सुने। वह उनके मनको प्रिय लगे। उन्होंने उन्हें अपनी विशाल भुजाओंसे पकड़कर हृदयसे लगा लिया।

अनुजसहित मिलि ढिग बैठारी ❀ बोले बचन भगत-भय-हारी ॥
कहु लंकेस सहित परिवारा ❀ कुसल कुठाहर बास तुम्हारा ॥

लक्ष्मणजीसमेत मिलकर विभीषणको पास बिठलाया और फिर भक्तोंके भयको दूरकर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी ये वचन कहने लगे—हे लंकापति विभीषण, कहो, परिवारसमेत कुशल तो है? तुम्हारा वास कुठांवमें है।

खलमंडली बसहु दिनु राती ❀ सखा धरमु निबहइ केहि भाँती ॥
मैं जानउँ तुम्हारि सब रीती ❀ अति नयनिपुन न भाव अनीती ॥

रात-दिन दुष्टोंकी मण्डलीमें बसते हो। हे मित्र, धर्मका निर्वाह किस प्रकार होता है? मैं तुम्हारी सब रीति जानता हूं। तुम नीतिमें अत्यन्त निपुण हो और तुम्हें अनीति नहीं अच्छी लगती।

बरु भल बास नरक कर ताता ❀ दुष्ट संग जनि देइ बिधाता ॥
अब पद देखि कुसल रघुराया ❀ जौं तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया ॥

चाहे नरकमें रहना पड़े, यह अच्छा, परन्तु हे तात, विधाता दुष्टोंका संग न देवे। विभीषणने कहा, हे श्रीरामचन्द्रजी, आपके चरणोंके दर्शनकर अब सब कुशल है, जो आपने अपना भक्त जानकर मुझपर दया की है।

दो०—तब लगि कुसल न जीव कहुँ ❀ सपनेहुँ मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुँ ❀ सोक धाम तजि काम ॥ ४७ ॥

जीवकी कुशल तबतक नहीं होती और न मनको स्वप्नमें भी विश्राम मिलता है जबतक वह शोकके स्थान विविध वासनाओंको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको नहीं भजता।

तब लगि हृदय बसत खल नाना ❀ लोभ मोह मत्सर मद माना ॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा ❀ धरे चापसायक कटि भाथा ॥

लोभ, मोह, मत्सर, मद और मान—अनेक दुष्ट तबतक हृदयमें बसते हैं, जबतक धनुषबाण लिये और कमरमें तरकस बांधे हुए श्रीरामचन्द्रजी हृदयमें नहीं बसते।

ममता तरुन तमी अँधियारी ❀ राग द्वेष उलूक सुखकारी ॥
तब लगि बसत जीव मन माहीं ❀ जब लगि प्रभु-प्रताप-रबि नाहीं ॥

ममतारूपी घोर रातकी अंधेरी रागद्वेषरूपी उल्लूओंको सुख देनेवाली है। वह जीवके मनमें तबतक रहती है जबतक प्रभुके प्रतापका सूर्य वहां नहीं होता।

अब मैं कुसल मिटे भय भारे ❀ देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥
तुम्ह कृपाल जा पर अनुकूला ❀ ताहि न ब्याप त्रिबिध भवसूला ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आपके चरणकमल देखकर अब मैं कुशलपूर्वक हूं। मेरे सब भारी भय मिट गये। हे कृपालु, जिसपर आप अनुकूल हों उसे तीनों प्रकारकी सांसारिक व्यथाएँ नहीं सतातीं।

मैं निसिचर अति-अधम-सुभाऊ ❀ सुभ आचरनु कीन्ह नहिं काऊ ॥
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा ❀ तेहि प्रभु हरषि हृदय मोहि लावा ॥

मैं राक्षस हूं। अत्यन्त नीच मेरा स्वभाव है। कभी शुभ आचरण भी नहीं किया। फिर भी जिसका स्वरूप मुनिजनोंके ध्यानमें भी नहीं आता, उसी प्रभुने प्रसन्न होकर मुझे हृदयसे लगा लिया।

दो०—अहोभाग्यममअमित अति ❀ राम कृपा - सुख - पुंज।
देखेउं नयन बिरंचि सिव ❀ सेव्य जुगल - पद-कंज ॥ ४८ ॥

हे कृपा और सुखके समूह श्रीरामचन्द्रजी, मेरा अत्यन्त असीम अहोभाग्य है कि मैंने अपने नेत्रोंसे उन दोनों चरणकमलोंके दर्शन कर लिये, जो ब्रह्मा और शिवजी द्वारा सेवा करने योग्य हैं।

सुनहु सखा निज कहउं सुभाऊ ❀ जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ ॥
जौं नर होइ चराचर द्रोही ❀ आवइ सभय सरन तकि मोही ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे मित्र, सुनो। मैं अपना स्वभाव बतलाता हूं, इसे कागभुशुण्ड, शिवजी और पार्वतीजी भी जानती हैं। कोई मनुष्य चाहे चर और अचर—सबका द्रोही हो और वह भयभीत होकर मेरी ओर देखकर शरणमें आवे—

तजि मद मोह कपट छल नाना ❀ करउं सद्य तेहि साधु समाना ॥
जननी जनक बंधु सुत दारा ❀ तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ॥

मद, मोह, कपट और तरह-तरहके छल छोड़ देवे तो उसे मैं तुरंत ही साधुके समान कर देता हूं। माता पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, सम्पत्ति, घर, मित्र और परिवार—

सब कइ ममताताग बटोरी ❀ मम पद मनहिं बाँध बरि डोरी ॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं ❀ हरषु सोकु भय नहिं मन माहीं ॥

सबकी ममतारूपी धागोंको इकट्ठा कर, डोरी बटकर उससे मेरे चरणोंमें जो अपने मनको बांध देते हैं, जो समदर्शी हो जाते हैं, जिन्हें कुछ इच्छा नहीं रहती और जिनके मनमें हर्ष, शोक, और भय कुछ भी नहीं रहता।

अस सज्जन मम उर बस कैसे ❀ लोभी हृदय बसइ धन जैसे ॥
तुम्ह सारिखे संत प्रिय मोरे ❀ धरउं देह नहिं आन निहोरे ॥

ऐसा सज्जन मेरे हृदयमें कैसे बसता है, जैसे लोभीके हृदयमें धन बसा करता है। तुम्हारे समान सज्जन मुझे प्रिय हैं। उन्हींके लिये मैं शरीर धारण करता हूं, किसीके विनती करनेसे नहीं।

दो०—सगुनउपासक पर-हित ❀ निरत नीति दृढ़ नेम।
ते नर प्रानसमान मम ❀ जिन्हके द्विज-पद-प्रेम ॥४९॥

वे मनुष्य मुझे अपने प्राणोंके समान हैं. जो सगुण ब्रह्मके उपासक और परोपकारमें तत्पर हैं, जो नीतिमान् और दृढ़ नियमवाले हैं और जिन्हें ब्राह्मणके चरणोंमें प्रेम है।

सुनु लंकेस सकल गुन तोरे ❀ तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरे ॥
राम बचन सुनि बानरजूथा ❀ सकल कहहिं जय कृपाबरूथा ॥

हे लङ्कापति विभीषण, सुनो। तुम्हारे गुण भी यही सब हैं। इसीसे तुम मुझे अत्यन्त प्यारे हो। श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर वानरोंका समस्त समुदाय कहने लगा कि हे कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो।

सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी ❀ नहिं अघात स्रवनामृत जानी ॥
पद अंबुज गहि बारहिं बारा ❀ हृदय समात न प्रेमु अपारा ॥

कानोंके लिये अमृतके समान समझकर विभीषण प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी वाणी सुनते नहीं अघाते; वे बार-बार श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल पकड़ते हैं। उनके हृदयमें अपार प्रेम नहीं समाता।

सुनहु देव सचराचर-स्वामी ❀ प्रनतपाल उर-अंतरजामी ॥
उर कछु प्रथम बासना रही ❀ प्रभु-पद-प्रीति-सरित सो बही ॥

विभीषण कहने लगे—हे देव, हे चराचरके स्वामी, हे दीनोंके रक्षक, हे हृदयोंके अन्तर्यामी, सुनिये। पहिले हृदयमें कुछ वासना भी थी, वह प्रभुके चरणोंकी प्रीतिरूपी नदीमें बह गयी।

अब कृपाल निज भगति पावनी ❀ देहु सदा संभु-मन-भावनी ॥
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा ❀ मांगा तुरत सिंधुकर नीरा ॥

हे कृपालु, अब अपनी पवित्र कर देनेवाली भक्ति दीजिये, जो सदैव शिवजीके मनको रुचती है। फिर रणधीर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने 'एवमस्तु' कहकर तुरन्त ही समुद्रका जल मांगा।

जदपि सखा तव इच्छा नाहीं ❀ मोर दरसु अमोघु जग माहीं ॥
अस कहि राम तिलक तेहि सारा ❀ सुमनबृष्टि नभ भई अपारा ॥

हे मित्र, यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है तथापि संसारमें मेरा दर्शन निष्फल नहीं होता, ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजीने विभीषणको राजतिलक कर दिया। उस समय आकाशसे अपार पुष्प-वृष्टि हुई।

दो०—रावनक्रोध अनल निज ❀ स्वास समीर प्रचंड।
जरत बिभीषन राखेउ ❀ दीन्हेउ राजु अखंड ॥५०॥

अपनी स्वासरूपी प्रचण्ड वायुसे प्रज्वलित रावणके क्रोधरूपी अग्निमें जलते हुए विभीषणको श्रीरामचन्द्रजीने बचा लिया और अखंड राज्य दे दिया।

जो संपति सिव रावनहिं ❀ दीन्हि दिये दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहिं ❀ सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥५१॥

अपने दस शिर देनेपर रावणको जो संपत्ति शिवजीने दी थी; वही सम्पत्ति विभीषणको श्रीरामचन्द्रजीने संकोच करके दी।

अस प्रभु छांड़ि भजहिं जे आना ❀ ते नर पसु बिनु पूंछ बिषाना॥
निजजन जानि ताहि अपनावा ❀ प्रभुसुभाव कपि-कुल-मन भावा॥

ऐसे प्रभुको छोड़कर जो दूसरेका भजन करते हैं,वे मनुष्य बिना सींग पूंछके पशु हैं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका यह स्वभाव कि अपना भक्त जानकर उसे अपना लिया, वानर-समूहके मनमें प्रिय लगा।

पुनि सरबग्य सरब-उर-बासी ❀ सरबरूप सबरहित उदासी॥
बोले बचन नीति-प्रति-पालक ❀ कारनमनुज दनुज-कुल-घालक॥

फिर श्रीरामचन्द्रजी—जो सर्वज्ञ, सबके हृदयमें बसनेवाले, सर्वरूप, सबसे रहित, उदासीन, नीतिका पालन करनेवाले, कारणसे मनुष्यरूप धारण किए हुए और राक्षसोंके कुलका नाश करनेवाले हैं—ये वचन बोले—

सुनु कपीस लंकापति बीरा ❀ केहि बिधि तरिय जलधि गंभीरा॥
संकुल मकर उरग झष जाती ❀ अतिअगाध दुस्तर सब भांती॥

हे वीर, हे कपिराज सुग्रीव, हे लंकापति विभीषण, सुनो। इस गंभीर समुद्रको किस तरह पार करना चाहिये, जो मगर-मच्छ और सर्प आदि अनेक जातिके जीवोंसे भरा हुआ अत्यन्त गहरा और सब प्रकारसे दुस्तर है।

कह लंकेस सुनहु रघुनायक ❀ कोटि-सिंधु-सोषक तव सायक॥
जद्यपि तदपि नीति असि गाई ❀ बिनय करिय सागर सन जाई॥

लंकापति विभीषणने कहा—हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। यद्यपि आपका बाण करोड़ समुद्रोंको भी सुखा देनेवाला है, तथापि नीति यह बतलायी गयी है कि जाकर समुद्रसे विनय करना चाहिये।

दो०—प्रभु तुम्हार कुलगुरु जलधि ❀ कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि ❀ सकल-भालु-कपि-धारि ॥५२॥

हे प्रभो, समुद्र आपका कुलगुरु है। वह विचारकर उपाय बतलायेगा और, परिश्रम बिनाही रीछ और वानरोंका समस्त समूह समुद्रके पार उतर जायगा।

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई ❀ करिय दैव जौं होइ सहाई॥
मंत्र न यह लछिमन मन भावा ❀ रामबचन सुनि अति दुख पावा॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा-हे मित्र,तुमने अच्छा उपाय बतलाया है। यदि दैव सहायक हो, यही करना चाहिये। यह परामर्श लक्ष्मणजीके मनमें अच्छा नहीं लगा। श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ।

नाथ दैव कर कवन भरोसा ❀ सोखिय सिंधु करिय मन रोसा ॥
कादर मन कहुँ एक अधारा ❀ दैव दैव आलसी पुकारा ॥

लक्ष्मणजी कहने लगे—हे नाथ, दैवका क्या भरोसा ? मनमें क्रोध कीजिये और समुद्रको सुखा डालिये। कायर मनका एक ही आधार है—दैव ! आलसी लोग दैव-दैवही चिल्लाया करते हैं।

सुनत बिहँसि बोले रघुबीरा ❀ ऐसहि करब धरहु मन धीरा ॥
अस कहि प्रभु अनुजहि समुझाई ❀ सिंधु समीप गये रघुराई ॥

यह सुनकर लक्ष्मणजीसे श्रीरामचन्द्रजीने हँसकर कहा—मनमें धीरज रखो। ऐसा ही करेंगे। ऐसा कहकर छोटे भाई लक्ष्मणको समझाकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी समुद्रके पास गये।

प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई ❀ बैठे पुनि तट दरभ डसाई ॥
जबहिं बिभीषनु प्रभु पहिं आये ❀ पाछे रावनु दूत पठाये ॥

पहिले शिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजीने प्रणाम किया और फिर किनारेपर कुश बिछाकर बैठ गये। इधर ज्योंही विभीषण प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये त्योंही पीछेसे रावणने अपने भेदिये भी भेज दिये।

दो०—सकल चरित तिन्ह देखे ❀ धरे कपट कपिदेह।
प्रभुगुन हृदय सराहहिं ❀ सरनागत पर नेह ॥ ५३ ॥

उन्होंने वानरका कपट-शरीर रखकर सब चरित देखे। वे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके गुणों और शरणागतपर उनके स्नेहकी अपने हृदयमें प्रशंसा करने लगे।

प्रगट बखानहि रामसुभाऊ ❀ अतिसप्रेम गा बिसरि दुराऊ ॥
रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने ❀ सकल बाँधि कपीस पहिं आने ॥

वे प्रकटमें श्रीरामचन्द्रजीके स्वभावकी बड़ाई करने लगे। अत्यन्त प्रेममें होनेके कारण उन्हें अपना छिपाव भूल गया। तब बन्दरोंने जाना कि शत्रुके भेदिये हैं और उनको बांधकर वे कपिराज सुग्रीवके पास ले आये।

कह सुग्रीव सुनहु सब बानर ❀ अंगभंग करि पठवहु निसिचर ॥
सुनि सुग्रीववचन कपि धाये ❀ बाँधि कटक चहुँ पास फिराये ॥

सुग्रीव कहने लगे—सब वानरो, सुनो। राक्षसोंको अङ्ग भङ्ग करके भेजो। सुग्रीवके वचन सुनकर वानर दौड़े और बांधकर उन सबको सेनाके चारों ओर घुमाया।

बहु प्रकार मारन कपि लागे ❀ दीन पुकारत तदपि न त्यागे ॥
जो हमार हर नासा काना ❀ तेहि कोसलाधीस कै आना ॥

बन्दर उन्हें बहुत तरहसे मारने लगे। वे दीनतासे पुकारने लगे तोभी उन्होंने उन राक्षस भेदियोंको छोड़ा नहीं। वे चिल्लाकर कहने लगे—जो हमारे नाक और कान काटे, उसे कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीकी आन है।

सुनि लछिमन सब निकट बोलाये ❀ दया लागि हँसि तुरत छोड़ाये ॥
रावन कर दीजेहु यह पाती ❀ लछिमनबचन बाँचु कुलघाती ॥

यह सुनकर लक्ष्मणजीने सबको पास बुलाया। उन्हें दया हो आयी और हँसकर उन्होंने तुरन्त ही उन भेदियोंको छुड़ा दिया। उन्होंने कहा—यह चिट्ठी रावणके हाथमें देना और कहना कि हे कुलघाती! लक्ष्मणके इन वचनोंको पढ़।

दो०—कहेउ मुखागर मूढ़ सन ❀ मम संदेसु उदार।
सीता देहु मिलहु न त ❀ आवा कालु तुम्हार ॥५२॥

मूर्ख रावणसे मेरा यह उदार संदेश जबानी ही कहना कि सीताजीको दो और मिलो, नहीं तो तुम्हारा काल आ गया।

तुरत नाइ लछिमनपद माथा ❀ चले दूत बरनत गुनगाथा ॥
कहत रामजसु लंका आये ❀ रावनचरन सीस तिन्ह नाये ॥

लक्ष्मणजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर गुणोंकी कथा कहते हुए वे भेदिये तुरन्त ही चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीका यश वर्णन करते हुए वे लङ्कामें पहुँचे और फिर उन्होंने रावणके चरणोंमें शिर नवाया।

बिहँसि दसानन पूछी बाता ❀ कहसि न सुक आपनि कुसलाता ॥
पुनि कहु खबरि बिभीषन केरी ❀ जाहि मृत्यु आई अति नेरी ॥

हँसकर रावणने बातें पूछीं कि हे शुक, तू अपनी कुशलता क्यों नहीं कहता? फिर विभीषणकी खबर भी कह, जिसकी मृत्यु अत्यन्त समीप आ गयी है।

करत राजु लंका सठ त्यागी ❀ होइहि जव कर कीट अभागी ॥
पुनि कहु भालु कीस कटकाई ❀ कठिन काल प्रेरित चलि आई ॥

राज्य करते हुए दुष्ट लङ्का छोड़कर चला गया। वह अभागा भी अब जौ (अन्न) का कीड़ा (घुन) होगा। फिर रीछ और वन्दरोंकी सेनाका हाल बतला, जो कठोर कालकी प्रेरणासे चली आ रही है—

जिन्हके जीवन्ह कर रखवारा ❀ भयेउ मृदुलचित सिंधु बेचारा ॥
कहु तपसिन्ह कै बात बहोरी ❀ जिन्हके हृदय त्रास अति मोरी ॥

और जिसके प्राणोंका रक्षक कोमलचित्त बेचारा समुद्र हो रहा है। फिर तपस्वियोंका वृत्तान्त भी कह, जिनके हृदयमें मेरा अत्यन्त भय समाया हुआ है।

दो०—की भइ भेंट कि फिरि गये ❀ स्रवन सुजसु सुनि मोर।
कहसि न रिपु-दल-तेज-बल ❀ बहुत चकित चित तोर ॥५५॥

क्या उनसे भेंट हुई या कि वे कानोंसे मेरा सुयश सुनकर लौट गये? तू शत्रु-दलका तेज और बल क्यों नहीं बतलाता? तेरा चित्त बहुत चकित हो रहा है!

नाथ कृपा करि पूछेहु जैसे ❀ मानहु कहा क्रोध तजि तैसे ॥
मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा ❀ जातहि राम तिलक तेहि सारा ॥

शुक नामक भेदियेने कहा—हे नाथ, जैसे कृपा करके आपने पूछा है वैसे ही क्रोध छोड़कर मेरा कहना मान लीजिये। आपका छोटा भाई विभीषण जब जाकर मिला तब पहुँचते ही श्रीरामचन्द्रजीने उसे तिलक कर दिया।

रावनदूत हमहिं सुनि काना ❀ कपिन्ह बाँधि दीन्हे दुख नाना ॥
स्रवन नासिका काटइ लागे ❀ रामसपथ दीन्हे हम त्यागे ॥

रावणका दूत कानों सुनकर बन्दरोंने हमें बांधकर तरह-तरहके दुःख दिये और जब नाक-कान काटने लगे तब श्रीरामचन्द्रजीकी शपथ दिलानेपर हमें छोड़ा।

पूछिहु नाथ रामकटकाई ❀ बदन कोटिसत बरनि न जाई ॥
नानाबरन भालु-कपि-धारी ❀ बिकटानन बिसाल भयकारी ॥

हे नाथ, आपने श्रीरामचन्द्रजीकी सेनाका वृत्तान्त पूछा है, उसका तो सौ करोड़ मुखोंसे भी वर्णन नहीं किया जा सकता। रीछ और बन्दरोंका सैन्यदल तरह-तरहके रंगोंवाला, विकट मुखोंवाला, अत्यन्त विशाल और भयोत्पादक है।

जेहि पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा ❀ सकल कपिन्ह महं तेहि बल थोरा ॥
अमितनाम भट कठिन कराला ❀ अमित-नाग-बल बिपुल बिसाला ॥

जिस बन्दरने नगर जलाया और आपके पुत्रको मार डाला था, सब बंदरोंमें उसका बल बहुत कम है। वहाँ अत्यन्त भयंकर और कठोर योद्धा हैं, जिनके नाम असंख्य हैं, जिनमें असंख्य हाथियोंका बल है और जो अत्यन्त विशाल हैं।

दो०—द्विविद मयंद नील नल ❀ अंगदादि बिकटासि।
दधिमुख केहरि निसठ सठ ❀ जामवंत बलरासि ॥५६॥

द्विविद, मयंद, नील, नल, अंगद आदि भयंकर मुखवाले हैं और दधिमुख, केहरि, निसठ, सठ और जामवंत बलकी राशि हैं।

ए कपि सब सुग्रीवसमाना ❀ इन्ह सम कोटिन्ह गनइ को नाना ॥
रामकृपा अतुलित-बल तिन्हहीं ❀ तृनसमान त्रैलोकहिं गनहीं ॥

ये सब वन्दर सुग्रीवके समान हैं। इनके समान भी करोड़ों वन्दर हैं, उन अनेकोंको कौन गिने? श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे उन सबको अतुल बल प्राप्त है और वे तीनों लोकोंको तिनकेके बराबर गिनते हैं।

अस मैं स्रवन सुना दसकंधर ❀ पदुम अठारह जूथप बंदर ॥
नाथ कटक महं सो कपि नाहीं ❀ जो न तुम्हहिं जीतइ रन माहीं ॥

हे रावण, मैंने ऐसा कानों सुना है कि सेनापति वन्दरोंकी संख्या अठारह पदुम है। हे नाथ, सेनामें ऐसा वन्दर कोई नहीं है जो संग्राममें आपको न जीत लेवे।

परमक्रोध मीजहिं सब हाथा ❀ आयसु पै न देहिं रघुनाथा ॥
सोषहिं सिंधु सहितझषब्याला ❀ पूरहिं न त भरि कुधर बिसाला ॥

सब अत्यन्त क्रोधमें भरे हुए हाथ मल रहे हैं, परन्तु श्रीरामचन्द्रजी आज्ञा नहीं देते। वे मच्छ और सर्प आदि जन्तुओंसमेत समुद्रको सुखा डालेंगे, नहीं तो बड़े-बड़े पर्वतोंसे उसे पाट देंगे।

मरदि गरद मिलवहिं दससीसा ❀ ऐसेइ बचन कहहिं सब कीसा ॥
गरजहिं तरजहिं सहज असंका ❀ मानहु ग्रसन चहत हहिं लंका ॥

रगड़-रगड़कर रावणको धूलमें मिला देंगे, इसी तरहकी बातें सब वन्दर कहते हैं। वे स्वभावसे ही निडर हैं और गर्जना करते और दपटते हैं; मानों लंकाको खा जाना चाहते हैं।

दो०—सहज सूर कपि भालु सब ❀ पुनि सिर पर प्रभु राम।
रावन काल कोटि कहुं ❀ जीति सकहिं संग्राम ॥५७॥

सब रीछ और वन्दर पहिले तो स्वभावसे ही शूर-वीर हैं, फिर उनके शिरपर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी हैं। हे रावण, संग्राममें वे सब करोड़ कालोंको भी जीत सकते हैं।

राम तेज बल बुधि बिपुलाई ❀ सेष सहससत सकहिं न गाई ॥
सक सर एक सोखि सत सागर ❀ तव भ्रातहिं पूछेउ नय नागर ॥

श्रीरामचन्द्रजीके तेज, बल और बुद्धिकी अधिकता तो सौ हजार शेषनाग भी नहीं गा सकते। यद्यपि उनका एक बाण सौ समुद्रोंको सोख सकता है; तथापि नीतिमें चतुर श्रीरामचन्द्रजीने आपके भाई विभीषणसे समुद्र-पार होनेका उपाय पूछा।

तासु बचन सुनि सागर पाहीं ❀ मांगत पंथ कृपा मन माहीं ॥
सुनत बचन बिहंसा दससीसा ❀ जौं असि मति सहायकृत कीसा ॥

उसके वचन सुनकर वे समुद्रसे रास्ता मांग रहे हैं, क्योंकि उनके मनमें कृपा है। शुक भेदियेके ये वचन सुनकर रावण हंसने लगा और कहा कि जब ऐसी बुद्धि है तभी तो बंदरोंको सहायक बनाया है।

सहज भीरु कर बचन दृढ़ाई ❀ सागर सन ठानी मचलाई ॥
मूढ़ मृषा का करसि बड़ाई ❀ रिपु-बल-बुद्धि-थाह मैं पाई ॥

जो स्वभावसे ही डरपोक है, उस विभीषणके वचनोंपर विश्वास करके समुद्रसे झगड़ा ठाना है। अरे मूर्ख, तू मिथ्या बड़ाई क्या करता है? शत्रुके बल और बुद्धिकी थाह मैंने पा ली।

सचिव सभीत बिभीषनु जा के ❀ बिजय बिभूति कहां लगि ताके ॥
सुनि खलबचन दूतरिसि बाढ़ी ❀ समय बिचारि पत्रिका काढ़ी ॥

जिसका मंत्री डरपोक विभीषण है उसको विजयश्री कहांतक मिल सकती है! दुष्ट रावणके वचन सुनकर भेदिया शुकका क्रोध बढ़ा और अवसर विचारकर उसने चिट्ठीको निकाला।

रामानुज दीन्ही यह पाती ❀ नाथ बंचाइ जुड़ावहु छाती ॥
बिहंसि बामकर लीन्ही रावन ❀ सचिव बोलि सठ लाग बचावन ॥

हे नाथ, श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजीने यह चिट्ठी दी है, इसे पढ़वाकर छाती ठण्डा कीजिये। रावणने हंसकर उस चिट्ठीको बायें हाथमें लिया और मंत्रीको आज्ञा देकर वह दुष्ट उसे पढ़वाने लगा।

दो०—बातन मनहिं रिझाइ सठ ❀ जनि घालेसि कुल खीस।
रामबिरोध न उबरसि ❀ सरन बिष्णु अज ईस ॥५८॥

चिट्ठीमें लिखा था—अरे दुष्ट, बातोंसे ही मनको रिझाकर कुलको नष्ट मत कर। श्रीरामचन्द्रजीसे विरोध करके तू ब्रह्मा, विष्णु और महेशकी शरणमें जानेपर भी न बचेगा।

की तजि मान अनुज इव ❀ प्रभु-पद-पंकज-भृंग।
होहि कि रामसरानल ❀ खल कुलसहित पतंग ॥५९॥

अभिमान छोड़कर छोटे भाई विभीषणकी भांति या तो प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका भौंरा बन जा, नहीं तो अरे दुष्ट, श्रीरामचन्द्रजीके बाणरूपी अग्निमें अपने कुलसमेत पतंग हो जायगा।

सुनत सभय मन मुख मुसुकाई ❀ कहत दसानन सबहिं सुनाई ॥
भूमि परा कर गहत अकासा ❀ लघु तापस कर बागबिलासा ॥

चिट्ठी सुनकर रावण मनमें भयभीत हुआ, परन्तु बाहरसे मुखसे मुसकुराकर सबको सुनाकर कहने लगा—छोटे तपस्वीका यह वाग्विलास वैसा ही है जैसे पृथिवीपर पड़ा हुआ कोई अपने हाथोंसे आकाशको पकड़ रहा हो।

कह सुक नाथ सत्य सब बानी ❀ समुझहु छाड़ि प्रकृति अभिमानी ॥
सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा ❀ नाथ राम सन तजहु बिरोधा ॥

शुकने कहा—हे नाथ, उसकी सब बातें सत्य हैं। अपने स्वाभाविक अभिमानको त्यागकर उन्हें समझिये। क्रोध छोड़कर मेरे वचन सुनिए। हे नाथ, श्रीरामचन्द्रजीसे विरोध त्याग दीजिए।

अतिकोमल रघुबीर - सुभाऊ ❀ जद्यपि अखिललोक कर राऊ ॥
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिहीं ❀ उर अपराध न एकउ धरिहीं ॥

यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी सम्पूर्ण लोकोंके राजा हैं, तथापि उनका स्वभाव अत्यन्त कोमल है। मिलते ही प्रभु आपपर कृपा करेंगे और हृदयमें एक भी अपराध नहीं रखेंगे।

जनकसुता रघुनाथहि दीजै ❀ एतना कहा मोर प्रभु कीजै ॥
जब तेहि कहा देन बैदेही ❀ चरनप्रहार कीन्ह सठ तेही ॥

हे स्वामिन्, मेरा इतना कहना कीजिए कि जानकीजीको श्रीरामचन्द्रजीको दे दीजिए। शुकने जब जानकीजीको देनेके लिए कहा, तब दुष्ट रावणने उसे लात मारी।

नाइ चरन सिरु चला सो तहां ❀ कृपासिंधु रघुनायक जहां ॥
करि प्रनामु निजकथा सुनाई ❀ रामकृपा आपनि गति पाई ॥

फिर चरणोंमें शिर नवाकर वह शुक वहांके लिये चल दिया, जहां कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी थे। वहां पहुंचकर शुकने प्रणाम करके अपनी कथा सुनायी और श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे वह अपनी गति पा गया।

रिषि अगस्तिके साप भवानी ❀ राच्छस भयेउ रहा मुनि ग्यानी ॥
बंदि रामपद बारहिं बारा ❀ मुनि निजआस्रम कहुं पगु धारा ॥

शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, शुक पहिले एक ज्ञानी मुनि था, पर अगस्त्यऋषिके शापसे राक्षस हो गया था। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी बार-बार वन्दना करके मुनि अपने आश्रमको चले गये।

दो०—बिनय न मानत जलधि जड़ ❀ गये तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब ❀ भय बिनु होइ न प्रीति ॥ ६०॥

उधर जब तीन दिन बीत गये और जब देखा कि मूर्ख समुद्र विनय नहीं मानता तब श्रीरामचन्द्रजी क्रोधमें भरकर बोले कि भय बिना प्रीति नहीं होती।

लछिमन बानसरासन आनू ❀ सोखउं बारिधि बिसिखकृसानू ॥
सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती ❀ सहज कृपिन सन सुंदर नीती ॥

हे लक्ष्मण, धनुष और बाण लाओ। अब अग्निबाणसे मैं समुद्रको सुखाता हूं। दुष्टसे विनय, कुटिलसे प्रीति, स्वभावसे ही कृपण मनुष्यसे सुन्दर नीति—

ममतारत सन ग्यानकहानी ❀ अतिलोभी सन बिरति बखानी ॥
क्रोधिहिं सम कामिहिं हरिकथा ❀ ऊसर बीज बये फल जथा ॥

ममतामें अनुरक्त मनुष्यसे ज्ञानकी कथा, अत्यन्त लोभीसे वैराग्यका वर्णन, क्रोधीसे जितेन्द्रियता और कामी मनुष्यसे हरि-कथा—इन सब बातोंका फल वही होता है, जो ऊसरमें बीज बोनेका।

अस कहि रघुपति चापु चढ़ावा ❀ यह मत लछिमन के मन भावा ॥
संधानेउ प्रभु बिसिख कराला ❀ उठी उदधि उरअंतर ज्वाला ॥

ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजीने धनुष चढ़ाया। यह मत लक्ष्मणजीके मनको भी बहुत प्रिय लगा। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कराल बाणको धनुषपर चढ़ाया। उससे समुद्रके हृदयके भीतर ज्वाला उठी।

मकर-उरग-झष-गन अकुलाने ❀ जरत जंतु जलनिधि जब जाने ॥
कनकथार भरि मनिगन नाना ❀ बिप्ररूप आयेउ तजि माना ॥

मगर, मच्छ और सर्प आदि समुद्रके जीव व्याकुल हो गये। समुद्रने जब जाना कि सब जंतु जल रहे हैं, तब अभिमान छोड़कर सोनेके थालमें तरह-तरहकी मणियोंको भरकर ब्राह्मणके रूपमें आया।

दो०—काटेहि पइ कदरी फरइ ❀ कोटि जतनु कोउ सींच।
बिनय न मान खगेस सुनु ❀ डांटेहि पै नव नीच ॥६१॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुण, सुनो। चाहे कोई करोड़ उपायोंसे उसे सींचे, पर केला काटनेपर ही फलता है। नीच विनय नहीं मानता, डाटनेपर ही नमता है।

सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे ❀ छमहु नाथ सब अवगुन मेरे ॥
गगन समीर अनल जल धरनी ❀ इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी ॥

भयभीत समुद्रने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरण पकड़कर कहा कि हे नाथ, मेरे सब दोष क्षमा कीजिये। हे नाथ! आकाश, पवन, अग्नि, जल और पृथिवी—इनकी करनी स्वभावसे ही जड़ होती है।

तव प्रेरित माया उपजाये ❀ सृष्टि हेतु सब ग्रंथहिं गाये ॥
प्रभु आयेसु जेहि कहं जस अहई ❀ सो तेहि भांति रहे सुख लहई ॥

इन सबको सृष्टिके लिये आपकी प्रेरणासे मायाने उत्पन्न किया है, यह सब ग्रंथोंने ही गाया है। प्रभुकी आज्ञा जिसको जैसी है, वह उसी प्रकार रहनेसे सुख पाता है।

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही ❀ मरजादा पुनि तुम्हरिय कीन्ही ॥
ढोल गंवार सूद्र पसु नारी ❀ सकल ताड़ना के अधिकारी ॥

हे प्रभो, आपने अच्छा किया जो मुझे सीख दी। परन्तु मर्यादा भी तो फिर आपकी ही बनायी हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री—सब ताड़नेके ही अधिकारी हैं।

प्रभुप्रताप मैं जाव सुखाई ❀ उतरिहि कटकु न मोरि बड़ाई ॥
प्रभु अग्याँ अपेल स्रुति गाई ❀ करउं सो बेगि जो तुम्हहिं सुहाई ॥

हे स्वामिन्, आपके प्रतापसे मैं सूखा हो जाऊँगा और सेना उतर जायगी। इसमें मेरी बड़ाई नहीं है, वेदोंने बतलाया है कि स्वामीकी आज्ञा अटल है। आपको जो प्रिय लगे वही शीघ्र कीजिये।

दो०—सुनत बिनीत बचन अति ❀ कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरइ कपिकटकु ❀ तात सो कहहु उपाइ ॥६२॥

समुद्रके अत्यन्त विनीत वचन सुनकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने मुसकुराकर कहा कि हे तात, जिस तरह बन्दरोंकी सेना पार उतर जाय, वह उपाय बतलाओ।

नाथ नील नल कपि दोउ भाई ❀ लरिकाईं रिषिआसिष पाई ॥
तिन्ह के परस किये गिरि भारे ❀ तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे ॥

समुद्र कहने लगा—हे नाथ, नील और नल नामक बन्दर हैं। वे दोनों भाई हैं। उन्होंने लड़कपनमें ऋषिका आशीर्वाद पाया था। उनके छू लेनेसे भारी पहाड़ भी आपके प्रतापसे समुद्रमें तर जायँगे।

मैं पुनि उर धरि प्रभुप्रभुताई ❀ करिहउं बलअनुमान सहाई ॥
एहि बिधि नाथ पयोधि बंधाइय ❀ जेहि यह सुजसु लोकतिहुं गाइय ॥

हे प्रभु, आपकी प्रभुताको हृदयमें धारणकर फिर मैं अपनी शक्तिके अनुसार सहायता करूंगा। हे स्वामिन्, इस प्रकार समुद्रका पुल बँधवा दीजिये, जिसमें यह सुयश तीनों लोकोंमें गाया जाय।

एहि सर मम उत्तर-तट-बासी ❀ हतहु नाथ खल नर अघरासी ॥
सुनि कृपाल सागर-मन-पीरा ❀ तुरतहि हरी राम रनधीरा ॥

इस बाणसे हे नाथ, मेरे उत्तर तटपर बसनेवाले दुष्ट मनुष्योंको मार डालिये। वे सब पापोंकी राशि हैं। यह सुनकर कृपालु और रणमें धीर श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रके मनकी पीड़ाको तुरन्त ही दूर कर दिया।

देखि राम बल पौरुष भारी ❀ हरषि पयोनिधि भयेउ सुखारी॥
सकलचरित कहि प्रभुहि सुनावा ❀ चरन बंदि पाथोधि सिधावा॥

श्रीरामचन्द्रजीके भारी बल और पौरुषको देखकर समुद्र प्रसन्न होकर सुखी हो गया। उसने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सब चरित कह सुनाया। फिर चरणोंकी वंदना करके समुद्र विदा हो गया॥

छंद—निज भवन गवनेउ सिंधु श्री-रघु-पतिहि यह मत भायेऊ।
यह चरित कलि-मल-हर जथामति दास तुलसी गायेऊ॥
सुखभवन संसयसमन दमनबिषाद रघुपति - गुन - गना।
तजि सकल आसभरोस गावहिं सुनहिं संतत सठ मना॥

समुद्र अपने घर चला गया और श्रीरामचन्द्रजीको यह परामर्श अच्छा लगा। कलियुगके पापोंको दूर कर देनेवाला यह चरित तुलसीदासने अपनी बुद्धिके अनुसार गाया है। श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूह, सुखके स्थान, संशयको दूर कर देनेवाले और विषादको मिटा देनेवाले हैं। अरे दुष्ट मन, तू सम्पूर्ण आशा और भरोसा छोड़कर निरन्तर उन्हींको गा और सुन।

दो०—सकल सुमंगल-दायक ❀ रघुनायक - गुन - गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव ❀ सिन्धु बिना जलजान॥६३॥

श्रीरामचन्द्रजीका गुणगान समस्त सुन्दर मङ्गलोंका देनेवाला है। उसे आदरके साथ जो सुनेंगे वे नौका बिना ही संसाररूपी समुद्रको तर जायँगे।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलज्ञान-
सम्पादनो नाम पञ्चमः सोपानः समाप्तः॥

* श्रीगणेशाय नमः *

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

षष्ठ सोपान

लंकाकांड

श्लोकाः

रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं कालमत्तेभसिंहं
योगीन्द्रज्ञानगम्यं गुणनिधिमजितं निर्गुणं निर्विकारम्।
मायातीतं सुरेशं खलवधनिरतं ब्रह्मवृन्दैकदेवं
वन्दे कन्दावदातं सरसिजनयनं देवमुर्वीशरूपम् ॥१॥

मैं श्रीरामचन्द्रजीकी वंदना करता हूं, जिनकी सेवा शिवजी करते हैं और जो संसारके भयको दूर कर देनेवाले, कालरूपी मत्त हाथीके लिये सिंह, योगीन्द्रोंको ज्ञानद्वारा प्राप्त, गुणोंके भाण्डार, अजित, निर्गुण, निर्विकार, मायातीत, देवताओंके स्वामी, दुष्टोंको मारनेमें लगे हुए, ब्राह्मण-वृन्दके एकमात्र देवता, मेघके समान सुन्दर, कमल-नेत्र और पृथिवी-पतिके रूपमें देव हैं।

शंखेन्द्वाभमतीवसुन्दरतनुं शार्दूलचर्माम्बरं
कालव्यालकरालभूषणधरं गङ्गाशशाङ्कप्रियम्।

काशीशं कलिकल्मषौघशमनं कल्याणकल्पद्रुमं
नौमीड्यं गिरिजापतिं गुणनिधिं कन्दर्पहं शङ्करम् ॥२॥

मैं महादेवको नमस्कार करता हूं, जो शंख और चन्द्रमाके समान कान्तिवाले, अत्यन्त सुन्दर शरीरधारी, बाघका चर्म ओढ़े, भयंकर काले सर्पोंका भूषण पहिने, गंगा और चन्द्रमासे प्रीति करनेवाले, काशीपति, कलियुगके पापोंके समूहको नाश करनेवाले, कल्याणके कल्पवृक्ष, गुणोंके भाण्डार, गिरिजापति, और कामदेवको मार डालनेवाले हैं।

यो ददाति सतां शम्भुः कैवल्यमपि दुर्लभम्।
खलानां दण्डकृद्योऽसौ शंकरः शंतनोतु माम् ॥३॥

जो शिवजी संतजनोंको सदा दुर्लभ मोक्ष भी दे देते हैं और जो दुष्टोंको दंड देनेवाले भी हैं, वही शिव भगवान् मेरा कल्याण करें।

दो०—लव निमेष परवानु जुग ❀ बरष कल्प सर चंड।
भजसि न मन तेहि रामु कहुं ❀ कालु जासु कोदंड ॥१॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि हे मन, तू उन श्रीरामचन्द्रजीको क्यों नहीं भजता, जिनका काल ही धनुष है; और लव, निमेष, परमाणु, युग, वर्ष और कल्प जिनके तीक्ष्ण बाण हैं।

सो०—सिंधुबचन सुनि राम ❀ सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ।
अब बिलंबु केहि काम ❀ करहु सेतु उतरइ कटकु ॥२॥

समुद्रके वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजीने मंत्रीको बुलाया और फिर प्रभुने यह कहा कि अब देरी किस कामके लिए कर रहे हो। पुल बनाओ, जिससे सेना पार हो जावे।

सुनहु भानु-कुल-केतु ❀ जामवंत कर जोरि कह।
नाथ नाम तव सेतु ❀ नर चढ़ि भवसागर तरहिं ॥३॥

हाथ जोड़कर जाम्ववान् कहने लगे कि हे सूर्यकुलकी पताका श्रीरामचन्द्रजी, सुनिए। हे नाथ, आपका नाम ही सेतु है, जिसपर चढ़कर मनुष्य भवसागरको तर जाते हैं।

यह लघु जलधि तरत कति बारा ❀ अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा ॥
प्रभुप्रताप बड़वानल भारी ❀ सोखेउ प्रथम पयोनिधि-बारी ॥

फिर यह छोटा-समुद्र तरनेमें कितनी देर लगेगी। यह सुनकर फिर पवनपुत्र हनुमानजी कहने लगे—प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापरूपी भारी बड़वानलने समुद्रका जल पहिले ही सुखा दिया था—

तव रिपु - नारि - रुदन - जल धारा ❀ भरेउ बहोरि भयेउ तेहिं खारा ॥
सुनि अतिउक्ति पवनसुत केरी ❀ हरषे कपि रघु - पति - तन हेरी ॥

परन्तु आपके शत्रुओंकी स्त्रियोंके रोनेसे आंसुओंकी जो धारा बही उसने इसे फिर भर दिया, जिससे यह खारी हो गया। पवनपुत्र हनुमानजीकी यह अत्युक्ति सुनकर सब वानर श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखकर प्रसन्न हुए

जामवंत बोले दोउ भाई ❀ नल नीलहिं सब कथा सुनाई ॥
रामप्रताप सुमिरि मन माहीं ❀ करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं ॥

जाम्बवान्ने दोनों भाइयों—नल और नीलको बुलाया और सब कथा सुनायी, तथा कहा कि श्रीरामचंद्रजीके प्रतापको मनमें स्मरण कर सेतु रचो। इसमें कुछ परिश्रम नहीं है।

बोलि लिये कपिनिकर बहोरी ❀ सकल सुनहु बिनती कछु मोरी ॥
राम - चरन - पंकज उर धरहू ❀ कौतुक एक भालु कपि करहू ॥

फिर उन्होंने वानरोंके झुण्डोंको बुला लिया और कहा कि आप सब मेरी कुछ प्रार्थना सुनिये। हे रीछ और वानरो; श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको हृदयमें धारण करो और एक खेल करो।

धावहु मरकट बिकटबरूथा ❀ आनहु बिटप गिरिन्हके जूथा ॥
सुनि कपि भालु चले करि हूहा ❀ जय रघुबीर प्रतापसमूहा ॥

विकट वानरोंके समूह दौड़ो और वृक्षों तथा पहाड़ोंके समूह ले आओ। यह सुनकर रीछ और बंदर हूहा करके और श्रीरामचन्द्रजीके प्रताप-समूहकी जय-जयकार बोलकर चल दिये।

दो०—अतिउतंग तरुसैलगन ❀ लीलहिं लेहिं उठाइ।
आनि देहिं नल नीलहि ❀ रचहिं ते सेतु बनाइ ॥ ४ ॥

वे सब अनायास ही बड़े ऊंचे वृक्षों और पहाड़ोंके समूह उखाड़ लेते और उन्हें लाकर नल-नीलको देते थे और वे उनसे अच्छी तरह सुधारकर सेतु रचते थे।

सैल बिसाल आनि कपि देहीं ❀ कंदुक इव नल नील ते लेहीं ॥
देखि सेतु अति - सुन्दर रचना ❀ बिहँसि कृपानिधि बोले बचना ॥

वानर जो विशाल पर्वत लाकर देते थे उन्हें नल और नील गेंदके समान ले लेते थे। सेतुकी अत्यन्त सुन्दर रचना देखकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी हंसकर ये वचन बोले—

परम रम्य उत्तम यह धरनी ❀ महिमा अमित जाइ नहिं बरनी ॥
करिहउं इहां संभुथापना ❀ मोरे हृदय परम कलपना ॥

यह भूमि अत्यन्त उत्तम और रमणीक है। इसकी असीम महिमा है, जिसका वर्णन नहीं किया जाता। मेरे हृदयमें यह श्रेष्ठ विचार हुआ है कि मैं यहां शिवजीकी स्थापना करूं।

सुनि कपीस बहु दूत पठाये ❀ मुनिबर सकल बोलि लेइ आये ॥
लिंग थापि बिधिवत करि पूजा ❀ सिवसमान प्रिय मोहि न दूजा ॥

यह सुनकर कपिराज सुग्रीवने बहुतसे दूतोंको भेजा, जो सब मुनिवरोंको बुलाकर ले आये। शिवलिंगकी स्थापना और विधिपूर्वक उसकी पूजा करके श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि शिवजीके समान प्यारा मुझे दूसरा कोई नहीं है।

सिवद्रोही मम भगत कहावा ❀ सो नर सपनेहु मोहि न पावा ॥
संकरबिमुख भगति चह मोरी ❀ सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥

जो मनुष्य शिवजीका द्रोही हो और मेरा भक्त कहलाता हो वह स्वप्नमें भी मुझे नहीं पाता। शिवजीसे विमुख होकर जो मनुष्य मेरी भक्ति चाहता है वह मूर्ख, मन्दबुद्धि और नरकका अधिकारी है।

दो०—संकरप्रिय मम द्रोही ❀ सिवद्रोही मम दास।
ते नर करहिं कलप भरि ❀ घोर नरक महं बास ॥५॥

वे मनुष्य कल्पभर घोर नरकमें वास करेंगे जो शिवजीको प्यार करनेवाले और मुझसे द्रोह करनेवाले हैं अथवा शिवजीसे द्रोह करनेवाले और मेरे दास हैं।

जो रामेस्वर दरसन करिहहिं ❀ ते तनु तजि हरिलोक सिधरिहहिं ॥
जो गंगाजल आनि चढ़ाइहि ❀ सो साजुज्य मुकुति नर पाइहि ॥

जो मनुष्य रामेश्वरका दर्शन करेंगे वे शरीर छूटनेपर विष्णुलोकको जायेंगे। जो मनुष्य लाकर गंगाजल चढ़ायेंगे वे सायुज्य मोक्ष पायेंगे।

होइ अकाम जो छल तजि सेइहि ❀ भगति मोरि तेहि संकर देइहि ॥
मम कृत सेतु जो दरसन करिही ❀ सो बिनुस्रम भवसागर तरिही ॥

निष्काम होकर और छल छोड़कर जो मनुष्य सेवन करेंगे उन्हें शिवजी मेरी भक्ति देंगे। मेरे बनवाये सेतुका दर्शन जो लोग करेंगे वे बिना परिश्रम संसार-समुद्रसे तर जायँगे।

राम बचन सब के जिय भाये ❀ मुनिबर निज निज आस्रम आये ॥
गिरिजा रघुपति कै यह रीती ❀ संतत करहिं प्रनत पर प्रीती ॥

श्रीरामचन्द्रजीके वचन सबके मनको प्रिय लगे। सब मुनिवर अपने-अपने आश्रमोंको गये। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजीकी यह रीति है कि वे निरन्तर भक्तजनोंपर प्रेम करते हैं।

बांधेउ सेतु नील नल नागर ❀ रामकृपा जसु भयउ उजागर ॥
बूड़हिं आनहिं बोरहिं जेई ❀ भये उपल बोहित सम तेई ॥
महिमा यह न जलधि कइ बरनी ❀ पाहन गुन न कपिन्ह कइ करनी ॥

चतुर नील और नलने पुल बांधा। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे उनका सुयश प्रसिद्ध हो गया। जो स्वयं डूब जाते हैं और दूसरोंको भी डुबा देते हैं, वही पत्थर नौकाके समान हो गये। यह कुछ समुद्रकी महिमा नहीं कही, यह पत्थरका गुण भी नहीं है और न वानरोंकी करतूत है।

दो०—स्री-रघु-बीर प्रताप तें ❀ सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे रामु तजि ❀ भजहिं जाइ प्रभु आन ॥६॥

श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे समुद्रमें पत्थर भी तिर गये। वे मनुष्य मन्दबुद्धि हैं जो श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर किसी अन्य स्वामीका भजन जाकर करते हैं।

बांधि सेतु अति सुदृढ़ बनावा ❀ देखि कृपानिधि के मन भावा ॥
चली सेन कछु बरनि न जाई ❀ गरजहिं मरकट-भट-समुदाई ॥

पुलको बांधकर अत्यन्त मजबूत बना दिया। कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने जब उसे देखा तो वह उनके मनको प्रिय लगा। सेनाने कूच किया। उसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता। वानर-वीरोंके समूह गर्जना कर रहे थे।

सेतुबंध ढिग चढ़ि रघुराई ❀ चितव कृपाल सिंधु बहुताई ॥
देखन कहं प्रभु करुनाकंदा ❀ प्रगट भये सब जल-चर-बृंदा ॥

सेतुबन्धनके पास चढ़कर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी जब समुद्रका विस्तार देखने लगे तब दयामय प्रभुके दर्शन करनेके लिये सब जलचर जीवोंके समूह प्रकट हुए।

मकर नक्र झख नाना ब्याला ❀ सत-जोजन-तन परमबिसाला ॥
ऐसेउ एक तिन्हहि जे खाहीं ❀ एकन्ह के डर तेपि डेराहीं ॥

घड़ियाल, मगर, मच्छ और तरह-तरहके सर्प आये, जिनका अत्यन्त विशाल शरीर सौ-सौ योजनका था। कई एक ऐसे भी थे कि जो उनको भी खा जायं। ये भी कई एक जीवोंके डरसे डरते थे।

प्रभुहिं बिलोकहिं टरहिं न टारे ❀ मन हरषित सब भये सुखारे ॥
तिन्ह की ओट न देखिय बारी ❀ मगन भये हरिरूप निहारी ॥
चली कटक कछु बरनि न जाई ❀ को कहि सक कपि-दल-बिपुलाई ॥

वे सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देख रहे थे और टाले न टलते थे। सबका मन प्रसन्न था और सब सुखी हो गये। उन जल-जन्तुओंकी ओटमें जल न दिखलायी पड़ता था। भगवान्का स्वरूप देखकर वे सब जलजन्तु मग्न हो गये। सेना चल दी। उसका कुछ वर्णन नहीं किया जाता। वानर, सैन्यका विस्तार कौन कह सकता है?

दो०—सेतुबंध भइ भीर अति ❀ कपि नभपंथ उड़ाहिं।
अपर जलचरन्हि ऊपर ❀ चढ़ि चढ़ि पारहिं जाहिं ॥७॥

सेतुबंधपर बड़ी भारी भीड़ हुई। बहुतसे वानर आकाशमार्गसे उड़ते हुए जाने लगे। अन्यान्य वानर जलजन्तुओंपर चढ़-चढ़कर पार जा रहे थे।

अस कौतुक बिलोकि दोउ भाई ❀ बिहँसि चले कृपाल रघुराई ॥
सेनसहित उतरे रघुबीरा ❀ कहि न जाइ कपि-जूथप-भीरा ॥

दोनों भाई यह सब कौतुक देखकर हंसे और फिर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी विदा हुए। श्रीरामचन्द्रजी सेना समेत पार जा उतरे। वानरोंके यूथपतियोंकी भीड़ इतनी अधिक थी कि कही नहीं जाती।

सिंधुपार प्रभु डेरा कीन्हा ❀ सकल कपिन्ह कहं आयसु दीन्हा ॥
खाहु जाइ फल मूल सुहाये ❀ सुनत भालु कपि जहं तहं धाये ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने समुद्रपार डेरा डाला और फिर सब वानरोंको आज्ञा दी कि जाकर सुन्दर फल-मूल खाओ। यह सुनते ही रीछ और बंदर जहां-तहां दौड़ गये।

सब तरु फरे रामहित लागी ❀ रितु अनरितु अकाल गति त्यागी ॥
खाहिं मधुर फल बिटप हलावहिं ❀ लंका सनमुख सिखर चलावहिं ॥

श्रीरामचन्द्रजीके हितके लिये सब वृक्ष फलने लग गये, जिनकी ऋतु थी वे भी और जिनकी ऋतु न थी वे भी। समय न होनेका विचार उन्होंने त्याग दिया। बंदर मीठे फलोंको खाते और वृक्षोंको हिलाते थे और लंकाकी ओर पर्वतोंकी चोटियोंको फेंकते थे।

जहं कहुं फिरत निसाचर पावहिं ❀ घेरि सकल बहु नाच नचावहिं ॥
दसनन्हि काटि नासिका काना ❀ कहि प्रभु सुजस देहिं तब जाना ॥

जहां कहीं वे राक्षसोंको घूमता हुआ पाते थे उसे सब घेरकर बहुतसा नाच नचाते थे। दांतोंसे नाक-कान काटकर और फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका सुयश सुनाकर तब उनको जाने देते थे।

जिन्ह कर नासा कान निपाता ❀ तिन्ह रावनहिं कही सब बाता ॥
सुनत स्रवन बारिधि बंधाना ❀ दस मुख बोलि उठा अकुलाना ॥

बंदरोंने जिन राक्षसोंके नाक-कान काट लिये थे उन्होंने रावणसे सब वृत्तान्त कहा। समुद्र बांध लिया, यह कानोंसे सुनकर रावण व्याकुल हुआ और बोल उठा—

दो०—बाँधेउ बननिधि नीरनिधि ❀ जलधि सिंधु बारीस।
सत्य तोयनिधि कंपती ❀ उदधि पयोधि नदीस ॥८॥

क्या सचमुच ही वननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिन्धु, वारीश, तोयनिधि, कम्पति, उदधि, नदीश बांध लिया?

व्याकुलता निज समुझि बहोरी ❀ बिहँसि चला गृह करि भय भोरी ॥
मंदोदरी सुनेउ प्रभु आयो ❀ कौतुकही पाथोधि बंधायो ॥

फिर अपनी व्याकुलताको समझकर रावण भयकी बातको सुनी-अनसुनी करके हंसकर अपने घर चल दिया। मंदोदरीने यह सुना कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी आ गये और खेल-ही-खेलमें समुद्रका पुल बंधवा दिया।

कर गहि पतिहि भवनु निज आनी ❀ बोली परम मनोहर बानी ॥
चरन नाइ सिरु अंचल रोपा ❀ सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा ॥

हाथ पकड़कर मंदोदरी अपने पतिको अपने भवनमें ले आयी और पहिले चरणोंमें शिर नवाकर अंचल फैलाया, फिर यह अत्यन्त मनोहर वाणी बोली—हे प्यारे, क्रोध छोड़कर आप मेरा वचन सुनिये।

नाथ बैरु कीजै ताही सों ❀ बुधि बल सकिअ जीति जाही सों ॥
तुम्हहिं रघुपतिहिं अंतर कैसा ❀ खलु खद्योत दिनकरहिं जैसा ॥

हे नाथ, वैर उसीसे करना चाहिये, जिससे बुद्धि और बलमें जीता जा सके। आपमें और श्रीरामचन्द्रजीमें कितना अन्तर है जितना दुष्ट जुगनू और सूर्यमें।

अति बल मधु कैटभ जेहि मारे ❀ महाबीर दितिसुत संहारे ॥
जेहि बलि बाँधि सहसभुज मारा ❀ सोइ अवतरेउ हरन महि भारा ॥
तासु बिरोध न कीजिअ नाथा ❀ काल करम जिव जाके हाथा ॥

जिन्होंने अत्यन्त बलवान् मधु और कैटभको मार डाला, बड़े शूरवीर दैत्योंका संहार किया, बलि राजाको बांध लिया और सहस्रबाहु अर्जुनको मार डाला, वही परमात्मा पृथ्वीका भार हरण करनेके लिये अवतीर्ण हुए हैं। हे नाथ, उनका विरोध नहीं करना चाहिये, जिनके हाथमें काल, कर्म और जीव हैं।

दो०—रामहिं सौंपिहु जानकी ❀ नाइ कमल पद माथ।
सुत कहुं राजु समर्पि बन ❀ जाइ भजिअ रघुनाथ ॥९॥

चरणकमलोंमें मस्तक नवाकर श्रीरामचन्द्रजीको जानकी सौंप दीजिये और पुत्रको राज्य देकर वनमें जाकर रघुनाथजीका भजन करना चाहिये।

नाथ दीनदयालु रघुराई ❀ बाघउ सनमुख गये न खाई ॥
चाहिअ करन सो सबु करि बीते ❀ तुम्ह सुर असुर चराचर जीते ॥

हे नाथ, बाघ भी तो सामने जानेपर नहीं खाता, फिर श्रीरामचन्द्रजी तो दीनदयाल हैं। जो कुछ करना चाहिए था वह सब आपने कर लिया। आपने देवता, दैत्य और चराचरको जीत लिया।

संत कहहिं असि नीति दसानन ❀ चौथेपन जाइय नृप कानन ॥
तासु भजन कीजिय तहं भरता ❀ जो करता पालक संहरता ॥

हे दशमुख, सन्तजन नीतिमें ऐसा कहते हैं कि राजाको चौथेपनमें वनको चला जाना चाहिए। हे स्वामिन्, वहां उसका भजन करना चाहिए, जो जगत्का उत्पन्न, पालन और संहार करनेवाला है।

सोइ रघुबीर प्रनतअनुरागी ❀ भजहु नाथ ममता सब त्यागी ॥
मुनिबर जतन करहिं जेहि लागी ❀ भूप राजु तजि होहिं बिरागी ॥

भक्तपर अनुराग करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी वही हैं। हे नाथ, सब ममता छोड़कर उनका भजन कीजिये। जिसके लिये श्रेष्ठ मुनिजन यत्न करते हैं और राज्य छोड़कर राजा वैरागी हो जाते हैं—

सोइ कोसलाधीस रघुराया ❀ आए करन तोहि पर दाया ॥
जो पिय मानहु मोर सिखावन ❀ होइ सुजसु तिहुं पुर अतिपावन ॥

वही कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी आपपर दया करने आये हैं। हे प्यारे, यदि आप मेरी सीख मानेंगे तो तीनों लोकोंमें आपका अत्यन्त पवित्र सुयश हो जायगा।

दो०—अस कहि लोचन बारि भरि ❀ गहि पद कंपित गात।
नाथ भजहु रघुबीर-पद ❀ अचल होइ अहिवात ॥१०॥

ऐसा कहकर मंदोदरीने नेत्रोंमें जल भर लिया और कांपते हुए शरीरसे चरण पकड़कर बोली—हे नाथ, श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका भजन कीजिए, जिससे मेरा सौभाग्य अचल हो जावे।

तब रावन मयसुता उठाई ❀ कहै लाग खल निज प्रभुताई ॥
सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना ❀ जग जोधा को मोहि समाना ॥

तब रावणने मयासुरकी पुत्री मंदोदरीको उठाया और दुष्ट अपनी प्रभुता कहने लगा—हे व्यर्थ ही भयभीत हो गयी है। संसारमें मेरे समान योद्धा कौन है?

बरुन कुबेर पवन जम काला ❀ भुज बल जितेउँ सकल दिगपाला ॥
देव दनुज नर सब बस मोरें ❀ कवन हेतु उपजा भय तोरें ॥

वरुण, कुबेर, वायु, यम, काल और समस्त दिक्पाल—सबको मैंने अपनी भुजाओंके बलसे जीता है। देवता, दैत्य और मनुष्य—सब मेरे वशमें हैं। फिर किस कारण तुझे भय उत्पन्न हुआ है।

नाना बिधि तेहि कहेसि बुझाई ❀ सभा बहोरि बैठ सो जाई ॥
मंदोदरी हृदय अस जाना ❀ कालबिबस उपजा अभिमाना ॥

अनेक प्रकारसे कहकर रावणने मंदोदरीको समझाया और फिर जाकर वह सभामें बैठ गया। मंदोदरीने हृदयमें यह समझ लिया कि स्वामी कालके वशमें हो गये हैं, इससे अभिमान उत्पन्न हो गया है।

सभा आइ मंत्रिन्ह तेहि बूझा ❀ करब कवनि बिधि रिपु सैं जूझा ॥
कहहिं सचिव सुनु निसिचर-नाहा ❀ बार बार प्रभु पूछहु काहा ॥
कहहु कवन भय करिअ बिचारा ❀ नर कपि भालु अहार हमारा ॥

सभामें आकर मंत्रियोंसे रावणने पूछा कि शत्रुसे युद्ध किस तरह किया जायगा। मंत्री कहने लगे, हे राक्षसराज, सुनिये। हे प्रभो, आप बार-बार क्या पूछते हैं? भला कहिए, भय ही क्या है, जिसका विचार किया जाय। मनुष्य, बन्दर और रीछ तो हमारा भोजन हैं।

दो०—बचन सबहिं के स्रवन सुनि ❀ कह प्रहस्त कर जोरि।
नीतिबिरोध न करिय प्रभु ❀ मंत्रिन्ह मति अतिथोरि ॥११॥

सब मंत्रियोंके वचन कानोंसे सुनकर प्रहस्त हाथ जोड़कर कहने लगा कि हे स्वामिन्, मंत्रियोंकी बुद्धि अत्यन्त थोड़ी है। नीतिके विरुद्ध नहीं करना चाहिए।

कहहिं सचिव सब ठकुरसोहाती ❀ नाथ न पूर आव एहि भाँती ॥
बारिधि नाँघि एक कपि आवा ❀ तासु चरित मन महँ सब गावा ॥

ये सब मन्त्री स्वामीको अच्छी लगनेवाली मुँह-देखी बात कह रहे हैं। हे नाथ, इस प्रकार पूरा न पड़ेगा। समुद्रको लांघकर जो एक बन्दर आया था उसके चरितोंको सब राक्षस मनमें रटते हैं।

छुधा न रही तुम्हहिं तब काहू ❀ जारत नगर न कस धरि खाहू ॥
सुनत नीक आगे दुख पावा ❀ सचिवन्ह अस मत प्रभुहिं सुनावा ॥

क्या तुममेंसे किसीको भी उस समय भूख नहीं थी, जब उसने नगर जलाया था? तब पकड़कर उसे क्यों नहीं खा लिया? हे प्रभो, मंत्रियोंने आपको ऐसा मत सुनाया है जो सुननेमें तो अच्छा है, परन्तु आगे जिससे दुःख ही मिलेगा।

जेहि बारीस बंधायेउ हेला ❀ उतरेउ सेन समेत सुबेला ॥
सो भनु मनुज खाब हम भाई ❀ वचन कहहिं सब गाल फुलाई ॥

जिसने खेल-ही-खेलमें समुद्रका पुल बंधा दिया और सेनासमेत 'सुवेला' नामक पर्वतपर आ उतरा, उसे कहते हो कि वह मनुष्य है, उसे हम खा जायंगे। हे भाई, सब गाल फुला-फुलाकर बातें कह रहे हैं।

तात बचन मम सुनु अति आदर ❀ जनि मन गुनहु मोहि करि कादर ॥
प्रियबानी जे सुनहिं जे कहहीं ❀ ऐसे नर निकाय जग अहहीं ॥

हे तात, अत्यन्त आदरसे मेरे वचन सुनिये। मुझे मनमें कायर मत समझिये। प्रिय वचनोंको जो कहते हैं और जो सुनते हैं—ऐसे मनुष्य संसारमें बहुत हैं।

बचन परमहित सुनत कठोरे ❀ सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे ॥
प्रथम बसीठ पठव सुनु नीती ❀ सीता देइ करहु पुनि प्रीती ॥

परन्तु हे स्वामिन्, ऐसे मनुष्य कम हैं जो सुननेमें कठोर किन्तु अत्यन्त हितकारी वचन कहते और सुनते हैं। नीति सुनिये—पहिले दूत भेजिए,फिर सीता देकर प्रीति कर लीजिये।

दो०—नारि पाइ फिरि जाहिं जौं ❀ तौ न बढ़ाइअ रारि।
नाहिं त सनमुखसमर महि ❀ तात करिअ हठि मारि ॥१२॥

स्त्रीको पाकर यदि वे लौट जायं तो लड़ाई नहीं बढ़ानी चाहिए; परन्तु यदि वे न लौटें तो हे तात, संग्राम-भूमिमें सामने होकर हठपूर्वक युद्ध करना चाहिये।

यह मत जौं मानहु प्रभु मोरा ❀ उभय प्रकार सुजसु जग तोरा ॥
सुत सन कह दसकंठ रिसाई ❀ असि मति सठ केहि तोहि सिखाई ॥

हे प्रभो, यदि आप मेरी यह सलाह मान लें तो संसारमें दोनों ही प्रकारसे आपका सुयश होवे। यह सब सुनकर रावण क्रोधित होकर पुत्र प्रहस्तसे कहने लगा कि रे दुष्ट, तुझे ऐसी बुद्धि किसने सिखायी?

अबहीं ते उर संसय होई ❀ बेनुमूल सुत भयेउ घमोई ॥
सुनि पितुगिरा परुष अतिघोरा ❀ चला भवन कहि बचन कठोरा ॥

अभीसे मनमें संदेह हो रहा है। हे पुत्र, वांसकी जड़में तू घमोय हुआ। पिताकी अत्यन्त कठोर और भयंकर वाणी सुनकर प्रहस्त ये कठोर वचन कहकर अपने घर चल दिया।

हितमत तोहि न लागत कैसे ❀ कालबिबस कहुं भेषज जैसे ॥
संध्यासमय जानि दससीसा ❀ भवन चलेउ निरखत भुजबीसा ॥

तुम्हें हितकारी सलाह कैसे अच्छी नहीं लगती जैसे कालके वशमें हो जानेवाले रोगीको औषधि ! संध्या समय जानकर रावण अपनी बीस भुजाओंको देखता हुआ घर चल दिया।

लङ्का सिखर उपर आगारा ❀ अति बिचित्र तहं होइ अखारा ॥
बैठ जाइ तेहि मंदिर रावन ❀ लागे किन्नर गुनगन गावन ॥
बाजहिं ताल पखाउज बीना ❀ नृत्य करहिं अपसरा प्रबीना ॥

लंकादुर्गके शिखरपर एक भवन था, वहां बहुत ही विचित्र अखाड़ा होता था। रावण जाकर उस भवनमें बैठ गया और किन्नर गुणगणोंको गाने लगे। ताल, पखावज और वीणा बजते थे और चतुर अप्सराएं नृत्य करती थीं।

दो०—सुनासीर-सत-सरिस सोइ ❀ संतत करइ बिलास।
परम-प्रबलरिपु सीस पर ❀ तदपि न कछु मन त्रास ॥ १३ ॥

वह रावण सौ इन्द्रोंके समान सर्वदा विलास करता था। यद्यपि उसके शिरपर अत्यन्त प्रबल शत्रु था तथापि उसके मनमें कुछ भी भय न था।

इहां सुबेल सैल रघुबीरा ❀ उतरे सेनसहित अतिभीरा ॥
सैलसृंग एक सुंदर देखी ❀ अति उतंग सम सुभ्र बिसेखी ॥

यहां श्रीरामचन्द्रजी, सुवेल नामक पर्वतपर सेनासमेत उतरे, जिसकी बड़ी भीड़भाड़ हुई। एक सुन्दर, अत्यन्त ऊंचा, बराबर और अधिक श्वेत पर्वत-शृङ्ग देखकर—

तहं तरु-किसलय - सुमन सुहाए ❀ लछिमन रचि निज हाथ डसाए ॥
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला ❀ तेहिं आसन आसीन कृपाला ॥

वहां लक्ष्मणजीने अपने हाथसे सजाकर वृक्षोंके सुहावने पत्तों और फूलोंको बिछाया। उसपर सुन्दर कोमल मृगछाला बिछायी। उस आसनपर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी बैठ गये।

प्रभु कृत सीस कपीसउछंगा ❀ बाम दहिन दिसि चाप निषंगा ॥
दुहुं करकमल सुधारत बाना ❀ कह लंकेस मंत्र लगि काना ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने कपिराज सुग्रीवकी गोदमें शिर रखा और अपनी बायीं और दाहिनी दिशाओंमें रखा धनुष और बाण। दोनों करकमलोंसे वे बाण सुधारते थे और लङ्कापति विभीषण कानसे लगकर मंत्रणा दे रहे थे।

बड़भागी अंगद हनुमाना ❀ चरन कमल चांपत बिधि नाना ॥
प्रभुपाछे लछिमन बीरासन ❀ कटि निषंग कर बान सरासन ॥

बड़भागी अंगद और हनुमान अनेक प्रकारसे चरणकमलोंको दबाते थे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पीछे लक्ष्मणजी कमरमें तरकस बांधे और हाथमें धनुषबाण लिए हुए वीरासन लगाए बैठे थे।

दो०—एहि बिधि करुनासील गुन ❁ धाम राम आसीन।
ते नर धन्य जे ध्यान एहि ❁ रहत सदा लयलीन ॥ १४ ॥

इस प्रकार दयाशील, गुणधाम श्रीरामचन्द्रजी विराजमान थे। वे मनुष्य धन्य हैं जो उस मूर्त्तिके ध्यानमें सदा लवलीन रहते हैं।

पूरब दिसा बिलोकि प्रभु ❁ देखा उदित मयंक।
कहत सबहिं देखहु ससिहि ❁ मृग-पति-सरिस असंक ॥ १५ ॥

पूर्व दिशाकी ओर देखनेपर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि चन्द्रमा उदय हुआ है। वे सबको संबोधन करके कहने लगे कि चन्द्रमाको देखो, यह पशुराज सिंहके समान निडर है।

पूरबदिसि गिरि - गुहा - निवासी ❁ परम - प्रताप - तेज - बलरासी ॥
मत्त - नाग - तम - कुंभ - बिदारी ❁ ससि केसरी गगन - बन-चारी ॥

यह चन्द्रमारूपी सिंह पूर्व दिशारूपी पर्वतकी गुहामें रहता है। बड़ा प्रतापी तथा तेज और बलकी राशि है। अन्धकाररूपी मतवाले हाथीके गण्डस्थलोंको विदीर्ण कर यह आकाशरूपी वनमें विचरण किया करता है।

बिथुरे नभ मुकुताहल तारा ❁ निसि सुंदरी केर सिंगारा ॥
कह प्रभु ससि महं मेचकताई ❁ कहहु काह निज निज मति भाई ॥

आकाशमें मोतियोंके समान तारागण बिखरे हुए हैं, जो रात्रिरूपी सुन्दरीके शृङ्गार हैं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि चन्द्रमामें वह जो कालापन है उसे हे भाइयो, अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार बतलाओ कि क्या है?

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई ❁ ससि महं प्रगट भूमि कै झांई ॥
मारेहु राहु ससिहि कह कोई ❁ उर महं परी स्यामता सोई ॥

सुग्रीव कहने लगे कि हे श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। चन्द्रमामें पृथिवीकी छाया दिखलायी पड़ती है। कोई कहने लगा कि राहुने चन्द्रमाको मारा था, उसीका कालापन इसके हृदयमें पड़ गया है।

कोउ कह जब बिधि रतिमुख कीन्हा ❁ सारभाग ससि कर हरि लीन्हा ॥
छिद्र सो प्रगट इन्दुउर माहीं ❁ तेहि मग देखिअ नभ परिछाहीं ॥

कोई कहने लगा कि जब विधाताने रतिका मुख बनाया तब चन्द्रमाका सार-भाग निकाल लिया, वही छिद्र चद्रमाके हृदयमें प्रकट है, उसी छिद्रके मार्गसे आकाशकी परिछांई दीख पड़ती है।

प्रभु कह गरल बंधु ससि केरा ❀ अति प्रिय निजउर दीन्ह बसेरा ॥
बिषसंयुत करनिकर पसारी ❀ जारत बिरहवंत नरनारी ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि चन्द्रमाका भाई विष है, अत्यन्त प्रिय होनेसे इसने उसे अपने हृदयमें वास दिया है, जिसके संसर्गसे अपनी विषभरी किरणोंके समूहको फैलाकर वियोगी स्त्री-पुरुषोंको वह जलाया करता है।

दो०—कह मारुतसुत सुनहु प्रभु ❀ ससि तुम्हार निज दास।
तव मूरति बिधुउर बसति ❀ सोइ स्यामता अभास ॥१६॥

पवनपुत्र हनुमानजी कहने लगे कि हे प्रभो, सुनिये। चन्द्रमा आपका अपना दास है। आपकी मूर्ति चन्द्रमाके हृदयमें वसती है, उसीसे इस कालेपनका आभास होता है।

पवनतनयके बचन सुनि ❀ बिहँसे राम सुजान।
दच्छिन दिसि अवलोकि प्रभु ❀ बोले कृपानिधान ॥१७॥

पवनपुत्र हनुमानजीके वचन सुनकर चतुर श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराये। फिर दक्षिण दिशाकी ओर देखकर कृपानिधान प्रभु कहने लगे---

देखु बिभीषन दच्छिन आसा ❀ घन घमंड दामिनी बिलासा ॥
मधुर मधुर गरजै घन घोरा ❀ होइ बृष्टि जनु उपल कठोरा ॥

हे विभीषण, दक्षिण दिशाकी ओर देखो, घन घोर घटा छायी है और बिजली चमक रही है। घोर बादल मधुर-मधुर ध्वनिसे गर्जना कर रहे हैं; मानों कठोर ओलोंकी वर्षा होगी।

कहै बिभीषन सुनहु कृपाला ❀ होइ न तड़ित न बारिदमाला ॥
लंकासिखर रुचिर आगारा ❀ तहँ दसकंधर देख अखारा ॥

विभीषण कहने लगे कि हे कृपालु, सुनिये। यह न बिजली है न मेघमाला है। लङ्कागढ़के शिखरपर एक सुन्दर भवन है, जहां रावण अखाड़ा देख रहा है।

छत्र मेघडंबर सिर धारी ❀ सोइ जनु जलदघटा अतिकारी ॥
मंदोदरी - स्रवन - ताटंका ❀ सोइ प्रभु जनु दामिनी दमंका ॥

वह शिरपर मेघके रङ्गवाला छत्र धारण किये हुए है, वही मानों बादलोंकी अत्यन्त काली-घटा है। मन्दोदरीके कानोंमें ताटंक हैं, वही, हे प्रभो, मानों बिजली चमक रही है।

बाजहिं ताल मृदंग अनूपा ❀ सोइ रव मधुर सुनहु सुरभूपा ॥
प्रभु मुसुकान समुझि अभिमाना ❀ चाप चढ़ाइ बान संधाना ॥

हे देवताओंके राजा, सुनिये। वहां जो अनुपम ताल और मृदङ्ग बज रहे हैं, वही यह मीठा शब्द है। रावणके अभिमानको समझकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराये और धनुष चढ़ाकर बाणका लक्ष्य ठीक किया।

दो०—छत्र मुकुट ताटंक तब ❁ हते एक हो बान।
सब के देखत महि परे ❁ मरम न कोऊ जान ॥१८॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने रावणके छत्र, मुकुट और मन्दोदरीके ताटंक—सब एक ही वाणसे नष्ट कर दिये। सबके देखते हुए वे पृथिवीपर गिर पड़े। इसका भेद किसीने नहीं जाना।

अस कौतुक करि रामसर ❁ प्रबिसेउ आइ निषंग।
रावन सभा ससंक सब ❁ देखि महा-रस-भंग ॥१९॥

ऐसा कौतुक करके श्रीरामचन्द्रजीका बाण तरकसमें आकर प्रविष्ट हो गया। उधर यह भारी रस-भङ्ग देखकर रावणकी सभामें सब सशंक हो गये।

कंप न भूमि न मरुत बिसेषा ❁ अस्त्र सस्त्र कछु नयन न देखा ॥
सोचहिं सब निज हृदय मझारी ❁ असगुन भयेउ भयंकर भारी ॥

न तो पृथिवी हिली और न विशेष हवा ही चली। शस्त्रास्त्र, कुछ भी आंखों नहीं दिखलायी पड़ा। यह अत्यन्त भयंकर अपशकुन हुआ है—यह बात सब अपने हृदयमें सोचने लगे।

दसमुख देखि सभा भय पाई ❁ बिहंसि बचन कह जुगुति बनाई ॥
सिरौ गिरे संतत सुभ जाही ❁ मुकुट खसे कस असगुन ताही ॥

रावणने जब देखा कि सभाजन डर गये हैं तब युक्ति बनाकर वह हंसकर वचन कहने लगा—शिर गिरनेपर भी जिसे सदा शुभ ही हुआ, उसे मुकुट गिरनेसे अपशकुन कैसा?

सयन करहु निज निज गृह जाई ❁ गवने भवन सकल सिर नाई ॥
मंदोदरी सोच उर बसेऊ ❁ जब तें स्रवनपूर महि खसेऊ ॥

अब जाकर अपने-अपने घर शयन करो। सब शिर नवाकर अपने-अपने घरको बिदा हुए। जबसे कानोंके भूषण पृथिवीपर गिर पड़े, मन्दोदरीके हृदयमें सोच बस गया—

सजल नयन कह जुग कर जोरी ❁ सुनहु प्रानपति बिनती मोरी ॥
कंत रामबिरोध परिहरहू ❁ जानि मनुज जनि मन हठ धरहू ॥

नेत्रोंमें जल भरकर दोनों हाथ जोड़कर वह कहने लगी कि हे प्राणेश्वर, मेरी विनती सुनिये। हे स्वामिन, श्रीरामचन्द्रजीका विरोध त्याग दीजिये। उन्हें मनुष्य समझकर मनमें हठ मत रखिये।

दो०—बिस्वरूप रघु-बंस - मनि ❀ करहु बचनबिस्वासु ।
लोककल्पना बेद कर ❀ अंग अंग प्रति जासु ॥२०॥

मेरे इस कथनपर विश्वास करो कि रघुवंशमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजी विश्व-स्वरूप हैं, जिनके अङ्ग-अङ्गमें समस्त लोकोंकी कल्पना वेद करते हैं।

पद पाताल सीस अजधामा ❀ अपर लोक अंग अंग बिश्रामा ॥
भृकुटि बिलास भयंकर काला ❀ नयन दिवाकर कच घनमाला ॥

जिनके चरण पातालमें हैं और शिर ब्रह्मलोकमें, जिनके अंग-अंगमें अन्यान्य लोकोंका विश्राम है, जिनका भृकुटि-विलास ही भयङ्कर काल है, जिनके नेत्र ही सूर्य हैं और केश ही मेघमाला है।

जासु घ्रान अस्विनीकुमारा ❀ निसि अरु दिवस निमेष अपारा ॥
स्रवन दिसा दस बेद बखानी ❀ मारुत स्वास निगम निज बानी ॥

अश्विनीकुमार जिनकी नाक हैं, रात और दिन जिनके असंख्य निमेष हैं, वेदोंने कहा है कि दशों दिशाएँ ही जिनके कान हैं, पवन जिनका श्वास है और वेद जिनकी निज वाणी है।

अधर लोभ जम दसन कराला ❀ माया हास बाहु दिगपाला ॥
आनन अनल अंबुपति जीहा ❀ उतपति पालन प्रलय समीहा ॥

लोभ जिनका ओंठ, यमराज जिनके कराल दांत, माया जिनका हास्य और दिग्पाल जिनकी भुजाएं, अग्नि जिनका मुख, समुद्र जिनकी जीभ और उत्पत्ति, पालन और संहार जिनकी चेष्टा है।

रोमराजि अष्टादस भारा ❀ अस्थि सैल सरिता नस जारा ॥
उदर उदधि अधगो जातना ❀ जगमय प्रभु का बहु कलपना ॥

अठारह प्रकारकी वनस्पति जिनके समस्त रोम हैं, पर्वत जिनकी हड्डियां और नदियां नसोंका जाल है, समुद्र जिनका पेट है और नीचेकी इन्द्रियां नरक हैं। संसारमें व्यापक प्रभुके इस स्वरूपकी कल्पना बहुत है।

दो०—अहंकार सिव बुद्धि अज ❀ मन ससि चित्त महान ।
मनुज बास-चर-अचर-मय ❀ रूप राम भगवान ॥२१॥

जिनका अहंकार महादेव, बुद्धि ब्रह्मा, मन चन्द्रमा और चित्त महत्तत्व है, वही भगवान् श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य आदि चराचरमें वास करते हैं, जगन्मय हैं।

अस बिचारि सुनु प्रानपति ❀ प्रभु सन बैर बिहाइ ।
प्रीति करहु रघु-बीर-पद ❀ मम अहिवात न जाइ ॥२२॥

हे प्राणेश्वर, सुनिये । ऐसा विचारकर प्रभुसे वैर त्यागकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम कीजिये, जिससे मेरा सौभाग्य न जावे ।

बिहँसा नारिबचन सुनि काना ❀ अहो मोहमहिमा बलवाना ॥
नारिसुभाउ सत्य कबि कहहीं ❀ अवगुन आठ सदा उर रहहीं ॥

स्त्री मन्दोदरीके वचन कानोंसे सुनकर रावण हंसा और कहने लगा—अहो ! मोहकी महिमा बड़ी बलवान है ! कविजन स्त्रीका स्वभाव सत्य ही कहते हैं कि उसके हृदयमें आठ अवगुण सदैव रहते हैं—

साहस अनृत चपलता माया ❀ भय अबिबेक असौच अदाया ॥
रिपु कर रूप सकल तैं गावा ❀ अति बिसाल भय मोहि सुनावा ॥

हठ, झूठ, चंचलता, माया, भय, अविचार, अपवित्रता और निर्दयता । इसी कारण तूने शत्रुका सब रूप गाया और मुझे अत्यन्त विशाल भय सुनाया ।

सो सब प्रिया सहज बस मोरे ❀ समुझि परा प्रसाद अब तोरे ॥
जानेउँ प्रिया तोरि चतुराई ❀ एहि मिस कहेहु मोरि प्रभुताई ॥

हे प्यारी, वह सब भय तो स्वभावसे ही मेरे वशमें हैं, परन्तु अब तेरी कृपासे वह समझ पड़ा । हे प्यारी, मैंने तेरी चतुराई जान ली । इस बहानेसे तूने मेरी प्रभुताका वर्णन किया है ।

तव बतकही गूढ़ मृगलोचनि ❀ समुझत सुखद सुनत भयमोचनि ॥
मंदोदरि मन महुँ अस ठयेऊ ❀ पियहि कालबस मतिभ्रम भयेऊ ॥

हे मृगलोचनि, तेरी बातचीत गूढ़ है, जो समझनेमें सुखदायक और सुननेमें भयको दूर कर देनेवाली है । यह सब सुनकर मंदोदरीको अपने मनमें ऐसा निश्चय हो गया कि कालके वशमें होनेके कारण स्वामीको मतिभ्रम हो गया है ।

दो०—एहि बिधि करत बिनोद बहु ❀ प्रात प्रगट दसकंध ।
सहज असंक सु-लंक-पति ❀ सभा गयउ मदअंध ॥२३॥

इस प्रकार बहुतसा विनोद करते-करते जब सवेरा हुआ, स्वभावसे ही निडर मदान्ध लंकाधिपति रावण सभामें गया ।

सो०—फूलै फरै न बेत ❀ जदपि सुधा बरषहिं जलद ।
मूरखहृदय न चेत ❀ जौं गुरु मिलहिं बिरंचि सत ॥२४॥

मेघ चाहे अमृत ही बरसावें, परन्तु बेत न तो फूलता है और न फलता है । सौ ब्रह्मा भी यदि गुरु मिलें तो भी मूर्खके हृदयमें बोध नहीं होता ।

इहाँ प्रात जागे रघुराई ❀ पूछा मत सब सचिव बोलाई ॥
कहहु बेगि का करिअ उपाई ❀ जामवंत कह पद सिरु नाई ॥

यहां प्रातःकाल होनेपर श्रीरामचन्द्रजी जागे और सब मन्त्रियोंको बुलाकर सलाह पूछी। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि शीघ्र बतलाओ, क्या उपाय करना चाहिये। इसपर चरणोंमें शिर नवाकर जाम्बवान् कहने लगे—

सुनु सरबग्य सकल उर बासी ❀ बुध बल तेज धरम गुन रासी ॥
मंत्र कहौं निज-मति-अनुसारा ❀ दूत पठाइअ बालिकुमारा ॥

हे सर्वज्ञ, हे सबके हृदयमें बसनेवाले, हे बुद्धि, बल, तेज, धर्म और गुणोंकी राशि श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये। अपनी बुद्धिके अनुसार मैं यह सलाह बतलाता हूं कि बालिपुत्र अंगदको दूत बनाकर भेजिये।

नीक मंत्र सब के मन माना ❀ अंगद सन कह कृपानिधाना ॥
बालितनय बुधि-बल-गुन-धामा ❀ लंका जाहु तात मम कामा ॥

यह अच्छी सलाह जब सबके मनको ग्राह्य हुई तब दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी अंगदजीसे कहने लगे—हे बालिपुत्र अंगद, तुम बुद्धि, बल और गुणोंके स्थान हो। हे तात, मेरे कार्यके लिये तुम लंकाको जाओ।

बहुत बुझाइ तुम्हहिं का कहऊं ❀ परम चतुर मैं जानत अहऊं ॥
काजु हमार तासु हित होई ❀ रिपु सन करेहु बतकही सोई ॥

बहुत समझाकर तुम्हें क्या कहूं? मैं जानता हूं कि तुम अत्यन्त चतुर हो। शत्रुसे वही बातचीत करना जिससे हमारा कार्य हो और उसका हित हो।

सो०—प्रभुअग्याँ धरि सीस ❀ चरन बंदि अंगद उठेउ।
सोइ गुनसागर ईस ❀ राम कृपा जा पर करहु ॥२५॥

प्रभुकी आज्ञाको शिरपर रखकर और चरणोंकी वंदना करके अंगदजी उठे और कहने लगे कि हे स्वामिन्, हे श्रीरामचन्द्रजी, आप जिसपर कृपा करते हैं वही गुणोंका समुद्र हो जाता है।

स्वयं सिद्ध सब काजु ❀ नाथ मोहि आदर दियेउ।
अस बिचारि जुबराजु ❀ तनु पुलकित हरषित हिये ॥२६॥

सब कार्य तो स्वयं ही सिद्ध हैं, परन्तु स्वामीने मुझे सम्मानित किया है, ऐसा विचारकर युवराज अंगदका शरीर पुलकायमान और हृदय आनन्दित हो गया।

बंदि चरन उर धरि प्रभुताई ❀ अंगद चलेउ सबहिं सिरु नाई ॥
प्रभुप्रताप उर सहज असंका ❀ रनबाँकुरा बालिसुत बंका ॥

चरणोंकी वन्दनाकर और हृदयमें प्रभुताको रखकर अंगदजी सबको शिर नवाकर चल दिये। उनके हृदयमें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप था और वे स्वभावसे ही निडर थे। बालिपुत्र वीर अङ्गद रणमें बांके थे।

पुर पैठत रावन कर बेटा ❁ खेलत रहा सो होइ गइ भेंटा॥
बातहिं बात करष बढ़ि आई ❁ जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई॥

नगरमें घुसते हुए रावणके एक पुत्रसे, जो खेल रहा था, भेंट हो गयी। दोनोंमें अतुल बल था और फिर जवानी भी थी, बात-ही-बातमें क्रोध बढ़ आया।

तेहि अंगद कहं लात उठाई ❁ गहि पद पटकेउ भूमि भवाँई॥
निसि-चर-निकर देखि भट भारी ❁ जहं तहं चले न सकहिं पुकारी॥

अंगदजीको मारनेके लिए उसने जब लात उठायी तब अंगदजीने उसका पैर पकड़ घुमाकर पृथिवीपर पटक दिया। बस, फिर भारी योद्धा अङ्गदको देखकर ही राक्षसोंके समूह इधर-उधरको चल दिये। वे सब भयके कारण पुकार भी न सकते थे।

एक एक सन मरमु न कहहीं ❁ समुझि तासु बध चुप करि रहहीं॥
भयेउ कोलाहल नगर मंझारी ❁ आवा कपि लंका जेहि जारी॥

एक दूसरेसे मर्मकी बात न कहते थे। रावणके उस पुत्रके मारे जानेकी बात समझकर चुप होकर रह जाते थे। नगरमें इस बातका भारी कोलाहल हो गया कि जिसने लंका जलायी थी वही बन्दर फिर आया है।

अब धौं काह करिहिं करतारा ❁ अति सभीत सब करहिं बिचारा॥
बिनु पूंछे मग देहिं देखाई ❁ जेहि बिलोक सोइ जाइ सुखाई॥

सब राक्षस अत्यन्त भयभीत होकर विचार करने लगे कि न जाने विधाता अब क्या करेगा। पूछे बिना ही वे सब अंगदजीको रास्ता दिखला देते थे और अंगदजी जिसे देखते थे, वही सूख जाता था।

दो०—गयेउ सभादरबार तब ❁ सुमिरि राम-पद-कंज।
सिंहठवनि इत उत चितव ❁ धीर-बीर-बल-पुंज॥२७॥

तब धीर, वीर, और बलके समूह अंगदजी श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका स्मरणकर रावणकी सभाके दरबारमें गये और सिंहकी भांति निर्भीकतासे इधर-उधर देखने लगे।

तुरित निसाचर एक पठावा ❁ समाचार रावनहिं जनावा॥
सुनत बिहंसि बोला दससीसा ❁ आनहु बोलि कहाँ कर कीसा॥

अंगदने शीघ्रतासे एक राक्षस भेजा जिसने रावणको सब समाचार सूचित किये। सुनकर रावण हँसकर बोला कि बुलाकर लाओ, कहांका बंदर है।

आयसु पाइ दूत बहु धाये ❀ कपिकुंजरहि बोलि लेइ आये ॥
अंगद दीख दसानन बैसा ❀ सहित प्रान कज्जलगिरि जैसा ॥

आज्ञा पाकर बहुतसे दूत दौड़े और हाथीरूपी वानर अंगदको बुलाकर ले आये। अंगदने रावणको देखा। वह वैसा ही था जैसे सजीव कज्जलगिरि हो।

भुजा बिटप सिर सृंग समाना ❀ रोमावली लता जनु जाना ॥
मुख नासिका नयन अरु काना ❀ गिरिकंदरा खोह अनुमाना ॥

जिसकी भुजाएँ वृक्षोंके और शिर चोटियोंके समान हैं, जो रोमावली है वही मानों तरह-तरहकी लताएँ हैं; मुख, नाक, नेत्र और कान—मानों पर्वतकी कंदराएँ और गुफाएं हों।

गयेउ सभा मन नेकु न मुरा ❀ बालितनय अतिबल बाँकुरा ॥
उठे सभासद कपि कहँ देखी ❀ रावनउर भा क्रोध बिसेखी ॥

अत्यन्त बलवान, बांके बालिपुत्र अंगद सभामें गये, उनका मन तनिक भी नहीं हिचका। वानर अंगदको देखकर सब सभासद उठ खड़े हुए। रावणके हृदयमें इससे बड़ा क्रोध हुआ।

दो०—जथा मत्त गज जूथ महँ ❀ पंचानन चलि जाइ।
रामप्रताप संभारि उर ❀ बैठ सभा सिरु नाइ ॥ २८ ॥

मतवाले हाथियोंके झुण्डमें जिस प्रकार सिंह चला जाता है; उसी प्रकार अंगदजी श्रीरामचन्द्रजीके प्रताप-को हृदयमें स्मरण कर और शिर नवाकर सभामें बैठ गये।

कह दसकंठ कवन तैं बंदर ❀ मैं रघु-बीर दूत दसकंधर ॥
मम जनकहि तोहि रही मिताई ❀ तव हितकारन आयेउं भाई ॥

रावणने पूछा कि बन्दर, तू कौन है? अंगदजीने उत्तर दिया कि हे रावण, मैं श्रीरामचन्द्रजीका दूत हूं। मेरे पितासे और तुमसे मित्रता थी, इसीसे हे भाई, मैं तुम्हारी भलाईके लिये आया हूं।

उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती ❀ सिव बिरंचि पूजेहु बहु भाँती ॥
बर पायेहु कीन्हेहु सब काजा ❀ जीतेहु लोकपाल सब राजा ॥

तुम्हारा कुल उत्तम है, तुम पुलस्त्य ऋषिके नाती हो, तुमने बहुत प्रकारसे शिव और ब्रह्माका पूजन किया है, तुमने वरदान पाया, सब कार्य किये और लोकपालों तथा सब राजाओंको जीत लिया।

नृपअभिमान मोहबस किंबा ❀ हरि आनेहु सीता जगदंबा ॥
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा ❀ सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा ॥

राज्यके अभिमान या मोहके वशमें होकर तुम जगन्माता सीताजीको हर लाये हो। अब तुम मेरा कथन सुनो, जो कल्याणकर है। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी तुम्हारा सब अपराध क्षमा कर देंगे।

दसन गहहु तृन कंठ कुठारी ❀ परिजनसहित संग निजनारी ॥
सादर जनकसुता करि आगे ❀ एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे ॥

दांतोंमें तिनका दबाओ और कंठमें कुल्हाड़ी रखो, कुटुम्बियों समेत अपनी स्त्रीको संग लो और जानकीजीको आदरके साथ आगे कर लो—इस प्रकार सब भय छोड़कर चलो।

दो०—प्रनतपाल रघु-बंस-मनि ❀ त्राहि त्राहि अब मोहि।
सुनतहि आरत बचन प्रभु ❀ अभय करहिंगे तोहि ॥ २६ ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीसे प्रार्थना करो—हे शरणागत-रक्षक, हे रघुवंशमें मणिके समान श्रीरामचन्द्रजी, अब मेरी रक्षा करो! रक्षा करो!! यह दुःखभरी वाणी सुनते ही प्रभु श्रीरामचन्द्रजी तुम्हें अभय कर देंगे।

रे कपिपोत न बोल संभारी ❀ मूढ़ न जानहि मोहि सुरारी ॥
कहु निज नामु जनक कर भाई ❀ केहि नाते मानिये मिताई ॥

रावणने कहा—अरे बन्दरके बच्चे, तू संभालकर नहीं बोलता! मूर्ख नहीं जानता कि मैं देवताओंका शत्रु हूं! अरे भाई, अपना और अपने पिताका नाम तो बतला! मित्रता किस नातेसे मानी जाय?

अंगद नाम बालिकर बेटा ❀ ता सों कबहुं भई ही भेंटा ॥
अंगदबचन सुनत सकुचाना ❀ रहा बालि बानर मैं जाना ॥

अंगदजीने उत्तर दिया—मेरा नाम अंगद है। मैं बालिका पुत्र हूं। उससे कभी तुम्हारी भेंट हुई होगी। अंगदजीके ये वचन सुनकर रावण सकुचाया और बोला—हां, मैं जानता हूं। बालि एक बन्दर था।

अंगद तुही बालि कर बालक ❀ उपजेहु बंस-अनल कुलघालक ॥
गर्भ न गयेउ व्यर्थ तुम्ह जायेहु ❀ निजमुख तापसदूत कहायेहु ॥

अरे अंगद! बालिका बालक तू ही है! कुलका नाश करनेवाला तू वंशमें अग्निरूप उत्पन्न हुआ। जिससे तू उत्पन्न हुआ वह गर्भ ही क्यों नहीं गिर गया, जो तू अपने ही मुंहसे तपस्वीका दूत कहलाया!

अब कहु कुशल बालि कहं अहई ❀ बिहंसि बचन तब अंगद कहई ॥
दिन दस गये बालि पहिं जाई ❀ बूझेहु कुसल सखा उर लाई ॥

अब बतला, बालि सकुशल तो है, और कहां है? तब अंगदजी हंसकर ये वचन कहने लगे—दस दिन बीतनेपर बालिके पास जाकर मित्रको हृदयसे लगाकर कुशल पूछना।

रामबिरोध कुसल जसि होई ❀ सो सब तोहि सुनाइहि सोई ॥
सुनु सठ भेद होइ मन ताके ❀ श्री-रघु-बीर हृदय नहिं जाके ॥

श्रीरामचन्द्रजीसे विरोध करनेपर जैसा कुशल होता है वह सब तुम्हें वही सुनावेगा। अरे दुष्ट, सुन। भेद उसीके मनमें होता है जिसके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजी नहीं हैं।

दो०—हम कुलघालक सत्य तुम्ह ❀ कुलपालक दससीस।
अंधउ बहिर न अस कहहिं ❀ नयन कान तव बीस ॥ ३० ॥

हे रावण, हम तो कुलके नाश करनेवाले हैं और तुम सचमुच कुलके पालन करनेवाले हो। अंधे और बहिरे भी तो ऐसा न कहेंगे—फिर तुम्हारे तो बीस नेत्र और कान हैं!

सिव-बिरंचि - सुर - मुनि - समुदाई ❀ चाहत जासु चरन सेवकाई ॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा ❀ ऐसिहु मति उर बिहरु न तोरा ॥

शिव, ब्रह्मा, देवता और मुनियोंका समुदाय, जिनके चरणोंकी सेवकाई चाहते हैं, उनका दूत होकर मैंने कुल डुबाया—ऐसी बुद्धि होनेपर भी तेरी छाती नहीं फटती!

सुनि कठोर बानी कपि केरी ❀ कहत दसानन नयन तरेरी ॥
खल तव कठिन बचन सब सहऊं ❀ नीति धरम मैं जानत अहऊं ॥

वानर अंगदकी कठोर वाणी सुनकर रावण आंखें निकालकर कहने लगा—अरे दुष्ट, मैं तेरे सब कठोर वचन सहता हूं; क्योंकि मैं नीति-धर्मको जानता हूं।

कह कपि धर्मसीलता तोरी ❀ हमहु सुनी कृत पर-तिय-चोरी ॥
देखेउ नयन दूत रखवारी ❀ बूड़ि न मरहु धरम - ब्रत - धारी ॥

वानर अंगदजी कहने लगे कि तेरी धर्मशीलता तो मैंने भी सुन रखी है कि तूने परस्त्रीको चुराया है। दूतकी रक्षा भी अपनी आंखोंसे देखी है। अरे धर्मव्रतधारी, तू डब नहीं मरता।

कान नाक बिनु भगिनि निहारी ❀ छमा कीन्ह तुम्ह धरमु बिचारी ॥
धरमसीलता तव जग जागी ❀ पावा दरस हमहुं बड़भागी ॥

कान-नाक बिना बहिनको देखकर भी तुमने धर्मका विचार करके ही तो क्षमा की। तुम्हारी धर्मशीलता संसारमें जग रही है। मैं बड़ा भाग्यवान हूं जो दर्शन हो गये।

दो०—जनि जल्पसि जड़ जंतु कपि ❀ सठ बिलोकु मम बाहु।
लोक-पाल-बल-बिपुल-ससि ❀ ग्रसन हेतु सब राहु ॥ ३१ ॥

रावण बोला—अरे मूर्ख जीव बन्दर, व्यर्थ बकवाद मत कर। दुष्ट, मेरी भुजाओंको देख। लोकपालोंके बहुतसे बलरूपी चन्द्रमाका ग्रास करनेके लिए ये सब राहु हैं।

पुनि नभसर मम कर-निकर ❀ कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयेउ मराल इव ❀ संभुसहित कैलास ॥ ३२ ॥

फिर, आकाशरूपी सरोवरमें मेरे हाथोंके समूहरूपी कमलोंमें निवास करके शंकरजीसमेत कैलाश हंसकी भांति शोभित हुआ था।

तुम्हरे कटक माँझ सुनु अंगद ❀ मो सन भिरिहि कवन जोधा बद ॥
तव प्रभु नारिबिरह बलहीना ❀ अनुज तासु दुख दुखी मलीना ॥

हे अंगद सुनो। बतलाओ, तुम्हारी सेनामें मुझसे कौन योद्धा लड़ेगा? तुम्हारा स्वामी तो स्त्रीके वियोगमें बलहीन हो गया है और उसका छोटा भाई दुःखसे दुःखी और मलिन हो रहा है।

तुम्ह सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ ❀ अनुज हमार भीरु अति सोऊ ॥
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा ❀ सो कि होइ अब समर-अरूढ़ा ॥

तुम और सुग्रीव—दोनों उस सेनारूपी नदीके किनारेके वृक्ष हो। हमारा भाई विभीषण है, परन्तु वह भी अत्यन्त भीरु है। मन्त्री जाम्बवान् अत्यन्त बूढ़ा है, वह क्या अब युद्धमें उद्यत हो सकेगा?

सिलपकर्म जानहिं नल नीला ❀ है कपि एक महा-बल-सीला ॥
आवा प्रथम नगर जेहि जारा ❀ सुनि हंसि बोलेउ बालिकुमारा ॥

नल और नील केवल शिल्प-कर्म जानते हैं। एक बन्दर अत्यन्त बलवान् अवश्य है जो यहां पहिले आया था और जिसने नगर जलाया था। यह सुन कर बालिपुत्र अंगद हंसकर बोले—

सत्य बचन कहु निसि-चर-नाहा ❀ सांचेहु कीस कीन्ह पुरदाहा ॥
रावननगरु अलप कपि दहई ❀ सुनि अस झूठ सुनै को कहई ॥

हे राक्षसराज, सत्य बात कहो। क्या सचमुच ही बन्दरने नगरको जलाया था? रावणकी राजधानीको एक छोटेसे बन्दरने जला दिया, ऐसी झूठी बात सुनकर उसे कौन कहे और कौन सुने?

जो अति सुभट सराहेहु रावन ❀ सो सुग्रीवं केर लघु धावन ॥
चलइ बहुत सो बीर न होई ❀ पठवा खबरि लेन हम सोई ॥

हे रावण, बड़ा योद्धा कहकर जिसकी तुमने प्रशंसा की वह बन्दर तो सुग्रीवका छोटा दूत है। जो बहुत चलता है वह वीर नहीं होता। हमने उसे खबर लेनेके लिए यहां भेजा था।

दो०—अब जानेउ पुर कपि दहेउ ❀ बिनु प्रभुआयसु पाइ ।
फिरि न गयेउ सुग्रीव पहिं ❀ तेहि भय रहा लुकाइ ॥३३॥

अब मालूम हुआ कि उस बन्दरने स्वामीकी आज्ञा पाए बिना ही यहां नगर जला दिया। इसी डरसे वह चुप रहा और लौटकर सुग्रीवके पास नहीं गया।

सत्य कहेहु दसकंठ सब ❀ मोहि न सुनि कछु कोह ।
कोउ न हमारे कटक अस ❀ तो सन लरत जो सोह ॥३४॥

हे रावण, तुमने सब सत्य ही कहा। उसे सुनकर मुझे कुछ भी क्रोध नहीं हुआ है। हमारी सेनामें ऐसा कोई नहीं है जो तुमसे लड़ते हुए शोभा पावे।

प्रीति बिरोध समान सन ❀ करिय नीति असि आहि ।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि ❀ भल कि कहइ कोउ ताहि ॥३५॥

नीति ऐसी है कि प्रीति और विरोध बराबरवालेसे ही करना चाहिये ? यदि पशुराज सिंह मेढकोंको मारे तो क्या कोई उसे अच्छा कहेगा ?

जद्यपि लघुता राम कहुँ ❀ तोहि बधें बड़ दोष ।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु ❀ छत्रिजाति कर रोष ॥३६॥

यद्यपि तुम्हें मारनेमें श्रीरामचन्द्रजीका हलकापन ही है और बड़ा दोष भी है, तथापि हे रावण सुन, क्षत्रिय जातिका रोष कठिन है।

बक्रउक्ति धनु बचन सर ❀ हृदय दहेउ रिपु कीस ।
प्रति उत्तर सड़सिन्ह मनहु ❀ काढ़त भट दससीस ॥३७॥

वक्र उक्तियोंके धनुषसे वचनरूपी बाणोंको छोड़कर वानर अंगदने शत्रु रावणके हृदयको जला दिया। उन बाणोंको योद्धा रावण मानों प्रत्युत्तररूपी सड़सियोंसे निकाल रहा हो।

हँसि बोलेउ दसमौलि तब ❀ कपि कर बड़ गुन एक ।
जो प्रतिपालइ तासु हित ❀ करइ उपाय अनेक ॥३८॥

तब रावण हँसकर बोला कि बन्दरोंका एक बड़ा गुण होता है कि जो उनको पालता है, उसके हितके लिए वे अनेक उपायोंको किया करते हैं।

धन्य कीस जो निज-प्रभु काजा ❀ जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा ॥
नाँचि कूदि करि लोग रिझाई ❀ पतिहित करै धर्म निपुनाई ॥

बन्दर धन्य हैं,जो अपने स्वामीके कार्यके लिए लज्जा-छोड़कर जहां-तहां नाचते हैं और नाच-कूदकर लोगों-को रिझाकर अपने स्वामीका हित,धर्म और चतुराई करते हैं।

अंगद स्वामिभक्त तव जाती ❀ प्रभुगुन कस न कहसि एहि भांती ॥
मैं गुनगाहक परम सुजाना ❀ तव कटु रटनि करौं नहिं काना ॥

हे अंगद, तुम्हारी जाति ही स्वामिभक्त है। अपने स्वामीके गुणोंको तुम फिर इस प्रकार क्यों न कहो! मैं गुणोंका ग्राहक और अत्यन्त चतुर हूं, इसीलिये तुम्हारी कटूक्तियोंको कान नहीं करता हूं।

कह कपि तव गुनगाहकताई ❀ सत्य पवनसुत मोहि सुनाई ॥
बन बिधंसि सुत बधि पुर जारा ❀ तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा ॥

वानर अंगदजीने कहा—तुम्हारी गुणग्राहकता सत्य है। पवनपुत्र हनुमानने भी मुझे सुनायी थी। उसने यद्यपि बागको उजाड़कर पुत्रको मार डाला और नगर जला दिया तथापि तुमने उसका कुछ भी अपकार नहीं किया।

सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई ❀ दसकंधर मैं कीन्हि ढिठाई ॥
देखेउं आइ जो कछु कपि भाषा ❀ तुम्हरे लाज न रोष न माषा ॥

हे रावण, तुम्हारी वही सुहावनी प्रकृति विचारकर मैंने ढिठाई की। वानर हनुमानने जो कुछ कहा था वह अब यहां आकर मैंने देख लिया। तुम्हें न तो लज्जा है और न क्रोध और न खिसियापन ही है।

जौं असि मति पितु खायेहु कीसा ❀ कहि अस बचन हंसा दससीसा ॥
पितहि खाइ खातेउं पुनि तोही ❀ अबहीं समुझि परा कछु मोहीं ॥

बन्दर, जब ऐसी बुद्धि है तभी तो पिताको खा लिया—यह वचन कहकर रावण हंसने लगा। अङ्गदजी बोले—पिताको खाकर भी मैं तुझे खा जाता, परंतु मुझे अभी कुछ समझ पड़ा है।

बालि-बिमल-जस-भाजनु जानी ❀ हतउं न तोहि अधम अभिमानी ॥
कहु रावन रावन जग केते ❀ मैं निज स्रवन सुने सुनु जेते ॥

अरे नीच अभिमानी, बालिके निर्मल यशका पात्र समझकर मैं तुझे नहीं मारता। हे रावण, बतलाओ तो भला संसारमें कितने रावण हैं? मैंने अपने कानोंसे जितने सुने हैं, उन्हें सुनो।

बलिहि जितन एकु गयउ पताला ❀ राखा बाँधि सिसुन्ह हयसाला ॥
खेलहिं बालक मारहिं जाई ❀ दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई ॥

एक रावण बलिको जीतनेके लिये पाताल गया था। उसे बालकोंने घुड़सालमें बांध रखा था। खेलमें बालक जाते और उसे मारते थे। राजा बलिको अन्तमें जब दया हो आयी तब उन्होंने उसे छुड़ा दिया।

...का भजन क्यों नहीं करता ? अरे दुष्ट,

एक बहोरि सहसभुज देखी * धाइ धरा जिमि जंतु बिसेषी ॥
कौतुक लागि भवन लेइ आवा * सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा ॥

फिर एक रावणको सहस्रबाहुने देखा था, जिन्होंने उसे दौड़कर पकड़ लिया था; जैसे लोग कोई विशेष जन्तु पकड़ते हों। खिलवाड़के लिये सहस्रबाहु उसे घर लाये थे, परंतु पुलस्त्य मुनिने पहुंचकर उसे छुड़ा दिया था।

दो०—एक कहत मोहि सकुचि अति * रहा बालि की काँख।
तिन्ह महुँ रावन तैं कवन * सत्य बदहि तजि माख ॥३९॥

एक रावणकी बात कहते हुए मुझे बड़ा संकोच होता है। वह बालिकी बगलमें दबा रहा था। इन सब रावणोंमेंसे तू कौनसा रावण है ? क्रोध छोड़कर सत्य बतला।

सुनु सठ सोइ रावन बलसीला * हरगिरि जान जासु भुजलीला ॥
जान उमापति जासु सुराई * पूजेउँ जेहि सिर सुमन चढ़ाई ॥

अरे दुष्ट, सुन। मैं वही बलवान रावण हूं, जिसकी भुजाओंकी लीलाको शिवजीका पर्वत कैलाश जानता है और जिसकी शूरताको जानते हैं पार्वतीपति शंकर, जिनकी पूजा मैंने अपने शिररूपी फूलोंको चढ़ाकर की थी।

सिरसरोज निज करन्हि उतारी * पूजेउँ अमित बार त्रिपुरारी ॥
भुजबिक्रम जानहिं दिगपाला * सठ अजहूँ जिन्हके उर साला ॥

अपने शिररूपी कमलोंको अपने हाथोंसे उतारकर मैंने असंख्य बार त्रिपुरारि शिवकी पूजा की है। अरे दुष्ट मेरी भुजाओंका पराक्रम दिग्पालोंको मालूम है, जिनके हृदयमें अभीतक पीड़ा हो रही है।

जानहिं दिग्गज उर कठिनाई * जब जब भिरेउँ जाइ बरिआई ॥
जिन्ह के दसन करालन फूटे * उर लागत मूलक इव टूटे ॥

मेरी हृदयकी कठोरताको दिग्गज जानते हैं; क्योंकि जब-जब मैं जाकर जबर्दस्ती उनसे भिड़ा तब-तब उनके फूटे हुये विकराल दांत मेरी छातीसे लगते ही मूलीकी भांति टूट गये।

जासु चलत डोलति इमि धरनी * चढ़त मत्तगज जिमि लघुतरनी ॥
सोइ रावन जगबिदित प्रतापी * सुनेहि न स्रवन अलीक प्रलापी ॥

जिसके चलते-चलते पृथिवी इस तरह हिलती है जैसे मतवाले हाथीके चलते ही छोटी नौका, मैं जगत प्रसिद्ध वही प्रतापी रावण हूं। अरे मिथ्या प्रलाप करनेवाले, क्या तूने उसे कानों नहीं सुना ?

दो०—तेहि रावन कहुँ लघु कहसि * नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्ब खल * अब जाना तव ग्यान ॥४०॥

बन्दर धन्य हैं,जो अपने हता है और मनुष्यकी बड़ाई करता है ? अरे बर्बर, अरे तुच्छ, अरे दुष्ट, अरे को रिझाकर अपने स्वामीईशान लिया ।

अंगद दुई सकोप कह बानी ❀ बोलु संभारि अधम अभिमानी ॥
सहस - बाहु - भुज - गहन अपारा ❀ दहन अनलसम जासु कुठारा ॥

यह सुनकर अंगदजी क्रोधके साथ यह वचन कहने लगे— अरे नीच, अभिमानी, संभाल कर बोल ! जिनका कुठार सहस्रबाहुकी भुजाओंके अपार और सघन वनको भस्म करनेके लिये अग्निके समान है और—

जासु परसु - सागर - खर धारा ❀ बूड़े नृप अगनित बहु बारा ॥
तासु गर्ब जेहि देखत भागा ❀ सो नर क्यों दससीस अभागा ॥

जिनके फरसेरूपी समुद्रकी तेज धारमें असंख्य राजा बहुत बार डूब गये उन परशुरामका अभिमान जिन्हें देखते ही भाग गया, क्यों अभागे रावण, वे श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य हैं ?

राम मनुज कस रे सठ बंगा ❀ धन्वी कामु नदी पुनि गंगा ॥
पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा ❀ अन्न दान अरु रस पीयूषा ॥

अरे दुष्ट धूर्त, श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य कैसे हैं ? कामदेव साधारण धनुषधारी और गंगाजी साधारण नदी कैसे हो सकती हैं ? कामधेनु साधारण पशु, कल्पवृक्ष साधारण पेड़, अन्नदान साधारण दान और अमृत साधारण रस कैसे हो सकता है ?

बैनतेय खग अहि सहसानन ❀ चिन्तामनि पुनि उपल दसानन ॥
सुनु मतिमंद लोक बैकुंठा ❀ लाभु कि रघु-पति-भगति-अकुंठा ॥

हे रावण, गरुड़ साधारण पक्षी, शेषनाग साधारण सर्प और फिर चिन्तामणि साधारण पत्थर कैसे हो सकती है ? अरे मन्दबुद्धि, सुन, वैकुण्ठ क्या साधारण लोक और श्रीरामचन्द्रजीकी अखण्डभक्ति क्या साधारण लाभ हो सकता है ?

दो०—सेनसहित तव मान मथि ❀ बन उजारि पुर जारि ।
कस रे सठ हनुमान कपि ❀ गयउ जो तव सुत मारि ॥ ४१ ॥

सेनासमेत तेरे अभिमानको मथकर, वनको उजाड़कर, नगरको जलाकर और तेरे पुत्रको मारकर जो हनुमानजी लौट गये, अरे दुष्ट, वे साधारण बन्दर कैसे हैं ?

सुनु रावन परिहरि चतुराई ❀ भजसि न कृपासिंधु रघुराई ॥
जौं खल भयेसि राम कर द्रोही ❀ ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही ॥

अरे रावण, सुन। चतुराई छोड़कर तू कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीका भजन क्यों नहीं करता? अरे दुष्ट, जो तू श्रीरामचन्द्रजीका द्रोही हुआ है तो ब्रह्मा और शिव भी तुझे नहीं बचा सकते।

मूढ़ मृषा जनि मारसि गाला ❀ राम बैर होइहि अस हाला॥
तव सिरनिकर कपिन्ह के आगें ❀ परिहहिं धरनि रामसर लागें॥

अरे मूर्ख, व्यर्थ ही गाल मत बजा। श्रीरामचन्द्रजीके साथ वैर करनेसे यह परिणाम होगा कि तेरे शिरोंके समूह श्रीरामचन्द्रजीके बाण लगनेसे बन्दरोंके आगे पृथिवीपर गिर पड़ेंगे और—

ते तव सिर कंदुक इव नाना ❀ खेलिहहिं भालु कीस चौगाना॥
जबहिं समर कोपिहिं रघुनायक ❀ छुटिहहिं अति कराल बहु सायक॥

और अनेक गेंदोंकी भांति तेरे उन शिरोंसे रीछ और बन्दर चौगान खेलेंगे। संग्राममें जब श्रीरामचन्द्रज क्रोध करेंगे और अत्यन्त भयंकर बहुतसे बाण छूटेंगे—

तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा ❀ अस बिचारि भजु राम उदारा॥
सुनत बचन रावनु परजरा ❀ जरत महानल जनु घृत परा॥

तब क्या तू इसी तरह बढ़-बढ़कर बातें करता रहेगा? यही विचारकर उदार श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर। अंगदके ये वचन सुनकर रावण जल उठा; मानों जलती हुई विशाल अग्निमें घी पड़ गया हो।

दो०—कुंभकरन अस बंधु मम ❀ सुत प्रसिद्ध सक्रारि।
मोर पराक्रम सुनेसि नहिं ❀ जितेउँ चराचर झारि॥ ४२॥

कुंभकर्णके समान मेरा भाई है और मेरा पुत्र है प्रसिद्ध इन्द्रका शत्रु मेघनाद। क्या तूने मेरा पराक्रम नहीं सुना? मैंने चराचर—सबको जीत लिया है।

सठ साखामृग जोरि सहाई ❀ बांधा सिंधु इहै प्रभुताई॥
नांघहिं खग अनेक बारीसा ❀ सूर न होहिं ते सुनु जड़ कीसा॥

अरे दुष्ट, बन्दरोंको इकट्ठाकर उनकी सहायतासे समुद्र बांध लिया, यही प्रभुता है? अनेक पक्षी भी तो समुद्र नांघ जाते हैं। परन्तु हे मूर्ख बन्दर, सुन, वे शूरवीर नहीं हो जाते।

मम भुज-सागर-बल-जल-पूरा ❀ जहं बूड़े बहु सुर नर सूरा॥
बीस पयोधि अगाध अपारा ❀ को अस बीर जो पाइहि पारा॥

मेरी भुजाओंरूपी समुद्र बलरूपी जलसे भरा हुआ है, जिसमें बहुतसे देवता, मनुष्य और शूरवीर डूब चुके हैं। मेरी ये भुजायें बीस समुद्र हैं, जो अथाह और अपार हैं। ऐसा वीर कौन है जो पार पा जाय?

दिगपालन्ह मैं नीर भरावा ❀ भूप सुजसु खल मोहि सुनावा ॥
जौं पै समरसुभट तव नाथा ❀ पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा ॥

अरे दुष्ट, दिग्पालोंसे मैंने अपना पानी भराया है और तू मुझे राजाका सुयश सुनाता है। जिसके गुणोंकी कथा तू बार-बार कहता है वह तेरा स्वामी यदि कदाचित् रण-वीर ही हो,

तौ बसीठ पठवत केहि काजा ❀ रिपु सन प्रीति करत नहिं लाजा ॥
हर - गिरि - मथन निरखु मम बाहू ❀ पुनि सठ कपि निज प्रभुहिं सराहू ॥

तो वह दूतको किस लिये भेजता है ? शत्रुसे प्रीति करते लज्जा नहीं आती ! शिवजीके पर्वत कैलाशका मथन करनेवाली मेरी भुजाओंको पहिले देख, फिर रे दुष्ट बन्दर, अपने स्वामीकी बड़ाई करना !

दो०—सूर कवन रावन सरिस ❀ स्वकर काटि जेहिं सीस ।
हुने अनल महुं बार बहु ❀ हरषि साखि गौरीस ॥ ४३ ॥

रावणके समान शूरवीर भला और कौन है, जिसने अपने हाथसे शिर काटकर प्रसन्न होकर कई बार अग्निमें आहुति दे दी ? इसके साक्षी गौरीपति शिव हैं ।

जरत बिलोकेउँ जबहिं कपाला ❀ बिधि के लिखे अंक निजभाला ॥
नर के कर आपन बध बांची ❀ हंसेउँ जानि बिधिगिरा असाँची ॥

जब मस्तक जलने लगे, मैंने अपने ललाटमें विधाताके लिखे हुए अङ्क देखे । मनुष्यके हाथों अपनी मृत्यु पढ़कर तब मैं यह जानकर हंस उठा था कि विधाताकी वह वाणी असत्य है ।

सोउ मन समुझि त्रास नहिं मोरें ❀ लिखा बिरंचि जरठ मतिभोरें ॥
आन बीरबल सठ मम आगे ❀ पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागे ॥

मनमें इस बातको सोचकर भी मुझे भय नहीं है; क्योंकि बूढ़े ब्रह्माने समझको भुलाकर ही वैसा लिखा है । अरे दुष्ट, मेरे सामने अन्य कौन वीर और बली हो सकता है, जो तू लज्जा और प्रतिष्ठा छोड़कर बारबार कह रहा है ?

कह अंगद सलज्ज जग माहीं ❀ रावन तोहि समान कोउ नाहीं ॥
लाजवंत तव सहज सुभाऊ ❀ निजमुख निजगुन कहसि न काऊ ॥

अंगदजीने कहा कि हे रावण, संसारमें तेरे समान लज्जावान कोई नहीं है । तेरा स्वभाव ही प्रकृत लज्जावान है; इसीसे तू अपने मुखसे अपने गुणोंको किसीसे नहीं कहता !

सिर अरु सैल कथा चित रही ❀ ता तें बार बीस तैं कही ॥
सो भुजबल राखेहु उर घाली ❀ जीतेहु सहसबाहु बलि बाली ॥

शिरोंकी आहुति देने और कैलास पर्वत उठानेकी कथा चित्तमें चढ़ी हुई थी; इसी कारण तूने उसे बीस बार कहा, परंतु अपनी भुजाओंके उस बलकी कथाको हृदयमें ही छिपा रखा, जिससे सहस्रबाहु, बलि और बालिको जीता था।

सुनु मतिमंद देहि अब पूरा ❀ काटे सीस कि होइअ सूरा॥
बाजीगर कहं कहिअ न बीरा ❀ काटै निजकर सकल सरीरा॥

अरे मंदबुद्धि, सुन। अब पूरा उत्तर दे! शिर काटनेसे क्या कोई शूरवीर हो जाता है? इन्द्रजालका खेल करनेवालेको तो वीर नहीं कहा जाता, जो अपने हाथोंसे अपना सारा शरीर काट डालता है।

दो०—जरहिं पतंग बिमोहबस ❀ भार बहहिं खरबृंद॥
ते नहिं सूर कहावहिं ❀ समुझि देखि मतिमंद॥४४॥

अरे मंदबुद्धि, तू समझकर देख, मोहके वश होकर पतङ्ग जल जाते हैं और गधोंके झुण्ड खूब बोझा ढोते हैं, परंतु वे शूरवीर नहीं कहलाते।

अब जनि बत-बढ़ाव खल करही ❀ सुनु मम बचन मान परिहरही॥
दसमुख मैं न बसीठी आयेउं ❀ अस बिचारि रघुबीर पठायेउं॥

अरे दुष्ट, अब बातें अधिक मत कर, मेरे वचन सुन और अभिमान छोड़ दे। हे रावण, मैं दूतका कार्य करने नहीं आया हूं। श्रीरामचन्द्रजीने ऐसा विचार कर मुझे भेजा है—

बार बार असि कहेउ कृपाला ❀ नहिं गजारि जस बधें सृगाला॥
मन महं समुझि बचन प्रभु केरे ❀ सहेउं कठोरबचन सठ तेरे॥

कृपालु श्रीरामचन्द्रजी बारबार यही कहते हैं कि सियारको मारनेसे सिंहको यश नहीं होता। अरे दुष्ट, प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचनोंको मनमें समझकर मैंने तेरे कठोर वचन सहन किये हैं—

नाहिं त करि मुखभंजन तोरा ❀ लै जातेउं सीतहिं बरजोरा॥
जानेउं तव बल अधम सुरारी ❀ सूने हरि आनेसि परनारी॥

नहीं तो तेरा मुख तोड़कर मैं सीताजीको बरजोरी ले जाता। अरे नीच, देवताओंके शत्रु, मैं तेरा बल जानता हूं—अकेला पाकर तू परस्त्रीको चुरा लाया है।

तै निसि-चर-पति गर्व बहूता ❀ मैं रघु-पति-सेवक कर दूता॥
जौं न रामअपमानहिं डरऊं ❀ तोहि देखत अस कौतुक करऊं॥

तू राक्षस-राजा है और तुझे घमण्ड है—मैं श्रीरामचन्द्रजीके सेवक सुग्रीवका दूत हूं। यदि मैं श्रीरामचंद्रजीके अपमानसे न डरता तो तेरे देखते हुए मैं ऐसी लीला करता—

दो०—तोहि पटकि महि सेन हति ❀ चौपट करि तव गाउँ।
तव जुवतीन्ह समेत सठ ❀ जनकसुता लेइ जाउँ ॥४५॥

अरे दुष्ट, तुझे पृथिवीपर पटककर, तेरी सेनाको मारकर और तेरी राजधानीको उजाड़कर मैं तेरी स्त्रियों-समेत जानकीजीको ले जाता।

जौं अस करउँ तदपि न बड़ाई ❀ मुयेहि बधे कछु नहिं मनुसाई ॥
कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा ❀ अतिदरिद्र अजसी अतिबूढ़ा ॥

यदि मैं ऐसा करूँ तो भी बड़ाई नहीं है; क्योंकि मरे हुएको मारनेमें कुछ पुरुषार्थ नहीं है। मद्यप, कामी, कंजूस, मूर्ख, अत्यन्त दरिद्र, कलंकी, अत्यन्त वृद्ध—

सदा रोगबस संततक्रोधी ❀ बिष्णुबिमुख स्रुति-संत-बिरोधी ॥
तनुपोषक निंदक अघखानी ❀ जीवत सवसम चौदह प्रानी ॥

सदा रोगी रहनेवाला, नित्य क्रोध करनेवाला, विष्णु भगवानसे विमुख, वेदों और संतजनोंका विरोधी अपने ही शरीरको पालनेवाला, दूसरोंकी निन्दा करनेवाला, और पापोंकी खान—ये १४ प्राणी जीते हुए भी मृतकके समान हैं।

अस बिचारि खल बधउँ न तोही ❀ अब जनि रिस उपजावसि मोही ॥
सुनि सकोप कह निसि-चर-नाथा ❀ अधर दसन दसि मीजत हाथा ॥

अरे दुष्ट, यही विचारकर मैं तुझे नहीं मार डालता। अब तू मुझे क्रोध मत उत्पन्न करा। यह सुनकर क्रोधमें भरकर राक्षसराज रावण दांतोंसे ओठोंको चबाकर हाथ मलते हुए कहने लगा—

रे कपि अधम मरन अब चहसी ❀ छोटे बदन बात बड़ि कहसी ॥
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जा के ❀ बल प्रताप बुधि तेज न ताके ॥

अरे नीच बंदर, तू अब मरना चाहता है। छोटे मुँह बड़ी बात कहता है। अरे मूर्ख वन्दर, जिसका बल पाकर तू इतना कड़वा वकता है, उसके न बल है, न बुद्धि और न तेज है, न प्रताप।

दो०—अगुन अमान बिचारि तेहि ❀ दीन्ह पिता बनबास।
सो दुख अरु जुवतीबिरहु ❀ पुनि अनुदिन मम त्रास ॥ ४६ ॥

पिताने गुणहीन और प्रतिष्ठा-शून्य विचारकर उसे वनवास दिया है, इसका उसे दुःख है। और स्त्रीके वियोगका दुःख भी है—फिर रातदिन मेरा डर भी उसे रहता है।

जिनके बल कर गर्ब तोहि ❀ ऐसे मनुज अनेक।
खाहिं निसाचर दिवसनिसि ❀ मूढ़ समुझु तजि टेक ॥ ४७ ॥

अरे मूर्ख, हठ छोड़कर समझ। जिनके बलका तुझे घमण्ड है, ऐसे अनेक मनुष्योंको राक्षस रातदिन खाया करते हैं।

जब तेहिं कीन्ह राम कइ निंदा ❀ क्रोधवंत अति भयउ कपिंदा ॥
हरि-हर-निंदा सुनइ जो काना ❀ होइ पाप गो-घात-समाना ॥

जब रावणने श्रीरामचन्द्रजीकी निन्दा की, तब वानरोंमें इन्द्रके समान अंगद अत्यन्त क्रोधित हुए। भगवान् विष्णु और शिवकी निन्दाको जो कोई कानसे सुने उसे गोहत्याके बराबर पाप होता है।

कटकटान कपिकुंजर भारी ❀ दुहु भुजदण्ड तमकि महि मारी ॥
डोलत धरनि सभासद खसे ❀ चले भागि भय मारुत ग्रसे ॥

वानर-श्रेष्ठ अंगदजी बड़े जोरसे कटकटाये और तमककर अपने दोनों भुजदण्डोंको पृथिवीपर पटका, जिससे पृथिवी डोलने लगी, सभासद गिर गये, उन्हें भयरूपी वायुने अपना ग्रास बना लिया और वे भागकर चल दिये।

गिरत संभारि उठा दसकंधर ❀ भूतल परे मुकुट अतिसुंदर ॥
कछु तेहिं लेइ निज सिरन्हि संवारे ❀ कछु अंगद प्रभु पास पबारे ॥

रावण गिरते-गिरते संभलकर उठा, परन्तु उसके अत्यन्त सुन्दर मुकुट पृथिवीपर गिर पड़े, जिनमेंसे कुछको तो उसने लेकर अपने शिरोंपर रख लिया और कुछको अंगदजीने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास फेंक दिया।

आवत मुकुट देखि कपि भागे ❀ दिनहीं लूक परन बिधि लागे ॥
की रावन करि कोपु चलाये ❀ कुलिस चारि आवत अतिधाये ॥

मुकुटोंको आता हुआ देखकर वानर भागने लगे कि हा विधाता, क्या दिनहीमें आकाशके तारे टूटने लगे। अथवा ये चार वज्र हैं जिन्हें रावणने क्रोध करके चलाया है और जो बड़े वेगसे दौड़े चले आ रहे हैं।

प्रभु कह हंसि जनि हृदय डेराहू ❀ लूक न असनि केतु नहिं राहू ॥
ए किरीट दसकंधर केरे ❀ आवत बालितनय के प्रेरे ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने हंसकर कहा कि हृदयमें डरो मत। ये न टूटे हुए तारे हैं, न वज्र; और न केतु है, न राहु—ये रावणके मुकुट हैं, जो वालिपुत्र अंगदके फेंके हुए आ रहे हैं।

दो०—कूदि गहे कर पवनसुत ❀ आनि धरे प्रभुपास।
कौतुक देखहिं भालु कपि ❀ दिन-कर-सरिस प्रकास ॥४८॥

पवनपुत्र हनुमानने उछलकर अपने हाथोंमें उन मुकुटोंको ले लिया और लाकर उन्हें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास रख दिया। सब रीछ और बन्दर तमाशा देखने लगे। सूर्यके समान उनका प्रकाश था।

उहाँ सकोप दसानन ❀ सब सन कहत रिसाइ ।
धरहु कपिहि धरि मारहु ❀ सुनि अंगद मुसुकाइ ॥४९॥

उधर रावण क्रोधमें भर गया और क्रोधित होकर सबसे कहने लगा कि वन्दरको पकड़ लो और पकड़कर उसे मार डालो । अंगदजी रावणका यह कथन सुनकर मुस्कुराने लगे ।

एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु ❀ खाहु भालु कपि जहँ तहँ पावहु ॥
मरकटहीन करहु महि जाई ❀ जिअत धरहु तापस दोउ भाई ॥

इस प्रकार सब योद्धाओ, जल्दी दौड़ो और रीछ और वन्दरोंको जहां पाओ वहीं खा जाओ । जाकर पृथिवीपर एक भी वन्दर जीता न छोड़ो और दोनों तपस्वी भाइयोंको जीता ही पकड़ लो ।

पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा ❀ गाल बजावत तोहि न लाजा ॥
मरु गर काटि निलज कुलघाती ❀ बल बिलोकि बिहरति नहिं छाती ॥

युवराज अङ्गद क्रोधमें भरकर फिर कहने लगे—गाल बजाते हुए तुझे लज्जा नहीं आती ! अरे निर्लज्ज, अरे कुलघातक, अपना ही गला काटकर तू मर जा । बल देखकर तेरी छाती नहीं फटती !

रे त्रियचोर कु-मारग-गामी ❀ खल मलरासि मंदमति कामी ॥
सन्यपाति जल्पसि दुर्बादा ❀ भयेसि कालबस खल मनुजादा ॥

अरे स्त्रीको चुरानेवाले कुमार्गगामी, दुष्ट, पापोंकी राशि, मूर्ख, कामी, तुझे सन्निपात हो गया है; इसीसे तू दुष्ट वाक्य बकता है । अरे दुष्ट, मनुष्यभक्षक, तू कालके वशमें हो गया है ।

या को फलु पावहुगे आगे ❀ बानर-भालु-चपेटन्हि लागे ॥
राम मनुज बोलत असि बानी ❀ गिरहिं न तव रसना अभिमानी ॥
गिरिहहिं रसना संसय नाहीं ❀ सिरन्हि समेत समरमहि माहीं ॥

इसका फल रीछ और वन्दरोंके चपेटोंके लगनेपर तू आगे पावेगा । श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य हैं—ऐसी वाणी मुंहसे निकालते ही, अरे घमण्डी, तेरी जिह्वाएं नहीं गिर जातीं ! तेरी जिह्वाएं रणक्षेत्रमें तेरे शिरोंसमेत गिरेंगी, इसमें सन्देह नहीं है ।

सो०—सो नर क्यों दसकंध ❀ बालि बधेउ जेहि एक सर ।
बीसहु लोचन अंध ❀ धिग तव जनम कुजाति जड़ ॥५०॥

अरे रावण, जिसने बालिको एक ही बाणसे मार डाला वह मनुष्य क्योंकर हो सकता है ? अरे बीसों नेत्रोंके अन्धे, नीच जाति, मूर्ख, तेरे जन्मको धिक्कार है !

तव सोनित की प्यास * तृषित राम - सायक - निकर।
तजउँ तोहि तेहि त्रास * कटु जल्पक निसिचर अधम ॥ ५१ ॥

अरे कड़वी बकवाद करनेवाले नीच राक्षस, श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंके समूह तेरे रक्तकी प्यासके प्यासे हैं, इसी भयसे तुझे छोड़ता हूं।

मैं तव दसन तोरिबे लायक * आयसु मोहि न दीन्ह रघुनायक ॥
अस रिस होति दसउ मुख तोरउँ * लंका गहि समुद्र महँ बोरउँ ॥

मैं तेरे दांत तोड़ देने लायक हूं, पर श्रीरामचन्द्रजीने मुझे आज्ञा नहीं दी है। ऐसा क्रोध आता है कि तेरे दशों मुखोंको तोड़ दूं और लंकाको लेकर समुद्रमें डुबा दूं।

गूलर - फल - समान तव लंका * बसहु मध्य तुम्ह जंतु असंका ॥
मैं बानर फल खात न बारा * आयसु दीन्ह न राम उदारा ॥

तेरी लंका गुलरके फलके समान है। उसके बीचमें तुम निडर होकर जन्तुओंके समान बसते हो। मैं वानर हूं, फल खाते मुझे देर नहीं; परन्तु उदार श्रीरामचन्द्रजीने आज्ञा नहीं दी है।

जुगुति सुनत रावन मुसुकाई * मूढ़ सीखि कहँ बहुत झुठाई ॥
बालि न कबहुँ गाल अस मारा * मिलि तपसिन्ह तैं भयसि लबारा ॥

अङ्गदकी यह युक्ति सुनकर रावण मुस्कुराने लगा और कहने लगा कि अरे मूर्ख इतना अधिक झूठापन तूने कहां सीखा? बालिने ऐसी डींग कभी न मारी थी। तपस्वियोंसे मिलकर तू लबार हो गया।

साँचेहुँ मैं लबार भुजबीहा * जौं न उपारउँ तव दस जीहा ॥
रामप्रताप समुझि कपि कोपा * सभा माँझ पन करि पद रोपा ॥

अङ्गदजीने कहा—हे रावण, मैं सचमुच ही लबार हूं, यदि तेरी दशों जिह्वाओंको न निकालूं। अंगदजी क्रोधित हुए और श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप समझकर प्रण करके सभाके बीचमें चरण रोप दिया।

जौं मम चरन सकसि सठ टारी * फिरहिं राम सीता मैं हारी ॥
सुनहु सुभट सब कह दससीसा * पद गहि धरनि पछारहु कीसा ॥

अंगदजीने कहा—अरे दुष्ट, यदि तू मेरा चरण हटा सकेगा तो श्रीरामचन्द्रजी लौट जायंगे और मैं सीताजीको हार जाऊंगा। इसपर रावण कहने लगा—सब योद्धाओ, सुनो, चरण पकड़कर बन्दरको पृथिवीपर पछाड़ दो।

इंद्र - जीत - आदिक बलवाना * हरषि उठे जहँ तहँ भट नाना ॥
झपटहिं करि बल बिपुल उपाई * पद न टरै बैठहिं सिर नाई ॥

उस समय इधर-उधरसे इन्द्रजित आदि अनेक बलवान् योद्धा प्रसन्न होकर उठे। वे सब तरह-तरहके उपायोंसे बल लगाकर झपटते थे, परन्तु पैर न टलता था और वे शिर नीचा करके बैठ जाते थे।

पुनि उठि झपटहिं सुरआराती ❀ टरइ न कीसचरन एहि भाँती ॥
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी ❀ मोहबिटप नहिं सकहिं उपारी ॥

काकभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, वे सब राक्षस फिर उठकर झपटते थे, परन्तु अंगदजीका चरण इस तरह नहीं उठता था जैसे कुयोगी मनुष्य मोहरूपी वृक्षको नहीं उखाड़ सकते।

दो०—कोटिन्ह मेघ-नाद-सम ❀ सुभट उठे हरखाइ।
झपटहिं टरै न कपिचरन ❀ पुनि बैठहिं सिरु नाइ ॥५२॥

मेघनादके समान करोड़ों योद्धा प्रसन्न होकर उठे। वे सब झपटते थे परन्तु जब अंगदजीका चरण न टलता था तब शिर झुकाकर बैठ जाते थे।

भूमि न छाड़त कपिचरन ❀ देखत रिपुमद भाग।
कोटि बिघ्न तें संत कर ❀ मन जिमि नीति न त्याग ॥५३॥

अंगदजीका चरण पृथिवीको न छोड़ता था; जैसे करोड़ विघ्नोंसे भी संतजनोंका मन नीति नहीं छोड़ता। यह देखते ही शत्रुका घमण्ड भाग गया।

कपिबलु देखि सकल हिय हारे ❀ उठा आपु जुबराजु प्रचारे ॥
गहत चरन कह बालिकुमारा ❀ मम पद गहे न तोर उबारा ॥

अंगदजीका बल देखकर जब सब राक्षस अपने हृदयसे हार गये तब अंगदजीके ललकारनेपर रावण स्वयं ही उठा। चरण पकड़ते ही बालिपुत्र अंगद कहने लगे—तेरा उद्धार मेरा चरण पकड़नेसे न होगा।

गहसि न रामचरन सठ जाई ❀ सुनत फिरा मन अति सकुचाई ॥
भयउ तेजहत श्री सब गई ❀ मध्यदिवस जिमि ससि सोहई ॥

अरे दुष्ट, तू जाकर श्रीरामचन्द्रजीका चरण नहीं पकड़ता। यह सुनते ही रावण मनमें अत्यन्त सकुचाकर लौट आया। रावण तेजहीन हो गया, उसकी सारी शोभा जाती रही; जैसे मध्याह्नके समय चन्द्रमा शोभित होता है।

सिंहासन बैठेउ सिर नाई ❀ मानहु संपति सकल गवाँई ॥
जगदातमा प्रानपति रामा ❀ तासु बिमुख किमि लह बिस्रामा ॥

रावण शिर झुकाकर सिंहासनपर बैठ गया, मानों सब संपत्ति खो दी हो। श्रीरामचन्द्रजी जगतकी आत्मा और प्राणनाथ हैं, उनके विमुख विश्राम कैसे मिल सकता है?

उमा राम की भृकुटि बिलासा ❀ होइ बिस्व पुनि पावइ नासा ॥
तृन तें कुलिस कुलिस तृन करई ❀ तासु दूतपन कहु किमि टरई ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजीके भृकुटि-विलाससे यह विश्व उत्पन्न हो जाता है और फिर नष्ट हो जाता है। वह तिनकेको वज्र और वज्रको तिनका बना देते हैं। उनके दूतकी प्रतिज्ञा, भला बतलाओ, कैसे टल सकती है?

पुनि कपि कही नीति बिधि नाना ❀ मान न तासु काल नियराना ॥
रिपुमद मथि प्रभु-सु-जस सुनायो ❀ यह कहि चलेउ बालि-नृप-जायो ॥

फिर अंगदजीने अनेक तरहकी नीति कही; परन्तु रावणका काल समीप आ गया था, इसलिये उसने एक न मानी। राजा बालिके पुत्र अंगदजीने शत्रु के अभिमानका मंथनकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका सुयश आ सुनाया और यह कहकर चल दिये।

हतउँ न खेत खेलाइ खेलाई ❀ तोहि अबहिं का करउँ बड़ाई ॥
प्रथमहिं तासु तनय कपि मारा ❀ सो सुनि रावनु भयउ दुखारा ॥
जातुधान अंगदपन देखी ❀ भय व्याकुल सब भये बिसेखी ॥

रण-क्षेत्रमें तुझे खिला-खिलाकर यदि न मारूँ—अभी बड़ाई क्या करूँ? पहिले ही अंगदजीने रावणके पुत्रको जो मार डाला था, उसका समाचार सुनकर वह दुःखी हुआ। अंगदकी प्रतिज्ञाको देखकर सब राक्षस डरसे बड़े व्याकुल हुए।

दो०—रिपुबल धरषि हरषि कपि ❀ बालितनय बलपुंज ।
पुलक सरीर नयन जल ❀ गहे राम-पद-कंज ॥५४॥

शत्रु के बलका उपमर्दन कर और हृदयमें प्रसन्न होकर बलकी राशि बालिपुत्र वानर अंगदने पुलकित शरीर और सजलनयन आकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमल पकड़ लिये।

साँझ जानि दसमौलि तब ❀ भवन गयउ बिलखाइ ।
मंदोदरी निसाचरहि ❀ बहुरि कहा समुझाइ ॥५५॥

तब सन्ध्या-समय जानकर रावण विलाप करते हुए अपने घर गया। वहां मन्दोदरीने उस राक्षसको समझाते हुए फिर कहा—

कंत समुझि मन तजहु कुमतिही ❀ सोह न समर तुम्हहिं रघुपतिही ॥
रामानुज लघुरेख खंचाई ❀ सोउ नहिं नाँघेहु असि मनुसाई ॥

हे स्वामिन्, मनमें समझकर दुर्बुद्धिको छोड़ दो। श्रीरामचन्द्रजीसे संग्राम करना तुम्हें शोभा नहीं देता

श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणने एक छोटी रेखा खींच दी थी, वह भी तो तुम नहीं नांघ सके थे, ऐसा तुम्हारा पुरुषार्थ है।

पिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा ❁ जा के दूत केर अस कामा॥
कौतुक सिंधु नाँघि तव लंका ❁ आयेउ कपिकेसरी असंका॥

हे प्यारे, क्या तुम उसे संग्राममें जीतोगे, जिसके दूतके ही काम ऐसे हैं कि वह वानर सिंह हनुमान अनायास ही समुद्र नांघकर निर्भीकतासे तुम्हारी लंकामें आया?

रखवारे हति बिपिन उजारा ❁ देखत तोहि अच्छ तेहि मारा॥
जारि नगर सबु कीन्हेसि छारा ❁ कहां रहा बल गर्ब तुम्हारा॥

रक्षकोंको मारकर वन उजाड़ दिया, तुम्हारे देखते उसने अक्षयकुमारको मार डाला और नगरको जलाकर सब कुछ भस्म कर दिया—तुम्हारा बलका अभिमान उस समय कहां था?

अब पति मृषा गाल जनि मारहु ❁ मोर कहा कछु हृदय बिचारहु॥
पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु ❁ अग जगनाथ अ-तुल-बल जानहु॥

हे स्वामिन्, अब व्यर्थ ही गाल मत बजाओ। मेरे कथनपर हृदयमें कुछ विचार करो। हे नाथ, श्रीरामचन्द्रजीको राजा मत मानो। यह जान लो कि इकट्ठे वे चराचरके स्वामी और अतुल बलशाली हैं।

बानप्रताप जान मारीचा ❁ तासु कहा नहिं मानेहु नीचा॥
जनकसभा अगनित महिपाला ❁ रहे तुम्हउ बल बिपुल बिसाला॥

श्रीरामचन्द्रजीके बाणका प्रताप मारीचको मालूम था, परन्तु तुम ऐसे नीच हो कि उसका कहना नहीं माना। राजा जनककी सभामें असंख्य राजा थे वहां अत्यन्त विशाल बलवाले तुम भी तो थे?

भंजि धनुष जानकी बिआही ❁ तब संग्राम जितेहु किन ताही॥
सुर-पति-सुत जानइ बल थोरा ❁ राखा जियत आँखि गहि फोरा॥
सूपनखा कै गति तुम्ह देखी ❁ तदपि हृदय नहिं लाज बिसेखी॥

शिवजीका धनुष तोड़कर श्रीरामचन्द्रजीने जब जानकीजीको विवाहा था, तब उन्हें संग्राममें क्यों नहीं जीता था? श्रीरामचन्द्रजीका थोड़ा बल देवराज इन्द्रका पुत्र जयंत जानता है, जिसे पकड़कर उन्होंने आंख फोड़ दी और जीता छोड़ दिया। शूर्पणखाकी गति तो तुमने देखी थी, तोभी तुम्हारे हृदयमें भारी लज्जा नहीं हुई!

दो०—बधि बिराध खरदूखनहिं ❁ लीला हतेउ कबंध।
बालि एक सर मारेउ ❁ तेहि जानहु दसकंध॥ ५६॥

हे रावण, उसे जान लो, जिसने विराध और खरदूषणको मारकर लीलामें ही कबंधको मार गिराया और बालिको एक ही बाणमें मार डाला।

जेहि जल नाथ बंधायेउ हेला ❀ उतरे सेन समेत सुबेला ॥
कारुनीक दिन-कर-कुल-केतू ❀ दूत पठायउ तव हित हेतू ॥

जिन्होंने, हे स्वामिन्, खेलहीमें समुद्रका पुल बंधवा दिया और सेनासमेत सुबेल-पर्वतपर आ उतरे, उन्हीं दयाशील सूर्यवंशके पताकास्वरूप श्रीरामचन्द्रजीने तुम्हारे हितके लिये दूतको भेजा।

सभा माँझ जेहि तव बल मथा ❀ करिबरूथ महं मृगपति जथा ॥
अंगद हनुमत अनुचर जा के ❀ रनबाँकुरे बीर अति बाँके ॥

उस दूतने सभाके बीचमें तुम्हारे बलका इस प्रकार मंथन किया जैसे हाथियोंके झुण्डमें सिंह। रण-शूर अत्यन्त बांके वीर अंगद और हनुमान जिसके सेवक हैं—

तेहि कहुं पिय पुनि पुनि नर कहहू ❀ मुधा मान ममता मद बहहू ॥
अहह कंत कृत राम बिरोधा ❀ कालबिबस मन उपज न बोधा ॥

उसको, हे प्यारे, तुम बारबार मनुष्य कहते हो! व्यर्थ ही अभिमान, ममता और मदको ढोते हो? हाय स्वामिन्, तुमने श्रीरामचन्द्रजीसे विरोध किया। कालके वशमें होनेसे तुम्हारे मनको बोध नहीं होता है।

कालु दंड गहि काहु न मारा ❀ हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा ॥
निकट काल जेहि आवइ साईं ❀ तेहि भ्रम होहि तुम्हारिहि नाईं ॥

डण्डा लेकर काल किसीको नहीं मारता; धर्म, बल, बुद्धि और विचार हरण कर लिया करता है। हे स्वामिन्, काल जिसके समीप आता है, उसे तुम्हारी ही भांति भ्रम हो जाता है।

दो०—दुइ सुत मारेउ दहेउ पुर ❀ अजहुं पूर पिय देहु।
कृपासिंधु रघुपतिहि भजि ❀ नाथ बिमल जसु लेहु ॥५७॥

दो पुत्र मारे गये, नगर जला दिया गया। हे प्यारे, अब भी बस करो और कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करके, हे नाथ, निर्मल यश लेओ।

नारि बचन सुनि बिसिखसमाना ❀ सभा गयउ उठि होत बिहाना ॥
बैठ जाइ सिंहासन फूली ❀ अतिअभिमान त्रास सब भूली ॥

मंदोदरीके बाणके समान वचन सुनकर रावण सवेरा होते ही उठकर सभामें चला गया। वहां पहुंचकर वह प्रसन्न होकर सिंहासनपर बैठ गया। अत्यन्त घमण्ड होनेसे उसे सब डर भूल गया।

इहां राम अंगदहिं बोलावा ❀ आइ चरन-पंक-ज सिर नावा ॥
अतिआदर समीप बैठारी ❀ बोले बिहंसि कृपाल खरारी ॥

यहां श्रीरामचन्द्रजीने अंगदजीको बुलाया, जिन्होंने आकर चरणकमलोंको शिर नवाया। अत्यन्त आदरसे अंगदजीको पास बिठलाकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी हँसकर बोले।

बालितनय अतिकौतुक मोही ❀ तात सत्य कहु पूछउं तोही ॥
रावनु जातु-धान-कुल-टीका ❀ भुजबल अतुल जासु जग लीका ॥

हे बालिपुत्र अङ्गद, मुझे बड़ा विस्मय है। हे तात, मैं तुमसे पूछता हूं, सत्य कहो। रावण, राक्षस कुलका तिलक है, जिसका अतुल भुजबल संसारमें प्रसिद्ध है।

तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाये ❀ कहहु तात कवनी बिधि पाये ॥
सुनु सर्बज्ञ प्र-नत-सुख-कारी ❀ मुकुट न होहिं भूपगुन चारी ॥

रे तात, यह बतलाओ, उसके जो चार मुकुट तुमने फेंके, उन्हें किस प्रकार पाया। अङ्गदजी कहने लगे—हे सर्वज्ञ, हे भक्तजनोंको सुखी करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये, वे मुकुट न थे, राजाके चार गुण थे।

साम दान अरु दंड बिभेदा ❀ नृपउर बसहिं नाथ कह बेदा ॥
नीतिधर्म के चरन सुहाये ❀ अस जिय जानि नाथ पहिं आये ॥

वेद कहते हैं कि राजाके हृदयमें चार गुणों—साम, दान, दण्ड और भेदका वास होता है। ये चारों नीति धर्मके सुन्दर चरण हैं, वे अपने जीमें ऐसा जानकर प्रभुके पास आये हैं।

दो०—धर्महीन प्रभु-पद-बिमुख ❀ कालबिबस दससीस।
तेहि परिहरि गुन आए ❀ सुनहु कोसलाधीस ॥५८॥

हे कोशलदेशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये, रावण धर्महीन है, प्रभुके चरणोंसे विमुख है और कालके वशमें हो रहा है। वे गुण उसे छोड़कर आ गये।

परमचतुरता स्रवन सुनि ❀ बिहंसे रामु उदार।
समाचार पुनि सब कहे ❀ गढ़ के बालिकुमार ॥५९॥

अंगदजीकी अत्यन्त चतुराईभरी बात कानोंसे सुनकर उदार श्रीरामचन्द्रजी हँस पड़े। फिर बालिपुत्र अंगदने लंकागढ़के सब-समाचार कह सुनाये।

रिपु के समाचार जब पाये ❀ राम सचिव सब निकट बोलाये ॥
लंका बाँके चारि दुआरा ❀ केहि बिधि लागिय करहु बिचारा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने जब शत्रुके समाचारोंको पाया तब सब मंत्रियोंको पास बुलाया। लंकाके चारों फाटक बड़े बांके हैं, उनपर किस प्रकार आक्रमण करना चाहिये, इसपर विचार करो।

तब कपीस रिच्छेस बिभीषन ❀ सुमिरि हृदय दिन-कर-कुल-भूषन ॥
करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा ❀ चारि अनी कपिकटकु बनावा ॥

तब कपिराज सुग्रीव, रीछराज जाम्बवान् और विभीषणने हृदयमें सूर्य-कुलके भूषण श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण किया और विचार करके उन्होंने सलाह पक्की की। वानरोंके दलको चार सेनाओंमें बांट दिया।

जथाजोग सेनापति कीन्हे ❀ जूथप सकल बोलि तब लीन्हे ॥
प्रभुप्रताप कहि सब समुझाये ❀ सुनि कपि सिंहनाद करि धाये ॥

उनके यथायोग्य सेनापति नियुक्त कर दिये। फिर, सब यूथपोंको बुला लिया। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप कहकर सबको समझाया। सब कुछ सुनकर बन्दर सिंहके समान गर्जना करके दौड़े।

हरषित रामचरन सिर नावहिं ❀ गहि गिरिसिखर बीर सब धावहिं ॥
गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा ❀ जय रघुबीर कोसलाधीसा ॥

सब वीर प्रसन्न हो रहे थे, श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंको शिर नवाते थे और पहाड़ोंकी चोटियां लेकर दौड़ते थे। रीछ और बन्दर गर्जना करते, दपटते और कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीका जय-जयकार बोलते थे।

जानत परमदुर्ग अति लंका ❀ प्रभुप्रताप कपि चले असंका ॥
घटाटोप करि चहुँदिसि घेरी ❀ मुखहिं निसान बजावहिं भेरी ॥

यद्यपि वे यह जानते थे कि लंका अत्यन्त दुर्गम और विशाल गढ़ है, तथापि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे सब वानर निडर होकर चल दिये। उन्होंने लंकाको घटाटोप कर चारों दिशाओंकी ओरसे घेर लिया। वे मुखहीसे डंका और भेरी बजाने लगे।

दो०—जयति राम जय लछिमन ❀ जय कपीस सुग्रीव।
गर्जहिं केहरिनाद कपि ❀ भालु महा-बल-सींव ॥६०॥

श्रीरामचन्द्रजीकी जय, लक्ष्मणजीकी जय, कपिराज सुग्रीवकी जय—इस प्रकार जय-जयकार करते हुए महान् बलकी सीमा रीछ और बन्दर सिंहनादके समान गर्जना करने लगे।

लंका भयउ कोलाहल भारी ❀ सुना दसानन अति अहंकारी ॥
देखहु बनरन्ह केरि ढिठाई ❀ बिहँसि निसाचर-सेन बोलाई ॥

लंकामें भारी कुहराम मच गया, जिसे अत्यन्त अभिमानी रावणने सुना। वह बोला—बन्दरोंकी ढिठाई तो देखो। यह कहकर रावणने हँसकर राक्षसोंकी सेनाको बुलाया।

आये कीस काल के प्रेरे ❀ छुधावंत सब निसिचर मेरे ॥
अस कहि अट्टहास सठ कीन्हा ❀ गृह बैठे अहार बिधि दीन्हा ॥

ये बन्दर कालके भेजे हुए आये हैं। मेरे सब राक्षस भी भूखे हैं। ऐसा कहकर दुष्ट रावणने बड़े जोरसे अट्टहास किया। फिर कहने लगा—विधाताने घर बैठे हुए ही भोजन दिया है।

सुभट सकल चारिहु दिसि जाहू ❀ धरि धरि भालु कीस सब खाहू ॥
उमा रावनहिं अस अभिमाना ❀ जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना ॥

योद्धाओ, तुम सब चारों दिशाओंमें जाओ और पकड़-पकड़कर सब रीछ और बन्दर खा जाओ। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, रावणको ऐसा घमण्ड था जैसा चित्त सोयी हुई टिटिहरी नामक पक्षीको होता है।

चले निसाचर आयसु माँगी ❀ गहि करि भिंडिपाल बर साँगी ॥
तोमर मुद्गर परिघ प्रचंडा ❀ सूल कृपान परसु गिरिखंडा ॥

रावणकी आज्ञा मानकर और हाथोंमें भिण्डिपाल, अच्छी बर्छियां, तोमर, मुद्गर, तीव्र परिघ, त्रिशूल, कृपाण, फरसा और पर्वतोंके टुकड़े लेकर सब राक्षस चल दिये।

जिमि अरुनोपलनिकर निहारी ❀ धावहिं सठ खग मांसअहारी ॥
चोंच-भंग-दुख तिन्हहि न सूझा ❀ तिमि धाये मनुजाद अबूझा ॥

जैसे लाल पत्थरोंके ढेरको देखकर दुष्ट मांसाहारी पक्षी दौड़ते हैं और उन्हें यह नहीं सूझता कि चोंचें टूटनेका दुःख भोगना पड़ेगा—इसी प्रकार बिना समझे बूझे हुए ही वे मनुष्यभक्षी राक्षस दौड़े।

दो०—नानायुध सर-चाप-धर ❀ जातुधान बलबीर।
कोटकंगूरनि चढ़ि गये ❀ कोटि कोटि रनधीर ॥६१॥

धनुषबाण आदि अनेक शस्त्रास्त्रोंको लिये हुए रणमें धीर, वीर और बलवान् करोड़-करोड़ राक्षस कोटके कंगूरोंपर चढ़ गये।

कोटकंगूरन्हि सोहहिं कैसे ❀ मेरु के सृंगनि जनु घन बैसे ॥
बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ ❀ सुनि धुनि होइ भटन्ह मन चाऊ ॥

कोटके कंगूरोंपर वे सब कैसी शोभा पाते थे; मानों सुमेरु पर्वतकी चोटियोंपर बादल हों। युद्धके ढोल और डंके बज रहे थे, जिनकी आवाज सुनकर योद्धाओंके मन उमंगसे भर जाते थे।

बाजहिं भेरि नफीरि अपारा ❀ सुनि कादरउर जाहिं दरारा ॥
देखि न जाइ कपिन्ह के ठट्टा ❀ अति बिसाल तनु भालु सुभट्टा ॥

असंख्य भेरियां और नफीरियां बज रही थीं, जिन्हें सुनकर कायरोंके हृदय फटते थे। वानरोंके झुण्ड और अत्यन्त विशाल शरीरवाले रीछयोद्धाओंकी ओर देखा न जाता था।

धावहिं गनहिं न अवघट घाटा ❀ पर्बत फोरि करहिं गहि बाटा ॥
कटकटाहिं कोटिन्ह भट गर्जहिं ❀ दसन ओठ काटहिं अति तर्जहिं ॥

वे सब दौड़ते थे और ऊंचा-नीचा स्थान न गिनते थे। जहां मार्ग न होता वहां पहाड़ोंको तोड़-तोड़कर मार्ग बना लेते थे। करोड़ों योद्धा कटकटाते और गर्जते थे और दांतोंसे ओठ चबाते और बड़ी फुर्तीसे दपटते थे।

उत रावन इत रामदोहाई ❀ जयति जयति जय परी लराई ॥
निसिचर सिखरसमूह ढहावहिं ❀ कूदि धरहिं कपि फेरि चलावहिं ॥

उधर रावणकी और इधर श्रीरामचन्द्रजीकी दुहाई फिरती थी; और जयजयकारके बीच लड़ाई हो रही थी। राक्षस पहाड़ोंकी चोटियोंके समूह ढहाते थे और बन्दर कूदकर उन्हें पकड़ लेते थे और फिरसे उन्हींको फेंक मारते थे।

छंद—धरि-कु-धर-खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़ पर डारहीं।
झपटहिं चरन गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि प्रचारहीं ॥
अति तरल तरुनप्रताप तर्जहिं तमकि गढ़ चढ़ि चढ़ि गये।
कपि भालु चढ़ि मंदिरन्हि जहं तहं रामजसु गावत भये ॥

रीछ और बन्दर पर्वतोंके बड़े-बड़े खण्ड लेकर गढ़पर फेंकते थे और झपटकर राक्षसोंको पैर पकड़कर पृथिवीपर गिरा देते थे। यदि राक्षस भाग निकलते तो उन्हें फिर ललकारते थे। बड़ी फुर्तीसे जवान प्रतापी बन्दर दपटते थे। वे सब क्रोधसे उछलकर गढ़पर चढ़ गये। रीछ और बन्दर जहां-तहां महलोंपर चढ़कर श्रीरामचन्द्रजीका यश गाने लगे।

दो०—एक एक गहि निसिचर ❀ पुनि कपि चले पराइ।
ऊपर आपुनु हेठ भट ❀ गिरहिं धरनि पर आइ ॥६२॥

फिर बन्दर एक-एक राक्षसको पकड़कर भाग चले। वे सब जब कूदते थे तब ऊपर आप और नीचे राक्षस योद्धा इस प्रकार पृथिवीपर आकर गिरते थे।

राम-प्रताप-प्रबल कपिजूथा ❀ मर्दहिं निसि-चर-निकर-बरूथा ॥
चढ़े दुर्ग पुनि जहं तहं बानर ❀ जय रघु-बीर-प्रताप दिवाकर ॥

श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे वानरके समूह बड़े प्रबल हो गये थे। वे राक्षसोंके समूहकी सेनाका मर्दन करते थे। फिर बन्दर दुर्गपर जहां-तहां चढ़ गये और प्रतापके सूर्य श्रीरामचन्द्रजीकी जय बोलने लगे।

चले तमी-चर-निकर पराई ❀ प्रबल पवन जिमि घनसमुदाई ॥
हाहाकार भयउ पुर भारी ❀ रोवहिं आरत बालक नारी ॥

राक्षसोंके झुण्ड भाग चले; जैसे प्रबल हवासे बादलोंके समूह। लंकापुरीमें भारी हाहाकार हो गया। घबड़ाई हुई स्त्रियां और बच्चे रो रहे थे।

सब मिलि देहिं रावनहिं गारी ❀ राज करत एहि मृत्यु हंकारी ॥
निजदल बिचल सुना तेहि काना ❀ फेरि सुभट लंकेस रिसाना ॥

सब मिलकर रावणको गालियां देते थे कि राज्य करते हुए इसने मृत्युको बुला लिया। लंकापति रावणने जब अपनी सेनाका विचलित होना अपने कानसे सुना तब योद्धाओंको लौटाकर वह क्रोधित हुआ।

जो रन बिमुख फिरा मैं जाना ❀ तेहिं मारिहउं करालकृपाना ॥
सरबसु खाइ भोग करि नाना ❀ समरभूमि भय दुर्लभ प्राना ॥

वह बोला—युद्धसे मुंह फेरकर लौटा हुआ जिसे मैंने जान पाया उसे मैं भयंकर तलवारसे मार डालूंगा मेरा सर्वस्व खाकर और तरह-तरहके सुख भोगकर अब संग्रामक्षेत्रमें प्राण देना दुर्लभ हो गया ?

उग्र बचन सुनि सकल सकाने ❀ फिरे क्रोध करि बीर लजाने ॥
सनमुख मरन बीर कै सोभा ❀ तब तिन्ह तजा प्रान कर लोभा ॥

रावणके तीव्र वचन सुनकर सब डर गये और वीर लज्जित होकर क्रोध करके फिर लौटे। वीरोंकी शोभा रणमें सामने मरनेमें ही है, यही सोचकर तब उन्होंने प्राणोंका लोभ त्याग दिया।

दो०—बहु-आयुध-धर सुभट सब ❀ भिरहिं प्रचारि प्रचारि।
कीन्हे ब्याकुल भालु कपि ❀ परिघ त्रिसूलन्ह मारि ॥९३॥

सब योद्धा अनेक शस्त्रास्त्रोंको लिये हुए थे और ललकार-ललकार भिड़ते थे। परिघों, और त्रिशूलोंसे मार-मारकर उन्होंने रीछ और वन्दरोंको व्याकुल कर दिया।

भयआतुर कपि भागन लागे ❀ जद्यपि उमा जीतिहहिं आगे ॥
कोउ कह कहं अंगद हनुमंता ❀ कहं नल नील दुबिद बलवंता ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, यद्यपि आगे जीतेंगे तथापि उस समय वन्दर डरसे घबड़ाकर भागने लगे। कोई कहने लगा, अंगद कहां हैं, हनुमान कहां हैं, नल-नील और बलवान द्विविद कहां हैं।

निज दल बिचल सुना हनुमाना ❀ पच्छिम द्वार रहा बलवाना ॥
मेघनाद तहं करइ लराई ❀ टूट न द्वार परम कठिनाई ॥

बलवान् हनुमानजीने जब अपनी सेनाका विचलित होना सुना तब वे गढ़के पश्चिम द्वारपर थे। वहां मेघनाद युद्ध कर रहा था। द्वार टूटता ही न था। बड़ी कठिनाई थी।

पवन - तनय - मन भा अतिक्रोधा ⊛ गर्जेउ प्रबल - काल-सम जोधा ॥
कूदि लंकगढ़ ऊपर आवा ⊛ गहि गिरि मेघनाद कहुं धावा ॥

पवनपुत्र योद्धा हनुमानके मनमें बड़ा क्रोध हुआ और प्रबल कालके समान उन्होंने गर्जना की। कूदकर वे लंकागढ़के ऊपर पहुंच गये और पर्वत लेकर मेघनादकी ओर दौड़े।

भंजउ रथ सारथी निपाता ⊛ ताहि हृदय महं मारेसि लाता ॥
दुसरे सूत बिकल तेहि जाना ⊛ स्यंदन घालि तुरत गृह आना ॥

उन्होंने मेघनादका रथ तोड़ दिया, सारथी मार डाला और स्वयं उसके हृदयमें लात भी मारी। दूसरे सारथीने जब जाना कि लात लगनेसे मेघनाद व्याकुल हो गया है तब रथमें डालकर उसे तुरंत ही वह घर ले गया।

दो०—अंगद सुनेउ कि पवनसुत ⊛ गढ़ पर गयउ अकेल।
समरबांकुरा बालिसुत ⊛ तरकि चढ़ेउ कपिखेल ॥६४॥

रणमें बांके बालिपुत्र वानर अंगदजीने जब सुना कि पवनपुत्र हनुमानजी लंकागढ़पर अकेले ही गये हैं तब वे भी खेलमें ही तड़पकर चढ़ गये।

जुद्धबिरुद्ध क्रुद्ध दोउ बानर ⊛ रामप्रताप सुमिरि उर अंतर ॥
रावन भवन चढ़े दोउ धाई ⊛ करहिं कोसलाधीस दोहाई ॥

घमासान युद्धमें लगे हुये बन्दर क्रोधमें भरे हुए थे। अपने हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापका स्मरण कर दोनों दौड़कर रावणके महलपर चढ़ गये और कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीकी दुहाई फेरने लगे।

कलससहित गहि भवनु ढहावा ⊛ देखि निसा-चर-पति भय पावा ॥
नारिबृंद कर पीटहिं छाती ⊛ अब दुइ कपि आये उतपाती ॥

कलशोंसमेत महलोंको उन्होंने पकड़-पकड़कर गिरा दिया। यह देखकर राक्षसराज रावण भयभीत हुआ। स्त्रियोंके झुण्ड हाथोंसे छाती पीट रहे थे कि हाय, अब दो उत्पाती बंदर आ गये।

कपिलीला करि तिन्हहिं डेरावहिं ⊛ रामचंद्र कर सुजस सुनावहिं ॥
पुनि कर गहि कंचन के खंभा ⊛ कहेन्हि करिय उतपात अरंभा ॥

हनुमानजी और अंगदजी वानर-लीला करके उन्हें डर दिखलाते और श्रीरामचन्द्रजीका सुयश सुनाते थे। फिर हाथोंमें सोनेके खंभे लेकर वे कहने लगे कि अब उत्पात आरंभ करना चाहिये।

कूदि परे रिपुकटक मँझारी ❀ लागे मर्दइ भुजबल भारी ॥
काहुहि लात चपेटन्हि केहू ❀ भजहु न रामहिं सो फल लेहू ॥

फिर वे शत्रुकी सेनाके बीचमें कूद पड़े और अपनी भुजाओंके विशाल बलसे राक्षसोंका मर्दन करने लगे। किसीको लातोंसे और किसीको चपेटोंसे मारकर कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीका भजन नहीं करते, उसका फल लो।

दो०—एक एक सो मर्दि करि ❀ तोरि चलावहिं मुंड।
रावन आगे परहिं ते ❀ जनु फूटहिं दधिकुंड ॥ ६५ ॥

वे एकको दूसरेसे रगड़ मारते और शिरको तोड़कर फेंक देते थे, जो रावणके आगे जाकर इस प्रकार गिरते थे; मानों दहीके कुण्ड फूटते हों।

महा-महा-मुखिया जे पावहिं ❀ ते पद गहि प्रभुपास चलावहिं ॥
कहहिं बिभीषन तिन्ह के नामा ❀ देहिं रामु तिन्हहू निजधामा ॥

उन्हें जो बड़े-बड़े मुखिया मिलते उनको पैर पकड़कर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास भेज देते थे। विभीषण उनके नाम बतलाते थे और श्रीरामचन्द्रजी उन सबको भी निजधाम (वैकुण्ठ) देते थे।

खल मनुजाद द्विजामिषभोगी ❀ पावहिं गति जो जाँचत जोगी ॥
उमा रामु मृदुचित करुनाकर ❀ बैरभाव सुमिरत मोहि निसिचर ॥

जिस गतिको योगिजन माँगते हैं उसे दुष्ट, मनुष्यभक्षी, ब्राह्मणोंका मांस खानेवाले-राक्षस पा जाते थे। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीका चित्त बड़ा कोमल है। वैर-भावसे ही सही, राक्षस मुझे स्मरण तो करते हैं।

देहिं परम गति सो जिय जानी ❀ अस कृपालु को कहहु भवानी ॥
सुनि अस प्रभु न भजहिं भ्रम त्यागी ❀ नर मतिमंद ते परम अभागी ॥

यह अपने हृदयमें जानकर श्रीरामचन्द्रजी उन्हें परम गति दे रहे थे। हे भवानी, बतलाओ, ऐसा दयालु कौन है? वे मनुष्य मंदबुद्धि और अत्यन्त अभागे हैं, जो ऐसा सुनकर भी भ्रम छोड़कर प्रभुका भजन नहीं करते।

अंगद अरु हनुमंत प्रवेसा ❀ कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेसा ॥
लंका दोउ कपि सोहहिं कैसे ❀ मथहिं सिंधु दुइ मंदर जैसे ॥

अयोध्यापति श्रीरामचन्द्रजी यह कहने लगे कि अंगद और हनुमान—दोनोंने गढ़में प्रवेश किया। लंकामें दोनों बन्दर कैसी शोभा पा रहे थे; जैसे दो मंदराचल समुद्रका मथन कर रहे हों।

दो०—भुजबल रिपुदल दलमलि ❀ देखि दिवस कर अंत।
कूदे जुगल प्रयास बिनु ❀ आये जहं भगवंत ॥ ६६ ॥

अपनी भुजाओंके बलसे शत्रुकी सेनाका मर्दनकर दिनका अन्त देख अंगद और हनुमान दोनों बिना परिश्रम कूद पड़े और वहां आये जहां भगवान् श्रीरामचन्द्रजी थे।

प्रभु-पद-कमल सीस तिन्ह नाये ❀ देखि सुभट रघु-पति-मन भाये ॥
राम कृपा करि जुगल निहारे ❀ भये बिगतस्त्रम परम सुखारे ॥

प्रभुके चरणकमलोंको उन्होंने शिर नवाया। दोनों योद्धाओंको जब श्रीरामचन्द्रजीने देखा तब वे उनके मनको प्रिय लगे। श्रीरामचन्द्रजीने कृपा करके दोनोंकी ओर देखा, जिससे उनकी थकान जाती रही और वे अत्यन्त सुखी हुए।

गये जानि अंगद हनुमाना ❀ फिरे भालु मर्कट भट नाना ॥
जातुधान प्रदोषबल पाई ❀ धाये करि दस-सीस-दोहाई ॥

अंगदजी और हनुमानजी लौट गये, यह समझकर बहुतसे योद्धा—रीछ और बन्दर भी लौट पड़े। उधर प्रदोष काल (दो घड़ी दिन रहनेसे लेकर दो घड़ी रात बीतनेतक) का बल पाकर राक्षस रावणकी दुहाई देकर दौड़े।

निसि-चर-अनी देखि कपि फिरे ❀ जहं तहं कटकटाइ भट भिरे ॥
दोउ दल प्रबल पचारि पचारी ❀ लरहिं सुभट नहिं मानत हारी ॥

राक्षसोंकी सेना देखकर वानर फिर लौट गये और सब योद्धा कट-कटाकर जहां-तहां भिड़ गये। दोनों ही दलोंके योद्धा खूब ललकारकर लड़ते थे और हार न मानते थे।

महाबीर निसिचर सब कारे ❀ नानाबरन बलीमुख भारे ॥
सबल जुगलदल समबल जोधा ❀ कौतुक करत लरत करि क्रोधा ॥

राक्षस सब बड़े वीर और काले थे और बन्दर थे विशाल, अनेक रंगोंके! दोनों ही सेनाएँ खूब बलवान थीं, दोनों ओरके योद्धाओंका बल समान था। वे सब क्रोधमें भरकर लड़ते हुए बड़ा कौतुक करते थे।

प्राबिट-सरद-पयोद घनेरे ❀ लरत मनहुं मारुत के प्रेरे ॥
अनिप अकंपन अरु अतिकाया ❀ बिचलत सेन कीन्हि इन्ह माया ॥
भयउ निमिष महं अति अंधियारा ❀ बृष्टि होइ रुधिरोपलछारा ॥

ऐसा मालूम होता था; मानों हवाके उड़ाये हुए वर्षाऋतु और शरदऋतुके बहुतसे बादल लड़ रहे हों।

अकंपन और अतिकाय नामक राक्षस सेनाके दो सेनापति थे। इन्होंने अपनी सेनाके विचलित होते ही माया फैला दी। एक पलमें घोर अन्धकार हो गया और रक्त, पत्थर और धूलकी वर्षा होने लगी।

दो०—देखि निबिड़तम दसहुं दिसि ❀ कपिदल भयेउ खभार।
एकहिं एकु न देखहिं ❀ जहं तहं करहिं पुकार॥ ६७॥

दशों दिशाओंमें घना अन्धकार देखकर वन्दरोंकी सेनामें खलबली मच गयी। एकको दूसरा दिखलाई नहीं पड़ता था। सब जहां-तहां पुकारते थे।

सकल मरमु रघुनायक जाना ❀ लिये बोलि अंगद हनुमाना॥
समाचार सब कहि समुझाये ❀ सुनत कोपि कपिकुंजर धाये॥

श्रीरामचन्द्रजीने यह सब भेद जान लिया और अंगदजी एवं हनुमानजीको बुला लिया। श्रीरामचन्द्रजीने सब समाचार उन्हें कह समझाये। सुनते ही क्रोधित होकर विशाल वानर दौड़े।

पुनि कृपाल हंसि चाप चढ़ावा ❀ पावकसायक सपदि चलावा॥
भयेउ प्रकास कतहुं तम नाहीं ❀ ग्यानउदय जिमि संसय जाहीं॥

फिर हंसकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने धनुष चढ़ाया और शीघ्र ही अग्निबाण छोड़ दिया, जिससे प्रकाश हो गया—कहीं भी अन्धकार न रहा; जैसे ज्ञानका उदय हो जानेपर सन्देह चले जाते हैं।

भालु बलीमुख पाइ प्रकासा ❀ धाये हरषि बिगत-स्रम त्रासा॥
हनूमान अंगद रन गाजे ❀ हांक सुनत रजनीचर भाजे॥

प्रकाशको पाकर रीछ और बन्दर प्रसन्न होकर दौड़े। उनकी थकान जाती रही; डर दूर हो गया। हनुमान-जी और अंगदजीने जब रणमें गर्जना की तब उनकी हांक सुनते ही सब राक्षस भाग गये।

भागत भट पटकहिं धरि धरनी ❀ करहिं भालु कपि अद्भुत करनी॥
गहि पद डारहिं सागर माहीं ❀ मकर उरग झष धरि धरि खाहीं॥

भागते हुए योद्धाओंको पकड़कर बन्दर और रीछ जमीनपर पटक देते और अद्भुत पराक्रम दिखलाते थे। वे राक्षसोंको पैर पकड़कर समुद्रमें फेंक देते थे, जहां मगर, सर्प और मच्छ उनको पकड़-पकड़कर खा जाते थे।

दो०—कछु मारे कछु घायल ❀ कछु गढ़ चले पराइ।
गरजहिं भालु बलीमुख ❀ रिपु-दल-बल बिचलाइ॥

राक्षस योद्धाओंमेंसे कुछ तो मारे गये, कुछ घायल हो गये और कुछ भागकर गढ़को चल दिये। शत्रु का विचलित कर रीछ और बन्दर योद्धा गर्जना करने लगे।

निसा जानि कपि चारिउ अनी ❀ आये जहां कोसलाधनी ॥
राम कृपा करि चितवा सबहीं ❀ भये बिगतस्रम बानर तबहीं ॥

रात्रि जानकर बन्दरोंकी चारों सेनाएं वहां लौटकर आयीं जहां कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी थे। श्रीरामचन्द्रजीने जब कृपा करके उन सबकी ओर देखा तब सब बन्दरोंकी थकान जाती रही।

उहां दसानन सचिव हंकारे ❀ सब सन कहेसि सुभट जे मारे ॥
आधा कटकु कपिन्ह संहारा ❀ कहहु बेगिका करिय बिचारा ॥

वहां लंकागढ़में रावणने मंत्रियोंको बुलाया और जो अच्छे-अच्छे योद्धा मारे गये थे उन्हें सबको बतलाया और कहा कि बन्दरोंने आधी सेनाका संहार कर दिया। शीघ्र बतलाओ, क्या विचार करना चाहिये।

माल्यवंत अतिजठर निसाचर ❀ रावन मातपिता - मंत्री - बर ॥
बोला बचन नीति अतिपावन ❀ सुनहु तात कछु मोर सिखावन ॥

माल्यवान् नामक एक अत्यन्त वृद्ध राक्षस था, जो रावणकी माताका पिता और श्रेष्ठ मंत्री था। वह अत्यन्त पवित्र नीति-वचन बोला—हे तात, कुछ मेरी सीख सुनिये।

जब तें तुम्ह सीता हरि आनी ❀ असगुन होहिं न जाहिं बखानी ॥
बेद पुरान जासु जस गावा ❀ रामबिमुख काहु न सुख पावा ॥

जबसे आप सीताको चुराकर लाये हैं, तबसे अशुभ शकुन होते हैं जिनका वर्णन नहीं किया जाता। वेद और पुराण जिनका यश गाते हैं उन श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होकर किसीने भी सुख नहीं पाया।

दो०—हिरन्याच्छ भ्रातासहित ❀ मधुकैटभ बलवान।
जेहि मारे सोइ अवतरेउ ❀ कृपासिंधु भगवान ॥ ६९ ॥

हिरण्याक्षको भाईसमेत और बलवान् मधुकैटभको जिन्होंने मारा था, उन्हीं कृपासागर भगवानने अवतार लिया है।

कालरूप खल - बन - दहन ❀ गुनागार घनबोध।
सिव बिरंचि जेहि सेवहिं ❀ तासों कवन बिरोध ॥ ७० ॥

जो कालस्वरूप हैं, दुष्टरूपी वनको जला डालनेवाले अग्नि हैं, गुणोंके भाण्डार हैं, अत्यन्त ज्ञानवान् हैं और शिव और ब्रह्मा जिनकी सेवा करते हैं उनसे विरोध क्या?

परिहरि बैरु देहु बैदेही ❀ भजहु कृपानिधि परमसनेही ॥
ता के बचन बानसम लागे ❀ करियामुख करि जाहि अभागे ॥

बैर त्यागकर सीताको दे दीजिये और अत्यन्त स्नेही कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीका भजन कीजिये। रावणको उसके वचन बाणके समान लगे। फिर रावण उससे बोला—अरे अभागे, मुंह काला करके चला जा।

बूढ़ भएसि न त मरतेउँ तोही ❁ अब जनि नयन देखावसि मोही ॥
तेहि अपने मन अस अनुमाना ❁ बध्यो चहत एहि कृपानिधाना ॥

तू बूढ़ा हो गया है, नहीं तो मैं तुझे मार डालता। अब मेरी आँखोंके सामने आकर तू मुझे दिखलायी मत देना। उस (माल्यवान्) ने अपने मनमें ऐसा अनुमान कर लिया कि कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी इसे मारना ही चाहते हैं।

सो उठि गयउ कहत दुर्बादा ❁ तब सकोप बोलेउ घननादा ॥
कौतुक प्रात देखियहु मोरा ❁ करिहउँ बहुत कहउँ का थोरा ॥

वह माल्यवान् दुर्वचन कहते हुए उठकर चला गया। तब, मेघनाद क्रोधमें भरकर बोला—सवेरे मेरा कौतुक देखना। मैं बहुत करके दिखाऊंगा, थोड़ा क्या कहकर बतलाऊँ।

सुनि सुतबचन भरोसा आवा ❁ प्रीतिसमेत अंक बैठावा ॥
करत बिचार भयेउ भिनुसारा ❁ लागे कपि पुनि चहूं दुआरा ॥

पुत्रके वचन सुनकर रावणको भरोसा हुआ और बड़े प्यारसे उसे गोदमें बिठलाया। इस प्रकार विचार करते हुए सवेरा हो गया और बन्दर चारों फाटकोंपर फिर आ लगे।

कोपि कपिन्ह दुरघट गढ़ु घेरा ❁ नगर कोलाहल भयेउ घनेरा ॥
बिबिधायुधधर निसिचर धाये ❁ गढ़ तें परबतसिखर ढहाये ॥

बन्दरोंने क्रोधित होकर कठिन गढ़को घेर लिया, जिससे नगरमें बड़ा कोलाहल हुआ। तरह-तरहके शस्त्रास्त्रोंको लिये हुए राक्षस दौड़े और उन्होंने गढ़से पर्वतोंकी चोटियां गिरायीं।

छंद—ढाहे महीधर-सिखर कोटिन्ह बिबिधबिधि गोला चले।
घहरात जिमि पबिपात गरजत जनु प्रलयके बादले ॥
मरकट बिकट भट जुटत कटत न लटत तन जर्जर भये।
गहि सयल तेहि गढ़ पर चलावहिं जहं सो तहं निसिचर हये ॥

पर्वतोंकी करोड़ों चोटियां ढहा दीं और तरह-तरहके गोले चले। वे गोले वज्रपातके समान घहराते थे, मानों प्रलयके बादल गर्जते हों। विकट योद्धाओंके साथ वन्दर भीड़ जाते थे, पर जर्जर शरीर हो जानेपर भी हटते न थे। बन्दर उन्हीं ढहाये हुए पहाड़ोंको लेकर गढ़पर फेंकते थे, जिनसे जो राक्षस जहां होते वे वहीं मर गये।

दो०—मेघनाद सुनि स्रवन अस * गढ़ु पुनि छेंका आइ।
उतरेउ बीर दुर्ग तें * सनमुख चलेउ बजाइ ॥७१॥

फिर आकर दुर्गको घेर लिया—ऐसा कानोंसे सुनकर वीरवर मेघनाद दुर्गसे उतरकर डंका देकर सामना करनेके लिये चल दिया।

कहँ कोसलाधीस दोउ भ्राता * धन्वी सकल-लोक-बिख्याता ॥
कहँ नल नील द्विबिद सुग्रीवा * अंगद हनूमंत बलसींवा ॥

वह कहने लगा—कोशलदेशके स्वामी दोनों भाई कहां हैं, जो सारे लोकमें प्रसिद्ध धनुर्धर हैं? नल, नील, द्विविद, सुग्रीव, अंगद और बलकी सीमा हनुमानजी कहां हैं?

कहाँ बिभीषनु भ्राताद्रोही * आजु सठहि हठि मारउँ ओही ॥
अस कहि कठिन बान संधाने * अतिसय क्रोध स्रवन लगि ताने ॥

'भ्रातृद्रोही विभीषण कहां है? उस दुष्टको आज मैं हठपूर्वक मारूंगा—ऐसा कहकर मेघनादने कठिन वाण चढ़ाये और अत्यन्त क्रोधसे उन्हें कानोंतक खींचा।

सरसमूह सो छाँड़इ लागा * जनु सपच्छ धावहिं बहु नागा ॥
जहँ तहँ परत देखियहिं बानर * सनमुख होइ न सके तेहि अवसर ॥

वह वाणोंके समूह छोड़ने लगा, जो बड़े वेगसे इस तरह जाते थे; मानों पंख लगे हुए बहुतसे सर्प दौड़ते हों। बन्दर जहां-तहां गिरते दिखलायी पड़ते थे। उस समय वे सब मेघनादके सामने नहीं हो सके।

जहँ तहँ भागि चले कपि रिच्छा * बिसरी सबहिं जुद्ध कै इच्छा ॥
सो कपि भालु न रन महँ देखा * कीन्हेसि जेहि न प्रान अवसेषा ॥

रीछ और बन्दर भागकर जहां-तहां चल दिये। उन सबको युद्धकी इच्छा भूल गयी। संग्राममें कोई रीछ और बन्दर ऐसा नहीं दिखलायी दिया जिसे मेघनादने प्राणावशेष न किया हो।

दो०—दस दस सर सब मारेसि * परे भूमि कपि बीर।
सिंहनाद करि गरजा * मेघनाद बलधीर ॥७२॥

सबको उसने दस-दस वाण मारे, जिससे वीर वानर भूशायी हो गये। फिर बलवान और धीर मेघनादने सिंह समान शब्द करके गर्जना की।

देखि पवनसुत कटकु बिहाला * क्रोधवंत जनु धायेउ काला ॥
महासैल एक तुरत उपारा * अतिरिस मेघनाद पर डारा ॥

पवनपुत्र हनुमानने जब सेनाको बेहाल देखा तब क्रोधमें भरकर दौड़े; मानों काल हो। उन्होंने तुरंत ही एक बड़ा पहाड़ उखाड़ा और अत्यन्त क्रोधसे मेघनादपर डाल दिया।

आवत देखि गयेउ नभ सोई ❀ रथ सारथी तुरग सब खोई ॥
बार बार प्रचार हनुमाना ❀ निकट न आव मरमु सो जाना ॥

बड़ा पहाड़ आते हुए देखकर वह अपना रथ, सारथी और घोड़ा—सब खोकर आकाशमें चला गया। हनुमानजी उसे बार-बार ललकारते थे, परन्तु वह पास न आता था, क्योंकि उसे मर्म मालूम था।

रघुपति-निकट गयेउ घननादा ❀ नाना भांति कहेसि दुर्बादा ॥
अस्त्र सस्त्र आयुध सब डारे ❀ कौतुकहीं प्रभु काटि निवारे ॥

मेघनाद श्रीरामचन्द्रजीके पास गया और अनेक प्रकारके दुर्वचन कहने लगा। श्रीरामचन्द्रजीपर उसने अस्त्र-शस्त्र सब हथियार चलाये, जिन्हें प्रभुने खेलमें ही काटकर फेंक दिया।

देखि प्रताप मूढ़ खिसियाना ❀ करै लाग माया बिधि नाना ॥
जिमि कोउ करइ गरुड़ से खेला ❀ डरपावइ गहि स्वल्प सपेला ॥

श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप देखकर मूर्ख मेघनाद खिसियाया और तरह-तरहकी माया फैलाने लगा; जैसे कोई गरुड़से खेल करे और सांपका छोटासा बच्चा लेकर डरपावे।

दो०—जासु प्रबल-माया-बिबस ❀ सिव बिरंचि बड़ छोट।
ताहि देखावइ निसिचर ❀ निज माया मतिखोट ॥७३॥

जिसकी प्रबल मायाके वशमें शिव, ब्रह्मा और बड़े-छोटे सब हैं उसीको वह दुष्ट बुद्धिवाला राक्षस अपनी माया दिखलाता है।

नभ चढ़ि बरषइ बिपुल अंगारा ❀ महि तें प्रगट होहिं जलधारा ॥
नाना भांति पिसाच पिसाची ❀ मारु काटु धुनि बोलहिं नाची ॥

आकाशमें चढ़कर मेघनाद बहुतसे अंगार बरसाने लगा। पृथिवीसे जलकी धाराएँ प्रकट होने लगीं। तरह-तरहसे नाचकर पिशाच और पिशाचिनें 'मारो', 'काटो' का शब्द बोलने लगीं।

बिष्ठा पूय रुधिर कच हाड़ा ❀ बरषइ कबहुं उपल बहु छाड़ा ॥
बरषि धूरि कीन्हेसि अंधियारा ❀ सूझ न आपन हाथ पसारा ॥

विष्ठा, पीब, रक्त, बाल और हड्डियां बरसाने लगा और कभी बहुतसे पत्थर छोड़ने लगा। फिर धूल बरसाकर अंधकार कर दिया, जिसमें फैलाया हुआ अपना हाथ भी न सूझता था।

कपि अकुलाने माया देखे ❀ सब कर मरन बना येहि लेखे ॥
कौतुक देखि रामु मुसुकाने ❀ भये सभीत सकल कपि जाने ॥

माया देखकर बन्दर व्याकुल हुए! वे सोचने लगे कि इसी तरह अब सबका मरना हुआ। कौतुक देखकर श्रीरामचन्द्रजी मुसुकाये। उन्होंने यह जान लिया कि सब बन्दर भयभीत हो गये हैं।

एक बान काटी सब माया ❀ जिमि दिनकर हर तिमिरनिकाया ॥
कृपादृष्टि कपि भालु बिलोके ❀ भये प्रबल रन रहहिं न रोके ॥

फिर उन्होंने एक ही बाणमें मेघनादकी सब माया नष्ट कर दी; जैसे सूर्य सारे अंधकारको दूर कर देता है। श्रीरामचन्द्रजीने जब रीछ और बन्दरोंको कृपादृष्टिसे देखा तब वे ऐसे प्रबल हो गये कि संग्राममें रोकनेपर भी नहीं रुकते थे।

दो०—आयेसु मांगि राम पहिं ❀ अंगदादि कपि साथ।
लछिमन चले सकोप अति ❀ बान सरासन हाथ ॥ ७४ ॥

तब श्रीरामचन्द्रजीसे आज्ञा माँगकर अंगदादि वानरोंको साथ लेकर हाथमें धनुषवाण लिये हुए लक्ष्मणजी अत्यन्त क्रोधित होकर चल दिये।

छतज-नयन-उर बाहु बिसाला ❀ हिम-गिरि-निभ तनु कछुएक लाला ॥
इहां दसानन सुभट पठाये ❀ नाना सस्त्र अस्त्र गहि धाये ॥

उनके नेत्र लाल हो रहे थे, भुजाएँ और वक्षस्थल विशाल था और हिमालय पर्वतके समान उनका गौर शरीर कुछ लालसा हो रहा था। इधर रावणने योद्धाओंको भेजा, जो तरह-तरहके शस्त्रास्त्र लेकर दौड़े।

भूधर-नख-बिटपायुध धारी ❀ धाये कपि जय राम पुकारी ॥
भिरे सकल जोरिहि सन जोरी ❀ इत उत जय इच्छा नहिं थोरी ॥

पर्वतों, नखों और वृक्षोंके शस्त्रास्त्र रखनेवाले बन्दर भी श्रीरामचन्द्रजीकी जय पुकारकर दौड़े। जोड़ीसे जोड़ी सब भिड़ गये। जीत पानेकी इच्छा इधर भी और उधर भी कम न थी।

मुठिकन्ह लातन्ह दांतन्ह काटहिं ❀ कपि जयसील मारि पुनि डाटहिं ॥
मारु मारु धरु धरु धरु मारू ❀ सीस तोरि गहि भुजा उपारू ॥

जयशील बन्दर दांतोंसे काटते और लातों और घूसोंसे मारते थे और मारकर फिर डाटते थे। मारो, मारो, पकड़ो, पकड़ो, पकड़ो और मारो, शिरको तोड़ दो और पकड़कर भुजाको उखाड़ लो।

असि रव पूरि रही नव खंडा ❀ धावहिं जहं तहं रुंड प्रचंडा ॥
देखहिं कौतुक नभ सुरबृंदा ❀ कबहुंक बिसमय कबहुं अनंदा ॥

नौ खण्डोंमें इस तरहका शब्द छा रहा था। जहाँ-तहाँ बड़े डरावने रुंड दौड़ते थे। देवताओंके झुण्ड आकाशसे कौतुक देख रहे थे। उन्हें कभी विस्मय होता था और कभी आनन्द।

दो०—रुधिर गाड़ भरि भरि जमेउ ❀ ऊपर धूरि उड़ाइ।
जनु अँगाररासिन्ह पर ❀ मृतकधूम रह्यो छाइ॥७५॥

गढ़ोंमें भर-भरकर खून जम गया, उसके ऊपर धूल उड़-उड़कर जम गयी; जैसे अङ्गारोंकी ढेरियोंपर राख छा रही हो।

घायल बीर बिराजहिं कैसे ❀ कुसुमित किंसुक के तरु जैसे॥
लछिमन मेघनाद द्वौ जोधा ❀ भिरहिं परस्पर करि अति क्रोधा॥

घायल वीर कैसे विराज रहे थे; जैसे फूले हुए पलाशके वृक्ष। लक्ष्मणजी और मेघनाद—दोनों योद्धा अत्यन्त क्रोध करके आपसमें भिड़ते थे।

एकहि एक सकइ नहिं जीती ❀ निसिचर छल बल करइ अनीती॥
क्रोधवंत तब भयउ अनंता ❀ भंजेउ रथ सारथी तुरंता॥

कोई भी एक दूसरेको जीत न सकता था। वह राक्षस छल-बल और अनीति करता था। तब लक्ष्मणजी क्रोधित हुए और तुरंत ही रथ तोड़ डाला और सारथीको मार डाला।

नाना बिधि प्रहार कर सेषा ❀ राच्छस भयेउ प्रानअवसेषा॥
रावनसुत निजमन अनुमाना ❀ संकट भयेउ हरिहि मम प्राना॥

शेषरूप लक्ष्मणजीने अनेक प्रकारके प्रहार किये, जिनसे राक्षस मेघनाद प्राणावशेष हो गया। रावणके पुत्र मेघनादने अपने मनमें अनुमान किया कि संकट आ गया। ये मेरे प्राण ले लेंगे।

बीरघातिनी छाड़सि साँगी ❀ तेजपुंज लछिमन उर लागी॥
मुरुछा भई सक्ति के लागे ❀ तब चलि गयउ निकट भय त्यागे॥

फिर मेघनादने वीरघातिनी शक्तिको छोड़ा, जो तेजोराशि लक्ष्मणजीके हृदयमें लगी। शक्तिके लगनेसे जब लक्ष्मणजीको मूर्च्छा आ गयी तब भय छोड़कर मेघनाद चलकर पास गया।

दो०—मेघ-नाद-सम कोटिसत ❀ जोधा रहे उठाइ।
जगदाधार अनंत किमि ❀ उठइ चले खिसिआइ॥७६॥

मेघनादके समान सौ करोड़ योद्धा लक्ष्मणजीको उठा रहे थे, पर जगत्के आधार अनंतरूप लक्ष्मणजी कैसे उठ सकते थे? वे सब खिसियाकर चल दिये।

सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू ❀ जारइ भुवन चारि दस आसू ॥
सक संग्राम जीति को ताही ❀ सेवहिं सुर नर अगजग जाही ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, सुनो। जिसकी क्रोधाग्नि चौदह भुवनोंको शीघ्र ही जला देती है और देवता और मनुष्य—चराचर जिसकी सेवा करते हैं, उसे संग्राममें कौन जीत सकता है ?

यह कौतूहल जानइ सोई ❀ जा पर कृपा राम कै होई ॥
संध्या भई फिरी दोउ बाहिनी ❀ लगे संभारन निज निज अनी ॥

जिसपर श्रीरामचन्द्रजीकी कृपा होती है वही यह कौतूहल जानता है। संध्या हुई और दोनों सेनाएँ लौटीं और दोनों पक्ष अपनी-अपनी सेनाकी संभाल करने लगे।

व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर ❀ लछिमनु कहाँ बूझ करुनाकर ॥
तब लगि लेइ आयउ हनुमाना ❀ अनुज देखि प्रभु अति दुख माना ॥

जो व्यापक हैं, ब्रह्म हैं, अजेय हैं और भुवनोंके स्वामी हैं, वही करुणा-धाम श्रीरामचन्द्रजी पूछने लगे कि लक्ष्मणजी कहाँ हैं ? तबतक उन्हें लेकर हनुमानजी आये। छोटे भाईको देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी बड़े दुःखी हुए।

जामवंत कह बैद सुषेना ❀ लंका रह कोउ पठइय लेना ॥
धरि लघु रूप गयउ हनुमंता ❀ आयेउ भवन समेत तुरंता ॥

जाम्बवान्‌ने कहा कि लंकामें सुषेण वैद्य रहते हैं, उन्हें लानेके लिये किसीको भेजना चाहिये। फिर छोटा स्वरूप रखकर हनुमानजी गये और तुरंत ही घर समेत सुषेणको ले आये।

दो०—रघु-पति-चरन-सरो-ज सिरु ❀ नायउ आय सुषेन।
कहा नाम गिरि औषधी ❀ जाहु पवनसुत लेन ॥ ७७ ॥

सुषेणने आकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें शिर नवाया और पर्वत तथा औषधिका नाम बतलाकर कहा कि हे पवनपुत्र हनुमान, तुम उसे लेनेके लिये जाओ।

राम-चरन-सरसि-ज उर राखी ❀ चलेउ प्रभंजनसुत बल भाखी ॥
इहाँ दूत एक मरमु जनावा ❀ रावण काल-नेमि गृह आवा ॥

पवनपुत्र हनुमानजी अपना बल कहकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको हृदयमें रखकर चल दिये। उधर एक दूतने जब यह भेद बतलाया तब रावण कालनेमिके घर आया।

दसमुख कहा मरमु तेहि सुना ❀ पुनि पुनि कालनेमि सिरु धुना ॥
देखत तुम्हहिं नगर जेहि जारा ❀ तासु पंथ को रोकनिहारा ॥

रावणने मर्मकी सब बात कही और उसने सुन ली। फिर कालनेमिने बारबार अपना सिर पीटा और बोला, तुम्हारे देखते हुए जिसने नगर जला दिया उसका मार्ग रोकनेवाला कौन है?

भजि रघुपति करु हित आपना ❀ छाड़हु नाथ मृषा जलपना ॥
नील - कंज - तनु सुंदर स्यामा ❀ हृदय राखु लोचन अभिरामा ॥

हे स्वामिन्, श्रीरामचन्द्रजीका भजनकर अपना हित करो और व्यर्थकी सब बातें छोड़ दो। नीलकमलके समान जिनका शरीर सुन्दर और सांवला है और जिनके नेत्र मनोहर हैं, उन श्रीरामचन्द्रजीको अपने हृदयमें धारण करो।

अहंकार ममता मद त्यागू ❀ महा मोहनिसि सोवत जागू ॥
कालब्याल कर भच्छक जोई ❀ सपनेहु समर कि जीतिय सोई ॥

अहंकार, ममता और मदको छोड़ दो और महामोहकी जिस रातमें सो रहे हो, उससे जग जाओ! कालरूपी सर्पको भी जो खा जानेवाला है उसे क्या कोई स्वप्नमें भी संग्राममें जीत सकता है?

दो०—सुनि दसकंध रिसान अति ❀ तेहि मन कीन्ह बिचार।
राम-दूत-कर मरउं बरु ❀ यह खल रत मलभार ॥७८॥

यह सुनकर जब रावण अत्यन्त क्रोधित हुआ तब उस कालनेमिने मनमें विचार किया कि यह अच्छा है कि मैं श्रीरामचन्द्रजीके दूतके हाथों मरूं। यह दुष्ट तो पापकर्ममें लगा हुआ है।

अस कहि चला रचेसि मग माया ❀ सर मंदिर बर बाग बनाया ॥
मारुतसुत देखा सुभ आस्रम ❀ मुनिहि बूझि जलु पियउं जाइ स्रम ॥

ऐसा कहकर कालनेमि चल दिया और मार्गमें माया फैलायी—सरोवर, मंदिर और एक उत्तम बाग बनाया। पवनपुत्र हनुमानने देखा कि वह एक उत्तम आश्रम है। उन्होंने विचार किया कि मुनिको पूछकर जल पीऊं, जिससे थकान दूर होवे।

राच्छस - कपट - बेष तहं सोहा ❀ माया - पति - दूतहि चह मोहा ॥
जाइ पवनसुत नायेउ माथा ❀ लाग सो कहइ राम - गुन - गाथा ॥

वहां कपटभेष बनाये हुए राक्षस कालनेमि शोभित था, जो मायापति श्रीरामचन्द्रजीके दूत हनुमानको मोहित करना चाहता था। पवनपुत्र हनुमानने जाकर मस्तक नवाया, फिर वह राक्षस-मुनि श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहने लगा।

होत महारन रावनरामहिं ❀ जितिहहिं राम न संसय या महिं ॥
इहाँ भये मैं देखउं भाई ❀ ग्यान-दृष्टि-बलु मोहि अधिकाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी और रावणसे महायुद्ध हो रहा है। उसमें श्रीरामचन्द्रजी जीतेंगे, इसमें संदेह नहीं है! हे भाई, यहां होते हुए भी मैं उसे देखता हूं। मुझे ज्ञानदृष्टिका विशेष बल है।

माँगा जल तेहि दीन्ह कमंडल ❀ कह कपि नहिं अघाउं थोरे जल ॥
सरमज्जनु करि आतुर आवहु ❀ दीछा देउं ग्यान जेहि पावहु ॥

जब पवनपुत्र हनुमानजीने जल मांगा तब उसने अपना कमण्डलु दे दिया। हनुमानजीने कहा कि थोड़े जलसे तृप्त न हूंगा। इसपर राक्षस मुनि बोला—सरोवरमें स्नान करके शीघ्र आओ तो मैं तुम्हें दीक्षा दूं, जिससे तुम (बूटी पहचाननेका) ज्ञान पा जाओगे।

दो०—सर पैठत कपि-पद गहा ❀ मकरी तब अकुलान।
मारी सो धरि दिव्यतनु ❀ चली गगन चढ़ि जान ॥ ७६ ॥

सरोवरमें घुसते ही जब मकरी (मगरकी स्त्री)ने हनुमानजीका पैर पकड़ लिया तब वे व्याकुल हुए और उसे मार डाला! वह मकरी दिव्य शरीर धारणकर विमानपर चढ़कर आकाशकी ओर चल दी।

कपि तव दरस भइउं निःपापा ❀ मिटा तात मुनिबर कर सापा ॥
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा ❀ मानहु सत्य बचन प्रभु मोरा ॥

हे हनुमान, तुम्हारे दर्शनसे मैं निष्पाप हो गयी। हे तात, मुनिवरका श्राप मिट गया! यह मुनि नहीं, घोर राक्षस है। हे प्रभो, मेरा यह वचन सत्य मानो।

अस कहि गई अपछरा जबहीं ❀ निसि-चर-निकट गयउ सो तबहीं ॥
कह कपि मुनि गुरुदछिना लेहू ❀ पाछे हमहिं मंत्र तुम्ह देहू ॥

ऐसा कहकर मकरी नामक अप्सरा ज्योंही चली गयी त्योंही हनुमानजी राक्षसके पास गये। हनुमानजीने कहा कि हे मुनि, पहिले गुरुदक्षिणा लो, पीछे तुम मुझे मंत्र देना।

सिर लंगूर लपेटि पछारा ❀ निज तनु प्रगटसि मरती बारा ॥
राम राम कहि छाँड़ेसि प्राना ❀ सुनि मन हरषि चलेउ हनुमाना ॥

हनुमानजीने शिरसे पूंछ लपेटकर उसे पछाड़ दिया। मरते समय कालनेमिने अपना शरीर प्रकट किया और 'राम'-'राम' कहकर अपने प्राण छोड़ दिये। यह सुनकर मनमें प्रसन्न होकर हनुमानजी चल दिये।

देखा सैल न औषध चीन्हा ❀ सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा ॥
गहि गिरि निसि नभ धावत भयऊ ❀ अवध-पुरी - ऊपर कपि गयऊ ॥

हनुमानजीने पर्वत तो देखा, पर ओषधिको नहीं पहचाना। तब उन्होंने सहसा उस पर्वतको उखाड़ लिया। पर्वत लेकर रात्रिमें ही वे आकाशमार्गसे होकर दौड़े। जब हनुमानजी अयोध्यापुरीके ऊपर गये,

दो०—देखा भरत बिसाल अति ❀ निसिचर मन अनुमानि।
बिनु फर सायक मारेउ ❀ चाप स्रवन लगि तानि ॥ ८० ॥

भरतजीने देखा और मनमें अनुमान किया कि यह कोई अत्यन्त विशाल राक्षस है। कानतक धनुषको खींचकर उन्होंने बिना फलका बाण मार दिया।

परेउ मुरछि महि लागत सायक ❀ सुमिरत राम राम रघुनायक ॥
सुनि प्रियबचन भरत उठि धाये ❀ कपि समीप अतिआतुर आये ॥

बाण लगते ही मूर्च्छित होकर हनुमानजी रघुनायक 'राम'-'राम' स्मरण करते हुए पृथिवीपर गिर पड़े। प्रिय वचन सुनकर भरतजी उठकर दौड़े और बड़ी शीघ्रतासे हनुमानजीके पास आये।

बिकल बिलोकि कीस उर लावा ❀ जागत नहिं बहु भाँति जगावा ॥
मुख मलीन मन भये दुखारी ❀ कहत बचन लोचन भरि बारी ॥

व्याकुल देखकर वानर हनुमानजीको उन्होंने हृदयसे लगा लिया। उन्होंने बहुत तरहसे जगाया, पर हनुमानजी जगे नहीं। भरतजीका मुख मलिन हो गया, मनमें वे बड़े दुःखी हुए और नेत्रोंमें जल भरकर ये वचन कहने लगे—

जेहि बिधि रामबिमुख मोहि कीन्हा ❀ तेहि पुनि यह दारुन दुख दीन्हा ॥
जौं मोरे मन बच अरु काया ❀ प्रीति राम-पद-कमल अमाया ॥

जिस विधाताने मुझे श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिकूल किया था, फिर उसीने यह कठिन दुःख भी दिया। श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें यदि मन, वाणी और शरीरसे मेरी निष्कपट प्रीति हो—

तौ कपि होउ बिगत-स्रम-सूला ❀ जौं मोपर रघुपति अनुकूला ॥
सुनत बचन उठि बैठ कपीसा ❀ कहि जय जयति कोसलाधीसा ॥

और यदि श्रीरामचन्द्रजी मुझपर अनुकूल हों तो हे वानर, तुम परिश्रम और पीड़ारहित हो जाओ। भरतजीका यह वचन सुनते ही 'कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो, जय हो' कहकर कपीश्वर हनुमानजी उठकर बैठ गये।

सो०—लीन्ह कपिहि उर लाइ ❀ पुलकित तन लोचन सजल।
प्रीति न हृदय समाइ ❀ सुमिरि राम रघुकुलतिलक ॥ ८१ ॥

भरतजीने हनुमानजीको हृदयसे लगा लिया। उनका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया। रघुकुल-तिलक श्रीरामचन्द्रजीका स्मरणकर उनके हृदयमें प्रीति न समाती थी।

तात कुसल कहु सुखनिधान की ❁ सहित अनुज अरु मातु जानकी ॥
कपि सब चरित संछेप बखाने ❁ भये दुखी मन महं पछिताने ॥

भरतजी पूछने लगे कि हे तात, छोटे भाई लक्ष्मण और माता जानकी समेत सुखनिधान श्रीरामचन्द्रजी-की कुशल कहो। हनुमानजीने संक्षेपमें ही सब समाचार सुनाये। सब हाल सुनकर भरतजी मनमें दुःखी हुए और पछताने लगे।

अहह दैव मैं कत जग जायउं ❁ प्रभु के एकहु काज न आयउं ॥
जानि कुअवसरु मन धरि धीरा ❁ पुनि कपि सन बोले बल बीरा ॥

हा! विधाता! मैंने संसारमें क्यों जन्म लिया? मैं प्रभुके एक भी काम न आया। कुअवसर जान और मनमें धीरज रखकर बलवीर भरतजी हनुमानजीसे फिर कहने लगे—

तात गहरु होइहि तोहि जाता ❁ काज नसाइहि होत प्रभाता ॥
चढ़ु मम सायक सैलसमेता ❁ पठवउं तोहि जहं कृपानिकेता ॥

हे तात, तुमको जानेमें देर होगी और प्रभात होते ही कार्य बिगड़ जायगा; इसलिये पर्वतसमेत मेरे बाण-पर बैठ जाओ। मैं तुम्हें, जहां दयाधाम श्रीरामचन्द्रजी हैं, भेज दूंगा।

सुनि कपिमन उपजा अभिमाना ❁ मोरे भार चलिहि किमि बाना ॥
रामप्रभाव बिचारि बहोरी ❁ बंदि चरन कपि कह कर जोरी ॥

यह सुनकर हनुमानजीके मनमें अभिमान उत्पन्न हुआ कि मेरे बोझसे बाण कैसे चल सकेगा? फिर श्रीरामचन्द्रजीके प्रभावको विचारकर हनुमानजी भरतजीके चरणोंकी वंदनाकर, हाथ जोड़कर बोले—

दो०—तव प्रताप उर राखि प्रभु ❁ जैहउं नाथ तुरंत।
अस कहि आयसु पाइ पद ❁ बंदि चलेउ हनुमंत ॥ ८२ ॥

हे स्वामिन्, आपके प्रतापसे प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें रखकर मैं तुरंत ही पहुंच जाऊंगा—ऐसा कहकर आज्ञा पाकर और चरणोंकी वंदना कर हनुमानजी चल दिये।

भरत-बाहु-बल-सील-गुन ❁ प्रभु-पद-प्रीति अपार।
जात सराहत मनहिं मन ❁ पुनि पुनि पवनकुमार ॥ ८३ ॥

पवनपुत्र हनुमानजी अपने मनमें भरतजीके बाहुबल, शील, गुण और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें अपार प्रेमको बारबार सराहते हुए जा रहे थे।

उहाँ राम लछिमनहिं निहारी ❁ बोले बचन मनुजअनुसारी ॥
अर्धराति गइ कपि नहिं आयेउ ❁ राम उठाइ अनुज उर लायउ ॥

इधर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणजीको देखकर मनुष्यकी भांति ये वचन बोले—आधीरात बीत गयी और हनुमानजी नहीं आये। यह कहकर श्रीरामचन्द्रजीने छोटे भाई लक्ष्मणजीको उठाकर हृदयसे लगा लिया।

सकहु न दुखित देखि मोहि काऊ ❀ बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ ॥
मम हित लागि तजेहु पितु माता ❀ सहेउ बिपिन हिम आतप बाता ॥

श्रीरामचन्द्रजी विलाप करने लगे—हे भाई, तुम्हारा स्वभाव सदैव कोमल रहा। तुम मुझे कभी दुःखित न देख सकते थे। मेरे हितके लिये तुमने माता और पिताको छोड़ दिया और वनमें जाड़ा, धूप और वायु—सब सहे।

सो अनुरागु कहाँ अब भाई ❀ उठहु न सुनि मम बचबिकलाई ॥
जौं जनतेउँ बन बंधुबिछोहू ❀ पिताबचन मनतेउँ नहिं ओहू ॥

हे भाई, तुम्हारा वह प्रेम अब कहाँ है? तुम मेरे व्याकुलताभरे वचन सुनकर क्यों नहीं उठते? यदि मैं जानता कि वनमें भाईका वियोग होगा तो पिताजीके उन वचनोंको नहीं मानता।

सुत बित नारि भवन परिवारा ❀ होहिं जाहिं जग बारहिं बारा ॥
अस बिचारि जिय जागहु ताता ❀ मिलइ न जगत सहोदर भ्राता ॥

पुत्र, धन, स्त्री, घर और कुटुम्ब संसारमें बारबार होते हैं और मिटते भी हैं। परंतु संसारमें सहोदर भाई नहीं मिलता—ऐसा जीमें विचारकर, हे तात, जागो!

जथा पंख बिनु खग अति दीना ❀ मनि बिनु फनि करिबर करहीना ॥
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही ❀ जौं जड़ दैव जियावइ मोही ॥

जैसे पंखों बिना पक्षी, मणि बिना सर्प और सूंड़ बिना श्रेष्ठहाथी अत्यन्त दीन होता है उसी प्रकार मेरा जीवन है—यदि जड़ दैव, हे भाई, तुम्हारे बिना मुझे जिलावे।

जैहउँ अवध कवन मुँह लाई ❀ नारिहेतु प्रिय भाइ गंवाई ॥
बरु अपजसु सहतेउँ जग माहीं ❀ नारि हानि बिसेष छति नाहीं ॥

स्त्रीके लिये प्यारे भाईको, खोकर मैं कौनसा मुँह लेकर अयोध्याको जाऊंगा। इससे तो अपयश ही भला था। संसारमें मैं उसे सह लेता। स्त्रीकी हानि कोई विशेष हानि नहीं है।

अब अपलोकु सोकु सुत तोरा ❀ सहिहि निठुर कठोर उर मोरा ॥
निज जननी के एक कुमारा ❀ तात तासु तुम्ह प्रान तुम्हारा ॥

बेटा, अब मेरा निष्ठुर कठोर हृदय लोकनिन्दा और तेरा शोक सहन करेगा! हे तात, तुम अपनी माताके अकेले पुत्र हो और उसके प्राणके आधार हो।

सौंपेसि मोहि तुम्हहिं गहि पानी ❀ सब बिधि सुखद परम हित जानी ॥
उतरु काह दैहउँ तेहि जाई ❀ उठि किन मोहि सिखावहु भाई ॥

सब प्रकार सुख देनेवाला और अत्यन्त हितकारी जानकर मुझे उसने तुम्हें हाथ पकड़कर सौंपा था। उसे मैं जाकर क्या उत्तर दूँगा ? हे भाई, उठकर मुझे क्यों नहीं सिखलाते ?

बहु बिधि सोचत सोचबिमोचन ❀ स्रवत सलिल राजिव-दल-लोचन ॥
उमा एक अखंड रघुराई ❀ नरगति भगतकृपालु देखाई ॥

सोच छुड़ा देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी बहुत तरहसे सोच करने लगे। कमलदलके समान उनके नेत्रोंसे जल बहने लगा। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजी एक और अखण्ड हैं, उन्होंने यह मनुष्य लीला और भक्तवत्सलता दिखलायी है।

सो०—प्रभुविलाप सुनि कान ❀ बिकल भये बानरनिकर।
आइ गयउ हनुमान ❀ जिमि करुना महुँ बीर रस ॥८४॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका विलाप कानों सुनकर वानरोंके झुण्ड व्याकुल हो गये। उसी समय हनुमानजी आ-गये; जैसे करुणामें वीररस आ गया हो।

हरषि राम भेंटेउ हनुमाना ❀ अति-कृतज्ञ प्रभु परम सुजाना ॥
तुरत बैद तब कीन्हि उपाई ❀ उठि बैठे लछिमन हरषाई ॥

प्रसन्न होकर श्रीरामचन्द्रजीने हनुमानजीसे भेंट की। अत्यन्त सुजान प्रभु अत्यन्त कृतज्ञ हुए! तब वैद्यने तुरंत ही उपाय किया और लक्ष्मणजी प्रसन्न होकर उठ बैठे।

हृदय लाइ भेंटेउ प्रभु भ्राता ❀ हरषे सकल भालु - कपि - ब्राता ॥
पुनि कपि बैद तहाँ पहुँचावा ❀ जेहि बिधि तबहिं ताहि लेइ आवा ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी भाईको हृदयसे लगाकर मिले! सब रीछ और बन्दरोंके समूह प्रसन्न हो गये। जिस प्रकार उस समय हनुमानजी वैद्यको ले आये थे, उसे फिर वहीं पहुंचा दिया।

यह बृत्तांत दसानन सुनेऊ ❀ अति बिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ ॥
ब्याकुल कुंभकरन पहिं आवा ❀ बिबिध जतन करि ताहि जगावा ॥

यह वृत्तान्त जब रावणने सुना तब अत्यन्त विषादसे वह बार-बार शिर पीटने लगा। व्याकुल होकर रावण कुम्भकर्णके पास आया और तरह-तरहके उपाय करके उसे जगाया।

जागा निसिचर देखिय कैसा ❀ मानहु काल देह धरि बैसा ॥
कुंभकरन बूझा कहु भाई ❀ काहे तव मुख रहे सुखाई ॥

राक्षस कुम्भकर्ण जग गया। वह कैसा दिखलायी पड़ता था मानों देह धारण किये हुए काल हो! कुम्भकर्णने पूछा कि हे भाई, सुनो! तुम्हारे मुख क्यों सूख रहे हैं?

कथा कही सब तेहि अभिमानी ❀ जेहि प्रकार सीता हरि आनी ॥
तात कपिन्ह सब निसिचर मारे ❀ महा - महा - जोधा संहारे ॥

जिस प्रकार सीताजीको चुराकर लाया था, वह सब कथा अभिमानी रावणने उससे कही। फिर रावण बोला—हे तात! बन्दरोंने सब राक्षसोंको मार डाला, सब बड़े-बड़े योद्धाओंका संहार कर दिया।

दुमुख सुररिपु मनुज अहारी ❀ भट अतिकाय अकंपन भारी ॥
अपर महोदर आदिक बीरा ❀ परे समरमहि सब रनधीरा ॥

देवताओंका शत्रु और मनुष्योंको खानेवाला दुर्मुख, योद्धा अतिकाय और अकंपन, महोदर आदि अन्यान्य वीर, जो रणमें धीर थे, सब संग्रामभूमिमें मर गये।

दो०—सुनि दस-कंधर-बचन तब ❀ कुंभकरन बिलखान।
जगदंबा हरि आनि अब ❀ सठ चाहत कल्यान ॥ ८५ ॥

तब रावणके वचन सुनकर कुम्भकर्ण दुःखी हुआ और बोला कि अरे दुष्ट, संसारकी माताको चुराकर ले आया और अब कल्याण चाहता है!

भल न कीन्ह तैं निसि-चर-नाहा ❀ अब मोहि आइ जगायेहि काहा ॥
अजहूँ तात त्यागि अभिमाना ❀ भजहु राम होइहि कल्याना ॥

अरे राक्षसराज! तूने अच्छा नहीं किया। अब मुझे आकर जगानेसे ही क्या? हे तात, अभिमान छोड़कर अब भी श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर, इसीसे कल्याण होगा।

हैं दससीस मनुज रघुनायक ❀ जा के हनूमान से पायक ॥
अहह बंधु तैं कीन्हि खोटाई ❀ प्रथमहिं मोहि न सुनायेहि आई ॥

अरे रावण, श्रीरामचन्द्रजी क्या मनुष्य हैं? जिनके हनुमान जैसे दूत हैं। हाय, भाई, तुमने बुरा किया! पहले ही आकर मुझे नहीं सुनाया।

कीन्हेहु प्रभुबिरोध तेहि देवक ❀ सिव बिरंचि सुर जा के सेवक ॥
नारद मुनि मोहि ग्यान जो कहा ❀ कहतेउँ तोहि समय निरबहा ॥

तुमने उस देव—प्रभुसे विरोध किया है, जिसके सेवक ब्रह्मा, शिव आदि देवता हैं। नारदमुनिने जो ज्ञानोपदेश दिया था उसे मैं तुमसे कहता, परन्तु अब समय निकल गया।

अब भरि अंक भेंटु मोहि भाई * लोचन सुफल करउं मैं जाई ॥
स्यामगात सरसी-रुह-लोचन * देखउं जाइ ताप-त्रय-मोचन ॥

हे भाई, अब मुझे गोदमें भरकर भेंट ले—मैं जाकर अपने नेत्र सफल कर लूं—जाकर श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन कर लूं, जिनका शरीर सांवला है, जिनके नेत्र कमलके समान हैं और जो तीनों तापोंको दूर कर देनेवाले हैं।

दो०—राम-रूप-गुन सुमिर मन * मगन भयउ छन एक।
रावन मांगेउ कोटि घट * मद अरु महिष अनेक ॥ ८६ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके रूप और गुणोंका स्मरणकर कुम्भकर्णका मन एक क्षणके लिये मग्न हो गया। रावणने मदिराके करोड़ घड़े और अनेक भैंसे मंगवाये।

महिष खाइ करि मदिरापाना * गर्जा बज्राघातसमाना ॥
कुंभकरन दुर्मद रनरंगा * चला दुर्ग तजि सेन न संगा ॥

भैंसे खाकर और मदिरा पीकर कुम्भकर्ण वज्रपातके समान गर्जा। युद्धके रंगमें रंगा हुआ मतवाला कुंभकर्ण दुर्गको छोड़कर चल दिया। उसके साथमें सेना न थी।

देखि बिभीखनु आगे गयउ * परेउ चरन निज नाम सुनायउ ॥
अनुज उठाइ हृदय तेहि लावा * रघु-पति-भगत जानि मनभावा ॥

यह देखकर विभीषण आया और चरणोंमें पड़ गया और अपना नाम सुनाया। छोटे भाई विभीषणको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया। श्रीरामचन्द्रजीका भक्त जानकर उसके मनको वह प्रिय लगा।

तात लात रावन मोहि मारा * कहत परमहित मंत्रबिचारा ॥
तेहि गलानि रघुपति पहिं आयउं * देखि दीन प्रभु के मन भायउं ॥

हे तात, अत्यन्त हितकारी सलाहका विचार कहते हुए मुझे रावणने लात मारी थी, उसीकी ग्लानिसे मैं श्रीरामचन्द्रजीके पास चला आया। मुझे दीन देखकर प्रभुके मनको मैं अच्छा लग गया।

सुनु सुत भयउ कालबस रावनु * सो कि मान अब परमसिखावनु ॥
धन्य धन्य तैं धन्य बिभीखन * भयउ तात निसि-चर-कुल-भूषन ॥
बंधु बंस तैं कीन्ह उजागर * भजेहु राम सोभा-सुख-सागर ॥

कुम्भकर्ण बोला—हे बेटा, सुन। रावण कालके वशमें हो गया है। वह क्या अब हितकारी सीख मान सकता है? हे विभीषण, तू धन्य है, धन्य है, धन्य है। हे तात, तू राक्षसकुलका भूषण हुआ। हे भाई, तूने अपना वंश प्रसिद्ध कर दिया कि शोभा और सुखके समुद्र श्रीरामचन्द्रजीका भजन किया।

दो०—बचन कर्म मन कपटु तजि ❀ भजहु राम रनधीर।
जाहु न निज पर सूझ मोहि ❀ भयउँ कालबस बीर॥ ८७॥

मन, वाणी और कर्मसे कपट छोड़कर रणधीर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करना। हे वीर, अब जाओ। मुझे अपना और पराया नहीं सूझता; क्योंकि मैं कालके वशमें हो गया हूं।

बंधुबचन सुनि फिरा बिभीषन ❀ आयउ जहँ त्रैलोक-बिभूषन॥
नाथ भूधरा-कार-सरीरा ❀ कुंभकरन आवत रनधीरा॥

भाईके वचन सुनकर विभीषण लौटा और वहां आया जहां तीनों लोकोंके भूषण श्रीरामचन्द्रजी थे। विभीषणने कहा—हे नाथ, पर्वतके आकारके शरीरवाला रणधीर कुम्भकर्ण आ रहा है।

एतना कपिन्ह सुना जब काना ❀ किलिकिलाइ धाये बलवाना॥
लिये उपारि बिटप अरु भूधर ❀ कटकटाइ डारहिं ता ऊपर॥

बन्दरोंने जब इतना कानोंसे सुना तब वे सब बलवान 'किलकिल' शब्द करके दौड़े। उन्होंने पहाड़ और वृक्ष उखाड़ लिये और कटकटाकर उसके ऊपर डालने लगे।

कोटि कोटि गिरि-सिखर-प्रहारा ❀ करहिं भालु कपि एकहिं बारा॥
मुरै न मन तन टरै न टारा ❀ जिमि गज अर्क फलन्हि कर मारा॥

पर्वतोंकी चोटियोंके करोड़-करोड़ प्रहार रीछ और बन्दर एक साथ ही करते थे, परन्तु उनसे कुम्भकर्णका मन विचलित नहीं हुआ और न शरीर ही टाले टला; जैसे आकके फलोंके मारनेसे हाथी।

तब मारुतसुत मुठिका हनेऊ ❀ परेउ धरनि ब्याकुल सिर धुनेऊ॥
पुनि उठि तेहि मारेउ हनुमंता ❀ घुर्मित भूतल परेउ तुरंता॥

तब पवनपुत्र हनुमानजीने एक घूंसा मारा, जिससे व्याकुल होकर वह पृथिवीपर गिर पड़ा और शिर धुनने लगा। फिर उठकर उसने हनुमानजीको मारा, जिससे वे तुरन्त ही मूर्च्छित होकर पृथिवीपर गिर पड़े।

पुनि नल नीलहि अवनि पछारेसि ❀ जहँ तहँ पटकि पटकि भट डारेसि॥
चली बली-मुख-सेन पराई ❀ अति-भय-त्रसित न कोउ समुहाई॥

फिर नल और नीलको पृथिवीपर पछाड़ दिया और जहां-तहां योद्धाओंको पकड़-पकड़कर गिरा दिया। वानरोंकी सेना उसके महाभयसे डरकर भाग चली। उसके सामने कोई न होता था।

दो०—अंगदादि कपि मुरुछित ❀ करि समेत सुग्रीव।
काँख दाबि कपिराज कहँ ❀ चला अमित-बल-सींव॥ ८८॥

सुग्रीवसमेत अंगदादि वानरोंको मूर्च्छित कर, असीम बलकी सीमा कुम्भकर्ण कपिराज सुग्रीवको बगलमें दबाकर चल दिया।

उमा करत रघुपति नरलीला ❁ खेल गरुड़ जिमि अहिगन मीला ॥
भृकुटि भंग जो कालहि खाई ❁ ताहि कि सोहइ ऐसि लराई ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, श्रीरामचन्द्रजी मनुष्य-लीला कर रहे हैं; जैसे सर्पोंके समूहमें मिलकर गरुड़ खेलने लगे। भौंहको टेढ़ा करते ही जो कालको भी खा जाय, उसे क्या ऐसी लड़ाई शोभा देती है?

जगपावनि कीरति बिस्तरिहहिं ❁ गाइ गाइ भवनिधि नर तरिहहिं ॥
मुरछा गइ मारुतसुत जागा ❁ सुग्रीवहिं तब खोजन लागा ॥

वे जगतको पवित्र कर देनेवाली अपनी कीर्त्तिका विस्तार करेंगे, जिसे गा-गाकर मनुष्य संसार-सागरसे तर जायँगे। जब मूर्च्छा दूर हुई और हनुमानजी जागे तब वे सुग्रीवको खोजने लगे।

सुग्रीवहु कै मुरुछा बीती ❁ निबुकि गयउ तेहि मृतकप्रतीती ॥
काटेसि दसन नासिका काना ❁ गरजि अकास चलेउ तेहि जाना ॥

उधर सुग्रीवकी मूर्छा भी दूर हुई। कुम्भकर्णने तो सुग्रीवको मारा हुआ समझा था, पर सुग्रीव खसक पड़े और दांतोंसे उसके नाक-कान काट लिये और गरजकर आकाशकी ओर चल दिये, तब कुम्भकर्णने जाना।

गहेउ चरन धरि धरनि पछारा ❁ अतिलाघव उठि पुनि तेहि मारा ॥
पुनि आयउ प्रभु पहिं बलवाना ❁ जयति जयति जय कृपानिधाना ॥

कुम्भकर्णने सुग्रीवको पकड़ लिया और पैर पकड़कर पृथिवीपर पछाड़ दिया। सुग्रीवने बड़ी फुर्तीसे उठकर फिर उसे पछाड़ मारा। फिर बलवान् सुग्रीव प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये और बोले कि हे दयानिधान, आपकी जय हो, जय हो, जय हो।

नाक कान काटे जिय जानी ❁ फिरा क्रोध करि भइ मन ग्लानी ॥
सहज भीम पुनि बिनु स्रुति नासा ❁ देखत कपिदल उपजी त्रासा ॥

नाक-कान काट लिये, यह बात अपने जीमें जानकर कुम्भकर्ण क्रोधमें भरकर लौट आया। उसके मनमें बड़ी ग्लानि हुई। साधारण अवस्थामें ही वह डरावना था, फिर अब तो नाक और कान नहीं रहे—उसे देखते ही वानरदलमें भय उत्पन्न हो गया।

दो०—जय जय जय रघु-बंस-मनि ❁ धाये कपि दै हूह।
एकहि बार तासु पर ❁ छाँड़ेन्हि गिरि-तरु-जूह ॥६५॥

हे रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो, जय हो—इस प्रकार आनन्दध्वनि करके वन्दर दौड़े और एक साथ ही उसपर पर्वतों और वृक्षोंके समूह डाल दिये ।

कुंभकरन रनरंग बिरुद्धा ❁ सनमुख चला काल जनु क्रुद्धा ॥
कोटि कोटि कपि धरि धरि खाई ❁ जनु टीड़ी गिरिगुहा समाई ॥

युद्धक्रीड़ामें संलग्न कुम्भकर्ण रणभूमिमें सामने इस तरह चल दिया, जैसे क्रोधमें भरा हुआ काल। वह करोड़-करोड़ वन्दरोंको पकड़-पकड़कर खाने लगा मानों पर्वतकी गुहामें तिड्डियां समा रही हों ।

कोटिन्ह गहि सरीर सन मर्दा ❁ कोटिन्ह मीँजि मिलव महि गर्दा ॥
मुख नासा स्रवनन्हि की बाटा ❁ निसरि पराहिं भालु-कपि-ठाटा ॥

करोड़ोंको पकड़कर अपने शरीरसे रगड़ मारा और करोड़ोंको मींजकर पृथिवीकी धूलमें मिला दिया। उसके मुख, नाक और कानोंकी राहसे बाहर निकलकर रीछ और वन्दरोंके झुण्ड भागने लगे ।

रन-मद-मत्त निसाचर दर्पा ❁ बिस्व ग्रसिहि जनु एहि बिधि अर्पा ॥
मुरे सुभट सब फिरहिं न फेरे ❁ सूझ न नयन सुनहिं नहिं टेरे ॥

लड़ाईके मदमें मतवाला अभिमानी राक्षस इस प्रकार लड़ा;मानों यह विश्वको निगल जायगा। अच्छे-अच्छे योद्धा सब मुड़ चले। वे सब लौटाये न लौटते थे। नेत्रोंसे उन्हें दिखलायी न पड़ता था और न बुलानेपर उन्हें कुछ सुनायी ही पड़ता था।

कुंभकरन कपिफौज बिडारी ❁ सुनि धाई रजनी-चर-धारी ॥
देखी राम बिकल कटकाई ❁ रिपु अनेक नाना बिधि आई ॥

कुम्भकर्णने वानरोंकी सब सेना तितर-बितर कर दी—यह सुनकर राक्षसोंकी सेना दौड़ी। श्रीरामचन्द्रजीने देखा कि इधर वानरोंकी सेना व्याकुल हो रही है और उधर अनेक प्रकारकी शत्रु सेना आ गयी।

दो०—सुनु सुग्रीव बिभीषन ❁ अनुज संभारेहु सैन ।
मैं देखउं खल-बल-दलहिं ❁ बोले राजिवनैन ॥६०॥

कमलनयन श्रीरामचन्द्रजी बोले—हे सुग्रीव, विभीषण और लक्ष्मण, सुनो। तुम सब सेनाको संभालना, मैं इस दुष्टके वल और सेनाको देखता हूं।

कर सारंग साजि कटि भाथा ❁ अरि दल दलनि चले रघुनाथा ॥
प्रथम कीन्हि प्रभु धनुषटकोरा ❁ रिपुदल बधिर भयउ सुनि सोरा ॥

हाथमें शार्ङ्ग धनुष लेकर और कमरमें तरकस सजाकर श्रीरामचन्द्रजी सिंह-गतिसे चल दिये। पहिले प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने धनुषकी टंकार की, जिसका शब्द सुनकर शत्रुदल बधिर हो गया।

सत्यसंध छाँड़े सर लच्छा * कालसर्प जनु चले सपच्छा ॥
जहँ तहँ चले बिपुल नाराचा * लगे कटन भट बिकट पिसाचा ॥

फिर सत्यप्रतिज्ञ श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्य लगाकर बाण छोड़े। वे बाण इस तरह चल दिये; मानो पंख लगे हुए कालसर्प हों। इधर-उधर सब ओर असंख्य बाण चल दिये और उनसे विकट योद्धा राक्षस पिशाच कटने लगे।

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा * बहुतक बीर होहिं सत खंडा ॥
घुरमि घुरमि घायल बहु परहीं * उठि संभारि सुभट पुनि लरहीं ॥

किसीके पैर, किसीकी छाती, किसीका शिर और किसीके भुजदण्ड कटते थे और बहुतसे वीरोंके सौ-सौ खण्ड हो जाते थे। घायल चक्कर खा-खाकर पृथिवीपर गिरते थे और अच्छे योद्धा संभलकर उठकर फिर लड़ने लग जाते थे।

लागत बान जलद जिमि गाजहिं * बहुतक देखि कठिन सर भाजहिं ॥
रुंड प्रचंड मुंड बिनु धावहिं * धरु धरु मारु मारु धुनि गावहिं ॥

बाण लगते ही राक्षस बादलोंकी भांति गरजते थे और बहुतेरे तो कठिन बाण देखकर ही भाग जाते थे। शिर बिना ही प्रचण्ड रुण्ड दौड़ते और 'पकड़ो, मारो-मारो' का शोर मचाते थे।

दो०—छन महँ प्रभुके सायकन्हि * काटे बिकट पिसाच।
पुनि रघुबीर निषंग महँ * प्रबिसे सब नाराच ॥६१॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंने एक क्षणमें विकट पिशाचोंको काट डाला। फिर वे सब बाण आकर श्रीरामचन्द्रजीके तरकसमें घुस गये।

कुंभकरन मन दीख बिचारी * हति छन माँझ निसा-चर-धारी ॥
भयउ क्रुद्ध दारुन बल बीरा * करि मृग-नायक-नाद गंभीरा ॥

कुम्भकर्णने मनमें विचारकर देखा कि सारी राक्षससेना एक क्षणमें मार डाली। फिर वह कठोर बली और वीर क्रोधित हुआ। सिंहनादके समान गंभीर गर्जना करके—

कोपि महीधर लेइ उपारी * डारइ जहँ मर्कटभट भारी ॥
आवत देखि सैल प्रभु भारे * सरन्हि काटि रजसम करि डारे ॥

क्रोधित होकर वह पर्वतोंको उखाड़ लेता था और जहाँ भारी वानर योद्धा होते वहाँ फेंकता। भारी पर्वतोंको आता हुआ देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें बाणोंसे काटकर धूलके समान कर डाला।

पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक * छाँड़े अति कराल बहु सायक ॥
तन महुँ प्रबिसि निसरि सर जाहीं * जनु दामिनि घन माँझ समाहीं ॥

फिर क्रोधित होकर श्रीरामचन्द्रजीने धनुषको तानकर अत्यन्त भयंकर बहुतसे बाण छोड़े। शरीरमें घुसकर बाण बाहर निकल जाते थे; मानों बिजलियाँ बादलमें समा जाती हों।

सोनित स्रवत सोह तन कारे ❀ जनु कज्जलगिरि गेरुपनारे ॥
बिकल बिलोकि भालु कपि धाये ❀ बिहँसा जबहिं निकट कपि आये ॥

बहता हुआ रक्त काले शरीरपर ऐसा शोभित होता था; मानों काजलके पहाड़में गेरूके पनारे चल रहे हों। कुम्भकर्णको व्याकुल देखकर रीछ और बंदर दौड़े। जब बंदर पास आ गये तब वह हँसने लगा—

दो०—महानाद करि गरजा ❀ कोटि कोटि गहि कीस।
महि पटकइ गजराज इव ❀ सपथ करइ दससीस ॥६२॥

कुम्भकर्णने घोर शब्द करके गर्जना की और करोड़-करोड़ बंदरोंको पकड़कर मतवाले हाथीके समान पृथिवीपर पटकने और रावणकी दुहाई देने लगा।

आगे भालु-बलीमुख जूथा ❀ बृक बिलोकि जिमि मेषबरूथा ॥
चले भागि कपि भालु भवानी ❀ बिकल पुकारत आरतबानी ॥

रीछ और बंदरोंके समूह भागने लगे, जैसे भेड़ियेको देखकर भेड़ोंका झुण्ड। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, व्याकुल होकर दीन वाणीसे पुकारते हुए रीछ और बंदर भाग चले।

यह निसिचर दु-काल-सम अहई ❀ कपिकुल देस परन अब चहई ॥
कृपा बारि धर राम खरारी ❀ पाहि पाहि प्रनतारतिहारी ॥

वे कहने लगे—यह राक्षस अकालके समान है, जो अब वानर-कुलरूपी देशमें पड़ना ही चाहता है। हे कृपाके जलको रखनेवाले मेघरूपी श्रीरामचन्द्रजी, हे खर नामक दैत्यके शत्रु, हे भक्तोंके दुःखोंको दूर कर देनेवाले, मेरी रक्षा कीजिये। मेरी रक्षा कीजिये।

स-करुन-बचन सुनत भगवाना ❀ चले सुधारि सरासनबाना ॥
राम सेन निज पाछे घाली ❀ चले सकोप महा-बल-साली ॥

करुणाभरे वचन सुनते ही भगवान् श्रीरामचन्द्रजी धनुष और बाणोंको सुधारकर चल दिये। महाबलशाली श्रीरामचन्द्रजीने सेनाको अपने पीछे कर लिया और वे क्रोधमें भरकर चल दिये।

खैंचि धनुष सत सर संधाने ❀ छूटे तीर सरीर समाने ॥
लागत सर धावा रिसभरा ❀ कुधर डगमगत डोलति धरा ॥

धनुष खींचकर उन्होंने सौ बाणोंको चढ़ाया। ये बाण जब छूटे तब कुम्भकर्णके शरीरमें समा गये। बाण लगते ही कुम्भकर्ण क्रोधमें भरकर दौड़ा, जिससे पर्वत डगमगाने लगे और पृथिवी हिलने लगी।

लीन्ह एक तेहिं सैल उपाटी ❀ रघु-कुल-तिलक भुजा सोइ काटी ॥
धावा बामबाहु गिरि धारी ❀ प्रभु सोउ भुजा काटि महि पारी ॥

फिर उसने एक पर्वत उखाड़ लिया। रघुकुल-तिलक श्रीरामचन्द्रजीने उसकी वही भुजा काट डाली, जिसपर वह पर्वत था। फिर बायें हाथमें पर्वत लेकर वह दौड़ा। प्रभुने वह भुजा भी काटकर पृथिवीपर गिरा दी।

काटें भुजा सोह खल कैसा ❀ पच्छहीन मंदरगिरि जैसा ॥
उग्र बिलोकनि प्रभुहि बिलोका ❀ ग्रसन चहत मानहुँ त्रयलोका ॥

भुजाओंके कट जानेपर वह दुष्ट कैसे शोभा पा रहा था, जैसे पंखहीन मंदराचल पर्वत। बड़ी तीव्र दृष्टिसे वह प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देख रहा था; मानों तीनों लोकोंको निगल जाना चाहता हो।

दो०—करि चिक्कार अति घोर तर ❀ धावा बदन पसारि।
गगन सिद्ध सुर त्रसित सब ❀ हा हा होति पुकारि ॥ ९३ ॥

अत्यन्त घोर चीत्कारकर वह मुंह फैलाकर दौड़ा। आकाशमें सिद्धजन और देवता भयभीत हो गये और 'हाय! हाय!!' की चिल्लाहट होने लगी।

सभय देव करुनानिधि जानेउ ❀ स्रवन प्रजंत सरासन तानेउ ॥
बिसिखनिकर निसि-चर-मुख भरेऊ ❀ तदपि महाबल भूमि न परेऊ ॥

करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीने जब यह जाना कि देवता भयभीत हैं तब धनुषको कानोंतक खींचा और बाणोंके झुण्डसे यद्यपि उन्होंने राक्षसका मुख भर दिया तथापि वह महाबली पृथिवीपर नहीं गिरा।

सरन्हि भरा सो सनमुख धावा ❀ कालत्रोन सजीव जनु आवा ॥
तब प्रभु कोपि तीव्र सर लीन्हा ❀ धर तें भिन्न तासु सिर कीन्हा ॥

बाणोंसे भरे हुए मुखसमेत वह सामने दौड़ा; मानों कालरूपी सजीव तरकस आ रहा हो। तब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधित होकर एक तीव्र बाण लिया और उसका शिर धड़से अलग कर दिया।

सो सिरु परेउ दसानन आगे ❀ बिकल भयउ जिमि फनि मनि त्यागे ॥
धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा ❀ तब प्रभु काटि कीन्ह दुइ खंडा ॥

वह शिर रावणके आगे जाकर गिरा। उसे देखते ही रावण व्याकुल हो गया; जैसे मणि छूट जानेपर सर्प व्याकुल हो जाता है। कुम्भकर्णके धड़के बड़े भयंकर वेगसे दौड़ते ही जब पृथिवी धसकने लगी तब प्रभुने काटकर उसके दो खण्ड कर दिये।

परे भूमि जिमि नभ तें भूधर ❀ हेठ दाबि कपि भालु निसाचर ॥
तासु तेज प्रभुबदन समाना ❀ सुर मुनि सबहिं अचंभो माना ॥

ये दोनों खण्ड पृथिवीपर गिर पड़े; जैसे आकाशसे पर्वत गिर पड़े हों। उसके नीचे रीछ, वन्दर और राक्षस दब गये। उसका तेज प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके श्रीमुखमें समा गया, इसका आश्चर्य देवता और मुनिजन—सबको हुआ।

सुर दुंदुभीं बजावहिं हरषहिं ❀ अस्तुति करहिं सुमन बहु बरषहिं ॥
करि बिनती सुर सकल सिधाये ❀ तेही समय देवरिषि आये ॥

देवता प्रसन्न होने, नगारे बजाने, स्तुति करने और बहुतसे फूल बरसाने लगे। सब देवता प्रार्थना करके जिस समय विदा हुए उसी समय देवर्षि नारदजी आ गये।

गगनोपरि हरि-गुन-गन गाये ❀ रुचिर बीररस प्रभुमन भाये ॥
बेगि हतहु खल कहि मुनि गये ❀ रामु समर महि सोहत भये ॥

आकाशमें ही ठहरकर उन्होंने सुन्दर वीररसपूर्ण भगवान्‌के गुणगणोंको गाया, जो प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके मनको प्रिय लगे। मुनि यह कहकर चले गये कि दुष्टोंको शीघ्र मारिये और श्रीरामचन्द्रजी रणभूमिमें शोभित हुए।

छं०—संग्रामभूमि बिराज रघुपति अतुलबल कोसलधनी।
श्रमबिंदु मुख राजीवलोचन अरुन तन सोनितकनी ॥
भुजजुगल फेरत सरसरासन भालु कपि चहुँ दिसि बने।
कह दास तुलसी कहि न सक छबि सेष जेहि आनन घने ॥

कोशलदेशके स्वामी अतुल बलवाले श्रीरामचन्द्रजी रणभूमिमें विराजमान हैं। उनके मुखपर पसीनेकी बूँदें हैं, कमलके समान नेत्र लाल हो रहे हैं और शरीरपर रक्तके छींटे पड़े हुए हैं, दोनों भुजाओंसे वे धनुषबाण फिरा रहे हैं और उनकी चारों दिशाओंमें रीछ और वन्दर शोभित हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीकी उस समयकी शोभाको शेषनाग भी नहीं कह सकते, जिनके बहुतसे मुख हैं।

दो०—निसिचर अधम मलाकर ❀ ताहि दीन्ह निज धाम।
गिरिजा ते नर मंदमति ❀ जे न भजहिं श्रीराम ॥ ६४ ॥

कुम्भकर्ण राक्षस, नीच और पापकी खान था, उसे श्रीरामचन्द्रजीने अपना धाम—वैकुण्ठ दिया। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, वे मनुष्य मन्दबुद्धि हैं जो श्रीरामचन्द्रजीका भजन नहीं करते।

दिन के अंत फिरीं दोउ अनी ❀ समर भई सुभटन्ह स्रम घनी ॥
रामकृपा कपिदल बल बाढ़ा ❀ जिमि तृन पाइ लाग अति डाढ़ा ॥

दिनके अन्तमें दोनों सेनाएँ लौटीं। आजके संग्राममें अच्छे योद्धाओंको बहुत परिश्रम उठाना पड़ा। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे वानरोंकी सेनाका बल बढ़ा; जैसे फूसको पाकर आगकी ज्वालाएँ खूब बढ़ती हैं।

छीजहिं निसिचर दिन अरु राती ❀ निज मुख कहे सुकृत जेहि भांती॥
बहु बिलाप दसकंधर करई ❀ बंधुसीस पुनि पुनि उर धरई॥

दिन और रात, प्रत्येक समय राक्षस उसी प्रकार नष्ट होने लगे; जिस प्रकार अपने मुखसे कहनेसे पुण्य। रावण बहुत विलाप करने और भाई कुम्भकर्णके शिरको बारबार हृदयसे लगाने लगा।

रोवहिं नारि हृदय हति पानी ❀ तासु तेज बल बिपुल बखानी॥
मेघनाद तेहि अवसर आवा ❀ कहि बहु कथा पिता समुझावा॥

कुम्भकर्णके तेज और बहुतसे बलका बखान करके स्त्रियां हाथसे अपनी छाती पीट-पीटकर रोने लगीं। उसी समय मेघनाद आया और बहुतसी कथाएँ कहकर पिता रावणको समझाया।

देखेहु कालि मोरि मनुसाई ❀ अबहिं बहुत का करउँ बड़ाई॥
इष्टदेव सों बल रथ पायउँ ❀ सो बल तात न तोहि देखायउँ॥

वह बोला—अभी बहुत बड़ाई क्या करूं? कल मेरा पुरुषार्थ देखियेगा। हे तात, मैंने अपने इष्टदेवसे जो बल और रथ पाया है, वह बल आपको नहीं दिखलाया है।

एहि बिधि जलपत भयउ बिहाना ❀ चहुं दुआर लागे कपि नाना॥
इत कपि भालु कालसम बीरा ❀ उत रजनीचर अति-रन-धीरा॥
लरहिं सुभट निज निज जय हेतू ❀ बरनि न जाइ समर खगकेतू॥

इस प्रकार बकवाद करते सवेरा हुआ। बहुतसे बन्दर गढ़के चारों फाटकोंसे लग गये। इधर रीछ और बन्दर वीर कालके समान थे, उधर राक्षस थे जो रणमें अत्यन्त धीर थे। कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, संग्रामका वर्णन नहीं किया जाता। सब योद्धा अपने-अपने पक्षकी विजयके लिये लड़ रहे थे।

दो०—मेघनाद मायामय ❀ रथ चढ़ि गयउ अकास।
गर्जेउ अट्टहास करि ❀ भइ कपिकटकहि त्रास॥ ८५॥

मायावी मेघनाद रथपर चढ़कर आकाशमें गया और अट्टहास करके गरजा, जिससे वानरोंकी सेनामें डर छा गया।

सक्ति सूल तरवारि कृपाना ❀ अस्त्र सस्त्र कुलिसायुध नाना॥
डारइ परसु परिघ पाषाना ❀ लागेउ बृष्टि करइ बहु बाना॥

शक्ति, शूल, तलवार, कृपाण आदि शस्त्रास्त्र, वज्र आदि तरह-तरहके हथियार और फरसा, परिघ, पत्थर— सबको मेघनाद गिराने और बहुतसे बाणोंकी वर्षा करने लगा।

दस दिसि रहे बान नभ छाई ❀ मानहुं मघा मेघ झरि लाई ॥
धरु धरु मारु सुनिअ धुनि काना ❀ जो मारइ तेहि कोउ न जाना ॥

आकाशमें दशों दिशाओंमें बाण छा रहे थे, मानों मघा नक्षत्रके बादलोंसे झड़ी लग रही हो। कानोंसे यह ध्वनि सुनायी पड़ती थी कि पकड़ो· पकड़ो, मारो, परन्तु जो मारता था उसे कोई न जानता था।

गहि गिरि तरु अकास कपि धावहिं ❀ देखहिं तेहि न दुखित फिरि आवहिं ॥
अवघट घाट बाट गिरि कंदर ❀ मायाबल कीन्हेसि सरपंजर ॥

पर्वत और वृक्ष लेकर बन्दर आकाशकी ओर दौड़ते थे; पर उसे जब न देख पाते, तब दुःखित होकर लौट आते थे। ऊँचे-नीचे स्थानों, मार्गों, पहाड़ों, गुहाओं—मेघनादने मायाके बलसे सबको बाणोंका पींजरा बना दिया।

जाहिं कहां भये ब्याकुल बंदर ❀ सुरपति बंदि परे जनु मंदर ॥
मारुतसुत अंगद नल नीला ❀ कीन्हेसि बिकल सकल बलसीला ॥

सब बन्दर इस भयसे व्याकुल हो गये कि कहाँ जावें; मानों देवराज इन्द्रकी कैदमें मन्दराचल पड़ गया हो। हनुमान, अंगद, नल और नील—सभी बलवान् वानरोंको व्याकुल कर दिया।

पुनि लछिमन सुग्रीवं बिभीषन ❀ सरन्हि मारि कीन्हेसि जर्जरतन ॥
पुनि रघुपति सन जूझइ लागा ❀ सर छाड़इ होइ लागहिं नागा ॥

फिर लक्ष्मण, सुग्रीव और विभीषणको बाणोंसे मारकर जर्जरशरीर कर दिया। फिर वह श्रीरामचन्द्रजीसे युद्ध करने लगा। वह जो बाण छोड़ता था वे सर्प होकर लगते थे।

ब्याल-पास-बस भयउ खरारी ❀ स्वबस अनंत एक अबिकारी ॥
नट इव कपटचरित कर नाना ❀ सदा स्वतंत्र एक भगवाना ॥
रनसोभा लगि प्रभुहिं बंधावा ❀ देखि दसा देवन्ह भय पावा ॥

खर दैत्यको मारनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, जो अपने ही अधीन, अनंत, एक और विकार-रहित हैं, नागपासके वशमें हो गये। भगवान् सर्वदा स्वतंत्र और एक हैं; पर वे नटके समान अनेक प्रकारके कपटचरित करते हैं। युद्धकी शोभाके लिये प्रभुने स्वयं बँधा लिया। उनकी वह दशा देखकर देवता डर गये।

दो०—खगपति जाकर नामु जपि ❀ मुनि काटहिं भवपास ।
सो प्रभु आव कि बंध तर ❀ ब्यापक बिस्वनिवास ॥ ९६ ॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, जिसके नामको जपकर मुनिजन अपना संसार-पाश काट डालते हैं वह सर्वव्यापक जगन्निवास परमात्मा क्या बंधनके नीचे आ सकता है ?

चरित राम के सगुन भवानी ❀ तरकि न जाहिं बुद्धि बल बानी ॥
अस बिचारि जे तज्ञ बिरागी ❀ रामहिं भजहिं तर्क सब त्यागी ॥

हे भवानी, श्रीरामचन्द्रजीके सगुण चरित्रोंपर विद्या और बुद्धि-बलसे तर्क नहीं किया जा सकता। यही विचारकर जो उनको जाननेवाले विरागी हैं, वे सब तर्क छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करते हैं।

ब्याकुल कटक कीन्ह घननादा ❀ पुनि भा प्रगट कहइ दुर्बादा ॥
जामवंत कह खल रहु ठाढ़ा ❀ सुनि करि ताहि क्रोध अति बाढ़ा ॥

मेघनादने जब सब सेना व्याकुल कर दी, तब वह फिर प्रकट हुआ और दुर्वचन कहने लगा। जाम्बवान्ने ललकारकर कहा कि अरे दुष्ट, खड़ा रह। यह सुनकर उसे बड़ा क्रोध बढ़ा।

बूढ़ जानि सठ छाड़ेउँ तोही ❀ लागेसि अधम प्रचारइ मोही ॥
अस कहि तीव्र त्रिसूल चलावा ❀ जामवंत कर गहि सोइ धावा ॥

मेघनाद बोला—अरे दुष्ट, बूढ़ा समझकर तुझे छोड़ दिया। नीच, तू मुझे ललकारने लगा? ऐसा कहकर उसने एक तेज त्रिशूल चलाया। जाम्बवान् उसे हाथमें लेकर दौड़े और—

मारेसि मेघनाद कै छाती ❀ परा धरनि घुमित सुरघाती ॥
पुनि रिसान गहि चरन फिरावा ❀ महि पछारि निज बल देखरावा ॥

उसे मेघनादकी छातीमें मार दिया, जिससे वह देवघातक राक्षस चक्कर खाकर पृथिवीपर गिर पड़ा। फिर क्रोधित होकर जाम्बवान्ने उसे पैर पकड़कर घुमाया और पृथिवीपर उसे पछाड़कर अपना बल दिखलाया।

बरप्रसाद सो मरइ न मारा ❀ तब गहि पद लंका पर डारा ॥
इहाँ देवरिषि गरुड़ पठावा ❀ रामसमीप सपदि सो आवा ॥

वरदानके प्रभावसे जब वह मारे न मरा तब पैर पकड़कर उसे लंकापर फेंक दिया। इधर देवर्षि नारदने गरुड़को भेजा, जो शीघ्र ही श्रीरामचन्द्रजीके पास आये।

दो०—खगपति सब धर खाये ❀ माया - नाग - बरूथ ।
माया बिगत भये सब ❀ हरषे बानरजूथ ॥६७॥

पक्षिराज गरुड़, समस्त मायावी सर्पोंके झुण्डोंको पकड़कर खा गये। सबकी माया दूर हो गयी और वानरोंके समूह प्रसन्न हुए

गहि गिरि पादप उपल नख ❀ धाये कीस रिसाइ ।
चले तमीचर विकलतर ❀ गढ़ पर चढ़े पराइ ॥६८॥

क्रोधित होकर बंदर पर्वत, वृक्ष, पत्थर और नख लेकर दौड़े । राक्षस अत्यन्त व्याकुल होकर चल दिये और भागकर गढ़पर चढ़ गये ।

मेघनाद कै मुरछा जागी ❀ पितहि बिलोकि लाज अति लागी ॥
तुरत गयेउ गिरि-बर-कंदरा ❀ करउँ अजय मख अस मन धरा ॥

उधर जब मेघनादकी मूर्च्छा दूर हुई, तब पिताको देखकर उसे बड़ी लज्जा आई । उसने मनमें यह निश्चय किया कि मैं अजय-यज्ञ करूँगा । फिर वह तुरंत एक पर्वतकी सुन्दर कन्दरामें चला गया ।

इहाँ बिभीषन मंत्र बिचारा ❀ ...

सो सुधि पाइ बिभीषन कहई ❀ सुनु प्रभु समाचार अस अहई ॥
मेघनाद मख करइ अपावन ❀ खल मायावी देवसतावन ॥

यह खबर पाकर विभीषण रामचन्द्रजीसे कहने लगा कि हे प्रभो, समाचार यह है, सुनिये, दुष्ट, मायावी और देवताओंको सतानेवाला मेघनाद अपवित्र यज्ञ कर रहा है ।

जौं प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि ❀ नाथ बेगि रिपु जीति न जाइहि ॥
सुनि रघुपति अतिसयसुख माना ❀ बोले अंगदादि कपि नाना ॥

हे प्रभो, यदि वह सिद्ध हो जायगा, तो फिर वह, हे स्वामिन्, शीघ्र ही जीता न जा सकेगा । विभीषणकी यह सलाह सुनकर श्रीरामचन्द्रजीको बड़ा सुख हुआ और उन्होंने अंगद आदि बहुतसे वानरोंको बुलाया ।

लछिमन संग जाहु सब भाई ❀ करहु बिधंस जग्य कर जाई ॥
तुम्ह लछिमन मारेहु रन ओही ❀ देखि सभय सुर दुख अति मोही ॥

हे भाई, तुम सब लक्ष्मणके साथ जाओ, और जाकर यज्ञका विध्वंस कर डालो । हे लक्ष्मण, तुम उसे युद्धमें मार डालना । देवताओंको भयभीत देखकर मुझे बड़ा दुःख होता है ।

मारेहु तेहि बल बुद्धि उपाई ❀ जेहि छीजइ निसिचर सुनु भाई ॥
जामवंत सुग्रीव बिभीषन ❀ सेन समेत रहेउ तीनिउँ जन ॥

हे भाई, सुनो, उसे बल, बुद्धि और उपायसे मारना, जिससे वह राक्षस नष्ट हो जावे । हे जाम्बवान, सुग्रीव और विभीषण—तुम तीनों सेनासमेत साथ रहना ।

जब रघुबीर दीन्हि अनुसासन ❀ कटि निषंग कसि साजि सरासन ॥
प्रभुप्रताप उर धरि रनधीरा ❀ बोले घन इव गिरा गँभीरा ॥

जब श्रीरामचन्द्रजीने आज्ञा दी, तब कमरमें तरकस कसकर और धनुषबाण सजाकर रणधीर लक्ष्मणजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापको हृदयमें धारणकर मेघकी भांति गंभीर वाणी बोले—

जौं तेहि आजु बधे बिनु आवउं ❀ तौ रघु-पति-सेवक न कहावउं ॥
जौं सत शंकर करहिं सहाई ❀ तदपि हतउं रघु-बीर-दोहाई ॥

यदि आज उसे मारे विना आऊं, तो मैं श्रीरामचन्द्रजीका सेवक कहलाना छोड़ दूं। मुझे श्रीरामचंद्रजीकी दुहाई है—यदि सौ शिवजी भी उसकी सहायता करेंगे, तोभी मैं उसे मार डालूंगा।

दो०—बंदि राम-पद-कमल जुग ❀ चलेउ तुरंत अनंत।
अंगद नील मयंद नल ❀ संग ऋषभ हनुमन्त ॥६६॥

श्रीरामचन्द्रजीके दोनों कमलरूपी चरणोंकी वन्दनाकर अनंत-स्वरूप लक्ष्मणजी तुरन्त चल दिये। उनके संगमें अंगद, नील, मयंद, ऋषभ और हनुमान आदि योद्धा थे।

जाइ कपिन्ह सो देखा बैसा ❀ आहुति देत रुधिर अरु भैंसा ॥
कीन्ह कपिन्ह सब जज्ञ बिधंसा ❀ जब न उठइ तब करहिं प्रसंसा ॥

जाकर बन्दरोंने उसे देखा, वह बैठा हुआ रक्त और भैंसोंकी आहुति दे रहा था। बन्दरोंने सब यज्ञ विध्वंस कर दिया। फिर भी जब वह न उठा, तब वे उसकी प्रशंसा करने लगे।

तदपि न उठइ धरन्हि कच जाई ❀ लातन्हि हति-हति चले पराई ॥
लेइ त्रिसूल धावा कपि भागे ❀ आये जहं रामानुज आगे ॥

इतनेपर भी जब वह नहीं उठा, तब जाकर बन्दरोंने उसके बाल पकड़ लिये और लातोंसे मार-मारकर भाग गये। तब मेघनाद त्रिशूल लेकर दौड़ा, जिससे सब बन्दर भाग गये और वहां पहुंचे, जहां पहिलेसे ही श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजी थे।

आवा परम क्रोध कर मारा ❀ गज घोररव बारहिं बारा ॥
कोपि मरुतसुत अंगद धाये ❀ हति त्रिसूल उर धरनि गिराये ॥

मेघनाद अत्यन्त क्रोधका मारा हुआ वहां आया और घोर शब्द करके बारबार गरजने लगा। अंगदजी और हनुमानजी क्रोधित होकर दौड़े, जिन्हें छातीमें त्रिशूल मारकर उसने धरतीपर गिरा दिया।

प्रभु कहं छाड़ेसि सूल प्रचंडा ❀ सर हति कृत अनंत जुग खंडा ॥
उठि बहोरि मारुति जुबराजा ❀ हतहिं कोपि तेहि घाउ न बाजा ॥

प्रभु लक्ष्मणजीपर भी उसने प्रचंड शूल छोड़ा, परन्तु अनन्तरूप लक्ष्मणजीने बाणसे काटकर उसके दो

खण्ड कर दिये। हनुमानजी और युवराज अंगद फिर उठे और क्रोधित होकर उसे मारने लगे, परन्तु उसको घाव भी नहीं लगा।

फिरे बीर रिपु मरइ न मारा ❀ तब धावा करि घोर चिकारा ॥
आवत देखि क्रुद्ध जनु काला ❀ लछिमन छाड़े बिसिख कराला ॥

शत्रु मारनेसे भी न मरता था, इसलिये जब योद्धा लौट पड़े, तब वह राक्षस घोर चीत्कार करके दौड़ा। लक्ष्मणजीने उसे कालके समान क्रोधमें भरा हुआ आते देखकर तीव्र बाणोंको छोड़ा।

देखेसि आवत पबिसम बाना ❀ तुरत भयउ खल अंतरधाना ॥
बिबिध बेष धरि करइ लराई ❀ कबहुँक प्रगट कबहुँ दुरि जाई ॥

वज्रके समान बाणोंको जब आते देखा, तब वह दुष्ट तुरन्त ही अन्तर्धान हो गया। तरह-तरहके भेष धरकर वह युद्ध करने लगा। कभी वह प्रकट हो जाता था और कभी छिप जाता था।

देखि अजय रिपु डरपे कीसा ❀ परम क्रुद्ध तब भयउ अहीसा ॥
एहि पापिहिं मैं बहुत खेलावा ❀ लछिमन मन अस मंत्र दृढ़ावा ॥

शत्रुको अजेय देखकर बन्दर डर गये। तब शेषरूप लक्ष्मणजी अत्यन्त क्रोधित हुए। इस पापीको मैंने बहुत खिलाया—यह विचार लक्ष्मणजीने अपने मनमें पक्का किया।

सुमिरि कोसलाधीस-प्रतापा ❀ सरसंधान कीन्हि करि दापा ॥
छाँड़ेउ बान माझ उर लागा ❀ मरती बार कपट सब त्यागा ॥

कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापका स्मरणकर उन्होंने अभिमानपूर्वक बाण चढ़ाया। फिर वह बाण छोड़ दिया और वह छातीके बीचमें जा लगा। मरते समय मेघनादने सब कपट छोड़ दिया।

दो०—रामानुज कहँ राम कहँ ❀ अस कहि छाँड़ेसि प्रान।
धन्य धन्य तव जननी ❀ कह अंगद हनुमान ॥१००॥

श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई लक्ष्मणजी कहाँ हैं, श्रीरामचन्द्रजी कहाँ हैं—इस प्रकार कहकर मेघनादने प्राण छोड़ दिये। अंगदजी और हनुमानजी कहने लगे—तेरी माताको धन्य है, धन्य है।

बिनु प्रयास हनुमंत उठावा ❀ लंकाद्वार राखि तेहि आवा ॥
तासु मरन सुनि सुर गंधर्बा ❀ चढ़ि बिमान आये नभ सर्बा ॥

हनुमानजीने परिश्रम बिना ही उसे उठा लिया और लंका-गढ़के द्वारपर उसे रख आये। उसका मरना सुनकर सब देवता और गन्धर्व विमानोंपर चढ़कर आकाशमें आये।

बरषि सुमन दुंदुभी बजावहिं ❀ श्री-रघुबीर-बिमल-जस गावहिं ॥
जय अनंत जय जगदाधारा ❀ तुम्ह प्रभु सब देवन्ह निस्तारा ॥

वे सब फूल बरसाकर नगारे बजाने और श्रीरामचन्द्रजीके निर्मल यशको गाने लगे—हे अनन्त, आपकी जय हो। हे संसारके आधार, आपकी जय हो। हे प्रभो, आपने सब देवताओंका निस्तार कर दिया।

अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाये ❀ लछिमनु कृपासिंधु पहिं आये ॥
सुतबध सुना दसानन जबहीं ❀ मुरछित भयउ परेउ महि तबहीं ॥

स्तुति करके देवता और सिद्धजन उधर विदा हुए और इधर लक्ष्मणजी दयासागर श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। रावणने ज्योंही पुत्रके मारे जानेका समाचार सुना, त्योंही मूर्च्छित हो गया और पृथिवीपर गिर पड़ा।

मंदोदरी रुदन करि भारी ❀ उर ताड़त बहु भाँति पुकारी ॥
नगर लोग सब ब्याकुल सोचा ❀ सकल कहहिं दसकंधर पोचा ॥

मन्दोदरी फूट-फूटकर रोने और बहुत तरहसे पुकारकर छाती कूटने लगी। नगरके सब लोग सोचसे व्याकुल हो गये और सभी यह कहने लगे कि रावण नीच है।

दो०—तब लंकेस अनेक बिधि ❀ समुझाईं सब नारि।
नस्वररूप जगत सब ❀ देखहु हृदय बिचारि ॥ १०१ ॥

तब रावणने अनेक प्रकारसे सब स्त्रियोंको समझाया और कहा कि हृदयमें विचारकर देखो—यह सब जगत नश्वर-रूप है।

तिन्हहिं ज्ञान उपदेसा रावन ❀ आपुनु मंद कथा सुभ भावन।
परउपदेस कुसल बहुतेरे ❀ जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥

रावणने उन्हें तो ज्ञानोपदेश किया, परन्तु स्वयं अपने लिये उसे बुरी बातें ही शुभ और प्रिय लगती थीं। दूसरोंको उपदेश देनेमें कुशल तो बहुत मनुष्य हैं, परन्तु ऐसे मनुष्य बहुत नहीं हैं, जो स्वयं आचरण करते हों।

निसा सिरानि भयउ भिनुसारा ❀ लगे भालु कपि चारिहुँ द्वारा ॥
सुभट बोलाइ दसानन बोला ❀ रनसनमुख जाकर मन डोला ॥

रात बीती और सवेरा हुआ। रीछ और बन्दर चारों फाटकोंपर आ लगे। योद्धाओंको बुलाकर रावण बोला—संग्राममें शत्रुके सामने जिसका मन डावांडोल हो—

सो अबहीं बरु जाउ पराई ❀ संजुगबिमुख भये न भलाई।
निज-भुज-बल मैं बयरु बढ़ावा ❀ देइहउँ उतरु जो रिपु चढ़ि आवा ॥

वह यहाँसे चाहे अभी भाग जाय; परन्तु युद्धसे विमुख होनेसे भलाई न होगी ! मैंने अपनी भुजाओंके बलपर वैर बढ़ाया है ! जो शत्रु चढ़कर आया है, उसे मैं उत्तर दूंगा ।

अस कहि मरुतबेग रथु साजा ❀ बाजे सकल जुझाऊ बाजा ॥
चले बीर सब अतुलित बली ❀ जनु कज्जल कै आंधी चली ॥
असगुन अमित होहिं तेहि काला ❀ गनइ न भुजबल गर्ब बिसाला ॥

ऐसा कहकर रावणने हवाके समान वेगवाला रथ सजाया । सब जुझाऊ बाजे बजने लगे । अतुलित बलवाले सब वीर राक्षस चल दिये, मानों काजलकी आंधी चली हो । उस समय असंख्य अपशकुन होने लगे, परन्तु वह उन्हें गिनता न था, उसे अपनी भुजाओंके बलका बड़ा अभिमान था ।

छं०—अतिगर्ब गनइ न सगुन असगुन स्रवहिं आयुध हाथ तें ।
भट गिरत रथ तें बाजि गज चिक्करत भागहिं साथ तें ॥
गोमायु गीध कराल खररव स्वान रोवहिं अति घने ।
जनु कालदूत उलूक बोलहिं बचन परमभयावने ॥

अत्यन्त घमण्डमें शकुन और अपशकुन एक भी न गिनता था । हाथसे हथियार खसकते थे, रथोंसे योद्धा गिरते थे, हाथी और घोड़े चीत्कार करते और साथ छोड़कर भागते थे, गीदड़ और गीध भयंकर कर्कश शब्द करते थे, कुत्ते बहुत ही अधिक रोते थे और उल्लू अत्यन्त डरावनी बोली बोलते थे; मानों वे कालके दूत हों ।

दो०—ताहि कि संपति सगुन सुभ ❀ सपनेहुं मन बिस्राम ।
भूत - द्रोह - रत मोहबस ❀ रामबिमुख रतकाम ॥१०२॥

जो प्राणियोंसे द्रोह करनेमें लगा हुआ हो, मोहके वशमें हो, श्रीरामचन्द्रजीके प्रतिकूल हो और कामासक्त हो, उसे क्या संपत्ति और शुभ शकुन हो सकते हैं और क्या स्वप्नमें भी मनको विश्राम मिल सकता है ?

चलेउ निसा - चर - कटकु अपारा ❀ चतुरंगिनी अनी बहुधारा ॥
बिबिध भाँति बाहन रथ जाना ❀ बिपुल बरन पताक ध्वज नाना ॥

राक्षसोंकी अपार सेना चल दी । उसमें चतुरंगिणी सेनाकी बहुत श्रेणियां थीं । तरह-तरहकी सवारियां, रथ और विमान थे । अनेक रंगोंकी बहुतसी ध्वजा-पताकाएं थीं ।

चले मत्त गजजूथ घनेरे ❀ प्राबिट - जलद मरुत जनु प्रेरे ॥
बरन बरन बिरदैत्य निकाया ❀ समरसूर जानहिं बहु माया ॥

मतवाले हाथियोंके बहुतसे झुण्ड चल दिए, मानों हवाद्वारा उड़ाये हुए वर्षा-कालके बादल हों। भांति भांतिके बाना बांधनेवाले राक्षसोंके समूह थे, जो रणवीर और बहुत तरहकी माया जाननेवाले थे।

अति बिचित्र बाहनी बिराजी ❀ बीर बसंत सेन जनु साजी ॥
चलत कटक दिगसिंधुर डगहीं ❀ छुभित पयोधि कुधर डगमगहीं ॥

यह अत्यन्त विचित्र सेना बहुत शोभित हुई; मानों वीर वसंतने अपनी सेनाको सजाया हो! सेनाके चलते ही दिग्गज डगमगाने लगे, समुद्र क्षुब्ध हो उठे और पहाड़ कांपने लगे।

उठी रेनु रबि गयउ छपाई ❀ पवन थकित बसुधा अकुलाई ॥
पनव निसान घोररव बाजहिं ❀ प्रलयसमय के घन जनु गाजहिं ॥

जो धूल उड़ी, उससे सूर्य छिप गया! हवा थकित हो गयी! पृथिवी व्याकुल हो गयी! घोर शब्द करके ढोल और नगारे बजने लगे, मानों प्रलयकालके बादल गरज रहे हों।

भेरि नफीरि बाज सहनाई ❀ मारू राग सुभट सुखदाई ॥
केहरिनाद बीर सब करहीं ❀ निज निज बल पौरुष उच्चरहीं ॥

भेरियों, नफीरियों और सहनाइयोंमें योद्धाओंको सुख देनेवाला मारूराग बजने लगा। सब वीर सिंहनाद करते और अपने-अपने बल और पुरुषार्थका बखान करते थे।

कहइ दसानन सुनहु सुभट्टा ❀ मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा ॥
हौं मारिहउँ भूप दोउ भाई ❀ अस कहि सनमुख फौज रेंगाई ॥
यह सुधि सकल कपिन्ह जब पाई ❀ धाये करि रघु-बीर-दोहाई ॥

रावण कहने लगा—हे वीरो, सुनो! रीछ और वानरोंके झुण्डोंको रगड़ डालो! मैं राजाओं—दोनों भाइयोंको मारूंगा—रावणने ऐसा कहकर सेनाको सामने चलाया। बन्दरोंने जब यह सब समाचार पाया, तब श्रीरामचन्द्रजीकी दुहाई देकर दौड़े।

छं०—धाये बिसाल कराल मरकट भालु काल समान ते।
मानहु सपच्छ उड़ाहिं भूधरबृंद नाना बान ते ॥
नख-दसन-सैल- महाद्रुमायुध सबल संक न मानहीं।
जय राम रावन-मत्त-गज-मृग - राज सुजस बखानहीं ॥

अत्यन्त विशाल और भयंकर रीछ और वन्दर दौड़े; मानों पंख लगे हुए पहाड़ोंके समूह अनेक बाणोंके लगनेसे उड़ते हों, वे सब कालके समान थे! उनके नख, दांत, पहाड़ और बड़े-बड़े वृक्ष शस्त्रास्त्र थे। वे बड़े

बलवान थे और डरते न थे। वे सब रावणरूपी मतवाले हाथीके लिये सिंहके समान श्रीरामचन्द्रजीकी जय बोलते और उनके सुयशका वर्णन करते थे।

दो०—दुहु दिसि जयजयकार करि ❀ निज निज जोरी जानि।
भिरे बीर इत रघुपतिहि ❀ उत रावनहि बखानि ॥ १०३ ॥

दोनों ही ओरसे जयजयकार करके अपने-अपने जोड़का योद्धा जानकर इधर श्रीरामचन्द्रजीकी और उधर रावणकी प्रशंसा करके सब वीर भिड़ गये।

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा ❀ देखि बिभीषन भयउ अधीरा ॥
अधिक प्रीति मन भा संदेहा ❀ बंदि चरन कह सहित सनेहा ॥

रावण रथपर आरूढ़ है और श्रीरामचन्द्रजी रथहीन हैं—यह देखकर विभीषण अधीर हो गया। अधिक प्रीति होनेसे मनमें संदेह हो गया और प्रभुके चरणोंकी वंदना कर प्रेमके साथ कहने लगा—

नाथ न रथु नहिं तनु पदत्राना ❀ केहि बिधि जितब बीर बलवाना ॥
सुनहु सखा कह कृपानिधाना ❀ जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना ॥

हे नाथ, आपके पास न तो रथ है, और न आपके पांवमें जूते हैं। इस बलवान वीरको आप किस प्रकार जीतेंगे? कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे कि हे मित्र, सुनो; जिससे जय होती है वह रथ दूसरा ही है।

सौरज धीरज तेहि रथ चाका ❀ सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ॥
बल बिबेक दम परहित घोरे ❀ छमा कृपा समता रजु जोरे ॥

शौर्य और धैर्य उस रथके पहिये हैं। सत्य और शील मजबूत ध्वजा और पताका हैं। बल, विवेक, दंभ और परोपकार—ये उसके घोड़े हैं, जो क्षमा, कृपा और समतारूपी रस्सियोंसे जुते हुए हैं।

ईसभजन सारथी सुजाना ❀ बिरति चर्म संतोष कृपाना ॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा ❀ बर बिग्यान कठिन कोदंडा ॥

ईश्वरका भजन ही चतुर सारथी है। वैराग्य ढाल और संतोष तलवार है, दान फरसा, बुद्धि प्रचंड शक्ति और श्रेष्ठ विज्ञान कठिन धनुष है।

अमल अचल मन त्रोनसमाना ❀ सम जम नियम सिलीमुख नाना ॥
कवच अभेद बिप्र-गुरु-पूजा ❀ एहि सम बिजयउपाय न दूजा ॥
सखा धर्ममय अस रथ जाके ❀ जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥

निर्मल और स्थिर मन तरकसके समान है, शम,यम और नियम अनेक बाण हैं। ब्राह्मणों और गुरुकी पूजा अभेद्य कवच है। इसके समान विजयका उपाय अन्य कोई नहीं है। हे सखा, ऐसा धर्ममय रथ जिसके पास है, उसको जीतनेके लिये कहीं शत्रु नहीं है।

दो०—महा अजय संसाररिपु ❀ जीति सकइ सो बीर।
जा कें अस रथ होइ दृढ़ ❀ सुनहु सखा मतिधीर ॥१०४॥

हे धीर बुद्धिवाले सखा, सुनो, यह संसाररूपी शत्रु अत्यंत अजेय है, परंतु वही वीर इसे जीत सकता है, जिसके पास इस तरहका मजबूत रथ हो।

सुनत बिभीषन प्रभु बचन ❀ हरषि गहे पद्कंज।
एहि मिसि मोहि उपदेस दिय ❀ रामकृपा सुखपुंज ॥१०५॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर विभीषणने प्रसन्न होकर चरण-कमल पकड़ लिये और कहा कि हे दया और सुखके पुंज श्रीरामचन्द्रजी! आपने इसी बहाने मुझे उपदेश दिया है।

उत प्रचार दसकंधर ❀ इत अंगद हनुमान।
लरत निसाचर भालु कपि ❀ करि निज निज प्रभु आन॥१०६॥

उधर रावण ललकारता था और इधर अंगदजी और हनुमानजी! अपने-अपने प्रभुकी दुहाई देकर राक्षस और रीछ-बन्दर लड़ रहे थे।

सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना ❀ देखत रन नभ चढ़े बिमाना ॥
हमहू उमा रहे तेहि संगा ❀ देखत रामचरित - रन - रंगा ॥

ब्रह्मा आदि देवता और बहुतसे सिद्ध-मुनिजन विमानोंपर चढ़े हुए आकाशसे युद्ध देख रहे थे। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, हम भी उनके साथ थे और युद्धभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीकी लीला देख रहे थे।

सुभट समर रस दुहु दिसि माँते ❀ कपि जयसील राम बल ताते ॥
एक एक सन भिरहिं प्रचारहिं ❀ एकन्ह एक मर्दि महि पारहिं ॥

लड़ाईके रसमें दोनों ही ओरके योद्धा मतवाले हो रहे थे; परन्तु जयशील वानर जोशमें भरे हुए थे; क्योंकि उन्हें श्रीरामचन्द्रजीका बल था, एकसे एक भीड़ता था, एकको एक ललकारता था। और एकको एक रगड़कर पृथिवीपर गिरा देता था।

मारहिं काटहिं धरहिं पछारहिं ❀ सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं ॥
उदर बिदारहिं भुजा उपारहिं ❀ गहि पद अवनि पटकि भट डारहिं ॥

वे मारते थे, काटते थे, पकड़ते थे और पछाड़ते थे। शिरोंको तोड़कर वे दूसरोंको शिरोंसे ही मारते थे, पेट फाड़ते और भुजा उखाड़ लेते थे, और योद्धाओंको पैर पकड़ पृथिवीपर पटककर डाल देते थे।

निसिचर भट महि गाड़हिं भालू ❀ ऊपर ढारि देहिं बहु बालू ॥
बीर बलीमुख जुद्ध बिरुद्धे ❀ देखिअत बिपुल काल जनु क्रुद्धे ॥

राक्षस-योद्धाओंको रीछ बालूमें गाड़ देते थे और ऊपरसे बहुतसी बालू डाल देते थे। युद्धमें संलग्न वीर वानर ऐसे दिखलायी देते थे, मानों क्रोधमें भरे हुए असंख्य काल हों।

छंद—क्रुद्धे कृतांत समान कपि तन स्रवत सोनित राजहीं।
मर्दहिं निसाचर कटक भट बलवंत घन जिमि गाजहीं ॥
मारहिं चपेटन्हि डाँटि दांतन्ह काटि लातन्ह मीजहीं।
चिक्करहिं मर्कट भालु छल बल करहिं जेहिं खल छीजहीं ॥

क्रोधमें भरे हुए कालके समान बन्दर शोभा पा रहे थे। उनके शरीरसे रक्त बहता था। वे बलवान राक्षसोंकी सेनाके योद्धाओंको रगड़ते और बादलोंके समान गर्जना करते थे। वे दपटकर चपेटोंसे मारते और दांतोंसे काटकर लातोंसे पीस डालते थे। सब रीछ और बन्दर चिक्कार करते और ऐसा छल-बल करते थे कि जिससे दुष्ट राक्षसोंका नाश हो।

धरि गाल फारहिं उर बिदारहिं गल अँतावरि मेलहीं।
प्रह्लादपति जनु बिबिध तनु धरि समरअंगन खेलहीं ॥
धरु मारु काटु पछारु घोर गिरा गगन महि भरि रही।
जय राम जो तृन तें कुलिस कर कुलिस तें तृन कर सही ॥

वे सब राक्षसोंको पकड़कर उनके गाल फाड़ डालते थे, हृदय विदीर्ण कर देते थे और आँतें निकालकर गलेमें पहन लेते थे; मानों नृसिंह भगवान् अनेक शरीर धारणकर संग्रामभूमिमें खेल रहे हों! पकड़, मारो, काटो, पछाड़ो—यह भयंकर शब्द पृथिवी और आकाशमें भर रहे थे। वे सब बोलते थे—श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो, जो अवश्य ही तिनकेसे वज्र और वज्रसे तिनका कर देते हैं।

दो०—निज दल बिचलत देखेसि ❀ बीस भुजा दस चाप।
रथ चढ़ि चलेउ दसानन ❀ फिरहु फिरहु करि दाप ॥१०७॥

अपनी सेनाको जब विचलित होते देखा, तब बीसों भुजाओंमें दस धनुष लिये हुए दस मुँहवाला रावण रथपर चढ़कर चल दिया और घमण्ड करके कहने लगा—लौटो, लौटो!

धायेउ परम क्रुद्ध दसकंधर * सनमुख चले हूह देइ बंदर ॥
गहि कर पादप उपल पहारा * डारेन्हि ता पर एकहिं बारा ॥

रावण अत्यन्त क्रोधित होकर दौड़ा। वन्दर भी आनन्द-ध्वनि करके सामने चले। वे सब हाथोंमें वृक्ष, पत्थर और पहाड़ लेकर उसपर एक ही साथ डालने लगे।

लागहिं सैल बज्रतनु तासू * खंड खंड होइ फूटहिं आसू ॥
चला न अचल रहा रथ रोपी * रनदुर्मद रावन अति कोपी ॥

उसके वज्र-शरीरमें जब पहाड़ लगते तब तुरंत ही फूटकर खण्ड-खण्ड हो जाते थे। लड़ाईमें मतवाला क्रोधी रावण अपने स्थानसे टला नहीं, रथ रोककर अटल बना रहा।

इत उत झपटि दपटि कपिजोधा * मर्दइ लाग भयेउ अति क्रोधा ॥
चले पराइ भालु कपि नाना * त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना ॥

वह बहुत ही क्रोधित हुआ और इधर-उधर झपट-दपटकर वानर योद्धाओंका मर्दन करने लगा। अगणित रीछ और बन्दर भागकर चल दिये और चिल्लाने लगे कि हे अंगद, हे हनुमान, हमारी रक्षा करो।

पाहि पाहि रघुबीर गोसाईं * यह खल खाइ काल की नाईं ॥
तेहि देखे कपि सकल पराने * दसहु चाप सायक संधाने ॥

हे स्वामिन्, हे श्रीरामचन्द्रजी, रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये। यह दुष्ट, तो कालकी भांति खाता है। रावणने देखा कि सब बन्दर भाग गये। फिर उसने दशों धनुषमें बाणोंको चढ़ाया।

छं०—संधानि धनु सरनिकर छाड़ेसि उरग जिमि उड़ि लागहीं।
रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं ॥
भयो अति कोलाहलु बिकल कपि दल भालु बोलहिं आतुरे।
रघुबीर करुनासिंधु आरतबंधु जनरच्छक हरे ॥

धनुष चढ़ाकर रावणने बाणोंके समूह छोड़े। वे उठकर सर्पोंकी भांति लगते थे। पृथिवी-आकाशमें सर्वत्र बाण भर गये और बन्दर सब दिशाओं और विदिशाओंकी ओर भागने लगे। अत्यन्त कोलाहल मच गया, सब सेना व्याकुल हो गयी और रीछ-बन्दर घबड़ाकर कहने लगे—रघुवीर! दयासागर! दीनबन्धु! भक्तरक्षक! हरे!

दो०—निजदल बिकल देखि कटि * कसि निषंग धनु हाथ।
लछिमनु चले सक्रुद्ध होइ * नाइ रामपद माथ ॥१०८॥

तब अपने दलको व्याकुल देखकर कमरमें तरकस और हाथमें धनुष लेकर लक्ष्मणजी क्रोधमें भरकर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मस्तक नवाकर चल दिये।

रे खल का मारसि कपि भालू ❀ मोहि बिलोकु तोर मैं कालू ॥
खोजत रहेउँ तोहि सुतघाती ❀ आजु निपाति जुड़ावउँ छाती ॥

लक्ष्मणजी बोले— अरे दुष्ट, रीछ और बन्दरोंको क्या मारता है ? मुझे देख, मैं तेरा काल हूँ । रावण बोला—अरे मेरे पुत्रको मार डालनेवाले, मैं तुझे खोज रहा था । आज तुझे मारकर मैं छाती जुड़ाऊँगा ।

अस कहि छाड़ेसि बान प्रचंडा ❀ लछिमन किये सकल सतखंडा ॥
कोटिन्ह आयुध रावन डारे ❀ तिल प्रमान करि काटि निवारे ॥

ऐसा कहकर रावणने प्रचण्ड वाण छोड़े । लक्ष्मणजीने उन सबको काटकर सौ-सौ टुकड़े कर दिये । रावणने करोड़ों शस्त्रास्त्रोंका प्रहार किया, पर लक्ष्मणजीने उन्हें तिल-तिल करके काट फेंका ।

पुनि निज बानन्ह कीन्ह प्रहारा ❀ स्यंदन भंजि सारथी मारा ॥
सत सत सर मारे दस भाला ❀ गिरि सृंगन्ह जनु प्रबिसहिं ब्याला ॥

फिर लक्ष्मणजीने अपने वाणोंसे प्रहार किया और रथ तोड़कर सारथीको मार डाला । रावणके दसों मस्तकोंमें उन्होंने सौ-सौ वाण मार दिये, जो इस प्रकार चुभते थे; मानों पहाड़की चोटियोंमें सर्प घुसते हों ।

सत सर पुनि मारा उर माहीं ❀ परेउ अवनितल सुधि कछु नाहीं ॥
उठा प्रबल पुनि मुरुछा जागी ❀ छाड़ेसि ब्रह्म दीन्हि जो साँगी ॥

फिर लक्ष्मणजीने सौ वाण रावणके हृदयमें मार दिये, जिससे वह पृथिवीतलपर गिर पड़ा और उसे कुछ भी सुध न रही । फिर जब मूर्च्छा दूर हुई, प्रबल रावण उठा और ब्रह्माने जो शक्ति दी थी उसे छोड़ दिया ।

छं०—सो ब्रह्मदत्त प्रचंडसक्ति अनंतउर लागी सही ।
परयो बीर बिकल उठाव दसमुख अतुलबल महिमा रही ॥
ब्रह्मांड भुवन बिराज जा के एक सिर जिमि रजकनी ।
तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहिं त्रि-भुवन-धनी ॥

ब्रह्माने जो प्रचण्डशक्ति दी थी वह अनन्तरूप लक्ष्मणजीके हृदयमें ठीक तरहसे लगी और वीर लक्ष्मणजी व्याकुल होकर गिर पड़े । रावण उन्हें उठाने लगा, परन्तु उनकी महिमा और बल अतुल था । जिसके एक शिरपर समस्त भुवनोंसमेत सारा ब्रह्माण्ड उसी प्रकार विराजता है; जैसे धूलका एक कण हो, उन्हें मूर्ख रावण, उठाना चाहता था और वह यह न जानता था कि वे त्रिभुवनके स्वामी हैं ।

दो०—देखत धायेउ पवनसुत ❀ बोलत बचन कठोर ।
आवत तेहि उर महँ हनेउ ❀ मुष्टिप्रहार प्रघोर ॥ १०६ ॥

पवनपुत्र हनुमान यह देखकर कठोर वचन बोलते हुए दौड़े। हनुमानजीके आते ही रावणने बड़े जोरसे उनके हृदयमें घूंसा मारा।

जानु टेकि कपि भूमि न गिरा ❀ उठा सँभारि बहुत रिसभरा।
मुठिका एक ताहि कपि मारा ❀ परेउ सैल जनु बज्रप्रहारा॥

हनुमानजीने घुटने टेक लिये, जिससे वे पृथिवीपर गिरे नहीं। अत्यन्त क्रोधमें भरे हुए वे संभलकर उठ बैठे। हनुमानजीने उसे एक घूंसा मारा, जिससे वह गिर पड़ा; मानों वज्रप्रहारसे पहाड़ गिर पड़ा हो।

गइ मुरछा बहोरि सो जागा ❀ कपिबल बिपुल सराहन लागा॥
धिग धिग मम पौरुष धिग मोही ❀ जौं तैं जियत उठेसि सुरद्रोही॥

मूर्च्छा दूर हुई और वह फिर जागा। और हनुमानजीके अत्यधिक बलकी प्रशंसा करने लगा। हनुमानजीने कहा—धिक्कार है, मेरे पौरुषको धिक्कार है, जो तू हे देव-शत्रु रावण, जीता उठ बैठा।

अस कहि कपि लछिमन कहुं ल्यायो ❀ देखि दसानन बिसमय पायो॥
कह रघुबीर समुझु जिय भ्राता ❀ तुम्ह कृतान्तभच्छक सुरत्राता॥

ऐसा कहकर हनुमानजी लक्ष्मणजीको ले आये। यह देखकर रावणको बड़ा विस्मय हुआ। फिर लक्ष्मणजीसे श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे भाई, अपने हृदयमें समझ लो, तुम देवरक्षक और कालका भी भक्षण कर जानेवाले हो।

सुनत बचन उठि बैठ कृपाला ❀ गगन गई सो सक्ति कराला॥
धरि सरचाप चलत पुनि भये ❀ रिपु समीप अति आतुर गये॥

श्रीरामचन्द्रजीका यह वचन सुनते ही कृपालु लक्ष्मणजी उठकर बैठ गये और वह भयंकर शक्ति आकाशमें चली गयी। लक्ष्मणजी धनुष लेकर फिर दौड़े और बड़ी शीघ्रतासे शत्रुके सामने पहुंच गये।

छं०—आतुर बहोरि बिभंजि स्यंदन सूत हति ब्याकुल कियो।
गिर्‌यो धरनि दसकंधर बिकलतर बानसत बेध्यौ हियो॥
सारथी दूसर घालि रथ तेहि तुरत लंका लेइ गयो।
रघु-बीर-बंधु प्रतापपुंज बहोरि प्रभुचरनन्हि नयो॥

शीघ्र ही फिर रथ तोड़कर और सारथीको मारकर रावणको व्याकुल कर दिया। वह अत्यन्त व्याकुल होकर पृथिवीपर गिर पड़ा। लक्ष्मणजीने उसके हृदयमें सौ बाण चुभा दिये। सारथी उसे दूसरे रथमें डालकर तुरन्त लंकामें ले गया और श्रीरामचन्द्रजीके भाई प्रताप-पुंज लक्ष्मणजीने आकर प्रभुके चरणोंमें फिर प्रणाम किया।

दो०—उहां दसानन जानि करि ❀ करइ लाग कछु जग्य।
रामबिरोध बिजय चहत ❀ सठ हठबस अति अग्य॥ ११०॥

वहां लंकामें मूर्च्छासे जागकर रावण कुछ यज्ञ करने लगा। अत्यन्त अज्ञानी मूर्ख रावण श्रीरामचन्द्रजीसे विरोधकर हठपूर्वक चाहता है कि विजय होवे।

इहां बिभीषन सब सुधि पाई ❀ सपदि जाइ रघुपतिहिं सुनाई॥
नाथ करइ रावनु एक जागा ❀ सिद्ध भये नहिं मरिहि अभागा॥

यहां विभीषणने सब समाचार पा लिया और शीघ्र जाकर श्रीरामचन्द्रजीको सुनाया। वे कहने लगे, हे नाथ, रावण एक यज्ञ कर रहा है। यज्ञके सिद्ध हो जानेपर वह अभागा न मरेगा।

पठवहु देव बेगि भट बंदर ❀ करहिं बिधंस आव दसकंधर॥
प्रात होत प्रभु सुभट पठाये ❀ हनुमदादि अंगद सब धाये॥

हे देव, शीघ्र ही वानर योद्धाओंको भेजिये, जो यज्ञका विध्वंस कर दें और फिर रावण युद्धके लिये आवे। सवेरा होते ही प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने योद्धा भेज दिये। अंगद, हनुमान आदि सब दौड़े।

कौतुक कूदि चढ़े कपि लंका ❀ पैठे रावनभवन असंका॥
जबहीं जग्य करत सो देखा ❀ सकल कपिन्ह भा क्रोध बिसेखा॥

सब वानर खेलमें ही कूदकर लंकापर चढ़ गये और रावणके भवनमें निडर होकर घुसे। ज्योंही सब बन्दरोंने उसे यज्ञ करते देखा, उन्हें बड़ा क्रोध हुआ।

रन तें निलज भाजि गृह आवा ❀ इहां आइ बकध्यानु लगावा॥
अस कहि अंगद मारेउ लाता ❀ चितव न सठ स्वारथ मनु राता॥

अरे निर्लज्ज, युद्धसे भागकर तो घर आया और यहां आकर तूने बगलेके समान ध्यान लगाया है—ऐसा कहकर अंगदजीने एक लात मारी; पर उस दुष्टने देखा भी नहीं। उसका मन स्वार्थमें लगा हुआ था।

छं०—नहिं चितव जब कपि कोपि तब गहि दसन लातन्ह मारहीं।
धरि केस नारि निकारि बाहेर तेऽतिदीन पुकारहीं॥
तब उठेउ क्रुद्ध कृतांतसम गहि चरन बानर डारई।
एहि बीच कपिन्ह बिधंसकृत मख देखि मन महुं हारई॥

जब उसने देखा भी नहीं, तब क्रोधित होकर वानर दांतोंसे काटकर लातोंसे मारने लगे। बाल पकड़कर वे स्त्रियोंको बाहर खींच लाये। वे स्त्रियां अत्यन्त दीनतासे पुकारने लगीं। तब क्रोधमें भरे हुए कालके समान रावण

उठा और पैर पकड़-पकड़कर बन्दरोंको पटकने लगा। उसी बीचमें बंदरोंने यज्ञ विध्वंस कर दिया। रावण यह देखकर मनमें हार गया।

दो०—मख विधंसि कपि कुसल सब * आये रघुपति पास।
चलेउ लंकपति क्रुद्ध होइ * त्यागि जिवन कै आस॥१११॥

सब बन्दर यज्ञ विध्वंस करके कुशलपूर्वक श्रीरामचन्द्रजीके पास आ गये। उधर लंकापति रावण जीवनकी आशा छोड़कर क्रोधित होकर चल दिया।

चलत होहिं अति असुभ भयंकर * बैठहिं गीध उड़ाहिं सिरन्ह पर॥
भयउ कालबस काहु न माना * कहेसि बजावहु जुद्धनिसाना॥

रावण जब चलने लगा, उसे अशुभसूचक अत्यन्त भयंकर अपशकुन होने लगे। शिरोंपर गीध बैठते और उड़ जाते थे। रावण कालके वशमें हो रहा था, इससे उसने किसीको भी न माना और कहने लगा कि युद्धका डंका बजाओ।

चली तमी-चर-अनी अपारा * बहु गज रथ पदाति असवारा॥
प्रभु सनमुख धाये खल कैसे * सलभसमूह अनल कहुँ जैसे॥

राक्षसोंकी असंख्य सेना चल दी। उसमें बहुतसे हाथी, घोड़े, पैदल और सवार थे। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी-के सामने दुष्ट कैसे दौड़े; जैसे अग्निकी ओर पतंगोंका समूह दौड़ता है।

इहां देवतन्ह अस्तुति किन्ही * दारुनबिपति हमहिं एहि दीन्ही॥
अब जनि राम खेलावहु एही * अतिसय दुखित होति बैदेही॥

यहां देवताओंने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी स्तुति की और कहा कि इसने हम सबको घोर दुःख दिये हैं। हे श्रीरामचन्द्रजी, अब इसे मत खिलाइये। सीताजी अत्यन्त दुःखी होती हैं।

देवबचन सुनि प्रभु मुसुकाना * उठि रघुबीर सुधारे बाना॥
जटाजूट दृढ़ बांधे माथे * सोहहिं सुमन बीच बिच गांथे॥

देवताओंके वचन सुनकर प्रभु मुस्कुराये। फिर, श्रीरामचन्द्रजीने उठकर बाणोंको सुधारा और मस्तकपर दृढ़तासे जटाजूट बांधे, जिनके बीच-बीचमें गूंथे हुए फूल शोभा पा रहे थे।

अरुननयन बारिद-तनु-स्यामा * अखिल-लोक-लोचन-अभिरामा॥
कटितट परिकर कसेउ निषंगा * कर कोदंड कठिन सारंगा॥

उनके नेत्र लाल थे, शरीर मेघके समान श्याम था, समस्त लोकोंके नेत्रोंको वे सुखदायी थे, उनकी कमरके पास-फेंटा बंधा हुआ था, कमरमें तरकस कसा हुआ था और उनके हाथमें कठोर शार्ङ्ग धनुष था।

छंद—सारंग कर सुंदर निषंग सिलीमुखाकर कटि कस्यो।
भुजदंड पीन मनोहरायत उर धरा-सुर-पद-लस्यो॥
कह दास तुलसी जबहिं प्रभु सरचाप कर फेरन लगे।
ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु भूधर डगमगे॥

हाथमें सुन्दर शार्ङ्ग धनुष था। कमरमें तरकस कसा हुआ था, जो बाणोंकी खान था। मोटे भुजदण्ड थे। मनोहर विशाल वक्षस्थल था, जिसमें ब्राह्मण भृगुके चरणका चिह्न शोभा पा रहा था। तुलसीदासजी कहते हैं कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी जब हाथसे धनुषबाण फेरने लगे, तब ब्रह्माण्ड, दिग्गज, कच्छप, शेषनाग, पृथिवी, समुद्र और पर्वत—सब डगमगाने लगे।

दो०—हरषे देव बिलोकि छबि ❀ बरषहिं सुमन अपार।
जय जय प्रभु गुन-ग्यान-बल ❀ धाम हरन महिभार॥११२॥

श्रीरामचन्द्रजीकी छवि देखकर सब देवता प्रसन्न हुए और अपार फूल बरसाने लगे और कहने लगे कि हे गुण, ज्ञान और बलके स्थान, हे पृथिवीके भारको दूर करनेवाले, हे प्रभो, आपकी जय हो, जय हो।

एही बीच निसा-चर-अनी ❀ कसमसाति आई अति घनी॥
देखि चले सनमुख कपि भट्टा ❀ प्रलय काल के जनु घनघट्टा॥

इतनेहीमें वह महाघोर राक्षसी सेना कसमसाती हुई आ पहुंची। उसको देखकर वानर योद्धा सामने ही चल दिये; मानों प्रलयकालके बादलोंकी घटा हो।

बहु कृपान तरवारि चमंकहिं ❀ जनु दस दिसि दामिनी दमंकहिं॥
गज रथ तुरग चिकार कठोरा ❀ गर्जत मनहुं बलाहक घोरा॥

अगणित तलवारें और कृपाणें चमक रही थीं, मानों दसों दिशाओंमें बिजलियां चमक रही हों। हाथियों, रथों और घोड़ोंका कठोर चीत्कार हो रहा था; मानों बादल भयंकर गर्जना कर रहे हों।

कपिलंगूर बिपुल नभ छाये ❀ मनहुं इंद्रधनु उये सुहाये॥
उठइ धूरि मानहुं जलधारा ❀ बान बुंद भइ बृष्टि अपारा॥

बन्दरोंके बहुतसे लंगूर (दुम) आकाशमें छाये हुए थे; मानों सुहावने इन्द्रधनुष उदय हुए हों! धूल उड़ रही थी; मानों जलकी धारा हो। बाण ही बूंद थे, जिनकी अपार वृष्टि हुई।

दुहुं दिसि पर्वत करहिं प्रहारा ❀ बज्रपात जनु बारहिं बारा॥
रघुपति कोपि बानझरि लाई ❀ घायल भे निसि-चर-समुदाई॥

दलों ही ओरसे पहाड़ोंके प्रहार करते थे, मानों बारबार वज्रपात हो रहा हो। श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधित होकर बाणोंकी झड़ी लगा दी, जिनसे राक्षसोंके समूह घायल हो गये।

लागत बान बीर चिक्करहीं ❀ घुर्मि घुर्मि जहँ तहँ महि परहीं ॥
स्रवहिं सैल जनु निर्झरबारी ❀ सोनित सरि कादर भयकारी ॥

बाण लगते ही वीर चीत्कार करते और चक्कर खा-खाकर इधर-उधर पृथिवीपर गिर पड़ते थे। उनके शरीरसे रक्त बहता था; मानों पर्वतोंसे झरनेका जल झर रहा हो। रक्तकी नदी कायरोंको भयभीत कर देनेवाली थी।

छं०—कादर भयंकर रुधिरसरिता चली परम अपावनी।
दोउ कूल दल रथ रेत चक्र अबर्त्त बहति भयावनी ॥
जलजंतु गज पदचर तुरग खर बिबिध बाहन को गने।
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने ॥

कायरोंको भयभीत कर देनेवाली अत्यन्त अपवित्र रक्तकी नदी बह निकली—इसके दोनों किनारे दोनों पक्षकी सेनाएँ थीं, रेत रथ थे, भँवर पहिये थे और वह बड़े भयावने रूपसे बह रही थी। हाथी, पैदल, घोड़े और गधे आदि तरह-तरहकी सवारियां उसमें जलके जीव थे, जिनकी गिनती कौन करे? बाण, शक्ति और तोमर—सर्प; धनुष—लहरें और ढालें बहुतसे कछुए थे।

दो०—बीर परहिं जनु तीरतरु ❀ मज्जा बहु बह फेन।
कादर देखत डरहिं तेहि ❀ सुभटन के मन चैन ॥ ११२ ॥

इस रक्त-नदीमें वीर इस तरह गिरते थे; मानों किनारेके वृक्ष हों। मज्जा बह रही थी; मानों फेन हो। उसे देखकर कायर डरते थे और उत्तम योद्धाओंके मनको प्रसन्नता होती थी।

मज्जहिं भूत पिसाच बेताला ❀ प्रथम महा झोटिंग कराला ॥
काक कंक लेइ भुजा उड़ाहीं ❀ एक ते छीनि एक लेइ खाहीं ॥

भूत, पिशाच, बैताल और प्रमथ आदि महाभयंकर प्रेत इस नदीमें स्नान करते थे। कौए और कंक भुजायें लेकर उड़ जाते थे और एकसे एक छीन लेता और खा जाता था।

एक कहहिं ऐसिउ सौंघाई ❀ सठहु तुम्हार दरिद्र न जाई ॥
कहँ रत भट घायल तट गिरे ❀ जहँ तहँ मनहु अर्धजल परे ॥

कोई पक्षी कहता—अरे दुष्टो, ऐसा आधिक्य होनेपर भी तुम्हारा दरिद्र नहीं जाता! इस नदीके किनारे पर गिरे हुए घायल योद्धा जहां-तहां कराह रहे थे; मानों आधे जलमें पड़े हुए हों।

खैंचहिं आँत गीध तट भये ❀ जनु बनसी खेलहिं चित दये ॥
बहु भट बहहिं चढ़े खग जाहीं ❀ जनु नावरि खेलहिं सरि माहीं ॥

किनारेपर बैठे हुए गीध आँखें खींच रहे थे; मानों मन लगाकर वे बनसीसे खेल रहे हों। बहुतसे योद्धा बह रहे थे और उनपर चढ़े हुए पक्षी जा रहे थे, मानों नदीमें नाववाले खिलवाड़ कर रहे हों।

जोगिनि भरि भरि खप्पर संचहिं ❀ भूत-पिसाच-बधू नभ नंचहिं ॥
भट कपाल करताल बजावहिं ❀ चामुंडा नानाबिधि गावहिं ॥

जोगिनियाँ खप्पर भर-भरकर रक्त इकट्ठा कर रही थीं, भूत और पिशाचोंकी स्त्रियाँ आकाशमें नाच रही थीं। चामुण्डाएँ योद्धाओंके कपालोंकी करताल बजातीं और तरह-तरहसे गाती थीं।

जंबुकनिकर कटक्कट कट्टहिं ❀ खाहिं हुआहिं अघाहिं दपट्टहिं ॥
कोटिन्ह रुंड मुंड बिनु डोल्लहिं ❀ सीस परे महि जय जय बोल्लहिं ॥

गीदड़ोंके झुण्ड कट-कट शब्द करके कटकटाते, हुआ-हुआकर चिल्लाते, खाते, अघाते और दपटते थे। शिर बिना करोड़ों रुण्ड फिरते थे और पृथिवीपर पड़े हुए शिर जय-जय बोलते थे।

छं०—बोल्लहिं जो जय जय मुंड रुंड प्रचंड सिर बिनु धावहीं।
खप्परिन्ह खग्ग अलुज्झि जुज्झहिं सुभट भटन्ह ढहावहीं ॥
निसि-चर-बरूथ बिमर्दि गरजहिं भालु कपि दर्पित भये।
संग्रामअंगन सुभट सोवहिं राम-सर-निकरन्हि हये ॥

इस प्रकार शिर जय-जय बोलते थे और शिर बिना धड़ बड़े वेगसे दौड़ते थे। खप्परोंमें उलझकर पक्षी लड़ जाते और अच्छे-अच्छे योद्धाओंको भी गिरा देते थे। अभिमानमें भरे हुए रीछ और बन्दर राक्षसोंके झुण्डोंको रगड़कर गर्जना करते थे। उस संग्रामभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीके बाणोंके समूहोंसे मारे हुए राक्षस योद्धा सो रहे थे।

दो०—हृदय बिचारेउ दसबदन ❀ भा निसि-चर-संहार।
मैं अकेल कपि भालु बहु ❀ माया करउँ अपार ॥ ११४ ॥

रावणने हृदयमें विचार किया कि राक्षसोंका संहार हो गया। मैं अकेला हूँ और रीछ-बन्दर बहुत हैं। मैं अब अपार माया करूँगा।

देवन्ह प्रभुहिं पयादे देखा ❀ उपजा उर अति छोभ बिसेखा ॥
सुरपति निजरथ तुरत पठावा ❀ हरषसहित मातलि लेइ आवा ॥

इधर देवताओंने जब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको पैदल देखा, तब हृदयमें अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न हुआ। देवराज इन्द्रने तुरंत ही अपना रथ भिजवाया। मातलि प्रसन्नताके साथ उसे लेकर आया।

तेजपुंज रथ दिव्य अनूपा ❀ हरषि चढ़े कोसल-पुर-भूपा ॥
चंचल तुरग मनोहर चारी ❀ अजर अमर मन-सम-गति-कारी ॥

उस तेजःपुंज अनुपम दिव्य रथपर कोशलपुरीके राजा श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्न होकर चढ़े। उसमें चार मनोहर चंचल घोड़े थे, जो अजर और अमर थे और जिनकी गति मनके समान अत्यन्त तेज थी।

रथारूढ़ रघुनाथहिं देखी ❀ धाये कपि बलु पाइ बिसेखी ॥
सही न जाइ कपिन्ह कै मारी ❀ तब रावन माया बिस्तारी ॥

श्रीरामचन्द्रजीको रथपर सवार देखकर वानर विशेष बल पाकर दौड़े। बन्दरोंकी मार सही न जाती थी। तब, रावणने माया फैलायी।

सो माया रघुबीरहिं बाँची ❀ सब काहू मानी करि साँची ॥
देखी कपिन्ह निसा-चर-अनी ❀ अनुजसहित बहु कोसलधनी ॥

श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर सब किसीने उस मायाको सत्य माना। बन्दरोंने राक्षसोंकी सेनाको देखा और लक्ष्मणजीसमेत बहुतसे कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी दिखलायी दिये।

छं०—बहु राम लछिमन देखि मर्कट भालु मन अति अपडरे।
जनु चित्रलिखित समेत लछिमन जहँ सो तहँ चितवहिं खरे ॥
निजसेन चकित बिलोकि हँसि सर चाप सजि कोसलधनी।
माया हरी हरि निमिष महँ हरषी सकल मरकटअनी ॥

बहुतसे श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजी देखकर रीछ और बन्दर मनमें स्वतः अत्यन्त भयभीत हुए। लक्ष्मणजीसमेत वे सब जो जहां थे वहीं खड़े हुये देख रहे थे; मानों चित्रमें लिखे हुए हों। अपनी सेनाको चकित देखकर कोशलदेशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने हँसकर धनुषपर बाण चढ़ाया और भगवानने पलभरमें सब माया दूर कर दी, जिससे बन्दरोंकी सब सेना प्रसन्न हो गयी।

दो०—बहुरि राम सब तन चितइ ❀ बोले बचन गँभीर।
द्वंदजुद्ध देखहु सकल ❀ स्रमित भये अति बीर ॥ ११५ ॥

फिर सबकी ओर देखकर श्रीरामचन्द्रजी यह गंभीर वचन बोले कि सब वीर अत्यन्त थक गये हैं। अब सब द्वन्द्वयुद्ध देखो।

अस कहि रथ रघुनाथ चलावा ❀ बिप्र - चरन - पंकज सिरु नावा ॥
तब लंकेस क्रोध उर छावा ❀ गर्जत तर्जत सनमुख आवा ॥

ऐसा कहकर श्रीरामचन्द्रजीने रथ बढ़ाया और ब्राह्मणोंके चरणकमलोंको शिर झुकाया। तब, लंकापति रावणके हृदयमें क्रोध छा गया और वह गरजता और डपटता हुआ सामने आया।

जीतेहु जे भट संजुग माहीं ❀ सुनु तापस मैं तिन्ह सम नाहीं ॥
रावन नाम जगत जसु जाना ❀ लोकप जाके बंदीखाना ॥

रावण बोला—अरे तपस्वी, सुन! जिन योद्धाओंको संग्राममें जीत लिया है, मैं उनके बराबर नहीं हूं। मेरा नाम रावण है। मेरा यश सारा संसार जानता है कि जिसके बंदीखानेमें लोकपाल पड़े हुए हैं।

खर - दूषण - कबंध तुम्ह मारा ❀ बधेहु ब्याध इव बालि बिचारा ॥
निसि - चर - निकर सुभट संहारेहु ❀ कुंभकरण घननादहिं मारेहु ॥

खर, दूषण और कबंधको तुमने मार डाला और बेचारे बालिको तो व्याधकी भांति मारा। राक्षस योद्धाओंके समूहोंका तुमने संहार किया और कुम्भकर्ण तथा मेघनादको भी मार डाला।

बैरु आजु सब लेउं निबाही ❀ जौं रन भूप भाजि नहिं जाही ॥
आजु करउं खलु कालहवाले ❀ परेहु कठिन रावन के पाले ॥

हे राजा, जो तू रणभूमिसे भाग नहीं जायगा तो आज सब वैर निकाल लूंगा। अरे दुष्ट, आज मैं तुझे कालके हवाले कर दूंगा; क्योंकि अब तू कठोर रावणके पाले पड़ा है।

सुनि दुर्बचन कालबस जाना ❀ बिहंसि बचन कह कृपानिधाना ॥
सत्य सत्य सब तव प्रभुताई ❀ जल्पसि जनि देखाउ मनुसाई ॥

रावणके दुर्वचन सुनकर कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीने जान लिया कि वह कालके वशमें है। वे हँसकर ये वचन कहने लगे—तेरी यह सब प्रभुता यदि सत्य हो तो बकवाद मत कर, पुरुषार्थ दिखला।

छं०—जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि छमा।
संसार महँ पूरुष त्रिबिध पाटल - रसाल - पनस - समा ॥
एक सुमनप्रद एक सुमनफल एक फलइ केवल लागहीं।
एक कहहिं कहहिं करहिं अपर एक करहिं कहत न बागहीं ॥

अरे, तू बकवाद करके अपने सुयशको नष्ट मत कर, क्षमा रख और नीति सुन—संसारमें गुलाब, आम और कटहलके समान तीन तरहके पुरुष होते हैं—एक केवल फल ही देता है, दूसरा फल और फूल दोनों देता है

और तीसरेमें फल ही लगते हैं—इसी भाँति एक तरहके पुरुष केवल कहते ही हैं, दूसरी तरहके कहते हैं और करते भी हैं और तीसरी तरहके पुरुष करते हैं, पर कहते नहीं फिरते ।

दो०—रामबचन सुनि बिहँसि कह ॥ मोहिं सिखावत ज्ञान ।
बैर करत नहिं तब डरेहु ॥ अब लागे प्रिय प्रान ॥११८॥

श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर रावण हँसकर कहने लगा—मुझे ज्ञान सिखलाता है ! वैर करते हुए तब नहीं डरा, अब प्राण प्यारे लग रहे हैं ।

कहि दुर्बचन क्रुद्ध दसकंधर ॥ कुलिससमान लाग छाड़इ सर ॥
नानाकार सिलीमुख धाये ॥ दिसि अरु बिदिसि गगन महि छाये ॥

क्रोधमें भरा हुआ रावण दुर्वचन कहकर वज्रके समान वाण छोड़ने लगा । तरह-तरहकी आकृतियोंके वाण दौड़े और दिशा-विदिशा और पृथिवी-आकाश—सर्वत्र छा गये ।

अनलबान छाड़ेउ रघुबीरा ॥ छन महुँ जरे निसा-चर-तीरा ॥
छाड़ेसि तीव्र सक्ति खिसिआई ॥ बानसंग प्रभु फेरि पठाई ॥

श्रीरामचन्द्रजीने एक अग्निवाण छोड़ा, जिससे एक क्षणमें राक्षस रावणके सब वाण जल गये । फिर रावणने खिसियाकर एक तीव्र शक्ति छोड़ी, जिसे अपने वाणके साथ प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने लौटाकर भेज दिया ।

कोटिन्ह चक्र त्रिसूल पबारइ ॥ बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारइ ॥
निफल होहिं रावन सर कैसे ॥ खल के सकल मनोरथ जैसे ॥

रावण करोड़ों त्रिशूल और चक्र फेंकता था और प्रभु श्रीरामचन्द्रजी अनायास ही उन्हें काटकर फेंक देते थे । रावणके सब वाण कैसे निष्फल हो जाते थे, जैसे दुष्टके सब मनोरथ ।

तब सतबान सारथी मारेसि ॥ परेउ भूमि जय राम पुकारेसि ॥
राम कृपा करि सूत उठावा ॥ तब प्रभु परमक्रोध कहुँ पावा ॥

तब रावणने सौ वाण सारथीको मारे, जो श्रीरामचन्द्रजीकी जय पुकारता हुआ पृथिवीपर गिर पड़ा । श्रीरामचन्द्रजीने कृपा करके सारथीको उठा लिया, उस समय प्रभुको अत्यन्त क्रोध हो आया ।

छंद—भये क्रुद्ध जुद्धबिरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसमसे ।
कोदंडधुनि अतिचंड सुनि मनुजाद सब मारुत ग्रसे ॥
मंदोदरी उर कंप कंपति कमठ भू भूधर त्रसे ।
चिक्करहिं दिग्गज दसन गहि महि देखि कौतुक सुर हंसे ॥

युद्धमें संलग्न श्रीरामचन्द्रजी जब क्रोधित हुए तब उनके तरकसमें वाण खड़खड़ाने लगे, धनुषकी अत्यन्त प्रचंड टंकार सुनकर सब राक्षसोंको वायुने अपना ग्रास बना लिया। मन्दोदरीका हृदय कांप उठा, भयभीत होकर कच्छप, पृथिवी और पर्वत—सब कांपने लगे, दांतोंसे पृथिवीको थामकर दिग्गज चीत्कार करने लगे और यह सब कौतुक देखकर देवता हंसने लगे।

दो०—तानेउ चाप स्रवन लगि ❀ छाड़े बिसिख कराल।
राम-मारगन-गन चले ❀ लहलहात जनु ब्याल ॥११७॥

श्रीरामचन्द्रजीने कानोंतक धनुषको खींचा और भयंकर वाण छोड़ दिये। श्रीरामचन्द्रजीके वाणोंके समूह लहलहाते हुए चल दिये, मानों सांप हों।

चले बान सपच्छ जनु उरगा ❀ प्रथमहिं हतेउ सारथी तुरगा ॥
रथ बिभंजि हति केतु पताका ❀ गरजा अति अंतर बल थाका ॥

वाण चले, मानों पंख लगे हुये सांप हों। सबसे पहिले रावणके सारथी और घोड़ोंको मार डाला। रथ तोड़कर ध्वजा-पताका काट डाली। तब रावण बहुत जोरसे गर्जा, परन्तु उसका बल भीतरसे थक गया।

तुरत आन रथ चढ़ि खिसियाना ❀ अस्त्र सस्त्र छाड़ेसि बिधि नाना ॥
बिफल होहिं सब उद्यम ता के ❀ जिमि पर-द्रोह-निरत-मनसा के ॥

खिसियाया हुआ रावण तुरंत ही दूसरे रथपर चढ़कर अनेक प्रकारके शस्त्रास्त्र छोड़ने लगा। पराये द्रोहमें लगे हुये मनुष्यकी भांति उसके सब उद्योग विफल होते थे।

तब रावन दस सूल चलावा ❀ बाजि चारि महि मारि गिरावा ॥
तुरग उठाइ कोपि रघुनायक ❀ खैंचि सरासन छाड़े सायक ॥

तब रावणने दश त्रिशूल फेंके और चारों घोड़ोंको मारकर पृथिवीपर गिरा दिया। घोड़े उठाकर श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधित होकर धनुष खींचा और वाण छोड़े।

रावन - सिर - सरोज - बन - चारी ❀ चलि रघुबीर सिलीमुख धारी ॥
दस दस बान भाल दस मारे ❀ निसरि गये चले रुधिरपनारे ॥

रावणके शिररूपी कमलोंके वनमें संचार करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके वाणरूपी भौंरोंके समूह चल दिये। श्रीरामचन्द्रजीने उसके दशों मस्तकोंमें दस-दस वाण मारे, जो आरपार हो गये और रक्तका परनाला चलने लगा।

स्रवत रुधिर धायेउ बलवाना ❀ प्रभु पुनि कृत धनु-सर-संधाना ॥
तीस तीर रघुबीर पवारे ❀ भुजन्ह समेत सीस महि पारे ॥

रक्त बहते हुए भी जब बलवान रावण दौड़ा तब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने फिर अपने धनुषपर बाणको चढ़ाया। श्रीरामचन्द्रजीने तीस तीर छोड़े और बीस भुजाओं समेत दस शिर पृथिवीपर गिरा दिये।

काटतही पुनि भये नबीने ❁ राम बहोरि भुजासिर छीने ॥
काटत झटिति पुनि नूतन भये ❁ प्रभु बहु बार बाहु सिर हये ॥

काटते ही वे फिर नये हो गये। श्रीरामचन्द्रजीने रावणकी भुजाएँ और शिर फिर काट फेंके। काटतेही वे फिर शीघ्र नये हो गये। इसी तरह प्रभुने बहुत बार रावणकी भुजाओं और शिरोंको नष्ट किया।

पुनि पुनि प्रभु काटत भुज सीसा ❁ अतिकौतुकी कोसलाधीसा ॥
रहे छाइ नभ सिर अरु बाहू ❁ मानहु अमित केतु अरु राहू ॥

प्रभु बार-बार उसकी भुजाओं और शिरोंको काटने लगे। कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी बड़े खिलाड़ी हैं। आकाशमें शिर और भुजाएँ छा रही थीं; मानों असंख्य केतु और राहु हों।

छंद—जनु राहु केतु अनेक नभपथ स्रवतसोनित धावहीं।
रघु-बीर-तीर प्रचंड लागहिं भूमि गिरन न पावहीं ॥
एक एक सर सिरनिकर छेदे नभ उड़त इमि सोहहीं।
जनु कोपि दिनकर-कर-निकर जहं तहं बिधुंतुद पोहहीं ॥

मानों अनेक राहु-केतु आकाश-मार्गमें रक्त बहाते हुए दौड़ रहे हों। श्रीरामचन्द्रजीके प्रचंड बाण लगनेसे वे पृथिवीपर गिरने न पाते थे। एक-एक बाणने अनेक शिरोंके समूहको छेद रखा था, जो आकाशमें उड़ते हुए इस प्रकार शोभा पाते थे; मानों क्रोधित होकर सूर्यकी किरणोंका समूह जहां-तहां राहुओंको पिरो रहा हो।

दो०—जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर ❁ तिमि तिमि होहिं अपार।
सेवत बिषय बिबर्ध जिमि ❁ नित नित नूतन मार ॥११८॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी ज्यों-ज्यों उसके शिरोंको काटते थे त्यों-त्यों वे अपार हो जाते थे; जैसे विषयोंका सेवन करनेसे कामदेव नित्य-नित्य नया बढ़ता जाता है।

दसमुख देखि सिरन्ह कै बाढ़ी ❁ बिसरा मरन भई रिस गाढ़ी ॥
गर्जेउ मूढ़ महा अभिमानी ❁ धायेउ दसउ सरासन तानी ॥

शिरोंकी बाढ़ देखकर रावणको अपना मरना भूल गया और उसे बड़ा क्रोध हुआ। महाअभिमानी मूर्ख रावण गर्जा और दशों धनुष तानकर दौड़ा।

समरभूमि दसकंधर कोपेउ ❁ बरषि बान रघुपति-रथ-तोपेउ ॥
दंड एक रथ देखि न परेऊ ❁ जनु निहार महं दिनकर दुरेऊ ॥

संग्रामभूमिमें रावण क्रोधित हुआ और बाण बरसाकर उसने श्रीरामचन्द्रजीका रथ ढक दिया। एक घड़ीतक रथ दिखलायी न पड़ा, मानों कुहरेमें सूर्य छिप गया हो।

हाहाकार सुरन्ह जब कीन्हा ❀ तब प्रभु कोपि कारमुक लीन्हा ॥
सर निवारि रिपु के सिर काटे ❀ ते दिसि बिदिसि गगन महि पाटे ॥

जब देवताओंने हाहाकार किया, तब प्रभुने क्रोधित होकर धनुष लिया। उन्होंने बाणोंका निवारण कर शत्रुके शिर काट डाले और उनसे दिशा, विदिशा, पृथिवी, आकाश, सबको पाट दिया।

काटे सिर नभमारग धावहिं ❀ जय जय धुनि करि भय उपजावहिं ॥
कहँ लछिमन हनुमान कपीसा ❀ कहँ रघुबीर कोसलाधीसा ॥

काटे हुए शिर आकाशमार्गमें दौड़ रहे थे और जय-जयकार बोलकर भय उत्पन्न करते थे। वे कहते थे—लक्ष्मण, हनुमान और सुग्रीव कहां हैं? और कोशलाधीश रामचन्द्र कहां हैं?

छंद—कहँ राम कहि सिरनिकर धाये देखि मरकट भजि चले।
संधानि धनु रघु-बंस-मनि हँसि सरन्ह सिर भेदे भले ॥
सिरमालिका गहि कालिका कर बृंद बृंदन्हि बहु मिलीं।
करि रुधिरसरि मज्जनु मनहुँ संग्रामबट पूजन चलीं ॥

रामचन्द्र कहां हैं—यह कहकर शिरोंके झुण्ड दौड़े, बन्दर उन्हें देखकर भाग चले। रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजीने हंसकर धनुष चढ़ाया और उन मस्तकोंको बाणोंसे भलीभांति विंध दिया। शिरोंकी माला हाथमें लेकर अनेक कालिकाओंके झुण्ड-के-झुण्ड आकर मिल गये; मानों वे सब रक्तकी नदीमें स्नान करके संग्रामरूपी वटवृक्षकी पूजा करनेके लिये जाती हों।

दो०—पुनि दसकंठ क्रुद्ध होइ ❀ छांड़ी सक्ति प्रचंड।
चली बिभीषन सनमुख ❀ मनहुँ काल कर दंड ॥११६॥

फिर रावणने क्रोधित होकर प्रचंड शक्ति छोड़ी, जो विभीषणके सामने चली; मानों कालका दण्ड हो।

आवत देखि सक्ति अतिघोरा ❀ प्रनतारति भंजन पन मोरा ॥
तुरत बिभीषनु पाछे मेला ❀ सनमुख राम सहेउ सो सेला ॥

तेज धारवाली शक्तिको जब आते देखा, तब श्रीरामचन्द्रजीने अपना भक्तजनके दुःखोंको दूर कर देनेवाला बाना संभाला। उन्होंने विभीषणको तुरंत अपने पीछे कर दिया। श्रीरामचन्द्रजीने सामने होकर वह शक्ति स्वयं सह ली।

लागि सक्ति मुरुछा कछु भई ❀ प्रभु कृत खेल सुरन्ह बिकलई ॥
देखि बिभीषन प्रभु स्रम पायउ ❀ गहि कर गदा क्रुद्ध होइ धायउ ॥

शक्ति लगी और प्रभुको कुछ मुर्च्छा हो आयी। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने तो यह एक खेल किया, पर देवताओं-को व्याकुलता हो गयी। विभीषणने जब यह देखा कि प्रभुको परिश्रम हुआ है, तब हाथमें गदा लेकर वे क्रोधित होकर दौड़े।

रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे ❀ तैं सुर नर मुनि नाग बिरुद्धे ॥
सादर सिव कहुँ सीस चढ़ाये ❀ एक एक के कोटिन्ह पाये ॥

अरे अभागे, दुष्ट, नीच, दुर्बुद्धि, तूने देवता, मनुष्य, मुनि और नाग—सबसे विरोध किया है। तूने शिवजीको आदरके साथ अपने जो शिर चढ़ाये थे, उनसे एक-एकके बदलेमें करोड़ों पा लिये।

तेहि कारन खल अब लगि बांचेउ ❀ अब तव काल सीस पर नांचेउ ॥
रामबिमुख सठ चह संपदा ❀ अस कहि हनेसि मांझ उर गदा ॥

इसी कारण, अरे दुष्ट, तू अबतक बचा रहा। अब तेरा काल शिरपर नाच रहा है। अरे दुष्ट, श्रीरामचन्द्रजीसे विमुख होकर तू संपदा चाहता है—ऐसा कहकर विभीषणने उसकी छातीके बीच गदा मारी।

छं०—उर मांझ गदाप्रहार घोर कठोर लागत महि परेउ।
दसबदन सोनित स्रवत पुनि संभारि धायेउ रिस भरेउ ॥
दोउ भिरे अतिबल मल्ल जुद्ध बिरुद्ध एक एकहि हनै।
रघुबीर-बल-दर्पित बिभीषनु घालि नहिं ता कहुँ गनै ॥

उस अत्यन्त घोर गदाके कठोर प्रहारके हृदयमें लगते ही रावण पृथिवीपर गिर पड़ा और उसके दशों मुखोंसे रक्त बहने लगा। क्रोधमें भरा हुआ रावण संभलकर फिर दौड़ा। अत्यन्त बलवान दोनों योद्धा भिड़ गये और मल्लयुद्धमें जुट गये! एक दूसरेको मारने लगा। श्रीरामचन्द्रके बलके अभिमानमें भरा हुआ विभीषण रावणको पछाड़ने लगा। वह उसको कुछ भी न गिनता था।

दो०—उमा बिभीषनु रावनहिं ❀ सनमुख चितव कि काउ।
सो अब भिरत काल ज्यों ❀ श्री-रघुबीर-प्रभाउ ॥ १२० ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, रावणके सामने विभीषण क्या कभी देख सकता था? वही विभीषण अब कालके समान उससे जा भिड़ा! यह श्रीरामचन्द्रजीका प्रभाव है।

देखा स्रमित बिभीषनु भारी ❀ धायेउ हनूमान गिरिधारी ॥
रथ तुरंग सारथी निपाता ❀ हृदय मांझ तेहि मारेसि लाता ॥

हनुमानजीने जब देखा कि विभीषण बहुत थक गये, तब वे पर्वत लिये हुए दौड़े और रथ, सारथी और घोड़ोंको नष्ट कर दिया और उसके हृदयमें लात मारी।

ठाढ़ रहा अतिकंपित गाता ❁ गयेउ बिभीषनु जहँ जनत्राता ॥
पुनि रावन कपि हतेउ प्रचारी ❁ चला गगन कपि पूछ पसारी ॥

लात लगनेसे रावण खड़ा तो रहा, पर उसका शरीर बहुत ही कांप गया। विभीषण वहां गया जहां भक्त-रक्षक श्रीरामचन्द्रजी थे। फिर रावण ने ललकारकर हनुमानजीको मारा, पर हनुमानजी पूंछ फैलाकर आकाशकी ओर चल दिये।

गहेसि पूछ कपि सहित उड़ाना ❁ पुनि फिरि भिरेउ प्रबल हनुमाना ॥
लरत अकास जुगल सम जोधा ❁ एकहिं एक हनत करि क्रोधा ॥

रावणने जब पूंछ पकड़ ली, तब हनुमानजी उस समेत उड़ गये। फिर लौटकर बड़ी बलवान हनुमानजी उससे भिड़ गये। दोनों समान बलवाले योद्धा आकाशमें लड़ रहे थे। क्रोध करके एक दूसरेको मारता था।

सोहहिं नभ छल बल बहु करहीं ❁ कज्जलगिरि सुमेरु जनु लरहीं ॥
बुधिबल निसिचर परइ न पार्‌यो ❁ तब मारुतसुत प्रभु संभार्‌यो ॥

आकाशमें वे बहुतसा छल-बल करते थे और इस प्रकार शोभित हो रहे थे, मानों कज्जलगिरि और सुमेरुपर्वत लड़ रहे हों। बुद्धि और बलसे जब राक्षस रावणसे पार न पड़ी, तब पवनपुत्र हनुमानजीने प्रभु श्री-रामचन्द्रजीका स्मरण किया।

छं०—संभारि श्रीरघुबीर धीर प्रचारि कपि रावनु हनेउ।
महि परत पुनि उठि लरत देवन जुगल कहुँ जयजय भनेउ ॥
हनुमंत संकट देखि मर्कट भालु क्रोधातुर चले।
रनमत्त रावन सकल सुभट प्रचंड भुजबल दलमले ॥

श्रीरामचन्द्रजीका स्मरणकर धीर हनुमानजीने ललकारकर रावणको मारा, जिससे वह पृथिवीपर गिर पड़ा; पर गिरते ही फिर उठकर लड़ने लगा। यह देखकर देवताओंने दोनोंके लिये जय-जय शब्द कहा। हनु-मानजीको संकटमें देखकर रीछ और बन्दर क्रोधसे बड़ी शीघ्रतापूर्वक चल दिये। रणमें मतवाले रावणने उन सब योद्धाओंको अपनी प्रचण्ड भुजाओंके बलसे मींज डाला।

दो०—तब रघुबीर प्रचारे ❁ धाये कीस प्रचंड।
कपिदल प्रबल देखि तेहि ❁ कीन्ह प्रगट पाखंड ॥ ९२१ ॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने वानरोंको ललकारा और वे प्रचण्ड होकर दौड़े । वानरोंकी सेनाको प्रबल देखकर उस रावणने माया प्रकट की ।

अंतरधान भयेउ छन एका ❀ पुनि प्रगटे खल रूप अनेका ॥
रघुपति-कटक भालु कपि जेते ❀ जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते ॥

पहिले एक क्षणतक वह निगाहसे ओझल हो गया, फिर दुष्टने अनेक रूप प्रकट किये । श्रीरामचन्द्रजीकी सेनामें जितने रीछ और बन्दर थे, जहां-तहां उतने ही रावण भी प्रकट हो गये ।

देखे कपिन्ह अमित दससीसा ❀ भागे भालु बिकट भट कीसा ॥
चले बलीमुख धरहिं न धीरा ❀ त्राहि त्राहि लछिमनु रघुबीरा ॥

बन्दरोंने देखा कि असंख्य रावण हैं, तब रीछ और बन्दर योद्धा व्याकुल होकर भाग खड़े हुये । सब बन्दर चल-दिये । उन्हें धीरज न होता था । वे सब पुकारने लगे कि हे लक्ष्मण, हे श्रीरामचन्द्रजी, मेरी रक्षा कीजिये, रक्षा कीजिये ।

दहदिसि धावहिं कोटिन्ह रावन ❀ गर्जहिं घोर कठोर भयावन ॥
डरे सकल सुर चले पराई ❀ जय कै आस तजहु अब भाई ॥

दशों दिशाओंमें करोड़ों रावण दौड़ते और अत्यन्त घोर, कठोर और भयानक गर्जना करते थे । सब देवता डर गये, भाग चले और कहने लगे कि हे भाई, अब जीतकी आशा छोड़ो ।

सब सुर जिते एक दसकंधर ❀ अब बहु भये तकहु गिरिकंदर ॥
रहे बिरंचि संभु मुनि ग्यानी ❀ जिन्ह जिन्ह प्रभुमहिमा कछु जानी ॥

एक ही रावणने सब देवता जीत लिये थे, अब तो बहुत हो गये । इसीलिये पर्वतोंकी कंदराओंको खोजो । ब्रह्मा, शिव और ज्ञानी मुनि—वे सब, जिन्होंने प्रभुकी महिमाको कुछ जान लिया है, वहीं रहे ।

छं०—जाना प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु माने फुरे ।
चले बिचलि मर्कट भालु सकल कृपाल पाहि भयातुरे ॥
हनुमंत अंगद नील नल अतिबल लरत रनबाँकुरे ।
मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपटभू भट अंकुरे ॥

जिन्होंने श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप जान लिया था, वे निर्भय रहे । वानरोंने शत्रुओं—रावणोंको सत्य समझा । रीछ और बन्दर सब विचलित होकर चल दिये और डरसे घबड़ाकर कहने लगे कि हे कृपालु श्रीरामचन्द्रजी, हमारी रक्षा कीजिये । हनुमान, अंगद, नील, नल—सब अत्यंत बलवान रणवीर योद्धा लड़ रहे थे और कपटरूपी भूमिमें निकले हुए योद्धाओंके अङ्कुरोंको—करोड़ों रावणोंको मींजते थे ।

दो०—सुर बानर देखे बिकल ❀ हंसेउ कोसलाधीस।
सजि सारंग एक सर ❀ हते सकल दससीस ॥ १२२ ॥

देवताओंको और वानरोंको जब व्याकुल देखा तब कोशलाधीश श्रीरामचंद्रजी हंसे और धनुष लेकर एक बाणसे सब रावणोंको मार डाला।

प्रभु छन महुं माया सब काटी ❀ जिमि रवि उये जाहिं तम फाटी ॥
रावनु एकु देखि सुर हरषे ❀ फिरे सुमन बहु प्रभु पर बरषे ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने क्षणभरमें सब माया काट डाली; जैसे सूर्यके उदय हो जानेपर अंधेरा फट जाता है। एक ही रावण देखकर देवता प्रसन्न हुए और लौट आये तथा प्रभुपर बहुतसे फूल बरसाये।

भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे ❀ फिरे एक एकन्ह तब टेरे ॥
प्रभु बल पाइ भालु कपि धाये ❀ तरल तमकि संजुगमहि आये ॥

भुजाएं उठाकर श्रीरामचंद्रजीने वानरोंको लौटाया। वे सब तब एक दूसरेके पुकारनेसे लौट आये। प्रभुका बल पाकर रीछ और बंदर दौड़े और झटसे लपककर युद्ध-भूमिमें आ गये।

अस्तुति करत देवतन्हि देखे ❀ भयउं एक मैं इन्ह के लेखे ॥
सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल ❀ अस कहि कोपि गगनपथ धायल ॥

रावणने जब देखा कि देवता श्रीरामचंद्रजीकी स्तुति कर रहे हैं, तब वह सोचने लगा—मैं इनके विचारसे एक ही हो गया हूं। फिर वह कहने लगा—अरे दुष्टो, तुम सदा ही मुझसे पिटते आये हो। ऐसा कहकर रावण क्रोधमें भरकर आकाशमार्गमें दौड़ा।

हाहाकार करत सुर भागे ❀ खलहु जाहु कहं मोरे आगे ॥
बिकल देखि सुर अंगद धायो ❀ कूदि चरन गहि भूमि गिरायो ॥

जब देवता हाहाकार करते हुए भागने लगे तब रावण बोला—अरे दुष्टो, मेरे आगेसे तुम कहां जाओगे? देवताओंको व्याकुल देखकर अंगदजी दौड़े और कूदकर पैर पकड़कर रावणको पृथिवीपर गिरा दिया।

छं०—गहि भूमि पारेउ लात मारेउ बालिसुत प्रभुपहिं गयेउ।
संभारि उठि दसकंठ घोर कठोर रव गरजत भयेउ ॥
करि दाप चाप चढ़ाइ दस संधान सर बहु बरषई।
किये सकल भट घायल भयाकुल देखि निजबल हरषई ॥

रावणको पकड़कर पृथिवीपर गिरा दिया और लातोंसे मारा और फिर बालिपुत्र अंगदजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास गये। रावण संभालकर उठा और अत्यन्त कठोर शब्द करके गरजने लगा, वह अभिमान करके दसों धनुष चढ़ाकर और उनपर बहुतसे बाण संधानकर बरसाने लगा। उसने सब योद्धा घायल और भयसे व्याकुल कर दिये। अपना यह बल देखकर रावण प्रसन्न होने लगा।

दो०—तब रघुपति रावन के ❀ सीस भुजा सर चाप।
काटे बहुत बढ़े पुनि ❀ जिमि तीरथ कर पाप॥ १२३॥

तब श्रीरामचन्द्रजीने रावणके शिरों, भुजाओं, धनुषों और बाणोंको काट डाला, परन्तु जैसे तीर्थमें किया हुआ पाप बढ़ता है, वैसे ही वे सब भी बहुत हो गये।

सिर भुज बाढ़ि देखि रिपु केरी ❀ भालु कपिन्ह रिस भई घनेरी॥
मरत न मूढ़ कटेहु भुज सीसा ❀ धाये कोपि भालु भट कीसा॥

शत्रुके शिरों और भुजाओंकी बढ़ती देखकर रीछ और बन्दरोंको बड़ा क्रोध हुआ। यह मूर्ख भुजाएँ और शिर कट जानेपर भी नहीं मरता—यह कहकर रीछ और बन्दर योद्धा क्रोधमें भरकर दौड़े।

बालितनय मारुति नल नीला ❀ बानरराज दुबिद बलसीला॥
बिटप महीधर करहिं प्रहारा ❀ सोइ गिरि तरु गहि कपिन्ह सो मारा॥

बालिपुत्र अंगद, हनुमान, नल, नील, कपिराज सुग्रीव और बलवान द्विविद—ये सब वृक्षों और पहाड़ोंका प्रहार करते थे। उन्हीं पहाड़ों और वृक्षोंको लेकर वह बन्दरोंको मारता था।

एक नखन्हि रिपुबपुष बिदारी ❀ भागि चलहिं एक लातन्ह मारी॥
तब नल नील सिरन्हि चढ़ि गयेऊ ❀ नखन्हि लिलार बिदारत भयेऊ॥

कोई नखोंसे शत्रुका शरीर विदीर्णकर भाग जाता था और कोई उसे लातोंसे मारकर। तब नल और नील रावणके शिरोंपर चढ़ गये और नखोंसे उसके ललाटको विदीर्ण कर डाला।

रुधिर देखि बिषाद उर भारी ❀ तिन्हहिं धरन कहुं भुजा पसारी॥
गहे न जाहिं करन्हि पर फिरहीं ❀ जनु जुग मधुप कमलबन चरहीं॥

रक्त देखकर रावणके हृदयमें बड़ा दुःख हुआ। उन्हें पकड़नेके लिए उसने अपनी भुजाएं फैलायीं। नल और नील पकड़े न जाते थे, वे उसकी भुजाओंपर फिर रहे थे; मानों कमलवनमें दो भौंरे फिर रहे हों।

कोपि कूदि दोउ धरेसि बहोरी ❀ महि पटकत भजे भुजा मरोरी॥
पुनि सकोप दस धनु कर लीन्हे ❀ सरन्हि मारि घायल कपि कीन्हे॥

फिर क्रोधमें भरकर रावणने कूदकर दोनोंको पकड़ लिया और जब वह इन्हें पृथिवीपर पटकने लगा तब भुजाको मरोड़कर दोनों भाग गये। फिर रावणने क्रोधित होकर अपने हाथोंमें दश धनुष लिये और बाणोंसे मारकर बंदरोंको घायल कर दिया।

हनुमदादि मुरुछित करि बंदर ❀ पाइ प्रदोष हरष दसकंधर॥
मुरुछित देखि सकल कपिबीरा ❀ जामवंत धायेउ रनधीरा॥

हनुमान आदि बंदरोंको मूर्च्छित करके रावण प्रदोष काल पाकर प्रसन्न हुआ और सब वानर वीरोंको मूर्च्छित देखकर रणधीर जाम्बवान् दौड़े।

संग भालु भूधर तरु धारी ❀ मारन लगे प्रचारि प्रचारी॥
भयउ क्रुद्ध रावन बलवाना ❀ गहि पद महि पटकइ भट नाना॥
देखि भालुपति निज-दल-घाता ❀ कोपि माँझ उर मारेसि लाता॥

उनके संगमें वृक्ष और पर्वत लिये हुये रीछ थे। वे सब ललकार-ललकारकर मारने लगे। फिर बलवान रावण क्रोधित हुआ और पैर पकड़कर असंख्य योद्धाओंको पृथिवीपर पटकने लगा। अपने दलका संहार देखकर ऋच्छराज जाम्बवानने क्रोधित होकर रावणकी छातीमें लात मारी।

छं०—उर लात घात प्रचंड लागत बिकल रथ तें महि परा।
गहे भालु बीसहु कर मनहु कमलन्ह बसे निसि मधुकरा॥
मुरुछित बिलोकि बहोरि पद हति भालुपति प्रभु पहिं गयो।
निसि जानि स्यंदन घालि तेहि तब सूत जतनु करत भयो॥

छातीमें लातका प्रचण्ड आघात लगते ही रावण व्याकुल होकर रथसे पृथिवीपर गिर पड़ा। अपने बीसों हाथोंमें वह रीछोंको पकड़े हुए था; मानों कमलोंमें रातको भौंरे बसे हुए हों। रावणको मूर्च्छित देखकर फिर एक लात मारकर ऋच्छराज जाम्बवान् प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास गये। तब रात्रि जानकर सारथी उसे रथमें डालकर (चैतन्य करनेका) यत्न करने लगा।

दो०—मुरछा बिगत भालु कपि ❀ सब आये प्रभु पास।
निसिचर सकल रावनहिं ❀ घेरि रहे अति त्रास॥९४॥

मूर्च्छा दूर होनेपर सब रीछ और बन्दर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। उधर अत्यन्त डरसे सब राक्षसोंने रावणको घेर लिया।

तेही निसि सीता पहिं जाई ❀ त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई॥
सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपु केरी ❀ सीता उर भइ त्रास घनेरी॥

उसी रातको सीताजीके पास जाकर त्रिजटाने सब कथा कह सुनायी। शत्रुके शिरों और भुजाओंके बढ़नेकी बात सुनकर सीताजीके हृदयमें बड़ा भय हुआ।

मुख मलीन उपजी मन चिंता ❀ त्रिजटा सन बोली तब सीता ॥
होइहि काह कहसि किन माता ❀ केहि बिधि मरिहि बिस्व-दुख-दाता ॥

उनका मुख मलिन हो गया, मनमें चिन्ता उत्पन्न हो गयी। तब सीताजी त्रिजटासे कहने लगीं—हे माता, तू यह क्यों नहीं कहती कि क्या होगा? संसारको दुःख देनेवाला रावण किस प्रकार मरेगा?

रघुपति-सर सिर कटेहु न मरई ❀ बिधि बिपरीत चरित सब करई ॥
मोर अभाग्य जिआवत ओही ❀ जेहिं हौं हरि-पद-कमल बिछोही ॥

श्रीरामचन्द्रजीके बाणसे शिर कट जानेपर भी नहीं मरता। दैव विपरीत है, वही यह सब चरित कर रहा है। मेरे जिस दुर्भाग्यने मुझे भगवान्‌के चरणकमलोंका वियोग दिया, वही उसे जिला देता है।

जेहि कृत कपट कनकमृग झूठा ❀ अजहुँ सो दैव मोहि पर रूठा ॥
जेहि बिधि मोहि दुख दुसह सहाये ❀ लछिमनु कहुँ कटु बचन कहाये ॥

जिस दैवने कपटसे सोनेका मिथ्या मृग बनाया था, वह अब भी मुझपर रूठा ही है। जिस दैवने मुझसे दुःसह दुःखोंको सहन कराया, जिसने लक्ष्मणजीके लिये कड़वे वचन कहलाये—

रघुपति-बिरह सबिष सर भारी ❀ तकि तकि मार बार बहु मारी ॥
ऐसेहु दुख जो राखु मम प्राना ❀ सोइ बिधि ताहि जिआव न आना ॥

जिसने ताक-ताककर श्रीरामचन्द्रजीके वियोगरूपी विषैले भारी बाणोंकी मार बहुत बार मारी और जो ऐसे दुःखमें भी मेरे प्राणोंको रख रहा है—वही विधाता उसे जिला रहा है, कोई अन्य नहीं।

बहु बिधि करति बिलाप जानकी ❀ करि करि सुरति कृपानिधान की ॥
कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी ❀ उर सर लागत मरइ सुरारी ॥
प्रभु ता तें उर हतइ न तेही ❀ एहि के हृदय बसति बैदेही ॥

कृपानिधान श्रीरामचन्द्रजीकी बार-बार याद करके सीताजी अनेक प्रकारसे विलाप करने लगीं। तब, त्रिजटा बोली—हे राजपुत्रि, सुनो। देवताओंका शत्रु रावण हृदयमें बाण लगते ही मर जायगा। प्रभु उसे इस कारण हृदयमें नहीं मारते कि इसके हृदयमें जानकीजी बसती हैं।

छंद—एहि के हृदय बस जानकी मम जानकी उर बास है।
मम उदर भुवन अनेक लागत बान सब कर नास है ॥

सुनि बचन हरष बिषाद मन अति देखि पुनि त्रिजटा कहा।
अब मरिहि रिपु एहि बिधि सुनहि सुंदरि तजहि संसय महा॥

इसके हृदयमें जानकी बसती है और जानकीके हृदयमें मेरा निवास है, और मेरे उदरमें अनेक भुवन हैं। बाण लगते ही इन सबका नाश हो जायगा। ये वचन सुनकर सीताजीको प्रसन्नता हुई,पर पीछे मनमें अत्यन्त दुःख हो आया। यह देखकर त्रिजटाने फिर कहा—हे सुन्दरि, अब शत्रु इस प्रकार मरेगा। तुम सुनो और अपने भारी संशयको दूर करो।

दो०—काटत सिर होइहि बिकल ❀ छुटि जाइहि तव ध्यान।
तब रावन कहुं हृदय महुं ❀ मरिहहिं रामु सुजान॥१२५॥

शिर कटते-कटते जब वह व्याकुल हो जायगा तब उसे तुम्हारा ध्यान छूट जायगा। उस समय सुजान श्रीरामचन्द्रजी रावणको हृदयमें मारेंगे।

अस कहि बहुत भांति समुझाई ❀ पुनि त्रिजटा निजभवन सिधाई॥
रामसुभाउ सुमिरि बैदेही ❀ उपजी बिरहबिथा अति तेही॥

ऐसा कहकर बहुत प्रकारसे समझाकर त्रिजटा फिर अपने घरको विदा हुई। जानकीजीने श्रीरामचन्द्रजीके स्वभावका स्मरण किया। उनके हृदयमें विरहकी बड़ी वेदना उठी।

निसिहि ससिहि निंदति बहु भांती ❀ जुग सम भई न राति सिराती॥
करति बिलाप मनहिं मन भारी ❀ रामबिरह जानकी दुखारी॥

वे अनेक प्रकारसे रात्रि और चन्द्रमाकी निन्दा करने लगीं। उनको एक रात्रि युगके समान हो गयी, वह बीतती न थी। जानकीजी श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें दुःखी हो रही थीं। मन-ही-मनमें भारी विलाप करने लगीं।

जब अति भयेउ बिरह उर दाहू ❀ फरकेउ बाम नयन अरु बाहू॥
सगुन बिचारि धरी मन धीरा ❀ अब मिलिहहिं कृपाल रघुबीरा॥

जब हृदयमें वियोगकी पीड़ा अत्यधिक हुई तब सीताजीकी बायीं भुजा और आंख फरकी। यह शुभ शकुन विचारकर उन्होंने मनमें धीरज रखा और सोचा कि कृपालु श्रीरामचन्द्रजी अब मिलेंगे।

इहाँ अरधनिसि रावनु जागा ❀ निजसारथि सन खीझन लागा॥
सठ रनभूमि छुड़ायसि मोही ❀ धिग धिग अधम मंदमति तोही॥

यहां रावण आधीरातको जब मूर्च्छासे जगा तब अपने सारथीपर क्रोध करने लगा—अरे दुष्ट, तूने मुझे संग्रामभूमिसे अलग कर दिया। अरे मन्दबुद्धि, तुझे धिक्कार है! अरे नीच, तुझे धिक्कार है!

तेहि पद गहि बहु बिधि समुझावा ❀ भोरु भये रथ चढ़ि पुनि धावा ॥
सुनि आगमनु दसानन केरा ❀ कपिदल खरभर भयेउ घनेरा ॥
जहं तहं भूधर बिटप उपारी ❀ धाये कटकटाइ भट भारी ॥

उस सारथीने चरण पकड़कर रावणको बहुत तरहसे समझाया। रावण सवेरा होनेपर रथपर चढ़कर फिर दौड़ा। रावणका आगमन सुनकर वानर-सेनामें बड़ी खलबली मच गयी। जहां-तहां कटकटाकर भारी योद्धा पहाड़ों और वृक्षोंको उखाड़कर दौड़े।

छं०—धाये जो मरकट बिकट भालु कराल कर भूधर धरा।
अति कोप करहिं प्रहार मारत भजि चले रजनीचरा ॥
बिचलाइ दल बलवंत कीसन्ह घेरि पुनि रावनु लियो।
चहुं दिसि चपेटन्हि मारि नखन्हि बिदारि तनु व्याकुल कियो ॥

हाथमें पर्वत लिये हुए जो विकट बन्दर और भयंकर रीछ दौड़े, वे अत्यन्त क्रोधित होकर प्रहार करने लगे। उनके मारते ही राक्षस भागकर चल दिये। बलवान् बन्दरोंने सेनाको विचलितकर फिर रावणको घेर लिया और चारों दिशाओंसे चपेटोंसे मारकर और नखोंसे शरीर विदीर्ण कर उसे व्याकुल कर दिया।

दो०—देखि महा मरकट प्रबल ❀ रावनु कीन्ह बिचार।
अंतरहित होइ निमिष महं ❀ कृत माया बिस्तार ॥ १२६ ॥

बन्दरोंको अत्यन्त प्रबल देखकर रावणने विचार किया और निगाहसे ओझल होकर एक क्षणमें मायाको फैला दिया।

तोमर छंद—जब कीन्ह तेहिं पाखंड ❀ भये प्रगट जंतु प्रचंड ॥
बेताल भूत पिसाच ❀ कर धरे धनु नाराच ॥
जोगिनि गहे करबाल ❀ एक हाथ मनुजकपाल ॥
करि सद्य सोनित पान ❀ नाचहिं करहिं बहु गान ॥

जब रावणने माया फैलायी तब वहां प्रचण्ड जीव प्रकट हुए। हाथमें धनुष और बाण लिये हुए बैताल, भूत और पिशाच; एक हाथमें तलवार और एक हाथमें मनुष्यका कपाल लिये हुए जोगिनियां—सब ताज़ा रक्त पीकर नाचने और अनेक गान करने लगीं।

धरु मारु बोलहिं घोर ❀ रहि पूरि धुनि चहुं ओर ॥
मुख बाइ धावहिं खान ❀ तब लगे कीस परान ॥

जहं जाहिं मरकट भागि ❀ तहं बरत देखहिं आगि ॥
भये बिकल बानर भालु ❀ पुनि लाग बरषइ बालु ॥

वे सब पकड़ो, मारो आदि घोर शब्द बोलने लगे, जिनकी ध्वनि चारों ओर फैल गयी। वे जब मुंह फैलाकर खानेको दौड़ने लगे तब बन्दर भागने लगे। बन्दर जहां भागकर जाते वहां उन्हें आग जलती दिखलायी पड़ती थी। रीछ और बन्दर व्याकुल हो गये। फिर वहां बालू बरसने लगी।

जहं तहं थकित करि कीस ❀ गर्जेउ बहुरि दससीस ॥
लछिमन कपीससमेत ❀ भये सकल बीर अचेत ॥
हा राम हा रघुनाथ ❀ कहि सुभट मींजहिं हाथ ॥
एहि बिधि सकल बल तोरि ❀ तेहिं कीन्ह कपट बहोरि ॥

जहां थे वहीं बन्दरोंको थकितकर रावणने फिर गर्जना की। कपिराज सुग्रीवसमेत लक्ष्मणजी आदि सब वीर बेसुध हो गये। हा राम—हा रघुनाथ—कहकर योद्धा हाथ मींजते थे। इस प्रकार सबका बल तोड़कर उसने फिर कपट किया।

प्रगटेसि बिपुल हनुमान ❀ धाये गहे पाषान ॥
तिन्ह रामु घेरे जाइ ❀ चहुं दिसि बरूथ बनाइ ॥
मारहु धरहु जनि जाइ ❀ कटकटहिं पूंछ उठाइ ॥
दह दिसि लंगूर बिराज ❀ तेहि मध्य कोसलराज ॥

उसने बहुतसे हनुमान प्रकट कर दिये, जो पत्थर लिये हुए दौड़े। उन्होंने जाकर सेना बनाकर श्रीरामचन्द्रजीको घेर लिया। वे सब 'मारो', 'पकड़ो', 'चला न जावे', कहते और पूंछ उठाकर कटकटाते थे। दसों दिशाओंमें बन्दरोंकी पूंछ छाई हुई थी और उनके बीच कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी थे।

छं०—तेहि मध्य कोसलराज सुंदर स्यामतनु सोभा लही।
जनु इंद्रधनुष अनेक की बर बारि तुंग तमालही ॥
प्रभु देखि हरख बिषाद उर सुर बदत जय जय जय करी।
रघुबीर एकहि तीर कोपि निमेष महुं माया हरी ॥

बन्दरोंकी पूंछोंके बीच कोशलदेशके राजा श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर श्याम शरीरने ऐसी शोभा पायी कि ऊंचे तमाल वृक्षके चारों ओर अनेक इन्द्रधनुषोंका श्रेष्ठ घेरा हो! प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर देवताओंके

हृदयमें आनन्द हुआ और विषाद भी। उन्होंने जय-जयकार किया और बोले कि हे श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो! फिर, श्रीरामचन्द्रजीने क्रोधित होकर एक पलमें एक ही बाणसे सब माया हरण कर ली।

माया बिगत कपि भालु हरषे बिटप गिरि गहि सब फिरे।
सरनिकर छाड़े राम रावन-बाहु-सिर पुनि महि गिरे॥
श्री-राम-रावन समरचरित अनेक कल्प जो गावहीं।
सत सेष सारद निगम कबि तेउ तदपि पार न पावहीं॥

माया दूर हो जानेपर रीछ और बन्दर प्रसन्न हुए और पर्वत और वृक्ष लेकर सब लौट आये। श्रीरामचन्द्रजीने बाणोंके समूह छोड़े, जिनसे कटकर रावणके शिर और भुजाएँ पृथिवीपर फिर गिर पड़ीं। श्रीरामचन्द्रजी और रावणकी इस युद्ध-लीलाको सौ शेषनाग, सरस्वती, वेद और कवि यदि अनेक कल्पोंतक गावें तो भी वे पार नहीं पा सकते।

दो०—ता के गुनगन कछु कहे ❀ जड़मति तुलसीदास।
निज-पौरुष-अनुसार जिमि ❀ मसक उड़ाहिं अकास॥१२७॥

मूर्ख बुद्धिवाले तुलसीदासने उस लीलाके कुछ गुणोंको कहा है; जैसे मच्छर अपने पौरुषके अनुसार आकाशमें उड़ते हैं।

(रावण-वध)

काटे सिरभुज बार बहु ❀ मरत न भट लंकेस।
प्रभु क्रीड़त मुनि सिद्ध जन ❀ ब्याकुल देखि कलेस॥१२८॥

श्रीरामचन्द्रजीने शिरों और भुजाओंको बहुत बार काटा, फिर भी योद्धा लंकापति रावण मरता नहीं। प्रभु तो लीला कर रहे हैं, परंतु मुनि और सिद्धजन देखकर क्लेशसे व्याकुल हो रहे हैं।

काटत बढ़हिं सीससमुदाई ❀ जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई॥
मरइ न रिपु स्रम भयउ बिसेखा ❀ राम बिभीषनतन तब देखा॥

काटते ही रावणके शिरोंके समूह बढ़ जाते थे; जैसे ज्यों-ज्यों लाभ होता है, लोभ बढ़ता ही जाता है। शत्रु मरता न था। श्रीरामचन्द्रजीको बड़ा परिश्रम हुआ। फिर उन्होंने विभीषणकी ओर देखा।

उमा काल मरु जाकी ईछा ❀ सोइ प्रभु जन कर प्रीति परीछा॥
सुनु सरबग्य चराचरनायक ❀ प्रनतपाल सुर-मुनि-सुख-दायक॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, जिसकी इच्छासे काल भी मर जाता है, वही प्रभु अपने भक्तकी प्रीति-परीक्षा कर रहे हैं। विभीषण कहने लगे—हे सर्वज्ञ, हे चराचरके स्वामी, हे भक्तोंकी रक्षा करनेवाले, हे देवताओं और मुनियोंको सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, सुनिये।

नाभिकुंड पियूष बस या के ❀ नाथ जियत रावनु बल ता के॥
सुनत बिभीषनबचन कृपाला ❀ हरषि गहे कर बान कराला॥

इसके नाभिकुण्डमें अमृत बसता है। हे नाथ, उसीके बलसे रावण जीता है। विभीषणके वचन सुनते ही कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर हाथोंमें भयंकर बाण लिये।

असुभ होन लागे तब नाना ❀ रोवहिं खग सृगाल बहु स्वाना॥
बोलहिं खग जग-आरति-हेतू ❀ प्रगट भये नभ जहँ तहँ केतू॥

उस समय तरह-तरहके अपशकुन होने लगे। बहुतसे गीदड़, गधे और कुत्ते रोने लगे। संसारमें दुःखके कारण-रूप (अपनी बोलीसे दुःखकी सूचना देनेवाले) पक्षी बोलने लगे। जहां-तहां आकाशमें केतु उदय हो गये।

दस दिसि दाह होन अति लागा ❀ भयेउ परब बिनु रबिउपरागा॥
मंदोदरि उर कंपित भारी ❀ प्रतिमा स्रवहिं नयनमग बारी॥

दसों दिशाओंमें अत्यन्त दाह होने लगी, पर्वकाल बिना ही सूर्य-ग्रहण हो गया। मंदोदरी अपने हृदयमें बहुत कांपने लगी और मूर्तियोंके नेत्रमार्गसे जल बहने लगा।

छं०—प्रतिमा स्रवहिं पबि पात नभ अतिबात बह डोलति मही।
बरषहिं बलाहक रुधिरु कच रज असुभ अति सक को कही॥
उतपात अमित बिलोकि नभ सुर बिकल बोलहिं जय जये।
सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भये॥

मूर्तियोंके आंसू बहने लगे, आकाशसे वज्रपात होने लगा, बड़े जोरसे हवा चलने लगी और पृथिवी खूब जोरसे हिलने लगी। बादल रक्त, बाल और धूल बरसाने लगे। अत्यन्त अशुभ-सूचक सब बातोंको कौन कह सकता है? असंख्य उत्पात होते देखकर आकाशमें देवता व्याकुल होकर जय-जय बोलने लगे। फिर, देवताओं-को डरा हुआ समझकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने धनुषपर बाण चढ़ाये।

दो०—खैंचि सरासन स्रवन लगि ❀ छाड़े सर एकतीस।
रघु-नायक-सायक चले ❀ मानहु काल फनीस॥ १२६॥

राम-रावण युद्ध ।　　　　राम-रावण युद्ध ।

कानतक धनुष खींचकर श्रीरामचन्द्रजीने इकतीस वाण छोड़े। श्रीरामचन्द्रजीके वाण इस प्रकार चल दिये मानों काल-सर्प हों।

सायक एक नाभिसर सोखा ❀ अपर लगे भुज सिर करि रोखा ॥
लेइ सिर बाहु चले नाराचा ❀ सिर-भुज-हीन रुंड महि नाचा ॥

एक वाणने तो नाभिकुण्ड सुखा दिया और अन्य वाण क्रोध करके रावणकी भुजाओं और शिरोंमें लगे। शिरों और भुजाओंको लेकर उधर वाण चल दिये और इधर शिरों और भुजाओंसे रहित रावणका धड़ पृथिवी-पर नाचने लगा।

धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा ❀ तब प्रभु सरहति कृत युग खंडा ॥
गरजेउ मरत घोररव भारी ❀ कहां रामु रन हतउं प्रचारी ॥

धड़के प्रचंड रूपसे दौड़नेसे जब पृथिवी धसकने लगी तब प्रभुने वाण मारकर उसके दो खण्ड कर दिये। मरते समय रावण भारी भयानक शब्द करके गरजा और बोला कि राम कहां है? मैं उसे ललकारकर युद्धमें मारूंगा।

डोली भूमि गिरत दसकंधर ❀ छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर ॥
धरनि परेउ दोउ खंड बढ़ाई ❀ चापि भालु - मर्कट - समुदाई ॥

रावणके गिरते ही पृथिवी हिल गयी। समुद्र, नदियां, दिग्गज और पर्वत—सब क्षुब्ध हो उठे। दोनों खंडों-को बढ़ाकर रावण रीछ और बंदरोंके समूहको दबाकर पृथिवीपर पड़ गया।

मंदोदरि आगे भुज सीसा ❀ धरि सर चले जहां जगदीसा ॥
प्रविसे सब निषंग महं जाई ❀ देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ॥

मंदोदरीके आगे रावणके शिरों और भुजाओंको रखकर वाण वहांके लिये चल दिये जहां जगतके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी थे। वे सब वाण जाकर तरकसमें घुस गये। देवताओंने यह सब देखकर नगाड़े बजाये।

तासु तेज समान प्रभुआनन ❀ हरषे देखि संभु चतुरानन ॥
जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा ❀ जय रघुबीर प्रबल - भुज-दंडा ॥
बरषहिं सुमन देव-मुनि बृंदा ❀ जय कृपाल जय जयति मुकुंदा ॥

रावणका तेज प्रभुके मुखमें समा गया, यह देखकर शिवजी और ब्रह्मा प्रसन्न हुए। ब्रह्माण्डमें जय-जय-कार शब्द भर गया। सब कहने लगे कि श्रीरामचन्द्रजीके प्रबल भुजदण्डोंकी जय हो। देवताओं और मुनियोंके समूह फूल बरसाने लगे और कहने लगे कि हे कृपालु, आपकी जय हो, हे मुकुन्द, आपकी जय हो, जय हो।

छं०—जय कृपाकंद मुकुंद द्वंदहरन सरन-सुख-प्रद प्रभो।
खल-दल-बिदारन परमकारन कारुनीक सदा बिभो॥
सुर सुमन बरषहिं हरष संकुल बाज दुंदुभि गहगही।
संग्रामअंगन रामअंग अनंग बहु सोभा लही॥

हे दयाके मूल, हे प्रभो, हे मुक्तिदाता, हे सन्देह और दुःखको दूर कर देनेवाले, हे शरणागतको सुख देनेवाले, हे दुष्टोंके दलको विदीर्ण करनेवाले, हे परमकारण, हे करुणामय, हे नित्य-स्वरूप और हे सर्वज्ञ श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो। प्रसन्नतासे भरे हुए देवता फूल बरसाने लगे और गहगह शब्द करके नगारे बजाने लगे। उस समय संग्रामभूमिमें श्रीरामचन्द्रजीके शरीरकी शोभा अगणित कामदेवोंके समान हुई।

सिर जटामुकुट प्रसून बिचबिच अति मनोहर राजहीं।
जनु नीलगिरि पर तड़ित पटल समेत उडुगन भ्राजहीं॥
भुजदंड सरकोदंड फेरत रुधिरकन तन अति बने।
जनु रायमुनी तमाल पर बैठीं बिपुल सुख आपने॥

उनके शिरपर जटाओंका मुकुट था, जिसमें बीच-बीच फूल थे, जो अत्यन्त सुन्दर शोभित हो रहे थे, मानों नील पर्वतपर बिजलियोंके समूहसमेत तारागण प्रकाशित हो रहे हों। अपने भुजदण्डोंसे वे धनुषबाण फिरा रहे थे और उनके शरीरपर रक्तके कण अत्यन्त सजे हुए थे, मानों तमाल-वृक्षपर अपने अत्यन्त सुखसे रायमुनी चिड़ियाँ बैठी हों।

दो०—कृपादृष्टि करि बृष्टि प्रभु ❀ अभय किये सुरबृंद।
भालु कीस सब हरषे ❀ जय सुखधाम मुकुंद॥ १३०॥

कृपादृष्टिकी वृष्टि करके प्रभुने देवताओंके समूहको निर्भय कर दिया। रीछ और बन्दर, सब प्रसन्न हो गये और कहने लगे कि हे मुकुन्द, हे सुखधाम श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो।

पतिसिर देखत मंदोदरी ❀ मुरुछित बिकल धरनि खसि परी॥
जुबतिबृंद रोवत उठि धाईं ❀ तेहि उठाइ रावन पहिं आईं॥

उधर पति रावणका शिर देखते ही मंदोदरी व्याकुलतासे मूर्च्छित होकर पृथिवीपर गिर पड़ी। झुण्डकी झुण्ड स्त्रियाँ रोती हुई उठकर दौड़ीं और उसे उठाकर रावणके पास आयीं।

पतिगति देखि ते करहिं पुकारा ❀ छूटे कच नहिं बपुष सँभारा॥
उरताड़ना करहिं बिधि नाना ❀ रोवत करहिं प्रताप बखाना॥

पतिकी गति देखकर वे सब चिल्लाने लगीं। बाल बिथुर गये और उन्हें शरीरकी संभाल नहीं रही। वे छाती पीटने, तरह-तरहसे रोने और रावणके प्रतापका बखान करने लगीं।

तव बल नाथ डोल नित धरनी ❀ तेजहीन पावक ससि तरनी ॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा ❀ सो तनु भूमि परेउ भरि छारा ॥

हे नाथ, तुम्हारे बलसे नित्य धरती हिलती थी; अग्नि, चन्द्रमा और सूर्य तेजहीन होते थे। शेषनाग और कच्छप जिसका भार न सह सकते थे, वह शरीर धूलसे भरा हुआ पृथिवीपर पड़ा है!

बरुन कुबेर सुरेस समीरा ❀ रनसनमुख धर काहु न धीरा ॥
भुजबल जितेहु काल जम साईं ❀ आजु परेहु अनाथ की नाईं ॥

तुम्हारे सामने रणमें वरुण, कुबेर, देवराज इन्द्र और पवन—किसीने भी धीरज न रखा था। हे स्वामिन्, अपनी भुजाओंके बलसे तुमने काल और यमको भी जीता था; आज वही तुम अनाथकी भांति पड़े हुये हो!

जगतबिदित तुम्हारि प्रभुताई ❀ सुत परिजन बल बरनि न जाई ॥
रामबिमुख अस हाल तुम्हारा ❀ रहा न कोउ कुल रोवनिहारा ॥

तुम्हारी प्रभुता संसारमें प्रसिद्ध है; तुम्हारे पुत्र, परिवार और बलका वर्णन नहीं किया जाता। परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होनेसे तुम्हारा ऐसा हाल हुआ कि कुलमें कोई रोनेवाला भी नहीं रहा।

तव बस बिधिप्रपंच सब नाथा ❀ सभय दिसिप नित नावहिं माथा ॥
अब तव सिर भुज जंबुक खाहीं ❀ रामबिमुख ये अनुचित नाहीं ॥
कालबिबस पति कहा न माना ❀ अग-जग-नाथु मनुज करि जाना ॥

हे नाथ, विधाताकी सब माया तुम्हारे वशमें थी, सब दिग्पाल तुमसे डरकर नित्य तुम्हें मस्तक नवाते थे। अब तुम्हारे शिरों और भुजाओंको गीदड़ खाते हैं! श्रीरामचन्द्रजीसे विमुख होनेवालेके लिये यह अनुचित नहीं है। हे स्वामिन्, कालके वशमें होनेके कारण आपने मेरा कहना नहीं माना और चराचरके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको साधारण मनुष्य समझा।

छं०—जानेउ मनुजकरि दनुजकानन - दहन - पावक हरि स्वयं।
जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिय भजेहु नहिं करुनामयं ॥
आजनम तें पर - द्रोह - रत पापौघमय तव तनु अयं।
तुम्हहू दियो निजधाम राम नमामि ब्रह्म निरामयं ॥

तुमने राक्षसरूपी वनको जलानेके लिये अग्निरूप स्वयं भगवान् श्रीरामचन्द्रजीको साधारण मनुष्य-रूपमें समझा। हे स्वामिन्, तुमने उस करुणामयको नहीं भजा, जिसे शिव, ब्रह्मा आदि देवता नमस्कार करते हैं। आजन्म

तुम्हारा यह पाप-समूहमय शरीर यद्यपि पर-द्रोह-रत रहा, तथापि तुम्हें भी श्रीरामचन्द्रजीने निजधाम वैकुण्ठ दिया। मैं निर्विकार ब्रह्म श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार करती हूं।

दो०—अहह नाथ रघुनाथ सम ❀ कृपासिंधु नहिं आन।
जोगिबृन्द दुरलभ गति ❀ तोहि दीन्हि भगवान ॥ १३१ ॥

हा नाथ! श्रीरामचन्द्रजीके समान कृपासागर दूसरा कोई नहीं है, जो भगवान्ने तुम्हें वह परम गति दी जो योगियोंको भी दुर्लभ है।

मंदोदरीबचन सुनि काना ❀ सुर मुनि सिद्ध सबन्हि सुख माना ॥
अज महेस नारद सनकादी ❀ जे मुनिवर परमारथवादी ॥

मंदोदरीके वचन कानों सुनकर देवता, मुनि और सिद्धजन—सबने सुख माना। ब्रह्मा, शिव, नारद और सनकादि जो परमार्थवादी मुनिश्रेष्ठ हैं—

भरि लोचन रघुपतिहिं निहारी ❀ प्रेममगन सब भये सुखारी ॥
रुदनु करत देखी सब नारी ❀ गयउ बिभीषनु मन दुखु भारी ॥

वे सब श्रीरामचन्द्रजीको नेत्र भरकर देखकर प्रेममें मग्न और सुखी हो गये। सब स्त्रियोंको रुदन करते हुए देखकर विभीषण गये। उनके मनको बड़ा दुःख हुआ।

बंधुदसा बिलोकि दुख कीन्हा ❀ तब प्रभु अनुजहिं आयेसु दीन्हा ॥
लछिमनु तेहि बहुबिधि समुझायेउ ❀ बहुरि बिभीषनु प्रभु पहिं आयेउ ॥

भाई रावणकी दशा देखकर जब विभीषणने दुःख किया तब श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको आज्ञा दी। लक्ष्मणजीने उन्हें बहुत प्रकारसे समझाया और फिर विभीषण प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये।

कृपादृष्टि प्रभु ताहि बिलोका ❀ करहु क्रिया परिहरि सब सोका ॥
कीन्हि क्रिया प्रभुआयेसु मानी ❀ बिधिवत देस काल जिय जानी ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने विभीषणको कृपादृष्टिसे देखा और कहा कि सब शोक दूर करके रावणकी क्रिया करो। प्रभुकी आज्ञा मानकर विभीषणने हृदयमें देश और कालको समझकर विधिपूर्वक रावणकी सब क्रिया की।

दो०—मंदोदरी आदि सबु ❀ देइ तिलांजलि ताहि।
भवन गईं रघुपति गुन ❀ गन बरनत मन माहिं ॥१३२॥

मंदोदरी आदि सब स्त्रियां रावणको तिलांजलि देकर मनमें श्रीरामचन्द्रजीके गुणगणोंका वर्णन करती हुई अपने घर गयीं।

आइ बिभीषनु पुनि सिर नायेउ ❀ कृपासिंधु तब अनुज बोलायेउ ॥
तुम्ह कपीस अंगद नल नीला ❀ जामवंत मारुति नयसीला ॥

फिर विभीषणने जब आकर शिर नवाया तब दयासागर श्रीरामचन्द्रजीने छोटे भाई—लक्ष्मणजीको बुलाया। तुम, कपिराज सुग्रीव, अंगद, नल और नील, जाम्बवान् और नीतिमान हनुमान—

सब मिलि जाहु बिभीषन साथा ❀ सारेहु तिलकु कहेउ रघुनाथा ॥
पितावचन मैं नगरु न आवउँ ❀ आपु सरिस कपि अनुज पठावउँ ॥

सब मिलकर विभीषणके साथ जाओ और राजतिलक करो—यह श्रीरामचन्द्रजीने कहा। श्रीरामचन्द्रजी फिर कहने लगे—पिताकी आज्ञा है, इससे मैं नगरमें नहीं आऊंगा; अपने ही समान भाई और बन्दरोंको भेजता हूं।

तुरत चले कपि सुनि प्रभुबचना ❀ कीन्ही जाइ तिलक करि रचना ॥
सादर सिंहासन बैठारी ❀ तिलक सारि अस्तुति अनुसारी ॥

प्रभुके वचन सुनकर सब वानर तुरंत चल दिये और जाकर तिलककी सब रचना की। आदरके साथ विभीषणको सिंहासनपर विठलाया और तिलक देकर स्तुति आरंभ की।

जोरि पानि सबहीं सिरु नाये ❀ सहित बिभीषनु प्रभु पहिं आये॥
तब रघुबीर बोलि कपि लीन्हे ❀ कहि प्रियबचन सुखी सब कीन्हे ॥

हाथ जोड़कर सभीने विभीषणको शिर नवाया। फिर विभीषणसमेत सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। तब श्रीरामचन्द्रजीने बन्दरोंको बुला लिया और प्रिय वचन कहकर सबको सुखी किया।

छं०—किये सुखी कहि बानी सुधासम बल तुम्हारे रिपु हयो।
पायो बिभीषनु राजु तिहुँ पुर जस तुम्हारो नित नयो ॥
मोहि सहित सुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जे गाइहैं।
संसारसिंधु अपार पार प्रयास बिनु नर पाइहैं ॥

श्रीरामचन्द्रजीने अमृतके समान वाणी कहकर सबको सुखी किया। उन्होंने कहा—तुम्हारे ही बलसे शत्रु मारा गया और विभीषणने राज्य पाया। तुम्हारा यश तीनों लोकोंमें नित्य नया फैलेगा। मुझसमेत तुम्हारी शुभकीर्तिको जो मनुष्य अत्यंत प्रीतिसे गायँगे, वे अपार संसार-सागरका पार किसी प्रकारके प्रयास बिना ही पा जायँगे।

दो०—प्रभु के वचन स्रवन सुनि ❀ नहिं अघाहिं कपिपुंज ।
बार बार सिर नावहिं ❀ गहहिं सकल पदकंज ॥१३३॥

प्रभुके वचन कानोंसे सुनकर वानरोंका समूह अघाता न था । वे सब बारबार शिर नवाते और चरणकमल पकड़ते थे ।

पुनि प्रभु बोलि लियेउ हनुमाना ❀ लंका जाहु कहेउ भगवाना ॥
समाचार जानकिहिं सुनावहु ❀ तासु कुसल लेइ तुम्ह चलि आवहु ॥

फिर प्रभुने हनुमानजीको बुला लिया । भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने हनुमानजीसे कहा कि लंकामें जाओ और जानकीको सब समाचार सुनाओ, फिर उसकी कुशल लेकर तुम चले आओ ।

तब हनुमंत नगर महुं आये ❀ सुनि निसिचरी निसाचर धाये ॥
बहु प्रकार तिन्ह पूजा कीन्ही ❀ जनकसुता दिखाइ पुनि दीन्ही ॥

तब हनुमानजी लंकापुरीमें आये । उनका आना सुनकर राक्षस और राक्षसियां—सब दौड़ीं । उन्होंने बहुत प्रकारसे हनुमानजीकी पूजा की और फिर जानकीजीको दिखला दिया ।

दूरिहिं तें प्रनाम कपि कीन्हा ❀ रघु-पति-दूत जानकी चीन्हा ॥
कहहु तात प्रभु कृपानिकेता ❀ कुसल अनुज-कपि-सेन-समेता ॥

हनुमानजीने जानकीजीको दूरसे ही प्रणाम किया । जानकीजीने पहचान लिया कि वे श्रीरामचन्द्रजीके दूत हैं । जानकीजीने पूछा—हे तात, बतलाओ कि कृपानिधान प्रभु श्रीरामचंद्रजी, छोटे भाई लक्ष्मण और वानर सेना-समेत सकुशल तो हैं ?

सब बिधि कुसल कोसलाधीसा ❀ मातु समर जीतेउ दससीसा ॥
अबिचल राज बिभीषनु पावा ❀ सुनि कपिबचन हरष उर छावा ॥

हनुमानजी बोले— हे माता, कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी सब प्रकार कुशलपूर्वक हैं । उन्होंने रावणको संग्राममें जीत लिया । विभीषणको अटल राज्य मिल गया । हनुमानजीके ये वचन सुनकर सीताजीके हृदयमें आनन्द छा गया ।

छं०—अतिहरष मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा ।
का देउं तोहि त्रयलोक महुं कपि किमपि नहिं बानी समा ॥
सुनु मातु मैं पायेउं अखिल-जग-राज आजु न संसयं ।
रन जीति रिपुदल बंधुजुत पस्यामि राममनामयं ॥

लक्ष्मीरूप सीताजीको मनमें अत्यन्त आनन्द हुआ, शरीर पुलकायमान हो गया, नेत्रोंमें जल भर आया और वे बारबार कहने लगीं—हे हनुमान, मैं तुम्हें क्या दूँ ? तीनों लोकोंमें तुम्हारी इस वाणीके समान कुछ भी नहीं है। हनुमानजीने कहा—हे माता, सुनिये! आज मैंने सारे संसारका राज्य पा लिया, इसमें संदेह नहीं है, जो संग्राममें शत्रुदलको जीतकर निर्विकार श्रीरामचन्द्रजीको भाई लक्ष्मणसमेत देख रहा हूं।

दो०—सुनु सुत सद्गुन सकल तव ❀ हृदय बसहु हनुमंत।
सानुकूल कोसलपति ❀ रहहु समेत अनंत ॥१३४॥

सीताजीने कहा—हे पुत्र हनुमान, सुनो। तुम्हारे हृदयमें सब सद्गुण वास करें और अनन्तरूप लक्ष्मणजी-समेत कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजी तुमपर अनुकूल रहें।

अब सोइ जतनु करहु तुम्ह ताता ❀ देखउँ नयन स्याम मृदुगाता ॥
तब हनुमान राम पहिं जाई ❀ जनकसुता कै कुसल सुनाई ॥

हे तात, तुम वही यत्न करो जो मैं अपने नेत्रोंसे कोमल श्याम शरीर श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करूँ। तब श्रीरामचन्द्रजीके पास जाकर हनुमानजीने जानकीजीका कुशल-मंगल सुनाया।

सुनि संदेस भानु-कुल-भूषन ❀ बालि लिये जुबराज बिभीषन ॥
मारुतसुत के संग सिधावहु ❀ सादर जनकसुतहिं लेइ आवहु ॥

सीताजीका सन्देश सुनकर सूर्य कुल-भूषण श्रीरामचन्द्रजीने युवराज अङ्गद और विभीषणको बुला लिया और कहा—पवनपुत्र हनुमानजीके साथ जाओ और आदरके साथ जानकीको ले आओ।

तुरतहिं सकल गये जहं सीता ❀ सेवहिं सब निसिचरी बिनीता ॥
बेगि बिभीषन तिन्हहिं सिखावा ❀ तिन्ह बहुबिधि मज्जन करवावा ॥

तुरन्त ही सब वहां गये जहां सीताजी थीं और सब राक्षसियां विनयपूर्वक उनकी सेवा कर रही थीं। शीघ्र ही विभीषणने उन राक्षसियोंको सिखलाया, जिन्होंने आदरके साथ सीताजीको स्नान कराया।

बहु प्रकार भूषन पहिराये ❀ सिबिका रुचिर साजि पुनि लाये ॥
ता पर हरषि चढ़ी बैदेही ❀ सुमिरि राम सुखधाम सनेही ॥

अनेक प्रकारके भूषण सीताजीको पहनाये। फिर एक सुन्दर पालकीको सजाकर वहां लाये। सुखके धाम स्नेही श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर सीताजी उस पालकीपर प्रसन्न होकर सवार हुईं।

बेतपानि रच्छक चहुँ पासा ❀ चले सकल मन परम हुलासा ॥
देखन भालु कीस सब आये ❀ रच्छक कोपि निवारन धाये ॥

उनके चारों ओर रक्षक चले, जो हाथोंमें बेतकी छड़ियां लिये हुए थे। सबके मनमें बड़ी प्रसन्नता थी। सीताजीको देखनेके लिये जब सब रीछ और बन्दर आये तब रक्षक क्रोधित होकर रोकनेके लिये दौड़े।

कह रघुबीर कहा मम मानहु ❀ सीतहिं सखा पयादे आनहु ॥
देखहिं कपि जननी की नाईं ❀ बिहँसि कहा रघुनाथ गोसाईं ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे मित्र विभीषण, मेरा कहना मानो, सीताजीको पैदल ही लाओ। फिर स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने हंसकर कहा कि सब बन्दर उन्हें माताके समान देखें।

सुनि प्रभुबचन भालु कपि हरषे ❀ नभ तें सुरन सुमन बहु बरषे ॥
सीता प्रथम अनल महुं राखी ❀ प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी ॥

प्रभुके वचन सुनकर रीछ और बन्दर प्रसन्न हो गये। देवताओंने आकाशसे बहुतसे फूलोंकी वर्षा की। सीताजीको पहिले अग्निमें रख दिया था, अब उन्हें अन्तर साक्षी श्रीरामचन्द्रजी प्रकट करना चाहते थे।

दो०—तेहि कारन करुनानिधि ❀ कहे कछुक दुरबाद।
सुनत जातुधानी सब ❀ लागीं करइ बिषाद ॥१३५॥

इसी कारण दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीने कुछ दुर्वचन कहे, जिन्हें सुनकर सब राक्षसियां खेद करने लगीं।

प्रभु के बचन सीस धरि सीता ❀ बोली मन-क्रम-बचन-पुनीता ॥
लछिमन होहु धरम के नेगी ❀ पावक प्रगट करहु तुम्ह बेगी ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचनोंको शिरोधार्य कर मन, वाणी और कर्मसे पवित्र सीताजी बोलीं—हे लक्ष्मण, तुम मेरे धर्मके साथी बनो और शीघ्र ही अग्नि प्रकट करो।

सुनि लछिमनु सीता कै बानी ❀ बिरह-बिबेक-धरम-निति-सानी ॥
लोचन सजल जोरि कर दोऊ ❀ प्रभु सन कछु कहि सकत न ओऊ ॥

सीताजीकी विरह, विवेक, धर्म और नीतिसे भरी हुई वाणी सुनकर लक्ष्मणजीके नेत्रोंमें जल भर आया। उन्होंने अपने दोनों हाथ जोड़ लिये। वे भी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीसे कुछ कह न सकते थे।

देखि रामरुख लछिमनु धाये ❀ पावक प्रगटि काठ बहु लाये ॥
पावक प्रबल देखि बैदेही ❀ हृदय हरष नहिं भय कछु तेही ॥

श्रीरामचन्द्रजीका रुख देखकर लक्ष्मणजी दौड़े और अग्नि जलाकर बहुतसा काठ ले आये। फिर, खूब जोरसे जलती हुई अग्नि देखकर सीताजीको हृदयमें आनन्द हुआ—उन्हें कुछ भय नहीं हुआ।

जौं मन बच क्रम मम उर माहीं ❀ तजि रघुबीर आन गति नाहीं ॥
तौ कृसानु सब कै गति जाना ❀ मोकहुं होहु स्त्रिखंड समाना ॥

वे बोलीं—मेरे हृदयमें मन, वाणी और कर्मसे यदि श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर अन्य गति नहीं है तो हे अग्निदेव, आप सबकी गति जानते हैं, आप मेरे लिये चंदनके समान शीतल हो जाइये।

छं०—स्री-खंड-सम पावक प्रबेस कियो सुमिरि प्रभु मैथिली।
जय कोसलेस महेस-बंदित-चरन रति अतिनिरमली॥
प्रतिबिंब अरु लौकिककलंक प्रचंड पावक महुँ जरे।
प्रभुचरित काहु न लखे सुर नभ सिद्ध मुनि देखहिं खरे॥

प्रभुका स्मरण कर सीताजीने चंदनके समान अग्निमें प्रवेश किया। उन्होंने कहा—हे कोशलदेशके स्वामी, आपकी जय हो! शिवजी आपके चरणोंकी वंदना करते हैं, जिनमें किया हुआ प्रेम अत्यंत निर्मल कर देनेवाला है। सीताजीका छाया-रूप और लौकिक कलंक प्रचंड अग्निमें जल गये। आकाशमें देवता, सिद्ध और मुनिजन खड़े हुए देख रहे थे; परन्तु प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी इस लीलाको किसीने भी नहीं देखा।

धरि रूप पावक पानि गहि स्री सत्य स्रुति जग बिदित जो।
जिमि छीरसागर इंदिरा रामहिं समरपी आनि सो॥
सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अतिसोभा भली।
नव-नील-नीरज निकट मानहु कनक-पंकज की कली॥

जैसे क्षीर-सागरने विष्णुको लक्ष्मी समर्पित की थी, उसी प्रकार अग्निदेवने अपना रूप रखकर उन सीताजीको, जो सत्य ही लक्ष्मी हैं और वेदों और संसारमें प्रसिद्ध हैं, हाथ पकड़कर लाकर श्रीरामचन्द्रजीको सौंप दिया। वे सीताजी श्रीरामचन्द्रजीकी बायीं ओर विराजमान हैं, उनकी अत्यंत अधिक शोभा बड़ी सुन्दर हो रही है; मानों नये नील कमलके पास सोनेके कमलकी कली हो।

दो०—बरषहिं सुमन हरषि सुर ⊛ बाजहिं गगन निसान।
गावहिं किंनर सुरबधू ⊛ नाचहिं चढ़ी बिमान॥ १२६॥

प्रसन्न होकर देवता फूल बरसा रहे हैं, आकाशमें नगारे बज रहे हैं, किन्नर गा रहे हैं और देवताओंकी स्त्रियां विमानोंपर चढ़ी हुई नाच रही हैं।

जनकसुता समेत प्रभु ⊛ सोभा अमित अपार।
देखि भालु कपि हरषे ⊛ जय रघुपति सुखसार॥ १२७॥

जानकीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी असीम और अपार शोभा देखकर रीछ और बन्दर प्रसन्न हो गये और बोले—हे सुखोंके साररूप श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो।

जब रघु-पति-अनुसासन पाई ❀ मातलि चलेउ चरन सिरु नाई ॥
आये देव सदा स्वारथी ❀ बचन कहहिं जनु परमारथी ॥

जब श्रीरामचन्द्रजीकी आज्ञा पाकर मातलि चरणोंमें शिर नवाकर विदा हुआ, तब देवता आये जो सदा स्वार्थरत रहते हैं। वे सब इस प्रकार वचन कहने लगे; मानो परमार्थी हों।

दीनबंधु दयालु रघुराया ❀ देव कीन्हि देवन्ह पर दाया ॥
बिस्व-द्रोह-रत यह खल कामी ❀ निज अघ गयेउ कुमारग-गामी ॥

हे दीनबन्धु, हे दयालु श्रीरामचन्द्रजी, हे देव, आपने देवताओंपर दया की। यह दुष्ट, कामी रावण, संसारसे द्रोह करनेमें तत्पर था। बुरे मार्गमें चलनेवाला वह अब अपने ही पापोंसे मारा गया।

तुम्ह सम रूप ब्रह्म अबिनासी ❀ सदा एक रस सहज उदासी ॥
अकल अगुन अज अनघ अनामय ❀ अजित अमोघसक्ति करुनामय ॥

आप सम-रूप ब्रह्म, अविनाशी, नित्य एकरस हैं और स्वभावसे ही उदासीन हैं। आप कलारहित, निर्गुण, अजन्मा, निष्पाप, निर्विकार, अजेय, अमोघशक्ति और दयामय हैं।

मीन कमठ सूकर नरहरी ❀ बामन परसुराम बपु धरी ॥
जब जब नाथ सुरन्ह दुख पायेउ ❀ नाना तनु धरि तुम्हहिं नसायेउ ॥

आप मत्स्य, कच्छप, शूकर, नृसिंह, वामन और परशुरामका शरीर धारण करनेवाले हैं। हे नाथ, जब-जब देवताओंने दुःख पाया, तब-तब तरह-तरहके शरीर रखकर आपने ही उसे नष्ट किया।

यह खल मलिन सदा सुरद्रोही ❀ काम-लोभ-मद-रत अति कोही ॥
अधम सिरोमनि तव पद पावा ❀ यह हमरे मन बिसमय आवा ॥

यह खल मलिन और सदा देवताओंका द्रोही था; काम, लोभ और मदमें आसक्त था और अत्यन्त क्रोधी था। (यह) अधमोंका शिरोमणि भी आपके धाम (वैकुण्ठको) चला गया—यह विस्मय हमारे मनको हुआ है।

हम देवता परम अधिकारी ❀ स्वारथरत तव भगति बिसारी ॥
भवप्रवाह संतत हम परे ❀ अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे ॥

हम देवता हैं, बस वैकुण्ठके परम अधिकारी हैं, परन्तु स्वार्थमें आसक्त होकर हमने आपकी भक्तिको भुला दिया। हम निरंतर संसारके प्रवाहमें पड़े रहे, अब आपकी शरणमें आये हैं। हे प्रभो, आप हमारी रक्षा कीजिये।

दो०—करि बिनती सुर सिद्ध सब ❀ रहे जहं तहं कर जोरि।
अतिसप्रेम तनुपुलकि बिधि ❀ असतुति करत बहोरि ॥ १३८ ॥

सब देवता और सिद्धजन विनती करके जहांके तहां हाथ जोड़कर रह गये। तब, ब्रह्माजी अत्यन्त प्रेमसे फिर स्तुति करने लगे—

जय राम सदा सुखधाम हरे ❀ रघुनायक सायकचापधरे ॥
भव - बारन - दारन सिंह प्रभो ❀ गुनसागर नागरनाथ बिभो ॥

हे नित्य सुखके स्थान, हे हरे, हे रघुवंशके नायक, हे धनुषवाणधारी श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो! हे प्रभो, आप संसाररूपी हाथीको विदीर्ण करनेवाले सिंह हैं। हे नाथ, आप गुणोंके समुद्र हैं, चतुर हैं और ऐश्वर्य-शाली हैं।

तन काम अनेक अनूप छवी ❀ गुन गावत सिद्ध मुनीन्द्र कवी ॥
जसु पावन रावन नाग महा ❀ खगनाथ जथा करि कोप गहा ॥

अनेक कामदेवोंके समान आपके शरीरकी अनुपम छवि है। आपके गुणोंको सिद्धजन, मुनीन्द्र और कवि-जन गाते हैं। आपका यश पवित्र है। आपने रावणरूपी महा सर्पको गरुणकी भांति क्रोध करके पकड़ लिया।

जनरंजन भंजन सोक भयं ❀ गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं ॥
अवतार उदार अपारगुनं ❀ महि - भार - बिभंजन ग्यानघनं ॥

हे प्रभो, आप भक्तोंको आनन्द देनेवाले, शोक और भयको दूर कर देनेवाले, सदा क्रोधरहित और ज्ञान स्वरूप हैं। आपके अवतार उदार और अपार गुणोंसे पूर्ण हैं। हे ज्ञानघन, वे पृथिवीका भार हरण करनेके लिये हुए हैं।

अज ब्यापकमेकमनादि सदा ❀ करुनाकर राम नमामि मुदा ॥
रघु - बंस - बिभूषन दूषनहा ❀ कृत भूप बिभीषन दीन रहा ॥

हे करुणासागर श्रीरामचन्द्रजी, मैं आनन्दसे आपको नमस्कार करता हूं। आप अजन्मा, व्यापक, एक, अनादि और नित्य हैं। आप रघुवंशके भूषण हैं और दूषणोंको नष्ट कर देनेवाले हैं। जो विभीषण दीन था उसे आपने राजा बना दिया।

गुन - ग्यान-निधान अमान अजं ❀ नित राम नमामि बिभु बिरजं ॥
भुज - दंड - प्रचंड - प्रताप बलं ❀ खल-बृन्द-निकंद-महा कुसलं ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नित्य ही नमस्कार करता हूं। आप गुणों और ज्ञानके भाण्डार हैं, मान-रहित हैं, परमेश्वर हैं और विशुद्ध हैं। आपके भुजदण्डोंका प्रताप और बल प्रचण्ड है और आप दुष्टोंके समूहको मारनेमें अत्यन्त कुशल हैं

बिनु कारन दीनदयाल हितं ❁ छबि धाम नमामि रमासहितं ॥
भवतारन कारन काजपरं ❁ मन - संभव - दारुन-दोष-हरं ॥

आप दीनोंपर अकारण ही दया करनेवाले और हितकारी हैं। आप शोभाके स्थान हैं, लक्ष्मीसमेत आपको मैं नमस्कार करता हूं। आप संसारको तारनेवाले और उसके कारणरूप और कार्यपर हैं। आप मनसे उत्पन्न दारुण दोषोंको दूर कर देनेवाले हैं।

सर चाप मनोहर त्रोनधरं ❁ जल - जारुन - लोचन भूपबरं ॥
सुखमंदिर सुंदर श्रीरमनं ❁ मद मार मुधा-ममता-समनं ॥

आप धनुषबाण और मनोहर तरकस धारण किये हुए हैं, कमलके समान रक्तवर्ण आपके नेत्र हैं। आप श्रेष्ठ राजा, सुन्दर सुखके स्थान, लक्ष्मीके साथ विहार करनेवाले और अभिमान, कामदेव, भ्रम और ममताको मिटा देनेवाले हैं।

अनवद्य अखंड न गोचर गो ❁ सब रूप सदा सब होइ न सो ॥
इति बेद बदंति न दंतकथा ❁ रबि आतपभिन्न न भिन्न जथा ॥

आप अनिन्द्य, अखण्ड और इन्द्रियोंके लिये उनकी पहुंचसे बाहर हैं। आप सदा सर्वरूप हैं और सर्वरूप नहीं भी हैं; जैसे सूर्य और उसकी धूप भिन्न हैं और भिन्न नहीं भी हैं। ऐसा वेद कहते हैं—यह दंतकथा नहीं है।

कृत कृत्य बिभो सब बानर ए ❁ निरखंत तवानन सादर जे ॥
धिगजीवन देव सरीर हरे ❁ तव भक्ति बिना भव भूलि परे ॥

हे विभो, ये सब वानर कृतकृत्य हैं, जो आदरके साथ आपके श्रीमुखको देख रहे हैं। हे हरे, देवताओंके शरीर और जीवनको धिक्कार है, जो आपकी भक्तिके बिना संसारमें भूले पड़े हुए हैं।

अब दीनदयाल दया करिये ❁ मति मोरि बिभेदकरी हरिये ॥
जेहि तें बिपरीत क्रिया करिये ❁ दुख सो सुख मानि सुखी चरिये ॥

हे दीनदयालु, अब दया कीजिये और मेरी भेदबुद्धिको दूर कर दीजिये, जिससे मैं विपरीत कर्म करता हूं और जो दुःख है उसको सुख समझकर सुखी हुआ फिरता हूं।

खलखंडन मंडन रम्य छमा ❁ पद-पंकज सेवित संभु उमा ॥
नृपनायक दे बरदानमिदं ❁ चरनांबुज प्रेमु सदा सुभदं ॥

आप दुष्टोंका नाश करनेवाले, पृथिवीके भूषण और सुन्दर हैं। आपके चरणकमलोंकी सेवा शिव और पार्वतीजी करते हैं। हे नृपतिश्रेष्ठ, मुझे यह वरदान दीजिये कि आपके चरणकमलोंमें मेरा कल्याणप्रद प्रेम सर्वदा बना रहे।

दो०—बिनय कीन्हि चतुरानन ❀ प्रेम पुलक अति गात।
सोभा सिंधु बिलोकत ❀ लोचन नहीं अघात ॥ १३९ ॥

प्रेमसे अत्यंत पुलकित शरीर होकर ब्रह्माने विनती की। शोभाके समुद्र श्रीरामचंद्रजीको देखते हुए उनके नेत्र अघाते न थे।

तेहि अवसर दसरथ तहं आये ❀ तनय बिलोकि नयन जल छाये ॥
अनुज सहित प्रभु बंदन कीन्हा ❀ आसिरबाद पिता तब दीन्हा ॥

उसी अवसरपर वहां राजा दशरथजी आये। पुत्र देखकर उनकी आंखोंमें जल भर आया। लक्ष्मणजी समेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने वंदना की। फिर पिता राजा दशरथने आशीर्वाद दिया।

तात सकल तव पुन्य प्रभाऊ ❀ जीतेउं अजय निसाचर-राऊ ॥
सुनि सुतबचन प्रीति अति बाढ़ी ❀ नयन सलिल रोमावलि ठाढ़ी ॥

तब श्रीरामचंद्रजी कहने लगे—हे तात, यह सब आपका पुण्यप्रताप है कि मैंने अजेय राक्षसराज रावणको जीता। पुत्रके वचन सुनकर राजा दशरथका प्रेम अत्यंत उमड़ आया। उनके नेत्रोंसे जल वहने लगा और रोमसमूह खड़े हो गये।

रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना ❀ चितइ पितहिं दीन्हेउ दृढ़ ग्याना ॥
ता तें उमा मोच्छ नहिं पावा ❀ दसरथ भेदभगति मन लावा ॥

श्रीरामचन्द्रजीने पूर्वप्रेमका अनुमान किया और फिर पिताकी ओर देखकर उन्हें दृढ़ ज्ञान दिया। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, राजा दशरथने भेदमूलक भक्तिमें मन लगाया था, इसलिये उन्होंने मोक्ष नहीं पाया।

सगुनोपासक मोच्छ न लेहीं ❀ तिन्ह कहं रामु भगति निज देहीं ॥
बार बार करि प्रभुहिं प्रनामा ❀ दसरथ हरषि गये सुरधामा ॥

सगुण ब्रह्मके उपासक मोक्ष नहीं लेते, उन्हें श्रीरामचन्द्रजी अपनी भक्ति दिया करते हैं। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको बार-बार प्रणाम करके राजा दशरथ प्रसन्न होकर देवलोकको गये।

दो०—अनुज-जानकी-सहित प्रभु ❀ कुसल कोसलाधीस।
सोभा देखि हरषि मन ❀ अस्तुति कर सुरईस ॥ १४० ॥

छोटे भाई लक्ष्मण और जानकीसमेत कोशलदेशके स्वामी प्रभु श्रीरामचंद्रजीको सकुशल देखकर और उनकी शोभासे मनमें प्रसन्न होकर देवताओंके स्वामी इंद्र स्तुति करने लगे—

छंद तोमर—जय राम सोभाधाम ❀ दायक प्रनत बिस्राम ॥
धृत त्रोन बर सर चाप ❀ भुज दंड प्रबल प्रताप ॥

हे शोभाके स्थान श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो। आप शरणागतजनोंको विश्राम देनेवाले हैं, आप सुन्दर तरकस और धनुषबाण धारण किये हैं। आपके भुजदण्डोंका प्रबल प्रताप है।

जय दूषनारि खरारि ❁ मर्दन - निसाचर - धारि ॥
यह दुष्ट मारेउ नाथ ❁ भये देव सकल सनाथ ॥

हे, दूषण नामक राक्षसका वध, खर नामक राक्षसका नाश और राक्षसोंकी सेनाका मर्दन करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो! हे नाथ, आपने इस दुष्ट रावणको मार डाला। अब, सब देवता सनाथ हो गये।

जय हरन धरनीभार ❁ महिमा उदार अपार ॥
जय रावनारि कृपाल ❁ किये जातुधान बिहाल ॥

हे पृथिवीका भार हरण करनेवाले, आपकी जय हो। आपकी महिमा अपार और उदार है। हे रावणके शत्रु, हे दयालु, आपने राक्षसोंको बेहाल कर दिया।

लंकेस अति बल गर्ब ❁ किये बस्य सुर गंधर्ब ॥
मुनि सिद्ध खग नर नाग ❁ हठि पंथ सब के लाग ॥

लंकापति रावणको अपने बलका बड़ा अभिमान था, देवता और गंधर्व, सबको उसने वशमें कर लिया था। मुनि, सिद्धजन, पक्षी, मनुष्य और नाग—सबके मार्गमें वह हठपूर्वक लगा रहता था।

पर-द्रोह-रत अतिदुष्ट ❁ पायो सो फलु पापिष्ट ॥
अब सुनहु दीनदयाल ❁ राजीव - नयन - बिसाल ॥

वह अत्यंत दुष्ट था और दूसरोंसे द्रोह करनेमें लगा रहता था। पापीने उसका फल पाया। हे कमलके समान विशाल नेत्रोंवाले, हे दीनदयालु, अब सुनिये।

मोहि रहा अति अभिमान ❁ नहिं कोउ मोहि समान ॥
अब देखि प्रभु-पद-कंज ❁ गत मानप्रद दुखपुंज ॥

मुझे बड़ा अभिमान था कि मेरे समान कोई नहीं है, परन्तु अब प्रभुके चरणकमल देखकर दुःख-समूहको देनेवाला मेरा अभिमान दूर हो गया।

कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव ❁ अब्यक्त जेहि स्रुति गाव ॥
मोहि भाव कोसलभूप ❁ स्रीराम सगुनसरूप ॥

कोई निर्गुण ब्रह्मका ध्यान करते हैं, जिसे वेद अव्यक्त बतलाते हैं, परन्तु मुझे तो सगुणस्वरूप कोशलदेशके राजा श्रीरामचन्द्रजी प्रिय लगते हैं।

वैदेहि - अनुज - समेत ❀ मम हृदय करहु निकेत ॥
मोहि जानिये निजदास ❀ दे भगति रमानिवास ॥

सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत आप मेरे हृदयमें वास कीजिये । हे रमा- निवास, आप मुझे अपना दास जानिये और अपनी भक्ति दीजिये ।

छं०—दे भगति रमानिवास त्रासहरन सरन-सुख-दायकं ।
सुखधाम राम नमामि काम अनेकछबि रघुनायकं ॥
सुर-बृंद-रंजन द्वंद्वभंजन मनुजतनु अतुलितबलं ।
ब्रह्मादि-संकर-सेव्य राम नमामि करुना कोमलं ॥

हे रमानिवास, हे त्रासको दूर कर देनेवाले, हे शरणागतको सुख देनेवाले, मुझे आप अपनी भक्ति दीजिये। हे सुखधाम श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नमस्कार करता हूं । आपकी शोभा अगणित कामदेवोंके समान है । आप रघु- वंशके नायक हैं । आप देवताओंके समूहोंको प्रसन्न करनेवाले, सुख-दुःख आदि द्विधा भावको नष्ट करनेवाले, मनुष्य-शरीर धारण करनेवाले और अतुलित बलशाली हैं । ब्रह्मा आदि देवता और शिवजी आपकी सेवा करते हैं, दयासे आपका चित्त कोमल है । हे श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नमस्कार करता हूं ।

दो०—अब करि कृपा बिलोकि मोहि ❀ आयेसु देहु कृपाल ।
काह करउं सुनि प्रिय बचन ❀ बोले दीनदयाल ॥१४१॥

हे कृपालु श्रीरामचन्द्रजी, अब मुझे कृपापूर्वक देखकर आज्ञा दीजिये कि मैं क्या करूं । यह प्रिय वचन सुनकर दीनदयालु श्रीरामचन्द्रजी बोले—

सुनु सुरपति कपि भालु हमारे ❀ परे भूमि निसिचरन्हि जे मारे ॥
मम हित लागि तजे इन्ह प्राना ❀ सकल जिआउ सुरेस सुजाना ॥

हे देवराज, सुनो—हमारे जिन रीछ और बंदरोंको राक्षसोंने मार डाला है, वे पृथिवीपर पड़े हुए हैं । मेरे हितके लिये इन सबने प्राण दिये हैं । हे चतुर सुरेश्वर, इन सबको जिला दो ।

सुनु खगेस प्रभु कै यह बानी ❀ अति अगाध जानहिं मुनि ग्यानी ॥
प्रभु सक त्रिभुवन मारि जिआई ❀ केवल सक्रहिं दीन्हि बड़ाई ॥

काग भुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, सुनो । प्रभुकी यह वाणी अत्यन्त गहन है । इसे ज्ञानी मुनि ही जानते हैं । प्रभु स्वयं त्रिभुवनको मार और जिला सकते हैं; परन्तु उन्होंने केवल इन्द्रको बड़ाई दी ।

सुधा बरषि कपि भालु जिआये ❀ हरषि उठे सब प्रभु पहिं आये ॥
सुधा बृष्टि भइ दुहु दल ऊपर ❀ जिये भालु कपि नहिं रजनीचर ॥

इंद्रने अमृत बरसाकर रीछ और बन्दर जिला दिये। वे सब प्रसन्न होकर उठे और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। अमृत-वर्षा दोनों ही दलोंके ऊपर हुई; पर रीछ और बंदर जीवित हुए, राक्षस नहीं।

रामाकार भये तिन्ह के मन ❀ मुक्त भये छूटे भवबंधन ॥
सुरअंसक सब कपि अरु रीछा ❀ जिये सकल रघुपति कीं ईछा ॥

क्योंकि उन सब राक्षसोंके मन तो रामाकार हो गये थे, इससे वे सब मुक्त हो गये, उनके सांसारिक बंधन छूट गये। रीछ और बंदर सब देवताओंके अंश थे, अतः श्रीरामचंद्रजीकी इच्छासे वे सब जीवित हो गये।

रामसरिस को दीन हितकारी ❀ कीन्हे मुकुत निसाचर-झारी ॥
खल मलधाम कामरत रावन ❀ गति पाई जो मुनिवर पाव न ॥

श्रीरामचंद्रजीके समान दीनोंका हित करनेवाला और कौन है, जिन्होंने राक्षसोंके समूहोंको भी मुक्त कर दिया! रावण, दुष्ट था, काममें आसक्त था, मलका स्थान था; उसने भी वह गति पायी जिसे श्रेष्ठ मुनिजन भी नहीं पाते।

दो०—सुमन बरषि सब सुर चले ❀ चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान।
देखि सुअवसरु प्रभु पहिं ❀ आये संभु सुजान ॥ १४२ ॥

फूल बरसाकर सब देवता सुन्दर विमानोंपर चढ़कर बिदा हुए। तब सुन्दर अवसर देखकर सुजान शिवजी श्रीरामचन्द्रजीके पास आये।

परमप्रीति कर जोरि जुग ❀ नलिननयन भरि बारि।
पुलकित तन गदगद गिरा ❀ बिनय करत त्रिपुरारि ॥ १४३ ॥

अत्यंत प्रीतिसे दोनों हाथ जोड़कर त्रिपुरासुरके शत्रु शिवजी पुलकित शरीर होकर गद्गद वाणीसे विनय करने लगे।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक ❀ धृत-बर-चाप रुचिर-कर सायक ॥
मोह महा घनपटल प्रभंजन ❀ संसय-बिपिन-अनल सुररंजन ॥

हाथोंमें श्रेष्ठ धनुष और सुन्दर बाण धारण करनेवाले हे रघुनायक श्रीरामचन्द्रजी, आप मेरी रक्षा कीजिये। आप महा मोहरूपी बादलोंके पटलके लिये वायुरूप; संशयरूपी वनके लिये अग्निके समान और देवताओंको प्रसन्न करनेवाले हैं।

सगुन अगुन गुनमंदिर सुंदर ❀ भ्रमतम प्रबल प्रताप दिवाकर ॥
कामक्रोधमद गज पंचानन ❀ बसहु निरंतर जनमनकानन ॥

आप सगुण हैं और निर्गुण भी। आप सुन्दर गुणोंके स्थान हैं, भ्रमरूपी अन्धकारके लिये आप प्रबल और प्रतापी सूर्य हैं, काम, क्रोध और मदरूपी हाथीके लिये आप सिंह हैं। आप भक्तोंके मनरूपी वनमें निरंतर वास कीजिये।

विषय - मनोरथ पुंज कंज वन ॐ प्रबलतुषार उदार पार मन ॥
भव बारिधि मंदर परमंदर ॐ बारय तारय संसृति दुस्तर ॥

अनेक विषयोंके मनोरथोंके समूहरूपी कमलोंके वनके लिये आप प्रबल पाला हैं, आप उदार हैं और मनसे परे हैं। आप संसाररूपी समुद्रको मथनेके लिये मंदराचल हैं। परमधाम—आप इस दुस्तर संसारको निवृत्त कीजिये और मुझे तार दीजिये।

स्यामगात राजीवबिलोचन ॐ दीनबंधु प्रनतारतिमोचन ॥
अनुज - जानकी - सहित निरंतर ॐ बसहु राम नृप मम उरअंतर ॥
मुनिरंजन महि - मंडल - मंडन ॐ तुलसिदास-प्रभु त्रासबिखंडन ॥

आपका श्याम शरीर है, कमलके समान आपके नेत्र हैं, आप दीनबन्धु हैं और भक्तोंकी पीड़ाको दूर कर देनेवाले हैं। हे राजा रामचन्द्रजी, आप मेरे हृदयमें लक्ष्मणजी और जानकीजीसमेत निरन्तर वास कीजिये। आप मुनियोंको प्रसन्न करनेवाले, पृथिवी-मण्डलके भूषण, तुलसीदासके प्रभु और भयको दूर कर देनेवाले हैं।

दो०—नाथ जबहिं कोसलपुरी ॐ होइहि तिलकु तुम्हार।
कृपासिंधु मैं आउब ॐ देखन चरित उदार ॥ १४४ ॥

हे नाथ, हे कृपासिन्धु, अयोध्यापुरीमें जब आपका राजतिलक होगा तब मैं आपके उदार चरित्र देखने आऊँगा।

करि बिनती जब संभु सिधाये ॐ तब प्रभु निकट बिभीषनु आये ॥
नाइ चरन सिरु कह मृदु बानी ॐ बिनय सुनहु प्रभु सारँगपानी ॥

विनती करके जब शिवजी विदा हुए तब विभीषण प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके पास आये, और चरणोंमें शिर नवाकर मीठी वाणीसे कहने लगे—हे हाथमें शार्ङ्गधनुष रखनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजी, मेरी विनती सुनिये।

सकुल सदल प्रभु रावनु मारेउ ॐ पावन जसु त्रिभुवन बिस्तारेउ ॥
दीन मलीन हीन मति जाती ॐ मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती ॥

हे प्रभो, आपने कुल और सेनासमेत रावणको मारा, तीनों भुवनोंमें अपने पवित्र यशका विस्तार किया और मुझ दीन, मलिन, हीनबुद्धि और हीन जातिपर बहुत प्रकारसे कृपा की।

अब जनगृह पुनीत प्रभु कीजइ ❀ मज्जन करिय समरस्रम छीजइ ॥
देखि कोस मंदिर संपदा ❀ देहु कृपाल कपिन्ह कहुं मुदा ॥

हे प्रभो, अब आप दासके घरको पवित्र कीजिये, चलकर स्नान कीजिये, जिससे युद्धकी थकान दूर हो। कोष, भवन और सम्पत्ति—सबको देखकर, हे कृपालु, प्रसन्नतापूर्वक वानरोंको दीजिये।

सब बिधि नाथ मोहि अपनाइय ❀ पुनि मोहि सहित अवधपुर जाइय ॥
सुनत बचन मृदु दीनदयाला ❀ सजल भये दोउ नयन बिसाला ॥

हे नाथ, सब प्रकार आप पहिले मुझे अपनाइये और फिर मुझसमेत अयोध्यापुरीको जाइये। विभीषणके कोमल वचन सुनकर दीनदयालु श्रीरामचन्द्रजीके दोनों विशाल नेत्रोंमें जल भर आया।

दो०—तोर कोस गृह मोर सब ❀ सत्य बचन सुनु भ्रात।
भरत दसा सुमिरत मोहि ❀ निमिष कलपसम जात ॥१४५॥

हे भाई, सुनो। तुम्हारा कोष और भवन—सब मेरा है, यह सत्य वचन है। परन्तु भरतजीकी दशाको स्मरण करते ही मुझे यहां एक-एक पल कल्पके समान बीत रहा है।

तापस बेष गात कृस ❀ जपत निरंतर मोहि।
देखउं बेगि सो जतन करु ❀ सखा निहोरउं तोहि ॥ १४६ ॥

हे सखा, मैं तुम्हारे निहोरे-करता हूं कि शीघ्र वही यत्न करो, जिससे मैं भरतजीको देखूं, जो तपस्वीके भेषमें दुर्वलशरीर होकर निरन्तर मुझे जप रहे हैं।

बीते अवधि जाउं जौं ❀ जियत न पावउं बीर।
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु ❀ पुनि पुनि पुलक सरीर ॥१४७॥

अवधि बीत जानेपर यदि मैं जाऊंगा तो भाईको जीता न पाऊंगा। छोटे भाई भरतजीकी प्रीतिको स्मरण करते ही प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका शरीर बार-बार पुलकित होने लगा।

करेहु कलप भरि राज तुम्ह ❀ मोहि सुमिरेहु मन माहिं।
पुनि मम धाम पाइहहु ❀ जहां संत सब जाहिं ॥ १४८ ॥

फिर विभीषणसे श्रीरामचन्द्रजीने कहा—तुम कल्पभर राज्य करना और मनमें मुझे स्मरण करना। अन्तमें फिर तुम मेरे धाम—वैकुण्ठको पाओगे, जहां सब सन्तजन जाते हैं।

सुनत बिभीषन बचन राम के ❀ हरषि गहे पद कृपाधाम के ॥
बानर भालु सकल हरषाने ❀ गहि प्रभुपद गुन बिमल बखाने ॥

दयाधाम श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनते ही विभीषणने प्रसन्न होकर उनके चरण पकड़ लिये। रीछ और बन्दर सब प्रसन्न हुए और प्रभुके चरण पकड़कर उनके निर्मल गुणोंका वर्णन किया।

बहुरि बिभीषनु भवन सिधायेउ ❀ मनि-गन-बसन बिमान भरायेउ ॥
लेइ पुष्पक प्रभु आगे राखा ❀ हंसि करि कृपासिंधु तब भाखा ॥

फिर विभीषण अपने भवनको विदा हो गये और वहां बहुतसी मणियों और वस्त्रोंको विमानमें भराया। उस पुष्पकविमानको लेकर विभीषणने प्रभुके आगे रखा। तब, कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने हँसकर कहा—

चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन ❀ गगन जाइ बरषहु पट भूषन ॥
नभ पर जाइ बिभीषन तबहीं ❀ बरषि दिये मनि अंबर सबहीं ॥

हे सखा विभीषण, सुनो। विमानपर चढ़कर आकाशमें जाकर वस्त्राभूषणोंकी वर्षा करो। तब विभीषणने आकाशमें जाकर सभी मणियां और वस्त्रोंको बरसा दिया।

जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं ❀ मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं ॥
हंसे रामु स्त्री-अनुज-समेता ❀ परमकौतुकी कृपानिकेता ॥

जिसको मनमें जो-जो प्रिय लगता था वह वही लेता था। बन्दर मणियोंको मुखमें डालकर फिर गिरा देते थे। दयाधाम श्रीरामचन्द्रजी बड़े कौतुकप्रिय हैं। वे यह सब देखकर सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत हंसे।

दो०—मुनि जेहि ध्यान न पावहिं ❀ नेति नेति कह बेद।
कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन ❀ करत अनेक बिनोद ॥ १४९ ॥

मुनिजन जिसको ध्यानमें भी नहीं पाते और वेद जिसको नेति-नेति कहते हैं, वही कृपासागर श्रीरामचन्द्रजी बन्दरोंके साथ अनेक तरहके विनोद कर रहे हैं।

उमा जोग जप दान तप ❀ नाना मख ब्रत नेम।
रामकृपा नहिं करहिं तसि ❀ जसि निहकेवल प्रेम ॥ १५० ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, योग, जप, दान, तप अनेक प्रकारके व्रत, यज्ञ और नियम—सब करनेसे भी श्रीरामचन्द्रजी वैसी कृपा नहीं करते जैसी अकेला प्रेम करनेसे करते हैं।

भालु कपिन्ह पट भूषन पाये ❀ पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आये ॥
नाना जिनिस देखि प्रभु कीसा ❀ पुनि पुनि हंसत कोसलाधीसा ॥

रीछ और बन्दरोंने जो वस्त्राभूषण पाये थे, उन्हें पहनकर वे श्रीरामचन्द्रजीके पास आये। कोशलदेशके स्वामी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने जब तरह-तरहकी चीजें पहने हुये वानरोंको देखा तब वे बार-बार हंसने लगे।

चितइ सबन्ह पर कीन्ही दाया ❀ बोले मृदुल बचन रघुराया ॥
निज-निज गृह अब तुम्ह सब जाहू ❀ सुमिरेहु मोहि डरपेहु जनि काहू ॥

सबकी ओर देखकर फिर श्रीरामचन्द्रजीने सबपर दया की और ये कोमल वचन बोले—अब तुम सब अपने-अपने घर जाओ। मुझे स्मरण करना और किसीसे मत डरना।

बचन सुनत प्रेमाकुल बानर ❀ जोरि पानि बोले सब सादर ॥
प्रभु जोइ कहहु तुम्हहिं सब सोहा ❀ हमरे होत बचन सुनि मोहा ॥

यह वचन सुनते ही सब बन्दर प्रेमसे व्याकुल हो उठे और वे सब आदरके साथ हाथ जोड़कर बोले—हे प्रभो! आप जो कुछ भी कहें, आपको वह सब अच्छा लगता है, पर आपके वचनोंको सुनकर हमको मोह होता है।

दीन जानि कपि किये सनाथा ❀ तुम्ह त्रयलोक ईस रघुनाथा ॥
सुनि प्रभुबचन लाज हम मरहीं ❀ मसक कतहुँ खगपति-हित करहीं ॥
देखि रामरुख बानर रीछा ❀ प्रेममगन नहिं गृह कै ईछा ॥

हे रघुवंशके स्वामी, आप तीनों लोकोंके स्वामी हैं। आपने दीन जानकर वानरोंको कृतकृत्य कर दिया। हे प्रभो, आपके वचन सुनकर हम लज्जासे मर रहे हैं। क्या मच्छर भी कभी पक्षिराज गरुड़का हित कर सकते हैं? श्रीरामचन्द्रजीका रुख देखकर बन्दर और रीछ प्रेममें मग्न हो रहे थे। उन्हें घर लौटनेकी इच्छा ही नहीं थी।

दो०—प्रभुप्रेरित कपि भालु सब ❀ रामरूप उर राखि।
हरष बिषाद समेत तब ❀ चले बिनय बहुभाषि ॥ १५१ ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी प्रेरणासे रीछ और बन्दर—सब श्रीरामचन्द्रजीका रूप हृदयमें रखकर तरह-तरहके विनय-वचन कहकर आनन्द और दुःखसमेत चल दिये।

जामवंत कपिराज नल ❀ अंगदादि हनुमान।
सहित बिभीषन जे अपर ❀ जूथप कपि बलवान ॥ १५२ ॥

जाम्बवान्, कपिराज सुग्रीव, नल, अंगद, हनुमान और विभीषणसमेत जो अन्यान्य बलवान् वानर यूथपति थे,

कहि न सकहिं कछु प्रेमबस ❀ भरि भरि लोचन बारि।
सनमुख चितवहिं रामतन ❀ नयननिमेष निवारि ॥ १५३ ॥

प्रेमवश वे कुछ कह न सकते थे। नेत्रोंमें जल भर-भरकर और आंखोंकी पलकोंका चलना रोककर वे सब सम्मुख श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखने लगे।

अतिसय प्रीति देखि रघुराई * लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई ॥
मन महुं बिप्रचरन सिर नावा * उत्तर दिसिहिं बिमान चलावा ॥

अत्यधिक प्रेम देखकर सबको श्रीरामचन्द्रजीने विमानपर चढ़ा लिया। फिर उन्होंने मनमें ब्राह्मणोंके चरणोंमें शिर नवाया और उत्तर दिशाकी ओर विमान चलाया।

चलत बिमानु कोलाहलु होई * जय रघुबीर कहहिं सब कोई ॥
सिंहासनु अतिउच्च मनोहर * श्रीसमेत प्रभु बैठे ता पर ॥

ज्योंही विमान चलने लगा, बड़ा कोलाहल होने लगा। सब कोई यह कहने लगे कि रघुकुलके वीरश्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीकी जय हो। विमानमें एक अत्यन्त ऊंचा सुन्दर सिंहासन था, उसपर सीताजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी बैठे।

राजत रामसहित भामिनी * मेरुसृंग जनु घनु दामिनी ॥
रुचिर बिमानु चलेउ अतिआतुर * कीन्ही सुमनवृष्टि हरषे सुर ॥

पत्नीसमेत श्रीरामचन्द्रजी ऐसे शोभित हुए मानों सुमेरु पर्वतकी चोटीपर बादल और बिजली दोनों हों। सुन्दर विमान बड़े वेगसे चल दिया। देवता प्रसन्न हुए और उन्होंने पुष्प-वृष्टि की।

परम - सुख-द चलि त्रिविध बयारी * सागर सर सरि निर्मल बारी ॥
सगुन होहिं सुंदर चहुं पासा * मन प्रसन्न निर्मल सुभ आसा ॥

अत्यन्त सुख देनेवाली शीतल, मन्द और सुगन्धित, त्रिविध वायु चलने लगी। समुद्र, सरोवर, नदियां सबका जल निर्मल हो गया। चारों ओर सुन्दर शकुन होने लगे। मन प्रसन्न हो गये और दिशाएँ निर्मल और शुभ हो गयीं।

कह रघुबीर देखु रन सीता * लछिमन इहां हतेउ इंद्रजीता ॥
हनूमान अंगद के मारे * रन महि परे निसाचर भारे ॥
कुंभकरन रावन दोउ भाई * इहाँ हते सुर - मुनि-दुख-दाई ॥

श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे सीता, यह युद्धभूमि देखो। यहां लक्ष्मणने इन्द्रजीत—मेघनादको मारा था। यहां अङ्गद और हनुमानके मारे हुए भारी राक्षस युद्धभूमिमें पड़े हुए हैं। देवताओं और मुनियोंको दुःख देनेवाले दोनों भाइयों—कुम्भकर्ण और रावण—को यहां मारा था।

दो०—यह देखु सुन्दर सेतु जहं ❀ थापेउं सिव सुखधाम।
सीतासहित कृपायतन ❀ संभुहिं कीन्ह प्रनाम ॥ १५४ ॥

यह देखो, जहाँ सुन्दर पुल बांधा है वहां सुखके स्थान शिवजीकी स्थापना भी मैंने की है। यह कहकर सीताजीसमेत दयानिधान श्रीरामचन्द्रजीने शिवजीको प्रणाम किया।

जहं जहं करुनासिंधु बन ❀ कीन्ह बास बिस्राम।
सकल देखाये जानकिहिं ❀ कहे सबन्हिके नाम ॥ १५५ ॥

दयासागर श्रीरामचन्द्रजीने वनमें जहां-जहां विश्राम या निवास किया था, वे सब स्थान उन्होंने सीताजीको दिखलाये और सबके नाम बतलाये।

तुरत बिमानु तहाँ चलि आवा ❀ दंडकबन जहं परम सुहावा ॥
कुंभजादि मुनिनायक नाना ❀ गये राम सब के अस्थाना ॥

शीघ्र ही विमान चलकर वहां आ गया जहां अत्यन्त सुहावना दण्डकवन था। वहां कुम्भज ऋषि आदि अगणित मुनीश्वर थे। श्रीरामचन्द्रजी उन सबके आश्रमोंमें गये।

सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा ❀ चित्रकूट आयेउ जगदीसा ॥
तहं करि मुनिन्ह केर संतोखा ❀ चला बिमान तहाँ ते चोखा ॥

सब ऋषियोंसे आशीर्वाद पाकर जगदीश्वर श्रीरामचन्द्रजी चित्रकूटमें आये। वहां उन्होंने मुनियोंको संतोष दिलाया। फिर, वहांसे विमान बड़ी शीघ्रतासे चल दिया।

बहुरि राम जानकिहि देखाई ❀ जमुना कलि-मल-हरनि सुहाई ॥
पुनि देखी सुरसरी पुनीता ❀ राम कहा प्रनाम करु सीता ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीने सीताजीको कलियुगके पापोंको दूर कर देनेवाली सुहावनी यमुनाजीको दिखलाया। फिर उन्होंने जब पवित्र गंगाजीको देखा, तब श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे सीता, उन्हें प्रणाम करो।

तीरथपति पुनि देखि प्रयागा ❀ देखत जनम-कोटि-अघ भागा ॥
देखु परमपावनि पुनि बेनी ❀ हरनि सोक हरि-लोक-निसेनी ॥
पुनि देखु अवधपुरी अतिपावनि ❀ त्रि-बिध-ताप भवरोग नसावनि ॥

फिर तीर्थराज प्रयागको देखो, जिसे देखते ही करोड़ जन्मका पाप भाग जाता है। फिर, परम पवित्र त्रिवेणीको भी देखो, जो सब शोकोंको दूर कर देनेवाली, विष्णुलोककी निशानी है। फिर अत्यन्त पवित्र अयोध्यापुरीको देखो, जो तीनों प्रकारके तापों और संसाररूपी रोगोंको मिटा देनेवाली है।

दो०—सीतासहित अवध कहं ❀ कीन्ह कृपाल प्रनाम।
सजल नयन तन पुलकित ❀ पुनि पुनि हरषत राम ॥१५६॥

कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने सीताजी समेत अयोध्याको प्रणाम किया। उनके नेत्रोंमें जल छा गया, शरीर पुलकायमान हो गया और वे वारवार प्रसन्न होने लगे।

बहुरि त्रिबेनी आइ प्रभु ❀ हरषित मज्जनु कीन्ह।
कपिन्ह समेत महीसुरन्ह ❀ दान बिबिधबिधि दीन्ह ॥१५७॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी त्रिवेणीपर फिर आये और फिर प्रसन्न होकर वानरों समेत स्नान किया और ब्राह्मणों-को अनेक प्रकारके दान दिये।

प्रभु हनुमंतहिं कहा बुझाई ❀ धरि बटुरूप अवधपुर जाई॥
भरतहिं कुसल हमारि सुनायेहु ❀ समाचार लेइ तुम्ह चलि आयेहु॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने हनुमानजीको समझाकर कहा कि तुम ब्रह्मचारीका रूप बनाकर अयोध्यापुरीको जाओ। वहां भरतजीको हमारा कुशल सुनाना और सब समाचार लेकर तुम लौट आना।

तुरत पवनसुत गवनत भयऊ ❀ तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयऊ॥
नाना बिधि मुनि पूजा कीन्ही ❀ अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही॥

पवनपुत्र हनुमानजी तुरंत ही विदा हो गये। तब, प्रभु श्रीरामचन्द्रजी भरद्वाज मुनिके पास गये। मुनिने अनेक प्रकारसे उनकी पूजा की और स्तुति करके फिर आशीर्वाद दिया।

मुनिपद बंदि जुगल कर जोरी ❀ चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी॥
इहां निषाद सुना हरि आए ❀ नाव नाव कहं लोग बोलाये॥

दोनों हाथ जोड़कर मुनिके चरणोंकी वंदना करके प्रभु श्रीरामचन्द्रजी विमानपर चढ़कर फिर चल दिये। यहां जब गुहनिषादने सुना कि भगवान् लौटकर आये हैं तब उसने 'नाव कहां है, नाव कहां है,' इस प्रकार कहते हुए लोगोंको बुलाया।

सुरसरि नाघि जान जब आवा ❀ उतरेउ तट प्रभुआयसु पावा॥
तब सीता पूजी सुरसरी ❀ बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥

जब विमान देव-नदी गंगाको नांघ आया तब प्रभुकी आज्ञा पाकर किनारेपर उतरा। तब सीताजीने गंगा-जीकी बहुत प्रकारसे पूजा की और फिर वे चरणोंमें पड़ गयीं।

दीन्हि असीस हरषि मन गंगा ❀ सुंदरि तव अहिवात अभंगा ॥
सुनत गुहा धायेउ प्रेमाकुल ❀ आयेउ निकट परम-सुख-संकुल ॥

गंगाजीने मनमें प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया कि हे सुन्दरि, तुम्हारा सौभाग्य अखण्ड हो। उधर गुह निषाद सुनते ही प्रेममें व्याकुल होकर दौड़ा और परमानन्दमें भरा हुआ पास आया।

प्रभुहि बिलोकि सहित बैदेही ❀ परेउ अवनि तन सुधि नहिं तेही ॥
प्रीति परम बिलोकि रघुराई ❀ हरषि उठाइ लियो उर लाई ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीसमेत सीताजीको देखकर गुह निषाद पृथिवीपर पड़ गया, उसे शरीरकी सुध नहीं रही। अत्यन्त प्रीति देखकर श्रीरामचन्द्रजीने उसे हृदयसे लगा लिया।

छंद—लियो हृदय लाइ कृपानिधान सुजान राय रमापती।
बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो करि बीनती ॥
अब कुसल पदपंकज बिलोकि बिरंचि - संकर - सेव्य जे।
सुखधाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते ॥

चतुर-शिरोमणि, दयानिधान, लक्ष्मीपति श्रीरामचन्द्रजीने उसे हृदयसे लगा लिया और अत्यन्त समीप बिठलाकर कुशल पूछी। इस पर वह (गुह निषाद) विनती करके कहने लगा कि आपके चरणकमल देखकर, जिनकी सेवा ब्रह्मा और शिवजी करते हैं अब सब कुशल है। हे सुखके स्थान, पूर्णकाम श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। हे श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको फिर प्रणाम करता हूँ।

सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइयो।
मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोहबस बिसराइयो ॥
यह रावनारिचरित्र पावन राम - पद - रति - प्रद - सदा।
कामादिहर बिग्यानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा ॥

निषाद सब प्रकार नीच था, उसे भगवान्‌ने भरतके समान हृदयसे लगा लिया। अरे मन्दबुद्धि; ऐसे प्रभुको—तुलसीदासजी कहते हैं—मोहके वशमें होकर भुला दिया। रावणके शत्रु श्रीरामचन्द्रजीका यह पवित्र चरित्र सदा श्रीरामचरणोंमें भक्तिका देनेवाला, कामादि विकारोंको दूर कर देनेवाला और ज्ञानको बढ़ानेवाला है। इसे देवता, सिद्ध और मुनिजन आनन्दसे गाते हैं।

दो०—समर बिजय रघुबीर के ❀ चरित जे सुनहिं सुजान।
बिजय बिबेक बिभूति नित ❀ तिन्हहिं देहिं भगवान ॥१५८॥

जो सुजान मनुष्य श्रीरामचन्द्रजीके युद्धमें विजय पानेके चरितको सुनेंगे उन्हें भगवान् नित्य विजय, विवेक और ऐश्वर्य देंगे।

यह कलिकाल मलायतन ❀ मन करि देखु बिचार।
श्रीरघुनायक-नाम तजि ❀ नाहिं न आन अधार ॥ १५९ ॥

अरे मन, तू विचारकर देख! यह कलियुग पापोंका घर है। इसमें श्रीरामचन्द्रजीके नामको छोड़कर अन्य कोई आधार नहीं है।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने विमलविज्ञान-
सम्पादनो नाम षष्ठः सोपानः समाप्तः ॥

❋ श्रीगणेशाय नमः ❋

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

सप्तम सोपान

उत्तरकांड

श्लोकाः

केकीकण्ठाभनीलं सुरवरविलसद्विप्रपादाब्जचिह्नं
शोभाढ्यं पीतवस्त्रं सरसिजनयनं सर्वदा सुप्रसन्नम्।
पाणौ नाराचचापं कपिनिकरयुतं बन्धुना सेव्यमानं
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारूढरामम्॥१॥

मोरके कंठके समान नीले रङ्गवाले, देवताओंमें श्रेष्ठ, ब्राह्मणके चरणकमलके चिह्नसे सुशोभित, शोभासे भरे हुए, पीताम्बर धारण किये हुए, कमल-नयन सर्वदा अत्यन्त प्रसन्न रहनेवाले, हाथोंमें धनुषबाण लिये हुए वानरोंके झुण्डसमेत, भाईद्वारा सेवित, सीताजीके स्वामी, पुष्पक विमानपर चढ़े हुए और रघुवंशमें श्रेष्ठ श्रीरामचन्द्रजीको मैं सर्वदा नमस्कार करता हूं।

कोशलेन्द्रपदकञ्जमञ्जुलौ कोमलावजमहेशवन्दितौ
जानकीकरसरोजलालितौ चिन्तकस्य मनभृङ्गसङ्गिनौ॥२॥

कोशलदेशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर कोमल चरणकमलोंकी वंदना शिवजी और ब्रह्मा करते हैं, सीताजीके करकमलोंसे उनकी सेवा होती है और ध्यान करनेवालोंके मनरूपी भौंरोंके वे साथी हैं।

कुन्दइन्दुदरगौरसुन्दरं अम्बिकापतिमभीष्टसिद्धिदम् ।
कारुणीककलकञ्जलोचनं नौमि शङ्करमनङ्गमोचनम् ॥ ३॥

कुन्दके फूल, चन्द्रमा और शंखके गौर वर्णसे भी सुन्दर, अम्बिकाके पति, अभीष्ट सिद्धिको देनेवाले, करुणामय, सुन्दर कमलके समान नेत्रवाले और कामदेवको छुड़ा देनेवाले शंकरजीको नमस्कार करता हूं।

दो०—रहा एक दिन अवधि कर ⊛ अति आरत पुरलोग ।
जहं तहं सोचहिं नारि नर ⊛ कृसतन रामबियोग ॥ १ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके वनवासकी अवधिका जब एक दिन रह गया, तब अयोध्यापुरीके स्त्री, और पुरुष—सब लोग अत्यन्त दुःखी हुए। श्रीरामचन्द्रजीके वियोगमें उनका शरीर दुबला हो रहा था। वे सब जहां-तहां सोच करने लगे।

सगुन होहिं सुन्दर सकल ⊛ मन प्रसन्न सब केर ।
प्रभुआगमन जनाव जनु ⊛ नगर रम्य चहुं फेर ॥ २ ॥

सब सुन्दर शकुन हो रहे थे, सबका मन प्रसन्न हो रहा था। अयोध्यापुरी चारों ओर रमणीक हो गयी, मानों वह प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका आगमन बतला रही हो।

कौसल्यादि मातु सब ⊛ मन अनंद अस होइ ।
आए प्रभु सिय-अनुज-युत ⊛ कहन चहत अब कोइ ॥ ३ ॥

कौशल्या आदि सब माताओंके मनमें ऐसा आनन्द हो रहा था, मानों अब कोई यह कहना ही चाहता हो कि सीताजी और लक्ष्मणजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजी आ गये।

भरत-नयन-भुज दच्छिन ⊛ फ़रकत बारहिं बार ।
जानि सगुन मन हरष अति ⊛ लागे करन बिचार ॥ ४ ॥

भरतजीकी दाहिनी भुजा और आंख बारबार फड़क रही थीं। यह शुभ शकुन जानकर उनको मनमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई और वे विचार करने लगे।

रहेउ एक दिन अवधि अधारा ⊛ समुझत मन दुख भयउ अपारा ॥
कारन कवन नाथ नहिं आयउ ⊛ जानि कुटिल किधौं मोहि बिसरायउ ॥

एक अवधिका ही आधार था, उसमें भी अब एक ही दिन बाकी रह गया है। यह बात समझते ही भरतजीको मनमें अपार दुःख हुआ। वे सोचने लगे—क्या कारण है कि जो स्वामी श्रीरामचन्द्रजी नहीं आये? दुष्ट जानकर मुझे क्या उन्होंने भुला दिया?

अहह धन्य लछिमन बड़ भागी ❀ राम - पदारबिंदु - अनुरागी ॥
कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा ❀ ता तें नाथ संग नहिं लीन्हा ॥

अहा हा! बड़भागी लक्ष्मण धन्य हैं, जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंके अनुरागी हुए हैं। प्रभुने जान लिया कि मैं कपटी और दुष्ट हूं। इसीसे स्वामीने मुझे साथ नहीं लिया।

जौं करनी समुझहिं प्रभु मोरी ❀ नहिं निस्तार कलपसत कोरी ॥
जनअवगुन प्रभु मान न काऊ ❀ दीनबंधु अतिमृदुल सुभाऊ ॥

जो कुछ हुआ, उसे प्रभु यदि मेरी करतूत समझें तो सौ करोड़ कल्पतक मेरा निस्तार न हो। परन्तु प्रभु तो कभी अपने भक्तके अवगुणोंको मानते ही नहीं; क्योंकि वे दीनबन्धु हैं और उनका स्वभाव अत्यन्त कोमल है।

मोरे जिय भरोस दृढ़ सोई ❀ मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई ॥
बीते अवधि रहहिं जौं प्राना ❀ अधम कवन जग मोहि समाना ॥

मेरे हृदयमें वही दृढ़ विश्वास है। शुभ सकुन हो रहे हैं, श्रीरामचन्द्रजी अवश्य मिलेंगे। श्रीरामचन्द्रजीके वनवासकी अवधि बीत जानेपर भी यदि प्राण रहें तो संसारमें मेरे समान नीच और कौन है?

दो०—राम-बिरह - सागर महुं ❀ भरत मगन मन होत।
बिप्ररूप धरि पवनसुत ❀ आइ गयउ जनु पोत ॥ ५ ॥

श्रीरामचन्द्रजीके वियोग-सागरमें भरतजीका मन डूबा ही जा रहा था कि पवनपुत्र हनुमान ब्राह्मणका रूप रखकर वहां नौकाके समान आ गये।

बैठे देखि कुसासन ❀ जटामुकुट कृसगात।
राम राम रघुपति जपत ❀ स्रवत नयन जलजात ॥ ६ ॥

हनुमानजीने देखा कि भरतजी कुशासनपर बैठे हुए हैं, जटाओंका मुकुट है, शरीर दुबला हो रहा है, वे 'राम'-'राम', 'रघुपति' नामको जप रहे हैं और उनके कमलनेत्रोंसे आँसू गिर रहे हैं।

देखत हनूमान अति हरषेउ ❀ पुलकगात लोचनजल बरषेउ ॥
मन महुं बहुत भांति सुख मानी ❀ बोलेउ स्रवन - सुधा-सम बानी ॥

भरतजीको देखते ही हनुमानजी अत्यन्त प्रसन्न हुए, उनका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंसे जल बरसने लगा। मनमें बहुत तरह सुख मानकर वे कानोंके लिये अमृतके समान वाणी बोले—

जासु बिरह सोचहु दिन राती ❀ रटहु निरंतर गुन - गन-पांती ॥
रघु-कुल-तिलक सु-जन-सुख-दाता ❀ आयउ कुसल देव-मुनि-त्राता ॥

जिनके विरहमें रात-दिन सोच करते रहते हो और जिनके गुण-समूहोंका श्रेणीको निरन्तर रटते रहते हो, वे रघुवंशके तिलक, सज्जनोंको सुख देनेवाले और देवताओं और मुनियोंकी रक्षा करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी सकुशल आ गये हैं।

रिपु रन जीति सुजस सुर गावत * सीता अनुज सहित पुर आवत ॥
सुनत बचन बिसरे सब दूखा * तृषावंत जिमि पाव पियूखा ॥

उन्होंने शत्रुको युद्धमें जीत लिया, जिसका सुयश देवता गाते हैं और वे सीताजी और छोटे भाई लक्ष्मणजी समेत अयोध्यापुरीको आ रहे हैं। हनुमानजीके ये वचन सुनते ही भरतजीके सब दुःख भूल गए; जैसे किसी प्यासे मनुष्यको अमृत मिल गया हो।

को तुम्ह तात कहां तें आये * मोहि परम प्रिय बचन सुनाये ॥
मारुतसुत मैं कपि हनुमाना * नाम मोर सुनु कृपानिधाना ॥

भरतजीने पूछा—हे तात, तुम कौन हो और कहांसे आये हो? तुमने मुझे अत्यंत प्रिय वचन सुनाये हैं। हनुमानजी बोले—हे दयानिधान, मेरा नाम सुनिए। मैं पवनपुत्र वानर हनुमान हूं।

दीनबंधु रघुपति कर किंकर * सुनत भरत भेंटेउ उठि सादर ॥
मिलत प्रेम नहिं हृदय समाता * नयन स्रवत जल पुलकित गाता ॥

रघुवंशके स्वामी दीनबंधु श्रीरामचन्द्रजीका मैं दास हूं। यह सुनते ही भरतजी उठकर आदरके साथ उनसे मिले। मिलते हुए उनके हृदयमें प्रेम नहीं समाता था; उनके नेत्रोंसे जल बहने लगा और शरीर पुलकायमान हो गया।

कपि तव दरस सकल दुख बीते * मिले आजु मोहि राम पिरीते ॥
बार बार बूझी कुसलाता * तो कहं देउं काह सुनु भ्राता ॥

भरतजी बोले—हे हनुमान, तुम्हारे दर्शनसे सब दुःख दूर हो गये। आज मुझे श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे तुम मिल गये। फिर भरतजीने बार बार उनसे कुशलता पूछी और कहने लगे—हे भाई, सुनो। मैं तुमको क्या दूं?

एहि संदेससरिस जग माहीं * करि बिचार देखेउं कछु नाहीं ॥
नाहिं न तात उरिन मैं तोही * अब प्रभुचरित सुनावहु मोही ॥

मैंने विचार करके देख लिया, संसारमें इस संदेशके समान कुछ नहीं है। हे तात, मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता। अब मुझे प्रभु श्रीरामचंद्रजीके चरित सुनाओ।

तब हनुमंत नाइ पद माथा ❀ कहे सकल रघु-पति-गुन-गाथा ॥
कहु कपि कबहुँ कृपाल गुसाईं ❀ सुमिरहिं मोहि दास की नाईं ॥

तब, चरणोंमें मस्तक नवाकर हनुमानजीने श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी सब कथा कह सुनायी। फिर भरतजी बोले—हे हनुमान, यह बतलाओ कि दयालु स्वामी श्रीरामचन्द्रजी क्या कभी मुझे अपने सेवककी भाँति स्मरण करते हैं।

छं०—निज दास ज्यों रघु-बंस-भूषन कबहुँ मम सुमिरन कर्‌यो।
सुनि भरतबचन बिनीत अति कपि पुलकि तन चरनन्हि पर्‌यो ॥
रघुबीर निजमुख जासु गुनगन कहत अग-जग-नाथ जो।
काहे न होइ बिनीत परम पुनीत सद-गुन-सिंधु सो ॥

रघुकुल-भूषण श्रीरामचन्द्रजीने अपने सेवककी भांति क्या कभी मेरा स्मरण किया है? भरतजीका यह अत्यन्त विनीत वचन सुनकर हनुमानजी पुलकित शरीर होकर चरणोंमें पड़ गये। भला श्रीरामचन्द्रजी, जो चराचरके स्वामी हैं, अपने मुंहसे जिनके गुणगणोंका वर्णन करते हैं, वह भरतजी सद्‌गुणोंके समुद्र, अत्यन्त पवित्र और विनीत क्यों न होवे?

दो०—राम प्रान-प्रिय नाथ तुम्ह ❀ सत्य बचन मम तात।
पुनि पुनि मिलत भरत सुनि ❀ हरष न हृदय समात ॥ ७ ॥

हे नाथ, आप श्रीरामचन्द्रजीको प्राणके समान प्यारे हैं। हे तात, मेरा यह वचन सत्य है। भरतजी यह सुनकर बार-बार मिलने लगे। उनके हृदयमें आनन्द समाता न था।

सो०—भरतचरन सिरु नाइ ❀ तुरित गयउ कपि राम पहिं।
कही कुसल सब जाइ ❀ हरषि चलेउ प्रभु जान चढ़ि ॥ ८ ॥

भरतजीके चरणोंको शिर नवाकर हनुमानजी शीघ्रतापूर्वक श्रीरामचन्द्रजीके पास गये, वहां पहुंचकर सब कुशलता कही। प्रभु श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्न होकर विमानपर चढ़कर चल दिये।

हरषि भरत कोसलपुर आये ❀ समाचार सब गुरुहिं सुनाये ॥
पुनि मंदिर महुँ बात जनाई ❀ आवत नगर कुसल रघुराई ॥

इधर भरतजी प्रसन्न होकर अयोध्यापुरीमें आये और गुरु वशिष्ठजीको सब समाचार सुनाये; फिर राजमहलमें उन्होंने सब बात प्रकट की कि श्रीरामचन्द्रजी सकुशल नगरको आ रहे हैं।

सुनत सकल जननी उठि धाईं ❀ कहि प्रभु कुसल भरत समुझाईं ॥
समाचार पुरबासिन्ह पाये ❀ नर अरु नारि हरषि सब धाये ॥

सुनते ही सब माताएं उठकर दौड़ीं। भरतजीने प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका कुशल कहकर सबको समझाया। नगरनिवासियोंने जब सब समाचार पाये तब स्त्री और पुरुष—सब प्रसन्न होकर दौड़े।

दधि दुर्बा रोचन फल फूला ❀ नव तुलसीदल मंगलमूला ॥
भरि भरि हेमथार भामिनी ❀ गावत चलीं सिंधुरगामिनी ॥

दही, दूब, रोचन, फल, फूल और मंगलमूल नये तुलसी-दल—सबको सोनेके थालोंमें भर-भरकर गज-गामिनी स्त्रियाँ गाती हुई चलीं।

जो जैसेहिं तैसेहिं उठि धावहिं ❀ बाल बृद्ध कहं संग न लावहिं ॥
एक एकन्ह कहं बूझहिं भाई ❀ तुम्ह देखे दयालु रघुराई ॥

जो जैसा रहता वह वैसा ही उठ दौड़ता था। वे सब बालकों और वृद्धोंको संग न लाते थे। वे परस्पर एक एकसे पूछते थे—हे भाई, क्या दयाल श्रीरामचन्द्रजीको देखा है ?

अवधपुरी प्रभु आवत जानी ❀ भई सकल सोभा कै खानी ॥
भइ सरजू अति-निर्मल-नीरा ❀ बहइ सुहावन त्रिबिध समीरा ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको आता हुआ जानकर अयोध्यापुरी सब शोभाओंकी खान हो गयी। सरयू नदीका जल अत्यन्त निर्मल हो गया। शीतल, मन्द और सुगन्धित—तीनों तरहकी सुहावनी वायु बहने लगी।

दो०—हरषित गुरु परिजन अनुज ❀ भू - सुर - बृंद - समेत।
चले भरत अतिप्रेम मन ❀ सनमुख कृपानिकेत ॥ ९ ॥

गुरु, कुटुम्बीजन, छोटे भाई शत्रुघ्न और ब्राह्मणोंके समूहसमेत भरतजी प्रसन्न होकर दयानिधान श्रीराम-चन्द्रजीके सामने चल दिये। उनके मनमें बड़ा प्रेम था।

बहुतक चढ़ीं अटारिन्ह ❀ निरखहिं गगन बिमान।
देखि मधुर सुर हरषित ❀ करहिं सुमंगल गान ॥ १० ॥

बहुतेरी स्त्रियां अटारियोंपर चढ़ी हुई आकाशमें विमान देख रही थीं। वे सब विमान देखकर प्रसन्न होती और मीठे स्वरसे सुन्दर मंगल गीत गाती थीं।

राकाससि रघुपति पुर ❀ सिंधु देखि हरषान।
बढ़ेउ कोलाहल करत जनु ❀ नारि - तरंग - समान ॥ ११ ॥

अयोध्यापुरीरूपी समुद्र श्रीरामचन्द्रजीरूपी पूर्ण चंद्रमाको देखकर प्रसन्न हुआ और उमड़ा, और कोलाहल करने लगा ; मानों नगरकी स्त्रियां समुद्रकी तरंगोंके समान हों।

इहाँ भानु-कुल-कमल-दिवाकर ❀ कपिन्ह देखावत नगर मनोहर ॥
सुनु कपीस अंगद लंकेसा ❀ पावन पुरी रुचिर यह देसा ॥

यहां सूर्यकुलरूपी कमलके लिये सूर्यके समान श्रीरामचन्द्रजी वानरोंको मनोहर नगर दिखला रहे थे। वे बोले—हे कपिराज सुग्रीव, हे अंगद, हे लंकापति विभीषण, सुनो। यह पुरी पवित्र और यह देश सुन्दर है।

जद्यपि सब बैकुंठ बखाना ❀ बेद-पुरान-बिदित जग जाना ॥
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ ❀ यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ ॥

यद्यपि वैकुण्ठकी सब प्रशंसा करते हैं, वह वेदों और पुराणोंमें प्रसिद्ध है और संसार जानता है, तथापि वह भी मुझे अयोध्याके समान प्यारा नहीं है। यह प्रसंग कोई ही कोई जानते हैं।

जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि ❀ उत्तर दिसि बह सरजू पावनि ॥
जा मज्जन तें बिनहिं प्रयासा ❀ मम समीप नर पावहिं बासा ॥

मेरी जन्मभूमि यह नगरी बड़ी सुहावनी है। इसकी उत्तर दिशामें पवित्र सरयू नदी बहती है, जिसमें स्नान करलेसे परिश्रम बिना ही मनुष्य मेरे पास निवास पा जाते हैं।

अतिप्रिय मोहि इहाँ के बासी ❀ मम धामदा पुरी सुखरासी ॥
हरषे सब कपि सुनि प्रभुबानी ❀ धन्य अवध जो राम बखानी ॥

यहांके रहनेवाले मुझे अत्यन्त प्यारे हैं। यह नगरी सुखकी राशि है, मेरे धाम वैकुण्ठको देनेवाली है। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी यह वाणी सुनकर सब वानर प्रसन्न हो गये। अयोध्यापुरी धन्य है, जिसकी बड़ाई श्रीरामचन्द्रजीने की।

दो०—आवत देखि लोग सब ❀ कृपासिंधु भगवान।
नगर निकट प्रभु प्रेरेउ ❀ उतरेउ भूमि बिमान ॥ १२ ॥

सब लोगोंको आता देखकर दयासागर भगवान् प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने नगरके पास प्रेरणा की और पृथिवीपर उतरा।

उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि ❀ तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।
प्रेरित राम चलेउ सो ❀ बिरहु हरष अति ताहु ॥ १३ ॥

पुष्पक विमानसे उतरकर प्रभुने उससे कहा कि तुम कुवेरके पास जाओ। श्रीरामचन्द्रजीकी प्रेरणासे विमान चल दिया। उसको भी अत्यन्त आनन्द और विरह—दोनों ही हुए।

आये भरत संग सब लोगा ❀ कृसतन श्री-रघु-बीर-बियोगा ॥
बामदेव बसिष्ठ मुनिनायक ❀ देखे प्रभु महि धरि धनु सायक ॥

প্রথম সাক্ষাৎ।　　প্রথম সাক্ষাৎ।

भरतजी आये। उनके साथमें सब लोग थे। श्रीरामचन्द्रजीके विरहमें सबका शरीर दुबला हो रहा था। मुनीश्वर वामदेव और वशिष्ठजीको जब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने देखा तब धनुष और बाण पृथिवीपर रखकर—

धाइ धरे गुरु-चरन-सरोरुह ❀ अनुजसहित अति-पुलक-तनोरुह ॥
भेंटि कुसल बूझी मुनिराया ❀ हमरे कुसल तुम्हारिहि दाया ॥

छोटे भाई लक्ष्मणसमेत दौड़कर गुरुके चरणकमल पकड़ लिये। दोनों अत्यन्त आनन्दमें भर गये और शरीर रोमांचित हो गया। मिलकर मुनिराज वशिष्ठजीने कुशलता पूछी। श्रीरामचंद्रजीने कहा कि आपकी दयासे हमारी कुशलता है।

सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा ❀ धरम-धुरंधर रघु-कुल-नाथा ॥
गहे भरत पुनि प्रभु-पद-पंकज ❀ नमत जिन्हहिं सुर मुनि संकर अज ॥

फिर धर्मधुरंधर रघुकुलके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीने सब ब्राह्मणोंसे मिलकर उन्हें मस्तक नवाया। फिर भरतजीने प्रभुके चरणकमल पकड़ लिए, जिन्हें देवता, मुनि, शिव और ब्रह्मा—सब नमस्कार करते हैं।

परे भूमि नहिं उठत उठाये ❀ बर करि कृपासिंधु उर लाये ॥
स्यामलगात रोम भये ठाढ़े ❀ नव-राजीव-नयन जल बाढ़े ॥

भरतजी पृथिवीपर पड़े हुए थे और उठाए न उठते थे। फिर कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने बलपूर्वक उठाकर उन्हें हृदयसे लगा लिया। उनके सांवले शरीरमें रोम खड़े हो गए। नये कमलके समान उनके नेत्रोंसे जल उमड़ चला।

छं०—राजीवलोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी।
अतिप्रेम हृदय लगाइ अनुजहिं मिले प्रभु त्रि-भुवन-धनी ॥
प्रभु मिलत अनुजहिं सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही।
जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुखमा लही ॥

उनके कमलके समान नेत्रोंसे जल बहने लगा; शरीरमें सुन्दर पुलकावली छा गई। त्रिभुवनके स्वामी प्रभु श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त प्रेमसे भाई भरतको हृदयसे लगाकर मिले। तुलसीदासजी कहते हैं कि छोटे भाई भरतजीसे मिलते हुए प्रभु श्रीरामचन्द्रजीकी जो शोभा हुई, उसकी उपमा मुझसे नहीं कही जाती, मानों प्रेम और शृंगार शरीर रखकर मिले और श्रेष्ठ शोभा पायी हो।

बूझत कृपानिधि कुसल भरतहिं बचन बेगि न आवई।
सुनु सिवा सो सुख बचनमन तें भिन्न जान जो पावई।

अब कुसल कौसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो।
बूड़त बिरहबारीस कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥

दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी भरतजीका कुशल पूछते हैं; परन्तु भरतजीका वचन शीघ्र नहीं निकलता। महादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती, सुनो, वह सुख वचन और मनसे भिन्न है। उसे जो पाता है वही जानता है। भरतजी बोले—हे कोशलनाथ, अब सब कुशल है, जो आपने सेवकको दुःखी जानकर दर्शन दिये। दयानिधानने विरहके समुद्रमें डूबते हुए मुझको हाथ पकड़कर उठा लिया।

दो०—पुनि प्रभु हरषित सत्रुहन ❀ भेंटे हृदय लगाइ।
लछिमनु भरत मिले तब ❀ परम प्रेम दोउ भाइ॥१४॥

फिर प्रभु प्रसन्न होकर शत्रुघ्नको हृदयसे लगाकर मिले। तब लक्ष्मणजी और भरतजी—दोनों भाई बड़े प्रेमसे मिले।

भरतानुज लछिमन पुनि भेंटे ❀ दुसह बिरहसंभव दुख मेटे॥
सीताचरन भरत सिरु नावा ❀ अनुजसमेत परमसुख पावा॥

फिर भरतजीके छोटे भाई शत्रुघ्न और लक्ष्मणजी मिले और वियोगजनित दुःसह दुःखोंको मिटा दिया। भरतजीने सीताजीके चरणोंको शिर नवाया और छोटे भाई शत्रुघ्नसमेत अत्यंत सुख पाया।

प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी ❀ जनित बियोग बिपति सब नासी॥
प्रेमातुर सब लोग निहारी ❀ कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी॥

प्रभुको देखकर सब नगर-निवासी प्रसन्न हुए। उनकी वियोगजनित सारी विपत्ति मिट गयी। सब लोगोंको प्रेममें आतुर देखकर खर दैत्यको मारनेवाले कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने कौतुक किया।

अमित रूप प्रगटे तेहि काला ❀ जथाजोग मिले सबहिं कृपाला॥
कृपा दृष्टि रघुबीर बिलोकी ❀ किये सकल नरनारि बिसोकी॥

उस समय उन्होंने अपने असंख्य रूप प्रकट किये और कृपालु श्रीरामचन्द्रजी सभीसे यथायोग्य मिले। फिर कृपादृष्टिसे देखकर श्रीरामचन्द्रजीने सब स्त्री-पुरुषोंको शोकरहित कर दिया।

छन महुँ सबहिं मिले भगवाना ❀ उमा मरमु यह काहु न जाना॥
एहि बिधि सबहिं सुखी करि रामा ❀ आगे चले सील-गुन-धामा॥
कौसल्यादि मातु सब धाईं ❀ निरखि बच्छ जनु धेनु लवाईं॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, एक क्षणमें भगवान् सभीसे मिल चुके, यह भेद किसीने नहीं जाना। शील और गुणोंके धाम श्रीरामचन्द्रजी इस प्रकार सबको सुखी करके आगे चले। कौशल्या आदि सब माताएँ दौड़ीं, मानों हालहीकी ब्यायी हुई गाय बछड़ेको देखकर दौड़ी हो।

छंद—जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृह चरन बन परबस गईं।
दिनअंत पुर रुख स्रवत थन हुंकार करि धावत भईं॥
अतिप्रेम प्रभु सब मातु भेंटी बचन मृदु बहु बिधि कहे।
गइ विषम बिपति बियोगभव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे॥

मानों गायें परवश होकर बालक बछड़ेको घरपर छोड़कर वनमें चरनेके लिये गयी हों और दिन छिपनेके समय थनोंसे दूध चुआती हुई हुंकार करके वे नगरकी ओर दौड़ी हों। सब माताएँ प्रभु श्रीरामचन्द्रजीसे अत्यंत प्रेमसे मिलीं और श्रीरामचन्द्रजीने उनसे बहुत तरहके कोमल वचन कहे। वियोगजनित उनकी सारी विषम विपत्ति नष्ट हो गयी। उन्होंने असीम आनन्द और सुख पाया।

दो०—भेंटेउ तनय सुमित्रा ❀ राम-चरन-रति जानि।
रामहिं मिलत कैकई ❀ हृदय बहुत सकुचानि॥१५॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरणमें भक्ति जानकर सुमित्राने पुत्र लक्ष्मणसे भेंट की। श्रीरामचन्द्रजीसे मिलते हुए कैकेयीको हृदयमें बड़ा संकोच हुआ।

लछिमन सब मातन्ह मिलि ❀ हरषे आसिष पाइ।
कैकइ कहं पुनि पुनि मिले ❀ मन कर छोभ न जाइ॥१६॥

लक्ष्मणजी सब माताओंसे मिले और आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हुए। कैकेयीसे वे बार-बार मिले, फिर भी उसके मनका क्षोभ न जाता था।

सासुन्ह सबन्ह मिली बैदेही ❀ चरनन्हि लागि हरष अति तेही॥
देहिं असीस बूझि कुसलाता ❀ होहु अचल तुम्हार अहिवाता॥

सीताजी सब सासुओंसे मिलीं और चरणोंमें लिपट गयीं। उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। कुशल पूछकर सासुएँ आशीर्वाद देती थीं कि तुम्हारा सौभाग्य अचल होवे।

सब रघुपति-मुख-कमल बिलोकहिं ❀ मंगल जानि नयनजल रोकहिं॥
कनकथार आरती उतारहिं ❀ बार बार प्रभु गात निहारहिं॥

सब श्रीरामचन्द्रजीका कमल-मुख देख रही थीं और मङ्गलका समय समझकर अपने नेत्रोंके आंसू रोकती थीं। सोनेके थाल लेकर वे आरती उतारती और बार-बार प्रभुके शरीरको देखती थीं।

नाना भाँति निछावरि करहीं ❀ परमानंद हरष उर भरहीं॥
कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहिं ❀ चितवति कृपासिंधु रनधीरहिं॥

वे सब अनेक प्रकारकी वस्तुएँ निछावर करती और अत्यंत आनन्दसे हृदयमें प्रसन्न होती थीं। माता कौशल्या बारबार दयासागर, रणधीर श्रीरामचंद्रजीको देखती थीं।

हृदय बिचारति बारहिं बारा ❀ कवन भांति लङ्कापति मारा ॥
अतिसुकुमार जुगल मेरे बारे ❀ निसिचर सुभट महाबल भारे ॥

वे अपने हृदयमें बार-बार विचार करने लगीं कि इन्होंने लंकापति रावणको किस प्रकार मारा। मेरे दोनों बालक अत्यन्त सुकुमार हैं और राक्षस तो अत्यन्त बली और भारी वीर योद्धा होंगे।

दो०—लछिमन अरु सीतासहित ❀ प्रभुहिं बिलोकति मात।
परमानंद - मगन - मन ❀ पुनि पुनि पुलकितगात ॥ १७ ॥

माता कौशल्या लक्ष्मणजी और सीताजीसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देख रही थीं। परमानन्दमें उनका मन मग्न हो गया। उनका शरीर बारबार पुलकायमान होने लगा।

लंकापति कपीस नल नीला ❀ जामवंत अङ्गद सुभसीला ॥
हनुमदादि सब बानरबीरा ❀ धरे मनोहर मनुजसरीरा ॥

लंकापति विभीषण, कपिराज सुग्रीव, नल और नील, जाम्बवान, अंगद और हनुमान आदि श्रेष्ठ शीलवाले सब वन्दर वीर मनोहर मनुष्यशरीर धारण किए हुए थे।

भरत - सनेह - सील - ब्रत - नेमा ❀ सादर सब बरनहिं अतिप्रेमा ॥
देखि नगरबासिन्ह कै रीती ❀ सकल सराहहिं प्रभु - पद-प्रीती ॥

भरतजीके स्नेह, शील, व्रत और नियमको वे सब आदरके साथ अत्यन्त प्रेमसे वर्णन करते थे। नगरवासियोंकी रीति और प्रभुके चरणोंमें उनके प्रेमको देखकर वे सब उनकी प्रशंसा करते थे।

पुनि रघुपति सब सखा बोलाये ❀ मुनिपद लागहु सकल सिखाये ॥
गुरु बसिष्ठ कुलपूज्य हमारे ❀ इन्हकी कृपा दनुज रन मारे ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीने सब सखा बुलाए और सबको सिखलाया कि मुनिके चरणोंको स्पर्श करो। ये गुरु वशिष्ठ हैं और हमारे कुलपूज्य हैं। इन्हींकी कृपासे हमने राक्षसोंको संग्राममें मारा है।

ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे ❀ भये समरसागर कहुं बेरे ॥
मम हित लागि जनम इन्ह हारे ❀ भरतहु तें मोहि अधिक पियारे ॥
सुनि प्रभुबचन मगन सब भये ❀ निमिष निमिष उपजत सुख नये ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजी वशिष्ठजीसे कहने लगे—हे मुनि, सुनिये। ये सब मेरे सखा हैं। संग्रामसागरमें ये सब मेरे लिए बेड़ा (नौका) रूप हुए हैं। मेरे हितके लिए इन्होंने अपने जीवन हार दिए हैं। ये सब मुझे भरतजीसे भी अधिक प्यारे हैं। प्रभुके वचन सुनकर सब आनन्दमग्न हो गये, पल-पलमें सबको नया सुख होने लगा।

दो०—कौसल्या के चरनन्हि ❁ पुनि तिन्ह नायेउ माथ।
आसिष दीन्ही हरषि तुम्ह ❁ प्रिय मम जिमि रघुनाथ॥१८॥

फिर उन सबने कौशल्याके चरणोंको मस्तक नवाया। माता कौशल्याने प्रसन्न होकर आशिष दी कि तुम सब मुझे श्रीरामचन्द्रजीके समान प्यारे हो।

सुमनबृष्टि नभ संकुल ❁ भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारिन्ह देखहिं ❁ नगर नारि-बर-बृंद॥१९॥

सुखमूल श्रीरामचन्द्रजी जब राजमहलको विदा हुए तब आकाश पुष्पवृष्टिसे भर गया। नगरकी सुन्दर झुण्डकी झुण्ड स्त्रियां अटारियोंपर चढ़ी हुई देख रही थीं।

कंचनकलस बिचित्र संभारे ❁ सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे॥
बंदनवार पताका केतू ❁ सबन्हि बनाये मंगलहेतू॥

सभी लोगोंने अपने-अपने द्वार सजाकर सोनेके कलसे विचित्र तरहसे संवारकर रखे। सबने वंदनवार, पताका, ध्वजा आदि मंगलसूचक वस्तुओंको सजाया।

बीथी सकल सुगंध सिंचाई ❁ गजमनि रचि बहु चौक पुराई॥
नाना भांति सुमंगल साजे ❁ हरषि नगर निसान बहु बाजे॥

सब गलियोंको सुगन्धित जलसे छिड़काया और गजमुक्ताओंसे सजाकर बहुतसे चौक पुराये। तरह-तरहके सुन्दर मंगल-साज सजाए और लोगोंके प्रसन्न होनेसे नगरमें बहुतसे निशान बजने लगे।

जहं तहं नारि निछावरि करहीं ❁ देहिं असीस हरष उर भरहीं॥
कंचनथार आरती नाना ❁ जुवती सजे करहिं सुभ गाना॥

जहां-तहां स्त्रियां निछावर करने, आशीर्वाद देने और हृदयमें प्रसन्न होने लगीं। युवतियोंने सोनेके थालोंमें अगणित आरतियां सजायीं और सब मांगलिक गीत गाने लगीं।

करहिं आरती आरतिहर कें ❁ रघु-कुल-कमल-बिपिन-दिन-करकें॥
पुरसोभा संपति कल्याना ❁ निगम सेष सारदा बखाना॥
तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं ❁ उमा तासु गुन नर किमि कहहीं॥

वे सब श्रीरामचन्द्रजीकी आरती करने लगीं, जो दुःखोंको मिटानेवाले और रघुवंशरूपी कमलके वनके लिए सूर्य हैं। अयोध्यापुरीकी शोभा, सम्पत्ति और कल्याणका वेद, शेषनाग, और शारदा—सब वर्णन करते थे; परन्तु वे भी यह लीला देखकर जब दंग रह जाते थे तब—शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, उसके गुणोंको मनुष्य कैसे कह सकते हैं।

दो०—नारि कुमुदिनी अवध सर ❁ रघु-पति-बिरह दिनेस।
अस्त भये बिगसत भईं ❁ निरखि राम राकेस॥ २०॥

अयोध्या सरोवर है और स्त्रियां हैं कुमुदिनी, जो रघुकुलके स्वामीके वियोगरूपी सूर्यके अस्त हो जानेपर श्रीरामचन्द्रजीरूपी पूर्ण चंद्रमाको देखकर विकसित हो गयीं।

होहिं सगुन सुभ बिबिधबिधि ❁ बाजहिं गगन निसान।
पुर-नर-नारि सनाथ करि ❁ भवन चले भगवान॥ २१॥

तरह-तरहके शुभ शकुन हो रहे थे। आकाशमें निशान बज रहे थे। तब नगरको स्त्रियों और पुरुषों—सबको सनाथ करके भगवान् श्रीरामचंद्रजी राजभवनको चल दिये।

प्रभु जानी ककई लजानी ❁ प्रथम तासु गृह गये भवानी॥
ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा ❁ पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा॥

शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, प्रभुने यह जान लिया कि कैकेयी लजा गयी है, इसलिये वे पहिले उसीके घर गये। उसे समझाकर बहुत सुख दिया और फिर भगवान् अपने भवनको गये।

कृपासिंधु जब मंदिर गये ❁ पुर-नर-नारि सुखी सब भये॥
गुरु बसिष्ठ द्विज लिये बोलाई ❁ आज सुघरी सुदिन सुभदाई॥

कृपासागर श्रीरामचंद्रजी जब भवनमें चले गये तब नगरके सब स्त्री-पुरुष सुखी हो गये। गुरु वशिष्ठजीने ब्राह्मणोंको बुला लिया और कहा कि आज कल्याणप्रद शुभ दिन और शुभ घड़ी है।

सब द्विज देहु हरषि अनुसासन ❁ रामचन्द्र बैठहिं सिंहासन॥
मुनि बसिष्ठ के बचन सुहाये ❁ सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाये॥

सब ब्राह्मण प्रसन्न होकर यदि आज्ञा दें तो श्रीरामचंद्रजी सिंहासनपर बैठें। वशिष्ठ मुनिके सुहावने वचन सब ब्राह्मणोंको सुनते ही अत्यन्त प्रिय लगे।

कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका ❁ जगअभिराम रामअभिषेका॥
अब मुनिबर बिलंबु नहिं कीजै ❁ महाराज कहुं तिलक करीजै॥

सब ब्राह्मण बहुतसे कोमल वचन कहने लगे कि श्रीरामचंद्रजीका अभिषेक जगतको प्रिय है। हे मुनिवर, अब देरी न कीजिये। महाराज, श्रीरामचंद्रजीको राजतिलक कर दीजिये।

दो०—तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन ❀ सुनत चलेउ हरषाइ।
रथ अनेक बहु बाजि गज ❀ तुरत संवारेउ जाइ ॥ २२ ॥

तब वशिष्ठ मुनिने सुमंत्रको आदेश दिया। सुमंत्र आज्ञा सुनते ही प्रसन्न होकर चल दिये। उन्होंने जाकर तुरंत ही अनेक रथ और बहुतसे हाथी-घोड़े सजा दिये।

जहं तहं धावन पठइ पुनि ❀ मंगल द्रव्य मंगाइ।
हरष समेत बसिष्ठपद ❀ पुनि सिरु नायेउ आइ ॥ २३ ॥

फिर जहां-तहां दूत भेजकर और मंगलसूचक वस्तुएं मंगवाकर सुमंत्रने आनन्दसमेत फिर आकर वशिष्ठजीके चरणोंको शिर नवाया।

अवधपुरी अतिरुचिर बनाई ❀ देवन्ह सुमनबृष्टि झरि लाई ॥
राम कहा सेवकन्ह बोलाई ❀ प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई ॥

अयोध्यापुरी अत्यन्त सुन्दर सजायी गयी। देवताओंने पुष्पवृष्टिकी झड़ी लगा दी। श्रीरामचंद्रजीने सेवकोंको बुलाकर आज्ञा दी कि पहिले जाकर मेरे सखाओंको स्नान कराओ।

सुनत वचन जहं तहं जन धाये ❀ सुग्रीवादि तुरत अन्हवाये ॥
पुनि करुनानिधि भरत हंकारे ❀ निज कर राम जटा निरुवारे ॥

वचन सुनते ही सेवक जहां-तहां दौड़े और सुग्रीवादि सखाओंको तुरन्त स्नान करा दिया। फिर दयानिधान श्रीरामचंद्रजीने भरतजीको बुलाया और अपने हाथोंसे उनकी जटाएं दूर कीं।

अन्हवाये प्रभु तीनिउ भाई ❀ भगतबछल कृपालु रघुराई ॥
भरतभाग्य प्रभु-कोमल-ताई ❀ सेष कोटि सत सकहिं न गाई ॥

फिर भक्तवत्सल, कृपालु, श्रीरामचंद्रजीने तीनों भाइयोंको स्नान कराया। भरतजीके सौभाग्य और प्रभुकी कोमलताको सौ करोड़ शेषनाग भी गा नहीं सकते।

पुनि निज जटा राम बिबराये ❀ गुरु अनुसासन मांगि नहाये ॥
करि मज्जनु प्रभु भूषन साजे ❀ अंग अनंग कोटि छबि लाजे ॥

श्रीरामचंद्रजीने अपनी जटाओंको अलग किया और गुरुकी आज्ञा मांगकर स्नान किया। स्नान करके प्रभुने भूषणोंको धारण किया। उनके शरीरकी शोभासे करोड़ कामदेवोंकी शोभा भी लजाती थी।

दो०—सासुन्ह सादर जानकिहि ❁ मज्जनु तुरत कराइ ।
दिव्य बसन बर भूषन ❁ अँग अँग सजे बनाइ ॥२४॥

सासुओंने आदरके साथ सीताजीको तुरंत स्नान कराकर उनके अङ्ग-अङ्गमें दिव्यवस्त्रों और उत्तमोत्तम भूषणोंको भलीभाँति सजाया ।

राम-बाम-दिसि सोभति ❁ रमारूप गुनखानि ।
देखि मातु सब हरषीं ❁ जनम सुफल निज जानि ॥२५॥

रूप और गुणकी खान लक्ष्मीरूप सीताजीको श्रीरामचन्द्रजीकी बायीं ओर शोभित देखकर सब माताएँ अपना जन्म सफल जानकर प्रसन्न हुईं ।

सुनु खगेस तेहि अवसर ❁ ब्रह्मा सिव मुनिबृंद ।
चढ़ि बिमान आये सब ❁ सुर देखन सुखकंद ॥२६॥

काकभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, सुनो । उस अवसरपर ब्रह्मा, शिव, मुनियोंके झुण्ड और सब देवता विमानोंपर चढ़कर सुखमूल श्रीरामचन्द्रजीको देखनेके लिये आये ।

प्रभु बिलोकि मुनि मनु अनुरागा ❁ तुरत दिव्य सिंहासन मांगा ॥
रबिसम तेज सो बरनि न जाई ❁ बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको देखकर वशिष्ठ मुनिका मन प्रेममें भर गया । उन्होंने तुरंत ही दिव्य सिंहासन माँगा । सूर्यके समान उसका तेज था । उसका वर्णन नहीं किया जाता । ब्राह्मणोंको शिर नवाकर श्रीरामचन्द्रजी उसपर बैठ गये ।

जनक - सुता - समेत रघुराई ❁ पेखि प्रहरषे मुनिसमुदाई ॥
बेदमंत्र तब द्विजन्ह उचारे ❁ नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे ॥

राजा जनकजीकी पुत्री जानकीसमेत श्रीरामचन्द्रजीको देखकर मुनियोंका समुदाय प्रसन्न हो गया । तब ब्राह्मणोंने वेदमंत्रोंका उच्चारण किया और आकाशमें देवता और मुनिजन जय-जयकार पुकारने लगे ।

प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा ❁ पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा ॥
सुत बिलोकि हरषीं महतारी ❁ बार बार आरती उतारी ॥

वशिष्ठ मुनिने पहिले तिलक किया और फिर सब ब्राह्मणोंको आज्ञा दी । पुत्रको देखकर माताएँ प्रसन्न हुईं और बार-बार आरती उतारने लगीं ।

बिप्रन्ह दान बिबिध बिधि दीन्हे ❁ जाचक सकल अजाचक कीन्हे ॥
सिंहासन पर त्रि-भुवन - साईं ❁ देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाईं ॥

उन्होंने ब्राह्मणोंको तरह-तरहके दान दिये और सब याचकोंको अयाचक बना दिया। त्रिभुवनके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीको सिंहासनपर देखकर देवताओंने नगारे बजाये।

छं०—नभ दुंदुभी बाजहिं बिपुल गंधर्ब किन्नर गावहीं।
नाचहिं अपछराबृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥
भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहे छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म सक्ति बिराजते॥

आकाशमें नगारे बजने लगे, बहुतसे गंधर्व और किन्नर गाने लगे, अप्सराओंके समूह नाचने लगे और देवता और मुनि परमानन्द पाने लगे। भरत आदि श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई, विभीषण, अंगद, हनुमान आदि-समेत सब छत्र, चँवर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल और शक्ति लिये हुए शोभित हो रहे थे।

सियसहित दिन-कर-बंस-भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव-अंबु-धर-बर-गात अंबर पीत मुनिमन मोहई॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोजनयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंत जे॥

सीताजीसमेत सूर्यकुलके भूषण श्रीरामचन्द्रजीकी छवि अनेक कामदेवोंके समान शोभित हो रही है। नये मेघके समान उनके श्रेष्ठ शरीरपर पीताम्बर मुनियोंके मनको भी मोहित कर लेता है। मुकुट, विजायठ(बाजूबंद) आदि विचित्र भूषण उनके अङ्ग-अङ्गमें सजे हुए हैं। कमलके समान उनके नेत्र हैं, वक्षस्थल और भुजाएं विशाल हैं। जिन मनुष्योंने उन्हें देखा वे धन्य हैं।

दो०—वह सोभा समाज सुख ❀ कहत न बनइ खगेस।
बरनइ सारद सेष स्रुति ❀ सो रस जान महेस॥२७॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे पक्षिराज गरुड़! वह शोभा, वह समाज और वह सुख कहते नहीं बनता। उसका वर्णन शारदा, शेषनाग और वेद करते हैं और वह रस महादेवजी जानते हैं।

भिन्न भिन्न अस्तुति करि ❀ गये सुर निज निज धाम।
बंदिबेष धरि बेद तब ❀ आये जहं श्रीराम॥२८॥

भिन्न-भिन्न स्तुतियां करके देवता अपने-अपने लोकको गये। फिर वंदीजनका भेष बनाकर वेद वहां आये जहां श्रीरामचन्द्रजी थे।

प्रभु सरबग्य कीन्ह अति ❀ आदर कृपानिधान ।
लखेउ न काहूँ मरम कछु ❀ लगे करन गुनगान ॥ २६ ॥

दयानिधान स्वामी श्रीरामचन्द्रजी सर्वज्ञ हैं। उन्होंने अत्यन्त आदर किया। यह भेद किसीने कुछ न जान पाया। वे सब उनके गुणगान करने लगे।

छं०—जय सगुन निर्गुन रूप रूपअनूप भूप-सिरोमने ।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने ॥
अवतार नर संसारभार बिभंजि दारुनदुख दहे ।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्तसक्ति नमामहे ॥

हे राजाओंके शिरोमणि, आपकी जय हो। आपका रूप अनुपम है। आपका रूप सगुण है और निर्गुण भी। आपने रावण आदि प्रचण्ड राक्षसों और प्रबल दुष्टोंको अपनी भुजाओंके बलसे मारा। आपने मनुष्यका अवतार लेकर संसारके भारको दूरकर उसके घोर दुःखोंको जला दिया। हे शरणागतकी रक्षा करनेवाले दयालु प्रभु श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो। शक्तिरूप सीता-समेत आपको हम नमस्कार करते हैं।

तव बिषम मायाबस सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुनन्हि भरे ॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिध दुख ते निर्बहे ।
भव-खेद-छेदन-दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे ॥

हे हरे! देवता, दैत्य, नाग, मनुष्य, चर और अचर—सब आपकी विषम मायाके अधीन हैं और काल, कर्म और गुणोंसे भरे हुए असंख्य दिन और रात संसार-मार्गमें घूमते फिरते हैं। हे नाथ, जिनको आपने दया करके देख लिया वे तीनों प्रकारके दुःखोंसे छूट गये। हे संसारके शोकको नाश करनेमें कुशल श्रीरामचन्द्रजी, हमारी रक्षा कीजिये। हम आपको नमस्कार करते हैं।

जे ग्यान-मान-बिमत्त तव भवहरनि भगति न आदरी ।
ते पाइ सुर-दुर्लभ-पदादपि परत हम देखत हरी ॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।
जपि नाम तव बिनु स्रम तरहिं भवनाथ सोइ स्मरामहे ॥

जिन मनुष्योंने ज्ञानके अभिमानमें मतवाले होकर संसारको मिटा देनेवाली आपकी भक्तिका आदर नहीं किया, हे भगवन्, वे देव-दुर्लभ पदको भी पाकर फिर नीचे गिर जाते हैं—यह हम देखते हैं। सब आशाओंको

छोड़कर जो विश्वासपूर्वक आपके दास हो रहे हैं, हे स्वामिन्, वे आपके नामको जपकर बिना परिश्रम ही संसारको तर जाते हैं। हम उसी नामका स्मरण करते हैं।

जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतनी तरी।
नखनिर्गता मुनिबंदिता त्रैलोक्य-पावनि सुरसरी॥
ध्वज-कुलिस-अंकुस-कंज-जुत बन फिरत कंटक किन लहे।
पद-कंज-द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥

जो चरण शिवजी और ब्रह्माजीके पूज्य हैं; जिनकी शुभ रजको छूकर मुनिपत्नी अहल्या तर गयी; जिनके नखसे देव-नदी गंगाजी निकलीं, जो मुनियोंद्वारा वंदित हैं और तीनों लोकोंको पवित्र करनेवाली हैं; जिनमें ध्वज, वज्र, अंकुश और कमलके चिह्न हैं और वनमें फिरते हुए जिनमें कांटे चुभे—हे मोक्ष देनेवाले, लक्ष्मीपति श्रीरामचन्द्रजी, उन दोनों चरणकमलोंको हम नित्य भजते हैं।

अ-व्यक्त-मूल-मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंचबीस अनेक पर्न सुमन घने॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आस्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसारबिटप नमाम हे॥

हे संसार-वृक्ष रूप श्रीरामचन्द्रजी, हम आपको नमस्कार करते हैं। इस अनादि वृक्षकी जड़ प्रकृति है, वेद और शास्त्र इसकी चार त्वचाएं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—बतलाते हैं, छः स्कन्ध (मोटे-मोटे विभाग), पच्चीस शाखाएं, अनेक पत्ते और बहुतसे फूल हैं। कड़ुए और मीठे दो तरहके फल हैं। इसके आश्रित रहनेवाली बेल अकेली ही है। यह सुन्दर वृक्ष नित्य नया पल्लवित होता और फूलता रहता है।

जे ब्रह्म अजमद्वैत-मनु-भव-गम्य मन पर ध्यावहीं।
ते कहहु जानहु नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मांगहीं।
मन बचन करम बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥

जो मनुष्य जन्मरहित, अद्वैत, अनुभवगम्य और मनसे परे निर्गुण ब्रह्मका ध्यान करते हैं वे उसे जाने और उसका वर्णन करें। हे नाथ, हम तो आपके सगुण स्वरूपके यशको नित्य गाते हैं। हे दयानिधान, हे सद्गुणोंके भाण्डार, हे देव, हे स्वामिन, हम यह वरदान मांगते हैं कि मन, वाणी और कर्मसे विकार छोड़कर आपके चरणोंमें हमारा प्रेम हो।

दो०—सबके देखत बेदन्ह ❀ बिनती कीन्हि उदार।
अंतरधान भये पुनि ❀ गये ब्रह्मआगार ॥ ३० ॥

सबके देखते हुए वेदोंने उदार विनती की। फिर वे अन्तर्धान हो गये और ब्रह्मलोकको चले गये।

बैनतेय सुनु संभु तब ❀ आये जहं रघुबीर।
बिनय करत गदगद गिरा ❀ पूरित पुलक सरीर ॥ ३१ ॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, सुनो। तब, जहां श्रीरामचन्द्रजी थे वहां शिवजी आये। उनका शरीर पुलकावलीसे पूर्ण हो रहा था। वे गद्गद् वाणीसे विनय करने लगे।

तो० छं०—जय राम रमा रमनं समनं ❀ भव - ताप - भयाकुल पाहि जनं ॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो ❀ सरनागत मांगत पाहि प्रभो ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो। आप लक्ष्मीके साथ विहार करनेवाले और संसाररूपी तापको शान्त करनेवाले हैं। भयसे व्याकुलजनोंकी आप रक्षा कीजिये। हे अवधेश, हे सुरेश, हे लक्ष्मीपति, हे विभो, मैं शरणागत हूं और यह मांगता हूं कि हे प्रभो, आप मेरी रक्षा कीजिये।

दस-सीस-बिनासन बीस भुजा ❀ कृत दूरि महा महि- भूरि-रुजा ॥
रजनी - चर - बृंद - पतंग रहे ❀ सर - पावक-तेज प्रचंड दहे ॥

हे दश शिरों और बीस भुजाओंवाले रावणको नाश करनेवाले, आपने विशाल पृथिवीका भारी रोग दूर कर दिया। राक्षसोंके झुण्ड पतिङ्गोंके समान थे। वे सब आपके वाणरूपी अग्निके प्रचण्ड तेजमें भस्म हो गये।

महि - मंडल - मंडन चारुतरं ❀ धृत - सायक- चाप-निषंग-वरं ॥
मद मोह महा ममता रजनी ❀ तमपुंज दिवाकर तेज - अनी ॥

आप पृथिवी-मण्डलके भूषण हैं, अत्यंत सुन्दर हैं, सुन्दर धनुष-वाण और तरकस धारण किये हुए हैं। मद, मोह और भारी ममतारूपी रात्रिके अन्धकार-समूहके लिये आप तीव्र किरणोंवाले सूर्य हैं।

मनजात किरात निपात किये ❀ मृग लोग कुभोग सरेन हिये ॥
हति नाथ अनाथन्हि पाहि हरे ❀ बिषयाबन पाँवर भूलि परे ॥

हृदयोंमें कुभोगरूपी वाण मारकर मनुष्यरूपी मृगोंको कामदेवरूपी बहेलियेने गिरा दिया। हे नाथ, हे भगवन, जो नीच मनुष्य भूलकर विषयोंके वनमें पड़े हुए हैं, उस कामदेवको मारकर आप इन अनाथजनोंकी रक्षा कीजिये।

बहु रोग बियोगन्हि लोग हये ❀ भवदंघ्रिनिरादर के फल ये ॥
भवसिंधु अगाध परे नर ते ❀ पद - पंकज - प्रेमु न जे करते ॥

मनुष्य बहुतसे रोगों और वियोगके दुःखोंसे मरते हैं—ये फल आपके चरणोंके निरादरके ही हैं। वे मनुष्य अगाध भवसागरमें पड़ते हैं, जो आपके चरणकमलोंमें प्रेम नहीं करते।

अतिदीन मलीन दुखी नितहीं ❀ जिनके पदपंकज प्रीति नहीं ॥
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के ❀ प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह के ॥

जिन मनुष्योंको आपके चरणकमलोंमें प्रेम नहीं है वे नित्य ही अत्यन्त दीन, मलीन और दुःखी हैं। परन्तु जिनको आपकी कथाका सहारा है उनको संतजन और अनन्त भगवान् सदा प्यारे हैं।

नहिं राग न लोभ न मान मदा ❀ तिन्ह के सम बैभव वा बिपदा ॥
एहि तें तव सेवक होत मुदा ❀ मुनि त्यागत जोग भरोस सदा ॥

जिनको न राग है न लोभ, न मान है न मद, उनको वैभव या विपत्ति, दोनों ही समान है। इसी कारण तुम्हारे सेवक मुनिजन सदैव योगका भरोसा छोड़ते हैं और प्रसन्न होते हैं।

करि प्रेमु निरन्तर नेमु लिये ❀ पदपंकज सेवित सुद्ध हिये ॥
सम मानि निरादर आदरहीं ❀ सब संत सुखी विचरंति मही ॥

जो निरन्तर नियमके साथ प्रेमपूर्वक शुद्धहृदय होकर आपके चरण-कमलोंका सेवन करते हैं वे सब संतजन अपने मानापमानको समान मानकर सुखी होते और पृथिवीपर स्वच्छन्द होकर विचरण करते हैं।

मुनि मानस-पंकज-भृंग भजे ❀ रघुबीर महा-रन-धीर अजे ॥
तव नाम जपामि नमामि हरी ❀ भवरोग महा मद मान अरी ॥

हे रघुवीर, हे महा रणधीर, हे अजेय, हे मुनियोंके मनरूपी कमलके लिये भ्रमरके समान श्रीरामचन्द्रजी! मैं आपका भजन करता हूं। हे भगवन, मैं आपके नामको जपता हूं और आपको नमस्कार करता हूं। आप संसार-रोग-रूपी महा मद और अभिमानके शत्रु हैं।

गुनसील कृपापरमायतनं ❀ प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं ॥
रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं ❀ महिपाल बिलोकय दीनजनं ॥

हे गुणशील, हे दयाके विशाल धाम, हे रमारमण, मैं आपको निरन्तर प्रणाम करता हूं। हे रघुनन्दन, आप सुख-दुःखादि भारी द्वन्द्वोंको निवृत्त कीजिये। हे पृथिवीको पालनेवाले श्रीरामचन्द्रजी, आप दीनजनको देखिये।

दो०—बार बार बर माँगउँ ❀ हरषि देहु श्रीरंग।
पद-सरो-ज अनपायनी ❀ भगति सदा सतसंग ॥२२॥

हे श्रीरंग, मैं आपसे बारबार यह वरदान मांगता हूं—चरण-कमलोंमें दृढ़ भक्ति और नित्य सत्संग—आप प्रसन्न होकर इसे दीजिये।

बरनि उमापति रामगुन ❀ हरषि गये कैलास।
तब प्रभु कपिन्ह दिवाये ❀ सब बिधि सुखप्रद बास ॥२३॥

पार्वतीपति शंकरजी श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका वर्णन करके प्रसन्न होकर कैलाशको गये। तब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने वानरोंको सब प्रकार सुखदायी स्थान ठहरनेके लिए दिलाये।

सुनु खगपति यह कथा पावनी ❀ त्रिबिध ताप भव-भय-दावनी ॥
महाराज कर सुभ अभिषेका ❀ सुनत लहहिं नर बिरति बिवेका ॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे पक्षिराज गरुड़, सुनो। यह कथा पवित्र है और त्रिविध ताप और संसारके भयको भस्म कर देनेवाली है। महाराज श्रीरामचन्द्रजीका शुभ राज्याभिषेक सुनते ही मनुष्योंको वैराग्य और विवेक प्राप्त हो जायगा।

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं ❀ सुख संपति नाना बिधि पावहिं ॥
सुरदुर्लभ सुख करि जग माहीं ❀ अंतकाल रघु-पति-पुर जाहीं ॥

किसी कामनासे जो मनुष्य उसे सुनेंगे और जो उसे गायेंगे वे तरह-तरहके सुख और सम्पत्ति पायेंगे। वे संसारमें देवताओंके लिये भी दुर्लभ सुखोंको भोगकर अन्तकालमें रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके लोक (वैकुण्ठ)को जायंगे।

सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई ❀ लहहिं भगति गति संपति नई ॥
खगपति राम कथा मैं बरनी ❀ स्वमति-बिलास त्रास-दुख-हरनी ॥

जो विमुक्त, वैरागी और विषयी जन उसे सुनेंगे वे क्रमशः भक्ति, गति और नयी सम्पत्तिको पायेंगे। हे गरुड़, अपनी बुद्धिके विलासके लिये मैंने श्रीरामचन्द्रजीकी, भय और दुखको दूरकर देनेवाली, कथा वर्णन की।

बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी ❀ मोह नदी कहं सुंदर तरनी ॥
नित नव मंगल कोसलपुरी ❀ हरषित रहहिं लोग सब कुरी ॥

यह कथा वैराग्य, विवेक और भक्तिको दृढ़ करनेवाली है, मोहरूपी नदीके लिये सुन्दर नौका है। अयोध्यापुरीमें नित्य नये मङ्गल होते थे और सब जातियोंके लोग प्रसन्न रहते थे।

नित नइ प्रीति राम-पद-पंक-ज ❀ सबके जिन्हहिं नमत सिव मुनि अज॥
मंगन बहु प्रकार पहिराये ❀ द्विजन्ह दान नाना बिधि पाये ॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें, जिन्हें शिवजी, मुनिजन और ब्रह्मा नमस्कार करते हैं, सबको नित्य नयी प्रीति होती थी। याचकोंको तरह-तरहके वस्त्र पहिनाये गये और ब्राह्मणोंने अनेक प्रकारके दान पाये।

दो०—ब्रह्मानंदमगन कपि ❀ सब के प्रभुपद प्रीति॥
जात न जाने दिवस तिन्ह ❀ गये मास षट बीति॥३४॥

सब वानर ब्रह्मानन्दमें मग्न हो गये। सबको प्रभुके चरणोंमें प्रेम था। उन्होंने दिन बीतते नहीं जाने—इस प्रकार छः महीने बीत गये।

बिसरे गृह सपनेहु सुधि नाहीं ❀ जिमि परद्रोह संत मन माहीं॥
तब रघुपति सब सखा बोलाये ❀ आइ सबन्हि सादर सिर नाये॥

उनको अपने घर भूल गये, उन्हें स्वप्नमें भी उनकी सुध नहीं हुई, जैसे संतजनोंके मनमें परद्रोह नहीं होता। तब श्रीरामचन्द्रजीने अपने सब सखाओंको बुलाया। आकर सबने आदरके साथ श्रीरामचन्द्रजीको शिर नवाया।

परम प्रीति समीप बैठारे ❀ भगत सुखद मृदु बचन उचारे॥
तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई ❀ मुख पर केहि बिधि करउँ बड़ाई॥

अत्यन्त प्रेमसे उन सबको पास बिठलाया और फिर श्रीरामचन्द्रजी भक्तोंको सुख देनेवाले कोमल वचन कहने लगे—तुम सबने मेरी बड़ी सेवा की है। मैं मुँहपर तुम्हारी प्रशंसा किस प्रकार करूँ?

ता तें मोहि तुम्ह अतिप्रिय लागे ❀ मम हित लागि भवन सुख त्यागे॥
अनुज राज संपति बैदेही ❀ देह गेह परिवार सनेही॥

मेरे हितके लिये तुम सबने घरके सुखोंको त्याग दिया—इसी कारण तुम मुझे अत्यन्त प्रिय लगे हो। छोटे भाई, राज्य, सम्पत्ति, सीताजी, शरीर, भवन, परिवार और प्रेमी—

सब मम प्रिय नहिं तुम्हहिं समाना ❀ मृषा न कहउँ मोर यह बाना॥
सब के प्रिय सेवक ये नीती ❀ मोरें अधिक दास पर प्रीती॥

सब मुझको प्यारे हैं, परंतु तुम्हारे समान नहीं। मेरा यह बाना है कि मैं कभी असत्य नहीं कहता। सेवक सभीको प्यारे होते हैं, यह नीति है; परंतु अपने सेवकपर मुझे बड़ा प्रेम होता है।

दो०—अब गृह जाहु सखा सब ❀ भजेहु मोहि दृढ़ नेमु।
सदा सर्बगत सर्बहित ❀ जानि करेहु अतिप्रेमु॥३५॥

हे मित्रो, अब सब अपने-अपने घरको विदा हो। दृढ़ नियमसे मेरा भजन करना। मुझे नित्य, सर्वव्यापक और सर्वहितकारी जानकर अत्यन्त प्रेम करना।

सुनि प्रभु बचन मगन सब भये ❀ को हम कहां बिसरि तन गये ॥
एकटक रहे जोरि कर आगे ❀ सकहिं न कछु कहि अति अनुरागे ॥

प्रभुके वचन सुनकर सब वानर मग्न हो गये। हम कौन हैं, कहां हैं, इत्यादि शरीरकी सुधि भूल गयी। हाथ जोड़कर वे सब एकटक श्रीरामचन्द्रजीके आगे खड़े होकर रह गये। वे सब कुछ कह न सकते थे, उनमें अत्यन्त प्रेम छा गया।

परमप्रेमु तिन्ह कर प्रभु देखा ❀ कहा बिबिधबिधि ग्यान बिसेखा ॥
प्रभु सनमुख कछु कह इन पारहिं ❀ पुनि पुनि चरन सरोज निहारहिं ॥

प्रभुने जब उनके अत्यन्त प्रेमको देखा तब अनेक प्रकारसे विशेष ज्ञानोपदेश किया। प्रभुके सामने कुछ कहनेके लिये वे सब समर्थ नहीं हो सके और बार-बार प्रभुके चरणकमलोंकी ओर देखने लगे।

तब प्रभु भूषन बसन मंगाये ❀ नाना रंग अनूप सुहाये ॥
सुग्रीवहिं प्रथमहिं पहिराये ❀ बसन भरत निज हाथ बनाये ॥

तब प्रभुने अनेक रंगोंके अनुपम सुहावने वस्त्राभूषण मंगवाये। सर्वप्रथम सुग्रीवको भरतजीने अपने हाथोंसे वस्त्र सजाकर पहनाये।

प्रभुप्रेरित लछिमन पहिराये ❀ लङ्कापति रघुपति मन भाये ॥
अङ्गद बैठि रहा नहिं डोला ❀ प्रीति देखि प्रभु ताहि न बोला ॥

प्रभुकी प्रेरणासे लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीके मनको प्यारे लगनेवाले लंकापति विभीषणको वस्त्राभूषण पहनाये। अंगदजी बैठे रहे, अपने स्थानसे हिलेडुले नहीं। अंगदजीकी प्रीति देखकर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने उन्हें नहीं बुलाया।

दो०—जामवंत नीलादि सब ❀ पहिराये रघुनाथ।
हिय धरि रामरूप सब ❀ चले नाइ पद माथ ॥ ३६ ॥

जाम्बवान, नील आदि सब वानरोंको श्रीरामचन्द्रजीने वस्त्राभूषण पहनाये। फिर हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीके रूपको रखकर वे सब प्रभुके चरणोंमें मस्तक नवाकर चल दिये।

तब अङ्गद उठि नाइ सिरु ❀ सजल नयन कर जोरि।
अतिबिनीत बोलेउ बचन ❀ मनहुं प्रेमरस बोरि ॥ ३७ ॥

तब उठकर अंगदजीने शिर नवाया और सजलनयन होकर और हाथ जोड़कर वे अत्यन्त विनीत वचन कहने लगे; मानों प्रेमके रसमें डुबाये हुए हों।

सुनु सरबग्य कृपा-सुख-सिंधो ❀ दीन-दया-कर आरतबंधो ॥
मरती बार नाथ मोहि बाली ❀ गयउ तुम्हारेहि कोछे घाली ॥

हे सर्वज्ञ, हे दया और सुखके समुद्र, हे दीनोंपर दया करनेवाले, हे दुःखियोंके हितकारी, सुनिये। हे नाथ, मरते समय वालि मुझे आपकी ही गोदमें डाल गया था।

अ-सरन-सरन बिरदु संभारी ❀ मोहि जनि तजहु भगत-हित-कारी ॥
मोरे तुम्ह प्रभु गुरु पितु माता ❀ जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता ॥

हे अशरणशरण, हे भक्तोंके हितकारी, अपनी प्रतिज्ञा स्मरणकर आप मुझे मत त्यागिये। मेरे गुरु, प्रभु, माता और पिता—सब आप ही हैं—फिर, आपके चरणकमल छोड़कर कहां जाऊँ?

तुम्हइ बिचारि कहहु नरनाहा ❀ प्रभु तजि भवन काजु मम काहा ॥
बालक ग्यान-बुद्धि-बल-हीना ❀ राखहु सरन जानि जन दीना ॥

हे नरनाथ, विचारकर आप ही कहिये कि स्वामीको छोड़कर घरपर मेरा कार्य ही क्या है? मैं बालक हूं, ज्ञान, बुद्धि और बलसे हीन हूं। आप मुझे दीनजन जानकर अपनी शरणमें रख लीजिये।

नीचि टहल गृह कै सब करिहउँ ❀ पद-पंक-ज बिलोकि भव तरिहउँ ॥
अस कहि चरन परेउ प्रभु पाही ❀ अब जनि नाथ कहहु गृह जाही ॥

मैं आपके घरकी सब तरहकी नीच सेवा करूंगा और चरणकमल देखकर संसारसे तर जाऊँगा। ऐसा कहकर अंगदजी श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें पड़ गये और बोले—हे प्रभो, आप मेरी रक्षा कीजिये। हे नाथ, अब मत कहिये कि घर जाओ।

दो०—अङ्गदबचन बिनीत सुनि ❀ रघुपति करुनासीवँ।
प्रभु उठाइ उर लायेउ ❀ सजल नयन राजीव ॥ ३८ ॥

रघुवंशके स्वामी, करुणाकी सीमा प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके कमलनेत्रोंमें, विनीत वचन सुनकर, जल भर आया। उन्होंने अंगदजीको उठाकर अपने हृदयसे लगा लिया।

निज उरमाल बसन मनि ❀ बालितनय पहिराइ।
बिदा कीन्हि भगवान तब ❀ बहु प्रकार समुझाइ ॥ ३९ ॥

तब भगवान्‌ने अपने हृदयकी माला, वस्त्र, मणि आदि पहनाकर बालिपुत्र अंगदको अनेक प्रकारसे समझाकर बिदा किया।

भरत - अनुज - सौमित्रि - समेता ❀ पठवन चले भगत कृतचेता ॥
अंगदहृदय प्रेमु नहिं थोरा ❀ फिरि फिरि चितव राम की ओरा ॥

भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मणजीसमेत श्रीरामचन्द्रजी भक्तोंकी ओर चित्त लगाये हुए पठानेके लिये चले। अङ्गदजीके हृदयमें प्रेम कम न था, वे वार-वार श्रीरामचन्द्रजीकी ओर देखते थे।

बार बार कर दंडप्रनामा ❀ मन अस रहन कहहिं मोहि रामा ॥
राम बिलोकनि बोलनि चलनी ❀ सुमिरि सुमिरि सोचत हंसि मिलनी ॥

वे वार-वार दण्डवत् और प्रणाम करते थे और मनमें ऐसा सोचते थे कि श्रीरामचन्द्रजी मुझे रहनेके लिये कह देवें। श्रीरामचन्द्रजीका देखना, बोलना, चलना और हँसकर मिलना—सबको वार-वार स्मरणकर अंगदजी सोचने लगे।

प्रभुरुख देखि बिनय बहु भाखी ❀ चलेउ हृदय पद-पंक-ज राखी ॥
अति आदर सब कपि पहुंचाये ❀ भाइन्ह सहित भरत पुनि आये ॥

प्रभुका रुख देखकर अंगदजीने बहुत कुछ विनती की और कमलके समान चरणोंको हृदयमें रखकर वे सब बिदा हुए। अत्यन्त आदरके साथ उन्होंने सब वानरोंको पठाया और सब भाइयोंसमेत भरतजी फिर आये।

तब सुग्रीवं चरन गहि नाना ❀ भांति बिनय कीन्ही हनुमाना ॥
दिन दस करि रघु-पति-पद-सेवा ❀ पुनि तव चरन देखिहउं देवा ॥

तब सुग्रीवके चरण पकड़कर हनुमानजीने अनेक प्रकारसे विनती की—हे देव, दस दिनतक श्रीरामचन्द्र-जीके चरणोंकी सेवाकर फिर आपके चरण देखूंगा।

पुन्यपुंज तुम्ह पवनकुमारा ❀ सेवहु जाइ कृपाआगारा ॥
अस कहि कपि सब चले तुरंता ❀ अंगद कहइ सुनहु हनुमंता ॥

सुग्रीवने कहा—हे पवनपुत्र हनुमान, तुम पुण्योंके समूह हो। तुम जाकर दयाधाम श्रीरामचन्द्रजीकी सेवा करो। ऐसा कहकर सब बन्दर तुरन्त ही चल दिये। अङ्गदजी कहने लगे—हे हनुमान सुनो—

दो०—कहेहु दंडवत प्रभु सन ❀ तुम्हहिं कहउं कर जोरि।
बार बार रघुनायकहिं ❀ सुरति करायेहु मोरि ॥४०॥

मैं तुमसे हाथ जोड़कर कहता हूं—प्रभुसे मेरी दण्डवत् कहना और श्रीरामचन्द्रजीको वार-वार मेरी याद दिलाना।

असकहि चलेउ बालिसुत ❀ फिरि आयेउ हनुमंत।
तासु प्रीति प्रभु सन कही ❀ मगन भये भगवंत ॥४१॥

ऐसा कहकर वालिपुत्र अङ्गदजी विदा हुए और हनुमानजी लौट आये और अंगदजीके प्रेमको प्रभुसे कहा, जिसे सुनकर भगवान् मग्न हो गये।

कुलिसहु चाहि कठोर अति ❀ कोमल कुसुमहु चाहि।
चित खगेस अस राम कर ❀ समुझि परइ कहु काहि ॥४२॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुण, श्रीरामचन्द्रजीका चित्त ऐसा है—वज्रसे भी अधिक कठोर और फूलसे भी अधिक कोमल। भला बतलाओ वह किसे समझ पड़ता है ?

पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा ❀ दीन्हे भूषन बसन प्रसादा ॥
जाहु भवन मम सुमिरन करेहू ❀ मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू ॥

फिर कृपालु श्रीरामचन्द्रजीने गुह निषादको बुला लिया और वस्त्राभूषण देकर प्रसन्न किया। फिर उन्होंने कहा—अब घर जाओ। वहां मेरा स्मरण करना, और मन, वाणी और कर्मसे धर्ममें तत्पर रहना।

तुम्ह मम सखा भरतसम भ्राता ❀ सदा रहेउ पुर आवत जाता ॥
बचन सुनत उपजा सुख भारी ❀ परेउ चरन भरि लोचन बारी ॥

हे भाई, तुम मित्र हो और भरतके समान हो। नगरमें सदा आते-जाते रहना। यह वचन सुनते ही गुह निपादको भारी सुख हुआ और वह नेत्रोंमें जल भरकर चरणोंमें पड़ गया।

चरननलिन उर धरि गृह आवा ❀ प्रभुसुभाउ परिजनन्हि सुनावा ॥
रघुपतिचरित देखि पुरबासी ❀ पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी ॥

फिर गुह निपाद चरणकमलोंको हृदयमें रखकर अपने घर आया और कुटुम्बियोंको प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका स्वभाव सुनाया। रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका चरित देखकर सब नगरनिवासी बार-बार कहते थे कि सुखराशि श्रीरामचन्द्रजी धन्य हैं।

राम राज बैठे त्रैलोका ❀ हरषित भये गये सब सोका ॥
बयरु न कर काहू सन कोई ❀ रामप्रताप बिषमता खोई ॥

श्रीरामचन्द्रजीके राजसिंहासनपर बैठते ही तीनों लोक प्रसन्न हो गये और सब शोक दूर हो गये। कोई किसीसे वैर न करता था। श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापसे विषमता दूर हो गयी।

दो०—बरनास्रम निज निज धरम ❀ निरत बेदपथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुख ❀ नहिं भय शोक न रोग ॥४३॥

सब लोग अपने अपने-वर्णाश्रम-धर्ममें तत्पर रहते और सदा वेद-मार्गपर चलते और सुख पाते थे। उन्हें न भय था, न शोक, और न रोग।

दैहिक दैविक भौतिक तापा ❀ रामराज नहिं काहुहि ब्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती ❀ चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिरीती॥

श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें दैहिक, दैविक और भौतिक ताप किसीको न सताते थे। सब मनुष्य एक दूसरेसे प्रेम करते थे और वेद-रीतिपर आरूढ़ रहकर अपने धर्मपर चलते थे।

चारिहु चरन धरम जग माहीं ❀ पूरि रहा सपनेहु अघ नाहीं॥
राम-भगति-रत सब नर नारी ❀ सकल परम गति के अधिकारी॥

संसारमें धर्म अपने चारों चरणोंसे सर्वत्र फैल गया। पाप तो स्वप्नमें भी नहीं रहा। सब स्त्री और पुरुष श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिमें तत्पर थे। इसलिये वे सब परम गतिके अधिकारी हो गये।

अलप मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा ❀ सब सुंदर सब बिरुज सरीरा॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना ❀ नहिं कोउ अबुध न लच्छनहीना॥

न किसीकी अल्पमृत्यु होती थी और न किसीको कोई पीड़ा ही थी। सब सुन्दर थे और सबका शरीर नीरोग था। न कोई दरिद्र था, न दुःखी और न दीन; न कोई मूर्ख था और न कोई लक्षणहीन ही था।

सब निर्दंभ धर्मरत पुनी ❀ नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी ❀ सब कृतग्य नहिं कपट सयानी॥

सब लोग दम्भरहित, धर्मपर आरूढ़ और पुण्यात्मा थे। स्त्री और पुरुष सब चतुर और गुणी थे। सब गुणज्ञ थे, पण्डित थे और सब ज्ञानी थे। वे सब कृतज्ञ थे। उनमें कपट और सयानपन नहीं था।

दो०—रामराज नभगेस सुनु ❀ सचराचर जग माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन ❀ कृत दुख काहुहि नाहिं॥४४॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे पक्षिराज गरुड़! सुनो, संसारमें श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें चर और अचर—किसीको भी काल, कर्म, स्वभाव और गुणसे किये हुए दुःख न थे।

भूमि सप्त सागर मेखला ❀ एक भूप रघुपति कोसला॥
भुवन अनेक रोम प्रति जासू ❀ यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥

सात समुद्र रूप मेखलावाली सारी पृथिवीके राजा एक कोशल देशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी थे। जिसके प्रत्येक रोममें अनेक भुवन हों, उसके लिये यह प्रभुता कुछ अधिक नहीं।

सो महिमा समुझत प्रभु केरी ❀ यह बरनत हीनता घनेरी ॥
सो महिमा खगेस जिन्ह जानी ❀ फिरि येहि चरित तिन्हहुं रति मानी ॥

प्रभुकी उस महिमाको समझकर इसका वर्णन कर बड़ी हीनता मालूम होती है। कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़, जिन्होंने प्रभुकी उस महिमाको जान लिया है, उन्होंने भी फिर इस चरितपर स्नेह किया है।

सोउ जाने कर फल यह लीला ❀ कहहिं महा मुनिबर दमसीला ॥
रामराज कर सुख संपदा ❀ बरनि न सकइ फनीस सारदा ॥

बड़े-बड़े जितेन्द्रिय मुनि-श्रेष्ठ कहते हैं कि उस महिमाको ही जाननेका फल इस लीलाका अनुभव है। श्रीरामचन्द्रजीके राज्यका सुख और संपदा सर्पराज शेष और सरस्वती भी वर्णन नहीं कर सकते।

सब उदार सब परउपकारी ❀ बिप्र - चरन - सेवक नरनारी ॥
एक - नारि - ब्रत - रत सब झारी ❀ ते मन बच क्रम पति-हित-कारी ॥

सब उदार थे और सब परोपकारी थे। स्त्री और पुरुष सब ब्राह्मणोंके चरणोंके सेवक थे। सब पुरुष एक स्त्रीव्रतमें तत्पर थे और सब स्त्रियां मन, वाणी, और कर्मसे पतिकी हितकारिणी थीं।

दो०—दंड जतिन्ह कर भेद जहं ❀ नर्त्तक नृत्यसमाज।
जितहु मनहिं अस सुनिय जग ❀ रामचंद्र के राज ॥४५॥

संसारमें श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें ऐसा सुना जाता था कि 'दण्ड' केवल यती लोगोंके हाथमें रह गया, भेद वहां रह गया जहां नृत्यका समाज और नाचनेवाले थे और जीतनेके लिये मन रह गया।

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन ❀ रहहिं एक संग गज पंचानन ॥
खग मृग सहज बयरु बिसराई ❀ सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई ॥

वनमें वृक्ष सदा फूलते और सदा फलते थे; हाथी और सिंह सदा साथ-साथ रहते थे। पशु और पक्षी सबने अपना स्वाभाविक वैर भुलाकर परस्पर प्रेम बढ़ाया।

कूजहिं खग मृग नाना बृंदा ❀ अभय चरहिं बन करहिं अनंदा ॥
सीतल सुरभि पवन वह मंदा ❀ गुंजत अलि लेइ चलि मकरंदा ॥

पक्षी चहचहाते और हिरणोंके अगणित झुण्ड निर्भय होकर वनमें चरते और आनन्द करते थे। शीतल, मंद और सुगंधित पवन बहता था। भौंरे गुंजार करते और फूलोंका रस लेकर चले जाते थे।

लता बिटप मांगे मधु चवहीं ❀ मनभावता धेनु पय स्रवहीं ॥
ससिसंपन्न सदा रह धरनी ❀ त्रेता भइ कृतजुग कै करनी ॥

लताएं और वृक्ष मांगनेपर मीठे फल गिरा देते थे, गायें मनचाहा दूध देती थीं, पृथिवी सदा धान्यसे परिपूर्ण रहती थी और त्रेतामें सतयुगके कर्म होने लगे थे।

प्रगटी गिरिन्ह बिबिध मनिखानी ❀ जगदातमा भूप जग जानी॥
सरिता सकल बहहिं बर बारी ❀ सीतल अमल स्वादु सुखकारी॥

जगतके आत्मारूप श्रीरामचंद्रजीको संसारमें राजा जानकर पहाड़ोंमें तरह-तरहकी मणियोंकी खानें प्रकट हो गयीं। सब नदियोंमें शीतल, निर्मल, स्वादिष्ट, सुखदायक और श्रेष्ठ जल बहता था।

सागर निज मरजादा रहहीं ❀ डारहिं रतन तटन्हि नर लहहीं॥
सरसिज-संकुल सकल तड़ागा ❀ अतिप्रसन्न दस-दिसा-बिभागा॥

समुद्र अपनी मर्यादामें रहते और तटोंपर रत्नोंको डाल देते थे, जिन्हें मनुष्य पा जाते थे। सब सरोवर कमलोंसे भरे हुए थे और विभागोंसमेत दशों दिशाएं अत्यन्त प्रसन्न थीं।

दो०—बिधु महि पूर मयूखन्हि ❀ रबि तप जेतनेहिं काज।
मांगे बारिद देहिं जल ❀ रामचंद्र के राज॥२६॥

श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें चन्द्रमा पृथिवीको अपनी किरणोंसे भर देता था और जितना काम होता सूर्य उतना ही तपता था। मांगनेसे मेघ जल दे देते थे।

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे ❀ दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्हे॥
श्रुति-पथ-पालक धरम-धुरंधर ❀ गुनातीत अरु भोगपुरंदर॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने करोड़ों अश्वमेध यज्ञ किये और ब्राह्मणोंको असंख्य दान दिये। वे वेदमार्गके रक्षक, धर्मधुरंधर, गुणातीत और इन्द्रके समान ऐश्वर्य-भोगी थे।

पतिअनुकूल सदा रह सीता ❀ सोभाखानि सुसील बिनीता॥
जानति कृपा-सिंधु-प्रभुताई ❀ सेवति चरनकमल मन लाई॥

शोभाकी खान, सुशील और विनय-सम्पन्न सीताजी सर्वदा अपने पति श्रीरामचन्द्रजीके अनुकूल रहती थीं। वे दयासागर श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताको जानती थीं और मन लगाकर चरणकमलोंकी सेवा करती थीं।

जद्यपि गृह सेवक सेवकिनी ❀ बिपुल सकल सेवाबिधि गुनी॥
निज कर गृहपरिचरजा करई ❀ रामचंद्र-आयसु अनुसरई॥

यद्यपि घरमें अगणित सेवक और सेविकाएं थीं और वे सब सेवाविधिमें निपुण थीं, तथापि सीताजी अपने हाथोंसे सारी गृह-परिचर्य्या करतीं और श्रीरामचन्द्रजीके आज्ञानुसार चलती थीं।

जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानइ ❀ सोइ कर श्री सेवा बिधि जानइ ॥
कौसल्यादि सासु गृह माहीं ❀ सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं ॥
उमा - रमा - ब्रह्मादि - बंदिता ❀ जगदंबा संततमनिंदिता ॥

दयासागर श्रीरामचन्द्रजी जिस प्रकार सुखी होते, श्रीसीताजी वही करतीं ; क्योंकि वे सेवाविधि जानती थीं। वे घरमें कौशल्या आदि सभी सासुओंकी सेवा करती थीं। उन्हें न मान था और न मद। पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वती द्वारा वंदित जगन्माता सीताजी सदा प्रशंसाके योग्य हैं।

दो०—जासु कृपाकटाच्छ सुर ❀ चाहत चितव न सोइ।
राम - पदारबिंद - रति ❀ करति सुभावहिं खोइ ॥२४॥

जिसके कृपाकटाक्षकी चितवनको देवता चाहते हैं, वही लक्ष्मीरूप सीताजी अपने स्वभावको छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें प्रीति करती हैं।

सेवहिं सानुकूल सब भाई ❀ राम-चरन - रति अति अधिकाई ॥
प्रभु - मुख - कमल बिलोकत रहहीं ❀ कबहुँ कृपाल हमहिं कछु कहहीं ॥

सब भाई इच्छानुसार सेवा करते थे। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें उनका प्रेम अधिकाधिक होता जाता था। वे सब प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका मुखकमल देखते रहते थे कि दयालु श्रीरामचन्द्रजी कभी हमें भी कुछ आज्ञा देंगे।

राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती ❀ नाना भाँति सिखावहिं नीती ॥
हरषित रहहिं नगर के लोगा ❀ करहिं सकल सुरदुर्लभ भोगा ॥

श्रीरामचन्द्रजी अपने सब भाइयोंपर प्रीति करते थे और उन्हें अनेक प्रकारसे नीति सिखलाते थे। नगरके सब लोग प्रसन्न रहते थे। वे सब देव-दुर्लभ भोग भोगते थे।

अहनिसि बिधिहिं मनावत रहहीं ❀ श्री-रघुबीर-चरन - रति चहहीं ॥
दुइ सुत सुंदर सीता जाये ❀ लव कुस बेद पुरानन्हि गाये ॥

वे सब रातदिन विधाताको मनाते रहते थे और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम चाहते थे। सीताजीने दो सुन्दर पुत्रों लव और कुशका जन्म दिया, जिनका यश वेदों और पुराणोंने गाया है।

दोउ बिजई बिनई गुनमंदिर ❀ हरि-प्रति-बिंब मनहुँ अति सुंदर ॥
दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्ह केरे ❀ भये रूप गुन सील घनेरे ॥

दोनों पुत्र विजयी, नम्रताशील और गुणोंके स्थान थे; मानों भगवानका अत्यन्त सुन्दर प्रतिबिम्ब हों। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न—सब भाइयोंके दो-दो पुत्र हुए। वे सब अत्यन्त रूपवान, गुणी और शीलसम्पन्न थे।

दो०—ग्यान-गिरा गो-ऽतीत अज ❁ माया मन गुन पार।
सोइ सच्चिदानंदघन ❁ कर नरचरित उदार॥ ४८॥

जो ज्ञान, वाणी और इन्द्रियोंकी पहुंचसे बाहर हैं, जो अजन्मा हैं और जो माया, मन और गुणोंसे परे हैं, वही सच्चिदानन्दघन परमात्मा मनुष्यके उदार चरित कर रहे हैं।

प्रातकाल सरजू करि मज्जन ❁ बैठहिं सभा संग द्विज सज्जन॥
बेद पुरान बसिष्ठ बखानहिं ❁ सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं॥

प्रातःकालमें सरयू नदीमें स्नान करके श्रीरामचन्द्रजी ब्राह्मणों और सज्जनोंको संग लेकर सभामें बैठते थे। वशिष्ठजी वेदों और पुराणोंका वर्णन करते थे और यद्यपि श्रीरामचन्द्रजी सब जानते थे तथापि वे उन्हें सुनते थे।

अनुजन्ह संजुत भोजन करहीं ❁ देखि सकल जननी सुख भरहीं॥
भरत सत्रुहन दूनउ भाई ❁ सहित पवनसुत उपबन जाई॥

छोटे भाइयोंको साथमें लेकर वे भोजन करते थे और सबको देखकर माताएं सुखी होती थीं। भरत और शत्रुघ्न—दोनों भाई पवनपुत्र हनुमानसमेत वाटिकामें जाकर—

बूझहिं बैठि राम गुन गाहा ❁ कह हनुमान सुमति अवगाहा॥
सुनत बिमल गुन अति सुख पावहिं ❁ बहुरि बहुरि करि बिनय कहावहिं॥

बैठते और श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा पूछते थे। हनुमानजी अपनी सुबुद्धिका अवगाहन करके वह कथा उनसे कहते थे। वे सब श्रीरामचन्द्रजीके निर्मल गुण सुनकर अत्यन्त सुख पाते थे और विनय करके बार-बार कहलाते थे।

सबके गृह गृह होहिं पुराना ❁ रामचरित पावन बिधि नाना॥
नर अरु नारि राम-गुन-गानहिं ❁ करहिं दिवस निसि जात न जानहिं॥

घर-घर सबके यहां पुराणोंकी कथा होती थी। श्रीरामचन्द्रजीका पवित्र चरित अनेक प्रकारसे गाया जाता था। स्त्री और पुरुष—सब श्रीरामचन्द्रजीका गुणगान करते थे और दिन-रात बीतते मालूम न होते थे।

दो०—अवध-पुरी-बासिन्ह कर ❁ सुख संपदा समाज।
सहस सेष नहिं कहि सकहिं ❁ जहं नृप राम बिराज॥ ४९॥

जहां राजा श्रीरामचन्द्रजी विराजते थे, उस अयोध्यापुरीके रहनेवाले मनुष्योंका सुख, संपदा और समाज हजार शेषनाग भी नहीं कह सकते।

नारदादि सनकादि मुनीसा ❀ दरसन लागि कोसलाधीसा ॥
दिन प्रति सकल अजोध्या आवहिं ❀ देखि नगर बिराग बिसरावहिं ॥

नारद आदि और सनकादिक मुनीश्वर सब कोशलाधीश श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करनेके लिए प्रतिदिन अयोध्यापुरीमें आते और नगरको देखकर वैराग्य भुला देते थे ।

जातरूप-मनि-रचित अटारी ❀ नाना रंग रुचिर गच ढारी ॥
पुर चहुं पास कोट अतिसुंदर ❀ रचे कंगूरा रंग रंग बर ॥

मणियोंसे जड़ी हुई सोनेकी अटारियां थीं, जिनमें अनेक रङ्गकी सुन्दर ढालदार छतें थीं । नगरकी चारों ओर अत्यन्त सुन्दर कोट था, जिसके सुन्दर कंगूरे रङ्ग-रङ्गके बने हुए थे ।

नवग्रह निकर अनीक बनाई ❀ जनु घेरी अमरावति आई ॥
महि बहु रंग रचित गज काँचा ❀ जो बिलोकि मुनिबर मनु नाँचा ॥

मानो नवग्रहोंके समूहने सेना सजाकर वहाँ आकर अमरावती घेर ली हो । पृथिवीपर अगणित रङ्गोंके कांचोंकी गच बनी हुई थी, जिसे देखकर अच्छे-अच्छे मुनियोंका मन भी मोहित हो जाता था ।

धवल धाम ऊपर नभ चुंबत ❀ कलस मनहुं रबि-ससि-दुति निंदत ॥
बहु मनिरचित झरोखा भ्राजहिं ❀ गृह गृह प्रति मनिदीप बिराजहिं ॥

सफेद भवन ऊपर आकाशको चूमते थे और उनके कलश मानों सूर्य और चन्द्रमाकी प्रभाको नीचा दिखलाते थे । मणियोंसे जड़े हुए बहुतसे झरोखे शोभा पा रहे थे और घर-घरमें मणियोंके दीपक शोभित होते थे ।

छं०—मनिदीप राजहिं भवन भ्राजहिं देहरी बिद्रुम रची ।
मनिखंभ भीति बिरंचि बिरची कनकमनि मरकत खची ॥
सुंदर मनोहर मंदिर अजिर रुचिर फटिक रचे ।
प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन्हि खचे ॥

भवनोंमें मणियोंके दीपक प्रकाशित थे, मूंगोंकी बनी हुई देहलियां शोभित हो रही थीं, मणियोंके खंभे और दीवालें थीं; मानों ब्रह्माने उन्हें स्वर्णमें नीलमणि जड़कर बनाया हो । स्फटिक मणियोंके बने हुए सुन्दर आंगन थे, जो सुन्दर, मनोहर और भवनके योग्य ही थे । प्रत्येक द्वारमें सोनेके बने हुए किवाड़ थे, जिनमें बहुतसी मणियां जड़ी हुई थीं ।

दो०—चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बनाइ।
राम चरित जे निरखत मुनि मन लेहिं चोराइ ॥ ५० ॥

घर-घरमें सुन्दर चित्रशालाओंमें अच्छी तरहसे सजाकर श्रीरामचन्द्रजीकी लीलाएँ लिखी हुई थीं, जो देखनेवाले मुनियोंके मनको चुरा लेती थीं।

सुमनबाटिका सबहिं लगाईं। बिबिध भाँति करि जतन बनाईं ॥
लता ललित बहु जाति सुहाईं। फूलहिं सदा बसंत कि नाईं ॥

सबने पुष्पवाटिकाएँ लगायी थीं और यत्न करके अनेक प्रकारसे उन्हें सजाया था। अनेक जातियोंकी सुन्दर लताएँ शोभित थीं, जो वसन्तऋतु होनेके समान ही सर्वदा फूलती रहती थीं।

गुंजत मधुकर मुखर मनोहर। मारुत त्रिबिध सदा बह सुंदर ॥
नाना खग बालकन्हि जिआए। बोलत मधुर उड़ात सुहाए ॥

भौंरे मनोहर ध्वनिसे गुंजार किया करते थे और सदा सुन्दर त्रिविध समीर बहता था। बालकोंने अगणित पक्षियोंको पाल रखा था, जो मीठी ध्वनिसे बोलते और उड़ते हुए सुहावने लगते थे।

मोर हंस सारस पारावत। भवननि पर सोभा अति पावत ॥
जहँ तहँ देखहिं निज परिछाहीं। बहु बिधि कूजहिं नृत्य कराहीं ॥

मोर, हंस, सारस और कबूतर—सब मकानोंपर अत्यन्त शोभा पाते थे। वे सब जहां-तहां अपनी परछाईं देखते और देखकर अनेक प्रकारसे शब्द करते और नाचते थे।

सुक सारिका पढ़ावहिं बालक। कहहु राम रघुपति जनपालक ॥
राजदुआर सकल बिधि चारू। बीथीं चौहट रुचिर बजारू ॥

बालक तोतों और मैनाओंको पढ़ाते थे कि जनपालक रघुपति राम कहो। राजद्वार सब प्रकारसे रमणीक बना हुआ था। गलियां, चौराहे और बाजार सब सुन्दर थे।

छं०—बाजार रुचिर न बनइ बरनत बस्तु बिनु गथ पाइये।
जहँ भूप रमानिवास तहँ की संपदा किमि गाइये ॥
बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुन्दर नारि नर सिसु जरठ जे ॥

सुन्दर बाजार थे, जिनका वर्णन नहीं करते बनता। वहां बिना मूल्य ही वस्तुएँ मिल जाती थीं। जहांके राजा स्वयं लक्ष्मीनिवास भगवान् श्रीरामचन्द्रजी हों, वहांकी संपत्तिकी बड़ाई कैसे की जाय! अनेक बजाज,

सराफ और व्यवसायी बैठे हुए थे, मानों वे कुबेर हों। स्त्री-पुरुष, बालक-वृद्ध जितने थे सब सुखी थे—सच्चरित्र थे, और सब सुन्दर थे।

दो०—उत्तर दिसि सरजू बह ❀ निर्मलजल गंभीर।
बाँधे घाट मनोहर ❀ स्वल्प पंक नहिं तीर ॥ ५१ ॥

अयोध्यापुरीकी उत्तर दिशामें गहरी और निर्मल जलवाली सरयूनदी बहती थी, जिसके किनारेपर मनोहर घाट बन्धे हुए थे और थोड़ा भी कीचड़ नहीं था।

दूरि फराक रुचिर सो घाटा ❀ जहं जल पिअहिं बाजि गज ठाटा ॥
पनिघट परम मनोहर नाना ❀ तहाँ न पुरुष करहिं अस्नाना ॥

जहां हाथियों और घोड़ोंके झुण्ड पानी पिया करते थे वह सुन्दर घाट अधिक चौड़ा और कुछ दूर था। अत्यन्त सुन्दर बहुतसे पनघट थे। वहां पुरुष स्नान नहीं करते थे।

राजघाट सब बिधि सुंदर बर ❀ मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर ॥
तीर तीर देवन्ह के मंदिर ❀ चहुं दिसि जिन्ह के उपबन सुंदर ॥

राजघाट सब प्रकार सुन्दर और श्रेष्ठ था। वहां चारों वर्णोंके मनुष्य स्नान करते थे। किनारे-किनारे देवताओंके मन्दिर थे, जिनकी चारों ओर सुन्दर बाग थे।

कहुं कहुं सरितातीर उदासी ❀ बसहिं ग्यानरत मुनि संन्यासी ॥
तीर तीर तुलसिका सुहाई ❀ बृंद बृंद बहु मुनिन्ह लगाई ॥

नदीके तटपर कहीं-कहीं विरक्त, ज्ञाननिष्ठ मुनिजन और संन्यासी बसते थे। किनारे-किनारे झुण्डके झुण्ड बहुतसे तुलसी-वृक्ष शोभित हो रहे थे, जिन्हें मुनियोंने लगाया था।

पुरसोभा कछु बरनि न जाई ❀ बाहिर नगर परम रुचिराई ॥
देखत पुरी अखिल अघ भागा ❀ बन उपबन बापिका तड़ागा ॥

नगरकी शोभाका तो कुछ वर्णन ही नहीं किया जाता, नगरके बाहर भी अत्यन्त सुन्दरता छायी हुई थी। अयोध्यापुरी और उसके वनों, उपवनों, बावलियों और सरवरोंको देखते ही सारा पाप दूर हो जाता है।

छंद—बापी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायत सोहहीं।
सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर मुनि मोहहीं ॥
बहु रंग कंज अनेक खग कूजहिं मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य पिकादि-खग-रव जनु पथिक हुंकारहीं।

अनुपम बावलियां और सरोवर और चौड़े और मनोहर कुएं शोभित हो रहे थे, जिनकी सुन्दर सीढ़ियां थीं और निर्मल जल था और जिन्हें देखकर देवता और मुनि—सब मोहित होते थे। अनेक रंगोंके कमल खिले हुए थे, अगणित पक्षी चहचहाते और भौंरे गुंजार करते थे। रमणीक बागोंमें कोयल आदि पक्षियोंका शब्द होता था; मानों वे बटोहियोंको बुला रहे हों।

दो०—रमानाथ जहँ राजा ❀ सो पुर बरनि कि जाइ।
अनिमादिक - सुख - संपदा ❀ रही अवध सब छाइ ॥५२॥

लक्ष्मीपति भगवान् जहांके राजा हों उस नगरका वर्णन क्या किया जा सकता है? अणिमा आदि सिद्धियां और सुख-संपदा—सब अयोध्यापुरीमें छा रही थीं।

जहँ तहँ नर रघु-पति-गुन गावहिं ❀ बैठि परसपर इहइ सिखावहिं ॥
भजहु प्रनत-प्रति-पालक रामहिं ❀ सोभा-सील-रूप - गुन - धामहिं ॥

जहां-तहां बैठकर सब मनुष्य श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको गाते और परस्पर यही सीख देते थे कि श्रीरामचन्द्रजीका भजन करो, जो शरणागतके प्रतिपालक और शोभा, शील, रूप और गुणोंके स्थान हैं,

जल-ज-बिलोचन स्यामल गातहिं ❀ पलक नयन इव सेवकत्रातहिं ॥
धृत - सर - रुचिर - चाँप - तूनीरहिं ❀ संत-कंज-बन रवि - रन-धीरहिं ॥

जिनके कमलके समान नेत्र हैं, श्याम शरीर है, जो सेवकको रक्षा उसी प्रकार करते हैं जैसे पलकें नेत्रोंकी, जो सुन्दर धनुष, बाण और तरकस धारण किये हुए हैं, जो साधुजनरूपी कमल-वनके लिये सूर्य हैं और रणमें धीर हैं।

काल कराल ब्याल खगराजहिं ❀ नमत राम अकाम ममता जहिं ॥
लोभ-मोह-मृग-जूथ किरातहिं ❀ मनसिजकरि-हरि-जनसुखदातहिं ॥

ममताको जीतकर और निष्काम होकर श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार करो, जो कालरूपी कराल सर्पके लिये पक्षिराज गरुड़ हैं, लोभ और मोहरूपी हिरणोंके झुण्डके लिये जो व्याधरूप हैं, कामदेवरूपी हाथियोंके लिये जो सिंह हैं और भक्तोंको सुख देनेवाले हैं,

संसय - सोक - निबिड़-तम-भानुहिं ❀ दनुज गहन-घन-दहन - कृसानुहिं ॥
जनकसुता समेत रघुबीरहिं ❀ कस न भजहु भंजन भवभीरहिं ॥

जो संशय और शोकरूपी घने अन्धकारके लिये सूर्य और राक्षसोंके गहरे घने वनको जलानेके लिये अग्निदेव हैं। सीताजी समेत श्रीरामचन्द्रजीका भजन क्यों नहीं करते? वे संसारकी बाधाओंको दूर कर देनेवाले हैं।

बहु बासना मसक हिम रासिहि ❀ सदा एकरस अज अबिनासिहि ॥
मुनिरंजन भंजन महिभारहि ❀ तुलसिदास के प्रभुहि उदारहि ॥

अगणित वासनाओंरूपी मच्छरोंके लिये जो शीतकी राशि हैं और जो नित्य, एकरस, अजन्मा, अविनाशी, मुनियोंको प्रसन्न करनेवाले, पृथिवीका भार दूर कर देनेवाले, उदार और तुलसीदासके प्रभु हैं।

दो०—एहि बिधि नगर नारि नर ❀ करहिं राम - गुन - गान।
सानुकूल सब पर रहहिं ❀ संतत कृपानिधान ॥ ५३ ॥

नगरके स्त्री और पुरुष सब इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते थे और दयानिधान प्रभु सबपर सर्वदा प्रसन्न रहते थे।

जब तें रामप्रताप खगेसा ❀ उदित भयेउ अतिप्रबल दिनेसा ॥
पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका ❀ बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह मन सोका ॥

कागभुशुण्डजी कहते हैं कि हे गरुड़जी, जबसे श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापका अत्यन्त प्रबल सूर्य उदय हुआ, तबसे तीनों लोकोंमें उसका प्रकाश भर गया। इससे बहुतोंके मनको सुख हुआ और बहुतोंको दुःख हुआ।

जिन्हहि सोक ते कहउँ बखानी ❀ प्रथम अबिद्यानिसा नसानी ॥
अघ - उलूक जहँ तहाँ लुकाने ❀ काम - क्रोध - कैरव सकुचाने ॥

जिन्हें शोक हुआ, उनका मैं वर्णन करता हूँ—सर्वप्रथम अविद्यारूपी रात्रि नष्ट हो गयी। पापरूपी उल्लू जहां-तहां छिप गये, काम और क्रोधरूपी कुमुद सकुचा गये।

बिबिध कर्म गुन काल सुभाऊ ❀ ए चकोर सुख लहहिं न काऊ ॥
मत्सर मान मोह मद चोरा ❀ इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा ॥

अनेक प्रकारके काल, कर्म, गुण, स्वभाव—ये सब चकोरकी भांति कभी सुख न पाते थे। मत्सर, मान, मोह और मद—इन सब चोरोंका हुनर किसी ओर न चलता था।

धरम तड़ाग ग्यान बिग्याना ❀ ए पंकज बिकसे बिधि नाना ॥
सुख संतोष बिराग बिबेका ❀ बिगत सोक ए कोक अनेका ॥

धर्मरूपी सरोवरमें ज्ञान और विज्ञानरूपी अनेक प्रकारके कमल खिल गये। सुख, संतोष, विराग और विवेक—ये अनेक चकवे शोकरहित हो गये।

दो०—यह प्रतापरबि जा के ❀ उर जब करइ प्रकास।
पछिले बाढ़हिं प्रथम जे ❀ कहे ते पावहिं नास ॥ ५४ ॥

यह प्रताप सूर्य जिसके हृदयमें जब प्रकाश करता है तब पिछले कहे हुए गुण तो बढ़ते हैं; परंतु जिन दोषोंको पहिले कहा है वे नष्ट हो जाते हैं।

भ्रातन्ह सहित राम एक बारा ❀ संग परमप्रिय पवनकुमारा ॥
सुंदर उपबन देखन गये ❀ सब तरु कुसुमित पल्लव नये ॥

एक बार श्रीरामचन्द्रजी भाइयोंसमेत परम प्रिय हनुमानजीको सङ्गमें लिये हुए सुन्दर उपवन देखनेको गये। वहां सब वृक्ष फूले हुए थे और उनमें नये-नये पत्ते आ गये थे।

जानि समय सनकादिक आये ❀ तेजपुंज गुनसील सुहाये ॥
ब्रह्मानंद सदा लयलीना ❀ देखत बालक बहुकालीना ॥

वहां समय जानकर तेज-पुंज, गुणशील और सुहावने सनकादिक ऋषि आये; जो सदा ब्रह्मानन्दमें लवलीन रहते हैं और जो यद्यपि देखनेमें बालक हैं तथापि वास्तवमें बहुत कालके पुराने हैं।

रूप धरे जनु चारिउ बेदा ❀ समदरसी मुनि बिगतबिभेदा ॥
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं ❀ रघु-पति-चरित होइ तहं सुनहीं ॥

समदर्शी और भेदशून्य मुनिजन ऐसे प्रतीत होते थे; मानों चारों वेद शरीर धारण किये हुए हों। वे सब दिगंबर वेषमें थे। उन्हें यही व्यसन था कि जहां श्रीरामचन्द्रजीका चरित होता वहाँ जाकर सुना करते।

तहां रहे सनकादि भवानी ❀ जहं घटसंभव मुनिबर ग्यानी ॥
रामकथा मुनि बहु बिधि बरनी ❀ ग्यान-जोनि-पावक जिमि अरनी ॥

महादेवजी कहते हैं कि हे भवानी, जहां ज्ञानी मुनि श्रेष्ठ अगस्त्यजी थे, वहां सनकादि ऋषि जाकर ठहरते थे। अगस्त्य मुनिने अनेक प्रकारसे श्रीरामचन्द्रजीकी कथाका वर्णन किया, जो ज्ञान उत्पन्न होनेका मूल-स्थान है; जैसे अग्निके होनेके लिये काष्ठ।

दो०—देखि राम मुनि आवत ❀ हरषि दंडवत कीन्ह ।
स्वागत पूछि पीतपट ❀ प्रभु बैठन कहं दीन्ह ॥ ५५ ॥

मुनिको आता हुआ देखकर श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर दण्डवत् की। फिर स्वागत-प्रश्न पूछकर प्रभुने बैठनेके लिये मुनियोंको पीताम्बरका आसन दिया।

कीन्ह दंडवत तीनिउ भाई ❀ सहित पवनसुत सुख अधिकाई ॥
मुनि रघु-पति-छबि अतुल बिलोकी ❀ भये मगन मन सके न रोकी ॥

पवनपुत्र हनुमानसमेत तीनों भाइयों--भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नने भी बड़े आनन्दसे दण्डवत् की। श्रीरामचन्द्रजीकी अतुल छवि देखकर मुनि मग्न हो गये, वे अपने मनको रोक न सके।

स्यामलगात सरो - रुह - लोचन ❀ सुंदरतामंदिर भवमोचन ॥
एक टक रहे निमेष न लावहिं ❀ प्रभु कर जोरे सीस नवावहिं ॥

साँवला शरीर, कमलनेत्र, सुन्दरताके धाम और संसारकी बाधाओंको छुड़ा देनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको सब मुनिजन एक टक देखते रह गये। वे सब अपनी पलकें बंद न करते थे और हाथ जोड़े हुए प्रभुको शिर नवाते थे।

तिन्ह कै दसा देखि रघुबीरा ❀ स्रवत नयन जल पुलक सरीरा ॥
कर गहि प्रभु मुनिबर बैठारे ❀ परम मनोहर बचन उचारे ॥

उनकी दशा देखकर श्रीरामचन्द्रजीके नेत्रोंसे जल बहने लगा और शरीर पुलकायमान हो गया। प्रभुने हाथ पकड़कर श्रेष्ठ मुनियोंको बिठलाया और अत्यन्त मनोहर वचन बोले—

आजु धन्य मैं सुनहु मुनीसा ❀ तुम्हरे दरस जाहिं अघ खीसा ॥
बड़े भाग पाइय सतसंगा ❀ बिनहिं प्रयास होइ भवभंगा ॥

हे मुनीश्वर, सुनो। आज मैं धन्य हूं। आपके दर्शनसे पापोंके समूह दूर हो जाते हैं। सत्सङ्ग बड़े भाग्यसे मिलता है, जिससे प्रयास बिना ही संसार-बंधन मिट जाता है।

दो०—संतपंथ अपबर्ग कर ❀ कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कबि कोबिद ❀ स्रुति पुरान सदग्रंथ ॥ ५६ ॥

सन्तजन, कवि, कोविद, वेद, पुराण आदि उत्तम ग्रन्थ सब कहते हैं कि सज्जनोंका सङ्ग मोक्षका और कामीजनोंका सङ्ग संसार-यातनाओंका मार्ग है।

सुनि प्रभुबचन हरषि मुनि चारी ❀ पुलकित तनु अस्तुति अनुसारी ॥
जय भगवंत अनंत अनामय ❀ अनघ अनेक एक करुनामय ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके वचन सुनकर चारों मुनि प्रसन्न हो गये। उनका शरीर पुलकायमान हो गया और वे स्तुति करने लगे—हे भगवन्, आपकी जय हो। आप अनन्त, निर्विकार, निष्पाप, दयामय और अनेक होकर भी एक हैं।

जय निर्गुन जय जय गुनसागर ❀ सुखमंदिर सुंदर अति आगर ॥
जय इंदिरारमन जय भूधर ❀ अनुपम अज अनादि सोभाकर ॥

हे निर्गुण, आपकी जय हो; हे गुणोंके समुद्र, आपकी जय हो, जय हो। आप सुखके धाम, अत्यन्त सुन्दर और चतुर हैं। हे रमारमण, आपकी जय हो। हे पृथिवीके रक्षक, हे अनुपम, हे जन्मरहित, हे अनादि और हे शोभाधाम, आपकी जय हो।

ग्याननिधान अमान मानप्रद ॐ पावन सुजस पुरान बेद बद ॥
तग्य कृतग्य अग्यताभंजन ॐ नाम अनेक अनाम निरंजन ॥

आप ज्ञानके भाण्डार, अभिमानशून्य और प्रतिष्ठा देनेवाले हैं। आपका पवित्र सुयश वेद और पुराण गाते हैं। आप तत्त्वरूपको जाननेवाले, उपकारको माननेवाले और अज्ञानको दूर कर देनेवाले हैं। आपके अनेक नाम हैं, फिर भी आप मानरहित और निरंजन हैं।

सर्ब सर्बगत सर्बउरालय ॐ बससि सदा हम कहँ परिपालय ॥
द्वंद बिपति भवफंद बिभंजय ॐ हृदि बसि राम काममद गंजय ॥

आप सर्वरूप हैं, सर्वव्यापक हैं और सर्वदा सबके हृदयमंदिरमें बसते हैं। आप हमारी रक्षा कीजिये। सुख-दुःखादि द्वन्द्वोंकी विपत्ति और संसारके बन्धनोंको नष्ट कर दीजिये और हे श्रीरामचन्द्रजी, हमारे हृदयमें बसकर काम और मदको मिटा दीजिये।

दो०—परमानंद कृपायतन ॐ मन - परि - पूरन - काम।
प्रेम भगति अनपायनी ॐ देहु हमहिं श्रीराम ॥ ५७ ॥

हे परमानन्द, हे दयाधाम, हे मनोकामनाओंको परिपूर्ण कर देनेवाले, हे श्रीरामचन्द्रजी, हमें आप अपनी नित्य प्रीति और भक्ति दीजिये।

देहु भगति रघुपति अतिपावनि ॐ त्रि-बिध-ताप-भव-दाप - नसावनि ॥
प्रनत काम सुर धेनु कलपतरु ॐ होइ प्रसन्न दीजइ प्रभु यह बरु ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, हमें आप अपनी अत्यन्त पवित्र भक्ति दीजिये, जो तीनों प्रकारके ताप और संसारके अभिमानको दूर कर देनेवाली है। हे शरणागत जनोंकी कामनाओंके लिये कल्पवृक्ष और कामधेनुरूप प्रभु, आप प्रसन्न होकर यही वर दीजिये।

भव - बारिधि - कुंभ - ज रघुनायक ॐ सेवकसुलभ सकल सुख-दायक ॥
मन - संभव - दारुन - दुख दारय ॐ दीनबंधु समता बिस्तारय ॥

हे संसाररूपी समुद्रके लिये अगस्त्य मुनि, हे रघुवंशके नायक, हे सेवकोंके लिये सुलभ और सबको सुख देनेवाले, हे दीनबन्धो, आप कठिन मानसिक दुःखोंको नष्ट कर दीजिये और समताका विस्तार कीजिये।

आस - त्रास - इरिषादि - निवारक ॐ बिनय - बिबेक - बिरति-बिस्तारक ॥
भूप-मौलि मनि मंडन धरनी ॐ देहि भगति संसृति-सरि-तरनी ॥

हे भय, आशा और ईर्ष्या आदिको निवृत्त कर देनेवाले, हे विनय, विवेक और वैराग्यका विस्तार करनेवाले, हे राजाओंके शिरोमणि और हे पृथिवीके भूषण, आप अपनी भक्ति दीजिये, जो संसाररूपी नदीके लिये नौकाके समान है।

मुनि - मन - मानस - हंस निरंतर ❀ चरनकमल बंदित अज संकर ॥
रघु-कुल - केतु सेतु स्रुति रच्छक ❀ काल-कर्म - सुभाव - गुन - भच्छक ॥
तारन तरन हरन सब दूषन ❀ तुलसिदास प्रभु त्रि-भुवन-भूषन ॥

हे मुनियोंके मनरूपी मानसरोवरमें बसनेवाले हंसरूप श्रीरामचन्द्रजी, शिव और ब्रह्मा निरंतर आपके चरणकमलोंकी वंदना करते हैं, आप रघुकुलकी पताका हैं, वेदकी मर्यादाके रक्षक हैं और काल, कर्म, गुण और स्वभावके भक्षक हैं, आप तारनतरन हैं, सब दोषोंको दूर कर देनेवाले हैं और तुलसीदासजी कहते हैं कि त्रिभुवन-भूषण प्रभु हैं।

दो०—बार बार अस्तुति करि ❀ प्रेम सहित सिरु नाइ।
ब्रह्मभवन सनकादि गे ❀ अतिअभीष्ट बर पाइ ॥ ५८ ॥

बार-बार स्तुति करके और प्रेमके साथ शिर नवाकर सनकादि ऋषि अत्यन्त मनचाहा वरदान पाकर ब्रह्मलोकको गये।

सनकादिक बिधिलोक सिधाये ❀ भ्रातन्ह रामचरन सिर नाये ॥
पूछत प्रभुहिं सकल सकुचाहीं ❀ चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं ॥

उधर सनकादिक ऋषि ब्रह्मलोकको विदा हुए और इधर सब भाइयोंने श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें शिर नवाया। प्रभुको पूछते हुए सब सकुचाते थे; इससे वे सब हनुमानजीकी ओर देख रहे थे।

सुनी चहहिं प्रभुमुख कै बानी ❀ जो सुनि होइ सकल-भ्रम-हानी ॥
अंतरजामी प्रभु सब जाना ❀ बूझत कहहु काह हनुमाना ॥

वे सब प्रभुके मुखसे उस वाणीको सुनना चाहते थे, जिसे सुनकर सब भ्रम दूर हो जाता है। अन्तर्यामी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने सब जान लिया। उन्होंने कहा—हे हनुमान, बतलाओ, क्या पूछते हो।

जोरि पानि कह तब हनुमंता ❀ सुनहु दीनदयाल भगवंता ॥
नाथ भरत कछु पूछन चहहीं ❀ प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं ॥

तब हनुमानजी हाथ जोड़कर कहने लगे—हे दीनदयाल, भगवन्, सुनिये। हे नाथ, भरतजी कुछ पूछना चाहते हैं, परन्तु प्रश्न करते हुए वे मनमें सकुचा रहे हैं।

तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ ❀ भरतहिं मोहि कछु अंतर काऊ ॥
सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना ❀ सुनहु नाथ प्रनतारति हरना ॥

श्रीरामचन्द्रजीने कहा—हे हनुमान, तुम मेरा स्वभाव जानते हो। किसी समय भी क्या मुझे भरतजीसे कुछ अन्तर है ? प्रभुके वचन सुनकर भरतजीने उनके चरण पकड़ लिये और बोले कि हे शरणागतके दुःखोंको दूर कर देनेवाले स्वामी, सुनिये।

दो०—नाथ न मोहि संदेह कछु ❀ सपनेहुँ सोक न मोह।
केवल कृपा तुम्हारिही ❀ कृपा - नंद - संदोह ॥५६॥

हे नाथ, हे दया और आनन्दके समूह, केवल आपकी ही कृपासे स्वप्नमें भी न मुझे कुछ संदेह है, न शोक, और न मोह।

करउँ कृपानिधि एक ढिठाई ❀ मैं सेवक तुम्ह जन-सुख-दाई ॥
संतन्ह कै महिमा रघुराई ❀ बहु बिधि बेद पुरानन्हि गाई ॥

हे दयानिधान, आप भक्तोंको सुख देनेवाले हैं और मैं आपका सेवक हूँ। मैं एक ढिठाई करता हूँ। हे रघुराज, संतजनोंकी महिमाको वेद और पुराणोंने बहुत प्रकारसे गाया है।

श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्हि बड़ाई ❀ तिन्ह पर प्रभुहिं प्रीति अधिकाई ॥
सुना चहहुँ प्रभु तिन्ह कर लच्छन ❀ कृपासिंधु-गुन-ग्यान - बिचच्छन ॥

फिर अपने श्रीमुखसे आपने भी उनकी बड़ाई की है। हे प्रभो, आपको उनसे अधिक प्रेम भी है। हे दयासागर, हे गुण और ज्ञानमें निपुण, हे स्वामिन, मैं उनके लक्षण सुनना चाहता हूं।

संत असंत भेद बिलगाई ❀ प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई ॥
संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता ❀ अगनित स्रुति पुरान बिख्याता ॥

हे शरणागतके रक्षक, संतजनों और दुष्टजनोंके भेदको अलग-अलग कर मुझे समझाकर बतलाइये। श्रीरामचन्द्रजी बोले—हे भाई, संतजनोंके लक्षण सुनो। वे अगणित हैं और वेदों और पुराणोंमें विख्यात हैं।

संत असंतन्ह कै असि करनी ❀ जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥
काटइ परसु मलय सुनु भाई ❀ निजगुन देइ सुगंध बसाई ॥

संतजनों और दुष्टोंकी करतूत ऐसी है जैसे चन्दन और कुठारका परस्पर आचरण होता है। हे भाई, सुनो, कुठार चन्दनको काटता है, पर चन्दन अपना गुण—सुगंधि—उसमें बसा देता है।

दो०—ता तें सुरसीसन्ह चढ़त ❀ जगबल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहिं ❀ परसुबदन यह दंड ॥३०॥

इसीसे चंदन संसारका प्यारा है और देवताओंके शिरपर भी चढ़ता है। परन्तु कुठारके लिये यह दण्ड है कि अग्निमें तपाकर घनसे उसका मुँह पीटा जाता है।

बिषय अलंपट सीलगुनाकर ❀ परदुख दुख सुख सुख देखें पर ॥
सम अभूतरिपु बिमद बिरागी ❀ लोभामरष हरष भय त्यागी ॥

संतजन विषयोंमें लंपट नहीं होते, शील और गुणोंके भाण्डार होते हैं। वे पराये दुःखसे दुःखी और पराये सुखको देखकर सुखी होते हैं। सबसे समान व्यवहार करते हैं, उनका कोई शत्रु नहीं होता। वे अभिमानशून्य और विरक्त होते हैं, और लोभ, क्रोध, आनन्द और भयका त्याग किये रहते हैं।

कोमलचित दीनन्ह पर दाया ❀ मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥
सबहिं मानप्रद आपु अमानी ❀ भरत प्रानसम मम ते प्रानी ॥

उनका चित्त कोमल होता है; दीन जनोंपर उन्हें दया होती है; मन, वाणी और कर्मसे उन्हें मेरी मायारहित भक्ति होती है; वे सबको आदर देनेवाले और स्वयं अभिमानशून्य होते हैं। हे भरत, ये प्राणी मुझे प्राणके समान होते हैं।

बिगतकाम मम नाम परायन ❀ सांति बिरति बिनती मुदितायन ॥
सीतलता सरलता मइत्री ❀ द्विज-पद-प्रीति धरमजनयित्री ॥

वे कामनारहित, शान्ति, विरक्ति, नम्रता और प्रसन्नताके स्थान और मेरे नामको रटनेमें तत्पर होते हैं शीतलता, सरलता, मैत्री और धर्मको उत्पन्न करनेवाली ब्राह्मणोंके चरणोंमें उनकी प्रीति होती है।

ये सब लच्छन बसहिं जासु उर ❀ जानहु तात संत संतत फुर ॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं ❀ परुष बचन कबहूं नहिं बोलहिं ॥

हे तात, ये सब लक्षण जिसके हृदयमें बसते हों उसे सदा सच्चा साधु पुरुष जानो। जो शम और दम (आभ्यन्तरिक और बाह्य इन्द्रियोंके निग्रह), नियम और नीतिसे विचलित नहीं होते, जो कभी कठोर वचन नहीं बोलते—

दो०—निंदा अस्तुति उभय सम ❀ ममता मम पदकंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय ❀ गुनमंदिर सुखपुंज ॥३१॥

निन्दा और स्तुति—दोनों ही जिनको बराबर होती हैं और मेरे चरणकमलोंमें जिनको ममता होती है, वे गुणधाम और सुखोंके समूह सन्तजन मुझे प्राणके समान प्रिय होते हैं।

सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ ❀ भूलेहु संगति करिय न काऊ ॥
तिन्ह कर संग सदा दुखदाई ❀ जिमि कपिलहि घालइ हरहाई ॥

अब, दुष्टजनोंका स्वभाव सुनो। किसीको कभी भूलकर भी उनका संग नहीं करना चाहिये। उनका संग सदा दुःख देनेवाला होता है; जैसे कपिला गायको हरहाई गाय संकटमें डाला करती है।

खलन्ह हृदय अति ताप बिसेखी ❀ जरहिं सदा परसंपति देखी ॥
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई ❀ हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई ॥

दुष्टोंके हृदयमें अत्यन्त अधिक ताप रहता है और वे सदा पराई सम्पत्ति देखकर जला करते हैं। जहाँ कहीं वे परायी निन्दा सुनते हैं, वहाँ वे ऐसे प्रसन्न होते हैं; मानों पड़ा हुआ धन मिल गया हो।

काम - क्रोध- मद - लोभ - परायन ❀ निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥
बयरु अकारन सब काहू सों ❀ जो कर हित अनहित ताहू सों ॥

वे काम, क्रोध, मद और लोभमें आसक्त, निर्दय, कपटी, कुटिल और पापोंके घर होते हैं। अकारण ही वे सब किसीसे वैर रखते हैं और जो हित करता है उसका भी वे अहित ही करते हैं।

झूठइ लेना झूठइ देना ❀ झूठइ भोजन झूठ चबेना ॥
बोलहिं मधुरबचन जिमि मोरा ❀ खाहिं महाअहि हृदय कठोरा ॥

उनका झूठ ही लेना, झूठ ही देना, झूठ ही भोजन और झूठ ही चबेना है। वे मधुर वचन बोलते हैं; जैसे मोर जो बड़े-बड़े सांपोंको खा जाते हैं। उनका हृदय बड़ा कठोर होता है।

दो०—परद्रोही पर - दार - रत ❀ परधन परअपवाद।
ते नर पाँवर पापमय ❀ देह धरे मनुजाद ॥ ६२ ॥

वे पर-द्रोही, परायी स्त्रीमें आसक्त, पराये धनको चाहनेवाले और परायी निन्दामें लगे रहते हैं। वे नीच मनुष्य राक्षस हैं, जिन्होंने पापमय शरीर धारण कर रखा है।

लोभइ ओढन लोभइ डासन ❀ सिस्नोदरपर जम - पुर - त्रास न ॥
काहू कै जौं सुनहिं बड़ाई ❀ स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥

लोभ ही उनका ओढ़ना होता है और लोभ ही बिछौना। इन्द्रियों और पेटके लिये वे तत्पर रहते हैं। उन्हें यमपुरीका भय भी नहीं होता। यदि वे किसीकी बड़ाई सुन लें तो इस तरह सांस लेंगे; मानों जूड़ी आ गयी हो।

जब काहू कै देखहिं बिपती ❀ सुखी भये मानहुं जगनृपती ॥
स्वारथरत परिवारबिरोधी ❀ लंपट काम लोभ अतिक्रोधी ॥

जब वे किसीकी विपत्ति देखते हैं तब सुखी हो जाते हैं, मानों संसारके राजा हो गये हों, वे स्वार्थमें तत्पर, परिवारके विरोधी, लंपट, कामी, लोभी और अत्यन्त क्रोधी होते हैं।

मातु पिता गुरु बिप्र न मानहिं ❀ आपु गये अरु घालहिं आनहिं ॥
करहिं मोहबस द्रोह परावा ❀ संत संग हरिकथा न भावा ॥

माता, पिता, गुरु और ब्राह्मण—किसीको भी वे नहीं मानते, और आप तो गये बीते हैं ही, दूसरोंका भी नाश करते हैं। मोहके वशमें होकर वे पराया द्रोह करते हैं। साधुजनोंका संग और भगवान्की कथा उन्हें नहीं भाती।

अव-गुन - सिंधु मंदमति कामी ❀ बेदबिदूषक पर - धन - स्वामी ॥
बिप्रद्रोह सुरद्रोह बिसेषा ❀ दंभ कपट जिय धरे सुबेषा ॥

वे अवगुणोंके समुद्र, मंदबुद्धि, कामी, वेदोंका उपहास करनेवाले और पराये धनके स्वामी होते हैं। उनमें ब्राह्मण-द्रोह और देवताओंका द्रोह विशेष मात्रामें होता है, उनके हृदयमें होता है दंभ और कपट, पर भेष अच्छा बनाये रहते हैं।

दो०—ऐसे अधम मनुज खल ❀ कृतजुग त्रेता नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु ❀ होइहहिं कलियुग माहिं ॥ ६३ ॥

ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य सतयुग और त्रेतायुगमें नहीं होते। द्वापरमें वे कुछ होंगे, पर कलियुगमें तो वे झुण्ड-के-झुण्ड—असंख्य होंगे।

परहित सरिस धरमु नहिं भाई ❀ परपीड़ा सम नहिं अधमाई ॥
निरनय सकल पुरान बेद कर ❀ कहेउं तात जानहिं कोबिदनर ॥

हे भाई, पराये हितके समान धर्म नहीं है और दूसरोंको पीड़ा पहुंचानेके समान नीचता नहीं है। हे तात, मैंने यह सब वेदों और पुराणोंका निर्णय कहा है, इसे चतुर मनुष्य जानते हैं।

नर सरीर धरि जे परपीरा ❀ करहिं ते सहहिं महा-भव-भीरा ॥
करहिं मोहबस नर अघ नाना ❀ स्वारथरत परलोक नसाना ॥

मनुष्यका शरीर धारणकर जो मनुष्य दूसरोंको पीड़ा पहुंचाते हैं वे संसारकी भारी बाधाओंको सहते हैं। जो मनुष्य मोहके वशमें होकर स्वार्थरत रहकर तरह-तरहके पाप किया करते हैं उनका परलोक बिगड़ जाता है।

कालरूप तिन्ह कहँ मैं भ्राता ❁ सुभ अरु असुभ-करम-फल-दाता ॥
अस बिचारि जे परम सयाने ❁ भजहिं मोहि संसृति दुख जाने ॥

हे भाई, मैं उनके लिये शुभ और अशुभ कर्मफलोंका देनेवाला कालरूप हूँ। ऐसा विचारकर जो अत्यंत चतुर हैं वे संसारके दुःखोंको जानकर मुझे भजते हैं।

त्यागहिं कर्म सुभा-सुभ-दायक ❁ भजहिं मोहि सुर-नर-मुनि-नायक ॥
संत असंतन्ह के गुन भाखे ❁ ते न परहिं भव जिन्ह लखि राखे ॥

देवता, मनुष्य और मुनियोंके स्वामी शुभ और अशुभ फल देनेवाले कर्मोंको त्याग देते और मेरा भजन करते हैं। साधुजनों और दुष्टजनोंके गुण मैंने कह दिये। जिन्होंने इनको जान रखा है वे मनुष्य इस संसारमें नहीं पड़ते।

दो०—सुनहु तात मायाकृत ❁ गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिअहिं ❁ देखिअ सो अबिबेक ॥ ६४ ॥

हे तात, सुनो, मायाने अनेक गुण और दोष उत्पन्न किये हैं, परन्तु गुण एक यही है कि इन दोनोंको न देखा जाय। इनको देखना ही अविवेक है।

श्री-मुख-बचन सुनत सब भाई ❁ हरषे प्रेमु न हृदयँ समाई ॥
करहिं बिनय अति बारहिं बारा ❁ हनूमान हिय हरष अपारा ॥

श्रीरामचन्द्रजीके श्रीमुखसे ये वचन सुनकर सब भाई प्रसन्न हो गये। उनके हृदयमें प्रेम न समाता था। वे बारबार अत्यंत विनय करने लगे। हनुमानजीके हृदयको अपार आनन्द हुआ।

पुनि रघुपति निज मंदिर गये ❁ एहि बिधि चरित करत नित नये ॥
बार बार नारदमुनि आवहिं ❁ चरित पुनीत रामके गावहिं ॥

फिर, रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी अपने भवनके लिये विदा हुए। इस प्रकार वे नित्य नयी लीलाएँ करते थे। नारद मुनि बारबार आते और श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र चरित गाते थे।

नित नव चरित देखि मुनि जाहीं ❁ ब्रह्मलोक सब कथा कहाहीं ॥
सुनि बिरंचि अतिसय सुख मानहिं ❁ पुनि पुनि तात करहु गुनगानहिं ॥

मुनि नित्य नये-नये चरित देखकर जाते और ब्रह्मलोकमें सब कथा सुनाते थे। ब्रह्मा उसे सुनकर अत्यन्त सुख मानते और कहते थे कि हे तात, बार-बार गुणोंका गान करो।

सनकादिक नारदहिं सराहहिं ❀ जद्यपि ब्रह्मनिरत मुनि आहहिं ॥
सुनि गुनगान समाधि बिसारी ❀ सादर सुनहिं परम अधिकारी ॥

सनकादिक मुनि नारदजीकी प्रशंसा करते थे। यद्यपि वे ब्रह्ममें लीन मुनि थे, तथापि वे परम अधिकारी थे। श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान सुनकर वे समाधि भुलाकर आदरके साथ सुनते थे।

दो०—जीवनमुक्त ब्रह्मपर ❀ चरित सुनहिं तजि ध्यान।
जे हरि कथा न करहिं रति ❀ तिन्हके हिय पाषान ॥ ६५ ॥

जीवनमुक्त और ब्रह्मपरायण भी अपना ध्यान त्यागकर जिस चरितको सुनते हैं उस हरिकथासे जो मनुष्य प्रेम नहीं करते, उनके हृदय पत्थरके समान हैं।

एक बार रघुनाथ बोलाये ❀ गुरु द्विज पुरबासी सब आये ॥
बैठे सदसि अनुज मुनि सज्जन ❀ बोले बचन भगत-भय-भंजन ॥

एक बार श्रीरामचन्द्रजीने गुरु, ब्राह्मणों और नगरनिवासियोंको बुलाया और वे सब आये। जब छोटे भाई, मुनिजन और सज्जन, सब सभामें बैठ गये तब भक्तोंके भयको दूर कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी ये वचन बोले।

सुनहु सकल पुरजन मम बानी ❀ कहउँ न कछु ममता उर आनी ॥
नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई ❀ सुनहु करहु जो तुम्हहिं सुहाई ॥

हे नगरनिवासियो, सब मेरी वाणीको सुनो। मैं अपने हृदयमें कुछ ममता लाकर यह नहीं कहता हूं। न वह अनीति है और न कुछ प्रभुताई ही है। मैं जो कहूं उसे सुन लो, फिर यदि वह तुम्हें अच्छा लगे तो करो।

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई ❀ मम अनुसासन मानइ जोई ॥
जौं अनीति कछु भाषउँ भाई ❀ तौ मोहि बरजहु भय बिसराई ॥

जो कोई मेरी आज्ञाको मानेगा वही मेरा सेवक है और वही मेरा सबसे अधिक प्यारा है। हे भाई, यदि मैं कुछ अनीति कहूं तो भय त्यागकर मुझे रोक देना।

बड़े भाग मानुष तनु पावा ❀ सुरदुलभ सब ग्रन्थन्हिं गावा ॥
साधनधाम मोच्छ कर द्वारा ❀ पाइ न जेहि परलोक सँवारा ॥

बड़े भाग्यसे मनुष्यका शरीर मिलता है। यह देवताओंके लिये भी दुर्लभ है—यह बात सब ग्रन्थोंमें गायी गयी है। यह मनुष्य-शरीर साधन करनेका स्थान और मोक्ष पानेका द्वार है। इसे पाकर जिसने अपना परलोक नहीं सँभाला—

दो०—सो परत्र दुख पावइ ❀ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि ❀ मिथ्या दोष लगाइ ॥४३॥

वह परलोकमें दुःख पाता, शिर धुन-धुनकर पछताता और काल,कर्म और ईश्वरको मिथ्या दोष लगाता है।

एहि तन कर फल बिषय न भाई ❀ स्वरगउ स्वल्प अंत दुखदाई ॥
नरतनु पाइ बिषय मन देहीं ❀ पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

हे भाई, इस शरीरका फल विषय नहीं है। स्वर्ग भी अल्प समयतक रहनेवाला और अन्तमें दुःख देनेवाला होता है। मनुष्य-शरीर पाकर जो विषयोंमें मन लगाते हैं, वे दुष्ट अमृतको उलटकर विष लेते हैं।

ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई ❀ गुंजा ग्रहइ परसमनि खोई ॥
आकर चारि लच्छ चौरासी ❀ जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी ॥

जो पारसमणिको खोकर उसके बदलेमें घुंघची लेता है उसे कभी कोई भला नहीं कहता। यह जीव अविनाशी है और अण्डज, स्वेदज,जरायुज और उद्भिज—चार खानोंकी चौरासी लाख योनियोंमें घूमता फिरता है।

फिरत सदा माया कर प्रेरा ❀ काल कर्म सुभाव गुन घेरा ॥
कबहुँक करि करुना नरदेही ❀ देत ईस बिनु हेतु सनेही ॥

काल, कर्म, स्वभाव और गुणसे घिरा हुआ यह जीव सदा मायाकी प्रेरणासे फिरता रहता है। इसी प्रकार फिरते हुए जीवको कभी दया करके ईश्वर मनुष्य-शरीर दे देते हैं। भगवान् किसी हेतु विना ही प्रेम करनेवाले हैं।

नरतनु भवबारिधि कहुँ बेरो ❀ सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो ॥
करनधार सदगुरु दृढ़ नावा ❀ दुर्लभ साज सुलभ करि पावा ॥

मनुष्य-शरीर संसाररूपी समुद्रके लिये नौकास्वरूप है। इस नौकाके लिये मेरी कृपा ही अनुकूल वायु है। इस नौकाके दृढ़ कर्णधार सद्गुरु हैं। इस प्रकार यह दुर्लभ सामग्री जीव सहज ही पा गया है।

दो०—जो न तरइ भवसागर ❀ नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदमति ❀ आतम-हन-गति-जाइ ॥४४॥

ऐसा सब समाज पाकर भी जो मनुष्य संसाररूपी समुद्रको न तर जाय, वह मन्दबुद्धि निन्द्य कर्म करनेवाला है और आत्महत्या करनेवालोंकी गतिमें जा रहा है।

जौं परलोक इहाँ सुख चहहू ❀ सुनि मम बचन हृदय दृढ़ गहहू ॥
सुलभ सुखद मारग यह भाई ❀ भगति मोरि पुरान श्रुति गाई ॥

यदि परलोकमें और यहां सुख चाहते हो तो मेरा वचन सुनकर हृदयमें उसे दृढ़तासे पकड़ लो। हे भाई, सुलभ और सुखद मार्ग यह है—मेरी भक्ति, जिसे वेदों और पुराणोंने गाया है।

ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका ❀ साधन कठिन न मन कहुं टेका॥
करत कष्ट बहु पावइ कोऊ ❀ भगतिहीन मोहि प्रिय नहिं सोऊ॥

ज्ञान अगम है, उसमें अनेक बाधाएँ हैं, साधन कठिन हैं और मन टिकनेका अवलंब भी नहीं। बहुत कष्ट करनेपर उसे कोई ही पाता है, परन्तु वह भी यदि भक्तिहीन हो तो मुझे प्रिय नहीं होता।

भगति सुतंत्र सकल-सुख-खानी ❀ बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥
पुन्यपुंज बिनु मिलहिं न संता ❀ सतसंगति संसृति कर अंता॥

भक्ति सब गुणोंकी खान है, स्वतंत्र है। उसे सत्संग बिना प्राणी नहीं पाते—और जबतक पुण्यके समूह न हों तबतक संतजन नहीं मिलते। यह संतजनोंका संग ही संसारका अन्त है।

पुन्य एक जग महुं नहिं दूजा ❀ मन क्रम बचन बिप्र-पद-पूजा॥
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा ❀ जो तजि कपट करइ द्विजसेवा॥

संसारमें एक ही पुण्य है, दूसरा नहीं—और वह है, मन, वाणी और कर्मसे ब्राह्मणोंके चरणोंकी पूजा करना। जो कपट छोड़कर ब्राह्मणोंकी सेवा करता है उसपर देवता और मुनिजन—सब अनुकूल रहते हैं।

दो०—अउरउ एक गुपुत मत ❀ सबहिं कहहुं कर जोरि।
शंकर भजन बिना नर ❀ भगति न पावइ मोरि॥४५॥

एक गुप्तमत और भी है, उसे मैं सबसे हाथ जोड़कर कहता हूं—शिवजीके भजन बिना कोई मनुष्य मेरी भक्ति नहीं पाता।

कहहु भगति पथ कवन प्रयासा ❀ जोग न मख जप तप उपवासा॥
सरल सुभाव न मन कुटिलाई ❀ जथालाभ संतोष सदाई॥

भला कहो न, भक्तिमार्गमें क्या कष्ट है? इसमें न योग है, न यज्ञ; न जप है न तप, और न उपवास ही। सरल स्वभाव बनावे, मनमें कुटिलता न रखे, जितना लाभ हो सदा उसीमें सन्तुष्ट रहे।

मोर दास कहाइ नर आसा ❀ करइ त कहहु कहा बिस्वासा॥
बहुत कहउं का कथा बढ़ाई ❀ एहि आचरन बस्य मैं भाई॥

मेरा सेवक कहलाकर यदि किसी मनुष्यकी आशा करे तो फिर भला बतलाओ उसका विश्वास ही क्या? कथाका विस्तार करके मैं बहुत क्या कहूं? हे भाई, मैं इस आचरणके वशमें हूं—

बयरु न बिग्रह आस न त्रासा ❀ सुखमय ताहि सदा सब आसा ॥
अनारंभ अनिकेत अमानी ❀ अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी ॥

जिसका किसीसे न वैर हो और न विरोध हो, जिसे किसीकी न आशा हो और न किसीका भय हो— उसके लिये सभी दिशाएं सदा सुखपूर्ण हैं। जो निश्चेष्ट, गृहविहीन, अभिमानशून्य, निष्पाप, क्रोधरहित, चतुर और विज्ञानी है।

प्रीति सदा सज्जन संसर्गा ❀ तृनसम बिषय स्वर्ग अपबर्गा ॥
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई ❀ दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ॥

और सदा सज्जनोंके संसर्गमें रहनेसे जिसका प्रेम है, उसे विषय, स्वर्ग और मोक्ष—सब तिनकेके समान हैं। भक्तिपक्षमें हठ और दुष्टता नहीं। सब प्रकारके कुतर्क दूर करके—

दो०—मम गुनग्राम नाम रत ❀ गत - ममता - मद - मोह।
ता कर सुख सोइ जानइ ❀ परानंदसंदोह ॥ ४६ ॥

ममता, मद और मोहरहित होकर जो मेरे गुणोंके समूह और मेरे नाममें अनुरक्त रहता है, उस ब्रह्मानन्द-समूहका सुख स्वयं वही जानता है।

सुनत सुधासम बचन राम के ❀ गहे सबन्हि पद कृपाधाम के ॥
जननि जनक गुरु बंधु हमारे ❀ कृपानिधान प्रान तें प्यारे ॥

श्रीरामचन्द्रजीके अमृतके समान वचन सुनकर सभी लोगोंने दयानिधानके चरण पकड़ लिये। वे सब कहने लगे—हे दयाधाम, आप हमको प्राणसे भी अधिक प्यारे हैं और हमारे माता, पिता, गुरु और आत्मीय हैं।

तनु धनु धाम राम हितकारी ❀ सब बिधि तुम्ह प्रनतारतिहारी ॥
असि सिख तुम्ह बिनु देइ न कोऊ ❀ मातु पिता स्वारथरत ओऊ ॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, आप हमारे तन, धन और धाम—सबके हितकारी हैं। आप सब प्रकार भक्तोंके दुःख दूर कर देनेवाले हैं। ऐसी सीख आपके बिना और कोई न देगा। माता-पिता देते हैं, पर वे भी स्वार्थमें तत्पर हैं।

हेतुरहित जग जुग उपकारी ❀ तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी ॥
स्वारथमीत सकल जग माहीं ❀ सपनेहुं प्रभु परमारथ नाहीं ॥

हे राक्षसोंके शत्रु, संसारमें हेतुरहित उपकार करनेवाले दो ही हैं—आप और आपका सेवक। हे प्रभो, संसारमें सब अपने स्वार्थके मित्र हैं। यहां परमार्थ स्वप्नमें भी नहीं है।

सब के वचन प्रेमरससाने ❀ सुनि रघुनाथ हृदय हरषाने ॥
निज गृह गये सुआयसु पाई ❀ बरनत प्रभु बतकही सुहाई ॥

प्रेम-रसमें सने हुए सबके वचन सुनकर रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजी हृदयमें प्रसन्न हुए। फिर शुभ आज्ञा पाकर सब लोग प्रभुकी सुहावनी बातचीतका वर्णन करते हुए अपने-अपने घर गये।

दो०—उमा अवधवासी नर ❀ नारि कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानंद घन ❀ रघुनायक जहँ भूप ॥ ७० ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, अयोध्याके रहनेवाले स्त्री और पुरुष—सब कृतार्थरूप हैं, जहां सत्‌चित आनन्दघन ब्रह्म श्रीरामचन्द्रजी राजा हैं।

एक बार बसिष्ठ मुनि आये ❀ जहाँ राम सुखधाम सुहाये ॥
अतिआदर रघुनायक कीन्हा ❀ पद पखारि चरनोदक लीन्हा ॥

एक बार जहां सुखधाम श्रीरामचन्द्रजी शोभायमान थे वहां वशिष्ठमुनि आये। श्रीरामचन्द्रजीने वशिष्ठजी-का बड़ा आदर किया और चरण धोकर चरणोदक लिया।

राम सुनहु मुनि कह कर जोरी ❀ कृपासिंधु बिनती कछु मोरी ॥
देखि देखि आचरन तुम्हारा ❀ होत मोह मम हृदय अपारा ॥

फिर मुनि हाथ जोड़कर कहने लगे कि हे दयासागर श्रीरामचन्द्रजी, कुछ मेरी विनती सुनिये। आपका आचरण देख-देखकर मेरे हृदयमें अपार मोह होता है।

महिमा अमित बेद नहिं जाना ❀ मैं केहि भांति कहउँ भगवाना ॥
उपरोहिती कर्म अतिमंदा ❀ बेद पुरान सुमृति कर निंदा ॥

आपकी असीम महिमा है, जिसे वेद भी नहीं जानते। फिर हे भगवन्, मैं उसे किस प्रकार कहूं। पुरोहित-का कार्य अत्यन्त नीच है। वेद, पुराण और स्मृतियां उसकी निन्दा करती हैं।

जब न लेउँ मैं तब बिधि मोही ❀ कहा लाभ आगे सुत तोही ॥
परमातमा ब्रह्म नररूपा ❀ होइहि रघु-कुल-भूषन भूपा ॥

मैं जब उसे स्वीकार न करता था तब विधाताने मुझसे कहा था कि हे पुत्र, तुझे आगे लाभ होगा। परब्रह्म परमात्मा मनुष्यरूप रखकर रघुकुलके भूषणरूप राजा होंगे।

दो०—तब मैं हृदय बिचारा ❀ जोग जग्य ब्रत दान।
जा कहुँ करिय सो पाइहउँ ❀ धर्म न एहि सम आन ॥ ७१ ॥

तब मैंने अपने हृदयमें विचार किया कि जिसके लिये योग, यज्ञ, व्रत, दान सब किये जाते हैं, उसे ही जब मैं पा जाऊंगा तब इसके समान धर्म दूसरा कोई नहीं है।

जप तप नियम जोग निज धर्मा ❀ स्रुतिसंभव नाना सुभ कर्मा॥
ग्यान दया दम तीरथ मज्जन ❀ जहं लगि धर्म कहत स्रुति सज्जन॥

जप, तप, नियम, योग, स्वधर्म, अनेक प्रकारके शुभ वैदिक कर्म, ज्ञान, दया, दम, तीर्थ-स्नान जहांतक वेद और महात्मा पुरुष धर्म कहते हैं—

आगम निगम पुरान अनेका ❀ पढ़े सुने कर फल प्रभु एका॥
तव पद-पंकज प्रीति निरंतर ❀ सब साधन कर यह फल सुंदर॥

उनका और अनेक वेद, शास्त्र और पुराण पढ़ने और सुननेका फल, हे प्रभु श्रीरामचन्द्रजी, एक ही है—आपके चरण कमलोंमें निरंतर प्रीति। सब साधनोंका सुन्दर फल यही है।

छूटइ मल कि मलहि के धोये ❀ घृत कि पाव कोउ बारि बिलोये॥
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई ❀ अभिअंतर-मल कबहुं न जाई॥

मलसे ही धोनेसे क्या मल छूटता है? पानीका मंथन करनेसे क्या कोई घी पा सकता है? हे श्रीरामचन्द्रजी, प्रेम और भक्तिके जल विना अभ्यंतरका मैल कभी नहीं जाता।

सोइ सर्बग्य तग्य सोइ पंडित ❀ सोइ गुनगृह बिग्यान अखंडित॥
दच्छ सकल-लच्छन-जुत सोई ❀ जा के पद-सरोज रति होई॥

वही सर्वज्ञ है, वही तत्वज्ञ है, वही पण्डित है, वही गुणोंका भाण्डार है, वही अखण्ड ज्ञानयुक्त है, वही चतुर है और वही सब लक्षणोंसे युक्त है, जिसको आपके चरणकमलोंसे प्रेम हो।

दो०—नाथ एक बर मांगउं ❀ राम कृपा करि देहु।
जनमजनम प्रभु-पद-कमल ❀ कबहुं घटइ जनि नेहु॥ ७२॥

हे नाथ, हे श्रीरामचन्द्रजी, एक वरदान मांगता हूं। कृपा करके आप उसे दीजिये। हे प्रभो, जन्म-जन्म आपके चरणकमलोंमें मेरा प्रेम कभी कम न होवे।

अस कहि मुनि बशिष्ठ गृह आये ❀ कृपासिंधु के मन अति भाये॥
हनूमान भरतादिक भ्राता ❀ संग लिये सेवक-सुख-दाता॥

ऐसा कहकर वशिष्ठ मुनि अपने घर आये। दयासागर श्रीरामचन्द्रजीको वे मनमें अत्यन्त प्रिय लगे। फिर हनुमान और भरत आदि भाइयोंको संग लेकर सेवकोंको सुख देनेवाले—

पुनि कृपाल पुर बाहर गये ❀ गज रथ तुरग मंगावत भये ॥
देखि कृपा करि सकल सराहे ❀ दिये उचित जिन्ह जिन्ह जेइ चाहे ॥

दयालु श्रीरामचन्द्रजी नगरके बाहर गये और वहां हाथी, घोड़े और रथ मंगवाये। उन्हें देखकर कृपा करके उन्होंने सबकी प्रशंसा की और जिन्होंने जो चाहे उन्हें उचित प्रकारसे वे दे दिये।

हरन सकलस्रम प्रभु स्रम पाई ❀ गये जहां सीतल अवंराई ॥
भरत दीन्ह निजवसन डसाई ❀ बैठे प्रभु सेवहिं सब भाई ॥

समस्त श्रम दूर कर देनेवाले प्रभु श्रीरामचन्द्रजी थककर वहां गये, जहां शीतल अमराई थी। भरतजीने अपना वस्त्र बिछा दिया, जिसपर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी बैठ गये और सब भाई सेवा करने लगे।

मारुतसुत तब मारुत करई ❀ पुलक बपुष लोचन जल भरई ॥
हनूमान समान बड़ भागी ❀ नहिं कोउ राम - चरन - अनुरागी ॥
गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई ❀ बारबार प्रभु निज मुख गाई ॥

तब पवनपुत्र हनुमान हवा करने लगे। उनका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल उमड़ने लगा। हनुमानजीके समान बड़भागी श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेमी और कोई नहीं है, शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, जिन (हनुमान) की प्रीति और सेवाको प्रभुने अपने श्रीमुखसे बार-बार सराहा है।

दो०—तेहि अवसर मुनि नारद ❀ आये करतल बीन।
गावन लागे राम - कल ❀ कीरति सदा नवीन ॥ ७२ ॥

उसी अवसरपर हाथमें वीणा लिये हुए नारद मुनि आये और श्रीरामचन्द्रजीकी नित्य नवीन सुन्दर कीर्ति गाने लगे—

मामवलोकय पंकज - लोचन ❀ कृपा बिलोकनि सोकबिमोचन ॥
नील - तामरस - स्याम कामअरि ❀ हृदय - कंज - मकरंद-मधुप हरि ॥

हे शोकको छुड़ा देनेवाले, आप अपने कमलके समान नेत्रोंकी दयादृष्टिसे मुझे देखिये। आप नील कमलके समान श्याम हैं, कामदेवोंके शत्रु, शिवजीके हृदयरूपी कमलके मकरन्दके लिये मधुप हैं, भगवान् हैं।

जातुधान - बरूथ - बल - भंजन ❀ मुनि - सज्जन - रंजन अघगंजन ॥
भूसुर ससि नव बृंद बलाहक ❀ असरन सरन दीन - जन - गाहक ॥

आप राक्षसोंके समूहके बलको नष्ट करनेवाले, मुनियों और सज्जनोंको प्रसन्न करनेवाले, पापोंको मिटा देनेवाले हैं। ब्राह्मणरूपी नये धान्यके लिये आप मेघोंके समूह हैं, जिसको शरण लेनेवाला कोई न हो उसकी शरण आप हैं, आप दीनजनोंको अपना लेनेवाले हैं।

भुजबल बिपुल भार महि खंडित ❀ खर-दूषन-बिराध-बध पंडित ॥
रावनारि सुखरूप भूपबर ❀ जय दसरथ-कुल-कुमुद-सुधाकर ॥

आप अपनी भुजाओंके बलसे पृथिवीके भारी भारको नष्ट करनेवाले, खरदूषण और विराध आदि दैत्योंको मारनेवाले, पण्डित रावणके शत्रु, सुखरूप और श्रेष्ठ राजा हैं। हे दशरथके कुलरूपी कुमुदके लिये चन्द्रमाके समान श्रीरामचन्द्रजी, आपकी जय हो।

सुजसु पुरानबिदित निगमागम ❀ गावत-सुर-मुनि-संत-समागम ॥
कारुनीक ब्यलीक-मद-खंडन ❀ सब बिधि कुसल कोसलामंडन ॥
कलि-मल-मथन-नाम-ममताहन ❀ तुलसि-दास-प्रभु पाहि प्रनतजन ॥

वेद, पुराण और शास्त्र—सबमें आपका सुयश प्रसिद्ध है, देवता, मुनीश्वर और संतजन सब समागमके समय उसे गाते हैं। हे करुणाशील, हे अनुचित मदका खण्डन कर देनेवाले और हे कोशलदेशके भूषण, आप सब प्रकार कुशल हैं। आपका नाम कलियुगके पापोंको मिटा देनेवाला और ममताको दूर कर देनेवाला है। हे तुलसीदासके स्वामी, आप भक्तजनोंकी रक्षा कीजिये।

दो०—प्रेमसहित मुनि नारद ❀ बरनि राम-गुन-ग्राम।
सोभासिंधु हृदय धरि ❀ गये जहाँ बिधिधाम ॥७४॥

प्रेमके साथ श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंके समूहका वर्णन कर और शोभाके समुद्र श्रीरामचन्द्रजीको हृदयमें धारण कर नारद मुनि वहाँ गये जहाँ ब्रह्मलोक है।

गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा ❀ मैं सब कही मोरि मति यथा ॥
रामचरित सत कोटि अपारा ❀ स्रुति सारदा न बरनइ पारा ॥

महादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती, सुनो। यह पवित्र कथा मैंने जैसी मेरी बुद्धि है, सब कही। श्रीरामचन्द्रजीका चरित सौ करोड़—अपार है। वेद और सरस्वती भी इसका वर्णन करके पार नहीं पा सकते।

राम अनंत अनंतगुनानी ❀ जनम कर्म अनंत नामानी ॥
जलसीकर महिरज गनि जाहीं ❀ रघु-पति-चरित न बरनि सिराहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजी अनंत हैं, उनके गुण अनंत हैं, उनके जन्म, कर्म और नाम—सब अनंत हैं। जलकी बूँदें और पृथिवीकी धूलके कण गिने जा सकते हैं, परन्तु वर्णन करनेसे श्रीरामचन्द्रजीके चरित समाप्त नहीं होते।

बिमल कथा हरि-पद-दायनी ❀ भगति होइ सुनि अनपायनी ॥
उमा कहेउँ सब कथा सुहाई ❀ जो भुसुंडि खगपतिहिं सुनाई ॥

यह निर्मल कथा भगवान्‌के चरणोंको देनेवाली है, इसे सुनकर दृढ़भक्ति हो जाती है। हे पार्वती, जो सुहावनी कथा काकभुशुण्डजीने पक्षिराज गरुड़को सुनायी थी, वह सब मैंने तुमसे कही।

कछुक रामगुन कहेउँ बखानी * अब का कहउँ सो कहहु भवानी ॥
सुनि सुभकथा उमा हरषानी * बोली अतिबिनीत मृदुबानी ॥
धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी * सुनेउँ रामगुन भव-भय-हारी ॥

इस प्रकार मैंने श्रीरामचन्द्रजीके कुछ गुणोंको बखानकर कहा। हे भवानी, अब क्या कहूं, यह बतलाओ! पार्वतीजी इस कल्याणकर कथाको सुनकर प्रसन्न हो गयीं। वे अत्यन्त नम्रताके साथ मीठी वाणी बोलीं—हे त्रिपुरारि, मैं धन्य हूं, धन्य हूं, धन्य हूं, कि मैंने संसारके भयको दूर कर देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको सुना।

दो०—तुम्हरी कृपा कृपायतन * अब कृतकृत्य न मोह।
जानेउँ रामप्रताप प्रभु * चिदानंद संदोह ॥७५॥

हे दयाधाम, मैं अब आपकी कृपासे कृतकृत्य हुई, मुझे अब मोह नहीं रहा। अब मैंने चिदानन्द-समूह प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप जान लिया।

नाथ तवानन ससि स्रवत * कथा सुधा रघुबीर।
स्रवनपुटन्हि मन पान करि * नहिं अघात मतिधीर ॥७६॥

हे नाथ, आपका मुखचन्द्र श्रीरामचन्द्रजीकी कथारूपी अमृत झरता है। हे धीर बुद्धिवाले स्वामी, कानरूपी पात्रोंसे उसे पीकर मेरा मन नहीं अघाता।

रामचरित जे सुनत अघाहीं * रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं ॥
जीवनमुक्त महामुनि जेऊ * हरिगुन सुनहिं निरंतर तेऊ ॥

श्रीरामचन्द्रजीका चरित सुनकर जो तृप्त हो जायँ, उन्होंने उसका विशेष रस नहीं जाना। जो जीवन-मुक्त महामुनि हैं, वे भी भगवान्‌के गुणोंको निरंतर सुनते हैं।

भवसागर चह पार जो पावा * रामकथा ता कहँ दृढ़ नावा ॥
बिषइन्ह कहँ पुनि हरि-गुन-ग्रामा * स्रवनसुखद अरु मन अभिरामा ॥

भवसागरसे जो पार होना चाहता हो उसके लिये श्रीरामचन्द्रजीकी कथा दृढ़ नौका है। फिर, जो विषयी हैं उनके लिये भगवान्‌के गुणोंके समूह कानोंको सुखदायी और मनको प्रसन्न करनेवाले हैं।

स्रवनवंत अस को जग माहीं * जाहि न रघुपति-चरित सुहाहीं ॥
ते जड़ जीव निजा-तम-घाती * जिन्हहिं न रघु-पति-कथा सुहाती ॥

संसारमें ऐसा कौन है जो कानवाला हो और जिसको श्रीरामचन्द्रजीके चरित न सुहावें। जिनको श्रीरामचन्द्रजीकी कथा नहीं सुहाती, वे मूर्ख जीव अपने आत्मघातक हैं।

हरि - चरित्र - मानस तुम्ह गावा ❀ सुनि मैं नाथ अमित सुख पावा ॥
तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई ❀ कागभुसुंडि गरुड़ प्रति गाई ॥

हे नाथ, आपने जो हरिचरितमानस गाया उसे सुनकर मैंने असीम सुख पाया। आपने जो यह सुहावनी कथा कही, उसे कागभुशुण्डजीने गरुड़जीसे कहा था।

दो०—बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ ❀ रामचरित अति नेह।
बायसतन - रघुपति भगति ❀ मोहि परम संदेह ॥ ७७ ॥

मुझे इस बातका बड़ा भारी सन्देह है कि जिनको दृढ़ वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान है और श्रीरामचन्द्रजीके चरितपर अत्यन्त प्रेम है उन कागभुशुण्डजीको कौएका शरीर कैसे मिला और उन्हें श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति कैसे हुई?

नरसहस्र महँ सुनहु पुरारी ❀ कोउ एक होइ धर्म-ब्रत-धारी ॥
धर्मसील कोटिक महँ कोई ❀ बिषयबिमुख बिरागरत होई ॥

हे त्रिपुरारि, सुनिये, हजार मनुष्योंमें कोई एक धर्म-व्रत-धारी होता है। करोड़ों धर्मशील मनुष्योंमें कोई ही मनुष्य विषयोंसे विमुख और वैराग्यमें तत्पर होता है।

कोटि - बिरक्त - मध्य श्रुति कहई ❀ सम्यक ग्यान सकृत कोउ लहई ॥
ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ ❀ जीवनमुक्त सकृत जग सोऊ ॥

वेद कहते हैं कि करोड़ विरक्त लोगोंके बीचमेंसे कोई विरला ही पूर्ण ज्ञान एक बार पाता है। करोड़ों ज्ञानवानोंमें कोई-कोई जीवन्मुक्त होता है और वह भी संसारमें एक ही बार।

तिन्ह सहस्र महुँ सब सुखखानी ❀ दुर्लभ ब्रह्मलीन बिग्यानी ॥
धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी ❀ जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी ॥

उन हजारोंमें सब सुखोंकी खान ऐसा विज्ञानी होना दुर्लभ है, जो ब्रह्मलीन हो। जो प्राणी धर्मशील, विरक्त, ज्ञानी, जीवन्मुक्त और ब्रह्मपरायण है—

सब तें सो दुर्लभ सुरराया ❀ राम-भगति-रत गत-मद-माया ॥
सो हरिभगति काग किमि पाई ❀ बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई ॥

हे देवाधिराज, इन सबसे दुर्लभ वह मनुष्य है जो श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिमें तत्पर और मद और मायाशून्य है। भगवानकी यह भक्ति कौएने कैसे पायी, हे विश्वनाथ, मुझे समझाकर कहिये।

दो०—रामपरायन ग्यानरत ❀ गुनागार मतिधीर।
नाथ कहहु केहि कारन ❀ पायेउ कागसरीर ॥ ७८ ॥

हे नाथ, रामपरायण, ज्ञाननिष्ठ, गुणोंके भाण्डार और धीर बुद्धि जीवने कौवेका शरीर किस कारण पाया, यह बतलाइये।

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा ❀ कहहु कृपाल काग कहँ पावा ॥
तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी ❀ कहहु मोहि अति कौतुक भारी ॥

हे कृपालु, यह कहिये कि प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका यह पवित्र और सुहावना चरित कौएने कहाँ पाया। हे कामदेवके शत्रु, आपने उसे किस प्रकार सुना, यह भी आप मुझसे कहिये। मुझे अत्यंत अधिक कौतुक है।

गरुड़ महाग्यानी गुनरासी ❀ हरिसेवक अतिनिकट निवासी ॥
तेहि केहि हेतु काग सन जाई ❀ सुनी कथा मुनिनिकर बिहाई ॥

गरुड़जी महाज्ञानी, गुणोंकी राशि, भगवान्‌के सेवक और अत्यन्त समीप रहनेवाले हैं। उन्होंने मुनियोंके समूह छोड़कर किस कारण कौएके पास जाकर कथा सुनी?

कहहु कवन बिधि भा संबादा ❀ दोउ हरिभगत काग उरगादा ॥
गौरिगिरा सुनि सरल सुहाई ❀ बोले सिव सादर सुख पाई ॥

कागभुशुण्डजी और गरुड़जी—दोनों ही भगवान्‌के भक्त हैं, यह बतलाइये कि उनमें यह संवाद किस प्रकार हुआ? पार्वतीजीकी सरल और सुहावनी वाणी सुनकर शिवजी सुखी हुए और आदरके साथ बोले—

धन्य सती पावनि मति तोरी ❀ रघुपति-चरन प्रीति नहिं थोरी ॥
सुनहु परम पुनीत इतिहासा ❀ जो सुनि सकल-सोक-भ्रम-नासा ॥
उपजइ रामचरन बिस्वासा ❀ भवनिधि तर नर बिनहिं प्रयासा ॥

हे सती, तुम धन्य हो। तुम्हारी बुद्धि पावन है। तुम्हें श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रीति कम नहीं है। अब, परम पवित्र इतिहास सुनो, जिसे सुनकर शोक और भ्रम—सब नष्ट हो जाते हैं, श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें विश्वास उत्पन्न हो जाता है और मनुष्य परिश्रम बिना ही संसार-सागरसे तर जाते हैं।

दो०—ऐसइ प्रस्न बिहंगपति ❀ कीन्ह काग सन जाइ।
सो सब सादर कहिहउँ ❀ सुनहु उमा मन लाइ ॥ ७९ ॥

हे पार्वती, ऐसे ही प्रश्न पक्षिराज गरुड़ने जाकर कागभुशुण्डजीसे किये थे। वह सब कथा मैं तुमसे आदरके साथ कहूँगा। उसे मन लगाकर सुनो।

मैं जिमि कथा सुनी भवमोचनि ❀ सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि ॥
प्रथम दच्छगृह तव अवतारा ❀ सती नाम तव रहा तुम्हारा ॥

हे सुन्दर मुखवाली, हे सुन्दर नेत्रोंवाली, संसारको छुड़ा देनेवाली यह कथा मैंने जिस प्रकार सुनी, वह प्रसंग सुनो। तुम्हारा अवतार पहिले दक्ष-प्रजापतिके घरमें हुआ था। उस समय तुम्हारा नाम सती था।

दच्छजग्य जब भा अपमाना ❀ तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना ॥
मम अनुचरन्ह कीन्ह मखभंगा ❀ जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा ॥

दक्ष-प्रजापतिके यज्ञमें जब तुम्हारा अपमान हुआ तब अत्यन्त क्रोधसे तुमने प्राण त्याग दिये और मेरे सेवकोंने यज्ञ भंग कर दिया—यह सब प्रसंग तुम जानती हो।

तब अति सोच भयेउ मन मोरे ❀ दुखी भयउँ बियोग प्रिय तोरे ॥
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा ❀ कौतुक देखत फिरेउँ बिरागा ॥

तब मेरे मनमें बड़ा सोच हुआ और मैं तुम्हारे प्रिय वियोगसे दुःखी हुआ। विरक्त होकर मैं फिर सुन्दर वन, पर्वत, सरोवर और नदियां कौतुकसे देखता फिरा।

गिरि सुमेरु उत्तर दिसि दूरी ❀ नील सैल एक सुंदर भूरी ॥
तासु कनकमय सिखर सुहाये ❀ चारि चारु मोरे मन भाये ॥

उत्तर दिशामें सुमेरु पर्वतसे दूर एक अत्यन्त सुन्दर नीलपर्वत है। उसके सोनेके सुन्दर सुहावने चार शिखर हैं, जो मेरे मनको प्रिय लगे।

तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला ❀ बट पीपर पाकरी रसाला ॥
सैलोपरि सर सुंदर सोहा ❀ मनिसोपान देखि मन मोहा ॥

उनपर बड़, पीपल, पाकर और आमका एक-एक विशाल वृक्ष था। पर्वतके ऊपर एक सुन्दर सरोवर शोभित था, जिसकी सीढ़ियाँ मणियोंकी बनी हुई थीं, जिन्हें देखकर मन मोहित हो गया।

दो०—सीतल अमल मधुर जल ❀ जलज बिपुल बहुरंग।
कूजत कलरव हंसगन ❀ गुंजत मंजुल भृंग ॥८०॥

जल शीतल, निर्मल और मीठा था; कमल अनेक रंगोंके और अगणित थे, हंसोंके झुण्ड मधुर ध्वनिसे बोल रहे थे और सुन्दर भौंरे गुंजार कर रहे थे।

तेहि गिरि रुचिर बसइ खग सोई ❀ तासु नास कलपांत न होई ॥
मायाकृत गुन दोष अनेका ❀ मोह मनोज आदि अबिबेका ॥

उस सुन्दर पर्वतपर वही पक्षी रहता है। उसका नाश कल्पान्तमें भी नहीं होता। मोह, कामदेव, अविवेक आदि मायाके किये हुए अनेक गुण-दोष—

रहे ब्यापि समस्त जग माहीं ❀ तेहि गिरि निकट कबहु नहिं जाहीं ॥
तहं बसि हरिहि भजइ जिमि कागा ❀ सो सुनु उमा सहित अनुरागा ॥

सारे संसारमें व्याप्त हो रहे हैं, परन्तु उस पर्वतके पास वे कभी नहीं जाते। हे पार्वती, वहां बसकर काग-भुशुण्डजी जिस प्रकार भगवान्‌का भजन करते हैं, उसे प्रेमके साथ सुनो।

पीपर तरु तर ध्यान जो धरई ❀ जाप जग्य पाकरितर करई ॥
आमछाँह कर मानस पूजा ❀ तजि हरिभजनु काजु नहिं दूजा ॥

पीपलके वृक्षके नीचे वे ध्यान करते हैं और पाकरके नीचे करते हैं जप और यज्ञ। आमकी छायामें वे मानसिक पूजा करते हैं। भगवान्‌के भजनको छोड़कर उन्हें दूसरा कार्य नहीं है।

बर तर कह हरि-कथा-प्रसंगा ❀ आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा ॥
रामचरित बिचित्र बिधिनाना ❀ प्रेम सहित कर सादर गाना ॥

बड़के नीचे वे भगवान्‌की कथाके प्रसंग कहते हैं। वहां अनेक पक्षी आते और उस कथा-प्रसंगको सुनते हैं। वे बड़ी विचित्र विधिसे श्रीरामचन्द्रजीके चरितको प्रेमके साथ आदरपूर्वक गाते हैं।

सुनहिं सकल मति बिमल मराला ❀ बसहिं निरंतर जो तेहि ताला ॥
जब मैं जाइ सो कौतुक देखा ❀ उर उपजा आनन्द बिसेखा ॥

निर्मल बुद्धिवाले वे सब हंस उस कथाको सुनते हैं, जो उस तालाबमें निरन्तर बसते हैं। जब मैंने जाकर यह कौतुक देखा तब हृदयमें बड़ा आनन्द उत्पन्न हुआ।

दो०—तब कछु काल मरालतनु ❀ धरि तहं कीन्ह निवास।
सादर सुनि रघु-पति-गुन ❀ आयेउं पुनि कैलास ॥ ८१ ॥

तब, कुछ समयतक मैंने वहां हंसका शरीर धारणकर निवास किया और आदरके साथ श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंको सुनकर फिर कैलाशपर आ गया।

गिरिजा कहेउं सो सब इतिहासा ❀ मैं जेहि समय गयउं खग पासा ॥
अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू ❀ गयउ काग पहिं खग-कुल-केतू ॥

हे पार्वती, मैं जिस समय उस पक्षीके पास गया था, वह सब इतिहास मैंने कह दिया। अब वह कथा सुनो, जिस कारण पक्षियोंके कुलकी पताका स्वरूप गरुड़जी कागभुशुण्डजीके पास गये थे।

जब रघुनाथ कीन्हि रनक्रीड़ा ❀ समुझत चरित होत मोहि ब्रीड़ा ॥
इंद्रजीत कर आपु बंधायो ❀ तब नारद मुनि गरुड़ पठायो ॥

जब श्रीरामचन्द्रजीने रणक्रीड़ा की तब उन्होंने जो चरित किया उसे समझनेसे मुझे लज्जा होती है ! इन्द्रको जीतनेवाले मेघनादके हाथोंसे उन्होंने जब अपनेको बंधा दिया, तब नारद मुनिने गरुड़जीको भेजा।

बंधन काटि गयउ उरगादा ❀ उपजा हृदय प्रचंड बिषादा ॥
प्रभुबंधन समुझत बहु भाँती ❀ करत बिचार उरगआराती ॥

गरुड़जी जब बंधन काटकर गये तब उनके हृदयमें प्रबल विषाद उत्पन्न हुआ। प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका बंधनमें पड़ना समझकर सर्पोंके शत्रु गरुड़ अनेक प्रकारके विचार करने लगे।

ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा ❀ माया - मोह - पार परमीसा ॥
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं ❀ देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं ॥

जो ब्रह्म व्यापक, शुद्ध, वाणीका स्वामी, माया और मोहसे परे, परमेश्वर है, उसका अवतार संसारमें हुआ सुना था; परन्तु वह कुछ प्रभाव नहीं देखा।

दो०—भवबंधन तें छूटहिं ❀ नर जप जा कर नाम।
खर्ब निसाचर बाँधेउ ❀ नागपास सोइ राम ॥ ८२ ॥

जिनका नाम जपकर मनुष्य संसारके बंधनोंसे छूट जाते हैं, उन्हीं श्रीरामचन्द्रजीको तुच्छ राक्षसने नागपाशमें बांध लिया।

नाना भाँति मनहिं समुझावा ❀ प्रगट न ग्यान हृदय भ्रम छावा ॥
खेदखिन्न मन तर्क बढ़ाई ❀ भयेउ मोहबस तुम्हरिहि नाईं ॥

उन्होंने अनेक प्रकारसे मनको समझाया; परन्तु ज्ञान नहीं प्रकट हुआ। हृदयमें भ्रम छा गया। खेदसे खिन्न होकर मनमें तर्क बढ़ाकर गरुड़जी तुम्हारी ही भांति मोहके वशमें हो गये।

ब्याकुल गयउ देवरिषि पाहीं ❀ कहेसि जो संसय निजमन माँहीं ॥
सुनि नारदहिं लागि अति दाया ❀ सुनु खग प्रबल राम कै माया ॥

तब गरुड़जी व्याकुलचित्त होकर देवर्षि नारदके पास गये और अपने मनमें जो सन्देह था उसे कहा। सुनकर नारदजीको बड़ी दया हो आयी। वे बोले—हे पक्षी, श्रीरामचन्द्रजीकी माया प्रबल है—

जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई ❀ बरिआईं बिमोह मन करई ॥
जेहि बहु बार नचावा मोही ❀ सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही ॥

जो ज्ञानियोंका भी चित्त अपहरण कर लेती है, मनको बरजोरी गहरे मोहमें डाल देती है, और जिसने बहुत बार मुझे नचाया है, हे पक्षिराज गरुड़, तुम्हें वही माया व्याप गयी है।

महामोह उपजा उर तोरें ❀ मिटिहि न बेगि कहें खग मोरें ॥
चतुरानन पहिं जाहु खगेसा ❀ सोइ करेहु जो देहिं निदेसा ॥

तुम्हारे हृदयमें बड़ा मोह उत्पन्न हो गया है। हे गरुड़, मेरे कहनेसे वह शीघ्र नहीं मिटेगा। इसलिये हे पक्षिराज गरुड़, तुम चतुरानन ब्रह्माके पास जाओ। वे जो निर्देश दें, वही करना।

दो०—अस कहि चले देवरिषि ❀ करत राम - गुन - गान।
हरि - माया - बल बरनत ❀ पुनि पुनि परम सुजान ॥ ८३ ॥

ऐसा कहकर अत्यन्त चतुर देवर्षि नारद श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान करते और बार-बार भगवान्‌की मायाका बल वर्णन करते हुए चल दिये।

तब खगपति बिरंचि पहिं गयेऊ ❀ निज संदेह सुनावत भयेऊ ॥
सुनि बिरंचि रामहिं सिरु नावा ❀ समुझि प्रताप प्रेम उर छावा ॥

तब पक्षिराज गरुड़ ब्रह्माके पास गये और अपना संदेह सुना दिया। सुनकर ब्रह्माजीने श्रीरामचन्द्रजी-को शिर नवाया। श्रीरामचन्द्रजीका प्रताप समझकर उनके हृदयमें प्रेम छा गया।

मन महुं करइ बिचार बिधाता ❀ मायाबस कबि कोबिद ग्याता ॥
हरिमाया कर अमित प्रभावा ❀ बिपुल बार जेहि मोहि नचावा ॥

ब्रह्माजी मनमें विचार करने लगे कि मायाके वशमें कविजन, पण्डित और विद्वान—सब हैं। भगवान्‌की मायाका असीम प्रभाव है, जिसने मुझे असंख्य बार नचाया।

अग-जग-मय सब मम उपराजा ❀ नहिं आचरज मोह खगराजा ॥
तब बोले बिधि गिरा सुहाई ❀ जान महेस रामप्रभुताई ॥

चराचरमयी सारी सृष्टि मेरी उत्पन्न की हुई है, अतः यदि पक्षिराज गरुड़ मोहित हो गये तो आश्चर्य नहीं। तब ब्रह्माजीने सुहावनी बोलीसे कहा कि महादेवजी श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुता जानते हैं।

बैनतेय संकर पहिं जाहू ❀ तात अनत पूछेहु जनि काहू ॥
तहं होइहि तव संसयहानी ❀ चलेउ बिहंग सुनत बिधिबानी ॥

हे गरुड़, तुम शङ्करजीके पास जाओ। हे तात, अन्य स्थानमें किसीसे मत पूछो। तुम्हारे सन्देहकी निवृत्ति वहीं होगी। ब्रह्माजीकी वाणी सुनते ही पक्षिराज गरुड़ चल दिये।

दो०—परमातुर बिहंगपति ❀ आयेउ तब मो पास।
जात रहेउँ कुबेरगृह ❀ रहिहु उमा कैलास ॥८४॥

तब पक्षिराज गरुड़ अत्यन्त आतुरतापूर्वक मेरे पास आये। हे पार्वती, उस समय मैं कुबेरके घरको जा रहा था और तुम कैलासपर थीं।

तेहि मम पद सादर सिरु नावा ❀ पुनि आपन संदेह सुनावा ॥
सुनि ता करि बिनीत मृदुबानी ❀ प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी ॥

गरुड़ने आदरके साथ मेरे चरणोंको शिर नवाया और फिर अपना सन्देह सुनाया। उनकी नम्रताभरी हुई कोमलवाणी सुनकर, हे भवानी, प्रेमके साथ मैंने कहा—

मिलिउ गरुड़ मारग महँ मोही ❀ कवन भाँति समुझावउँ तोही ॥
तबहिं होइ सब संसय भंगा ❀ जब बहु काल करिय सतसंगा ॥

हे गरुड़, तुम मुझे मार्गमें मिले हो। यहां मैं तुमको किस प्रकार समझाऊं? समस्त सन्देहकी निवृत्ति तभी होगी जब तुम बहुत कालपर्य्यन्त सत्सङ्ग करोगे।

सुनिअ तहाँ हरिकथा सुहाई ❀ नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई ॥
जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना ❀ प्रभु प्रतिपाद्य रामु भगवाना ॥

वहां सत्संगमें भगवान्‌की सुहावनी कथा सुननी चाहिये, जिसे मुनियोंने अनेक प्रकारसे गाया है और जिसमें आरंभ, मध्य और अंतमें प्रतिपाद्य प्रभु भगवान श्रीरामचन्द्रजी ही हैं।

नित हरिकथा होति जहँ भाई ❀ पठवउँ तहाँ सुनहु तुम्ह जाई ॥
जाइहि सुनत सकल संदेहा ❀ रामचरन होइहि अतिनेहा ॥

हे भाई, जहां नित्य हरिकथा होती है, वहां भेजता हूं। तुम जाकर सुनो। सुनते ही सब संदेह निवृत्त हो जायगा और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें अत्यन्त प्रेम हो जायगा।

दो०—बिनु सतसंग न हरिकथा ❀ तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु रामपद ❀ होइ न दृढ़ अनुराग ॥८५॥

सत्सङ्ग बिना भगवान्‌की कथा नहीं मिलती और इस कथाके बिना मोह नहीं भागता, मोह दूर हुए बिना श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ प्रेम नहीं होता।

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा ❀ किये जोग जप ग्यान बिरागा ॥
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला ❀ तहँ रह कागभुसुंडि सुसीला ॥

योग-जप करने और ज्ञान-वैराग्य होनेपर भी प्रेम बिना श्रीरामचन्द्रजी नहीं मिलते। उत्तर दिशामें सुन्दर नील पर्वत है, वहां सुन्दर शीलवान कागभुशुण्डजी रहते हैं।

राम-भगति-पथ परमप्रबीना ❀ ग्यानी गुनगृह बहुकालीना॥
रामकथा सो कहइ निरंतर ❀ सादर सुनहिं बिबिध बिहंगबर॥

वे श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिके मार्गमें चतुर हैं, ज्ञानी हैं, गुणोंके भाण्डार हैं और बहुत पुराने हैं। वे श्रीरामचन्द्रजीकी कथाको निरन्तर कहा करते हैं और तरह-तरहके श्रेष्ठ पक्षी आदरके साथ सुना करते हैं।

जाइ सुनहु तहं हरिगुन भूरी ❀ होइहि मोहजनित दुख दूरी॥
मैं जब तेहि सब कहा बुझाई ❀ चलेउ हरषि मम पद सिरु नाई॥

वहां जाकर भगवान्‌के असंख्य गुणोंको सुनो, इससे मोहसे उत्पन्न दुःख दूर हो जायगा। मैंने जब गरुड़से सब समझाकर कहा तब वे मेरे चरणोंको शिर नवाकर प्रसन्न होकर चल दिये।

ता तें उमा न मैं समुझावा ❀ रघुपति कृपा मरमु मैं पावा॥
होइहि कीन्ह कबहुं अभिमाना ❀ सो खोवइ चह कृपानिधाना॥

हे पार्वती, गरुड़जीको मैंने इस कारण नहीं समझाया कि श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मैंने सब भेद जान लिया कि गरुड़जीने कभी घमण्ड किया होगा। दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी उसे खोना चाहते हैं।

कछु तेहि तें पुनि मैं नहिं राखा ❀ समुझइ खग खगही कै भाखा॥
प्रभुमाया बलवंत भवानी ❀ जाहि न मोह कवन अस ग्यानी॥

फिर कुछ इस कारण भी गरुड़जीको मैंने नहीं रखा कि पक्षीकी भाषा पक्षी ही समझ सकता है। हे भवानी, प्रभुकी माया बड़ी बलवान है। ऐसा ज्ञानी कौन है जिसे वह न मोहित कर सके ?

दो०—ग्यानी भगत सिरोमनि ❀ त्रि-भुवन-पति कर जान।
ताहि मोह माया नर ❀ पावंर करहिं गुमान॥८६॥

गरुड़जी ज्ञानी हैं, भक्तशिरोमणि हैं, तीनों भुवनोंके स्वामीके वाहन हैं, उन्हें भी मायाने मोह लिया, फिर नीच मनुष्य अभिमान करते हैं!

सिव बिरंचि कहं मोहइ ❀ को हइ बपुरा आन।
अस जिय जानि भजहिं मुनि ❀ मायापति भगवान॥८७॥

यह माया महादेवजी और ब्रह्माजीको भी मोहित कर लेती है, फिर बेचारा दूसरा है ही क्या? अपने जीमें ऐसा जानकर ही मुनिजन मायापति भगवान श्रीरामचन्द्रजीका भजन करते हैं।

गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडी ❀ मति अकुंठ हरिभगति अखंडी ॥
देखि सैल प्रसन्न मन भयेऊ ❀ माया मोह सोच सब गयेऊ ॥

फिर, गरुड़जी वहां गये जहां कागभुशुण्डजी बसते हैं, जिनकी बुद्धि तीव्र और भगवान्‌की भक्ति अखण्ड है। पर्वत देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया और माया, मोह और शोच—सब जाता रहा।

करि तड़ाग मज्जनु जलपाना ❀ बट तर गयेउ हृदय हरषाना ॥
बृद्ध बृद्ध बिहंग तहँ आये ❀ सुनइ राम के चरित सुहाये ॥

सरोवरमें स्नान और जलपान करके हृदयमें प्रसन्न होकर गरुड़जी बड़के वृक्षके नीचे गये। वहां श्रीरामचन्द्रजीके सुहावने चरित सुननेके लिये बूढ़े-बूढ़े पक्षी आ गये थे।

कथा अरंभ करइ सोइ चाहा ❀ तेही समय गयेउ खगनाहा ॥
आवत देखि सकल खगराजा ❀ हरषेउ बायस सहित समाजा ॥

और कागभुशुण्डजी कथाका आरम्भ करना ही चाहते थे कि उसी समय पक्षियोंके स्वामी गरुड़जी वहां गये। पक्षिराज गरुड़को आता हुआ देखकर कागभुशुण्डजी सब समाजसमेत प्रसन्न हो गये।

अति आदर खगपति कर कीन्हा ❀ स्वागत पूछि सुआसन दीन्हा ॥
करि पूजा समेत अनुरागा ❀ मधुर बचन तब बोलेउ कागा ॥

उन्होंने पक्षिराजका बड़ा आदर किया और स्वागत पूछकर सुन्दर आसन दिया; फिर प्रेमके साथ पूजा करके कागभुशुण्डजी ये मधुर वचन बोले—

दो०—नाथ कृतारथ भयउँ मैं ❀ तव दरसन खगराज।
आयसु देहु सो करउँ अब ❀ प्रभु आयहु केहि काज ॥ ८८ ॥

हे नाथ, पक्षिराज, आपके दर्शन पाकर मैं कृतार्थ हुआ। हे प्रभो, किस कार्यके लिये आपका आना हुआ? आप आज्ञा दीजिये, वही मैं अब करूँ।

सदा कृतारथ रूप तुम्ह ❀ कह मृदुबचन खगेस।
जेहि कै अस्तुति सादर ❀ निज मुख कीन्हि महेस ॥ ८९ ॥

पक्षियोंके स्वामी गरुड़जी कोमल वचन कहने लगे कि आप सदा ही कृतार्थरूप हैं, जिनकी स्तुति महादेवजीने आदरके साथ अपने मुखसे की है।

सुनहु तात जेहि कारन आयउँ ❀ सो सब भयउ दरस तव पायउँ ॥
देखि परम पावन तव आस्रम ❀ गयउ मोह संसय नाना भ्रम ॥

हे तात, सुनो। जिस कारण मैं यहां आया हूं वह सब आपके दर्शन पानेसे पूरा हो गया। आपका परम पवित्र आश्रम देखकर मेरा संदेह, मोह, और अनेक प्रकारका भ्रम मिट गया।

अब श्री-राम-कथा अति पावनि ❀ सदा सुखद दुख-पुंज-नसावनि ॥
सादर तात सुनावहु मोही ❀ बार बार बिनवउं प्रभु तोही ॥

अब, हे तात, आप मुझे श्रीरामचन्द्रजीकी अत्यंत पवित्र, सदा सुख देनेवाली और दुःखोंके समूहोंको नष्ट कर देनेवाली कथा आदरके साथ सुनाइये। हे प्रभो, मैं आपकी बारबार विनती करता हूं।

सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता ❀ सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता ॥
भयउ तासु मन परम उछाहा ❀ लाग कहइ रघु-पति-गुन-गाहा ॥

गरुड़जीकी नम्र, सरल, प्रेमभरी, सुखदायी और अत्यंत पवित्र वाणी सुनते ही कागभुशुण्डजीके मनमें बड़ा उत्साह हो गया और वे श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा कहने लगे।

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी ❀ राम-चरित-सर कहेसि बखानी ॥
पुनि नारद कर मोह अपारा ❀ कहेसि बहुरि रावन अवतारा ॥
प्रभु-अवतार-कथा पुनि गाई ❀ तब सिसुचरित कहेसि मन लाई ॥

हे भवानी, पहिले ही कागभुशुण्डजीने बड़े प्रेमसे रामचरित-मानसरोवरको बखान कर कहा, फिर नारदजीका अपार मोह और फिर रावणका जन्म कहा। इसके अनंतर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके अवतारकी कथा कही और फिर मन लगाकर भगवान्‌का बालचरित कहा।

दो०—बालचरित कहि बिबिध बिधि ❀ मन महुं परमउछाह।
रिषिआगमनु कहेसि पुनि ❀ श्री-रघु-बीर-बिबाह ॥ ६० ॥

अनेक प्रकारसे बालचरित कहकर और मनमें अत्यंत उत्साहित होकर फिर विश्वामित्र ऋषिके आगमन और श्रीरामचन्द्रजीके विवाहका वर्णन किया।

बहुरि राम-अभिषेक-प्रसंगा ❀ पुनि नृपबचन राज-रस-भंगा ॥
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा ❀ कहेसि राम-लछिमन-संबादा ॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीके राज्याभिषेकका प्रसंग, फिर राजा दशरथके वचनोंके लिये राजतिलकके आनन्दका भंग, नगरनिवासियोंका विरह-विषाद और फिर श्रीरामचन्द्रजी और लक्ष्मणजीका संवाद—सब वर्णन किया।

बिपिनगवनु केवटअनुरागा ❀ सुरसरि उतरि निवास प्रयागा ॥
बालमीकि-प्रभु-मिलन बखाना ❀ चित्रकूट जिमि बस भगवाना ॥

वन-गमन, केवटका प्रेम, गंगाजीको उतरकर प्रयागमें निवास, और वाल्मीकि और प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका मिलाप वर्णन किया और फिर जिस प्रकार भगवान् चित्रकूटमें बसे, वह सब कहा।

सचिवागमनु नगर नृपमरना ❀ भरतागमनु प्रेम बहु बरना ॥
करि नृपक्रिया संग पुरबासी ❀ भरतु गये जहं प्रभु सुखरासी ॥

मंत्री सुमंतका अयोध्यापुरीमें आगमन, राजा दशरथकी मृत्यु, भरतजीका आगमन और प्रेम—सबका विस्तारके साथ वर्णन किया। राजा दशरथकी सब क्रिया करके नगरनिवासियोंको संग लेकर भरतजीका वहां जाना, जहां सुखकी राशि प्रभु श्रीरामचन्द्रजी थे।

पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाये ❀ लेइ पादुका अवधपुर आये ॥
भरतरहनि सुर-पति-सुत-करनी ❀ प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी ॥

फिर, श्रीरामचन्द्रजीका उनको अनेक प्रकारसे समझाना, खड़ाऊं लेकर भरतजीका अयोध्यापुरीको लौटना, भरतजीका रहना; देवराज इन्द्रके पुत्र जयन्तकी करतूत और फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजी और अत्रिमुनिकी भेंट—सबका वर्णन किया।

दो०—कहि बिराध बध जेहि बिधि ❀ देह तजी सरभंग।
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि ❀ प्रभु अगस्ति सतसंग ॥ ६१ ॥

विराधका वध कहकर जिस प्रकार शरभंग मुनिने शरीर त्याग किया था, वह कहा और फिर सुतीक्ष्णमुनिका प्रेम वर्णनकर प्रभु और अगस्त्यमुनिका सत्संग कहा।

कहि दंडक बन पावनताई ❀ गीध मइत्री पुनि तेहि गाई ॥
पुनि प्रभु पंचबटी कृत बासा ❀ भंजी सकल मुनिन्ह कै त्रासा ॥

फिर, दण्डकवनकी पवित्रता कहकर उन्होंने जटायु गीधकी मैत्रीको कहा। फिर प्रभुने पंचवटीमें जो वास किया था और सब मुनियोंका भय दूर कर दिया था, उसे कहा।

पुनि लछिमन उपदेस अनूपा ❀ सूपनखा जिमि कीन्ह कुरूपा ॥
खर-दूषन-बध बहुरि बखाना ❀ जिमि सबु मरमु दसानन जाना ॥

फिर लक्ष्मणजीको दिया हुआ अनुपम उपदेश कहा; जिस प्रकार शूर्पणखाको कुरूप किया था, वह कहा, फिर खरदूषण-वधका वर्णन किया और फिर रावणने जिस प्रकार सब भेद जाना था, वह सब कहा।

दस-कंधर-मारीच-बतकही ❀ जेहि बिधि भई सो सब तेहि कही ॥
पुनि मायासीता कर हरना ❀ श्री-रघु-बीर-बिरह कछु बरना ॥

रावण और मारीचकी जो बातचीत जिस प्रकार हुई थी, वह सब उन्होंने कही। फिर मायाकी सीताका हरण और श्रीरामचन्द्रजीके विरहका कुछ वर्णन किया।

पुनि प्रभु गीधक्रिया जिमि कीन्ही ❁ बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही ॥
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा ❁ जेहि बिधि गये सरोबरतीरा ॥

फिर जिस प्रकार प्रभुने जटायु गीधकी क्रिया की और कबंधको मारकर शबरीको गति दी, फिर जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी विरहका वर्णन करते हुए पंपासरोवरके तटपर गये, वह सब कहा।

दो०—प्रभु-नारद-संबाद कहि ❁ मारुति-मिलन-प्रसंग।
पुनि सुग्रीवंमिताई ❁ बालिप्रान कर भंग ॥ ६२ ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी और नारदजीका संवाद कहकर हनुमानजीसे मिलनेका प्रसंग कहा। फिर सुग्रीव-मैत्री और बालिके प्राणोंका नाश कहा।

कपिहि तिलक करि प्रभुकृत ❁ सैल प्रबरषन बास।
बरनत बरषा सरद कर ❁ रामरोष कपित्रास ॥ ६३ ॥

वानर सुग्रीवका राजतिलक करके प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने प्रवर्षण पर्वतपर वास किया, इसे कहकर वर्षा और शरदऋतुका वर्णन करते हुए श्रीरामचन्द्रजीके क्रोध और वानरोंके भयको कहा।

जेहि बिधि कपिपति कीस पठाये ❁ सीताखोजन सकल सिधाये ॥
बिबरप्रबेस कीन्ह जेहि भांती ❁ कपिन्ह बहोरि मिला संपाती ॥

कपिराज सुग्रीवने जिस प्रकार सीताजीको खोजनेके लिये बंदर भेजे और जिस प्रकार वे सब बिदा हुए, जिस प्रकार वानरोंने छिद्रमें प्रवेश किया और फिर जिस प्रकार उन्हें सम्पाती मिला—

सुनि सब कथा समीरकुमारा ❁ नाँघत भयउ पयोधि अपारा ॥
लंका कपि प्रबेस जिमि कीन्हा ❁ पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा ॥

सब कथा सुनकर पवनपुत्र हनुमानने अपार समुद्रका उल्लंघन किया और जिस प्रकार उन्होंने लंकामें प्रवेश किया और फिर जिस प्रकार सीताजीको धीरज बंधाया—

बन उजारि रावनहिं प्रबोधी ❁ पुर दहि नाँघउ बहुरि पयोधी ॥
आये कपि सब जहं रघुराई ❁ बैदेही कै कुसल सुनाई ॥

और वनको उजाड़कर, रावणको समझाकर उन्होंने जिस प्रकार लंकापुरीको जलाया और फिर समुद्रका उल्लंघन किया, फिर जिस प्रकार सब बन्दर जहां श्रीरामचन्द्रजी थे, वहां आये और सीताजीकी कुशलता सुनायी—

सेनसमेत जथा रघुबीरा ❀ उतरे जाइ बारि-निधि-तीरा ॥
मिला बिभीषनु जेहि बिधि आई ❀ सागरनिग्रह कथा सुनाई ॥

फिर जिस प्रकार सेनासमेत श्रीरामचन्द्रजी जाकर समुद्रके किनारे उतरे, जिस प्रकार आकर विभीषण मिला और जिस प्रकार समुद्रको वशमें किया, यह सब कथा सुनायी ।

दो०—सेतु बांधि कपिसेन जिमि ❀ उतरी सागरपार ।
गयउ बसीठी बीरबर ❀ जेहि बिधि बालिकुमार ॥६४॥

वानरोंकी सेना जिस प्रकार पुल बांधकर समुद्र-पार उतरी और वालिपुत्र वीरवर अंगद जिस प्रकार दूत बनकर गये, वह सब कहा ।

निसि - चर - कीस - लराई ❀ बरनेसि बिबिध प्रकार ।
कुंभकरन घननाद कर ❀ बल - पौरुष - संहार ॥६५॥

राक्षसों और वन्दरोंकी लड़ाई और कुम्भकर्ण और मेघनादका बल, पौरुष और वध—सबका अनेक प्रकारसे वर्णन किया ।

निसि-चर-निकर-मरन बिधि नाना ❀ रघु-पति-रावन-समर बखाना ॥
रावनवध मंदोदरि सोका ❀ राजु बिभीषन देव असोका ॥

अनेक प्रकारसे राक्षसोंके समूहोंके मरण और श्रीरामचन्द्रजी और रावणके संग्रामका वर्णन किया । रावणका वध, मंदोदरीका शोक, विभीषणका राज्यतिलक, देवताओंकी प्रसन्नता—

सीता - रघु - पति - मिलन बहोरी ❀ सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी ॥
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता ❀ अवध चले प्रभु कृपानिकेता ॥

सीताजी और श्रीरामचन्द्रजीका पुनर्मिलन, देवताओंकी स्तुति, जिसे उन्होंने हाथ जोड़कर किया था, सबका वर्णन किया । फिर वानरोंसमेत पुष्पक विमानपर चढ़कर जिस प्रकार दयाधाम प्रभु श्रीरामचन्द्रजी अयोध्यापुरीको विदा हुए—

जेहि बिधि राम नगर निज आये ❀ बायस बिसद चरित सब गाये ॥
कहेसि बहोरि रामअभिषेका ❀ पुर बरनन नृपनीति अनेका ॥

और जिस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी अपने नगरमें आये, वह सब पवित्र चरित कागभुशुण्डजीने कहे । फिर उन्होंने श्रीरामचन्द्रजीका राज्याभिषेक कहा और फिर अयोध्यापुरीका वर्णन किया और अनेक प्रकारकी राजनीति कही ।

कथा समस्त भुसुंडि बखानी ❁ जो मैं तुम्ह सन कही भवानी ॥
सुनि सब रामकथा खगनाहा ❁ कहत बचन मन परमउछाहा ॥

हे भवानी, मैंने तुमसे जो कथा कही है, उस सबको कागभुशुण्डजीने वर्णन किया। श्रीरामचन्द्रजीकी सब कथा सुनकर पक्षिराज गरुड़ मनमें अत्यन्त उत्साहित होकर ये वचन कहने लगे—

सो०—गयेउ मोर संदेह ❁ सुनेउँ सकल रघु-पति-चरित।
भयउ राम-पद-नेह ❁ तव प्रसाद बायसतिलक ॥९६॥

मैंने श्रीरामचन्द्रजीका सम्पूर्ण चरित सुना, अब मेरा संदेह दूर हुआ। हे कौओंमें भूषणरूप कागभुशुण्डजी, आपकी दयासे मुझे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हो गया।

मोहि भयउ अति मोह ❁ प्रभुबंधन रन महुँ निरखि।
चिदानंद संदोह ❁ रामु बिकल कारन कवन ॥९७॥

संग्राममें प्रभु श्रीरामचन्द्रजीका बंधना देखकर मुझे अत्यन्त मोह हो गया था कि जो श्रीरामचन्द्रजी चैतन्य और आनन्दके समूह हैं वे व्याकुल हुए, इसका क्या कारण है?

देखि चरित अति नर अनुसारी ❁ भयउ हृदय मम संसय भारी ॥
सोइ भ्रम अब हितकर मैं जाना ❁ कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीके चरितोंको बिलकुल ही मनुष्योंके अनुसार देखकर मेरे हृदयमें भारी संशय हो गया था। वही भ्रम अब मैंने जान लिया कि मेरे लिये हितकारी हुआ। दयानिधान भगवान्ने मुझपर दया की।

जो अतिआतप ब्याकुल होई ❁ तरुछाया सुख जानइ सोई ॥
जौं नहिं होत मोह अति मोही ❁ मिलतेउँ तात कवन बिधि तोही ॥

जो मनुष्य धूपसे अत्यन्त व्याकुल होता है वही वृक्षकी छायाका सुख जानता है। हे तात, यदि मुझे अत्यन्त मोह नहीं होता तो तुमसे मैं किस तरह मिलता?

सुनतेउँ किमि हरिकथा सुहाई ❁ अतिबिचित्र बहु बिधि तुम्ह गाई ॥
निगमागम पुरानमत एहा ❁ कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा ॥

और भगवान्की अत्यन्त विचित्र सुहावनी कथा कैसे सुनता, जिसे तुमने बहुत तरहसे गाया है। वेद, शास्त्र और पुराण—सबका यह मत है और सिद्धजन एवं मुनिजन भी कहते हैं और इसमें संदेह भी नहीं है कि—

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही ❁ चितवहिं रामु कृपा करि जेही ॥
रामकृपा तव दरसनु भयऊ ❁ तव प्रसाद मम संसय गयऊ ॥

जिसको श्रीरामचन्द्रजी कृपा करके देखते हैं उसीको विशुद्ध संतजन मिलते हैं। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे तुम्हारा दर्शन हो गया और तुम्हारी दयासे मेरा संदेह निवृत्त हो गया।

दो०—सुनि बिहंगपति बानी ❀ सहित बिनय अनुराग।
पुलक गात लोचन सजल ❀ मन हरषेउ अति काग॥ ६८॥

पक्षिराज गरुड़की नम्रतासहित प्रेमभरी वाणी सुनकर कागभुशुण्डजी मनमें अत्यन्त प्रसन्न हुए, उनका शरीर पुलकायमान हो गया और नेत्रोंमें जल भर आया।

स्रोता सुमति सुसील सुचि ❀ कथा रसिक हरिदास।
पाइ उमा अतिगोप्य मति ❀ सज्जन करहिं प्रकास॥ ६९॥

महादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती, सुन्दर बुद्धिवाले, सुशील, पवित्र, कथारसिक और भगवानका सेवक श्रोता पाकर संतजन अत्यन्त गोपनीय मत भी प्रकट कर देते हैं।

बोलेउ कागभुसुंडि बहोरी ❀ नभगनाथ पर प्रीति न थोरी॥
सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे ❀ कृपापात्र रघुनायक केरे॥

फिर कागभुशुण्डजी बोले। पक्षिराज गरुड़पर उन्हें बड़ा प्रेम हुआ। उन्होंने कहा—हे नाथ, तुम सब प्रकार मेरे पूज्य हो और श्रीरामचन्द्रजीके कृपापात्र हो।

तुम्हहिं न संसय मोह न माया ❀ मो पर नाथ कीन्हि तुम्ह दाया॥
पठइ मोहमिस खगपति तोही ❀ रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही॥

तुम्हें न संशय है, न मोह, और न माया ही है। हे नाथ, तुमने मुझपर दया की है। हे पक्षिराज, मोहके मिससे तुम्हें भेजकर श्रीरामचन्द्रजीने मुझे बड़ाई दी है।

तुम्ह निज मोह कहा खग साईं ❀ सो नहिं कछु आचरज गोसाईं॥
नारद भव बिरंचि सनकादी ❀ जे मुनिनायक आतमबादी॥

हे पक्षिराज, तुमने अपना मोह कहा; परन्तु हे स्वामिन, वह कुछ आश्चर्यजनक नहीं है। नारद, शिव, ब्रह्मा, और सनकादि मुनीश्वर—जो आत्मवादी हैं,

मोह न अंध कीन्ह केहि केही ❀ को जग काम नचाव न जेही॥
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा ❀ केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥

मोहने किस-किसको अंधा नहीं किया; इस संसारमें ऐसा कौन है, जिसे कामने नहीं नचाया हो; वह कौन है, जिसे तृष्णाने पगला नहीं बनाया हो; और ऐसा कौन है, जिसका हृदय क्रोधने जलाया न हो?

दो०—ग्यानी तापस सूर कबि ❀ कोबिद गुनआगार ।
केहि कै लोभ बिडंबना ❀ कीन्हि न एहिं संसार ॥ १०० ॥

इस संसारमें ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, विद्वान् और गुणोंका भाण्डार कौन है, जिसकी विडंबना लोभने न की हो।

श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि ❀ प्रभुता बधिर न काहि ।
मृग-लोचनि-लोचन सर ❀ को अस लाग न जाहि ॥१०१॥

लक्ष्मीके मदने किसको टेढ़ा नहीं किया, प्रभुताने किसको बहिरा नहीं बना दिया, और ऐसा कौन है जिसे हिरणके समान नेत्रोंवाली रमणीके नयनवाण न चुभे हों ?

गुन कृत सन्यपात नहिं केही ❀ कोउ न मान मद तजेउ निबेही ॥
जोबनज्वर केहि नहिं बलकावा ❀ ममता केहि कर जसु न नसावा ॥

सत, रज, और तम—इन गुणोंका किया हुआ सन्निपात किसे नहीं हुआ ? अभिमान और मदको त्याग कर निर्वाह किया हो, ऐसा कोई नहीं है। यौवनके ज्वरने किसले प्रलाप नहीं कराया और ममताने किसका यश नहीं नष्ट कर दिया ?

मच्छर काहि कलंक न लावा ❀ काहि न सोक समीर डोलावा ॥
चिंतासाँपिन को नहिं खाया ❀ को जग जाहि न ब्यापी माया ॥

मत्सरने किसको कलंक नहीं लगाया ? शोकरूपी पवनने किसको नहीं हिला दिया ? चिन्तारूपी सर्पिणीने किसको नहीं खाया ? संसारमें ऐसा कौन है, जिसे माया न व्यापी हो ?

कीट मनोरथ दारु सरीरा ❀ जेहि न लाग घुन को अस धीरा ॥
सुत बित लोक ईषना तीनी ❀ केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी ॥

ऐसा धीर मनुष्य कौन है, जिसके शरीररूपी काठमें मनोरथरूपी घुनका कीड़ा न लगा हो ? पुत्र, धन और जन—इन तीनोंकी लालसाने किसकी बुद्धिको मलिन नहीं किया ?

यह सब माया कर परिवारा ❀ प्रबल अमित को बरनइ पारा ॥
सिव चतुरानन जाहि डेराहीं ❀ अपर जीव केहि लेखे माहीं ॥

यह सब मायाका परिवार है और अत्यन्त बलवान और सीमारहित है। इसका वर्णन कर कौन पार पा सकता है ? ब्रह्मा और शिव भी जिससे डरते हैं, फिर अन्यान्य जीवोंकी गिनती ही क्या है ?

दो०—ब्यापि रहेउ संसार महुँ ❀ मायाकटक प्रचंड ।
सेनापति कामादि भट ❀ दंभ कपट पाषंड ॥ १०२ ॥

संसारमें मायाकी प्रचंड सेना व्याप रही है, जिसके सेनापति कामादि हैं, और योद्धा हैं दम्भ, कपट और पाखंड।

सो दासी रघुबीर कै ❀ समुझे मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा बिनु ❀ नाथ कहउं पद रोपि ॥ १०३ ॥

यह माया श्रीरामचन्द्रजीकी दासी है, समझनेपर वह मिथ्या भी मालूम होती है, परन्तु हे नाथ, मैं पांव रोपकर कहता हूं कि श्रीरामचन्द्रजीकी कृपाके बिना वह नहीं छूटती।

जो माया सब जगहि नचावा ❀ जासु चरित लखि काहु न पावा ॥
सोइ प्रभु भ्रूबिलास खगराजा ❀ नाच नटी इव सहित समाजा ॥

जो माया सारे संसारको नचाती है और जिसका चरित किसीने जान नहीं पाया, हे पक्षिराज, वही अपने सब समाजसमेत प्रभु श्रीरामचन्द्रजीके भृकुटि-निर्देशपर नटीकी भांति नाचती है।

सोइ सच्चिदानंदघन रामा ❀ अज बिग्यानरूप बलधामा ॥
ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता ❀ अखिल अमोघशक्ति भगवंता ॥

श्रीरामचन्द्रजी वही सत्, चित् और आनन्दघन हैं, अजन्मा हैं, विज्ञानरूप हैं, बलके स्थान हैं, व्यापक हैं, व्याप्य हैं, अखण्ड हैं, अनन्त हैं, सम्पूर्ण हैं, अमोघशक्ति हैं और भगवान् हैं।

अगुन अदभ्र गिरागोतीता ❀ सबदरसी अनवद्य अजीता ॥
निर्मल निराकार निर्मोहा ❀ नित्य निरंजन सुखसंदोहा ॥

वे गुणरहित, परिपूर्ण, वाणी आदि इन्द्रियोंसे परे, सर्वदर्शी, अनिंद्य, अजेय, निर्मल, निराकार, मोहरहित, नित्य, निरंजन और सुखके समूह हैं।

प्रकृतिपार प्रभु सब-उर-बासी ❀ ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी ॥
इहां मोह कर कारन नाहीं ❀ रबिसनमुख तम कबहुं कि जाहीं ॥

वे प्रकृतिकी पहुंचसे बाहर प्रभु, सबके हृदयमें वास करनेवाले, ब्रह्म, इच्छाशून्य, शुद्ध और अविनाशी हैं। यहां मोहका कारण नहीं। सूर्यके सामने भी क्या कभी अंधकार जाता है ?

दो०—भगत हेतु भगवान प्रभु ❀ राम धरेउ तनु भूप।
किये चरित पावन परम ❀ प्राकृत-नर-अनुरूप ॥ १०४ ॥

मोहने किस-किसगवान् प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने राजाका शरीर धारण किया और संसारके साधारण मनुष्योंके . है, जिसे तृष्णाने परम चरित किये।

जथा अनेक बेष धरि ● नृत्य करइ नट कोइ।
सोइ सोइ भाव देखावइ ● आपुन होइ न सोइ ॥ १०५ ॥

जिस प्रकार कोई नट अनेक भेष रखकर नृत्य करता है और वही (भेषके अनुरूप ही) भाव दिखलाता है, परन्तु स्वयं वही नहीं हो जाता—

असि रघु - पति - लीला उरगारी ● दनुजबिमोहनि जन - सुख - कारी ॥
जे मतिमलिन बिषयबस कामी ● प्रभु पर मोह धरहिं इमि स्वामी ॥

हे साँपोंके शत्रु गरुड़जी, राक्षसोंको मोहमें डाल देनेवाली और भक्तोंको सुख देनेवाली श्रीरामचन्द्रजीकी लीला ऐसी ही है। जो मनुष्य मलिन बुद्धिवाले, कामी और विषयोंके वशमें हैं, वे, हे स्वामिन्, प्रभुमें मोह होनेका आरोप इस प्रकार करते हैं—

नयनदोष जा कहुं जब होई ● पीतबरन ससि कहुं कह सोई ॥
जब जेहि दिसिभ्रम होइ खगेसा ● सो कह पच्छिम उयउ दिनेसा ॥

जिस किसीको जब नेत्ररोग हो जाता है तब वही चन्द्रमाको पीले रङ्गका कहने लगता है। हे पक्षिराज, जब जिसको दिशाभ्रम हो जाता है तब वही कहने लगता है कि पश्चिममें सूर्योदय हुआ है।

नौकारूढ़ चलत जग देखा ● अचल मोहबस आपुहि लेखा ॥
बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी ● कहहिं परसपर मिथ्याबादी ॥

नौकारूढ़ मनुष्यको यह जगत चलता हुआ दीख पड़ता है और मोहके वशमें होकर अपनेको स्थिर मान लेता है। बालक घूमते हैं, परन्तु मकानादि नहीं घूमते, किन्तु फिर भी वे सब परस्पर घरका घूमना ही कहते और झूठ बोलते हैं।

हरि बिषैक अस मोह बिहंगा ● सपनेहुं नहिं अग्यान-प्रसंगा ॥
मायाबस मतिमंद अभागी ● हृदय जवनिका बहु बिधि लागी ॥
ते सठ हठबस संसय करहीं ● निज अग्यान राम पर धरहीं ॥

हे गरुड़, भगवान्-विषयक मोह भी ऐसा ही है। भगवान्में अज्ञानका संसर्ग तो स्वप्नमें नहीं है। जो दुष्ट हैं, मायाके वशमें हैं, मन्दबुद्धिवाले हैं, अभागे हैं और जिनके हृदयपर बहुत तरहका परदा पड़ा हुआ है वे हठके वशमें होकर संदेह करते हैं और अपना अज्ञान श्रीरामचन्द्रजीपर आरोपित करते हैं।

दो०—काम-क्रोध-मद-लोभ-रत ● गृहासक्त दुखरूप।
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं ● मूढ़ परे तमकूप ॥१०६॥

जो काम, क्रोध, मद और लोभमें आसक्त हैं और दुःखरूप घरमें फंसे हुए हैं वे मूर्ख अंधेरे कुएंमें पड़े हुए हैं। वे श्रीरामचन्द्रजीको किस प्रकार जान सकते हैं ?

निर्गुनरूप सुलभ अति ❀ सगुन न जानहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित ❀ सुनि मुनिमन भ्रम होइ ॥१०७॥

निर्गुणरूप अत्यन्त सुलभ है, पर सगुण रूपको कोई नहीं जानता; क्योंकि इसमें अनेक लीलाएं हैं, जो सुगम और अगम दोनों ही हैं और जिन्हें सुनकर मुनियोंके मनको भी भ्रम हो जाता है।

सुनु खगेस रघु-पति-प्रभुताई ❀ कहउं जथामति कथा सुहाई॥
जेहि बिधि मोह भयउ प्रभु मोही ❀ सो सब कथा सुनावउं तोही॥

हे पक्षिराज, श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताई सुनो, जिनकी सुहावनी कथा मैं अपनी बुद्धिके अनुसार कहता हूं। हे प्रभो, जिस प्रकार मुझे मोह हुआ, वह सब कथा तुम्हें सुनाता हूं।

राम - कृपा - भाजन तुम्ह ताता ❀ हरि-गुन-प्रीति मोहि सुखदाता॥
तातें नहिं कछु तुम्हहिं दुरावउं ❀ परम रहस्य मनोहर गावउं॥

हे तात; तुम श्रीरामचन्द्रजीके कृपापात्र हो, भगवान्के गुणोंमें तुम्हारी प्रीति है, जो मुझे सुख देनेवाले हैं। इस कारण, मैं तुमसे कुछ नहीं छिपाता और अत्यन्त मनोहर रहस्य गाता हूं।

सुनहु राम कर सहज सुभाऊ ❀ जन अभिमान न राखहिं काऊ॥
संसृतमूल सूलप्रद नाना ❀ सकल-सोक-दायक अभिमाना॥

सुनो, यह श्रीरामचन्द्रजीका सहज स्वभाव है कि वे अपने सेवकका अभिमान कभी नहीं रहने देते। अभिमान संसारका मूल है; अनेक प्रकारकी पीड़ाओंको देनेवाला है और सभी तरहके शोकोंको भी देनेवाला है।

ता तें करहिं कृपानिधि दूरी ❀ सेवक पर ममता अति भूरी॥
जिमि सिसुतन ब्रन होइ गोसाईं ❀ मातु चिराव कठिन की नाईं॥

इसी कारण दयानिधान श्रीरामचन्द्रजी उसे दूर कर देते हैं, क्योंकि उन्हें अपने सेवकपर अत्यन्त अधिक ममता है। हे स्वामिन्, जैसे बालकके शरीरमें यदि फोड़ा हो जावे तो माता उसे चिरा देती है, मानों कोई कठोर हो।

दो०—जदपि प्रथम दुख पावइ ❀ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि-नास-हित जननी ❀ गनत न सो सिसुपीर ॥१०८॥

यद्यपि बालक पहिले दुःख पाता और अधीर होकर रोता है तथापि माता व्याधिका नाश होनेके लिये बालककी उस पीड़ाको नहीं गिनती।

तिमि रघुपति निजदास कर ❀ हरहिं मान हित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं ❀ कस न भजसि भ्रम त्यागि॥१०९॥

उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजी अपने सेवकका कल्याण करनेके लिये अभिमान दूर कर देते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि ऐसे प्रभुको तू अपना भ्रम छोड़कर क्यों नहीं भजता।

रामकृपा आपनि जड़ताई ❀ कहउँ खगेस सुनहु मन लाई॥
जब जब राम मनुजतनु धरहीं ❀ भक्त हेतु लीला बहु करहीं॥

हे पक्षिराज गरुड़, मन लगाकर सुनो। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मैं अपनी जड़ताका वर्णन करता हूँ। श्रीरामचन्द्रजी जब जब मनुष्य-शरीर धारण करते और भक्तोंके लिये बहुतसी लीलाएं करते हैं,

तब तब अवधपुरी मैं जाऊँ ❀ बालचरित बिलोकि हरषाऊँ॥
जनम महोत्सव देखउँ जाई ❀ बरष पाँच तहँ रहउँ लोभाई॥

तब-तब मैं अयोध्यापुरीको जाता और बालचरित देखकर प्रसन्न होता हूँ। मैं जाकर श्रीरामचन्द्रजीके जन्मका महोत्सव देखता और मोहित होकर पांच वर्षतक रहता हूँ।

इष्टदेव मम बालक रामा ❀ सोभा बपुष कोटि-सत-कामा॥
निज-प्रभु बदन निहारि निहारी ❀ लोचन सुफल करउँ उरगारी॥
लघु वायसबपु धरि हरिसंगा ❀ देखउँ बालचरित बहुरंगा॥

मेरे इष्टदेव बालस्वरूप श्रीरामचन्द्रजी हैं, जिनके शरीरकी शोभा सौ करोड़ कामदेवोंके समान है। हे गरुड़, अपने प्रभुका मुख देख-देखकर मैं अपने नेत्र सफल करता हूँ। कौएका छोटा शरीर धारणकर और भगवानके संग रहकर मैं अनेक प्रकारके बालचरित देखता हूँ।

दो०—लरिकाईं जहँ जहँ फिरहिं ❀ तहँ तहँ संग उड़ाउँ।
जूठनि परइ अजिर महँ ❀ सोइ उठाइ करि खाउँ॥११०॥

लड़कपनमें जहां-जहां भगवान फिरते वहां-वहां मैं उनके संग उड़कर जाता और आंगनमें जो जूठन गिर पड़ती उसे ही उठाकर खा लेता था।

एक बार अतिसय सब ❀ चरित किये रघुबीर।
सुमिरत प्रभुलीला सोइ ❀ पुलकित भयउ सरीर॥१११॥

श्रीरामचन्द्रजीने सब चरित बहुत अधिक किये, परंतु एक बार प्रभुने जो लीला की, वही स्मरणकर मेरा शरीर पुलकित हो गया है।

कहइ भुसुंडि सुनहु खगनायक ❀ रामचरित सेवक-सुख-दायक ॥
नृपमंदिर सुंदर सब भाँती ❀ खचित कनक मनि नाना जाती ॥

कागभुशुण्डजी कहने लगे कि हे पक्षिराज, सुनो। श्रीरामचन्द्रजीका चरित सेवकोंको सुख देनेवाला है। राजमहल सब प्रकार सुन्दर था, वहां सोनेमें अनेक जातिकी मणियां जड़ी हुई थीं।

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई ❀ जहं खेलहिं नित चारिउ भाई ॥
बालबिनोद करत रघुराई ❀ बिचरत अजिर जननि सुख-दाई ॥

उस सुन्दर आंगनका वर्णन नहीं किया जाता, जहां चारों भाई नित्य खेला करते थे। माताको सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी बालविनोद करते और आंगनमें फिरते थे।

मरकतमृदुल कलेवर स्यामा ❀ अंग अंग प्रति छबि बहु कामा ॥
नव-राजीव-अरुन मृदु चरना ❀ पदज रुचिर नख ससि-दुति-हरना ॥

उनका शरीर मरकत मणिके समान श्याम और कोमल था, उनके प्रत्येक अंगमें असंख्य कामदेवोंकी शोभा थी, उनके कोमल चरण नये कमलके समान लाल थे और उनके चरणोंकी अंगुलियोंके सुन्दर नख चन्द्रमाकी कान्तिको हरनेवाले थे।

ललित अंक कुलिसादिक चारी ❀ नूपुर चारु मधुर-रव-कारी ॥
चारु पुरट-मनि-रचित बनाई ❀ कटि किंकिनि कल मुखर सुहाई ॥

उनके चरणोंमें वज्र, अंकुश, ध्वज और कमल—चारों सुन्दर चिह्न थे, मधुर शब्द करनेवाले सुन्दर नूपुर थे और उनकी कमरमें सोनेकी सुन्दर किङ्किणी थी, जो मणियां जड़कर बनायी गयी थी और जिसका सुन्दर शब्द बड़ा सुहावना लगता था।

दो०—रेखा त्रय सुंदर उदर ❀ नाभि रुचिर गंभीर।
उर आयत भ्राजत बिबिध ❀ बालबिभूषन बीर ॥ ११२ ॥

उनके उदरमें तीन सुन्दर रेखाएँ थीं, सुन्दर गहरी नाभि थी, विशाल वक्षस्थल था और उनके शरीरपर बालकोंके तरह-तरहके वीर-भूषण शोभा पा रहे थे।

अरुन पानि नख करज मनोहर ❀ बाहु बिसाल बिभूषन सुंदर ॥
कंध बालकेहरि दर ग्रीवाँ ❀ चारु चिबुक आनन छबिसीवाँ ॥

लाल हाथ, मनोहर नख और उँगलियां, विशाल बाहु, सुन्दर भूषण, सिंहके बच्चेके समान कंधे, शङ्खके समान कंठ, सुन्दर ठुड्डी, शोभाकी सीमारूपी मुख,

कलबल बचन अधर अरुनारे ❀ दुइ दुइ दसन बिसद बर बारे ॥
ललित कपोल मनोहर नासा ❀ सकल सुखद ससि-कर-सम हाँसा ॥

तोतले वचन, गुलाबी होंठ, नये निकले हुए सुन्दर चमकीले दो-दो दांत, सुन्दर गाल, मनोहर नाक, चन्द्रमाकी किरणोंके समान सबको सुख देनेवाली हँसी—

नील-कंज-लोचन भवमोचन ❀ भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥
बिकट भृकुटि सम स्रवन सुहाये ❀ कुंचित कच मेचक छबि छाये ॥

संसारको छुड़ा देनेवाले नीले कमलके समान नेत्र और मस्तकपर गोरोचनका तिलक—सब शोभित हो रहे थे। भौंहें टेढ़ी और कान बराबर और सुन्दर थे, काले घुंघरवाले बालोंपर तो शोभाही छायी हुई थी।

पीत झीनि झिगुली तन सोही ❀ किलकनि चितवनि भावति मोही ॥
रूपरासि नृप-अजिर-बिहारी ❀ नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी ॥

उनके शरीरमें पीली और पतली झंगुलिया शोभित हो रही थी, उनका किलकारी देना और उनकी चितवन मुझे प्रिय लगती थी। राजा दशरथके आंगनमें विहार करनेवाले रूपकी राशि श्रीरामचन्द्रजी अपने प्रतिविम्बको देखकर नाचते थे।

मोहि सन करहिं बिबिध बिधि क्रीड़ा ❀ बरनत चरित होत मोहि ब्रीड़ा ॥
किलकत मोहि धरन जब धावहिं ❀ चलउं भागि तब पूप देखावहिं ॥

मुझसे वे अनेक प्रकारकी क्रीड़ा करते थे। वह सब चरित-वर्णन करनेमें मुझे लज्जा आती है। किलकारी देते हुए जब वे मुझे पकड़ने दौड़ते, मैं भाग जाता था, तब वे मुझे पूआ दिखलाते थे।

दो०—आवत निकट हंसहिं प्रभु ❀ भाजत रुदन कराहिं।
जाउं समीप गहन पद ❀ फिर फिरि चितइ पराहिं ॥११३॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मेरे पास आते ही हँसने लगते और भागते ही रोने लग जाते थे, मैं उनके चरण पकड़नेके लिये पास जाता था और वे फिर-फिरकर देखते और भागते थे।

प्राकृत सिसु इव लीला ❀ देखि भयउ मोहि मोह।
कवन चरित्र करत प्रभु ❀ चिदानन्दसंदोह ॥११४॥

इस प्रकार साधारण बालककी भांति लीला देखकर मुझे मोह हुआ कि प्रभो श्रीरामचन्द्रजी, जो चैतन्य-स्वरूप और आनन्दके समूह हैं, कैसे चरित कर रहे हैं?

इतना मन आनत खगराया ❀ रघु-पति-प्रेरित ब्यापी माया ॥
सो माया न दुखद मोहि काहीं ❀ आन जीव इव संसृति नाहीं ॥

हे पक्षिराज, मनमें इतना लाते ही श्रीरामचन्द्रजीकी प्रेरणासे माया व्याप गयी। वह माया मुझको दुःख देनेवाली नहीं हुई और अन्य जीवोंकी भांति संसार-आवागमन—नहीं भोगना पड़ा।

नाथ इहाँ कछु कारन आना ❀ सुनहु सो सावधान हरिजाना ॥
ग्यान अखंड एक सीतावर ❀ मायाबस्य जीव सचराचर ॥

हे नाथ, हे विष्णु-वाहन, यहां कुछ और ही कारण था, उसे सावधान होकर सुनो। अखण्ड ज्ञानस्वरूप एक सीतापति श्रीरामचन्द्रजी ही हैं और चर और अचर—सब जीव मायाके वशमें हैं।

जौं सब के रह ग्यान एक रस ❀ ईस्वर जीवहिं भेद कहहु कस ॥
मायाबस्य जीव अभिमानी ❀ ईसबस्य माया गुनखानी ॥

यदि संसारका ज्ञान एकरस रहे तो भला बतलाओ, ईश्वर और जीवमें भेद ही कैसा? अभिमानी जीव मायाके वशमें है और गुणोंकी खान वह माया ईश्वरके अधीन है।

परबस जीव स्वबस भगवंता ❀ जीव अनेक एक श्रीकंता ॥
मुधा भेद जद्यपि कृत माया ❀ बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया ॥

जीव पराधीन है और भगवान् हैं स्वाधीन, जीव असंख्य हैं और लक्ष्मीपति भगवान् हैं एक। मायाका किया हुआ भेद यद्यपि व्यर्थ है तथापि करोड़ उपाय करनेपर भी वह भगवान्‌की कृपा बिना नहीं जाती।

दो०—रामचन्द्र के भजन बिनु ❀ जो चह पद निर्बान।
ग्यानवंत अपि सो नर ❀ पसु बिनु पूंछ बिखान ॥११५॥

श्रीरामचन्द्रजीके भजन बिना जो मनुष्य मोक्षपद चाहता है वह ज्ञानवान होनेपर भी सींग-पूंछरहित पशु ही है।

राकापति षोड़स उअहिं ❀ तारा - गन - समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइय ❀ बिनु रबि राति न जाइ ॥११६॥

सोलहों कलाओंसमेत चन्द्रमा उदय होवे और तारागणोंका समूह भी रहे और समस्त पर्वतोंमें आग लगा दी जाय—तोभी सूर्य बिना रात्रि नहीं दूर होती।

ऐसेहि बिनु हरिभजन खगेसा ❀ मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा ॥
हरि सेवकहिं न ब्याप अबिद्या ❀ प्रभुप्रेरित ब्यापइ तेहि बिद्या ॥

हे पक्षिराज, इसी प्रकार भगवान्‌के भजन बिना जीवोंका क्लेश नहीं मिटता। भगवान्‌के सेवकको अविद्या नहीं व्यापती। प्रभुकी प्रेरणासे उसे विद्या ही व्यापती है।

ता तें नास न होइ दासकर ❀ भेद भगति बाढ़इ बिहंगबर ॥
भ्रम तें चकित राम मोहि देखा ❀ बिहँसे सो सुनु चरित बिसेखा ॥

हे पक्षिश्रेष्ठ गरुड़, इसी कारण सेवकका नाश नहीं होता और भक्ति बढ़ती है। श्रीरामचन्द्रजीने मुझे भ्रमसे चकित हुआ देखा और हँसने लगे। अब उसका अनुपम चरित सुनो—

तेहि कौतुक कर मरमु न काहू ❀ जाना अनुज न मातुपिताहू ॥
जानुपानि धाये मोहि धरना ❀ स्यामलगात अरुन-कर-चरना ॥

उस क्रीड़ाका भेद न छोटे भाइयोंने और न माता-पिताहीने—किसीने भी न जाना। श्याम शरीर और लाल-लाल हाथों और चरणोंवाले श्रीरामचन्द्रजी घुटनोंके बल चलते हुए मुझे पकड़ने दौड़े।

तब मैं भागि चलेउँ उरगारी ❀ राम गहन कहुँ भुजा पसारी ॥
जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा ❀ तहँ हरिभुज देखउँ निज पासा ॥

हे गरुड़, तब मैं भाग चला और श्रीरामचन्द्रजीने मुझे पकड़नेके लिये अपनी भुजा फैलायी। मैं ज्यों-ज्यों दूर आकाशमें उड़ता था त्यों-त्यों वहीं भगवान्‌की भुजा अपने पास ही देखता था।

दो०—ब्रह्मलोक लगि गयउ मैं ❀ चितयउँ पाछ उड़ात।
जुग अंगुल कर बीच सब ❀ रामभुजहिं मोहि तात ॥११७॥

हे तात, मैं ब्रह्मलोकतक गया और उड़ते हुए जब पीछे देखा तब मुझमें और श्रीरामचन्द्रजीकी भुजामें कुल दो अंगुलका अन्तर पाया।

सप्तावरन भेद करि ❀ जहाँ लगे गति मोरि।
गयउँ तहाँ प्रभु भुज निरखि ❀ ब्याकुल भयउँ बहोरि ॥११८॥

जल, वायु, अग्नि, आकाश, अहंकार, महत्तत्व—प्रकृतिके सात आवरणोंको भेदकर जहाँतक मेरी गति थी, मैं गया; परन्तु फिर भी वहां जब मैंने प्रभुकी भुजा देखी तब मैं व्याकुल हो गया।

मूदेउँ नयनत्रसित जब भयऊँ ❀ पुनि चितवत कोसलपुर गयऊँ ॥
मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं ❀ बिहँसत तुरत गयउँ मुख माहीं ॥

जब भयभीत हो गया, तब मैंने नेत्र बन्द कर लिये। फिर जब देखा तब अयोध्यापुरीमें पहुंच गया। मुझे देखकर श्रीरामचन्द्रजी मुस्कुराने लगे, उनके मुस्कुराते ही मैं तुरंत उनके मुखमें चला गया।

उदर माँझ सुनु अंडज राया ❀ देखेउँ बहु ब्रह्मांडनिकाया ॥
अति बिचित्र तहँ लोक अनेका ❀ रचना अधिक एक तें एका ॥

हे पक्षिराज, सुनो। उनके पेटमें मैंने बहुतसे ब्रह्माण्डोंके समूह देखे। वहां अत्यन्त विचित्र अनेक लोक थे, जिनकी रचना एक-से-एक बढ़-चढ़कर थी।

कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा ❀ अगनित उडुगन रबि रजनीसा ॥
अगनित लोकपाल जम काला ❀ अगनित भूधर भूमि बिसाला ॥

करोड़ों ब्रह्मा, करोड़ों शिव, असंख्य तारे, सूर्य और चन्द्रमा, अगणित लोकपाल, यम और काल, अगणित पर्वत, विशाल पृथ्वी—

सागर सरि सर बिपिन अपारा ❀ नाना भाँति सृष्टिबिस्तारा ॥
सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर ❀ चारि प्रकार जीव सचराचर ॥

समुद्र, नदियां, सरोवर, अपार वन—अनेक प्रकारकी सृष्टिका विस्तार था। देवता, मुनिजन, सिद्ध, नाग, मनुष्य, किन्नर और अण्डज, स्वेदज, उद्भिज,और जरायुज—चार प्रकारके चर और अचर जीव थे।

दो०—जो नहिं देखा नहिं सुना ❀ जो मनहूँ न समाइ।
सो सब अद्भुत देखेउँ ❀ बरनि कवनि बिधि जाइ॥११९॥

जो न देखा और न सुना और जिसका भरोसा मनको भी न हो सके,वह सब अद्भुत दृश्य मैंने वहां देखे। उनका वर्णन किस प्रकार किया जाय ?

एक एक ब्रह्मांड महँ ❀ रहेउँ बरष सत एक।
एहि बिधि देखत फिरेउँ मैं ❀ अंड कटाह अनेक ॥१२०॥

एक-एक ब्रह्मांडमें मैंने एक-एक सौ वर्षतक निवास किया। इस प्रकार मैं अनेक ब्रह्मांडोंको देखता फिरा।

लोक लोक प्रति भिन्न बिधाता ❀ भिन्न बिष्णु सिव मनु दिसित्राता ॥
नर गंधर्ब भूत बैताला ❀ किन्नर निसिचर पसु खग ब्याला ॥

लोक-लोकमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव, मनु और दिक्पाल—सब भिन्न-भिन्न थे। मनुष्य, गंधर्व, भूत, वैताल किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, सर्प—

देव - दनुज - गन नाना जाती ❀ सकल जीव तहँ आनहिं भाँती ॥
महि सरि सागर सर गिरि नाना ❀ सब प्रपंच तहँ आनहिं आना ॥

देवताओं और दैत्योंके समूह और असंख्य जातियोंके सब प्राणी वहाँ और ही तरहके थे। पृथिवी, नदियां, समुद्र, सरोवर और अगणित पर्वत—सब प्रपंच वहाँ और ही और था।

अंडकोस प्रति प्रति निज रूपा ❀ देखेउँ जिनिस अनेक अनूपा ॥
अवधपुरी प्रतिभुवन निहारी ❀ सरजू भिन्न भिन्न नर नारी ॥

प्रत्येक ब्रह्माण्डमें मैंने अपना प्रतिरूप और अनेक प्रकारकी अनुपम वस्तुएं देखीं। प्रत्येक भुवनमें मैंने अयोध्यापुरी, सरयू नदी और स्त्री-पुरुष—सबको अलग-अलग देखा।

दसरथ कौसल्या सुनु ताता ❀ बिबिधरूप भरतादिकभ्राता ॥
प्रतिब्रह्मांड रामअवतारा ❀ देखेउँ बालबिनोद उदारा ॥

हे तात, सुनो। दशरथ, कौशल्या और भरतादि भाई—सबको विभिन्नरूपोंमें देखा। प्रत्येक ब्रह्मांडमें मैंने श्रीरामचन्द्रजीके अवतार और उनके उदार बालविनोद देखे।

दो०—भिन्न भिन्न मैं दीख सब ❀ अतिबिचित्र हरिजान।
अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु ❀ रामु न देखेउँ आन ॥१२१॥

हे विष्णुवाहन, मैंने यह सब अत्यन्त विचित्र दृश्य भिन्न-भिन्न देखे। मैं असंख्य भुवनोंमें घूमता फिरा; परन्तु प्रभु श्रीरामचन्द्रजी दूसरे नहीं दिखलायी दिये।

सोइ सिसुपन सोइ सोभा ❀ सोइ कृपाल रघुबीर।
भुवन भुवन देखत फिरेउँ ❀ प्रेरित मोह सरीर ॥१२२॥

मेरा शरीर मोह-प्रेरित था, इससे मैं वही बालपन, वही शोभा और उन्हीं दयालु श्रीरामचन्द्रजीको देखता हुआ भुवन-भुवनमें फिरा।

भ्रमत मोहि ब्रह्मांड अनेका ❀ बीते मनहुँ कलपसत एका ॥
फिरत फिरत निज आस्रम आयउँ ❀ तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँयउँ ॥

अनेक ब्रह्माण्डोंमें भ्रमण करते हुए मुझे मानों एक सौ कल्प बीत गये। इस तरह फिरते-फिरते मैं अपने आश्रममें आया। फिर वहाँ रहकर कुछ समय बिताया।

निज-प्रभु-जनम अवध सुनि पायउँ ❀ निर्भर प्रेम हरषि उठि धायउँ ॥
देखेउँ जनममहोत्सव जाई ❀ जेहि बिधि प्रथम कहा मैं गाई ॥

फिर जब वहाँ मैंने अयोध्यामें अपने प्रभुका जन्म होना सुन पाया तब प्रेममें भरकर प्रसन्न होकर उठ दौड़ा। अयोध्यामें जाकर मैंने श्रीरामचन्द्रजीका जन्ममहोत्सव देखा, जैसा कि मैंने पहिले तुमसे गाकर कहा है।

रामउदर देखेउँ जग नाना ❀ देखत बनइ न जाइ बखाना ॥
तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना ❀ मायापति कृपाल भगवाना ॥

श्रीरामचन्द्रजीके पेटमें मैंने अगणित संसार देखे। उन्हें देखते ही बनता था, वर्णन नहीं किया जा सकता फिर वहां मायाके स्वामी, कृपालु, भगवान्, चतुर श्रीरामचन्द्रजीको भी देखा।

करउँ बिचार बहोरि बहोरी ❀ मोह कलिल ब्यापित मति मोरी ॥
उभय घरी महँ मैं सब देखा ❀ भयउँ भ्रमित मन मोह बिसेखा ॥

मैं बार-बार विचार करता था कि बुद्धि मोहरूपी कीचड़में फँस गयी है। दो घड़ीमें मैंने वह सब देख लिया। मैं थक गया और मेरे मनको बड़ा मोह हुआ।

दो०—देखि कृपाल बिकल मोहि ❀ बिहँसे तब रघुबीर।
बिहँसतहीं मुख बाहेर ❀ आयउँ सुनु मतिधीर ॥१२३॥

तब मुझे व्याकुल देखकर कृपालु श्रीरामचन्द्रजी हँस पड़े। हे धीर बुद्धिवाले गरुड़, सुनो। उनके हँसते ही मैं मुखसे बाहर आया।

सोइ लरिकाई मो सन ❀ करन लगे पुनि राम।
कोटि भाँति समुझावउँ ❀ मन न लहइ बिस्राम ॥१२४॥

श्रीरामचन्द्रजी वही लड़कपन मुझसे फिर करने लगे। मैं करोड़ प्रकारसे समझाता था, पर मनको विश्राम न मिलता था।

देखि चरित यह सो प्रभुताई ❀ समुझत देहदसा बिसराई ॥
धरनि परेउँ मुख आव न बाता ❀ त्राहि त्राहि आरत-जन-त्राता ॥

यह चरित देखकर और वह प्रभुता समझकर मुझे देहकी सुध भूल गयी। मैं पृथिवीपर पड़ गया, मेरे मुंहसे बात न निकलती थी। मैं कहने लगा—हे दीनजनोंके रक्षक, मेरी रक्षा करो, रक्षा करो।

प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी ❀ निज-माया-प्रभुता तब रोकी ॥
कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ ❀ दीनदयाल सकल दुख हरेऊ ॥

मुझे प्रेममें व्याकुल देखकर फिर प्रभु श्रीरामचन्द्रजीने अपनी माया और प्रभुताको रोक लिया। प्रभुने मेरे शिरपर अपना करकमल रखा और दीनदयालुने सारा दुःख दूर कर दिया।

कीन्ह राम मोहि बिगत बिमोहा ❀ सेवकसुखद कृपासंदोहा ॥
प्रभुता प्रथम बिचारि बिचारी ❀ मन महँ होइ हरष अति भारी ॥

सेवकोंको सुख देनेवाले कृपाके समूह श्रीरामचन्द्रजीने मुझे मोहशून्य कर दिया। प्रभुकी पहिली प्रभुताको विचार विचारकर मनमें अत्यन्त अधिक आनन्द होने लगा।

भक्तबछलता प्रभु कै देखी ❀ उपजी मम उर प्रीति बिसेखी ॥
सजल नयन पुलकित कर जोरी ❀ कीन्हेउँ बहुबिधि बिनय बहोरी ॥

प्रभुकी भक्तवत्सलता देखकर मेरे हृदयमें विशेष प्रीति उत्पन्न हुई। फिर मैंने नेत्रोंमें जल भरकर, पुलकित शरीर हो हाथ जोड़ और बहुत प्रकारसे विनती की।

दो०—सुनि सप्रेम मम बानी ❀ देखि दीन निज दास।
बचन सुखद गंभीर मृदु ❀ बोले रमानिवास ॥१२५॥

प्रेमके साथ मेरी वाणीको सुनकर और अपने सेवकको दीन देखकर रमानिवास श्रीरामचन्द्रजी सुख देनेवाले, गंभीर, कोमल वचन बोले—

काग भुसुंडी माँगु बर ❀ अति प्रसन्न मोहि जानि।
अनिमादिक सिधि अपर रिधि ❀ मोच्छ सकल सुखखानि ॥१२६॥

हे कागभुशुण्ड, मुझे अत्यन्त प्रसन्न जानकर तू अणिमा आदि सिद्धियां, अन्यान्य ऋद्धियां और सब सुखोंकी खान मोक्ष, जो चाहे वरदान मांग।

ग्यान बिबेक बिरति बिग्याना ❀ सुरदुर्लभ गुन जे जग जाना ॥
आजु देउँ तव संसय नाहीं ❀ माँगु जो तोहि भाव मन माहीं ॥

ज्ञान, विवेक, वैराग्य, विज्ञान—जिन गुणोंको संसारमें तू देवताओंके लिये भी दुर्लभ जानता हो, वे सब आज मैं तुझे दूंगा, इसमें संदेह नहीं है। जो तुझे अपने मनमें प्रिय लगे, वह मांग ले।

सुनि प्रभुबचन अधिक अनुरागेउँ ❀ मन अनुमान करन तब लागेउँ ॥
प्रभु कह देन सकल सुख सही ❀ भगति आपनी देन न कही ॥

प्रभुके वचन सुनकर मैं और भी अधिक प्रेममें भर गया। तब, मैं अपने मनमें अनुमान करने लगा—प्रभुने सब सुख देनेके लिये कहा सही, पर अपनी भक्ति देनेको नहीं कहा।

भगतिहीन गुन सब सुख कैसे ❀ लवन बिना बहु ब्यंजन जैसे ॥
भजनहीन सुख कवने काजा ❀ अस बिचारि बोलेउँ खगराजा ॥

भक्तिरहित सब सुख और सब गुण कैसे हैं जैसे नमक बिना बहुतसे व्यंजन। भजनहीन सुख किस कामका? हे पक्षिराज, ऐसा विचारकर मैं बोला—

जौं प्रभु होइ प्रसन्न बर देहू ❀ मो पर करहु कृपा अरु नेहू ॥
मन भावत बर माँगउँ स्वामी ❀ तुम्ह उदार उर - अंतर-जामी ॥

हे प्रभो, यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वरदान ही देते हैं और मुझपर कृपा और प्रेम करते हैं तो हे स्वामिन्, मैं यह मनचाहा वरदान मांगता हूं। आप उदार और अन्तर्यामी हैं।

दो०—अबिरल भगति बिसुद्ध तव ❀ स्रुति पुरान जो गाव।
जेहि खोजत जोगीस मुनि ❀ प्रभुप्रसाद कोउ पाव ॥ १२७ ॥

आपकी जो भक्ति अविरल है, अत्यंत शुद्ध है, जिसे वेद और पुराण गाते हैं, योगेश्वर और मुनिजन खोजते हैं और जिसे प्रभुकी दयासे कोई ही पाता है—

भगत-कलप-तरु प्रनतहित ❀ कृपासिंधु सुखधाम।
सोइ निजभगति मोहि प्रभु ❀ देहु दया करि राम ॥ १२८ ॥

हे भक्तोंके लिये कल्पवृक्ष रूप, हे शरणागतोंके हितैषी, हे दयासागर, हे सुखके घर, हे प्रभु श्रीरामचन्द्रजी, आप दया करके वही अपनी भक्ति मुझे दीजिये।

एवमस्तु कहि रघु-कुल-नायक ❀ बोले बचन परम - सुख-दायक ॥
सुनु बायस तैं सहज सयाना ❀ काहे न माँगसि अस बरदाना ॥

"ऐसा ही हो" यह कहकर रघुकुलनायक श्रीरामचन्द्रजी अत्यन्त सुखदायक वचन बोले—हे कागभुशुण्ड, सुन। तू स्वभावसे ही चतुर है। तू भला ऐसा वरदान क्यों न मांगे ?

सब सुखखानि भगति तैं माँगी ❀ नहिं जग कोउ तोहि सम बड़भागी ॥
जो मुनि कोटिजतन नहिं लहहीं ❀ जे जप-जोग-अनल तन दहहीं ॥

तूने सब सुखोंकी खान मेरी भक्तिको मांगा है। तेरे समान बड़भागी संसारमें कोई नहीं है। करोड़ उपाय करनेपर भी मुनिजन, जो जप और योगकी अग्निमें शरीरको जला देते हैं, जिसको नहीं पाते।

रीझेउँ देखि तोरि चतुराई ❀ माँगेहु भगति मोहि अति भाई ॥
सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरे ❀ सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरे ॥

तेरी चतुराई देखकर मैं रीझ गया हूं। तूने मेरी भक्ति मांगी, यह बात मुझे अत्यंत अच्छी लगी है। हे पक्षी, सुन। अब मेरे प्रसादसे तेरे हृदयमें सब सद्गुण निवास करेंगे।

भगति ग्यान बिग्यान बिरागा ❀ जोग चरित्र रहस्य - बिभागा ॥
जानब तैं सबही कर भेदा ❀ मम प्रसाद नहिं साधन खेदा ॥

भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य, योग और चरित्रोंके रहस्य-विभाग, तू सभीके भेदोंको जान लेगा। मेरी दयासे तुझे साधन-संबंधी कष्ट न होगा।

दो०—मायासंभव भ्रम सकल ❀ अब न ब्यापिहहिं तोहि।
जानेसु ब्रह्म अनादि अज ❀ अगुन गुनाकर मोहि ॥ १२९ ॥

मायासे उत्पन्न होनेवाले सब भ्रम अब तुझे न व्यापेंगे। तू मुझे ब्रह्म, आदिरहित, अजन्मा, निर्गुण और सब सुखोंका भाण्डार जानना।

मोहि भगतप्रिय संतत ❀ अस बिचारि सुनु काग।
काय बचन मन मम पद ❀ करेसु अचल अनुराग ॥ १३० ॥

हे कागभुशुण्ड, सुनो। मुझे अपने भक्त सदा प्यारे हैं, ऐसा विचारकर मन, वाणी और शरीरसे मेरे चरणोंमें दृढ़ प्रेम करना।

अब सुनु परमबिमल मम बानी ❀ सत्य सुगम निगमादि बखानी ॥
निज सिद्धांत सुनावउँ तोही ❀ सुनि मन धरु सब तजि भजु मोही ॥

अब मेरी अत्यंत निर्मल, सत्य, सुगम और शास्त्रादिमें कही हुई वाणी सुन। मैं तुझको अपना सिद्धान्त सुनाता हूँ। सुनकर उसे मनमें रख और सब त्यागकर मुझे भज।

मम मायासंभव परिवारा ❀ जीव चराचर बिबिध प्रकारा ॥
सब मम प्रिय सब मम उपजाये ❀ सब तें अधिक मनुज मोहि भाये ॥

मेरी मायासे उत्पन्न उसीका परिवार यह अनेक प्रकारके चर और अचर जीव हैं। ये सब मेरे उत्पन्न किये हुए हैं और सब मेरे प्यारे हैं, परन्तु मनुष्य मुझे सबसे अधिक प्रिय लगे।

तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ स्रुतिधारी ❀ तिन्ह महुँ निगम-धर्म-अनुसारी ॥
तिन्ह महँ प्रिय बिरक्त पुनि ग्यानी ❀ ग्यानिहु तें अतिप्रिय बिग्यानी ॥

उन मनुष्योंमें भी ब्राह्मण, ब्राह्मणोंमें भी वेद, इनमें भी वेदोक्त धर्मका अनुसरण करनेवाले, इनमें भी विरक्त और फिर विरक्तोंमें भी ज्ञानी मुझे प्रिय हैं। विज्ञानी मुझे ज्ञानीसे भी अधिक प्रिय हैं।

तिन्ह तें पुनि मोहि प्रिय निज दासा ❀ जेहि गति मोरि न दूसरि आसा ॥
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं ❀ मोहि सेवकसम प्रिय कोउ नाहीं ॥

फिर, उनमें भी अधिक प्रिय मुझे अपना दास है, जिसे मेरी ही गति है, दूसरी आशा नहीं। बार-बार मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि सेवकके समान प्यारा कोई मुझे नहीं है।

भगतिहीन बिरंचि किन होई ❁ सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई ॥
भगतिवंत अति नीचउ प्रानी ❁ मोहि प्रानप्रिय असि मम बानी ॥

भक्तिहीन चाहे ब्रह्मा ही क्यों न हों, अन्य सब जीवोंके समान ही मुझे वह भी प्रिय होंगे। परन्तु भक्ति रखनेवाला चाहे कोई अत्यन्त नीच प्राणी भी हो तो वह मुझे प्राणोंके समान प्रिय है, ऐसा मेरा वचन है।

दो०—सुचि सुसील सेवक सुमति ❁ प्रिय कहु काहि न लाग।
स्रुति पुरान कह नीति असि ❁ सावधान सुनु काग ॥ १३१ ॥

भला कहो न, पवित्र, सुन्दर शीलवाला, सद्बुद्धिमान सेवक किसे नहीं प्यारा लगता ? हे कागभुशुण्ड, तुम सावधान होकर सुनो। ऐसा वेद और पुराण कहते हैं और नीति भी है।

एक पिता के बिपुल कुमारा ❁ होहिं पृथक गुन सील अचारा ॥
कोउ पंडित कोउ तापस ग्याता ❁ कोउ धनवंत सूर कोउ दाता ॥

एक पिताके कई पुत्र होते हैं। उनके शील, आचरण और गुण अलग-अलग होते हैं। उनमेंसे कोई पण्डित होता है, कोई तपस्वी, कोई ज्ञाता होता है, कोई धनवान और कोई शूरवीर होता है और कोई दानी,

कोउ सर्बग्य धर्मरत कोई ❁ सब पर प्रीति पितहिं सम होई ॥
कोउ पितुभगत बचन मन कर्मा ❁ सपनेहु जान न दूसर धर्मा ॥

कोई सर्वज्ञ होता है और धर्ममें तत्पर—परन्तु पिताको सबपर बराबर प्रेम होता है। कोई पुत्र मन, वाणी और कर्मसे अपने पिताका भक्त भी होता है, जो स्वप्नमें भी दूसरा धर्म नहीं जानता।

सो सुत प्रिय पितु प्रानसमाना ❁ जद्यपि सो सब भाँति अयाना ॥
एहि बिधि जीव चराचर जेते ❁ त्रिजग देव नर असुर समेते ॥

पिताको वह पुत्र अपने प्राणके समान प्यारा होता है—यद्यपि वह पुत्र सब प्रकार अनजान ही हो। इसी प्रकार तीनों लोकोंमें देवता, मनुष्य और राक्षसोंसमेत जितने चर और अचर जीव हैं—

अखिल बिस्व यह मम उपजाया ❁ सब पर मोहि बराबरि दाया ॥
तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया ❁ भजइ मोहि मन बच अरु काया ॥

यह समस्त विश्व मैंने उत्पन्न किया है। मुझे सबपर बराबर दया है, परन्तु उन सबमें भी जो मद और मायाको छोड़कर मन, वाणी और शरीरसे मुझे भजता है—

दो०—पुरुष नपुंसक नारि नर ❁ जीव चराचर कोइ।
भगति भाव भजि कपट तजि ❁ मोहि परम प्रिय सोइ ॥१३२॥

भक्तिभावसे कपट छोड़कर जो मेरा भजन करता है वह मनुष्य पुरुष, स्त्री, नपुंसक, चर और अचर, कोई भी हो, वही मुझे अत्यन्त प्रिय है।

सो०—सत्य कहउँ खग तोहि ❀ सुचि सेवक मम प्रानप्रिय।
अस बिचारि भजु मोहि ❀ परिहरि आस भरोस सब ॥१३३॥

हे पक्षी, मैं तुझसे सत्य कहता हूं—पवित्र सेवक मेरे प्राणप्यारे हैं। ऐसा विचारकर सब आशाएँ और भरोसा छोड़कर मेरा भजन करो।

कबहूँ काल न ब्यापिहि तोही ❀ सुमिरि स्वरूप निरंतर मोही ॥
प्रभुबचनामृत सुनि न अघाऊँ ❀ तन पुलकित मन अति हरषाऊँ ॥

निरन्तर मेरे स्वरूपका स्मरण करनेसे तुझको कभी काल न व्यापेगा। प्रभुके वचन अमृतरूप थे। उन्हें सुनकर मैं अघाता न था। मेरा शरीर पुलकायमान हो रहा था और मनमें मैं अत्यन्त प्रसन्न हो रहा था।

सो सुख जानइ मन अरु काना ❀ नहिं रसना पहिं जाइ बखाना ॥
प्रभु - सोभा - सुख जानहिं नयना ❀ कहि किमि सकहिं तिन्हहिं नहिं बयना ॥

वह सुख मन और कान ही जानते हैं। जिह्वासे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। प्रभुकी शोभाके सुखको नेत्र जानते हैं, परन्तु वे कहकर उसे प्रकट कैसे कर सकते हैं; क्योंकि इन नेत्रोंमें वाणी नहीं है।

बहु बिधि मोहि प्रबोधि सुख देई ❀ लगे करन सिसुकौतुक तेई ॥
सजल नयन कछु मुख करि रूखा ❀ चितइ मातु लागी अति भूखा ॥

बहुत तरहसे मुझे समझाकर और सुख देकर श्रीरामचन्द्रजी फिर वही बालक्रीड़ा करने लगे। नेत्रोंमें जल भरकर और मुखको कुछ रूखा बनाकर उन्होंने माताकी ओर देखा; मानों बड़ी भूख लगी हो।

देखि मातु आतुर उठि धाई ❀ कहि मृदु बचन लिये उर लाई ॥
गोद राखि कराव पयपाना ❀ रघुबर-चरित ललित कर गाना ॥

देखते ही माता शीघ्रतापूर्वक उठकर दौड़ी और मीठे वचन कहकर उन्हें हृदयसे लगा लिया। गोदमें बिठलाकर वे श्रीरामचन्द्रजीके सुन्दर चरित्रोंका गान करती हुई उन्हें दूध पिलाने लगीं।

सो०—जेहि सुख लागि पुरारि ❀ असुभ-बेष-कृत सिव सुखद।
अवधपुरी नरनारि ❀ तेहि सुख महँ संतत मगन ॥१३४॥

त्रिपुर दैत्यके शत्रु, सुख देनेवाले शंकरजीने जिस सुखके लिये अशुभ भेष धारण किया है उसी सुखमें अयोध्यापुरीके स्त्री और पुरुष निरंतर मग्न रहते हैं।

सोई सुख लवलेस ❁ जिन्ह बारक सपनेहु लहेउ ।
तेहि नहिं गनहिं खगेस ❁ ब्रह्मसुखहिं सज्जन सुमति ॥१३५॥

उसी सुखका लवलेश भी जिन्होंने एकवार स्वप्नमें भी पा लिया, हे पक्षिराज, वे बुद्धिमान सज्जन उसके आगे ब्रह्मानन्दको भी नहीं गिनते ।

मैं पुनि अवध रहेउँ कछु काला ❁ देखेउँ बालबिनोद रसाला ॥
रामप्रसाद भगति बर पायउँ ❁ प्रभुपद बंदि निजास्रम आयउँ ॥

फिर, मैं कुछ समयतक अयोध्यामें रहा और श्रीरामचन्द्रजीका सुन्दर बालविनोद देखता रहा । श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मैंने भक्तिका वरदान पाया और प्रभुके चरणोंकी वन्दनाकर अपने आश्रमको लौट आया ।

तब तें मोहि न ब्यापी माया ❁ जब तें रघुनायक अपनाया ॥
यह सब गुप्त चरित मैं गावा ❁ हरिमाया जिमि मोहि नचावा ॥

जबसे श्रीरामचन्द्रजीने मुझे अपना लिया तबसे फिर मुझे माया नहीं व्यापी । भगवान्‌की मायाने जिस प्रकार मुझे नचाया, यह सब गुप्त चरित मैंने गाया ।

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा ❁ बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा ॥
रामकृपा बिनु सुनु खगराई ❁ जानि न जाइ रामप्रभुताई ॥

हे पक्षिराज, अब मैं अपना अनुभव कहता हूँ । भगवान्‌के भजन बिना क्लेश दूर नहीं होते । हे पक्षिराज, सुनो—श्रीरामचन्द्रजीकी कृपाके विना श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुता जानी नहीं जाती ।

जाने बिनु न होइ परतीती ❁ बिनु परतीति होइ नहिं प्रीती ॥
प्रीति बिना नहिं भगति दृढ़ाई ❁ जिमि खगपति जल कै चिकनाई ॥

जाने विना विश्वास नहीं होता और विश्वास बिना प्रीति नहीं होती । हे पक्षिराज, प्रीति बिना भक्ति दृढ़ नहीं होती; जैसे जलकी चिकनाई ।

सो०—बिनु गुरु होइ कि ग्यान ❁ ग्यान कि होइ बिराग बिनु ।
गावहिं बेद पुरान ❁ सुख कि लहहिं हरि भगति बिनु ॥

बिना गुरुके भी क्या ज्ञान हो सकता है ? वैराग्य बिना भी क्या ज्ञान हो सकता है ? वेद और पुराण कहते हैं कि भगवान्‌की भक्ति बिना क्या सुख मिल सकता है ?

को बिस्राम कि पाव ❁ तात सहज संतोष बिनु ॥
चलइ कि जल बिनु नाव ❁ कोटिजतन पचि पचि मरिय॥१३७॥

हे तात, स्वाभाविक संतोष बिना क्या कोई विश्राम पा सकता है? करोड़ उपायकर पच-पच मरनेपर भी क्या जल बिना नाव चलती है?

बिनु संतोष न काम नसाहीं ❀ काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं ॥
रामभजन बिन मिटहि कि कामा ❀ थलबिहीन तरु कबहुँ कि जामा ॥

संतोष विना कामनाएं नहीं नष्ट होतीं और कामनाओंके रहते स्वप्नमें भी सुख नहीं। श्रीरामचन्द्रजीके भजन विना क्या कामनाएं मिट सकती हैं? पृथिवी विना क्या कभी वृक्ष जमता है?

बिनु बिग्यान कि समता आवइ ❀ को अवकास कि बिनु नभ पावइ ॥
स्रद्धा बिना धरमु नहिं होई ❀ बिनु महि गंध कि पावइ कोई ॥

विज्ञान विना भी क्या समता आ सकती है? आकाश बिना भी क्या कोई अवकाश (पोल) पा सकता है? श्रद्धा बिना धर्म नहीं होता। विना पृथिवी भी क्या कोई गंधको पा सकता है?

बिनु तप तेज कि कर बिस्तारा ❀ जल बिनु रस कि होइ संसारा ॥
सील कि मिल बिनु बुधसेवकाई ❀ जिमि बिनु तेज न रूप गुसाईं ॥

तपस्या विना क्या कोई तेजका विस्तार कर सकता है? जलके विना क्या संसारमें रस उत्पन्न हो सकते हैं? हे स्वामिन, पण्डितोंकी सेवा किये बिना क्या शील मिल सकता है; जैसे तेज बिना रूप नहीं हो सकता?

निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा ❀ परस कि होइ बिहीन समीरा ॥
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा ❀ बिनु हरिभजन न भव-भय-नासा ॥

अपने सुखके विना भी क्या मन स्थिर हो सकता है? वायुके बिना भी क्या स्पर्श गुण हो सकता है? विश्वासके बिना क्या कोई भी सिद्धि हो सकती है? भगवानके भजन बिना संसारका भय नष्ट नहीं होता।

दो०—बिनु बिस्वास भगति नहिं ❀ तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
रामकृपा बिनु सपनेहुँ ❀ जीव न लह बिश्राम ॥ १३८ ॥

विश्वासके विना भक्ति नहीं होती और भक्तिके विना श्रीरामचन्द्रजी द्रवित नहीं होते और श्रीरामचन्द्रजी-की कृपाके विना जीव स्वप्नमें भी विश्राम नहीं पाता।

सो०—अस बिचारि मतिधीर ❀ तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर ❀ करुनाकर सुंदर सुखद ॥ १३९ ॥

हे धीर बुद्धिवाले गरुड़, ऐसा विचारकर कुतर्क और सर्व सन्देहोंको छोड़कर दयाधाम, सुन्दर, सुख देने-वाले और रघुवंशमें वीर श्रीरामचंद्रजीका भजन करो।

निज - मति - सरिस नाथ मैं गाया ❀ प्रभु - प्रताप - महिमा खगराया ॥
कहेउँ न कछु करि जुगुति बिसेखी ❀ यह सब मैं निज नयनन्हि देखी ॥

हे नाथ, हे पक्षिराज, मैंने अपनी बुद्धिके अनुसार प्रभुके प्रताप और महिमाको गाया। युक्ति विशेष करके मैंने कुछ नहीं कहा। यह सब मैंने अपनी आंखों देखा है।

महिमा नाम रूप गुनगाथा ❀ सकल अमित अनंत रघुनाथा ॥
निज निज मति मुनि हरिगुन गावहिं ❀ निगम सेष सिव पार न पावहिं ॥

रघुवंशके स्वामी श्रीरामचंद्रजीकी महिमा, नाम, रूप और गुणोंकी कथा—सब असीम और अनन्त है। मुनिजन भगवान्‌के गुणोंको अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार गाते हैं और वेद, शेषनाग और शिवजी भी पार नहीं पाते।

तुम्हहिं आदि खग मसकप्रजंता ❀ नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अंता ॥
तिमि रघुपति - महिमा अवगाहा ❀ तात कबहुँ कोउ पाव कि थाहा ॥

तुमसे लेकर मच्छरोंतक—सब पक्षी आकाशमें उड़ते हैं, पर उसका अन्त नहीं पाते। इसी प्रकार श्रीरामचंद्रजीकी महिमाकी थाह लेना भी है। हे तात, क्या कोई कभी उसकी थाह पा सकता है?

राम काम - सत - कोटि-सुभग-तन ❀ दुर्गा - कोटि - अमित अरिमर्दन ॥
सक्र - कोटि - सत - सरिस बिलासा ❀ नभ-सत-कोटि-अमित अवकासा ॥

श्रीरामचंद्रजी सौ करोड़ कामदेवोंके समान सुन्दर शरीरवाले हैं, असंख्य करोड़ दुर्गाओंके समान वे शत्रुओंका मर्दन करनेवाले हैं। सौ करोड़ इन्द्रोंके समान उनका विलास है, सौ करोड़ आकाशोंके समान वे असीम अवकाशवाले हैं।

दो०—मरुत-कोटि-सत-बिपुल बल ❀ रबि - सत - कोटि प्रकास।
ससि-सत-कोटि सो सीतल ❀ समन सकल-भव-त्रास ॥१४०॥

वे सौ करोड़ पवनोंके समान भारी बलवाले; सौ करोड़ सूर्योंके समान प्रकाशवाले हैं। यह प्रकाश संसारकी समस्त बाधाओंको शान्त करनेके लिये सौ करोड़ चन्द्रमाओंके समान शीतल है।

काल कोटिसत सरिस अति ❀ दुस्तर दुग दुरंत।
धूमकेतु सतकोटिसम ❀ दुराधरष भगवंत ॥ १४१ ॥

सौ करोड़ कालोंके समान वे अत्यंत कठिन, अगम और अनन्त हैं और उनकी समाप्ति नहीं। भगवान् सौ करोड़ धूमकेतुओंके समान असह्य हैं।

प्रभु अगाध सत-कोटि-पताला ❀ समन-कोटि-सत-सरिस कराला ॥
तीरथ-अमित-कोटि-सम पावन ❀ नाम अखिल-अघ-पुंज-नसावन ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी सौ करोड़ पातालोंके समान अगाध, सौ करोड़ यमराजोंके समान विकराल और असंख्य करोड़ तीर्थोंके समान पवित्र हैं। उनका नाम समस्त पापोंके समूहको नष्ट करनेवाला है।

हिम-गिरि कोटि अचल रघुबीरा ❀ सिंधु कोटिसत सम गंभीरा ॥
काम-धेनु सत-कोटि समाना ❀ सकलकामदायक भगवाना ॥

श्रीरामचन्द्रजी करोड़ हिमालय पर्वतोंके समान अचल और सौ करोड़ समुद्रोंके समान गंभीर हैं। भगवान् सौ करोड़ कामधेनुओंके समान समस्त कामनाओंको पूर्ण करनेवाले हैं।

सारद-कोटि अमित चतुराई ❀ बिधि सतकोटि सृष्टिनिपुनाई ॥
बिस्नु-कोटि-सत-पालन-करता ❀ रुद्र-कोटि-सत-सम संहरता ॥

उनमें असंख्य करोड़ सरस्वतियोंके समान चतुरता और सौ करोड़ ब्रह्माओंके समान सृष्टि-सम्बन्धी निपुणता है। वे सौ करोड़ विष्णुओंके समान पालन और सौ करोड़ महादेवोंके समान संहार करनेवाले हैं।

धनद-कोटि-सत-सम धनवाना ❀ माया-कोटि-प्रपंचनिधाना ॥
भार धरन सत-कोटि-अहीसा ❀ निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा ॥

वे सौ करोड़ कुबेरोंके समान धनवान, करोड़ मायाओंके समान प्रपंचनिधान, सौ करोड़ शेषनागोंके समान भार उठानेवाले और अवधिरहित, उपमारहित, प्रभु और जगत्के ईश्वर हैं।

छं०—निरुपम न उपमा आन राम समान निगमागम कहे।
जिमि कोटि-सत-खद्योत-सम रबि कहत अति लघुता लहे ॥
एहि भांति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहि बखानहीं।
प्रभु भावगाहक अतिकृपाल सप्रेम सुनि सुख मानहीं ॥

वेद और शास्त्र कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजी अनुपम हैं। उनकी समानताके लिये अन्य उपमा नहीं; जैसे सौ करोड़ जुगनुओंके समान कह देनेपर भी सूर्यके लिये वह उपमा बहुत ही छोटी होती है। इस प्रकार अपनी-अपनी बुद्धिके विकासके अनुसार मुनीश्वर भगवान्का वर्णन करते हैं। प्रभु भावके ग्राहक और अत्यन्त दयालु हैं। वे प्रेमके साथ उस वर्णनको सुनकर सुख मानते हैं।

दो०—राम अमित-गुन-सागर ❀ थाह कि पावइ कोइ।
संतन्ह सन जस कछु सुनेउं ❀ तुम्हहिं सुनायउं सोइ ॥ ९२ ॥

श्रीरामचन्द्रजी अपार गुणोंके समुद्र हैं। क्या कोई उनकी थाह पा सकता है? मैंने संतजनोंसे जो कुछ यश सुना था वही तुम्हें सुना दिया।

सो०—भावबस्य भगवान ❀ सुखनिधान करुनाभवन।
तजि ममता मद मान ❀ भजिय सदा सीतारमन॥ १४३॥

भगवान् भावके वशमें हैं, सुखनिधान हैं, दयाके धाम हैं। ममता, मद और अभिमानको त्यागकर सदा सीताजीके साथ विहार करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको भजना चाहिये।

सुनि-भुसुंडि के बचन सुहाये ❀ हरषित खगपति पंख फुलाये॥
नयननीर मन अति हरषाना ❀ श्री-रघु-बर-प्रताप उर आना॥

कागभुशुण्डजीके सुहावने वचन सुनकर पक्षिराज गरुड़ प्रसन्न हो गये। उन्होंने अपने पंखोंको फुलाया। उनके नेत्रोंमें जल छा गया, मन अत्यन्त प्रसन्न हो गया, श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापको वे हृदयमें लाये।

पाछिल मोह समुझि पछिताना ❀ ब्रह्म अनादि मनुज करि माना॥
पुनि पुनि कागचरन सिर नावा ❀ जानि रामसम प्रेम बढ़ावा॥

पिछला मोह समझकर वे पछताने लगे कि अनादि ब्रह्मको मैंने, मनुष्य हैं, ऐसा मान लिया था। बार-बार उन्होंने कागभुशुण्डजीके चरणोंको शिर नवाया और श्रीरामचन्द्रजीके समान उन्हें भी जानकर प्रेम बढ़ाया।

गुरु बिनु भवनिधि तरइ न कोई ❀ जौं बिरंचि-संकर-सम होई॥
संसय सरप ग्रसेउ मोहि ताता ❀ दुखद लहरि कुतर्क बहु ब्राता॥

गरुड़जी बोले—गुरुके बिना कोई संसार-सागरको नहीं तिर सकता—भले ही वह ब्रह्मा और शिवजीके समान ही हो। हे तात, मुझे संशयरूपी सर्पने काट लिया था, जिससे बहुतसे कुतर्कोंके समूहरूपी दुःख देनेवाली लहरें आ रही थीं।

तव सरूप गारुड़ि रघुनायक ❀ मोहि जिआयेउ जन-सुख-दायक॥
तव प्रसाद मम मोह नसाना ❀ रामरहस्य अनूपम जाना॥

भक्तोंको सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजीने आप सरीखे सर्पके विषको दूर कर देनेवालेके द्वारा मुझे जिला लिया। आपकी दयासे मेरा मोह नष्ट हो गया, मैंने श्रीरामचन्द्रजीका अनुपम रहस्य जान लिया।

दो०—ताहि प्रसंसि बिबिध बिधि ❀ सीस नाइ कर जोरि।
बचन बिनीत सप्रेम मृदु ❀ बोलेउ गरुड़ बहोरि॥ १४४॥

फिर, काकभुशुण्डजीकी अनेक प्रकारसे प्रशंसा करके और हाथ जोड़कर शिर नवाकर गरुड़जी प्रेमके साथ कोमल और नम्र वचन बोले—

प्रभु अपने अविवेक तें ❀ बूझउँ स्वामी तोहि।
कृपासिंधु सादर कहहु ❀ जानि दास निज मोहि॥ १४५॥

हे प्रभो, हे स्वामिन्, अपने अविवेकके कारण मैं आपसे पूछता हूं। हे कृपासागर, मुझे अपना दास जानकर आदरके साथ कहिए—

तुम्ह सर्बग्य तग्य तमपारा ❀ सुमति सुसील सरलआचारा॥
ग्यान बिरत - बिग्यान - निवासा ❀ रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा॥

आप सर्वज्ञ, महाज्ञानी, तमोगुणसे पार, सुन्दर बुद्धिवाले, सुशील, सरल, आचारवान् और ज्ञान, वैराग्य और विज्ञानके निवास-स्थान हैं और श्रीरामचन्द्रजीके आप प्यारे सेवक हैं।

कारन कवन देह यह पाई ❀ तात सकल मोहि कहहु बुझाई॥
राम - चरित - सर सुंदर स्वामी ❀ पायउ कहां कहहु नभगामी॥

फिर, जो आपने यह काककी देह पायी, इसका कारण क्या है? हे तात, मुझे सब समझाकर कहो। हे आकाशमें विचरण करनेवाले, हे स्वामिन्, आपने रामचरितरूपी यह सुन्दर मानसरोवर कहां पाया—यह बतलाइये।

नाथ सुना अस मैं सिव पाहीं ❀ महा प्रलयहु नास तव नाहीं॥
मृषा बचन नहिं ईस्वर कहई ❀ सो मोरे मन संसय अहई॥

हे नाथ, शिवजीके पास मैंने ऐसा सुना है कि महाप्रलयमें भी आपका नाश नहीं होता। शिवजी मिथ्या वचन नहीं कहते। उसीका मेरे मनमें संदेह है।

अग जग जीव नाग नर देवा ❀ नाथ सकलजग कालकलेवा॥
अंडकटाह अमित लयकारी ❀ काल सदा दुरतिक्रम भारी॥

हे नाथ, चर और अचर जीव, नाग, मनुष्य, देवता—सारा संसार कालका कलेवा है। अपार ब्रह्माण्डोंका लय करनेवाला काल सदा बड़ा दुरतिक्रम है।

सो०—तुम्हहिं न ब्यापत काल ❀ अति कराल कारन कवन।
मोहि सो कहहु कृपाल ❀ ग्यानप्रभाउ कि जोगबल॥ १४६॥

वह अत्यन्त विकराल काल आपको नहीं व्यापता, इसका कारण क्या है? हे कृपालु, मुझसे यह कहिये कि वह ज्ञानका प्रभाव है कि योगका बल।

सो०—प्रभु तव आश्रम आयउँ ❀ मोर मोह भ्रम भाग ।
कारन कवन सो नाथ सब ❀ कहहु सहित अनुराग ॥१४७॥

हे प्रभो, आपके आश्रममें मैं आया, जिससे मेरा मोह और भ्रम भाग गया। हे नाथ, उसका क्या कारण है। सब प्रेमके साथ कहिये।

गरुड़गिरा सुनि हरषेउ कागा ❀ बोलेउ उमा सहित अनुरागा ॥
धन्य धन्य तव मति उरगारी ❀ प्रस्न तुम्हार मोहि अति प्यारी ॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, गरुड़जीकी वाणी सुनकर कागभुशुण्डजी प्रसन्न हुए और प्रेमसे बोले—हे सर्पोंके शत्रु गरुड़, तुम्हारी बुद्धि धन्य है, धन्य है। तुम्हारा प्रश्न मुझे अत्यन्त प्यारा है।

सुनि तव प्रस्न सप्रेम सुहाई ❀ बहुत जनम की सुधि मोहि आई ॥
अब निज कथा कहउँ मैं गाई ❀ तात सुनहु सादर मन लाई ॥

तुम्हारा प्रेमभरा सुहावना प्रश्न सुनकर मुझे बहुत जन्मोंकी सुध हो आयी है। हे तात, मन लगाकर आदरके साथ सुनो। अब मैं अपनी कथा गाकर कहता हूं।

जप तप ब्रत मख सम दम दाना ❀ बिरति बिबेक जोग बिग्याना ॥
सब कर फल रघुपति-पद प्रेमा ❀ तेहि बिनु कोउ न पावइ षेमा ॥

जप, तप, व्रत, यज्ञ, शम, दम, दान, वैराग्य, विवेक, योग और विज्ञान—सबका फल श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंका प्रेम है, इसके बिना कोई कल्याण नहीं पाता।

एहि तन रामभगति मैं पाई ❀ ता तें मोहि ममता अधिकाई ॥
जेहि तें कछु निज स्वारथ होई ❀ तेहि पर ममता कर सब कोई ॥

इसी शरीरसे मैंने श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिको पाया है। इस कारण मुझे इसपर अधिक ममता है। जिससे अपना कुछ स्वार्थ होता है उसपर सब कोई ममता करता है।

सो०—पन्नगारि असि नीति ❀ स्रुतिसंमत सज्जन कहहिं ।
अति नीचहु सन प्रीति ❀ करिय जानि निज परमहित ॥१४८॥

हे सर्प-शत्रु, सज्जन पुरुष, वेद-सम्मत ऐसी नीति कहते हैं कि अपना परम हितकारी जानकर अत्यन्त नीच मनुष्यसे भी प्रेम करना चाहिये।

पाट कीट तें होइ ❀ तेहि तें पाटंबर रुचिर ।
कृमि पालइ सब कोइ ❀ परम अपावन प्रानसम ॥१४९॥

कीड़ेसे रेशम निकलता है और फिर रेशमसे सुन्दर रेशमी कपड़े बनते हैं। इसीसे अत्यन्त अपवित्र कीड़ेको भी सब कोई प्राणके समान पालते हैं।

स्वारथ साँच जीव कहुँ एहा ॥ मन - क्रम - वचन राम-पद - नेहा ॥
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा ॥ जो तनु पाइ भजिय रघुबीरा ॥

इस जीवके लिये सच्चा स्वार्थ यही है कि मन, वचन और कर्मसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम हो। जिस शरीरको पाकर श्रीरामचन्द्रजीका भजन हो सके वही शरीर पवित्र है, वही सुन्दर है।

रामविमुख लहि बिधिसम देही ॥ कबि कोबिद न प्रसंसहिं तेही ॥
रामभगति एहि तन उर जामी ॥ ता तें मोहि परमप्रिय स्वामी ॥

श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होकर यदि ब्रह्माके समान भी शरीर पाया तो कविजन और विद्वान् उसकी प्रशंसा नहीं करते। हे स्वामिन्, यह देह मुझे इसलिये अत्यन्त प्यारी है कि इसी देहसे मेरे हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति अंकुरित हुई है।

तजउँ न तनु निज इच्छा मरना ॥ तनु बिनु बेद भजन नहिं बरना ॥
प्रथम मोह मोहि बहुत बिगोवा ॥ रामबिमुख सुख कबहुँ न सोवा ॥

यद्यपि मरना अपनी इच्छापर है तथापि मैं अपना शरीर नहीं छोड़ता; क्योंकि वेदोंमें शरीर विना भजन होनेका वर्णन नहीं किया। पहिले मोहने मुझे बहुत नष्ट किया। श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होकर मैं कभी सुखसे न सोया।

नाना जनम करम पुनि नाना ॥ किये जोग जप मख तप दाना ॥
कवन जोनि जनमेउँ जहँ नाहीं ॥ मैं खगेस भ्रमि भ्रमि जग माहीं ॥

फिर मैंने अनेक जन्म लिये और योग, जप, यज्ञ, तप और दान—अनेक कर्म किये। हे पक्षिराज, वह कौनसी योनि है जिसमें मैंने संसारमें घूम-घूमकर जन्म नहीं लिया।

देखेउँ सब करि करम गोसाईं ॥ सुखी न भयउँ अबहिं की नाईं ॥
सुधि मोहि नाथ जनम बहु केरी ॥ सिवप्रसाद मति मोह न घेरी ॥

हे स्वामिन्, मैंने सब कर्म करके देख लिये; जैसा अब सुखी हुआ हूं वैसा कभी न हुआ था। हे नाथ, मुझे बहुत जन्मोंकी सुध है। शिवजीकी कृपासे मेरी बुद्धिको मोह नहीं घेरा।

दो०—प्रथम जनम के चरित अब ॥ कहउँ सुनहु बिहंगेस।
सुनि प्रभु-पद-रति उपजइ ॥ जातें मिटहिं कलेस ॥१५०॥

हे पक्षिराज, अब मैं अपने पहिले जन्मके चरित कहता हूं; उन्हें सुनो। उन्हें सुनकर प्रभुके चरणोंमें भक्ति उत्पन्न होगी, जिससे क्लेश मिट जायंगे।

पूरब कल्प एक प्रभु ❀ जुग कलिजुग मलमूल।
नर अरु नारि अ-धर्म-रत ❀ सकलनिगम प्रतिकूल॥१५१॥

हे स्वामिन, पूर्व कल्पमें एक युग, कलियुग था जो पापोंका मूल था। उसमें शास्त्रोंके प्रतिकूल पुरुष और स्त्री—सब अधर्ममें लिप्त थे।

तेहि कलजुग कोसलपुर जाई ❀ जनमत भयउं सूद्रतनु पाई॥
सिवसेवक मन क्रम अरु बानी ❀ आन देव निंदक अभिमानी॥

उस कलयुगमें मैंने अयोध्यापुरीमें जाकर जन्म लिया और शूद्रका शरीर पाया। मैं मन, वाणी और कर्मसे शिवजीका सेवक और अन्य देवताओंका अभिमानी निन्दक था।

धन-मद-मत्त परम बाचाला ❀ उग्रबुद्धि उर दंभ बिसाला॥
जदपि रहेउं रघु-पति-रजधानी ❀ तदपि न कछु महिमा तब जानी॥

मैं धनके मदमें मतवाला, अत्यंत वाचाल और तीव्र बुद्धिवाला था। मेरे हृदयमें बड़ा भारी दंभ था। यद्यपि मैं श्रीरामचन्द्रजीकी राजधानीमें रहता था तथापि तब मैंने उसकी महिमा कुछ भी नहीं जानी।

अब जाना मैं अवधप्रभावा ❀ निगमागम पुरान अस गावा॥
कवनेहु जनम अवध बस जोई ❀ रामपरायन सो पर होई॥

अब मैंने अयोध्याका प्रभाव जाना। वेद-शास्त्र और पुराण ऐसा कहते हैं कि किसी जन्ममें भी जो कोई अयोध्यामें बसता है वह अत्यंत रामपरायण होता है।

अवधप्रभाव जान तब प्रानी ❀ जब उर बसहिं राम धनुपानी॥
सो कलिकाल कठिन उरगारी ❀ पापपरायन सब नरनारी॥

अयोध्याका प्रभाव कोई प्राणी तब जानता है जब हाथमें धनुष लिये हुए श्रीरामचन्द्रजी हृदयमें बसते हैं। हे सर्पशत्रु, वह कलियुग बड़ा कठिन था, उसमें सब स्त्री और पुरुष पापपरायण थे।

दो०—कलिमल ग्रसे धर्म सब ❀ गुप्त भये सद्ग्रंथ।
दंभिन्ह निजमति कलपि करि ❀ प्रगट किये बहु पंथ॥१५२॥

कलियुगके पापोंने सब धर्मोंको ग्रास बना लिया। श्रेष्ठ ग्रंथ लुप्त हो गये। दम्भी लोगोंने अपनी बुद्धिसे कल्पित करके बहुतसे पंथ प्रकट कर दिये।

भये लोग सब मोहबस ❀ लोभ ग्रसे सुभ कर्म।
सुनु हरिजान सुग्यान निधि ❀ कहउँ कछुक कलि धर्म ॥१५३॥

सब लोग मोहके वशमें हो गये और लोभने सब शुभ कर्मोंको ग्रास बना लिया। हे विष्णु-वाहन, हे ज्ञान-निधान, सुनो। मैं कुछ कलियुग-धर्म कहता हूं।

बरन धरम नहिं आस्रम चारी ❀ स्रुति-बिरोध-रत सब नरनारी॥
द्विज स्रुतिबेचक भूप प्रजासन ❀ कोउ नहिं मान निगम-अनु-सासन॥

कलियुगमें न चारों वर्णोंके धर्म रहते हैं और न चारों आश्रम। स्त्री-पुरुष, सब वेदके विरोधमें तत्पर रहते हैं। ब्राह्मण वेदको बेचनेवाले होते हैं और राजा होते हैं प्रजाको खा जानेवाले। शास्त्रकी आज्ञाको कोई नहीं मानता।

मारग सोइ जा कहँ जोइ भावा ❀ पंडित सोइ जो गाल बजावा॥
मिथ्यारंभ दंभरत जोई ❀ ता कहँ संत कहहिं सब कोई॥

जिसको जो अच्छा लगे वही मार्ग और जो गाल बजावे वही पण्डित होगा। जो मिथ्यवादी और दम्भमें तत्पर हो, उसको सब कोई साधु पुरुष कहेंगे।

सोइ सयान जो पर-धन-हारी ❀ जो कर दंभ सो बड़ आचारी॥
जो कह झूठ मसखरी जाना ❀ कलिजुग सोइ गुनवंत बखाना॥

जो दूसरोंका धन हरण करनेवाला हो वही सयाना और जो दम्भ करता हो वही बड़ा आचारवान् होगा। जो झूठ बोले और हंसी करना जानता हो वही कलियुगमें गुणवान् कहा जायगा।

निराचार जो स्रुतिपथ त्यागी ❀ कलिजुग सोइ ग्यानी बैरागी॥
जा कें नख अरु जटा बिसाला ❀ सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला॥

कलियुगमें ज्ञानी और वैरागी वही कहा जायगा जो आचारहीन और वेद-मार्गको त्यागनेवाला होगा। कलियुगमें जिसके नख और जटाएं लंबी-लंबी होंगी वही प्रसिद्ध तपस्वी होगा।

दो०—असुभ बेष भूषन धरें ❀ भच्छाभच्छ जे खाहिं।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर ❀ पूज्य ते कलिजुग माहिं॥१५४॥

जो अशुभ भेष और भूषण धारण किये हुए हों, जो भक्ष्याभक्ष्य खाते हों, कलियुगमें वे ही मनुष्ययोगी हैं, वे ही सिद्धजन हैं और वे ही पूजनीय गिने जाते हैं।

सो०—जे अपकारीचार ❀ तिन्ह कर गौरव मान्य बहु।
मन-क्रम-बचन लबार ❀ ते बकता कलिकाल महुँ ॥१५५॥

जो अपकार करनेवाले और चुगली खानेवाले हैं उनका बड़ा गौरव और मान होता है और मन, वाणी और कर्मसे जो लवार हैं वे ही कलियुगमें वक्ता समझे जाते हैं।

नारिबिबस नर सकल गोसाईं ❀ नाचहिं नटमरकट की नाईं॥
सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ग्याना ❀ मेलि जनेऊ लेहिं कुदाना॥

हे स्वामिन्, स्त्रीके वशमें होकर सब पुरुष नाचते हैं; जैसे मदारीके वशमें होकर बंदर। शूद्रजन ब्राह्मणोंको ज्ञानका उपदेश करते हैं और जनेऊ डालकर कुदान ग्रहण करते हैं।

सब नर काम-लोभ-रत क्रोधी ❀ बेद-बिप्र-गुरु-संत-बिरोधी॥
गुनमंदिर सुंदर पति त्यागी ❀ भजहिं नारि परपुरुष अभागी॥

सभी मनुष्य काम और लोभमें तत्पर, क्रोधी, वेद, ब्राह्मण, गुरु और संतजनोंके विरोधी होते हैं। स्त्रियां अभागी होती हैं और गुणोंके स्थान, सुन्दर अपने पतिको त्यागकर पराये पुरुषका सेवन करती हैं।

सौभागिनी बिभूषनहीना ❀ बिधवन्ह के सिंगार नबीना॥
गुरुसिष बधिर अंध कर लेखा ❀ एक न सुनहिं एक नहिं देखा॥

सौभाग्यवती स्त्रियां भूषणहीन रहेंगी और विधवाओंके नवीन शृंगार होंगे। गुरु और शिष्यका लेखा अन्धे और बहरे जैसा होगा—न एक देखेगा और न दूसरा सुनेगा।

हरइ सिष्यधन सोक न हरई ❀ सो गुरु घोर नरक महुँ परई॥
मातु पिता बालकन्ह बोलावहिं ❀ उदर भरइ सोइ धर्म सिखावहिं॥

वह गुरु घोर नरकमें पड़ता है, जो शिष्यका धन तो हरता है, पर शोक नहीं दूर करता। माता-पिता बालकोंको बुलाते हैं और उन्हें वही धर्म सिखलाते हैं जिसमें पेट भरे।

दो०—ब्रह्मग्यान बिनु नारि नर ❀ कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि लोभबस ❀ करहिं बिप्र-गुरु-घात ॥१५६॥

स्त्री और पुरुष ब्रह्मज्ञानको छोड़कर दूसरी बात ही नहीं कहते, परंतु लोभके वशमें एक कौड़ीके लिये ब्राह्मण और गुरुतककी हत्या कर डालते हैं।

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन ❀ हम तुम तें कछु घाटि।
जानइ ब्रह्म सो बिप्रबर ❀ आँखि देखावहिं डाँटि ॥१५७॥

शूद्र लोग ब्राह्मणोंसे विवाद करेंगे कि हम क्या तुमसे कुछ कम हैं ? जो ब्रह्मको जानता हो वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है। इस तरह डाँटकर आँख दिखलायेंगे।

परतिय लंपट कपट सयाने ❀ मोह द्रोह ममता लपटाने ॥
तेइ अभेदवादी ग्यानी नर ❀ देखेउँ मैं चरित्र कलिजुग कर ॥

मैंने कलियुगका यह चरित्र देखा कि उसमें जो मनुष्य परस्त्री-लंपट; कपट रचनेमें चतुर; मोह, द्रोह और ममतामें लिप्त हैं वे ही अभेदवादी ज्ञानी हैं।

आप गये अरु औरनि घालहिं ❀ जो कहुँ सतमारग प्रतिपालहिं ॥
कलप कलप भरि एक एक नरका ❀ परहिं जे दूखहिं स्रुति करि तरका ॥

आप तो गये ही, दूसरोंको जो कहीं सन्मार्गपर चलते हों, ले बैठते हैं। जो लोग तर्क करके वेदोंको दोष लगाते हैं वे सब एक-एक नरकमें कल्प-कल्पभर पड़ते हैं।

जे बरनाधम तेलि कुम्हारा ❀ स्वपच किरात कोल कलवारा ॥
नारि मुई घर संपति नासी ❀ मूँड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी ॥

जो लोग नीच वर्णके तेली, कुम्हार, श्वपच, किरात, कोल, और कलवार हैं, वे ज्योंही स्त्री मरी और घरकी सम्पत्ति नष्ट हुई कि शिर मुड़ाकर संन्यासी हो जाते हैं।

ते बिप्रन्ह सन पाँव पुजावहिं ❀ उभय लोक निज हाथ नसावहिं ॥
बिप्र निरच्छर लोलुप कामी ❀ निराचार सठ बृषलीस्वामी ॥

वे ब्राह्मणोंसे पैर पुजाते हैं और दोनों लोक अपने हाथोंसे बिगाड़ते हैं। ब्राह्मण निरक्षर, लोलुप, कामी, आचारहीन, दुष्ट और दुराचारिणी स्त्रीके पति होते हैं।

सूद्र करहिं जप तप ब्रत दाना ❀ बैठि बरासन कहहिं पुराना ॥
सब नर कल्पित करहिं अचारा ❀ जाइ न बरनि अनीति अपारा ॥

शूद्र जप, तप, व्रत और दान करते हैं, श्रेष्ठ आसनपर बैठकर पुराण बाचते हैं। सब मनुष्य कल्पित आचार करते हैं। अपार अनीतिका वर्णन नहीं किया जाता।

दो०—भये बरनसंकर सकल ❀ भिन्न सेतु सब लोग।
करहिं पाप दुख पावहिं ❀ भय रुज सोक बियोग ॥ १५८ ॥

सब वर्णसंकर हो गये, सब लोगोंने मर्य्यादा छोड़ दी। वे सब पाप करते और दुःख, भय, रोग, शोक और वियोग पाते हैं।

श्रुतिसंमत हरि-भक्ति-पथ ❀ संजुत बिरति बिबेक।
तेहि न चलहिं नर मोहबस ❀ कलपहिं पंथ अनेक ॥ १५६ ॥

वेदसम्मत मार्ग है वैराग्य और विवेकसे युक्त भगवान्‌की भक्ति। मोहके वशमें होकर मनुष्य उसपर नहीं चलते, अनेक पंथोंको कल्पित कर लेते हैं।

तो० छं०—बहुदाम संवारहिं धाम जती ❀ विषया हरि लीन गई बरती॥
तपसी धनवंत दरिद्र गृही ❀ कलिकौतुक तात न जात कही॥

यती लोग बहुत धन लगाकर घर सजाते हैं। विषयोंने उनके वैराग्यको हरण कर लिया है। तपस्वी धनवान् और गृहस्थ दरिद्र होते हैं। हे तात, कलियुगका खेल कहा नहीं जाता।

कुलवंत निकारहिं नारि सती ❀ गृह आनहिं चेरि निबेरि गती॥
सुत मानहिं मातु पिता तब लौं ❀ अबला नहिं डीठ परी जब लौं॥

कुलवान् सती स्त्रीको निकाल बाहर करते हैं और मर्यादाको नष्ट करके घरमें चेरीको ले आते हैं। पुत्र अपने माता और पिताको तभीतक मानते हैं जबतक स्त्रीपर दृष्टि नहीं पड़ी।

ससुरारि पियारि लगी जब तें ❀ रिपुरूप कुटुम्ब भये तब तें॥
नृप पापपरायन धर्म नहीं ❀ करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं॥

जबसे ससुराल प्यारी लगी तबसे कुटुम्बी शत्रुरूप हो गये। राजा पापमें लिप्त रहते हैं, धर्म नहीं रहा, वे नित्य ही प्रजाजनोंको दण्ड देकर विडम्बना किया करते हैं।

धनवंत कुलीन मलीन अपी ❀ द्विजचिह्न जनेउ उघार तपी॥
नहिं मान पुरानन बेदहिं जो ❀ हरिसेवक संत सही कलि सो॥

मलिन हों तोभी धनवान् कुलीन समझे जाते ह। ब्राह्मण होनेका चिह्न यज्ञोपवीत और तपस्वी होनेका पहिचान नंगा होना रह जाता है। जो वेदों और पुराणोंको नहीं मानता वही कलियुगमें सच्चा भगवानका भक्त और साधु पुरुष है।

कबिबृंद उदार दुनी न सुनी ❀ गुन-दूषन-ब्रात न कोपि गुनी॥
कलि बारहिं बार दुकाल परे ❀ बिनु अन्न दुखी सब लोग मरे॥

दुनियामें उदार कवि नहीं सुननेमें आते। गुण और दोषोंको बतानेवालोंके झुण्ड हैं, पर कोई गुणी नहीं है। कलियुगमें बार-बार अकाल पड़ता है और अन्न बिना दुःखी होकर सब लोग मरते हैं।

दो०—सुनु खगेस कलि कपट हठ ❀ दंभ द्वेष पाखंड।
मान मोह मारादि मद ❀ ब्यापि रहे ब्रह्मंड ॥ १६० ॥

हे पक्षिराज सुनो, कलियुगमें सारे ब्रह्मांडमें कपट, हठ, दम्भ, द्वेष, पाखंड, मान, मोह, कामदेव, मद—स व्याप्त हो रहे हैं।

तामस धर्म करहिं सब ❀ जप तप मख ब्रत दान।
देव न बरषहिं धरनिपर ❀ बये न जामहिं धान ॥ १६१ ॥

सब लोग जप, तप, यज्ञ, व्रत, दान—सब तामसधर्म करते हैं। पृथिवीपर देवता जल नहीं बरसाते और बोये हुए धान्य नहीं जमते।

तोटक—अबला कच भूषन भूरि छुधा ❀ धनहीन दुखी ममता बहुधा ॥
सुख चाहहिं मूढ़ न धर्मरता ❀ मति थोरि कठोरि न कोमलता ॥

कलियुगमें स्त्रियोंके केश ही भूषण होते हैं, भूख बहुत होती है, सब लोग धनहीन और दुःखी होते हैं, बहुत तरहकी ममता होती है। मूर्ख सुख चाहते हैं, पर धर्ममें तत्पर नहीं होते। बुद्धि थोड़ी होती है और उसमें कठोरता होती है, कोमलता नहीं।

नर पीड़ित रोग न भोग कहीं ❀ अभिमान बिरोध अकारनहीं ॥
लघु जीवन संवत पंचदसा ❀ कलपांत न नास गुमान असा ॥

मनुष्य रोगपीड़ित रहते हैं, सुख कहीं नहीं होता। अकारण ही सब लोग अभिमान और विरोध करते हैं। पचास वर्षका थोड़ा जीवन; उसपर भी गुमान ऐसा होता है, मानों कल्पान्तमें भी नाश न होगा।

कलिकाल बिहाल किये मनुजा ❀ नहिं मानत कोउ अनुजा तनुजा ॥
नहिं तोष बिचार न सीतलता ❀ सब जाति कुजाति भये मंगता ॥

कलियुगने मनुष्योंको बेहाल कर दिया, बहिनों और पुत्रियोंको कोई नहीं मानता। न संतोष है, न विचार और न शीतलता। जाति और कुजाति—सब लोग मंगता बन गये।

इरषा परुषाच्छर लोलुपता ❀ भरि पूरि रही समता बिगता ॥
सब लोग बियोग बिसोक हये ❀ बरनास्रम धर्म बिचार गये ॥

ईर्ष्या, कठोरभाषिता और अत्यन्त लोभ—ये पूरी तरहसे भर रहे हैं। समता नष्ट हो गयी है। सब लोग वियोग और अधिक शोकसे पीड़ित हो गये; वर्णाश्रमधर्मके विचार दूर हो गये।

दम दान दया नहिं जानपनी ❀ जड़ता पर-बंचनताति-घनी ॥
तनुपोषक नारि नरा सगरे ❀ परनिंदक ते जग मों बगरे ॥

जितेन्द्रियता, दान, दयाको पैसेवाले नहीं जानते। मूर्खता और दूसरोंके साथ ठगी बहुत अधिक होती है। सब स्त्री-पुरुष अपने शरीरोंको पुष्ट करनेवाले हो गये, दूसरोंकी निन्दा करनेवाले संसारमें फैल गये।

दो०—सुनु ब्यालारि कराल कलि ❀ मल अवगुन आगार।
गुनउ बहुत कलिजुग कर ❀ बिनु प्रयास निस्तार ॥ १६२ ॥

हे सर्प-शत्रु, गरुड़, सुनो। कलियुग अत्यन्त कराल है, यह पापों और अवगुणोंका भाण्डार है, परंतु कलियुगमें गुण भी बहुत है। यह परिश्रमके बिना ही निस्तार कर देता है।

कृत त्रेता द्वापर समय ❀ पूजा मख अरु जोग।
जो गति होइ सो कलि बिषय ❀ नाम तें पावहिं लोग ॥ १६३ ॥

सत्ययुग, त्रेतायुग और द्वापर युगमें पूजा, यज्ञ, और योग करनेसे जो गति होती है वही कलियुगमें लोग भगवान्‌का नाम लेनेसे ही पा जाते हैं।

कृतजुग सब जोगी बिग्यानी ❀ करि हरिध्यान तरहिं भव प्रानी ॥
त्रेता बिबिध जग्य नर करहीं ❀ प्रभुहिं समर्पि करम भव तरहीं ॥

सत्ययुगमें सब प्राणी योगी और विज्ञानी होते हैं और भगवान्‌का ध्यान करते ही संसारसे तर जाते हैं। त्रेतामें मनुष्य तरह-तरहके यज्ञ करते हैं और अपने कर्मोंको भगवान्‌के अर्पणकर संसारको तर जाते हैं।

द्वापर करि रघुपति-पद-पूजा ❀ नर भव तरहिं उपाउ न दूजा ॥
कलिजुग केवल हरि-गुन-गाहा ❀ गावत नर पावहिं भवथाहा ॥

द्वापरमें श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंकी पूजा करके मनुष्य संसारको तरते हैं, दूसरा कोई उपाय नहीं है। कलियुगमें केवल भगवान्‌के गुणोंकी कथा गानेसे ही मनुष्य संसारकी थाह पा जाते हैं।

कलिजुग जोग न जग्य न ग्याना ❀ एक अधार राम-गुन-गाना ॥
सब भरोस तजि जो भज रामहिं ❀ प्रेमसमेत गाव गुनग्रामहिं ॥

कलियुगमें न योग है, न यज्ञ, और न ज्ञान; एक ही आधार है—श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान। सब भरोसा छोड़कर जो श्रीरामचन्द्रजीको भजता है और प्रेमके साथ जो उनके गुणसमूहोंको गाता है—

सोइ भव तर कछु संसय नाहीं ❀ नामप्रताप प्रगट कलि माहीं ॥
कलि कर एक पुनीत प्रतापा ❀ मानस पुन्य होइ नहिं पापा ॥

वही मनुष्य संसारमें तर जाता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं। कलियुगमें श्रीरामचन्द्रजीके नामका प्रताप प्रकट है। कलियुगका एक पवित्र प्रताप है कि मनसे किया हुआ पुण्य तो हो जाता है, पर पाप नहीं होता।

दो०—कलि-जुग-सम जुग आन नहिं ❀ जो नर कर बिस्वास।
गाइ राम-गुन-गन बिमल ❀ भव तर बिनहिं प्रयास ॥१९४॥

यदि मनुष्य विश्वास करे तो कलियुगके समान दूसरा युग नहीं है, जिसमें परिश्रमके बिना ही केवल श्रीरामचन्द्रजीके विमल गुणोंके समूहोंको गाकर लोग संसार तर जाते हैं।

प्रगट चारि पद धर्म के ❀ कलि महं एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हे ❀ दान करइ कल्यान ॥ १९५ ॥

धर्मके चार चरण प्रकट हैं, परन्तु कलियुगमें उनमेंसे एक प्रधान है—जिस किसी विधिसे दिया हुआ भी दान कल्याण करता है।

कृत जुग होहिं धम सब केरे ❀ हृदय राम माया के प्रेरे॥
सुद्ध सत्व समता बिग्याना ❀ कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना॥

हृदयोंमें श्रीरामचन्द्रजीकी मायाकी प्रेरणासे नित्य ही युगोंके धर्म होते रहते हैं। जब शुद्ध सत्वगुण, समता और विज्ञान होते हैं और मन प्रसन्न होता है, तब सतयुगका प्रभाव जानना चाहिये।

सत्व बहुत रज कछु रति कर्मा ❀ सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा॥
बहु रज सत्व स्वल्प कछु तामस ❀ द्वापर धरमु हरष भय मानस॥

सत्वगुण बहुत, रजोगुण कम और कर्म करनेमें प्रेम और सब प्रकारसे सुख—यह त्रेताका धर्म है। रजोगुण बहुत, सत्वगुण कम और कुछ तमोगुण—यह द्वापरयुगका धर्म है। यह मनमें प्रसन्नता उत्पन्न करनेवाला है।

तामस बहुत रजोगुन थोरा ❀ कलिसुभाव बिरोध चहु ओरा॥
बुध जुगधर्म जानि मन माहीं ❀ तजि अधर्म रति धरम कराहीं॥

तमोगुण बहुत, रजोगुण कम और चारों ओर विरोध—यह कलियुगका स्वभाव है। पण्डित लोग मनमें युगधर्म जानकर अधर्मको छोड़ते और धर्ममें प्रेम करते हैं।

कालधर्म नहिं ब्यापहिं तेही ❀ रघुपति-चरन-प्रीति-रति जेही॥
नटकृत कपट बिकट खगराया ❀ नट सेवकहिं न ब्यापइ माया॥

जिसको श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंसे प्रीति और भक्ति होती है उसे कालके धर्म नहीं व्यापते। हे पक्षिराज, नटके किये हुए विकट कपट जिस प्रकार नटके सेवकको नहीं व्यापते उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजीके सेवकको उनकी माया नहीं व्यापती

दो०—हरि-माया-कृत दोष गुन ❀ बिनु हरिभजन न जाहिं।
भजिय राम सब काम तजि ❀ अस बिचारि मन माहिं ॥१६६॥

भगवान्‌की मायाके किये हुए दोष और गुण भगवान्‌के भजन बिना नहीं जाते, मनमें ऐसा विचारकर सब काम छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करना चाहिये।

तेहि कलिकाल बरष बहु ❀ बसेउँ अवध बिहगेस।
परेउ दुकाल बिपतिबस ❀ तब मैं गयेउँ बिदेस ॥ १६७ ॥

हे पक्षिराज, उस कलिकालमें मैं बहुत वर्षोंतक अयोध्यामें रहा। फिर जब वहां दुष्काल पड़ा तब मैं विपत्तिवश विदेश चला गया।

गयेउँ उजेनी सुनु उरगारी ❀ दीन मलीन दरिद्र दुखारी ॥
गये काल कछु संपति पाई ❀ तहँ पुनि करउँ संभुसेवकाई ॥

हे सर्पशत्रु, सुनो। मैं दीन, मलिन, दरिद्र और दुःखी होकर उज्जैन गया। कुछ समय बीतनेपर मैंने सम्पत्ति पायी। फिर मैं वहां शिवजीकी सेवा करने लगा।

बिप्र एक बैदिक सिवपूजा ❀ करइ सदा तेहि काज न दूजा ॥
परमसाधु परमारथबिंदक ❀ संभुउपासक नहिं हरिनिंदक ॥

एक ब्राह्मण नित्य वैदिक विधिसे शिवजीकी पूजा किया करता था। उसे और दूसरा काम ही न था। वह अत्यन्त साधु और परमार्थ जाननेवाला था। वह शिवजीका उपासक तो था, पर भगवान् विष्णुकी निन्दा करनेवाला नहीं।

तेहि सेवउँ मैं कपटसमेता ❀ द्विज दयाल अति नीतिनिकेता ॥
बाहिज नम्र देखि मोहि साईं ❀ बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाईं ॥

मैं कपट रखकर उसकी सेवा किया करता था। ब्राह्मण अत्यन्त दयालु और नीतिका स्थान था। हे स्वामिन् मुझे बाहरसे नम्र देखकर वह ब्राह्मण पुत्रकी भांति पढ़ाता था।

संभुमंत्र मोहि द्विजबर दीन्हा ❀ सुभउपदेस बिबिधबिधि कीन्हा ॥
जपउँ मंत्र सिवमंदिर जाई ❀ हृदय दंभ अहमिति अधिकाई ॥

उस ब्राह्मण श्रेष्ठने मुझे शिवजीका मंत्र दिया और अनेक प्रकारसे कल्याणकर उपदेश भी दिया। शिवजीके मन्दिरमें जाकर मैं उस मन्त्रको जपता था। मेरे हृदयमें दम्भ और अहंकार बढ़ता ही जाता था।

दो०—मैं खल मलसंकुल मति ❀ नीच जाति सब मोह।
हरिजन द्विज देखे जरउँ ❀ करउँ बिस्नु कर द्रोह ॥ १६८ ॥

मैं दुष्ट था, मेरी बुद्धि मैलसे भरी हुई थी, मैं मोहके वशमें हो रहा था, मैं नीच जातिका था, इससे भगवान्के सेवकों और ब्राह्मणोंको देखते ही जल उठता था और विष्णुका द्रोह करता था ।

सो०—गुरु नित मोहि प्रबोध ❀ दुखित देखि आचरन मम ।
मोहि उपजइ अति क्रोध ❀ दंभिहि नीति कि भावई ॥१६९॥

मेरे आचरणको देखकर गुरु दुःखित होते और मुझे नित्य समझाते थे; परन्तु मुझे इससे अत्यन्त क्रोध उत्पन्न होता था । दम्भी मनुष्यको भी क्या नीति कभी अच्छी लगती है ।

एक वार गुरु लीन्ह बोलाई ❀ मोहि नीति बहु भाँति सिखाई ॥
सिवसेवा कै सुत फल सोई ❀ अबिरल - भगति रामपद होई ॥

एक वार गुरुने मुझे बुला लिया और अनेक प्रकारसे नीति सिखलायी । उन्होंने कहा, हे पुत्र, शिवजीकी सेवाका फल यही है कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ भक्ति होवे ।

रामहिं भजहिं तात सिव धाता ❀ नर पावँर कै केतिक बाता ॥
जासु चरन अज सिव अनुरागी ❀ तासु द्रोह सुख चहसि अभागी ॥

हे तात; शिव और ब्रह्मा भी श्रीरामचन्द्रजीका भजन करते हैं, फिर नीच मनुष्यकी बात ही कितनी है ? अरे अभागे, जिसके चरणोंसे शिवजी और ब्रह्माजी प्रेम करते हैं, उससे द्रोह करके तू सुख चाहता है !

हर कहँ हरिसेवक गुरु कहेऊ ❀ सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥
अधम जाति मैं बिद्या पाये ❀ भयउँ जथा अहि दूध पिआये ॥

गुरुने जब शिवजीको विष्णुका सेवक कहा तब ऐसा सुनकर, हे पक्षियोंके स्वामी गरुड़, मेरा हृदय जल उठा । मैं नीचजाति विद्या पाकर वैसा ही हुआ, जैसा दूध पिलानेसे सर्प हो जाता है ।

मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती ❀ गुरु कर द्रोह करउँ दिन राती ॥
अतिदयाल गुरु स्वल्प न क्रोधा ❀ पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा ॥

अभिमानी, दुष्ट, मंद भाग्यवाला और कुजाति मैं दिनरात गुरुका द्रोह करता था । गुरु अत्यंत दयालु थे, कभी थोड़ा भी क्रोध न करते थे और मुझे बार-बार उत्तम ज्ञान सिखलाते थे।

जेहि तें नीच बड़ाई पावा ❀ सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा ॥
धूम अनलसंभव सुनु भाई ❀ तेहि बुझाव घनपदवी पाई ॥

जिससे नीच बड़ाई पाता है उसे वह पहिले ही हठ करके नष्ट कर डालता है। हे भाई, सुनो, धुआं अग्निसे उत्पन्न होता है; परन्तु मेघकी पदवी पाकर वह उसी अग्निको बुझाता है ।

रज मग परी निरादर रहई ❀ सब कर पगप्रहार नित सहई ॥
मरुत उड़ाइ प्रथम तेहि भरई ❀ नृपकिरीट पुनि नयनन्ह परई ॥

रास्तेमें पड़ी हुई धूल आदरहीन होकर रहती है और नित्य सबके चरणोंकी चोट सहती है; परन्तु उसीको जब हवा उड़ाती है तब पहिले वह हवाको ही भर देती है और फिर राजाके मुकुटपर या नेत्रोंमें जाकर पड़ती है।

सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा ❀ बुध नहिं करहिं अधम कर संगा ॥
कबि कोबिद गावहिं अस नीती ❀ खल सन कलह न भल नहिं प्रीती ॥

हे पक्षियोंके स्वामी गरुड़, सुनो। ऐसा प्रसंग समझकर ही पण्डितजन नीचका संग नहीं करते। कविजन और विद्वान् ऐसी नीति बतलाते हैं कि दुष्टके साथ न कलह करना ही अच्छा है और न प्रीति ही।

उदासीन नित रहिय गोसाईं ❀ खल परिहरिय स्वान की नाईं ॥
मैं खल हृदय कपट कुटिलाई ❀ गुरु हित कहहिं न मोहि सुहाई ॥

हे स्वामिन्, नित्य उदासीन रहना चाहिये और दुष्टको कुत्तेकी भाँति छोड़ देना चाहिये। मैं दुष्ट था, मेरे हृदयमें कपट और दुष्टता थी। गुरु मेरे हितकी बात कहते थे और वह मुझे अच्छी न लगती थी।

दो०—एक बार हर मंदिर ❀ जपत रहेउँ सिव नाम।
गुरु आयउ अभिमान तें ❀ उठि नहिं कीन्ह प्रनाम ॥१७०॥

एक बार शिवजीके मंदिरमें मैं शिवजीका नाम जप रहा था कि गुरु आये। मैंने अभिमानसे उठकर उन्हें प्रणाम नहीं किया।

गुरु दयाल नहिं कछु कहेउ ❀ उर न रोष लवलेस।
अति अघ गुरुअपमानता ❀ सहि नहिं सके महेस ॥१७१॥

दयालु गुरुने कुछ भी नहीं कहा। उनके हृदयमें लवलेश भी क्रोध नहीं हुआ, परन्तु गुरुका अपमान करना महा पाप है, उसे शिवजी नहीं सह सके।

मंदिर माँझ भई नभबानी ❀ रे हतभाग्य अग्य अभिमानी ॥
जद्यपि तव गुरु के नहिं क्रोधा ❀ अति कृपाल उर सम्यक बोधा ॥

उसी समय मंदिरमें आकाशवाणी हुई। अरे हतभाग्य अज्ञानी, अभिमानी, यद्यपि तेरे गुरुको क्रोध नहीं है, क्योंकि वे अत्यन्त कृपालु हैं और उनके हृदयमें पूर्ण ज्ञान है—

तदपि साप सठ देइहउँ तोही ❀ नीतिबिरोध सुहाइ न मोही ॥
जौं नहिं दंड करउँ खल तोरा ❀ भ्रष्ट होइ श्रुतिमारग मोरा ॥

तथापि, अरे दुष्ट, मैं तुझे शाप दूँगा, क्योंकि नीतिके प्रतिकूल आचरण मुझे नहीं सुहाता। अरे दुष्ट, यदि मैं तुझे दण्ड नहीं दूँगा तो मेरा वेदमार्ग भ्रष्ट हो जायगा।

जे सठ गुरु सन इरषा करहीं ❀ रौरव नरक कोटिजुग परहीं ॥
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा ❀ अयुत जनम भरि पावहिं पीरा ॥

जो दुष्ट, गुरुसे ईर्ष्या करते हैं वे करोड़ युगोंतक रौरव नरकमें पड़ते हैं। फिर तीनों लोकोंकी असंख्य योनियोंमें शरीर धारण करते और दस हजार जन्मभर पीड़ा पाते हैं।

बैठि रहेसि अजगर इव पापी ❀ सर्प होहि खल मल मति ब्यापी ॥
महा बिटप-कोटर महुँ जाई ❀ रहु अधमाधम अधगति पाई ॥

अरे पापी, तू अजगरकी भांति बैठा रहा। अरे दुष्ट, तेरी बुद्धिमें पाप छा गया है। तू सर्प होगा। अरे नीचातिनीच, तू नीच गति पाकर किसी विशाल वृक्षके कोटरमें जाकर रह।

दो०—हाहाकार कीन्ह गुरु ❀ दारुन सुनि सिवश्राप।
कंपित मोहि बिलोकि अति ❀ उर उपजा परिताप ॥१७२॥

शिवजीका कठोर शाप सुनकर गुरुने हाहाकार किया। मुझे कांपता हुआ देखकर उनके हृदयमें बड़ा परिताप उत्पन्न हुआ।

करि दंडवत सप्रेम द्विज ❀ सिव सनमुख कर जोरि।
बिनय करत गदगद गिरा ❀ समुझि घोरगति मोरि ॥१७३॥

मेरी घोर गति समझकर ब्राह्मण गुरुने प्रेमके साथ दण्डवत् की और फिर हाथ जोड़कर शिवजीके सामने गद्गद् वाणीसे, विनती करने लगे।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपम् ❀ विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम्।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम् ❀ चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम् ॥

मैं ईश्वर शिवजीको नमस्कार करता हूं, जो मोक्षस्वरूप, विभु, व्यापक ब्रह्म, वेदस्वरूप, निर्गुण, निर्विकल्प, इच्छाशून्य, चैतन्य, आकाशरूप, आकाशमें रहनेवाले और आत्मरूप हैं। मैं उनको भजता हूं।

निराकारमोङ्कारमूलं तुरीयम् ❀ गिराग्यानगोतीतमीशं गिरीशम् ॥
करालं महाकालकालं कृपालम् ❀ गुणागारसंसारपारं नतोऽहम् ॥

मैं निराकार; ओंकारके मूल; त्रिगुणात्मकसे परे; वाणी, ज्ञान और इन्द्रियोंकी पहुंचसे बाहर; ईश्वर; कैलाश पर्वतके स्वामी; कराल; महाकालके भी काल; कृपालु; गुणोंके भांडार और संसारके पार—आपको मैं नमस्कार करता हूं।

तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम् ❀ मनोभूतकोटि प्रभाश्रीशरीरम् ॥
स्फुरन्मौलिकल्लोलिनीचारु गङ्गा ❀ लसद्भालबालेन्दु कण्ठे भुजङ्गा ॥

तुषारके पर्वतके समान आप गौरवर्ण हैं, करोड़ों कामदेवोंकी प्रभाके समान आपके शरीरकी कांति है, आपके देदीप्यमान मस्तकपर कल्लोल करती हुई सुन्दर गंगाजी हैं, ललाटपर बालचन्द्र और कंठमें सर्प शोभित हो रहे हैं।

चलत्कुण्डलं शुभ्रनेत्रं विशालम् ❀ प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालम् ॥
मृगाधीशचर्माम्बरं मुण्डमालम् ❀ प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥

आप चंचल कुंडलवाले हैं, आपके नेत्र शुभ्र हैं, आप विशाल हैं, नील-कंठ हैं, आप दयालु हैं, आपका मुख प्रसन्न है, आप पशुराज सिंहके चर्मको वस्त्रकी भांति धारण करनेवाले, मुंडोंकी माला धारण करनेवाले, घोर, कल्याण करनेवाले और सबके स्वामी हैं। आपको मैं भजता हूं।

प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम् ❀ अखण्डं अजं भानुकोटिप्रकाशम् ॥
त्रयःशूलनिर्मूलनं शूलपाणिम् ❀ भजेऽहंभवानीपतिं भावगम्यम् ॥

प्रचंड, श्रेष्ठ, गंभीर, परेश, अखंड, अज, करोड़ सूर्योंके समान प्रकाशमान, तीनों प्रकारकी पीड़ाओंको दूर करनेवाले, हाथमें त्रिशूल धारण करनेवाले, भावगम्यभवानीपति शिवजीको मैं भजता हूं।

कलातीतकल्याणकल्पान्तकारी ❀ सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ॥
चिदानन्दसन्दोहमोहापकारी ❀ प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥

आप कलाओंसे परे, कल्याण करनेवाले, और कल्पांतकारी हैं, आप सज्जनोंको सदा आनन्द देनेवाले और त्रिपुर नामक दैत्यके शत्रु हैं। आप चैतन्यस्वरूप, आनन्दके समूह, मोहका नाश करनेवाले और कामदेवके शत्रु हैं। हे प्रभो, आप प्रसन्न हों, प्रसन्न हों।

न यावद् उमानाथपादारविन्दम् ❀ भजन्तीह लोके परे वा नराणाम् ॥
न तावत्सुखं शान्तिसन्तापनाशम् ❀ प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासम् ॥

मनुष्योंमें जबतक उमापति शिवजीके चरण कमलोंको कोई नहीं भजता, तबतक इस लोक वा परलोकमें कहीं भी सुख और शान्ति नहीं मिलती; और न संतापका नाश ही होता है। हे समस्त प्राणियोंके अंतर्यामी, हे प्रभो, आप प्रसन्न हों।

न जानामि योगं जपं नैवपूजाम् ❀ नतोऽहं सदा सर्वदाशम्भु तुभ्यम् ॥
जराजन्मदुःखौघतातप्यमानम् ❀ प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो ॥

न मैं योग जानता हूं, न जप, और न पूजा ही जानता हूं। परन्तु हे शम्भो, मैं सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूं। हे प्रभो, हे शम्भो, हे ईश्वर, वृद्धावस्था, जन्म और दुःखोंके समूहोंसे जलते हुए इस शरणागतकी— मेरी—रक्षा कीजिये।

श्लोक—रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

शिवजीके प्रसन्न होनेके लिये ब्राह्मणने इस रुद्राष्टकको कहा। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इसका पाठ करते हैं उनपर शिवजी प्रसन्न हो जाते हैं।

दो०—सुनि विनती सर्वग्य सिव ❀ देखि बिप्रअनुरागु।
मंदिर नभ बानी भई ❀ द्विजबर अब बर मागु ॥ १७४ ॥

सर्वज्ञ शिव विनती सुनकर और ब्राह्मणका प्रेम देखकर प्रसन्न हो गये। मन्दिरमें फिर यह आकाशवाणी हुई कि हे ब्राह्मणश्रेष्ठ, अब वरदान मांगो।

जौं प्रसन्न प्रभु मो पर ❀ नाथ दीनपर नेहु।
निज पद पद्म-भगति दृढ़ ❀ पुनि दूसर बर देहु ॥ १७५ ॥

ब्राह्मणने कहा—हे प्रभो, यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं और हे नाथ, यदि इस दीन जनपर प्रेम हो तो अपने चरणकमलोंमें दृढ़ भक्ति दीजिये और फिर दूसरा वरदान यह दीजिये—

तव मायाबस जीव जड़ ❀ संतत फिरहिं भुलान।
तेहि पर क्रोध न करिय प्रभु ❀ कृपासिंधु भगवान ॥ १७६ ॥

आपकी मायाके वशमें होकर मूर्ख जीव भूले हुए सर्वदा फिरा करते हैं। हे प्रभो, हे कृपासागर, हे भगवन्, उनपर आप क्रोध नहीं कीजिये।

संकर दीनदयाल अब ❀ एहि पर होहु कृपाल।
साप अनुग्रह होइ जेहि ❀ नाथ थोरेही काल ॥ १७७ ॥

हे दीनोंपर दया करनेवाले शंकर, अब आप इसपर दयालु हो जाइये, जिससे हे नाथ, थोड़े ही कालमें यह शापसे मुक्त हो जावे।

एहि कर होइ परमकल्याना ❀ सोइ करहु अब कृपानिधाना ॥
बिप्रगिरा सुनि पर-हित-सानी ❀ एवमस्तु तब भइ नभबानी ॥

हे दयानिधान, अब आप वही कीजिये जिसमें इसका परम कल्याण होवे। दूसरेका हित होनेकी भावनासे सनी हुई ब्राह्मणकी वाणी सुनकर "ऐसा ही हो"—यह आकाशवाणी हुई।

जदपि कीन्ह यह दारुन पापा ❀ मैं पुनि दीन्ह कोप करि सापा ॥
तदपि तुम्हार साधुता देखी ❀ करिहउँ एहि पर कृपा बिसेखी ॥

आकाशवाणीने कहा—यद्यपि इसने यह महा कठोर पाप किया है, फिर मैंने क्रोध करके इसे शाप दिया है, तथा तुम्हारी साधुता देखकर मैं इसपर विशेष कृपा करूँगा।

छमासील जे परउपकारी ❀ ते द्विज मोहि प्रिय जथा खरारी ॥
मोर साप द्विज ब्यर्थ न जाइहि ❀ जनम सहस्र अवसि यह पाइहि ॥

जो ब्राह्मण क्षमाशील हैं, परोपकारी हैं, वे मुझे ऐसे ही प्रिय हैं जैसे श्रीरामचन्द्रजी। हे ब्राह्मण, मेरा शाप व्यर्थ नहीं जायगा और यह एक हजार जन्म अवश्य पायगा।

जनमत मरत दुसह दुख होई ❀ एहि स्वल्पउ नहिं ब्यापिहि सोई ॥
कवनेहुँ जनम मिटिहि नहिं ग्याना ❀ सुनहि सूद्र मम बचन प्रमाना ॥

जन्म लेते और मरते समय जो दुःसह दुःख होता है वह इसे थोड़ा भी नहीं व्यापेगा। किसी जन्ममें भी इसका ज्ञान नहीं मिटेगा। यह शूद्र मेरे यथार्थ वचनोंको सुन ले।

रघुपति-पुरीं जनम तव भयऊ ❀ पुनि तैं मम सेवा मन दयऊ ॥
पुरीप्रभाव अनुग्रह मोरें ❀ रामभगति उपजिहि उर तोरें ॥

तेरा जन्म श्रीरामचन्द्रजीकी नगरीमें हुआ। फिर तूने मेरी सेवामें मन लगाया। अयोध्यापुरीके प्रभाव और मेरी दयासे तेरे हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति उत्पन्न होगी।

सुनु मम बचन सत्य अति भाई ❀ हरितोषन ब्रत द्विजसेवकाई ॥
अब जनि करहि बिप्रअपमाना ❀ जानेसु संत अनंतसमाना ॥

हे भाई, सुनो। मेरा वचन अत्यन्त सत्य है। ब्राह्मणकी सेवाका व्रत भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला है। अब ब्राह्मणका अपमान मत करना और साधुजनोंको अनन्त भगवान्‌के समान ही जानना।

इंद्रकुलिस मम सूल बिसाला ❀ कालदंड हरिचक्र कराला ॥
जो इन्ह कर मारा नहिं मरई ❀ बिप्र-द्रोह-पावक सो जरई ॥

इन्द्रका वज्र, मेरा विशाल त्रिशूल, कालका दण्ड, भगवान्‌का चक्र—इन सबसे भी जो मारे नहीं मरता वह ब्राह्मण-द्रोहकी अग्निमें जल जाता है।

अस बिबेक राखेहु मन माहीं ❀ तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥
औरउ एक आसिषा मोरी ❀ अ-प्रति-हत गति होइहि तोरी ॥

मनमें ऐसा विवेक रखना, फिर तुम्हारे लिये संसारमें कुछ भी दुर्लभ नहीं है। मेरी एक और भी आशिष है—तेरी गति अबाध होगी।

दो०—सुनि सिवबचन हरषि गुरु ❀ एवमस्तु इति भाखि।
मोहि प्रबोधि गयउ गृह ❀ संभु चरन उर राखि ॥ १७८ ॥

शिवजीके वचन सुनकर प्रसन्न होकर गुरु "ऐसा ही हो" यह कहकर मुझे समझाकर और शिवजीके चरणोंको हृदयमें रखकर अपने घर गये।

प्रेरित काल बिंधिगिरि ❀ जाइ भयउँ मैं ब्याल।
पुनि प्रयास बिनु सो तनु ❀ तजेउँ गये कछु काल ॥ १७९ ॥

कालकी प्रेरणासे मैं विन्ध्याचलपर जाकर सर्प हुआ। फिर कुछ समय बीतनेपर वह शरीर भी मैंने बिना ही परिश्रम त्याग दिया।

जो तनु धरउँ तजउँ पुनि ❀ अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट पहिरइ ❀ नर परिहरइ पुरान ॥ १८० ॥

हे विष्णुवाहन, जैसे कोई मनुष्य पुराने वस्त्र त्याग देता और नये वस्त्र पहिन लेता है, वैसे ही मैं जो शरीर धारण करता उसे फिर अनायास ही त्याग देता था।

सिव राखी स्रुतिनीति अरु ❀ मैं नहिं पाव कलेस।
एहि बिधि धरेउँ बिबिध तनु ❀ ग्यान न गयउ खगेस ॥ १८१ ॥

शिवजीने वेदकी नीतिकी भी रक्षा की और मैंने भी क्लेश नहीं पाया। हे पक्षिराज, इस प्रकार मैंने तरह-तरहके शरीर धारण किये, पर मेरा ज्ञान नहीं दूर हुआ।

त्रिजग देव नर जो तनु धरऊँ ❀ तहँ तहँ रामभजन अनुसरऊँ ॥
एक सूल मोहि बिसर न काऊ ❀ गुरु कर कोमल सील सुभाऊ ॥

तीनों लोकोंमें देवता और मनुष्यका जो शरीर जहां-जहां रखता, वहां-वहां श्रीरामचन्द्रजीका भजन किया करता था। एक दुःख मुझे कभी नहीं भूला कि गुरुका स्वभाव कोमल और शील था।

धरमदेह मैं द्विज कै पाई ❀ सुरदुर्लभ पुरान स्रुति गाई ॥
खेलउँ तहां बालकन्ह मीला ❀ करउँ सकल रघुनायक लीला ॥

फिर मैंने ब्राह्मणका धर्मशरीर पाया, जिसे वेदों और पुराणोंने देवदुर्लभ बतलाया है। वहां बालकोंके साथ मिलकर मैं खेलता और श्रीरामचन्द्रजीकी सब लीलाएँ किया करता था।

प्रौढ़ भये मोहि पिता पढ़ावा ● समुझउँ सुनउँ गुनउँ नहिं भावा ॥
मन तें सकल बासना भागी ● केवल रामचरन लय लागी ॥

बड़ा होनेपर मुझे पिताने पढ़ाया। मैं उसे समझता, सुनता और गुनता था, पर वह मुझे भाता न था। मनसे सब वासनाएँ दूर हो गयीं, केवल श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें लगन लग गयी।

कहु खगेस अस कवन अभागी ● खरी सेव सुरधेनुहिं त्यागी ॥
प्रेममगन मोहि कछु न सुहाई ● हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई ॥

हे पक्षिराज, भला बतलाओ, ऐसा अभागा कौन है जो कामधेनुको छोड़कर गधीकी सेवा करे। प्रेममग्न होनेके कारण मुझे कुछ न सुहाता था, यहांतक कि मेरे पिता पढ़ा-पढ़ाकर हार गये।

भए कालबस जब पितु माता ● मैं बन गयउँ भजन जनत्राता ॥
जहँ जहँ बिपिन मुनीस्वर पावउँ ● आस्रम जाइ जाइ सिरु नावउँ ॥

जब माता और पिता कालके वशमें हो गये तब मैं भक्तोंकी रक्षा करनेवाले भगवान्‌का भजन करनेके लिये वनमें चला गया। वनमें जहां-जहां मैं मुनीश्वरोंको पाता वहां-वहां आश्रममें जा-जाकर शिर नवाता था।

बूझउँ तिन्हहि राम-गुन-गाहा ● कहहिं सुनउँ हरषित-खगनाहा ॥
सुनत फिरउँ हरिगुन अनुबादा ● अब्याहत-गति संभुप्रसादा ॥

हे पक्षिराज, उन मुनीश्वरोंसे मैं श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कथा पूछता था। वे जब उसे कहने लगते तब मैं प्रसन्न होकर उसे सुनता था। शिवजीकी दयासे मेरी स्वच्छन्द गति तो थी ही, मैं भगवान्‌का गुणानुवाद सुनता फिरता था।

छूटी त्रिबिध ईषना गाढ़ी ● एक लालसा उर अति बाढ़ी ॥
राम-चरण-बारिज जब देखउँ ● तब निज जनम सुफल करि लेखउँ ॥

लोकमें बड़ाई, पुत्र, स्त्री और धन पानेकी इच्छा—तीनों प्रकारकी प्रबल लालसाएँ दूर हो गयीं। हृदयमें एक ही अभिलाषा अत्यन्त अधिक हुई—मैं जब श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंको देखूँ तब अपना जन्म सफल समझूँ।

जेहि पूछउँ सोइ मुनि अस कहई ● ईस्वर सब-भूत-मय अहई ॥
निर्गुन मत नहिं मोहि सुहाई ● सगुन ब्रह्मरति उर अधिकाई ॥

जिससे पूछता वही मुनि ऐसा कहने लगता था कि ईश्वर सब प्राणिमय है। यह निर्गुण मत मुझे न भाता था। मेरे हृदयमें सगुण ब्रह्मका प्रेम बढ़ता ही जाता था।

दो०—गुरुके बचन सुरति करि ※ रामचरन मन लाग।
रघु-पति-जस गावत फिरउँ ※ छन छन नव अनुराग ॥ १८२ ॥

गुरुके वचनोंका स्मरण कर श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मन लग गया। मैं श्रीरामचन्द्रजीका यश गाता फिरता था, क्षण-क्षणमें मुझे उनपर नया प्रेम होता जाता था।

मेरुसिखर बटछाया ※ मुनि लोमस आसीन।
देखि चरन सिरु नायउँ ※ बचन कहेउँ अतिदीन ॥ १८३ ॥

सुमेरु पर्वतकी चोटीपर बड़की छायामें लोमश ऋषि बैठे हुए थे। उन्हें देखकर मैंने उनके चरणोंको शिर नवाया और फिर अत्यन्त दीन वचन कहे—

सुनि मम बचन बिनीत मृदु ※ मुनि कृपाल खगराज।
मोहि सादर पूछत भये ※ द्विज आयउ केहि काज ॥१८४॥

हे पक्षिराज, मेरे नम्रताभरे कोमल वचन सुनकर कृपालु मुनिने आदरके साथ मुझसे पूछा कि हे ब्राह्मण, किस कार्यके लिये आये हो।

तब मैं कहा कृपानिधि ※ तुम्ह सर्बग्य सुजान।
सगुन ब्रह्म आराधना ※ मोहि कहहु भगवान ॥ १८५ ॥

तब मैंने कहा कि हे कृपानिधान, आप सर्वज्ञ और सुजान हैं। हे भगवन्, आप मुझसे सगुण ब्रह्मकी आराधना कहिये।

तब मुनीस रघु-पति-गुन-गाथा ※ कहे कछुक सादर खगनाथा ॥
ब्रह्म-ग्यान-रत मुनि बिग्यानी ※ मोहि परम अधिकारी जानी ॥

हे पक्षिराज, तब मुनीश्वरने आदरके साथ रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंकी कुछ कथा कही। विज्ञानी मुनि ब्रह्मज्ञानमें मग्न थे, मुझे श्रेष्ठ अधिकारी जानकर—

लागे करन ब्रह्मउपदेसा ※ अज अद्वैत अगुन हृदयेसा ॥
अकल अनीह अनाम अरूपा ※ अनु-भव-गम्य अखंड अनूपा ॥

ब्रह्मका उपदेश करने लगे कि वह अज, अद्वैत, निर्गुण, हृदयोंका स्वामी, कलाशून्य, इच्छारहित, नामहीन, रूपरहित, अनुभवगम्य, अखण्ड, अनुपम—

मनगोतीत अमल अबिनासी ❀ निर्बिकार निरवधि सुखरासी ॥
सो तैं ताहि तोहि नहिं भेदा ❀ बारि बीच इव गावहिं बेदा ॥

मन और इन्द्रियोंकी पहुंचसे बाहर, निर्मल, अविनाशी, विकारशून्य, सीमारहित और सुखकी राशि है। जो वह है वही तू है। उसमें और तुझमें भेद नहीं है; जैसे जल और उसकी लहरमें। ऐसा वेद बतलाते हैं।

बिबिध भाँति मुनि मोहि समुझावा ❀ निर्गुनमत मम हृदय न आवा ॥
पुनि मैं कहेउं नाइ पद सीसा ❀ सगुन उपासन कहहु मुनीसा ॥

मुनिने मुझे अनेक तरहसे समझाया, पर निर्गुणमत मेरे हृदयमें नहीं आया। फिर मैंने मुनिके चरणोंमें शिर नवाकर कहा कि हे मुनीश्वर, सगुण ब्रह्मकी उपासना कहिये।

राम-भगति-जल मम मन मीना ❀ किमि बिलगाइ मुनीस प्रबीना ॥
सो उपदेस करहु करि दाया ❀ निज नयनन देखउं रघुराया ॥

हे चतुर मुनीश्वर, श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिरूपी जलसे मेरी मनरूपी मछली किस प्रकार अलग हो सकती है? कृपा करके आप वही उपदेश दीजिये जिससे अपने नेत्रोंसे मैं श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन करूं।

भरि लोचन बिलोकि अवधेसा ❀ तब सुनिहहुं निर्गुन उपदेसा ॥
मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा ❀ खंडि सगुनमत निर्गुनरूपा ॥

पहिले जब मैं नेत्र भरकर अयोध्यापति श्रीरामचन्द्रजीके दर्शन कर लूंगा तब फिर मैं निर्गुण ब्रह्मविषयक उपदेश सुनूंगा। फिर मुनिने भगवान्‌की अनुपम कथा कहकर सगुणमतका खण्डनकर निर्गुण ब्रह्मका निरूपण किया।

तब मैं निर्गुनमति करि दूरी ❀ सगुन निरूपउं करि हठ भूरी ॥
उत्तर प्रतिउत्तर मैं कीन्हा ❀ मुनितन भये क्रोध के चीन्हा ॥

तब मैं निर्गुणब्रह्म विषयक मतको दूर करके बड़े हठसे सगुणब्रह्मका निरूपण करने लगा। जब मैंने उत्तर-प्रत्युत्तर किया तब मुनिके शरीरमें क्रोधके चिह्न दीख पड़ने लगे।

सुनु प्रभु बहुत अवग्या किये ❀ उपज क्रोध ग्यानिहु के हिये ॥
अति संघरषन जौं कर कोई ❀ अनल प्रगट चंदन तें होई ॥

हे प्रभु गरुड़, सुनो। बहुत अवज्ञा करनेसे ज्ञानीके भी हृदयमें क्रोध उत्पन्न हो जाता है। यदि कोई अत्यन्त रगड़ करे तो चन्दनसे भी अग्नि प्रकट हो जाती है।

दो०—बारंबार सकोप मुनि • करइ निरूपन ग्यान।
मैं अपने मन बैठि तब • करउँ बिबिध अनुमान ॥१८६॥

जब मुनि क्रोधमें भरकर बार-बार ज्ञानका निरूपण करने लगे तब मैं बैठकर अपने मनमें भांति-भांतिके अनुमान करने लगा।

द्वैत बुद्धि बिनु क्रोध किमि • द्वैत कि बिनु अग्यान।
मायाबस परिछिन्न जड़ • जीव कि ईससमान ॥ १८७ ॥

द्वैत बुद्धिके बिना क्रोध क्योंकर हो सकता है? यह द्वैत क्या बिना अज्ञानके हो सकता है? मायाके वशीभूत और परिच्छिन्न मूर्ख जीव क्या ईश्वरके समान हो सकता है?

कबहुँ कि दुख सब कर हित ताके • तेहि कि दरिद्र परसमनि जा के ॥
परद्रोही कि होइ निःसंका • कामी पुनि कि रहै अकलङ्का ॥

जो सबका हित करनेवाला है उसको क्या कभी दुःख हो सकता है? जिसके पास पारसमणि हो वह क्या दरिद्र हो सकता है? दूसरोंसे द्रोह करनेवाला क्या निःशंक हो सकता है? फिर, कामी मनुष्य क्या कलंकशून्य रह सकता है?

बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे • कर्म कि होइ स्वरूपहिं चीन्हे ॥
काहू सुमति कि खल संग जामी • सुभगति पाव कि पर-त्रिय-गामी ॥

ब्राह्मणोंका अनहित करनेपर क्या वंश रह सकता है? आत्मस्वरूप पहचान लेनेपर क्या कर्म हो सकता है? दुष्टके संगमें क्या किसीको सद्बुद्धि हुई? परायी स्त्रीके साथ व्यभिचार करनेवाला क्या शुभ गति पा सकता है?

भव कि परहिं परमातमबिंदक • सुखी कि होहिं कबहुँ परनिंदक ॥
राज कि रहै नीति बिनु जाने • अघ कि रहै हरिचरित बखाने ॥

परमात्माको जाननेवाले क्या संसारमें पड़ते हैं? दूसरोंकी निन्दा करनेवाले क्या कभी सुखी होते हैं? नीतिको जाने बिना क्या राज्य रह सकता है? भगवान्‌के चरित्रोंका बखान करनेसे क्या पाप रह सकता है?

पावन जस कि पुन्य बिनु होई • बिनु अघ अजस कि पावइ कोई ॥
लाभ कि कछु हरि-भगति-समाना • जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना ॥

पुण्यके बिना क्या पवित्र यश हो सकता है? पापके बिना क्या कोई अपयश पाता है? भगवान्‌की भक्तिके समान क्या कुछ लाभ है, जिसे सन्तजन, वेद और पुराण गाते हैं?

हानि कि जग एहि सम कछु भाई ❀ भजिय न रामहिं नरतनु पाई ॥
अघ कि पिसुनता सम कछु आना ❀ धर्म कि दयासरिस हरिजाना ॥

हे भाई, संसारमें इसके समान क्या कोई हानि है कि मनुष्य-शरीर पाकर श्रीरामचन्द्रजीका भजन न करे ? चुगली और तमोगुणके समान क्या कोई अन्य पाप भी है ? हे गरुड़, दयाके समान क्या और कोई धर्म है ?

एहि बिधि अमित जुगुति मन गुनऊं ❀ मुनि उपदेस न सादर सुनऊं ॥
पुनि पुनि स-गुन-पच्छ मैं रोपा ❀ तब मुनि बोले बचन सकोपा ॥

इस प्रकार मैं असंख्य युक्तियां मनमें गुनता और आदरके साथ मुनिका उपदेश नहीं सुनता था। जब मैंने बार-बार सगुणपक्ष उपस्थित किया, तब मुनि क्रोधमें भरकर ये वचन बोले—

मूढ़ परम सिख देउं न मानसि ❀ उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि ॥
सत्यबचन बिस्वास न करही ❀ बायस इव सबही तें डरही ॥

मूर्ख, मैं तुझे उत्तम सीख देता हूं, पर तू उसे नहीं मानता और बहुत उत्तरप्रत्युत्तर देता है। सत्य वचनोंपर विश्वास नहीं करता और कौएकी भांति सभीसे डरता है।

सठ स्वपच्छ तव हृदय बिसाला ❀ सपदि होहु पच्छी चंडाला ॥
लीन्ह साप मैं सीस चढ़ाई ❀ नहिं कछु भय न दीनता आई ॥

अरे दुष्ट, तेरे हृदयमें अपना पक्ष गहरा जमा हुआ है, इसलिए तू शीघ्र चाण्डाल पक्षी हो जा। मैंने मुनिके इस शापको मस्तकपर चढ़ा लिया—मुझे न कुछ भय हुआ और न दीनता ही आयी।

दो०—तुरत भयउं मैं काग तब ❀ पुनि मुनिपद सिरु नाइ।
सुमिरि राम रघु-बंस-मनि ❀ हरषित चलेउं उड़ाइ ॥१८८॥

फिर, जब मैं तुरंत ही कौआ हो गया, तब मुनिके चरणोंको शिर नवाकर और रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर प्रसन्न होकर उड़ चला।

उमा जे राम-चरन-रत ❀ बि-गत-काम-मद-क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत ❀ केहि सन करहिं बिरोध ॥१८९॥

शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मग्न हैं, जो काम, मद और क्रोधरहित हो गये हैं और जगत्को अपने प्रभु राम-मय देखते हैं, वे किससे विरोध करें ?

सुनु खगेस नहिं कछु रिषि दूसन ❀ उरप्रेरक रघु-बंस-बि-भूषन ॥
कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी ❀ लीन्ही प्रेम परीछा मोरी ॥

हे पक्षिराज गरुड़, सुनो। इसमें लोमशऋषिका कुछ भी दोष नहीं है। रघुकुल-भूषण श्रीरामचन्द्रजी ही हृदयमें प्रेरणा करनेवाले हैं। कृपासागर श्रीरामचन्द्रजीने मुनिकी बुद्धिको भुलाकर मेरे प्रेमकी परीक्षा ले ली।

मन क्रम बच मोहि निज जन जाना ❀ मुनिमति पुनि फेरी भगवाना ॥
रिषि मम सहनसीलता देखी ❀ राम-चरन-बिस्वास बिसेखी ॥

फिर भगवान्‌ने मन, वाणी और कर्मसे जब मुझे अपना सेवक जाना तब मुनिकी बुद्धिको पलट दिया। मेरी सहनशीलता और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें विशेष विश्वास देखकर लोमश ऋषिको—

अतिबिसमय पुनि पुनि पछिताई ❀ सादर मुनि मोहि लीन्ह बोलाई ॥
मम परितोष बिबिध बिधि कीन्हा ❀ हरषित राममंत्र तब दीन्हा ॥

अत्यन्त विस्मय हुआ। वे बार-बार पछताने लगे। फिर मुनिने आदरके साथ मुझे बुला लिया और अनेक प्रकारसे मेरा सन्तोष किया और फिर प्रसन्न होकर राम-मन्त्र दिया।

बालकरूप राम कर ध्याना ❀ कहेउ मोहि मुनि कृपानिधाना ॥
सुंदर सुखद मोहि अति भावा ❀ जो प्रथमहिं मैं तुम्हहिं सुनावा ॥

कृपानिधान मुनिने मुझे बालरूप श्रीरामचन्द्रजीका ध्यान बतलाया। सुन्दर और सुखदायी वह ध्यान मुझे अत्यन्त अच्छा लगा, जो मैंने पहिले ही तुमको सुना दिया है।

मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा ❀ राम-चरित-मानस तब भाखा ॥
सादर मोहि यह कथा सुनाई ❀ पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई ॥

तब मुनिने कुछ समयतक मुझे वहां रखा और रामचरितमानस कहा। उन्होंने आदरके साथ मुझे यह कथा सुनायी और फिर यह सुहावनी वाणी बोले—

रामचरित सर गुप्त सुहावा ❀ संभुप्रसाद तात मैं पावा ॥
तोहि निज भगत राम कर जानी ❀ ता तें मैं सब कहेउँ बखानी ॥

हे तात, यह गुप्त और सुहावना रामचरित-सरोवर मैंने शिवजीकी दयासे पाया है। मैंने तुम्हें श्रीरामचन्द्रजी का अपना भक्त जाना, इसीसे मैंने सब वर्णन करके कहा।

रामभगति जिन्ह के उर नाहीं ❀ कबहुँ न तात कहिय तिन्ह पाहीं ॥
मुनि मोहि बिबिध भाँति समुझावा ❀ मैं सप्रेम मुनिपद सिरु नावा ॥

हे तात, जिनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति नहीं है, उनके पास कभी नहीं कहना चाहिये। मुनिने मुझे अनेक प्रकारसे समझाया। मैंने प्रेमके साथ मुनिके चरणोंको शिर नवाया।

निज-कर-कमल परसि मम सीसा ❀ हरषित आसिष दीन्ह मुनीसा ॥
रामभगति अबिरल उर तोरें ❀ बसिहि सदा प्रसाद अब मोरें ॥

अपने करकमलोंसे मेरा शिर स्पर्श करके मुनीश्वरने प्रसन्न होकर आशिष दी कि अब मेरी कृपासे श्रीरामचन्द्रजीकी दृढ़ भक्ति तुम्हारे हृदयमें सदा वास करे।

दो०—सदा रामप्रिय होहु तुम्ह ❀ सुभ-गुन-भवन अमान।
कामरूप इच्छामरन ❀ ग्यान-बिराग-निधान ॥११०॥

तुम सदा श्रीरामचन्द्रजीके प्यारे, शुभगुणोंके भाण्डार, अभिमानशून्य, मनचाहा रूप रखनेकी शक्तिवाले, इच्छानुसार मरनेवाले, ज्ञान और वैराग्यके स्थान हो।

जेहिं आश्रम तुम्ह बसब पुनि ❀ सुमिरत श्रीभगवंत।
ब्यापिहि तहँ न अबिद्या ❀ जोजन एक प्रजंत ॥१११॥

फिर भगवान्‌का स्मरण करते हुए तुम जिस आश्रममें बसोगे वहाँ एक योजनपर्यन्त अविद्या नहीं व्यापेगी।

काल कर्म गुन दोष सुभाऊ ❀ कछु दुख तुम्हहि न ब्यापिहि काऊ ॥
राम रहस्य ललित बिधि नाना ❀ गुप्त प्रगट इतिहास पुराना ॥

काल, कर्म, गुण, दोष और स्वभाव—इनका दुख तुम्हें कभी कुछ न व्यापेगा। श्रीरामचन्द्रजीका नाना प्रकारका सुन्दर, गुप्त और प्रकट रहस्य, इतिहास और पुराण—

बिनु श्रम तुम्ह जानब सब सोऊ ❀ नित नव नेह रामपद होऊ ॥
जो इच्छा करिहहु मन माहीं ❀ हरिप्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥

यह सब भी तुम बिना परिश्रम जान लोगे और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें नित्य नया प्रेम होगा। तुम मनमें जो इच्छा करोगे, भगवान्‌की दयासे कुछ भी दुर्लभ नहीं होगी।

सुनि मुनिआसिष सुनु मतिधीरा ❀ ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥
एवमस्तु तव बच मुनि ग्यानी ❀ यह मम भगत करम मन बानी ॥

हे मतिधीर गरुड़, सुनो। मुनिकी आशिष सुनकर आकाशमें गंभीर ब्रह्मवाणी हुई—हे ज्ञानी मुनि, यह मन, वाणी और कर्मसे मेरा भक्त है। तुम्हारा वचन ऐसा ही हो।

सुनि नभगिरा हरष मोहि भयऊ ❀ प्रेममगन सब संसय गयऊ ॥
करि बिनती मुनिआयसु पाई ❀ पदसरोज पुनि पुनि सिरु नाई ॥

आकाशवाणी सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई। मैं प्रेममग्न हो गया और मेरा सब संशय मिट गया। विनती करके और मुनिकी आज्ञा पाकर और बार-बार उनके चरणकमलोंको शिर नवाकर—

हरष सहित एहि आस्रम आयउँ ❀ प्रभुप्रसाद दुर्लभ बर पायउँ ॥
इहाँ बसत मोहि सुनु खगईसा ❀ बीते कलप सात अरु बीसा ॥

प्रसन्नता-समेत मैं इस आश्रममें आया और भगवान्‌की दयासे दुर्लभ वर पा गया। हे पक्षिराज, सुनो। यहां बसते हुए मुझे २७ कल्प बीत गये हैं।

करउँ सदा रघु-पति-गुन-गाना ❀ सादर सुनहिं बिहंग सुजाना ॥
जब जब अवधपुरी रघुबीरा ❀ धरहिं भगतहित मनुज सरीरा ॥

यहां मैं नित्य श्रीरामचन्द्रजीके गुणोंका गान करता हूं और सब चतुर पक्षी आदरके साथ सुनते हैं। श्रीरामचन्द्रजी भक्तोंके हितके लिये अयोध्यापुरीमें जब-जब मनुष्य-शरीर धारण करते हैं,

तब तब जाइ रामपुर रहऊँ ❀ सिसुलीला बिलोकि सुख लहऊँ ॥
पुनि उर राखि राम सिसुरूपा ❀ निज आस्रम आवउँ खगभूपा ॥

तब-तब मैं जाकर श्रीरामचन्द्रजीके नगरमें रहता हूं और भगवान्‌की बाललीला देखकर सुख पाता हूं। और फिर हे पक्षिराज, हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीके बालस्वरूपको रखकर अपने आश्रमको लौट आता हूं।

कथा सकल मैं तुम्हहिं सुनाई ❀ कागदेह जेहि कारन पाई ॥
कहेउँ तात सब प्रस्न तुम्हारी ❀ राम-भगति-महिमा अति भारी ॥

जिस कारण मैंने कौएका शरीर पाया, वह कथा मैंने तुम्हें सुनायी। हे तात, मैंने तुम्हारे सब प्रश्नोंके उत्तर दे दिये। श्रीरामचंद्रजीकी भक्तिकी महिमा अत्यंत भारी है।

दो०—तातें यह तन मोहि प्रिय ❀ भयउ राम - पद - नेह।
निज प्रभु - दरसन पायउँ ❀ गयउ सकल संदेह ॥१६२॥

यह शरीर मुझे इस कारण प्रिय है कि इसीसे श्रीरामचंद्रजीके चरणोंमें प्रेम हुआ, इसीसे अपने प्रभुके मैंने दर्शन पाये और इसीसे मेरा सब संदेह निवृत्त हुआ।

भगति पच्छ हठ करि रहेउँ ❀ दीन्हि महा - रिषि साप।
मुनिदुर्लभ बर पायउँ ❀ देखहु भजनप्रताप ॥ १६३ ॥

भगवान्‌के भजनका यह प्रताप तो देखो कि मैं भक्तिपक्षका हठ कर रहा था, इसपर महर्षि लोमशने शाप दिया। फिर भी मैंने वह वरदान पाया, जो मुनियोंको भी दुर्लभ है।

जे असि भगति जानि परिहरहीं ❀ केवल ग्यानहेतु स्रम करहीं ॥
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी ❀ खोजत आक फिरहिं पय लागी ॥

जो लोग ऐसी भक्तिको जान-बूझकर छोड़ देते हैं और केवल ज्ञानके लिये परिश्रम करते हैं, वे मूर्ख घरमें कामधेनु त्यागकर दूधके लिये आकको खोजते फिरते हैं।

सुनु खगेस हरिभगति बिहाई ❀ जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥
ते सठ महा सिंधु बिनु तरनी ❀ पैरि पार चाहहिं जड़करनी ॥

हे पक्षिराज, सुनो। भगवान्की भक्ति छोड़कर अन्य उपायोंसे जो सुख चाहते हैं वे दुष्ट महासमुद्रको नौकाके बिना ही तैरकर पार होना चाहते हैं। उनकी यह करतूत कैसी मूर्खतापूर्ण है।

सुनि भुसुंडि के बचन भवानी ❀ बोलेउ गरुड़ हरषि मृदुबानी ॥
तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं ❀ संसय-सोक-मोह-भ्रम नाहीं ॥

शिवजी कहते हैं कि हे भवानी, कागभुशुण्डजीके वचन सुनकर गरुड़जी प्रसन्न होकर मृदुवाणीसे बोले— हे स्वामिन्, आपकी दयासे मेरे हृदयमें संशय, शोक, मोह और भ्रम नहीं है।

सुनेउँ पुनीत राम-गुन-ग्रामा ❀ तुम्हरी कृपा लहेउँ बिस्रामा ॥
एक बात प्रभु पूछउँ तोही ❀ कहहु बुझाइ कृपानिधि मोही ॥

मैंने श्रीरामचन्द्रजीके पवित्र गुणोंके समूह सुन लिये और आपकी दयासे शान्ति पायी। हे प्रभो, मैं आपसे एक बात पूछता हूं। हे दयानिधान, आप मुझसे समझाकर कहिये।

कहहिं संत मुनि बेद पुराना ❀ नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना ॥
सोइ मुनि तुम्ह सन कहेउ गोसाईं ❀ नहिं आदरेहु भगति की नाईं ॥

साधु पुरुष, मुनिजन, वेद और पुराण—सब कहते हैं कि ज्ञानके समान दुर्लभ और कुछ नहीं है। हे स्वामी, वही ज्ञान मुनिने आपसे कहा, पर आपने भक्तिके समान उसका आदर नहीं किया।

ग्यानहिं भगतिहिं अंतर केता ❀ सकल कहहु प्रभु कृपानिकेता ॥
सुनि उरगारिबचन सुख माना ❀ सादर बोलेउ काग सुजाना ॥

ज्ञान और भक्तिमें अंतर कितना है? हे दयानिधान प्रभु, सब कहिये। सांपोंके शत्रु गरुड़के वचन सुनकर सुजान कागभुशुण्डजीने सुख माना और फिर वे आदरके साथ बोले—

भगतिहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा ❀ उभय हरहिं भवसंभव खेदा ॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर ❀ सावधान सोउ सुनु बिहंगबर ॥

भक्ति और ज्ञानमें कुछ भी भेद नहीं है। संसारजनित दुःखोंको दूर कर देनेवाले दोनों ही हैं। फिर भी, हे नाथ, मुनीश्वर लोग इनमें कुछ अंतर बतलाते हैं। हे पक्षिश्रेष्ठ, सावधान होकर वह भी सुनो।

ग्यान बिराग जोग बिग्याना ❀ ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना ॥
पुरुष प्रताप प्रबल सब भांती ❀ अबला अबल सहज जड़ जाती ॥

हे विष्णुवाहन गरुड़, सुनो। ज्ञान, विज्ञान, योग और वैराग्य—ये सब पुरुष हैं। पुरुषका प्रताप सब प्रकार प्रबल होता है, स्त्री स्वभावसे ही निर्बल और मूर्ख जाति है।

दो०—पुरुष त्यागि सक नारिहिं ❀ जो बिरक्त मतिधीर।
न तु कामी जो बिषयबस ❀ बिमुख जो पद रघुबीर ॥ १९४ ॥

जो पुरुष विरक्त और धीर बुद्धिवाले हैं वे स्त्रीको त्याग सकते हैं, परन्तु वे नहीं त्याग सकते जो कामी हैं, जो विषयोंके वशमें हैं और जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंसे विमुख हैं।

सो०—सो मुनि ग्याननिधान ❀ मृगनयनी बिधुमुख निरखि।
बिकल होहिं हरिजान ❀ नारि बिस्व माया प्रगट ॥ १९५ ॥

जो मुनि महाज्ञानी हैं, वे भी मृगनयनीके चंद्रमुखको देखकर, हे गरुड़, व्याकुल हो जाते हैं। संसारमें स्त्रीकी माया प्रकट है।

इहां न पच्छपात कछु राखउं ❀ बेद-पुरान-संत-मत भाखउं ॥
मोह न नारि नारि के रूपा ❀ पन्नगारि यह रीति अनूपा ॥

यहां मैं कुछ पक्षपात नहीं रखता हूं। वेदों, पुराणों और संतजनोंका मत कहता हूं। हे सांपोंके शत्रु गरुड़, यह एक अनुपम रीति है कि स्त्रीके रूपपर स्त्री नहीं मोहित होती।

माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ ❀ नारिबर्ग जानहिं सब कोऊ ॥
पुनि रघुबीरहिं भगति पियारी ❀ माया खलु नर्तकी बिचारी ॥

तुम सुनो—माया और भक्ति—दोनों स्त्री वर्ग हैं, यह सब कोई जानते हैं। फिर श्रीरामजीको भक्ति प्यारी है। वेचारी माया तो निश्चय ही नाचनेवाली है।

भगतिहिं सानुकूल रघुराया ❀ ता तें तेहि डरपति अति माया ॥
रामभगति निरुपम निरुपाधी ❀ बसइ जासु उर सदा अबाधी ॥

रघुराज श्रीरामचंद्रजी भक्तिके सानुकूल हैं, इससे माया भक्तिसे बहुत डरती है। श्रीरामचंद्रजीकी निरुपम और उपाधिरहित भक्ति जिसके हृदयमें सदा अबाध होकर वसती है—

तेहि बिलोकि माया सकुचाई ❀ करि न सकइ कछु निज प्रभुताई ॥
अस बिचारि जे मुनि बिग्यानी ❀ जाचहिं भगति सकल-सुख-खानी ॥

उसे देखकर माया सकुचाती है; क्योंकि वह कुछ अपनी प्रभुता नहीं कर सकती। जो विज्ञानी मुनि हैं वे ऐसा विचारकर ही सब सुखोंकी खान भक्तिको मांगते हैं।

दो०—यह रहस्य रघुनाथ कर ❀ बेगि न जानइ कोइ।
जो जानइ रघु-पति-कृपा ❀ सपनेहुं मोह न होइ ॥ १६६ ॥

रघुवंशके स्वामी श्रीरामचंद्रजीका यह रहस्य कोई जल्दी नहीं जानता। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे जो जान लेता है उसे स्वप्नमें भी मोह नहीं होता।

अउरउ ग्यान भगति कर ❀ भेद सुनहु सुप्रबीन।
जो सुनि होइ रामपद ❀ प्रीति सदा अबिछीन ॥१६५॥

हे अत्यंत चतुर गरुड़, भक्ति और ज्ञानका और भी भेद सुनो, जिसे सुनकर श्रीरामचंद्रजीके चरणोंमें सदा अविच्छिन्न प्रीति होती है।

सुनहु तात यह अकथ कहानी ❀ समुझत बनइ न जाइ बखानी ॥
ईस्वर अंस जीव अबिनासी ❀ चेतन अमल सहज सुखरासी ॥

हे तात, यह अकथनीय कहानी सुनो। यह समझते ही बनती है, वर्णन नहीं की जाती। जीव अविनाशी ईश्वरका अंश है, चेतन है, निर्मल है, स्वभावसे ही सुखकी राशि है।

सो मायाबस भयउ गोसाईं ❀ बंधेउ कीर मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहिं ग्रंथि परि गई ❀ जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥

हे स्वामिन्, वह जीव मायाके वशमें हो गया और तोता और बंदरकी भांति बँध गया। इस तरह जड़ और चेतनकी गांठ पड़ गयी। यद्यपि वह झूठी है तथापि छूटती कठिनतासे है।

तब तें जीव भयउ संसारी ❀ छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥
स्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई ❀ छूट न अधिक अधिक अरुझाई ॥

जबसे यह गांठ पड़ी, तबसे यह जीव संसारी हो गया! गांठ छूटती नहीं और जीव सुखी नहीं हो पाता। वेदों और पुराणोंने बहुतसे उपाय कहे हैं, परंतु गांठ छूटती नहीं, अधिकाधिक उलझती ही जाती है।

जीवहृदय तम मोह बिसेखी ❀ ग्रंथि छूटि किमि परइ न देखी ॥
अस संयोग ईस जब करई ❀ तबहुं कदाचित सो निरुबरई ॥

जीवके हृदयमें मोहका विशेष अंधकार होता है। यह गांठ कैसे छूटे, जब वह देख भी नहीं पड़ती। जब ईश्वर ऐसा संयोग करता है तब भी कदाचित् ही वह सुलझती है।

सात्विक स्रद्धा धेनु लवाई ❀ जो हरिकृपा हृदय बसि आई ॥
जप तप व्रत जम नियम अपारा ❀ जे स्रुति कह सुभ धर्म अचारा ॥

संयोग यह है—भगवान्‌की कृपासे जो सात्विक श्रद्धारूपी लवाई (हालहीकी ब्याई हुई) गाय आकर जीवके हृदयमें बसे; जप तप, व्रत, यम, नियम आदि जो अपार शुभधर्माचरण वेदोंने बतलाये हैं—

तेइ तृन हरित चरइ जब गाई ❀ भाव बच्छ सिसु पेन्हाई।
नोइ निवृत्ति पात्र बिस्वासा ❀ निर्मलमन अहीर निजदासा ॥

वही हरी घास हैं। इन्हें जब वह गाय चरे और भावरूपी छोटा बछड़ा उस गायको पन्हावे; फिर निवृत्तिरूपी नोइ (दुहते समय गायके पिछले पैर बांधनेकी रस्सी) से बाँधकर विश्वासरूपी पात्रमें अपना भक्त निर्मल मनरूपी अहीर—

परम-धरम-मय पय दुहि भाई ❀ अवटइ अनल अकाम बनाई ॥
तोष मरुत तब छमा जुड़ावइ ❀ धृतिसम जावन देइ जमावइ ॥

हे भाई, परम धर्ममय दूध दुहे और निष्कामतारूपी अग्निमें उसे भलीभाँति औटावे। फिर संतोषरूपी पवनसे उसमें क्षमारूपी ठंडक लावे और धैर्यरूपी जावन देकर उसको जमा दे—

मुदिता मथइ बिचार मथानी ❀ दम अधार रजु सत्य सुबानी ॥
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता ❀ बिमल बिराग सुभग सुपुनीता ॥

फिर प्रसन्नतापूर्वक विचाररूपी मथानीसे उसे मथे, दमका आधार और सुन्दर सत्य वाणीको रस्सी बनावे, फिर मथकर उसमेंसे अत्यन्त अधिक पवित्र और निर्मल वैराग्यरूपी मक्खनको निकाल लेवे।

दो०—जोग अगिनि करि प्रगट तब ❀ कर्म सुभासुभ लाइ।
बुद्धि सिरावइ ग्यान घृत ❀ ममता मल जरि जाइ ॥१९८॥

फिर शुभाशुभ कर्मरूपी ईंधन लगाकर योगाग्नि प्रकट करे। इसपर तपानेसे जब उसका ममतारूपी मल जल जावे तब बुद्धिसे ज्ञानरूपी घृतको ठण्डा कर ले।

तब बिग्यानरूपिनी ❀ बुद्धि बिसद घृत पाइ।
चित्त दिया भरि धरइ दृढ़ ❀ समता दिवटि बनाइ ॥१९९॥

फिर, विज्ञानरूपिणी शुद्ध इस बुद्धि घीको पाकर चित्तरूपी दीयेमें भरे और समतारूपी दीयट बनाकर दृढ़तासे उसे रख दे।

तीनि अवस्था तीनि गुन ❀ तेहि कपास तें काढ़ि ।
तूल तुरीय संवारि पुनि ❀ बाती करइ सुगाढ़ि ॥२००॥

तीनों अवस्थाओं और तीनों गुणरूपी जो कपास है उससे तुरीयावस्थारूपी रूई काढ़कर और उसे सुधारकर फिर अच्छी गाढ़ी बाती बनावे ।

सो०—एहि विधि लेसै दीप ❀ तेजरासि बिग्यानमय ।
जातहिं जासु समीप ❀ जरहिं मदादिक सलभ सब ॥२०१॥

इस प्रकार तेजकी राशि विज्ञानमय दीपक जलावे, जिसके पास जाते ही मदादिक सभी पतंगे जल जाते हैं।

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा ❀ दीपसिखा सोइ परमप्रचंडा ॥
आतम - अनुभव - सुख सुप्रकासा ❀ तब भवमूल भेदभ्रम नासा ॥

सोऽहमस्मि—मैं वही हूं, यह जो अखण्ड वृत्ति है,वही दीपककी अत्यंत प्रचण्ड शिखा है,जिससे आत्मानुभव-जनित सुखका सुन्दर प्रकाश जब होता है तब संसारके कारणरूप भेद और भ्रमका नाश हो जाता है ।

प्रबल अबिद्या कर परिवारा ❀ मोह आदि तम मिटइ अपारा ॥
तब सोइ बुद्धि पाइ उंजियारा ❀ उरगृह बैठि ग्रंथि निरुवारा ॥

प्रवल अविद्याका परिवार मोह आदि अपार अन्धकार मिट जाता है। तव, उजेला पाकर वही बुद्धि हृदयरूपी घरमें बैठकर गांठको सुलझा लेती है।

छोरन ग्रंथि पाव जौं कोई ❀ तौ यह जीव कृतारथ होई ॥
छोरत ग्रंथि जानि खगराया ❀ बिघन अनेक करइ तब माया ॥

यदि कोई जीव इस गांठको छोड़ पाता है तो वह कृतार्थ हो जाता है। हे पक्षिराज गरुड़, जब माया यह जानती है कि जीव ग्रन्थिको छोड़ता है, तब वह अनेक विघ्न डालती है।

रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई ❀ बुद्धिहि लोभ देखावहिं आई ॥
कल बल छल करि जाइ समीपा ❀ अंचल बात बुझावहिं दीपा ॥

हे भाई, वह बहुतसी ऋद्धियों और सिद्धियोंको प्रेरणा करती है, जो आकर बुद्धिको लालच दिखलाती हैं। वे छलवल और पेच करके पास जाकर अपने आंचलकी हवासे दीपकको बुझा देती हैं।

होइ बुद्धि जो परम सयाने ❀ तिन्ह तनु चितव न अनहित जाने ॥
जौं तेहि बिघन बुद्धि नहिं बाधी ❀ तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी ॥

यदि बुद्धि अत्यंत चतुर हो तो वह अपना शत्रु समझकर उनकी ओर देखती भी नहीं। यदि उसके विघ्नोंसे बुद्धिको बाधा नहीं पहुंची तो फिर देवता उपद्रव करते हैं।

इंद्री द्वार झरोखा नाना ❀ तहं तहं सुर बैठे करि थाना ॥
आवत देखहिं विषय बयारी ❀ ते हठि देहिं कपाट उघारी ॥

इन्द्रियोंके द्वाररूपी अनेक झरोखे हैं। उन सब झरोखोंमें देवता अपना स्थान बांधकर बैठे हुए हैं, जब विषयरूपी वायुको आते देखते हैं तब हठ करके किवाड़ खोल देते हैं।

जब सो प्रभंजन उरगृह जाई ❀ तबहिं दीप बिग्यान बुझाई ॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा ❀ बुद्धि बिकल भइ बिषयबतासा ॥

जब वह विषयवायु हृदयरूपी घरमें जाती है तभी विज्ञानरूपी दीपक बुझ जाता है। गांठ तो छूटी नहीं और वह प्रकाश भी मिट गया, विषयरूपी वायुसे बुद्धि व्याकुल हो गयी।

इंद्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सुहाई ❀ बिषयभोग पर प्रीति सदाई ॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी ❀ तेहि बिधि दीप को बार बहोरी ॥

इंद्रियोंके देवताओंको ज्ञान नहीं सुहाता और विषय-भोगोंपर उन्हें सदा ही प्रीति रहती है। विषयरूपी वायुने बुद्धिको तो भुला दिया—तब, उस विधिसे दीपकको फिर कौन जलावे ?

दो०—तब फिरि जीव बिबिध बिधि ❀ पावइ संसृतिक्लेस।
हरिमाया अतिदुस्तर ❀ तरि न जाइ बिहंगेस ॥ २०२ ॥

तब फिर जीव अनेक प्रकारके संसार-सम्बन्धी क्लेश पाता है। हे पक्षिराज ! भगवान्‌की माया अत्यंत दुस्तर है, वह तरी नहीं जाती।

कहत कठिन समुझत कठिन ❀ साधन कठिन बिबेक।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं ❀ पुनि प्रत्यूह अनेक ॥ २०३ ॥

विवेकका कहना कठिन है, समझना कठिन है और उसके साधन भी कठिन हैं। यदि घुणाक्षर न्यायसे वह कभी हो जाय तो फिर उसमें अनेक विघ्न हैं।

ग्यानपंथ कृपान कै धारा ❀ परत खगेस होइ नहिं बारा ॥
जौं निरबिघन पंथ निरबहई ❀ सो कैवल्य परमपद लहई ॥

हे पक्षिराज गरुड़, ज्ञानमार्ग तलवारकी धार है, इसमें पड़कर पार होना सहज नहीं। यदि कोई इस मार्गका निर्विघ्न निर्वाह कर ले जाय तो वह कैवल्य मोक्ष नामक परमपदको प्राप्त कर लेता है।

अतिदुर्लभ कैवल्य परमपद ❀ संत पुरान निगम आगम बद ॥
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं ❀ अनइच्छित आवइ बरिआईं ॥

साधु पुरुष, वेद, पुराण और शास्त्र कहते हैं कि कैवल्य मोक्ष नामक परमपद अत्यंत दुर्लभ है। स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका भजन करनेसे वही मुक्ति इच्छा न करनेपर भी हठपूर्वक आती है।

जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई ❀ कोटि भाँति कोउ करइ उपाई ॥
तथा मोच्छसुख सुनु खगराई ❀ रहि न सकइ हरिभगति बिहाई ॥

कोई करोड़ प्रकारके उपाय करे, परन्तु जिस प्रकार स्थल बिना जल नहीं रह सकता, उसी प्रकार हे पक्षि-राज, सुनो, भगवान्‌की भक्तिको छोड़कर मोक्ष-सुख रह नहीं सकता।

अस बिचारि हरिभगत सयाने ❀ मुक्ति निरादर भगति लोभाने ॥
भगति करत बिनु जतन प्रयासा ❀ संसृतिमूल अबिद्या नासा ॥

ऐसा विचारकर ही भगवान्‌के चतुर भक्त मुक्तिका निरादरकर भक्तिमें लुभा जाते हैं। भक्ति करते ही बिना यत्न और बिना परिश्रम संसारकी मूल-रूप अविद्याका नाश हो जाता है।

भोजन करिय तृपिति हित लागी ❀ जिमि सो असन पचव जठरागी ॥
असि हरिभगति सुगम सुखदाई ❀ को अस मूढ़ न जाहि सुहाई ॥

तृप्ति-लाभके लिये भोजन किया जाता है, परन्तु वह भोजन जिस प्रकार जठराग्नि पचा देती है उसी प्रकार भगवान्‌की भक्ति भी है—जठराग्निके भोजन पचानेकी भांति भगवान्‌की भक्ति सांसारिक शुभाशुभ कर्मोंको पचा देती है। भगवान्‌की भक्ति सुलभ और सुख देनेवाली है। ऐसा मूर्ख कौन है; जिसे वह न सुहाती हो।

दो०—सेवक सेब्य भाव बिनु ❀ भव न तरिय उरगारि।
भजहु राम-पद-पंकज ❀ अस सिद्धांत बिचारि ॥ २०४ ॥

हे सांपोंके शत्रु गरुड़जी, सेवक और सेव्यभाव बिना संसार नहीं तरा जा सकता। ऐसा सिद्धान्त विचार-कर तुम श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंका भजन करो।

जो चेतन कहँ जड़ करइ ❀ जड़हि करइ चैतन्य।
अस समरथ रघुनायकहिं ❀ भजहिं जीव ते धन्य ॥ २०५ ॥

जो चेतनको जड़ बनाते हैं और जड़को चैतन्य कर देते हैं, ऐसे समर्थ श्रीरामचन्द्रजीको जो जीव भजते हैं वे धन्य हैं।

कहेउँ ग्यान सिद्धांत बुझाई ❀ सुनहु भगतिमनि कै प्रभुताई ॥
रामभगति चिन्तामनि सुन्दर ❀ बसइ गरुड़ जाके उरअन्तर ॥

मैंने ज्ञानका सिद्धान्त समझाकर कहा, अब भक्तिरूपी मणिकी प्रभुता सुनो। श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति सुन्दर चिन्तामणि है। हे गरुड़, यह जिसके हृदयके भीतर बसती है:—

परमप्रकास रूप दिन राती ❀ नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती ॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा ❀ लोभ बात नहिं ताहि बुझावा ॥

उसका हृदय दिन-रात अनन्त प्रकाशरूप रहता है। उसके लिये कुछ भी नहीं चाहिये—न दीया, न घी, और न बत्ती। मोहरूपी दरिद्र उसके पास नहीं आता और लोभरूपी वायु उसे नहीं बुझाती।

अचल अविद्या तम मिटि जाई ❀ हारहिं सकल सलभसमुदाई ॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं ❀ बसइ भगति जाके उर माहीं ॥

उससे अचल अविद्यारूपी अंधकार मिट जाता है और समस्त पतिङ्गोंका समुदाय हार जाता है। जिसके हृदयमें भक्ति बसती है उसके पास दुष्ट काम आदि नहीं जाते।

गरल सुधा सम अरि हित होई ❀ तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई ॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी ❀ जिन्हके बस सब जीव दुखारी ॥

विष अमृतके समान और शत्रु मित्रके समान हो जाता है। इस भक्ति-मार्गके बिना कोई सुख नहीं पाता। उसे भारी मानसिक रोग नहीं व्यापते, जिनके वशमें होकर सब जीव दुःखी रहते हैं।

राम-भगति-मनि उर बस जाके ❀ दुख-लव-लेस न सपनेहुँ ताके ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं ❀ जे मन लागि सुजतन कराहीं ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिरूपी मणि जिसके हृदयमें बसती है उसको स्वप्नमें भी लवलेशमात्र दुःख नहीं होता। संसारमें चतुर शिरोमणि वही हैं जो इस मणिके लिये भरसक यत्न करते हैं।

सो मनि जदपि प्रगट जग अहई ❀ रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई ॥
सुगम उपाइ पाइबे केरे ❀ नर हतभाग्य देहिं भटभेरे ॥

वह मणि यद्यपि संसारमें प्रकट है तथापि श्रीरामचन्द्रजीकी कृपा बिना उसे कोई नहीं पाता। पानेके उपाय सहज हैं, परन्तु हतभाग्य मनुष्य उन्हें धक्का देकर दूर कर देते हैं।

पावन पर्बत बेद पुराना ❀ रामकथा रुचिराकर नाना ॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी ❀ ग्यान बिराग नयन उरगारी ॥

हे सांपोंके शत्रु गरुड़! वेद और पुराण पवित्र पर्वत हैं, उनमें अनेक प्रकारकी श्रीरामचन्द्रजीकी कथाएं सुन्दर खानें हैं। साधुजन उनका मर्म जाननेवाले हैं। सुन्दर बुद्धि ही कुदाल है,और ज्ञान और वैराग्य ही दो नेत्र हैं।

भावसहित खोजइ जो प्रानी ❀ पाव भगतिमनि सब सुखखानी ॥
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा ❀ राम तें अधिक राम कर दासा ॥

जो प्राणी भाव समेत खोजता है वह सब सुखोंकी खान भक्तिमणिको पा जाता है। हे स्वामिन्, मेरे मनमें ऐसा विश्वास है कि श्रीरामचन्द्रजीका सेवक स्वयं श्रीरामचन्द्रजीसे भी अधिक है।

राम सिंधु घन सज्जन धीरा ❀ चंदन तरु हरि संत समीरा ॥
सब कर फल हरिभगति सुहाई ❀ सो बिनु संत न काहू पाई ॥
अस बिचारि जोइ कर सतसंगा ❀ रामभगति तेहि सुलभ बिहंगा ॥

श्रीरामचन्द्रजी समुद्र हैं और सज्जन और धीर पुरुष हैं मेघ, भगवान् चन्दनके वृक्ष हैं और संतजन हैं उसकी वायु, सबका फल भगवान्‌की सुहावनी भक्ति है और यह भक्ति-संतजनोंके विना किसीने भी नहीं पायी। ऐसा विचारकर हे गरुड़, जो सत्संग करेगा उसको रामचन्द्रजीकी भक्ति सुलभ हो जायगी।

दो०—ब्रह्म पयोनिधि मंदर ❀ ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़इ ❀ भगति मधुरता जाहिं ॥ २०६ ॥

वेद क्षीरसागर हैं, ज्ञान मंदराचल है और साधु पुरुष हैं देवता। ये मन्थन करके कथारूपी अमृत निकाल लेते हैं, जिसकी मधुरता भक्ति है।

बिरति चर्म असि ग्यान मद ❀ लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइय सो हरिभगति ❀ देखु खगेस बिचारि ॥ २०७ ॥

हे पक्षिराज, विचारकर देखो कि वैराग्यकी ढाल और ज्ञानकी तलवार लेकर मद, लोभ, मोह आदि शत्रुओंको मारकर जो विजय पाती है वह भगवान्‌की भक्ति ही है।

पुनि सप्रेम बोलेउ खगराऊ ❀ जौं कृपाल मोहि ऊपर भाऊ ॥
नाथ मोहि निज सेवक जानी ❀ सप्त प्रस्न मम कहहु बखानी ॥

पक्षिराज गरुड़ प्रेमके साथ फिर बोले—हे दयालु, यदि मेरे ऊपर आपका प्रेम है तो हे नाथ, मुझे अपना सेवक जानकर मेरे सात प्रश्नोंका उत्तर विस्तारपूर्वक कहिये—

प्रथमहिं कहहु नाथ मतिधीरा ❀ सब तें दुर्लभ कवन सरीरा ॥
बड़ दुख कवन कवन सुख भारी ❀ सोउ संछेपहिं कहहु बिचारी ॥

हे नाथ, हे धीर बुद्धि, (१) पहिले यह कहिये कि सबसे अधिक दुर्लभ शरीर कौन है ? (२) बड़ा दुःख कौन है और (३) भारी सुख क्या है, यह भी विचारकर संक्षेपमें ही कहिये।

संत असंत मरम तुम्ह जानहु ❀ तिन्ह कर सहज सुभाव बखानहु ॥
कवन पुन्य स्रुतिबिदित बिसाला ❀ कहहु कवन अघ परम कृपाला ॥

(४) साधुजनों और दुष्ट मनुष्योंका मर्म आप जानते हैं,उनके सहज स्वभावका आप वर्णन कीजिये। (५) हे अत्यन्त कृपालु, वेदविदित विशाल पुण्य कौन-सा है और (६) पाप कौनसा है, वह कहिये।

मानसरोग कहहु समुझाई ❀ तुम्ह सर्बग्य कृपा अधिकाई ॥
तात सुनहु सादर अतिप्रीती ❀ मैं संछेप कहउँ यह नीती ॥

आप सर्वज्ञ हैं, आपकी मुझपर अधिक कृपा है (७) आप मानसिक रोगोंको मुझे समझाकर कहिये। काग-भुशुण्डजीने उत्तर दिया—हे तात, सुनो, मैं आदरके साथ अत्यन्त प्रीतिसे संक्षेपमें ही यह नीति कहता हूँ।

नर - तन - सम नहिं कवनिउ देही ❀ जीव चराचर जाँचत जेही ॥
नरक - सर्ग अपबर्ग - निसेनी ❀ ग्यान - बिराग - भगति-सुख-देनी ॥

(१) मनुष्य-शरीरके समान और कोई भी देह नहीं है, जिसे चर और अचर सब जीव माँगते हैं,जो स्वर्ग, नरक और मोक्षकी सीढ़ी है और जो ज्ञान, वैराग्य और भक्तिके सुखको देनेवाली है।

सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर ❀ होहिं बिषयरत मंद मंदतर ॥
कांच किरिच बदले जिमि लेहीं ❀ कर तें डारि परसमनि देहीं ॥

उस शरीरको धारण करके जो मनुष्य भगवान्‌का भजन नहीं करते और विषयोंमें लिप्त हो जाते हैं वे नीच अत्यंत नीच हैं। वे मानों हाथसे पारसमणि गिरा देते हैं और बदलेमें कांचका टुकड़ा ले लेते हैं।

नहिं दरिद्रसम दुख जग माहीं ❀ संत-मिलन-सम सुख कहुँ नाहीं ॥
परउपकार बचन मन काया ❀ संत सहज सुभाव खगराया ॥

(२) दरिद्र होनेके समान संसारमें कोई दुःख नहीं है। (३) साधुजनोंके मिलनेके समान सुख कहीं नहीं है। (४) हे पक्षिराज, साधुजनोंका सहज स्वभाव है—मन, वाणी और शरीरसे परोपकार करना।

संत सहहिं दुख परहित लागी ❀ पर - दुख - हेतु असंत अभागी ॥
भूरज - तरु - सम संत कृपाला ❀ परहित नित सह बिपति बिसाला ॥

संतजन पराये हितके लिये दुःख सहते हैं और अभागे दुष्ट मनुष्य पराये दुःखका हेतु ही होते हैं। दयालु साधु पुरुष पृथिवीकी धूल और वृक्षके समान हैं, जो नित्य पराये हितके लिये भारी विपत्तियां सहते हैं।

सन इव खल परबंधन करई ❀ खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई ॥
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी ❀ अहि मूषक इव सुनु उरगारी ॥

परन्तु दुष्ट सनके समान होते हैं, जो दूसरोंका बन्धन करते हैं और अपनी खाल कढ़ाकर विपत्ति सहकर मर जाते हैं। हे साँपोंके शत्रु गरुड़, सुनो। साँप और चूहेके समान दुष्ट जन अपना स्वार्थ न हो तोभी दूसरोंका अपकार ही करते हैं।

परसंपदा बिनासि नसाहीं ❀ जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं ॥
दुष्टहृदय जग आरत हेतू ❀ जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥

दुष्टजन दूसरोंकी सम्पत्तिको विध्वंसकर स्वयं भी नष्ट हो जाते हैं; जैसे खेतीको नष्टकर ओले स्वयं भी गल जाते हैं। दुष्टोंका हृदय संसारकी पीड़ाका कारण ही होता है; जैसे नीचग्रह केतु प्रसिद्ध है।

संतउदय संतत सुखकारी ❀ बिस्वसुखद जिमि इंदु तमारी ॥
परमधरम स्रुतिबिदित अहींसा ❀ पर-निंदा-सम अघ न गिरीसा ॥

साधुजनोंका उदय निरंतर सुख करनेवाला है; जैसे अंधकारका शत्रु चंद्रमा समस्त संसारको सुख देनेवाला है। (५) वेदविदित परम धर्म अहिंसा है और (६) परनिन्दाके समान पापरूप भारी पहाड़ और कोई नहीं।

हरि-गुरु-निंदक दादुर होई ❀ जनम सहस्र पाव तन सोई ॥
द्विजनिंदक बहु नरक भोग करि ❀ जग जनमइ बायससरीर धरि ॥

भगवान् और गुरुकी निन्दा करनेवाला मेढकका जन्म लेता और हजार जन्मतक वही शरीर पाता है। ब्राह्मणकी निन्दा करनेवाला बहुत नरक भोगकर संसारमें कौएका शरीर धारण कर जन्म लेता है।

सुर-स्रुति-निंदक जे अभिमानी ❀ रौरव नरक परहिं ते प्रानी ॥
होहिं उलूक संत-निंदा-रत ❀ मोहनिसा प्रिय ग्यान भानु गत ॥

जो अभिमानी प्राणी देवताओं और वेदोंकी निन्दा करनेवाले हैं वे रौरव नरकमें पड़ते हैं। जो साधुजनोंकी निन्दामें लगे रहते हैं वे उल्लू होते हैं; जिन्हें मोहरूपी रात्रि प्रिय होती है, ज्ञानरूपी सूर्य नहीं।

सब कै निंदा जे जड़ करहीं ❀ ते चमगादुर होइ अवतरहीं ॥
सुनहु तात अब मानसरोगा ❀ जेहि तें दुख पावहिं सब लोगा ॥

जो मूर्ख सबकी निन्दा करते हैं वे चमगादड़ होकर जन्म लेते हैं। हे तात, (७) अब मानसिक रोगोंको सुनो, जिनसे सब लोग दुःख पाते हैं।

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला ❀ तेहितें पुनि उपजइ बहु सूला ॥
काम बात कफ लोभ अपारा ❀ क्रोध पित्त नित छाती जारा ॥

सब व्याधियोंका मूल है मोह, इससे फिर बहुतसी पीड़ाएं उत्पन्न होती हैं। काम वात है और अपार लोभ कफ है और क्रोध पित्त है जो नित्य छाती जलाता है।

प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई ❀ उपजइ सन्निपात दुखदाई ॥
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना ❀ ते सब सूल नाम को जाना ॥

यदि ये तीनों भाई परस्पर प्रीति कर लेते हैं तो दुःखदायी सन्निपात हो जाता है। अगणित विषयोंके जो कठिनतासे पूरे होने योग्य मनोरथ हैं वे सब बहुतसी पीड़ाएं हैं। उनके नाम कौन जानता है?

ममता दादु कंडु इरषाई ❀ हरष बिषाद गरह बहुताई ॥
परसुख देखि जरनि सोइ छई ❀ कुष्ठ दुष्टता मन कुटिलई ॥

ममता दाद है, ईर्ष्या खाज है, हर्ष और शोक कठोर गठियावायु हैं। दूसरोंका सुख देखकर जो जलन होती है वही क्षय है, मनकी कुटिलता और दुष्टता कोढ़ है।

अहंकार अतिदुखद डवँरुआ ❀ दंभ कपट मद मान नहरुआ ॥
तृस्ना उदरबृद्धि अतिभारी ❀ त्रिबिधि ईषना तरुन तिजारी ॥
जुगबिधि ज्वर मत्सर अबिबेका ❀ कहँ लगि कहउँ कुरोग अनेका ॥

अहंकार अत्यंत दुःख देनेवाला डमरूरोग है; दंभ, कपट, मद और मान नहरुआ हैं; तृष्णा अत्यन्त भारी उदरवृद्धि है; तीनों प्रकारकी लालसाएं प्रबल तिजारी हैं; मत्सर और अविवेक दोनों प्रकारके ज्वर हैं। अनेक बुरे रोगोंको कहांतक बतलाऊं?

दो०—एक ब्याधिबस नर मरहिं ❀ ए असाध्य बहु ब्याधि।
पीड़हिं संतत जीव कहं ❀ सो किमि लहइ समाधि ॥२०८॥

मनुष्य एकही व्याधिके वशमें होनेसे मर जाते हैं, फिर ये तो बहुतसी असाध्य व्याधियां हैं, जो निरंतर जीवको पीड़ा देती रहती हैं। इस दशामें वह सुख कैसे पा सकते हैं?

नेम धर्म आचार तप ❀ ग्यान जग्य जप दान।
भेषज पुनि कोटिक नहीं ❀ रोग जाहिं हरिजान ॥ २०९ ॥

हे विष्णुवाहन गरुड़! नियम, धर्म, आचार, तप, ज्ञान, यज्ञ, जप और दान—करोड़ों औषधियां हैं, फिर भी रोग नहीं दूर होते।

एहि बिधि सकल जीव जड़ रोगी ❀ सोक हरष भय प्रीति बियोगी ॥
मानसरोग कछुक मैं गाये ❀ होहिं सब के लखि बिरलइ पाये ॥

इस प्रकार सब मूर्ख जीव रोगी हैं—हर्ष, शोक, भय, प्रीति और वियोगमें फंसे हुये हैं। मैंने यहां कुछ मानसिक रोगोंको कहा है। ये सबको हैं, पर देख इन्हें विरलोंने ही पाया है।

जाने तें छीजहिं कछु पापी ❀ नास न पावहिं जनपरितापी ॥
बिषय कुपथ्य पाइ अंकुरे ❀ मुनिहु हृदय का नर बापुरे ॥

जान लेनेसे मनुष्योंको क्लेश देनेवाले ये पापी रोग कुछ कम होते हैं, परन्तु नष्ट नहीं हो जाते। विषयरूपी कुपथ्य पाकर उनका अंकुर मुनियोंके भी हृदयमें जम जाता है। फिर बेचारे साधारण मनुष्योंका क्या कहना ?

रामकृपा नासहिं सब रोगा ❀ जो एहि भाँति बनइ संजोगा ॥
सद्गुरु बेदबचन बिस्वासा ❀ संजम यह न बिषय कै आसा ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे, जो इस प्रकारका संयोग बन जावे, तो सब रोग नष्ट हो जाते हैं—श्रेष्ठ गुरु और वेदके वचनोंमें विश्वास हो, संयम यही हो कि विषयोंकी आशा न हो,

रघु - पति - भगति सजीवनमूरी ❀ अनूपान स्रद्धा मति पूरी ॥
एहि बिधि भलेहि सो रोग नसाहीं ❀ नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं ॥

रघुवंशके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिरूपी सञ्जीवनी मूल हो और अनुपान हो पूर्ण श्रद्धा और बुद्धि—इस प्रकार वे रोग भले ही नष्ट हो जावें, नहीं तो करोड़ उपाय करनेपर भी वे दूर नहीं होते।

जानिय तब मन बिरुज गोसाईं ❀ जब उर बल बिराग अधिकाई ॥
सुमति छुधा बाढ़इ नित नई ❀ बिषय आस दुरबलता गई ॥

हे स्वामिन्, मनको तब रोगरहित जानना चाहिये जब हृदयमें वैराग्य बल बढ़ जाय, सद्बुद्धिरूपी भूख नित्य नयी बढ़ने लगे और विषयोंकी आशारूपी दुर्बलता दूर हो जावे।

बिमल ग्यानजल जब सो नहाई ❀ तब रह रामभगति उर छाई ॥
सिव अज सुक सनकादिक नारद ❀ जे मुनि ब्रह्म - बिचार - बिसारद ॥

निर्मल ज्ञानरूपी जलमें जब वह मनुष्य नहाता है तब श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति हृदयमें छाकर रह जाती है। महादेव, ब्रह्मा, शुक, सनकादिक, नारद आदि जो मुनि ब्रह्म-विचार-विशारद हैं—

सब कर मत खगनायक एहा ❀ करिय राम - पद - पंकज नेहा ॥
स्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं ❀ रघुपति-भगति बिना सुख नाहीं ॥

हे पक्षिराज, सबका मत यह है कि श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंसे प्रेम करना चाहिए। वेद और पुराण—सब ग्रंथ कहते हैं कि श्रीरामचन्द्रजीकी भक्ति बिना सुख नहीं।

कमठपीठि जामहिं बरु बारा ❀ बंध्यासुत बरु काहुहि मारा॥
फूलहिं नभ बरु बहुबिधि फूला ❀ जीव न लह सुख हरि-प्रति-कूला॥

कच्छपकी पीठपर चाहे बाल उग आवें, बांझका पुत्र चाहे किसीको मार डाले, आकाशमें चाहे तरह-तरहके फूल फूलने लगें; परन्तु भगवान्‌के प्रतिकूल होकर जीवको सुख नहीं मिल सकता।

तृषा जाइ बरु मृग-जल-पाना ❀ बरु जामहिं सससीस बिषाना॥
अंधकारु बरु रबिहिं नसावइ ❀ रामबिमुख न जीव सुख पावइ॥
हिम तें अनल प्रगट बरु होई ❀ बिमुख राम सुख पाव न कोई॥

मृगतृष्णाके जलको पीकर चाहे प्यास बुझ जाय, खरगोशके सिरपर चाहे सींग जम जावें, अन्धकार चाहे सूर्यको नष्ट कर दे, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके विमुख हो जीव सुखको नहीं पा सकता। बर्फसे चाहे अग्नि प्रकट हो जाय, परन्तु श्रीरामचन्द्रजीके विमुख होकर कोई सुख नहीं पाता।

दो०—बारि मथे घृत होइ ❀ सिकता तें बरु तेल।
बिनु हरिभजन न भव तरहिं ❀ यह सिद्धान्त अपेल॥ २१०॥

पानीका मन्थन करनेसे चाहे घी निकल आवे और चाहे निकल आवे बालूसे तेल; परन्तु भगवानके भजन किये विना कोई संसारको नहीं तर सकता—यह अटल सिद्धान्त है।

मसकहि करइ बिरंचि प्रभु ❀ अजहि मसक तें हीन।
अस बिचारि तजि संसय ❀ रामहिं भजहिं प्रबीन॥ २११॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी मच्छरको भी ब्रह्मा बना सकते हैं और ब्रह्माको मच्छरसे भी नीच कर सकते हैं—ऐसा विचारकर ही चतुर मनुष्य संशय त्यागकर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करते हैं।

नगरस्वरूपिणी—विनिश्चितं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।
हरिं नरा भजन्ति येऽतिदुस्तरं तरन्ति ते॥

भलीभांति निश्चित की हुई बात मैं आपसे कहता हूं। मेरे वचन अन्यथा नहीं हैं। जो मनुष्य भगवान्‌का भजन करते हैं वे अत्यन्त दुस्तर संसार-सागरको तर जाते हैं।

कहेउं नाथ हरिचरित अनूपा ❀ ब्यास समास स्वमति-अनुरूपा॥
स्रुतिसिद्धांत इहइ उरगारी ❀ राम भजिय सब काम बिसारी॥

हे नाथ, भगवान्‌का अनुपम चरित अपनी बुद्धिके अनुरूप कहीं विस्तारसे और कहीं संक्षेपमें कहा। हे साँपोंके शत्रु गरुड़, वेदका सिद्धान्त यही है कि सब काम छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीका भजन करना चाहिये।

प्रभु रघुपति तजि सेइअ काही ❀ मोसे सठ पर ममता जाही॥
तुम्ह बिग्यानरूप नहिं मोहा ❀ नाथ कीन्हि मो पर अति छोहा॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको छोड़कर और किसका सेवन करना चाहिये; जिन्हें मुझसे दुष्टपर भी ममता है। आप विज्ञानरूप हो, आपको मोह नहीं हो सकता। हे नाथ, आपने मुझपर बड़ी दया की।

पूछेहु रामकथा अति पावनि ❀ सुक-सनकादि-संभु-मन-भावनि॥
सतसंगति दुर्लभ संसारा ❀ निमिष दंड भरि एकउ बारा॥

आपने मुझसे श्रीरामचन्द्रजीकी अत्यन्त पवित्र कथा पूछी, जो शुक, सनकादि और शिवजीके मनको भी प्रिय लगती है। संसारमें एक पल, एक घड़ी भरके लिये एक भी बार सत्संग होना दुर्लभ है।

देखु गरुड़ निजहृदय बिचारी ❀ मैं रघुबीर-भजन-अधिकारी॥
सकुनाधम सब भाँति अपावन ❀ प्रभु मोहि कीन्ह बिदित जगपावन॥

हे गरुड़जी, अपने हृदयमें विचारकर देखो। क्या मैं श्रीरामचन्द्रजीके भजनका अधिकारी हूँ? मैं नीच पक्षी सब प्रकार अपवित्र हूँ, फिर भी प्रभुने मुझे संसारमें प्रसिद्ध और पवित्र करनेवाला कर दिया।

दो०—आजु धन्य मैं धन्य अति ❀ जद्यपि सब बिधि हीन।
निजजन जानि राम मोहि ❀ संतसमागम दीन्ह॥ २१२॥

यद्यपि मैं सब प्रकार हीन हूँ तथापि आज मैं धन्य हूँ, क्योंकि अपना भक्त जानकर अत्यन्त धन्य हूँ श्रीरामचन्द्रजीने मुझे संतसमागम दिया।

नाथ जथामति भाषेउँ ❀ राखेउँ नहिं कछु गोइ।
चरितसिंधु रघुबीर के ❀ थाह कि पावइ कोइ॥ २१३॥

हे नाथ, जैसी बुद्धि थी उसके अनुसार मैंने कहा—कुछ भी छिपाकर नहीं रखा। क्या श्रीरामचन्द्रजीके चरितसागरकी कोई थाह पा सकता है?

सुमिरि राम के गुनगन नाना ❀ पुनि पुनि हरष भुसुंडि सुजाना॥
महिमा निगम नेति कहि गाई ❀ अतुलित बल प्रताप प्रभुताई॥

श्रीरामचन्द्रजीके अगणित गुणोंके समूहका स्मरणकर सुजान कागभुशुण्डजी बार-बार प्रसन्न होने लगे। जिनकी महिमाको वेदोंने 'नेति' कहकर वर्णन किया, उनका बल, प्रताप और प्रभुता—सब अतुल हैं।

सिव - अज - पूज्य - चरन रघुराई ❀ मोपर कृपा परम मृदुलाई ॥
अस सुभाव कहुँ सुनउँ न देखउँ ❀ केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥

जिन श्रीरामचन्द्रजीके चरण शिवजी और ब्रह्माजीके भी पूजनीय हैं, उनकी मुझपर कृपा और अत्यन्त वत्सलता है। ऐसा स्वभाव न कहीं सुनता हूं और न देखता हूं। तब हे पक्षिराज, श्रीरामचन्द्रजीके समान किसको गिनूं ?

साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी ❀ कबि कोबिद कृतग्य संन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी ❀ धर्मनिरत पंडित बिग्यानी ॥

साधक, सिद्ध, जीवन्मुक्त, उदासीन, कवि, विद्वान, कृतज्ञ, संन्यासी, योगी, शूरवीर, श्रेष्ठ तपस्वी, ज्ञानी, धर्ममें तत्पर, पण्डित, विज्ञानी—

तरहिं न बिनु सेये मम स्वामी ❀ राम नमामि नमामि नमामी ॥
सरन गये मो से अघरासी ❀ होहिं सुद्ध नमामि अबिनासी ॥

कोई भी हों, मेरे स्वामी श्रीरामचन्द्रजीका सेवन विना किये तर नहीं सकते। हे श्रीरामचन्द्रजी, मैं आपको नमस्कार करता हूं, नमस्कार करता हूं और नमस्कार करता हूं। जिनकी शरणमें जानेसे मुझ जैसे पापोंकी राशि प्राणी भी शुद्ध हो जाते हैं, उन अविनाशी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीको मैं नमस्कार करता हूं।

दो०—जासु नाम भवभेषज ❀ हरन ताप - त्रय - सूल ।
सो कृपालु मोहि तोहि पर ❀ सदा रहउ अनुकूल ॥२१४॥

जिनका नाम संसाररूप रोगकी ओषधि है और तीनों तापोंकी वेदनाको दूर कर देनेवाला है, वही कृपालु श्रीरामचन्द्रजी आपपर और मुझपर सदा अनुकूल रहें।

सुनि भुसुंडि के बचन सुभ ❀ देखि रामपद नेह ।
बोलेउ प्रेमसहित गिरा ❀ गरुड़ बिगत - संदेह ॥२१५॥

कागभुशुण्डजीके शुभ वचन सुनकर और श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें उनका प्रेम देखकर गरुड़जी संदेह-रहित होकर प्रेमके साथ यह वाणी बोले—

मैं कृतकृत्य भयउँ तव बानी ❀ सुनि रघु-बीर-भगति-रस-सानी ॥
रामचरन नूतन रति भई ❀ मायाजनित बिपति सब गई ॥

श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिके रससे सनी हुई आपकी वाणी सुनकर मैं कृतकृत्य हो गया। श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें मेरा नया प्रेम हुआ। मायासे उत्पन्न मेरी सब विपत्ति दूर हो गयी।

मोहजलधि बोहित तुम्ह भयऊ ❀ मो कहँ नाथ बिबिध सुख दयऊ ॥
मो पर होइ न प्रतिउपकारा ❀ बंदउँ तव पद बारहिं बारा ॥

मोहरूपी समुद्रसे पार होनेके लिये आप नौका हुए और हे नाथ, मुझको आपने अनेक प्रकारके सुख दिये। आपके उपकारका बदला मुझसे न चुक सकेगा, बार-बार मैं आपके चरणोंकी वंदना करता हूं।

पूरनकाम रामअनुरागी ❀ तुम्ह सम तात न कोउ बड़भागी ॥
संत बिटप सरिता गिरि धरनी ❀ परहित हेतु सबन्हि कै करनी ॥

हे तात, आप पूर्णकाम हैं, श्रीरामचन्द्रजीके स्नेही हैं, आपके समान बड़भागी कोई नहीं है। संतजन, वृक्ष, नदी, पर्वत और पृथिवी—सभीकी करनी दूसरोंके भलेके लिये होती है।

संतहृदय नव - नीत - समाना ❀ कहा कबिन्ह पै कहइ न जाना ॥
निजपरिताप द्रवइ नवनीता ❀ परदुख द्रवहिं सुसंत पुनीता ॥

संतजनोंका: हृदय मक्खनके समान होता है—ऐसा कवियोंने कहा है, पर कहना जाना नहीं; क्योंकि मक्खन, जब स्वयं उसे आंच लगती है, तब पिघलता है; परन्तु पवित्र संतजन पराये दुःखको देखकर पिघल जाते हैं।

जीवन जनम सुफल मम भयऊ ❀ तव प्रसाद संसय सब गयऊ ॥
जानेहु सदा मोहि निज किंकर ❀ पुनि पुनि उमा कहइ बिहंगबर ॥

मेरा जन्म और जीवन सफल हो गया। आपकी दयासे मेरा सब संदेह निवृत्त हो गया। आप मुझे नित्य अपना सेवक जानिये। शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, पक्षिश्रेष्ठ गरुड़ इस प्रकार बार-बार कहने लगे।

दो०—तासु चरन सिर नाइ करि ❀ प्रेमसहित मतिधीर।
गयउ गरुड़ बैकुंठ तब ❀ हृदय राखि रघुबीर ॥२१६॥

तब, कागभुशुण्डजीके चरणोंको प्रेमके साथ शिर नवाकर धीर बुद्धिवाले गरुड़जी हृदयमें श्रीरामचन्द्रजीको रखकर वैकुण्ठको गये।

गिरिजा संत-समागम ❀ सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइ सो ❀ गावहिं बेद पुरान ॥२१७॥

हे पार्वती, संतजनोंके समागमके समान और कुछ भी लाभ नहीं है। वह समागम भगवान्‌की कृपा बिना नहीं होता—ऐसा वेद और पुराण गाते हैं।

कहेउँ परमपुनीत इतिहासा ❀ सुनत स्रवन छूटहिं भवपासा ॥
प्रनत -कलप - तरु करुनापुंजा ❀ उपजइ प्रीति राम - पद - कंजा ॥

मैंने यह अत्यन्त पुनीत इतिहास कहा है, जिसे कानोंसे सुनते ही संसारके बंधन छूट जाते हैं। इससे भक्तजनोंके कल्पवृक्ष दयाके समूह श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें प्रीति उत्पन्न होती है।

मन बच कर्म जनित अघ जाई ❀ सुनहिं जे कथा स्रवन मन लाई ॥
तीर्थाटन साधनसमुदाई ❀ जोग बिराग ग्याननिपुनाई ॥

जो मन लगाकर इस कथाको अपने कानोंसे सुनेंगे, उनके मन, वाणी और कर्मजनित पाप दूर हो जायंगे। तीर्थयात्रा, साधनोंके समूह, योग, वैराग्य, ज्ञानकी निपुणता—

नाना कर्म धर्म ब्रत दाना ❀ संजम दम जप तप मख नाना ॥
भूतदया द्विज-गुरु-सेवकाई ❀ बिद्या बिनय बिबेक बड़ाई ॥

अनेक प्रकारके कर्म, धर्म, व्रत, दान, संयम, दम, जप, तप, अनेक भांतिके यज्ञ, प्राणिमात्रमें दया, ब्राह्मण और गुरुकी सेवा, विद्या, विनय, विवेक और बड़ाई,

जहं लगि साधन बेद बखानी ❀ सब कर फल हरिभगति भवानी ॥
सो रघु-नाथ-भगति स्रुति गाई ❀ रामकृपा काहू एक पाई ॥

जहांतक वेदोंने साधन वर्णन किये हैं, हे भवानी, सबका फल है—भगवान्‌की भक्ति। वेदोंमें गायी हुई रघुनाथजीकी वह भक्ति श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे किसी एक-आधने ही पायी है।

दो०—मुनि दुर्लभ हरिभगति नर ❀ पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर ❀ सुनहिं मानि बिस्वास ॥ २१८ ॥

जो मनुष्य विश्वास मानकर यह कथा निरंतर सुनेंगे वे भगवान्‌की उसी भक्तिको परिश्रम बिना ही पा जायेंगे, जो मुनियोंको भी दुर्लभ है।

सोइ सर्बग्य सोई गुनग्याता ❀ सोइ महिमंडन पंडित दाता ॥
धरमपरायन सोइ कुलत्राता ❀ रामचरन जाकर मन राता ॥

जिसका मन श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें लग गया वही सर्वज्ञ है, वही गुणी है, वही ज्ञाता है, वही पृथिवीका-भूषणरूप पंडित है, वही दाता है, वही धर्मपरायण है और वही अपने कुलका रक्षक है।

नीतिनिपुन सोइ परमसयाना ❀ स्रुतिसिद्धांत नीक तेहि जाना ॥
सो कबि कोबिद सो रनधीरा ❀ जो छल छाँड़ि भजइ रघुबीरा ॥

जो छल छोड़कर श्रीरामचन्द्रजीको भजता है वही नीतिनिपुण और अत्यन्त चतुर है, उसीने वेदोंके सिद्धांत-को भलीभांति जाना है, वही कवि और विद्वान् है और वही रणमें धीर है।

धन्य सुदेस सो जहँ सुरसरी ❀ धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी ॥
धन्य सो भूप नीति जो करई ❀ धन्य सो द्विज निजधर्म न टरई ॥

वह देश धन्य है जहां देवनदी गंगाजी हैं, वह स्त्री धन्य है जो पातिव्रत धर्मका अनुसरण करती है, वह राजा धन्य है जो नीतिके अनुसार आचरण करता है और वह ब्राह्मण धन्य है जो अपने धर्मसे विचलित नहीं होता।

सो धन धन्य प्रथम गति जाकी ❀ धन्य पुन्यरत मति सोइ पाकी ॥
धन्य घरी सोइ जब सतसंगा ❀ धन्य जनम द्विज भगति अभंगा ॥

वह धन धन्य है जिसकी प्रथम गति हो—जो दान करनेमें काम आवे, जो पुण्य कर्मोंमें लगी हुई रहती है वही बुद्धि परिपक्व है और धन्य है,वही घड़ी धन्य है जब सत्सङ्ग हो,द्विजजन्म और अखंड भक्ति पाना धन्य है।

दो०—सो कुल धन्य उमा सुनु ❀ जगतपूज्य सुपुनीत ।
स्री-रघु-बीर-परायन ❀ जेहि नर उपज बिनीत ॥२१९॥

हे पार्वती, सुनो, वह कुल जगतमें पूज्य, अत्यन्त पवित्र और धन्य है जिसमें श्रीरामचन्द्रजीके भक्त और नम्र पुरुष उत्पन्न होते हैं।

मति-अनु-रूप कथा मैं भाखी ❀ जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ॥
तव मन प्रीति देखि अधिकाई ❀ तब मैं रघु-पति-कथा सुनाई ।

यद्यपि पहिले मैंने इसे गुप्त कर रखा था तथापि अब अपनी बुद्धिके अनुसार यह कथा मैंने कही। जब मैंने तुम्हारे मनमें प्रीति अधिक देखी तब श्रीरामचन्द्रजीकी यह कथा सुनायी।

यह न कहीजे सठ हठसीलहिं ❀ जो मन लाइ न सुन हरिलीलहिं ॥
कहिय न लोभिहि क्रोधिहि कामिहि ❀ जो न भजइ स-चराचर-स्वामिहि ॥

जो दुष्ट और हठीले स्वभावका हो और जो मन लगाकर भगवान्‌की लीलाको न सुनता हो, उससे यह नहीं कहनी चाहिये। जो लोभी, क्रोधी और कामी हो और जो चराचरके स्वामीको न भजता हो, उससे इसे नहीं कहना चाहिये।

द्विजद्रोहिहि न सुनाइय कबहूं ❀ सुरपति-सरिस होइ नृप तबहूं ॥
रामकथा के ते अधिकारी ❀ जिन्ह के सतसंगति अति प्यारी ॥

ब्राह्मण-द्रोहीको इसे कभी नहीं सुनाना चाहिये, चाहे वह देवताओंके स्वामी इन्द्रके समान राजा ही क्यों न होवे। श्रीरामचन्द्रजीकी कथाके अधिकारी वे हैं जिन्हें साधुजनोंकी संगति अत्यन्त प्यारी है।

गुरु - पद - प्रीति नीतिरत जेई ❀ द्विजसेवक अधिकारी तेई ॥
ता कहँ यह बिसेष सुखदाई ❀ जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुराई ॥

जिनको गुरुके चरणोंमें प्रीति है, जो नीतिमें तत्पर हैं और जो ब्राह्मणोंके सेवक हैं, वही इस रामकथाके अधिकारी हैं। जिसको श्रीरामचन्द्रजी प्राणप्रिय हैं उसको यह विशेष सुख देनेवाली है।

दो०—राम-चरन-रति जो चहइ ❀ अथवा पद निर्बान।
भावसहित सो यह कथा ❀ करहि स्रवनपुट पान ॥ २२० ॥

जो श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें प्रेम अथवा मोक्षपद चाहते हों वे प्रेमके साथ यह कथा अपने कानरूप दोनोंसे पान करें।

रामकथा गिरिजा मैं बरनी ❀ कलि-मल-हरनि मनो-मल-हरनी ॥
संसृतिरोग सजीवन मूरी ❀ रामकथा गावहिं स्रुति भूरी ॥

हे पार्वती, मैंने श्रीरामचन्द्रजीकी कथाका वर्णन किया, जो कलियुगके पापोंको नाश करने और मनके मैलको दूर कर देनेवाली है। यह संसाररूपी रोगके लिये संजीवनी मूल है। श्रीरामचन्द्रजीकी कथाको वेद विस्तारके साथ गाते हैं।

एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना ❀ रघु - पति - भगति केर पंथाना ॥
अति हरिकृपा जासु पर होई ❀ पाउँ देहि एहि मारग सोई ॥

इसमें सुन्दर सात सोपान हैं, जो श्रीरामचन्द्रजीकी भक्तिके मार्ग हैं। भगवान्‌की जिसपर अत्यन्त कृपा होती है, इस मार्गमें वही पैर रखता है।

मन-कामना-सिद्धि नर पावा ❀ जो यह कथा कपट-तजि गावा ॥
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं ❀ ते भवनिधि गोपद इव तरहीं ॥

जो मनुष्य छल छोड़कर यह कथा गाते हैं वे अपनी मनोकामनाओंकी सिद्धि पा जाते हैं। जो मनुष्य इसे कहते, सुनते और इसका अनुमोदन करते हैं वे संसारसागरको गायके खुरके गढ़ेके समान तर जाते हैं।

सुनि सुभ कथा हृदय अति भाई ❀ गिरिजा बोली गिरा सुहाई ॥
नाथकृपा मम गत संदेहा ❀ रामचरन उपजेउ नव नेहा ॥

यह शुभकथा सुन लेनेपर, पार्वतीजीको हृदयमें अत्यन्त प्रिय लगी। फिर वे यह सुहावनीवाणी बोलीं—हे नाथ, आपकी कृपासे मेरा सब संदेह दूर हुआ और श्रीरामचंद्रजीके चरणोंमें मेरा नया प्रेम उत्पन्न हुआ।

दो०—मैं कृतकृत्य भइउँ अब ❀ तव प्रसाद बिस्वेस।
रामभगति दृढ़ उपजी ❀ बीते सकल कलेस ॥२२१॥

हे विश्वेश्वर, आपकी दयासे अब मैं कृतकृत्य हो गयी; मुझमें श्रीरामचंद्रजीकी दृढ़ भक्ति उत्पन्न हो गयी और मेरे सब क्लेश बीत गये।

यह सुभ संभु - उमा - संबादा ❀ सुखसंपादन समन बिषादा॥
भवभंजन गंजन संदेहा ❀ जनरंजन सज्जनप्रिय एहा॥

शिवजी और पार्वतीका यह शुभ संवाद सुखोंको संपादन करनेवाला और शोकको मिटानेवाला है। यह संसार-बाधाको नष्ट कर देनेवाला, सन्देहोंको निवृत्त करनेवाला, भक्तोंको प्रसन्न करनेवाला और साधुजनोंको प्यारा है।

रामउपासक जे जग माहीं ❀ एहि सम प्रिय तिन्ह के कछु नाहीं॥
रघुपति - कृपा जथामति गावा ❀ मैं यह पावन चरित सुहावा॥

संसारमें जो श्रीरामचन्द्रजीके उपासक हैं उनको इसके समान प्रिय और कुछ नहीं। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे मैंने यह पवित्र कर देनेवाला सुहावना चरित अपनी बुद्धिके अनुसार गाया।

एहिं कलिकाल न साधन दूजा ❀ जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा॥
रामहिं सुमिरिअ गाइअ रामहिं ❀ संतत सुनिअ राम - गुन-ग्रामहिं॥

इस कलियुगमें योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, पूजा आदि दूसरा कोई साधन नहीं। श्रीरामचन्द्रजीको स्मरण करना, श्रीरामचन्द्रजीको गाना और निरंतर श्रीरामचन्द्रजीके गुणसमूहोंको सुनना चाहिये।

जासु पतितपावन बर बाना ❀ गावहिं कबि श्रुति संत पुराना॥
ताहि भजहिं मन तजि कुटिलाई ❀ राम भजे गति केहिं नहिं पाई॥

जिनका बड़ा बाना है—पतित-पावन। जिन्हें कविजन, वेद, साधु पुरुष और पुराण सब गाते हैं, उन श्रीरामचन्द्रजीको अब कुटिलता छोड़कर मनसे भजना चाहिये। श्रीरामचन्द्रजीका भजन करनेसे किसने गति नहीं पायी ?

छं०—पाई न केहिं गति पतितपावन राम भजि सुनु सठ मना।
गनिका अजामिल ब्याध गीध गजादि खल तारे घना॥
आभीर जवन किरात खल स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक तेऽपि पावन होहिं राम नमामि ते॥

तुलसीदासजी कहते हैं—अरे दुष्ट मन, सुन। पतितपावन श्रीरामचन्द्रजीका भजन कर किसने गति नहीं पायी? वेश्या, अजामिल, व्याध, गीध, हाथी आदि अगणित दुष्ट तार दिये। आभीर, यवन, किरात, खल, चाण्डाल आदि जो भारी पापरूप ही हैं, वे भी जिनका नाम एक बार लेकर पावन हो जाते हैं, उन श्रीरामचन्द्रजीको मैं नमस्कार करता हूं।

रघु - बंस - भूषन - चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु स्रम रामधाम सिधावहीं॥
सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरहिं।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री-रघुबर हरहिं॥

रघुवंशभूषण श्रीरामचन्द्रजीका यह चरित जो मनुष्य कहते, सुनते और गाते हैं वे कलियुगके पापों और मनके मैलको धोकर परिश्रमके बिना ही श्रीरामचन्द्रजीके धाम वैकुंठमें जाते हैं। सात-पांच मनोहर चौपाइयोंको समझकर जो मनुष्य हृदयमें धारण करते हैं उनके घोर अविद्यासे उत्पन्न होनेवाले पांचों विकार श्रीरामचन्द्रजी दूर कर देते हैं।

सुंदर सुजान कृपानिधान अनाथ पर कर प्रीति जो।
सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को॥
जा की कृपा - लव - लेस तें मतिमंद तुलसीदासहूं।
पायउ परमबिस्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूं॥

जो सुन्दर हो, सुजान हो, दयानिधान हो, अनाथोंपर प्रीति करता हो, किसी तरहकी इच्छा न रखकर हित करनेवाला हो और मोक्षदाता हो, वह केवल श्रीरामचन्द्रजी ही हैं। उनके बराबर और दूसरा कौन है? जिनकी लवलेश मात्र दयासे मंदबुद्धि तुलसीदासने भी परम विश्राम पा लिया; उन श्रीरामचन्द्रजीके समान स्वामी कहीं नहीं है।

दो०—मो सम दीन न दीनहित ❀ तुम्ह समान रघुबीर।
अस बिचारि रघु-बंस-मनि ❀ हरहु बिषम-भव-भीर॥२२२॥

हे श्रीरामचन्द्रजी, मेरे समान दीन नहीं और न आपके समान दीन जनोंका हित करनेवाला ही है हे रघुवंशमणि, ऐसा विचारकर मेरी विषम संसार-बाधाको दूर कीजिये।

कामिहि नारि पियारि जिमि ❀ लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुबंस निरंतर ❀ प्रिय लागहु मोहि राम॥२२३॥

हे रघुवंशी श्रीरामचन्द्रजी, जैसे कामी पुरुषको स्त्री प्यारी होती है और जैसे लोभीको दाम प्यारा होता है, वैसे ही आप मुझे निरंतर प्रिय लगिये।

श्लोक—यत्पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं।
श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम्।
मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमः शान्तये।
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम् ॥१॥

पूर्वकालमें सुकवि प्रभु श्रीशिवजीने जिस अत्यंत कठिन रामायणको रचा था और जिससे श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंकी भक्ति प्राप्त होती है, उसीको बहुमान देकर श्रीरामचन्द्रजीके नाममें तत्पर तुलसीदासने अपने अन्तःकरणके अन्धकारको दूर करनेके लिये इस मानसको भाषाबद्ध किया।

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं।
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये।
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः ॥ २ ॥

यह पुण्यरूप है; पापोंको दूर करनेवाला है; सदैव कल्याण करनेवाला है; विज्ञान और भक्तिको देनेवाला है; माया, मोह और मलिनताको दूर करनेवाला है; अत्यंत निर्मल है; प्रेमरूपी जलसे भरा हुआ है और शुभ है। इस श्रीरामचरितमानसमें जो मनुष्य भक्तिपूर्वक डुबकी लगाते हैं वे संसाररूपी सूर्यकी प्रचण्ड किरणोंसे नहीं जलते।

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने अविरलहरिभक्तिसम्पादनो नाम सप्तमः सोपानः समाप्तः ॥

॥ शुभमस्तु मङ्गलमस्तु ॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामायण

[सरल टीका]

अष्टम सोपान

लवकुशकाण्ड

दो०—श्रीभुशुंडिके सुनि वचन। देख रामपदप्रीति ॥
हुइ प्रसन्न बोले गरुड़। बाणी परम पुनीति ॥१॥

श्रीकागभुशुण्डजीकी बात सुनकर और रामचन्द्रजीके चरणोंमें उनकी प्रीति देखकर गरुड़जी प्रसन्न होकर अति पवित्र वाणी बोले।

सुरसरिसम पावन भयो। नाथ हृदय अब मोर ॥
जन्म जन्म छूटै नहीं। नाथ पदाम्बुज तोर ॥२॥

हे स्वामिन्! अब मेरा हृदय गंगाजीके समान पवित्र हो गया और हे नाथ! आपके कमलचरण जन्म-जन्ममें मुझसे न छूटेंगे।

सुने अखिल गुणगण प्रभुकेरे। पूरे नाथ मनोरथ मेरे ॥
तव प्रसाद वायसकुलनाथा। हृदय बसहिं अब प्रभुगुणगाथा ॥

हे स्वामिन्! मैंने भगवानके सब गुण-समूह सुने, और मेरे सब मनोरथ पूर्ण हुए। हे कागभुशुण्डजी! आपकी दयासे अब मेरे हृदयमें प्रभुके गुणोंकी कथाका वास होगा।

मनसन्तोष न चित्त अघाहीं। यथा उदधि सरितासर जाहीं ॥
पक्षी पसु जंगम जड़ जाती। चर अरु अचर बरण किहि भांती ॥

मनमें सन्तोष तो है, किन्तु चित्त वैसे ही नहीं भरता जैसे कि नदी और तालाबोंके मिलनेसे समुद्र नहीं भरता। पशु-पक्षी, जंगम-जड़, चर और अचर—इनका वर्णन कैसे किया जाय।

जो जन अवध बसहिं सुखधामा। लिये संग सादर श्रीरामा ॥
तजि सब अवध गये सहदेहा। इहिं सुनि नाथ परम सन्देहा ॥

और जो सुखके स्थान अयोध्यापुरीमें रहनेवाले थे उनको आदर समेत श्रीरामचन्द्रजीने साथ लिया और सब अयोध्यापुरीको छोड़कर सदेह स्वर्गको गये। हे स्वामिन्! यह सुनकर मुझे बड़ा सन्देह है।

अब प्रभु मोहिं सब कहौ बुझाई। पिता जानि मैं करौं ढिठाई ॥
इह इतिहास पुनीत कृपाला। जिमिमख कीन्ह राम महिपाला ॥

सो हे नाथ! अब मुझे सब समझाकर कहिये। मैंने आपको अपने पिता तुल्य जानकर ढिठाई की है। दयालु! यह पवित्र कथा और जिस प्रकार राजा रामचन्द्रजीने यज्ञ किया सो सब कथा कहिए।

दो०—अस कहि गद्गदवचन मृदु, पुलकावली सरीर।
सुनि सप्रेम हर्षे विहंग, वायस मति अतिधीर ॥३॥

गरुड़जी ऐसे गद्गद् और मीठे वचन कहकर पुलकित शरीर हुए और अत्यन्त मतिधीर कागभुशुण्डजी प्रेम-सहित वचन सुनकर प्रसन्न हुए और बोले।

धन्य धन्य तुम धनि खगराया। कीन्हीं अमित मोहिंपर दाया ॥
रामकृपा तुम्हरे मनमाहीं। संशय शोक मोह भ्रम नाहीं ॥

हे गरुड़! आप धन्य हैं, धन्य हैं। आपने मुझपर अति कृपा की। श्रीरामचन्द्रजीकी कृपासे आपके मनमें संदेह शोक, अज्ञान और भ्रम कुछ नहीं है।

अतिप्रियवचन रसज्ञ तुम्हारे। लागत नाथ मोहिं अति प्यारे ॥
अब प्रभु कथा बिसद बिस्तारी। सकल सुनावहुं प्रभुहितकारी ॥

हे स्वामिन्! आपके अत्यन्त प्यारे और रसीले वचन मुझको बहुत प्यारे लगते हैं। हे हितकारी प्रभु! अब भगवान्की सुन्दर सब कथाको सविस्तर सुनाता हूं।

तव मन प्रीति देखि खगराया। मिटे अमंगल कोटिहु माया ॥
सुनु अब रामरहस्य अनूपा। चरित पुनीत अवधपुरभूपा ॥

हे गरुड़ ! आपके मनके प्रेमको देखकर करोड़ों ही अमंगल और माया मिट गईं। अब अयोध्याके स्वामी श्रीरामचन्द्रजीके अनुपम रहस्य और पवित्र चरित्र सुनिए।

अज अद्वैत अमल अबिनासी। रहित सकलकलिमलकर फांसी॥

नव सहस्र नवशत कम बासी। कृत चरित्र रह पुर जगदासी॥

रामजी अजन्म, द्वैतरहित, पवित्र, नाशरहित और कलियुगके सब पापरूपी फंदोंसे रहित हैं। नौ सौ कम नौ हजार वर्षतक भगवान्‌ने इस नगरमें रहकर चरित किये।

दो०—विधिवरबचन संभारि उर, राजत करुणागार।

युगलजोरि शोभा निरखि, लजित कोटिशत मार॥४॥

फिर ब्रह्माके श्रेष्ठ वचनोंका हृदयमें स्मरण कर करुणासागर विराजमान हुए। युगलजोड़ीकी शोभा देखकर सौ करोड़ कामदेव भी लज्जित होते हैं।

अनुजसचिव प्रभु प्रजा बोलाये। गुरुगृह सादर तिन्हकहं लाये॥

मकरमास रविपर्व सुहावा। बिदा मांगि गुरुपद सिरु नावा॥

भगवान्‌ने छोटे भाई, मंत्री और प्रजाजनको बुलाया और उनको आदर समेत गुरुके घर लाये और (रामजीने) मकरके सूर्यमें सूर्यग्रहण जानकर गुरुके चरणोंको शिर नवाकर विदा मांगी।

कासीक्षेत्र धर्ममय जाना। सकल सजायउ बाहन नाना॥

चतुरंगिनी अनी सबु साजा। किय प्रस्थान राम रघुराजा॥

काशीक्षेत्रको धर्ममय जानकर अनेक सवारियां सजाईं। और सब चतुरंगिणी सेना सजाकर रघुराज श्रीरामचन्द्रजीने वहांके लिये प्रस्थान किया।

बीच बास करि शिवपुर आये। सादर पुरहिं सीस सब नाये॥

आय सुरसरिहिं कीन्ह प्रनामा। अभय अनंत पाय बिस्रामा॥

बीचमें वास करके काशीपुरी आए, और सबने पुरीको आदरपूर्वक शिर नवाया। फिर आकर गंगाजीको प्रणाम किया और असीम आनन्द पाकर निर्भय हुए।

महिसुर दंडि यती संन्यासी। पूजेउ कृपासिन्धु सुखरासी॥

दान दिये बरणे किमि जाई। धनद कुबेर सुरेस लजाई॥

दयासागर, सुखकी राशि भगवान्‌ने ब्राह्मण, दंडी, यति और संन्यासियोंकी पूजा की और ऐसे दान दिये कि जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता, जिनको देखकर धनपति कुबेर और इन्द्र भी लज्जित होते हैं।

दो०—प्रभु रहे इमि अमित दिन, सुखी किये मुनिवृन्द ॥
आये पुनि निज नगर महं, रविकुलकैरवचन्द ॥५॥

भगवान्‌ने इस भांति बहुत दिन रहकर मुनीश्वरोंको सुखी किया और तत्पश्चात् सूर्यवंशरूपी कुमुदिनीके लिये चन्द्रमाके समान रामचन्द्रजी अपने नगर (अयोध्या) में आये।

प्रतिदिन अवध अनन्त उछाहू। दान देहिं प्रतिदिन नरनाहू ॥
दुख प्रपंच सोच नहिं काहू। व्याप न कबहुँ सुना खगनाहू ॥

अयोध्यापुरीमें प्रत्येक दिन परम आनन्द होने लगा, राजा रामचन्द्रजी प्रतिदिन दान देने लगे। हे गरुड़, वहां प्रपञ्च, दुःख और सोच किसीको व्यापते हुए न सुना।

सुनहिं जहां तहं बेद पुराना। दूसर धर्म न काहू जाना ॥
दिन दिन प्रीति देखि भगवाना। अमित अनंद सकलपुर जाना ॥

जहां-तहां वेद-पुराणकी कथा सुनाई देती थी, दूसरे धर्मको कोई नहीं जानता था। भगवान्‌ने दिन-दिन प्रेम बढ़ते देखकर सब नगरको बहुत आनन्दित जाना।

सतसंवत परिमाण हमारा। भये सोचबश राम उदारा ॥
अस्वमेध मख करौं सुहावन। गाइ तरहिं भव दुःखनसावन ॥

उदार श्रीरामचन्द्रजी यह सोचकर शोकके वश हुए कि हमारा प्रमाण सौ वर्षका है यानी सौ वर्ष ही और रहना है, इसलिये सुन्दर और दुःखोंका नाशक अश्वमेध यज्ञ करूं, जिसे गाकर सब संसारसे तर जायँगे।

पुनि निजधामहिं तुरत सिधावौं। बिधिके बचन बिलंब न लावौं ॥
प्रात जाय गुरुभवन सप्रीती। कहौं करौं सब सुन्दर रीती ॥

फिर अपने धामको शीघ्र चला जाऊंगा। ब्रह्माके वचनोंमें देरी नहीं करूंगा। इसलिये सवेरे गुरुके घर जाऊंगा और प्रेमसहित जो कुछ वे कहेंगे उसे सुन्दर रीतिसे करूंगा।

दो—अस विचार उर राखि कर, कृपासिंधु मतिधीर ।
किये चरित नाना अमित, हरन सोक भवभीर ॥६॥

दयाके समुद्र गम्भीर बुद्धि श्रीरामचन्द्रजीने हृदयमें ऐसा विचार धारण कर संसारके शोक और कठिनाइयोंको दूर करनेवाले अनेक अपार चरित किये।

कहहुं सुनहु रघुपतिप्रभुताई। जो पुराण स्रुति नारद गाई ॥
रामचन्द्रमहिमा अतिभूरी। सो बर्णत कवि मन कदरूरी ॥

अब रामचन्द्रजीकी प्रभुताको कहता हूं, उसे सुनो, जिसे वेद, पुराण और नारदने गाया है। रामचन्द्रजीकी महिमा बहुत बड़ी है, उसके वर्णन करनेमें कवियोंका मन भी हिचकता है।

मैं मतिमन्द कहौं किहि भांती। सोहत काग कि हंससुपांती॥

सुनिय न पुहुमि कतहुं अघ काना। पढ़हिं चतुर नर वेद पुराना॥

उसे मैं मन्दबुद्धि किस प्रकार कहूं? क्या बगुला भी हंसोंकी सुन्दर पंक्तिमें शोभित होता है! पृथ्वीपर कहीं भी कानोंसे पाप नहीं सुनाई देता, चतुर मनुष्य वेद पुराण पढ़ते हैं।

गावहिं प्रभुगुणगण भयहारी। निन्दहिं अमरलोक नर नारी॥

आज्ञा मात पिता गुरु करहीं। तप मख दान करहिं हरि भजहीं॥

स्त्री-पुरुष भय-नाशक भगवान्के गुणसमूहोंको गाते हुए वैकुण्ठको भी लज्जित करते हैं। माता-पिता और गुरुकी आज्ञा पालन करते हैं; तप, यज्ञ, दान करते भगवान्को भजते हैं।

प्रजा अनंद राज प्रभुकेरे। मानहु सक्र कुबेर घनेरे॥

राजत सब रनिवास अनंदा। सुखी चकोर लखत जिमि चंदा॥

भगवान्के राज्यमें प्रजा ऐसा आनन्द करती है, मानो अनेक इन्द्र और कुबेर हैं। सब रनिवास आनन्द सहित ऐसा शोभित है; जैसे चन्द्रमाको देखकर चकोर सुखी होते हैं।

दो०—रघुबरराज बिराज अति, सकल अवनि अघ भाग।

बिचरहिं मुनि कानन बिपुल, बसहिं सहित अनुराग॥

श्रीरामचन्द्रजीका राज्य ऐसा सुन्दर था कि पृथ्वीपरसे पाप भाग गया। बहुतसे मुनीश्वर वनमें विचरने और आनन्दसे रहने लगे।

मही सुहावनि कानन चारू। खगमृग इक संग करहिं बिहारू॥

बैर न सुनिय रामके राजा। मिलि बिचरहिं बन सकल समाजा॥

सुहावनी पृथ्वी और सुन्दर वन हैं, जिनमें पक्षी और हरिण एक साथ विहार करते हैं। श्रीरामचन्द्रजीके राज्यमें बैर नहीं सुनाई देता, सब मिलकर वनमें घूमते हैं।

नाना ग्रंथ स्मृति समुदाई। गाय सकहिं न रामप्रभुताई॥

सारद कोटि कोटि अहि ईसा। अगणित चतुरानन गौरीसा॥

अनेक ग्रंथ और बहुतसी स्मृतियां भी श्रीरामचन्द्रजीकी प्रभुताको नहीं गा सकतीं। आदर सहित अनेक करोड़ शेष नाग, असंख्य ब्रह्मा, महादेव,—

जहँलगि जग कोविद कबिराई । रामराजगुण नहिं सक गाई ॥
अखिल आदि कज्जलगिरि भूरी । पात्र समुद्र मसो भरि पूरी ॥

और संसारमें जहांतक पण्डित और कवीश्वर हैं, वे श्रीरामचन्द्रजीके राज्यके गुणोंको नहीं गा सकते। यदि कज्जल गिरि आदि (पर्वतों) की बहुतसी स्याही बनाकर समुद्ररूपी दावातमें भरी जाय।

कर जु लेखनी सुरतरु डारो । सप्तद्वीप महिपत्र विचारो ॥
सरस्वुति हरि हर विधि अरु शेषा । सहस कल्पसत लिखहिं विशेषा ॥

और उसमें कल्पवृक्षकी कलम बनाके डाले और सातों द्वीप पृथ्वीको पत्र मान लिया जाय और सरस्वती, विष्णु, महादेव, ब्रह्मा और शेषजी सौ हजार कल्पतक विशेष परिश्रमसे लिखें।

सो०—तदपि न पावहिं पार, रामराजकौतुक अमित ।
सुनु अब चरित अपार, जस खगपति आगे भयउ ॥८॥

तौभी श्रीरामचन्द्रजीके राज्यके अपार कौतुकोंका पार नहीं पा सकते। हे गरुड़! अब जैसे आगे अपार चरित हुए सो सुनो।

राजत राम सभा सह भाई । तहं आयो इक द्विज बिलखाई ।
परुष बचन मुख कहत पुकारा । हंसबंस बूड्यो संसारा ॥

रामचंद्रजी भाइयोंके साथ सभामें विराजमान थे कि वहीं एक दुःखी ब्राह्मण रोता हुआ आया। मुखसे कठोर वचन पुकार कर कहता था कि संसारमें सूर्यवंश डूब गया।

रघु दिलीप अरु सगरनरेशा । अतुलप्रभाव भये अवधेशा ।
पितु जीवत सुत त्यागेउ प्राना । अन्तर्यामी सुनु प्रभु काना ॥

रघु, दिलीप और राजा सगर - ये अयोध्याके बड़े प्रभावशाली राजा हुए। परन्तु ऐसा नहीं हुआ कि पिताके जीते पुत्रने प्राण छोड़ दिये हों। अन्तर्यामी भगवान्‌ने कानोंसे सुना और,—

नरलीला करि राम कृपाला । लगे विचार करन तेहि काला ।
कारण कवन मृतक सुत भयऊ । द्विजदुख देखि विकल प्रभु भयऊ ॥

उस समय दयालु श्रीरामचन्द्रजी मनुष्यलीला करके विचार करने लगे। क्या कारण, जो पुत्र मर गया। ब्राह्मणका दुःख देखकर भगवान व्याकुल हुए।

प्रभुचित देखि गगन भई बानी । सूद्र तपै सुनु सारंगपानी ।
विंध्याचल गह्वर बन जाहां । द्विजसुतमरण हेतु नरनाहां ॥

भगवान्‌का व्याकुल चित्त देखकर आकाशवाणी हुई कि हे धनुषधारी! सुनो, शूद्र तपस्या करता है। विन्ध्याचल पर्वतमें जहां घना जंगल है वहीं वह है। हे राजन्! यही ब्राह्मणके पुत्रके मरनेका कारण है।

छं०---इहि भांति द्विजसुत मृतक सुनि रथ साजि प्रभु आतुर चले।
दुइ परम सैल विलोकि पावन मुदित चित सन्मुख भले॥॥
पुनि क्रोधसंयुत विसिष छांड़ेउ सूद्रको सिर कट गिर्‌यो।
वर भक्ति पावन जान तेहि दै आप तीरथ व्रत कर्‌यो॥

इस भांति ब्राह्मणके लड़केका मरना सुनकर भगवान् रथ सजाकर घबड़ाये चले और अपने सम्मुख दो बड़े पवित्र पर्वत देखकर मनमें बड़े प्रसन्न हुए। फिर जब भगवान्‌ने क्रोधकर बाण छोड़ा तब शूद्रका सिर कटकर गिर पड़ा और श्रीरामचन्द्रजीने उसे पवित्र ज्ञान भक्तिका वरदान दे आप तीर्थव्रत किया।

दो०---द्विजवरबालक तम्रक सो, उठि बैठ्यो हर्षाय।
आये पुर रघुपति भगत। दुखभंजन सुखदाय॥ ९॥

ब्राह्मणका वह सुन्दर बालक प्रसन्न हो उठ बैठा। तब भक्तोंके दुःखको मिटानेवाले और सुख देनेवाले श्रीरामचन्द्रजी नगरमें आये।

उठि रघुवर किय सन्ध्यावन्दन। पूजे संभु भक्त उर चन्दन।
भोजन शयन जगतपति कीन्हा। आयसु पुनि सबही कहं दीन्हा॥

भक्तोंके हृदयके चन्दन श्रीरामचन्द्रजीने उठकर सन्ध्या और महादेवजीका पूजन किया। फिर जगत्पतिने भोजन करके शयन किया और सबको आज्ञा दी।

रह्यो दिवस जब घटिका चारी। सभा जुरी तब आय खरारी।
सुनि पुराण प्रभु अनुज समेता। सन्ध्या भई दान शुभ देता॥

जब चार घड़ी दिन शेष रहा, तब खरके दुश्मन श्रीरामचन्द्रजीकी सभा आकर इकट्ठी हुई। भगवान्‌ने छोटे भाइयों समेत पुराणकी कथा सुनी, फिर सांझ हो गयी तब सुन्दर दान देना आरम्भ किया।

भवन चले प्रभु आयसु पाई। सबहीं सन्ध्या कीन्ह सुहाई।
दूत अवध निसिवासर धावहिं। आय सांझ सब खबर सुनावहिं॥
पृथक पृथक सुनि चर वर बानी। बोलन एक सो सुनहु भवानी॥

भगवान्‌की आज्ञा पाकर सब घरको चले और सबने सुन्दर सन्ध्या की। अयोध्यापुरीमें रात-दिन दूत घूमते और सांझको आकर सब खबर सुनाया करते थे। एक दिन श्रेष्ठ दूतोंकी अलग-अलग बात सुनी, पर हे पार्वती, सुनो, एक दूत कुछ नहीं बोला।

छं०—कछु कह्यो नहिं तेहि पूछि सादर वचन वेग न आवही ।
इक रजक पतिनहिं कहत डाटत व्यङ्ग बचन सुनावही ॥
सुनि वचन कृपानिधान चरके मध्य उर राखत भये ।
निसि स्वप्न देखत जगत पति उठि जागि दारुण दुख छये ॥

जब दूतने कुछ भी नहीं कहा, तब भगवान्‌ने उससे आदरपूर्वक पूछा, पर उससे जल्द नहीं बोला गया। उसने कहा कि एक धोबी अपनी स्त्रीको डांटकर व्यङ्ग बातें कह रहा था। दयासागर भगवान्‌ने दूतके वचन सुनकर हृदयमें रख लिया और रातमें स्वप्नमें भी वही देखकर सवेरे जगे, तो कठिन दुःखमें भर गये।

दो०—बीती अवधि प्रमाणयुग, कीन्ह विचार कृपाल ।
इक सहस्र पितुराजको, भोगहुं मैं इहि काल ॥१०॥

जब एक युगका समय बीत गया तब दयालु भगवान्‌ने विचार किया कि पिताके राज्यको मैं अभी एक हजार वर्ष तक और भोगूं।

त्यागहुं जनक सुता वनमांहीं । राखहुं स्रुतिपथ धर्म न जाहीं ।
करि मन तुरत सीय पहं आये । सादर बोले बचन सुहाये ॥

जनकनन्दिनीको वनमें त्याग दूं और वैदिकधर्मकी मर्यादा रखूं, जिससे धर्म न जाय। ऐसा मनमें निश्चय कर शीघ्र ही सीताजीके पास आये और आदर समेत सुन्दर वचन बोले।

निज छाया धरि यहां विनीता । रहहु जाय निज धाम पुनीता ।
प्रभुपद वंदि गई नभ सोई । जीव चराचर लखी न कोई ॥

अपनी छायाको यहां रखकर नीतिसहित अपने पवित्र स्थानमें रहो। भगवान्‌के चरणोंको दण्डवत् करके वह आकाशको गयी और चराचर जीवोंमेंसे किसीने न देखा।

तिहिसन प्रभु अस कहा बुझाई । मन भावत मांगहु वर गाई ॥
नाथ साथ मुनिधाम विहाई । आयउ तुम गृह मन सकुचाई ॥

उनसे भगवान्‌ने समझाकर यों कहा कि जो मनमें आवे वही वरदान मांगो। सीताजीने कहा कि हे स्वामिन्! मुनीश्वरोंके स्थानको छोड़ कर आपके साथ घर आई हूं, इससे मनमें बड़ा संकोच हो गया।

मुनितियभूषण बसन सुहाये । पहिराये प्रभु जो मन भाये ॥
हंसि कह कृपानिकेत सकारे । पूजैं मन अभिलाष तुम्हारे ॥

तब तो भगवान्ने मुनीश्वरोंकी स्त्रियोंके सुहावने वस्त्र और आभूषण, जो मनको अच्छे लगे वह पहनाये और कृपानिधानने हंसकर कहा कि सवेरे तुम्हारे मनकी इच्छा पूरी होगी।

दो०--होत प्रात जब जगतपति, जागे रमानिवास ॥
याचकजन गावत मुदित, लखि मुखकंजप्रकास ॥११॥

संसारके स्वामी लक्ष्मीनिवास श्रीरामचन्द्रजी सवेरा होते ही जब जगे तब उनके कमलके समान प्रकाशमान मुखको देखकर मांगनेवाले प्रसन्नतासे उनके गुण गाने लगे।

भरत लषण रिपुदमनसमेता। आये जहं प्रभु कृपानिकेता ॥
कीन्ह प्रणाम माथ महिलाई। बोले नहि कछु श्रीरघुराई ॥

भरतजी लक्ष्मण और शत्रुघ्नके साथ जहां भगवान् थे वहां आये और पृथ्वीपर माथा टेककर दंडवत की, परन्तु श्रीरामचन्द्रजी कुछ नहीं बोले।

बदन विलोकि ससंकित अङ्गा। श्रीहत देख वपुषकर रङ्गा ॥
थर थर कांपहिं तीनों भाई। जानि न जाइ चरित रघुराई ॥

उनके शरीरके रंगको छविहीन और उनके मुखकी ओर देखकर शंकित शरीर हुए। तीनों भाई थर-थर कांपने लगे। श्रीरामचन्द्रजीका चरित जाना नहीं जाता।

ऐंचि स्वास अरु कुसमय जानी। बोले गूढ़ मनोहर बानी ॥
सुनि लघुभाइ कहेउ रघुनाथा। ले बन जाहु जानकिहिं साथा ॥

भगवान् सांस भरकर और कुसमय समझकर गूढ़ और मीठी वाणी बोले। श्रीरामचन्द्रजीने कहा कि हे छोटे भाई! सुनो, जानकीजीको साथ लेकर बनको जाओ।

सूखि सहमि सुनि वचन कराला। जरेउ गात उपजी उर ज्वाला ॥
हँसत कि सांच कहत रघुराई। असमंजस मन दुख अधिकाई ॥

कठोर वचन सुनते ही मुरझाकर सूख गए, शरीर जलने लगा और हृदयमें ज्वाला उत्पन्न हुई और रामचन्द्रजी हंसते हैं या सच्ची कहते हैं इस दुविधासे मनमें बड़ा दुःख हुआ।

दो०--भरतादिक भ्राता विकल। मुख आवत नहि बैन ॥
जोरि युगलकर सत्रुहन। भये नीर भरि नैन ॥१२॥

भरत आदि भाई व्याकुल हो गये, उनके मुखसे बचन नहीं आते। तब शत्रुघ्नने दानों हाथ जोड़े और उनके नेत्रोंमें आँसू भर आये।

सुनि प्रभुबचन हृदयबिलखाना। जगतजननि सिय सब जगजाना ॥
जगतपिता प्रभु सब उरवासी। जड़ चेतन घन आनन्दरासी ॥

भगवान्‌के वचन सुनकर हृदयमें दुःखी हुए (और कहने लगे कि) सीताजी तो संसारकी माता हैं, इस बातको सब जगत् जानता है और संसारके पिता भगवान् सबके हृदयमें वास करनेवाले जड़ और चैतन्यको आनन्दघनके समूह हैं।

कारण कवन जानकी त्यागी। मन क्रम बचन चरण अनुरागी ॥
सुनि प्रभु भ्रातनकर मुखबानी। परम प्रीतिमय करुणासानी ॥

सो क्या कारण जो मन-क्रम-वचनसे चरणोंमें प्रीति करनेवाली सीताजीको त्याग दिया? प्रभुने भाइयोंकी परम प्रीति भरी और करुणासे सनी हुई वाणी सुनी।

पंकज नयन नीर भरि आये। कहि प्रियबचन अनुज समुझाये ॥
आयसु मम टारहि जो ताता। रहै न प्राण तात मम गाता ॥

तो कमलसमान नेत्रोंमें जल भर आया और प्रिय वचन कहकर छोटे भाइयोंको समझाया। हे प्यारे! जो मेरी आज्ञाको टालोगे तो मेरे शरीरमें प्राण न रहेगा।

विधिइच्छा भावी बलवाना। तुमकहं तात सर्व कल्याना ॥
मम यह बचन पालु लघु भाई। प्रात जानकिहि जाहु लिवाई ॥

हे प्यारे! विधाताकी इच्छा और होनहार बलवान् है और तुमको तो सब कल्याण ही है। हे छोटे भाई! मेरे इस वचनका पालन करो और सबेरे सीताजीको लिवा जाओ।

दो०—भरत कहेउ युग जोरि कर, सुनि प्रभुबचन कठोर ॥
सुनु बिनती सर्वज्ञ प्रभु, नाथ हमहिं मति थोर ॥१३॥

भरतने भगवान्‌के कठोर बचन सुनकर दोनों हाथ जोड़कर कहा, हे प्रभो! आप तो सर्वज्ञ हैं, मेरी प्रार्थना सुनिये, मेरी बुद्धि तो थोड़ी है।

हंसबंस जगमें विख्याता। दसरथ पिता कौसला माता।
त्रिभुवनपति प्रभु सब जग जाना। गावहिं यस सब बेद पुराना ॥

सूर्यवंश संसारमें प्रकट है और पिता दशरथ तथा माता कौशल्या हैं। हे तीनों लोकोंके स्वामी आपको सब संसार जानता है और सब वेद-पुराण आपके यश गाते हैं।

सत्य सक्ति तव प्रकट सुहाई । बरणि न सकहिं बेद अहिराई ॥
सोभाखानि जगतकी माता । रहित अमंगल मंगलदाता ॥

तुम्हारी सत्यशक्ति प्रत्यक्षमें शोभायमान है, जिसका वेद और शेषजी भी नहीं वर्णन कर सकते । शोभाकी खानि, जगतकी माता, अमंगलरहित, आनन्दकी देनेवाली है ।

छाया जेहि तिय पतिव्रत करहीं । तुमहि बिहाय क्षणहुंकिमिभरहीं ॥
बिनु जल मीन कि जियै कृपाला । कृषी कि रह बिनु बारिदमाला ॥

जिनकी छायासे स्त्रियां पतिव्रत धारण करती हैं वे आपको छोड़कर क्षणभर भी कैसे रह सकती हैं ? हे दयानिधान ! बिना जलके क्या मछली जी सकती है ? और बिना बादलोंकी पंक्तिके क्या खेती रह सकती है ?

जीवहिं क्षण तुम बिनु किमि सीता । ज्ञानवन्ति अति चतुर बिनीता ॥
सुनि करुणामय बचन सप्रीती । कही भरत तुम सुन्दर नीती ॥

अत्यन्त चतुर, ज्ञानवान् और नीतिज्ञ सीता जो तुम्हारे बिना क्षणभर भी कैसे जी सकती हैं ? करुणा और प्रीतिसमेत वचन सुनकर भगवान्ने कहा, हे भरत ! तुमने नीति तो सुन्दर कही ।

दो०-तदपि नृपहिं चहिये सदा, राजनीति धन धर्म ।
वसुधा पालहि सोच तजि, बचन प्रीति सुचिकर्म ॥१४॥

परन्तु राजाको सदा ही राजनीति, धन और धर्म चाहिए और शोचको छोड़कर प्रीतिके वचन और धर्म-कर्मसे पृथ्वीका पालन करना चाहिए ।

दूतन कहा सो अपयस कहऊ । कुलकलङ्क यह दारुण भयऊ ॥
तरणिबंस नृप भये अनेका । एक एकते निपुण बिबेका ॥

दूतोंने जो कहा, उस अपयशको विचारा तो यह शोच हुआ कि यह तो कुलको कठिन कलंक लगा । सूर्यवंशमें अनेक राजा एकसे एक ज्ञानमें चतुर हुए ।

स्वायंभुव मनु रघु नृप जानौं । सगर भगीरथ बिरद बखानौं ।
दशरथ दीख सदा तुम नीके । बचन न टारेउ लालच जीके ॥

स्वायंभुव मनु, रघु, राजा सगर और भगीरथके यशका वर्णन करते हैं । दशरथजीको तो तुमने सदा ही भली भांति देखा था, जिन्होंने प्राणोंके लोभसे भी वचन न छोड़ा ।

तेहि कुल रंचक लोग कलंकू । रहै जीव तौ अधम असंकू ॥
सुनु सर्वज्ञ सकल अघहारी । बिनु कलङ्क अह जनक कुमारी ॥

उसी कुलमें थोड़ा भी कलंक सुनते जो प्राण रहें तो महानीच और निडर हैं । भरतजी बोले, हे सर्वज्ञ, आप तो सब पापोंके हरनेवाले हैं, सुनिये यह सीताजी कलंकरहित हैं ।

विधि हरिहर दिवि देख सुहाई । पावक अविटि अनट सब भाई ॥
जो सुर नर मुनि स्वप्नेहु माहीं । यह चरित्र जग लखि हरखाहीं ॥

हे भाई ! ब्रह्मा, विष्णु, महादेव और सब देवताओंने सुन्दर तरहसे देखा और अग्निमें तपाके आपने सब प्रकार परीक्षा कर ली है । जो देवता, मनुष्य, मुनीश्वर स्वप्नमें भी इस चरित्रको देखकर संसारमें प्रसन्न हों ।

दो०--ते सठ रौरव नरक महं । कोटि कल्प करि वास ॥
रहहिं कल्पसत रोगबस । भोगहिं नरक निवास ॥ १५ ॥

तो वे मूर्ख करोड़ कल्पों तक रौरव नरकमें वास करके सौ कल्पोंतक रोगके वश रहकर नरक भोगेंगे ।

रिसरुख देखि नयन करि तीछे । आयउ भरत लखणकर पीछे ॥
सुनु सौमित्रि छांड़ि हठ सोचू । जग भल कहै कहौ किन पोचू ॥

तीक्ष्ण नेत्र किये हुए रिसका रुख देखकर भरतजी तो लक्ष्मणजीके पीछे हो गये । (तब प्रभुने कहा) हे लक्ष्मण ! हठ और शोकको छोड़कर सुनो संसार चाहे भला कहे या बुरा ।

तजि आज्ञा प्रत्युत्तर करिहौं । मोहिबिनु सोच जन्मभरि मरिहौं ॥
जनकसुता रथ तुरत चढ़ाई । गंगसमीप फिरहु पहुंचाई ॥

जो आज्ञाको छोड़कर जवाबदेही करोगे तो मेरे बिना जन्मभर सोचमें मरोगे । इसलिए सीताजीको शीघ्र ही रथपर चढ़ाकर और गंगाजीके पास पहुंचाकर लौट आओ ।

अति गह्वर बन जहां न कोई । छांड़हु तात यतन कर सोई ॥
फेरहु तुम मति बचन उदासा । मरन ठानकर चलेउ निराशा ॥

हे प्यारे ! बड़े घने वनमें जहां कोई नहीं हो वहां उपाय करके छोड़ आओ । (जब भगवानने यह कहा कि) तुम उदास होकर वचनोंको मत फेरो, यह सुनकर लक्ष्मणजी अपना मरण निश्चय करके निरास होकर चले ।

सुभग बिमान सिय बैठारी । भूषण पट बहु धरे सम्भारी ॥
अति अनन्दमन चली जानकी । अतिसयप्रिय करुणानिधानकी ॥

सुन्दर विमानमें सीताजीको बैठाकर आभूषण और कपड़े सम्भालकर रक्खे। करुणाके सागर भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी परम प्यारी सीताजी मनमें बहुत प्रसन्न होती हुई चलीं।

दो०--विवरण लखण निहारिकर। सोच विकल भई बाल॥
हृदय विचार न कहि सकति। मणि बिनु व्याकुल व्याल॥

सीताजी लक्ष्मणजीको मलिन देखकर सोचसे ऐसी घबरा गयीं, जैसे मणि बिना सर्प होता है। और हृदयमें विचारती हैं, परन्तु कह नहीं सकतीं।

उतरि देवसरि यान सुहावा। देखत घन बन मन भय पावा॥
कारण अपर जानि भयभीता। बोली बचन मनोहर सीता॥

सीताजी गंगाजीसे उतरकर सुन्दर विमानको घने बनमें देखकर मनमें बहुत डरीं और कोई अन्य कारण जानकर डरकर सुन्दर वचन बोलीं।

दीखत नहीं मुनिनकर धामा। जात कहां प्रिय अनुज सकामा॥
खग मृग केहरि विषधर व्याला। करि बराह वृक बाघ कराला॥

हे देवर! यहां मुनीश्वरोंके स्थान भी नहीं दिखाई देते तुम कहां किस कामके लिये जाते हो? पक्षी, हरिण, सिंह और विषैले सर्प, हाथी, शूकर, मेड़िये और कराल बाघ यहां हैं।

कोउ मुनि मिलत न आवत जाता। निकसत प्राण तात मम गाता॥
सीय विकल लखि मनहिं अहीसा। कहन लगे कह कीन्ह विधीसा॥

कोई मुनीश्वर आता जाता नहीं मिलता, हे प्यारे! मेरे शरीरसे तो प्राण निकले जाते हैं। सीताजीको मनमें व्याकुल देखकर लक्ष्मणजी कहने लगे कि ब्रह्मा और महादेवजीने यह क्या किया!

मूर्छित रथते भे विकराला। गिरत भूमि तब आप संभाला॥
सिय बिलोकि मन धीरज आना। तृषा बिना अब जैयत प्राना॥

मूर्च्छित होकर बेकरार हो गये और रथसे भूमिपर गिरने लगे तब अपनेको सम्भाला। सीताजीको देखकर मनमें धीरज किया और बोले कि प्यास बिना अब प्राण निकला चाहते हैं।

दो०--धरिणीसुता व्याकुल निरखि, प्रान कण्ठगत जान।
तजन चहत तनु सेष तब। धिकधिक जीवन प्रान॥१७॥

सीताजी कंठमें प्राण आये हुए जानकर व्याकुल हुईं कि मेरे जीवनप्राण लक्ष्मण शरीरको छोड़ना चाहते हैं, मुझे धिक्कार है।

देखि लषण सिय मूर्छा आई। गगनगिरा तब भई सुहाई ॥
सुनु सौमित्र जाहु सिय त्यागी। जनकपुत्रिका जियहि सुभागी ॥

और लक्ष्मणको देखकर सीताजीको तो मूर्च्छा आई और उस समय सुन्दर आकाशवाणी हुई कि हे लक्ष्मण! सुनो, सीताजीको छोड़ जाओ, सौभाग्यवती सीता जीती रहेंगी।

ब्रह्मगिरा सुनि धीरज कीन्हा। हाथ जोरि परिदक्षिण दीन्हा ॥
ले रथ चरण बन्दि सियकेरे। चले अवधपुर त्रास घनेरे ॥

ब्रह्मवाणी सुनकर धीरज किया और हाथ जोड़कर परिक्रमा की। और सीताजीके चरणोंको दण्डवत् कर रथ लेकर बड़े दुःखसे अयोध्यापुरीको चले।

जागी सिया सकल दिसि देखा। नहिं रथ अस्व नहीं कहिं सेषा ॥
सहि दुख प्रथम रहे हैं प्राना। पुनि सोइ चहत न करन पयाना ॥

सीताजीने जगकर सब दिशाओंमें देखा तो न रथ है, न घोड़े हैं, न कहीं लक्ष्मणजी हैं, (फिर बोलीं) ये प्राण पहिलेसे ही दुःख सह रहे हैं, इसलिये अब निकला नहीं चाहते।

करुणा करत बिपिन अति भारी। वाल्मीकि आये बनचारी ॥
पुत्री वाल्मीकि कह ज्ञानी। वन आवन निजचरित बखानी ॥

वनमें बहुतसी दीनता कर रही थीं कि वाल्मीकि ऋषि आये। ज्ञानी वाल्मीकिने कहा, हे पुत्रि! अपने वनमें आनेका चरित कहो।

दो०—सुनि पुत्री मैं जनक की, रामप्रिया जग जान।
त्यागनहेतु न जान कछु, विधि गति अतिबलवान ॥ १८ ॥

सीता बोलीं, हे मुनिराज! मैं जनककी बेटी और श्रीरामचन्द्रजीकी स्त्री हूं, जिनको संसार जानता है, त्यागनेका कारण मैं कुछ नहीं जानती, ब्रह्माकी गति बहुत बलवान् है।

देवर लषन गये पहुंचाई। तब सब हेतु लख्यो मुनिराई ॥
सुनु सीता मिथिलापति मोरा। परम सिष्य मम अरु पितु तोरा ॥

देवर लक्ष्मण मुझे पहुंचा गये हैं। तब मुनीश्वरने (योगबलसे) सब कारण जाना (और कहा) हे सीता! सुन, जनक तेरा पिता और मेरा परम शिष्य है।

चिन्ता अब जनि करसि कुमारी। मिलिहहिं तोहिं सेष हितकारी ॥
सादर पर्णकुटी सिय आनी। करि मज्जन पुनि सब गति जानी ॥

हे कुमारी ! अब चिन्ता मत कर, तुझे हितकारी लक्ष्मण मिल जायंगे । आदरसहित सीताजीको पर्ण-कुटीमें ले आये और मज्जन करके सब गति जान लो ।

विविध भांति मुनि धीरज दीन्हा । सिय तब सुरसरिमज्जन कीन्हा ॥
सुमिरि राममूरति उर राखी । दीने फल मुनि आयसु भाखी ॥

मुनीश्वरने अनेक प्रकार धीरज दिया, तब सीताने गङ्गाजीमें मज्जन किया । श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण कर मूर्तिको हृदयमें धारण किया और मुनिने आशीर्वाद पढ़कर फल दिये ।

मुनिवर कथा अनेक प्रसंगा । कहैं सुनैं सियसंग विहंगा ॥
ज्ञान अनेक प्रकार दृढ़ावा । लक्ष्मण अवध सुनो जब आवा ॥

श्रेष्ठ मुनीश्वर अनेक प्रसंग और कथा कहा करते और सीताजी पक्षियोंके साथ सुना करतीं । और अनेक भांतिसे ज्ञान समझाया । अब लक्ष्मण अयोध्या आये सो सुनो ।

छं०—आये जो लक्ष्मण त्यागि सीतहिं विकल निज आश्रम गये ॥
बहुभांति रोवत मातुसन कहि सीय दारुण दुख दये ॥
सुनि सहमि मूर्च्छित मातु वाणी विकल फणि जिमि मणि दये ॥
तिमि मातु विलपति जानि व्याकुल कौसलहि दुखवश भये ॥

लक्ष्मणजी सीताजीको त्यागकर आये तो व्याकुल अपने भवनको गये और माताके सामने अनेक प्रकार रोने लगे कि सीताको बड़े बड़े कठिन दुःख दिये । माता इस वाणीको सुनकर मुरझाकर ऐसी मूर्च्छित हो गईं जैसे मणिके जानेसे सर्प व्याकुल हो और माताओंको इस प्रकार व्याकुल और विलाप करती हुई जान श्रीरामचन्द्र-जी भी दुःखके वश हुए ।

रोदति वदति बहुभांति को कह विपति यह दारुण अये ॥
सुनि सोर रावरसहित लक्ष्मण राम निज मन्दिर गये ॥
निज ज्ञान दे समझाय तेहि तब खुले पट अन्तर नये ॥
हम जानि तुम सुत मान प्रभु जग भूल भ्रम फन्दन भये ॥

माता अनेक प्रकार रोती हुई कहती हैं कि अरे ! इस कठिन दुःखको कौन सह सकता है ? इस (कोला-हल) को सुनकर श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मणसहित आप भी अपने महलमें गये और जब उन माताओंको अपना ज्ञान देकर समझाया तब उनके हृदयके किवाड़ खुल गये । कहने लगीं कि हे प्रभो ! हम तुमको अपना पुत्र समझके भूलकर भ्रमके फन्देमें पड़ी थीं ।

अब कृपा करि जगदीस रघुवर देहु भक्ति सुहावनी ॥
जेहि खोज मुनि योगीस तापस परम अविचल पावनी ॥
बर चह्यो सोई सोई दियो मातुहिं कारुणिक रघुपति तबै ॥
मन सोधकर निज योगपावक तजा तनु सादर सबै ॥

हे संसारके स्वामी रामजी ! अब दया करके सुन्दर अपनी वह पवित्र निश्चल भक्ति दीजिये कि जिसे मुनीश्वर, योगी और तपस्वी ढूंढ़ते हैं। तब करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजीने जो-जो वरदान चाहा वही-वही माताओंको दिया और उन सबने मन शुद्ध करके अपने-अपने योगकी अग्निमें आदरसमेत शरीर त्याग दिया।

दो०—योगअग्नि तनु भस्म करि, सकल गईं पतिधाम ॥
भरत शत्रु सूदन लषण, सोक भवन भे राम ॥१९॥

योगकी अग्निमें शरीरको भस्मकर सब पतिलोकको गईं। तब भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण और श्रीरामचन्द्रजी शोक करने लगे।

विधिवत् किये कर्म श्रुति गाये। प्रभुते गुरु सादर करवाये ॥
दीन दान पुनि कोटि प्रकारा। को अस कवि जग बरणै पारा ॥

वेदमें कहे हुए कर्म विधिपूर्वक किये और गुरुने भगवान्से आदरसहित करवाये। फिर करोड़ों प्रकारके दान दिये। संसारमें ऐसा कौन कवीश्वर है जो वर्णन कर पार पा सके।

धेनु बसन हाटक मणि हीरा। हय गज गो मुक्ता बर चीरा ॥
पुनि परलोक हेतु धन धामा। दिये किये द्विज पूरणकामा ॥

गौ, वस्त्र, सुवर्ण, मणि, हीरा, घोड़ा, हाथी, मोती, और श्रेष्ठ वस्त्र, फिर परलोकके लिये धन और स्थान देकर ब्राह्मणोंको पूर्णकाम किया।

रही न चाह याचकनकेरी। रङ्क धनदपदवी जनु हेरी ॥
वेद पढ़हिं द्विज देहिं असीसा। चिर जीवहु कोसलपुरईसा ॥

मांगनेवालोंको चाहना न रही; मानो कंगालोंने कुबेरकी पदवी पाई। ब्राह्मण वेद पढ़ते हुए आशीर्वाद देते हैं कि अयोध्यापुरीके राजा चिरंजीवि रहें।

राम दान दे सब विधि तोषे। भये निवृत्त काज करि चोखे ॥
गृह द्विज याचक सकल सिधाये। अमित प्रकार राम सुख पाये ॥

श्रीरामचन्द्रजीने दान देकर सब प्रकारसे सन्तुष्ट किया और अच्छे प्रकार काम करके निवृत्त हुए। सब ब्राह्मण और मांगनेवाले अपने-अपने घरको गये और श्रीरामचन्द्रजी बहुत भांति सुखी हुए।

दो०—करहुं अजय मख एक पुनि, अश्वमेघ जग जान।
कलुप सकल संतापहर, जगत परम सुखदान ॥२०॥

फिर (श्रीरामचन्द्रजीने विचारा कि) एक अजय और जगत्प्रसिद्ध अश्वमेध यज्ञ करूं। वह सम्पूर्ण पाप और दुःखोंका नाश करनेवाला और संसारको सुख देनेवाला है।

एक वार गुरुगृह अवधेसा। गये अनुज सङ्ग सचिव खगेसा॥
कीन्ह दण्डवत पद सिर नाई। सादर हर्ष मिले मुनिराई॥

हे गरुड़, एक वार श्रीरामचन्द्रजी, छोटे भाई और मन्त्रीसमेत गुरुके घर गये और उनके चरणोंको माथ नवाकर दंडवत् की और मुनीश्वर प्रसन्न होकर आदरसहित उनसे मिले।

देखि कुसल पूछो मृदुगाता। कुसल देखि तव पद जल जाता॥
गुरुपद बन्दि द्विजन सिर नाई। बैठे अमित असीसहिं पाई॥

और कोमल शरीरको देखकर कुशल पुछी। (भगवानने कहा) हे नाथ आपके कमलसमान चरणोंके दर्शनसे कुशल है। गुरुके चरणोंको दंडवत कर ब्राह्मणोंको माथा नवा बहुतसी आशीष पाकर बैठे।

कहत पुराण नवल इतिहासा। सुनत कृपानिधि परम हुलासा॥
भाइन अमित राम सुख दीन्हा। मुनि तन लखेउ प्रेमकर चीन्हा॥

गुरु पुराण और नये नये इतिहास कहते हैं और भगवान् बड़े आनन्दसे सुनते हैं। भगवानने भाइयोंको अपार सुख और सुन्दर शिक्षा दी और प्रेम देखकर मुनीश्वरके शरीरकी ओर देखा।

दोउ कर जोरि सच्चिदानन्दा। बोले वचन भानुकुलचंदा॥
नाथ चरण तव सकल प्रसादा। भइ जगबिदित मोर मर्यादा॥

और सूर्यवंशमें चन्द्रके समान ऐसे सच्चिदानन्द भगवान् दोनों हाथ जोड़कर बचन बोले, हे स्वामिन्, आपके चरणोंकी पूर्ण कृपासे मेरी मर्यादा संसारमें विदित है।

दो०--समय समुझि करुणायतन, सादर बचन बहोरि।
प्रभु अन्तर्यामी करहु, सफल कामना मोरि॥ २१॥

फिर करुणानिधान श्रीरामचन्द्रजी समय समझकर आदर सहित बचन बोले कि हे नाथ! आप अन्तर्यामी हैं। मेरी मनोकामना पूरी करें।

तव प्रसाद जग यश अनेका । कोने अधिक एकते एका ॥
नाथ सकल पुर जन मन कहहीं । देखन अस्वमेघ अब चहहीं ॥

आपकी कृपासे संसारमें अनेक यज्ञ एकसे एक अधिक किये, तोभी हे स्वामिन् ! नगरके सब लोग मनमें कहते हैं और सब अश्वमेध यज्ञ देखा चाहते हैं ।

जस कछु आयसु दीजिय नाथा । सो मैं करब नाय पद माथा ॥
तनु पुलके सुनि बचन सप्रीती । कस न कहौ तुम सुन्दर नीती ॥

हे स्वामिन् ! जैसी कुछ आप आज्ञा दीजियेगा उसे मैं आपके चरणोंको माथा नवाकर करूंगा । प्रेमसहित वचन सुनकर मुनि पुलकायमान हुए और बोले, हे रामचन्द्रजी ! तुम सुन्दर नीति कैसे न कहो !

पूजिहि मन अभिलाख तुम्हारी । उठहु भरत अब करहु तयारी ॥
सुनि मुनिबचन भरत रिपुदमनू । हर्षि सचिव लछिमन गृह गमनू ॥
विविध प्रकार चरण करि सेवा । चले भरत संग सब महिदेवा ॥

तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी । हे भरत ! उठकर अब चलकर तयारी करो । मुनीश्वरके बचन सुनकर भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण प्रसन्नतासे घरके लिये विदा हुए और अनेक प्रकारसे चरणोंकी सेवाकर भरतजीके साथ सब ब्राह्मण चले ।

दो०-सेवक पुरजन सचिव सब, सादर तुरत बुलाय ।
हाट बाट पुर द्वार गृह, रचहु बितान बनाय ॥२२॥

सेवक, नगरके सब लोगों और मन्त्री आदिको आदरसमेत शीघ्र बुलाकर कहा कि हाट, बाट, नगर-द्वार और घरोंमें मंडप बनाकर सजाओ ।

चले सकल किंकर सुनि बानी । सुनत बचन हर्षी सब रानी ॥
रचे बितान अनेकन भारी । देखि अवध बिधि बिलपत भारी ॥

इस वाणीको सुनकर सब सेवक चले और यह वचन सुनतेही सब रानियां भी प्रसन्न हुईं । अनेक सुन्दर मंडप बनाये और अयोध्याको देखकर ब्रह्मा भी बहुत खेद करने लगे (कि मेरी सृष्टिमें कोई भी ऐसी जगह नहीं) ।

लगे संवारन गज रथ बाजी । सुनि सुर मगन दुन्दुभी बाजी ॥
तुरत सचिव चर बिपुल बुलाये । कह जय जीव सीस तिन नाये ॥

हाथी, घोड़े और रथोंको सजाने लगे । सुनकर देवता आनन्दित हो गये और नगाड़े बजाने लगे । मंत्रीने शीघ्र ही बहुतसे दूत बुलाये और उन्होंने 'महाराजकी जय' कहकर सिर नवाया ।

जाहु मुनिन्हके आस्रम माहीं। सादर न्योत देहु सबकाहीं॥
वहां राम पूछउ गुरुदेवा। आज्ञा देउ करौं सोइ सेवा॥

मंत्रीने कहा मुनियोंके आश्रममें जाओ और आदर सहित सबको न्योता दे आओ। वहां श्रीरामचन्द्रजीने गुरुदेवसे पूछा कि जो आज्ञा दीजिए वह सेवा करूं।

प्रभुमनकी गति मुनिवर जानी। बोले अतिसनेह बर बानी॥
पठवहु दूत जनकपुर आजू। आवहिं जनक समेत समाजू॥

श्रेष्ठ मुनि भगवानके मनकी गति जानकर बड़े प्रेमसे उत्तम वचन बोले कि आज जनकपुरको दूत भेजो, कि राजा जनक समाजसहित आवें।

दो०—सुनहु राम रघुबंसमणि, न्योति सकल पुर जाति।
बरुण कुबेरहिं इन्द्र यम, पुनि मुनिवर सब ग्याति ॥२३॥

हे रघुवंशमणि श्रीरामचन्द्रजी, सुनिए, संपूर्ण नगर और जातिके लोगों तथा वरुण, कुबेर, इन्द्र, यम तथा श्रेष्ठ मुनीश्वरोंको न्योता दीजिए।

गुरु समेत प्रभु अवधहिं आये। देखि बनाव अमित सुख पाये॥
जनकनगर चर तुरत पठाये। देस देसके नृपति बोलाये॥

भगवान् गुरुसमेत अयोध्यामें आये और रचनाको देखकर असीम सुख पाया। जनकपुरको शीघ्र ही दूत भेजे और देश-देशके राजाओंको बुलाया।

जामवन्त सुग्रीव बिभीषण। अरु नल नील द्विविद कुलभूषण॥
आये सब जहं राम कृपाला। बरुण कुबेर इन्द्र यम काला॥

जाम्बवन्त, सुग्रीव, विभीषण, नल, नील और द्विविद, जो अपने-अपने कुलके भूषण थे उन्हें बुलाया और वरुण, कुबेर, इन्द्र, यमराज और काल ये सब दयानिधान रामचन्द्रजी जहां थे वहां आये।

चढ़ि बिमान सुरनारि सिहाहीं। करहिं गान कलकंठ लजाहीं॥
आये मुनिवरयूथ घनेरे। देहिं कृपानिधि सुन्दर डेरे॥

विमानोंपर चढ़कर देवताओंकी स्त्रियां प्रसन्न होती हैं और इस प्रकार गाती हैं कि कोयल भी लजाती है। श्रेष्ठ मुनियोंके बहुतसे समूह आये और भगवान्‌ने उन्हें सुन्दर डेरे दिये।

ससि हर हरि बिधि रबि सनकादी। आये सुर जे परम अनादी॥
बिस्वामित्रसंग मुनिझारी। सहससात ऋषि इच्छाचारी॥

चन्द्रमा, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य और सनकादिके जो परम अनादि देवता थे, वे सब आये। विश्वामित्रके साथमें सब सात हजार मुनीश्वर आये, जो स्वेच्छाचारी थे।

दो०—आये ऋषि भृगु अंगिरा, नारद व्यास अगस्त्य।
नानायूथप मुनि सकल, देव समस्त पुलस्त्य ॥२४॥

भृगु, अंगिरा, नारद, व्यास, अगस्त्य और पुलस्त्य आदि अनेक मुनियोंके झुण्ड और सब देवता आये।

मखथल बर अति दीख सुहाये। नाना भांति देखि सुख पाये॥
मिथिलापुर जे दूत पठाये। देखि नगरवासिन मन भाये॥

यज्ञका स्थान बहुत सुन्दर दिखाई दिया; उसे देखकर अनेक भांतिसे सुख पाया। जनकपुरको जो दूत भेजे गये नगरनिवासियोंके मनमें वे अच्छे लगे।

द्वारपाल सब खबरि जनाई। अवधनगरसन पाती आई॥
सुनि बिदेह सहसा उठि धाये। तनमन पुलकि नयन जल छाये॥

द्वारपालने सब खबर जनकसे कही कि अयोध्यापुरीसे चिट्ठी आयी है। जनकजी सुनकर शीघ्र ही उठ चले। तनमनसे पुलकायमान हो गये और नेत्रोंमें जल भर आया।

भयो नृपतिमन आनन्द जेता। कहि न सकै सारद अहि तेता॥
सिथिल आपु उठि द्वारे आये। देखि दूत अतिसय सुख छाये॥
कहहु कुसल रघुपतिकर भाई। गदूगद कण्ठ न कछु कहि जाई॥

राजा जनकके मनमें जितना आनन्द हुआ सरस्वती और शेषनाग भी उतना नहीं कह सकते। शिथिलतासे उठकर आप ही द्वारपर आये और दूतोंको देखकर बड़ा सुख पाया और बोले—हे भाई! श्रीरामचन्द्रजीकी कुशल कहो। दूत गदूगदूकंठ हो गये और उनसे कुछ कहा नहीं गया।

दो०—भूपप्रेम तिहि समय जस, तस न कहहिं मतिधीर।
तुलसी भयउ उछाहवस, जय जय सब्द गम्भीर ॥२५॥

उस समय राजा जनकको जैसा स्नेह हुआ उसे विद्वान भी नहीं कह सकते। तुलसीदासजी कहते हैं कि आनन्दके वश हो गम्भीर जय-जय शब्द हुआ।

बांचत प्रीति न हृदय समानी। चरबर बोलि कही हंसि बानी॥
नगर ग्राम पुर मंगल साजहु। बाजन अमित प्रकार बजावहु॥

चिट्ठी बांचतेही हृदयमें प्रीति नहीं समाती, अपने श्रेष्ठ दूतोंको बुलाकर और हंसकर यों कहा—नगर, गांव और शहरमें मंगल-साज सजाओ और बहुत प्रकारके बाजे बजाओ।

सचिव बोलि नृप पांती दीन्ही। उठि कर जोरि बिनय कर लीन्ही॥
पढ़ी सचिव अति प्रेमानन्दा। सुमिरि राम कोसलपुर चंदा॥

मन्त्रीको बुलाकर राजाने चिट्ठी दी और उसने उठकर हाथ जोड़कर नम्रतापूर्वक ली और उस अयोध्यापुरीके चन्द्रमारूप श्रीरामचन्द्रजीका स्मरण करके बड़े आनन्दसे उसे पढ़ा।

घर घर खबरि व्यापि क्षणमाहीं। मंगल कलस साजि सब पाहीं॥
भयो अनंद न जाय बखाना। कीन्हो बिबिध भांति नृप दाना॥

क्षणभरमें घर घर खबर हो गई और सबने आनन्दके कलश सजाये। जो आनन्द हुआ उसका वर्णन नहीं किया जाता। राजाने अनेक प्रकारके दान दिये।

धरि तनु देव अमित नभवासी। आये भूपनगर सुखरासी॥
कहहिं बचन नृपके हितकारी। चलो अवध सब काज बिसारी॥

आकाशवासी बहुतसे देवता मनुष्य-शरीर धारण कर सुखके समूह जनकपुरमें आये। और राजासे हितकारी वचन कहने लगे कि सब काम छोड़कर अयोध्यापुरीको चलिये।

दो०—कहि कहि सुर सादर चले, बाहन रचे बनाय।
जोरि युगल कर मुकुटमणि, अस्तुति करहिं सुभाय॥२६॥

देवता ऐसा कह-कहकर आदरसमेत चले और (जाकर) रच-रचकर विमान बनाये और दोनों हाथ जोड़कर मुकुटमणि भगवानकी सुन्दर स्तुति करने लगे।

छं०—सुमिरत चरण श्रीराम रघुकुलचन्द सीतानायकं।
श्रीसहित अनुजसमेत सुस्थिर बसहु मम उर लायकं॥
अंभोजनयन बिसालभाल कृपालु दसरथनन्दनं।
सतकोटि मार उबार सोभा अतुलबल महिमंडनं॥

हे रामचन्द्र! रघुकुलचन्द्र! सीतानाथ! आपके चरणोंका स्मरण करते हैं। आप सीताजी और लक्ष्मणजी समेत हमारे हृदयमें स्थिर होकर वास करें। आपके कमलसे नेत्र हैं और विशाल मस्तक है, आप दयाके निधान, और दशरथनन्दन हैं, आपकी शोभा सौ करोड़ कामदेवोंके समान बड़ी है, आपका अपार बल है और आप पृथ्वीके आभूषण हैं।

दो०—पूजे बिबिध प्रकार नृप, सादर दूत हंकारि।
गुरुगृह गवनेउ मुकुटमणि, पाय पदारथ चारि॥२७॥

राजाने आदरसमेत दूतोंको बुलाकर अनेक प्रकारसे सम्मान किया। (फिर राजाओंमें) मुकुटमणि जनक मानों चारों पदार्थोंको पाकर गुरुके घर गये।

सकल कथा महिपाल सुनाई। सतानन्द आनन्द अघाई॥
चलहु नृपति मख देखहिं जाई। साजहु जाय सकल कटकाई॥

राजाने सब कथा (गुरुसे) कही तो शतानन्द आनन्दसे परिपूर्ण हो गये और बोले, हे राजन्! चलो, जाकर यज्ञ देखें। जाओ, सब सेनाको सजाओ।

करि विनती नृप मंदिर आई। बांचि पत्रिका सकल सुनाई॥
आनन्दयुत सब करी बधाई। दिये दान महिदेव बुलाई॥

राजा प्रार्थना करके राजमहलमें आये और चिट्ठी पढ़कर सबको सुना दी। आनन्दसहित सबने बधाई दी और ब्राह्मणोंको बुलाकर दान दिये।

याचक सकल याचक कीन्हे। सादर बोलि युगल चर लीन्हे॥
बिलग बिलग सब पूछहिं बामा। सुने रामके पूरण कामा॥

सम्पूर्ण भिक्षुकोंको धनवान कर दिये, और आदरसमेत दो दूत बुला लिये। सब स्त्रियां अलग-अलग पूछती हैं और श्रीरामचन्द्रजीके सम्पूर्ण चरित दूतोंसे सुनती हैं।

छं०—सब काम पूरण रामके सुनि विपुल बाजन बाजहीं।
पुरद्वार घर रखवार राखे सैन्य भट सब साजहीं॥
दस सहस सिंधुर षष्टिसत रथ बाजि बर्णत नहिं बनै।
जगमगत जीन जड़ाव रविमणि देखि कवि कैसे भनै॥
चढ़ि सूर प्रबल प्रवीण जे असि चलत सब सादर भये।
सुखपाल परम विसाल युग चढ़ि गुरुहिं लै आदर नये॥
महि डोल धसकत कमठ अहि दल देखि अमित विदेहको।
रथ यूथ पदचर अमित बर्णहि जगत अस कवि मूढ़को॥

श्रीरामचन्द्रजीके सब काम पूर्ण सुनकर बहुतसे बाजे बजते हैं, नगरके द्वार और घरोंपर रखवाले रखकर सब योद्धा सेनाको सजाने लगे। दस हजार हाथियों और छः हजार रथों और घोड़ोंका वर्णन नहीं किया जाता। जड़ाऊ जीनोंमें सूर्यकान्तमणि जगमगाते हैं, जो देखते ही बनते हैं। कवीश्वर कैसे वर्णन करें। जो

योद्धा तलवार चलानेमें चतुर हैं, वे सब आदर सहित चढ़कर चलते हुए और राजा जनक बहुत-बहुत बड़े-बड़े दो सुखपालोंपर चढ़कर आदरसमेत गुरुको लेकर चले। जनककी अपार सेनाको देखकर पृथ्वी चलायमान हुई। कच्छप और शेषजी धसकने लगे। रथ और पैदलोंका समूह ऐसा अपार है कि संसारमें ऐसा कौन मूर्ख कवि है जो वर्णन कर सके।

दो०—चलेउ राव मुनिगणसहित, विपुल निसान बजाय।
प्रात तीसरे पहर सोइ, अवधनगर नियराय ॥२८॥

राजा (जनक) मुनीश्वरोंके समूह सहित बाजे बजवाकर चले और तीसरे पहर अयोध्यापुरीके पास पहुंचे।

पुर बाहर सरयू सुचि तीरा। बास दीन्ह हर्षित रघुबीरा ॥
सौंपि अनुजकहं राजसमाजू। आये प्रभु जहं नृपमणि राजू ॥

श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्न होकर पवित्र सरयूके किनारे वास दिया। लक्ष्मणजीको राजसमाज सौंपकर भगवान् जनकजीके पास आये।

मिलि पुनि नृपति निकट बैठारे। गदगद गिरा सुवचन उचारे ॥
बदनमयंक निरखि सब गाता। आनंदमगन न हृदय समाता ॥

फिर राजाने मिलकर उन्हें पास बिठाया और गद्गद् वाणीसे सुन्दर वचन कहे। चन्द्रमासे मुख और सब शरीरको देखकर मग्न हो गये, आनन्द हृदयमें नहीं समाता।

प्रभु विनीत सब करि सेवकाई। सचिव भरत पुनि लिये बुलाई ॥
नृपसेवा सब भरत संभारी। सुनु खगपति जसकीन्ह खरारी ॥

फिर नीतिज्ञ भगवानने सबकी विनती और सेवाकर मंत्री और भरतको बुला लिया। हे गरुड़! राजाकी सब सेवा तो भरतने सम्भाली और भगवानने जैसा किया सो सुनिये।

आय गुरुहिं सादर सिर नाई। मन भावत आसिष तिन पाई ॥
पुनि प्रभु सकल देव गुरु बन्दे। अभिमत आसिष पाइ अनन्दे ॥

आकर आदरसहित गुरुको माथा नवाया और मनमानी आशिष पाई। फिर भगवानने सब देवता और गुरुओंको दंडवत् की और इच्छानुसार आशीर्वाद पाकर प्रसन्न हुए।

दो०—दस सहस्र मुनिवर सहित, आये प्रभु मखधाम।
बोले बचन विनीत गुरु, मंत्र सुनहु मम राम ॥२९॥

दश हजार श्रेष्ठ मुनीश्वरोंसमेत भगवान यज्ञके स्थानमें आये ; तब (गुरु) वसिष्ठ नीतिसहित वचन बोले कि हे रामचन्द्र ! मेरी सलाह सुनो।

धर्म सकल जेहि बेद बखाने। संत पुरान लोक सब जाने ॥
बिन तिय नहिं फल होय खरारी। अब चहिये मिथिलेस कुमारी ॥

जिसे सब वेद वर्णन करते और संत पुराण और सब लोक जानते हैं उस धर्मका फल हे रामचन्द्र ! बिना स्त्रीके नहीं होता, इसलिये अब जानकीकी जरूरत है।

सुनि मुनिबचन मौन गहि रहेऊ। सत्य असत्य न एकौ कहेऊ ॥
मम-प्रण बिरद जान मुनिराया। रहै सुकृत जेहि करहु सो दाया ॥

श्रीरामजी मुनीश्वरके वचन सुनकर चुप रह गये। एक बार तो सच झूठ न कहा, फिर बोले, हे मुनीश्वर, मेरी प्रतिज्ञा और यशको तो आप जानते ही हैं, अब जिस प्रकार धर्म रहे वही दया करें।

द्वै गुरु मिल नारद सनकादी। बचन कहेउ सुन परम अनादी ॥
कनकजटित मणि सुन्दर बाला। रचि सिय रूप सुसील बिसाला ॥

नारद और सनकादि तथा दोनों गुरुओंने मिलकर वचन कहे कि हे परम अनादि पुरुष ! सुनिये। सुवर्णकी मणिजटित सुन्दर युवा स्त्री सीताजीके रूपके समान बड़ी और सुशील बनाओ।

अंग अंग सब भूषण साजे। तासु रूप लखि रतिपति लाजे ॥
सहसा लखि न सकहिं नर नारी। सिय देखेउ अब अचरज भारी ॥

(फिर तो वैसीही सीताजी बनाकर) उनके अंग-अंगमें सब गहने ऐसे सजाये कि जिसके रूपको देखकर कामदेव भी लजाये ! स्त्री-पुरुष एकाएकी पहिचान नहीं सके, सीताजीको देखकर सबको बड़ा अचम्भा हुआ।

दो०—तेहि अवसर सोभा अमित, को कवि बरणै पार।
जगदातार कृपालु प्रभु, कीन्हे चरित अपार ॥३०॥

उस समयकी अपार शोभाको कौन कवीश्वर वर्णन कर पार पा सकता है ? संसारके दाता दयानिधान भगवानने अपार चरित किये।

जटित कनक सुन्दर मृगछाला। तिहि आसन आसीन कृपाला ॥
सिया सहित लखि सुर मुसुकाहीं। कीन्ह प्रणाम सबन हर्षाहीं ॥

सुवर्णसे जड़ी हुई सुन्दर मृगछालापर आसन लगाकर भगवान् विराजमान हुए। जानकी समेत (भगवानको) देखकर देवता मुस्कुराने लगे और सबने प्रसन्नतासे उन्हें प्रणाम किया।

भीर अपार देखि गुरुग्यानी। ऋधि सिधि बोलि सकल मनमानी ॥
कहा जाय जो उचित सो करहू। जो जेहिं चहिये सकल अनुसरहू ॥

ज्ञानवान गुरुने बहुतसी भीड़भाड़ देख सब ऋद्धिसिद्धियोंको बुलाकर सबका सत्कार किया और कहा कि जो उचित हो वह जाकर करो और जो वस्तु जिसे चाहिये उसे वही दो।

सुनि रजाय रघुपतिरुख पाई। रचे कोट गृह बिधिहु सिहाई ॥
सुरसुरभी सुरतरु सुखखानी। सारद सेष न सकहिं बखानी ॥

वे ऋद्धि-सिद्धि आज्ञा सुन और श्रीरामचन्द्रजीका रुख पाकर कोट और भवन बनाने लगीं (जिन्हें देख) ब्रह्मा भी प्रशंसा करने लगे। सुखकी खानि कामधेनु और कल्पवृक्ष सब घरोंमें बनाये, जिनका सरस्वती और शेष भी वर्णन नहीं कर सकतें।

पुर गृह बाहर गली अटारी। भरि सुगंध सब रची संभारी ॥
रहे तहां दिसिपाल अनेका। जे परमारथ निपुण बिबेका ॥

नगर, घर, बाहर, गली और अटारी इनको बहुत सम्भाल कर रचा और सुगन्धिसे भर दिया। वहां अनेक दिशाओंके रक्षक पहरेपर रख दिये, जो परमार्थमें बड़े ज्ञानवान थे।

छं०—जे निपुण परमबिबेक पावन भरत लै राखे तहीं।
निजभाग्य प्रबल सराह निंदरहिं धनदकी पदवी सही ॥
आये त्रिलोकी नाग खग सुर असुर जे बिधिने रचे।
सन्मानि सकल सनेह सादर रामसन कोउ नहिं बचे ॥

जो चतुर, बड़े ज्ञानी और पवित्र थे उन्हें भरतने वहां रक्खा, उन्होंने भाग्यकी बड़ी सराहना की और कुबेरकी पदवीकी भी निन्दा करने लगे। तीनों लोकोंके नाग, पक्षी, देवता और राक्षस जो ब्रह्माने बनाये थे सब आये और श्रीरामचन्द्रजीने प्रेम और आदरसहित सबका सत्कार किया, अर्थात् कोई भी ऐसा न बचा कि जिसका सत्कार न किया हो।

दो०—युगसहस्र जे बिप्रबर। सुन्दर परम प्रबीन।
जानहिं स्रुतिकर मत सकल। रहि मखसंग अधीन ॥३१॥

दो हजार श्रेष्ठ ब्राह्मण जो सुन्दर, अत्यन्त चतुर और वेदके सब मतको जानते थे, वे भगवानके साथ यज्ञमें अधीन रहे।

मकरमास ऋतु सिसिर सुहाई। मखमंडप बैठे रघुराई॥
तब बोले गुरु बचन सुहाये। आनहु बाजि जो बेद बताये॥

मकरमास सुन्दर शिशिर ऋतुमें श्रीरामचन्द्रजी यज्ञके मण्डपमें बैठे। तब गुरु सुन्दर वचन बोले, जैसा वेदमें कहा है वैसा घोड़ा लाओ।

लक्ष्मण सुनि गुरुवचन अनंदे। बार बार पदपङ्कज बंदे॥
हयशाला सादर चलि आये। बिबिध बिभूषण तेहि पहिराये॥

लक्ष्मण गुरुके वचन सुनकर प्रसन्न हुए और बार-बार उनके कमलसमान चरणोंको दण्डवत् की। आदर-समेत घुड़शालमें चले आये और उसे अनेक आभूषण पहनाये।

स्वेत बर्ण सुन्दर स्रुति कारे। रबिहय निदरि मनोज संवारे॥
जीन जराव न जाय बखाना। चढ़ि रबिरथ आवत जगजाना॥

स्वेत रङ्गका सुन्दर घोड़ा था कि जिसके कान काले थे और जो सूर्यके घोड़ोंकी भी निन्दा करता था और ऐसा था मानों कामदेवने ही बनाया है। जड़ाऊ जीनका वर्णन नहीं किया जाता, जगत्‌ने ऐसा जाना मानों साक्षात् सूर्य ही रथपर चढ़कर आ रहे हों।

माथे मोरपच्छ मणि लागे। सोइ नभ नखत देव अनुरागे॥
सेवक चारु पाटमय डोरी। दामिनि दमकि निपट अतिथोरी॥

माथेमें मोरके पंखे और मणियां लगी हुई हैं; वही मानों आकाशके तारे हैं, जिन्हें देख देवता प्रीति करने लगे। सेवकके हाथमें सुन्दर रेशमकी डोरी है जिसके सामने बिजलीकी चमक भी बहुत ही थोड़ी लगती है।

दो०—षष्टिसहस्र दसबीरबर, रामानुज रणधीर।
मध्य ताहि आनेहु तहां, जहां राम रघुबीर॥३२॥

रणधीर लक्ष्मणजी साठ हजार और दश श्रेष्ठ योद्धाओंको साथ लेकर उस घोड़ेको श्रीरामचन्द्रजीके पास लाये।

पूजेहु हय प्रभु जय जगहेतू। जस कछु कहा गाधिकुलकेतू॥
दीन्ह बिबिध बिधि दान अनेका। लिखो पत्र सोइ करि अभिषेका॥

भगवान्‌ने जैसा कुछ विश्वामित्रने कहा था वैसा ही घोड़ेका पूजन किया। और अनेक प्रकारके बहुतसे दान दिये और अभिषेक करके एक पत्र लिखा कि—

एक बीर कौसलपुरमाहीं। अरिदलदल न सुरेस सकाहीं॥
जिहि बल होइ गहै सोइ बाजी। देहु दंड बन जाहु कि भाजी॥

अयोध्यापुरीमें एक योद्धा वैरियोंकी सेनाका नाश करनेवाला है, जिससे इन्द्र भी लज्जित होते हैं (उसका यह घोड़ा है)। जिसे बल हो वह इस घोड़ेको पकड़े या दण्ड दे, या भाग जाय।

लिखि बांधो हयसीस संभारी। यह सुन बचन चले मुनिचारी॥
भार्गव आदि सकल मुनि संगा। रहे जहां रघुबंसपतंगा॥

यह लिखकर और सम्हालकर घोड़के माथेमें बांधा, यह वचन सुनकर बहुतसे मुनि चले और भार्गव आदि सब मुनि इकट्ठे होकर रघुकुलके सूर्य ऐसे रामजीके पास आये।

कथा सकल लवणासुर केरी। मुनिन त्रास जिन दीन घनेरी॥
सुनि ऋषिबचन नयन जल छाये। बिहंसि राम निज त्रोण मंगाये॥

लवणासुरकी सब कथा कही, जिसने मुनीश्वरोंको बहुत दुःख दिया था। ऋषिके वचन सुन (श्रीरामचन्द्रजीके) नेत्रोंमें जल भर आया, फिर हंसकर उन्होंने अपना तरकस मंगाया।

दो०—दीन्हे रिपुसूदनहि सोइ, बाण अमोघ कराल।
मंत्र मोर पढ़ ताहि हति, जीतहु सकल भुआल॥३३॥

और शत्रुघ्नको वही अमोघ कठिन बाण दिया और कहा कि मेरा मंत्र पढ़कर उस (लवणासुर) को मार कर सब राजाओंको जीतो।

बहुरि बिभीषण राम बुलाये। सादर आय माथ तिन नाये॥
लवणासुरके चरित अपारा। पूछेउ दिनमणिबंसउदारा॥

फिर श्रीरामचन्द्रजीने विभीषणको बुलाया और उसने आकर आदरसहित माथा नवाया। श्रीरामचन्द्रजीने लवणासुरके अपार चरित्र पूछे।

करयुग जोरि निशाचर नाहा। सत्य कहौं अब सुन अवगाहा॥
भगनि बिमात्र नाथ सोइ मोरी। कुंभनिसा तेहि नाम बहोरी॥

विभीषण दोनों हाथ जोड़कर बोला, हे महाराज! सत्य कहता हूं, अब सब सुनो। हे स्वामिन्! एक मेरी सौतेली बहन थी और उसका कुम्भनिशा नाम था।

मधुदानव कहं रावण दीनी। बहु बिनीत कर बिनय बसीनी॥
तनय तासु लवणासुर भयऊ। सिवसेवा सादर मन दयऊ॥

रावणने उसे मधु (नाम) दैत्यको बहुतसी विनती और प्रार्थना करके दिया। उसका पुत्र लवणासुर हुआ, जिसने महादेवकी सेवामें बड़े आदरसे मन लगाया।

अगम तासु तप संकर जाना। दीन्ह त्रिसूल सुकृपानिधाना॥
जेहिकर रहै अस्त्र यह भारी। चौदह भुवन जीति सब झारी॥

हे दया सागर! महादेवने उसका कठिन तप जानकर त्रिशूल दिया और कहा कि जिसके हाथमें यह बड़ा हथियार रहेगा वह चौदहों लोकमें सबको जीत लेगा!

दो०—तेहि बल प्रभु सो नहिं गनहि, अमर दनुज नर नाग।
जीत सकल बस कीन्ह सोइ, हठपथ सबके लाग॥३४॥

हे नाथ, उसीके बलसे वह देवता, राक्षस, मनुष्य और सर्प किसीको नहीं गिनता। उसने सबको जीतकर वशमें कर लिया है और हठसे सबको दुःख देता है।

तासु चरित सुनि मन मुसुकाने। रिपुहिं हतहु बल दे सनमाने॥
सैन्य सुभग चतुरंग बनाई। लिये साथ दोउ तनय सुहाई॥

उसके चरित सुनकर भगवान मनमें हंसे और कहा कि वैरीको मारो और बल देकर सत्कार किया। उन्होंने चतुरंगिणी सेना सजाई और साथमें दोनों सुन्दर कुमार कर लिये।

सुनि प्रभु बचन निसान अपारा। तीन सहस्र हने इकबारा॥
दलकै बसुधा कुंजर गाजै। दससहस्र रथ रविरथ लाजै॥

भगवानके वचन सुनकर तीन हजार नगाड़े एक साथ ही बजाये गये। हाथियोंके गर्जनेसे पृथ्वी डोलने लगी। दश हजार रथ ऐसे चले जो सूर्यके रथको लज्जित करते हैं।

पूरो संख चलो दल साजो। अमित अकास दुंदुभी बाजो॥
पुरबाहर सब कीन्ह संभारो। तनय युगल लखि परम सुखारो॥

शंख बजाकर सेना सजकर चली और आकाशमें अपार नगाड़े बजने लगे। नगरके बाहर सबकी सम्हाल की और दोनों पुत्रोंको देखकर बहुत सुखी हुये।

द्वादसनिसि बीते मगमाहीं। पहुंचे जाय जमुनतट पाहीं॥
दिनप्रति दान देहिं बहु भांती। प्रभुपद पूजैं दिन औ राती॥

बारह रात मार्गमें बिताकर यमुनाजीके किनारेपर जा पहुंचे। प्रति दिवस अनेक प्रकारके दान देने लगे और दिनरात भगवान्के चरण पूजने लगे।

दो०—रवितनयापद वंदिकै। सादर पूजि पुरारि॥
चलेहु सत्रुसूदन सुमिरि। स्वामिहिं राम खरारि॥३५॥

यमुनाजीके चरणोंको दण्डवत् कर आदरसमेत महादेवजीका पूजन करके अपने स्वामी खरारि श्रीरामचन्द्र-जीका स्मरण कर शत्रुहन चले।

चमू चपल अति सुभट जुझारा। घेर्‌यो नगर बीर बरियारा॥
बिपुल निसान हने तिहि काला। सुनि निसिचरपति गर्ब बिसाला॥

अत्यन्त सुन्दर जुझाऊ योद्धाओंकी सेनाने वीर (लवणासुर) का नगर जबर्दस्ती घेर लिया। उस समय बहुत-से बाजे बजे, जिन्हें सुनकर लवणासुरको बड़ा अभिमान हुआ।

षष्टि सहस बर सूर जुझारा। लवणासुरसंग अनी अपारा॥
सुभट प्रचारत गज रथ आवा। देख कटक निज अति सुख पावा॥

साठ हजार जुझाऊ योद्धाओंकी सेना लवणासुरके भी साथ थी, योद्धाओंको ललकारता हुआ हाथी और रथ लेकर आया, और अपनी सेनाको देखकर बड़ा आनन्द पाया।

मारहु खावहु नृप धरि बांधहु। जेहि जय होय यत्न सोइ साधहु॥
अस कहि सन्मुख सैन्य चलाई। कज्जलगिरि जनु आंधी आई॥

कहने लगा कि मारो, खाओ और राजाको पकड़कर बांध लो। जिससे जीत हो वही उपाय करो। ऐसे कह-कर सेना सामने चलायी, मानों कज्जलगिरिकी आंधी आयी हो।

मारू सब्द सुनत भट गाजहिं। बिपुल बाजने दुहुंदिसि बाजहिं॥
निजप्रभु कहि जय जोरो जानो। हर्षि भिरे भट मन हठ ठानो॥

मारू (बाजेका) शब्द सुनते ही योद्धा गर्जने लगे और दोनों ओर बहुतसे बाजे बजने लगे। अपने-अपने स्वामीकी जय कहकर सेना जुट गई और योद्धा प्रसन्नतासे मनमें हठकरके भिड़ने लगे।

छं०—हठ ठानि प्रबल प्रवीण जे असि भिरे अति रिपु प्रबलसे॥
इक मल्लयुद्ध सराहि रोकहिं एक एकन कर खसे॥
सर सक्ति तोमर सूल परसु कृपाण सूर चलावहीं॥
कर चरण सिर हति तीर धारहिं भूमि जान न पावहीं॥
भट गिरहिंपुनि उठि भिरहिं धरुकहि करहिं माया अति घनी॥
प्रभु तनय सुन्दर बीर बांके हनहिं रिपु निसिचरअनी॥

देखहिं परस्पर युद्धकौतुक सुभट एकहिं इक हने ॥
सजि कोटि रथ सुर आय नभपथ सुमनवर्षा करि भने ॥

जो तलवार चलानेमें चतुर थे वे पैंज करके प्रवल शत्रुओंसे जा भिड़े। कोई मल्लयुद्धकी सराहना करके एक दूसरेका हाथ पकड़कर रोने लगे। योद्धा लोग वाण, शक्ति, तोमर, त्रिशूल, कुल्हाड़ा और तलवार चलाते हैं और हाथ, पैर और मस्तकोंको काट-काटके वाणहीपर रोक लेते हैं, पृथ्वीपर नहीं जाने देते। योद्धा गिरते हैं और फिर उठकर लड़ने लगते हैं। पकड़ो-पकड़ो कहकर बहुत बड़ी माया फैलाते हैं। भगवान्‌के भाई सुन्दर बांके योद्धा बैरी राक्षसोंकी सेनाको मारते हैं और जब सुन्दर योद्धा आपसमें युद्धके कौतुकको देखते हुए एक दूसरेको मारने लगे तब देवता सजे हुए करोड़ों रथोंपर (बैठ-बैठ) आये और आकाशमार्गमें फूलोंकी वर्षाकर जय-जय कहने लगे।

दो०----विचलत अनी बिलोकि निज, लवणासुर बरबण्ड ॥
संग तनय मातंग भट, दूसर केतु अखण्ड ॥ ३६ ॥

बरबण्ड लवणासुर अपनी सेनाको विचरते देख साथमें अपने पुत्र मातंग और दूसरे अखंडकेतु नामक योद्धा-पुत्रको लाया।

अरिसुत ज्येष्ठ सुबाहु बिसाला। भिरा मतंग हृदय जनु काला ॥
यूपकेतु अरु केतु प्रचारी। लड़हिं सुखेन न मानहिं हारी।

शत्रुघ्नका बड़ा पुत्र सुबाहुके हृदयमें मतंग कालके समान भिड़ा। यूपकेतु और केतु ललकार-ललकारकर सुखसे लड़ते हैं, हार नहीं मानते।

अनीसमूह जानि निज जोरा। अस्त्र सस्त्र गहि भिरे बहोरा ॥
बिषम युद्ध लखि देव सकाने। पूछेउ सुरगुरु कहि मुसुकाने ॥

फिर सब सेनाका समूह अपनी-अपनी जोड़ीसे अस्त्र-शस्त्र लेकर लड़ने लगा। इस बाँके युद्धको देखकर देवता सकुचे और बृहस्पतिजीसे पूछने लगे कि कहिये, (अब क्या होना चाहिये) तब बृहस्पतिजी हंसे।

जनि हिय सोच अमरपति करहू। रामप्रताप सुमिरि उर धरहू ॥
यूपकेतु कर कोप अपारा। हन रिपुकेतु खण्ड महि डारा ॥
इहां सुबाहु मत्त गहि मारा। कर पद काटि अवनिपर डारा ॥

और बोले कि हे इन्द्र! मनमें सोच मत करो। श्रीरामचन्द्रजीके प्रतापको स्मरण करके हृदयमें रखो। यूपकेतुने बहुतसा क्रोध करके रिपुकेतुको मार टुकड़े-टुकड़े करके पृथ्वीपर गिरा दिया। यहां सुबाहुने मतंगको पकड़के मार डाला और हाथ-पैर काटके पृथ्वीपर डाल दिया।

छं०--महि डारि कर पद सीस आतुर तूण सर प्रविसत भये।
रविवंसके अवतंस दूनो समरमहिं राजत भये ॥
सुनि मरण युतसुत बिकल निसिचर भूमिपर घूर्मित गिर्‌यो।
पुनि जागि सूल संभारि प्रभुके समर सम्मुख सो भिर्‌यो ॥
दोउ प्रबल बीर प्रताप निसिचर सैन्य दुहुं दिसि मुरि चली।
सिर बाहु चरण उड़ात नभपथ योगिनी आनंद भली ॥
बहु रुधिर मज्जन करहिं सादर गुहहिं नरसिरमालिका।
आनन्द ह्वै मन मुदित गावहिं गीत खेचरबालिका ॥
धुनि बढ़हिं संख मृदंगकी सुनि सूर हर्ष बढ़ावहीं।
गति लेत निर्तत प्रेततिय सिरमाल हर्ष चढ़ावहीं ॥
कहुं करत पान प्रमाण नर कहुं भरी सोणित साकिनी।
सब मेद मांस अहार कर नभ मुदित बोलहिं डाकिनी ॥

हाथ-पैर और मस्तकको पृथ्वीपर डालकर वाण तरकसमें घुस गये। सूर्यवंशके भूषण दोनों कुमार रण-भूमिमें सुशोभित हुए। राक्षस (लवणासुर) अपने दोनों पुत्रोंका मरना सुनकर व्याकुल होकर घूमकर पृथ्वीपर गिर पड़ा, फिर वह जागकर त्रिशूल लेकर प्रभुके सम्मुख लड़ने चला। दोनों प्रबल प्रतापी योद्धाओंके मारे, दोनों ओरकी सेना मुड़ चली, शिर, भुजा और चरण आकाश मार्गमें उड़ने लगे। योगिनियोंको बड़ा आनन्द हो रहा है, आदरसहित बहुतसे लोहूमें मज्जन करती हैं, मनुष्योंके मस्तकोंकी माला पोहती हैं, और प्रसन्नतासे मनमें आनन्द भरकर अप्सरा गीत गाती हैं। शंख और मृदंगकी धुनि बढ़ने लगी, जिसे सुनकर योद्धा बहुत प्रसन्न होने लगे। प्रेतोंकी स्त्रियां गतिके साथ नाचने लगीं और प्रसन्न हो होकर मुंडोंकी मालाको अपने ऊपर चढ़ाने लगीं। कहीं लोहूसे भरे हुये मनुष्योंके रुधिरको शाकिनी पान करने लगीं, कहीं डाकिनी सब मेदमांसका आहार करके आकाशमें प्रसन्नताके साथ विचरने लगीं।

दो०—मारे रघुबर बीर बहु, गिरे समर रणधीर।
क्षण इक निश्चरबध निरखि, अन्तर हुइ बलबीर ॥ ३७ ॥

शत्रुघ्नजीने बहुतसे योद्धा मारे। वे रणधीर युद्धमें गिर पड़े। फिर राक्षसोंका मरना देखकर योद्धा राक्षस क्षणभरके लिये अन्तर्धान हो गये।

करि छल प्रगटसो विविध बरूथा। अस्त्र सस्त्र लै सब सुरयूथा ॥
धाये अज अरु सिव सनकादी। जे मुनि अपर कहे स्रुतिवादी ॥

और कपटरूप धरकर सब देवताओंके रूपमें बहुतसे समूह अस्त्र-शस्त्र लेकर प्रगट हो गये। ब्रह्मा, महादेव और सनकादिक तथा और अन्य मुनीश्वर, जो वेदको जाननेवाले थे आये।

सक्ति सूल असि चर्म सुहाई। गदा परसु धनु बाण बनाई ॥
धरु धरु मारु मारु सुर करहीं। लरत न भट बिस्मित ह्वै रहहीं ॥

शक्ति, त्रिशूल, तलवार, ढाल, गदा, कुल्हाड़ा और सुन्दर धनुष-बाण धारणकर देवता "पकड़ो, पकड़ो, मारो मारो," ऐसा कहते हैं, पर योद्धा लड़ते नहीं, चकित हो रहते हैं।

निसिचर प्रबल भये रघुनाथा। केतिक धीर मलैं निजहाथा ॥
सैन्य बिकल लखि नारद आये। समाचार सब कह समुझाये ॥

जब शत्रुघ्नजीसे राक्षस प्रबल हुए तो कितने ही धीरजवान योद्धा अपने हाथ मलने लगे। सेनाको दुःखी देखकर नारदजी आये और सब समाचार कहकरके समझा दिया।

रिपुसूदन प्रभुबिसिष संभारी। जोर धनुष सुमिरे त्रिपुरारी ॥
जिमि तम अंचै तरणि गो सोई। समर अमर नहिं दीसै कोई ॥

शत्रुघ्नने भगवान्का बाण सम्भाल धनुपमें जोड़ महादेवका स्मरण किया, जैसे सूर्यके पास गये हुए अन्धकारको सूर्य पी लेता है उसी भांति लड़ाईमें कोई देवता नहीं दिखाई देने लगा।

दो०—मन्त्र प्रेरि चले कोटि सर, रहे जहं तहं नभ छाय।
मनहुं बलाहक प्रबल बहु, मारुति देखि बिलाय ॥ ३८ ॥

मन्त्रोंके भेजे हुए करोड़ो बाण चले, सो जहां-तहां आकाशमें ऐसे छा गये, मानों बहुतसे प्रबल मेघ पवनको देखके छिप जाते हैं।

सुरसमाज कितहूं नहिं देखा। चलेहु सुबाहु केतु जनु बेषा ॥
खल सम्हारु गहु सूल सुरारी। अस कहि गदा कोपि उर मारी ॥

देवताओंका समूह ऐसे कहीं नहीं दिखाई देता; मानो वे बाण सुबाहु और केतुके वेषमें चले थे। शत्रुघ्न बोले, अरे दुष्ट, देवताओंके शत्रु! त्रिशूलको सम्भालकर धारण कर। ऐसा कहकर क्रोधित हो उसके हृदयमें गदा मारी।

सहि न सका सोइ तेज अपारा। मूर्छित अवनि परा बिकरारा ॥
निजपति बिकल देखि भटभारी। धाये बहु कर सस्त्र संभारी ॥

वह उसके अपार तेजको न सह सका और व्याकुलतासे मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। बहुतसे योद्धा अपने स्वामीको व्याकुल देख हाथमें बहुतसे हथियार लेकर दौड़े।

कैटभ नाम वीर बलवाना। मूर्छित लवणासुर मन जाना॥
तीन सहस्र लिये रण गाढ़े। आइ सुबाहु सामुहे ठाढ़े॥

कैटभनाम बलवान योद्धाने मनमें लवणासुरको मूर्च्छित जानकर तीन हजार लड़ाईमें गाढ़े योद्धा लिये और वे आकर सुबाहुके सामने खड़े हुए।

कटुक वचन कहि छाड़ेसि बाना। तिन काटे सुबाहु बलवाना॥
तब खिसियान सूल ले धावा। यूपकेतुके सन्मुख आवा॥

और कठोर वचन कहकर बाण छोड़ने लगे। उनको बली सुबाहुने काट डाला। तब खिसियाया और त्रिशूल लेकर दौड़ता हुआ यूपकेतुके सामने आया।

सो०—मारेसि हृदय संभारि, गिरे जपत करुणायतन।
मूर्च्छित बेर पुकारि, रामचन्द्र दिनमणितिलक॥ ३॥

और बाण सम्भालकर उनकी छातीमें मारा तो वह मूर्च्छित होकर गिर पड़े और करुणाके स्थान सूर्यवंश तिलक श्रीरामचन्द्रजीको पुकारकर जपने लगे।

मूर्च्छित बन्धु सुबाहु बिलोकी। भै रिस अमित रहै नहिं रोकी॥
कठिन बाण कर क्रोध अपारा। छांड़ेउ तीनि सहस इक बारा॥

सुबाहु अपने भाईको मूर्च्छित देखकर बहुत क्रोधित हुआ। रोकनेसे नहीं रुकता बहुत क्रोध करके तीन हजार बाण एक ही साथ छोड़े।

ताहि बिकल करि अनुजसमीपा। आतुर आये निजकुलदीपा॥
लागे बाण तासु उरमाहीं। पर्‌यो अवनितल सुधि कछु नाहीं॥

और उसे व्याकुल कर अपने कुलके दीपक छोटे भाईके पास शीघ्र आये। उसके हृदयमें ऐसा बाण लगा कि पृथ्वीपर पड़ा था, शरीरकी कुछ सुध नहीं रही।

खैंच सूल उर बाहर कीन्हा। रामनाम वर ओषधि दीन्हा॥
उठि सुचि अंग अनुजके संगा। लीन्ह बिहंसि धनुबाण निषंगा॥

बाण खींचकर शरीरके बाहर किया और रामनामकी श्रेष्ठ ओषधि दी। रामका नाम सुनते ही सुन्दर अंग हो गया, उसने उठकर भाईके साथ हंसकर धनुषबाण और तरकस लिया।

आय समरमहि सुभट प्रचारा। वाणते विपुल देवअरि मारा ॥
मूर्च्छागत कैटभ बलवाना। रथ चढ़ाय तिहिं तुरत सिधाना ॥

लड़ाईमें आकर योद्धाओंको ललकारा और वाणोंसे देवताओंके वैरीको मारा। बलवान कैटभको मूर्च्छित देख लवणासुर उसे रथपर चढ़ाकर तुरन्त ले गया।

दो०—कर उपाय रथ राखि तेहि, पठै भवन रणधीर।
आय समर गर्जत भयो, संग महाबलवीर ॥ ४० ॥

उपाय करके उस योद्धाको तो रथमें रखकर घर भेज दिया और साथमें बड़े बलवान योद्धाओंको ले आकर लड़ाईमें गर्जने लगा।

जागा कैटभ पुनि घर जाई। आयो कुमक संग निज भाई ॥
सूरवीर जेहि काल सकाई। हारेउ समर सुनहु खगराई ॥

घर जाकर कैटभ मूर्च्छासे जागा और अपने भाई कुमकको साथ लेकर आया। वह वीर ऐसा योद्धा था जिससे काल भी डरता था। हे गरुड़! सुनो, वह भी इस लड़ाईमें हार गया।

नायउ माथ आनि कर जोरी। तात समर रुचि पूजेउ मोरी ॥
रावणरिपु लघु भ्राता जानू। तनय तासु बलरूपनिधानू ॥

उसने आकर हाथ जोड़कर लवणासुरको माथा नवाया कि हे प्यारे! लड़ाईमें मेरी इच्छा पूरी हुई। रावणके वैरी श्रीरामचन्द्रजीके छोटे भाई और उनके पुत्र बल और रूपके समुद्र हैं।

कोटिन सूर समर हम मारे। बालक नृपति निरखि हिय हारे ॥
रिपुगण सुनि करि उर अतिदापू। कह्यो करहु जनि हृदय बिलापू ॥
रवितनयामहि सैन्यहि डारूं। तनय अनुज समेत रिपु मारूं ॥

करोड़ों योद्धा हमने लड़ाईमें मारे हैं, परन्तु उन राजपुत्रोंको देखकर हम हृदयमें हारते हैं। वैरीके गुण सुनकर और हृदयमें अति घमण्ड कर बोला कि तुम अपने हृदयमें विलाप मत करो। मैं सेनाको यमुनाजीमें डालकर पुत्र और भाई सहित वैरीको मारूंगा।

छं—रिपु अनुज मारूं सैन्य यमुनहि डार नृप सिर नायऊ।
तज सोच सैन संभार चल भट वेगि जो अरि पायऊ ॥
दोउ मत्त गर्व विसाल निशिचर आय रण गर्जत भये।
इत यूपकेतु सुबाहुसर धनु हाथ लै आतुर गये ॥

भट भिरे निज निज जयति कह निज जान जोरी समरकी ।
सिर कटत खण्डन चरण योगिनि खात बालक बालकी ॥
हठि गीध जंबुक काक सोणित पिवहिं अति सुख पावहीं ।
बहु दान देहिं अनेक मनमहं विहंसि मंगल गावहीं ॥

वैरीको भाईसहित मार उसकी सेनाको यमुनामें वहाकर राजाको शिर नवाऊंगा। सोचको छोड़कर सेनाको सम्हालके योद्धा चला, और शीघ्रतासे वैरियोंके पास पहुंचा। दोनों मतवाले बड़े अभिमानी योद्धा राक्षस आकर लड़ाईमें गर्जने लगे। इधरसे यूपकेतु और सुबाहु हाथमें धनुषबाण लेकर शीघ्रतासे गये। योद्धा लोग अपनी जय कहकर लड़ाईमें अपने-अपने जोड़ जानकर लड़े, माथे और पैर टुकड़े टुकड़े होकर कटते हैं जिन्हें योगिनियोंके बाल बच्चे खाते हैं और गिद्ध, गीदड़ और कौए हठ करके रुधिर पीते हुए बहुत सुख पाते हैं और बहुतसे दान देते और मनमें हंसकर मंगलाचार गाते हैं।

दो० —भिरे सूर सहरोष अति, फिरे आकरे कूर ।
लागे लोहे रुक रहे, समर धीर बर सूर ॥४१॥

लड़ाईमें बहुत क्रोध करके शूर तो लड़े और काहिल लौटने लगे। लोहा बजने लगा और जो लड़ाईमें धीर और सुन्दर शूरवीर थे वे रुक गये।

कहहिं सूर किमि होन न ठाढ़े। फिरे लजाय क्रोध कर गाढ़े ॥
भिरे प्रचार सुभटसमुदाई। भयो युद्ध तेहि बरणि न जाई ॥

जब योद्धाओंने कहा कि तुम क्यों नहीं लड़नेको खड़े होते हो, तब वे लज्जित हो बहुत क्रोध करके लौटे। योद्धाओंके समूह ललकार कर भिड़े। उस समय जो युद्ध हुआ उसका वर्णन नहीं किया जाता।

वर्षहिं समर सूर सर कैसे। प्राविटसमय जलद जल जैसे ॥
हय पग उठे धूर नभ छाई। भयो प्रदोष सुनहु खगराई ॥

योद्धा लड़ाईमें कैसे बाण बर्षाते हैं जैसे वर्षाकालमें बादलोंसे जल बरसता है। हे गरुड़ ! सुनो, घोड़ोंकी टापोंसे उठी हुई धूलके छा जानेसे आकाशमें सन्ध्या हो गई।

समर देख रिपु प्रबल प्रभाये। प्रभुसमीप सादर सुत आये ॥
देख तनयबल बिपुल बिसाला। रिपुहन हर्ष मनुज सुर ब्याला ॥

लड़ाईमें वैरियोंका प्रबल प्रभाव देखकर पुत्र प्रभुके पास आदरसहित आये। पुत्रोंका बहुत बड़ा बल देखकर शत्रुघ्न और देवता तथा सर्पोंको आनन्द हुआ।

यातुधान बल बुद्धि गंवाई। निजपुर गये राज यस पाई॥
निसि निसिचर सब बात बिचारी। होत प्रात पुनि लाग गुहारी॥

राक्षस बल और बुद्धिको खोकर अपने नगरको गये और महाराजने यश पाया। राक्षस रातमें सब बात समझ सवेरा होते ही फिर लड़ने लगे।

दो०--साजि बाजि गज वाहनहिं, गहगह हने निसान।
आयो समर सकोप अति, लवणासुर बलवान ॥४२॥

बलवान लवणासुर हाथी, घोड़े और सवारियोंको सजाकर घने बाजे बजा अत्यन्त क्रोधित होकर फिर लड़ाईमें आया।

सिवहिं सुमिरि लै सूल बिसाला। रिपुबल पुर्‌यो मनहुं यमकाला॥
क्षणक माहिं मारे बहु योधा। चल्यो सकोप मनुज करि क्रोधा॥

महादेवका स्मरणकर बड़ा त्रिशूल लेकर वैरियोंपर बलसमेत ऐसा दौड़ा, मानों साक्षात् कालरूप यमराज। क्षणभरमें बहुतसे योद्धा मार डाले, फिर मनुष्योंपर क्रोध करके चला।

आवत सूल हन्यो प्रभु छाती। गिरे घूर्मि अवनी रिपुघाती॥
मूर्च्छित देखि खड्ग लै धावा। निरखि सुबाहु क्रोध उर छावा॥

और आते ही भगवान्‌की छातीमें त्रिशूल मारा। शत्रुघ्न घूमकर पृथ्वीपर गिर पड़े। उन्हें मूर्च्छित देख लवणासुर तलवार लेकर दौड़ा। यह देखकर सुबाहुके हृदयमें क्रोध छा गया।

प्रबल गदा रथ सारथि भंजा। बिहंसि महाबल रिपुदल गंजा॥
रथविहीन व्याकुल मनमाहीं। मूर्च्छित पर्‌यो अवनि सुधिनाहीं॥

बड़ी गदासे रथ तोड़कर उसका सारथी मार डाला और महाबली उस वैरीकी सेनाका नाश करके हंसा। विना रथके लवणासुर मनमें दुःखी हो मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा, सुध नहीं रही।

पुनि उठि गर्जि सकोप सुरारी। अस्त्र संभारि क्रोध करि भारी॥
उठे सत्रुहन मन अनुमाने। सादर सब हियते सनमाने॥
विस्मित विकल देख सब जाने। रामबाण अति सादर आने॥

फिर देवताओंका वैरी (लवणासुर) उठा और गर्जता हुआ बड़ा भारी क्रोधकर हथियार सम्हालके चला। शत्रुघ्न मनमें विचारकर उठे तो सबने हृदयसे आदर-सत्कार किया। इधर शत्रुघ्नजीने सबको दुःखी और व्याकुल जानकर बड़े आदरसहित श्रीरामचन्द्रजीके दिये हुये बाण लिये।

दो०—सुमिरि अवधपतिचरणयुग, छांड़े युग नाराच।
परयो अवनि तनु भिन्न ह्वै, व्याकुल विकट पिसाच ॥४३॥

श्रीरामचन्द्रजीके दोनों चरणोंका स्मरण कर दो बाण ऐसे छोड़े जिनसे भयंकर राक्षस व्याकुल होकर और शरीरसे खण्ड-खण्ड होकर गिर पड़ा।

तासु मरण सुनि सब सुरयूथा। चढ़ि विमान नभ सकल बरूथा॥
बाजहिं दुंदुभि वर्षहिं फूला। आज नाथ बीते सब सूला॥

उसका मरना सुनकर सब देवताओंके बहुतसे समूह आकाशमें विमानोंपर चढ़कर नगाड़े बजा बजाकर फूल बर्षाने लगे और कहने लगे कि हे स्वामिन्! आज सब दुःख दूर हो गये।

जय जय धुनि सब देव सुकरहीं। बेदमंत्र पढ़ि आशिष बरहीं॥
यातुधानपति दीन बिलोकी। कैटभ पुनि रिस सक्यो न रोकी॥

सब देवता सुन्दर जय-जय धुनि करते हैं और वेदके मन्त्र पढ़-पढ़कर आशीर्वाद देते हैं। लवणासुरको दीन देखकर कैटभ क्रोधको नहीं रोक सका।

करि किलकार गर्जि अतिघोरा। सिला एक लै आयहु जोरा॥
सर सत सैल सुबाहु प्रचारी। काटी दुष्ट भुजा महि डारी॥

उसने किलकिलाकर बड़ी घोर गर्जना की और जोरसे एक शिला लेकर आया। सुबाहुने प्रचार कर सौ बाणोंसे उस दुष्टकी भुजा काटकर पृथ्वीपर डाल दी।

बदन पसारि ताहि तक धावा। देव सुबाहु प्रबल पहं आवा॥
खैंचि धनुष पुनि स्रवणप्रयंता। छोड्यो बाण सुबाहु तुरंता॥

फिर वह उसे देखकर मुंह फैलाकर दौड़ा और प्रबल सुबाहुके ऊपर आया। फिर तो सुबाहुने कानतक धनुष तानकर एक बाण छोड़ा।

काटि सीस तिहिं भूमि गिरावा। सुनासीर आतुर चलि आवा॥
जोरि युगल कर अति अनुरागे। बोले बचन प्रेमरसपागे॥

और जब उसका माथा काटकर पृथ्वीपर गिरा दिया तब इन्द्र शीघ्र ही चला आया और दोनों हाथ जोड़कर बड़े प्रेमसे स्नेहके रसमें सने हुए वचन बोला कि—

हमहिं सहित सुर कीन्ह सनाथा। अस्तुति योग नाहिं हम ताता॥
अस्तुति विनय सक पुनि कीन्ही। बार बार बहु आशिष दीन्ही॥

हे प्यारे! तुमने हमें और सब देवताओंको सनाथ किया। हम तुम्हारी स्तुति करनेके योग्य नहीं। यह कहकर फिर इन्द्रने स्तुति और प्रार्थना की और बार-बार बहुतसे आशीर्वाद दिये।

दो०—देवन सहित सु देवगुरु, आये जहं मखधाम।
समाचार सादर सकल, कहे सबनके नाम ॥४४॥

देवताओं सहित बृहस्पति यज्ञके स्थानमें आये और आदरसहित सब समाचार तथा सबके नाम कहे।

तहं युग नगर रचे अति रूरे। राखे तनय युगल बलपूरे ॥
मथुरा नाम जगत यस जाना। दूसर विस्व जो वेद बखाना ॥

वहां दो सुन्दर नगर रचे जिनमें पूरे बलवान दोनों पुत्र रक्खे। एक नगरका मथुरा नाम है जिसके यशको संसार जानता है, दूसरा विश्व जिसका वेदोंने वर्णन किया है।

ज्येष्ठ तनय बलबुद्धिविसाला। नाम सुबाहु विदित महिपाला ॥
राखेउ यमुनातट बलभूरी। विस्व नगर पश्चिम दिसि दूरी ॥

बड़ा पुत्र जो बल और बुद्धिमें तीव्र था उसे मथुराका राज्य दिया और बहुत बलवान् यूपकेतुको विश्वनगरका राज्य दिया, जो यमुनातटपर है।

यूपकेतु पुनि साथ रखावा। राजनीति दोउ सुत समुझावा ॥
सौंपि नगर बहु आसिष दीनी। नृपमणि गवन विजय कहं कीनी ॥

फिर यूपकेतुको साथ रक्खा और दोनों पुत्रोंको राजनीति समझाई। दोनों पुत्रोंको नगर सौंपकर बहुतसा आशीर्वाद दिया और शत्रुघ्नजीने जीतके लिये गमन किया।

चिरंजीव करि हन्यो निसाना। दक्षिण अश्व चला जग जाना ॥
सचिवसमेत राखि सुत संगा। उतरे सब जल यमुनतरंगा ॥

चिरंजीव कहकर बाजे बजाये। दक्षिण दिशाको घोड़ा चला कि जिसे संसार जानता है। मन्त्री सहित पुत्रोंको छोड़कर सब यमुनाजलकी लहरोंके पार हुये।

दो०—रवितनयाकहं बंदिकै, चली अनी हयसंग।
हर्षित सूरसमूह अति, देखि सैन्य चतुरंग ॥४५॥

यमुनाजीके चरणोंको दंडवत कर घोड़ेके साथमें सेना चली। योद्धाओंके समूह चतुरंगिणी सेना देखकर बहुत प्रसन्न चले जाते हैं।

बाल्मीकिथल सैन्य समेता। कानन घन गे कृपानिकेता ॥
सियसुत युगल वीर बरबंडा। भुजबल अमित दिनेस प्रचंडा ॥

और कृपानिधान सेना सहित वाल्मीकिके स्थानमें जो घने बनमें था पहुंचे, जहां सीताजीके दोनों बलवान् पुत्र थे, जिनकी भुजाओंका अपार बल सूर्यके समान प्रचण्ड था।

वीरबली हय देख्यो आई। पत्र बंध्यो सिर बांच्यो ताई॥
घोड़ा तिन तुरंत तरु बांध्यो। नेकु बिचार न उरमें साध्यो॥

उन बलवान् वीरोंने आकर घोड़ेको देखा और उसके शिरमें जो पत्र बंधा था उसे बांचा और उन्होंने तुरन्त घोड़ेको एक पेड़से बांध दिया, मनमें जरा भी विचार नहीं किया।

कटि कसि त्रोण हाथ धनु तीरा। समरहेतु उमगे बलबीरा॥
सूर सहस्र साठि हय साथा। आय गये जहं रघुकुलनाथा॥

और कमरमें तरकस बांधा, हाथमें धनुषबाण लेकर बली योद्धा लड़ाईके लिये तैयार हो गये। साठ हजार योद्धा जो घोड़ेके साथ थे वे भी रघुकुलनाथ कुमारोंके पास आ गये।

तहं तरु बांध्यो बाजि बिलोकी। बालक जानि सकल रिस रोकी॥
देहु तुरग घर जाहु सुहाये। धन्य मातु पितु जिन तुम जाये॥
मांगहु भीख समर चढ़ि भाई। क्षत्रियकुलहि कलंक लगाई॥

और वहां वृक्षसे घोड़ेको बँधा हुआ देख और योद्धाओंको बालक जानकर सबोंने क्रोध रोका और कहा कि घोड़ा देकर अच्छी भांति घर जाओ। वे मातापिता धन्य हैं, जिन्होंने तुमको उत्पन्न किया है। (तब कुमार बोले) हे भाइयो! लड़ाईमें चढ़कर भीख मांगते हो! यह क्षत्रियोंके कुलको कलंक लगाते हो!

छं०—जनि क्षत्रिकुलहिं कलंक लावहु समरसूर सुहावने॥
बलहीन तुरंग प्रवीन छांड्यो धरा बिनु भट जानने॥
सुनि बचन कटुक कठोर बालक जानि भट धावत भये॥
सर तानि एकहिं बार लव हंसि हने तनु जर्जर भये॥

तुम लड़ाईमें सुन्दर योद्धा हो, क्षत्रियोंके कुलको कलंक मत लगाओ, और तुमने जो बिना ही बलके घोड़ा छोड़ दिया सो क्या पृथ्वी योद्धाओंसे रहित जानी थी? ऐसे कडुए और कठोर वचन सुनते ही योद्धा उन्हें बालक जानकर दौड़े। तब लवने हंसकर एक ही बारमें तान तानकर ऐसे बाण मारे कि सबके शरीर जर्जर हो गये।

महि परे पुनि कछु भिरे योधा जाय रिपुहनसों कहा॥
मुनिबाल हति संग्राम सैन्यहि बाजि लै रणमहं रहा॥

सुनि कोप करि अति सत्रुहन तब सैन्य लै धावत भयो ॥
रणमाहिं गाजत बीर बांके कोप लखि लज्जित भयो ॥

कुछ योद्धा तो पृथ्वीपर गिर पड़े, कुछ फिर लड़ने लगे और जाकर शत्रुघ्नसे कहा कि मुनीश्वरके बालकने लड़ाईमें सेना मारी और घोड़ेको लिये लड़ाईमें डटा हुआ है। यह सुनकर शत्रुघ्न बहुत क्रोध करके सेना लेकर दौड़े। पर बांके योद्धा जो लड़ाईमें गर्जते हैं इनके क्रोधको देखकर लज्जित हो गये और कहने लगे कि –

सो०—सुन मुनिबालमराल। देहु अस्व तजि कोप निज।
पूजि तुमहिं तेहि काल। करिहहिं जन्म सफल प्रभु ॥४६॥

हे मुनीश्वरोंके हंस समान बालको ! अपना क्रोध छोड़कर घोड़ेको दो, उस समय तुम्हारा भी पूजन करके भगवान् अपना जन्म सफल करेंगे। यह सुन बालक बोले कि--

कौन नाम नृप किहि पुरवासी, फिरहु विपिन संग सैन्य प्रकासी ॥
छांड़ेउ बाजि हेतु किहि लागी, लिख्यो पत्र बांध्यो भय त्यागी ॥

हे राजा ! तुम्हारा क्या नाम है ? किस नगरके रहनेवाले हो, जो जंगलमें सेनाको साथ लिये प्रकाश करते फिरते हो ? घोड़ा किस कारण छोड़ा है ? और निडर होकर पत्र लिखकर क्यों बांधा है ?

नहिं तव तनु बल पौरुष भाई। छोड़हु पत्र बाजि गृह जाई ॥
सुनि रिपुहन कटु गिरा लजाने। गहहु अस्त्र अस कहि मुसकाने ॥

हे भाइयो ! जो तुम्हारे शरीरमें बल-पराक्रम नहीं है तो पत्र और घोड़ेको छोड़कर घर जाओ। शत्रुघ्न कड़वे वचन सुनकर लज्जित हो गये और मुस्कुराकर बोले कि हथियार हाथमें लो।

हमहिं प्रचारत नृप बल भारी। डरपहिं सिंह बाजते तारी ॥
अस कहि धनुषबाण कर लीना। मुनिवर विनय चरण सिर दीना ॥

आप बड़े बली राजा हैं जो ललकारते हैं, सो भला कहीं तालीके बजानेसे सिंह भी डरते हैं ? ऐसा कहकर हाथमें धनुषबाण लिया और श्रेष्ठ मुनीश्वरके चरणोंको शिर नवाकर प्रार्थना की।

मारेसि रथ सारथी तुरंगा। कोटिन बाण हने सब अंगा ॥
करि मूर्च्छित नृपकटक संहारा। खाहिं मांस अति गीध करारा ॥

रथ, घोड़े और सारथीको मारा और सब शरीरमें करोड़ों बाण मारे। राजाको मूर्च्छित करके राजाकी सेनाका नाश कर दिया। बड़े-बड़े भयंकर गिद्ध मांस खाने लगे।

दो०—एकहि एक प्रचार कर, हने सकल रण सूर ॥
आये तब रघुबीरपहँ, कायर करनी धूर ॥ ४७ ॥

एक एकको ललकार कर सब योद्धा लड़ाईमें मारे। तब काहिल अपनी करनीको धूल करके श्रीरामचन्द्रजीके पास आये।

पूछेहु सकल भानुकुलनाथा। रिपुके सबन कहे गुणगाथा ॥
मुनिबालक दोउ कटक संहारा। रिपुहन आदि समरमहँ डारा ॥

रघुनाथजीने सम्पूर्ण कथा पूछी तो सबने बैरीके गुणानुवाद कहे कि मुनिके बालकोंने सब सेना मार डाली और शत्रुघ्न आदिको लड़ाईमें गिरा दिया।

रिपुबालक सुनि बिकल खरारी। बिकल होय पुनि कहेउ पुकारी ॥
लक्ष्मण संग जाउ दोउ भाई। मुनिबालक बांध्यो बरियाई ॥

शत्रुओंको बालक सुनकर भगवान् व्याकुल हुए, फिर व्याकुल होकर पुकारके कहा, हे लक्ष्मण! तुम दोनों भाई साथ जाओ और मुनिके बालकोंको बरजोरी बांध लो।

मारहु जनि आनहु पुरमाहीं। ऋषिसुतबधन उचित नहिं काहीं ॥
चल्यो सेष संग सैन्य अपारा। आयउ तुरत समर जेहि मारा ॥

मारना मत, परन्तु नगरमें ले आओ, क्योंकि ऋषिके पुत्रोंको मारना योग्य नहीं। लक्ष्मण अपार सेनाको साथ लेकर चले और शीघ्र ही रणभूमिमें आ गये।

ले घर जीव जाहु मुनिबालक। दिनकरबंस देव द्विजपालक ॥
आंखिन ओट होहु अब ताता। लखि अति कोप बढ़त मम गाता ॥

और बोले, हे मुनिके बालको! तुम अपना जीव लेकर घरको जाओ, क्योंकि सूर्यवंश देवता और ब्राह्मणोंका पालन करनेवाला है! हे प्यारे! अब आंखोंकी ओटमें हो जाओ, क्योंकि देखकर मेरा शरीरमें बड़ा क्रोध उमड़ता है।

दो०—सुनि लक्ष्मणके बचन तब, बिहंसे बालक बीर।
अनुज बिलोकहु जाय अब, प्रबल महारणधीर ॥ ४८ ॥

तब लक्ष्मणके वचन सुनकर योद्धा बालक हंसे और कहा कि हे प्रबल रणधीर, पहले भाईको तो जाकर देखो।

अनुज बिलोकि बचन सुनि काना। धनुष चढ़ाय गहे कर बाना ॥
बेष बिलोकि बाल मुनि जाना। निजकुल समुझि करौं मन काना ॥

भाईका देखना कानोंसे सुनते ही धनुष चढ़ाकर हाथमें वाण लिये। परन्तु वेश देखकर मुनिके बालक जान कहा कि अपने कुलको समझकर मनमें हिचकता हूं, अर्थात् मेरे कुलमें ब्राह्मणोंको नहीं मारते हैं।

निज सहाय सठ आन बुलाई। केवल तोहिं हते न भलाई॥
सुनि कुस कठिन वाण संधाने। कांपी पुहुमि सेष अकुलाने॥

अरे मूर्खो! अपने हिमायतीको बुला लाओ; क्योंकि अकेले तुम्हारे ही मारनेसे अच्छा नहीं। कुशने सुनकर कठिन वाण संधान किये। पृथ्वी कम्पायमान हुई और शेषजी अकुलाये।

छूटे विसिष रहे नभ छाई। वाण भानुप्रतिबिंब छिपाई॥
रिपुहिं प्रबल लखि चला सकोपी। डरा न मनहिं रहा रथ रोपी॥

वाण जो छूटे सो आकाशमें ऐसे छा गये कि वाणोंसे सूर्यका प्रतिबिम्ब भी छिप गया और बैरीको महाबली देखकर क्रोध करके चला। मनमें डरा नहीं, रथको रोककर खड़ा हो रहा।

काटे विसिष विसिषसन भाई। कौतुक करहिं विविध खगराई॥
झपटि गदा लक्ष्मण तब झारी। गिर्‌यो भूमि कुस मूछित भारी॥

हे गरुड़! वाणसे वाण काट डाले और हे भाई! वे अनेक कौतुक करने लगे। तब लक्ष्मणने झपटकर गदा मारी तो कुश मूर्छित होकर गिर पड़ा।

दो०—मूच्छित कुसहि निहारि करि, धाये लव करि सोर।
आवत ही सर उर हन्यो, गिर्‌यो न महि बल जोर॥ ४९॥

कुशको मूर्छित देखकर लव बड़ा हल्ला करके दौड़ा और आते ही (लक्ष्मणजीके) हृदयमें वाण मारा। पर वे अपने बलके जोरसे पृथ्वीपर न गिरे।

मल्लयुद्ध दोउ भिरे प्रचारी। लरहिं सुखेन न मानत हारी॥
भिरहिं उपाय विपुल बल करहीं। गिरतहिं धरणि बहुरि उठि लरहीं॥

दोनों मल्ल युद्ध करके और ललकार कर कर लड़ने लगे। सुखपूर्वक लड़ते हैं और हार नहीं मानते। बहुतसे उपाय और बल करके लड़ते हैं और पृथ्वीपर गिरते ही फिर उठकर लड़ने लगते हैं।

विकल सैन्य सब भानु संहारी। सुमिरि कौसलाधीश खरारी॥
मारेउ वाण लवहिं क्षिति डारा। मूछित होय गिर्‌यो विकरारा॥

सब सेनाको व्याकुल देखकर और मरी हुई जानकर अयोध्याधिपति खरारी श्रीरामजीका स्मरण किया और लवको वाण मारकर पृथ्वीपर डाल दिया। वह मूर्छित और विकल होकर गिर पड़ा।

सुमिरि सीय मुनिचरण सुहाये। गतमूर्च्छा कुस आतुर आये॥
बिकल बिलोकि बंधु लघु जानी। चल्यो बीर मन बहुत गलानी॥

सीताजी और मुनीश्वरके चरणोंका स्मरण करनेसे ज्योंही कुशकी मूर्च्छा जाती रही, त्योंही लव शीघ्रतासे आया और छोटे भाईको व्याकुल हुआ देखकर योद्धा मनमें बड़ी ग्लानि मानकर चला।

लक्ष्मण देखि बीरवर धाये। धनुष बाण धरि आगे आये॥
सक्रजीत अरि जे सर मारेउ। ते सब बालक काटि निवारेउ॥

लक्ष्मणने देखा कि श्रेष्ठ योद्धा आया तो धनुष-बाणको लेकर आगे आये। लक्ष्मणजीने जो बाण मारे उन्हें सब बालकोंने काट कर अलग कर दिया।

दो०—रामानुज विस्मित बिकल, देख सबल आराति।
सीय त्याग उर सोच बड़, प्राणदेन बर भाति॥ ५०॥

बलवान शत्रुओंको देखकर लक्ष्मण दुःखी और व्याकुल हुए और हृदयमें सीताजीके त्यागनेका बड़ा शोच हुआ और प्राण छोड़ना ही अच्छा लगा।

कुस करि क्रोध बिसिख सो लीने। मंत्र प्रेरि मुनिवर जो दीने॥
नाक रसातल भूतलमाहीं। यह सर छुटे बचै कोउ नाहीं॥

फिर कुशने क्रोध करके वह बाण लिया जिसे श्रेष्ठ मुनिने मन्त्रित करके दिया था और कह दिया कि स्वर्ग, पाताल और मृत्युलोकमें इस बाणके छूटनेसे कोई न बचेगा।

मोहन अस्त्र नाम तेहि जानो। विष्णु महेस ब्रह्म महि जानी॥
मारेसि ताकि सेष उर माहीं। परे धरणि तल सुधि कछु नाहीं॥

उसका नाम मोहन अस्त्र था, जिसे विष्णु, महादेव और ब्रह्मा भी मानते हैं। सो तककर लक्ष्मणके हृदयमें मारा, जिससे वह पृथ्वीपर गिर पड़े और शरीरकी कुछ सुध नहीं रही।

चली सैन्य सब भागि अपारा। कोसलपुर महँ जाय पुकारा॥
करनी सकल युद्धकै बरणी। लक्ष्मण बीर परे जिमि धरणी॥

सब अपार सेना भाग चली और अयोध्यापुरीमें जाकर पुकार मचायी। सब युद्धकी करनीका वर्णन किया और जिस प्रकार योद्धा लक्ष्मण पृथ्वीपर गिरे थे वह सब कहा कि—

जेहि बिधि कटक सकल संहारा। निज लोचन हम नाथ निहारा॥
बय किसोर दोउ बाल अनूपा। तव प्रतिबिंब मनहुं सुरभूपा॥
काकपक्ष सिर धरे बनाई। बालक बीर बरणि नहीं जाई॥

हे स्वामिन्! जिस प्रकार सब सेना मारी सो सब हमने अपनी आंखोंसे देखी है। हे देवेन्द्र! दोनों सुन्दर बालक किशोर अवस्थावाले ऐसे हैं। मानों आपहीकी सूरत हैं। वे बालक मस्तकपर सुन्दर लटुरियां धारण किये हैं और ऐसे योद्धा हैं कि वर्णन नहीं किया जाता।

दो०-भरत जोरि करकै कहेउ, बचन अमित बिलखाय।
सीय त्याग फल दीन विधि, प्रभु कहि देखहु जाय॥ ५१॥

भरतने हाथ जोड़ बहुत दुःखी हो यह बचन कहे कि विधाताने सीताजीके त्यागनेका फल दिया है। यह सुन भगवानने कहा, तुम जाकर देखो।

अनुज समरमहं तुम हिय हारे। साजहु हय गज रथ मतवारे॥
रहो यज्ञ रिपु देखहु जाई। बालक रावणके दुखदाई॥

हे भाई! तुम लड़ाईसे हृदयमें हार गये, मतवाले घोड़े, हाथी और रथोंको सजाओ। यज्ञ भले ही रह जाय, पर मैं जाकर बैरियोंको देखूंगा, हो न हो वे रावणके दुःखदाई बालक हैं।

तीव्र बचन सुनि भरत लजाने। बहुत भांति रघुपति सनमाने॥
जाम्बवन्त कपिराज बिभीषण। द्विविद मयंद नील नल भूषण॥

कठोर बचन सुनकर भरत लज्जित हुए, तब श्रीरामचन्द्रजीने अनेक बार सत्कार किया और जाम्बवन्त, सुग्रीव, विभीषण, द्विविद, मयन्द, नील, और नल जो आभूषण रूप थे—

प्रथम सखा सब लिये बुलाई। हनुमदादि अंगद समुदाई॥
रिपुहिं मारकै समर भगाई। तात अनुज दोउ आनहु जाई॥

और हनूमान और अंगद आदिके समूह जो पहलेके मित्र थे उन सबको बुला लिया (और बोले कि) बैरियोंको मारकर और लड़ाईमें सेनाको भगाकर हे प्यारे! जाकर दोनों भाइयोंको ले आओ।

माथ नाय संग कटक बिसाला। चले भरत उर उपजी ज्वाला॥
सोणित सरिता समर बिलोकी। डरपेउ बीर आस रण रोकी॥

भरत माथा नवाकर बड़ी सेनाके साथ चले और हृदयमें महाक्रोध उत्पन्न हुआ। रणभूमिमें लोहूकी नदी देखकर योद्धा डरे और लड़नेकी आशा त्याग दी।

दो०—समर सीय दोउ बीर बर, आय गये बलवान।
देख डरे कपि भालु सब, तब बोलेउ हनुमान॥ ५२॥

सीताजीके दोनों पुत्र बलवान श्रेष्ठ योद्धा लड़ाईमें आ गये, जिन्हें देखकर सब रीछ बन्दर डरने लगे। तब हनूमान बोले।

धन्य मातु पितु जेहिं तुम जाये । पुरुष युगल घर जाहु सुहाये ॥
समरविमुख सुन भट बिलखाने ! हनुमत प्रति बोले रिस ठाने ॥

उन मातापिताको धन्य है जिन्होंने तुम्हें उत्पन्न किया है । तुम दोनों सुन्दर पुरुष हो, अपने घर जाओ । लड़ाईसे विमुख होनेका समाचार सुनकर योद्धा (लव कुश) क्रोधकर हनुमानजीसे बोले ।

नहिं बल होइ जाहु घर भाई । हतौं न ठौर जान कदराई ॥
भाषै वचन भरत सुनि काना । लेहु संभारि बाल धनु बाना ॥

हे भाई ! जो तुम्हें बल नहीं हो तो अपने घर जाओ, काहिल जानकर हम किसीको नहीं मारते । भरतने कानोंसे वचन सुनकर कहा, हे बालको ! धनुष-बाण सम्हाल लो ।

कटकटाय कपि भालुसमूहा । लीन्ह उपारि प्रबल तरुजूहा ॥
एकहि बार सकल तिन मारा । लवकाटहिं तिलसम करिडारा ॥

और रीछ-बन्दरोंके समूहने कटकटाकर बड़े बड़े वृक्षोंके समूह उखाड़ लिये । उन्होंने वे सब एक ही साथ मारे । लवने उन्हें काटकर तिलके समान कर डाले ।

रिपुसर काटि निमिष यकमाहीं । यथा मनोरथ खल मिटि जाहीं ॥
कर लव क्रोध बाण फटकारे । मारे बीर भूमि क्षण डारे ॥

एक पल भरमें वैरियोंके बाण ऐसे काट डाले जैसे दुष्टोंके मनोरथ मिट जाते हैं । लवने क्रोध करके बाण चलाये और योद्धाओंको मारकर क्षण भरमें पृथ्वीपर गिरा दिया ।

पु० छं०-पल भखहिं कंक कराल जहं तहं गीध सब प्रमुदित भये ।
तहं प्रेत सिद्ध समाज सोहत ब्याहप्रति मंगल ठये ॥
तहं डाकिनी मन मुदित डोलहिं साकिनी सोणितभरी ।
दोउ करन खैंचहिं कालिका सिवगण करत क्रीड़ा खरी ॥
अंतावरी गहि गर लपेटहिं पिवत सोणित आतुरे ।
गजखाल खैंचहिं भूत संकर प्रेत संगरचातुरे ॥
बैताल बीर कराल करवर करोकर इक कर धरे ।
वे भार रुधिर प्रबाह पूरण पान करत हरे हरे ॥

जहां-तहां विकराल गिद्ध और चील मनमें प्रसन्न हुए, मांस खाने लगे । वहां भूतों प्रेतोंका समाज शोभायमान हो गया और व्याहके समान आनन्द करने लगा । डाकिनी मनमें प्रसन्न हो होकर फिरने लगीं, शाकिनी लोहूसे

शोरबोर हो रही हैं, कालिका दोनों हाथोंसे लोथोंको खींचती हैं और महादेवजीके प्रेतगण बड़ी क्रीड़ा करते हैं। आंतोंको पकड़-पकड़कर गलेमें लपेटते और उतावलीसे रुधिर पीते हैं। लड़ाईमें चतुर महादेवके भूत-प्रेत हाथियोंकी खाल खींचते हैं, और कठिन बैताल वीर श्रेष्ठ हाथियोंकी सूंड़को हाथमें लेकर उनके रुधिरके बहावसे तृप्त होकर हर-हर कहकर पान करते हैं।

दो०—विषम युद्ध दोउ बंधु करि, जीते कपि संग्राम।
आयउ पुनि तहँ नृप भरत, सुमिरि बिधाता बाम॥ ५३॥

दोनों भाइयोंने कठिन युद्ध करके बन्दरोंको संग्राममें जीत लिया, तब भरतजी विधाताको प्रतिकूल समझ उस युद्ध स्थानमें आये।

कपि भालुहिं घायल सब आवहिं। बाणत्रास मन अतिदुख पावहीं॥
जामवन्त कपिराज बुलाये। अंगद हनूमान सुन आये॥

सब रीछ बन्दर घायल हुए आते हैं और बाणोंके भयसे मनमें बड़ा दुःख पाते हैं। (भरतने) जाम्बवन्त और सुग्रीवको बुलाया और सुनते ही अंगद और हनुमान आये, (फिर भरतजीने कहा कि)

सब मिलि सहित निसाचरराजा। धरि आनहु दोउ बालसमाजा॥
आय जुटे कपि भालु भवानी। तिन कछु प्रभुमहिमा नहिं जानी॥

सब मिलकर विभीषण सहित जाओ और दोनों भाइयोंको पकड़ लाओ। महादेवजी कहते हैं कि हे पार्वती! रीछ बन्दर आकर लड़ने लगे उन्होंने कुछ भगवानकी महिमा नहीं जानी।

बोले कुस सुन बालिकुमारा। तुम बल बिदित जान संसारा॥
पितहिं मराय मातु पर हेली। सकल लाज आये तुम पेली॥

कुश बोले, हे अंगद! सुनो, तुम्हारा बल संसारमें प्रकट है। तुम पिताको मरवाकर, माताको पराये घरमें करके और सब लज्जाको छोड़कर आये हो।

सो फल लेहु समरमहं आजू। त्यागहु सकल कलंकसमाजू॥
सुनत क्रोध अंगद उर छावा। गहि गिरि एक ताहि पर धावा॥

आज उसका फल लड़ाईमें लो और सब कलंकको मिटाओ। सुनते ही अंगदके हृदयमें क्रोध छा गया और एक पर्वत लेकर उसपर दौड़ा!

दो०—आवत सैल बिसाल लखि, तिलसम सर हति कीन॥
जस अंगद बल गर्व अति, तस फल रघुपति दीन॥ ५४॥

समरधीर दोउ बाल विराजे। निरखि भालुकपि मनअति लाजे॥
ऐंचि धनुष गुण छांड़ेउ सायक। कपिपति आदि हने कपिनायक॥

लड़ाईमें धीरजवान् दोनों कुमार विराजमान हुए, जिन्हें देखकर रीछ-बन्दर बहुत लज्जित हुए। धनुषकी डोरी खींचकर बाण छोड़े और सुग्रीव आदि बन्दरोंके स्वामी मारे।

मूर्च्छित सैन्य परी महिमाहीं। बचो न कपि घायल जो नाहीं॥
देखि भरत सब सैन निपाती। कोपि बाण मारेउ लव छाती॥

सेना मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़ी, एक भी बन्दर न बचा जो घायल न हुआ हो। भरतने सब सेनाको पड़ी हुई देख क्रोध करके लवकी छातीमें बाण मारा।

मूर्च्छित विकल परेउ महिमाहीं। अति सचेत तनुकी सुधि नाहीं॥
दुखित देखि कुस अमित रिसाना। चाप चढ़ाय बाण संधाना।

वह मूर्छित और व्याकुल होकर पृथ्वीमें ऐसा बेहोश गिर पड़ा कि शरीरकी सुध नहीं रही। (लवको) दुःखी देखकर कुशने बहुत क्रोध कर बाण संधान किया।

स्रवणप्रयंत खैंचि धनु बीरा। भरतहृदय मारेउ सत तीरा॥
भयो युद्ध तहं विविध प्रकारा। बीर बांकुरे सुभट अपारा॥

और उस योद्धाने कानतक भरतके हृदयमें सौ बाण मारे। तहां बांके वीर अपार योद्धाओंमें अनेक प्रकारका सुन्दर युद्ध हुआ।

दो०—समरभूमि सोये भरत। लवहिं लीन उर लाय।
सुमिर मातु गुरुचरणयुग। रहे समर जय पाय॥ ५६॥

भरत रणभूमिमें सो गये और जब लव जागे तब कुशने उन्हें हृदयसे लगा लिया। फिर वे दोनों माता और गुरुके चरणोंका स्मरण कर लड़ाईमें जीत पाकर खड़े रहे।

आये खबर लेन चर चारी। भरतसैन्य तिन सकल निहारी॥
सोणित सरिता देखि डराने। हय गय बहे जात रथ जाने॥

चार दूत जो समाचार लेनेके लिये आये थे उन्होंने भरतकी सारी सेना देखी और लोहूकी नदी देखकर डरे जिसमें घोड़े, हाथी और रथ बहे जाते थे।

देखी सरित भयंकर भारी। कठिन कराल सुनहु उरगारी॥
बहुतक उछरि बूड़ि पुनि जाई। चमै मनहु कच्छपकी नाई॥

हे गरुड़! सुनो, बहुत कठिन बड़ी भयंकर नदी देखी। बहुतेरे उछलके डूब जाते थे। (उस नदीमें) ढाल मानों कछुए थे।

महातरंग वीर बह जाहीं। घायल पैर तीर लपटाहीं॥
फिरे दूत कोसलपुर आये। समाचार सब राम सुनाये॥

बड़ी बड़ी तरंगोंमें योद्धा बहे जाते थे और घायल पैरके किनारे लग जाते थे। दूत लौटकर अयोध्यापुरीमें आये और सब समाचार श्रीरामचन्द्रजीको सुनाये।

चर वर वचन सुनत दुख पावा। त्यागेउ मख निज कटक बनावा॥
चले सकोप कृपालु उदारा। आये जहं प्रभु कटक संहारा॥
मुनिवर बालक देखि सुहाये। सिर नवाय प्रभु निकट बुलाये॥

श्रेष्ठ दूतोंके वचन सुनते ही (भगवान्ने) दुःख पाया और यज्ञ छोड़कर अपनी सेना तैयार कर दयानिधान भगवान् क्रोध करके चले और वहां आये जहां सेना मारी गई थी। श्रेष्ठ मुनिके सुहावने बालक देखकर भगवान्ने माथा नवाकर पास बुला लिये।

दो०—पूंछेउ बाल बुलाय दोउ, कहहु मातु पितु नाम।
देश ग्राम निज कहहु सब, बड़ जीतेहु संग्राम॥ ५७॥

दोनों बालकोंको बुलाकर पूछा कि अपने मातापिताके नाम बताओ और देश और नगरका नाम कहो। तुमने बड़ा युद्ध जीता!

गहहु अस्त्र जनि कहहु कहानी। पूछहु नाम गांव कह जानी॥
समर बात बहु अति कदराई। छाड़ि सोच अब करहु लराई॥

(लव-कुशने कहा) हथियार पकड़ो, कहानी मत बको, तुम नाम-गांव क्या जानकर पूछते हो? लड़ाईमें बहुत बात करनी अत्यन्त ही कायरता है, इसलिये सोच छोड़कर अब लड़ाई करो।

बंस नाम बिनु पूछेहु ताता। हतौं न बाण मनोहर गाता॥
माता सीयजनककी जाता। बालमीकि पाल्यो मुनि ताता॥

(श्रीरामचन्द्र बोले) हे प्यारे! कुटुम्बका नाम पूछे बिना सुन्दर शरीरमें बाण न मारूंगा। (तब उन्होंने कहा) हमारी माता सीताजी जनककी पुत्री हैं और बाल्मीकि मुनिने हमारा पालन किया है।

पितावंस नहीं जानहिं आजू। लव कुस नाम सुनहु रघुराजू॥
सुनि सब कथा राखि मनमाहीं। बालि बिलोक बधब भल नाहीं॥

पिताके वंशको अब भी नहीं जानते। हे रघुराज! लव-कुश हमारा नाम है। सब कथा सुनकर मनमें रख ली और बालक देखकर विचारा कि इनका मारना अच्छा नहीं (और बोले)—

आवत सुभट समूह हमारे। लरिहहिं तुमसन समर सुखारे॥
अस कहि अंगद नील उठावा। जाम्बवंत कपिपतिहिं बुलावा॥

हमारे साथ सुन्दर योद्धा आते हैं वे तुमसे लड़ाईमें भलीभांति लड़ेंगे। ऐसे कहकर अङ्गद और नीलको उठाया और जाम्बवन्त और सुग्रीवको बुलाया।

छं०—कपिराज अंगद जाम्बवानहि बोलि निसिचरनायकं।
हनुमान द्विविद मयंद नीलहि सुभट जे अतिलायकं॥
तव हरण सूलहि पाप नासन कह्यो हंसि रघुनन्दनं।
भरतादि रिपुहन सहित लक्ष्मण परे खलमदगंजनं॥
लंकेस आदिक सुभट मारे बीर जे महिमंडनं।
ते आज बालक बिप्रसो रण परे रिपुमदगंजनं॥
कुलकान अब निज जान लरहु सो सैल तरु बहु लै चले।
दै हूह बानर जूह पर्वत डारि पुनि रण मुरि चले॥

सुग्रीव, अङ्गद, जाम्बवन्त और विभीषण तथा हनुमान, द्विविद, मयंद और नील जो अच्छे सुन्दर योद्धा थे उनको बुलाकर दुःखभंजन पापनाशक श्रीरामचन्द्रजीने हंसकर कहा कि दुष्टोंके अभिमानका नाश करनेवाले भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण आदि लड़ाईमें पड़े हैं। जिन्होंने रावण आदि योद्धाओंको मारा वे पृथ्वीके आभूषण, वैरियोंके मदका नाश करनेवाले, आज ब्राह्मणोंके बालकोंसे लड़ाईमें हारे पड़े हैं। कुलकी कानि जानकर लड़ो। (यह सुन) योद्धा बहुतसे वृक्ष और पर्वत लेकर चले और बन्दरोंके समूह हूह शब्द करके पर्वत डालनेके लिये लड़ाई करनेको फिर लौट चले।

दो०—सावधान धनु बान लै, धायउ लव बलवान।
संमुख आनि बिभीषणहिं, बोलेउ बहुरि रिसान॥ ५८॥

सावधानीसे धनुष-बाण लेकर बलवान लव आया और विभीषणके सामने आकर फिर क्रोध करके बोला।

सुनि सठ बंधुहिं समर जुझाई। सत्रुहिं मिलेउ निपट कदराई॥
पिता समान बंधु बड़ तोरा। त्रिया तासु लै घर बर जोरा॥

अरे मूर्ख ! सुन, भाईको लड़ाईमें मरवाकर और बहुतसी कायरतासे वैरीसे आ मिला। तेरा बड़ा भाई जो पिताके समान था उसकी स्त्रीको जोरावरीसे घरमें रक्खा।

पापी मातु कही कई बारा। सो पत्नी यह धर्म तुम्हारा ॥
बूड़ मरहु सागर महं जाई। मर गर काटि अधम अन्याई ॥

अरे पापी ! कई बार उसको माता कहा होगा, उसे ही स्त्री कर ली, यही तेरा धर्म है ? समुद्रमें जाकर डूब मर। अरे नीच ! अन्यायी ! गला काटके मर जा।

समरभूमि मम सन्मुख आवा। लाज होत नहिं गाल बजावा ॥
आंखिन आगे ते हटि जाई। नहिं तौ मृत्यु निकट चलि आई ॥

रणभूमिमें मेरे सामने आया, तुझे गाल बजानेमें लाज नहीं आती ! तू आंखोंके सामनेसे हट जा, नहीं तो मौत तेरे पास आ गई है।

सुनि खिसियान गदा तेहिं लीनी। सर हति खंड खंड लव कीनी ॥
सात बाण मारेउ करि क्रोधा। गिर्‌यो धरणि सर लागत योधा ॥
गिरत कोपि कर सूल चलाया। लव तनु तड़ितसमान समाया ॥

यह सुनकर उसने खिसियाकर गदा ली। लवने वाणोंसे काटकर उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले और क्रोध करके सात बाण मारे। बाण लगते ही योद्धा पृथ्वीपर गिर पड़ा। गिरते ही (विभीषणने) क्रोध करके त्रिशूल चलाया। वह लवके शरीरमें बिजलीके समान समा गया।

दो०—दूरि सूल कर बंधु दोउ, सर मारेउ पुनि दाप।
जाम्बवन्त कपिराज नल, अंगद करहिं विलाप ॥ ५९ ॥

दोनों भाइयोंने त्रिशूलको दूरकर फिर घमंडसे बाण मारे। जाम्बवन्त, सुग्रीव, नल और नील विलाप करने लगे।

जो गिरि तरु कपि डारहिं आई। रज समान तेहि देहिं उड़ाई ॥
निज बाणन कपि घायल कीने। जो जेहिं उचित सो तस फल दीने ॥

बन्दर जो वृक्ष और पर्वत आकर डालें उसे (लव-कुश) धूलके समान उड़ा दें। अपने बाणोंसे बन्दरोंको घायल किया और जो जिसको उचित था उसको वैसा ही फल दिया।

रघुकुल-तिलक प्रचारति पाछे। बीर धुरिण हते सब आछे ॥
अङ्गद हनूमान भट भारी। ते धाये तरु सैल उपारी ॥

पीछेसे रघुवंशतिलक लव-कुशने जो वीरोंमें अच्छे पराक्रमी थे उनको ललकारा। अङ्गद और हनुमान जो बड़े योद्धा थे वृक्ष और पर्वत उखाड़-उखाड़ कर दौड़े।

डारि सैल दोउ भिरे रिसाई। खड्ग हने वीर बरिआई॥
कपिन कोप करि उर हत तेहीं। जिमि खग मसक चाटि गजदेहीं॥

दोनों जने पर्वत डालकर क्रोधकर लड़े। उन्हें वीर कुमारोंने तलवारोंसे मारा। फिर बन्दरोंने क्रोध करके हृदयमें चोट मारी जो ऐसी लगी जैसे कोई पक्षी या मच्छर हाथीको चाटे।

हति दोनों कपि भूमि गिराये। जाम्बवन्त कपिपतिपहं आये॥
इहि तनु कोटिक समर लड़ाई। जीते लड़े बहुत हम भाई॥

और जब दोनों बन्दर मारकर पृथ्वीपर गिरा दिये तब तो जाम्बवन्त सुग्रीवके पास आये और बोले, हे भाई, इस शरीरसे रणभूमिमें करोड़ों युद्ध हमने जीते हैं।

दो०—ये बालक त्रिभुवन बली, जीत सकै नहिं कोय।
चलहु प्राण दीजे समर, अमर जगत नहिं होय॥ ६०॥

परन्तु ये बालक तीनों लोकोंमें बलवान् हैं। इनको कोई नहीं जीत सकता, चलकर लड़ाईमें प्राण दो, संसारमें कोई अमर नहीं है।

आये भालु बली भट नाना। तानि सरासन सर संधाना॥
हृदय तानि लव मारेउ सायक। योजन सात गयो कपिनायक॥

तब तो अनेक बली योद्धा रीछ-बन्दर आये और धनुष तानकर बाण संधान किये। लवने तानकर हृदयमें ऐसा बाण मारा जिससे सुग्रीव सात योजन जा पड़ा।

घायल भालु लपेटे जाहीं। मल्लयुद्ध कुस कीन्ह तिन्हाहीं॥
निजबल ऋच्छहिं अवनि पछारा। दुइ कर चरण बांधि बिकरारा॥

तब तो घायल रीछ-बन्दर लिपटने लगे। कुशने उनसे मल्लयुद्ध किया और अपने बलसे जाम्बवन्तको पृथ्वीपर पछाड़ दिया और दोनों हाथ-पैर बांधकर व्याकुल कर दिया।

हनुमंतहिं बांध्यो लव धाई। राखेउ निकट अस्वथल लाई॥
रखवारी छाँड़ेहु कुस वीरा। आप गयो रघुनायक तीरा॥

लवने दौड़कर हनुमानको बांध लिया और घोड़ा जहां था उस जगहपर लाकर रक्खा। वीर कुशको तो रखवालीपर छोड़ा, आप श्रीरामचन्द्रजीके पास गया।

देखेउ रथपर श्रीपति सोये। फिरेउ बीर लव लाज बिगोये ॥
सुभग अस्त्र पट भूषण नाना। चले अस्वधरि लै हनुमाना ॥

पर श्रीरामचन्द्रजीको रथपर सोये हुए देख वीर लव लज्जासे लौट आया। सुन्दर हथियार, अनेक वस्त्र तथा आभूषण घोड़ेपर रखकर और हनुमानको साथ लेकर चला।

छं०—सुभ अस्त्र पट भूषण सुमर्कट ऋच्छसंग हय घर चले।
सिय निकट नायो माथ दोउ सुत भेंट भूषण जे भले ॥
पहिचान कपि दोउ निरखि भूषण सहमि सिय धरणी परी।
इहि बीच मुनिवर सघन आये सियहिं अति बिनती करी ॥
हनुमान भालुहिं छोड़ बेगहिं त्यागि बहु समुझायऊ।
रिपुदमन लछिमन सहित भरतहिं राम समर सुवायऊ ॥
सुत कीन्ह कर्म कलङ्क कुलमहं मोहिं बिधि बिधवा करी।
तजि सोच चंदन अगर आनहु जाउं पियसंग अब जरी ॥
मुनि धीर जानकि देइ लवकुस संग लै सादर चले।
रण देखि बालक चरित देखत बिहंसि मन प्रमुदित भले ॥
रथ देखि हय पहिचानि प्रभुकहं जाय मुनि आगे भये।
उठि बैठु कोशलनाथ आरत तनय तव आगे छये ॥

सुन्दर हथियार, वसन, भूषण और हनुमान तथा रीछोंके साथ घरको चले और सीताजीके पास दोनों पुत्रोंने आकर माथा नवाया। अच्छे अच्छे गहने भेंट किये। सीताजीने दोनों बन्दरोंको पहिचाना और आभूषणोंको देखकर मुरझाकर पृथ्वीपर गिर पड़ीं। इसी बीचमें श्रेष्ठ मुनीश्वर वनसे आ गये और सीताजीने बहुत प्रार्थना की, और हनुमान तथा जाम्बवन्तको शीघ्र छोड़ो, यह कहकर बहुत समझाया कि हे पुत्र! शत्रुघ्न, लक्ष्मण, भरत, और श्रीरामचन्द्रजीको लड़ाईमें सुला दिया सो हे पुत्र! तुमने कुलमें कलंक लगाया और मुझे ब्रह्माने विधवा किया, अब सोच छोड़कर चन्दन और अगर लाओ जिससे मैं स्वामीके साथ सती हो जाऊं। धीर मुनीश्वर सीताजीको धीरज देकर लव-कुशको आदरके साथ लेकर रणभूमिमें आये और बालकोंके चरित्रको देखकर और हंसकर मनमें बड़े प्रसन्न हुए। फिर रथ देख घोड़ोंको पहिचान मुनीश्वर भगवानके आगे खड़े हुए और कहा, हे कोशलनाथ! उठ बैठो, ये तुम्हारे दीन पुत्र आगे खड़े हैं।

सो०—सुनि मुनिवर वर बैन, जागे रघुपति भय हरन ।
बिहंसि उघारे नैन, लीन्हे हृदय लगाय मुनि ॥ ६१ ॥

श्रेष्ठ मुनिके सुन्दर वचन सुनकर भयहारी श्रीरामचन्द्रजी जगे और हंसकर नेत्र उघारे तो मुनीश्वरने उन्हें हृदयसे लगा लिया ।

प्रभुहिं देखि मुनि अति हर्षाने । बार बार निजभाग्य बखाने ॥
जेहि बिधि सेष सीय बन आनी । मुनि सो सबही कह्यो बखानी ॥

भगवानको देखकर मुनीश्वर बहुत प्रसन्न हुए और बार-बार अपने भाग्यकी प्रशंसा की, जिस भांति लक्ष्मण सीताजीको वनमें लाये थे सो सब मुनीश्वरने वर्णन कर कहा ।

लवकुसकथा सकल मुनि भाखी । सिव बिरंचि सूरज कर साखी ॥
मिले तनय दोउ हृदय लगाई । सुधावर्ष सुर सैन्य जिवाई ॥

मुनीश्वरने महादेव, ब्रह्मा और सूर्यको साक्षी करके लव-कुशकी सब कथा कही । तब श्रीरामजी दोनों पुत्रोंको छातीसे लगाकर मिले और देवताओंने अमृतकी वर्षा करके सेना जिवाई ।

भरत आदि जागे सब भ्राता । लक्ष्मण चले जहां सिय माता ॥
बहुरि राम लक्ष्मणहिं बुलाई । सुनहु तात अस बचन सुनाई ॥

भरत आदि सब भाई जगे और लक्ष्मण सीता माताके पास चले । फिर श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणको बुलाकर कहा, हे प्यारे ! सुनो, मेरे ये वचन सुनाकर

ऐसे बचन मानि मम भाई । सियसन शपथ लेहु तुम जाई ॥
लक्ष्मण जाय सीस सिय नावा । कुसल कही बहुबिधि समुझावा ॥
हरिइच्छा सियमन अस आवा । सेष सहसफणि आनि दिखावा ॥

हे भाई ! मेरा कहा मानकर तुम जाकर सीताजीसे शपथ लो । लक्ष्मणने जाकर सीताजीको मस्तक नवाया और कुशल कहकर बहुत भांति समझाया । भगवानकी इच्छासे सीताके मनमें भी ऐसे ही आ गया, शेषजीने आकर हजार फण दिखलाये ।

दो०—जटित मणिन सिंहासनहिं, सादर सीय चढ़ाय ।
भये अलोप पतालमहं, महिमा किमि कहि जाय ॥ ६२ ॥

और मणियोंसे जड़े हुए सिंहासनपर आदरसहित सीताजीको चढ़ाकर पातालमें अलोप हो गये, वह महिमा कैसे कही जाय ।

लक्ष्मणचरित देखि सब ठाढ़े। नयन प्रवाह चले अति गाढ़े॥
सकल चरित सुनि कृपानिधाना। चलन हमार सीय मन जाना॥

सब लोग और लक्ष्मणजी खड़े-खड़े चरितको देखते रहे और उनके नेत्रोंसे बहुत जल बह चला। दयाके निधान भगवान्‌ने सब चरित सुनकर जाना, सीताजीने हमारा चलना मनमें जान लिया।

तनयसहित निजपुर प्रभु आये। दान दीन सुभ यज्ञ कराये॥
जेहि जेहि बिधि सुर आयसु दीने। कोटि कोटि बिधि सोइ प्रभु कीने॥

सो पुत्रोंसमेत भगवान् अपने नगरमें आये और दान देकर शुभ यज्ञ किया। जिस-जिस प्रकार देवताओंने आज्ञा दी उसीका भगवान्‌ने करोड़ों भांतिसे पालन किया।

कोटिक धेनु धाम धन धरणी। दीन कृपानिधिको सक बरणी॥
भोजन बिबिध भांति करवाये। बिदा कीन्ह मुनिबृन्द बुलाये॥

करोड़ों गौ, धन, धाम और पृथ्वी भगवान्‌ने दी, जिनका कौन वर्णन कर सकता है? मुनीश्वरोंके समूह बुला अनेक प्रकारके भोजन कराकर विदा किये।

जनकहिं पूजि बिदा प्रभु कीना। सुत प्रभु पूजि पयोदक लीना॥
आये जनक गुरुहिं पहुंचाई। बैठे प्रभु महिदेव बुलाई॥

जनकको पूजनकर भगवान्‌ने बिदा किया और भगवान्‌के दोनों पुत्रोंने पूजन करके चरणोदक लिया। जनकको गुरुसमेत पहुंचाकर आये और भगवान् ब्राह्मणोंको बुलाकर बैठे।

दो०—लक्ष लक्ष बर धेनु धन, पूजि पूजि द्विज पाय।
एक एक बिप्रन दई, हर्षित कोसल राय॥ ६३॥

श्रीरामचन्द्रजीने प्रसन्नतासे ब्राह्मणोंके चरणोंका पूजन करके एक-एक ब्राह्मणको लाख-लाख श्रेष्ठ गौएं और द्रव्य दिये।

गे सब मुनि सज्जन निज धामा। पायो अमित अमित सुखरामा॥
पुरबासी आये सब झारी। सुनहिं पुराण अनन्द सुखारी॥

सब मुनीश्वर और सज्जन अपने-अपने स्थानको गये और श्रीरामचन्द्रजीने बड़ा सुख पाया। सब पुरवासी आये और आनन्दपूर्वक पुराण सुनकर सुखी हुए।

जे जड़ चेतन जीव घनेरे। सचराचर कोसल पुर केरे॥
तिन सुख बढ़त सुनत सुरराया। करहिं बिनोद बिहाय अमाया॥

जो जड़-चैतन्य अनेक चराचर जीव अयोध्यापुरीके थे, उनके सुखको बढ़ता हुआ सुनकर इन्द्र भी मायारहित हो आनन्द मनाता है।

इहि बिधि बिपुल काल चलि गयऊ। निजपुरगमन सो अवसर भयऊ॥
बीती अवधि ब्रह्म तब जानी। नारदमुनिसन कहा बखानी॥

इस भांति बहुतसा समय बीत गया, फिर अपने-अपने स्थानमें जानेका समय हुआ। तब ब्रह्माने अवधि बीती जानी और नारदमुनिसे वर्णन कर कहा कि—

निजपुर आवन कहहिं खरारी। धर्मराज कहं करहु हंकारी॥
बिनती बहु बिरंचि तब भाखी। चले धर्म रघुपति उर राखी॥

भगवान् अपने नगरको आया चाहते हैं। धर्मराजको बुलाओ तब ब्रह्माने बहुतसी प्रार्थना की और धर्मराज श्रीरामचंद्रजीको हृदयमें धारणकर चले।

दो०—आयउ यम रघुबीरपुर। मुनिवर वेष बनाय॥
तेजपुंज सुंदर तरुण। कटि मृगत्वचा सुहाय॥ ६४॥

तेजके पुंज तरुण अवस्थावाले, जिनकी सुन्दर कमरमें मृगचर्म शोभायमान है ऐसा श्रेष्ठ मुनिका वेश धरकर यमराज अवधपुरीमें आये।

द्वारपाल लक्ष्मणकहं जानी। बोलेउ तापस अति मृदुबानी॥
तुरत शेष तब खबर जनाई। सुनत बचन आये रघुराई॥

लक्ष्मणको द्वारपाल जान तपस्वी बहुत मीठी वाणीसे बोले। लक्ष्मणजीने शीघ्र ही खबर कही, सो वचन सुनते ही श्रीरामचन्द्रजी आए।

मुनिहिं निरखि प्रभु कीन्ह प्रणामा। सादर उचित कहेउ श्रीरामा॥
अर्घ्य दीन आगे बैठारी। मुनिवर सुन्दर गिरा उचारी॥

मुनिको देखकर भगवानने प्रणाम किया और आदरसहित श्रीरामचन्द्रजीने उचित वचन कहे। आगे बिठला कर अर्घ्य दिया तब श्रेष्ठ मुनिने सुन्दर वाणी कही—

सुनु सर्वज्ञ कृपालु दिनेशा। आयउं मुनिवर तापसवेशा॥
हम तुम रहे और ना कोई। तिसरे सुनत नास तेहि होई॥

हे सर्वज्ञ! हे कृपालु आप सूर्य हैं, सुनिये मैं श्रेष्ठ मुनि तपस्वीका वेश धारण करके आया हूं। सो हम तुम ही रहें और कोई न रहे (तब मैं कहूंगा), क्योंकि तीसरेके सुनते ही उसका नाश हो जायगा।

14764

सुनै सब्द तेहि देउं सरापू। बिधि हरि हर आवें जो आपू॥
सुनहु लषण चलि बैठहु द्वारे। ना कोउ आव न गिरा उचारे॥
इतनेउ पर आवै पुनि कोई। मरहि सत्य यह बृथा न होई॥

और जो शब्द सुनेगा उसे शाप दूंगा चाहे वह साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु, महादेव क्यों न हो। (भगवान् बोले) हे लक्ष्मण! सुनो, चलके द्वारपर बैठो। न कोई आने पावे, न शब्द करे। इतना कहनेपर भी जो फिर आवेगा, तो सत्य ही वह मरेगा, यह बृथा नहीं हो सकता।

दो०—बोलेउ तापस बचन मृदु, पाहि पाहि रघुनाथ।
कहा सकल इतिहास मुनि, कहि पुनि नायो माथ॥ ६८॥

तपस्वी कोमल वचन बोला, हे श्रीरामचन्द्रजी! रक्षा करो! रक्षा करो!! फिर सब इतिहास कहकर मुनिने बार-बार माथा नवाया।

प्रभु इच्छा भावी बलवाना। दुर्बासा मुनि आय तुलाना॥
मुनिहिं देखि लक्ष्मण चलि आगे। गये निकट बिनती अनुरागे॥

भगवान्‌की इच्छा होनहार बलवान् है। इस समय वहां दुर्वासा ऋषि आकर प्राप्त हुए। मुनीश्वरको देखकर आगे बढ़े और पास जाकर प्रीतिसे प्रार्थना की।

पूंछेउ मुनि कहं रघुकुलईसा। जाउं तहां मैं सुनहु अहीसा।
जो उत्तर प्रति करिहौ आजू। भस्म करौं तव घर पुर राजू॥

मुनीश्वरने पूछा, रामचन्द्रजी कहां हैं? हे लक्ष्मण! सुनो! मैं वहां ही जाता हूं। और जो प्रत्युत्तर करोगे तो अभी तुम्हारे घर, नगर और राज्यको भस्म कर दूंगा।

कंपेउ लषण सुनत मुनिबानी। निजबध जान सो चलेउ भवानी॥
दोउ कर जोर कहे प्रभुसनहीं। दुर्बासा मुनि आवन चहहीं॥

लक्ष्मण मुनिकी वाणी सुनकर कम्पायमान हुए और हे पार्वती! अपना मरण जानकर वह चले। दोनोंने हाथ जोड़कर भगवान्‌से कहा कि दुर्वासा ऋषि आना चाहते हैं।

बड़ अपराध कीन्ह तुम भारी। काल कर्मगति टरै न टारी॥
कीन्ह बचन दिनकरकुलकेतू। सुनहु खगेस कथाकर हेतू॥

भगवान् बोले, हे प्यारे! तुमने बड़ा अपराध किया, कालकर्मकी गति टालनेसे नहीं टलती। रामचन्द्रजीने वचन पूरा किया; यही कथाका कारण है सो हे गरुड़, सुनो।

दो०—तुरत कहेउ मुनि आनहू , सादर कृपानिधान ।
चलहु बेगि मुनि तुरत अब , कहा राम भगवान ॥ ९२ ॥

दयाके समुद्र भगवान्‌ने कहा, मुनिको शीघ्र ही ले आओ । तब लक्ष्मणने कहा, हे मुनीश्वर अब शीघ्र चलिये, भगवान् रामचन्द्रजीने कहा है ।

छं०—अति तेजपुंज बिलोकि प्रमुदित उचित उठि आसन दियो ।
जल आनि सादर चरण धोये सुभग पादोदक लियो ॥
जन जानि मुनिवर देहु आयसु बेगि सो सादर करौं ।
बहुकाल क्षुधित कृपायतन अब असन बिन भूखो मरौं ॥
मन भाव भोजन दीन रघुपति बहुत बिधि बिनती करी ।
संतोष पाय मुनीस अस्तुति करि विनय आसिषभरी ॥
करि बिदा मुनिवर देखि लक्ष्मण हृदय दारुण दुःख भये ।
भरतादि अनुजसमेत पुरजन ताहि छिन देखत भये ॥
पद बंदि ठाढे जोरि दोउ कर बदन लखि अति कंपही ।
भरि नयनपंकज नीर आरत भरतसम प्रभु सब कही ॥
अब गुरुहिं आनहु बेगि सादर दुखित अति आतुर गये ।
सब कथा गुरुहिं सुनाय आतुर यान चढ़ि आवत भये ॥
आये बसिष्ठ बिलोकि रघुपति बिकल उठि चरणन परे ।
संवाद सुनि मुनि समय जान्यो लागि हैं हमको हरे ॥
सुनि बचन सेष विचार निजउर राम बिन धिक जीवना ।
गहि चरण सरयू तीर आये देखि जल सुभ पीवना ॥

अत्यन्त तेजस्वी मुनिको देखकर भगवान्‌ने प्रसन्नतासे उठकर उचित आसन दिया, जल लाकर आदर समेत चरण धोये और सुन्दर चरणोदक लिया और बोले, हे मुनिराज ! मुझे दास जानकर आज्ञा दीजिये, जिसे आदरसमेत शीघ्र करूं । तब मुनि बोले, हे दयानिधान ! मैं बहुत समयसे भूखा हूं । बिना भोजनके मरता हूं । रामचन्द्रजीने मनभाते हुए भोजन देकर बहुत प्रकार प्रार्थना की । तब सन्तोष पाकर मुनीश्वरने स्तुति और

प्रार्थना करके आशीर्वाद दिया। श्रेष्ठ मुनिको विदाकर लक्ष्मणको देखकर भगवान्के हृदयमें कठिन दुःख हुआ, जिसको भरत आदि भाइयों सहित नगरके सब लोग उस समय देखने लगे। भगवान्के चरणोंको दण्डवत कर दोनों हाथ जोड़कर खड़े हुए और जब मुखको देखकर अत्यन्त कांपने लगे तब भगवान्ने कमल समान नेत्रोंमें जल भरकर और आर्त होकर सब बात भरतसे कही कि अब आदरसमेत गुरुको शीघ्र लिवा लाओ, सो भरत दुखी हो बहुत शीघ्रतासे चले और सब कथा गुरुको सुनाय रथपर चढ़ाकर जल्दीसे आये। वशिष्ठजीको आये देख रामचन्द्रजी व्याकुल हुए और उठकर चरणोंमें गिर पड़े। संवाद सुनते ही मुनिने उस समय जाना कि भगवान् हमको त्याग करेंगे और वचन सुनकर लक्ष्मणने अपने हृदयमें विचारा कि रामचन्द्रजीके बिना जीवनको धिक्कार है। सो उनके चरण छूकर सरयूके किनारेपर आये और पवित्र जलका आचमन किया।

दो०—कटि प्रमाण जलमध्यमें, कीनो ध्यान अखण्ड।
योग यत्न करि राम कहि, फोरयो निज ब्रह्माण्ड ॥६७॥

कमर बराबर जलके बीचमें अखण्ड ध्यान किया और योगकी रीतिसे राम कहकर अपना ब्रह्माण्ड फोड़ दिया।

रामधाम पहुँचे तुरत, लषण चतुर्थंश भाग।
सुनि व्याकुल रघुपति भरत, मिटेउ सकल अनुराग ॥६८॥

भगवान्के चौथे अंश लक्ष्मण शीघ्र ही रामचन्द्रजीके स्थानमें पहुँचे। यह सुनकर रामचन्द्र और भरत व्याकुल हुए और सब आनन्द मिट गया।

मैं नहिं तज्यो तज्यो मोहि ताता। अब करु यत्न सो देखहुँ भ्राता॥
करहु भरत पुरजन्म सुखारी। सुनत गिरेउ महि व्याकुल भारी॥

भगवान्ने कहा, मैंने नहीं छोड़ा और मुझे भाईने त्याग दिया। सो अब वह उपाय करो जिससे भाईको देखूँ। हे भरत, नगर-निवासियोंके जन्मको सुखी करो अर्थात् राज्य करो। यह सुनते ही भरत अति व्याकुल होकर पृथ्वीपर गिर पड़े।

चलन चहत अब प्राण गुसाईं। प्रभु लक्ष्मण बिनु रह न सकाई॥
तात चलहु कहि तनय बुलाई। कीन्ह तिलक बहु नीति सिखाई॥

हे गुसाईं! अब प्राण चलना चाहते हैं, क्योंकि आप लक्ष्मणके बिना रह नहीं सकते। हे प्यारे! चलो यह कहकर पुत्रोंको बुलाया और राज्यतिलक किया और बहुतसी नीति सिखाई।

भरत सु तनय सील बैनामा। दक्षिण नगर दियो तिहि रामा॥
दूसर पुष्कल जेहि जग जाना। पुहकर नगर दीन्ह भगवाना॥
चित्रकेतु अङ्गद रणधीरा। लक्ष्मण तनय सुभट गम्भीरा॥

भरतका सुन्दर शीलवान् वैनामा जो पहला पुत्र था उसको दक्षिण दिशाका राज्य दिया। दूसरा पुष्कल जिसे संसार जानता है उसे भगवान्ने पुष्कर नगर दिया। रणधीर, चित्रकेतु और अङ्गद जो लक्ष्मणजीके पुत्र सुन्दर गंभीर योधा थे,

दो०—पश्चिम दिशा पिशाच बहु, जीति हते संग्राम।
तहं राखे सुत सरिस दोउ, विलग विलग कहि नाम ॥६९॥

उन्होंने पश्चिमकी दिशामें बहुतसे पिशाचोंको लड़ाईमें जीतकर मारा था। वहां दोनों सुन्दर पुत्रोंको अलग-अलग नामके राज्य देकर रक्खा।

अवध नृपति कुस कीन्ह बहोरी। सिखै नीति तब कह्यो बहोरी॥
भ्रातनपर सुत दया करेहू। राजनीति उरमाहिं धरेहू॥

फिर कुशको अयोध्याका राजा किया और नीति सिखाकर फिर कहा, हे पुत्र, भाइयोंपर दया करना और राजनीतिको हृदयमें धारण करना।

उत्तर नगर सु उत्तर दूरी। सुख सम्पदा जहां अति रूरी।
लव कहं दीन कृपानिधि सोई। पटतरि अवध नगर नहिं कोई॥

उत्तर दिशामें जो उत्तरा खण्ड है, जहां बहुत सुन्दर सुख सम्पदा है। दयाके समुद्र (भगवान्) ने वह लवको दी, तथापि अयोध्यापुरीके समान कोई नहीं।

आठ सहस्र रथ तुरंग पचासा। दस सहस्र गज मत्त बिलासा॥
लजहिं इन्द्रगज तिनहिं बिलोकी। दिगपालन निज प्रभुता रोकी॥

आठ हजार रथ, पचास हजार घोड़े और दस हजार मतवाले हाथी जिन्हें देखकर इन्द्रके हाथी लज्जित होते थे और दिग्पालोंने भी अपनी प्रभुता रोक ली।

सक्र कुबेर देखि सकुचाने। तिनकी महिमा कौन बखाने॥
इक इक सुनत दीन रघुराया। बरणि को सकै सुनहु खगराया॥
धनद कोटिसम भरे भंडारा। यथायोग्य करि भाग उदारा॥

जब इन्द्र कुबेर भी देखकर लज्जित हुए फिर उनकी बड़ाई कौन बखाने। हे गरुड़, सुनो! (इतना इतना सामान) रामचन्द्रजीने एक एक पुत्रको दिया, जिसका कौन वर्णन कर सकता है। करोड़ों कुबेरोंके समान भंडार थे सो उदार भगवान्ने सबका यथायोग्य भाग कर दिया।

दो०—सकल तनय परितोष करि, बिदा कीन्ह रघुबीर।
विप्रवृन्द याचक सकल, लिये बोलि मतिधीर ॥७०॥